आज का आदेश

(प्रतिदिन के आदेश की विस्तृत व्याख्या)

व्याख्याकार -
दलजीत सिंह जावा

अनुवादक -
दर्शन कौर उप्पल

पिता सरदार हरी सिंह जावा

और

माता करतार कौर जावा
की मधुर स्मृति में उन्हें सप्रेम समर्पित
जिन्होंने अपनी संतान को
अमूल्य आध्यात्मिक वातावरण प्रदान किया

© दलजीत सिंह जावा 2023

लेखक की ओर से 'सिखनेट' नामक वेबसाइट की अनवरत सेवाओं के प्रति आभार व्यक्त किया जाता है, जो विश्व भर में सभी गुरबाणी प्रेमियों को अपने अथक परिश्रम के द्वारा गुरबाणी को विभिन्न रूपों, भाषाओं और फोंटों में उपलब्ध कराने में निरतंर प्रयत्नशील रहती है।

अँग्रेजी संस्करण की अतिरिक्त प्रतियों के लिए संपर्क करें :-

www.amazon.com
jawa222@gmail.com
(निःशुल्क) पढ़ने या डाउनलोड करने के लिए
निम्नलिखित साइट खोलें:
www.gurbaniwisdom.com
www.sikhnet.com

हिंदी संस्करण के लिए संपर्क करें :-

Published by :
SIKH FOUNDATION
PO Box 3627 Lajpat Nagar
New Delhi - 110024
E-mail : sf1999@rediffmail.com
balsinghs@gmail.com
Tel. : 9810567300, 9811567640

ISBN : 978-81-7873-123-0

प्रस्तावना

गुरु ग्रंथ साहिब जी सिख समुदाय का आधारभूत धर्मग्रंथ है जिसे सन् १६०४ में सिख अनुयायियों के पाँचवें गुरु अर्जुन देव जी के नेतृत्व में 'आदि ग्रंथ' नाम से पहली बार स्थापित किया गया । गुरु अर्जुन देव जी ने अपने से पूर्व के चार गुरुओं, गुरु नानकदेव जी, गुरु अंगददेव जी, गुरु अमरदास जी, गुरु रामदास जी तथा अपनी रचनायों के संग्रहण के साथ साथ अनेक सँतजनों जैसे कबीर, नामदेव जी, रविदास जी, धन्ना भगत, त्रिलोचन जी, शेख़ फ़रीद जी, जैदेव तथा सिख धर्म के सिद्धांतों के अनुरूप अन्य कई और भक्त जनों की रचनायों को भी स्थान दिया । अतः, प्रत्यक्ष रूप से यह ग्रंथ १२वीं से १७वीं शताब्दी के बीच (मुख्यतः भक्तिकाल) में रचे गये एकल प्रभु भक्ति साहित्य का एक विशाल संग्रहण था, जो अधिकारिक रूप से सिख धर्म की विशिष्टतायों को प्रमाणित करने वाला ऐसा दस्तावेज बना जिसने सर्व धर्म समभाव के पटल को भी विस्तृत किया । तत्पश्चात, 'आदि ग्रंथ' में नौवें गुरु तेग़ बहादुर जी की वाणी का समावेश उनके सुपुत्र गुरु गोबिँद सिंह जी ने सन् १७०५ में किया और इस संकलन को अंतिम अथवा निर्णीत रूप देकर आज के 'गुरु ग्रंथ साहिब' को निर्धारित करते हुये उसके अंदर भविष्य में किसी प्रकार के परिवर्तन का निषेध भी किया । आदि काल से लेकर सृष्टि की संरचना तथा उसके अंत के पश्चात भी केवल एक ही ईश्वर के अस्तित्व, उसकी शक्ति और गुणों का महत्व, उसके नाम के ध्यान का औचित्य और उसकी उपस्थिति अपने अँतरमन में ही ढूँढते हुये सांसारिक माया मोह को मिथ्या मानना इस ग्रन्थ का मुख्य उद्देश्य जान पड़ता है, जो कि एक सिख की जीवनशैली को मूलतः प्रभु भक्ति, सदाचार एवं सेवाभाव में ढालता है ।

दसवें गुरु गोबिँद सिंह जी ने देहधारी गुरु पद्धति को समाप्त करते हुये ' सब सिखन को हुक्म है गुरु मान्यो ग्रन्थ' का आदेश दिया जिसके अनुसार आज का प्रत्येक सिख गुरु ग्रंथ साहिब को ही अपना चिरस्थायी गुरु मानता है और वह नित्य ही प्रातः काल स्नान कर, स्वच्छ वस्त्र धारण करके गुरु ग्रंथ साहब को मर्यादा सहित सादर भाव से कहीं से भी खोल कर उसका पाठ करता है, इस क्रिया को 'प्रकाश करना' कहा जाता है । गुरु की वाणी, अथवा 'गुरबाणी', दोहे, चउपदे, अष्टपदी, छंद, इत्यादि के रूप में रचित है, जिन्हें सामान्य रूप से हम 'शब्द' बोलते हैं । पाठक अपने सम्मुख खुले बाँयी ओर के पृष्ठ, अथवा 'अंग' के सबसे उपर वाले 'शब्द' से पाठ करना आरंभ करता है, यदि यह शब्द पिछले पृष्ठ से प्रारंभ हो रहा हो तो पृष्ठ को पीछे पलट कर उसका पाठ सम्पूर्ण होने तक किया जाता है । इस 'शब्द' को उस विशेष दिवस के लिये गुरु का 'आदेश', अथवा 'हुक्म' कहा जाता है, जिसे सिख मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक रूप से अपने लिये गुरु का आदेश मानता है और उसके उपर विश्वास करते हुये अपने मन एवं आचरण को नियंत्रित रखता है ।

सम्पूर्ण ग्रंथ साहिब में १४३० पृष्ठ हैं और जब 'प्रकाश' किया जाता है तब बहुधा ग्रंथ साहिब के मध्य भाग के आस पास के पृष्ठ खोलने की संभावना अधिक रहती है, अतः, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये गुरु ग्रंथ साहिब जी की पृष्ठ संख्या ३०० - १००० तक में निहित ३५० शब्दों /हुक्मनामों की व्याख्या करने का प्रयास लेखक के द्वारा सर्वप्रथम अँग्रेजी में किया गया और सन् १९९५ में "The Order of The Day" नामक शीर्षक से संक्षिप्त संस्करण का प्रकाशन हुया । उसके पश्चात अनेक पाठकों के सुझावों के आधार पर मेरा उसी शीर्षक के अन्तर्गत अँग्रेजी में दूसरा विस्तृत संस्करण सन् २०१६ में प्रकाशित हुया, जिसका हिंदी अनुवाद इस विचार से आपके सम्मुख प्रस्तुत किया जा रहा है कि भारत, तथा विदेशों में रहने वाले अनेक हिंदी भाषी बँधुजनों को गुरु ग्रंथ साहिब से प्राप्त नित्य के 'आदेश' अथवा 'हुक्म' की वाणी के पूर्ण अर्थ अधिक विस्तार से सरल भाषा में उपलब्ध हो सकें । इस लिये यहाँ पर दैनिक रूप से प्रयोग में लाई जाने वाली हिंदी भाषा का उपयोग एक प्रकार से अभिप्रायपूर्ण है, जो अधिकांश जनमानस के हित में होगा, ऐसा मेरा विश्वास है ।

मैं आशा करता हूँ कि मेरा यह प्रयास गुरु ग्रन्थ साहिब में निहित नित्य पढ़े जाने वाले शब्दों / हुक्मनामों को सरल रूप में भली प्रकार से समझने में पाठकों के लिये सहायक सिद्ध होगा, क्योंकि ऐसे दैवी संदेश आज के युग के सांसारिक जीवन में आत्मिक सुख शांति और आपसी सौहार्द के पनपने के लिये एक आवश्यक स्रोत बनने योग्य हैं ।

दलजीत सिंह जावा
मई , २०२२

दलजीत सिंह जावा जी के अंग्रेज़ी संस्करण "The Order Of The Day "का हिंदी में अनुवाद करने की प्रेरणा मेरे मन में उनकी 'गुरुबाणी ' के प्रति असीम निष्ठा को देख कर उपजी, अन्यथा, मेरे जैसा ईश्वर के प्रति श्रद्धा एवं समर्पण से दूर रहने वाला व्यक्तित्व इस प्रकार का प्रयत्न करने का विचार करने के योग्य भी नहीं था । यदि आप पाठक जन मेरे इस प्रयास को अपनी स्वीकृति प्रदान कर सके तो यह मेरा अहोभाग्य होगा ।

दर्शन कौर उप्पल
नंवबर , २०२२

शब्दों की अनुक्रमणिका

शब्द क्रम	पृष्ठ सँख्या (ग्रंथसाहिब)	पृष्ठ सँख्या (पुस्तक)
अउखी घड़ी न देखण देई	६८२	३१५
अउहठि हसत मड़ी घरु	९०७-९०८	४९७
अगो दे सत भाउ न दिचै	३०५-३०६	१६
अचरु चरै ता सिधि होई	६०७-६०८	२६१
अँतरि उतभुजु अवरु न कोई	९०५-९०६	४९५
अँतरि गुरु आराधणा जिहवा	५१७-५१८	१८५
अँतरि पिआस उठी प्रभ केरी	८३५-८३६	४३५
अँतरि मलि निरमलु नही कीना	५२५-५२६	१९१
अँदरि कपटु सदा दुखु है	८५१-८५२	४५३
अधम चँडाली भई ब्रहमणी	३८१-३८२	७०
अनिक जतन करि रहे हरि	९८४	५६२
अपणे बालक आपि रखिअनु	८१९-८२०	४२५
अब हम चली ठाकुर पहि हारि	५२७-५२८	१९२
अबिनासी जीअन को दाता	६१७-६१८	२६८
असथावर जँगम कीट पतंगा	३२५-३२६	३३
आगै सुखु मेरे मीता	६२९-६३०	२७४
आदि पूरन मधि पूरन अँति पूरन	७०५-७०६	३३३
आदि मधि अरु अँति परमेसरि	५२३-५२४	१८९
आदित वारि आदि पुरखु है सोइ	८४१-८४२	४४१
आनँदु आनँदु सभु को कहै	९१७-९१८	५०९
आपणे पिर कै रँगि रती	५६७-५६८	२२४
आपु वीचारै सु परखे हीरा	४१३-४१४	८७
आपे कँडा आपि तराजी प्रभि	६०५-६०६	२५९
आपे सबदु आपे नीसानु	७९५-७९६	४११
आपै आपु पछाणिआ सादु मीठा	४२६	९९
आवण जाणा ना थीऐ निज घरि	९९३-९९४	५६९
आवहु मिलहु सहेलीहो सचड़ा	५७९-५८०	२३५
आवहु सँत मिलहु मेरे भाई मिलि	७९९-८००	४१४
आवहो सँत जनहु गुण गावह	७७५-७७६	३९२
आसा आस करे सभु कोई	४२३-४२४	९७
आसा मनसा बँधनी भाई करम	६३५-६३६	२७७
इछा पूरकु सरब सुखदाता	६६९-६७०	३०९
इहु तनु माइआ पाहिआ पिआरे	७२१-७२२	३४२
इहु तनु सभो रतु है रतु बिन	९४९-९५०	५३३
इहु धन अखुटु न निखुटै न जाइ	६६३-६६४	३०४
इहु सागर सोई तरै जो हरि	८१३-८१४	४२२
ईंधन ते बैसँतरु भागै	९००	४९०

उकति सिआनप किछू न जाना	३८७-३८८	७३
उठि वँजु वटाऊड़िआ तै किआ	४५९-४६०	१३९
उतरि अवघट सरवरि ना्वै	४११-४१२	८५
उदमु अगमु अगोचरो चरन कमल	९२७-९२८	५१७
उदमु करउ करावहु ठाकुर पेखत	४०५-४०६	८२
उदमु करत आनदु भइआ	८१५-८१६	४२३
उमकिओ हीउ मिलन प्रभ ताई	७३७-७३८	३५५
उलटी रे मन उलटी रे	५३५-५३६	१९६
उसतति निंदा नानक जी मै	९६३-९६४	५४७
ए मन मेरिआ आवा गउणु सँसारु	५७१-५७२	२२८
ए मन हरि जी धिआइ तू इक	६५३-६५४	२९६
एकु पिता एकस के हम बारिक	६११-६१२	२६४
ऐसो गुनु मेरो प्रभ जी कीन	७१६	३३९
ओअँकारि ब्रहमा उतपति	९२९-९३०	५१९
ओहु नेहु नवेला	४०७-४०८	८३
कबीर धरती साध की तसकर	९६५-९६६	५४९
कबीर मुकति दुआरा सँकुड़ा	५०९-५१०	१७७
कमला भ्रम भीति कमला भ्रम	४६१-४६२	१४१
करम धरम पाखँड जो दीसहि	७४७-७४८	३६१
करि किरपा गुर पारब्रहम पूरे	५४३-५४४	२०३
कवन कवन जाचहि प्रभ दाते	५०३-५०४	१७१
कवन थान धीरिओ है नामा	९९९-१०००	५७४
कहा सु खेल तबेला घोड़े कहा	४१७-४१८	९१
काइआ कूड़ि विगाड़ि काहे नाईऐ	५६५-५६६	२२२
काचा धनु सँचहि मूरख गावार	६६५-६६६	३०६
काची गागर देह दुहेली उपजै	३५५-३५६	५१
कालबूत की हसतनी मन बउरा रे	३३५-३३६	३८
काहू दीने् पाट पटँबर काहू	४७९-४८०	१५७
काहू बिहावै रँग रस रूप	९१३-९१४	५०५
किआ पड़ीऐ किआ गुनीऐ	६५५-६५६	२९८
कितु बिधि पुरखा जनमु वटाइआ	९३९-९४०	५२६
किस कउ कहहि सुणावहि किस	३५३-३५४	५०
किस ही कोई कोइ	७९१-७९२	४०८
किस ही धड़ा कीआ मित्र सुत	३६६	५९
किसु भरवासै बिचरहि भवन	८९८	४८८
कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु	७५७-७५८	३७३
कोई आनि सुनावै हरि की	९७७-९७८	५५८
कोई जनु हरि सिउ देवै	७०१-७०२	३३०
कोई जानै कवनु ईहा जगि मीतु	७००	३२९
कोई पड़ता सहसाकिरता कोई	८७६	४७०

खटु मटु देही मनु बैरागी	९०३-९०४	४९३
खोजत सँत फिरहि प्रभ प्राण	५४५-५४६	२०५
गउड़ी राग सुलखणी जे खसमै	३११-३१२	२२
गऊ बिराहमण कउ करु लावहु	४७१-४७२	१५१
गज साढे तै तै धोतीआ तिहरे	४७६	१५५
गहु करि पकरी न आई हाथि	८९१-८९२	४८३
गुण वीचारे गिआनी सोइ	९३१-९३२	५२१
गुर अपुने ऊपरि बलि जाईऐ	७४१-७४२	३५८
गुर का सबद मनै महि मुँद्रा	३५९-३६०	५४
गुर के चरन कमल नमसकारि	८६५-८६६	४६४
गुर प्रसादी प्रभु धिआइआ गई	५०१-५०२	१७०
गुर सेवा ते सुखु ऊपजै फिरि	६५१-६५२	२९४
गुरमुखि गिआनु बिबेक बुधि	३१७-३१८	२७
गुरमुखि सखी सहेली मेरी	४९३-४९४	१६६
गुरमुखि सचु सँजमु ततु	५५९-५६०	२१८
गुरि पूरै किरपा धारी	६२१-६२२	२७०
गुरि पूरै चरनी लाइआ	६२३-६२४	२७१
गुरि पूरै मेरी राखि लई	८२३-८२४	४२७
गुरु पूरा भेटिओ वडभागी मनहि	६०९-६१०	२६३
गुरु साइरु सतिगुरु सचु सोइ	३६३-३६४	५७
गुरु सागरु रतनी भरपूरे	६८५-६८६	३१८
गोबिँद गोबिँद गोबिँद सँगि	४८७-४८८	१६२
ग्रिहि सोभा जा कै रेनाहि	८७२	४६७
ग्रिहु तजि बन खँड जाईऐ चुनि	८५५-८५६	४५७
ग्रिहु बनु समसरि सहिज सुभाइ	३५१-३५२	४८
घट अवघट डूगर घणा इकु	३४५-३४६	४३
घर महि सूख बाहरि फुनि सूखा	३८५-३८६	७२
चले चलणहार वाट वटाइआ	४१९-४२०	९३
जगतु जलँदा रखि लै आपणी	८५३-८५४	४५५
जगि दाता सोइ भगत वछलु	९२३-९२४	५१२
जपि गोबिँदु गोपाल लालु	८८५-८८६	४७८
जब लगु तेलु दीवे मुखि बाती	४७७-४७८	१५६
जब हम होते तब तू नाही	६५७-६५८	२९९
जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि	६७७-६७८	३१३
जा कउ भए कृपाल प्रभ हरि	५२१-५२२	१८८
जा कउ हरि रँगु लागो इसु जुग	६७९-६८०	३१४
जा का ठाकुर तुही प्रभ ता के	३९९-४००	७९
जा कै दरसि पाप कोटि उतारे	७३९-७४०	३५७

जा कै सँगि इहु मनु निरमलु	८६३-८६४	४६२
जा कै हरि सा ठाकुरु भाई	३२८	३४
जि सतिगुरु सेवे आपणा	५११-५१२	१७९
जितु पारब्रहमु चिति आइआ	६२५-६२६	२७२
जिथै हरि आराधीऐ तिथै हरि	७३३-७३४	३५२
जिन कै अँतरि वसिआ मेरा हरि	७३५-७३६	३५४
जिन हरि हिरदै नामु न बसिओ	६९७-६९८	३२८
जिना न विसरै नामु से किनेहिआ	३९७-३९८	७८
जिना सासि गिरास न विसरै हरि	३१९-३२०	२९
जिनि कीआ तिनि देखिआ जगु	७६५-७६६	३८२
जिनि मोहे ब्रहमँड खँड ताहू	७४५-७४६	३६०
जिनी चलणु जाणिआ से किउ	७८७-७८८	४०४
जिस का तनु मनु धनु सभु तिस	६७१-६७२	३१०
जिस के सिर ऊपरि तूँ सुआमी	७४९-७५०	३६२
जिस नो तूँ असथिरु करि मानहि	४०१-४०२	८०
जीउ डरतु है आपणा कै सिउ	६६०	३००
जीउ तपतु है बारो बार	६६१-६६२	३०२
जीवहु नाम सुनी	८२९-८३०	४३०
जुग चारे धन जे भवै बिनु	७६९-७७०	३८६
जे को सिखु गुरू सेती सनमुखु	९१९-९२०	५१०
जे मनि चिति आस रखहि हरि	८५९-८६०	४५९
जे लोड़हि वरु बालड़ीए ता गुर	७७१-७७२	३८८
जे वड भाग होवहि वड मेरे	८८१-८८२	४७६
जैसे किरसाणु बोवै किरसानी	३७५-३७६	६६
जो दिन आवहि सो दिन जाही	७९३-७९४	४०९
जो नरु दुख मै दुखु नही मानै	६३३-६३४	२७६
जो निँदा करे सतिगुर पूरे की	३०९-३१०	२०
झिमि झिमे झिमि झिमि वरसै	४४२-४४४	१२३
ढँढोलत ढूढत हउ फिरी ढहि	९३३-९३४	५२३
तनु बिनसै धनु का को कहीऐ	४१६	८९
तपा न होवै अँद्रहु लोभी नित	३१५-३१६	२५
ताल मदीरे घट के घाट	३४९-३५०	४६
तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है	६८७-६८८	३२०
तुधु बिनु दूजा नाही कोइ	७२३-७२४	३४४
तुम दाते ठाकुर प्रतिपालक नाइक	६७३-६७४	३११
तुम् समरथा कारन करन	८२७-८२८	४२९
तू जाणा इहि ता कोई जाणै	५६३-५६४	२२१
तू ठाकरो बैरागरो मै जेही घण	७७९-७८०	३९६
तूं दाता जीआ सभना का बसहु	४९९	१६९
तू प्रभ दाता दानि मति पूरा हम	५९७-५९८	२५३
तूं सभनी थाई जिथै हउ जाई	४३८	११६

त्रे गुण रहत रहै निरारी साधिक	८८३-८८४	४७७
दइआ करणँ दुख हरणँ	७०९-७१०	३३६
दरसन नाम कउ मनु आछै	५३३-५३४	१९५
दरसन पिआसी दिनस राति चितवउ	७०३-७०४	३३१
दरसनु भेटत पाप सभि नासहि	९१५-९१६	५०७
दीन दरद निवारि ठाकुर राखै	६७५-६७६	३१२
दुइ दीवे चउदह हटनाले	७८९-७९०	४०६
दुख बिनसे सुख किया निवासा	४९७-४९८	१६८
दुखु दारू सुखु रोगु भइआ	४६९-४७०	१४९
दुनीआ न सालाहि जो मरि वँजसी	७५५-७५६	३६८
दुलभ देह सवारि	८९५-८९६	४८७
दूजै भाइ बिलावलु न होवई	८४९-८५०	४५१
देखो भाई ज्ञान की आई आँधी	३३१-३३२	३६
देह अँधारी अँध सुँजी नाम	५७७-५७८	२३४
देह तजनड़ी हरि नव रँगीआ	५७५-५७६	२३२
दोवै थाव रखे गुर सूरे	८२५-८२६	४२८
धुरि मारे पूरै सतिगुरू सोई हुणि	३०७-३०८	१८
ध्रिगु इवेहा जीवणा जितु हरि	४९०	१६३
नउ सर सुभर दसवै पूरे	९४३-९४४	५२९
नटूआ भेख दिखावै बहु बिधि जैसा	४०३-४०४	८१
ना कासी मति ऊपजै न कासी	४९१-४९२	१६४
ना मै जोग धिआन चितु लाइआ	३२९-३३०	३५
नाउ नउमी नवे नाथ नव खँडा	८३९-८४०	४४०
नानक फिकै बोलिऐ तनु मनु	४७३-४७४	१५३
नामु खजाना गुर ते पाइआ	९११-९१२	५०३
नामु निरँजनु नीरि नराइण	८६७-८६८	४६५
नामै ही ते सभु किछु होआ बिनु	७५३-७५४	३६५
निकटि वसै देखै सभु सोई	८३१-८३२	४३१
पड़ि पड़ि गड़ी लदिअहि पड़ि	४६७-४६८	१४७
पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ	९७३-९७४	५५६
पँथु निहारै कामनी लोचन भरी	३३७-३३८	३९
पँद्रह थिँती सात वार	३४३-३४४	४२
परदेसु झागि सउदे कउ आइआ	३७२	६३
परमेसरि दिता बँना	६२७-६२८	२७३
पहिल पुरीए पुँडरक वना	६९३-६९४	३२५
पहिली करूपि कुजाति कुलखनी	४८४	१६०
पाठु पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ	६४१-६४२	२८४
पाणी पखा पीसु दास कै तब	८११-८१२	४२१
पाधा पड़िआ आखीऐ बिदिआ	९३७-९३८	५२५
पारब्रहमि फुरमाइआ मीहु वुठा	३२१-३२२	३०

पारब्रहमु प्रभु सिमरीऐ पिआरे	४३१-४३२	१०५
पिँगुल परबत पारि परे खल	८०९-८१०	४२०
पूरा थाटु बणाइआ पूरै वेखहु	७९७-७९८	४१३
पूरे गुर ते नामु पाइआ जाइ	९४१-९४२	५२८
पेवकड़ै दिन चारि है साहुरड़ै जाणा	३३३-३३४	३७
प्रथमे तेरी नीकी जाति	३७३-३७४	६४
प्रथमे मिटिआ तन का दूख	३९५-३९६	७७
प्रभ की सरणि सगल भै लाथे दुख	६१५-६१६	२६७
प्रभ जनम मरन निवारि	८३७-८३८	४३७
फेरि वसाइआ फेरु आणि सतिगुरि	९६७-९६८	५५१
बँदना हरि बँदना गुण गावहु	६८३-६८४	३१६
बँधचि बँधनु पाइआ	९७१-९७२	५५४
बनु बनु फिरती खोजती हारी	४५५-४५६	१३५
बबा बिँदहि बिँद मिलावा	३४१-३४२	४१
बसँति सवरग लोकह जितते	७०७-७०८	३३५
बहती जात कदे दृसिटि न धारत	७४३-७४४	३५९
बाबा आइआ है उठि चलणा	५८१-५८२	२३७
बिँदु ते जिनि पिँडु कीआ अगनि	४८१-४८२	१५९
बिनु सतिगुर सेवे जगतु मुआ	५९१-५९२	२४७
बिनु सतिगुर सेवे जीअ के बँधना	५८९-५९०	२४५
बिनु सतिगुर सेवे बहुता दुखु	६०३-६०४	२५८
बिनु हरि कामि न आवत हे	८२१-८२२	४२६
बोल सु धरमीड़िआ मोनि कत	५४७-५४८	२०७
ब्रहमु बिँदै तिस दा ब्रहमतु रहै	६४९-६५०	२९२
भई परापति मानुख देहुरीआ	३७८	६७
भगता दी सदा तू रखदा हरि	६३७-६३८	२७९
भगति खजाना गुरमुखि जाता	९०९-९१०	५००
भगति प्रेम आराधितँ सचु	५०५-५०६	१७३
भरमि भुलाई सभु जगु फिरी	९४७-९४८	५३१
भरि जोबनि मै मत पाइअड़ै घरि	७६३-७६४	३८०
भाँडा धोइ बैसि धूपु देवहु	७२८	३४८
भांडा हछा सोइ जो तिसु भावसी	७३०	३५०
भीड़हु मोकलाई कीतीअनु सभ	९५७-९५८	५४२
भूपति होइ कै राजु कमाइआ	३९१-३९२	७५
भूले मारगु जिनहि बताइआ	८०३-८०४	४१७
मँगल साजु भइआ प्रभु अपना	८४५-८४६	४४७
मन रे कउनु कुमति तै लीनी	६३१-६३२	२७५
मन हठि किनै न पाइओ सभ थके	५९३-५९४	२४९
मनि चाउ भइआ प्रभ आगमु	९२१-९२२	५११
मनि तनि प्रभु आराधीऐ मिलि	८१७-८१८	४२४
मनि परतीति न आईआ सहजि	५४९-५५०	२०९
मनु तृपितानो मिटे जँजाल	३८९-३९०	७४

मनु रातउ हरि नाइ सचु	४२१-४२२	९५
मनु हाली किरसाणी करणी सरमु	५९५-५९६	२५१
माइआ ममता मोहणी जिनि विणु	६४३-६४४	२८६
माइआ माइआ करि मुए माइआ	९३५-९३६	५२४
माई प्रभ के चरन निहारउ	५३१-५३२	१९४
माई मेरे मन को सुखु	७१७-७१८	३४०
माई मोरो प्रीतमु रामु बतावहु	३६९-३७०	६२
माई मोहि अवरु न जानिओ	३३९-३४०	४०
माणस जनमु दुलँभु गुरमुखि	७५१-७५२	३६३
मात गरभ महि आपन सिमरनु	६१३-६१४	२६६
मात पिता सुत बँधप भाई	८०५-८०६	४१८
माधउ जल की पिआस न जाइ	३२३-३२४	३२
मिथन मोह अगनि सोक सागर	७६०	३७६
मिलि मात पिता पिंडु कमाइआ	९८९-९९०	५६६
मुख ते पड़ता टीका सहित	८८७-८८८	४७९
मुंध जोबनि बालड़ीए मेरा पिरु	४३५-४३६	११४
मुसलमाना सिफति सरीअति पड़ि	४६५-४६६	१४५
मेरा प्रभु साचा गहिर गँभीर	३६१-३६२	५५
मेरे मन जपि हरि हरि नामु	९७५-९७६	५५७
मेरे मन परदेसी वे पिआरे आउ	४५१-४५२	१३१
मेरे मन हरि भजु सभ किलबिख	९८५-९८६	५६३
मेरै हीअरै रतनु नाम हरि	६९६	३२७
मै मनि चाउ घणा साचि विगासी	८४३-८४४	४४५
मै मनि तनि प्रेमु पिरँम का अठे	३०१-३०२	१३
मै मनि वडी आस हरे किउ	५६१-५६२	२१९
मै मनु तनु खोजि खोजेदिआ सो	३१३-३१४	२४
मो कउ तारि ले रामा तारि ले	८७४	४६९
मोरी रुण झुण लाइआ भैणे	५५७-५५८	२१६
मोह मलन नीद ते छुटकी कउनु	३८३-३८४	७१
रतन जवेहर नाम	८९३-८९४	४८५
रतन पदारथ वणजीअहि सतिगुरि	५६९-५७०	२२६
रसना गुण गोपाल निधि गाइण	७१३-७१४	३३८
राज मिलक जोबन ग्रिह सोभा	३७९-३८०	६८
राजन महि तूँ राजा कहीअहि	५०७-५०८	१७५
राम हरि अँम्रित सरि नावारे	९८१-९८२	५६०
रुण झुणो सबदु अनाहदु नित	९२५-९२६	५१५
रे मन ओट लेहु हरि नामा	९०१-९०२	४९२
लख लसकर लख वाजे नेजे लख	३५८	५३
लगड़ी सुथानि जोड़नहारै जोड़ीआ	५१९-५२०	१८७
वडा मेरा गोविंदु अगम अगोचरु	४४८	१२८
वाहु वाहु बाणी निंरकार है	५१५-५१६	१८३
विणु नावै सभि भरमदे नित जगि	६४५-६४६	२८८
विसमादु नादु विसमादु वेद	४६३-४६४	१४३
वेलि पिंजाइआ कति वुणाइआ	९५५-९५६	५४०

सचि रतीआ सोहागणी जिना गुर	४२७-४२८	१०१
सजण मिले सजणा जिन सतगुर	५८७-५८८	२४३
सतजुगि सचु कहै सभु कोई	८८०	४७४
सतजुगि सभु सँतोख सरीरा पग	४४५-४४६	१२६
सँता के कारज आपि खलोइआ	७८३-७८४	४००
सँता मानउ दूता डानउ इह	९६९-९७०	५५३
सतिगुर विचि वडी वडिआई जो	३०३-३०४	१४
सती पापु करि सतु कमाहि	९५१-९५२	५३५
सँतु मिलै किछु सुनीऐ कहीऐ	८७०	४६६
सनक सनँद महेस समानां	६९१-६९२	३२४
सफल जनमु मो कउ गुर कीना	८५७-८५८	४५८
सबदि रते वड हँस है सचु नामु	५८५-५८६	२४१
सबदौ ही भगत जापदे जिन्‍ की	४२९-४३०	१०३
सभु जगु जिनहि उपाइआ भाई	६३९-६४०	२८१
ससै सोइ सृसिटि जिनि साजी	४३२-४३४	१०७
सहज समाधि अनँद सूख पूरे	८०७-८०८	४१९
सहँसर दान दे इँद्रु रोआइआ	९५३-९५४	५३८
साजन मेरे प्रीतमहु तुम सह की	४४०-४४२	१२०
साधू सँगि सिखाइओ नामु	३९३-३९४	७६
सापु कुँच छोडै बिखु नाही छाडै	४८५-४८६	१६१
सिँचहि दरबु देहि दुखु लोग	८८९-८९०	४८१
सिमृंति बेद पुराण पुकारनि	७६१-७६२	३७८
सुख निधान प्रीतम प्रभ मेरे	८०१-८०२	४१५
सुख सोहिलड़ा हरि धिआवहु	७६७-७६८	३८४
सुणि माछिँद्रा नानकु बोलै	८७७-८७८	४७२
सुणिअहु कँत महेलीहो पिरु सेविहु	५८३-५८४	२३९
सुँदर सांति दइआल प्रभ सरब	८४७-८४८	४४९
सूर सरु सोसि लै सोम सरु	९९१-९९२	५६८
सूहब ता सोहागणी जा मँनि	७८५-७८६	४०२
सेखा अँदरहु जोरु छडि तू भउ	५५१-५५२	२११
सेवक सेव करहि सभि तेरी	५९९-६००	२५४
सो दरु तेरा केहा सो घरु केहा	३४७-३४८	४४
सो सिखु सखा बँधपु है भाई	६०१-६०२	२५६
हउ बलिहारी तिन्‍ कउ मेरी	५३९-५४०	१९९
हउ वारि वारि जाउ गुर	९८०	५५९
हउमै ममता मोहणी मनमुखा	५१३-५१४	१८१
हउमै विचि जगतु मुआ मरदो	५५५-५५६	२१४
हथि करि तँतु वजावै जोगी	३६८	६१
हम अँधुले अँध बिखै बिखु	६६७-६६८	३०८
हम घरे साचा सोहिला साचै	४३९-४४०	११८
हमरी गणत न गणीआ काई	६१९-६२०	२६९
हरणाखी कू सचु वेणु सुणाई	९५९-९६०	५४४
हरि अँमृित भगति भँडार है	४४९-४५०	१३०
हरि का एकु अँचभउ देखिआ	५४१-५४२	२०१
हरि कीआ कथा कहाणीआ	७२५-७२६	३४५

हरि चरण कमल की टेक	७७७-७७८	३९४
हरि चरन कमल मनु बेधिआ	४५३-४५४	१३३
हरि जनु राम नाम गुन गावै	७१९-७२०	३४१
हरि जपे हरि मँदरु साजिआ	७८१-७८२	३९८
हरि जीउ क्रिपा करे ता नाम	६९०	३२२
हरि दरसन कउ मेरा मनु बहु	८६१-८६२	४६१
हरि धनु जाप हरि धनु ताप	४९५-४९६	१६७
हरि नामा हरि रँगु है हरि रँगु	७३१-७३२	३५१
हरि नामु ना सिमरहि साधसँगि	५५३-५५४	२१३
हरि पहिलड़ी लाव परविरती	७७३-७७४	३९०
हरि प्रान प्रभू सुखदाते	५२९-५३०	१९३
हरि बिसरत सदा खुआरी	७११-७१२	३३७
हरि सतिगुर हरि सतिगुर मेलि	५७३-५७४	२३०
हरि समरथ की सरना	९८७-९८८	५६५
हरि हरि नाम धिआईऐ मेरी	५३७-५३८	१९७
हरि हरि नामु जपँतिआ कछु	४५७-४५८	१३७
हरि हरि नामु निधानु लै गुरमति	९९६	५७०
हरि हरि नामु सीतल जलु	८३३-८३४	४३३
हरि हरि भगति भरे भँडारा	९९७-९९८	५७२
हरि हरि हरि गुनी हां	४०९-४१०	८४
हसती सिरि जिउ अँकसु है	६४७-६४८	२९०
हिरदा देह ना होती अउधू तउ	९४५-९४६	५३०
होहु क्रिपाल सुआमी मेरे	९६१-९६२	५४६

ਪੰਨਾ ੩੦੧

ਸਲੋਕ ਮਃ ੪ ॥

ਮੈ ਮਨਿ ਤਨਿ ਪ੍ਰੇਮੁ ਪਿਰੰਮ ਕਾ ਅਠੇ ਪਹ ਲਗੰਨਿ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰਿ ਪ੍ਰਭ ਸਤਿਗੁਰ ਸੁਖਿ ਵਸੰਨਿ ॥੧॥

ਮਃ ੪ ॥

ਜਿਨ ਅੰਦਰਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਪਿਰੰਮ ਕੀ ਜਿਉ ਬੋਲਨਿ ਤਿਵੈ ਸੋਹੰਨਿ ॥
ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਆਪੇ ਜਾਣਦਾ ਜਿਨਿ ਲਾਈ ਪ੍ਰੀਤਿ ਪਿਰੰਨਿ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਤੂ ਕਰਤਾ ਆਪਿ ਅਭੁਲੁ ਹੈ ਭੁਲਣ ਵਿਚਿ ਨਾਹੀ ॥

ਤੂ ਕਰਹਿ ਸੁ ਸਚੇ ਭਲਾ ਹੈ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਬੁਝਾਹੀ ॥
ਤੂ ਕਰਣ ਕਾਰਣ ਸਮਰਥੁ ਹੈ ਦੂਜਾ ਕੋ ਨਾਹੀ ॥

ਤੂ ਸਾਹਿਬੁ ਅਗਮੁਦਇਆਲੁ ਹੈ ਸਭਿ ਤੁਧੁ ਧਿਆਹੀ ॥

ਪੰਨਾ ੩੦੨

ਸਭਿ ਜੀਅ ਤੇਰੇ ਤੂ ਸਭਸ ਦਾ ਤੂ ਸਭ ਛਡਾਹੀ ॥੪॥

पृ- ३०१

सलोक महला ४

मै मनि तनि प्रेमु पिरँम का अठे पहर लगँनि ॥
जन नानक किरपा धारि प्रभ सतिगुर सुखि वसँनि ॥१॥

म: ४ ॥

जिन अँदरि प्रीति पिरँम की जिउ बोलनि तिवै सोहँनि ॥
नानक हरि आपे जाणदा जिनि लाई प्रीति पिरँनि ॥२॥

पउड़ी ॥

तू करता आपि अभुलु है भुलण विचि नाही ॥

तू करहि सु सचे भला है गुर सबदि बुझाही ॥
तू करण कारण समरथु है दूजा को नाही ॥

तू साहिबु अगमु दइआलु है सभि तुधु धिआही ॥

पृ- ३०२

सभि जीअ तेरे तू सभस दा तू सभ छडाही ॥४॥

सलोक महला ४

इस श्लोक में गुरु जी प्रभु के लिए अपनी भावना और प्यार की स्थिति का वर्णन करते हैं। वे कहते हैं, "मैं चाहता हूं कि हर समय, मेरा तन और मन प्रभु के प्यार मे रहें। हे भगवान, कृपया दया करें ताकि दास नानक का (तन और मन) गुरु के शांतिपूर्ण सँग में रहें।(1)

महला- ४

गुरु जी अब उन लोगों की स्थिति का वर्णन करते हैं जो प्रभु से सच्चा प्यार करते हैं। वे कहते हैं, "वे, जो अपने प्रिय परमेश्वर के प्रेम की कदर करते हैं, वे जिस तरह से भी (ईश्वर की स्तुति में) बोलते हैं, सुंदर दिखते हैं। ओ 'नानक, वह प्रिय जिसने उन्हें इस प्रकार के प्रेम में रमाया है वह स्वयं इस प्रेम (के भेद) को जानता है "।(२)

पउड़ी ॥

गुरु जी अब ईश्वर की अचूकता पर टिप्पणी करते हैं और उसे संबोधित करते हुए कहते हैं, "ओ ' भगवान, आप अचूक हो, आप कभी भी गलती नहीं करते हो। हे सच्चे ईश्वर; जो भी आप करते हो वह अच्छे के लिए होता है। आप हमें इस तथ्य को गुरु के माध्यम से समझने में मदद करते हो। आप सब कुछ करने में सक्षम हो, दूसरा कोई आप जैसा सक्षम नहीं । ओ मेरे मालिक, आप अगम और दयालु हैं। सभी आप का ध्यान करते हैं, सभी जीव आप के हैं, आप सभी के हो और आप सभी को मुक्ति प्रदान करते हो। "(४)

इस पउड़ी का संदेश है कि हमे यह समझना चाहिए कि ईश्वर सब कुछ का कारण और कर्ता है। वह कोई गलती नहीं करता । वह सभी का मालिक है और सभी को मुक्ति दिलाने में मदद करता है। इसलिए वह जो भी करता है वह हमें हमेशा स्वीकार करना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੩੦੩

ਸਲੋਕ ਮਃ ੪

ਸਤਿਗੁਰ ਵਿਚਿ ਵਡੀ ਵਡਿਆਈ ਜੋ ਅਨਦਿਨੁ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵੈ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਰਮਤ ਸੁਚ ਸੰਜਮੁ ਹਰਿ ਨਾਮੇ ਹੀ ਤ੍ਰਿਪਤਾਵੈ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਤਾਣੁ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦੀਬਾਣੁ ਹਰਿ ਨਾਮੋ ਰਖ ਕਰਾਵੈ ॥
ਜੋ ਚਿਤੁ ਲਾਇ ਪੂਜੇ ਗੁਰ ਮੂਰਤਿ ਸੋ ਮਨ ਇਛੇ ਫਲ ਪਾਵੈ ॥
ਜੋ ਨਿੰਦਾ ਕਰੇ ਸਤਿਗੁਰ ਪੂਰੇ ਕੀ ਤਿਸੁ ਕਰਤਾ ਮਾਰ ਦਿਵਾਵੈ ॥
ਫੇਰਿ ਓਹ ਵੇਲਾ ਓਸੁ ਹਥਿ ਨ ਆਵੈ ਓਹੁ ਆਪਣਾ ਬੀਜਿਆ ਆਪੇ ਖਾਵੈ ॥
ਨਰਕਿ ਘੋਰਿ ਮੁਹਿ ਕਾਲੈ ਖੜਿਆ ਜਿਉ ਤਸਕਰੁ ਪਾਇ ਗਲਾਵੈ ॥
ਫਿਰਿ ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਸਰਣੀ ਪਵੈ ਤਾ ਉਬਰੈ ਜਾ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵੈ ॥
ਹਰਿ ਬਾਤਾ ਆਖਿ ਸੁਣਾਏ ਨਾਨਕੁ ਹਰਿ ਕਰਤੇ ਏਵੈ ਭਾਵੈ ॥੧ ॥

ਮਃ ੪ ॥

ਪੂਰੇ ਗੁਰ ਕਾ ਹੁਕਮੁ ਨ ਮੰਨੈ ਓਹੁ ਮਨਮੁਖੁ ਅਗਿਆਨੁ ਮੁਠਾ ਬਿਖੁ ਮਾਇਆ ॥
ਓਸੁ ਅੰਦਰਿ ਕੂੜੁ ਕੂੜੋ ਕਰਿ ਬੁਝੈ ਅਣਹੋਦੇ ਝਗੜੇ ਦਯਿ ਓਸ ਦੈ ਗਲਿ ਪਾਇਆ ॥
ਓਹੁ ਗਲ ਫਰੋਸੀ ਕਰੇ ਬਹੁਤੇਰੀ ਓਸ ਦਾ ਬੋਲਿਆ ਕਿਸੈ ਨ ਭਾਇਆ ॥
ਓਹੁ ਘਰਿ ਘਰਿ ਹੰਢੈ ਜਿਉ ਰੰਨ ਦੋੁਹਾਗਣਿ ਓਸੁ ਨਾਲਿ ਮੁਹੁ ਜੋੜੇ ਓਸੁ ਭੀ ਲਛਣੁ ਲਾਇਆ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਹੋਇ ਸੁ ਅਲਿਪਤੋ ਵਰਤੈ ਓਸ ਦਾ ਪਾਸੁ ਛਡਿ ਗੁਰ ਪਾਸਿ ਬਹਿ ਜਾਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੩੦੪

ਜੋ ਗੁਰੁ ਗੋਪੇ ਆਪਣਾ ਸੁ ਭਲਾ ਨਾਹੀ ਪੰਚਹੁ ਓਨਿ ਲਾਹਾ ਮੂਲੁ ਸਭੁ ਗਵਾਇਆ ॥
ਪਹਿਲਾ ਆਗਮੁ ਨਿਗਮੁ ਨਾਨਕੁ ਆਖਿ ਸੁਣਾਏ ਪੂਰੇ ਗੁਰ ਕਾ ਬਚਨੁ ਉਪਰਿ ਆਇਆ ॥
ਗੁਰਸਿਖਾ ਵਡਿਆਈ ਭਾਵੈ ਗੁਰ ਪੂਰੇ ਕੀ ਮਨਮੁਖਾ ਓਹ ਵੇਲਾ ਹਥਿ ਨ ਆਇਆ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਸਚੁ ਸਚਾ ਸਭ ਦੂ ਵਡਾ ਹੈ ਸੋ ਲਏ ਜਿਸੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਟਿਕੇ ॥
ਸੋ ਸਤਿਗੁਰੁ ਜਿ ਸਚੁ ਧਿਆਇਦਾ ਸਚੁ ਸਚਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਇਕੇ ॥
ਸੋਈ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੁਰਖੁ ਹੈ ਜਿਨਿ ਪੰਜੇ ਦੂਤ ਕੀਤੇ ਵਸਿ ਛਿਕੇ ॥
ਜਿ ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਆਪੁ ਗਣਾਇਦੇ ਤਿਨ ਅੰਦਰਿ ਕੂੜੁ ਫਿਟੁ ਫਿਟੁ ਮੁਹ ਫਿਕੇ ॥
ਓਇ ਬੋਲੇ ਕਿਸੈ ਨ ਭਾਵਨੀ ਮੁਹ ਕਾਲੇ ਸਤਿਗੁਰ ਤੇ ਚੁਕੇ ॥੮॥

पृ-३०३

सलोक महला ४

सतिगुर विचि वडी वडिआई जो अनदिनु हरि हरि नामु धिआवै ॥
हरि हरि नामु रमत सुच सँजमु हरि नामे ही त्रिपतावै ॥
हरि नामु ताणु हरि नामु दीबाणु हरि नामो रख करावै ॥
जो चितु लाइ पूजे गुर मूरति सो मन इछे फल पावै ॥
जो निँदा करे सतिगुर पूरे की तिसु करता मार दिवावै ॥
फेरि ओह वेला ओसु हथि न आवै ओहु आपणा बीजिआ आपे खावै ॥
नरकि घोरि मुहि कालै खड़िआ जिउ तसकरु पाइ गलावै ॥
फिरि सतिगुर की सरणी पवै ता उबरै जा हरि हरि नामु धिआवै ॥
हरि बाता आखि सुणाए नानकु हरि करते एवै भावै ॥१॥

महला- ४

पूरे गुर का हुकमु न मँने ओहु मनमुखु अगिआनु मुठा बिखु माइआ ॥
ओसु अँदरि कूड़ु कूड़ो करि बुझै अणहोदे झगड़े दयि ओस दै गलि पाइआ ॥
ओहु गल फरोसी करे बहुतेरी ओस दा बोलिआ किसै न भाइआ ॥
ओहु घरि घरि हँढै जिउ रँन दोहागणि ओसु नालि मुहु जोड़े ओसु भी लछणु लाइआ ॥
गुरमुखि होइ सु अलिपतो वरतै ओस दा पासु छडि गुर पासि बहि जाइआ ॥.

पृ- ३०४

जो गुरु गोपे आपणा सु भला नाही पँचहु ओनि लाहा मूलु सभु गवाइआ ॥
पहिला आगमु निगमु नानकु आखि सुणाए पूरे गुर का बचनु उपरि आइआ ॥
गुरसिखा वडिआई भावै गुर पूरे की मनमुखा ओह वेला हथि न आइआ ॥२॥

पउड़ी ॥

सचु सचा सभ दू वडा है सो लए जिसु सतिगुरु टिके ॥
सो सतिगुरु जि सचु धिआइदा सचु सचा सतिगुरु इके ॥
सोई सतिगुरु पुरखु है जिनि पँजे दूत कीते वसि छिके ॥
जि बिनु सतिगुर सेवे आपु गणाइदे तिन अँदरि कूड़ु फिटु फिटु मुह फिके ॥
ओइ बोले किसै न भावनी मुह काले सतिगुर ते चुके ॥८॥

सलोक महला ४

इस सलोक में गुरु जी हमें सच्चे गुरु के गुण और उत्कृष्टता के बारे में बताते हैं और उनकी सलाह इतनी मूल्यवान क्यों है ।

वह कहते हैं: “यह सच्चे गुरु की महान योग्यता है कि वह दिन - रात ईश्वर के नाम पर ध्यान करता है। उसके लिये, प्रभु के नाम पर ध्यान करना ही पवित्रता और अनुशासन का पालन करना है और वह ईश्वर के नाम से ही तृप्त हो जाता है। ईश्वर का नाम उसकी ताकत है, प्रभु का नाम उसका न्याय है और ईश्वर का नाम ही उसकी रक्षा करता है। जो मनुष्य (गुरु के गुणों को मन में रखते हुए) गुरु की पूजा करता है, उस के दिल की इच्छा पूरी हो जाती हैं। (दूसरी ओर), प्रभु उस व्यक्ति को सज़ा देता है जो संपूर्ण सच्चे गुरु की निंदा करता है । (गुरु की सेवा करने के लिये) ऐसे मनुष्य को फिर अवसर नहीं मिलता और वह जो बोता है वही काटता है। ऐसा मनुष्य काले मुँह तथा गले में फंदा

डाले चोर की तरह लज्जा के साथ नर्क रूपी जेल में जाता है । ऐसा व्यक्ति उन दुखों से तभी मुक्त होता है जब वह सच्चे गुरु का आश्रय पा लेता है और ईश्वर के नाम पर ध्यान करता है। नानक (यह सब कुछ अपने मन से नहीं कह रहे हैं) उन बातों.का वर्णन कर रहे हैं जो भगवान् को भाती हैं (भगवान् अपने संतों की कोई बदनामी नहीं देख सकता और उनको गंभीर रूप से सज़ा देता है जो किसी भी तरीके से संतों को बदनाम करने या उन्हें नुकसान पहुंचाने की कोशिश करते है)। "(१)

महला- ४

अब गुरू जी हमें उस दंड के बारे में बताते हैं जो ऐसे मनुष्य को भुगतना पड़ता है जो सच्चे गुरु के आदेश का पालन नहीं करता। वे कहते हैं: "जो पूर्ण गुरु के आदेश का पालन नहीं करता वह अहमी अपने अज्ञान के द्वारा सांसारिक जंजाल रूपी विष से नष्ट हो जाता है । ऐसे मनुष्य के दिमाग में झूठ है और वह सभी को झूठा समझता है। इसलिए, (ईश्वर ने) ऐसे मनुष्य को अनावश्यक संघर्षों में उलझा दिया है। ऐसा मनुष्य बहुत बातें करता है, लेकिन परन्तु जो वह कहता है उसे कोई पसंद नहीं करता । ऐसा व्यक्ति एक परित्यक्ता स्त्री की भाँति घर घर भटकता है । कोई दूसरा व्यक्ति भी उसकी संगत में आने से दाग़ी हो जाता है। लेकिन जो गुरु का अनुयायी बन गया है, वह अलग रहता है और अहंकारी की संगत को छोड़ कर गुरु के निकट बैठता है । संक्षेप में, हे संतों, जो अपने गुरु को अस्वीकार करता है, वह एक अच्छा व्यक्ति नहीं है और उसने (अपने जीवन के श्वासों की) पूँजी एवं लाभ को व्यर्थ में गवाँ दिया है । नानक यह कहते और सुनाते हैं कि (गुरु के शिष्य के लिये) किसी भी वेद अथवा शास्त्र से उत्तम पूर्ण गुरु का आदेश अथवा वचन है । इसलिये पूर्ण गुरु की महिमा गुरु के शिष्य को भाती है, परन्तु, अभिमानी व्यक्ति को (सच्चे गुरु की प्रशंसा करने का) अवसर नहीं प्राप्त होता है ।(२)

पउड़ी

उपरोक्त अवधारणाओं का सारांश करते हुए गुरु जी कहते हैं: "अनन्त सत्य (प्रभु) सभी से बड़ा है, (लेकिन) केवल वही व्यक्ति उसे प्राप्त करता है जिसे सच्चे गुरु आशीर्वाद देते हैं। वह अकेला सच्चा गुरु है जो अनन्त पर ध्यान करता है (इस प्रकार) सच्चे गुरु और अनन्त ईश्वर एक ही हैं। वही केवल सच्चा गुरु है जिसने अपने पाँच विकारों को अपनी दृढ़ता से कम किया है। सच्चे गुरु की सेवा के बिना, जो स्वयं का प्रचार करते हैं (कि वह महान हैं) उनके भीतर झूठ है। इसी कारण वे हर जगह शापित हैं और उनके चेहरे निर्बल हैं । वह सच्चे गुरु से बिछुड़ चुके हैं, उनके साथ कोई भी बोल -चाल पसंद नहीं करता, अतः अपमान के भागी बनते हैं ।(८)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि हमारे मन में सदा अपने सच्चे गुरु के प्रति प्रेमपूर्ण श्रद्धा होनी चाहिये और कभी भी उसकी अवज्ञा करना अथवा अपमानजनक शब्द नहीं कहना चाहिए। तभी हम मनवाँछित फल प्राप्त कर सकेंगे और प्रभु को मिल पायेंगे - क्योंकि, सच्चा गुरु एंव ईश्वर वास्तव में एक ही हैं ।

ਪੰਨਾ ੩੦੫

ਸਲੋਕ ਮਃ ੪ ॥

ਅਗੋ ਦੇ ਸਤ ਭਾਉ ਨ ਦਿਚੈ ਪਿਛੋ ਦੇ ਆਖਿਆ ਕੰਮਿ ਨ ਆਵੈ ॥
ਅਧ ਵਿਚਿ ਫਿਰੈ ਮਨਮੁਖੁ ਵੇਚਾਰਾ ਗਲੀ ਕਿਉ ਸੁਖੁ ਪਾਵੈ ॥
ਜਿਸੁ ਅੰਦਰਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਨਹੀ ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਸੁ ਕੂੜੀ ਆਵੈ ਕੂੜੀ ਜਾਵੈ ॥
ਜੇ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇ ਮੇਰਾ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਕਰਤਾ ਤਾਂ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਨਦਰੀ ਆਵੈ ॥
ਤਾ ਅਪਿਉ ਪੀਵੈ ਸਬਦੁ ਗੁਰ ਕੇਰਾ ਸਭੁ ਕਾੜਾ ਅੰਦੇਸਾ ਭਰਮੁ ਚੁਕਾਵੈ ॥
ਸਦਾ ਅਨੰਦਿ ਰਹੈ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ ਜਨ ਨਾਨਕ ਅਨਦਿਨੁ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ॥੧॥

ਮਃ ੪ ॥

ਗੁਰ ਸਤਿਗੁਰ ਕਾ ਜੋ ਸਿਖੁ ਅਖਾਏ ਸੁ ਭਲਕੇ ਉਠਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵੈ ॥
ਉਦਮੁ ਕਰੇ ਭਲਕੇ ਪਰਭਾਤੀ ਇਸਨਾਨੁ ਕਰੇ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਸਰਿ ਨਾਵੈ ॥
ਉਪਦੇਸਿ ਗੁਰੂ ਹਰਿ ਹਰਿ ਜਪੁ ਜਾਪੈ ਸਭਿ ਕਿਲਵਿਖ ਪਾਪ ਦੋਖ ਲਹਿ ਜਾਵੇ
ਫਰਿ ਚੜੈ ਦਿਵਸੁ ਗੁਰਬਾਣੀ ਗਾਵੈ ਬਹਦਿਆ ਉਠਦਿਆ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵੈ ॥
ਜੋ ਸਾਸਿ ਗਿਰਾਸਿ ਧਿਆਏ ਮੇਰਾ ਹਰਿ ਹਰਿ ਸੋ ਗੁਰਸਿਖੁ ਗੁਰੂ ਮਨਿ ਭਾਵੈ ॥

ਪੰਨਾ ੩੦੬

ਜਿਸ ਨੋ ਦਇਆਲੁ ਹੋਵੈ ਮੇਰਾ ਸੁਆਮੀ ਤਿਸੁ ਗੁਰਸਿਖ ਗੁਰੂ ਉਪਦੇਸ ਸੁਣਾਵੈ ॥
ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਧੂੜਿ ਮੰਗੈ ਤਿਸੁ ਗੁਰਸਿਖ ਕੀ ਜੋ ਆਪਿ ਜਪੈ ਅਵਰਹ ਨਾਮੁ ਜਪਾਵੈ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਜੋ ਤੁਧੁ ਸਚੁ ਧਿਆਇਦੇ ਸੇ ਵਿਰਲੇ ਥੋੜੇ ॥
ਜੋ ਮਨਿ ਚਿਤਿ ਇਕੁ ਅਰਾਧਦੇ ਤਿਨ ਕੀ ਬਰਕਤਿ ਖਾਹਿ ਅਸੰਖ ਕਰੋੜੇ ॥
ਤੁਧੁਨੋ ਸਭ ਧਿਆਇਦੀ ਸੇ ਥਾਇ ਪਏ ਜੋ ਸਾਹਿਬ ਲੋੜੇ ॥
ਜੋ ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਖਾਦੇ ਪੈਨਦੇ ਸੇ ਮੁਏ ਮਰਿ ਜੰਮੇ ਕੋੜ੍ਹੇ ॥
ਓਇ ਹਾਜਰੁ ਮਿਠਾ ਬੋਲਦੇ ਬਾਹਰਿ ਵਿਸੁ ਕਢਹਿ ਮੁਖਿ ਘੋਲੇ ॥
ਮਨਿ ਖੋਟੇ ਦਯਿ ਵਿਛੋੜੇ ॥੧੧॥

पृ- ३०५

सलोक महला ४

अगो दे सत भाउ न दिचै पिछो दे आखिआ कँमि न आवै ॥
अध विचि फिरै मनमुखु वेचारा गली किउ सुखु पावै ॥
जिसु अँदरि प्रीति नही सतिगुर की सु कूड़ी आवै कूड़ी जावै ॥
जे कृपा करे मेरा हरि प्रभु करता तां सतिगुरु पारब्रहमु नदरी आवै ॥
ता अपिउ पीवै सबदु गुर केरा सभु काड़ा अँदेसा भरमु चुकावै ॥
सदा अनँदि रहै दिनु राती जन नानक अनदिनु हरि गुण गावै ॥१॥

म: ४ ॥

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अँमृत सरि नावै ॥
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै ॥
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि सो गुरसिखु गुरू मनि भावै ॥

पृ- ३०६

जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी तिसु गुरसिख गुरू उपदेस सुणावै ॥
जनु नानकु धूड़ि मँगै तिसु गुरसिख की जो आपि जपै अवरहु नामु जपावै ॥२॥

पउड़ी ॥

जो तुधु सचु धिआइदे से विरले थोड़े ॥
जो मनि चिति इकु अराधदे तिन की बरकति खाहि असँख करोड़े ॥
तुधुनो सभ धिआइदी से थाइ पए जो साहिब लोड़े ॥
जो बिनु सतिगुर सेवे खादे पैनदे से मुए मरि जँमे कोड़्हे ॥
ओइ हाजरु मिठा बोलदे बाहरि विसु कढहि मुखि घोले ॥
मनि खोटे दयि विछोड़े ॥११॥

सलोक महला ४

इस श्लोक में गुरु जी उन स्वार्थी जनों पर टिप्पणी करते हैं जो सही समय पर सच्चे गुरु को यथोचित सम्मान नहीं देते और कुछ समय के बाद व्यर्थ बहाने बना कर अपने को सही सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं ।

गुरु जी कहते हैं कि जो जन समय पर सच्चे गुरु का उचित आदर नहीं करता वह बाद में अपने पक्ष में कुछ भी कहे, उसका कोई लाभ नहीं होता । ऐसी दुविधा में रहने वाला दुर्भाग्य पूर्ण मनुष्य कैसे शांति पा सकता है । वह जो सच्चे गुरु को हृदय से प्यार नहीं करता, गुरु के दरबार में दिखावे के लिये झूठ के आवरण के साथ आता जाता है । परन्तु, यदि मेरा प्रभु उस पर कृपा करे तो वह सच्चे गुरु में ईश्वर को देख लेता है और गुरु की वाणी रूपी अँमृत का पान करने लगता है उसके सारे डर, दुख और शंकायें दूर हो जाती हैं । नानक दास कहतें हैं कि वह मनुष्य फिर सदा दिन और रात आनन्द में रहता है और ईश्वर के गुण गाता है । (१)

महला ॥ ४॥

अब गुरु जी उस व्यक्ति की परिभाषा देते हैं जो अपने को गुरु का सच्चा शिष्य कहलाना चाहता है । दूसरों में त्रुटियाँ ढूँढने की अपेक्षा

अपने आपको परखें कि हम गुरु के सच्चे शिष्य या अनुयायी बनने के कितने योग्य हैं ।

गुरु जी कहते हैं कि जो अपने को सच्चे गुरु का शिष्य कहता है उसे प्रति दिन सुबह जल्दी उठ कर ईश्वर का ध्यान करना चाहिये । सुबह जल्दी उठने का यत्न करे और स्नान करके ईश्वर भक्ति में इस तरह से लीन हो जाए जैसे दैवी अमृत के सागर में नहा रहा हो । गुरु के कथन के अनुसार हरि का नाम जपने से सभी पाप, दुख और दोष दूर हो जाते हैं । फिर वह दिन में उठते बैठते हरि का ध्यान करे और गुरु की वाणी का गायन करे । जो खाते पीते, हर साँस के साथ मेरे हरि का जाप करता है वह गुरु का शिष्य गुरु के मन को बहुत भाता है । जिस पर मेरे स्वामी तथा ईश्वर दयालु होते हैं उस शिष्य को गुरु भी सहायता व उपदेश देते हैं । नानक जन ऐसे हरि के भक्त की पैरों की धूल माँगते हैं जो प्रभु का नाम जपता है और दूसरों को भी प्रेरित करता है । (२)

पौड़ी॥

मनुष्य की स्थितियों को देखते हुये गुरु जी कहते हैं - बहुत कम मनुष्य ऐसे होते हैं जो ईश्वर तेरा ध्यान सच में करते हैं । जो तेरी अराधना एकाग्र मन से करते हैं उनकी बरकत से असंख्य करोड़ धन्य होते हैं । हे ईश्वर सभी तेरा ध्यान करते हैं पर तुम कुछ को ही शरण में लेते हो, जो तुम को भाते हैं। ईश्वर की सेवा एवं ध्यान ना करने वाले जो अपने ही कामों और खाने पीने में व्यस्त रहते हैं, मर कर कोढ़ी के रुप में जन्म लेते हैं । किसी के सम्मुख मीठा बोलने वाला यदि पीठ पीछे विष भरी भाषा बोलता है तो ऐसे मन के खोटे मनुष्य को ईश्वर अपनी दया और कृपा से वंचित कर देता है ।(११)

उपरोक्त शब्द का संदेश यह है कि यदि हम गुरु के सच्चे शिष्य कहलाना चाहते हैं तो रोज़ सुबह जल्दी उठकर ईश्वर का ध्यान करें तथा गुरु की वाणी का पाठ करें, उसके बाद ही अपने दूसरे काम करने चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੩੦੭

ਸਲੋਕ ਮਃ ੪ ॥

ਧੁਰਿ ਮਾਰੇ ਪੂਰੈ ਸਤਿਗੁਰੂ ਸੇਈ ਹੁਣਿ ਸਤਿਗੁਰਿ ਮਾਰੇ ॥
ਜੇ ਮੇਲਣ ਨੋ ਬਹੁਤੇਰਾ ਲੋਚੀਐ ਨ ਦੇਈ ਮਿਲਣ ਕਰਤਾਰੇ ॥
ਸਤਸੰਗਤਿ ਢੋਈ ਨਾ ਲਹਨਿ ਵਿਚਿ ਸੰਗਤਿ ਗੁਰਿ ਵੀਚਾਰੇ ॥
ਕੋਈ ਜਾਇ ਮਿਲੈ ਹੁਣਿ ਓਨਾ ਨੋ ਤਿਸੁ ਮਾਰੇ ਜਮੁ ਜੰਦਾਰੇ ॥
ਗੁਰਿ ਬਾਬੈ ਫਿਟਕੇ ਸੇ ਫਿਟੇ ਗੁਰਿ ਅੰਗਦਿ ਕੀਤੇ ਕੂੜਿਆਰੇ ॥
ਗੁਰਿ ਤੀਜੀ ਪੀੜੀ ਵੀਚਾਰਿਆ ਕਿਆ ਹਥਿ ਏਨਾ ਵੇਚਾਰੇ ॥
ਗੁਰੁ ਚਉਥੀ ਪੀੜੀ ਟਿਕਿਆ ਤਿਨਿ ਨਿੰਦਕ ਦੁਸਟ ਸਭਿ ਤਾਰੇ ॥
ਕੋਈ ਪੁਤੁ ਸਿਖੁ ਸੇਵਾ ਕਰੇ ਸਤਿਗੁਰੂ ਕੀ ਤਿਸੁ ਕਾਰਜ ਸਭਿ ਸਵਾਰੇ ॥
ਜੋ ਇਛੈ ਸੋ ਫਲੁ ਪਾਇਸੀ ਪੁਤੁ ਧਨੁ ਲਖਮੀ ਖੜਿ ਮੇਲੇ ਹਰਿ ਨਿਸਤਾਰੇ ॥
ਸਭਿ ਨਿਧਾਨ ਸਤਿਗੁਰੂ ਵਿਚਿ ਜਿਸੁ ਅੰਦਰਿ ਹਰਿ ਉਰ ਧਾਰੇ ॥
ਸੋ ਪਾਏ ਪੂਰਾ ਸਤਿਗੁਰੂ ਜਿਸੁ ਲਿਖਿਆ ਲਿਖਤੁ ਲਿਲਾਰੇ ॥
ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਮਾਗੈ ਧੂੜਿ ਤਿਨ ਜੋ ਗੁਰਸਿਖ ਮਿਤ ਪਿਆਰੇ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੩੦੮

ਮਃ ੪ ॥

ਜਿਨ ਕਉ ਆਪਿ ਦੇਇ ਵਡਿਆਈ ਜਗਤੁ ਭੀ ਆਪੇ ਆਣਿ ਤਿਨ ਕਉ ਪੈਰੀ ਪਾਏ ॥
ਡਰੀਐ ਤਾਂ ਜੇ ਕਿਛੁ ਆਪ ਦੂ ਕੀਚੈ ਸਭੁ ਕਰਤਾ ਆਪਣੀ ਕਲਾ ਵਧਾਏ ॥
ਦੇਖਹੁ ਭਾਈ ਏਹੁ ਅਖਾੜਾ ਹਰਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਸਚੇ ਕਾ ਜਿਨਿ ਆਪਣੈ ਜੋਰਿ ਸਭਿ ਆਣਿ ਨਿਵਾਏ ॥
ਆਪਣਿਆ ਭਗਤਾ ਕੀ ਰਖ ਕਰੇ ਹਰਿ ਸੁਆਮੀ ਨਿੰਦਕਾ ਦੁਸਟਾ ਕੇ ਮੁਹ ਕਾਲੇ ਕਰਾਏ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਵਡਿਆਈ ਨਿਤ ਚੜੈ ਸਵਾਈ ਹਰਿ ਕੀਰਤਿ ਭਗਤਿ ਨਿਤ ਆਪਿ ਕਰਾਏ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਨਾਮੁ ਜਪਹੁ ਗੁਰਸਿਖਹੁ ਹਰਿ ਕਰਤਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਘਰੀ ਵਸਾਏ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਬਾਣੀ ਸਤਿ ਸਤਿ ਕਰਿ ਜਾਣਹੁ ਗੁਰਸਿਖਹੁ ਹਰਿ ਕਰਤਾ ਆਪਿ ਮੁਹਹੁ ਕਢਾਏ ॥
ਗੁਰਸਿਖਾ ਕੇ ਮੁਹ ਉਜਲੇ ਕਰੇ ਹਰਿ ਪਿਆਰਾ ਗੁਰ ਕਾ ਜੈਕਾਰੁ ਸੰਸਾਰਿ ਸਭਤੁ ਕਰਾਏ ॥
ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਹਰਿ ਕਾ ਦਾਸੁ ਹੈ ਹਰਿ ਦਾਸਨ ਕੀ ਹਰਿ ਪੈਜ ਰਖਾਏ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਤੂ ਸਚਾ ਸਾਹਿਬੁ ਆਪਿ ਹੈ ਸਚੁ ਸਾਹ ਹਮਾਰੇ ॥
ਸਚੁ ਪੂਜੀ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇ ਪ੍ਰਭ ਵਣਜਾਰੇ ਥਾਰੇ ॥
ਸਚੁ ਸੇਵਹਿ ਸਚੁ ਵਣੰਜਿ ਲੈਹਿ ਗੁਣ ਕਥਹ ਨਿਰਾਰੇ ॥
ਸੇਵਕ ਭਾਇ ਸੇ ਜਨ ਮਿਲੇ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਸਵਾਰੇ ॥
ਤੂ ਸਚਾ ਸਾਹਿਬੁ ਅਲਖੁ ਹੈ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਲਖਾਰੇ ॥੧੪॥

पृ- ३०७

सलोक महला ४

धुरि मारे पूरै सतिगुरू सेई हुणि सतिगुरि मारे ॥
जे मेलण नो बहुतेरा लोचीऐ न देई मिलण करतारे ॥
सतसँगति ढोई ना लहनि विचि सँगति गुरि वीचारे ॥
कोई जाइ मिलै हुणि ओना नो तिसु मारे जमु जँदारे ॥
गुरि बाबै फिटके से फिटे गुरि अँगदि कीते कूड़िआरे ॥
गुरि तीजी पीड़ी वीचारिआ किआ हथि एना वेचारे ॥
गुरु चउथी पीड़ी टिकिआ तिनि निँदक दुसट सभि तारे ॥
कोई पुतु सिखु सेवा करे सतिगुरू की तिसु कारज सभि सवारे ॥
जो इछै सो फलु पाइसी पुतु धनु लखमी खड़ि मेले हरि निसतारे ॥
सभि निधान सतिगुरू विचि जिसु अँदरि हरि उर धारे ॥
सो पाए पूरा सतिगुरू जिसु लिखिआ लिखतु लिलारे ॥
जन नानक मागै धूड़ि तिन जो गुरसिख मित पिआरे ॥१॥

पृ- ३०८

म: ४ ॥

जिन कउ आपि देइ वडिआई जगतु भी आपे आणि तिन कउ पैरी पाए ॥
डरीऐ तां जे किछु आप दू कीचै सभु करता आपणी कला वधाए ॥
देखहु भाई एहु अखाड़ा हरि प्रीतम सचे का जिनि आपणै जोरि सभि आणि निवाए ॥
आपणिआ भगता की रख करे हरि सुआमी निँदका दुसटा के मुह काले कराए ॥
सतिगुर की वडिआई नित चड़ै सवाई हरि कीरति भगति नित आपि कराए ॥
अनदिनु नामु जपहु गुरसिखहु हरि करता सतिगुरु घरी वसाए ॥
सतिगुर की बाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु हरि करता आपि मुहहु कढाए ॥
गुरसिखा के मुह उजले करे हरि पिआरा गुर का जैकारु सँसारि सभतु कराए ॥
जनु नानकु हरि का दासु है हरि दासन की हरि पैज रखाए ॥२॥

पउड़ी ॥
तू सचा साहिबु आपि है सचु साह हमारे ॥
सचु पूजी नामु दिृड़ाइ प्रभ वणजारे थारे ॥
सचु सेवहि सचु वणँजि लैहि गुण कथह निरारे ॥
सेवक भाइ से जन मिले गुर सबदि सवारे ॥
तू सचा साहिबु अलखु है गुर सबदि लखारे ॥१४॥

सलोक महला - ४

इस शब्द में गुरु जी उन दुर्जनों के विषय में बता रहे हैं जो कि प्रथम गुरु जी के द्वारा शापित थे और कोई पश्चातप न करके फिर से दूसरे और तीसरे गुरु जी से अपना सम्मान किसी भी प्रकार से प्राप्त करना चाहते थे ।

वह कहते हैं कि शुरू से ही जो पूर्ण गुरु(नानक देव जी) के द्वारा शापित थे उनको तीसरे गुरु (अमर दास जी) ने भी स्वीकार नहीं किया।

ईश्वर ऐसे लोगों की हमारे चाहने पर भी गुरु से मिलाने में सहायता नहीं करता ।गुरु की अनुयायी संगत में भी उन्हें आश्रय नहीं मिलता । यदि कोई और भी उनसे मिलना चाहे तो यमराज उसे समाप्त कर देते हैं । गुरु नानक ने जिनको फटकारा था उनको गुरु अंगद देव जी ने झूठा कहा। बाद में गुरु अमरदास जी ने उनकी विवशता पर विचार किया और चौथे गुरु (रामदास जी) ने उन परनिंदकों और दुष्टों का कल्याण किया । इस उदाहरण से पता चलता है कि कोई पुत्र अथवा शिष्य यदि सच्चे मन से ईश्वर की सेवा करता है तो उसके काम सँवर जाते हैं और वह अपना मनोवांछित फल, पुत्र, धन या अन्य पदार्थों के रूप में प्राप्त कर लेता है । जिसने हृदय में हरि को धारण किया है उसे ईश्वर ने सारे ख़ज़ाने दिये हैं । पूर्ण ईश्वर की प्राप्ति उसी को होती है जिसके भाग्य में लिखा है । अतः, जन नानक उन मित्रों की चरणधूलि को माँगते हैं जो मेरे प्रिय गुरु के शिष्य हैं ।(१)

महला ४॥

इस शब्द में वर्णन करते हैं कि ईश्वर स्वयं जिनका आदर करता है, उनके चरणों में संसार के प्राणी भी आकर नमन करते हैं । यह सब उस ईश्वर की लीला है जो हमें भय मुक्त सम्मान देती है । हे भाई, यह संसार रुपी अखाड़ा सच्चे तथा प्रिय हरि का है जहाँ आकर उसकी शक्ति के सामने सब झुकते हैं । अपने भक्तों की रक्षा स्वामी करते हैं, तथा निंदको और दुष्टों का मुँह काला होता है । सच्चे ईश्वर की महिमा व कीर्ति भक्तों के द्वारा नित्य ही प्रफुल्लित होती है । हे गुरु के शिष्यों - रात दिन ईश्वर का नाम जपो और वह आपको अपने ही घर में शरण देता है । हे गुरु के शिष्यों - गुरु की वाणी को सत्य मानो ईश्वर उसका गायन आपके मुख से स्वयं करायेंगे । मेरा प्यारा हरि गुरु के शिष्यों का मुख उजला रखता है और गुरु की जयजयकार संसार में सभी करते हैं । जन नानक हरि का दास है और दासों की मर्यादा की रक्षा हरि स्वयं करते हैं ।

पौड़ी ॥

तुम सच्चे स्वामी होऔर सच्चे साहूकार हो हमारे । तुमने हमें सच्चे नाम की पूँजी दी है और प्रभु हम तुम्हारे छोटे से व्यापारी हैं । केवल तुम्हारे गुणों का गान ही सच्ची सेवा और सच्चा व्यापार है । गुरु के शब्द से सँवरे मनुष्य एक सेवक की भाँति तुमसे मिलते हैं । हे सच्चे स्वामी तुम दिखाई नहीं देते पर गुरु का शब्द ही तुम्हें देखने के लिए हमें योग्यता प्रदान करता है ।(१४)

इस शब्द का संदेश है कि ईश्वर सत्य है, अपने भक्तों के सम्मान की रक्षा करता है और दुष्टों को नीचा दिखाता है ।

ਪੰਨਾ ੩੦੯

ਸਲੋਕ ਮਃ ੪ ॥

ਜੋ ਨਿੰਦਾ ਕਰੇ ਸਤਿਗੁਰ ਪੂਰੇ ਕੀ ਸੁ ਅਉਖਾ ਜਗ ਮਹਿ ਹੋਇਆ ॥
ਨਰਕ ਘੋਰੁ ਦੁਖ ਖੂਹੁ ਹੈ ਓਥੈ ਪਕੜਿ ਓਹੁ ਢੋਇਆ ॥
ਕੂਕ ਪੁਕਾਰ ਕੋ ਨ ਸੁਣੇ ਓਹੁ ਅਉਖਾ ਹੋਇ ਹੋਇ ਰੋਇਆ ॥
ਓਨਿ ਹਲਤੁ ਪਲਤੁ ਸਭੁ ਗਵਾਇਆ ਲਾਹਾ ਮੂਲੁ ਸਭੁ ਖੋਇਆ ॥
ਓਹੁ ਤੇਲੀ ਸੰਦਾ ਬਲਦੁ ਕਰਿ ਨਿਤ ਭਲਕੇ ਉਠਿ ਪ੍ਰਭਿ ਜੋਇਆ ॥
ਹਰਿ ਵੇਖੈ ਸੁਣੈ ਨਿਤ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਤਿਦੂ ਕਿਛੁ ਗੁਝਾ ਨ ਹੋਇਆ ॥
ਜੈਸਾ ਬੀਜੇ ਸੋ ਲੁਣੈ ਜੇਹਾ ਪੁਰਬਿ ਕਿਨੈ ਬੋਇਆ ॥
ਜਿਸੁ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇ ਪ੍ਰਭੁ ਆਪਣੀ ਤਿਸੁ ਸਤਿਗੁਰ ਕੇ ਚਰਣ ਧੋਇਆ ॥
ਗੁਰ ਸਤਿਗੁਰ ਪਿਛੈ ਤਰਿ ਗਇਆ ਜਿਉ ਲੋਹਾ ਕਾਠ ਸੰਗੋਇਆ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇ ਤੂ ਜਪਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਸੁਖੁ ਹੋਇਆ ॥੧॥

ਮਃ ੪ ॥

ਵਡਭਾਗੀਆ ਸੋਹਾਗਣੀ ਜਿਨਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਮਿਲਿਆ ਹਰਿ ਰਾਇ ॥
ਅੰਤਰ ਜੋਤਿ ਪ੍ਰਗਾਸੀਆ ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਸਮਾਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਇਹੁ ਸਰੀਰੁ ਸਭੁ ਧਰਮੁ ਹੈ ਜਿਸੁ ਅੰਦਰਿ ਸਚੇ ਕੀ ਵਿਚਿ ਜੋਤਿ ॥
ਗੁਹਜ ਰਤਨ ਵਿਚਿ ਲੁਕਿ ਰਹੇ ਕੋਈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਸੇਵਕੁ ਕਢੈ ਖੋਤਿ ॥
ਸਭੁ ਆਤਮ ਰਾਮੁ ਪਛਾਣਿਆ ਤਾਂ ਇਕੁ ਰਵਿਆ ਇਕੋ ਓਤਿ ਪੋਤਿ ॥
ਇਕੁ ਦੇਖਿਆ ਇਕੁ ਮੰਨਿਆ ਇਕੋ ਸੁਣਿਆ ਸ੍ਰਵਣ ਸਰੋਤਿ ॥

ਪੰਨਾ ੩੧੦

ਜਨ ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਸਲਾਹਿ ਤੂ ਸਚੁ ਸਚੇ ਸੇਵਾ ਤੇਰੀ ਹੋਤਿ ॥੧੬॥

पृ- ३०९

सलोक महला ४

जो निंदा करे सतिगुर पूरे की सु अउखा जग महि होइआ ॥
नरक घोरु दुख खूहु है ओथै पकड़ि ओहु ढोइआ ॥
कूक पुकार को न सुणे ओहु अउखा होइ होइ रोइआ ॥
ओनि हलतु पलतु सभु गवाइआ लाहा मूलु सभु खोइआ ॥
ओहु तेली सँदा बलदु करि नित भलके उठि प्रभि जोइआ ॥
हरि वेखै सुणै नित सभु किछु तिदू किछु गुझा न होइआ ॥
जैसा बीजे सो लुणै जेहा पुरबि किनै बोइआ ॥
जिसु कृिपा करे प्रभु आपणी तिसु सतिगुर के चरण धोइआ ॥
गुर सतिगुर पिछै तरि गइआ जिउ लोहा काठ सँगोइआ ॥
जन नानक नामु धिआइ तू जपि हरि हरि नामि सुखु होइआ ॥१॥

म: ४ ॥

वडभागीआ सोहागणी जिना गुरमुखि मिलिआ हरि राइ ॥
अँतर जोति प्रगासीआ नानक नामि समाइ ॥२॥

पउड़ी ॥

इहु सरीरु सभु धरमु है जिसु अँदरि सचे की विचि जोति ॥
गुहज रतन विचि लुकि रहे कोई गुरमुखि सेवकु कढै खोति ॥
सभु आतम रामु पछाणिआ तां इकु रविआ इको ओति पोति ॥
इकु देखिआ इकु मँनिआ इको सुणिआ स्रवण सरोति ॥

पृ- ३१०

जन नानक नामु सलाहि तू सचु सचे सेवा तेरी होति ॥१६॥

सलोक म: ४

गुरु के निंदक को कैसी कैसी व्यथायें होती हैं, इस विषय पर गुरु जी यहाँ पर कहते हैं - निंदक संसार में दुखी रहता है, वह नर्क रूपी यातनायों के गहरे कुयें में फेंका जाता है । वह दुखी हो होकर रोता है किन्तु कोई उसकी चीख़ पुकार को नहीं सुनता । वह अपने अगले और पिछले संस्कारों की कमाई मूल ब्याज सहित गँवा देता है । प्रभु उसे एक तेली के कोल्हू के बैल की तरह रोज़ सुबह जोत देते हैं । हरि प्रतिदिन सब कुछ देखता है, सुनता है, उससे कुछ भी छिपा नहीं है । जैसा बीज किसी ने पहले बोया है वैसा ही काटेगा । जिस पर प्रभु अपनी कृपा करते हैं वही सच्चे गुरु के चरण पखारता है । जैसे लोहा लकड़ी के साथ लगा होने से पानी में तैरता है, वैसे ही सच्चे गुरु का साथ पाकर व्यक्ति (भवजल के) पार हो जाता है । हे नानक जन तुम हरि के नाम का ध्यान करो, जाप करो, सब सुख होगा ।(१)

महला ४॥

जिस गुरु के प्यारे को महान प्रभु मिले हैं, वह आत्मा रूपी सोहागिन भाग्यशाली है । नानक कहते हैं कि हरि नाम का निवास होने के बाद अँतरआत्मा में दैवी ज्योति का प्रकाश हो जाता है ।

पौड़ी ॥

ऊपरोक्त विचारों का सारांश करते हुये, गुरु जी कहतै हैं: "हमारी यह देह धार्मिकता प्राप्त करने का स्थान है, इसमें शाश्वत ईश्वर का प्रकाश छिपा है। जिसके अंदर सच्चे प्रभु की ज्योति है वह हमारा शरीर स्वयं ही धर्म के समान है । उसके अंदर गहरे रत्न छुपे हैं, जिन्हें कोई गुरु का सेवक ही खोद कर निकाल पाता है और तब पता लगता है कि सभी आत्माओं अथवा प्राणियों के ताने बाने के अंदर एक ही राम बसते हैं । ऐसा व्यक्ति उसी एक प्रभु को देखता है, उस पर विश्वास करता है और उसी एक की आवाज़ सुनता है। हे' भक्त नानक, तुम प्रभु

के नाम की महिमा करो, यही तुम्हारी सच्चे (प्रभु) के प्रति सच्ची सेवा होगी ”।(१६)

इस शब्द का संदेश है - कि हम कभी भी अपने सच्चे गुरु (ग्रंथ साहिब) को अपमानित ना करें, अवज्ञा ना करें । उनके आदेशों का पालन करते हुये सदा ईश्वर का ध्यान करें । वह सर्वव्यापी है, अमर है और हमारी सच्ची सेवा ही हमें शांति प्रदान करेगी ।

ਪੰਨਾ ੩੧੧

ਸਲੋਕ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਗਉੜੀ ਰਾਗਿ ਸੁਲਖਣੀ ਜੇ ਖਸਮੈ ਚਿਤਿ ਕਰੇਇ ॥
ਭਾਣੈ ਚਲੈ ਸਤਿਗੁਰੂ ਕੈ ਐਸਾ ਸੀਗਾਰੁ ਕਰੇਇ ॥
ਸਚਾ ਸਬਦੁ ਭਤਾਰੁ ਹੈ ਸਦਾ ਸਦਾ ਰਾਵੇਇ ॥
ਜਿਉ ਉਬਲੀ ਮਜੀਠੈ ਰੰਗੁ ਗਹਗਹਾ ਤਿਉ ਸਚੇ ਨੋ ਜੀਉ ਦੇਇ ॥
ਰੰਗਿ ਚਲੂਲੈ ਅਤਿ ਰਤੀ ਸਚੇ ਸਿਉ ਲਗਾ ਨੇਹੁ ॥
ਕੂੜੁ ਠਗੀ ਗੁਝੀ ਨਾ ਰਹੈ ਕੂੜੁ ਮੁਲੰਮਾ ਪਲੇਟਿ ਧਰੇਹੁ ॥
ਕੂੜੀ ਕਰਨਿ ਵਡਾਈਆ ਕੂੜੇ ਸਿਉ ਲਗਾ ਨੇਹੁ ॥
ਨਾਨਕ ਸਚਾ ਆਪਿ ਹੈ ਆਪੇ ਨਦਰਿ ਕਰੇਇ ॥੧॥

ਮਃ ੪ ॥

ਸਤਸੰਗਤਿ ਮਹਿ ਹਰਿ ਉਸਤਤਿ ਹੈ ਸੰਗਿ ਸਾਧੂ ਮਿਲੇ ਪਿਆਰਿਆ ॥
ਓਇ ਪੁਰਖ ਪ੍ਰਾਣੀ ਧੰਨਿ ਜਨ ਹਹਿ ਉਪਦੇਸੁ ਕਰਹਿ ਪਰਉਪਕਾਰਿਆ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਵਹਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸੁਣਾਵਹਿ ਹਰਿ ਨਾਮੇ ਜਗੁ ਨਿਸਤਾਰਿਆ ॥
ਗੁਰ ਵੇਖਣ ਕਉ ਸਭੁ ਕੋਈ ਲੋਚੈ ਨਵ ਖੰਡ ਜਗਤਿ ਨਮਸਕਾਰਿਆ ॥
ਤੁਧੁ ਆਪੇ ਆਪੁ ਰਖਿਆ ਸਤਿਗੁਰ ਵਿਚਿ ਗੁਰੁ ਆਪੇ ਤੁਧੁ ਸਵਾਰਿਆ ॥
ਤੂ ਆਪੇ ਪੂਜਹਿ ਪੂਜ ਕਰਾਵਹਿ ਸਤਿਗੁਰ ਕਉ ਸਿਰਜਣਹਾਰਿਆ ॥
ਕੋਈ ਵਿਛੁੜਿ ਜਾਇਸਤਿਗੁਰੂ ਪਾਸਹੁ ਤਿਸੁ ਕਾਲਾ ਮੁਹੁ ਜਮਿ ਮਾਰਿਆ ॥

ਪੰਨਾ ੩੧੨

ਤਿਸੁ ਅਗੈ ਪਿਛੈ ਢੋਈ ਨਾਹੀ ਗੁਰਸਿਖੀ ਮਨਿ ਵੀਚਾਰਿਆ ॥
ਸਤਿਗੁਰੂ ਨੋ ਮਿਲੇ ਸੇਈ ਜਨ ਉਬਰੇ ਜਿਨ ਹਿਰਦੈ ਨਾਮੁ ਸਮਾਰਿਆ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕੇ ਗੁਰਸਿਖ ਪੁਤਹਹੁ ਹਰਿ ਜਪਿਅਹੁ ਹਰਿ ਨਿਸਤਾਰਿਆ ॥੨॥
ਹਉਮੈ ਜਗਤੁ ਭੁਲਾਇਆ ਦੁਰਮਤਿ ਬਿਖਿਆ ਬਿਕਾਰ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਮਿਲੈ ਤ ਨਦਰਿ ਹੋਇ ਮਨਮੁਖ ਅੰਧ ਅੰਧਿਆਰ ॥
ਨਾਨਕ ਆਪੇ ਮੇਲਿ ਲਏ ਜਿਸ ਨੋ ਸਬਦਿ ਲਾਏ ਪਿਆਰੁ ॥੩॥

ਪਉੜੀ ॥

ਸਚੁ ਸਚੇ ਕੀ ਸਿਫਤਿ ਸਲਾਹ ਹੈ ਸੋ ਕਰੇ ਜਿਸੁ ਅੰਦਰੁ ਭਿਜੈ ॥
ਜਿਨੀ ਇਕ ਮਨਿ ਇਕੁ ਅਰਾਧਿਆ ਤਿਨ ਕਾ ਕੰਧੁ ਨ ਕਬਹੂ ਛਿਜੈ ॥
ਧਨੁ ਧਨੁ ਪੁਰਖ ਸਾਬਾਸਿ ਹੈ ਜਿਨ ਸਚੁ ਰਸਨਾ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪਿਜੈ ॥
ਸਚੁ ਸਚਾ ਜਿਨ ਮਨਿ ਭਾਵਦਾ ਸੇ ਮਨਿ ਸਚੀ ਦਰਗਹ ਲਿਜੈ ॥
ਧਨੁ ਧੰਨੁ ਜਨਮੁ ਸਚਿਆਰੀਆ ਮੁਖ ਉਜਲ ਸਚੁ ਕਰਿਜੈ ॥੨੦॥

पृ- ३११

सलोक महला ३ ॥

गउड़ी रागि सुलखणी जे खसमै चिति करेइ ॥
भाणै चलै सतिगुरू कै ऐसा सीगारु करेइ ॥
सचा सबदु भतारु है सदा सदा रावेइ ॥
जिउ उबली मजीठै रँगु गहगहा तिउ सचे नो जीउ देइ ॥
रँगि चलूलै अति रती सचे सिउ लगा नेहु ॥
कूड़ु ठगी गुझी ना रहै कूड़ु मुलँमा पलेटि धरेहु ॥
कूड़ी करनि वडाइआ कूड़े सिउ लगा नेहु ॥
नानक सचा आपि है आपे नदरि करेइ ॥१॥

महला ४॥

सतसँगति महि हरि उसतति है सँगि साधू मिले पिआरिआ ॥
ओइ पुरख प्राणी धँनि जन हहि उपदेसु करहि परउपकारिआ ॥
हरि नामु दिड़ावहि हरि नामु सुणावहि हरि नामे जगु निसतारिआ ॥
गुर वेखण कउ सभु कोई लोचै नव खँड जगति नमसकारिआ ॥
तुधु आपे आपु रखिआ सतिगुर विचि गुरु आपे तुधु सवारिआ ॥
तू आपे पूजहि पूज करावहि सतिगुर कउ सिरजणहारिआ ॥
कोई विछुड़ि जाइ सतिगुरू पासहु तिस काला मुहु जमि मारिआ ॥

पृ- ३१२

तिसु अगै पिछै ढोई नाही गुरसिखी मनि वीचारिआ ॥
सतिगुरू नो मिले सेई जन उबरे जिन हिरदै नामु समारिआ ॥
जन नानक के गुरसिख पुतहहु हरि जपिअहु हरि निसतारिआ ॥२॥
हउमै जगतु भुलाइआ दुरमति बिखिआ बिकार ॥
सतिगुरु मिलै त नदरि होइ मनमुख अँध अँधिआर ॥
नानक आपे मेलि लए जिस नो सबदि लाए पिआरु ॥३॥

पउड़ी ॥

सचु सचे की सिफति सलाह है सो करे जिसु अँदरु भिजै॥
जिनी इक मनि इकु अराधिआ तिन का कँधु न कबहू छिजै॥
धनु धनु पुरख साबासि है जिन सचु रसना अँमृतु पिजै ॥
सचु सचा जिन मनि भावदा से मनि सची दरगह लिजै ॥
धनु धँनु जनमु सचिआरीआ मुख उजल सचु करिजै ॥२०॥

सलोक महला-३ ॥

डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार पुराने समय के संगीतज्ञ कई बार विभिन्न रागों के अनुरूप वस्त्र धारण करके श्रोताओं के सामने गाया करते थे । इस श्लोक में संगीत प्रेमी होने के नाते गुरु जी राग गौड़ी के द्वारा ईश्वर के प्रति अपनी प्रेम भावनाओं को प्रकट करते हैं ।

वह कहते हैं - कि गौड़ी राग एक सुंदर स्त्री (आत्मा) का संदेश देता है जो ईश्वर को मन में धारती है । उसका श्रंगार सच्चे गुरु की इच्छा के अनुसार चलने से होता है । गुरु का सच्चा शब्द उस के लिए उसके पति के आदेश समानं है, जो उस को हर समय याद रखना चाहिए । उबले हुये मजीठे के गहरे एवं पक्के रंग की तरह जो अपने ह्रदय को ईश्वर के रंग में पक्का रंगे और अपने आप को सच्चे ईश्वर के सम्मुख समर्पित कर दे ।

(ईश्वर प्रेम के पक्के) रंग में अतिरंजित होने के पश्चात ऐसी आत्मा का सच्चे ईश्वर से स्नेह बना रहता है । (इसके विपरीत) झूठे

और ठगबाज कभी छुप नहीं सकते चाहे उनके ऊपर कितने भी झूठे आवरण लपेट दिये जांऐ । ऐसे व्यक्ति झूठी प्रशंसा करते हैं और उन का झूठे से प्रेम होता है । हे नानक, ईश्वर स्वयं सत्य है और कोई जीव तभी उससे सच्चा प्रेम करता है, जब ईश्वर स्वयं ही उस पर अपनी कृपा दृष्टि करता है ।(१)

महला ४॥

सच्ची संगत के लाभ का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं - हे मेरे मित्र, ईश्वर की महिमा का ज्ञान साधु जनों की सच्ची संगत में मिलता है, वहां गुरु की संगत भी मिलती है । वह प्राणी धन्य हैं जिन्होंने हरि उपदेश देकर अन्य लोगों पर उपकार किया है । उन्होंने हरि का नाम सबको सिखाया, सबको श्रवण करवाया और संसार का उद्धार किया है । सभी लोग गुरु के दर्शनों की कामना करते हैं और संसार के समस्त नौ खंडों से नमस्कार करते हैं । (हे ईश्वर), तुमने अपने को सच्चे गुरु में छुपा रखा है और स्वयं ही तुम गुरु को क्षमता प्रदान करते हो । हे सृजनकर्ता, तुम सच्चे गुरु की स्वयं भी पूजा करते हो और दूसरों से भी करवाते हो । यदि कोई सच्चे गुरु से अलग होकर बिछुड़ जाता है, तो उसको यमराज मुँह काला करके दण्डित करते हैं। गुरु के शिष्य यह समझ गये हैं कि ऐसे मनुष्य का आगे पीछे कोई सहारा नहीं है । जिसके ह्रदय में हरि नाम समाया है वही सच्चे गुरु से मिल कर अपना उद्धार प्राप्त करते हैं । इसलिये, हे ‘ जन नानक के गुरसिख पुत्रों हरि नाम को जपो, हरि ही उद्धार करते हैं ।(२)

महला ३॥

गुरु जी के अनुसार सच्चे गुरु को प्राप्त करने की आवश्यकता का अन्य कारण यह है कि अहम भावना के अन्तर्गत सभी सांसारिक जीव दुष्ट वृत्तियों के विषय विकारों में खो गये हैं । ऐसे अंधकार में खोये मनुष्य को अगर सच्चे गुरु के रूप में प्रकाश प्राप्त होता है, तभी उस पर ईश्वर की कृपा दृष्टि होती है। हे नानक, जिस में ईश्वर स्वयं गुरु के शब्द के प्रति प्यार जगा देता है उसे अपने से मिला लेता है।(३)

पौड़ी ॥

अंत में गुरु जी कहते हैं कि जो ईश्वर में लीन है, वही उसकी सदा सच्ची प्रशंसा करता है । जिन्होंने एकाग्र मन से एक (ईश्वर) की अराधना की है उनका शरीर कभी (दुष्कर्मों के कारण) दुर्बल नहीं होता । जिनकी जिह्वा ने सच्चे (प्रभु नाम रूपी) अँमृत रस का पान किया है वह धन्य हैं, प्रशंसा के पात्र हैं । जिनके ह्रदय को सच्चा (प्रभु) भाता है उनको सच्ची दरगाह में मान प्राप्त होता है । ऐसे सच्चे जीवन धन्य हैं और सत्य के साथ रहने के कारण उनके मुख उजले हैं । (२०)

इस पौड़ी का संदेश है कि यदि हम ईश्वर की कृपा चाहते हैं तो हमें साधु संतों की संगत में रहना चाहिये । ईश्वर के नाम का गुणगान एवं गुरु ग्रंथ साहिब जी का अनुसरण करना चाहिए । तब हम अपने दंभ और दुर्भावनाओं का त्याग करेंगे और सच्चे प्रेम व श्रद्धा के साथ प्रभु का गुणगान करेंगे जिससे कि एक दिन कृपा करके प्रभु हमें अपना आशीर्वाद दें और अपने में लीन करलें ।

ਪੰਨਾ ੩੧੩

ਸਲੋਕ ਮਃ ੪ ॥

ਮੈ ਮਨੁ ਤਨੁ ਖੋਜਿ ਖੋਜੇਦਿਆ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਲਧਾ ਲੋੜਿ ॥
ਵਿਸਟੁ ਗੁਰੂ ਮੈ ਪਾਇਆ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਦਿਤਾ ਜੋੜਿ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਮਾਇਆਧਾਰੀ ਅਤਿ ਅੰਨਾ ਬੋਲਾ ॥
ਸਬਦੁ ਨ ਸੁਣਈ ਬਹੁ ਰੋਲ ਘਚੋਲਾ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਪੈ ਸਬਦਿ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸੁਣਿ ਮੰਨੇ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਸਮਾਇ ॥
ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਸੁ ਕਰੇ ਕਰਾਇਆ ॥
ਨਾਨਕ ਵਜਦਾ ਜੰਤੁ ਵਜਾਇਆ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੩੧੪

ਪਉੜੀ ॥

ਤੂ ਕਰਤਾ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਜਾਣਦਾ ਜੋ ਜੀਆ ਅੰਦਰਿ ਵਰਤੈ ॥
ਤੂ ਕਰਤਾ ਆਪਿ ਅਗਣਤੁ ਹੈ ਸਭੁ ਜਗੁ ਵਿਚਿ ਗਣਤੈ ॥
ਸਭੁ ਕੀਤਾ ਤੇਰਾ ਵਰਤਦਾ ਸਭ ਤੇਰੀ ਬਣਤੈ ॥
ਤੂ ਘਟਿ ਘਟਿ ਇਕੁ ਵਰਤਦਾ ਸਚੁ ਸਾਹਿਬ ਚਲਤੈ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਨੋ ਮਿਲੇ ਸੁ ਹਰਿ ਮਿਲੇ ਨਾਹੀ ਕਿਸੈ ਪਰਤੈ ॥੨੪॥

पृ-३१३

सलोक म. ४॥

मै मनु तनु खोजि खोजेदिआ सो प्रभु लधा लोड़ि ॥
विसटु गुरु मै पाइआ जिनि हरि प्रभु दिता जोड़ि ॥१॥

म. ३ ॥

माइआधारी अति अँना बोला ॥
सबदु न सुणई बहु रोल घचोला ॥
गुरमुखि जापै सबदि लिव लाइ ॥
हरि नामु सुणि मँने हरि नामि समाइ ॥
जो तिसु भावै सु करे कराइआ ॥
नानक वजदा जंतु वजाइआ ॥२॥

पृ-३१४

पौड़ी ॥

तू करता सभु किछु जाणदा जो जीआ अँदरि वरतै ॥
तू करता आपि अगणतु है सभु जगु विचि गणतै ॥
सभु कीता तेरा वरतदा सभ तेरी बणतै ॥
तू घटि घटि इकु वरतदा सचु साहिब चलतै ॥
सतिगुर नो मिले सु हरि मिले नाही किसै परतै॥ २४॥

सलोक महला ४॥

इस शब्द में गुरु जी अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर कहते हैं कि ईश्वर को कैसे पाया जा सकता है ।वह कहतें हैं-- अपने मन और तन को खोजने के बाद मैंने प्रभु को ढूँढ लिया है । मुझे श्रेष्ठ गुरु की प्राप्ति हुई है, जिसने प्रभु के साथ मुझे जोड़ दिया है ।(१)

महला ३॥

गुरु जी मायाधारी तथा ईश्वर के भक्तों के बीच का मुख्य अन्तर बताते हुये कहते हैं कि मायाधारी सांसारिक मनुष्य बेहद अंधा और बहरा होता है, उसे गुरु के वचन नहीं सुनाई देते और सांसारिक शोर और दुविधायों में घिरा रहता है । जबकि गुरु का शिष्य ध्यान से गुरु के वचन में लीन रहता है । वह हरिनाम को सुनता है, मानता है और उसी में समाया रहता है । परन्तु मनुष्य असहाय है, क्योंकि जो ईश्वर चाहता है वही करता है । नानक कहते हैं कि मनुष्य एक संगीत के साज़ के समान है जिसे वह (ईश्वर) अपने अनुसार बजाता है ।(२)

पौड़ी ॥

अंत में गुरु जी प्रार्थना करते हैं - हे सृजनकर्ता, तुम सब कुछ जानते हो जो जीवों के अंदर हो रहा है । हे सृजनकर्ता, तुम किसी भी प्रकार की गिनतियों में से बाहर हो, जबकि संसार में सभी किसी ना किसी गिनती (चिंता) में व्यस्त हैं । संसार का सृजन तुमने किया है, और उसमें सब कुछ तेरा किया ही हो रहा है । हे मेरे सच्चे मालिक यह तेरा अद्भुत खेल है कि तुम केवल एक ही हो परन्तु प्रत्येक के अदंर रहते हो। जो भी कोई हरि से मिला है वह अपने सच्चे गुरु के द्वारा ही मिला है किसी अन्य साधन द्वारा नहीं ।

इस पौड़ी का संदेश यह है कि हम सांसारिक मायाजाल एवं दुविधायों के दुखों में स्वयं को ना डालें । हमें गुरु ग्रन्थ साहिब के निर्देशों का पालन करना चाहिये केवल तभी हमें आत्मिक शांति अथवा सृजनकर्ता ईश्वर की कृपा का आनन्द प्राप्त होगा ।

ਪੰਨਾ ੩੧੫

ਸਲੋਕ ਮਃ ੪ ॥

ਤਪਾ ਨ ਹੋਵੈ ਅੰਦ੍ਰਹੁ ਲੋਭੀ ਨਿਤ ਮਾਇਆ ਨੋ ਫਿਰੈ ਜਜਮਾਲਿਆ ॥
ਅਗੋ ਦੇ ਸਦਿਆ ਸਤੈ ਦੀ ਭਿਖਿਆ ਲਏ ਨਾਹੀ ਪਿਛੋ ਦੇ ਪਛੁਤਾਇ ਕੈ ਆਣਿ ਤਪੈ ਪੁਤੁ ਵਿਚਿ ਬਹਾਲਿਆ ॥
ਪੰਚ ਲੋਗ ਸਭਿ ਹਸਣ ਲਗੇ ਤਪਾ ਲੋਭਿ ਲਹਰਿ ਹੈ ਗਾਲਿਆ ॥
ਜਿਥੈ ਥੋੜਾ ਧਨੁ ਵੇਖੈ ਤਿਥੈ ਤਪਾ ਭਿਟੈ ਨਾਹੀ ਧਨਿ ਬਹੁਤੈ ਡਿਠੈ ਤਪੈ ਧਰਮੁ ਹਾਰਿਆ ॥
ਭਾਈ ਏਹੁ ਤਪਾ ਨ ਹੋਵੀ ਬਗੁਲਾ ਹੈ ਬਹਿ ਸਾਧ ਜਨਾ ਵੀਚਾਰਿਆ ॥
ਸਤ ਪੁਰਖ ਕੀ ਤਪਾ ਨਿੰਦਾ ਕਰੈ ਸੰਸਾਰੈ ਕੀ ਉਸਤਤੀ ਵਿਚਿ ਹੋਵੈ ਏਤੁ ਦੋਖੈ ਤਪਾ ਦਯਿ ਮਾਰਿਆ ॥
ਮਹਾ ਪੁਰਖਾਂ ਕੀ ਨਿੰਦਾ ਕਾ ਵੇਖੁ ਜਿ ਤਪੇ ਨੋ ਫਲੁ ਲਗਾ ਸਭੁ ਗਇਆ ਤਪੇ ਕਾ ਘਾਲਿਆ ॥
ਬਾਹਰਿ ਬਹੈ ਪੰਚਾ ਵਿਚਿ ਤਪਾ ਸਦਾਏ ॥
ਅੰਦਰਿ ਬਹੈ ਤਪਾ ਪਾਪ ਕਮਾਏ ॥

ਪੰਨਾ ੩੧੬

ਹਰਿ ਅੰਦਰਲਾ ਪਾਪੁ ਪੰਚਾ ਨੋ ਉਘਾ ਕਰਿ ਵੇਖਾਲਿਆ ॥

ਧਰਮ ਰਾਇ ਜਮਕੰਕਰਾ ਨੋ ਆਖਿ ਛਡਿਆ ਏਸੁ ਤਪੇ ਨੋ ਤਿਥੈ ਖੜਿ ਪਾਇਹੁ ਜਿਥੈ ਮਹਾ ਮਹਾਂ ਹਤਿਆਰਿਆ ॥

ਫਿਰਿ ਏਸੁ ਤਪੇ ਦੈ ਮੁਹਿ ਕੋਈ ਲਗਹੁ ਨਾਹੀ
ਏਹੁ ਸਤਿਗੁਰਿ ਹੈ ਫਿਟਕਾਰਿਆ ॥

ਹਰਿ ਕੈ ਦਰਿ ਵਰਤਿਆ ਸੁ ਨਾਨਕਿ ਆਖਿ ਸੁਣਾਇਆ ॥
ਸੋ ਬੂਝੈ ਜੁ ਦਯਿ ਸਵਾਰਿਆ ॥੧॥

ਮਃ ੪ ॥

ਹਰਿ ਭਗਤਾਂ ਹਰਿ ਆਰਾਧਿਆ ਹਰਿ ਕੀ ਵਡਿਆਈ ॥
ਹਰਿ ਕੀਰਤਨੁ ਭਗਤ ਨਿਤ ਗਾਂਵਦੇ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸੁਖਦਾਈ ॥
ਹਰਿ ਭਗਤਾਂ ਨੋ ਨਿਤ ਨਾਵੈ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਬਖਸੀਅਨੁ ਨਿਤ ਚੜੈ ਸਵਾਈ ॥
ਹਰਿ ਭਗਤਾਂ ਨੋ ਥਿਰੁ ਘਰੀ ਬਹਾਲਿਅਨੁ ਅਪਣੀ ਪੈਜ ਰਖਾਈ ॥
ਨਿੰਦਕਾਂ ਪਾਸਹੁ ਹਰਿ ਲੇਖਾ ਮੰਗਸੀ ਬਹੁ ਦੇਇ ਸਜਾਈ ॥
ਜੇਹਾ ਨਿੰਦਕ ਅਪਣੈ ਜੀਇ ਕਮਾਵਦੇ ਤੇਹੋ ਫਲੁ ਪਾਈ ॥

ਅੰਦਰਿ ਕਮਾਣਾ ਸਰਪਰ ਉਘੜੈ ਭਾਵੈ ਕੋਈ ਬਹਿ ਧਰਤੀ ਵਿਚਿ ਕਮਾਈ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕੁ ਦੇਖਿ ਵਿਗਸਿਆ ਹਰਿ ਕੀ ਵਡਿਆਈ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ਮਃ ੫ ॥

ਭਗਤ ਜਨਾਂ ਕਾ ਰਾਖਾ ਹਰਿ ਆਪਿ ਹੈ ਕਿਆ ਪਾਪੀ ਕਰੀਐ ॥
ਗੁਮਾਨੁ ਕਰਹਿ ਮੂੜ ਗੁਮਾਨੀਆ ਵਿਸੁ ਖਾਧੀ ਮਰੀਐ ॥
ਆਇ ਲਗੇ ਨੀ ਦਿਹ ਥੋੜੜੇ ਜਿਉ ਪਕਾ ਖੇਤੁ ਲੁਣੀਐ ॥
ਜੇਹੇ ਕਰਮ ਕਮਾਵਦੇ ਤੇਵੇਹੋ ਭਣੀਐ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕਾ ਖਸਮੁ ਵਡਾ ਹੈ ਸਭਨਾ ਦਾ ਧਣੀਐ ॥੩੦॥

पृ-३१५

सलोक म. ४॥

तपा ना होवै अँद्रहु. लोभी नित माइआ नो फिरै जजमालिआ ॥
अगो दे सदिआ सतै दी भिखिआ लए नाही पिछो दे पछुताइ कै आणि तपै पुतु विचि बहालिआ ॥
पँच लोग सभि हसण लगे तपा लोभि लहरि है गालिआ ॥
जिथै थोड़ा धनु वेखै तिथै तपा भिटै नाही धनि बहुतै डिठै तपै धरमु हारिआ ॥
भाई एहु तपा न होवी बगुला है बहि साध जना वीचारिआ ॥
सत पुरख की तपा निँदा करै सँसारै की उसतती विचि होवै एतु दोखै तपा दयि मारिआ ॥
महा पुरखां की निँदा का वेखु जि तपे नो फलु लगा सभु गइआ तपे का घालिआ ॥
बाहिर बहै पँचा विच तपा सदाए ॥
अँदरि बहै तपा पाप कमाए ॥

पृ-३१६

हरि अँदरला पापु पँचा नो उघा करि वेखालिआ ॥

धरम राइ जमकँकरा नो आख छडिआ एसु तपे नो तिथै खड़ि पाइहु जिथै महा महां हतिआरिआ ॥

फिरि एसु तपे दै मुहि कोई लगहु नाही
एहु सतिगुर है फिटकारिआ ॥

हरि कै दरि वरतिआ सु नानकि आखि सुणाइआ ॥
सो बूझै जु दयि सवारिआ ॥१॥

म. ४ ॥

हरि भगतां हरि आराधिआ हरि की वडिआई ॥
हरि कीरतनु भगत नित गांवदे हरि नामु सुखदाई ॥
हरि भगतां नो नित नावै दी वडिआई बखसीअनु नित चड़ै सवाई ॥
हरि भगतां नो थिरु घरी बहालिअनु अपणी पैज रखाई ॥
निँदकां पासहु हरि लेखा मँगसी बहु देइ सजाई ॥
जेहा निँदक अपणै जीइ कमावदे तेहो फल पाई ॥

अँदरि कमाणा सरपर उघड़ै भावै कोई बहि धरती विचि कमाई ॥
जन नानक देखि विगसिआ हरि की वडिआई ॥२॥

पौड़ी म. ५ ॥

भगत जनां का राखा हरि आप है किआ पापी करीऐ ॥
गुमानु करहि मूड़ गुमानीआ विसु खाधी मरीऐ ॥
आइ लगे नी दिह थोड़ड़े जिउ पका खेतु लुणिऐ ॥
जेहे करम कमावदे तेवेहो भणीऐ ॥
जन नानक का खसमु वडा है सभना दा धणीऐ ॥३०॥

सलोक म. ४ ॥

इस शब्द में गुरु जी अपने जीवन की एक सच्ची घटना द्वारा ढोंगी दुष्ट और लोभी मनुष्यों के विनाश का वर्णन करते हैं, जो कि बाहर से बहुत भले एवं पवित्र दिखने का नाटक करते हैं। इस कथा में गुरु जी एक तपा (तपस्वी) की बात बताते हैं जो लोगों को गुरु जी के विरुद्ध भड़काता था। जब एक बार गुरु जी ने उसे एक भोज में बुलाया तब उसने मना कर दिया, पर जब उसे पता लगा कि वहाँ अच्छी दक्षिणा भी मिल रही है तब उसने चोरी से अपने पुत्र को वहाँ भेज दिया और यह बात सबको पता चल गयी ।

इस घटना के आधार पर गुरु जी कहते हैं कि ऐसा साधु जो अंदर से धन के लोभ में मारा घूमता है वह सच्चा तपा (तपस्वी) नहीं होता । निमन्त्रण पाने के बाद उसे सच्ची भिक्षा स्वीकार नहीं थी, परन्तु बाद में अपने नुक़सान के पश्चाताप में चोरी से अपने पुत्र को भेज कर बीच में बैठा दिया । यह देख कर पंच जन हँसने लगे कि तपा को लोभ ने बरबाद कर दिया है । जहाँ पर तपा को थोड़ा धन या दक्षिणा दिखाई देती है वहाँ पर उसका धर्म भ्रष्ट होता है, पर जहाँ पर अधिक धन की आशा होती है, वहाँ पर तपा अपने धर्म का त्याग कर देता है । इस पर साधु जनों का विचार बना कि यह तपा नहीं है बल्कि बगुला भक्त है । संसार में प्रशंसा पाने के लिये वह सच्चे मनुष्यों की निंदा करता है, इसी कारण उसका नाश हुया । महान पुरुषों की निंदा के फलस्वरूप तपे की सारी मेहनत व्यर्थ हो गयी । जब वह पंचों के बीच बैठता है तब वह तपा कहलाता है परन्तु पीठ पीछे वह दुष्कर्म करता है । हरि ने उसके अंदर छिपे पापों को पंचों के सामने खोल कर दिखा दिया । इतना ही नहीं धर्मराज ने यमदूतों को निर्देश दिया कि इसको वहाँ ले जाओ जहाँ पर महा हत्यारे रहते हैं । इस तपे से कोई बात न करो क्योंकि इसको सच्चे गुरु ने फटकारा है । हरि के घर में जो हुया नानक ने वही बात सुनाई है । जिस पर (ईश्वर) की दया है वही इस का मर्म बूझ सकता है । (१)

म. ४ ॥

अपने भक्तों पर ईश्वर की कृपा तथा निंदको को दंड का अन्तर बताते हुये गुरु जी कहते हैं - हे मित्र, भक्त जन हरि की महानता की अराधना करते हैं । सुख देने वाले हरि नाम का कीर्तन प्रति दिन गाते हैं । (ईश्वर) उनकी अराधना को कई गुना नित्य बढ़ाने की बख़्शीश देता है । अपना सम्मान बनाये रखने के लिये वह भक्तगणों को स्थिर स्थिति में रखता है। परन्तु अपने निंदकों से (उनके दुष्कर्मों का) सारा हिसाब माँगेगा और बहुत दंड देगा । जैसा निंदक करेंगे, वैसा ही फल पायेंगे । चाहे कोई कितना ही धरती के अंदर या छुपा कर कुकर्म करे, उसके पाप उघड़ कर बाहर आ जायेंगे । हरि की यह महिमा देख कर नानक जन प्रसन्न है ।(२)

पौड़ी म. ५ ॥

गुरु जी अंत में कहते हैं - भक्तों की रक्षा हरि स्वयं करते हैं, पापी क्या कर सकते हैं । मूर्ख अंहकारी अपने अंहकार के विष से ही मर जाता है । जैसे कि पकी फ़सल थोड़े दिन के बाद काट ली जाती है, उसी प्रकार उनके जीवन के दिन भी सीमित हैं । जैसे कर्म वह कमाते हैं वैसा ही उनका बखान होता है । नानक का स्वामी महान है और वह सभी का मालिक है ।(३०)

इस पौड़ी का संदेश है कि दुष्कर्मी और निंदक लोग भक्त जनों का कुछ भी नुक़सान नहीं कर सकते, क्योंकि ईश्वर महा शक्तिशाली है, वह उनका रक्षक है और दुष्टों को दंड देता है ।

ਪੰਨਾ ੩੧੭

ਸਲੋਕ ਮਃ ੩ ॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਗਿਆਨੁ ਬਿਬੇਕ ਬੁਧਿ ਹੋਇ ॥
ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ਹਿਰਦੈ ਹਾਰੁ ਪਰੋਇ ॥
ਪਵਿਤੁ ਪਾਵਨੁ ਪਰਮ ਬੀਚਾਰੀ ॥
ਜਿ ਓਸੁ ਮਿਲੈ ਤਿਸੁ ਪਾਰਿ ਉਤਾਰੀ ॥
ਅੰਤਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਬਾਸਨਾ ਸਮਾਣੀ ॥
ਹਰਿ ਦਰਿ ਸੋਭਾ ਮਹਾ ਉਤਮ ਬਾਣੀ ॥
ਜਿ ਪੁਰਖੁ ਸੁਣੈ ਸੁ ਹੋਇ ਨਿਹਾਲੁ ॥
ਨਾਨਕ ਸਤਿਗੁਰ ਮਿਲਿਐ ਪਾਇਆ ਨਾਮੁ ਧਨੁ ਮਾਲੁ ॥੧॥

ਮਃ ੪ ॥

ਸਤਿਗੁਰ ਕੇ ਜੀਅ ਕੀ ਸਾਰ ਨ ਜਾਪੈ ਕਿ ਪੂਰੈ ਸਤਿਗੁਰ ਭਾਵੈ ॥
ਗੁਰਸਿਖਾਂ ਅੰਦਰਿ ਸਤਿਗੁਰੂ ਵਰਤੈ ਜੋ ਸਿਖਾਂ ਨੋ ਲੋਚੈ ਸੋ ਗੁਰ ਖੁਸੀ ਆਵੈ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਆਖੈ ਸੁ ਕਾਰ ਕਮਾਵਨਿ ਸੁ ਜਪੁ ਕਮਾਵਹਿ ਗੁਰਸਿਖਾਂ ਕੀ ਘਾਲ ਸਚਾ ਥਾਇ ਪਾਵੈ ॥
ਵਿਣੁ ਸਤਿਗੁਰ ਕੇ ਹੁਕਮੈ ਜਿ ਗੁਰਸਿਖਾਂ ਪਾਸਹੁ ਕੰਮੁ ਕਰਾਇਆ ਲੋੜੇ ਤਿਸੁ ਗੁਰਸਿਖੁ ਫਿਰਿ ਨੇੜਿ ਨ ਆਵੈ ॥
ਗੁਰ ਸਤਿਗੁਰ ਅਗੈ ਕੋ ਜੀਉ ਲਾਇ ਘਾਲੈ ਤਿਸੁ ਅਗੈ ਗੁਰਸਿਖੁ ਕਾਰ ਮਾਵੈ ॥
ਜਿ ਠਗੀ ਆਵੈ ਠਗੀ ਉਠਿ ਜਾਇ ਤਿਸੁ ਨੇੜੈ ਗੁਰਸਿਖੁ ਮੂਲਿ ਨ ਆਵੈ
ਬ੍ਰਹਮੁ ਬੀਚਾਰੁ ਨਾਨਕੁ ਆਖਿ ਸੁਣਾਵੈ ॥
ਜਿ ਵਿਣੁ ਸਤਿਗੁਰ ਕੇ ਮਨੁ ਮੰਨੇ ਕੰਮੁ ਕਰਾਏ ਸੋ ਜੰਤੁ ਮਹਾ ਦੁਖੁ ਪਾਵੈ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਤੂੰ ਸਚਾ ਸਾਹਿਬੁ ਅਤਿ ਵਡਾ ਤੁਹਿ ਜੇਵਡੁ ਤੂੰ ਵਡ ਵਡੇ ॥
ਜਿਸੁ ਤੂੰ ਮੇਲਹਿ ਸੋ ਤੁਧੁ ਮਿਲੈ ਤੂੰ ਆਪੇ ਬਖਸਿ ਲੈਹਿ ਲੇਖਾ ਛਡੇ ॥
ਜਿਸ ਨੋ ਤੂੰ ਆਪਿ ਮਿਲਾਇਦਾ ਸੋ ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵੇ ਮਨੁ ਗਡ ਗਡੇ ॥
ਤੂੰ ਸਚਾ ਸਾਹਿਬੁ ਸਚੁ ਤੂ ਸਭੁ ਜੀਉ ਪਿੰਡੁ ਚੰਮੁ ਤੇਰਾ ਹਡੇ ॥
ਜਿਉਭਾਵੈ ਤਿਉ ਰਖੁ ਤੂੰ ਸਚਿਆ ਨਾਨਕ ਮਨਿ ਆਸ ਤੇਰੀ ਵਡ ਵਡੇ ੩੩॥੧॥
ਸੁਧੁ ॥

पृ-३१७

सलोक म.३॥

गुरमुखि गिआनु बिबेक बुधि होइ ॥
हरि गुण गावै हिरदै हारु परोइ ॥
पवितु पावनु परम बीचारी ॥
जि ओसु मिलै तिसु पारि उतारी ॥
अँतरि हरि नामु बासना समाणी ॥
हरि दरि सोभा महा उतम बाणी ॥
जि पुरखु सुणै सु होइ निहालु ॥
नानक सतिगुर मिलिऐ पाइआ नामु धनु माल ॥१॥

म. ४॥

सतिगुर के जीअ की सार न जापै कि पूरे सतिगुर भावै ॥
गुरसिखां अँदरि सतिगुरू वरतै जो सिखां नो लोचै सो गुर खुसी आवै ॥
सतिगुर आखै सु कार कमावनि सु जपि कमावहि गुरसिखां की घाल सचा थाइ पावै ॥
विणु सतिगुर के हुकमै जि गुरसिखां पासहु कँमु कराइआ लोड़े तिसु गुरसिखु फिरि नेड़ि न आवै ॥
गुर सतिगुर अगै को जीउ लाइ घालै तिसु अगै गुरसिखु कार मावै ॥
जि ठगी आवै ठगी उठि जाइ तिस नेड़ै गुरसिखु मूलि न आवै ॥
ब्रहमु बीचारु नानकु आखि सुणावै ॥
जि विणु सतिगुर के मनु मँने कँमु कराए सो जँतु महा दुख पावै ॥२॥

पौड़ी

तूँ सचा साहिबु अति वडा तुहि जेवडु तूँ वड वडे ॥
जिसु तूँ मेलहि सो तुधु मिलै तूं आपे बखसि लैहि लेखा छडे ॥
जिस नो तूँ आप मिलाइदा सो सतिगुरु सेवे मन गड गडे ॥
तूँ सचा साहिब सचु तू सभु जीउ पिंडु चँमु तेरा हडे ॥
जिउ भावै तिउ रखु तूं सचिआ नानक मनि आस तेरी वड वडे ॥३३॥
१॥ सुधु ॥

सलोक म.३॥

इस श्लोक में गुरु जी गुरु प्रेमियों के गुणों का वर्णन करते हैं, उनके अनुसार ऐसे जनों को दैवी ज्ञान तथा विवेक प्राप्त होता है, उनके ह्रदय में हरि गुण गायन की माला पिरोई रहती है। वह अति विचारवान और पवित्र होते हैं, उनसे जो भी मिलता है, वैतरणी पार हो जाता है। उनके अंदर हरि नाम की सुगंधि समाई रहती है। हरि के दरबार में उनकी शोभा है और उनकी वाणी उत्तम है, जो भी सुनता है वह प्रसन्न होता है। हे नानक, सच्चे गुरु से मिल कर (ईश्वर के नाम का) धन माल प्राप्त कर लिया है। (१)

म.४॥

सच्चे गुरु हमसे क्या चाहते हैं - यह जानने के लिये गुरु जी कहते हैं कि सच्चे गुरु के मन में क्या है उसे क्या भाता है हमें नहीं पता, परन्तु सच्चा गुरु शिष्यों केह्रदय में बसता है और जो उसके शिष्यों के साथ प्रेम करे उससे गुरु प्रसन्न होते हैं। सच्चे गुरु के अनुसार कार्य करने अथवा हरि नाम के जाप से शिष्यों की कड़ी मेहनत की कमाई सच्चे स्थान पर जाती है।

उन दिनों में कुछ दभिंयों ने भोले भाले गुरु शिष्यों को अनुचित कामों में लगा कर लाभ लेना प्रारंभ किया, जो गुरु जी की इच्छा के विरुद्ध थे, इस पर गुरु जी का कथन है कि यदि कोई गुरु की आज्ञा के बिना शिष्यों से काम करवाता है तो फिर कोई भी शिष्य उसके समीप नहीं जायेगा। यदि कोई सच्चे गुरु की ह्रदय से सेवा करता है तब गुरुसिख उसका काम करेगा।जो धोखे या ठगी से आता है और ठगी से चलता

है उसके निकट गुरसिख कभी नहीं आयेगा ।नानक यह विचार सुना रहे हैं कि सच्चे गुरु के मन को ना भाने वाले काम जो करवाता है (शिष्यों से) वह पशु समान जीव अत्यंत दुख पाता है ।(२)

पौड़ी ॥३३॥

यह इस अध्याय (वार)की अंतिम पौड़ी है, इसमें गुरु जी हमें निर्देश देते हैं कि हमें कैसे ईश्वर से प्रार्थना, उसकी प्रशंसा और उसके प्रति पूर्ण समर्पण करना चाहिये - उनका कथन है कि - हे ईश्वर तू सच्चा मालिक, अति महान बड़ों से भी बड़ा है । जिसे तू मिलाना चाहता है वही तुमसे मिलता है और उसके सभी लेख अथवा कृत्य छोड़ कर क्षमा कर देता है । जिसे तू स्वयं मिलाता है वह सच्चे गुरु की सेवा मन लगा कर करता है । तुम सच्चे मालिक हो तथा समस्त प्राणियों को तुमने ही हाड़ माँस प्रदान किया है । हे' सच्चे (प्रभु) जैसा तुम्हें भाये वैसे ही मुझे रख, नानक के मन की चाह तुम महान (प्रभु) से यही है ”। (३३-१-शुद्ध)

इस पौड़ी अथवा शब्द का संदेश है कि यदि हम अपने गुरु और ईश्वर से प्रसन्नता प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें पूर्णतया स्वंय को प्रभु के प्रति समर्पित कर देना चाहिये और गुरु की वाणी और गुरु के शिष्यों का अनुसरण करना चाहिये।

ਪੰਨਾ ੩੧੯	पृ-३१९
ਸਲੋਕ ਮਃ ੫ ॥	**सलोक म.५॥**
ਜਿਨਾ ਸਾਸਿ ਗਿਰਾਸਿ ਨ ਵਿਸਰੈ ਹਰਿ ਨਾਮਾਂ ਮਨਿ ਮੰਤੁ ॥ ਧੰਨੁ ਸਿ ਸੇਈ ਨਾਨਕਾ ਪੂਰਨੁ ਸੋਈ ਸੰਤੁ ॥੧॥	जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामां मनि मँतु ॥ धँनु सि सेई नानका पूरनु सोई सँतु ॥१॥
ਮਃ ੫ ॥	**म.५॥**
ਅਠੇ ਪਹਰ ਭਉਦਾ ਫਿਰੈ ਖਾਵਣ ਸੰਦੜੈ ਸੂਲਿ ॥ ਦੋਜਕਿ ਪਉਦਾਕਿਉ ਰਹੈ ਜਾ ਚਿਤਿ ਨ ਹੋਇ ਰਸੂਲਿ ॥੨॥	अठे पहर भउदा फिरै खावण सँदड़ै सूलि ॥ दोजकि पउदाकिउ रहै जा चिति न होइ रसूलि ॥२॥
ਪੰਨਾ ੩੨੦	**पृ-३२०**
ਪਉੜੀ ॥	**पौड़ी ॥**
ਤਿਸੈ ਸਰੇਵਹੁ ਪ੍ਰਾਣੀਹੋ ਜਿਸ ਦੈ ਨਾਉ ਪਲੈ ॥ ਐਥੈ ਰਹਹੁ ਸੁਹੇਲਿਆ ਅਗੈ ਨਾਲਿ ਚਲੈ ॥ ਘਰੁ ਬੰਧਹੁ ਸਚ ਧਰਮ ਕਾ ਗਡਿ ਥੰਮੁ ਅਹਲੈ ॥ ਓਟ ਲੈਹੁ ਨਾਰਾਇਣੈ ਦੀਨ ਦੁਨੀਆ ਝਲੈ ॥ ਨਾਨਕ ਪਕੜੇ ਚਰਣ ਹਰਿ ਤਿਸੁ ਦਰਗਹ ਮਲੈ ॥੮॥	तिसै सरेवहु प्राणीहो जिस दै नाउ पलै ॥ ऐथै रहहु सुहेलिआ अगै नालि चलै ॥ घरु बधँहु सच धरम का गडि थँमु अहलै ॥ ओट लैहु नाराइणै दीन दुनीआ झलै ॥ नानक पकड़े चरण हरि तिसु दरगह मलै ॥८॥

सलोक म.५॥

यहाँ पर गुरु जी सच्चे तथा पूर्ण साधु को परिभाषित करते हुये कहते हैं कि जो अपनी हरेक साँस व ग्रास के साथ हरि नाम का मँत्र ह्रदय से नहीं भूलते हैं, हे नानक, वह धन्य हैं और पूर्ण रुप से संत हैं ।(१)

म.५॥

गुरु जी अब जीवन यापन की चिंताओं में हर समय रहने वालों को सचेत करते हैं कि आठों पहर अपने खाने पीने की चिंता में भटकने वाला और अपने ह्रदय में ईश्वर(रसूल) को न रखने वाला नर्क में जाने से कैसे बच सकता है ।(२)

पौड़ी ॥८॥

गुरु जी सलाह देते हैं कि उस गुरु की सेवा करो जो ईश्वर का नाम अपने ह्रदय में रखता हो । इस प्रकार लोक तथा परलोक में भी सुखी रहोगे । सच और धर्म पर आधारित पक्के खंभों वाला घर बनायो । ईश्वर की शरण में रहो जो तुम्हें सांसारिक तथा आध्यात्मिक सहायता देता है ।हे नानक, जो हरि चरणों में झुकता है उसे हरि के घर में स्थान प्राप्त होता है ।(८)

इस पौड़ी का संदेश - हर समय सांसारिक सुविधाओं की चिंता किये बिना सर्वशक्तिमान का ध्यान करो, क्योंकि वही हमारे हर दुख व चिंता को दूर करते हुये हमें लोक तथा परलोक में सुख शान्ति प्रदान कर सकता है

ਪੰਨਾ ੩੨੧	पृ-३२१
ਸਲੋਕ ਮਃ ੫ ॥	**सलोक म.५॥**
ਪਾਰਬ੍ਰਹਮਿ ਫੁਰਮਾਇਆ ਮੀਹੁ ਵੁਠਾ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਇ ॥ ਅੰਨੁ ਧੰਨੁ ਬਹੁਤੁ ਉਪਜਿਆ ਪ੍ਰਿਥਮੀ ਰਜੀ ਤਿਪਤਿ ਅਘਾਇ ॥ ਸਦਾ ਸਦਾ ਗੁਣ ਉਚਰੈ ਦੁਖੁ ਦਾਲਦੁ ਗਇਆ ਬਿਲਾਇ ॥ ਪੂਰਬਿ ਲਿਖਿਆ ਪਾਇਆ ਮਿਲਿਆ ਤਿਸੈ ਰਜਾਇ ॥ ਪਰਮੇਸਰਿ ਜੀਵਾਲਿਆ ਨਾਨਕ ਤਿਸੈ ਧਿਆਇ ॥੧॥	पारबृहमि फुरमाइआ मीहु वुठा सहजि सुभाइ ॥ अँनु धँनु बहुतु उपजिआ पृिथमी रजी तिपति अघाइ ॥ सदा सदा गुण उचरै दुखु दालदु गइआ बिलाइ ॥ पूरबि लिखिआ पाइआ मिलिआ तिसै रजाइ ॥ परमेसरि जीवालिआ नानक तिसै धिआइ ॥१॥
ਮਃ ੫ ॥	**म.५॥**
ਪੰਨਾ ੩੨੨	**पृ-३२२**
ਜੀਵਨ ਪਦੁ ਨਿਰਬਾਣੁ ਇਕੋ ਸਿਮਰੀਐ ॥	जीवन पदु निरबाणु इको सिमरीऐ ॥
ਦੂਜੀ ਨਾਹੀ ਜਾਇ ਕਿਨਿ ਬਿਧਿ ਧੀਰੀਐ ॥	दूजी नाही जाइ किनि बिधि धीरीऐ ॥
ਡਿਠਾ ਸਭੁ ਸੰਸਾਰੁ ਸੁਖੁ ਨ ਨਾਮ ਬਿਨੁ ॥	डिठा सभु सँसारु सुखु न नाम बिनु ॥
ਤਨੁ ਧਨੁ ਹੋਸੀ ਛਾਰੁ ਜਾਣੈ ਕੋਇ ਜਨੁ ॥	तनु धनु होसी छारु जाणै कोइ जनु॥
ਰੰਗ ਰੂਪ ਰਸ ਬਾਦਿ ਕਿ ਕਰਹਿ ਪਰਾਣੀਆ ॥	रँग रूप रस बादि कि करहि पराणीआ ॥
ਜਿਸੁ ਭੁਲਾਏ ਆਪਿ ਤਿਸੁ ਕਲ ਨਹੀ ਜਾਣੀਆ ॥	जिसु भुलाए आपि तिसु कल नही जाणीआ ॥
ਰੰਗਿ ਰਤੇ ਨਿਰਬਾਣੁ ਸਚਾ ਗਾਵਹੀ ॥	रँगि रते निरबाणु सचा गावही ॥
ਨਾਨਕ ਸਰਣਿ ਦੁਆਰਿ ਜੇ ਤੁਧੁ ਭਾਵਹੀ ॥੨॥	नानक सरणि दुआरि जे तुधु भावही ॥२॥
ਪਉੜੀ ॥	**पौड़ी॥**
ਜੰਮਣੁ ਮਰਣੁ ਨ ਤਿਨ੍ ਕਉ ਜੋ ਹਰਿ ਲੜਿ ਲਾਗੇ ॥	जँमणु मरणु न तिन् कउ जो हरि लड़ि लागे ॥
ਜੀਵਤ ਸੇ ਪਰਵਾਣੁ ਹੋਏ ਹਰਿ ਕੀਰਤਨਿ ਜਾਗੇ ॥	जीवत से परवाणु होए हरि कीरतनि जागे ॥
ਸਾਧਸੰਗੁ ਜਿਨ ਪਾਇਆ ਸੇਈ ਵਡਭਾਗੇ ॥	साधसँगु जिन पाइआ सेई वडभागे ॥
ਨਾਇ ਵਿਸਰਿਐ ਧ੍ਰਿਗੁ ਜੀਵਣਾ ਤੂਟੇ ਕਚ ਧਾਗੇ ॥	नाइ विसरिऐ धृिगु जीवणा तूटे कच धागे ॥
ਨਾਨਕ ਧੂੜਿ ਪੁਨੀਤ ਸਾਧ ਲਖ ਕੋਟਿ ਪਿਰਾਗੇ ॥੧੯॥	नानक धूड़ि पुनीत साध लख कोटि पिरागे ॥१६॥

सलोक म.५॥

गुरु जी ने यहाँ पर एक सुंदर उदाहरण दिया है जिसमें जीव को सूखी धरती और हरि के नाम को वर्षा की समानता दी है । वह कहते हैं कि पारब्रह्म ने आदेश दिया और हरि नाम रुपी वर्षा धीमे धीमे से आत्मा रूपी धरती को भिगोती रही, जिस कारण धरती पूर्णतया तृप्त हो गयी और बहुत अन्न धान्य (आत्मिक सुख) उपज गया है। ऐसा भाग्यशाली प्रभु के गुण गाता है, उसके दुख, दरिद्रता दूर हो गये हैं और ईश्वर की इच्छा से जो भी भाग्य में था वह मिल गया है । नानक कहते हैं, जिस परमेश्वर ने जीवन दान दिया है उसका ध्यान करो ।(१)

म.५॥

अब ईश्वर का नाम जपने की आवश्यकता पर जोर देते हूऐ गुरु जी कहते हैं कि अगर जीवन में निर्वाण या मुक्ति प्राप्त करना है तो एक

ईश्वर को जपो । मन को धैर्य एवं स्थिरता देने के लिये दूसरा और कोई उपाय नहीं । समस्त संसार को देख लिया है पर ईश्वर के नाम के बिना कहीं सुख नहीं है।। कोई बिरला ही जानता है कि यह तन और धन सभी स्वाहा होंगे । हे प्राणी, रूप रंग और जीवन के रस झूठी शान हैं । परन्तु हमारे वश में कुछ नहीं क्योंकि जिनको परमेश्वर खुद गुमराह करता है, वह उसकी (रहस्यमयी) शक्ति का अहसास नहीं कर पाते । परन्तु, जो ईश्वर के रंग में रंगे हैं वह उस सच्चे के गुण गान करते हैं । नानक कहते हैं कि (हे ईश्वर) जो तुम्हें भाते हैं वह तुम्हारे द्वार पर शरण पाते हैं। ॥२॥

पौड़ी

आगे उनका कथन है कि जो हरि के साथ जुड़े हैं वह जन्म मरण के चक्कर में नहीं हैं। जो लोग सर्वशक्तिमान की स्तुति के लिए जागते हैं वह अपने जीवन काल में स्वीकृत अथवा सफल होते हैं । जिनको साधु का संगसाथ मिल गया है वह सौभाग्यशाली हैं। हरि नाम को बिसार कर जीवन बेकार है ऐसा जीवन कच्चे धागे के समान टूट जाता है । नानक के अनुसार साधुजनों की चरणधूलि लाखों करोड़ों प्रयाग (जैसे तीर्थों की यात्रा) से अधिक पवित्र है ।

इस पौड़ी का संदेश है कि यदि हम जन्म मरण के चक्कर से बचना चाहते हैं तो हरि नाम रस से भरपूर रहें और साधु संतों की संगति में रह कर ईश्वर का गुण गान करें।

ਪੰਨਾ ੩੨੩

ਗਉੜੀ ਕਬੀਰ ਜੀ ॥

ਮਾਧਉ ਜਲ ਕੀ ਪਿਆਸ ਨ ਜਾਇ ॥
ਜਲ ਮਹਿ ਅਗਨਿ ਉਠੀ ਅਧਿਕਾਇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਤੂੰ ਜਲਨਿਧਿ ਹਉ ਜਲ ਕਾ ਮੀਨੁ ॥
ਜਲ ਮਹਿ ਰਹਉ ਜਲਹਿ ਬਿਨੁ ਖੀਨੁ ॥੧॥

ਤੂੰ ਪਿੰਜਰੁ ਹਉ ਸੂਅਟਾ ਤੋਰ ॥
ਜਮੁ ਮੰਜਾਰੁ ਕਹਾ ਕਰੈ ਮੋਰ ॥੨॥

ਤੂੰ ਤਰਵਰੁ ਹਉ ਪੰਖੀ ਆਹਿ ॥
ਮੰਦਭਾਗੀ ਤੇਰੋ ਦਰਸਨੁ ਨਾਹਿ ॥੩॥

ਪੰਨਾ ੩੨੪

ਤੂੰ ਸਤਿਗੁਰੁ ਹਉ ਨਉਤਨੁ ਚੇਲਾ ॥
ਕਹਿ ਕਬੀਰ ਮਿਲੁ ਅੰਤ ਕੀ ਬੇਲਾ ॥੪॥੨॥

पृ-३२३

गउड़ी कबीर जी ॥

माधउ जल की पिआस न जाइ ॥
जल महि अगनि उठी अधिकाइ ॥१॥रहाउ ॥

तूँ जलनिधि हउ जल का मीनु ॥
जल महि रहउ जलहि बिनु खीनु ॥१ ॥

तूँ पिँजरु हउ सूअटा तोर ॥
जमु मँजारु कहा करै मोर ॥२॥

तूं तरवरु हउ पँखी आहि ॥
मँदभागी तेरो दरसनु नाहि ॥ ३ ॥

पृ-३२४

तूँ सतिगुरु हउ नउतनु चेला ॥
कहि कबीर मिलु अँत की बेला ॥४॥२॥

गौड़ी कबीर जी ॥

इस शब्द में कबीर जी ईश्वर के प्रति अपना प्रेम कई उदाहरणों के साथ प्रकट करते हुये कहते हैं - हे माधव, तेरे नाम रूपी जल की प्यास शांत नहीं होती, बल्कि इस जल से और अधिक अग्नि (प्यास) बढ़ गयी है (१-विराम)

हे ईश्वर, तुम एक सागर हो और मैं उसमें एक मछली की तरह हूँ, जब तक इस पानी में हूँ जीवित हूँ, पर जब पानी से बाहर (अर्थात तेरे नाम को छोड़) आती हूँ, तो नष्ट (छिन्न भिन्न) हो जाती हूँ (१)

दूसरे उदाहरण में ईश्वर प्रेम के द्वारा प्राप्त सुरक्षा का अनुभव करते हुये कबीर जी कहते हैं -हे ईश्वर तुम एक पिंजरे (के समान) हो, मैं उसमें तेरा तोता हूँ, जिसमें यमदूत मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं ? (२)

एक और उदाहरण के साथ कबीर जी कहते हैं, (हे ईश्वर) तुम एक पेड़ (के समान) हो जिस पर मैं एक पक्षी के समान बैठा हूँ पर मैं अपने मंद भाग्य से तेरे दर्शन नहीं कर सकता (३)

अंत में कबीर जी अत्यंत दीन भाव से कहते हैं - हे ईश्वर, तुम मेरे सच्चे गुरु हो, मैं तुम्हारा नया शिष्य हूँ, मेरी बिनती है कि हे प्रभु, अंत समय पर मुझे अवश्य मिलना (४-२)

इस शब्द का संदेश है कि ईश्वर नाम ही सांसारिक इच्छायों को नियंत्रित रखने का सर्वोत्तम उपाय है, इसलिये हमें सदैव उसके ध्यान में रहते हुये उसकी दया दृष्टि की प्रार्थना करनी चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੩੨੫

ਗਉੜੀ ਕਬੀਰ ਜੀ ॥

ਅਸਥਾਵਰ ਜੰਗਮ ਕੀਟ ਪਤੰਗਾ ॥
ਅਨਿਕ ਜਨਮ ਕੀਏ ਬਹੁ ਰੰਗਾ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੩੨੬

ਐਸੇ ਘਰ ਹਮ ਬਹੁਤੁ ਬਸਾਏ ॥
ਜਬ ਹਮ ਰਾਮ ਗਰਭ ਹੋਇ ਆਏ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜੋਗੀ ਜਤੀ ਤਪੀ ਬ੍ਰਹਮਚਾਰੀ ॥
ਕਬਹੂ ਰਾਜਾ ਛਤ੍ਰਪਤਿ ਕਬਹੂ ਭੇਖਾਰੀ ॥੨॥

ਸਾਕਤ ਮਰਹਿ ਸੰਤ ਸਭਿ ਜੀਵਹਿ ॥
ਰਾਮ ਰਸਾਇਨੁ ਰਸਨਾ ਪੀਵਹਿ ॥੩॥

ਕਹੁ ਕਬੀਰ ਪ੍ਰਭ ਕਿਰਪਾ ਕੀਜੈ ॥
ਹਾਰਿ ਪਰੇ ਅਬ ਪੂਰਾ ਦੀਜੈ ॥੪॥੧੩॥

पृ-३२५

गउड़ी कबीर जी ॥

असथावर जँगम कीट पतँगा ॥
अनिक जनम कीए बहु रँगा ॥१॥

पृ-३२६

ऐसे घर हम बहुतु बसाए ॥
जब हम राम गरभ होइ आए ॥१॥रहाउ॥

जोगी जती तपी ब्रहमचारी ॥
कबहू राजा छत्रपति कबहू भेखारी ॥२॥

साकत मरहि सँत सभि जीवहि ॥
राम रसाइनु रसना पीवहि ॥३॥

कहु कबीर प्रभ किरपा कीजै ॥
हारि परे अब पूरा दीजै ॥४॥१३॥

गौड़ी कबीर जी ॥

इस शब्द में कबीर जी व्यक्त करते हैं कि कैसे हम अनेक प्रकार के जन्मों में से निकल कर मनुष्य जन्म में आये हैं और अब कैसे प्रभु के साथ जुड़ने के लिये इस अवसर का लाभ उठा सकते हैं। उनका कहना है कि हम अचल रूप (पेड़ आदि) एवं कीट पतंगों तथा अन्य जीवों के भाँति भाँति के जन्मों से होकर आये हैं (१)

इसी संदर्भ में उनका कथन है, हे सर्व व्यापी, माता के गर्भ के द्वारा हमने बहुत सारे जीवन भोगे हैं। (१-विराम)

मानव जन्म में भी कभी योगी, साधु, तपस्वी, ब्रह्मचारी, छत्रपति राजा या कभी भिखारी का जन्म पाया है (२)

अपने विचार को प्रकट करते हुये कबीर जी कहते हैं - धन तथा शक्ति के पुजारी (जो ईश्वर से दूर रहते हैं) बार बार मरते हैं, जबकि रसना द्वारा राम रस की संजीवनी को पीने वाले सभी अमर जीवन जीते हैं (३)

कबीर जी ईश्वर से प्रार्थना करते हैं, हे प्रभु, कृपा करो, मैं जन्मों के फेर से थक गया हूँ, मुझे अब पूर्ण मोक्ष दो (अथवा अपने साथ रखो) (४-१३)

इस शबद का संदेश है कि ईश्वर के बिना आत्मा जन्मों के फेर में भटकती रहती है, इस संताप से दूर रहने के लिये हमें अपना दंभ त्याग कर ईश्वर का ध्यान करना चाहिये जिससे कि उसकी कृपा हो और हमारा उसके साथ पुनर्मिलन हो सके।

ਪੰਨਾ ੩੨੮

ਗਉੜੀ ਕਬੀਰ ਜੀ ॥

ਜਾ ਕੈ ਹਰਿ ਸਾ ਠਾਕੁਰੁ ਭਾਈ ॥
ਮੁਕਤਿ ਅਨੰਤ ਪੁਕਾਰਣਿ ਜਾਈ ॥੧॥

ਅਬ ਕਹੁ ਰਾਮ ਭਰੋਸਾ ਤੋਰਾ ॥
ਤਬ ਕਾਹੂ ਕਾ ਕਵਨੁ ਨਿਹੋਰਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਤੀਨਿ ਲੋਕ ਜਾ ਕੈ ਹਹਿ ਭਾਰ ॥
ਸੋ ਕਾਹੇ ਨ ਕਰੈ ਪ੍ਰਤਿਪਾਰ ॥੨॥

ਕਹੁ ਕਬੀਰ ਇਕ ਬੁਧਿ ਬੀਚਾਰੀ ॥
ਕਿਆ ਬਸੁ ਜਉ ਬਿਖੁ ਦੇ ਮਹਤਾਰੀ ॥੩॥੨੨॥

पृ-३२८

गउड़ी कबीर जी ॥

जा कै हरि सा ठाकुरु भाई ॥
मुकति अनँत पुकारणि जाई ॥१॥

अब कहु राम भरोसा तोरा ॥
तब काहू का कवनु निहोरा ॥१॥रहाउ॥

तीनि लोक जा कै हहि भार ॥
सो काहे न करै प्रतिपार ॥२॥

कहु कबीर इक बुधि बीचारी ॥
किआ बसु जउ बिखु दे महतारी ॥३॥ २२॥

गउड़ी कबीर जी

इस शब्द में भक्त कबीर जी हमें ईश्वर के प्रति पूर्ण विश्वास रखने तथा जीवन में मोक्ष तथा अन्य किसी पदार्थ की चिंता ना करने के लिये कहते हैं ।

उनका कथन है –(हे मेरे दोस्तो), साधारणत लोग मोक्ष प्राप्त करने के लिए अनगिनत प्रयास करते हैं, लेकिन मुक्ति उस व्यक्ति के दरवाजे पर दस्तक देती है जिनके दिल में ईश्वर स्वयं ही बस रहे हों ।(१)

कबीर जी ईश्वर के प्रति प्रेममय होकर कहते हैं - हे सर्वव्यापी तुम्हीं कहो कि तुम्हारे पर जिसे विश्वास है, उसे किसी और की क्या ज़रूरत है। (१-विराम)

कबीर जी को ईश्वर भक्ति में सदा लीन रहते हुए देखने पर उनके कई साथी सम्बन्धी कहते थे कि उनके परिवार का लालन पालन कौन करेगा ? इस पर वह उत्तर देते हैं कि - जिस ईश्वर पर तीनों लोक निर्भर हैं, वह हमारा पालन क्यों नहीं करेगा। (२)

ईश्वर के प्रति पूर्ण आस्था रखते हुये अंत में कहते हैं कि यदि वह मेरे परिवार को नहीं देखता है -तब मेरे मन में एक विचार आया है कि, अगर किसी की अपनी मां उस व्यक्ति को जहर दे तो कोई क्या कर सकता है? (उनका भाव है कि यदि ईश्वर ही परिवार की देख भाल नहीं करता है तब मैं समझता हूँ कि माता ही बच्चों की परवाह नहीं कर रही है तो और कोई क्या कर सकता है)।(३-२२)

इस शब्द का संदेश है कि जिसको ईश्वर पर पूर्ण विश्वास है उसे किसी और की कोई सहायता नहीं चाहिये । यदि ईश्वर हमें किसी प्रकार से अपनी कृपा से वंचित रखता है तब भी हमें उसकी इच्छा को मानना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੩੨੯

ਗਉੜੀ ਕਬੀਰ ਜੀ ਦੁਪਦੇ ॥

ਨਾ ਮੈ ਜੋਗ ਧਿਆਨ ਚਿਤੁ ਲਾਇਆ ॥
ਬਿਨੁ ਬੈਰਾਗ ਨ ਛੂਟਸਿ ਮਾਇਆ ॥੧॥
ਕੈਸੇ ਜੀਵਨੁ ਹੋਇ ਹਮਾਰਾ ॥

ਪੰਨਾ ੩੩੦

ਜਬ ਨ ਹੋਇ ਰਾਮ ਨਾਮ ਅਧਾਰਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥
ਕਹੁ ਕਬੀਰ ਖੋਜਉ ਅਸਮਾਨ ॥
ਰਾਮ ਸਮਾਨ ਨ ਦੇਖਉ ਆਨ ॥੨॥੩੪॥

पृ-३२९

गउड़ी कबीर जी दुपदे ॥

ना मै जोग धिआन चितु लाइआ ॥
बिनु बैराग न छुटसि माइआ ॥१॥
कैसे जीवनु होइ हमारा ॥

प ३३०

जब न होइ राम नाम अधारा ॥ १॥ रहाउ ॥
कहु कबीर खोजउ असमान ॥
राम समान न देखउ आन ॥२॥३४॥।

गउड़ी कबीर जी
दुपदे

अपने अनुभवों के आधार पर इस शब्द में कबीर जी जीवन को सफल बनाने के लिये सर्वोत्तम ढंग का वर्णन करते हैं वह कहते हैं - कि मैंने कभी योग ध्यान नहीं किया और ना ही कभी इस विषय पर मन में विचार किया (जैसा कि योगी कहते हैं क्योंकि मैं जानता हूँ कि इस प्रकार से ईश्वर के प्रति सच्चा प्रेम नहीं उत्पन्न होता है । (१)

सांसारिक मोहमाया बिना वैराग्य लिये (ईश्वर से प्रेम किये बिना) नहीं छूट पाती । ईश्वर नाम को जीवन का मुख्य ध्येय बनाने की आवश्यकता पर कबीर जी हमसे पूछते हैं - हे मित्र, ज़रा सोचो, हमारा जीवन राम नाम के सहारे के बिना किस प्रकार का होगा (१-विराम)

योगीजनों तथा अन्य लोगों की मान्यताओं के अनुसार कि देवी देवताओं का वास उपर आकाश में है , कबीर जी सारांश में इसपर अपनी असहमति जताते हुये अपना विचार साझा करते हैं कि मैं भले ही सारा आकाश खोज लूँ, परन्तु मुझे सर्वव्यापी ईश्वर जैसा कोई नहीं मिल सकता । (इसलिये मैं सभी देवी देवताओं की पूजा छोड़ कर, एक ईश्वर का ध्यान करता हूँ) (२-३४)

इस शब्द का संदेश है कि केवल एक ईश्वर का ध्यान करो जो कि हमें जीवन का सही मार्ग दिखा सकता है । यौगिक अथवा अन्य कोई भी प्रयास सच्चा मार्गदर्शन करने के योग्य नहीं ।

ਪੰਨਾ ੩੩੧

ਰਾਗੁ ਗਉੜੀ ਚੇਤੀ ॥

ਦੇਖੌ ਭਾਈ ਗ੍ਯਾਨ ਕੀ ਆਈ ਆਂਧੀ ॥
ਸਭੈ ਉਡਾਨੀ ਭ੍ਰਮ ਕੀ ਟਾਟੀ ਰਹੈ ਨ ਮਾਇਆ ਬਾਂਧੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਦੁਚਿਤੇ ਕੀ ਦੁਇ ਥੂਨਿ ਗਿਰਾਨੀ ਮੋਹ ਬਲੇਡਾ ਟੂਟਾ ॥
ਤਿਸਨਾ ਛਾਨਿ ਪਰੀ ਧਰ ਊਪਰਿ ਦੁਰਮਤਿ ਭਾਂਡਾ ਫੂਟਾ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੩੩੨

ਆਂਧੀ ਪਾਛੇ ਜੋ ਜਲੁ ਬਰਖੈ ਤਿਹਿ ਤੇਰਾ ਜਨੁ ਭੀਨਾਂ ॥
ਕਹਿ ਕਬੀਰ ਮਨਿ ਭਇਆ ਪ੍ਰਗਾਸਾ ਉਦੈ ਭਾਨੁ ਜਬ ਚੀਨਾ ॥੨॥੪੩॥

पृ-३३१

राग गउड़ी चेती॥

देखो भाई ज्ञान की आई आँधी ॥
सभै उडानी भ्रम की टाटी रहै न माइआ बाँधी ॥१॥ रहाउ ॥

दुचिते की दुइ थूनि गिरानी मोह बलेडा टूटा ॥
तिसना छानि परी धर ऊपरि दुरमति भांडा फूटा ॥१॥

पृ-३३२

आँधी पाछे जो जलु बरखै तिहि तेरा जनु भीनां ॥
कहि कबीर मनि भइआ प्रगासा उदै भानु जब चीना ॥२॥४३॥

राग गउड़ी चेती॥

इस शब्द में कबीर जी बहुत सुंदर ढंग से दैवी ज्ञान को आँधी का रूप देकर आत्मा का आकस्मिक ढंग से प्रकाशमयी होना व्यक्त करते हैं। यहाँ वह मानव जीवन को एक छप्पर वाली कुटिया के समान मानते हैं जो भ्रम के खंभों तथा अज्ञानता की दीवारों पर टिकी है।

उनका कथन है - देखो प्रिय भाइयों, दैवी ज्ञान की आँधी आई है जिसने भ्रमों के छप्पर वाली कुटिया को उड़ा दिया है, माया के बंधन उसे रोक नहीं सके। (१-विराम)

इस स्थिति को आगे वर्णित करते हुये कहते हैं कि दुविधा के दो खंभे गिर गये हैं और सांसारिक मोह रूपी बल्ली टूट गयी है, तृष्णा रूपी छत धरती पर आ गिरी है और दुरमति का घड़ा फूट गया है (अर्थात दैवी ज्ञान के प्रकाश से मन के भ्रम एवं अज्ञानता रूपी अंधेरे लुप्त हो गये हैं और मन ईश्वर प्रेम में रम गया है)। (१)

दैवी ज्ञान द्वारा प्राप्त आनँद और शुभ को आँधी के पश्चात वर्षा और सूर्य के प्रकाश की समानता देते हुये कबीर जी कहते हैं: "हे ईश्वर तेरे नाम रूपी अमृत वर्षा से तेरा जन (सेवक) भीग गया है और जब से दैवी ज्ञान का सूर्योदय देखा है, मन प्रकाशमयी हो गया है"। (२-४३)

इस शब्द का संदेश है कि जब तक हम ईश्वर को भूले रहते हैं, हम सांसारिक बंधनों में घिरे हुये अन्य सहारे ढूँढते रहते हैं, परन्तु ईश्वर की दया होने पर जब हम उसका ध्यान करते हैं तब सारे भ्रम एवं झूठे सहारे लुप्त हो जाते हैं और दैवी ज्ञान से सच्चे सुख और शांति का अनुभव होता है।

ਪੰਨਾ ੩੩੩

ਗਉੜੀ ਪੰਚਪਦਾ ॥

ਪੇਵਕੜੈ ਦਿਨ ਚਾਰਿ ਹੈ ਸਾਹੁਰੜੈ ਜਾਣਾ ॥
ਅੰਧਾ ਲੋਕੁ ਨ ਜਾਣਈ ਮੂਰਖੁ ਏਆਣਾ ॥੧॥

ਕਹੁ ਡਡੀਆ ਬਾਧੈ ਧਨ ਖੜੀ ॥
ਪਾਹੂ ਘਰਿ ਆਏ ਮੁਕਲਾਊ ਆਏ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਓਹ ਜਿ ਦਿਸੈ ਖੂਹੜੀ ਕਉਨ ਲਾਜੁ ਵਹਾਰੀ ॥
ਲਾਜੁ ਘੜੀ ਸਿਉ ਤੂਟਿ ਪੜੀ ਉਠਿ ਚਲੀ ਪਨਿਹਾਰੀ ॥੨॥

ਸਾਹਿਬੁ ਹੋਇ ਦਇਆਲੁ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇ ਅਪੁਨਾ ਕਾਰਜੁ ਸਵਾਰੇ ॥

ਪੰਨਾ ੩੩੪

ਤਾ ਸੋਹਾਗਣਿ ਜਾਣੀਐ ਗੁਰ ਸਬਦੁ ਬੀਚਾਰੇ ॥੩॥

ਕਿਰਤ ਕੀ ਬਾਂਧੀ ਸਭ ਫਿਰੈ ਦੇਖਹੁ ਬੀਚਾਰੀ ॥
ਏਸ ਨੋ ਕਿਆ ਆਖੀਐ ਕਿਆ ਕਰੇ ਵਿਚਾਰੀ ॥੪॥

ਭਈ ਨਿਰਾਸੀ ਉਠਿ ਚਲੀ ਚਿਤ ਬੰਧਿ ਨ ਧੀਰਾ ॥
ਹਰਿ ਕੀ ਚਰਣੀ ਲਾਗਿ ਰਹੁ ਭਜੁ ਸਰਣਿ ਕਬੀਰਾ ॥੫॥੬॥੫੦॥

पृ-३३३

गउड़ी पंचपदा ॥

पेवकड़ै दिन चारि है साहुरड़ै जाणा ॥
अँधा लोकु न जाणई मूरखु ऐआणा ॥१॥

कहु डडीआ बाधै धन खड़ी ॥
पाहू घर आए मुकलाऊ आए ॥१॥रहाउ॥

ओह जि दिसै खूहड़ी कउन लाजु वहारी ॥
लाजु घड़ी सिउ तूटि पड़ी उठि चली पनिहारी ॥२॥

साहिबु होइ दइआलु क्रिपा करे अपुना कारजु सवारे ॥

पृ-३३४

ता सोहागणि जाणीऐ गुर सबदु बीचारे ॥३॥

किरत की बांधी सभ फिरै देखहु बीचारी ॥
एस नो किआ आखीऐ किआ करे विचारी ॥४॥

भई निरासी उठि चली चित बँधि न धीरा ॥
हरि की चरणी लागि रहु भजु सरणि कबीरा ॥५॥६॥५०॥

गउड़ी पंचपदा

इस शब्द में कबीर जी मानव जीवन को एक विवाहित स्त्री की समानता देते हैं जो अपने पिता के घर (संसार) में थोड़े दिन ही रह पाती है और अंततःउसे ससुराल (मृत्यु के बाद दूसरे लोक) जाना ही होता है ।

वह कहते हैं - मायके (इस संसार) में चार दिन ही रह कर अंततः ससुराल (दूसरे लोक) जाना ही है, परन्तु अनजान, मूर्ख और अज्ञानी लोग नहीं समझ पाते हैं ।(१)

एक सामान्य व्यक्ति जो कि सांसारिक धंधों में उलझा हुआ मृत्यु को भूला रहता है उसकी तुलना कबीर जी यहाँ एक ऐसी विवाहिता स्त्री के साथ करते हैं जो अपने घर के कामों. में व्यस्त है और उसे ससुराल वाले लेने आ जाते हैं । उनका कथन है - हे मित्र देखो यह क्या संयोग है कि यह स्त्री घर के काम वाले कपड़े पहने खड़ी है, जब कि ससुराल वाले उसे ले जाने के लिये आ गये हैं (१-विराम)

अब कबीर जी एक पनिहारिन का उदाहरण देते हैं, जो पानी भरते समय घड़ा कुँए में लटकाती है पर रस्सी टूट जाने से रस्सी और घड़ा दोनों कुँए में गिर जाते हैं और वह निराश होकर चली जाती है । मनुष्य आत्मा की तुलना इस निराश पनहारिन से करते हुये वह कहते हैं कि वह कुँए में रस्सी डालती है, घड़ी भर में रस्सी टूट जायेगी और उसे जाना पड़ेगा अर्थात हम सांसारिक पूँजी का घड़ा भरते भरते यह नहीं जानते कि कब रस्सी टूट जायेगी और आत्मा को निराश हो कर संसार से जाना होगा ।(२)

ऐसी निराशा न सहनी पड़े, उसके निवारण के लिये कबीर जी कहते हैं - यदि ईश्वर कृपा करें तो सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं, परन्तु मानव आत्मा एक सोहागिन की भाँति तभी होगी जब अपने गुरु के शब्द एवं वचन का अनुसरण करेगी । (३)

अज्ञानी मानव जीवन पर दया भाव से कबीर जी कहते हैं - हे मित्र, वास्तविक दशा में हम आत्मा को दोष नहीं दे सकते। सम्पूर्ण संसार ही पूर्व करमों से बँधा (ईश्वर की इच्छा के अनुसार) चलायमान है । (४)

शब्द के अंत में कबीर जी हम सबको सलाह देते हैं - हे मित्र, मानवआत्मा निराश और अशांत मन से संसार को छोड़ती है, इस लिये ऐसी स्थिति से बचने का उपाय यही है कि तुम हरि के चरण कमलों की शरण में रह कर उसका भजन करो । (५-६- ५०)

इस शब्द का संदेश है कि इस संसार में हमें थोड़े दिन ही रहना है, पता नहीं अकस्मात् कब सांसें समाप्त हो जायें और हमें निराश मन से इस संसार से जाना पड़े । इसलिये हमें व्यर्थ के सांसारिक धंधों में समय ना गँवा कर ईश्वर के नाम के ध्यान में समय का सदुपयोग करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੩੩੫

ਗਉੜੀ ॥

ਕਾਲਬੂਤ ਕੀ ਹਸਤਨੀ ਮਨ ਬਉਰਾ ਰੇ ਚਲਤੁ ਰਚਿਓ ਜਗਦੀਸ ॥
ਕਾਮ ਸੁਆਇ ਗਜ ਬਸਿ ਪਰੇ ਮਨ ਬਉਰਾ ਰੇ ਅੰਕਸੁ ਸਹਿਓ ਸੀਸ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੩੩੬

ਬਿਖੈ ਬਾਚੁ ਹਰਿ ਰਾਚੁ ਸਮਝੁ ਮਨ ਬਉਰਾ ਰੇ ॥
ਨਿਰਭੈ ਹੋਇ ਨ ਹਰਿ ਭਜੇ ਮਨ ਬਉਰਾ ਰੇ ਗਹਿਓ ਨ ਰਾਮ ਜਹਾਜੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ॥

ਮਰਕਟ ਮੁਸਟੀ ਅਨਾਜ ਕੀ ਮਨ ਬਉਰਾ ਰੇ ਲੀਨੀ ਹਾਥੁ ਪਸਾਰਿ ॥
ਛੂਟਨ ਕੋ ਸਹਸਾ ਪਰਿਆ ਮਨ ਬਉਰਾ ਰੇ ਨਾਚਿਓ ਘਰ ਘਰ ਬਾਰਿ ॥੨॥

ਜਿਉ ਨਲਨੀ ਸੂਅਟਾ ਗਹਿਓ ਮਨ ਬਉਰਾ ਰੇ ਮਾਯਾ ਇਹੁ ਬਿਉਹਾਰੁ ॥
ਜੈਸਾ ਰੰਗੁ ਕਸੁੰਭ ਕਾ ਮਨ ਬਉਰਾ ਰੇ ਤਿਉ ਪਸਰਿਓ ਪਾਸਾਰੁ ॥੩॥

ਨਾਵਨ ਕਉ ਤੀਰਥ ਘਨੇ ਮਨ ਬਉਰਾ ਰੇ ਪੂਜਨ ਕਉ ਬਹੁ ਦੇਵ ॥
ਕਹੁ ਕਬੀਰ ਛੂਟਨੁ ਨਹੀ ਮਨ ਬਉਰਾ ਰੇ ਛੂਟਨੁ ਹਰਿ ਕੀ ਸੇਵ ॥੪॥੧॥੬॥੫੭॥

पृ-३३५

गउड़ी ॥

कालबूत की हसतनी मन बउरा रे चलतु रचिओ जगदीस ॥
काम सुआइ गज बसि परे मन बउरा रे अँकसु सहिओ सीस ॥१॥

पृ-३३६

बिखै बाचु हरि राचु समझु मन बउरा रे ॥
निरभै होइ न हरि भजे मन बउरा रे गहिओ न राम जहाजु ॥ १ ॥रहाउ॥

मरकट मुसटी अनाज की मन बउरा रे लीनी हाथु पसारि ॥
छूटन को सहसा परिआ मन बउरा रे नाचिओ घर घर बारि ॥२॥

जिउ नलनी सूअटा गहिओ मन बउरा रे माया इहु बिउहारु ॥
जैसा रँगु कसुँभ का मन बउरा रे तिउ पसरिओ पासारु ॥

नावन कउ तीरथ घने मन बउरा रे पूजन कउ बहु देव ॥
कहु कबीर छूटनु नही मन बउरा रे छूटनु हरि की सेव ॥४॥ १॥६॥५७॥

गउड़ी

इस शब्द में कबीर जी मनुष्य की वासना और लोभ के द्वारा उत्पन्न अनेकों कठिनाइयों एवं त्रासदियों के उदाहरण दे रहे हैं, उनका कहना है कि जैसे हथिनी का पुतला बनाकर छिपे हुये गड्ढे के उपर रख देते हैं और कामनावश हाथी वहाँ आकर गड्ढे में गिर जाता है और बाद में उसे सारा जीवन महावत के अंकुश की मार सर पर सहनी पड़ती है, इसी प्रकार हे' मेरे बावरे मन, ब्रह्मांड के मालिक ने ऐसा खेल रचा है कि तुम उसमें अपनी इच्छाओं वश फँस जाते हो ।(१)

हमें कबीर जी और आगे समझाते हैं – "हे मेरे बावरे मन, सांसारिक विषयों से बच और हरि नाम में रच, तुमने क्यों नहीं (अपनी उपजीविका खो जाने के) भय से मुक्त होकर हरि नाम का भजन किया और राम नाम रूपी जहाज़ का आश्रय लिया" । (१-विराम)

जो लोग लोभ लालच में फँसे रह कर सारा जीवन दुख सहते हैं उनकी तुलना कबीर जी अब एक बँदर की उस दशा के साथ करते हुए कहते हैं - हे मेरे बावरे मन, जैसे बँदर अनाज वाली सुराही में खाली हाथ डाल तो देता है परन्तु अनाज भरी मुट्ठी नहीं निकाल पाता है, भय के कारण वह उसमें फँसा घर घर नाच कूद करता रहता है ।(२)

एक और उदाहरण के साथ कबीर जी कहते हैं - कि जैसे नलनी पर बैठा तोता पकड़ा जाता है, ठीक वैसे ही हे' मेरे मन, माया का व्यवहार है (और मनुष्य को उसका आभास नहीं होता)। जैसे कसुंभ के फूल का गहरा लाल रंग पानी और धूप से धीमा् होने लगता है वैसे ही संसार का पसारा है ।(३)

सांसारिक मायाजाल से बचाने के लिये कबीर जी देवी देवताओं, तीर्थ यात्राओं और पूजा पाखंडों से बचने की चेतावनी देते हुये कहते हैं कि हे' मेरे बावरे मन, अनेकों तीर्थ स्नान के लिये अथवा पूजने के लिये बहुत देवता हैं, पर तुम्हें कोई नही बचा सकता। हे' मन, मुक्ति केवल हरि की सेवा और ध्यान से ही मिल सकती है। (४-१-६-५७)

इस शब्द का संदेश है कि यदि हम मुक्ति पाना चाहते हैं तो पाखंड, लोभ एवं लालसाओं से दूर रहें और केवल एक सर्व शक्तिमान ईश्वर का स्मरण करें।

ਪੰਨਾ ੩੩੭	**पृ-३३७**
ਰਾਗੁ ਗਉੜੀ ॥	**राग गउड़ी ॥**
ਪੰਥੁ ਨਿਹਾਰੈ ਕਾਮਨੀ ਲੋਚਨਭਰੀ ਲੇ ਉਸਾਸਾ ॥	पँथु निहारै कामनी लोचनभरी ले उसासा ॥
ਪੰਨਾ ੩੩੮	**पृ-३३८**
ਉਰ ਨ ਭੀਜੈ ਪਗੁ ਨਾ ਖਿਸੈ ਹਰਿ ਦਰਸਨ ਕੀ ਆਸਾ ॥੧॥	उर न भीजै पगु न खिसै हरि दरसन की आसा ॥१॥
ਉਡਹੁ ਨ ਕਾਗਾ ਕਾਰੇ ॥ ਬੇਗਿ ਮਿਲੀਜੈ ਅਪੁਨੇ ਰਾਮ ਪਿਆਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	उडहु न कागा कारे ॥ बेगि मिलीजै अपुने राम पिआरे १॥रहाउ॥
ਕਹਿ ਕਬੀਰ ਜੀਵਨ ਪਦ ਕਾਰਨਿ ਹਰਿ ਕੀ ਭਗਤਿ ਕਰੀਜੈ ॥ ਏਕੁ ਆਧਾਰੁ ਨਾਮੁ ਨਾਰਾਇਨ ਰਸਨਾ ਰਾਮੁ ਰਵੀਜੈ ॥੨॥੧॥੧੪॥੬੫॥	कहि कबीर जीवन पद कारनि हरि की भगति करीजै ॥ एकु आधारु नामु नाराइन रसना रामु रवीजै ॥२॥१॥१४॥६५॥

राग गउड़ी

इस सुंदर शब्द में कबीर जी अपनी काव्य कल्पना के शिखर को छूते हुए ईश्वर के प्रति सच्चे प्रेम तथा उसकी एक झलक पाने की चाह की तुलना एक ऐसी नववधू से करते हैं जो अपने पति का राह उत्सुकता से देख रही है ।

वह कहते हैं कि – नवविवाहिता अश्रु भरी आँखों और गहरी साँसों के साथ राह निहार रही है । अपने पति (ईश्वर) के दर्शन की आशा में उसका ह्रदय अशांत है और उसके पैर वहाँ से हट नहीं रहे हैं, (ठीक यही दशा उस सच्चे भक्त की है जो अपने प्रभु की एक झलक पाने की आशा रखता है) ।(१)

अब कबीर जी दीवार पर बैठे कौवे की कल्पना करते हुए कहते है, हे काले कौवे, (मेरे अन्तरमन), तुम उड़ कर क्यों नहीं जल्दी से जाते (और मेरे पति का संदेशा लाते) ताकि शीघ्र ही अपने प्रिय राम से मेरा मिलन हो सके। (१-विराम)

शब्द का अंत वह इस आशय के साथ करते हैं कि किस इच्छा या ध्येय से हमें ईश्वर भक्ति करनी चाहिए । वह कहते हैं: “ हे’ कबीर, जीवन में उच्च पद पाने के लिए हरि की भक्ति करो । नारायण का नाम ही हमारे जीवन का आधार है और राम नाम में रसना को रमाये रहो। (२-१-१४-६५)

इस शब्द का संदेश यह है कि जब तक हम ईश्वर की एक झलक नहीं पा लेते, उसका हमें श्रद्धा पूर्वक स्मरण करते रहना चाहिये । उसके प्रति हमारा ध्यान, श्रद्धा तथा प्रेम वैसा ही हो जैसा एक नववधू का अपने पति के प्रति होता है ।

ਪੰਨਾ ੩੩੯	**पृ-३३९**
ਗਉੜੀ ॥	**गउड़ी ॥**
ਮਾਈ ਮੋਹਿ ਅਵਰੁ ਨ ਜਾਨਿਓ ਆਨਾਨਾਂ ॥ ਸਿਵ ਸਨਕਾਦਿ ਜਾਸੁ ਗੁਨ ਗਾਵਹਿ ਤਾਸੁ ਬਸਹਿ ਮੋਰੇ ਪ੍ਰਾਨਾਨਾਂ ॥ ਰਹਾਉ ॥	माई मोहि अवरु न जानिओ आनानां ॥ सिव सनकादि जासु गुन गावहि तासु बसहि मोरे प्रानानां ॥रहाउ॥
ਹਿਰਦੇ ਪ੍ਰਗਾਸੁ ਗਿਆਨ ਗੁਰ ਗੰਮਿਤ ਗਗਨ ਮੰਡਲ ਮਹਿ ਧਿਆਨਾਨਾਂ ॥ ਬਿਖੈ ਰੋਗ ਭੈ ਬੰਧਨ ਭਾਗੇ ਮਨ ਨਿਜ ਘਰਿ ਸੁਖੁ ਜਾਨਾਨਾ ॥੧॥	हिरदे प्रगासु गिआन गुर गँमित गगन मँडल महि धियानानां ॥ बिखै रोग भै बँधन भागे मन निज घरि सुखु जानाना ॥१॥
ਏਕ ਸੁਮਤਿ ਰਤਿ ਜਾਨਿ ਮਾਨਿ ਪ੍ਰਭ ਦੂਸਰ ਮਨਹਿ ਨ ਆਨਾਨਾ ॥ ਚੰਦਨ ਬਾਸੁ ਭਏ ਮਨ ਬਾਸਨ ਤਿਆਗਿ ਘਟਿਓ ਅਭਿਮਾਨਾਨਾ ॥੨॥	एक सुमति रति जानि मानि प्रभ दूसर मनहि न आनाना ॥ चँदन बासु भए मन बासन तिआगि घटिओ अभिमानाना ॥२॥
ਜੋ ਜਨ ਗਾਇ ਧਿਆਇ ਜਸੁ ਠਾਕੁਰ ਤਾਸੁ ਪ੍ਰਭੂ ਹੈ ਥਾਨਾਨਾਂ ॥ ਤਹ ਬਡ ਭਾਗ ਬਸਿਓ ਮਨਿ ਜਾ ਕੈ ਕਰਮ ਪ੍ਰਧਾਨ ਮਥਾਨਾਨਾ ॥੩॥	जो जन गाइ धिआइ जसु ठाकुर तासु प्रभु है थानानां ॥ तह बड भाग बसिओ मन जा कै करम प्रधान मथानाना ॥३॥
ਕਾਟਿ ਸਕਤਿ ਸਿਵ ਸਹਜੁ ਪ੍ਰਗਾਸਿਓ ਏਕੈ ਏਕ ਸਮਾਨਾਨਾ ॥	काटि सकति सिव सहजु प्रगासिओ एकै एक समानाना ॥
ਪੰਨਾ ੩੪੦	**पृ-३४०**
ਕਹਿ ਕਬੀਰ ਗੁਰ ਭੇਟਿ ਮਹਾ ਸੁਖ ਭ੍ਰਮਤ ਰਹੇ ਮਨੁ ਮਾਨਾਨਾਂ ॥੪॥੨੩॥੭੪॥	कहि कबीर गुर भेटि महा सुख भ्रमत रहे मनु मानानां ॥४॥२३॥७४॥

गउड़ी

अपने व्यक्तिगत विश्वास पर भक्त कबीर जी यहाँ व्यक्त करते हैं कि हे मेरी माता, ईश्वर के अतिरिक्त मैंने और किसी को नहीं जाना है, शिव और सनकादि (ब्रह्मा जी के चार पुत्र) भी जिसकी स्तुति करते हैं उसी ईश्वर में मेरे प्राण बसते हैं । (१- विराम)

कैसे यह हुआ, वह कहते हैं कि गुरु के द्वारा दैवी ज्ञान प्राप्त होने से मेरा मन आलोकित हो गया है और मेरी तन्मयता गगन मंडल (दशम द्वार, ईश्वर के निकट) तक पहुँच गयी हैं जिससे मेरे सभी रोग, दुख, विषय एवं भय आदि के बंधन चले गये हैं और मेरा मन अपने ही घर में (आत्मिक रूप से) सुखी और आनंदित जान पड़ता है ।(१)

इस स्थिति को प्राप्त कर लेने के पश्चात भी कबीर जी दीन भावना से आगे कहते हैं कि गुरु के द्वारा दी हुई सुमति को समझने तथा पूर्ण रूप से स्वीकार करने के बाद मैंने अपने मन में दूसरा और कोई विचार नहीं आने दिया । इस प्रकार मन के भटकाव को वश में करके मेरा अभिमान कम हो गया है और उसके स्थान पर चंदन सी महक (ईश्वरीय भावना) मन में बस गयी है । (२)

इसलिए अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर कबीर जी हमें कहते हैं कि - जो मनुष्य ठाकुर का ध्यान एवं यशगान करता है उसके अंदर प्रभु स्थान बना लेते हैं । वह मनुष्य अति भाग्यशाली समझा जाना चाहिए जिसके मन में प्रभु आ बसें हैं , क्योंकि उसके उत्तम कर्म फलीभूत हो गये हैं ।(३)

अंत में वह कहते हैं कि सांसारिक बंधन तोड़ देने से एक सहज अवस्था का प्रकाश हो गया है और मैं ईश्वर के साथ लीन हो गया हूँ। कबीर कहते हैं कि गुरु से मिलन के बाद मुझे दैवी आशीर्वाद प्राप्त हो गया है और मन की भटकन (गुरु के कहे अनुसार चलने पर) समाप्त हो गयी है । (४-२३-७४)

इस शब्द का संदेश यह है कि अहम भावना का त्याग करके जो व्यक्ति सर्वव्यापी ईश्वर के गुणगान करता है वह उसी में लीन हो जाता है और यही सच्ची भक्ति है और यही उसके लिये वरदान है ।

ਪੰਨਾ ੩੪੧

ਰਾਗੁ ਗਉੜੀ ਪੂਰਬੀ ਬਾਵਨ ਅਖਰੀ ਕਬੀਰ ਜੀਉ ਕੀ

ਬਬਾ ਬਿੰਦਹਿ ਬਿੰਦ ਮਿਲਾਵਾ ॥
ਬਿੰਦਹਿ ਬਿੰਦਿ ਨ ਬਿਛੁਰਨ ਪਾਵਾ ॥
ਬੰਦਉ ਹੋਇ ਬੰਦਗੀ ਗਹੈ ॥

ਪੰਨਾ ੩੪੨

ਬੰਦਕ ਹੋਇ ਬੰਧ ਸੁਧਿ ਲਹੈ ॥੨੯॥

पृ-३४१

राग गउड़ी पूरबी बावन अखरी कबीर जीउ की

बबा बिँदिह बिँदि मिलावा ॥
बिँदिह बिंदि न बिछुरन पावा ॥
बँदउ होइ बँदगी गहै॥

पृ-३४२

बँदक होइ बँध सुधि लहै ॥२९॥

राग गउड़ी पूरबी बावन अखरी कबीर जीउ की

कबीर जी ने यह दैवी काव्य रचना तत्कालीन हिंदी भाषा 'लंडे' के वर्ण 'ब' के साथ आरंभ की है, इस भाषा में कुल बावन वर्ण हैं । उस समय के कई कवियों की रचनायें इस प्रचलन पर रची गयी हैं ।

बबा -(ब)- से बिंदू, अर्थात पानी की बूँद जिस प्रकार दूसरी पानी की बूँद से मिल जाती है और फिर उसे अलग करना असंभव है, (उसी प्रकार आत्मा का मिलन परमात्मा से होता है और फिर वह उससे अलग नहीं होती) । जो मनुष्य एक भाट के समान ईश्वर के द्वार पर उसके गुणगान करता है और सेवक के भाँति पूजा करता है, वह सांसारिक बंधनों को समझते हुये उनमें फँसता नहीं है।

इस दोहे का संदेश है कि हम सदा ईश्वर भक्ति में लीन रहें । ईश्वर स्वयं हम भक्तजनों की उसी प्रकार से रक्षा करेंगे जैसे कि प्रिय सम्बन्धी परस्पर एक दूसरे का ध्यान रखते हैं ।

ਪੰਨਾ ੩੪੩

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਰਾਗੁ ਗਉੜੀ ਥਿਤੀਂ ਕਬੀਰ ਜੀ ਕੀਂ ॥

ਸਲੋਕੁ ॥

ਪੰਦ੍ਰਹ ਥਿਤੀਂ ਸਾਤ ਵਾਰ ॥
ਕਹਿ ਕਬੀਰ ਉਰਵਾਰ ਨ ਪਾਰ ॥

ਸਾਧਿਕ ਸਿਧ ਲਖੈ ਜਉ ਭੇਉ ॥
ਆਪੇ ਕਰਤਾ ਆਪੇ ਦੇਉ ॥੧॥

ਦਸਮੀ ਦਹ ਦਿਸ ਹੋਇ ਅਨੰਦ ॥
ਛੂਟੈ ਭਰਮੁ ਮਿਲੈ ਗੋਬਿੰਦ ॥

ਜੋਤਿ ਸਰੂਪੀ ਤਤ ਅਨੂਪ ॥
ਅਮਲ ਨ ਮਲ ਨ ਛਾਹ ਨਹੀ ਧੂਪ ॥੧੧॥

पृ-३४३

१-ओंकार सतिगुर प्रसाद ॥

रागु गउड़ी थिँती कबीर जी की ॥

सलोक

पँद्रह थितीँ सात वार ॥
कहि कबीर उरवार न पार ॥

साधिक सिध लखै जउ भेउ ॥
आपे करता आपे देउ ॥१॥

दसमी दह दिस होइ अनँद ॥
छूटै भरमु मिलै गोबिंद ॥

जोति सरूपी तत अनूप ॥
अमल न मल न छाह नही धूप ॥११॥

रागु गउड़ी थिती कबीर जी की ॥

यह पवित्र शब्द शुक्ल पक्ष के पन्द्रह दिनों पर आधारित है जहाँ चन्द्रमा अमावस्या की रात्रि के पश्चात दिन प्रतिदिन बड़ा होते हुए पूर्णिमा की रात्रि तक पूरा आकार ले लेता है, इसी संदर्भ में कबीर जी का यहाँ कहना है कि- वह लोग जो शुक्ल पक्ष के पन्द्रह दिन और सप्ताह के सात दिन विशेष रीतियाँ एवं अनुष्ठान का आयोजन करते हैं वह किसी किनारे या आर पार नहीं लग पाते । परन्तु जो साधु ईश्वर का भेद पा लेते हैं, वह उसी में लीन रहते हैं और एकाकार हो जाते हैं । (१)

चन्द्रमा के शुक्ल पक्ष की दशमी पर कबीर जी का कहना है कि -(यदि हम अपनी ज्ञानेंद्रियों को वश में रखें तो) चन्द्रमा के शुक्ल पक्ष की दशमी पर दसों दिशायों में आनन्द बिखरा रहता है, सारे भ्रम दूर होते हैं तथा सृष्टि के मालिक से मिलन होता है, जो अति सुंदर व पवित्र प्रकाश है । वह असाधारण है, निर्मल है (उसमें कोई दोष नहीं) । वहाँ कोई छाया(अज्ञानता) नहीं है और ना ही (सांसारिक इच्छाओं की) धूप है ।(११)

इस दोहे का सार है कि यदि हम दैवी वरदानों का सुख लेना चाहते हैं तो हमें इच्छाओं को नियंत्रण में रखना चाहिये और एकाग्र मन से ईश्वर की महिमा का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੩੪੫	पृ-३४५
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥
ਗਉੜੀ ਬੈਰਾਗਣਿ ਰਵਿਦਾਸ ਜੀਉ ॥	गउड़ी बैरागणि रविदास जीउ ॥
ਘਟ ਅਵਘਟ ਡੂਗਰ ਘਣਾ ਇਕੁ ਨਿਰਗੁਣੁ ਬੈਲੁ ਹਮਾਰ ॥ ਮਈਏ ਸਿਉ ਇਕ ਬੇਨਤੀ ਮੇਰੀ ਪੂੰਜੀ ਰਾਖੁ ਮੁਰਾਰਿ ॥੧॥	घट अवघट डूगर घणा इकु निरगुणु बैलु हमार ॥ मईए सिउ इक बेनती मेरी पूँजी राखु मुरारि ॥१॥
ਕੋ ਬਨਜਾਰੋ ਰਾਮ ਕੋ ਮੇਰਾ ਟਾਂਡਾਲਾਦਿਆ ਜਾਇ ਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	को बनजारो राम को मेरा टाँडालादिआ जाय रे ॥१॥रहाउ॥
ਪੰਨਾ ੩੪੬	पृ-३४६
ਹਉ ਬਨਜਾਰੋ ਰਾਮ ਕੋ ਸਹਜ ਕਰਉ ਬ੍ਯ਼ਾਪਾਰੁ ॥ ਮੈ ਰਾਮ ਨਾਮ ਧਨੁ ਲਾਦਿਆ ਬਿਖੁ ਲਾਦੀ ਸੰਸਾਰਿ ॥੨॥	हउ बनजारो राम को सहज करउ बापारु ॥ मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी सँसारि ॥||२||
ਉਰਵਾਰ ਪਾਰ ਕੇ ਦਾਨੀਆ ਲਿਖਿ ਲੇਹੁ ਆਲ ਪਤਾਲੁ ॥ ਮੋਹਿ ਜਮ ਡੰਡੁ ਨ ਲਾਗਈ ਤਜੀਲੇ ਸਰਬ ਜੰਜਾਲ ॥੩॥	उरवार पार के दानीआ लिखि लेहु आल पतालु ॥ मोहि जम डँडु न लागई तजीले सरब जँजाल ॥३॥
ਜੈਸਾ ਰੰਗੁ ਕਸੁੰਭ ਕਾ ਤੈਸਾ ਇਹੁ ਸੰਸਾਰੁ ॥ ਮੇਰੇ ਰਮਈਏ ਰੰਗੁ ਮਜੀਠ ਕਾ ਕਹੁ ਰਵਿਦਾਸ ਚਮਾਰ ॥੪॥੧॥	जैसा रँगु कसुँभ का तैसा इहु सँसारु ॥ मेरे रमईए रँगु मजीठ का कहु रविदास चमार ॥४॥१॥

गउड़ी बैरागणि रविदास जीउ

इस शब्द में भक्त रविदास जी अपने अन्तरमन की तुलना एक शक्तिहीन बैल से करते हैं, जिसे ईश्वर भक्ति रूपी पर्वत के दुर्गम मार्ग पर चढ़ना कठिन लग रहा है, अत: वह अपने किसी साथी की सहायता चाहते हैं जो उनका बोझ बाँट ले ।

इस दशा में वह कहते हैं कि- भक्ति का मार्ग बहुत कठिन, दुर्गम एवं ऊँचा है (पर्वत की चढ़ाई की भाँति) और मेरा निर्गुण बैल शक्तिहीन है, इसलिये हे' मुरारी, मेरी तुमसे एक विनती है, मेरी पूँजी (तुम्हारे प्रति भक्ति भावना) की रक्षा करो ।(१)

फिर वह अपने साथियों (अन्य साधु जनों) से आग्रह करते हैं - हे राम के बनजारो, क्या कोई मेरे सामान के लिये मेरी सहायता कर सकता है, (अथवा आत्मिक यात्रा का सहयोगी बन सकता है) । (१-विराम)

परन्तु अपने आस पास पसरा झूठा सांसारिक मायाजाल देख कर वह स्वयं को ही सम्बोधित करते हैं कि -मैं ही राम का बनजारा हूँ और सहजे में ही यह व्यापार कर सकता हूँ । मेरे अन्तरमन में राम नाम का धन माल लदा हुया है जबकि संसार में बहुत बिख (विष व दोष) लदा है । (२)

आगे वह चित्र गुप्त को आड़े हाथों लेते हैं कि- तुम जो प्रत्येक का लेखा जोखा रखते हो, मेरे लिये जो भी उलटा सीधा लिखना चाहते हो, लिख लो, यमराज मुझे कोई भी दंड नहीं दे सकते क्योंकि मैंने सारे सांसारिक जंजालों का त्याग कर दिया है । ॥३॥

शब्द के अंत में संसार के बारे में हमें सचेत करते हुये कहते हैं - हे' मित्रो, संसार का स्वभाव कुसुँभ के फूल के रंग जैसा है (जो आरंभ में आकर्षक गहरे लाल रंग का होता है पर जल्दी ही धूमिल हो जाता है)।रविदास चमार कहते हैं, जबकि मेरे सर्वव्यापी राम का रंग मजीठे के फूल के रंग की भाँति पक्का और चमकीला है । (४-१)

इस शब्द का संदेश है कि सांसारिक सुख एवं यश के पीछे भागने के बजाय हमें ईश्वर के प्रिय जनों की संगति में रहना चाहिये और ईश्वर का स्मरण करना चाहिये, ताकि अंत में हम यमराज के दंड के भागी न बन कर ईश्वर के द्वार पर शरण पा सकें ।

ਪੰਨਾ ੩੪੭

ੴ ਸਤਿ ਨਾਮੁ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰਭਉ ਨਿਰਵੈਰੁ ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਅਜੂਨੀ ਸੈਭੰ ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਰਾਗੁ ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ਘਰੁ ੧ ਸੋ ਦਰੁ ॥

ਸੋ ਦਰੁ ਤੇਰਾ ਕੇਹਾ ਸੋ ਘਰੁ ਕੇਹਾ ਜਿਤੁ ਬਹਿ ਸਰਬ ਸਮ੍ਾਲੇ ॥
ਵਾਜੇ ਤੇਰੇ ਨਾਦ ਅਨੇਕ ਅਸੰਖਾ ਕੇਤੇ ਤੇਰੇ ਵਾਵਣਹਾਰੇ ॥
ਕੇਤੇ ਤੇਰੇ ਰਾਗ ਪਰੀ ਸਿਉ ਕਹੀਅਹਿ ਕੇਤੇ ਤੇਰੇ ਗਾਵਣਹਾਰੇ ॥
ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਪਉਣੁ ਪਾਣੀ ਬੈਸੰਤਰੁ ਗਾਵੈ ਰਾਜਾ ਧਰਮ ਦੁਆਰੇ ॥
ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਚਿਤੁ ਗੁਪਤੁ ਲਿਖਿ ਜਾਣਨਿ ਲਿਖਿ ਲਿਖਿ ਧਰਮੁ ਵੀਚਾਰੇ ॥

ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਈਸਰੁ ਬ੍ਰਹਮਾ ਦੇਵੀ ਸੋਹਨਿ ਤੇਰੇ ਸਦਾ ਸਵਾਰੇ ॥
ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਇੰਦ੍ਰ ਇੰਦ੍ਰਾਸਣਿ ਬੈਠੇ ਦੇਵਤਿਆ ਦਰਿ ਨਾਲੇ ॥
ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਸਿਧ ਸਮਾਧੀ ਅੰਦਰਿ ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਸਾਧ ਬੀਚਾਰੇ ॥
ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਜਤੀ ਸਤੀ ਸੰਤੋਖੀ ਗਾਵਨਿ ਤੁਧਨੋ ਵੀਰ ਕਰਾਰੇ ॥
ਗਾਵਨਿ ਤੁਧਨੋ ਪੰਡਿਤ ਪੜੇ ਰਖੀਸੁਰ ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਬੇਦਾ ਨਾਲੇ ॥

ਗਾਵਨਿ ਤੁਧਨੋ ਮੋਹਣੀਆ ਮਨੁ ਮੋਹਨਿ ਸੁਰਗੁ ਮਛੁ ਪਇਆਲੇ ॥
ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਰਤਨ ਉਪਾਏ ਤੇਰੇ ਜੇਤੇ ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਨਾਲੇ ॥
ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਜੋਧ ਮਹਾਬਲ ਸੂਰਾ ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਖਾਣੀ ਚਾਰੇ ॥
ਗਾਵਨਿ੍ ਤੁਧਨੋ ਖੰਡ ਮੰਡਲ ਬ੍ਰਹਮੰਡਾ ਕਰਿ ਕਰਿ ਰਖੇ ਤੇਰੇ ਧਾਰੇ ॥

ਸੇਈ ਤੁਧਨੋ ਗਾਵਨਿ੍ ਜੋ ਤੁਧੁ ਭਾਵਨਿ੍ ਰਤੇ ਤੇਰੇ ਭਗਤ ਰਸਾਲੇ ॥
ਹੋਰਿ ਕੇਤੇ ਤੁਧਨੋ ਗਾਵਨਿ ਸੇ ਮੈ ਚਿਤਿ ਨ ਆਵਨਿ ਨਾਨਕੁ ਕਿਆ ਬੀਚਾਰੇ ॥
ਸੋਈ ਸੋਈ ਸਦਾ ਸਚੁ ਸਾਹਿਬੁ ਸਾਚਾ ਸਾਚੀ ਨਾਈ ॥
ਹੈ ਭੀ ਹੋਸੀ ਜਾਇ ਨ ਜਾਸੀ ਰਚਨਾ ਜਿਨਿ ਰਚਾਈ ॥

ਰੰਗੀ ਰੰਗੀ ਭਾਤੀ ਜਿਨਸੀ ਮਾਇਆ ਜਿਨਿ ਉਪਾਈ ॥

ਕਰਿ ਕਰਿ ਦੇਖੈ ਕੀਤਾ ਅਪਣਾ ਜਿਉ ਤਿਸ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ॥
ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਸੋਈ ਕਰਸੀ ਫਿਰਿ ਹੁਕਮੁ ਨ ਕਰਣਾ ਜਾਈ ॥

ਪੰਨਾ ੩੪੮

ਸੋ ਪਾਤਿਸਾਹੁ ਸਾਹਾ ਪਤਿ ਸਾਹਿਬੁ ਨਾਨਕ ਰਹਣੁ ਰਜਾਈ ॥੧॥੧॥

पृ-३४७

१ओंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

रागु आसा महला १ घरु १ सो दर ॥

सो दरु तेरा केहा सो घरु केहा जित बहि सरब समाले ॥
वाजे तेरे नाद अनेक असँखा केते तेरे वावणहारे ॥
केते तेरे राग परी सिउ कहिअहि केते तेरे गावणहारे ॥
गावनि तुधनो पउणु पाणी बैसँतरु गावै राजा धरमु दुआरे ॥
गावनि् तुधनो चितु गुपतु लिखि जाणनि लिखि लिखि धरमु वीचारे ॥

गावनि् तुधनो ईसरु ब्रह्मा देवी सोहनि तेरे सदा सवारे ॥
गावनि् तुधनो इँद्र इँद्रासणि बैठे देवतिआ दरि नाले ॥
गावनि् तुधनो सिध समाधी अँदरि गावनि् तुधनो साध बीचारे ॥
गावनि् तुधनो जती सती सँतोखी गावनि् तुधनो वीर करारे ॥
गावनि् तुधनो पँडित पड़े रखीसुर जुग जुग बेदा नाले ॥

गावनि् तुधनो मोहणीआ मन मोहनि सुरगु, मछु पइआले ॥
गावनि् तुधनो रतन उपाए तेरे जेते अठसठि तीरथ नाले ॥
गावनि् तुधनो जोध महाबल सूरा गावनि् तुधनो खाणी चारे ॥
गावनि् तुधनो खँड मँडल ब्रहमँडा करि करि रखे तेरे धारे ॥

सेई तुधनो गावनि् जो तुध भावनि् रते तेरे भगत रसाले ॥
होरि केते तुधनो गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ बीचारे ॥
सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई ॥
है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई ॥

रँगी रँगी भाती जिनसी माइआ जिनि उपाई ॥

करि करि देखै कीता अपणा जिउ तिस दी वडिआई ॥
जो तिसु भावै सोई करसी फिरि हुकमु न करणा जाई ॥

पृ- ३४८

सो पातिसाहु साहा पति साहिबु नानक रहणु रजाई ॥१॥१॥

रागु आसा महला १ घरु १ सो दर

इस सुंदर रचना में गुरु जी ईश्वरमयी मौज की अवस्था में कहते हैं कि सभी जैविक तथा अजैविक पदार्थ ईश्वर की इच्छानुसार ही स्मस्त कार्य कर रहे हैं तथा उसके गुणगान करते हैं ।

वह आश्चर्यचकित हैं कि ऐसा कौनसा सुंदर एवं शांतिपूर्ण स्थान है जहाँ से वह प्रभु सम्पूर्ण ब्रह्मांड की देख रेख कर रहा है । वह अचंभित हैं कि कैसे विभिन्न प्राणी (गायक, योद्धा, बड़े लोग, साधु संत तथा देवता गण, धरती, समुद्र और रत्न आदि) मधुर संगीत की धुन में ईश्वर की महिमा का गायन कर रहे हैं । ऐसे प्रेम, भक्ति भाव और अचंभित दशा में गुरु जी ईश्वर को सम्बोधित करते हुये कहते हैं - हे प्रभु यह तेरा कैसा अद्भुत घर द्वार है जहाँ पर बिराजमान तुम सारी सृष्टि को संभाल रहे हो, वहाँ कितने असंख्य संगीतज्ञ अनेक वाद्यों के संग अनगिनत राग रागनियाँ, गीत एवं धुनें तेरी प्रशंसा में गा रहे हैं ।

(हे' ईश्वर, मुझे तो प्रतीत होता है कि अपने अपने नियत कार्यों को करते हुए) पवन, जल, अग्नि तथा धर्मराज भी (एक प्रकार से) तेरे द्वार पर खड़े तेरा यशगान करते हैं । चित्र गुप्त जो सब जीवों का लेखा जोखा रखते हैं, जिस पर धर्मराज विचार कर निर्णय लेते हैं, वह

भी तेरी महिमा का गायन करते हैं ।हे प्रभु, शिव, ब्रह्मा तथा अन्य देवी देवता जो तेरे द्वारा सुशोभित हैं, तेरे द्वार पर सजे हुये तेरा यश गाते हैं। अपने आसन पर बिराजे इंद्रदेव तथा अन्य कितने देवतागण साथ मिलकर तेरे गुण गा रहे हैं ।बड़े बड़े सिद्ध जो तेरी समाधि में बैठे हैं और साधु जन जो तेरा विचार करते हैं, तेरी तपस्या में लीन जती, सती और तेरे पर भरोसा करने वाले संतोषी और वीर योद्धा भी तेरी महिमा का गान करते रहते हैं ।

उच्च शिक्षा धारी पंडित, वेदों के ज्ञाता, तथा महान ऋषि युगों युगों से तेरी प्रशंसा में गा रहे हैं ।हे प्रभु, हृदय मोहक स्वर्ग में वास करने वाली सुंदर महिलाएं, पुरुष, लोक परलोक वाले सभी तेरे गुण गाते हैं । जो रत्न जवाहर तूने बनाये हैं, अड़सठ तीर्थ स्थान सब साथ में तेरी प्रशंसा में गाते हैं ।वीर योद्धा, महाबली, शूरवीर एवं सृष्टि के चारों आधार और धरती, सौर मंडल, ब्रह्मांड जो तुमने ही रचे हैं और उनका पालन किया है, तेरी महिमा गाते हैं ।किन्तु हे' प्रभु, केवल वही तुम्हें भाते हैं जो सच में तेरी भक्ति के रस में रमे तेरे गुण गाते हैं। और भी कितने अनगिनत लोग तेरी महिमा गाते हैं जो मुझ बिचारे नानक की सोच से बाहर हैं । (नानक बस इतना जानते हैं कि) मालिक जिसने यह ब्रह्मांड रचा है, वही सच है और सदैवीय है - वह अब भी विद्यमान है, आगे भी सदा रहेगा और कभी नहीं जायेगा । वह जिसने विभिन्न रंग रूपों भरी माया रची, वही अपनी इच्छा से सब कुछ कर रहा है । जो उसके मन भाता है वही करता है, उसे कोई भी निर्देश नहीं दे सकता । वह शाहों का बादशाह है (इसलिये) हे नानक उसकी रजा (इच्छा) में ही रहो । (१-१)

इस रचना का संदेश कि 'सो दर ' (वह द्वार घर/महल) ईश्वर का रचा ब्रह्मांड है । समस्त जीव अथवा अजैविक पदार्थ एवं आकाश पिंड अपने अपने निश्चित कार्य करते हुये ईश्वर की महिमा गाते हैं । ईश्वर को वह बहुत भाते हैं जो सच्चे प्रेम व भक्ति से उसके गुणगान करते हैं । यदि हम उस राजाओं के राजा एक प्रभु की कृपा चाहते हैं तो हमें उसकी इच्छा को स्वीकार कर सच्चे प्रेम और श्रद्धा के साथ उसकी महिमा गायन करनी चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੩੪੯

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਤਾਲ ਮਦੀਰੇ ਘਟ ਕੇ ਘਾਟ ॥
ਦੋਲਕ ਦੁਨੀਆ ਵਾਜਹਿ ਵਾਜ ॥
ਨਾਰਦੁ ਨਾਚੈ ਕਲਿ ਕਾ ਭਾਉ ॥
ਜਤੀ ਸਤੀ ਕਹ ਰਾਖਹਿ ਪਾਉ ॥੧॥

ਨਾਨਕ ਨਾਮ ਵਿਟਹੁ ਕੁਰਬਾਣੁ ॥
ਅੰਧੀ ਦੁਨੀਆ ਸਾਹਿਬੁ ਜਾਣੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਗੁਰੂ ਪਾਸਹੁ ਫਿਰਿ ਚੇਲਾ ਖਾਇ ॥
ਤਾਮਿ ਪਰੀਤਿ ਵਸੈ ਘਰਿਆਇ ॥

ਪੰਨਾ ੩੫੦

ਜੇ ਸਉ ਵਰ੍ਹਿਆ ਜੀਵਣ ਖਾਣੁ ॥
ਖਸਮ ਪਛਾਣੈ ਸੋ ਦਿਨੁ ਪਰਵਾਣੁ ॥੨॥

ਦਰਸਨਿ ਦੇਖਿਐ ਦਇਆ ਨ ਹੋਇ ॥
ਲਏ ਦਿਤੇ ਵਿਣੁ ਰਹੈ ਨ ਕੋਇ ॥
ਰਾਜਾ ਨਿਆਉ ਕਰੇ ਹਥਿ ਹੋਇ ॥
ਕਹੈ ਖੁਦਾਇ ਨ ਮਾਨੈ ਕੋਇ ॥੩॥

ਮਾਣਸ ਮੂਰਤਿ ਨਾਨਕੁ ਨਾਮੁ ॥
ਕਰਣੀ ਕੁਤਾ ਦਰਿ ਫੁਰਮਾਨੁ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦਿ ਜਾਣੈ ਮਿਹਮਾਨੁ ॥
ਤਾ ਕਿਛੁ ਦਰਗਹ ਪਾਵੈ ਮਾਨੁ ॥੪॥੪॥

पृ-३४९

आसा महला १॥

ताल मदीरे घट के घाट ॥
दोलक दुनीआ वाजहि वाज ॥
नारदु नाचै कलि का भाउ ॥
जती सती कह राखहि पाउ ॥१॥

नानक नाम विटहु कुरबाणु ॥
अँधी दुनीआ साहिबु जाणु ॥ १ ॥रहाउ॥

गुरू पासहु फिरि चेला खाइ ॥
तामि परीति वसै घरिआइ ॥

पृ- ३५०

जे सउ वरिह्आ जीवण खाणु ॥
खसम पछाणै सो दिनु परवाणु ॥२॥

दरसनि देखिऐ दइआ न होइ ॥
लए दिते विणु रहै न कोइ ॥
राजा निआउ करे हथि होइ॥
कहै खुदाइ न मानै कोइ ॥३॥

माणस मूरति नानकु नामु॥
करणी कुता दरि फुरमानु ॥
गुर परसादि जाणै मिहमानु ॥
ता किछु दरगह पावै मानु ॥४॥४॥

आसा महला -१

इस शब्द में गुरु जी संसार में पसरे भ्रष्टाचार, अनेक व्याधियों, लोभ लालच तथा अन्य कई प्रकार के कुकर्मों पर टिप्पणी कर रहे हैं ।

पहले गुरु जी संसार की तुलना एक संगीत गोष्ठी से करते हैं जहाँ हृदय की इच्छायें घुँघरू और मंजीरों की तरह शोर करती हैं, साथ में सांसारिक ढोलक भी थाप देता है और सब प्रकार के झूठे कर्म भी संसार में साथ चल रहे हैं । यह कलियुग का प्रभाव है जिसमें मन नारद की भाँति नृत्य करता है । ऐसे (कलियुग के) समय पर एक सच्चा साधु पुरुष कहाँ पर अपना पैर रक्खे, (अर्थात वह कहाँ जाय) ।(१)

अब स्वयं को (और परोक्ष रूप में हमें भी) गुरु जी समझाते हैं - हे नानक, केवल ईश्वर के नाम के प्रति अपने को समर्पित करो । संसार (जो ईश्वर के नाम से दूर है) अंधा हो चुका है, प्रभु सब कुछ जानते हैं । (केवल ईश्वर की शरण में रहने से ही एक सदाचारी मनुष्य ऐसे समय में ठीक प्रकार से रह सकता है) । (१-विराम)

संसार की छली प्रवृत्ति का उदाहरण देते हुये कहते हैं कि- गुरु की सेवा करने की उपेक्षा कर शिष्य लोभ वश गुरु के घर में खाना पीना और आश्रय पा लेता है । (परन्तु यह सभी को स्मरण रखना चाहिये) कि- चाहे सौ वर्षों तक वहाँ रहें और खायें पियें, उसका कोई लाभ नहीं होगा । केवल वही दिन स्वीकार होगा, जिस दिन हम ईश्वर को पहचान पायेंगे या उसके समीप होंगे ।(२)

संसार की दशा पर आगे कहते हैं कि- हम इतने स्वार्थी व लोभी हो गये हैं कि किसी संकट में घिरे मनुष्य को देख कर दया नहीं आती । बिना किसी लाभ या लेने देने के कोई किसी के लिये कुछ नहीं करता । एक राजा (न्यायाधीश) भी हाथ में कुछ लिये बिना न्याय नहीं देता । ईश्वर के नाम पर भी कोई (निष्पक्षता अथवा करुणा) नहीं करता। (३)

गुरु जी एक सामान्य व्यक्ति के आचार विचार से बहुत निराश होकर कहते हैं कि- (आजकल) मनुष्य अपनी काया या नाम से ही मानव दिखता है, पर आचरण से एक कुत्ते जैसा है जो कुछ टुकड़ों के लोभ में मालिक के द्वार पर बैठा उसकी आज्ञा का पालन करता रहता है । यदि ईश्वर की कृपा हो तभी कोई समझ सकता है कि- संसार में वह एक अतिथि/ मेहमान की तरह है (उसे सांसारिक धनराशि तथा सत्ता का लोभ नहीं है), इस प्रकार उसे ईश्वर के घर द्वार में कुछ आदर व मान प्राप्त हो सकता है।(४-४)

इस शब्द का संदेश है कि संसार में झूठ और भ्रष्टाचार का इतना फैलाव है कि सच्चा एवं सदाचारी जीवन जीना बहुत कठिन हो गया है । हमें यह याद रहना चाहिये कि हम संसार में एक अतिथि के समान हैं । अंत में हमें जाकर ईश्वर को अपने कर्मों का उत्तर देना है। इसलिये हमें प्रभु की शरण में रह कर सच्चाई, ईमानदारी और दयाभाव के साथ जीवनयापन करना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੩੫੧	**पृ-३५१**
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ॥	**आसा महला -१**
ਗ੍ਰਿਹੁ ਬਨੁ ਸਮਸਰਿ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਇ ॥	गृहु बनु समसरि सहजि सुभाइ ॥
ਦੁਰਮਤਿ ਗਤੁ ਭਈ ਕੀਰਤਿ ਠਾਇ ॥ ਸਚ ਪਉੜੀ ਸਾਚਉਮੁਖਿ ਨਾਂਉ ॥	दुरमति गतु भइ कीरति ठाइ ॥ सच पउड़ी साचउमुखि नांउ ॥
ਪੰਨਾ ੩੫੨	**पृ-३५२**
ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਿ ਪਾਏ ਨਿਜ ਥਾਉ ॥੧॥	सतिगुरु सेवि पाए निज थाउ ॥१॥
ਮਨ ਚੂਰੇ ਖਟੁ ਦਰਸਨ ਜਾਣੁ ॥ ਸਰਬ ਜੋਤਿ ਪੂਰਨ ਭਗਵਾਨੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मन चूरे खटु दरसन जाणु ॥ सरब जोति पूरन भगवानु ॥१॥रहाउ॥
ਅਧਿਕ ਤਿਆਸ ਭੇਖ ਬਹੁ ਕਰੈ ॥ ਦੁਖੁ ਬਿਖਿਆ ਸੁਖੁ ਤਨਿ ਪਰਹਰੈ ॥ ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਅੰਤਰਿ ਧਨੁ ਹਿਰੈ ॥ ਦੁਬਿਧਾ ਛੋਡਿ ਨਾਮਿ ਨਿਸਤਰੈ ॥੨॥	अधिक तिआस भेख बहु करै ॥ दुखु बिखिआ सुखु तनि परहरै ॥ कामु क्रोधु अंतरि धनु हिरै ॥ दुबिधा छोडि नामि निसतरै ॥२॥
ਸਿਫਤਿ ਸਲਾਹਣੁ ਸਹਜ ਅਨੰਦ ॥ ਸਖਾ ਸੈਨੁ ਪ੍ਰੇਮੁ ਗੋਬਿੰਦ ॥ ਆਪੇ ਕਰੇ ਆਪੇ ਬਖਸਿੰਦੁ ॥ ਤਨੁ ਮਨੁ ਹਰਿ ਪਹਿ ਆਗੈ ਜਿੰਦੁ ॥੩॥	सिफति सलाहणु सहज अनँद ॥ सखा सैनु प्रेमु गोबिँद ॥ आपे करे आपे बखसिँदु ॥ तनु मनु हरि पहि आगै जिँदु ॥३॥
ਝੂਠ ਵਿਕਾਰ ਮਹਾ ਦੁਖੁ ਦੇਹ ॥ ਭੇਖ ਵਰਨ ਦੀਸਹਿ ਸਭਿ ਖੇਹ ॥ ਜੋ ਉਪਜੈ ਸੋ ਆਵੈ ਜਾਇ ॥ ਨਾਨਕ ਅਸਥਿਰੁ ਨਾਮੁ ਰਜਾਇ ॥੪॥੧੧॥	झूठ विकार महा दुखु देह ॥ भेख वरन दीसहि सभि खेह ॥ जो उपजै सो आवै जाइ ॥ नानक असथिरु नामु रजाइ ॥४॥११॥

आसा महला -१

इस शब्द में गुरु जी वर्णन करते हैं कि किस प्रकार की शांति तथा सहज भावना का अनुभव होता है जब गुरु की आज्ञा के अनुसार मनुष्य अपने को सांसारिक धंधों में न उलझा कर प्रभु का ध्यान करता है ।

उनका कहना है कि- ऐसी मनोस्थिति में इतना ठहराव आ जाता है कि मनुष्य को घर एवं जंगल एक समान लगते हैं, दुरमति पलायन कर जाती है और ईश्वर की महिमा वह स्थान ले लेती है । मुख से प्रभु के नाम का उच्चारण होता है, जो सत्य की ओर ले जाता है । इस प्रकार सच्चे गुरु की सेवा से स्वयं ही उसे अपना स्थान (आत्मा का प्रकाश) प्राप्त हो जाता है (१)

ईश्वरमयी एकाग्र मनोदशा के लाभ के बारे वह कह रहे हैं कि ऐसी मनो स्थिति में बुद्धि इतनी विकसित हो जाती है कि मानो छह शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त हो गया है और प्रतीत होता है कि प्रभु (सभी जीवों तथा स्थानों में) सर्वस्व प्रकाशमान हैं (१-विराम)

चूँकि अधिकतम प्राणी सांसारिक माया एवं सत्ता के प्यासे होते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं कि ऐसा प्यासा अथवा लोलुप मनुष्य बाहर से दिखाने के लिये कितने ही भगवा वेष धारण करले, परन्तु सांसारिक माया मोह की पीड़ा उसके मन की सुखशांति को नष्ट कर देती है । काम क्रोध आदि विकारों की दुष्प्रवृत्तियाँ उसके अंतर्मन की राशि हर लेती हैं । इस दुविधा (सांसारिक मायाजाल) का त्याग करके केवल प्रभु का नाम ही हमें पार लगाता है । (२)

जिसका मन संयमित है उसके लिये गुरु जी कहते हैं कि वह ईश्वर की स्तुति गाकर सहज आनन्द में रहता है तथा ईश्वर प्रेम ही उसका सखा अथवा मित्र है । उसका विश्वास है कि प्रभु ही सबकुछ करते हैं और वही हमें समस्त आशीर्वाद देते हैं । इस प्रकार वह मनुष्य अपना तन, मन व प्राण सब कुछ प्रभु को सौंप देता है । (३)

अंत में उनका कथन है कि ऐसी स्थिर मनोस्थिति वाले मनुष्य को झूठ तथा विकार महा दुखदायी एवं पीड़ा के स्रोत लगते हैं और विभिन्न वेशभूषा, वर्ण, जाति, पाति राख के समान दिखाई देते हैं । जो उपजता है वह आने जाने के फेर में है । हे नानक, सब अस्थिर है, केवल प्रभु का नाम और उसकी इच्छा ही अमर है । (४-११)

इस शब्द में गुरु जी संदेश देते हैं कि हमें अपने मन को संयम में रखना चाहिये, सांसारिक विषयों का पीछा नहीं करना चहिये । तभी हम प्रभु के साथ जुड़ने का प्रयास करके सुख और शांति का अनुभव कर सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੩੫੩

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਕਿਸ ਕਉ ਕਹਹਿ ਸੁਣਾਵਹਿ ਕਿਸ ਕਉ ਕਿਸੁ ਸਮਝਾਵਹਿ ਸਮਝਿ ਰਹੇ ॥
ਕਿਸੈ ਪੜਾਵਹਿ ਪੜਿ ਗੁਣਿ ਬੂਝੇ ਸਤਿਗੁਰਸਬਦਿ ਸੰਤੋਖਿ ਰਹੇ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੩੫੪

ਐਸਾ ਗੁਰਮਤਿ ਰਮਤੁ ਸਰੀਰਾ ॥
ਹਰਿ ਭਜੁ ਮੇਰੇ ਮਨ ਗਹਿਰ ਗੰਭੀਰਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਅਨਤ ਤਰੰਗ ਭਗਤਿ ਹਰਿ ਰੰਗਾ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਸੂਚੇ ਹਰਿ ਗੁਣ ਸੰਗਾ ॥
ਮਿਥਿਆ ਜਨਮੁ ਸਾਕਤ ਸੰਸਾਰਾ ॥
ਰਾਮ ਭਗਤਿ ਜਨੁ ਰਹੈ ਨਿਰਾਰਾ ॥੨॥

ਸੂਚੀ ਕਾਇਆ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਇਆ ॥
ਆਤਮੁ ਚੀਨਿ ਰਹੈ ਲਿਵ ਲਾਇਆ ॥
ਆਦਿ ਅਪਾਰੁ ਅਪਰੰਪਰੁ ਹੀਰਾ ॥
ਲਾਲਿ ਰਤਾ ਮੇਰਾ ਮਨੁ ਧੀਰਾ ॥੩॥

ਕਥਨੀ ਕਹਹਿ ਕਹਹਿ ਸੇ ਮੂਏ ॥
ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਦੂਰਿ ਨਾਹੀ ਪ੍ਰਭੁ ਤੂੰ ਹੈ ॥
ਸਭੁ ਜਗੁ ਦੇਖਿਆ ਮਾਇਆ ਛਾਇਆ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮਤਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਆ ॥੪॥੧੭॥

पृ-३५३

आसा महला १॥

किस कउ कहहि सुणावहि किस कउ किसु समझावहि समझि रहे ॥
किसै पड़ावहि पड़ि गुणि बूझे सतिगुरसबदि सँतोखि रहे ॥१॥

पृ-३५४

ऐसा गुरमति रमतु सरीरा ॥
हरि भजु मेरे मन गहिर गँभीरा ॥१॥ रहाउ ॥

अनत तरंग भगति हरि रँगा ॥
अनदिनु सूचे हरि गुण सँगा ॥
मिथिआ जनमु साकत सँसारा ॥
राम भगति जनु रहै निरारा ॥२॥

सूची काइआ हरि गुण गाइआ ॥
आतमु चीनि रहै लिव लाइआ ॥
आदि अपारु अपरँपरु हीरा ॥
लालि रता मेरा मनु धीरा ॥३॥

कथनी कहहि कहहि से मूए ॥
सो प्रभु दूरि नाही प्रभु तूँ है ॥
सभु जगु देखिआ माइआ छाइआ ॥
नानक गुरमति नामु धिआइआ ॥४॥१७॥

आसा महला -१

जब हम कई धर्म ग्रन्थों के अध्ययन के पश्चात अपने को ज्ञानी समझने लगते हैं, तब हमारा आचार व्यवहार कैसा होना चाहिये, इस पर गुरु जी कहते हैं –ईश्वर भक्त ज्ञानी पुरुष जिन्होंने अपना आध्यात्मिक ज्ञान धर्म ग्रन्थों से अर्जित किया होता है और किसी भ्रम में नहीं रहते, वह दूसरों के सम्मुख अपना प्रचार एवं प्रदर्शन नहीं करते । उन्होंने ईश्वर की महिमा को कितना समझ बूझ और आत्मसात कर लिया है, वह औरों के सामने नहीं बखानते । वह केवल गुरुवाणी (गुरु के वचन) पर आधारित रह कर सुख और संतोष का जीवन व्यतीत करते हैं । (१)

आगे गुरु जी स्वयं को ही सम्बोधित करते हुये कहते हैं कि- हे मेरे मन, गुरु के आदेशों को अपने अंदर रमा कर सर्वव्यापी, अनंत ईश्वर का भजन करो । (१-विराम)

ईश्वर के भक्तजनों तथा सांसारिक मायाजाल के प्रेमियों की तुलना करते हुये अब गुरु जी कहते हैं कि- प्रभु के रंग में डूबे रहने वालों के अंदर ईश्वरीय प्रेम की अनगिनत लहरें उठती हैं और वह दिन रात प्रभु के गुणों का अनुसरण कर पवित्र हो जाते हैं । परन्तु ईश्वर से विमुख लोगों का जन्म संसार में झूठा है। एक सच्चा राम का भक्त सांसारिक लोभ व मायामोह से अछूता रहता है । (२)

हरि गुण गाने वाले का शरीर पवित्र अथवा दोषरहित रहता है, तथा अपने अंतर से ईश्वर में लीन होते हुये वह विचार करता है कि- अंनत, अपार, अनमोल रत्नों समान (प्रभु) पहले से रमे हैं, उनके प्रेम में डूबा हुया मेरा मन धैर्य में है । (३)

अब गुरु जी उनकी बात करते हैं जो स्वयं को ही ईश्वर मानते हैं और ईश्वर के विषय में कई प्रकार के प्रचार करते हुये कहते हैं कि- ईश्वर दूर नहीं हैं तुम ईश्वर हो मैं ईश्वर हूँ , वह आत्मिक रूप से मर जाते हैं (और जन्म मरण के फेर में रहते हैं)। परन्तु हे नानक, जो लोग गुरु की मति का अनुसरण कर ईश्वर नाम का ध्यान करते हैं, उन्हें सारे जगत का माया जाल एक परछाईं के समान दिखाई देता है । (इसलिये वह अपने को संसार से अछूता रख कर प्रभु के समीप रहते है) (४-१७)

इस शब्द का संदेश है कि हमें धर्म ग्रन्थों के ज्ञानी होने के भ्रम (कि हम प्रभु के समीप हैं) में न रह कर गुरु के आदेशों के अनुसार विनम्रता एवं सच्चे प्रेम भाव से ईश्वर का स्मरण करना चाहिये।

ਪੰਨਾ ੩੫੫

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਕਾਚੀ ਗਾਗਰਿ ਦੇਹ ਦੁਹੇਲੀ ਉਪਜੈ ਬਿਨਸੈ ਦੁਖੁ ਪਾਈ ॥
ਇਹੁ ਜਗੁ ਸਾਗਰੁ ਦੁਤਰੁ ਕਿਉ ਤਰੀਐ ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਗੁਰ
ਪਾਰਿ ਨ ਪਾਈ ॥੧॥

ਤੁਝ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਤੁਝ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਇ ਹਰੇ ॥
ਸਰਬੀ ਰੰਗੀ ਰੂਪੀ ਤੂੰ ਹੈ ਤਿਸੁ ਬਖਸੇ ਜਿਸੁ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਾਸੁ ਬੁਰੀ ਘਰਿ ਵਾਸੁ ਨ ਦੇਵੈ ਪਿਰ ਸਿਉ ਮਿਲਣ ਨ ਦੇਇ ਬੁਰੀ ॥
ਸਖੀ ਸਾਜਨੀ ਕੇ ਹਉ ਚਰਨ ਸਰੇਵਉ ਹਰਿ ਗੁਰ ਕਿਰਪਾ ਤੇ
ਨਦਰਿ ਧਰੀ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੩੫੬

ਆਪੁ ਬੀਚਾਰਿ ਮਾਰਿ ਮਨੁ ਦੇਖਿਆ ਤੁਮ ਸਾ ਮੀਤੁ ਨ ਅਵਰੁ ਕੋਈ ॥
ਜਿਉ ਤੂੰ ਰਾਖਹਿ ਤਿਵ ਹੀ ਰਹਣਾ ਦੁਖੁ ਸੁਖੁ ਦੇਵਹਿ ਕਰਹਿ ਸੋਈ ॥੩॥

ਆਸਾ ਮਨਸਾ ਦੋਊ ਬਿਨਾਸਤ ਤ੍ਰਿਹੁ ਗੁਣ ਆਸ ਨਿਰਾਸ ਭਈ ॥
ਤੁਰੀਆਵਸਥਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਈਐ ਸੰਤ ਸਭਾ ਕੀ ਓਟ ਲਹੀ ॥੪॥

ਗਿਆਨ ਧਿਆਨ ਸਗਲੇ ਸਭਿ ਜਪ ਤਪ ਜਿਸੁ ਹਰਿ ਹਿਰਦੈ
ਅਲਖ ਅਭੇਵਾ ॥
ਨਾਨਕ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਮਨੁ ਰਾਤਾ ਗੁਰਮਤਿ ਪਾਏ ਸਹਜਸੇਵਾ ॥੫॥੨੨॥

पृ-३५५

आसा महला १॥

काची गागरि देह दुहेली उपजै बिनसै दुखु पाई ॥
इहु जगु सागरु दुतरु किउ तरीऐ बिनु हरि गुर
पारि न पाइ ॥१॥

तुझ बिनु अवरु न कोई मेरे पिआरे तुझ बिनु अवरु न कोई हरे॥
सरबी रँगी रूपी तूँ है तिसु बखसे जिसु नदरि करे ॥१॥ रहाउ ॥

सासु बुरी घरि वासु न देवै पिर सिउ मिलण न देइ बुरी ॥
सखी साजनी के हउ चरन सरेवउ हरि गुर किरपा ते
नदरि धरी ॥२॥

पृ-३५६

आपु बीचारि मारि मनु देखिआ तुम सा मीतु न अवरु कोई ॥
जिउ तूँ राखहि तिव ही रहणा दुखु सुखु देवहि करहि सोई ॥३॥

आसा मनसा दोऊ बिनासत तृहु गुण आस निरास भई ॥
तुरीआवसथा गुरमुखि पाईऐ सँत सभा की ओट लही ॥४॥

गिआन धिआन सगले सभि जप तप जिसु हरि हिरदै
अलख अभेवा ॥
नानक राम नामि मनु राता गुरमति पाए सहज सेवा ॥५॥२२॥

आसा महला १॥

डा. भाई साहिब सिंह जी के अनुसार इस शब्द का उच्चारण गुरु नानक जी ने तब किया था जब उन्होंने रावी नदी (पंजाब की एक मुख्य नदी) में मिट्टी के घड़ों की सहायता से तैराकों को तैरते देखा। यदि घड़ा पूर्णतया पकाया हुया न होता तो वह पानी में धीरे धीरे गल कर टूट जाता था और तैराक के डूबने की अशंका बन जाती थी।

मानव देह की एक कच्चे घड़े से तथा संसार की एक विकट महासागर से तुलना करते हुये गुरु जी यहाँ कहते हैं कि- दुख भरी मानव देह कच्ची गागर (घड़े) के समान है जो पैदा होती है और संसार में दुख एवं पीड़ा पा कर नाश हो जाती है। इस संसार रूपी सागर में किस प्रकार तैरें, यह हरि और गुरु की सहायता के बिना पार नहीं हो सकता। (१)

हे मेरे प्रिय प्रभु, तेरे बिना (हमारी सहायता के लिये) और कोई नहीं है, । तुम्हीं समस्त रंग और रूप में बसे हो और जिस पर कृपा दृष्टि करते हो वही सब पा लेता है। (१-विराम)

गुरु जी अब मनुष्य आत्मा को एक नवविवाहिता के तुल्य मानते हुये सुंदर उपमा देते हैं - कि सांसारिक मायाजाल एक क्रूर सासु की तरह नवविवाहिता पत्नी रूपी आत्मा को अपने पति रूपी ईश्वर से मिलने नहीं देता। वह उस नवविवाहिता की ओर से कहते हैं- मेरी क्रूर सासु घर (हृदय) में बैठे पति से मिलने नहीं देती. । अतः, मैं विनम्रता के साथ अपने (गुणी) मित्रो और सज्जनों की सेवा करती हूँ (और उनकी सहायता से) मेरे हरि एवं गुरु की मेरे उपर कृपा दृष्टि रही है।(२)

गुरु जी का कथन है कि- अपने विचार और मन को वश करके देखा है कि प्रभु तेरे जैसा मित्र और कोई नहीं है, इस लिये तुम मुझे जैसे भी रखोगे वैसे ही मुझे रहना है, जो दुख सुख तुम देते हो और जो भी करते हो वही होता है।(३)

अपने वर्तमान जीवन पर आधारित गुरु जी यह विचार प्रकट करते हैं कि- आशा एवं इच्छा दोनों ही नाश्वान हैं इसलिये मैंने तीन सांसारिक वृत्तियों - गुण, दोष अनैतिकता तथा सत्ता (जो आशा और इच्छा के कारण पनपते है) से अपने को अलग कर लिया है, (अथवा आशा निराश हो गई है) । तुर्यावस्था गुरु की कृपा से मिलती है इस लिए मैने संतों की सभा में शरण ले ली है। (४)

अंत में गुरु जी कहते हैं - जिसके हृदय में अदृश्य तथा अभेदी ईश्वर बसते हैं, उसने समस्त ज्ञान, ध्यान, तपस्या एवं मोक्ष प्राप्त कर लिये हैं । हे नानक, जिसका हृदय गुरु की मति पर प्रभु नाम में रचा बसा है वही सहज सेवा में रहता है (५-२२)

इस शब्द का संदेश है कि यह संसार जो दुखों और अनैतिक इच्छाओं से परिपूर्ण है उसमें जन्म मरण के कष्टदायक फेरों से मुक्त होने के लिए हमें साधु संतों की सँगति में रहना चाहिए, जिससे कि हम स्वयं को पूर्णतया संयमित रख कर सांसारिक आशायों एवं इच्छाओं से दूर रह सकें । गुरु की कृपा से तब हम तुर्यावस्था को प्राप्त कर ईश्वर में लीन रहते हुए पूर्ण शांति एवं सहजावस्था का आनंद पायेंगे ।

ਪੰਨਾ ੩੫੮

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਆਸਾ ਘਰੁ ੩ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਲਖ ਲਸਕਰ ਲਖ ਵਾਜੇ ਨੇਜੇ ਲਖ ਉਠਿ ਕਰਹਿ ਸਲਾਮੁ ॥
ਲਖਾ ਉਪਰਿ ਫੁਰਮਾਇਸਿ ਤੇਰੀ ਲਖ ਉਠਿ ਰਾਖਹਿ ਮਾਨੁ ॥
ਜਾਂ ਪਤਿ ਲੇਖੈ ਨਾ ਪਵੈ ਤਾਂ ਸਭਿ ਨਿਰਾਫਲ ਕਾਮ ॥੧॥

ਹਰਿ ਕੇ ਨਾਮ ਬਿਨਾ ਜਗੁ ਧੰਧਾ ॥
ਜੇ ਬਹੁਤਾ ਸਮਝਾਈਐ ਭੋਲਾ ਭੀ ਸੋ ਅੰਧੋ ਅੰਧਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਲਖ ਖਟੀਅਹਿ ਲਖ ਸੰਜੀਅਹਿ ਖਾਜਹਿ ਲਖ ਆਵਹਿ ਲਖ ਜਾਹਿ ॥
ਜਾਂ ਪਤਿ ਲੇਖੈ ਨਾ ਪਵੈ ਤਾਂ ਜੀਅ ਕਿਥੈ ਫਿਰਿ ਪਾਹਿ ॥੨॥

ਲਖ ਸਾਸਤ ਸਮਝਾਵਣੀ ਲਖ ਪੰਡਿਤ ਪੜਹਿ ਪੁਰਾਣ ॥
ਜਾਂ ਪਤਿ ਲੇਖੈ ਨਾ ਪਵੈ ਤਾਂ ਸਭੇ ਕੁਪਰਵਾਣ ॥੩॥

ਸਚ ਨਾਮਿ ਪਤਿ ਊਪਜੈ ਕਰਮਿ ਨਾਮੁ ਕਰਤਾਰੁ ॥
ਅਹਿਨਿਸਿ ਹਿਰਦੈ ਜੇ ਵਸੈ ਨਾਨਕ ਨਦਰੀ ਪਾਰੁ ੪॥੧॥੩੧॥

पृ-३५८

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

आसा घरु ३ महला १॥

लख लसकर लख वाजे नेजे लख उठि करहि सलामु ॥
लखा उपरि फुरमाइसि तेरी लख उठि राखहि मानु ॥
जां पति लेखै ना पवै तां सभि निराफल काम ॥१॥

हरि के नाम बिना जगु धँधा ॥
जे बहुता समझाईऐ भोला भी सो अँधो अँधा ॥१॥रहाउ॥

लख खटीअहि लख सँजीअहि खाजहि लख आवहि लख जाहि॥
जां पति लेखै ना पवै तां जीअ किथै फिरि पाहि ॥२॥

लख सासत समझावणी लख पँडित पड़हि पुराण॥
जां पति लेखै ना पवै तां सभे कुपरवाण ॥३॥

सच नामि पति ऊपजै करमि नामु करतारु ॥
अहिनिसि हिरदै जे वसै नानक नदरी पारु ॥४॥१॥३१॥.

आसा घर ३ महला १ ॥

संसार में सभी लोगों को यश एवं सम्मान की तीव्र इच्छा होती है, इसलिये वह अपार धन अर्जित करने का प्रयत्न करते हैं ताकि सारे भौतिक सुख सुविधाएँ, जैसे बड़े घर, बंगले, मोटर गाड़ियाँ और समाज में उँचा स्थान पा लें । कुछ अन्य लोग सामाजिक अथवा राजनैतिक पद और सत्ता पाने का प्रयास करते हैं तथा अन्य कई ऊँचे ओहदे, बड़े कारोबार, उच्च शिक्षा अथवा अनुसंधानों के द्वारा स्वयं को समाज में प्रतिष्ठित स्तर पर देखना चाहते हैं ।परन्तु, इस शब्द में गुरु जी ने यह साफ़ किया है कि इस प्रकार कमाया हुया सारा यश और सम्मान व्यर्थ है यदि वह ईश्वर की अदालत में स्वीकार नहीं होता ।

उनका कथन है कि-तुम्हारे पास लाखों की सेना, शस्त्र और बैंड बाजे हों या लाखों लोग सलाम करते हों, लाखों के ऊपर तुम्हारा दबदबा हो या लाखों लोग उठकर तुम्हारा सम्मान करें, परन्तु ईश्वर को यदि यह सब स्वीकृत नहीं तो यह सारे प्रयत्न बेकार हैं । (१)

मनुष्य की मंद बुद्धि देख गुरु जी कहते हैं - हे मित्र, ईश्वर के नाम के बिना सारे सांसारिक धंधे मानव को उलझा देते हैं, परन्तु उसका भोला मन ऐसा है कि उसे कितना भी समझाओ, वह अंधे का अंधा ही रहता है, अर्थात वह जाल में उलझा ही रहता है । (१- विराम)

अब गुरु जी मानव की धन संजोने की प्रवृत्ति पर टिप्पणी करते हैं कि- हम लाखों कमा लें, लाखों संचित कर लें, लाखों ख़र्च करलें और लाखों का लेन देन करलें, यदि वह सब ईश्वर को स्वीकृत नहीं तो वह मनुष्य (जीव) कहाँ जायें । (क्योंकि उनके लिए स्वर्ग में कोई स्थान नहीं है) (२)

आगे गुरु जी उनको कहते हैं जिन्हें अपने महा ज्ञानी पंडित होने पर गर्व है – कोई लाखों शास्त्रों की व्याख्या कर ले, लाखों वेद पुराण पढ़के पंडित हो जाये, यदि वह ईश्वर के दरबार में सम्मानित नहीं तो समझो कि सब बेकार है । (३)

अंत में गुरु जी ईश्वर के घर से सम्मान पाने का उत्तम ढंग बताते हैं - हे मित्र, सच्चे ईश्वर के नाम ध्यान से ही सम्मान होता है और उसका नाम भी उसी की कृपा से प्राप्त होता है । हे नानक, दिन और रात यदि ईश्वर का नाम ह्रदय में रहे तो उसकी कृपा दृष्टि से भवसागर पार हो जाता है । (४-१-३१)

इस शब्द का संदेश है कि संसार में हम भले ही धन, ज्ञान व सत्ता का झूठा सम्मान प्राप्त करलें उसका कोई लाभ नहीं । ईश्वर के दरबार में सच्चा सम्मान पाने के लिये हमें उसके नाम को ह्रदय में बसाना होगा ।

ਪੰਨਾ ੩੫੯	पृ-३५९
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ॥	**आसा महला १ ॥**
ਗੁਰ ਕਾ ਸਬਦੁ ਮਨੈ ਮਹਿ ਮੁੰਦ੍ਰਾ ਖਿੰਥਾ ਖਿਮਾ ਹਢਾਵਉ ॥ ਜੋ ਕਿਛੁ ਕਰੈ ਭਲਾ ਕਰਿ ਮਾਨਉ ਸਹਜ ਜੋਗ ਨਿਧਿ ਪਾਵਉ॥੧॥	गुर का सबदु मनै महि मुंद्रा खिँथा खिमा हढावउ ॥ जो किछु करै भला करि मानउ सहज जोग निधि पावउ ॥१॥
ਪੰਨਾ ੩੬੦	**पृ-३६०**
ਬਾਬਾ ਜੁਗਤਾ ਜੀਉ ਜੁਗਹ ਜੁਗ ਜੋਗੀ ਪਰਮ ਤੰਤ ਮਹਿ ਜੋਗੰ ॥ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨ ਪਾਇਆ ਗਿਆਨ ਕਾਇਆ ਰਸ ਭੋਗੰ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	बाबा जुगता जीउ जुगह जुग जोगी परम तँत महि जोगँ ॥ अँमृत नाम निरँजन पाइआ गिआन काइआ रस भोगँ ॥१॥रहाउ॥
ਸਿਵ ਨਗਰੀ ਮਹਿ ਆਸਣਿ ਬੈਸਉ ਕਲਪ ਤਿਆਗੀ ਬਾਦੰ ॥ ਸਿੰਙੀ ਸਬਦੁ ਸਦਾ ਧੁਨਿ ਸੋਹੈ ਅਹਿਨਿਸਿ ਪੂਰੈ ਨਾਦੰ ॥੨॥	सिव नगरी महि आसणि बैसउ कलप तियागी बादँ ॥ सिँगी सबदु सदा धुनि सोहै अहिनिसि पूरै नादँ ॥२॥
ਪਤੁ ਵੀਚਾਰੁ ਗਿਆਨ ਮਤਿ ਡੰਡਾ ਵਰਤਮਾਨ ਬਿਭੂਤੰ ॥ ਹਰਿ ਕੀਰਤਿ ਰਹਰਾਸਿ ਹਮਾਰੀ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪੰਥੁ ਅਤੀਤੰ ॥੩॥	पतु वीचारु गिआन मति डँडा वरतमान बिभूतँ ॥ हरि कीरति रहरासि हमारी गुरमखि पँथु अतीतँ ॥३॥
ਸਗਲੀ ਜੋਤਿ ਹਮਾਰੀ ਸੰਮਿਆ ਨਾਨਾ ਵਰਨ ਅਨੇਕੰ ॥ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਸੁਣਿ ਭਰਥਰਿ ਜੋਗੀ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਲਿਵ ਏਕੰ ॥੪॥੩॥੩੭॥	सगली जोति हमारी सँमिआ नाना वरन अनेकँ ॥ कहु नानक सुणि भरथरि जोगी पारबृहम लिव एकँ ॥४॥३॥३७॥

आसा महला -१

गुरु जी का एक विशेष गुण है कि जहाँ भी वह जाते हैं और जिस किसी से बात करते हैं, वहाँ की भाषा में ही करते हैं जिससे कि वह व्यक्ति उन की बात ठीक प्रकार से समझ सके । इस शब्द में उनका वार्तालाप एक ऐसे योगी के साथ हो रहा है जिसका यह विश्वास है कि पहाड़ों जंगलों में रहने तथा श्वास क्रियायों को वश में करने से ईश्वर प्राप्ति में सहायता होती है । यौगिक रीतियों के अनुसार योगी लोग कान में मुंदरा, मोटा चोला, शरीर पर विभूति का लेप, एक छोटा सींग, एक डंडा तथा एक सम्मी (एक छोटी, एक तरफ़ से दोमुंही लकड़ी जिस पर बाँह को आराम के लिये टिकाते है) का प्रयोग करते हैं । गुरु जी भरथरी नामक योगी को बताते हैं कि वह किस प्रकार की भावना एवं साधनों के द्वारा प्रभु के साथ एकरूप होने का प्रयास करते हैं ।

गुरु जी कहते हैं - हे योगी, मेरे विचार से गुरु के शब्द मेरी मुंदरा (कुंडल) हैं और मै क्षमाभाव का चोला पहनता हूँ ।जो भी ईश्वर करते हैं मेरे विचार से वह भला करते हैं और इस प्रकार मैं सहज में ही (ईश्वर के साथ) योग रूपी निधि प्राप्त कर लेता हूँ ।(१)

अपने अनुभव के आधार पर वह संक्षेप में योग (ईश्वर मिलन) के विषय में कहते हैं - हे मेरे माननीय बाबा जी, जो भी सदा ईश्वर भक्ति में लीन है वही सच्चा योगी है । मैंने शुद्ध (निरंजन) ईश्वर के अँमृत रुपी नाम को पा लिया है और मैं इस दैवी ज्ञान के रस का आनन्द भोग रहा हूँ। (१-रहाउ)

योगाभ्यास के विभिन्न आसन तथा प्रकियायों की तुलना स्वयं के विश्वास एवं आचरण से करते हुये वह कहते हैं कि- हे योगी, मैंने सांसारिक लोभ, विवाद के विचार सब त्याग दिये हैं और मैं ईश्वर के ध्यान में बैठता हूँ । मेरे अंदर दिन और रात गुरु का शब्द बज रहा है जो कि सिंगी की मीठी धुन के जैसा है ।(२)

अब गुरु जी अपनी आत्मिक अवस्था की तुलना योग की वाह्य रुप रेखा से करते हुये कहते हैं कि -ईश्वर के गुणों का विचार मेरा भिक्षा पात्र है, मेरी आत्मिक शुद्धि मेरा डंडा है और ईश्वर को सर्वव्यापी मानना मेरी विभूति है हरि का गुणगान मेरी दिनचर्या है ।गुरु के आदेशानुसार चलना मेरी योगसाधना है । (३)

अपने आत्मिक योग के आचरण पर अंत में गुरु जी भरथरी योगी से बात करते हुये कहते हैं कि- समस्त जीवों में ईश्वर का फैला अद्भुत प्रकाश देखना मेरी छोटी लकड़ी सम्मी (बाँह को सहारा देने के लिये) है । हे भरथरी योगी सुनो , नानक कहते हैं कि पारब्रहम ईश्वर में लीन रहना ही मेरा एक मात्र अनुराग है । (४-३-३७)

इस शब्द का संदेश है कि सबसे उत्तम मार्ग प्रभु पर ध्यान लगाने तथा उसमें लीन होने का यही है कि सदा उसके साथ प्रेम से जुड़े रहें और समस्त जीवों में उसकी ज्योति देखें ।

ਪੰਨਾ ੩੬੧

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਮੇਰਾ ਪ੍ਰਭੁ ਸਾਚਾ ਗਹਿਰ ਗੰਭੀਰ ॥
ਸੇਵਤ ਹੀ ਸੁਖੁ ਸਾਂਤਿ ਸਰੀਰ ॥
ਸਬਦਿ ਤਰੇ ਜਨ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਇ ॥
ਤਿਨ ਕੈਹਮ ਸਦ ਲਾਗਹ ਪਾਇ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੩੬੨

ਜੋ ਮਨਿ ਰਾਤੇ ਹਰਿ ਰੰਗੁ ਲਾਇ ॥
ਤਿਨ ਕਾ ਜਨਮ ਮਰਣ ਦੁਖੁ ਲਾਥਾ ਤੇ ਹਰਿ ਦਰਗਹ ਮਿਲੇ ਸੁਭਾਇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਬਦੁ ਚਾਖੈ ਸਾਚਾ ਸਾਦੁ ਪਾਏ ॥
ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਏ ॥
ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਸਦਾ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰਿ ॥
ਆਪੇ ਨੇੜੈ ਆਪੇ ਦੂਰਿ ॥੨॥

ਆਖਣਿ ਆਖੈ ਬਕੈ ਸਭੁ ਕੋਇ ॥
ਆਪੇ ਬਖਸਿ ਮਿਲਾਏ ਸੋਇ ॥
ਕਹਣੈ ਕਥਨਿ ਨ ਪਾਇਆ ਜਾਇ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦਿ ਵਸੈ ਮਨਿ ਆਇ ॥੩॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਵਾਇ ॥
ਹਰਿ ਰੰਗਿ ਰਾਤੇ ਮੋਹੁ ਚੁਕਾਇ ॥
ਅਤਿ ਨਿਰਮਲੁ ਗੁਰ ਸਬਦ ਵੀਚਾਰ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਸਵਾਰਣਹਾਰ ॥੪॥੪॥੪੩॥

पृ-३६१

आसा महला ३॥

मेरा प्रभु साचा गहिर गँभीर ॥
सेवत ही सुखु सांति सरीर ॥
सबदि तरे जन सहजि सुभाइ ॥
तिन कैहम सद लागह पाइ ॥१॥

पृ-३६२

जो मनि राते हरि रँगु लाइ ॥
तिन का जनम मरण दुखु लाथा ते हरि दरगह मिले सुभाइ ॥१॥रहाउ॥

सबदु चाखै साचा सादु पाइ ॥
हरि का नामु मंनि वसाइ ॥
हरि प्रभु सदा रहिआ भरपूरि ॥
आपे नेड़ै आपे दूरि ॥२॥

आखणि आखै बकै सभु कोइ ॥
आपे बखसि मिलाए सोइ ॥
कहणै कथनि न पाइआ जाइ ॥
गुर परसादि वसै मनि आइ ॥ ३॥

गुरमुखि विचहु आपु गवाइ॥
हरि रंगि राते मोहु चुकाइ॥
अति निरमलु गुर सबद वीचार ॥
नानक नामि सवारणहार ॥४॥४॥४३॥

आसा महला ३ ॥

एक साधारण समझ बूझ वाले मनुष्य की पहुँच से ईश्वर दूर है, इस लिये इस शब्द के द्वारा गुरु जी हमें कह रहे हैं कि ईश्वर की सेवा साधना से क्या लाभ हैं और किस प्रकार हम उससे जुड़ सकते हैं । पहले वह प्रभु के अनोखे गुणों और उसे स्मरण करने से प्राप्त होने वाले आशीर्वादों का वर्णन करते हुये कहते हैं – (हे मित्र) मेरा प्रभु अमर, विशाल और विराट ह्रदय वाला है, उसकी सेवा करने से शरीर को सुख शान्ति मिलती है । गुरु के शबद (गुरबाणी) द्वारा उसका स्मरण तथा भजन करने से भक्त जन सरलता से भवसागर पार हो जाते हैं और मैं सदा ही ऐसे महापुरुषों के चरण स्पर्श करता हूँ । (१)

ईश्वर प्रेम में लीन भक्त जनों के गुणों का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं कि जिनका मन हरि नाम में रमा है और प्रभु के रंग में रंगे हैं, उनके जन्म मरण के दुख उतर गये हैं और वह सहज में ही ईश्वर की दरगाह में स्थान पा गये हैं ।(१-विराम)

गुरु जी इसी भावना के साथ फिर कहते हैं कि -(हे मेरे मित्रो), जो गुरु की वाणी को चख (आत्मसात कर) लेता है वह उसके सच्चे स्वाद (आशीर्वाद) का आनन्द पाता है ।वह सदा ह्रदय में ईश्वर को बसाये रहता है और समझ जाता है कि प्रभु सदैव हैं और सर्वव्यापी हैं । वह स्वयं (हम जीवों के) निकट हैं और स्वयं दूर भी हैं । (२)

ईश्वर के विषय पर बोलने वालों के लिये गुरु जी का कथन है कि- प्रभु पर कई जन बहुत बढ़ चढ़ कर कहते हैं, परन्तु प्रभु स्वयं क्षमाभाव से ही किसी को अपना साथ देते हैं । केवल कहने या बोलने से ही प्रभु नहीं पाये जा सकते । गुरु की कृपा से ही ईश्वर का वास मन में हो पाता है । (३)

शब्द के अंत में गुरु जी कहते हैं कि- गुरु का अनुयायी अपना अहम अपने अंदर से गँवा देता है और हरि के रंग में रमे रहने के कारण उसका सांसारिक माया से मोह चुक जाता है । गुरु के शब्दों का अनुसरण करते हुये वह पवित्र (निर्मल) हो जाता है ।नानक कहते हैं कि ईश्वर नाम

न केवल उसे ही सँवारता है, अपितु वह और सभी के लिये भी (आत्मिक रूप से) कल्याणकारी सिद्ध होता है ।(४-४-४३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सदैवी सुख शांति का आनन्द लेना चाहते हैं तो हमें गुरु की वाणी का अनुसरण करते हुए प्रभु नाम में श्रद्धा के साथ रमे रहना चाहिये, ऐसा करने से ईश्वर की उपस्थित का अनुभव आंतरिक तथा वाह्य दोनों रूप में होगा और तब केवल हम ही निर्मल अथवा पवित्र नहीं बनेंगे अपितु, अन्य सभी के आत्मिक कल्याण में भी सहायक हो सकेंगे ।

ਪੰਨਾ ੩੬੩

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਗੁਰੁ ਸਾਇਰੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਸਚੁ ਸੋਇ ॥
ਪੂਰੈ ਭਾਗਿ ਗੁਰਸੇਵਾ ਹੋਇ ॥

ਪੰਨਾ ੩੬੪

ਸੋ ਬੂਝੈ ਜਿਸੁ ਆਪਿ ਬੁਝਾਏ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਸੇਵ ਕਰਾਏ ॥੧॥

ਗਿਆਨ ਰਤਨਿ ਸਭ ਸੋਝੀ ਹੋਇ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦਿ ਅਗਿਆਨੁ ਬਿਨਾਸੈ ਅਨਦਿਨੁ ਜਾਗੈ ਵੇਖੈ ਸਚੁ ਸੋਇ ॥੧॥
ਰਹਾਉ ॥

ਮੋਹੁ ਗੁਮਾਨੁ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਜਲਾਏ ॥
ਪੂਰੇ ਗੁਰ ਤੇ ਸੋਝੀ ਪਾਏ ॥
ਅੰਤਰਿ ਮਹਲੁ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਪਛਾਣੈ ॥
ਆਵਣ ਜਾਣੁ ਰਹੈ ਥਿਰੁ ਨਾਮਿ ਸਮਾਣੇ ॥੨॥

ਜੰਮਣੁ ਮਰਣਾ ਹੈ ਸੰਸਾਰੁ ॥
ਮਨਮੁਖੁ ਅਚੇਤੁ ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਗੁਬਾਰੁ ॥
ਪਰ ਨਿੰਦਾ ਬਹੁ ਕੂੜੁ ਕਮਾਵੈ ॥
ਵਿਸਟਾ ਕਾ ਕੀੜਾ ਵਿਸਟਾ ਮਾਹਿ ਸਮਾਵੈ ॥੩॥

ਸਤਸੰਗਤਿ ਮਿਲਿ ਸਭ ਸੋਝੀ ਪਾਏ ॥
ਗੁਰ ਕਾ ਸਬਦੁ ਹਰਿ ਭਗਤਿ ਦ੍ਰਿੜਾਏ ॥
ਭਾਣਾ ਮੰਨੇ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਹੋਇ ॥
ਨਾਨਕ ਸਚਿ ਸਮਾਵੈ ਸੋਇ ॥੪॥੧੦॥੪੯॥

पृ-३६३

आसा महला ३॥

गुरु साइरु सतिगुरु सचु सोइ ॥
पूरै भागि गुरसेवा होइ ॥

पृ-३६४

सो बूझै जिसु आपि बुझाए ॥
गुर परसादी सेव कराए॥१॥

गिआन रतनि सभ सोझी होए ॥
गुर परसादि अगिआनु बिनासै अनदिनु जागै वेखै सचु सोइ
॥१॥रहाउ॥

मोहु गुमानु गुर सबदि जलाए ॥
पूरे गुर ते सोझी पाए ॥
अँतरि महलु गुर सबदि पछाणै ॥
आवण जाणु रहै थिरु नामि समाणे ॥२॥

जँमणु मरणा है सँसारु ॥
मनमुखु अचेतु माइआ मोहु गुबारु ॥
पर निंदा बहु कूड़ु कमावै ॥
विसटा का कीड़ा विसटा माहि समावै ॥३॥

सतसँगति मिलि सभ सोझी पाए ॥
गुर का सबदु हरि भगति दृड़ाऐ ॥
भाणा मँने सदा सुखु होइ ॥
नानक सचि समावै सोइ ॥४॥१०॥४९॥

आसा महला -३

इस शब्द में गुरु जी एक गुरु के उत्कृष्ट गुणों की चर्चा करते हुये कहते हैं कि -, हे मेरे मित्रो, गुरु गुणों के सागर हैं, सच्चा गुरु अमर ईश्वर का रूप है । परन्तु पूर्ण रूप से कोई भाग्यशाली ही गुरु की सेवा कर पाता है (गुरु के आदेश पर चल कर)। केवल वही मनुष्य इस भेद को समझ सकता है जिसको ईश्वर स्वयं समझायें । तब गुरु की कृपा द्वारा वही (ईश्वर) मनुष्य से अपनी भक्ति सेवा करवाता है । (१)

गुरु द्वारा प्राप्त आशीर्वादों के तथ्य पर गुरु जी कहते हैं कि- दैवी ज्ञान रूपी रत्न (गुरु के द्वारा) पा कर (संपूर्ण सुखी जीवन के लिये) सब कुछ समझ में आ जाता है । गुरु की कृपा से अज्ञान का विनाश होता है और दिन रात सतर्कता से (संसार के झूठे प्रलोभनों से बच कर) मनुष्य सच (सर्वव्यापी ईश्वर) को देखता है । (१-विराम)

गुरु की शिक्षा के अनुसार चलने पर जो आशीर्वाद तथा गुण प्राप्त होते हैं उनके विषय में गुरु जी कहते हैं कि- गुरु का अनुयायी सांसारिक मोह माया तथा अहम भावना से दूर रहता है और सही जीवन की सच्ची सूझ पाता है । गुरु की वाणी की सहायता से अपने अंतर में छिपा ईश्वरीय महल वह पहचान लेता है और तब उसका जन्म मरण (संसार में आना जाना) समाप्त हो जाता है, क्योंकि वह ईश्वर नाम में समा जाता है ।(२)

स्वार्थी और घमंडी लोगों के विषय में गुरु जी कहते हैं कि- संसार उनके लिये जन्म मरण का स्थान है, सांसारिक मायाजाल रूपी अंधेरे गुबार में घिरे हुए वह अचेत रहते हैं (अर्थात ईश्वर को नहीं जानते)। पराई निंदा और अत्यंत झूठ के सहारे पर जीवन जीते हैं जैसे कि एक गंद में रहने वाला कीड़ा गंद में ही समाया रहता है । (३)

उपरोक्त दशा के विपरीत एक गुरु के अनुयायी के विषय में गुरु जी कहते हैं कि- सच्चे गुरु जनों की संगति पाने पर एक भक्त को जीवन

की सही सूझ बूझ हो जाती है। गुरु की शिक्षा से उसका विश्वास और प्रेम (ईश्वर के प्रति) और अधिक दृढ़ हो जाता है। प्रभु की इच्छा को स्वीकार करने से वह सदा सुख में रहता है, नानक कहते हैं कि वह सच्चे ईश्वर में समा जाता है। (४-१०-४९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें यह आभास होना चाहिये कि गुरु (ग्रन्थ साहिब) एक अथाह दैवी ज्ञान रूपी रत्नों का सागर है। इस लिये हमें अपना घमंड और भटकती बुद्धि का त्याग कर श्रद्धा से इसका अनुसरण करना चाहिये। ईश्वर की इच्छा को स्वीकार करके उसके नाम में रमें रहना चाहिये। तब हम अपने जीवन को सही रूप से सदाचारी बनाने की सूझ बूझ पायेंगे और लोक तथा परलोक में सुख शांति का आनंद लेंगे।

ਪੰਨਾ ੩੬੬

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਰਾਗੁ ਆਸਾ ਘਰੁ ੨ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਕਿਸ ਹੀ ਧੜਾ ਕੀਆ ਮਿਤ੍ਰ ਸੁਤ ਨਾਲਿ ਭਾਈ ॥
ਕਿਸ ਹੀ ਧੜਾ ਕੀਆ ਕੁੜਮ ਸਕੇ ਨਾਲਿ ਜਵਾਈ ॥
ਕਿਸ ਹੀ ਧੜਾ ਕੀਆ ਸਿਕਦਾਰ ਚਉਧਰੀ ਨਾਲਿ ਆਪਣੈ ਸੁਆਈ ॥
ਹਮਾਰਾ ਧੜਾ ਹਰਿ ਰਹਿਆ ਸਮਾਈ ॥੧॥

ਹਮ ਹਰਿ ਸਿਉ ਧੜਾ ਕੀਆ ਮੇਰੀ ਹਰਿ ਟੇਕ ॥
ਮੈ ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਪਖੁ ਧੜਾ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ਹਉ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵਾ ਅਸੰਖ ਅਨੇਕ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਿਨ੍ ਸਿਉ ਧੜੇ ਕਰਹਿ ਸੇ ਜਾਹਿ ॥ ਝੂਠੁ ਧੜੇ ਕਰਿ ਪਛੋਤਾਹਿ ॥

ਥਿਰੁ ਨ ਰਹਹਿ ਮਨਿ ਖੋਟੁ ਕਮਾਹਿ ॥

ਹਮ ਹਰਿ ਸਿਉ ਧੜਾ ਕੀਆ ਜਿਸ ਕਾ ਕੋਈ ਸਮਰਥੁ ਨਾਹਿ ॥੨॥

ਏਹ ਸਭਿ ਧੜੇ ਮਾਇਆ ਮੋਹ ਪਸਾਰੀ ॥

ਮਾਇਆ ਕਉ ਲੂਝਹਿ ਗਾਵਾਰੀ ॥

ਜਨਮਿ ਮਰਹਿ ਜੂਐ ਬਾਜੀ ਹਾਰੀ ॥

ਹਮਰੈ ਹਰਿ ਧੜਾ ਜਿ ਹਲਤੁ ਪਲਤੁ ਸਭੁ ਸਵਾਰੀ ॥੩॥
ਕਲਿਜੁਗ ਮਹਿ ਧੜੇ ਪੰਚ ਚੋਰ ਝਗੜਾਏ ॥

ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਲੋਭੁ ਮੋਹੁ ਅਭਿਮਾਨੁ ਵਧਾਏ ॥

ਜਿਸ ਨੋ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇ ਤਿਸੁ ਸਤਸੰਗਿ ਮਿਲਾਏ ॥

ਹਮਰਾ ਹਰਿ ਧੜਾ ਜਿਨਿ ਏਹ ਧੜੇ ਸਭਿ ਗਵਾਏ॥੪॥

ਮਿਥਿਆ ਦੂਜਾ ਭਾਉ ਧੜੇ ਬਹਿ ਪਾਵੈ ॥

ਪਰਾਇਆ ਛਿਦ੍ਰੁ ਅਟਕਲੈ ਆਪਣਾ ਅਹੰਕਾਰੁ ਵਧਾਵੈ ॥

ਜੈਸਾ ਬੀਜੈ ਤੈਸਾ ਖਾਵੈ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕਾ ਹਰਿ ਧੜਾ ਧਰਮੁ ਸਭ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਜਿਣਿ ਆਵੈ ॥੫॥੨॥੫੪॥

पृ-३६६

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

रागु आसा घर २ महला ४ ॥

किस ही धड़ा कीआ मित्र सुत नालि भाई ॥
किस ही धड़ा कीआ कुड़म सके नालि जवाई ॥
किस ही धड़ा कीआ सिकदार चउधरी नालि आपणै सुआई ॥
हमारा धड़ा हरि रहिआ समाई ॥१॥

हम हरि सिउ धड़ा कीआ मेरी हरि टेक ॥
मैं हरि बिनु पखु धड़ा अवरु न कोई हउ हरि गुण गावा असँख अनेक ॥१॥रहाउ॥

जिन् सिउ धड़े करहि से जाहि ॥ झूठु धड़े करि पछोताहि ॥

थिरु न रहहि मनि खोटु कमाहि ॥

हम हरि सिउ धड़ा कीआ जिस का कोई समरथु नाहि ॥२॥

एह सभि धड़े माइआ मोह पसारी ॥

माइआ कउ लूझहि गावारी ॥

जनमि मरहि जूऐ बाजी हारी ॥

हमरै हरि धड़ा जि हलतु पलतु सभु सवारी ॥३॥
कलिजुग महि धड़े पँच चोर झगड़ाए ॥

कामु क्रोधु लोभु मोहु अभिमानु वधाए ॥

जिस नो कृपा करे तिसु सतसँगि मिलाए ॥

हमरा हरि धड़ा जिनि एह धड़े सभि गवाए ॥४॥

मिथिआ दूजा भाउ धड़े बहि पावै ॥

पराइआ छिद्रु अटकलै आपणा अहँकारु वधावै ॥

जैसा बीजै तैसा खावै ॥
जन नानक का हरि धड़ा धरमु सभ सिृसटि जिणि आवै ॥५॥२॥५४॥

रागु आसा घर २ महला ४ ॥

इस शब्द में गुरु जी उन लोगों के विषय में बता रहे हैं जो धनी अथवा राजनैतिक रूप से शक्तिवान मित्रों या सम्बन्धियों के साथ मिल कर धड़े या गुट बना लेते हैं। साथ ही यह भी बताते हैं कि उनका तालमेल किसके साथ है और वह किसके सहारे पर निर्भर हैं।

वह कहते हैं " कुछ लोगों ने अपने मित्रो,पुत्रों या भाई तथा समधी या दामाद के साथ धड़ेबाजी की है। कुछ औरों ने गाँव के मुखिया या चौधरी के साथ अपने स्वार्थ सिद्धि के लिये गुट बनाया है।परन्तु मेरी धड़ेबाजी सर्वव्यापी ईश्वर के साथ है।" (१)

एक बार फिर से गुरु जी दोहराते हैं कि ईश्वर के अतिरिक्त वह किसी और व्यक्ति या धड़े की सहायता पर निर्भर नहीं करते और कहते हैं "हे मेरे मित्रो, मैनें ईश्वर के साथ अपना गुट बनाया है और वही मेरा सहारा है । हरि के बिना मेरा और कोई धड़ा नहीं है और मै उस हरि के असंख्य गुण बार बार गाता हूँ "। (१-विराम)

सांसारिक लोगों की धड़े बाज़ी का क्या निष्कर्ष होता है उस पर गुरु जी चेतावनी देते हैं -"जिन के साथ धड़े बनाये जाते हैं वह अंत में संसार से विदा हो जाते हैं । इस लिये ऐसे अस्थायी अथवा झूठे गुट बना कर वह अंत में पछताते हैं । ऐसे लोग, जो मन में झूठ कमाते हैं, दुनिया में हमेशा के लिए नहीं रहते। इस लिए हमने हरि के साथ धड़ा बनाया जिसकी शक्ति और सामर्थ्य की तुलना किसी और से नहीं हो सकती "।(२)

किस प्रकार से ऐसी धड़ेबाजियां बुराइयों का स्त्रोत बन जाती हैं इस पर गुरु जी कहते हैं " यह सब धड़े सांसारिक धन एवं शक्ति का पसारा है और इसी कारण गवाँर नासमझ लोग आपस में लड़ते भिड़ते हैं । इस लिये वह जनम मरण के फेर में जीवन के जूऐ की बाजी हार जाते हैं। पर मेरा धड़ा ईश्वर के साथ है जिसने मेरा लोक और परलोक सँवार दिया है " । (३)

धड़ों के आपसी झगड़े क्यों होते है इसके कारण गुरु जी आगे बता रहे हैं - " हे मेरे मित्रो, इस कलयुग में मनुष्य के अंतर मन में बैठे पाँच चोर झगड़े तथा गुटबाज़ी के स्त्रोत हैं ।(मनुष्य के मन में यह पाँच चोरों) काम, क्रोध, लोभ, मोह व अभिमान का बहुत बढ़ावा होता है । किन्तु, जिस पर प्रभु कृपा करते हैं उसे सच्ची सँगति से जोड़ देते हैं (उसे ऐसे धड़ों से दूर रखते हैं) इस लिये मेरा गुट केवल ईश्वर के साथ है जिसने मुझे सांसारिक गुटों से छुड़वा दिया है "। (४)

अंत में गुरु जी हमें सलाह देते हैं - "(हे मेरे मित्रो) मिथ्या सांसारिक धन एवं सत्ता के साथ प्रेम होने के कारण लोग इक्कठे होकर धड़े बनाते हैं और फिर दूसरे धड़ों के विषय में ग़लत भावनायें बनाते हुये (और अपने को अधिक श्रेष्ठ समझते हुये) अपने अहम तथा अहंकार को बढ़ाते हैं । (अंत में) वह जैसा बीजते हैं, वैसा काटते हैं ।(चूँकि विपक्षी धड़ा भी वैसे ही अहंकारी प्रवृत्ति का होता है सो वह आपस में लड़ते है और कई बार मर भी जाते हैं, जिससे दोनों तरफ़ विनाश होता है) । जन नानक के धड़े में हरि का साथ है और धर्म (जिसकी शक्ति) के द्वारा वह सारी सृष्टि पर विजयी होकर घर आता है " ।(५-२-५४)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें किसी भी गुट या धड़े से दूर रहना चाहिये और अपने को ईश्वर के गुट में सही धार्मिक भाव से रखना चाहिये । हमें केवल उसी विचार धारा का साथ देना चाहिये जो सत्य, न्याय और हमारे गुरुओं की शिक्षा पर आधारित हो ।

एक व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर लेखक का मानना है कि समस्त धार्मिक स्थानों , विशेषत: गुरुद्वारों में इस प्रकार की गुटबाज़ियाँ समाप्त हो जानी चाहिये क्योंकि वहाँ पर ऐसे गुटों के बहुत झगड़े होते हैं । एक गुरुद्वारे में जिस दिन हुक्मनामे में उपरोक्त शब्द पढ़ा गया उस संक्रान्ति के कीर्तन के समय दो गुटों की भीषण लड़ाई हुई, भद्दी भाषा, मुक्केबाज़ी का प्रयोग किया गया । स्थिति की विडंबना यह थी कि लड़ाई का मुख्य कारण था कि हमें अपना एक गुरुद्वारा बनाना चाहिये कि नहीं, गुरुद्वारा बन जाने के बाद भी और कई बार भयानक ढंग से झगड़े हुये, मार पिटाई हुयी, बाल नोचे गये, गोली चली, पुलिस बुलायी गयी और मुक़दमेबाजी में ढेरों पैसा बरबाद हुया।

ਪੰਨਾ ੩੬੮

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਮਹਲਾ ੪ ਰਾਗੁ ਆਸਾ ਘਰੁ ੬ ਕੇ ੩ ॥

ਹਥਿ ਕਰਿ ਤੰਤੁ ਵਜਾਵੈ ਜੋਗੀ ਥੋਥਰ ਵਾਜੈ ਬੇਨ ॥
ਗੁਰਮਤਿ ਹਰਿ ਗੁਣ ਬੋਲਹੁ ਜੋਗੀ ਇਹੁ ਮਨੂਆ ਹਰਿ ਰੰਗਿ ਭੇਨ ॥੧॥

ਜੋਗੀ ਹਰਿ ਦੇਹੁ ਮਤੀ ਉਪਦੇਸੁ ॥
ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਹਰਿ ਹਰਿ ਏਕੋ ਵਰਤੈ ਤਿਸੁ ਆਗੈ ਹਮ ਆਦੇਸੁ ॥੧॥
ਰਹਾਉ ॥

ਗਾਵਹਿ ਰਾਗ ਭਾਤਿ ਬਹੁ ਬੋਲਹਿ ਇਹੁ ਮਨੂਆ ਖੇਲੈ ਖੇਲ ॥
ਜੋਵਹਿ ਕੂਪ ਸਿੰਚਨ ਕਉ ਬਸੁਧਾ ਉਠਿ ਬੈਲ ਗਏ ਚਰਿ ਬੇਲ ॥੨॥

ਕਾਇਆ ਨਗਰ ਮਹਿ ਕਰਮ ਹਰਿ ਬੋਵਹੁ ਹਰਿ ਜਾਮੈ ਹਰਿਆ ਖੇਤੁ ॥
ਮਨੂਆ ਅਸਥਿਰੁ ਬੈਲੁ ਮਨੁ ਜੋਵਹੁ ਹਰਿ ਸਿੰਚਹੁ ਗੁਰਮਤਿ ਜੇਤੁ ॥੩॥

ਜੋਗੀ ਜੰਗਮ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਸਭ ਤੁਮਰੀ ਜੋ ਦੇਹੁ ਮਤੀ ਤਿਤੁ ਚੇਲ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕੇ ਪ੍ਰਭ ਅੰਤਰਜਾਮੀ ਹਰਿ ਲਾਵਹੁ ਮਨੂਆ ਪੇਲ
॥੪॥੯॥੬੧॥

पृ-३६८

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

महला ४ राग आसा घर ६ के ३

हथि करि तँतु वजावै जोगी थोथर वाजै बेन ॥
गुरमति हरि गुण बोलहु जोगी इहु मनूआ हरि रँगि भेन ॥१॥

जोगी हरि देहु मती उपदेसु ॥
जुगु जुगु हरि हरि एको वरतै तिसु आगै हम आदेसु ॥१॥रहाउ॥

गावहि राग भाति बहु बोलहि इहु मनूआ खेलै खेल ॥
जोवहि कूप सिँचन कउ बसुधा उठि बैल गए चरि बेल ॥२॥

काइआ नगर महि करम हरि बोवहु हरि जामै हरिआ खेतु ॥
मनूआ असथिरु बैलु मनु जोवहु हरि सिँचहु गुरमति जेतु ॥३॥

जोगी जँगम सिृसटि सभ तुमरी जो देहु मती तितु चेल ॥
जन नानक के प्रभ अँतरजामी हरि लावहु मनूआ पेल ॥४॥९॥६१॥

महला -४ राग आसा घर-६ के -३

भाई हरबंस सिंह जी के अनुसार इस शब्द का सिख ऐतिहासिक संदर्भ यह है कि कुछ कान फटे योगी एक दिन गुरु जी से मिलने आये और कहने लगे कि यदि वह उनके मठ में आ जायें तो मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं । इस पर गुरु जी ने उपरोक्त शब्द का उच्चारण किया । इस शब्द का संदेश बहुत सारे साधारण लोगों तथा जीविका उपार्जन करने हेतु कीर्तन करने वाले रागी जनों पर भी ठीक उतरता है, जो नित्य ही मुख से शब्दों का गायन करते हैं (और कीर्तन करते समय तबले और हारमोनियम का प्रयोग भी करते हैं), परन्तु, उनका मन अंदर से सांसारिक धंधों में उलझा रहता है ।

आगे गुरु जी योगियों से कहते हैं " हाथ में एकतारा लेकर योगी इसे बजाता है परन्तु इससे आने वाली ध्वनि खोखली है (क्योंकि उसका मन ईश्वर प्रेम की लय में नहीं है) । हे योगी, गुरु से सुमति पाकर पहले तुम हरि के गुण गान करना सीखो फिर तुम्हारा मन ईश्वर प्रेम में मगन हो पायेगा "। (१)

गुरु जी योगी से आगे कहते हैं "(हे योगी) अपने मन को उस ईश्वर पर ध्यान देने का आदेश दो जो युगों युगों से सर्वव्यापी है, उसके आगे श्रद्धा से मैं अपना शीश झुकाता हूँ "।(१-विराम)

किस प्रकार से योगी एवं अन्य संगीतज्ञों के द्वारा गाये भजन व्यर्थ हैं, इसका एक सुंदर उदाहरण देते हुये गुरु जी कहते हैं "भले ही योगी विभिन्न वाद्यों तथा रागों द्वारा भजन गान करें परन्तु उनके मन के अंदर चतुर भाव खेल रहे हैं (या उनका ध्यान अन्य सांसारिक विचारों में उलझा हुआ है) । उनकी दशा उस किसान जैसी है जो खेत की धरती सींचने के लिये (कूँऐ से पानी लेने के लिये) बैल को जोतता है, पर वही बैल खेत को जाकर चर लेते हैं"।(२)

उपरोक्त उपमा के साथ गुरू जी आगे कहते हैं " (हे योगी) अपनी काया (मन एवं शरीर) नगरी में हरि ध्यान का बीज डालो, ताकि प्रभु नाम की हरी भरी फ़सल उग जाये ।अपने बैल रूपी मन को स्थिर करके इसे ईश्वर ध्यान तथा भक्ति में जोत दे और तब गुरु के आदेशानुसार हरि नाम के पानी से काया रूपी खेत को सींच "। (३)

गुरु जी के मन में अब एक प्रकार से योगियों तथा अन्य ऐसे लोगों के प्रति दया भाव उपजता है जो ईश्वर द्वारा दी गई बुद्धि अनुसार सही या ग़लत काम करते रहते हैं, ऐसे प्राणियों के लिये गुरु जी प्रार्थना करते हुये कहते हैं " हे प्रभु यह सभी योगी और साधु तेरी ही सृजना है, इनको जो भी मति अथवा बुद्धि तुमने दी है वह वैसे ही चल रहे हैं । हे भक्त नानक के प्रभु, अंतरयामी तुम स्वयं ही हमें सही आदेश दो और हमारे मन को अपनी प्रेम भक्ति में जोत दो "। (४-९-६१)

इस शब्द का संदेश यह है कि भजन गाने एवं वाद्यों के बजाने तथा दूसरों को सुनाने और धन कमाने की अपेक्षा हम ईश्वर से प्रार्थना करें कि वह हमारे मन में अपने प्रति श्रद्धा एवं प्रेम का संचार करे । इस प्रकार हम एकाग्र मन से ईश्वर के संदर्भ में वास्तविकता के साथ लिखने बोलने और गायन करने योग्य हो सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੩੬੯

ਆਸਾਵਰੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਮਾਈ ਮੋਰੋ ਪ੍ਰੀਤਮੁ ਰਾਮੁ ਬਤਾਵਹੁ ਰੀ ਮਾਈ ॥
ਹਉ ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਖਿਨੁ ਪਲੁ ਰਹਿ ਨ ਸਕਉ ਜੈਸੇ ਕਰਹਲੁ ਬੇਲਿ ਰੀਝਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਮਰਾ ਮਨੁ ਬੈਰਾਗ ਬਿਰਕਤੁ ਭਇਓ ਹਰਿ ਦਰਸਨ ਮੀਤ ਕੈ ਤਾਈ ॥
ਜੈਸੇ ਅਲਿ ਕਮਲਾ ਬਿਨੁ ਰਹਿ ਨ ਸਕੈ ਤੈਸੇ ਮੋਹਿ ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਰਹਨੁ ਨ ਜਾਈ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੩੭੦

ਰਾਖੁ ਸਰਣਿ ਜਗਦੀਸੁਰ ਪਿਆਰੇ ਮੋਹਿ ਸਰਧਾ ਪੂਰਿ ਹਰਿ ਗੁਸਾਈ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕੈ ਮਨਿ ਅਨਦੁ ਹੋਤ ਹੈ ਹਰਿ ਦਰਸਨੁ ਨਿਮਖ ਦਿਖਾਈ ॥੨॥੩੯॥੧੩॥੧੫॥੬੭॥

पृ-३६९

आसावरी महला ४॥

माई मोरो प्रीतमु रामु बतावहु री माई ॥
हउ हरि बिनु खिनु पलु रहि न सकउ जैसे करहलु बेलि रीझाई ॥१॥रहाउ ॥

हमरा मनु बैराग बिरकतु भइओ हरि दरसन मीत कै ताई ॥
जैसे अलि कमला बिनु रहि न सकै तैसे मोहि हरि बिनु रहनु न जाई ॥१॥

पृ-३७०

राखु सरणि जगदीसुर पिआरे मोहि सरधा पूरि हरि गुसाई ॥
जन नानक कै मनि अनदु होत है हरि दरसनु निमख दिखाई ॥२॥३९॥१३॥१५॥६७॥

आसावरी महला -४

इस शब्द में गुरु जी ईश्वर के प्रति अपना गहन प्रेम तथा श्रद्धा प्रकट करते हैं और दर्शाते हैं कि कितनी तीव्रता से वह अपने परम प्रिय ईश्वर से मिलना चाहते हैं ।

वह कहते हैं " हे मेरी माता, मुझे बताओ कि मेरा प्रिय राम कहाँ है, जैसे एक ऊँट का बच्चा हरी बेल पर रीझ जाता है (वैसे ही मैं प्रभु को देख कर प्रसन्न होता हूँ) ।

मैं हरि को देखे बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता ।" (१-विराम)

हरि के दर्शन न कर पाने से वह कितने व्याकुल हैं, इस पर वह कहते हैं " (हे मेरी माता) अपने मित्र प्रभु के दर्शनों के बिना मेरा मन बैरागी अथवा विरक्त हो गया है । जिस प्रकार भँवरा कमल के फूल के बिना नही रह सकता, उसी प्रकार मेरा हरि के (दर्शन) बिना रहना कठिन है " । (१)

अब गुरु जी अपनी व्याकुलता अपने प्रिय प्रभु से व्यक्त करते हुये कहते हैं " हे जगत के मालिक, मुझे तुम अपनी शरण में रखो, हे हरि गुसाँई, मेरी श्रद्धा परिपूर्ण करो । हे प्रभु, एक क्षण मात्र के लिये भी तुम्हारा दर्शन नानक जन के मन में उल्लास तथा आनन्द भर देता है "। (२-३९-१३-१५-६७)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें ईश्वर से ऐसा निश्छल तथा अथाह प्रेम होना चाहिये कि हम उसके दर्शन के बिना पल भर भी रह सकें और क्षण भर के लिए ही उसकी झलक पाकर हम आनँद से खिल उठें । ऐसी मनोस्थित को पाने के लिये हमें दिन रात प्रभु का ध्यान एवं उसके गुणों का गान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੩੭੨

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਪਰਦੇਸੁ ਝਾਗਿ ਸਉਦੇ ਕਉ ਆਇਆ ॥
ਵਸਤੁ ਅਨੂਪ ਸੁਣੀ ਲਾਭਾਇਆ ॥
ਗੁਣ ਰਾਸਿ ਬੰਨਿ੍ ਪਲੈ ਆਨੀ ॥
ਦੇਖਿ ਰਤਨੁ ਇਹੁ ਮਨੁ ਲਪਟਾਨੀ ॥੧॥

ਸਾਹ ਵਾਪਾਰੀ ਦੁਆਰੈ ਆਏ ॥
ਵਖਰੁ ਕਾਢਹੁ ਸਉਦਾ ਕਰਾਏ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਾਹਿ ਪਠਾਇਆ ਸਾਹੈ ਪਾਸਿ ॥
ਅਮੋਲ ਰਤਨ ਅਮੋਲਾ ਰਾਸਿ ॥
ਵਿਸਟੁ ਸੁਭਾਈ ਪਾਇਆ ਮੀਤ ॥
ਸਉਦਾ ਮਿਲਿਆ ਨਿਹਚਲ ਚੀਤ ॥੨॥

ਭਉ ਨਹੀ ਤਸਕਰ ਪਉਣ ਨ ਪਾਨੀ ॥
ਸਹਜਿ ਵਿਹਾਝੀ ਸਹਜਿ ਲੈ ਜਾਨੀ ॥
ਸਤ ਕੈ ਖਟਿਐ ਦੁਖੁ ਨਹੀ ਪਾਇਆ ॥
ਸਹੀ ਸਲਾਮਤਿ ਘਰਿ ਲੈ ਆਇਆ ॥੩॥

ਮਿਲਿਆ ਲਾਹਾ ਭਏ ਅਨੰਦ ॥
ਧੰਨੁ ਸਾਹ ਪੂਰੇ ਬਖਸਿੰਦ ॥
ਇਹੁ ਸਉਦਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਕਿਨੈ ਵਿਰਲੈ ਪਾਇਆ ॥
ਸਹਲੀ ਖੇਪ ਨਾਨਕੁ ਲੈ ਆਇਆ ॥੪॥੬॥

पृ-३७२

आसा महला ५॥

परदेस झागि सउदे कउ आइआ ॥
वसतु अनूप सुणी लाभाइआ ॥
गुण रासि बँनि पलै आनी
देखि रतनु इहु मनु लपटानी ॥१॥

साह वापारी दुआरै आए ॥
वखरु काढउ सउदा कराए ॥१॥रहाउ॥

साहि पठाइआ साहै पासि ॥
अमोल रतन अमोला रासि ॥
विसटु सुभाई पाइआ मीत ॥
सउदा मिलिआ निहचल चीत ॥२॥

भउ नही तसकर पउण न पानी ॥
सहजि विहाझी सहजि लै जानी ॥
सत कै खटिऐ दुखु नही पाइआ ॥
सही सलामति घरि लै आइआ ॥३॥

मिलिआ लाहा भए अनँद ॥
धँनु साह पूरे बखसिँद
इहु सउदा गुरमुखि किनै विरलै पाइआ ॥
सहली खेप नानकु लै आइआ ॥४॥६॥

आसा महला-५

इस शब्द में गुरु जी सुंदर कवितामयी परिकल्पना के द्वारा एक फेरीवाले का वर्णन करते हैं जो कई देश विदेशों की कठिन यात्रा के बाद एक थोक विक्रेता (साहूकार) के पास जा पहुँचता है और उसे सबसे अनमोल रत्न (ईश्वर का नाम) दिखाने को कहता है जिसके बारे में सुन कर वह इतनी दूर से आने के लिये लालायित हुया है।

अपने गुरु (जो कि बड़ा व्यापारी है) को गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे साहूकार, सच्चे गुरु) देश विदेश में (अनेकों जन्मों) घूमने के पश्चात मै तुम्हारे साथ व्यापार करने आया हूँ। मैंने सुना है कि तुम्हारे पास अति सुंदर, अनूठा और लाभदायक सौदा (प्रभु का नाम) है, मैं अपने साथ गुणों की राशि जमा करके लेकर आया हूँ । इस रत्न (प्रभु का नाम) को देख कर मेरा मन बहुत ललचा गया है "। (१)

विनती को दोहराते हुये गुरु जी कहते हैं "हे साहूकार (गुरु), यह व्यापारी तुम्हारे द्वार तक आया है, कृपा करके सामान दिखायो और हम सौदा तय करलें ।(१-विराम)

आगे क्या होता है इस पर गुरु जी कहते हैं, "शाहों के शाह (ईश्वर) ने मुझे तुम्हारे (गुरु के) पास भेजा है, अनमोल रत्न तथा बहुमूल्य सामान (प्रभु नाम) लेने के लिये । (ईश्वर की दया से) मैंने मित्र जैसा शिष्ट स्वभाव वाला दलाल (गुरु) पाया है जिससे मुझे सौदा (प्रभु नाम) मिल गया है और मेरा मन स्थिर हो गया है " ।(२)

ईश्वर नाम का सौदा पाने के अन्य गुणों की चर्चा करते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो, अन्य सौदों की अपेक्षा) इस सौदे का कोई भय नहीं , इसे ना कोई चोर (ले सकता है), ना हवा (में उड़ सकता है और ना ही पानी में (डूब सकता है)। मैंने इस सौदे को बहुत सहज एवं शांति पूर्वक ढंग से लिया है और (मृत्यु के पश्चात) इसे अपने साथ भी सहजता से ले जा सकूँगा। इस सौदे को सत्य व निष्ठा के साथ पाकर मैंने कोई दुख नहीं पाया। मैं इसे सही सलामती से घर (अपने मन में) ले आया हूँ "। (३)

अंत में गुरु जी प्रभु नाम रूपी सौदा पाने की प्रसन्नता का वर्णन करते हैं " ईश्वर नाम का लाभ पाकर मेरा मन बहुत आनन्दमय है । बड़े साहूकार (ईश्वर) धन्य हैं जो इस दान के दाता हैं । किसी बिरले को ही गुरु की कृपा से ऐसा सौदा प्राप्त होता है । नानक (भाग्यशाली है जो) इस सौदे की खेप लेकर सहज में ही घर आ गया है "। (४-६)

इस शब्द का संदेश यह है कि मानव जीवन में अपनाने योग्य सबसे अधिक मूल्यवान वस्तु अथवा रत्न ईश्वर नाम रूपी रत्न है । किन्तु यह रत्न गुरु के द्वारा ईश्वर नाम का ध्यान करने से ही मिल पाता है । हम अत्यंत प्रेम और श्रद्धा के साथ गुरु की सेवा तथा आदेश का पालन करें ताकि गुरु इस रत्न को पाने में हमारी सहायता करें।

ਪੰਨਾ ੩੭੩	**पृ-३७३**
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ਪੰਚਪਦੇ ॥	**आसा महला ५ पंचपदे ॥**
ਪੰਨਾ ੩੭੪	**पृ-३७४**
ਪ੍ਰਥਮੇ ਤੇਰੀ ਨੀਕੀ ਜਾਤਿ ॥ ਦੁਤੀਆ ਤੇਰੀ ਮਨੀਐ ਪਾਂਤਿ ॥ ਤ੍ਰਿਤੀਆ ਤੇਰਾ ਸੁੰਦਰ ਥਾਨੁ ॥ ਬਿਗੜ ਰੂਪੁ ਮਨ ਮਹਿ ਅਭਿਮਾਨੁ ॥੧॥	प्रथमे तेरी नीकी जाति ॥ दुतीआ तेरी मनीऐ पांति ॥ तृतीआ तेरा सुँदर थानु ॥ बिगड़ रूपु मन महि अभिमानु ॥१॥
ਸੋਹਨੀ ਸਰੂਪਿ ਸੁਜਾਣਿ ਬਿਚਖਨਿ ॥ ਅਤਿ ਗਰਬੈ ਮੋਹਿ ਫਾਕੀ ਤੂੰ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	सोहनी सरूपि सुजाणि बिचखनि ॥ अति गरबै मोहि फाकी तूँ ॥१॥रहाउ ॥
ਅਤਿ ਸੂਚੀ ਤੇਰੀ ਪਾਕਸਾਲ ॥ ਕਰਿ ਇਸਨਾਨੁ ਪੂਜਾ ਤਿਲਕੁ ਲਾਲ ॥ ਗਲੀ ਗਰਬਹਿ ਮੁਖਿ ਗੋਵਹਿ ਗਿਆਨ ॥ ਸਭਿ ਬਿਧਿ ਖੋਈ ਲੋਭਿ ਸੁਆਨ ॥੨॥	अति सूची तेरी पाकसाल ॥ करि इसनानु पूजा तिलकु लाल ॥ गली गरबहि मुखि गोवहि गिआन ॥ सभि बिधि खोई लोभि सुआन ॥२॥
ਕਾਪਰ ਪਹਿਰਹਿ ਭੋਗਹਿ ਭੋਗ ॥ ਆਚਾਰ ਕਰਹਿ ਸੋਭਾ ਮਹਿ ਲੋਗ ॥ ਚੋਆ ਚੰਦਨ ਸੁਗੰਧ ਬਿਸਥਾਰ ॥ ਸੰਗੀ ਖੋਟਾ ਕ੍ਰੋਧੁ ਚੰਡਾਲ ॥੩॥	कापर पहिरहि भोगहि भोग ॥ आचार करहि सोभा महि लोग ॥ चोआ चँदन सुगँध बिसथार ॥ सँगी खोटा क्रोधु चँडाल ॥३॥
ਅਵਰ ਜੋਨਿ ਤੇਰੀ ਪਨਿਹਾਰੀ ॥ ਇਸੁ ਧਰਤੀ ਮਹਿ ਤੇਰੀ ਸਿਕਦਾਰੀ ॥ ਸੁਇਨਾ ਰੂਪਾ ਤੁਝ ਪਹਿ ਦਾਮ ॥ ਸੀਲੁ ਬਿਗਾਰਿਓ ਤੇਰਾ ਕਾਮ ॥੪॥	अवर जोनि तेरी पनिहारी ॥ इसु धरती महि तेरी सिकदारी ॥ सुइना रूपा तुझ पहि दाम ॥ सीलु बिगारिओ तेरा काम ॥४॥
ਜਾ ਕਉ ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਮਇਆ ਹਰਿ ਰਾਇ ॥ ਸਾ ਬੰਦੀ ਤੇ ਲਈ ਛਡਾਇ ॥ ਸਾਧਸੰਗਿ ਮਿਲਿ ਹਰਿ ਰਸੁ ਪਾਇਆ ॥ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਸਫਲ ਓਹ ਕਾਇਆ ॥੫॥	जा कउ दृसटि मइआ हरि राइ ॥ सा बँदी ते लई छडाइ ॥ साधसँगि मिलि हरि रसु पाइआ ॥ कहु नानक सफल ओह काइआ ॥५॥
ਸਭਿ ਰੂਪ ਸਭਿ ਸੁਖ ਬਨੇ ਸੁਹਾਗਨਿ ॥ ਅਤਿ ਸੁੰਦਰਿ ਬਿਚਖਨਿ ਤੂੰ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ਦੂਜਾ ॥੧੨॥	सभि रूप सभि सुख बने सुहागनि ॥ अति सुँदरि बिचखनि तूँ ॥१॥रहाउ दूजा॥१२॥

आसा महला -५ पंचपदे

इस शब्द में गुरु जी हमें याद दिलाते हैं कि प्रभु के आशीर्वाद से हमने मानव जीवन का प्रसाद पाया है, तथा हमारी जाति अन्य सभी जीवों से उत्तम है क्योंकि बुद्धि और बोलने की योग्यता के अतिरिक्त अन्य भी कितने गुण हैं जो किसी और जाति में नहीं पाये जाते। परन्तु हम अपनी प्रवृत्तियों (क्रोध, काम और लोभ) के कारण ईश्वर को भुला कर पतन की ओर आ जाते हैं।

गुरु जी मानव आत्मा को एक दुल्हन की उपमा देते हुये कहते हैं- "(हे आत्मा रूपी दुल्हन) प्रथम - तुम ऊँची जाति (अथवा मानव) की हो, द्वितीय - तुम समाज में आदरणीय हो, तृतीय - तुम्हारा घर (शरीर) जहाँ पर तुम्हारा निवास है सुंदर है। किन्तु मन में अभिमान के कारण तुम्हारा रूप बिगड़ा हुया है "। (१)

मानव स्वभाव पर गुरु जी सारांश में कहते हैं -" (हे मानव रूपी दुल्हन) तुम अति रूपवती, सुडौल तथा बुद्धिमान हो परन्तु अत्यंत अभिमान तथा सांसारिक मायाजाल में उलझी हुयी हो "। (१-विराम)

अन्य जीव और कीड़े मकोड़े जो एक दूसरे का कच्चा भक्षण करते हैं, की तुलना में मानव जाति का खान पान और बोल चाल अधिक

सभ्य एवं विकसित है इस पर गुरु जी कहते हैं " (जब कि दूसरे जीवों का खाना पीना सब प्रकार के गंदे स्थानों पर होता है) तुम्हारी रसोई (पाकशाला) अति साफ़ सुथरी है, (यदि तुम पक्के ब्राह्मण हो), स्नान, पूजा अर्चना तथा माथे पर तिलक धारण करते हो। (अपने अपने मत के अनुसार तुम स्वयं को सजाते सवांरते हो), तत्पश्चात अपना गर्व दिखाते हुये मुख से धर्म ज्ञान का पाठ करते हो । किन्तु एक कुत्ते की भाँति तुम्हारे लोभी स्वभाव ने सब कुछ गँवा दिया है "।।(२)

आगे गुरु जी उन लोगों की बात करते हैं जो अपनी सुंदर वेष-भूषा अथवा साज -श्रृंगार के द्वारा अन्य सबको प्रभावित करते हैं, गुरु जी कहते हैं " तुम मूल्यवान वस्त्र पहनते हो और सांसारिक सुखों का भोग करते हो, अन्य लोगों से शोभा पाने के लिये वैसे आचरण का उपयोग करते हो, साज-श्रृंगार और सुगंधि चंदन आदि का प्रचुर प्रयोग करते हो, किन्तु तुम्हारी सँगति दुष्ट चांडाल रुपी क्रोध के साथ है (और इस क्रोध भावना के कारण तुम्हारी सारी सजावट व्यर्थ हो जाती है)"।(३)

जो लोग दूसरों पर शासन करना चाहते हैं, उनके लिये गुरु जी कहते हैं "(हे' मानव), अन्य जीव तुम्हारी पानिहारिन की भाँति (निम्न स्तर पर) हैं । इस धरती पर तुम उनके शासक हो। तुम्हारे पास सोना, चाँदी, धन-सम्पदा सब कुछ है (जो अन्य जीवों के पास नहीं है) पर काम-वासना ने तेरी शालीनता का नाश कर दिया है "। (४)

उपरोक्त प्रकार के मनुष्य स्वाभाविक रूप से ईश्वर को नहीं भाते, अत: गुरु जी उसके दरबार में स्वीकृत लोगों के आचरणों का वर्णन करते हुये कहते हैं -" जिस आत्मा पर प्रभु की कृपा दृष्टि होती है उसको वह (लोभ, काम तथा क्रोध के बंधनों से) छुड़ा लेता है । साधु संत की सँगति में जाने से (ऐसी आत्मा को) प्रभु नाम का अँमित रस प्राप्त होता है । नानक कहते हैं कि ऐसी काया जग में सफल है "। (५)

शब्द के अंत में गुरु जी समस्त मानव जाति को ईश्वर की दुल्हन के रुप में मानते हुये सम्बोधित करते हैं-" (हे दुल्हन) सारी सुंदरता तथा समस्त सुख-विलास तेरे पर तभी शोभायमान होंगे जब तुम (अपने पति ईश्वर की) सच्ची सुहागिन बनोगी । तभी तुम अति सुंदर व शालीन दिखोगी "। (१-विराम दूसरा-१२)

इस शब्द का सारांश यह है कि धरती पर जीवों में मानव जाति का स्थान सर्वोपरि है। हम एक सभ्य समाज में विकसित हुये हैं, किन्तु हमारी लोभ, मोह तथा क्रोध की वृत्तियों ने इस जाति को ईश्वर के सम्मुख मलिन कर दिया है, इसलिये हमें उससे प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें ऐसे दोषों से दूर रहने का आशीर्वाद दे और हम उसकी दृष्टि से न गिरें।

ਪੰਨਾ ੩੭੫

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਜੈਸੇ ਕਿਰਸਾਣੁ ਬੋਵੈ ਕਿਰਸਾਨੀ ॥
ਕਾਚੀ ਪਾਕੀ ਬਾਢਿ ਪਰਾਨੀ ॥੧॥
ਜੋ ਜਨਮੈ ਸੋ ਜਾਨਹੁ ਮੂਆ ॥
ਗੋਵਿੰਦ ਭਗਤੁ ਅਸਥਿਰੁ ਹੈ ਥੀਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਦਿਨ ਤੇ ਸਰਪਰ ਪਉਸੀ ਰਾਤਿ ॥
ਰੈਣਿ ਗਈ ਫਿਰਿ ਹੋਇ ਪਰਭਾਤਿ ॥੨॥

ਮਾਇਆ ਮੋਹਿ ਸੋਇ ਰਹੇ ਅਭਾਗੇ ॥
ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ਕੋ ਵਿਰਲਾ ਜਾਗੇ ॥੩॥

ਪੰਨਾ ੩੭੬

ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਗੁਣ ਗਾਈਅਹਿ ਨੀਤ ॥
ਮੁਖ ਊਜਲ ਹੋਇ ਨਿਰਮਲ ਚੀਤ ॥੪॥੧੯॥

पृ-३७५

आसा महला ५॥

जैसे किरसाणु बोवै किरसानी ॥
काची पाकी बाढि परानी ॥१॥
जो जनमै सो जानहु मूआ ॥
गोविँद भगतु असथिरु है थीआ ॥१॥रहाउ॥

दिन ते सरपर पउसी राति ॥
रैण गई फिरि होइ परभाति ॥२॥

माइआ मोहि सोइ रहे अभागे ॥
गुर प्रसादि को विरला जागे ॥३॥

पृ-३७६

कहु नानक गुण गाईअहि नीत ॥
मुख ऊजल होइ निरमल चीत ॥४॥१९॥

आसा महला-५

इस शब्द में गुरु जी हमें एक बार फिर याद दिलाते हैं कि एक दिन हम सबको मरना है, इसलिये ईश्वर नाम में लीन रहने के ध्येय को जीवन में प्राप्त करने के लिए और अधिक देरी नहीं करनी चाहिए ।

गुरु जी कहते हैं -"(हे नाशवान प्राणी), जैसे एक किसान फ़सल बोता है और उसे कच्ची, पक्की कभी भी काट लेता है । (इसी प्रकार ईश्वर जो हम सबको जन्म देता है, किसी भी समय बुढ़ापे या युवावस्था में वापिस बुला लेता है) (१)

एक बार फिर से वह कहते हैं -"(हे नाशवान प्राणी), यह निश्चित रखो कि जो जन्मेगा वह (एक दिन) मरेगा भी ।केवल ईश्वर का भक्त ही अमर हो पाता है (ईश्वर नाम का ध्यान करते रहने से उसमें समा जाता है)"। (१-विराम)

निरन्तर जन्म -मरण के फेरों का उदाहरण देते हुये गुरु जी कहते हैं -"दिन के समाप्त होने के बाद निश्चित ही रात आती है और रात जाने के बाद फिर से प्रभात होती है । (इसी प्रकार जन्म के पश्चात मृत्यु, तथा मृत्यु के बाद जन्म होता है ") । (२)

किन्तु गुरु जी के विचारानुसार मृत्यु को निश्चित जानते हुए भी बहुत से लोग "अभागे हैं जो सांसारिक माया मोह में पड़े सो रहे हैं । कोई बिरला ही ईश्वर की कृपा से जागता है (अथवा लोभ लालसा की नींद से परे रहता है) ।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं -"(हे मेरे मित्रो), नानक कहता है कि प्रति दिन प्रभु के गुण गायें, ऐसा करने से हमारा मन पवित्र होगा और (लोक तथा परलोक में) सम्मान प्राप्त होगा "। (४-१९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें यह आभास होना चाहिये कि किसी दिन भी मृत्यु को प्राप्त होना है । अत: वृद्धावस्था या किसी और दिन की प्रतीक्षा किये बिना हमें अभी से ईश्वर के ध्यान में लग जाना चाहिये । ऐसा करने से हमारा मन निर्मल रहेगा और लोक एवं परलोक में सम्मान प्राप्त होगा।

ਪੰਨਾ ੩੭੮	पृ-३७८
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ਦੁਪਦੇ ॥	आसा महला ५ दुपदे ॥
ਭਈ ਪਰਾਪਤਿ ਮਾਨੁਖ ਦੇਹੁਰੀਆ ॥ ਗੋਬਿੰਦ ਮਿਲਣ ਕੀ ਇਹ ਤੇਰੀ ਬਰੀਆ ॥ ਅਵਰਿ ਕਾਜ ਤੇਰੈ ਕਿਤੈ ਨ ਕਾਮ ॥ ਮਿਲੁ ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਭਜੁ ਕੇਵਲ ਨਾਮ ॥੧॥	भई परापति मानुख देहुरीआ ॥ गोबिँद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥ अवर काज तेरै कितै न काम ॥ मिलु साधसँगति भजु केवल नाम ॥१॥
ਸਰੰਜਾਮਿ ਲਾਗੁ ਭਵਜਲ ਤਰਨ ਕੈ ॥ ਜਨਮੁ ਬ੍ਰਿਥਾ ਜਾਤ ਰੰਗਿ ਮਾਇਆ ਕੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	सरँजामि लागु भवजल तरन कै ॥ जनमु बृिथा जात रँगि माइआ कै ॥१॥रहाउ॥
ਜਪੁ ਤਪੁ ਸੰਜਮੁ ਧਰਮੁ ਨ ਕਮਾਇਆ ॥ ਸੇਵਾ ਸਾਧ ਨ ਜਾਨਿਆ ਹਰਿ ਰਾਇਆ ॥ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਹਮ ਨੀਚ ਕਰੰਮਾ ॥ ਸਰਣਿ ਪਰੇ ਕੀ ਰਾਖਹੁ ਸਰਮਾ ॥੨॥੨੯॥	जपु तपु सँजमु धरमु न कमाइआ ॥ सेवा साध न जानिआ हरि राइआ ॥ कहु नानक हम नीच करँमा॥ सरणि परे की राखहु सरमा ॥२॥२९॥

आसा महला ५ दुपदे ॥

इस शब्द में गुरु जी फिर से हमें यह कहते हैं कि यह मानव शरीर हमें ईश्वर के भजन ध्यान के लिये मिला है, जिससे कि इसमें बसी आत्मा जो ईश्वर से चिर काल से बिछुड़ी हुई है वह एक बार पुन:अपने वास्तविक स्रोत में लीन हो कर अनंत शांति प्राप्त कर सके ।

हम सबको सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं -("हे मानव), तुम्हें यह मनुष्य देह (अन्य कई उपजातियों में वास करने के पश्चात) प्राप्त हुई है। अतः अब गोविंद से मिलने की यह तेरी बारी है । अन्य सभी कार्य (जिनमें तुम व्यस्त हो) तेरे किसी काम के नहीं हैं, तुम साधु संतों की संगति में रह कर केवल प्रभु नाम का भजन करो "। (१)

भवसागर अथवा साँसारिक कार्यों में समय नष्ट करने से सचेत करते हुये गुरु जी कहते हैं -"हे मानव, भयावह भवसागर को तैर कर पार करने का यत्न कर, अन्यथा यह जन्म माया जाल के रंग विलास में व्यर्थ जा रहा है"।(१-विराम)

हम भली भाँति जानते हैं कि जब कभी प्रभु ध्यान का प्रयत्न करते हैं तो सांसारिक व्यस्तायें हमारे मन को भटका देती हैं और हमारे यत्न व्यर्थ हो जाते हैं , अतः ऐसी स्थिति से निपटने के लिए गुरु जी किस प्रकार से ईश्वर से विनम्र प्रार्थना के द्वारा हमें सहायता माँगने को कहते हैं । हमारी ओर से ईश्वर को सम्बोधित करते हुये कहते हैं -"(हे प्रभु), मैंने कोई जप, तप, संयम अथवा धर्म के साधन नहीं अपनायें हैं । हे हरि, मुझे किसी साधु की सेवा का भी ज्ञान नहीं है। नानक कहते हैं मैं एक नीच कर्मी हूँ, पर तेरी शरण में आया हूँ, कृपा करके शरण में पड़े हुये की लाज रखो "। (२-२९)

इस शब्द का संदेश यह है कि ईश्वर में लीन होने का यह हमारा स्वर्णिम अवसर है । अत: सांसारिक धँधो में समय व्यर्थ ना करते हुये हमें भक्तिभाव से उसकी शरण में जाकर उसका ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੩੭੯	पृ-३७९
ਆਸਾ ਘਰੁ ੩ ਮਹਲਾ ੫	आसा घर ३ महला ५॥
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥
ਰਾਜ ਮਿਲਕ ਜੋਬਨ ਗ੍ਰਿਹ ਸੋਭਾ ਰੂਪਵੰਤੁ ਜੋੁਆਨੀ ॥ ਬਹੁਤੁ ਦਰਬੁ ਹਸਤੀ ਅਰੁ ਘੋੜੇ ਲਾਲ ਲਾਖ ਬੈ ਆਨੀ ॥ ਆਗੈ ਦਰਗਹਿ ਕਾਮਿ ਨ ਆਵੈ ਛੋਡਿ ਚਲੈ ਅਭਿਮਾਨੀ ॥੧॥	राज मिलक जोबन गिृह सोभा रूपवँतु जोआनी ॥ बहुतु दरबु हसती अरु घोड़े लाल लाख बै आनी ॥ आगै दरगहि कामि न आवै छोडि चलै अभिमानी ॥१॥
ਕਾਹੇ ਏਕ ਬਿਨਾ ਚਿਤੁ ਲਾਈਐ ॥ ਊਠਤ ਬੈਠਤ ਸੋਵਤ ਜਾਗਤ ਸਦਾ ਸਦਾ ਹਰਿ ਧਿਆਈਐ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	काहे एक बिना चितु लाईऐ ॥ ऊठत बैठत सोवत जागत सदा सदा हरि धिआईऐ ॥१॥रहाउ॥
ਮਹਾ ਬਚਿਤ੍ਰ ਸੁੰਦਰ ਆਖਾੜੇ ਰਣ ਮਹਿ ਜਿਤੇ ਪਵਾੜੇ ॥	महा बचित्र सुँदर आखाड़े रण महि जिते पवाड़े ॥
ਪੰਨਾ ੩੮੦	**पृ-३८०**
ਹਉ ਮਾਰਉ ਹਉ ਬੰਧਉ ਛੋਡਉ ਮੁਖ ਤੇ ਏਵ ਬਬਾੜੇ ॥ ਆਇਆ ਹੁਕਮੁ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਕਾ ਛੋਡਿ ਚਲਿਆ ਏਕ ਦਿਹਾੜੇ ॥੨॥	हउ मारउ हउ बँधउ छोडउ मुख ते एव बबाड़े ॥ आइआ हुकमु पारब्रहम का छोडि चलिआ एक दिहाड़े ॥२॥
ਕਰਮ ਧਰਮ ਜੁਗਤਿ ਬਹੁ ਕਰਤਾ ਕਰਣੈਹਾਰੁ ਨ ਜਾਨੈ ॥ ਉਪਦੇਸੁ ਕਰੈ ਆਪਿ ਨ ਕਮਾਵੈ ਤਤੁ ਸਬਦੁ ਨ ਪਛਾਨੈ ॥ ਨਾਂਗਾ ਆਇਆ ਨਾਂਗੋ ਜਾਸੀ ਜਿਉ ਹਸਤੀ ਖਾਕੁ ਛਾਨੈ ॥੩॥	करम धरम जुगति बहु करता करणैहारु न जानै ॥ उपदेसु करै आपि न कमावै ततु सबदु न पछानै ॥ नांगा आइआ नांगो जासी जिउ हसती खाकु छानै ॥३॥
ਸੰਤ ਸਜਨ ਸੁਨਹੁ ਸਭਿ ਮੀਤਾ ਝੂਠਾ ਏਹੁ ਪਸਾਰਾ ॥ ਮੇਰੀ ਮੇਰੀ ਕਰਿ ਕਰਿ ਡੂਬੇ ਖਪਿ ਖਪਿ ਮੁਏ ਗਵਾਰਾ ॥ ਗੁਰ ਮਿਲਿ ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਆ ਸਾਚਿ ਨਾਮਿ ਨਿਸਤਾਰਾ ॥੪॥੧॥੩੮॥	सँत सजन सुनहु सभि मीता झूठा एहु पसारा ॥ मेरी मेरी करि करि डूबे खपि खपि मुए गवारा ॥ गुर मिलि नानक नामु धिआइआ साचि नामि निसतारा ॥४॥१॥३८॥

आसा घर-३ महला -५ १ओंकार सतिगुर प्रसाद

इस शब्द में गुरु जी हमारा ध्यान एक नितांत आवश्यक विषय पर खींचना चाहते हैं, वह यह कि मृत्यु के पश्चात जब हम ईश्वर के द्वार या परलोक जायेंगे तब संसार की सारी धन-दौलत या ज़मीन जायदाद हमारे काम की नहीं होगी। हमें यह सब यहीं छोड़ना पड़ेगा। अत: वह हमें यह आभास दिला रहें हैं कि सभी वाद-विवाद, झगड़े, युद्ध आदि जो भी सांसारिक सम्पदा के लिये होते हैं, अंत में सब शून्य हो जाते हैं। केवल ईश्वर नाम ही हमें सहायक होता है।

वह हमसे साफ़ तौर पर कहते हैं -"(हे मेरे मित्र, तुम्हारे पास) कितना भी राज-पाट, सम्पदा, जागीर, यौवन, सुंदर गृह, यश एवं सत्ता हो, कितना भी धन, हाथी घोड़े, लाखों के लाल-जवाहर आ जांये, यह सब ईश्वर के घर में काम नहीं आयेंगे। (इन सब पर) अभिमान करने वाला सब छोड़ कर संसार से चला जाता है "। (१)

इसलिये गुरु जी कहते हैं -" (हे मेरे मित्र), हम एक ईश्वर के अतिरिक्त क्यों अन्य सांसारिक वस्तुयों में लिप्त हो जाते हैं। हमें उठते बैठते, सोते जागते हरि नाम का ध्यान सदा करना चाहिये।(१-विराम)

अहम तथा अभिमान से उपजे वाद-विवाद, लड़ाई-झगड़ो पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं -" कोई भी कितने ही रण अति सुंदर तथा विचित्र अखाड़ों में जीत ले और बड़बोला होकर कहे कि (जैसे भी मैं चाहूँ) किसी को मार गिरा दूँ, बंधक बना लूं अथवा छोड़ दूं। परन्तु एक दिन पारब्रह्म के हुक्म आने पर सब छोड़ कर यहाँ से जाना पड़ता है।(२)

गुरु जी यह भी विचारते हैं -"(किसी समय कोई) कई प्रकार के धार्मिक रीतियां या कर्म कांड करता है, परन्तु सृष्टिकर्ता को नहीं पहचान पाता। औरों को उपदेश देता है, पर स्वयं उन उपदेशों का पालन नहीं करता, गुरु के कहे सच्चे शब्द को नहीं पहचान सकता। ऐसा मनुष्य संसार में नग्न ही आता है और नग्न ही चला जाता है (अथवा समस्त कर्म कांड अथवा धार्मिक कार्यों को सम्पन्न करने के पश्चात भी कुछ लाभ नही प्राप्त कर पाता) जैसे कि एक हाथी स्नान के बाद धूल में लोटता है।(३)

अंत में गुरु जी हम सभी को एक शुभचिंतक की तरह समझाते हैं -" सुनो मेरे प्रिय साधु सज्जनों, यह सारा (सांसारिक) पसारा झूठा है। वह सब मूर्ख गँवार हैं जो सांसारिक धन -दौलत रूपी सागर में' मेरी-मेरी' करते करते, भटक भटक कर डूब गये हैं । नानक कहते हैं, गुरु से मिल कर जिन्होंने ईश्वर नाम का ध्यान किया है, वह उसमें लीन होकर मोक्ष को प्राप्त कर गये हैं ।(४-१-३८)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें अपनी धन सम्पदा, सत्ता एवं स्वामित्व पर घमंड नहीं करना चाहिए । अन्य सभी को उपदेश देने अथवा कर्मकांड करने की अपेक्षा गुरु के आदेशानुसार प्रभु नाम का ध्यान करें तभी हम जन्म मरण के चक्र में से मुक्त होंगे ।

ਪੰਨਾ ੩੮੧

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਅਧਮ ਚੰਡਾਲੀ ਭਈ ਬ੍ਰਹਮਣੀ ਸੂਦੀ ਤੇ ਸ੍ਰੇਸਟਾਈ ਰੇ ॥
ਪਾਤਾਲੀ ਆਕਾਸੀ ਸਖਨੀ ਲਹਬਰ ਬੂਝੀ ਖਾਈ ਰੇ ॥੧॥

ਘਰ ਕੀ ਬਿਲਾਈ ਅਵਰ ਸਿਖਾਈ ਮੂਸਾ ਦੇਖਿ ਡਰਾਈ ਰੇ ॥
ਅਜ ਕੈ ਵਸਿ ਗੁਰਿ ਕੀਨੋ ਕੇਹਰਿ ਕੂਕਰ ਤਿਨਹਿ ਲਗਾਈ ਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਬਾਝੁ ਥੂਨੀਆ ਛਪਰਾ ਥਾਮ੍ਹ੍ਹਿਆ ਨੀਘਰਿਆ ਘਰੁ ਪਾਇਆ ਰੇ ॥
ਬਿਨੁ ਜੜੀਏ ਲੈ ਜੜਿਓ ਜੜਾਵਾ ਥੇਵਾ ਅਚਰਜੁ ਲਾਇਆ ਰੇ ॥੨॥

ਦਾਦੀ ਦਾਦਿ ਨ ਪਹੁਚਨਹਾਰਾ ਚੂਪੀ ਨਿਰਨਉ ਪਾਇਆ ਰੇ ॥
ਮਾਲਿ ਦੁਲੀਚੈ ਬੈਠੀ ਲੇ ਮਿਰਤਕੁ ਨੈਨ ਦਿਖਾਲਨੁ ਧਾਇਆ ਰੇ ॥੩॥

ਪੰਨਾ ੩੮੨

ਸੋਈ ਅਜਾਣੁ ਕਹੈ ਮੈ ਜਾਨਾ ਜਾਨਣਹਾਰੁ ਨ ਛਾਨਾ ਰੇ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਗੁਰਿ ਅਮਿਉ ਪੀਆਇਆ ਰਸਕਿ ਰਸਕਿ ਬਿਗਸਾਨਾ ਰੇ ॥ ੪॥੫॥੪੪॥

पृ-३८१

आसा महला ५

अधम चँडाली भई बृहमणी सूदी ते सॆ्रसटाई रे ॥
पाताली आकासी सखनी लहबर बूझी खाई रे ॥१॥

घर की बिलाई अवर सिखाई मूसा देख डराई रे ॥
अज कै वसि गुरि कीनो केहरि कूकर तिनहि लगाई रे ॥१॥रहाउ॥

बाझु थूनीआ छपरा थाम्हिआ नीघरिआ घरु पाइआ रे ॥
बिनु जड़ीए लै जड़िओ जड़ावा थेवा अचरजु लाइआ रे ॥२॥

दादी दादि न पहुचनहारा चूपी निरनउ पाइआ रे ॥
मालि दुलीचै बैठी ले मिरतकु नैन दिखालनु धाइआ रे ॥३॥

पृ-३८२

सोई अजाणु कहै मै जाना जानणहारु न छाना रे ॥
कहु नानक गुरि अमिउ पीआइआ रसिक रसिक बिगसाना रे ॥४॥५॥४४॥

आसा महला -५

इस शब्द में गुरु जी प्रति दिन के कई उदाहरणों के साथ गुरु के द्वारा ईश्वर नाम रूपी अँमृत रस चखने के लाभ बताते हैं ।

अपने अनुभवों को साँझा करते हुये वह कहते हैं -" मेरी चंडाल स्त्री जैसी अधम बुद्धि अब एक पवित्र ब्राह्मण स्त्री जैसी श्रेष्ठ हो गई है (मानो नीच) शूद्र जाति स्त्री से (उबर कर) ऊंच जाति (ब्राह्मण स्त्री की जैसी) हो गई है । मेरी आकाश से पाताल तक फैली सांसारिक लोभ लालसा की अग्नि अब बुझ गई है "।(१)

प्रभु द्वारा प्राप्त आशीर्वादों की कई उपमायें देते हुये गुरु जी कहते हैं -" (मेरा मन जो पहले सांसारिक लोभ लालसा के पीछे भागता था वह अब नहीं भटकता- जैसे कि मेरे घर की बिल्ली जो पहले चूहे के पीछे शिकार के लिये भागती थी, अब दूसरे प्रकार के अभ्यास के कारण उससे डरती है, अथवा अब उसे पकड़ती नहीं ; जैसे कि शेर को गुरु ने बकरी के वश में कर दिया हो (उसी प्रकार मेरे अभिमान का नाश करके गुरु ने मुझे विनम्र बना दिया है, केवल इतना ही नहीं, प्रभु ने सब प्रकार की सुख- सामग्री का त्याग करवा कर मुझे साधारण जीवन शैली में सन्तुष्ट रहने की ऐसी बुद्धि प्रदान कर दी है, जैसे कि) एक कुत्ता घास खाने लग जाय "।(१-विराम)

गुरु जी आगे कहते हैं -(मेरे शरीर रूपी) घर की छत (आशायों और इच्छाओं के) खंभों के बिना टिकी हुई है । एक बेघरे ने (मन जो भटक रहा था, उसने अपने अंदर ही) जैसे घर पा लिया है । अब ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि सुनियारे (गुरु) ने बिना कुछ लिये अति सुंदर और आश्चर्यजनक रत्न (प्रभु के नाम का ध्यान मेरे मन रूपी) गहने में जड़ दिया है ।" (२)

यहाँ पर ही बस नहीं, गुरु जी आगे और भी अचंभित करने वाले क़िस्से बताते हैं -"मेरा शिकायती मन जो सदा किसी निर्णायक की ढूँढ में रहा है, पर ऐसा कोई उपयुक्त अधिकारी न मिल पाया, लेकिन अब मुझे अपनी शिकायत का निर्णय मिल गया है), यह निर्णय मैंने अपनी चुप्पी से पाया है । (प्रभु नाम के आशीर्वाद से) अपनी दुष्ट दृष्टि से दूसरों को भयभीत करने की मेरी भावना समाप्त हो गयी है । (मेरी बुद्धि जो एक धनाढ़य महारानी के भाँति) बहुमूल्य क़ालीन पर बिराजना चाहती थी अब मर चुकी है, (मैं अब हर किसी से प्रेम, समता और सद्भावना से बर्ताव करता हूँ) "। (३)

अंत में गुरु जी कहते हैं -" जो भी कोई ईश्वर को जानने का दावा करता है वह अनजान है (क्योंकि) जिन्हें ईश्वर का आभास है वह कोई दावे नहीं करते, (ऐसे लोग बहुत अधिक समय तक छिपे नहीं रह सकते) । नानक कहते हैं कि जिसे प्रभु (नामरूपी) अँमृत रस गुरु के द्वारा प्राप्त होता है, वह बारम्बार उसका स्वाद लेकर आनन्दित होता है"।(४-५-४४)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम विनम्र भाव से गुरु के आदेश का पालन करते हुये ईश्वर नाम का ध्यान करें । ऐसा करने से काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहम की भावनायें मन में से दूर होंगी और वहाँ शांति एंव संयम का वास होगा ।ईश्वर की कृपा से एक दिन हमको उसी प्रकार की असीम प्रसन्नता तथा परम आनन्द प्राप्त हो सकता है जैसा कि गुरु जी ने उपरोक्त शब्द में व्यक्त किया है ।

ਪੰਨਾ ੩੮੩

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਮੋਹ ਮਲਨ ਨੀਦ ਤੇ ਛੁਟਕੀ ਕਉਨੁ ਅਨੁਗ੍ਰਹੁ ਭਇਓ ਰੀ ॥
ਮਹਾ ਮੋਹਨੀ ਤੁਧੁ ਨਵਿਆਪੈ ਤੇਰਾ ਆਲਸੁ ਕਹਾ ਗਇਓ ਰੀ ॥੧॥
ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੩੮੪

ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਅਹੰਕਾਰੁ ਗਾਖਰੋ ਸੰਜਮਿ ਕਉਨ ਛੁਟਿਓ ਰੀ ॥
ਸੁਰਿ ਨਰ ਦੇਵ ਅਸੁਰ ਤ੍ਰੈ ਗੁਨੀਆ ਸਗਲੋ ਭਵਨੁ ਲੁਟਿਓ ਰੀ ॥੧॥

ਦਾਵਾ ਅਗਨਿ ਬਹੁਤੁ ਤ੍ਰਿਣ ਜਾਲੇ ਕੋਈ ਹਰਿਆ ਬੂਟੁ ਰਹਿਓ ਰੀ ॥
ਐਸੋ ਸਮਰਥੁ ਵਰਨਿ ਨ ਸਾਕਉ ਤਾ ਕੀ ਉਪਮਾ ਜਾਤ ਨ
ਕਹਿਓ ਰੀ ॥੨॥

ਕਾਜਰ ਕੋਠ ਮਹਿ ਭਈ ਨ ਕਾਰੀ ਨਿਰਮਲ ਬਰਨੁ ਬਨਿਓ ਰੀ ॥
ਮਹਾ ਮੰਤ੍ਰੁ ਗੁਰ ਹਿਰਦੈ ਬਸਿਓ ਅਚਰਜ ਨਾਮੁ ਸੁਨਿਓ ਰੀ ॥੩॥

ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਪ੍ਰਭ ਨਦਰਿ ਅਵਲੋਕਨ ਅਪੁਨੈ ਚਰਣਿ ਲਗਾਈ ॥
ਪ੍ਰੇਮ ਭਗਤਿ ਨਾਨਕ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਸਾਧੂ ਸੰਗਿ ਸਮਾਈ ॥੪॥੧੨॥੫੧॥

पृ-३८३

आसा महला ५॥

मोह मलन नीद ते छुटकी कउनु अनुग्रहु भइओ री ॥
महा मोहनी तुधु न विआपै तेरा आलसु कहा गइओ री ॥१॥
रहाउ॥

पृ-३८४

कामु क्रोधु अहँकारु गाखरो सँजमि कउन छुटिओ री ॥
सुरि नर देव असुर त्रे गुनीआ सगलो भवनु लुटिओ री ॥१॥

दावा अगनि बहुतु त्रिण जाले कोई हरिआ बूटु रहिओ री ॥
ऐसो समरथु वरनि न साकउ ता की उपमा जात न
कहिओ री ॥२॥

काजर कोठ महि भई न कारी निरमल बरनु बनिओ री ॥
महा मँत्र गुर हिरदै बसिओ अचरज नामु सुनिओ री ॥३॥

करि किरपा प्रभ नदरि अवलोकन अपुनै चरणि लगाई ॥
प्रेम भगति नानक सुखु पाइआ साधू सँगि समाई ॥४॥१२॥५१॥

आसा महला -५

इस शब्द में गुरु जी एक साधारण सी दुल्हन की तुलना मानव आत्मा से करते हैं, जो गुरु के आशीर्वाद से सांसारिक मोह माया से उपर उठ कर अत्यंत शांति तथा संयम का आनन्द पा रही है । उसकी सहेली बरबस उससे पूछ लेती है : यह सब किस प्रकार हुया ?

इस उत्सुक सहेली की जगह गुरु जी स्वयं ही आत्मा रुपी दुल्हन से पूछते हैं -"(हे मेरी सखी) तुम इस मोह माया की महा निद्रा से मुक्त हो गयी हो, (कृपा करके मुझे बताओ) कौन सी विशेष दया और प्रेम तुम्हें प्राप्त हुया है कि सांसारिक धन-माल अथवा माया के आकर्षण तुम्हें नही लुभाते । तुम्हारा आलस कहाँ चला गया है "॥१॥विराम॥

उसी उत्सुक सहेली की ओर से गुरु जी कहते हैं -" किस प्रकार से तुम काम, क्रोध, अंहकार जैसे विकारों पर नियंत्रण पाकर मुक्त हुई हो । समस्त देवी-देवता, साधु संत, असुर और तीनों प्रकार के गुणों वाले मानव गण और वास्तव में पूरा ब्रह्मांड ही इन वृत्तियों के द्वारा लुटा हुया है (किस प्रकार से तुमने स्वयं को इनसे बचा कर रखा है ?). (१)

सांसारिक मोहमाया एवं सत्ता बल के दुखदायी अंत की और आगे व्याख्या करते हुए गुरु जी कहते हैं -" जंगल की आग सारे जंगल को भस्म कर देती है, पर कोई बिरला हरा पेड़ रह जाता है । मैं किसी ऐसे महानुभाव के विषय में नहीं सोच सकता जो सांसारिक इच्छायों रुपी अग्नि से बच सका हो, यदि कोई है तो ऐसे समर्थ पुरुष की प्रशंसा का वर्णन मेरे से कहा नहीं जाता "।(२)

अब गुरु जी आत्मा रुपी सौभाग्यवती दुल्हन की ओर से कहते हैं -"(हे मेरी सखी, यह सच है कि) इस काजल की कोठरी (अर्थात इस दुष्ट संसार)में रहते हुये भी मैं काली नहीं हुई, मेरा रंग निर्मल है (मेरा चरित्र पवित्र है) । गुरु का दिया महामंत्र (ईश्वर का नाम) मेरे ह्रदय में बसा है और मैंने इस अचरज प्रभु नाम को श्रवण भी किया है "। (३)

कृपा-पात्र आत्मा रुपी दुल्हन की ओर से गुरु जी आगे कहते हैं -"प्रभु ने कृपा करके अपनी दया दृष्टि से मेरी ओर देखा और मुझे अपने चरण कमलों(प्रभु -नाम) में लगा दिया । तब पूर्ण भक्ति भाव से साधु संत की सँगति में (मैं) नानक सुख शांति से (ईश्वर में) समा गया हूँ "। (४-१२-५१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यह संसार दुष्ट कर्मों, पाप और वासनायों से इतना भरा हुया है कि हर कोई इस आग में जल सकता है अथवा कुकर्म कर सकता है। किन्तु, यदि हम गुरु की शरण में जाकर सच्ची श्रद्धा एवं प्रेम से प्रभु का ध्यान करें तो वह कृपा करके हमें अपने में लीन कर लेंगे।

ਪੰਨਾ ੩੮੫	**पृ-३८५**
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**आसा महला ५॥**
ਘਰ ਮਹਿ ਸੂਖ ਬਾਹਰਿ ਫੁਨਿ ਸੂਖਾ ॥ ਹਰਿ ਸਿਮਰਤ ਸਗਲ ਬਿਨਾਸੇ ਦੂਖਾ ॥੧॥ ਸਗਲ ਸੂਖ ਜਾਂ ਤੂੰ ਚਿਤਿ ਆਂਵੈਂ ॥	घर महि सूख बाहरि फुनि सूखा ॥ हरि सिमरत सगल बिनासे दूखा ॥१॥ सगल सूख जां तूँ चिति आंवैं ॥
ਪੰਨਾ ੩੮੬	**पृ-३८६**
ਸੋ ਨਾਮੁ ਜਪੈ ਜੋ ਜਨੁ ਤੁਧੁ ਭਾਵੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	सो नामु जपै जो जनु तुधु भावै ॥१॥रहाउ॥
ਤਨੁ ਮਨੁ ਸੀਤਲੁ ਜਪਿ ਨਾਮੁ ਤੇਰਾ ॥ ਹਰਿ ਹਰਿ ਜਪਤ ਢਹੈ ਦੁਖ ਡੇਰਾ ॥੨॥	तनु मनु सीतलु जपि नामु तेरा ॥ हरि हरि जपत ढहै दुख डेरा ॥२॥
ਹੁਕਮੁ ਬੂਝੈ ਸੋਈ ਪਰਵਾਨੁ ॥ ਸਾਚੁ ਸਬਦੁ ਜਾ ਕਾ ਨੀਸਾਨੁ ॥੩॥	हुकमु बूझै सोई परवानु ॥ साचु सबदु जा का नीसानु ॥३॥
ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ॥ ਭਨਤਿ ਨਾਨਕੁ ਮੇਰੈ ਮਨਿ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥੪॥੮॥੫੯॥	गुरि पूरै हरि नामु दृड़ाइआ ॥ भनति नानकु मेरै मनि सुखु पाइआ ॥४॥८॥५९॥

आसा महला -५

प्रभु नाम का आश्रय लेने से गुरु जी ने व्यक्तिगत रुप से कितने आशीर्वाद प्राप्त किये हैं, इसका वर्णन वह इस शब्द में कर रहे हैं ।

वह कहते हैं -" (हे मेरे मित्रो, जो प्रभु को याद रखते हैं, उन्हें आभास है कि उन के) घर (ह्रदय) में शांति है और फिर बाहर भी सुख है ।वह जानते हैं कि हरि सिमरन करने से समस्त दुखों का विनाश हो जाता है "। ॥१॥

इस लिये गुरु जी ईश्वर से कहते हैं -" (हे ईश्वर) हमें सब सुख मिलते हैं जब तुम हमारे मन में आते हो । परन्तु वही जन तेरा नाम जपता है जो तुम्हें भाता है "। (१-विराम)

ईश्वर नाम का ध्यान करने से और क्या क्या आशीर्वाद प्राप्त हैं, इसका ब्यौरा देते हूए गुरु जी कहते हैं -"(हे ईश्वर) मन और तन दोनों ही तेरा नाम जपने से शांत होते हैं । बारम्बार हरि नाम जपने से दुख का डेरा ही ढह जाता है । (२)

प्रभु के दरबार में शरण कैसे मिलेगी, इस पर गुरु जी कहते हैं - "(हे मेरे मित्रो), जो ईश्वर की इच्छा को बूझ लेता है, वह उसके दरबार में स्वीकृत है । प्रभु नाम का सच्चा शब्द (ईश्वर की स्तुति) ही उस मानव का पहचान चिन्ह है । (३)

गुरु जी इस शब्द का अंत करते हुये यह बताते हैं कि उन्होंने किस प्रकार सुख और शांति प्राप्त की है । इसका श्रेय स्वयं न लेते हुये वह विनम्रता से कहते हैं -"(हे मेरे मित्रो, जब से), पूर्ण गुरु ने मुझे हरि के नाम में ढाला है, (तब से) मेरे मन ने सुख पा लिया है "। (४-८-५९)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने मन में तथा समाज में सुख, शांति एवं आनन्द पाना चाहते हैं तो हमें गुरु के मार्गदर्शन पर प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੩੮੭	**पृ-३८७**
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**आसा महला ५॥**
ੳੁਕਤਿ ਸਿਆਨਪ ਕਿਛੂ ਨ ਜਾਨਾ ॥	उकति सिआनप किछू न जाना ॥
ਪੰਨਾ ੩੮੮	**पृ-३८८**
ਦਿਨੁ ਰੈਣਿ ਤੇਰਾ ਨਾਮੁ ਵਖਾਨਾ ॥੧॥	दिनु रैणि तेरा नामु वखाना ॥१॥
ਮੈ ਨਿਰਗੁਨ ਗੁਣੁ ਨਾਹੀ ਕੋਇ ॥ ਕਰਨ ਕਰਾਵਨਹਾਰ ਪ੍ਰਭ ਸੋਇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मै निरगुन गुणु नाही कोइ ॥ करन करावनहार प्रभ सोइ ॥१॥रहाउ॥
ਮੂਰਖ ਮੁਗਧ ਅਗਿਆਨ ਅਵੀਚਾਰੀ ॥ ਨਾਮ ਤੇਰੇ ਕੀ ਆਸ ਮਨਿ ਧਾਰੀ ॥੨॥	मूरख मुगध अगिआन अवीचारी ॥ नाम तेरे की आस मनि धारी ॥२॥
ਜਪੁ ਤਪੁ ਸੰਜਮੁ ਕਰਮ ਨ ਸਾਧਾ ॥ ਨਾਮੁ ਪ੍ਰਭੂ ਕਾ ਮਨਹਿ ਅਰਾਧਾ ॥੩॥	जपु तपु सँजमु करम न साधा ॥ नामु प्रभु का मनहि अराधा ॥३॥
ਕਿਛੂ ਨ ਜਾਨਾ ਮਤਿ ਮੇਰੀ ਥੋਰੀ ॥ ਬਿਨਵਤਿ ਨਾਨਕ ਓਟ ਪ੍ਰਭ ਤੋਰੀ ॥੪॥੧੮॥੬੯॥	किछू न जाना मति मेरी थोरी ॥ बिनवति नानक ओट प्रभ तोरी ॥४॥१८॥६९॥

आसा महला -५

इस शब्द में गुरुजी हमें दिखाते हैं कि हमें अपनी बुद्धि, ज्ञान, अनुष्ठान एवं तपस्या आदि पर गर्व करने की अपेक्षा पूर्ण नम्रता से ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिये।

ईश्वर को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं -"(हे प्रभु) मैं बुद्धिमान या चतुरभाषी नहीं हूँ (जो तुम्हें प्रभावित कर सकूँ) मैं कुछ भी नहीं जानता। बस मैं दिन रात तेरे नाम का बखान करता रहता हूँ "। (१)

प्रभु की ओर पूर्णतया समर्पित भाव से वह कहते हैं -"(हे प्रभु), मैं गुणहीन हूँ, मेरे पास कोई भी गुण नहीं है । मैं विचार हीन हूँ । (मैं जानता हूँ कि सभी जीवों के अंदर) हे' प्रभु, तुम्हीं सब कुछ करते हो (और उन सभी से) सब कुछ करवाते हो ।(१-विराम)

अपनी विनम्रता के साथ आगे कहते हैं - " (हे सर्व शक्तिमान), मैं मूर्ख, अनजान, अज्ञानी और विचार हीन हूँ । फिर भी मैंने मन में तेरे नाम की आशा बसा रखी है (कि तुम अपनी शरण में आने वाले की अवश्य ही रक्षा करोगे)" । (२)

अब गुरु जी जैसे हमसे विनम्रता से कह रहे हों -" (हे मेरे मित्रो), मैंने कोई ध्यान, जप, तप अथवा संयम नहीं साधा है, ना कोई पुण्य कर्म किये हैं, (मोक्ष प्राप्ति के लिये मैं इन सब पर निर्भर भी नहीं करता) । मैंने तो केवल प्रभु नाम की ही आराधना मन में की है "। (३)

सारांश में गुरु जी कहते हैं -" (हे ईश्वर तेरे पास पहुँचने या तेरी स्वीकृति पाने के उपायों पर) मैं कुछ नहीं जानता, मेरी बुद्धि मंद है। (मैं) नानक विनती करता हूँ कि हे प्रभु, मैं तेरे सहारे पर ही आश्रित हूँ "। (४-१८-६९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें कभी भी अपनी बुद्धि या धार्मिकता पर घमंड नही करना चाहिए । हमें सदा विनम्र भाव से प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें उसका नाम जपने का आशीर्वाद दे और हम हृदय से उसके सहारे पर आश्रित रहें ।

ਪੰਨਾ ੩੮੯

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਮਨੁ ਤ੍ਰਿਪਤਾਨੋ ਮਿਟੇ ਜੰਜਾਲ ॥
ਪ੍ਰਭੁ ਅਪੁਨਾ ਹੋਇਆ ਕਿਰਪਾਲ ॥੧॥
ਸੰਤ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ਭਲੀ ਬਨੀ ॥
ਜਾ ਕੈ ਗ੍ਰਿਹਿ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਹੈ ਪੂਰਨੁ ਸੋ ਭੇਟਿਆ ਨਿਰਭੈ ਧਨੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ਸਾਧ ਕ੍ਰਿਪਾਲ ॥
ਮਿਟਿ ਗਈ ਭੂਖ ਮਹਾ ਬਿਕਰਾਲ ॥੨॥

ਠਾਕੁਰਿ ਅਪੁਨੈ ਕੀਨੀ ਦਾਤਿ ॥
ਜਲਨਿ ਬੁਝੀ ਮਨਿ ਹੋਈ ਸਾਂਤਿ ॥੩॥

ਮਿਟਿ ਗਈ ਭਾਲ ਮਨੁਸਹਜਿ ਸਮਾਨਾ ॥

ਪੰਨਾ ੩੯੦

ਨਾਨਕ ਪਾਇਆ ਨਾਮ ਖਜਾਨਾ ॥੪॥੨੭॥੭੮॥

पृ-३८९

आसा महला ५॥

मनु तृपितानो मिटे जँजाल ॥
प्रभु अपुना होइआ किरपाल ॥१॥
सँत प्रसादि भली बनी ॥
जा कै ग्रिहि सभु किछु है पूरनु सो भेटिआ निरभै धनी ॥१॥ रहाउ॥

नामु दिड़ाइआ साध किृपाल
मिट गई भूख महा बिकराल ॥२॥

ठाकुरि अपुनै कीनी दाति ॥
जलनि बुझी मनि होई सांति ॥३॥

मिटि गई भाल मनु सहजि समाना ॥

पृ-३९०

नानक पाइआ नाम खजाना ॥४॥२७॥७८॥

आसा महला - ५

इस शब्द में गुरु जी अपने उस अनुभव की बात करते हैं जब गुरु की कृपा एवं सहायता से ईश्वर ने उनके प्रेम को स्वीकार करके उन पर अपनी दया की ।

गुरु जी कहते हैं - " (हे मेरे मित्रो), मेरा प्रभु मेरे उपर कृपालु हुआ है, (इसी कारण मेरे सांसारिक) जंजाल समाप्त हो गये हैं और (सांसारिक इच्छायों से) मेरा मन तृप्त हो गया है, । (१)

किस प्रकार यह सब हुया इस पर गुरु जी कहते हैं- " संत अथवा गुरु की कृपा से सब भला हुया है और ऐसा निर्भय, धनी मालिक (ईश्वर) मिल गया है, जिसके घर में सब कुछ है " ।(१-विराम)

संत स्वरुप गुरु ने किस प्रकार सहायता की इस विषय पर गुरु जी कहते हैं -"दयालु गुरु ने मेरे मन में स्थाई रुप से प्रभु नाम बसा दिया है, (जिसके कारण सांसारिक वस्तुयों के लिए) मेरी विकराल तृष्णा अथवा भूख समाप्त हो गयी है "। (२)

उसके पश्चात क्या हुया इस पर गुरु जी कहते हैं -" तब मेरे ठाकुर ने अपना प्रसाद दिया जिससे मेरे अंतर की जलन (सांसारिक इच्छायों रुपी अग्नि) बुझ गयी है और मन में शांति हो गई है "। (३)

प्रभु से पाये आशीर्वादों का सारांश करते हुये गुरु जी कहते हैं -"(हे मेरे मित्रो) जब से नानक को प्रभु नाम का ख़ज़ाना प्राप्त हुया है, तब से उसकी (सांसारिक लोभ लालसा की) खोज भाल समाप्त हो गयी है और मन शांति एवं सहज भाव में समा गया है । (४-२७-७८)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम गुरु के मार्ग दर्शन पर चलें जिससे कि हमारे मन में ईश्वर के नाम का संचार हो । यह एक ऐसा ख़ज़ाना है जो हमें समस्त सांसारिक इच्छायों से तृप्त रखेगा और हमारा मन शांति तथा सहज भाव में मग्न रहेगा ।

ਪੰਨਾ ੩੯੧	पृ-३९१
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**आसा महला ५॥**
ਭੂਪਤਿ ਹੋਇ ਕੈ ਰਾਜੁ ਕਮਾਇਆ ॥ ਕਰਿ ਕਰਿ ਅਨਰਥਵਿਹਾਝੀ ਮਾਇਆ ॥	भूपति होइ कै राजु कमाइआ ॥ करि करि अनरथ विहाझी माइआ ॥
ਪੰਨਾ ੩੯੨	**पृ-३९२**
ਸੰਚਤ ਸੰਚਤ ਥੈਲੀ ਕੀਨ੍ਹੀ ॥ ਪ੍ਰਭਿ ਉਸ ਤੇ ਡਾਰਿ ਅਵਰ ਕਉ ਦੀਨ੍ਹੀ ॥੧॥	सँचत सँचत थैली कीनी ॥ प्रभि उस ते डारि अवर कउ दीनी ॥१॥
ਕਾਚ ਗਗਰੀਆ ਅੰਭ ਮਝਰੀਆ ॥ ਗਰਬਿ ਗਰਬਿ ਉਆਹੂ ਮਹਿ ਪਰੀਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	काच गगरीआ अँभ मझरीआ ॥ गरबि गरबि उआहू महि परीआ ॥१॥रहाउ॥
ਨਿਰਭਉ ਹੋਇਓ ਭਇਆ ਨਿਹੰਗਾ ॥ ਚੀਤਿ ਨ ਆਇਓ ਕਰਤਾ ਸੰਗਾ ॥ ਲਸਕਰ ਜੋੜੇ ਕੀਆ ਸੰਬਾਹਾ ॥ ਨਿਕਸਿਆ ਫੂਕ ਤ ਹੋਇ ਗਇਓ ਸੁਆਹਾ ॥੨॥	निरभउ होइओ भइआ निहँगा ॥ चीति न आइओ करता सँगा ॥ लसकर जोड़े कीआ सँबाहा ॥ निकसिआ फूक त होइ गइओ सुआहा ॥२॥
ਊਚੇ ਮੰਦਰ ਮਹਲ ਅਰੁ ਰਾਨੀ ॥ ਹਸਤਿ ਘੋੜੇ ਜੋੜੇ ਮਨਿ ਭਾਨੀ ॥ ਵਡ ਪਰਵਾਰੁ ਪੂਤ ਅਰੁ ਧੀਆ ॥ ਮੋਹਿ ਪਚੇ ਪਚਿ ਅੰਧਾ ਮੂਆ ॥੩॥	ऊचे मँदर महल अरु रानी॥ हसति घोड़े जोड़े मनि भानी ॥ वड परवारु पूत अरु धीआ ॥ मोहि पचे पचि अँधा मूआ ॥३॥
ਜਿਨਹਿ ਉਪਾਹਾ ਤਿਨਹਿ ਬਿਨਾਹਾ ॥ ਰੰਗ ਰਸਾ ਜੈਸੇ ਸੁਪਨਾਹਾ ॥ ਸੋਈ ਮੁਕਤਾ ਤਿਸੁ ਰਾਜੁ ਮਾਲੁ ॥ ਨਾਨਕ ਦਾਸ ਜਿਸੁ ਖਸਮੁ ਦਇਆਲੁ ॥੪॥੩੫॥੮੬॥	जिनहि उपाहा तिनहि बिनाहा ॥ रँग रसा जैसे सुपनाहा ॥ सोई मुकता तिसु राजु मालु ॥ नानक दास जिसु खसमु दइआलु ॥४॥३५॥८६॥

आसा महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमें सचेत करते हैं कि हम ईश्वर को भुला कर अपना समय किसी भी प्रकार से धन सम्पदा जमा करने तथा सत्ता ग्रहण करने में बिता देते हैं।

वह कहते हैं –“ (इसमें क्या है) यदि राजा या धनी बनने के लिये अपना बल प्रयोग किया, कई प्रकार के अनर्थ कर धन सम्पदा अर्जित करली और जमा कर कर के थैलियाँ भर लीं, (पर स्मरण रहे कि मृत्यु के पश्चात या पहले ही) प्रभु वह धन उससे लेकर किसी और को दे देते हैं ।(१)

हमारा शरीर नाशवान है, इस पर एक सुंदर उदाहरण देते हुये गुरु जी कहते हैं -“(हे मेरे मित्रो, मानव देह) पानी में कच्चे घड़े के समान है, जो (लहरों से) टकरा टकरा कर उसी में डूब जाता है । (१-विराम)

अब गुरु जी धन और सत्ता के नशे में चूर उन लोगों की बात करते हैं जो प्रभु को बिसरा कर निडर हो जाते हैं, वह कहते हैं -“(शक्ति तथा सत्ता के नशे में डूबा व्यक्ति) भयहीन होकर किसी की भी परवाह नही करता, यहाँ तक कि उसे पैदा करने वाले ईश्वर की भी याद नही आती । वह कितने भी लश्कर सेना आदि इकट्ठा कर ले, जब अंतिम साँस निकल जाती है तो सब जो जमा किया है स्वाहा हो जाता है । (२)

गुरु जी आगे और कहते हैं -” (हे मेरे मित्रो, कोई) कितने भी ऊँचे मंदिर महल और रानियाँ प्राप्त करले । कितने भी मन भावन हाथी, घोड़े (गाड़ियाँ, हवाई जहाज़) रखे । कितना भी बड़ा परिवार, पुत्र एवं बेटियाँ हों, (पर अंत मे) इस प्रकार के मोह में पचा हुया अँधा और अज्ञानी मृत्यु को प्राप्त कर लेता है” । (३)

अंत में गुरु जी कहते हैं –“(हे मेरे मित्रो), जिसने तुम्हें पैदा किया है, वही तुम्हारा विनाशकारी है । संसार के रस रंग एक स्वप्न की भाँति हैं (जो शीघ्र ही लुप्त हो जाते हैं)। नानक का कहना है कि उसी भक्त को मुक्ति प्राप्त होती है तथा सच्ची शक्ति एवं सम्पदा प्रदान होती है जिस पर स्वामी दयालु होते हैं ”। (४-३५-८६) इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सत्ता, धन या मुक्ति का सच्चा आन्नद लेना चाहते हैं तो हमें प्रभु नाम के ध्यान में रह कर उसकी कृपा प्राप्त करनी चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੩੯੩

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ਦੁਪਦਾ ੧ ॥

ਸਾਧੂ ਸੰਗਿ ਸਿਖਾਇਓ ਨਾਮੁ ॥
ਸਰਬ ਮਨੋਰਥ ਪੂਰਨ ਕਾਮ ॥
ਬੁਝਿ ਗਈ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਹਰਿ ਜਸਹਿ ਅਘਾਨੇ ॥
ਜਪਿ ਜਪਿ ਜੀਵਾ ਸਾਰਿਗਪਾਨੇ ॥੧॥

ਕਰਨ ਕਰਾਵਨ ਸਰਨਿ ਪਰਿਆ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦਿ ਸਹਜ ਘਰੁ ਪਾਇਆ ਮਿਟਿਆ ਅੰਧੇਰਾ ਚੰਦੁ ਚੜਿਆ ॥੧॥
ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੩੯੪

ਲਾਲ ਜਵੇਹਰ ਭਰੇ ਭੰਡਾਰ ॥
ਤੋਟਿ ਨ ਆਵੈ ਜਪਿ ਨਿਰੰਕਾਰ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਸਬਦੁ ਪੀਵੈ ਜਨੁ ਕੋਇ ॥
ਨਾਨਕ ਤਾ ਕੀ ਪਰਮ ਗਤਿ ਹੋਇ ॥੨॥੪੧॥੯੨॥

पृ-३९३

आसा महला ५ दुपदा १॥

साधू सँगि सिखाइओ नामु ॥
सरब मनोरथ पूरन काम ॥
बुझि गई तृिसना हरि जसहि अघाने ॥
जपि जपि जीवा सारिगपाने ॥१॥

करन करावन सरनि परिआ ॥
गुर परसादि सहज घरु पाइआ मिटिआ अँधेरा चँदु चड़िआ ॥१॥
रहाउ॥

पृ-३९४

लाल जवेहर भरे भँडार ॥
तोटि न आवै जपि निरँकार ॥
अँमृित सबदु पीवै जनु कोइ ॥
नानक ता की परम गति होइ ॥२॥४१॥९२॥

आसा महला -५ दुपदा-१

इस शब्द में गुरु जी अपने उस सुखद अनुभव को हमारे साथ साझा करते हैं जो उन्होंने संत (गुरु) की सँगति में प्रभु नाम में लीन होकर प्राप्त किया।

वह कहते हैं- “(हे मेरे मित्रो) जब गुरु की संगति ने मुझे प्रभु नाम सिखाया तब मेरे सभी मनोरथ एवं अन्य कार्य पूर्ण हो गये ।मेरी सभी इच्छायों (सांसारिक वस्तुयों) की प्यास बुझ गयी और हरि यश गाने से मैं तृप्त होगया हूँ । ईश्वर के नाम को जप जप कर जी गया हूँ ”। (१)

अपने मन की वर्तमान स्थित को साझा करते हुये गुरु जी कहते हैं-” (हे मेरे मित्रो) मैं सब कुछ करने और करवाने वाले (ईश्वर) की शरण में पड़ा हूँ और उसकी कृपा से मैं सहज अवस्था में निवास करता हूँ । (मुझे प्रतीत होता है जैसे अज्ञानता का) अंधेरा मेरे मन से मिट गया है और (ज्ञान के) चंद्रमा का उदय हो गया है ”। (१-विराम)

इस लिये गुरु जी शब्द का अंत यह कह कर करते हैं -”(हे मेरे मित्रो) निरंकार प्रभु का ध्यान करो, इस से तुम्हारे मन के भंडार लाल जवाहरों (दैवी गुणों) से भरे रहेंगे और तुम्हें किसी प्रकार की कमी नहीं आयेगी । नानक कहते हैं जो कोई जन प्रभु नाम रूपी अँमृित रस का पान करता है वह परम गति पा लेता है ”। (२-४१-९२)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम चाहते हैं कि हमारे समस्त कार्य पूर्ण हों और हम दैवी स्थिति का सुख सदा प्राप्त करें, तथा उसमें कोई कमी न आये तो गुरु के मार्गदर्शन के अनुसार प्रभु नाम का ध्यान करें।

ਪੰਨਾ ੩੯੫	**पृ-३९५**
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**आसा महला ५॥**
ਪ੍ਰਥਮੇ ਮਿਟਿਆ ਤਨ ਕਾ ਦੂਖ ॥ ਮਨ ਸਗਲ ਕਉ ਹੋਆ ਸੂਖੁ ॥ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਗੁਰ ਦੀਨੋ ਨਾਉ ॥ ਬਲਿ ਬਲਿ ਤਿਸੁ ਸਤਿਗੁਰ ਕਉ ਜਾਉ ॥੧॥	प्रथमे मिटिआ तन का दूख ॥ मन सगल कउ होआ सूखु ॥ करि किरपा गुर दीनो नाउ ॥ बलि बलि तिसु सतिगुर कउ जाउ ॥१॥
ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਪਾਇਓ ਮੇਰੇ ਭਾਈ ॥ ਰੋਗ ਸੋਗ ਸਭ ਦੂਖ ਬਿਨਾਸੇ ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਸਰਣਾਈ ॥ ਰਹਾਉ ॥	गुरु पूरा पाइओ मेरे भाई ॥ रोग सोग सभ दूख बिनासे सतिगुर की सरणाई ॥रहाउ॥
ਗੁਰ ਕੇ ਚਰਨ ਹਿਰਦੈ ਵਸਾਏ ॥ ਮਨ ਚਿੰਤਤ ਸਗਲੇ ਫਲ ਪਾਏ ॥ ਅਗਨਿ ਬੁਝੀ ਸਭ ਹੋਈ ਸਾਂਤਿ ॥ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਗੁਰਿ ਕੀਨੀ ਦਾਤਿ ॥੨॥	गुर के चरन हिरदै वसाए ॥ मन चिंतत सगले फल पाए ॥ अगनि बुझी सभ होई सांति ॥ करि किरपा गुरि कीनी दाति ॥२॥
ਨਿਥਾਵੇ ਕਉ ਗੁਰਿ ਦੀਨੋ ਥਾਨੁ ॥ ਨਿਮਾਨੇ ਕਉ ਗੁਰਿ ਕੀਨੋ ਮਾਨੁ ॥ ਬੰਧਨ ਕਾਟਿ ਸੇਵਕ ਕਰਿ ਰਾਖੇ ॥ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਬਾਨੀ ਰਸਨਾ ਚਾਖੇ ॥੩॥	निथावे कउ गुरि दीनो थानु ॥ निमाने कउ गुरि कीनो मानु ॥ बँधन काटि सेवक करि राखे ॥ अँमृत बानी रसना चाखे ॥३॥
ਵਡੈ ਭਾਗਿ ਪੂਜ ਗੁਰ ਚਰਨਾ ॥ ਸਗਲ ਤਿਆਗਿ ਪਾਈ ਪ੍ਰਭ ਸਰਨਾ ॥	वडै भागि पूज गुर चरना ॥ सगल तिआगि पाई प्रभ सरना ॥
ਪੰਨਾ ੩੯੬	**पृ-३९६**
ਗੁਰੁ ਨਾਨਕ ਜਾ ਕਉ ਭਇਆ ਦਇਆਲਾ ॥ ਸੋ ਜਨੁ ਹੋਆ ਸਦਾ ਨਿਹਾਲਾ ॥੪॥੬॥੧੦੦॥	गुरु नानक जा कउ भइआ दइआला ॥ सो जनु होआ सदा निहाला ॥४॥६॥१००॥

आसा महला -५

इस शब्द में गुरु जी अपने उस दैवी अनुभव का वर्णन करते हैं जो उन्होंने गुरु की शरण में आदेश पा कर प्रभु नाम में लीन होने पर किया।

वह कहते हैं-" (हे मेरे मित्रो जब मैंने गुरु से प्रभु नाम का दान देने की प्रार्थना की तब) सबसे पहले, मेरे शरीर के दुख मिट गये और फिर मेरे समस्त मन को अत्यंत सुख, शांति का अनुभव हुआ। गुरु ने कृपा करके मुझे ईश्वर नाम प्रदान किया। इसलिये, मैं बारम्बार उस गुरु पर बलिहार होता हूँ"। (१)

इसलिये गुरु जी प्रसन्नता से कहते हैं -" हे मेरे भाई, मुझे पूर्ण गुरु मिल गया है। सच्चे गुरु की शरण में आकर मेरे सभी रोग, शोक एवं दुखों का विनाश हो गया है"। (१-विराम)

बात आगे बढ़ाते हुये गुरु जी कहते हैं -"(जब से) मैनें गुरु के चरण (गुरुदीक्षा) अपने हृदय में बसा लिये है मनोवांछित सभी फल प्राप्त हो गये हैं। (सांसारिक इच्छायों की) अग्नि पूर्ण रूप से शांत हो गयी है, गुरु ने कृपा करके मुझे यह दान दिया है"।(२)

इन गुणों की प्राप्ति पर गुरु जी स्वयं कोई श्रेय ना लेते हुये, अत्यंत विनम्रता से कहते हैं -" (यह सब मेरे गुणों या वर्चस्व के कारण नहीं, परन्तु) गुरु ने मुझ जैसे बेघरे को घर दिया और दीन को आदर मान दिया। सांसारिक बंधनों को काट कर, अपना सेवक बना कर गुरु ने मेरी रक्षा की और अब मेरी जिह्वा अँमृत रस (प्रभु नाम) को चख रही है"। (३)

अंत में गुरु जी कहते हैं -" यह मेरा अहो भाग्य है कि मुझे गुरु के चरणों की पूजा (गुरु की वाणी का श्रवण तथा पालन) का अवसर प्राप्त हुआ और फिर मैंने सब कुछ त्याग कर प्रभु की शरण पा ली है। संक्षेप में (मैं नानक कहता हूँ कि) जिसके उपर गुरु दयालु हुए हैं वह जन सदैव आनंदित रहता है"।(४-६-१००)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सच्चे गुरु की शरण लें और उसके निर्देश पर ईश्वर का ध्यान सच्चे प्रेम एवं श्रद्धा से करें तो हमारे मन तन तथा सामाजिक उलझनों का अंत हो जाता है और हम शांति, सन्तुष्टि और चारों ओर सहृदयता के वातावरण का आनन्द प्राप्त करते हैं।

ਪੰਨਾ ੩੯੭	**पृ-३९७**
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**आसा महला ५॥**
ਜਿਨ੍ਾ ਨ ਵਿਸਰੈ ਨਾਮੁ ਸੇ ਕਿਨੇਹਿਆ ॥ ਭੇਦੁ ਨ ਜਾਣਹੁ ਮੂਲਿ ਸਾਂਈ ਜੇਹਿਆ ॥੧॥	जिना् न विसरै नामु से किनेहिआ ॥ भेदु न जाणहु मूलि सांई जेहिआ ॥१॥
ਮਨੁ ਤਨੁ ਹੋਇ ਨਿਹਾਲੁ ਤੁਮ੍ ਸੰਗਿ ਭੇਟਿਆ ॥ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਜਨ ਪਰਸਾਦਿ ਦੁਖੁ ਸਭੁ ਮੇਟਿਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मनु तनु होइ निहालु तुम् सँगि भेटिआ ॥ सुखु पाइआ जन परसादि दुखु सभु मेटिआ ॥१॥रहाउ॥
ਜੇਤੇ ਖੰਡ ਬ੍ਰਹਮੰਡ ਉਧਾਰੇ ਤਿੰਨ੍ ਖੇ ॥ ਜਿਨ੍ ਮਨਿ ਵੁਠਾ ਆਪਿ ਪੂਰੇ ਭਗਤ ਸੇ ॥੨॥	जेते खँड ब्रहमँड उधारे तिँन् खे ॥ जिन् मनि वुठा आपि पूरे भगत से ॥२॥
ਪੰਨਾ ੩੯੮	**पृ-३९८**
ਜਿਸ ਨੋ ਮੰਨੇ ਆਪਿ ਸੋਈ ਮਾਨੀਐ ॥ ਪ੍ਰਗਟ ਪੁਰਖੁ ਪਰਵਾਣੁ ਸਭ ਠਾਈ ਜਾਨੀਐ ॥੩॥	जिस नो मँने आपि सोई मानीऐ ॥ प्रगट पुरखु परवाणु सभ ठाई जानीऐ ॥३॥
ਦਿਨਸੁ ਰੈਣਿ ਆਰਾਧਿ ਸਮ੍ਾਲੇ ਸਾਹ ਸਾਹ ॥ ਨਾਨਕ ਕੀ ਲੋਚਾ ਪੂਰਿ ਸਚੇ ਪਾਤਿਸਾਹ ॥੪॥੬॥੧੦੮॥	दिनसु रैणि आराधि समा्ले साह साह ॥ नानक की लोचा पूरि सचे पातिसाह ॥४॥६॥१०८॥

आसा महला -५

एक सच्चा भक्त जो ईश्वर के नाम (उसके प्रेम तथा ज्ञान) को कभी नहीं भुलाता, उसके गुण क्या हैं और कैसे हैं ? इस प्रश्न का उत्तर गुरु जी उपरोक्त शब्द के द्वारा दे रहे हैं ।

पहले वह प्रश्न करते हैं और फिर स्वयं ही उत्तर देते हुये कहते हैं -"(हे मेरे मित्रो, यदि आप मुझसे पूछो कि) वह भक्त कैसे होते हैं जो ईश्वर का नाम कभी नहीं भूलते, (तो मेरा उत्तर है कि) उन्हें कदापि थोड़ा भी भिन्न ना समझना, वह पूर्णतया अपने सांई (प्रभु) की तरह ही होते हैं "। (१)

अब गुरु जी ईश्वर को सम्बोधित करते हुये कहते हैं -"(हे प्रभु) जो भी तुमसे मिल चुके हैं और तुम्हारे सम्पर्क में आ चुके हैं वह तन मन से अति प्रसन्न हैं । ऐसे भक्तों की कृपा से अन्य जनों के भी दुख मिट गये हैं एंव वह सुख शांति का प्रसाद पा चुके हैं "। (१-विराम)

ऐसी ईश्वर प्रेमी आत्माओं से और लोगों को क्या लाभ मिलते हैं, इस पर गुरु जी कहते है -"(हे मेरे मित्रो), जितने भी खंड और ब्रह्मांड हैं, उन सबका उद्धार इन्हीं भक्तों के द्वारा हुया है । प्रभु के पूर्ण भक्त वही हैं जिनके अंदर स्वयं प्रभु बिराजमान हैं "। (२)

गुरु जी और आगे व्याख्या करते हूए कहते हैं-"(हे मेरे मित्रो), जिस सच्चे भक्त को प्रभु स्वयं सम्मान देते हैं, उसी को केवल मानता मिलती है और ऐसे महापुरुष सभी जगह प्रसिद्धि पाते हैं "। (३)

अंत में गुरु जी अप्रत्यक्ष रूप से प्रार्थना करते हुये और हमको यथावत करने की सलाह देते हुये कहते हैं -" हे सच्चे राजा (शाह), नानक की यह इच्छा पूर्ण करो कि वह दिन और रात, तथा प्रत्येक साँस के साथ तुम्हारे नाम की आराधना करे और अपने मन में तुम्हें बसा कर रखे"। (४-६-१०८)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने समस्त कष्ट एवं दुख सदा के लिये समाप्त करना चाहते हैं तो हमें प्रभु के सच्चे भक्त बनना चाहिए और इसके लिए प्रभु के नाम को एक क्षण के लिए भी नहीं भुलाना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੩੯੯	पृ-३९९
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥	आसा महला ५॥
ਜਾ ਕਾ ਠਾਕੁਰੁ ਤੁਹੀ ਪ੍ਰਭ ਤਾ ਕੇ ਵਡਭਾਗਾ ॥ ਓਹੁ ਸੁਹੇਲਾ ਸਦ ਸੁਖੀ ਸਭੁ ਭ੍ਰਮੁ ਭਉਭਾਗਾ ॥੧॥	जा का ठाकुरु तुही प्रभ ता के वडभागा ॥ ओहु सुहेला सद सुखी सभु भ्रमु भउ भागा ॥१॥
ਹਮ ਚਾਕਰ ਗੋਬਿੰਦ ਕੇ ਠਾਕੁਰੁ ਮੇਰਾ ਭਾਰਾ ॥ ਕਰਨ ਕਰਾਵਨ ਸਗਲ ਬਿਧਿ ਸੋ ਸਤਿਗੁਰੂ ਹਮਾਰਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	हम चाकर गोबिँद के ठाकुरु मेरा भारा ॥ करन करावन सगल बिधि सो सतिगुरू हमारा ॥१॥रहाउ॥
ਦੂਜਾ ਨਾਹੀ ਅਉਰੁ ਕੋ ਤਾ ਕਾ ਭਉ ਕਰੀਐ ॥	दूजा नाही अउरु को ता का भउ करीऐ ॥
ਪੰਨਾ ੪੦੦	पृ-४००
ਗੁਰ ਸੇਵਾ ਮਹਲੁ ਪਾਈਐ ਜਗੁ ਦੁਤਰੁ ਤਰੀਐ ॥੨॥	गुर सेवा महलु पाईऐ जगु दुतरु तरीऐ ॥२॥
ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਤੇਰੀ ਸੁਖੁ ਪਾਈਐ ਮਨ ਮਾਹਿ ਨਿਧਾਨਾ ॥ ਜਾ ਕਉ ਤੁਮ ਕਿਰਪਾਲ ਭਏ ਸੇਵਕ ਸੇ ਪਰਵਾਨਾ ॥੩॥	दिृसटि तेरी सुखु पाईऐ मन माहि निधाना ॥ जा कउ तुम किरपाल भए सेवक से परवाना ॥३॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਰਸੁ ਹਰਿ ਕੀਰਤਨੋ ਕੋ ਵਿਰਲਾ ਪੀਵੈ ॥ ਵਜਹੁ ਨਾਨਕ ਮਿਲੈ ਏਕੁ ਨਾਮੁ ਰਿਦ ਜਪਿ ਜਪਿ ਜੀਵੈ ॥੪॥੧੪॥੧੧੬॥	अँम्रित रसु हरि कीरतनो को विरला पीवै ॥ वजहु नानक मिलै एकु नामु रिद जपि जपि जीवै ॥४॥१४॥११६॥

आसा महला -५

इस शब्द में गुरु जी ईश्वर की महानता का बखान करते हैं कि किस प्रकार का सुख चैन हमें प्रभु की सेवा ध्यान में रहने से मिल सकता है ।

गुरू जी ईश्वर को कहते हैं -" हे प्रभु, तुम जिसके भी मालिक हो वह अति भाग्यशाली है । वह सदा प्रसन्न और सुखी है, उसके सभी भय तथा भ्रम पलायन कर चुके हैं "। (१)

गुरु जी स्वयं को (अप्रत्यक्ष रूप में हमें भी) कहते हैं -" मैं जगदीश्वर का सेवक हूँ, मेरा ठाकुर सबसे महान है।वही सब कुछ करने वाला और करवाने वाला है । वह मेरा सच्चा गुरु है "। (१-विराम)

प्रभु के अनोखे रुप पर गुरु जी टिप्पणी करते हैं तथा उसे कैसे प्राप्त करें उस पर कहते हैं -" उस परमात्मा के समान और कोई दूसरा नहीं है जिसका हमें कोई भय हो, गुरु की सेवा के द्वारा ही हम भवसागर को तैर कर (पार करके) ईश्वर के महल को प्राप्त कर सकते हैं "। (२)

ईश्वर को सम्बोधित करते हुए वह कहते हैं-" हे सर्वशक्तिमान, तेरी कृपा दृष्टि से हमें शांति तथा मन को तेरे नाम की निधि मिलती है । जिस पर तुम कृपालु होते हो वही भक्त तथा सेवक (तुम्हारे दरबार में) स्वीकृत होते हैं "।(३)

शब्द का अंत गुरु जी इस विचार के साथ करते हूए कहते हैं -"(हे मेरे मित्रो), कोई बिरला मनुष्य ही हरि कीर्तन रुपी अँमृत रस का पान करता है । परन्तु हे' नानक, जिस सेवक को एक (प्रभु) नाम का पारितोषिक प्राप्त हुया है वह उसी को हृदय में बारम्बार जप जप कर जीवित रहता है । (४-१४-११६)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सदैवी सुख शांति का आनंद आत्मिक बल एवं स्फूर्ति पाना चाहते हैं तो हमें गुरु के मार्गदर्शन पर उस सर्वशक्तिमान प्रभु का ध्यान करना चाहिये जो सब कुछ करने तथा करवाने वाला है ।

ਪੰਨਾ ੪੦੧	**पृ-४०१**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसाद**
ਆਸਾ ਘਰੁ ੧੦ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**आसा घर १० महला ५॥**
ਜਿਸ ਨੋ ਤੂੰ ਅਸਥਿਰੁ ਕਰਿ ਮਾਨਹਿ ਤੇ ਪਾਹੁਨ ਦੋ ਦਾਹਾ॥	जिस नो तूँ असथिरु करि मानहि ते पाहुन दो दाहा ॥
ਪੰਨਾ ੪੦੨	**पृ-४०२**
ਪੁਤ੍ਰ ਕਲਤ੍ਰ ਗ੍ਰਿਹ ਸਗਲ ਸਮਗ੍ਰੀ ਸਭ ਮਿਥਿਆ ਅਸਨਾਹਾ ॥੧॥	पुत्र कलत्र गिृह सगल समग्री सभ मिथिआ असनाहा ॥१॥
ਰੇ ਮਨ ਕਿਆ ਕਰਹਿ ਹੈ ਹਾ ਹਾ ॥ ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਦੇਖੁ ਜੈਸੇ ਹਰਿਚੰਦਉਰੀ ਇਕੁ ਰਾਮ ਭਜਨੁ ਲੈ ਲਾਹਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	रे मन किआ करहि है हा हा ॥ दृिसटि देखु जैसे हरिचँदउरी इकु राम भजनु लै लाहा ॥ १॥रहाउ॥
ਜੈਸੇ ਬਸਤਰ ਦੇਹ ਓਢਾਨੇ ਦਿਨ ਦੋਇ ਚਾਰਿ ਭੋਰਾਹਾ ॥ ਭੀਤਿ ਊਪਰੇ ਕੇਤਕੁ ਧਾਈਐ ਅੰਤਿ ਓਰਕੋ ਆਹਾ ॥੨॥	जैसे बसतर देह ओढाने दिन दोइ चारि भोराहा ॥ भीति ऊपरे केतकु धाईऐ अँति ओरको आहा ॥२॥
ਜੈਸੇ ਅੰਭ ਕੁੰਡ ਕਰਿ ਰਾਖਿਓ ਪਰਤ ਸਿੰਧੁ ਗਲਿ ਜਾਹਾ ॥ ਆਵਗਿ ਆਗਿਆ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਕੀ ਉਠਿ ਜਾਸੀ ਮੁਹਤ ਚਸਾਹਾ ॥੩॥	जैसे अँभ कुँड करि राखिओ परत सिँधु गलि जाहा ॥ आवगि आगिआ पारबृहम की उठि जासी मुहत चसाहा ॥३॥
ਰੇ ਮਨ ਲੇਖੈ ਚਾਲਹਿ ਲੇਖੈ ਬੈਸਹਿ ਲੇਖੈ ਲੈਦਾ ਸਾਹਾ ॥ ਸਦਾ ਕੀਰਤਿ ਕਰਿ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਕੀ ਉਬਰੇ ਸਤਿਗੁਰ ਚਰਣ ਓਟਾਹਾ ॥ ੪॥੧॥੧੨੩॥	रे मन लेखै चालहि लेखै बैसहि लेखै लैदा साहा॥ सदा कीरति करि नानक हरि की उबरे सतिगुर चरण ओटाहा ॥४॥१॥१२३॥

आसा घर-१० महला-५

इस शब्द में गुरु जी अनेक उदाहरणों के साथ हमें याद दिलाते हैं कि यह सांसारिक वस्तुयें, सम्बन्ध, यहाँ तक कि हमारा शरीर जिसे हम स्थाई समझते हैं, सब कुछ अस्थाई है और किसी भी समय नष्ट हो सकता है । इस लिये हमें इस अस्थिर अथवा सीमित मानव जीवन का उपयोग गुरु के मार्गदर्शन के अनुसार ईश्वर की महिमा तथा ध्यान में करना चाहिये।

वह कहते हैं,"(हे मेरे मित्रो, यह धन और शरीर) जिसे तुम सोचते हो कि सदा के लिये हैं, वह थोड़े दिन के मेहमान हैं । पत्नी, पुत्र, घर और दूसरे सब सामान एवं सामग्री झूठे हैं (अथवा नाशवान हैं) ।(१)

गुरु जी अपने मन को कहते हैं," ओ मेरे मन, तुम क्यों (सब वस्तुयें देखते हुये) इतने गर्व और उत्सुकता से कह रहे हो, यह सब मेरा है, यह सब मेरा है । तुम (गंभीरता से सोचो तो समझ जायोगे, कि सब कुछ) जो अपनी आँखों से देख रहे हो (सब झूठा अथवा अस्थिर पसारा है) आकाश में एक मायानगरी है । इस लिये (इन सांसारिक सम्बन्धों तथा साज सामानों से बंध कर समय नष्ट करने की अपेक्षा, इस मानव जीवन मे) राम नाम के भजन ध्यान में लग कर लाभ लो (१-विराम)

जीवन की क्षणभंगुरता पर आगे टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं -"(हे नाशवान मानव), जैसे कि तुम शरीर ढकने के लिये वस्त्र पहनते हो और वह कुछ दिन में फट जाते हैं, या फिर एक दीवार के उपर कितना भी भागो, उसका भी छोर आ जाता है, (उसी प्रकार एक दिन हम सभी जीवन की अंतिम श्वास पर पहुँच जाते है)। (२)

किस प्रकार अचानक हम संसार से विदा ले अदृश्य होते हैं, इस पर एक और उदाहरण देते हुये गुरु जी कहते हैं -" जैसे कि पानी के कुंड में नमक का टुकड़ा घुल कर अदृश्य हो जाता है, उसी प्रकार ईश्वर के आदेश पर आत्मा भी पल छिन में अदृश्य हो जाती है । (३)

अंत में अपने मन को(और वास्तव में हमें भी) गुरु जी कहते हैं -" हे मेरे मन, (ईश्वर द्वारा) लिखे अनुसार ही तुम चल रहे हो, बैठे हो और साँस ले रहे हो (किसी भी समय यह लेख समाप्त हो सकता है) । इस लिये हे नानक, सदा ही प्रभु की कीर्ति का गान करो, क्योंकि जो भी गुरु की शरण में आकर हरि का गुणगान करते हैं, उबर जाते हैं (भवसागर में डूबने से बच जाते है) । (४-१-१२३)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमारे सारे सम्बन्ध, तथा सांसारिक धन-दौलत, साज-सामान अस्थिर हैं और हमें कुछ निश्चित जीवन श्वास ही मिले हैं । इस लिये हम अपना समय सांसारिक उपलब्धियों में न गँवा कर ईश्वर के ध्यान में लगायें, नहीं तो पता नही कब अकस्मात् हमारा विदा होने का समय आ जाए और इस प्रकार प्रभुभक्ति एवं उसके साथ योग पाने के लिए दुर्लभ मानव जन्म रूपी सुअवसर का उपयोग ना कर पायें ।

ਪੰਨਾ ੪੦੩

ਆਸਾ ਘਰੁ ੧੧ ਮਹਲਾ ੫

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਨਟੂਆ ਭੇਖ ਦਿਖਾਵੈ ਬਹੁ ਬਿਧਿ ਜੈਸਾ ਹੈ ਓਹੁ ਤੈਸਾ ਰੇ ॥
ਅਨਿਕ ਜੋਨਿ ਭ੍ਰਮਿਓ ਭ੍ਰਮ ਭੀਤਰਿ ਸੁਖਹਿ ਨਾਹੀ ਪਰਵੇਸਾ ਰੇ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੪੦੪

ਸਾਜਨ ਸੰਤ ਹਮਾਰੇ ਮੀਤਾ ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਹਰਿ ਆਨੀਤਾ ਰੇ ॥
ਸਾਧਸੰਗਿ ਮਿਲਿ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਏ ਇਹੁ ਜਨਮੁ ਪਦਾਰਥੁ ਜੀਤਾ ਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ॥

ਤ੍ਰੈ ਗੁਣ ਮਾਇਆ ਬ੍ਰਹਮ ਕੀ ਕੀਨ੍ਹੀ ਕਹਹੁ ਕਵਨ ਬਿਧਿ ਤਰੀਐ ਰੇ ॥
ਘੂਮਨ ਘੇਰ ਅਗਾਹ ਗਾਖਰੀ ਗੁਰ ਸਬਦੀ ਪਾਰਿ ਉਤਰੀਐ ਰੇ ॥੨॥

ਖੋਜਤ ਖੋਜਤ ਖੋਜਿ ਬੀਚਾਰਿਓ ਤਤੁ ਨਾਨਕ ਇਹੁ ਜਾਨਾ ਰੇ ॥
ਸਿਮਰਤ ਨਾਮੁ ਨਿਧਾਨੁ ਨਿਰਮੋਲਕੁ ਮਨੁ ਮਾਣਕੁ ਪਤੀਆਨਾ ਰੇ ॥੩॥੧॥੧੩੦॥

पृ-४०३

आसा घर ११ महला ५

१ओंकार सतिगुर प्रसाद ॥

नटूआ भेख दिखावै बहु बिधि जैसा है ओहु तैसा रे ॥१॥
अनिक जोनि भ्रमिओ भ्रम भीतरि सुखहि नाही परवेसा रे ॥१॥

पृ-४०४

साजन सँत हमारे मीता बिनु हरि हरि आनीता रे ॥
साधसँगि मिलि हरि गुण गाए इहु जनमु पदारथु जीता रे ॥१॥रहाउ॥

त्रे गुण माइआ ब्रहम की कीनी् कहहु कवन बिधि तरीऐ रे ॥
घुमन घेर अगाह गाखरी गुर सबदी पारि उतरीऐ रे ॥२॥

खोजत खोजत खोजि बीचारिओ ततु नानक इहु जाना रे ॥
सिमरत नामु निधानु निरमोलकु मनु माणकु पतीआना रे ॥३॥१॥१३०॥

आसा घर -११ महला -५

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि किस प्रकार हम पूर्व कमाये पापों को धोकर पवित्र हो सकते हैं, तथा चिर शांति प्राप्त कर सकते हैं।

सबसे पहले गुरु जी हमें यह समझाना चाहते हैं कि हमारा वास्तविक चरित्र किसी विशेष वेश भूषा अथवा साधु जनों के भगवा वस्त्र धारण करने से नहीं बदलता। हमें अपने कर्मों के अनुसार ही जन्म-मरण के चक्र भुगतने पड़ते हैं।एक सुंदर उदाहरण द्वारा वह चरितार्थ करते हैं -"(हे मेरे मित्रो) एक नट विभिन्न कपड़ों अथवा वेष-भूषा द्वारा कितने ही रूप एवं चरित्रों का प्रदर्शन करता है, परन्तु अंदर से वह वैसा ही रहता है जो वास्तव में है। उसी प्रकार एक आत्मा भ्रमित रूप से अनेक योनियों में भ्रमण करती रहती है परन्तु चिरशांति अथवा सुख में प्रवेश नहीं कर पाती है"।(१)

गुरु जी हमें अत्यंत मैत्रीपूर्ण आदरभाव से कहते हैं -"ओ मेरे सज्जन साधु मित्रो, (मैं तुम सबसे कहता हूँ कि) हरि के अतिरिक्त (इस संसार में) सब कुछ नाशवान है। केवल वही मनुष्य, जो साधु संत की संगति में हरि के गुण गा लेता है वह इस जन्म में संसार के सभी पदार्थों पर विजय प्राप्त कर लेता है"।(१-विराम)

संसार में पसरे विभिन्न आकर्षण जिनमें साधारणतया मनुष्य घिरा रहता है, उस पर गुरु जी का कथन है -"(ओ मेरे मित्रो), इस सृष्टि के पासार में ईश्वर ने तीन प्रवृत्तियों (पाप, पुण्य व शक्ति) की रचना की है, जो एक नदी की भाँति है, कहो, उसे किस प्रकार से तैर कर पार किया जा सकता है। इस अथाह घुमाव-घेर वाली (सांसारिक) वैतरणी में से केवल गुरु की वाणी के विचार के द्वारा ही पार उतरा जा सकता है"।(२)

अंत में गुरु जी कहते हैं -" (हे मेरे मित्रो), बार बार खोजने तथा विचारने के पश्चात ही नानक ने यह तथ्य जाना है कि ईश्वर के अनमोल ख़ज़ाने रूपी नाम का स्मरण करने से ही माणक रूपी मन में विश्वास होता है"।(३-१-१३०)

इस शब्द का संदेश यह है कि जब तक हम साधु संत की संगति में प्रभु नाम का ध्यान नहीं करते हमें शांति नहीं प्राप्त हो सकती चाहे हम कितने ही रूप बदल लें अथवा कितने ही जन्म धारण कर लें।

ਪੰਨਾ ੪੦੫	**पृ-४०५**
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**आसा महला ५॥**
ਉਦਮੁ ਕਰਉ ਕਰਾਵਹੁ ਠਾਕੁਰ ਪੇਖਤ ਸਾਧੂ ਸੰਗਿ ॥ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਚਰਾਵਹੁ ਰੰਗਨਿ ਆਪੇ ਹੀ ਪ੍ਰਭ ਰੰਗਿ ॥੧॥	उदमु करउ करावहु ठाकुर पेखत साधू सँगि ॥ हरि हरि नाम चरावहु रंगनि आपे ही प्रभ रँगि ॥१॥
ਮਨ ਮਹਿ ਰਾਮ ਨਾਮਾ ਜਾਪਿ ॥ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਵਸਹੁ ਮੇਰੈ ਹਿਰਦੈ ਹੋਇ ਸਹਾਈ ਆਪਿ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मन महि राम नामा जापि ॥ करि किरपा वसहु मेरै हिरदै होइ सहाई आपि ॥१॥रहाउ॥
ਸੁਣਿ ਸੁਣਿ ਨਾਮੁ ਤੁਮਾਰਾ ਪ੍ਰੀਤਮ ਪ੍ਰਭੁ ਪੇਖਨ ਕਾ ਚਾਉ ॥	सुणि सुणि नामु तुमारा प्रीतम प्रभु पेखन का चाउ ॥
ਪੰਨਾ ੪੦੬	**पृ-४०६**
ਦਇਆ ਕਰਹੁ ਕਿਰਮ ਅਪੁਨੇ ਕਉ ਇਹੈ ਮਨੋਰਥੁ ਸੁਆਉ ॥੨॥	दइआ करहु किरम अपुने कउ इहै मनोरथ सुआउ ॥२॥
ਤਨੁ ਧਨੁ ਤੇਰਾ ਤੂੰ ਪ੍ਰਭੁ ਮੇਰਾ ਹਮਰੈ ਵਸਿ ਕਿਛੁ ਨਾਹਿ ॥ ਜਿਉ ਜਿਉ ਰਾਖਹਿ ਤਿਉ ਤਿਉ ਰਹਣਾ ਤੇਰਾ ਦੀਆ ਖਾਹਿ ॥੩॥	तनु धनु तेरा तूँ प्रभु मेरा हमरै वसि किछु नाहि ॥ जिउ जिउ राखहि तिउ तिउ रहणा तेरा दीआ खाहि ॥३॥
ਜਨਮ ਜਨਮ ਕੇ ਕਿਲਵਿਖ ਕਾਟੈ ਮਜਨੁ ਹਰਿ ਜਨ ਧੂਰਿ ॥ ਭਾਇ ਭਗਤਿ ਭਰਮ ਭਉ ਨਾਸੈ ਹਰਿ ਨਾਨਕ ਸਦਾ ਹਜੂਰਿ ॥੪॥੪॥੧੩੯॥	जनम जनम के किलविख काटै मजनु हरि जन धूरि ॥ भाइ भगति भरम भउ नासै हरि नानक सदा हजूरि ॥४॥४॥१३९॥

आसा महला – ५

बहुत लोग ऐसा कहते हैं कि हम पूर्णतया ईश्वर के वश में हैं और जो वह करवाता है वही काम हम कर सकते हैं, अतः हमारा गुरुद्वारे जाना, साधु संत की सँगति तथा ईश्वर का ध्यान तक भी हम स्वयं नहीं कर सकते जब तक प्रभु हमसे ऐसा प्रयास नहीं करवाते । इस शब्द में गुरु जी हमें प्रभु से प्रार्थना करने का प्रयास करने की राह दर्शाते हैं कि किस प्रकार हमें प्रति दिन गुरु अथवा प्रभु के सम्मुख क्या प्रार्थना करनी चाहिये ।

ईश्वर से प्रार्थना करते हुये गुरु जी पहले कहते हैं -" (हे प्रभु), तुम मुझे साधु या गुरु की संगति ढूँढने जाने का प्रयास और हिम्मत प्रदान करो, हे प्रभु, तुम स्वयं ही मेरे उपर हरि नाम का रंग चढ़ा कर मुझे रंग दो ।(१)

गुरु जी आगे विनती करते हैं -" हे ईश्वर, मेरे पर दया करो कि मेरा मन तुम्हारे नाम का जाप करे, कृपा करके तुम स्वयं ही मेरे सहायक होकर मेरे ह्रदय में आकर बसो "।(१-विराम)

अपने प्रभु प्रेम की आतुरता का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं -" हे मेरे प्रिय प्रभु, निरंतर तुम्हारा नाम सुन सुन कर मेरे मन में तुम्हारे दर्शन का चाव उमड़ता है, दया करो और अपने इस दीन कीड़े की मनोकामना को शांत करो "।(२)

सर्व शक्तिमान प्रभु के प्रति अपने समर्पण तथा भक्तिभाव से गुरु जी कहते हैं -" हे प्रभु, यह तन और धन सब कुछ तेरा है, तुम मेरे मालिक हो, हमारे वश में कुछ भी नहीं है । जैसे भी तुम हमें रखोगे वैसे ही हमें रहना है, जो तुम देते हो वही हम खाते हैं "।(३)

प्रभु की भक्ति तथा साधु संतों की संगति के लिये क्यों और किस प्रकार से प्रार्थना करते हैं, इस बात को साझा करते हुये शब्द के अंत में गुरु जी कहते हैं -" हे मेरे मित्रो, हरि जनों (साधु संतों) की धूलि में स्नान (सेवा अर्चना) करने से जन्म जन्म के पाप एवं कष्ट कट जाते हैं । नानक कहते हैं कि हरि की दया से भक्त के सारे भ्रम तथा भय नाश होते हैं और वह सदा हरि को अपने सम्मुख पाते हैं "। (४-४-१३९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें कोई बहाने या बड़बोलापन नहीं करना चाहिये कि जब प्रभु चाहेगें तब हम उनके नाम का जाप कर लेंगे । अपितु, हमें स्वयं प्रार्थना करनी चाहिये कि प्रभु हमें गुरु एवं संतों (गुरु ग्रंथ साहिब जी) से मार्गदर्शन लेने का वरदान दें और हम सच्चे प्रेम और श्रद्धा से प्रभु नाम का ध्यान करें । यदि प्रति दिन हम विनम्र प्रार्थना करते रहें तो एक दिन अवश्य ही प्रभु अपनी कृपा करेंगे और अपने नाम का दान एवं दर्शन देकर हमें कृतार्थ करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੪੦੭	**पृ-४०७**
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੧੪	**आसा महला ५ घर १४**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि**
ਓਹੁ ਨੇਹੁ ਨਵੇਲਾ ॥ ਅਪੁਨੇ ਪ੍ਰੀਤਮ ਸਿਉ ਲਾਗਿ ਰਹੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	ओहु नेहु नवेला ॥ अपुने प्रीतम सिउ लागि रहै ॥१॥ रहाउ ॥
ਜੋ ਪ੍ਰਭ ਭਾਵੈ ਜਨਮਿ ਨ ਆਵੈ ॥ ਹਰਿ ਪ੍ਰੇਮ ਭਗਤਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਰਚੈ ॥੧॥	जो प्रभ भावै जनमि न आवै ॥ हरि प्रेम भगति हरि प्रीति रचै ॥१॥
ਪੰਨਾ ੪੦੮	**पृ-४०८**
ਪ੍ਰਭ ਸੰਗਿ ਮਿਲੀਜੈ ਇਹੁ ਮਨੁ ਦੀਜੈ ॥ ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਮਿਲੈ ਅਪਨੀ ਦਇਆ ਕਰਹੁ ॥੨॥੧॥੧੫੦॥	प्रभ सँगि मिलीजै इहु मनु दीजै ॥ नानक नामु मिलै अपनी दइआ करहु ॥२॥१॥१५०॥

आसा महला - ५घर - १४

इस शब्द में गुरु जी हमें प्रिय प्रभु के गुणों के विषय में सूचित करते हैं ।

वह कहते हैं -" हमारा प्रेम यदि अपने प्रिय प्रभु के साथ पक्का है, तो सदा नया नवेला है । (१-विराम)

प्रभु के साथ प्रेम करने से प्राप्त होने वाले गुणों का वर्णन करते हुए गुरु जी कहते हैं – "जो हरि के प्रेम में रचा बसा है और उसकी भक्ति करता है, वह हरि को भाता है, ऐसे भक्त को जन्म मरण के चक्कर में नहीं आना पड़ता, अर्थात उसे मुक्ति प्राप्त हो जाती है "। (१)

अत: गुरु जी हमें विमर्श देते हैं -" यदि हम प्रभु को मिलना चाहते हैं तो हमें अपना मन उसे समर्पित कर देना चाहिये (अर्थात अपने मन के अहम को त्याग कर संयमित भाव से ईश्वर की इच्छा के अनुसार रहना चाहिये) । एक बार फिर नानक कहते हैं, हे प्रभु, अपनी दया करो और अपने नाम (प्रेम तथा आदरभाव) का दान दो"। (२-१-१५०)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम जन्म मरण के दुख एवं यातनाओं से दूर रहना चाहते हैं, तो हमें प्रभु से प्रार्थना करके उसके नाम और प्रेम में रचे बसे रहने का वरदान प्राप्त करना चाहिये, ऐसा प्रेम सदा के लिये नवेला रहेगा ।

टिप्पणी:- उपरोक्त शब्द एक प्रकार से सम्पूर्ण गुरु ग्रंथ साहिब जी का सार है तथा पूर्णतया गुरु गोबिंद सिंह जी द्वारा रचित " दस सवैये " नामक रचना से मिलता जुलता है जहाँ वह कहते हैं " हे समस्त मानव जनों, मैं जो भी यहाँ कह रहा हूँ उस सत्य को सुनो, वह यह कि - जो भी ईश्वर को (शुद्ध हृदय से) प्रेम करते हैं, उसे पा लेते हैं ।"

ਪੰਨਾ ੪੦੯

ਆਸਾਵਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਹਰਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਗੁਨੀ ਹਾਂ ॥
ਜਪੀਐ ਸਹਜ ਧੁਨੀ ਹਾਂ ॥
ਸਾਧੂ ਰਸਨ ਭਨੀ ਹਾਂ ॥
ਛੂਟਨ ਬਿਧਿ ਸੁਨੀ ਹਾਂ ॥
ਪਾਈਐ ਵਡ ਪੁਨੀ ਮੇਰੇ ਮਨਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਖੋਜਹਿ ਜਨ ਮੁਨੀ ਹਾਂ ॥
ਸ੍ਰਬ ਕਾ ਪ੍ਰਭ ਧਨੀ ਹਾਂ ॥
ਦੁਲਭ ਕਲਿ ਦੁਨੀ ਹਾਂ ॥
ਦੂਖ ਬਿਨਾਸਨੀ ਹਾਂ ॥
ਪ੍ਰਭ ਪੂਰਨ ਆਸਨੀ ਮੇਰੇ ਮਨਾ ॥੧॥

ਮਨ ਸੋ ਸੇਵੀਐ ਹਾਂ ॥

ਪੰਨਾ ੪੧੦

ਅਲਖ ਅਭੇਵੀਐ ਹਾਂ ॥
ਤਾਂ ਸਿਉ ਪ੍ਰੀਤਿ ਕਰਿ ਹਾਂ ॥
ਬਿਨਸਿ ਨ ਜਾਇ ਮਰਿ ਹਾਂ ॥
ਗੁਰ ਤੇ ਜਾਨਿਆ ਹਾਂ ॥
ਨਾਨਕ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ਮੇਰੇ ਮਨਾ ॥੨॥੩॥੧੫੯॥

पृ-४०९

आसावरी महला ५॥

हरि हरि हरि गुनी हां ॥
जपीऐ सहज धुनी हां ॥
साधू रसन भनी हां ॥
छूटन बिधि सुनी हां ॥
पाईऐ वड पुनी मेरे मना ॥१॥रहाउ॥

खोजहि जन मुनी हां ॥
सृब का प्रभ धनी हां ॥
दुलभ कलि दुनी हां ॥
दूख बिनासनी हां ॥
प्रभ पूरन आसनी मेरे मना ॥१॥

मन सो सेवीऐ हां ॥

पृ-४१०

अलख अभेवीऐ हां ॥
तां सिउ प्रीति करि हां ॥
बिनसि न जाइ मरि हां ॥
गुर ते जानिआ हां ॥
नानक मनु मानिआ मेरे मना ॥२॥३॥ १५९॥

आसावरी महला -५

कैसे गुरु जी ईश्वर को प्राप्त करने के योग्य बने, इस अनुभव को वह इस शब्द में साझा करते हैं ।

अपने मन तथा परोक्ष में हमें भी सम्बोधित करते हुये वह कहते हैं -"(हे मेरे मन), सहज अथवा शांत धुन में निरंतर सर्वगुणी ईश्वर के नाम का जाप करना चाहिये । साधु जनों की रसना सदा ऐसा करती है । मैंने भी सुना है कि इस विधि से (जन्म मरण के दुखों से) मुक्ति मिलती है । परन्तु मेरे मन, यह सब बड़े पुण्य करमों के द्वारा ही प्राप्त होता है "।(१-विराम)

प्रभु कितने महान हैं और किस प्रकार संत एवं मुनि जन उनकी खोज में रहते हैं, इस पर गुरु जी अपने मन से कहते हैं -" हे मेरे मन, सभी मुनि जन सृष्टि के स्वामी प्रभु की खोज में हैं, जिसे इस कलियुगी संसार में पाना दुर्लभ है । वह प्रभु दुखों के विनाशक हैं और समस्त आशायों तथा इच्छायों के पूरक हैं "। (१)

ईश्वर को कैसे पायें, इस पर गुरु जी अंत में हमें कहते हैं -"हे मेरे मन, उस ईश्वर (के नाम स्मरण के द्वारा उस) की सेवा कर ।उस ईश्वर से प्रेम कर जो अलख है और जिसका भेद नहीं पाया जा सकता । वह अविनाशी है, अमर है । नानक ने उस (प्रभु) के विषय पर सारा ज्ञान गुरु से ही जाना है और तब से मेरा मन सन्तुष्ट है "। (२-३-१५९)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु को प्राप्त करना चाहते हैं जो कि समस्त दुखों का निवारक है और हमारी सब इच्छायों का पूरक है तो हमें अपने गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) के मार्ग दर्शन के अनुसार उसके नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੪੧੧

ਰਾਗੁ ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ਅਸਟਪਦੀਆ ਘਰੁ ੨

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਉਤਰਿ ਅਵਘਟਿ ਸਰਵਰਿ ਨ੍ਹਾਵੈ ॥
ਬਕੈ ਨ ਬੋਲੈ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ॥
ਜਲੁ ਆਕਾਸੀ ਸੁੰਨਿ ਸਮਾਵੈ ॥
ਰਸੁ ਸਤੁ ਝੋਲਿ ਮਹਾ ਰਸੁ ਪਾਵੈ ॥੧॥

ਐਸਾ ਗਿਆਨੁ ਸੁਨਹੁ ਅਭ ਮੋਰੇ ॥
ਭਰਿਪੁਰਿ ਧਾਰਿ ਰਹਿਆ ਸਭ ਠਉਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਚੁ ਬ੍ਰਤੁ ਨੇਮੁ ਨ ਕਾਲੁ ਸੰਤਾਵੈ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਸਬਦਿ ਕਰੋਧੁ ਜਲਾਵੈ ॥
ਗਗਨਿ ਨਿਵਾਸਿ ਸਮਾਧਿ ਲਗਾਵੈ ॥
ਪਾਰਸੁ ਪਰਸਿ ਪਰਮ ਪਦੁ ਪਾਵੈ ॥੨॥

ਸਚੁ ਮਨ ਕਾਰਣਿ ਤਤੁ ਬਿਲੋਵੈ ॥
ਸੁਭਰ ਸਰਵਰਿ ਮੈਲੁ ਨ ਧੋਵੈ ॥
ਜੈ ਸਿਉ ਰਾਤਾ ਤੈਸੋ ਹੋਵੈ ॥
ਆਪੇ ਕਰਤਾ ਕਰੇ ਸੁ ਹੋਵੈ ॥੩॥

ਗੁਰ ਹਿਵ ਸੀਤਲੁ ਅਗਨਿ ਬੁਝਾਵੈ ॥
ਸੇਵਾ ਸੁਰਤਿ ਬਿਭੂਤ ਚੜਾਵੈ ॥
ਦਰਸਨੁ ਆਪਿ ਸਹਜ ਘਰਿ ਆਵੈ ॥
ਨਿਰਮਲ ਬਾਣੀ ਨਾਦੁ ਵਜਾਵੈ ॥੪॥

ਅੰਤਰਿ ਗਿਆਨੁ ਮਹਾ ਰਸੁ ਸਾਰਾ ॥
ਤੀਰਥ ਮਜਨੁ ਗੁਰ ਵੀਚਾਰਾ ॥
ਅੰਤਰਿ ਪੂਜਾ ਥਾਨੁ ਮੁਰਾਰਾ ॥
ਜੋਤੀ ਜੋਤਿ ਮਿਲਾਵਣਹਾਰਾ ॥੫॥

ਰਸਿ ਰਸਿਆ ਮਤਿ ਏਕੈ ਭਾਇ ॥
ਤਖਤ ਨਿਵਾਸੀ ਪੰਚ ਸਮਾਇ ॥
ਕਾਰ ਕਮਾਈ ਖਸਮ ਰਜਾਇ ॥
ਅਵਿਗਤ ਨਾਥੁ ਨ ਲਖਿਆ ਜਾਇ ॥੬॥

ਜਲ ਮਹਿ ਉਪਜੈ ਜਲ ਤੇ ਦੂਰਿ ॥
ਜਲ ਮਹਿ ਜੋਤਿ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰਿ ॥
ਕਿਸੁ ਨੇੜੈ ਕਿਸੁ ਆਖਾ ਦੂਰਿ ॥
ਨਿਧਿ ਗੁਣ ਗਾਵਾ ਦੇਖਿ ਹਦੂਰਿ ॥੭॥

ਅੰਤਰਿ ਬਾਹਰਿ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਇ ॥

ਪੰਨਾ ੪੧੨

ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਸੋ ਫੁਨਿ ਹੋਇ ॥
ਸੁਣਿ ਭਰਥਰਿ ਨਾਨਕੁ ਕਹੈ ਬੀਚਾਰੁ ॥
ਨਿਰਮਲ ਨਾਮੁ ਮੇਰਾ ਆਧਾਰੁ ॥੮॥੧॥

पृ-४११

राग आसा महला १ असटपदीआ घर २

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

उतरि अवघटि सरवरि ना्वै ॥
बकै न बोलै हरि गुण गावै ॥
जलु आकासी सुँनि समावै ॥
रसु सतु झोलि महा रसु पावै ॥१॥

ऐसा गिआनु सुनहु अभ मोरे ॥
भरिपुरि धारि रहिआ सभ ठउरे ॥१॥रहाउ ॥

सचु ब्रतु नेमु न कालु सँतावै ॥
सतिगुर सबदि करोधु जलावै ॥
गगनि निवासि समाधि लगावै ॥
पारसु परसि परम पदु पावै ॥२॥

सचु मन कारणि ततु बिलोवै ॥
सुभर सरवरि मैलु न धोवै ॥
जै सिउ राता तैसो होवै ॥
आपे करता करे सु होवै ॥३॥

गुर हिव सीतलु अगनि बुझावै ॥
सेवा सुरति बिभूत चड़ावै ॥
दरसनु आपि सहज घरि आवै ॥
निरमल बाणी नादु वजावै ॥४॥

अँतरि गिआनु महा रसु सारा ॥
तीरथ मजनु गुर वीचारा ॥
अँतरि पूजा थानु मुरारा ॥
जोती जोति मिलावणहारा ॥५॥

रसि रसिआ मति एकै भाइ ॥
तखत निवासी पँच समाइ ॥
कार कमाई खसम रजाइ ॥
अविगत नाथु न लखिआ जाइ ॥६॥

जल महि उपजै जल ते दूरि ॥
जल महि जोति रहिआ भरपूरि ॥
किसु नेड़ै किसु आखा दूरि ॥
निधि गुण गावा देखि हदूरि ॥७॥

अँतरि बाहरि अवरु न कोइ ॥

पृ-४१२

जो तिसु भावै सो फुनि होइ ॥
सुणि भरथरि नानकु कहै बीचारु ॥
निरमल नामु मेरा आधारु ॥८॥१॥

राग आसा महला-१ असटपदीआ घर-२

डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार इस शब्द में गुरु जी योगी भरथरी को प्रभु मिलन के लिए अपनी चुनी हुई राह का वर्णन कर रहे हैं, जबकि योगी प्रभु प्राप्ति के लिए अनेक प्रकार के व्रत, कर्मकांड एवं तीर्थ यात्राओं पर विश्वास रखते हैं ।

सबसे पहले वह योगियों के उस अभ्यास का उदाहरण देते हैं जहाँ पर वह पर्वत से उतर नीचे कुंड में स्नान करने आते हैं, गुरु जी कहते हैं-"(मेरे विचार में एक सच्चा योगी वह है जो) अपने अहम के दुर्गम पर्वत से नीचे उतर कर सत्संग रूपी कुंड में स्नान करे । ऐसा योगी व्यर्थ की भाषा नहीं बोलता, वह हरि का गुणगान करता है । जैसे कि पानी की भाप उपर आकाश में समा जाती है, (वैसे ही ईश्वर की महिमा का गान सुन कर) ऐसा योगी शून्य दशा में लीन हो जाता है । इस प्रकार से वह जैसे (प्रभु नाम के) सत्य रस को घोलकर महा रस के रूप में पा लेता है । "। (१)

गुरु जी योगियों को अपनी बात ध्यान से सुनने को कहते हैं -" (हे योगी जनों), कृपया प्रभु के विषय में मेरे मन का विश्लेषण सुनो कि वह समस्त स्थानों पर पूर्ण रूप से व्याप्त है "। (१-विराम)

योगियों द्वारा व्रत, पूजा तथा अन्य कर्म कांड के अभ्यास पर गुरु जी कहते हैं -"(हे योगी), मृत्यु का भय उस व्यक्ति को नही सताता जो सत्य एवं धर्म का व्रत रखता है, तथा सच्चे गुरु की वाणी द्वारा उसका क्रोध भी भस्म हो जाता है। ऐसे मनुष्य की समाधि अचेतन अवस्था(आकाश, दशम द्वार) में आ जाती है । ऐसे समय पर पारस (गुरु) के स्पर्श से मनुष्य परम पद अर्थात उच्च स्थान पा लेता है "।(२)

मन की शुद्धता के लिये योगी विभिन्न प्रकार के उपाय करते हैं, इस पर गुरु जी टिप्पणी करते हूए कहते हैं -"(हे योगी), सत्य की प्राप्ति के लिये मनुष्य बारम्बार ईश्वर का स्मरण करता है जैसे कि मक्खन के लिये दूध को बिलोया जाता है । जो भी मनुष्य मैलविहीन अथवा दुर्भावनाओं रहित (प्रभु नाम से) परिपूर्ण सरोवर में अपने मन को धोता है वह उस (प्रभु) में रमे हुए वैसा ही रूप प्राप्त कर लेता है (और फिर विश्वास करने लगता है कि) जो भी सृजनहार प्रभु करेगा, वही होगा " ।(३)

योगियों की हिम-आच्छादित पर्वतों की यात्रायें, शरीर पर विभूति का लेप और शंख नाद आदि की तुलना करते हुये गुरुजी कहते हैं-"गुरु अंतर की अग्नि बुझा कर हृदय को शीतल करता है। गुरु की पूर्ण श्रध्दा से सेवा करना ही विभूति का लेप है । जो मनुष्य गुरु की पवित्र वाणी का संगीत बजाता है, उसका यह सिद्धांत बन जाता है कि वह अन्य सब को उपदेश देने की अपेक्षा, पहले स्वयं को शांति एवं सहजभाव की अवस्था में रखना सीख ले "। (४)

योगियों द्वारा विभिन्न प्रकार के पेय एवं औषधियों का प्रयोग, तीर्थ यात्रायें और पूजा पाठ आदि पर गुरु जी कहते हैं -"(हे भरथरी, मेरे विचार में)जो भी कोई अंतर मन में दैवी ज्ञान का रस पी चुका है, वही महा रस अथवा (सर्वोत्तम) औषधि पी रहा है, गुरु के विचारों का अनुसरण ही उसकी तीर्थ यात्रायों के स्नान हैं । इस प्रकार जिसने भी अपने अंतर्मन को प्रभु का पूजास्थल बना लिया है, वह अपनी आत्मा की ज्योति को सर्वोपरि प्रभु की ज्योति में लीन कर पाता है "। (५)

किस प्रकार की शांति एवं आध्यात्मिक ऊँचाई का आनन्द ऐसा मनुष्य पाता है, इसका वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं -" हे योगी, ऐसा मनुष्य) जिसका अंतर्मन एक ही ईश्वर नाम के रस में रचा है वह अपनी पाँचों इन्द्रियों सहित दैवी आसन पर बिराजमान होता है । ऐसे मनुष्य का यही विश्वास होता है कि उसकी सब उपलब्धियाँ अथवा कर्मों की कमाई स्वामी की इच्छा एवं कृपा से ही मिली हैं । (उसका स्वयं का कोई भी यत्न नहीं है) और वह उस अदृश्य स्वामी की व्याख्या नहीं कर सकता "। (६)

ईश्वर व्याख्या से परे है, इस तथ्य को गुरु जी सागर के पार सूर्योदय के दृश्य द्वारा विस्तृत करते हुये कहते हैं -"जैसे कि सागर के पार सूर्योदय होते हुये देखने से प्रतीत होता है कि सूर्य पानी में से निकल कर बाहर आ रहा है, परन्तु, वास्तव में वह सागर से अत्यंत दूर होते हुए भी अपने तीव्र प्रकाश से जल को पूर्णतया प्रकाशित कर देता है, सो हम यह कैसे कह सकते हैं कि सूर्य दूर है या पास है, (और यही धारणा ईश्वर के लिये भी है) । अतः, उस गुणों के निधान (प्रभु) को अपने सम्मुख देखते हुये उसका यशगायन करता रहता हूँ "।(७)

अंत में वह कहते हैं -"मेरे अंतर्मन अथवा बाहर भी ईश्वर के अतिरिक्त कोई नहीं है, जो उसे भाता है वही पुनः होता है । सो हे भरथरी, सुनो, नानक के अपने विचार में केवल प्रभु का पवित्र नाम ही आधार है अथवा मैं प्रभु पर ही आश्रित हूँ "। (८-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि इधर उधर एक किनारे से दूसरे किनारे या पर्वतों जंगलों में ईश्वर की खोज में भटकने की अपेक्षा, हमें अपने हृदय में ही गुरु की वाणी अथवा शब्द का श्रवण करना चाहिये । गुरु के परामर्श पर चलने से अपने दुर्व्यवहारों अथवा विचारों से अंतर्मन को मुक्ति देकर, हमें सच्ची श्रद्धा और प्रेम से ईश्वर नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੪੧੩

ਰਾਗੁ ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਆਪੁ ਵੀਚਾਰੈ ਸੁ ਪਰਖੇ ਹੀਰਾ ॥
ਏਕ ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਤਾਰੇ ਗੁਰ ਪੂਰਾ ॥
ਗੁਰੁ ਮਾਨੈ ਮਨ ਤੇ ਮਨੁ ਧੀਰਾ ॥੧॥

ਐਸਾ ਸਾਹੁ ਸਰਾਫੀ ਕਰੈ ॥
ਸਾਚੀ ਨਦਰਿ ਏਕ ਲਿਵ ਤਰੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੂੰਜੀ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨ ਸਾਰੁ ॥
ਨਿਰਮਲੁ ਸਾਚਿ ਰਤਾ ਪੈਕਾਰੁ ॥
ਸਿਫਤਿ ਸਹਜ ਘਰਿ ਗੁਰੁ ਕਰਤਾਰੁ ॥੨॥

ਆਸਾ ਮਨਸਾ ਸਬਦਿ ਜਲਾਏ ॥
ਰਾਮ ਨਰਾਇਣੁ ਕਹੈ ਕਹਾਏ ॥
ਗੁਰ ਤੇ ਵਾਟ ਮਹਲੁ ਘਰੁ ਪਾਏ ॥੩॥

ਪੰਨਾ ੪੧੪

ਕੰਚਨ ਕਾਇਆ ਜੋਤਿ ਅਨੂਪੁ ॥
ਤ੍ਰਿਭਵਣ ਦੇਵਾ ਸਗਲ ਸਰੂਪੁ ॥
ਮੈ ਸੋ ਧਨੁ ਪਲੈ ਸਾਚੁ ਅਖੂਟੁ ॥੪॥

ਪੰਚ ਤੀਨਿ ਨਵ ਚਾਰਿ ਸਮਾਵੈ ॥
ਧਰਣਿ ਗਗਨੁ ਕਲ ਧਾਰਿ ਰਹਾਵੈ ॥
ਬਾਹਰਿ ਜਾਤਉ ਉਲਟਿ ਪਰਾਵੈ ॥੫॥

ਮੂਰਖੁ ਹੋਇ ਨ ਆਖੀ ਸੂਝੈ ॥
ਜਿਹਵਾ ਰਸੁ ਨਹੀ ਕਹਿਆ ਬੂਝੈ ॥
ਬਿਖੁ ਕਾ ਮਾਤਾ ਜਗ ਸਿਉ ਲੂਝੈ ॥੬॥

ਊਤਮ ਸੰਗਤਿ ਊਤਮੁ ਹੋਵੈ ॥
ਗੁਣ ਕਉ ਧਾਵੈ ਅਵਗਣ ਧੋਵੈ ॥
ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਸੇਵੇ ਸਹਜੁ ਨ ਹੋਵੈ ॥੭॥

ਹੀਰਾ ਨਾਮੁ ਜਵੇਹਰ ਲਾਲੁ ॥
ਮਨੁ ਮੋਤੀ ਹੈ ਤਿਸ ਕਾ ਮਾਲੁ ॥
ਨਾਨਕ ਪਰਖੈ ਨਦਰਿ ਨਿਹਾਲੁ ॥੮॥੫॥

पृ-४१३

राग आसा महला १॥

आप वीचारै सु परखे हीरा ॥
एक द्रिसटि तारे गुर पूरा ॥
गुरु मानै मन ते मनु धीरा ॥१॥

ऐसा साहु सराफी करै ॥
साची नदरि एक लिव तरै ॥१॥रहाउ॥

पूँजी नामु निरँजन सारु ॥
निरमलु साचि रता पैकारु ॥
सिफति सहज घरि गुरु करतारु ॥२॥

आसा मनसा सबदि जलाए ॥
राम नराइणु कहै कहाए ॥
गुर ते वाट महलु घरु पाए ॥३॥

पृ- ४१४

कँचन काइआ जोति अनूपु ॥
त्रिभवण देवा सगल सरूपु ॥
मैं सो धनु पलै साचु अखूटु ॥४॥

पँच तीनि नव चारि समावै ॥
धरणि गगनु कल धारि रहावै ॥
बाहरि जातउ उलटि परावै ॥५॥

मूरखु होइ न आखी सूझै ॥
जिहवा रसु नही कहिआ बूझै ॥
बिखु का माता जग सिउ लूझै ॥६॥

ऊतम सँगति ऊतमु होवै ॥
गुण कउ धावै अवगण धोवै ॥
बिनु गुर सेवे सहजु न होवै ॥७॥

हीरा नामु जवेहर लालु ॥
मनु मोती है तिस का मालु ॥
नानक परखै नदरि निहालु ॥८॥५॥

राग आसा महला १॥

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि एक गुरु की क्या विशेषता है, उसके क्या अनूठे गुण हैं और वास्तव में कैसे उसका मार्गदर्शन साधारण लोगों के लिए अत्यंत लाभदायक एवं अनिवार्य सिद्ध होता है ।

गुरु के आशीर्वाद से मनुष्य को क्या लाभ तथा गुण प्राप्त होते हैं, इस पर गुरु जी का कथन है -"(हे मेरे मित्रो) जो मनुष्य गुरु में विश्वास रख कर उसके आदेशों एवं शिक्षा का पालन करता है, उसका मन स्वयं में सन्तुष्ट रहता है । वह सर्वगुणी गुरु की एक ही कृपादृष्टि से भवसागर को पार कर लेता है, तथा वह मनोविचार से परख लेता है कि प्रभु का नाम हीरे की भाँति अनमोल है (और जीवन का ध्येय है)।(१)

गुरु जी गुरु के गुणों को संक्षेप में कहते हैं -"(हे मेरे मित्रो) गुरु एक ऐसा गुणी साहूकार है जो (रत्नों की पहचान की तरह) व्यक्ति की पहचान कर उस पर अपनी दया दृष्टि से उसका मन एक ईश्वर में रमा देता है और तब वह व्यक्ति संसार सागर को पार कर लेता है "।(१-

विराम)

ऐसे मनुष्य के गुणों की व्याख्या गुरु जी करते हैं -"(गुरु की कृपा से) ऐसा मनुष्य पवित्र हरि नाम को जीवन का सार अथवा पूँजी मानता है तथा निर्मल भाव से सत्य को स्वर्ण छानने वाले की भाँति अपने में बसा लेता है । सहज भाव से प्रभु के गुण गान करते हुये अपने मन में गुरु को अपना लेता है "।(२)

गुरु द्वारा सधे हुये ऐसे व्यक्ति के आचरण के विषय में गुरु जी कहते हैं -"वह व्यक्ति अपनी सारी आशायें और इच्छायें गुरु के वचन पर भस्म कर देता है तथा राम नाम का उच्चारण अन्य लोगों से करवाता है और स्वयं भी करता है । गुरु के द्वारा ऐसा मनुष्य मन ही मन अपने जीवन की राह, तथा ईश्वर के महल को प्राप्त कर लेता है "।(३)

गुरु जी और अधिक बताते हैं -"ऐसे व्यक्ति का मन तथा शरीर तपे कंचन की भाँति पवित्र एवं अनूठे प्रकार के प्रकाश से ज्योतिर्मय हो जाता है जो तीनों लोक को प्रकाशित करता है और समस्त विश्व उसका स्वरूप है ।उसे ऐसा प्रतीत होता है कि मेरे आँचल में सच्चा सदैवी अनंत धन आ गया है "।(४)

गुरु की कृपा दृष्टि मनुष्य को अन्य कैसा दैवी ज्ञान प्रदान करती है, इस पर गुरु जी कहते हैं -"(हे मेरे मित्रो) गुरु मनुष्य को यह ज्ञान देते हैं कि ईश्वर का वास समस्त पाँच तत्वों (धरती, जल, अग्नि, वायु, आकाश) तीनों लोक, नव खंड तथा चारों दिशायों में है। उसकी शक्ति धरती तथा आकाश को नियंत्रित करती है और इस प्रकार गुरु शिष्य के भटकते मन को ईश्वर की ओर मोड़ देते हैं "।(५)

अब गुरु जी एक मूर्ख व्यक्ति के आचरण को व्यक्त करते हैं जो गुरु की शिक्षा पर ध्यान नहीं देता, वह कहते हैं -" मूर्ख तथा दंभी व्यक्ति अपनी आँखों से देखते हुये भी समझ नहीं पाता है कि संसार चलायमान है । उसकी जिह्वा इस रस का स्वाद ही नहीं बूझ पाती है (अर्थात समझने की शक्ति नहीं है)।जो उसे कहा जाता है वह उसे नहीं सुनता । सांसारिक विषयों के नशे में मस्त होकर सबसे उलझता रहता है "।(६)

ऐसे मूर्ख तथा दंभी जनों के उद्धार के लिये गुरु जी दया भावना से कहते हैं -"उन्हें उत्तम संगति में रह कर उत्तम बनने का प्रयास करना चाहिये ।अपने अवगुणों को धोकर अच्छी संगति के गुणों को ग्रहण करना चाहिये । (परन्तु ऐसे मनुष्य को पहले गुरु से मार्गदर्शन पाने की आवश्यकता है) क्योंकि गुरु के मार्गदर्शन के बिना सहज की अवस्था नहीं प्राप्त हो सकती "।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं -"हे नानक, गुरु अपनी कृपा दृष्टि से परख कर जिस किसी को आशीर्वाद देता है वह धन्य हो जाता है और फिर उसका मोती समान पवित्र मन ईश्वर नाम रुपी हीरे, लाल व जवाहर जैसे धन-माल का स्वामी हो जाता है "।(८-५)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें स्वयं को अत्यंत भाग्यशाली समझना चाहिए, क्योंकि, किसी और गुरु की भाल में कहीं बाहर भटकने की अपेक्षा, हमें हमारे घर में ही सच्चे सदैवी गुरु - गुरु ग्रंथ साहिब जी का निवास उपलब्ध हो जाता है, जिसका मार्ग दर्शन हमारे मन को समस्त सांसारिक विकारों पर विजय प्राप्त करने में सहायक होता है, तथा प्रभु नाम रूपी रत्न धन से जोड़ कर रखते हुए हमें जन्म-मरण के कष्टों से भी बचाता है ।

ਪੰਨਾ ੪੧੬

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਤਨੁ ਬਿਨਸੈ ਧਨੁ ਕਾ ਕੋ ਕਹੀਐ ॥
ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਕਤ ਲਹੀਐ ॥
ਰਾਮ ਨਾਮ ਧਨੁ ਸੰਗਿ ਸਖਾਈ ॥
ਅਹਿਨਿਸਿ ਨਿਰਮਲੁ ਹਰਿ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥੧॥

ਰਾਮ ਨਾਮ ਬਿਨੁ ਕਵਨੁ ਹਮਾਰਾ ॥
ਸੁਖ ਦੁਖ ਸਮ ਕਰਿ ਨਾਮੁ ਨ ਛੋਡਉ ਆਪੇ ਬਖਸਿ ਮਿਲਾਵਣਹਾਰਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕਨਿਕ ਕਾਮਨੀ ਹੇਤੁ ਗਵਾਰਾ ॥
ਦੁਬਿਧਾ ਲਾਗੇ ਨਾਮੁ ਵਿਸਾਰਾ ॥
ਜਿਸੁ ਤੂੰ ਬਖਸਹਿ ਨਾਮੁ ਜਪਾਇ ॥
ਦੂਤੁ ਨ ਲਾਗਿ ਸਕੈ ਗੁਨ ਗਾਇ ॥੨॥

ਹਰਿ ਗੁਰੁ ਦਾਤਾ ਰਾਮ ਗੁਪਾਲਾ ॥
ਜਿਉ ਭਾਵੈ ਤਿਉ ਰਾਖੁ ਦਇਆਲਾ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਰਾਮੁ ਮੇਰੈ ਮਨਿ ਭਾਇਆ ॥
ਰੋਗ ਮਿਟੇ ਦੁਖੁ ਠਾਕਿ ਰਹਾਇਆ ॥੩॥

ਅਵਰੁ ਨ ਅਉਖਧੁ ਤੰਤ ਨ ਮੰਤਾ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਸਿਮਰਣੁ ਕਿਲਵਿਖ ਹੰਤਾ ॥
ਤੂੰ ਆਪਿ ਭੁਲਾਵਹਿ ਨਾਮੁ ਵਿਸਾਰਿ ॥
ਤੂੰ ਆਪੇ ਰਾਖਹਿ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰਿ ॥੪॥

ਰੋਗੁ ਭਰਮੁ ਭੇਦੁ ਮਨਿ ਦੂਜਾ ॥
ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਭਰਮਿ ਜਪਹਿ ਜਪੁ ਦੂਜਾ ॥
ਆਦਿ ਪੁਰਖ ਗੁਰ ਦਰਸ ਨ ਦੇਖਹਿ ॥
ਵਿਣੁ ਗੁਰ ਸਬਦੈ ਜਨਮੁ ਕਿ ਲੇਖਹਿ ॥੫॥

ਦੇਖਿ ਅਚਰਜੁ ਰਹੇ ਬਿਸਮਾਦਿ ॥
ਘਟਿ ਘਟਿ ਸੁਰ ਨਰ ਸਹਜ ਸਮਾਧਿ ॥
ਭਰਿਪੁਰਿ ਧਾਰਿ ਰਹੇ ਮਨ ਮਾਹੀ ॥
ਤੁਮ ਸਮਸਰਿ ਅਵਰੁ ਕੋ ਨਾਹੀ ੬॥

ਜਾ ਕੀ ਭਗਤਿ ਹੇਤੁ ਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ॥
ਸੰਤ ਭਗਤ ਕੀ ਸੰਗਤਿ ਰਾਮੁ ॥
ਬੰਧਨ ਤੋਰੇ ਸਹਜਿ ਧਿਆਨੁ ॥
ਛੂਟੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਰਿ ਗੁਰ ਗਿਆਨੁ ॥੭॥

ਨਾ ਜਮਦੂਤ ਦੂਖੁ ਤਿਸੁ ਲਾਗੈ ॥
ਜੋ ਜਨੁ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਲਿਵ ਜਾਗੈ ॥
ਭਗਤਿ ਵਛਲੁ ਭਗਤਾ ਹਰਿ ਸੰਗਿ ॥
ਨਾਨਕ ਮੁਕਤਿ ਭਏ ਹਰਿ ਰੰਗਿ ॥੮॥੯॥

पृ-४१६

आसा महला १॥

तनु बिनसै धनु का को कहीऐ ॥
बिनु गुर राम नामु कत लहीऐ ॥
राम नाम धनु सँगि सखाई ॥
अहिनिसि निरमलु हरि लिव लाई ॥१॥

राम नाम बिनु कवनु हमारा ॥
सुख दुख सम करि नामु न छोडउ आपे बखसि मिलावणहारा ॥१॥रहाउ ॥

कनिक कामनी हेतु गवारा ॥
दुबिधा लागे नामु विसारा ॥
जिसु तूँ बखसहि नामु जपाइ ॥
दूतु न लागि सकै गुन गाइ ॥२॥

हरि गुरु दाता राम गुपाला ॥
जिउ भावै तिउ राखु दइआला ॥
गुरमुखि रामु मेरै मन भाइआ ॥
रोग मिटे दुखु ठाकि रहाइआ॥३॥

अवरु न अउखधु तँत न मँता ॥
हरि हरि सिमरणु किलविख हँता ॥
तूँ आपि भुलावहि नामु विसारि ॥
तूँ आपे राखहि किरपा धारि ॥४॥

रोगु भरमु भेदु मनि दूजा ॥
गुर बिनु भरमि जपहि जपु दूजा ॥
आदि पुरख गुर दरस न देखहि ॥
विणु गुर सबदै जनमु कि लेखहि ॥५॥

देखि अचरजु रहे बिसमादि ॥
घटि घटि सुर नर सहज समाधि ॥
भरिपुरि धारि रहे मन माही ॥
तुम समसरि अवरु को नाही ॥६॥

जाकी भगति हेतु मुखि नामु ॥
सँत भगत की सँगति रामु ॥
बँधन तोरे सहिज धिआनु ॥
छूटै गुरमुखि हरि गुन गिआनु ॥७॥

ना जमदूत दूखु तिसु लागै ॥
जो जनु राम नामि लिव जागै ॥
भगति वछलु भगता हरि सँगि ॥
नानक मुकति भए हरि रँगि ॥८॥९॥

आसा महला -१

इस शब्द में गुरु जी हमें अपने उन्मत्त मन पर विजय पाने की राह दर्शाते हैं कि कैसे सांसारिक उलझनों में ना भटक कर प्रभु नाम की

सच्ची धन राशि को संचित करें जो केवल इस जन्म में ही काम न आयेगी, अपितु मृत्यु के पश्चात भी हमें जन्म-मरण के अनंत फेरों से मुक्ति दिलायेगी ।

वह कहते हैं - "जब भी तन का विनाश होता है कोई भी मनुष्य अपने जमा किये सांसारिक धन का स्वामी नहीं रहता, (क्योंकि मृत्यु के पश्चात वह धन उसके साथ नहीं जाता)।एक विश्वसनीय मित्र की भाँति केवल राम नाम का धन ही मरने के उपरांत भी साथ रहता है । परन्तु गुरु के मार्गदर्शन के बिना राम नाम धन प्राप्त नहीं किया जा सकता। पवित्र है वह व्यक्ति जो दिन और रात ईश्वर में अपना मन लगाता है। "(1)

इस प्रकार गुरु जी स्वयं को कहते हैं और हमें भी परामर्श देते हैं -"ईश्वर के नाम के अतिरिक्त कौन हमारा सहायक है, इसलिये सुख दुख को समान रूप से मानते हुये मैं राम नाम को नहीं छोड़ूँगा, मुझे पूर्ण विश्वास है कि अँत में (जीवों को) स्वयं ही क्षमा करते हुए प्रभु उन्हें अपने साथ मिला लेते हैं । (१-विराम)

संसार की ओर से प्रभु को सम्बोधित करते हुये गुरु जी आगे कहते हैं -"हे प्रभु, मूर्ख और गँवार लोग सांसारिक धन अथवा स्त्री के मोह की दुविधा में रमें तेरा नाम बिसार देते हैं । (परन्तु हे प्रभु, वह बिचारे असहाय हैं, क्योंकि) जिस को तुम क्षमा कर अपने नाम का जाप करवाते हो, केवल उसके पास यमदूत नहीं आ सकते, क्योंकि वह तुम्हारे गुण गान करता रहता है "।(२)

गुरु की शरण में जाने से क्या हुया, इस अनुभव को हमसे साझा करते हुये गुरु जी कहते हैं -"(हे मेरे मित्रो), गुरु की कृपा से प्रभु के नाम ने मेरे मन को आनंद प्रदान किया और फिर मैंने प्रभु से प्रार्थना करते हुए कहा, हे' ईश्वर, हे गुरु, हे दाता, विश्व के स्वामी, हे दयालु जैसे तुम चाहो, मुझे रखो । तत्पश्चात मेरे सब रोग समाप्त हो गये और दुख संताप ठीक हो गये "।(३)

ईश्वर की शक्ति पर पूर्ण विश्वास रखते हुये गुरु जी कहते हैं -"और कोई भी औषधि अथवा तंत्र मंत्र नहीं है, केवल हरि नाम का स्मरण व ध्यान ही सब प्रकार के दुख और पाप का हरण करता है । किन्तु, हे प्रभु केवल तुम्हीं हो जो मनुष्य को अपने नाम से भटकाते हो और वह तुम्हारे नाम को बिसार देता है । परन्तु तुम्हीं अपनी कृपा करके उसे दुष्कर्मों से दूर रख कर जन्म मरण के दुखों से उसकी रक्षा करते हो "। (४)

गुरु के मार्गदर्शन की आवश्यकता पर ज़ोर देते हुये गुरु जी कहते हैं -"(हे मेरे मित्रो), गुरु के मार्गदर्शन के बिना जो लोग सांसारिक धन माल अथवा सत्ता की पूजा करते हैं, वह प्रभु से दूर होकर मन के भ्रम एवं रोगों से ग्रसित रहते हैं । जो गुरु के दर्शन नहीं करते वह कभी परम प्रभु से नहीं मिल सकते ।इस प्रकार गुरु की वाणी का पालन किये बिना उनके जीवन की सार्थकता क्या है "।(५)

प्रभु के विस्तार पर गुरु जी आश्चर्यचकित होते हुये कहते हैं -"हे प्रभु, तुम्हारे अचंभित करने वाले रूप ने मुझे चकित कर दिया है, तुम प्रत्येक हृदय में तथा सभी देवता तथा मनुष्य के मन में सहज प्रकार से स्थापित हो । तुम पूर्ण रूप से सबके मन में बिराजमान हो, तुम्हारे समान और कोई दूसरा नहीं है "।(६)

ईश्वर को क्यों और कहाँ अधिक सरलता से पा सकते हैं, इस पर गुरु जी हमें आगे कहते हैं - "(हे मेरे मित्रो), ईश्वर को उन संतों तथा भक्तों की संगति में पाया जा सकता है जो सदा उसके ध्यान में रहते हुए मुख से उसका नाम जपते हैं ।क्योंकि ईश्वर के सहज ध्यान में सदा रहने से उन्होंने स्वयं को सांसारिक बंधनों से तोड़ लिया है । गुरु के सच्चे शिष्य गुरु के द्वारा दैवी ज्ञान पाकर (सांसारिक)बंधनों से मुक्त हो जाते हैं "।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं -(हे मेरे मित्रो), जो मनुष्य ईश्वर के ध्यान में रहता है, वह जाग जाता है (अर्थात सांसारिक प्रलोभनों से चौकन्ना रहता है), इसलिये उसे कोई दुख अथवा यमदूत का भय नहीं रहता । चूँकि ईश्वर अपने भक्तों से प्रेम करते हैं और सदा उनके साथ रहते हैं, सो, हे नानक, प्रभु के रंग में रहने से भक्त जन मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं "।(८-९)

इस शब्द का संदेश यह है कि सांसारिक धन माल के पीछे भागने की अपेक्षा, हमें प्रभु नाम रूपी धन का संग्रह करना चाहिये जो हमारे साथ सब जगह सदा रहेगा और हमारा उद्धार करेगा।ईश्वर नाम रूपी धन को जमा करने के लिये हमें प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) से मार्गदर्शन प्राप्त करने का आशीर्वाद दें ।

ਪੰਨਾ ੪੧੭

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਕਹਾ ਸੁ ਖੇਲ ਤਬੇਲਾ ਘੋੜੇ ਕਹਾ ਭੇਰੀ ਸਹਨਾਈ ॥
ਕਹਾ ਸੁ ਤੇਗਬੰਦ ਗਾਡੇਰੜਿ ਕਹਾ ਸੁ ਲਾਲ ਕਵਾਈ ॥
ਕਹਾ ਸੁ ਆਰਸੀਆ ਮੁਹ ਬੰਕੇ ਐਥੈ ਦਿਸਹਿ ਨਾਹੀ ॥੧॥

ਇਹੁ ਜਗੁ ਤੇਰਾ ਤੂ ਗੋਸਾਈ ॥
ਏਕ ਘੜੀ ਮਹਿ ਥਾਪਿ ਉਥਾਪੇ ਜਰੁ ਵੰਡਿ ਦੇਵੈ ਭਾਂਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕਹਾਂ ਸੁ ਘਰ ਦਰ ਮੰਡਪ ਮਹਲਾ ਕਹਾ ਸੁ ਬੰਕ ਸਰਾਈ ॥
ਕਹਾਂ ਸੁ ਸੇਜ ਸੁਖਾਲੀ ਕਾਮਣਿ ਜਿਸੁ ਵੇਖਿ ਨੀਦ ਨ ਪਾਈ ॥
ਕਹਾ ਸੁ ਪਾਨ ਤੰਬੋਲੀ ਹਰਮਾ ਹੋਈਆ ਛਾਈ ਮਾਈ ॥੨॥

ਇਸੁ ਜਰ ਕਾਰਣਿ ਘਣੀ ਵਿਗੁਤੀ ਇਨਿ ਜਰ ਘਣੀ ਖੁਆਈ ॥
ਪਾਪਾ ਬਾਝਹੁ ਹੋਵੈ ਨਾਹੀ ਮੁਇਆ ਸਾਥਿ ਨ ਜਾਈ ॥
ਜਿਸ ਨੋ ਆਪਿ ਖੁਆਏ ਕਰਤਾ ਖੁਸਿ ਲਏ ਚੰਗਿਆਈ ॥੩॥

ਕੋਟੀ ਹੂ ਪੀਰ ਵਰਜਿ ਰਹਾਏ ਜਾ ਮੀਰੁ ਸੁਣਿਆ ਧਾਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੪੧੮

ਥਾਨ ਮੁਕਾਮ ਜਲੇ ਬਿਜ ਮੰਦਰ ਮੁਛਿ ਮੁਛਿ ਕੁਇਰ ਰੁਲਾਇਆ ॥
ਕੋਈ ਮੁਗਲੁ ਨ ਹੋਆ ਅੰਧਾ ਕਿਨੈ ਨ ਪਰਚਾ ਲਾਇਆ ॥੪॥

ਮੁਗਲ ਪਠਾਣਾ ਭਈ ਲੜਾਈ ਰਣ ਮਹਿ ਤੇਗ ਵਗਾਈ ॥
ਓਨ੍ਹੀ ਤੁਪਕ ਤਾਣਿ ਚਲਾਈ ਓਨ੍ਹੀ ਹਸਤਿ ਚਿੜਾਈ ॥
ਜਿਨ੍ਹ ਕੀ ਚੀਰੀ ਦਰਗਹ ਪਾਟੀ ਤਿਨ੍ਹਾ ਮਰਣਾ ਭਾਈ ॥੫॥

ਇਕ ਹਿੰਦਵਾਣੀ ਅਵਰ ਤੁਰਕਾਣੀ ਭਟਿਆਣੀ ਠਕੁਰਾਣੀ ॥
ਇਕਨ੍ਹਾ ਪੇਰਣ ਸਿਰ ਖੁਰ ਪਾਟੇ ਇਕਨ੍ਹਾ ਵਾਸੁ ਮਸਾਣੀ ॥
ਜਿਨ੍ਹ ਕੇ ਬੰਕੇ ਘਰੀ ਨ ਆਇਆ ਤਿਨ੍ਹ ਕਿਉ ਰੈਣਿ ਵਿਹਾਣੀ ॥੬॥

ਆਪੇ ਕਰੇ ਕਰਾਏ ਕਰਤਾ ਕਿਸ ਨੋ ਆਖਿ ਸੁਣਾਈਐ ॥
ਦੁਖੁ ਸੁਖੁ ਤੇਰੈ ਭਾਣੈ ਹੋਵੈ ਕਿਸ ਥੈ ਜਾਇ ਰੂਆਈਐ ॥
ਹੁਕਮੀ ਹੁਕਮਿ ਚਲਾਏ ਵਿਗਸੈ ਨਾਨਕ ਲਿਖਿਆ ਪਾਈਐ ॥੭॥੧੨॥

पृ-४१७

आसा महला १॥

कहा सु खेल तबेला घोड़े कहा भेरी सहनाई ॥
कहा सु तेगबँद गाडेरड़ि कहा सु लाल कवाई ॥
कहा सु आरसीया मुह बँके ऐथै दिसहि नाही ॥१॥

इहु जगु तेरा तू गोसाई ॥
एक घड़ी महि थापि उथापे जरु वँडि देवै भांई ॥१॥ रहाउ ॥

कहां सु घर दर मंडप महला कहा सु बंक सराई ॥
कहां सु सेज सुखाली कामणि जिसु वेखि नीद न पाई ॥
कहा सु पान तंबोली हरमा होईआ छाई माई ॥२॥

इसु जर कारणि घणी विगुती इनि जर घणी खुआई ॥
पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई ॥
जिस नो आपि खुआए करता खुसि लए चँगिआई ॥३॥

कोटी हू पीर वरजि रहाए जा मीरु सुणिआ धाइआ ॥

पृ- ४१८

थान मुकाम जले बिज मँदर मुछि मुछि कुइर रुलाइआ ॥
कोई मुगलु न होआ अँधा किनै न परचा लाइआ ॥४॥

मुगल पठाणा भई लड़ाई रण महि तेग वगाई ॥
ओनी तुपक ताणि चलाई ओनी हसति चिड़ाई ॥
जिन् की चीरी दरगह पाटी तिना मरणा भाई ॥५॥

इक हिँदवाणी अवर तुरकाणी भटिआणी ठकुराणी ॥
इकना पेरण सिर खुर पाटे इकना वासु मसाणी ॥
जिन् के बँके घरी न आइआ तिन् किउ रैणि विहाणी ॥६॥

आपे करे कराए करता किस नो आखि सुणाईऐ ॥
दुखु सुखु तेरै भाणै होवै किस थै जाइ रूआईऐ ॥
हुकमी हुकमि चलाए विगसै नानक लिखिआ पाइऐ ॥७॥१२॥

आसा महला – १

इस शब्द में गुरु जी सैदपुर गाँव पर बाबर के आक्रमण के फलस्वरूप मृत्यु तथा विनाश के भयावह सत्य का चित्रण कर रहे हैं । जो गाँव जीवन की व्यस्तता से भरपूर रहता था, उसकी सुनसान तथा बरबाद स्थिति को देखकर गुरु जी का दयावान हृदय इस विनाश के मूल कारणों को विचारने पर बाध्य हुआ । अतः यहाँ वह इस विनाश के कुछ कारण ढूँढने के प्रयत्न करते हैं ।

सर्वप्रथम वह आक्रमण से पूर्व गाँव के सक्रिय सामाजिक जीवन की परिकल्पना करते हुये पूछते हैं -"वह समस्त खेल-कूद, अस्तबल, घोड़े, शहनाई और नगाड़े कहाँ हैं ? कहाँ हैं वह कमर से तलवारें लटकाये सिपाही और उनकी लाल रंग की वर्दियाँ ? कहाँ हैं वह आरसी जैसे चमकते चेहरे ? आज कोई भी यहाँ दिखाई नहीं दे रहा है "।(१)

इस निष्कर्ष के पश्चात कि साधारणतया सब कुछ ईश्वर की इच्छा से ही होता है, गुरु जी कहते हैं-" हे प्रभु यह संसार तुम्हारा है, तुम इसके स्वामी हो । क्षण भर में तुम इसका सृजन करते हो तथा विनाश करते हो, धन-सम्पदा के कारण भाइयों में बँटवारा करा देते हो "।(१-विराम)

फिर से उस विनाशकारी दृश्य तथा स्त्रियों की दुर्दशा को देखते हुये गुरु जी प्रश्न करते हैं-"वह सब घर, दरवाज़े, हवेलियाँ, महल और भव्य सराय कहाँ हैं ? कहाँ हैं वह सब सुंदर नववधू अपनी नरम सेजों पर से, जिन्हें देखने मात्र से कोई सो नहीं सकता ? कहाँ हैं वह पान और उन्हें बेचने वाले तम्बोली, हरम तथा महल में रहने वाली सब अदृश्य हो गयी हैं, अर्थात सब कुछ छाया की तरह लुप्त हो गया है "। (२)

इन त्रासदियों के कारणों पर विचारते हुये गुरु जी कहते हैं -"अधिकतर सांसारिक धन-सम्पदा ही विनाश का कारण है, यह धन-माल ही है जिसने बहुत सारे संसार को अपमानित किया है । धन का यह अद्भुत खेल-कि यह पाप करमों को किये बिना संग्रह नही होता, परन्तु मृत्यु के समय यह साथ नहीं जाता । (पर मनुष्य बिचारा कितना असहाय भी है क्योंकि) ईश्वर जिसे स्वयं नाश करना चाहता है, उसके गुण वह पहले ही हर लेता है "। (३)

आक्रमण से पूर्व धर्म गुरुओं द्वारा यह दावे किये गये थे कि वह आक्रमणकारियों को अपनी शक्तियों से निरस्त कर देंगे, इस पर विचार करते हुये गुरु जी कहते हैं -"जब पठान राजाओं ने सुना कि बाबर आक्रमण करने वाला है उन्होंने लाखों मुसलमान संतों को कहीं जाने से मना कर दिया, (ताकि वह अपनी प्रार्थनाओं एवं जादू-टोटकों से आक्रमणकारियों को निरस्त कर सकें, परन्तु फिर भी आक्रमण हुया जिसमें इतनी मृत्यु तथा विनाश हुया) पक्के बने घर, भवन और मंदिर आदि जला दिये गये, राजकुमारों के टुकड़े टुकड़े काट कर मिट्टी में मिला दिये गये । परन्तु कोई भी मुग़ल आक्रमणकारी अंधा नहीं हुया और कोई भी संत साधु अपने मंत्र, जाप अथवा पाठ का जादू उन पर ना चला सका "।(४)

युद्ध कैसे हुया इस पर गुरु जी कहते हैं -" मुग़ल और पठानों के बीच युद्ध के मैदान में दोनों ओर से तलवारें चलीं । मुग़लों ने बंदूक़ों से निशानें लगाये, तथा पठानों ने अपने हाथियों से आक्रमण किया । परन्तु, हे मेरे भाई, जिनके भाग्य में फटा हुया पत्र हो (मृत्यु लिखी हो), उन्हें तो मरना ही है "। (५)

योद्धाओं के परिवारों की दशा और विजयी मुग़ल आक्रमणकारियों के द्वारा किये गये अत्याचारों पर गुरु जी कहते हैं -" पीड़ित स्त्रियों में कुछ उच्चकुल की हिंदू, कुछ मुस्लिम रानियाँ, कुछ राजपूतों की पत्नियाँ ठकुरानियाँ तथा भाट स्त्रियाँ थीं । उनमें कुछ के सिर से पैर तक कपड़े फाड़ दिये गये और कुछ की हत्या कर शमशानों में वास दे दिया । और कुछ जिनके सजीले पति घर नहीं लौटे, उन्हें ही पता है कि उनकी रात्रि कैसे व्यतीत हुयी "। (६)

इस त्रासदी और उसके कारणों पर विचारने के पश्चात निर्णय देते हुये गुरु जी कहते हैं -" (हे मेरे मित्रो) इस हृदय विदारक घटना का वर्णन हम किस से जाकर करें ? क्योंकि यह तो सृजनकर्ता ही है, जो (सब कुछ) करता है, तथा दूसरों से करवाता है (जो वह चाहता है)। (हे प्रभु, समस्त) दुख और सुख तेरी इच्छानुसार ही होते हैं, सो हम किसके पास जाकर रोयें अथवा शिकायत करें ? हे नानक, ईश्वर अपनी इच्छा का स्वामी, संसार को अपने अनुसार चला रहा है और सन्तुष्ट है कि उसकी इच्छा सब ओर व्याप्त है और जो हमारे भाग्य में लिखा है उसे हम प्राप्त कर रहे हैं "। (७-१२)

इस शब्द का संदेश यह है कि यद्यपि बहुत वीभत्स त्रासदियाँ लोगों अथवा देशों के साथ होती हैं, फिर भी हमें ऐसी स्थितियों में अपना मानसिक सन्तुलन नही गँवाना चाहिये । बल्कि, हमें इसे ईश्वर की इच्छा मान कर स्वीकार करना चाहिये । हमें अपने अतीत के करमों का विश्लेषण करके विचार करना चाहिये कि ऐसी त्रासदी के क्या कारण हैं । ईश्वर से प्रार्थना करें कि वह हम पर दया करे और अतीत में हुयी हमारी भूलों को क्षमा करे ।

ਪੰਨਾ ੪੧੯

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਚਲੇ ਚਲਣਹਾਰ ਵਾਟ ਵਟਾਇਆ ॥
ਧੰਧੁ ਪਿਟੇ ਸੰਸਾਰੁ ਸਚੁ ਨ ਭਾਇਆ ॥੧॥

ਕਿਆ ਭਵੀਐ ਕਿਆ ਢੂਢੀਐ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਦਿਖਾਇਆ ॥
ਮਮਤਾ ਮੋਹੁ ਵਿਸਰਜਿਆ ਅਪਨੈ ਘਰਿ ਆਇਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਚਿ ਮਿਲੈ ਸਚਿਆਰੁ ਕੂੜਿ ਨ ਪਾਈਐ ॥
ਸਚੇ ਸਿਉ ਚਿਤੁ ਲਾਇ ਬਹੁੜਿ ਨ ਆਈਐ ॥੨॥

ਮੋਇਆ ਕਉ ਕਿਆ ਰੋਵਹੁ ਰੋਇ ਨ ਜਾਣਹੂ ॥
ਰੋਵਹੁ ਸਚੁ ਸਲਾਹਿ ਹੁਕਮੁ ਪਛਾਣਹੂ ॥੩॥

ਹੁਕਮੀ ਵਜਹੁ ਲਿਖਾਇ ਆਇਆ ਜਾਣੀਐ ॥
ਲਾਹਾ ਪਲੈ ਪਾਇ ਹੁਕਮੁ ਸਿਞਾਣੀਐ ॥੪॥

ਪੰਨਾ ੪੨੦

ਹੁਕਮੀ ਪੈਧਾ ਜਾਇ ਦਰਗਹ ਭਾਣੀਐ ॥
ਹੁਕਮੇ ਹੀ ਸਿਰਿ ਮਾਰ ਬੰਦਿ ਰਬਾਣੀਐ ॥੫॥

ਲਾਹਾ ਸਚੁ ਨਿਆਉ ਮਨਿ ਵਸਾਈਐ ॥ਲਿਖਿਆ ਪਲੈ ਪਾਇ ਗਰਬੁ
ਵਞਾਈਐ ॥੬॥

ਮਨਮੁਖੀਆ ਸਿਰਿ ਮਾਰ ਵਾਦਿ ਖਪਾਈਐ ॥
ਠਗਿ ਮੁਠੀ ਕੂੜਿਆਰ ਬੰਨ੍ਹਿ ਚਲਾਈਐ ॥੭॥

ਸਾਹਿਬੁ ਰਿਦੈ ਵਸਾਇ ਨ ਪਛੋਤਾਵਹੀ ॥
ਗੁਨਹਾਂ ਬਖਸਣਹਾਰੁ ਸਬਦੁ ਕਮਾਵਹੀ ॥੮॥

ਨਾਨਕੁ ਮੰਗੈ ਸਚੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਘਾਲੀਐ ॥
ਮੈ ਤੁਝ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਇ ਨਦਰਿ ਨਿਹਾਲੀਐ ॥੯॥੧੬॥

पृ-४१९

आसा महला १॥

चले चलणहार वाट वटाइआ ॥
धँधु पिटे सँसारु सचु न भाइआ ॥१॥

किआ भवीऐ किआ ढूढीऐ गुर सबदि दिखाइआ ॥
ममता मोहु विसरजिआ अपनै घरि आइआ ॥१॥रहाउ ॥

सचि मिलै सचिआरु कूड़ि न पाईऐ ॥
सचे सिउ चितु लाइ बहुड़ि न आईऐ ॥२॥

मोइआ कउ किआ रोवहु रोइ न जाणहू ॥
रोवहु सचु सलाहि हुकमु पछाणहू ॥३॥

हुकमी वजहु लिखाइ आइआ जाणीऐ ॥
लाहा पलै पाइ हुकमु सिंञाणीऐ ॥४॥

पृ-४२०

हुकमी पैधा जाइ दरगह भाणीऐ ॥
हुकमे ही सिरि मार बँदि रबाणीऐ ॥५॥

लाहा सचु निआउ मनि वसाइऐ ॥लिखिआ पलै पाइ गरबु
वंञाइऐ ॥६॥

मनमुखीआ सिरि मार वादि खपाईऐ ॥
ठगि मुठी कूड़िआर बँन्हि चलाईऐ ॥७॥

साहिब रिदै वसाइ न पछोतावही ॥
गुनहां बखसणहारु सबदु कमावही ॥८॥

नानकु मँगै सचु गुरमुखि घालीऐ ॥
मै तुझ बिनु अवरु न कोइ नदरि निहालीऐ ॥९॥१६॥

आसा महला – १

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि हमारे कौन से गुण हमें शांति तथा मुक्ति प्रदान कर सकते हैं और कौनसे अवगुण हमें निरंतर दुख और जनम मरण के चक्करों में डाल सकते हैं ।

सर्वप्रथम गुरु जी मनुष्य के इस संसार से विदा होने पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं - "(हे मेरे मित्रो तुम्हें अपने प्रियजनों की मृत्यु होने पर रोने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इस संसार से नाशवान मनुष्य की विदाई एक उस साथी यात्री की भाँति है, जो थोड़े समय के बाद) रास्ता बदल कर दूसरी ओर चला जाता है (अपने पूर्व भाग्यानुसार) । ऐसे समय पर संसार के लोग झूठ ही रोना पीटना करते हैं, क्योंकि वह सत्य को (प्रभु ने सब प्रियजनों को विभिन्न जीवन काल प्रदान किया है) स्वीकार नहीं करते हैं "।(१)

परन्तु गुरु जी जानते हैं कि हमारे जीवन का वास्तविक ध्येय सदा के लिये ईश्वर से पुर्नमिलन का है, अत: बहुत लोग प्रभु को विभिन्न स्थानों पर, जैसे जंगलों, पर्वतों एवं तीर्थों आदि में खोजते हैं, इस पर गुरु जी पूछते हैं -"(हे मेरे मित्रो) क्यों हम जगह जगह प्रभु की खोज में भटकते हैं, जबकि गुरु के कथनानुसार प्रभु हमारे अपने मन के अंदर हैं ।इसलिये अपने सांसारिक मोह तथा स्वयं को भुलाकर मेरा मन अपने घर में वापिस आ गया है,(शरीर में जहाँ पर ईश्वर का वास है ") । (१- विराम)

गुरु जी अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर कहते हैं -" (हे मेरे मित्रो), सच्चे प्रभु की प्राप्ति केवल सच के मार्ग पर चल कर ही होती है वह झूठ पर चल कर नहीं पाये जा सकते । यदि हम अपना मन सच्चे प्रभु में लगा लें तब हमें इस संसार में फिर से नहीं आना होगा "। (२)

अतः, गुरु जी अब उन लोगों को सम्बोधित करते हैं जो अपने सगे भाइयों सम्बंधियों की मृत्यु से विक्षिप्त रहते हैं । वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो) आप अपने बिछुड़ों के लिये क्यों विलाप करते हो, आपके रोने का वास्तविक कारण क्या है, पता नहीं है । (यदि आपको रोना ही है, तब) ईश्वर की स्तुति करते हुये विलाप करो (और विचार करो कि प्रभु से तुम्हारे बिछुड़ने का क्या कारण है, अभी तुम केवल) प्रभु की इच्छा या निर्देश का पालन करो "।(३)

गुरु जी अपने परामर्श को आगे बढ़ाते हुये कहते हैं -"(हे भाइयों), इस यथार्थ को समझो कि प्रत्येक प्राणी इस संसार में पूर्व निर्धारित ढंग से आया है (अर्थात उसके जीवन के श्वासों की गिनती पहले से ही पक्की है) । यदि कोई ईश्वर की इच्छा तथा निर्देश को समझता है तो वह इस मानव जीवन में लाभान्वित रहता है "।(४)

प्रभु की इच्छा या निर्देश कितने शाश्वत हैं इस पर गुरु जी कहते हैं -"(हे मेरे मित्रो), प्रभु की इच्छानुसार ही कोई प्राणी सांसारिक मान सम्मान का चोला पहन कर उसके दरबार में जाता है । और यह भी उसी का निर्देश है कि किसी को (अपने कुकर्मों की) मार अपने सिर पर सहनी पड़ती है तथा (विभिन्न देहों के रूप में) दैवी कारागार में बंद रहता है "। (५)

किन्तु प्रभु के न्याय के विरुद्ध कुछ बोलने से सचेत करते हुये गुरु जी हमें परामर्श देते हैं - "(हे मेरे मित्रो) हमारे मन में यह पक्का विश्वास होना चाहिये कि प्रभु का न्याय सत्य पर आधारित है और इसी में जीवन का लाभ है । हमें अपने अहंकार का नाश करके यह समझना चाहिये कि (पूर्व जन्मों के करमों के फलस्वरुप) जो भाग्य में लिखा है वही प्राप्त होगा "।(६)

अत: गुरु जी उन आत्मा रुपी वधुओं को विशेष रुप से कहते हैं, जो गुरु को मार्गदर्शक ना मान कर अपने मन के वशीभूत रहती हैं - " वह आत्मा रुपी वधू जो अपने मन के वश में रहती है, जन्म - मरण की पीड़ा की मार अपने सिर पर सहती है और व्यर्थ के जंजालों से दुखी रहती है । ऐसी आत्मा रुपी झूठी वधू अपने झूठे बँधनों से ठगी जाती है, तथा इन ज़ंजीरों में बंधी भटक जाती है "।(७)

परन्तु जो प्राणी गुरु के परामर्श पर चल कर प्रभु का स्मरण करते हैं उनके लिये गुरु जी कहते हैं -"(आत्मा रुपी वधू) जिसके मन में प्रभु का वास है, वह बाद में पशचाताप नहीं करती क्योंकि वह निष्ठा से गुरु के परामर्श को मानती है और ईश्वर उसके पापों को क्षमा कर देते हैं "।(८)

अंत में गुरु जी हमें बताते हैं कि समस्त दुखों से बचने के लिये प्रभु से क्या माँगना चाहिये । उनका कहना है -"(हे प्रभु) नानक तेरे सच्चे नाम की भीख के याचक हैं, यदि तुम दयालु हो तो मैं गुरु की शरण में जाकर यत्न कर सकता हूँ ।क्योंकि हे प्रभु, तुम्हारे अतिरिक्त मेरा और कोई दूसरा नहीं है, अत: कृपा करके मुझे अपनी दयादृष्टि से कृतार्थ करो" ।(९-१६)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम जन्म मरण के अनंत फेरों से मुक्त होना चाहते हैं तो हमें झूठ, आलस्य और अपने अभिमान का त्याग कर देना चाहिये तथा गुरु के परामर्श को मानते हुये ईश्वर की इच्छा तथा उसके नाम को अपने मन में सच्चाई से ग्रहण करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੪੨੧

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਮਨੁ ਰਾਤਉ ਹਰਿ ਨਾਇ ਸਚੁ ਵਖਾਣਿਆ ॥
ਲੋਕਾ ਦਾਕਿਆ ਜਾਇ ਜਾ ਤੁਧੁ ਭਾਣਿਆ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੪੨੨

ਜਉ ਲਗੁ ਜੀਉ ਪਰਾਣ ਸਚੁ ਧਿਆਈਐ ॥
ਲਾਹਾ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਇ ਮਿਲੈ ਸੁਖੁ ਪਾਈਐ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਚੀ ਤੇਰੀ ਕਾਰ ਦੇਹਿ ਦਇਆਲ ਤੂੰ ॥
ਹਉ ਜੀਵਾ ਤੁਧੁ ਸਾਲਾਹਿ ਮੈ ਟੇਕ ਅਧਾਰੁ ਤੂੰ ॥੨॥

ਦਰਿ ਸੇਵਕੁ ਦਰਵਾਨੁ ਦਰਦੁ ਤੂੰ ਜਾਣਹੀ ॥
ਭਗਤਿ ਤੇਰੀ ਹੈਰਾਨੁ ਦਰਦੁ ਗਵਾਵਹੀ ॥੩॥

ਦਰਗਹ ਨਾਮੁ ਹਦੂਰਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਣਸੀ ॥
ਵੇਲਾ ਸਚੁ ਪਰਵਾਣੁ ਸਬਦੁ ਪਛਾਣਸੀ ॥੪॥

ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਕਰਿ ਭਾਉ ਤੋਸਾ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸੇਇ ॥
ਮਨਹੁ ਛੋਡਿ ਵਿਕਾਰ ਸਚਾ ਸਚੁ ਦੇਇ ॥੫॥

ਸਚੇ ਸਚਾ ਨੇਹੁ ਸਚੈ ਲਾਇਆ ॥
ਆਪੇ ਕਰੇ ਨਿਆਉ ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਇਆ ॥੬॥

ਸਚੇ ਸਚੀ ਦਾਤਿ ਦੇਹਿ ਦਇਆਲੁ ਹੈ ॥
ਤਿਸੁ ਸੇਵੀ ਦਿਨੁ ਰਾਤਿ ਨਾਮੁ ਅਮੋਲੁ ਹੈ ॥੭॥

ਤੂੰ ਉਤਮੁ ਹਉ ਨੀਚੁ ਸੇਵਕੁ ਕਾਂਢੀਆ ॥
ਨਾਨਕ ਨਦਰਿ ਕਰੇਹੁ ਮਿਲੈ ਸਚੁ ਵਾਂਢੀਆ ॥੮॥੨੧॥

पृ-४२१

आसा महला १॥

मनु रातउ हरि नाइ सचु वखाणिआ ॥
लोका दाकिआ जाइ जा तुधु भाणिआ ॥१॥

पृ-४२२

जउ लगु जीउ पराण सचु धिआइऐ ॥
लाहा हरि गुण गाइ मिलै सुखु पाईऐ ॥१॥ रहाउ ॥

सची तेरी कार देहि दइआल तूँ ॥
हउ जीवा तुधु सालाहि मै टेक अधारु तूँ ॥२॥

दरि सेवकु दरवानु दरदु तूँ जाणही ॥
भगति तेरी हैरानु दरदु गवावही ॥३॥

दरगह नामु हदूरि गुरमुखि जाणसी ॥
वेला सचु परवाणु सबदु पछाणसी ॥४॥

सतु सँतोखु करि भाउ तोसा हरि नामु सेइ ॥
मनहु छोडि विकार सचा सचु देइ ॥५॥

सचे सचा नेहु सचै लाइआ ॥
आपे करे निआउ जो तिसु भाइआ ॥६॥

सचे सची दाति देहि दइआलु है ॥
तिसु सेवी दिनु राति नामु अमोलु है ॥७॥

तूँ उतमु हउ नीचु सेवकु कांढीआ ॥
नानक नदरि करेहु मिलै सचु वांढीआ ॥८॥२१॥

आसा महला – १

इस शब्द में गुरु जी हमें समझाते हैं कि किस प्रकार प्रभु नाम के उपहार को पाने के लिये हमें अति विनम्र भाव से प्रार्थना करने की ज़रूरत है, तथा कैसे हम प्रभु में लीन हो सकते हैं।

शब्द के आरंभ में वह यह इंगित करते हैं कि प्रभु अथवा उसके नाम के प्रेम में लीन होते समय हमें अन्य लोगों के प्रहास एवं आलोचना की परवाह नहीं करनी चाहिये। अत: उनका कहना है- " (हे प्रभु) जिस किसी का भी मन तेरे प्रेम में रमा हुआ है, वह सत्य का ही वर्णन (प्रभु के गुणों का) करता है, यदि वह मनुष्य तुम्हें मनभावन लगता है तो उसमें अन्य लोगों को क्या हानि है ? (तो वह क्यों जलन प्रतीत करते हैं और क्यों उस भक्त को उनकी आलोचना की परवाह होनी चाहिए ?) (१)

इसलिये गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे मित्रो) जब तक हम साँस ले रहे हैं, तब तक उस सच्चे प्रभु के ध्यान में (बिना किसी भय के) मग्न रहना चाहिये। क्योंकि हरि के गुण गाने से लाभ होता है और सुख शांति प्राप्त होती है "। (१-विराम)

अत: अपने लिये भी गुरु जी विनम्रता से ईश्वर को कहते हैं " हे प्रभु, वास्तव में ही तेरी सेवा लाभदायक है, हे मेरे दयालु स्वामी मुझे तुम यही आशीर्वाद दो। (मेरी यह इच्छा है) मैं तेरे गुण गान करके ही जीवित रहूँ, क्योंकि तुम्हीं मेरे विश्वास के आधार हो "। (२)

जब भी कोई सच्चे और विनम्र भाव से प्रभु के द्वार पर आता है तब उसको मिलने वाले अनेक आशीर्वादों का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं " हे प्रभु, जो भी कोई तेरे द्वार पर एक सच्चे सेवक या दरबान की भाँति आता है, तुम उसका दुख दर्द जानते हो। संसार चकित है कि जो सच्चे मन से तेरी भक्ति करता है, तुम उस मनुष्य के समस्त दुख संताप का निवारण कर देते हो " ।(३)

लोग ईश्वर को प्रसन्न करने के लिये कई कर्मकांड एवं अभ्यास करते हैं जिससे कि वह प्रभु के दरबार में स्वीकृत हो सकें। परन्तु वास्तव में प्रभु के दरबार में क्या स्वीकृत है, यह सच्चाई गुरु जी जानते हैं और कहते हैं " (हे मेरे मित्रो, केवल) गुरु का भक्त ही जान पाता है कि प्रभु के दरबार में उसके समक्ष केवल उसका नाम ही स्वीकृत है। इसलिये, जो मनुष्य गुरु के वचन को पहचानता और समझता है उसका जीवन प्रभु के दरबार में स्वीकृत है "। (४)

जो जन गुरु के परामर्श और शिक्षा को मान कर चलते हैं उनको गुरु अथवा प्रभु किस प्रकार के आशीर्वाद प्रदान करते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो, जिसको भी गुरु) प्रभु नाम का दान देते हैं, वही अपनी जीवन यात्रा सत्य, संतोष एवं प्रेम से सम्पूर्ण कर लेता है। वह मनुष्य अपने मन के विकार छोड़ देता है और अनंत प्रभु ऐसे व्यक्ति को अपने सच्चे नाम का दान देकर उसे धन्य कर देते हैं "। (५)

किन्तु, हम किसी भी प्रकार के अँहकार के भागी न बन सकें इस पर गुरु जी हमें याद दिलाते हैं " (हे मेरे मित्रो) अनंत प्रभु ने स्वयं ही किसी भी मनुष्य को अपने सच्चे प्रेम में लीन किया है, तथा जैसा उसे भाता है वह स्वयं ही वैसा न्याय करता है"।(६)

अब गुरु जी अपने लिये भी कहते हैं " वह जिसका नाम अनमोल है, मै दिन रात उस नाम का जाप करता हूँ, (और उससे कहता हूँ, हे अनंत प्रभु) तुम दयालु हो, कृपा करके तुम मुझे अपने अमर नाम के दान का आशीर्वाद दो"।(७)

अंत में गुरु जी अत्यंत विनम्र भाव से कहते हैं " हे प्रभु तुम अति उत्तम हो और मैं एक निम्न श्रेणी का प्राणी हूँ, तुम्हारा सेवक कहलाता हूँ इस लिये अपनी कृपा दृष्टि नानक पर रखो, जिससे वह एक बार फिर से तुम्हारे अनंत नाम को प्राप्त कर तुम्हारे में लीन हो सके "।(८-२१)

इस शब्द का संदेश यह है कि लोगों की बातों की परवाह न करते हुये हमें गुरु से मार्गदर्शन लेना चाहिये, तथा प्रभु के नाम का जाप दिन रात करना चाहिये। सत्य एवं संतोष से जीवन यापन करते हुये हमें प्रभु में लीन रहने, तथा जन्म मरण के फेरों से मुक्त होने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए।

ਪੰਨਾ ੪੨੩

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਆਸਾ ਆਸ ਕਰੇ ਸਭੁ ਕੋਈ ॥
ਹੁਕਮੈ ਬੂਝੈ ਨਿਰਾਸਾ ਹੋਈ ॥
ਆਸਾ ਵਿਚਿ ਸੁਤੇ ਕਈ ਲੋਈ ॥
ਸੋ ਜਾਗੈ ਜਾਗਾਵੈ ਸੋਈ ॥੧॥

ਸਤਿਗੁਰਿ ਨਾਮੁ ਬੁਝਾਇਆ ਵਿਣੁ ਨਾਵੈ ਭੁਖਨ ਜਾਈ ॥

ਪੰਨਾ ੪੨੪

ਨਾਮੇ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਅਗਨਿ ਬੁਝੈ ਨਾਮੁ ਮਿਲੈ ਤਿਸੈ ਰਜਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕਲਿ ਕੀਰਤਿ ਸਬਦੁ ਪਛਾਨੁ ॥
ਏਹਾ ਭਗਤਿ ਚੂਕੈ ਅਭਿਮਾਨੁ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਿਐ ਹੋਵੈ ਪਰਵਾਨੁ ॥
ਜਿਨਿ ਆਸਾ ਕੀਤੀ ਤਿਸ ਨੋ ਜਾਨੁ ॥੨॥

ਤਿਸੁ ਕਿਆ ਦੀਜੈ ਜਿ ਸਬਦੁ ਸੁਣਾਏ ॥
ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਨਾਮੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਏ ॥
ਇਹੁ ਸਿਰੁ ਦੀਜੈ ਆਪੁ ਗਵਾਏ ॥
ਹੁਕਮੈ ਬੂਝੇ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਪਾਏ ॥੩॥

ਆਪਿ ਕਰੇ ਤੈ ਆਪਿ ਕਰਾਏ ॥
ਆਪੇ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਵਸਾਏ ॥
ਆਪਿ ਭੁਲਾਵੈ ਆਪਿ ਮਾਰਗਿ ਪਾਏ ॥
ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਸਚਿ ਸਮਾਏ ॥੪॥

ਸਚਾ ਸਬਦੁ ਸਚੀ ਹੈ ਬਾਣੀ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਆਖਿ ਵਖਾਣੀ ॥
ਮਨਮੁਖਿ ਮੋਹਿ ਭਰਮਿ ਭੋਲਾਣੀ ॥
ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਸਭ ਫਿਰੈ ਬਉਰਾਣੀ ॥੫॥

ਤੀਨਿ ਭਵਨ ਮਹਿ ਏਕਾ ਮਾਇਆ ॥
ਮੂਰਖਿ ਪੜਿ ਪੜਿ ਦੂਜਾ ਭਾਉ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ॥
ਬਹੁ ਕਰਮ ਕਮਾਵੈ ਦੁਖੁ ਸਬਾਇਆ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਿ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥੬॥

ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਮੀਠਾ ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰਿ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਭੋਗੇ ਹਉਮੈ ਮਾਰਿ ॥
ਸਹਜਿ ਅਨੰਦਿ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰਿ ॥
ਨਾਮਿ ਰਤੇ ਸਦਾ ਸਚਿ ਪਿਆਰਿ ॥੭॥

ਹਰਿ ਜਪਿ ਪੜੀਐ ਗੁਰ ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰਿ ॥
ਹਰਿ ਜਪਿ ਪੜੀਐ ਹਉਮੈ ਮਾਰਿ ॥
ਹਰਿ ਜਪੀਐ ਭਇ ਸਚਿ ਪਿਆਰਿ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਗੁਰਮਤਿ ਉਰ ਧਾਰਿ ॥੮॥੩॥੨੫॥

पृ-४२३

आसा महला ३॥

आसा आस करे सभु कोई ॥
हुकमै बूझै निरासा होई ॥
आसा विचि सुते कई लोई ॥
सो जागै जागावै सोई ॥१॥

सतिगुरि नामु बुझाइआ विणु नावै भुखन जाई ॥

पृ-४२४

नामे त्रिसना अगनि बुझै नामु मिलै तिसै रजाई ॥१॥रहाउ ॥

कलि कीरति सबदु पछानु ॥
एहा भगति चूकै अभिमानु ॥
सतिगुरु सेविऐ होवै परवानु ॥
जिनि आसा कीती तिस नो जानु ॥२॥

तिसु किआ दीजै जि सबदु सुणाए ॥
करि किरपा नामु मँनि वसाए ॥
इहु सिरु दीजै आपु गवाए ॥
हुकमै बूझे सदा सुखु पाए ॥३॥

आपि करे तै आपि कराए ॥
आपे गुरमुखि नामु वसाए ॥
आपि भुलावै आपि मारगि पाए ॥
सचै सबदि सचि समाए ॥४॥

सचा सबदु सची है बाणी ॥
गुरमुखि जुगि जुगि आखि वखाणी ॥
मनमुखि मोहि भरमि भोलाणी ॥
बिनु नावै सभ फिरै बउराणी ॥५॥

तीनि भवन महि एका माइआ ॥
मूरखि पड़ि पड़ि दूजा भाउ दृड़ाइआ॥
बहु करम कमावै दुखु सबाइआ ॥
सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ ॥६॥

अँमृतु मीठा सबदु वीचारि ॥
अनदिनु भोगे हउमै मारि ॥
सहजि अनँदि किरपा धारि ॥
नाम रते सदा सचि पिआरि ॥७॥

हरि जपि पड़ीऐ गुर सबदु वीचारि ॥
हरि जपि पड़ीऐ हउमै मारि ॥
हरि जपीऐ भइ सचि पिआरि ॥
नानक नामु गुरमति उर धारि ॥८॥३॥२५॥

आसा महला – ३

इस शब्द में गुरु जी मनुष्य की सामान्य प्रवृत्ति पर टिप्पणी करते हैं जो सदैव ही किसी न किसी सांसारिक वस्तुयों की इच्छा अथवा आशा में रहती है । जैसे ही एक इच्छा पूर्ण होती है वैसे ही दूसरी कोई मन में उत्पन्न होने लगती है और यह कुचक्र एक गहरी निद्रा के समान है जिससे गुरु जी हमें जगाना चाहते हैं ।

वह कहते हैं "प्रत्येक प्राणी किसी न किसी इच्छा और आशा की पूर्ति में व्यस्त रहता है । परन्तु जो कोई प्रभु की इच्छा को मानता है वह इच्छा चक्र से मुक्त है ।बहुत सारे लोग किसी न किसी झूठी आशा में सोये हुये हैं परन्तु केवल वही मनुष्य इस निद्रा से जाग पाता है जिसे प्रभु स्वयं जगाता है "। (१)

कैसे सांसारिक इच्छाओं की अग्नि को बुझाया जाये इस पर गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो) जिन को सच्चे गुरु ने प्रभु नाम का ध्यान दान दिया है वह समझते हैं कि सांसारिक वस्तुयों की भूख प्रभु नाम के बिना नहीं जा सकती । केवल प्रभु नाम के ध्यान द्वारा ही सांसारिक इच्छाओं की अग्नि शांत की जा सकती है । परन्तु प्रभु नाम का ध्यान केवल प्रभु की इच्छा के अनुसार ही प्राप्त होता है "। (१-विराम)

गुरु जी आगे हमें प्रभु का गुणगान एवं उसके नाम का दान प्राप्त करने का ढंग बताते हुये कहते हैं "(हे मेरे मित्रो) इस कलियुग में तुम प्रभु की महिमा को गुरु की दैवी वाणी द्वारा ही समझ सकते हो । ईश्वर की सच्ची भक्ति वही है जिससे झूठा अभिमान समाप्त होता है ।इस प्रकार सच्चे गुरु की सेवा तथा उसके निर्देश का पालन करने से तुम प्रभु के दरबार में स्वीकृत होते हो ।अंत में यह समझो कि यह प्रभु ही हैं जिन्होंने मानव मन में यह भावना उत्पन्न की है "।(२)

अब गुरु जी एक स्वभाविक प्रश्न का उत्तर देते है कि हमें उस मनुष्य (गुरु) को क्या भेंट (धन्यवाद स्वरुप) देनी चाहिये जो हमें सांसारिक इच्छायों से मुक्ति दिलवाने का सही मार्ग बताता है । गुरु जी पहले यह प्रश्न पूछते हैं फिर स्वयं ही उत्तर देते हैं और कहते हैं "उसे हम क्या भेंट कर सकते हैं जो दैवी वाणी का गायन करता है और ईश्वर के नाम को हमारे मन में बसाने की कृपा करता है ? (उत्तर)- उसे हमें अपने अंदर का दंभ मिटा कर अपना शीश भेंट कर देना चाहिये । क्योंकि जो भी पूर्ण रुप से गुरु के आगे नतमस्तक हो जाता है और प्रभु की इच्छा को मान लेता है वह सदैव के लिये सुख शांति प्राप्त कर लेता है "।(३)

किस प्रकार की उत्तम बुद्धि ऐसे मानव को मिलती है, इसका वर्णन गुरु जी करते हैं "वह समझता है कि सभी वस्तुयों में प्रभु समाये हुये हैं और वही सब कुछ कर रहे हैं ।गुरु के द्वारा प्रभु स्वयं ही अपने नाम की स्थापना हम नाशवान प्राणियों के हृदय में करते हैं । वही किसी को भटकाते हैं और वही फिर उसे सही मार्ग पर वापिस लाते हैं और तब वह मनुष्य सच्चे प्रभु की वाणी द्वारा सच्चे प्रभु में लीन हो जाता है ।(४)

प्रभु के नाम और गुरु की वाणी पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं "प्रभु का नाम सत्य है और गुरु की वाणी भी सत्य है जो कि युगों से उच्चारित है और गुरु के द्वारा उसकी व्याख्या भी की जाती है । किन्तु अहंकारी संसार इसे नहीं सुनता, वह मोह माया एवं शंकाओं में भटक गया है । इस लिये प्रभु के नाम के बिना समस्त संसार बावरा सा बना घूम रहा है "।(५)

सांसारिक मोहमाया के प्रति मनुष्य की सामान्य प्रवृत्ति पर गुरु जी आगे कहते हैं "(हे मेरे मित्रो) तीनों लोक में माया जाल आरंभ से ही पसरा हुया है (जो कि मनुष्य को भटकाये रखता है) ।(गुरु की वाणी न सुन कर वेदों और शास्त्रों को)बारम्बार पढ़ने से मूर्ख मानव मन में से प्रभु को भुला कर सांसारिक मोह माया की दुविधा में अधिक दृढ़ हो गया है ।ऐसा मनुष्य बहुत सारे कर्मकांड करता है, फलस्वरुप केवल दुख दर्द से घिरा रहता है । सच्चे गुरु की सेवा तथा शिक्षा का अनुसरण करके ही सदा सुख पाया जा सकता है "।(६)

अब एक बार फिर से गुरु के शब्दों को मानने के लाभ का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो) अपने अंदर से अंहम मिटाकर (सौभाग्यशाली लोग) गुरु के शब्दों का अनुसरण करते हुये प्रभु नाम के अँमित जैसे मधुर स्वाद का आनंद दिन रात भोगते हैं । गुरु अपनी कृपा से (ऐसे मनुष्यों के मन को) सहज आनंद की दशा में रखते हैं और इस प्रकार वह सदैव सच्चे प्रिय प्रभु के नाम में प्रेम के साथ रमे रहते हैं "।(७)

अंत में गुरु जी परामर्श देते हैं " (हे मेरे मित्रो) गुरु के शब्द का अनुसरण करते हुये हमें उसे पढ़ना, विचारना तथा उसका जाप करना चाहिये और साथ ही अपने अंहम को शांत करते हुये प्रभु नाम का अध्ययन और जाप करना चाहिये ।हाँ, हमें प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये सच्चे ईश्वर के प्रेम में पड़ कर । संक्षेप में, हे नानक, गुरु के आदेशानुसार हमें प्रभु नाम को हृदय में धारण करना चाहिये "। (८-३-२५)

इस शब्द का संदेश यह है कि गुरु के शब्द (गुरु ग्रंथ साहिब जी) का अनुसरण करते हुये हमें मोह माया की निद्रा से जागना चाहिये जो कि हमें सदा सांसारिक इच्छायों में उलझाये रखती है । अंहम का त्याग करके गुरु की शिक्षा को मानते हुये प्रभु नाम का ध्यान सच्चे प्रेम व श्रद्धा से करना चाहिये । तब हम सच्ची शांति प्राप्त करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੪੨੬

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਆਪੈ ਆਪੁ ਪਛਾਣਿਆ ਸਾਦੁ ਮੀਠਾ ਭਾਈ ॥
ਹਰਿ ਰਸਿ ਚਾਖਿਐ ਮੁਕਤੁ ਭਏ ਜਿਨ੍ਹਾ ਸਾਚੋ ਭਾਈ ॥੧॥

ਹਰਿ ਜੀਉ ਨਿਰਮਲ ਨਿਰਮਲਾ ਨਿਰਮਲ ਮਨਿ ਵਾਸਾ ॥
ਗੁਰਮਤੀ ਸਾਲਾਹੀਐ ਬਿਖਿਆ ਮਾਹਿ ਉਦਾਸਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਬਿਨੁ ਸਬਦੈ ਆਪੁ ਨ ਜਾਪਈ ਸਭ ਅੰਧੀ ਭਾਈ ॥
ਗੁਰਮਤੀ ਘਟਿ ਚਾਨਣਾ ਨਾਮੁ ਅੰਤਿ ਸਖਾਈ ॥੨॥

ਨਾਮੇ ਹੀ ਨਾਮਿ ਵਰਤਦੇ ਨਾਮੇ ਵਰਤਾਰਾ ॥
ਅੰਤਰਿ ਨਾਮੁ ਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਹੈ ਨਾਮੇ ਸਬਦਿ ਵੀਚਾਰਾ ॥੩॥

ਨਾਮੁ ਸੁਣੀਐ ਨਾਮੁ ਮੰਨੀਐ ਨਾਮੇ ਵਡਿਆਈ ॥
ਨਾਮੁ ਸਲਾਹੇ ਸਦਾ ਸਦਾ ਨਾਮੇ ਮਹਲੁ ਪਾਈ ॥੪॥

ਨਾਮੇ ਹੀ ਘਟਿ ਚਾਨਣਾ ਨਾਮੇ ਸੋਭਾ ਪਾਈ ॥
ਨਾਮੇ ਹੀ ਸੁਖੁ ਊਪਜੈ ਨਾਮੇ ਸਰਣਾਈ ॥੫॥

ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਕੋਇ ਨ ਮੰਨੀਐ ਮਨਮੁਖਿ ਪਤਿ ਗਵਾਈ ॥
ਜਮ ਪੁਰਿ ਬਾਧੇ ਮਾਰੀਅਹਿ ਬਿਰਥਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਈ ॥੬॥

ਨਾਮੈ ਕੀ ਸਭ ਸੇਵਾ ਕਰੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਬੁਝਾਈ ॥
ਨਾਮਹੁ ਹੀ ਨਾਮੁ ਮੰਨੀਐ ਨਾਮੇ ਵਡਿਆਈ ॥੭॥

ਜਿਸ ਨੋ ਦੇਵੈ ਤਿਸੁ ਮਿਲੈ ਗੁਰਮਤੀ ਨਾਮੁ ਬੁਝਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਸਭ ਕਿਛੁ ਨਾਵੈ ਕੈ ਵਸਿ ਹੈ ਪੂਰੈ ਭਾਗਿ ਕੋ ਪਾਈ ॥੮॥੭॥੨੯॥

पृ-४२६

आसा महला ३॥

आपै आपु पछाणिआ सादु मीठा भाई ॥
हरि रसि चाखिऐ मुकतु भए जिना साचो भाई ॥१॥

हरि जीउ निरमल निरमला निरमल मनि वासा ॥
गुरमती सालाहीऐ बिखिआ माहि उदासा ॥१॥ रहाउ ॥

बिनु सबदै आपु न जापई सब अँधी भाई ॥
गुरमती घटि चानणा नामु अँति सखाई ॥२॥

नामे ही नामि वरतदे नामे वरतारा ॥
अँतरि नामु मुखि नामु है नामे सबदि वीचारा ॥३॥

नामु सुणीऐ नामु मँनीऐ नामे वडिआई ॥
नामु सलाहे सदा सदा नामे महलु पाई ॥४॥

नामे ही घटि चानणा नामे सोभा पाई ॥
नामे ही सुखु ऊपजै नामे सरणाई ॥५॥

बिनु नावै कोइ ना मँनीऐ मनमुखि पति गवाई ॥
जम पुरि बाधे मारीअहि बिरथा जनमु गवाई ॥६॥

नामै की सभ सेवा करै गुरमुखि नामु बुझाई ॥
नामहु ही नामु मँनीऐ नामे वडिआई ॥७॥

जिस नो देवै तिसु मिलै गुरमती नामु बुझाई ॥
नानक सभ किछु नावै कै वसि है पूरै भागि को पाई ॥८॥७॥२९॥

आसा महला – ३

गुरु जी इस शब्द में स्पष्ट कर रहे हैं कि कैसे हम अपने आप को समझ सकें और फिर कैसे ईश्वर को पहचानने का प्रयास करें।

गुरु जी इस शब्द का प्रारंभ यह कह कर करते हैं "हे भाइयो, जिन्होंने अपने आप को पहचान लिया है, उन्हें प्रभु नाम का स्वाद मीठा लगता है। जिन्हें सच्चे प्रभु भा चुके हैं वह हरि नाम रूपी रस के स्वाद को चख कर (सांसारिक मोहमाया से) मुक्त हो गये हैं "।(१)

अब अपने दैवी आदेश की नींव रखते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो) ईश्वर पूर्ण रूप से शुद्ध अथवा निरमल हैं इस लिये वह केवल निरमल मन में ही वास कर सकते हैं। यदि हम गुरु के आदेशानुसार प्रभु की स्तुति करते हैं, तो इस सांसारिक विषयों से भरे वातावरण में रहते हुए भी इनसे अछूते रह सकते हैं,(और अपने मन को ईश्वर के वास के लिये निरमल बना सकते हैं)"।(१-विराम)

वह दृढ़ भाव से कहते हैं "हे भाइयो, गुरु के शब्द के बिना हम अपने को नहीं समझ सकते। गुरु के मार्गदर्शन के बिना समस्त संसार मोह माया में अँधा बना रहता है। गुरु के आदेशानुसार जब हम प्रभु नाम में ध्यान लगाते हैं तब हमारे अंदर आत्मिक प्रकाश होता है और अंत में प्रभु नाम ही हमारा सहायक बनता है "।(२)

अब गुरु जी प्रभु का ध्यान करने वाले गुरु के शिष्यों के आचरण के विषय में कहते हैं "गुरु के शिष्य सदा प्रभु का नाम जपने में व्यस्त रहते हैं। अपने सांसारिक काम करते हुये भी वह प्रभु के नाम के साथ रमे रहते हैं।उनके अंदर भी प्रभु का नाम बसा है और मुख में भी। गुरु के शब्दों के द्वारा वह ईश्वर के नाम की शक्ति, आत्मिक ज्ञान और प्रेम की विवेचना करते रहते हैं "। (३)।

हमें भी वैसा ही करने का परामर्श देते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो) हमें भी प्रभु नाम का श्रवण करना चाहिये, मानना चाहिये,

क्योंकि नाम जपने से आदर मिलता है । जो भी प्रभु नाम को उत्तम कहता है उसे ईश्वर नाम रूपी महलों की प्राप्ति होती है (जिसमें वह वास करता है)"।(४)

प्रभु नाम के ध्यान में रहने के और अधिक लाभ गुरु जी बताते हैं "(हे मेरे मित्रो) ईश्वर नाम के द्वारा ही मन दैवी ज्ञान से प्रकाशमयी होता है और नाम द्वारा ही शोभा सम्मान प्राप्त होता है । प्रभु नाम के जाप से मन में सुख उपजता है इसलिये हमें सदैव उसके नाम की शरण में रहना चाहिये ।(५)

प्रभु नाम का ध्यान न करने पर गुरु जी हमें सावधान करते हुये कहते हैं " (हे मेरे मित्रो) हरि नाम का ध्यान न करने पर कोई भी उसके दरबार में मान्यता नहीं प्राप्त कर पाता तथा अंहकारी मनुष्य अपना आदर गँवा देते हैं ।यमराज की नगरी में उन्हें बाँधकर पीटा जाता है और इस प्रकार वह अपना मानव जन्म व्यर्थ कर देते हैं "। (६)

जो प्रभु नाम का ध्यान करते हैं, उनको प्राप्त आशीर्वादों के विषय में गुरु जी कहते हैं " प्रभु नाम का ध्यान करने वालों की सभी सेवा करते हैं, परन्तु केवल गुरु ही हमें प्रभु नाम का ध्यान करना सिखा सकते हैं । हरि नाम को जपने वाला सबको मान्य होता है और उसे (इहलोक तथा परलोक में) शोभा मिलती है "।(७)

किन्तु अभिमान अथवा अंहम के लिये हमें सावधान करते हुये गुरु जी कहते हैं "नाम दान का उपहार केवल वही मनुष्य पाता है, जिसे प्रभु स्वयं देते हैं । गुरु के निर्देश के द्वारा प्रभु उस मनुष्य को नाम का महत्व समझाते हैं । हे नानक, सब कुछ प्रभु नाम के वश में है, कोई बिरला ही प्रभु नाम के उपहार को पाता है और पूर्ण रूप से भाग्यशाली सिद्ध होता है "।(८-७-२९)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम लोक तथा परलोक में आदर और आनंद पाना चाहते हैं तो हमें गुरु के निर्देश को मानना चाहिये, जिससे हम अपने अँतरमन की सच्चाई को टटोलने के लायक हो सकें (कि हम प्रभु की सेवा कर सकते हैं या नहीं) । इस प्रकार हमें प्रभु नाम मधुर प्रतीत होगा । तब हम सांसारिक बँधनों में रहते हुये भी तन, मन एवं आत्मा से प्रभु के ध्यान में समर्पित रहेंगे और गुरु की वाणी अथवा शब्द के रूप में हरि के यश का गायन करते रहेंगे । अंत में प्रभु हमें अपने नाम का आशीर्वाद देंगे और हम इस संसार तथा प्रभु दरबार में आनंद एवं आदर के भागीदार बनेंगे ।

ਪੰਨਾ ੪੨੭

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਸਚਿ ਰਤੀਆ ਸੋਹਾਗਣੀ ਜਿਨਾ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਸੀਗਾਰਿ ॥

ਪੰਨਾ ੪੨੮

ਘਰ ਹੀ ਸੋ ਪਿਰੁ ਪਾਇਆ ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਵੀਚਾਰਿ ॥੧॥

ਅਵਗਣ ਗੁਣੀ ਬਖਸਾਇਆ ਹਰਿ ਸਿਉ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥
ਹਰਿ ਵਰੁ ਪਾਇਆ ਕਾਮਣੀ ਗੁਰਿ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਇਕਿ ਪਿਰੁ ਹਦੂਰਿ ਨ ਜਾਣਨੀ ਦੂਜੈ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਇ ॥
ਕਿਉ ਪਾਇਨਿ੍ ਡੋਹਾਗਣੀ ਦੁਖੀ ਰੈਣਿ ਵਿਹਾਇ ॥੨॥

ਜਿਨ ਕੈ ਮਨਿ ਸਚੁ ਵਸਿਆ ਸਚੀ ਕਾਰ ਕਮਾਇ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਸੇਵਹਿ ਸਹਜ ਸਿਉ ਸਚੇ ਮਾਹਿ ਸਮਾਇ ॥੩॥

ਦੋਹਾਗਣੀ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਈਆ ਕੂੜੁ ਬੋਲਿ ਬਿਖੁ ਖਾਹਿ ॥
ਪਿਰੁ ਨ ਜਾਣਨਿ ਆਪਣਾ ਸੁੰਞੀ ਸੇਜ ਦੁਖੁ ਪਾਹਿ ॥੪॥

ਸਚਾ ਸਾਹਿਬੁ ਏਕੁ ਹੈ ਮਤੁ ਮਨ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਹਿ ॥
ਗੁਰ ਪੂਛਿ ਸੇਵਾ ਕਰਹਿ ਸਚੁ ਨਿਰਮਲੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਹਿ ॥੫॥

ਸੋਹਾਗਣੀ ਸਦਾ ਪਿਰੁ ਪਾਇਆ ਹਉਮੈ ਆਪੁ ਗਵਾਇ ॥
ਪਿਰ ਸੇਤੀ ਅਨਦਿਨੁ ਗਹਿ ਰਹੀ ਸਚੀ ਸੇਜ ਸੁਖੁ ਪਾਇ ॥੬॥

ਮੇਰੀ ਮੇਰੀ ਕਰਿ ਗਏ ਪਲੈ ਕਿਛੁ ਨ ਪਾਇ ॥
ਮਹਲੁ ਨਾਹੀ ਡੋਹਾਗਣੀ ਅੰਤਿ ਗਈ ਪਛੁਤਾਇ ॥੭॥

ਸੋ ਪਿਰੁ ਮੇਰਾ ਏਕੁ ਹੈ ਏਕਸੁ ਸਿਉ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਜੇ ਸੁਖੁ ਲੋੜਹਿ ਕਾਮਣੀ ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਇ ॥ ੮॥ ੧੧॥ ੩੩॥

पृ-४२७

आसा महला ३॥

सचि रतीआ सोहागणी जिना गुर कै सबदि सीगारि ॥

पृ-४२८

घर ही सो पिरु पाइआ सचै सबदि वीचारि ॥१॥

अवगण गुणी बखसाइआ हरि सिउ लिव लाई ॥
हरि वरु पाइआ कामणी गुरि मेलि मिलाई ॥१॥रहाउ

इकि पिरु हदूरि न जाणनी दूजै भरमि भुलाइ ॥
किउ पाइनि् डोहागणी दुखी रैणि विहाइ ॥२॥

जिन कै मनि सचु वसिआ सची कार कमाइ ॥
अनदिनु सेवहि सहज सिउ सचे माहि समाइ ॥३॥

दोहागणी भरमि भुलाईआ कूड़ु बोलि बिखु खाहि ॥
पिरु न जाणनि आपणा सुँञी सेज दुखु पाहि ॥४॥

सचा साहिबु एकु है मतु मन भरमि भुलाहि ॥
गुर पूछि सेवा करहि सचु निरमलु मँनि वसाहि ॥५॥

सोहागणी सदा पिरु पाइआ हउमै आपु गवाइ ॥
पिर सेती अनदिनु गहि रही सची सेज सुखु पाइ ॥६॥

मेरी मेरी करि गए पलै किछु न पाइ ॥
महलु नाही डोहागणी अँति गई पछुताइ ॥७॥

सो पिरु मेरा एकु है एकसु सिउ लिव लाइ ॥
नानक जे सुख लोड़हि कामणी हरि का नामु मँनि वसाइ ॥८॥११॥३३॥

आसा महला – ३

इस शब्द में गुरू जी, एक गुरू के शिष्य तथा एक अंहम से भरे मनुष्य की तुलना उन दो पत्नियों के रूप में करते हैं जिनमें एक पूर्णतया विश्वसनीय और समर्पित है और दूसरी अविश्वसनीय तथा परितयक्ता है ।

उनका कहना है “गुरू के शिष्य उन सच्ची समर्पित पत्नियों की भाँति हैं, जिन्होंने गुरू के सच्चे शब्द में रंग कर अपने जीवन को सजा सँवार लिया है । सच्ची गुरू की वाणी को पूर्ण रूप से विचार लेने पर वह अपने पति रूपी प्रभु को अपने ह्दय रूपी घर में पा लेते हैं ”। (१)

किस प्रकार गुरु के शिष्य की आत्मा अपने पुराने अवगुणों से क्षमा पाकर प्रभु से अनेक आशीर्वाद प्राप्त कर लेती है, वह कहते हैं “आत्मा रूपी वधू अपने गुणों के आधार पर जब ईश्वर से एकमयी हो जाती है तो उसके सारे दोष क्षमा प्राप्त कर लेते हैं ।गुरू के द्वारा आत्मा रूपी वधू का मिलन हरि से होता है और तब यह आत्मा रूपी वधू हरि को पति के रूप में पा लेती है ”।(१-विराम)

अब एक अभिमानी पुरुष की तुलना अविश्वसनीय, परित्यक्ता पत्नी/स्त्री से करते हुये गुरू जी कहते हैं “अन्य कुछ परित्यक्ता पत्नियाँ जो कि सांसारिक भ्रमों में भूली हुई हैं, समझ नहीं पा रहीं हैं कि उनका ईश्वर रूपी पति उनके सम्मुख ही विद्यमान है । वह अभागी उसे कैसे पा सकती है ? और वह अपनी जीवन रूपी रात्रि दुख दर्द में ही बिता देती है ”। (२)

जो गुरु के शिष्य प्रभु के ध्यान में रहते हैं उनके लिए गुरु जी फिर से टिप्पणी करते हुए कहते हैं, “ जिनके मन में सच्चे प्रभु का वास है,

वह सच्चे एवं शुभ कार्य करते हैं (वह प्रभु के गुण गाते हैं) । दिन रात सच्चे प्रभु की सेवा करते हैं, तथा सहज भाव से (शांति अवस्था में) सच्चे प्रभु में ही समा जाते हैं "।(३)

परन्तु अंहकारी लोगों के भाग्य के विषय में गुरु जी कहते हैं "अविश्वसनीय तथा परित्यक्ता पत्नियों की भाँति वह संसार के भ्रमों में खो जाते हैं और झूठ के रूप में विष खाकर अपने जीवन का नाश करते हैं । वह अपने प्रभु रूपी पति को नहीं पहचानते, इसलिये उनकी हृदय रूपी सेज सूनी रहती है और वह दुखी रहते हैं "। (४)

इसलिये अब गुरु जी अपने सहित हमारे मन को भी सम्बोधित करते हैं "हे मेरे मन, तुम भ्रम में मत रहो, (याद रखो) सच्चा मालिक केवल एक ही है । गुरु से परामर्श करके यदि तुम प्रभु की सेवा अर्चना करोगे तब उस सच्चे अनंत निर्मल (प्रभु) को मन में बसा लोगे "।(५)

गुरु के शिष्य की आत्मा रूपी वधू कैसे शांति और सुख का अनुभव करती है, इस पर गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो) अपने अंहम का त्याग करके सच्ची समर्पित वधू ने सदा के लिये पति को पा लिया है । दिन रात वह अपने पति रूपी प्रभु से जुड़ी रहती है और अपनी हृदय रूपी सच्ची सेज पर प्रभु के साथ का सदा सुख पाती है "। (६)

अंहकारी पुरुष जो अपना सम्पूर्ण जीवन सांसारिक मोह माया में समाप्त कर देते हैं, उनके दुखद अंत के विषय में गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे मित्रो)जो इस संसार की मोह माया में उलझे रह कर चले जाते हैं, उन्होंने जीवन में कुछ भी प्राप्त नहीं किया ।परित्यक्ता वधू की भाँति वह (अपने पति के) महलों में नहीं रह सके और अंत में इस संसार से पछता कर चले गये "।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं "(हे आत्मा) मेरा सच्चा प्रिय पति एक ही है, सो उस एक प्रभु के प्यार में रंग जाओ । नानक कहते हैं, हे सुन्दर वधू रूपी आत्मा, यदि तुम्हें सच्ची शांति की इच्छा है, तो हरि के नाम को मन में बसा लो "।(८-११-३३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सदैवी शांति की कामना करते हैं, तो गुरु (गुरु ग्रन्थ साहिब जी) के मार्गदर्शन तथा शरण में जाकर अपने अहम का त्याग करें और सांसारिक बंधनों से उपर उठ कर सच्चे सदैवी प्रभु रूपी पति के प्यार में लीन रहें ।एक दिन हम अपने हृदय में ही उसके महल का अनुभव करेंगे और प्रभु से जुड़े रहने का सदैवी आनंद पायेंगे ।

ਪੰਨਾ ੪੨੯

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਸਬਦੌ ਹੀ ਭਗਤ ਜਾਪਦੇ ਜਿਨ੍ ਕੀ ਬਾਣੀ ਸਚੀ ਹੋਇ ॥
ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਇਆ ਨਾਉ ਮੰਨਿਆ ਸਚਿ ਮਿਲਾਵਾ ਹੋਇ ॥੧॥

ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਜਨ ਕੀ ਪਤਿ ਹੋਇ ॥
ਸਫਲੁ ਤਿਨ੍ਾ ਕਾ ਜਨਮੁ ਹੈ ਤਿਨ੍ ਮਾਨੈ ਸਭੁ ਕੋਇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਉਮੈ ਮੇਰਾ ਜਾਤਿ ਹੈ ਅਤਿ ਕ੍ਰੋਧੁ ਅਭਿਮਾਨੁ ॥
ਸਬਦਿ ਮਰੈ ਤਾ ਜਾਤਿ ਜਾਇ ਜੋਤੀ ਜੋਤਿ ਮਿਲੈ ਭਗਵਾਨੁ ॥੨॥

ਪੂਰਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਭੇਟਿਆ ਸਫਲ ਜਨਮੁ ਹਮਾਰਾ ॥
ਨਾਮੁ ਨਵੈ ਨਿਧਿ ਪਾਇਆ ਭਰੇ ਅਖੁਟ ਭੰਡਾਰਾ ॥੩॥

ਆਵਹਿ ਇਸੁ ਰਾਸੀ ਕੇ ਵਾਪਾਰੀਏ ਜਿਨ੍ਾ ਨਾਮੁ ਪਿਆਰਾ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਹੋਵੈ ਸੋ ਧਨੁ ਪਾਏ ਤਿਨ੍ਾ ਅੰਤਰਿ ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰਾ ॥੪॥

ਭਗਤੀ ਸਾਰ ਨ ਜਾਣਨ੍ੀ ਮਨਮੁਖ ਅਹੰਕਾਰੀ ॥
ਧੁਰਹੁ ਆਪਿ ਖੁਆਇਅਨੁ ਜੂਐ ਬਾਜੀ ਹਾਰੀ ॥੫॥

ਬਿਨੁ ਪਿਆਰੈ ਭਗਤਿ ਨ ਹੋਵਈ ਨਾ ਸੁਖੁ ਹੋਇ ਸਰੀਰਿ ॥
ਪ੍ਰੇਮ ਪਦਾਰਥੁ ਪਾਈਐ ਗੁਰ ਭਗਤੀ ਮਨ ਧੀਰਿ ॥੬॥

ਜਿਸ ਨੋ ਭਗਤਿ ਕਰਾਏ ਸੋ ਕਰੇ ਗੁਰ ਸਬਦ ਵੀਚਾਰਿ ॥
ਹਿਰਦੈ ਏਕੋ ਨਾਮੁ ਵਸੈ ਹਉਮੈ ਦੁਬਿਧਾ ਮਾਰਿ ॥੭॥

ਭਗਤਾ ਕੀ ਜਤਿ ਪਤਿ ਏਕੋੁ ਨਾਮੁ ਹੈ ਆਪੇ ਲਏ ਸਵਾਰਿ ॥
ਸਦਾ ਸਰਣਾਈ ਤਿਸ ਕੀ ਜਿਉ ਭਾਵੈ ਤਿਉ ਕਾਰਜੁ ਸਾਰਿ ॥੮॥

ਪੰਨਾ ੪੩੦

ਭਗਤਿ ਨਿਰਾਲੀ ਅਲਾਹ ਦੀ ਜਾਪੈ ਗੁਰ ਵੀਚਾਰਿ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਹਿਰਦੈ ਵਸੈ ਭੈ ਭਗਤੀ ਨਾਮਿ ਸਵਾਰਿ ॥੯॥੧੪॥੩੬॥

पृ-४२९

आसा महला ३॥

सबदौ ही भगत जापदे जिन् की बाणी सची होइ ॥
विचहु आपु गइआ नाउ मँनिआ सचि मिलावा होइ ॥१॥

हरि हरि नामु जन की पति होइ ॥
सफलु तिना् का जनमु है तिन् मानै सभु कोइ ॥१॥ रहाउ ॥

हउमै मेरा जाति है अति क्रोधु अभिमानु ॥
सबदि मरै ता जाति जाइ जोती जोति मिलै भगवानु ॥२॥

पूरा सतिगुरु भेटिआ सफल जनमु हमारा ॥
नामु नवै निधि पाइआ भरे अखुट भँडारा ॥३॥

आवहि इसु रासी के वापारीए जिना् नामु पिआरा ॥
गुरमुखि होवै सो धनु पाए तिना् अँतरि सबदु वीचारा ॥४

भगती सार न जाणनी् मनमुख अँहकारी ॥
धुरहु आपि खुआइअनु जूऐ बाजी हारी ॥५॥

बिनु पिआरै भगति न होवई ना सुखु होइ सरीरि ॥
प्रेम पदारथु पाइऐ गुर भगती मन धीरि ॥६॥

जिस नो भगति कराए सो करे गुर सबद वीचारि ॥
हिरदै एको नामु वसै हउमै दुबिधा मारि ॥७॥

भगता की जति पति एको नामु है आपे लए सवारि ॥
सदा सरणाई तिस की जिउ भावै तिउ कारजु सारि ॥८॥

पृ-४३०

भगति निराली अलाह दी जापै गुर वीचारि ॥
नानक नामु हिरदै वसै भै भगती नामि सवारि ॥९॥१४॥३६॥

आसा महला – ३

इस शब्द में गुरु जी हमें यह बताते हैं कि किस प्रकार गुरु का शब्द किसी को प्रभु का सच्चा भक्त बनाने के लिये आवश्यक है और गुरु की शिक्षा को मानने से भक्त जनों को किस प्रकार के आशीर्वाद प्राप्त होते हैं।

गुरु के शब्द तथा प्रभु नाम की आवश्यकता पर गुरु जी संकेत करते हैं " (हे मेरे मित्रो), गुरु के शब्द व परामर्श का पालन करके सच्ची वाणी वाले भक्त संसार में पहचाने जाते हैं। वह प्रभु नाम में विश्वास करते हैं, जिसके कारण उनका अहम अंदर से चला जाता है और वह सच्चे प्रभु से जाकर मिल जाते हैं "।(१)

भक्त के जीवन में प्रभु नाम का क्या महत्व है, इस पर गुरु जी का कथन है,"(हे मेरे मित्रो),श्रध्दालुओं के लिये प्रभु का नाम उनका सम्मान है। उनका जीवन सफल है, क्योंकि हर कोई उनका आदर सम्मान करता है "।(१- विराम)

अहम तथा स्वार्थ की भावना कितनी हानिकारक होती है और उसे कैसे त्याग सकते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे मित्रो), अहम तथा स्वार्थ स्वाभाविक रूप से मनुष्य को अत्यंत क्रोधी तथा अभिमानी बना देते हैं। केवल गुरु की शिक्षा का पालन करने से कोई मनुष्य इतना विनम्र हो जाता है कि उसकी अंहम भावना अंदर से विलीन हो जाती है और तब उसकी ज्योति प्रभु की ज्योति में एकमयी हो जाती है "।(२)

गुरु के मार्गदर्शन पर चलने से जो आशीर्वाद उन्हें मिले हैं, उस पर गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो) पूर्ण गुरु की सेवा और आज्ञा का पालन करके मेरा जीवन सफल हो गया है । मुझे प्रभु नाम का धन मिल गया है जो नौ निधियों के समान है और मेरे भँडार इस अनंत धन से भरपूर हैं "।(३)

प्रभु नाम की निधि को पाने के लिये अन्य लोग उसके पास कैसे आते हैं और किस प्रकार के लोगों को यह प्राप्त होती है, इस पर गुरु जी कहते हैं "(अब बहुत) व्यापारी जिन्हें प्रभु नाम से प्यार है इस राशि को पाने मेरे पास आते हैं।परन्तु जो गुरु का अनुयायी है तथा जिसके अंतर्मन में प्रभु नाम को विचारने की बुद्धि है, उन्हीं को केवल यह धन प्राप्त होता है"।(४)

किन्तु अंहकारी तथा स्वार्थी लोगों के विषय में गुरु जी कहते हैं "अभिमानी एवं स्वार्थी लोग प्रभु की सच्ची भक्ति का भाव नहीं जानते।पर एक प्रकार से वह असहाय होते हैं, क्योंकि प्रभु ने स्वयं ही उन्हें प्रारंभ से ही सही मार्ग से भटका दिया है और वह जीवन के जुऐ की बाज़ी हार गये हैं "।(५)

ईश्वर की भक्ति के लिये अब गुरु जी आवश्यक नियम बनाते हैं और कहते हैं " (हे मेरे मित्रो) प्रभु को प्यार किये बिना उसकी सच्ची पूजा नहीं की जा सकती और न ही शरीर को सुख शांति मिलती है।केवल गुरु की अराधना के द्वारा ही मन को धैर्य मिलता है और तब फिर प्रभु के प्यार की निधि प्राप्त होती है "।(६)

पर इस विषय में प्रभु की इच्छा कितनी प्रबल है इस पर गुरु जी दृढ़ रुप से कहते हैं " (हे मेरे मित्रो), प्रभु अपनी भक्ति करने के लिये जिसे चाहते हैं, केवल उसे ही गुरु के शब्द को विचारने की इच्छा शक्ति देते हैं। तत्पश्चात, वह अपने अंहम तथा सांसारिक दुविधायों का नाश कर हृदय में एक प्रभु नाम को बसाता है "।(७)

एक बार फिर एक भक्त के मूलभूत गुण एवं लक्षणों के विषय में गुरु जी कहते हैं, (और कैसे प्रभु उसकी सहायता करते हैं) "(हे मेरे मित्रो) भक्तों के लिये केवल प्रभु नाम का ध्यान ही उनका आदर सम्मान और एक मात्र पहचान है और प्रभु स्वयं ही उनके आत्मिक गुणों को सवाँरने में सहायता करते हैं।ऐसे भक्त सदा उसकी शरण में रहते हैं और किसी भी आड़े समय पर प्रभु को ही कहते हैं ' हे प्रभु, हमें और किसी के पास सहायता के लिये नहीं जाना है, इस लिये जैसे चाहो हमारा काम सँवारो । "। (८)

अंत में गुरु जी कहते हैं "ईश्वर की पूजा एक अनोखी वस्तु है जो केवल गुरु का शब्द विचारने पर ही समझ में आती है । क्योंकि 'हे नानक ' जिसके मन में प्रभु नाम का निवास है, उसकी अनोखी भक्ति प्रभु के लिये उसके मन में एक ऐसे प्रेमपूर्ण भय की भावना बसा देती है, जो उसे सच्चे नाम से जोड़े रखती है और उसका जीवन सँवर जाता है "।(९-१४-३६)

इस शब्द का संदेश यह है कि प्रभु की भक्ति अभिमानी प्रवृतियों के साथ नहीं प्राप्त हो सकती। केवल प्रभु की दयालुता ही गुरु के शब्द को विचारने के योग्य बनाती है तभी हमारे मन में प्रभु के लिये प्रेम उत्पन्न होता है और हमारा जीवन उसके ध्यान से सँवरने लगता है । इसलिये हमें सदा प्रभु से प्रार्थना करते रहना चाहिये कि वह हमें गुरु के साथ रखे और उसके शब्द को विचारने की चिंतन शक्ति प्रदान करे।

ਪੰਨਾ ੪੩੧	**पृ-४३१**
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ਬਿਰਹੜੇ ਘਰੁ ੪ ਛੰਤਾ ਕੀ ਜਤਿ	**आसा महला ५ बिरहड़े घर ४ छंता की जति**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ॐकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਪ੍ਰਭੁ ਸਿਮਰੀਐ ਪਿਆਰੇ ਦਰਸਨ ਕਉ ਬਲਿ ਜਾਉ ॥੧॥	पारब्रहमु प्रभु सिमरीऐ पिआरे दरसन कउ बलि जाउ ॥१॥
ਜਿਸੁ ਸਿਮਰਤ ਦੁਖ ਬੀਸਰਹਿ ਪਿਆਰੇ ਸੋ ਕਿਉ ਤਜਣਾ ਜਾਇ ॥੨॥	जिसु सिमरत दुख बीसरहि पिआरे सो किउ तजणा जाइ ॥२॥
ਇਹੁ ਤਨੁ ਵੇਚੀ ਸੰਤ ਪਹਿ ਪਿਆਰੇ ਪ੍ਰੀਤਮੁ ਦੇਇ ਮਿਲਾਇ ॥੩॥	इहु तनु वेची सँत पहि पिआरे प्रीतमु देइ मिलाइ ॥३॥
ਸੁਖ ਸੀਗਾਰ ਬਿਖਿਆ ਕੇ ਫੀਕੇ ਤਜਿ ਛੋਡੇ ਮੇਰੀ ਮਾਇ ॥੪॥	सुख सीगार बिखिआ के फीके तजि छोडे मेरी माइ ॥४॥
ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਲੋਭੁ ਤਜਿ ਗਏ ਪਿਆਰੇ ਸਤਿਗੁਰ ਚਰਨੀ ਪਾਇ ॥੫॥	कामु क्रोधु लोभु तजि गए पिआरे सतिगुर चरनी पाइ ॥५॥
ਜੋ ਜਨ ਰਾਤੇ ਰਾਮ ਸਿਉ ਪਿਆਰੇ ਅਨਤ ਨ ਕਾਹੂ ਜਾਇ ॥੬॥	जो जन राते राम सिउ पिआरे अनत न काहू जाइ ॥६॥
ਹਰਿ ਰਸੁ ਜਿਨ੍ਹੀ ਚਾਖਿਆ ਪਿਆਰੇ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਰਹੇ ਆਘਾਇ ॥੭॥	हरि रसु जिनी् चाखिआ पिआरे तृपति रहे आघाइ ॥७॥
ਅੰਚਲੁ ਗਹਿਆ ਸਾਧ ਕਾ ਨਾਨਕ ਭੈ ਸਾਗਰੁ ਪਾਰਿ ਪਰਾਇ ॥੮॥੧॥੩॥	अँचलु गहिआ साध का नानक भै सागरु पारि पराइ ॥८॥१॥३॥
ਜਨਮ ਮਰਣ ਦੁਖੁ ਕਟੀਐ ਪਿਆਰੇ ਜਬ ਭੇਟੈ ਹਰਿ ਰਾਇ ॥੧॥	जन्म मरण दुखु कटीऐ पिआरे जब भेटै हरि राइ ॥१॥
ਸੁੰਦਰੁ ਸੁਘਰੁ ਸੁਜਾਣੁ ਪ੍ਰਭੁ ਮੇਰਾ ਜੀਵਨੁ ਦਰਸੁ ਦਿਖਾਇ ॥੨॥	सुँदरु सुघरु सुजाणु प्रभु मेरा जीवनु दरसु दिखाइ ॥२॥
ਜੋ ਜੀਅ ਤੁਝ ਤੇ ਬੀਛੁਰੇ ਪਿਆਰੇ ਜਨਮਿ ਮਰਹਿ ਬਿਖੁ ਖਾਇ ॥੩॥	जो जीअ तुझ ते बीछुरे पिआरे जनमि मरहि बिखु खाइ ॥३॥
ਜਿਸੁ ਤੂੰ ਮੇਲਹਿ ਸੋ ਮਿਲੈ ਪਿਆਰੇ ਤਿਸ ਕੈ ਲਾਗਉ ਪਾਇ ॥੪॥	जिसु तूँ मेलहि सो मिलै पिआरे तिस कै लागउ पाइ ॥४॥
ਜੋ ਸੁਖੁ ਦਰਸਨੁ ਪੇਖਤੇ ਪਿਆਰੇ ਮੁਖ ਤੇ ਕਹਣੁ ਨ ਜਾਇ ॥੫॥	जो सुखु दरसनु पेखते पिआरे मुख ते कहणु न जाइ ॥५॥
ਸਾਚੀ ਪ੍ਰੀਤਿਨ ਤੁਟਈ ਪਿਆਰੇ ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਰਹੀ ਸਮਾਇ ॥੬॥	साची प्रीति न तुटई पिआरे जुगु जुगु रही समाइ ॥६॥
ਪੰਨਾ ੪੩੨	पृ-४३२
ਜੋ ਤੁਧੁ ਭਾਵੈ ਸੋ ਭਲਾ ਪਿਆਰੇ ਤੇਰੀ ਅਮਰੁ ਰਜਾਇ ॥੭॥	जो तुधु भावै सो भला पिआरे तेरी अमरु रजाइ ॥७॥
ਨਾਨਕ ਰੰਗਿ ਰਤੇ ਨਾਰਾਇਣੈ ਪਿਆਰੇ ਮਾਤੇ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਇ ॥੮॥੨॥੪॥	नानक रँगि रते नाराइणै पिआरे माते सहिज सुभाइ ॥८॥२॥४॥

आसा महला - ५ बिरहड़े घर – ४

डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार कुछ सिख समूहों में रात्रि के समय स्वर्ण मंदिर अँमृितसर के परिसर में घूमते हुये कुछ विशेष भजन गाने की परम्परा है ।यह घूमने या टहलने की प्रक्रिया वहाँ के अकाल बुंगा नामक एक छोटे भवन से आरंभ होती है जो पवित्र सरोवर की पूर्ण परिक्रमा करते हुये मुख्य मंदिर के द्वार में प्रवेश करने के पश्चात उसकी भी परिक्रमा करते हुए अंदर चौकी साहिब तक पहुँच कर सम्पूर्ण होती है, जहां गुरु ग्रंथ साहिब के सम्मुख अरदास/ प्रार्थना करके परम्परा का समापन करते हैं ।उपरोक्त दोनों शब्द/भजन इस दैनिक प्रक्रिया के शब्द समूह में से हैं ।

इस शब्द में इसी समुदाय के एक सिख से गुरु जी कहते हैं “हे मेरे प्रिय मित्र, हमें सदा सर्वव्यापी प्रभु का ध्यान करना चाहिये । मैं उसके दर्शनों के लिये बलिहारी हूँ ”।(१)

गुरु जी पूछते हैं “हे मेरे प्रिय मित्र, जिसका सिमरन करने से हम समस्त दुख भूल जाते हैं, उसे हम कैसे छोड़ सकते हैं ”।(२)

गुरु जी स्वयं ही कहते हैं “हे प्रिय, मैं उस संत/ गुरु के पास अपना तन बेचने को तैयार हूँ, जो मुझे मेरे प्रियतम से मिला दे ”।(३)

अब, जैसे वह अपनी माता से कह रहे हैं “हे मेरी माता, मैंने संसार के समस्त सुख और श्रृंगार त्याग दिये हैं, क्योंकि वह सब विष के समान हैं, (प्रभु नाम के मीठे स्वाद की तुलना में) फीके हैं” । (४)

सच्चे गुरु की शरण में जाने के पश्चात जो हुया, उस पर गुरु जी कहते हैं “हे मेरे प्रिय, जब से मैं सच्चे गुरु के चरणों की शरण में आया हूँ (गुरु की वाणी के द्वारा) मेरे सारे अवगुण, काम, क्रोध एवं लोभ अंदर से चले गये हैं ”।(५)

इसलिये गुरु जी कहते हैं “हे मेरे प्रिय, जो भक्त ईश्वर प्रेम में रमे हुये हैं, वह (उसे छोड़ कर) अन्य कहीं नहीं जाते ”।(६)

इसका क्या कारण है, इस पर गुरु जी कहते हैं “हे मेरे प्रिय, जिन्होंने प्रभु नाम के रस का स्वाद चख लिया है, वह सदा के लिये तृप्त रहते हैं, (अथवा उन्हें सांसारिक इच्छायें नहीं रहती)” । (७)

अंत में गुरु जी कहते हैं “हे नानक, जिन्होंने भी संत (गुरु) का आँचल थाम लिया है, वह इस भयावह भवसागर से पार हो गये हैं ”।(८-१-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम इस भयावह सांसारिक भवसागर से पार उतरना चाहते हैं, तो हमें संत (गुरु ग्रन्थ साहिब जी) की शरण में जाकर उसमें निहित पवित्र वाणी के आदेश की पालना करनी चाहिए तथा अपने मन में से काम, क्रोध व मोह को त्याग कर प्रभु का ध्यान करना चाहिए ।

उपरोक्त शब्द में गुरु जी ने उस व्यक्ति का वर्णन किया है जो गुरु की शरण में आकर उसके निर्देश का पालन करके आशीर्वाद प्राप्त करता है । गुरु की सेवा में रहने का सर्वोत्तम लाभ यही होता है कि वह मनुष्य अपने प्रिय प्रभु में लीन हो जाता है । इस शब्द में गुरु जी प्रभु से लगन लगने के पश्चात मिलने वाले आशीर्वादों के आनंद का वर्णन करते हैं ।

वह कहते हैं “हे मेरे प्रिय, जब हम महान प्रभु से मिलते हैं, तब जन्म मरण के फेरों के दुख से बच जाते हैं ”।(१)

ईश्वर के कुछ गुणों की व्याख्या में गुरु जी कहते हैं “हे मेरे मित्र, मेरा प्रभु सुंदर, गुणी और सर्वज्ञाता है, जब वह दयादृष्टि डालता है तब (मैं इस प्रकार से प्रफुल्लित प्रतीत करता हूँ) जैसे कि मैं पुनर्जीवित हो गया हूँ “।(२)

जो प्रभु से बिछुड़ चुके हैं और उसे याद नहीं करते उनके भाग्य पर गुरु जी कहते हैं “ हे मेरे प्रिय प्रभु, जो जन तेरे से बिछुड़ चुके हैं वह जन्म मरण के फेर में रहते हैं और सांसारिक लोभ और सत्ता का विष खाते हैं ”।(३)

परन्तु उन बिछुड़े हुयों के प्रति भी गुरु जी दयालु भावना से कहते हैं “हे प्रिय प्रभु, यह नाशवान प्राणी एक प्रकार से असहाय हैं, क्योंकि वही तुमसे जुड़ सकता है जिसे तुम स्वयं जोड़ते हो और मैं ऐसे जन के चरण लगता हूँ ”।(४)

ईश्वर की एक झलक पाने पर जो आनंद प्राप्त होता है उस पर गुरु जी कहते हैं “हे प्रिय प्रभु, तेरे दर्शन करने से जो सुख प्राप्त होता है, उस प्रसन्नता का बखान इस मुख से नहीं कहा जा सकता ”।(५)

एक बार फिर गुरु जी प्रभु प्रेम की श्रेष्ठा पर कहते हैं “हे प्रिय प्रभु, यदि कोई सच्चे प्रेम से तुम में लीन हो जाता है तो वह प्रेम कभी टूटता नहीं, वह युगों युगों के लिये हृदय में समाया रहता है”।(६)

जो भी उनके प्रिय प्रभु की इच्छा होती है, वह गुरु जी को कितनी मान्य है, इस पर वह कहते हैं “ हे मेरे प्रिय प्रभु, जो भी तुम्हें भाता है वही भला है और तुम्हारी इच्छा अमर है ”। (७)

अंत में गुरु जी प्रभु प्रेम में लीन जनों की मनोदशा का वर्णन करते हुये कहते हैं “ हे नानक, जो प्रभु के प्रेम में मस्त हैं वह सदा शांत एवं सहज भाव में रहते हैं ”। (८-२-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि सांसारिक लोभ लालच एवं शक्ति बल के पीछे भागने की अपेक्षा हमें गुरु के मार्ग दर्शन के अनुसार प्रभु नाम से प्रेम करना सीखना चाहिये । तब हमारे जन्म मरण के भावी फेरों की पीड़ा समाप्त होगी और हम सदैवी सुख और सहजता का आनंद ले सकेंगे ।

ਪੰਨਾ ੪੩੨

ਰਾਗੁ ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ਪਟੀ ਲਿਖੀ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਸਸੈ ਸੋਇ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਜਿਨਿ ਸਾਜੀ ਸਭਨਾ ਸਾਹਿਬੁ ਏਕੁ ਭਇਆ ॥
ਸੇਵਤ ਰਹੇ ਚਿਤੁ ਜਿਨ੍ ਕਾ ਲਾਗਾ ਆਇਆ ਤਿਨ੍ ਕਾ ਸਫਲੁ ਭਇਆ ॥੧॥

ਮਨ ਕਾਹੇ ਭੂਲੇ ਮੂੜ ਮਨਾ ॥
ਜਬ ਲੇਖਾ ਦੇਵਹਿ ਬੀਰਾ ਤਉ ਪੜਿਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਈਵੜੀ ਆਦਿ ਪੁਰਖੁ ਹੈ ਦਾਤਾ ਆਪੇ ਸਚਾ ਸੋਈ ॥
ਏਨਾ ਅਖਰਾ ਮਹਿ ਜੋ ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੂਝੈ ਤਿਸੁ ਸਿਰਿ ਲੇਖੁ ਨ ਹੋਈ ॥੨॥

ਊੜੈ ਉਪਮਾ ਤਾ ਕੀ ਕੀਜੈ ਜਾ ਕਾ ਅੰਤੁ ਨ ਪਾਇਆ ॥
ਸੇਵਾ ਕਰਹਿ ਸੇਈ ਫਲੁ ਪਾਵਹਿ ਜਿਨ੍ੀ ਸਚੁ ਕਮਾਇਆ ॥੩॥

ਙੰਙੈ ਙਿਆਨੁ ਬੂਝੈ ਜੇ ਕੋਈ ਪੜਿਆ ਪੰਡਿਤੁ ਸੋਈ॥
ਸਰਬ ਜੀਆ ਮਹਿ ਏਕੋ ਜਾਣੈ ਤਾ ਹਉਮੈ ਕਹੈ ਨ ਕੋਈ ॥੪॥

ਕਕੈ ਕੇਸ ਪੁੰਡਰ ਜਬ ਹੂਏ ਵਿਣੁ ਸਾਬੂਣੈ ਉਜਲਿਆ ॥
ਜਮ ਰਾਜੇ ਕੇ ਹੇਰੂ ਆਏ ਮਾਇਆ ਕੈ ਸੰਗਲਿ ਬੰਧਿ ਲਇਆ ॥੫॥

ਖਖੈ ਖੁੰਦਕਾਰੁ ਸਾਹ ਆਲਮੁ ਕਰਿ ਖਰੀਦਿ ਜਿਨਿ ਖਰਚੁ ਦੀਆ ॥
ਬੰਧਨਿ ਜਾ ਕੈ ਸਭੁ ਜਗੁ ਬਾਧਿਆ ਅਵਰੀ ਕਾ ਨਹੀ ਹੁਕਮੁ ਪਇਆ ॥੬॥

ਗਗੈ ਗੋਇ ਗਾਇ ਜਿਨਿ ਛੋਡੀ ਗਲੀ ਗੋਬਿਦੁ ਗਰਬਿ ਭਇਆ ॥
ਘੜਿ ਭਾਂਡੇ ਜਿਨਿ ਆਵੀ ਸਾਜੀ ਚਾੜਣ ਵਾਹੈ ਤਈ ਕੀਆ ॥੭॥

ਘਘੈ ਘਾਲ ਸੇਵਕੁ ਜੇ ਘਾਲੈ ਸਬਦਿ ਗੁਰੂ ਕੈ ਲਾਗਿ ਰਹੈ ॥
ਬੁਰਾ ਭਲਾ ਜੇ ਸਮ ਕਰਿ ਜਾਣੈ ਇਨ ਬਿਧਿ ਸਾਹਿਬੁ ਰਮਤੁ ਰਹੈ ॥੮॥

ਚਚੈ ਚਾਰਿ ਵੇਦ ਜਿਨਿ ਸਾਜੇ ਚਾਰੇ ਖਾਣੀ ਚਾਰਿ ਜੁਗਾ ॥
ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਜੋਗੀ ਖਾਣੀ ਭੋਗੀ ਪੜਿਆ ਪੰਡਿਤੁ ਆਪਿ ਥੀਆ ॥੯॥

ਛਛੈ ਛਾਇਆ ਵਰਤੀ ਸਭ ਅੰਤਰਿ ਤੇਰਾ ਕੀਆ ਭਰਮੁ ਹੋਆ ॥

ਪੰਨਾ ੪੩੩

ਭਰਮੁ ਉਪਾਇ ਭੁਲਾਈਅਨੁ ਆਪੇ ਤੇਰਾ ਕਰਮੁ ਹੋਆ ਤਿਨ੍ ਗੁਰੂ ਮਿਲਿਆ ॥੧੦॥

ਜਜੈ ਜਾਨੁ ਮੰਗਤ ਜਨੁ ਜਾਚੈ ਲਖ ਚਉਰਾਸੀਹ ਭੀਖ ਭਵਿਆ ॥
ਏਕੋ ਲੇਵੈ ਏਕੋ ਦੇਵੈ ਅਵਰੁ ਨ ਦੂਜਾ ਮੈ ਸੁਣਿਆ ॥੧੧॥

ਝਝੈ ਝੂਰਿ ਮਰਹੁ ਕਿਆ ਪ੍ਰਾਣੀ ਜੋ ਕਿਛੁ ਦੇਣਾ ਸੁ ਦੇ ਰਹਿਆ ॥
ਦੇ ਦੇ ਵੇਖੈ ਹੁਕਮੁ ਚਲਾਏ ਜਿਉ ਜੀਆ ਕਾ ਰਿਜਕੁ ਪਇਆ ॥੧੨॥

ਞੰਞੈ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ਜਾ ਦੇਖਾ ਦੂਜਾ ਕੋਈਨਾਹੀ ॥
ਏਕੋ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸਭ ਥਾਈ ਏਕੁ ਵਸਿਆ ਮਨ ਮਾਹੀ ॥੧੩॥

पृ-४३२

राग आसा महला १ पटी लिखी

१ओ सतिगुर प्रसाद ॥

ससै सोइ सिृसटि जिनि साजी सभना साहिबु एकु भइआ ॥
सेवत रहे चितु जिन् का लागा आइआ तिन् का सफलु भइआ ॥१॥

मन काहे भूले मूड़ मना ॥
जब लेखा देवहि बीरा तउ पड़िआ ॥१॥रहाउ॥

ईवड़ी आदि पुरखु है दाता आपे सचा सोई ॥
एना अखरा महि जो गुरमुखि बूझै तिसु सिरि लेखु न होई॥२॥

ऊड़ै उपमा ता की कीजै जा का अँतु न पाइआ ॥
सेवा करहि सेई फलु पावहि जिनी् सचु कमाइआ ॥३॥

ङंङै ङिआनु बूझै जे कोई पड़िआ पँडितु सोई ॥
सरब जीआ महि एको जाणै ता हउमै कहै न कोई ॥४॥

ककै केस पुँडर जब हूए विणु साबूणै उजलिआ ॥
जम राजे के हेरू आए माइआ कै सँगलि बँधि लइआ ॥५॥

खखै खुँदकारु साह आलमु करि खरीदि जिनि खरचु दीआ ॥
बँधनि जा कै सभु जगु बाधिआ अवरी का नही हुकमु पइआ ॥६॥

गगै गोइ गाइ जिनि छोडी गली गोबिदु गरबि भइआ ॥
घड़ि भांडे जिनि आवी साजी चाड़ण वाहै तई कीआ ॥७॥

घघै घाल सेवकु जे घालै सबदि गुरू कै लागि रहै ॥
बुरा भला जे समि करि जाणै इन बिधि साहिबु रमतु रहै ॥८॥

चचै चारि वेद जिनि साजे चारे खाणी चारि जुगा ॥
जुगु जुगु जोगी खाणी भोगी पड़िआ पँडितु आपि थीआ ॥९॥

छछै छाइआ वरती सभ अँतिर तेरा कीआ भरमु होआ ॥

पृ-४३३

भरमु उपाइ भुलाईअनु आपे तेरा करमु होआ तिन् गुरू मिलिआ ॥१०॥

जजै जानु मँगत जनु जाचै लख चउरासीह भीख भविआ ॥
एको लेवै एको देवै अवरु न दूजा मै सुणिआ ॥११॥

झझै झूरि मरहु किआ प्राणी जो किछु देणा सु दे रहिआ ॥
दे दे वेखै हुकमु चलाए जिउ जीआ का रिजकु पइआ ॥१२॥

ञँञै नदरि करे जा देखा दूजा कोई नाही ॥
एको रवि रहिआ सभ थाई एकु वसिआ मन माही ॥१३॥

ਟਟੈ ਟੰਚੁ ਕਰਹੁ ਕਿਆ ਪ੍ਰਾਣੀ ਘੜੀ ਕਿ ਮੁਹਤਿ ਕਿ ਉਠਿ ਚਲਣਾ ॥
ਜੂਐ ਜਨਮੁ ਨ ਹਾਰਹੁ ਅਪਣਾ ਭਾਜਿ ਪੜਹੁ ਤੁਮ ਹਰਿ ਸਰਣਾ ॥੧੪॥

ਠਠੈ ਠਾਢਿ ਵਰਤੀ ਤਿਨ ਅੰਤਰਿ ਹਰਿ ਚਰਣੀ ਜਿਨ੍ ਕਾ ਚਿਤੁ ਲਾਗਾ ॥
ਚਿਤੁ ਲਾਗਾ ਸੇਈ ਜਨ ਨਿਸਤਰੇ ਤਉ ਪਰਸਾਦੀ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥੧੫॥

ਡਡੈ ਡੰਫੁ ਕਰਹੁ ਕਿਆ ਪ੍ਰਾਣੀ ਜੋ ਕਿਛੁ ਹੋਆ ਸੁ ਸਭੁ ਚਲਣਾ ॥
ਤਿਸੈ ਸਰੇਵਹੁ ਤਾ ਸੁਖੁ ਪਾਵਹੁ ਸਰਬ ਨਿਰੰਤਰਿ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ॥੧੬॥

ਢਢੈ ਢਾਹਿ ਉਸਾਰੈ ਆਪੇ ਜਿਉ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਤਿਵੈ ਕਰੇ ॥
ਕਰਿ ਕਰਿ ਵੇਖੈ ਹੁਕਮੁ ਚਲਾਏ ਤਿਸੁ ਨਿਸਤਾਰੇ ਜਾ ਕਉ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ॥੧੭॥

ਣਾਣੈ ਰਵਤੁ ਰਹੈ ਘਟ ਅੰਤਰਿ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ਸੋਈ ॥
ਆਪੇ ਆਪਿ ਮਿਲਾਏ ਕਰਤਾ ਪੁਨਰਪਿ ਜਨਮੁ ਨ ਹੋਈ ॥੧੮॥

ਤਤੈ ਤਾਰੂ ਭਵਜਲੁ ਹੋਆ ਤਾ ਕਾ ਅੰਤੁ ਨ ਪਾਇਆ ॥
ਨਾ ਤਰ ਨਾ ਤੁਲਹਾ ਹਮ ਬੂਡਸਿ ਤਾਰਿ ਲੇਹਿ ਤਾਰਣ ਰਾਇਆ ॥੧੯॥

ਥਥੈ ਥਾਨਿ ਥਾਨੰਤਰਿ ਸੋਈ ਜਾ ਕਾ ਕੀਆ ਸਭੁ ਹੋਆ ॥
ਕਿਆ ਭਰਮੁ ਕਿਆ ਮਾਇਆ ਕਹੀਐ ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਸੋਈ ਭਲਾ ॥੨੦॥

ਦਦੈ ਦੋਸੁ ਨ ਦੇਊ ਕਿਸੈ ਦੋਸੁ ਕਰੰਮਾ ਆਪਣਿਆ ॥
ਜੋ ਮੈ ਕੀਆ ਸੋ ਮੈ ਪਾਇਆ ਦੋਸੁ ਨ ਦੀਜੈ ਅਵਰ ਜਨਾ ॥੨੧॥

ਧਧੈ ਧਾਰਿ ਕਲਾ ਜਿਨਿ ਛੋਡੀ ਹਰਿ ਚੀਜੀ ਜਿਨਿ ਰੰਗ ਕੀਆ ॥
ਤਿਸ ਦਾ ਦੀਆ ਸਭਨੀ ਲੀਆ ਕਰਮੀ ਕਰਮੀ ਹੁਕਮੁ ਪਇਆ ॥੨੨॥

ਨੰਨੈ ਨਾਹ ਭੋਗ ਨਿਤ ਭੋਗੈ ਨਾ ਡੀਠਾ ਨਾ ਸੰਮ੍ਲਿਆ ॥
ਗਲੀ ਹਉ ਸੋਹਾਗਣਿ ਭੈਣੇ ਕੰਤੁ ਨ ਕਬਹੂੰ ਮੈ ਮਿਲਿਆ ॥੨੩॥

ਪਪੈ ਪਾਤਿਸਾਹੁ ਪਰਮੇਸਰੁ ਵੇਖਣ ਕਉ ਪਰਪੰਚੁ ਕੀਆ ॥
ਦੇਖੈ ਬੂਝੈ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਜਾਣੈ ਅੰਤਰਿ ਬਾਹਰਿ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ॥੨੪॥

ਫਫੈ ਫਾਹੀ ਸਭੁ ਜਗੁ ਫਾਸਾ ਜਮ ਕੈ ਸੰਗਲਿ ਬੰਧਿ ਲਇਆ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਸੇ ਨਰ ਉਬਰੇ ਜਿ ਹਰਿ ਸਰਣਾਗਤਿ ਭਜਿ ਪਇਆ ॥੨੫॥

ਬਬੈ ਬਾਜੀ ਖੇਲਣ ਲਾਗਾ ਚਉਪੜਿ ਕੀਤੇ ਚਾਰਿ ਜੁਗਾ॥

ਪੰਨਾ ੪੩੪

ਜੀਅ ਜੰਤ ਸਭ ਸਾਰੀ ਕੀਤੇ ਪਾਸਾ ਢਾਲਣਿ ਆਪਿ ਲਗਾ ॥੨੬॥

ਭਭੈ ਭਾਲਹਿ ਸੇ ਫਲੁ ਪਾਵਹਿ ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਜਿਨ੍ ਕਉ ਭਉ ਪਇਆ ॥
ਮਨਮੁਖ ਫਿਰਹਿ ਨ ਚੇਤਹਿ ਮੂੜੇ ਲਖ ਚਉਰਾਸੀਹ ਫੇਰੁ ਪਇਆ ॥੨੭॥

ਮੰਮੈ ਮੋਹੁ ਮਰਣੁ ਮਧੁਸੂਦਨੁ ਮਰਣੁ ਭਇਆ ਤਬ ਚੇਤਵਿਆ ॥
ਕਾਇਆ ਭੀਤਰਿ ਅਵਰੋ ਪੜਿਆ ਮੰਮਾ ਅਖਰੁ ਵੀਸਰਿਆ ॥੨੮॥

ਯਯੈ ਜਨਮੁ ਨ ਹੋਵੀ ਕਦ ਹੀ ਜੇ ਕਰਿ ਸਚੁ ਪਛਾਣੈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਖੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੂਝੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਏਕੋ ਜਾਣੈ ॥੨੯॥

टटै टँचु करहु किआ प्राणी घड़ी कि मुहति कि उठि चलणा ॥
जूऐ जनमु न हारहु अपणा भाजि पड़हु तुम हरि सरणा ॥१४॥

ठठै ठाढि वरती तिन अँतरि हरि चरणी जिन् का चितु लागा ॥
चितु लागा सेई जन निसतरे तउ परसादी सुखु पाइआ ॥१५॥

डडै डँफु करहु किआ प्राणी जो किछु होआ सु सभु चलणा ॥
तिसै सरेवहु ता सुखु पावहु सरब निरँतरि रवि रहिआ ॥१६॥

ढढै ढाहि उसारै आपे जिउ तिसु भावै तिवै करे ॥
करि करि वेखै हुकमु चलाए तिसु निसतारे जा कउ नदरि करे ॥१७॥

णाणै रवतु रहै घट अँतरि हरि गुण गावै सोई ॥
आपे आपि मिलाए करता पुनरपि जनमु न होई ॥१८॥

ततै तारू भवजलु होआ ता का अँतु न पाइआ ॥
ना तर ना तुलहा हम बूडसि तारि लेहि तारण राइआ ॥१९॥

थथै थानि थानँतरि सोई जा का कीआ सभु होआ ॥
किआ भरमु किआ माइआ कहीऐ जो तिसु भावै सोई भला ॥२०॥

ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करँमा आपणिआ ॥
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना ॥२१॥

धधै धारि कला जिनि छोडी हरि चीजी जिनि रँग कीआ ॥
तिस दा दीआ सभनी लीआ करमी करमी हुकमु पइआ ॥२२॥

ननै नाह भोग नित भोगै ना डीठा ना सँम्हलिआ ॥
गली हउ सोहागणि भैणे कँतु न कबहूँ मैं मिलिआ ॥२३॥

पपै पातिसाहु परमेसरु वेखण कउ परपँचु कीआ ॥
देखै बूझै सभु किछु जाणै अँतरि बाहरि रवि रहिआ ॥२४॥

फफै फाही सभु जगु फासा जम कै सँगलि बँधि लइआ ॥
गुर परसादी से नर उबरे जि हरि सरणागति भजि पइआ ॥२५॥

बबै बाजी खेलण लागा चउपड़ि कीते चारि जुगा ॥

पृ-४३४

जीअ जँत सभ सारी कीते पासा ढालणि आपि लगा ॥२६॥

भभै भालहि से फलु पावहि गुर परसादी जिन् कउ भउ पइआ ॥
मनमुख फिरहि न चेतहि मूड़े लख चउरासीह फेरु पइआ ॥२७॥

मँमै मोहु मरणु मधुसूदनु मरणु भइआ तब चेतविआ ॥
काइआ भीतरि अवरो पड़िआ मँमा अखरु वीसरिआ ॥२८॥

ययै जनमु न होवी कद ही जे करि सचु पछाणै ॥
गुरमुखि आखै गुरमुखि बूझै गुरमुखि एको जाणै ॥२९॥

ਰਾਰੈ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸਭ ਅੰਤਰਿ ਜੇਤੇ ਕੀਏ ਜੰਤਾ ॥ ਜੰਤ ਉਪਾਇ ਧੰਧੈ ਸਭ ਲਾਏ ਕਰਮੁ ਹੋਆ ਤਿਨ ਨਾਮੁ ਲਇਆ ॥੩੦॥	रारै रवि रहिआ सभ अँतरि जेते कीए जँता ॥ जँत उपाइ धँधै सभ लाए करमु होआ तिन नामु लइआ ॥३०॥
ਲਲੈ ਲਾਇ ਧੰਧੈ ਜਿਨਿ ਛੋਡੀ ਮੀਠਾ ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਕੀਆ ॥ ਖਾਣਾ ਪੀਣਾ ਸਮ ਕਰਿ ਸਹਣਾ ਭਾਣੈ ਤਾ ਕੈ ਹੁਕਮੁ ਪਇਆ ॥੩੧॥	ललै लाइ धँधै जिनि छोडी मीठा माइआ मोहु कीआ ॥ खाणा पीणा सम करि सहणा भाणै ता कै हुकमु पइआ ॥३१॥
ਵਵੈ ਵਾਸੁਦੇਉ ਪਰਮੇਸਰੁ ਵੇਖਣ ਕਉ ਜਿਨਿ ਵੇਸੁ ਕੀਆ ॥ ਵੇਖੈ ਚਾਖੈ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਜਾਣੈ ਅੰਤਰਿ ਬਾਹਰਿ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ॥੩੨॥	ववै वासुदेउ परमेसरु वेखण कउ जिनि वेसु कीआ ॥ वेखै चाखै सभु किछु जाणै अँतरि बाहरि रवि रहिआ ॥३२॥
ੜਾੜੈ ਰਾੜਿ ਕਰਹਿ ਕਿਆ ਪ੍ਰਾਣੀ ਤਿਸਹਿ ਧਿਆਵਹੁ ਜਿ ਅਮਰੁ ਹੋਆ ॥ ਤਿਸਹਿ ਧਿਆਵਹੁ ਸਚਿ ਸਮਾਵਹੁ ਓਸੁ ਵਿਟਹੁ ਕੁਰਬਾਣੁ ਕੀਆ ॥੩੩॥	ड़ाड़े राड़ि करहि किआ प्राणी तिसहि धिआवहु जि अमरु होआ ॥ तिसहि धिआवहु सचि समावहु ओसु विटहु कुरबाणु कीआ ॥३३॥
ਹਾਹੈ ਹੋਰੁ ਨ ਕੋਈ ਦਾਤਾ ਜੀਅ ਉਪਾਇ ਜਿਨਿ ਰਿਜਕੁ ਦੀਆ ॥ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵਹੁ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਸਮਾਵਹੁ ਅਨਦਿਨੁ ਲਾਹਾ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਲੀਆ ॥੩੪॥	हाहै होरु न कोई दाता जीअ उपाइ जिनि रिजकु दीआ ॥ हरि नामु धिआवहु हरि नामि समावहु अनदिनु लाहा हरि नामु लीआ ॥३४॥
ਆਇੜੈ ਆਪਿ ਕਰੇ ਜਿਨਿ ਛੋਡੀ ਜੋ ਕਿਛੁ ਕਰਣਾ ਸੁ ਕਰਿ ਰਹਿਆ ॥ ਕਰੇ ਕਰਾਏ ਸਭ ਕਿਛੁ ਜਾਣੈ ਨਾਨਕ ਸਾਇਰ ਇਵ ਕਹਿਆ ॥੩੫॥੧॥	आइड़ै आपि करे जिनि छोडी जो किछु करणा सु करि रहिआ ॥ करे कराए सभ किछु जाणै नानक साइर इव कहिआ ॥३५॥१॥

राग आसा महला - १
पट्टी लिखी

डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार ऐसा माना जाता है कि गुरु नानक देव जी ने इस शब्द की रचना लगभग सात वर्ष की आयु में की थी जब वह शिक्षक के पास स्कूल भेजे गये थे ।शिक्षक ने पट्टी (लकड़ी की तख्ती) पर एक वर्ण अभ्यास करने के लिये लिख दिया । परन्तु गुरु जी ने उस वर्ण से आरम्भ करके कविता के रूप में एक शब्द / भजन लिख दिया, इस प्रकार उन्होंने वर्णमाला के ३५ वर्णों से आरंभ करके उतने ही दोहे लिखे ।

व्यक्तिगत सूचना - १९९४ में लेखक को पाकिस्तान में गुरुद्वारा ननकाणा साहिब के निकट बने गुरुद्वारा पट्टी साहिब जाने का सौभाग्य प्राप्त हुया जहाँ पर ईंटों के फ़र्श पर भरी गरमी के मौसम में कुछ ग़रीब सिख बच्चे लकड़ी की पट्टियों पर गुरमुखी लिपि और गुरबाणी लिखना सीख रहे थे।गुरमुखी वर्णमाला के ससा -स- वर्ण से आरंभ करते हुये गुरु जी निम्न प्रकार से उपदेश देते हैं .

ससा -स-

"प्रभु, जिसने सृष्टि का सृजन किया है, उस सब का स्वामी प्रभु स्वयं एक ही है । उनका इस संसार में आना सफल हुया जिनका मन प्रभु की सेवा में रमा रहा "।(१)

तब गुरु जी अपने मन को कहते हैं "हे मेरे मूर्ख मन, तुम जीवन के सही मार्ग को क्यों भूल रहे हो, तुम्हें तभी पढ़ा लिखा समझा जायेगा भाई, जब ईश्वर के दरबार में तुम्हारा लेखा जोखा चुक जायेगा ।(१-विराम)

ईड़ी -ई-

"परोपकारी प्रभु, जो जीवन के स्रोत हैं, आदि पुरुष हैं, सबके दाता हैं और सत्य हैं ।गुरु का प्यारा जो इन वर्णों में से सत्य को बूझ लेगा, उसके ऊपर कोई ऋण नहीं रहेगा"।(२)

ऊड़ा - उ-

" हमें उस प्रभु की महिमा का गायन करना चाहिये जो अपार है । जो सत्य मार्ग पर रह कर प्रभु की सेवा अथवा ध्यान करते हैं, उन्हीं का जीवन सफल होता है "।(३)

ङङा-ङ

केवल वही मनुष्य विद्वान पंडित है जिसे दैवी ज्ञान है और समझता है कि केवल एक प्रभु ही सब जीवों के अंदर बिराजमान है, ऐसा मनुष्य अभिमान भरा एक शब्द भी नहीं बोलता "।(४)

कका -क-

कुछ लोग स्वयं को यह सोच कर धोखे में रखते हैं कि वह बुढ़ापे में प्रभु का ध्यान एवं पाठ पूजा करेंगे, अत : वह युवा तथा अधेड़ अवस्था सांसारिक धंधों में व्यस्त रह कर बिता देते हैं, तथा कई बार बुढ़ापे में भी कामों में उलझे रहते हैं। इस दशा पर गुरु जी कहते हैं "जब मनुष्य बूढ़ा हो जाता है और बाल बिना साबुन लगाये ही उजले (सफेद)लगते हैं, तब वह चाहते हुये भी प्रभु का ध्यान नही कर सकता (क्योंकि वह कमज़ोर हो जाता है और मृत्यु का समय भी निकट आ जाता है)। एक ओर तो यमदूत आ धमकते हैं और दूसरी ओर उसे माया की ज़ंजीरें बाँधे हुये हैं (इस लिये वह ईश्वर का ध्यान नहीं कर पाता)।(५)

खखा, -ख-

हमारे जीवन पर प्रभु के नियंत्रण के विषय पर गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्र) प्रभु ब्रह्मांड का राजा है जिसके आदेशों के अंदर समस्त संसार बँधा हुया है, जहाँ किसी दूसरे की आज्ञा मान्य नहीं (मानो सारे जीव उसके वश में है) । जैसे कि उसने ख़रीद कर (दास की भाँति) सबको जीवन के कुछ श्वास दिये हैं "।(६)

गगा, -ग-

प्राणी यह भूल जाता है कि प्रभु ने यह ब्रह्मांड रचा है और अभिमान से भर कर वह स्वयं को पृथ्वी का चालक समझने की थोथी बातें करता है। किन्तु सच्चाई यह है कि जैसे कुम्हार मिट्टी के बर्तन बना कर भट्टी में पकाता है, वैसे ही प्रभु जीवों की रचना कर उन्हें संसार के फेरों में डाल कर पूर्ण रूप से परिपक्च करते हैं ।(७)

घघा, -घ-

(हे' मेरे मित्रो, अंहम और अभिमान में व्यस्त रहने की अपेक्षा) यदि एक सच्चा सेवक परिश्रम करता है और गुरु के अनुसार रहकर भले और बुरे को समान भाव से स्वीकार करता है तो समझो, वह स्वयं को प्रभु में लीन रखता है (और वह प्रभु के घर में स्वीकृत है)" (८)

चचा, -च-

वही, जिसने चारों वेद रचे, जीवन उत्पत्ति के चारों उदगम् (अंडज, जेरज, सेतज तथा उतभुज) तथा चारों युग का सृजन किया, वही प्रभु सबसे बड़ा योगी है । वह समस्त वस्तुयों का भोगी तथा युगों युगों से महान विद्वान है । (इसलिये हमें अपनी तुच्छ शिक्षा, सांसारिक उपलब्धियों व आध्यात्मिक ज्ञान पर घमंड नहीं होना चाहिये) "।(९)

छछा, -छ-

आगे ईश्वर से गुरु जी कहते हैं " (हे प्रभु, प्राणी भी असहाय है क्योंकि) तेरे द्वारा रचित एक मायाजाल संसार पर पसरा हुआ है, तुम्हारे इस कृत्य के कारण जीवों के अंदर भ्रम उपज गये हैं । तुमने स्वयं ही कुछ लोगों को इन भ्रमों में भटका दिया है, किन्तु कुछ को तुम्हारी कृपा से गुरु के द्वारा मार्गदर्शन मिल गया है "।(१०)

जजा, -ज-

नाशवान प्राणी की दशा पर गुरु जी टिप्पणी करते हैं "(हे मेरे मित्र), प्राणी एक भिक्षु की भाँति है, जो सच्चे प्रभु से भिक्षा माँगता है । वास्तव में चौरासी लाख (सभी जीव जँतु) कुछ ना कुछ माँगते फिर रहे हैं। प्राणी को यह समझना चाहिये कि सभी जीवों में एक ही ईश्वर है, जो देता भी है और माँगता भी है । मैंने और दूसरा कोई नहीं सुना(जो दे भी और माँगे भी)"।(११)

झझा, -झ-

अधिक धन सम्पत्ति तथा वस्तुओं की इच्छा से दुखी प्राणियों को गुरु जी परामर्श देते हुये पूछते हैं "तुम क्यों और अधिक धन माल की चिंता से मरे जा रहे हो। याद रखो, उसने जो कुछ तुम्हें देना है वह (तुम्हारे माँगे बिना) दे रहा है । देते समय वह देख रहा है कि उसकी आज्ञा अनुसार जो भी जीविका किसी के भाग्य में है वह उसे मिलती रहे "।(१२)

ञञा, -ञ,-

गुरु जी विनम्र भाव से स्वीकार करते हुये कहते हैं " (हे मेरे मित्रो), जब भी देखता हूँ प्रभु जैसी कृपा दृष्टि करने वाला कोई और नहीं है, (केवल एक वही प्रभु है) वह सर्वव्यापी है तथा सबके मन में बसता है "।(१३)

टटा, -ट-

सांसारिक आडम्बरों के लिए अत्यधिक समय बिताने तथा परिश्रम करने के विरोध में गुरु जी हमें परामर्श देते हुये कहते हैं " हे प्राणी, तुम क्यों इन आडम्बरों (धन दौलत जमा करने और उसके दिखावे) में उलझते हो, किसी भी घड़ी पल में तुम्हें उठ कर चल देना है । सो अपने जन्म को (इस सांसारिक मोह माया के) जूऐ में न हार कर शीघ्रता से हरि की शरण में जाकर इसका सदुपयोग करो "।(१४)

ठठा, -ठ-

अब गुरु जी हरि की शरण में जाने का लाभ बताते हुए कहते हैं "(हे प्राणी), जो हरि के चरणों में अपना मन रमा लेते हैं उनके अंदर शांति

अथवा ठंडक रहती है। हे प्रभु, वही पार लग जाते हैं, जिनका मन तेरे में लीन रहता है और तेरी कृपा से वह सुख पाते हैं ”। (१५)

डडा, -ड-

धन दौलत के झूठे प्रदर्शन के विरोध में एक बार फिर हमें परामर्श दे रहे हैं “हे प्राणी, तुम झूठा प्रदर्शन क्यों करते हो? क्योंकि जो भी इस संसार में रचा गया है वह सब चला जायेगा । सुनो, उसकी सेवा करो जो सदा सर्वव्यापी है और सुखी रहो ”।(१६)

ढढा, -ढ-

इस संसार के विषय में गुरु जी कहते हैं “(हे मेरे मित्रो), ईश्वर स्वयं ही इस संसार को रचता है और नष्ट करता है। उसे जो अच्छा लगता है वही करता है । वह बारम्बार रचने के पश्चात अपनी रचना को अपने निर्देश में रख कर देखता है और उसी को पार लगाता है जिस पर कृपा दृष्टि करता है ”।(१७)

णाणा, -ण-

जो लोग सांसारिक झूठे आडम्बरों में समय नष्ट न करके प्रभु के गुण गाते हैं, उनका एक और भेद गुरु जी बताते हैं “जिसके हृदय में प्रभु का निवास है वही उसके गुण गाता है, सृजनकर्ता तब स्वयं ही उस प्राणी को अपने से जोड़ लेता है और फिर ऐसा मनुष्य जन्म मरण के फेरों में नहीं आता ”।(१८)

तता, -त-

प्रभु से प्रार्थना करते हुये गुरु जी कहते हैं “(हे प्रभु), यह भयानक सांसारिक भवसागर इतना गहरा हो गया है कि इसका कोई ओर छोर ही नहीं पाया जाता । हमारे पास ना कोई नाव है, ना ही कोई बेड़ी है, अत: हम डूब रहे हैं । हे राखनहार, इस सागर को तैर कर पार करने में हमारी सहायता करो ”।(१९)

थथा, -थ-

‘थ’ वर्ण के द्वारा गुरु जी हमें कहते हैं “(प्रभु) जिसके करने से सब कुछ हुया है वही सभी स्थानों और सूक्ष्मताओं में समाया हुआ है, उसी के करने से सब कुछ हुया है।(जो यह विश्वास करता है कि) प्रभु की जो इच्छा है वही सबसे भली है, (इसके बाद उस मनुष्य के मन में) कोई भ्रम या माया जाल का कोई मतलब नहीं रहता ”।(२०)

ददा, -द-

हम प्रायः अपनी विपदायों अथवा दुखों का दोष दूसरों पर डालते हैं और यह नहीं समझते कि कुछ अपवादों को छोड़ कर हमारे समस्त दुख दर्द इस या पूर्व जन्मों के करमों के फल हैं ।अत: गुरु जी कहते हैं “(मेरी समझ में आ गया है कि) मेरे दुख मेरे अपने करमों के कारण हैं, मैं किसी और को दोष नहीं देता। जो कुछ भी मैंने पहले किया, मुझे उसी का फल मिला ।(इसलिये मैं कहता हूँ, कि हमें अपने दुखों के लिये) दूसरों को दोषी नहीं मानना चाहिये ”।(२१)

धधा, -ध-

जीवों के भाग्य में एक और खंड का वर्णन गुरु जी करते हैं, “प्रभु ने अपनी शक्ति तथा कला ग्रहण कर उसका प्रसार अपने जीवों में भी कर दिया है, उसने सबको अपने रंग (अथवा सुन्दरता) से भर दिया है ।उसने जो भी दिया, वह सबने पा लिया (अतः यह देन स्वच्छंद नहीं) । उसकी आज्ञानुसार (कितना सुख व दुख भाग्य में है) उस मनुष्य के पूर्व करमों पर आधारित है ”।(२२)

नना, -न-

गुरु जी अब कुछ उन ढोंगी पंडितों और संतों के साथ अपने को रखते हैं जो ऐसा व्यवहार करते हैं जैसे कि नित्य ही वह प्रभु से मिलन का आनंद प्राप्त करते हैं, वह कहते हैं “ उस पति (प्रभु) का नित्य ही मैंने ना कोई आनंद लिया, ना ही उसे मैंने देखा और न ही उसे कभी (अपने हृदय में) याद किया। हे बहन, केवल अपनी बड़ी बड़ी बातों से ही मैं सुहागिन बनी रही, (सत्य तो यह है कि) पति (प्रभु) तो मुझे कभी मिला ही नहीं ”।(२३)

पपा, -प-

ईश्वर और उसकी रचना पर गुरु जी कहते हैं “(हे मेरे मित्रो), प्रभु ब्रह्मांड का बादशाह है । उसने इस संसार की रचना तथा उसका पसार हमारे देखने तथा गुणगान करने के लिए किया । वह मन के अंदर और बाहर भी व्याप्त है, सब देख और बूझ रहा है, तथा सब कुछ जानता है ।(२४)

फफा,-फ-

किन्तु संसार की दशा पर गुरु जी टिप्पणी करते हैं “(हे मेरे मित्रो), समस्त संसार मृत्यु की फाँसी के फंदे में (सांसारिक माया जाल के किसी न किसी बंधन में) फँसा है और यमराज की ज़ंजीरों में जकड़ा है। गुरु की कृपा से वह मनुष्य (इस फंदे से) उबर गये हैं जो हरि की

शरण में जल्दी से आ गये हैं"।(२५)

बबा, -ब-

संसार के विधि विधान तथा जीवों के भाग्य की तुलना गुरु जी यहाँ पर चौपड़ (लूडो जैसा एक भारतीय खेल) से कर रहे हैं, वह कहते हैं " ईश्वर ब्रह्मांड के साथ चौपड़ का खेल खेल रहा है,जहाँ पर चारों युगों को उसने खेल के चार रास्ते /खंडों में रखा है । समस्त जीव उस खेल में नरदों की भाँति हैं और वह स्वयं उसमें पासा फेंकने (एवं खेल का आंनद लेने) में व्यस्त है।(जहाँ पर कुछ लोग कई नरदों की भाँति जीवन यात्रा सफलता से पूर्ण कर लेते हैं जबकि कई और दूसरी नरदों की तरह इस चौपड़ के खेल में चक्कर काटते रहते हैं)"।(२६)

भभा, -भ-

जीवन के खेल में कुछ मनुष्य विजयी रहते हैं तथा कुछ हार जाते हैं इस पर गुरु जी संक्षेप में कहते हैं " गुरु की कृपा से जिनके हृदय में ईश्वर का कुछ भय बसा है वह उसे पाने के लिये कुछ प्रयास करते हैं और इसका फल भी पाते हैं । परन्तु अभिमानी मूर्ख लोग इधर उधर भटकते फिरते हैं, प्रभु को याद नही करते और चौरासी लाख जन्मों के फेर में पड़े रहते हैं "।(२७)

ममा, -म-

गुरु जी मनुष्य की सामान्य प्रवृत्ति पर टिप्पणी करते हैं "सांसारिक जंजालों के बीच मृत्यु अथवा मधुसूदन तभी ध्यान में आते हैं जब संसार से विदा होने का समय बहुत निकट आ जाता है । अन्यथा मनुष्य जीवन में बहुत कुछ पढ़ता है (पर मृत्यु या मधुसूदन के विषय में नही) जैसे कि वह 'म' वर्ण को पूर्णतया भूल गया हो "।(२८)

यया, -य-

जन्म मरण के फेरों से पूर्णतया दूर रहने के लिये एक गुरु का शिष्य क्या उपाय करता है, यह राह हमें बताते हुये गुरु जी कहते हैं " यदि सच्चे सदैवी प्रभु को पहचान लो तो कभी भी पुनर्जन्म अथवा मरण नहीं हो सकता । गुरु का शिष्य सदैव केवल एक ही प्रभु के विषय पर कहता है , समझता है और जानता है (जो सर्वव्यापी है)" ।(२९)

रारा, -र-

उपरोक्त विचार पर आगे गुरु जी विस्तार से कहते हैं "(एक गुरु का शिष्य समझता है) कि जितने भी जीव ईश्वर ने रचे हैं वह उन सभी में बसा है । सबकी रचना करने के पश्चात उसने सभी को अपने अपने कामों में व्यस्त कर दिया है । परन्तु जिन पर उसने अपनी कृपा की वह उसके नाम के ध्यान में लगे रहे "।(३०)

लला, -ल-

साँसारिक माया जाल का क्या महत्व है और एक मनुष्य को संसार के दुखों व सुखों को कैसे लेना चाहिये इस पर गुरु जी कहते हैं "ईश्वर, जिसने समस्त संसार को विभिन्न कार्यों में लगा रखा है उसी ने सांसारिक बंधनों को (माया मोह को) मधुर एवं आनंद दायक भी बनाया है । अतः मनुष्य को खाने पीने का आनंद और पीड़ा का दुख प्रभु का निर्देश मानते हुये सम भाव से सहन करना चाहिये "।(३१)

वावा, -व-

ईश्वर एक है और उसने इस ब्रह्मांड को रचा है, इस विचारधारा को एक बार फिर से स्पष्ट करते हुए गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे मित्रो), सर्वव्यापी परमेश्वर एक रचयिता का वेश धारण कर संसार का खेल देख रहा है । वह देखता है, विचारता है और सब जानता है, तथा अंदर बाहर सभी जगह व्याप्त है "।(३२)

ड़ाड़ा, -ड़-

व्यर्थ के झगड़े और बहसबाजी के विरोध में अब गुरु जी परामर्श देते हैं "हे' प्राणी तुम दूसरों के साथ क्यों तर्क-वितर्क अथवा झगड़ों में उलझते हो (कि हम किस ईश्वर की पूजा करें), उसी प्रभु का ध्यान करो जो अमर है, यदि उसका ध्यान करोगे तब ऐसे सच्चे में समा जायोगे। मैं उसी प्रभु पर बलिहारी हूँ "।(३३)

हाहा, -ह-

गुरु जी यह स्पष्ट करते हैं कि प्रभु जिसने हमें रचा है उसके अतिरिक्त हमें और कोई देने वाला नहीं है, वह कहते हैं "(हे मेरे मित्रों, स्मरण रहे) प्रभु जिसने सब जीवों को रचा है उन्हें उसी के अतिरिक्त और कोई देने वाला नहीं है, उसने सब को नित्य का भोजन और काम धंधा प्रदान किया है । इसलिये तुम्हें प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये और नाम में समा जाना चाहिये। दिन रात हरि नाम का जाप करने वालों को बहुत लाभ हुया है "।(३४)

ऐड़ा, -अ-

केवल सात वर्ष की छोटी अवस्था में रचित इस शब्द के अंत में गुरु जी कहते हैं "वह जिसने ब्रह्मांड को रचा है, वही कर रहा है जो उसने करना है । वही करता है और स्वयं सब कुछ करवाता है, वह सब कुछ जानता है । यही सब कुछ शायर / कवि नानक (को समझ में आया है

और संसार में सभी को उस) ने बताया है। (३५)

इस पूरे 'पट्टी लिखी 'अध्याय का संदेश यह है कि हम आदर पूर्ण ढंग से स्वीकार करें कि प्रभु जो भी करते हैं या करवाते हैं, उसमें उनकी इच्छा है और हमें सदैव उनको अपने निकट अनुभव करते हुये उनके नाम का ध्यान करना चाहिये।

ਪੰਨਾ ੪੩੫

ਰਾਗੁ ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ਛੰਤ ਘਰੁ ੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਮੁੰਧ ਜੋਬਨਿ ਬਾਲੜੀਏ ਮੇਰਾ ਪਿਰੁ ਰਲੀਆਲਾ ਰਾਮ ॥
ਧਨ ਪਿਰ ਨੇਹੁ ਘਣਾ ਰਸਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਦਇਆਲਾ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੪੩੬

ਧਨ ਪਿਰਹਿ ਮੇਲਾ ਹੋਇ ਸੁਆਮੀ ਆਪਿ ਪ੍ਰਭੁ ਕਿਰਪਾ ਕਰੇ ॥
ਸੇਜਾ ਸੁਹਾਵੀ ਸੰਗਿ ਪਿਰ ਕੈ ਸਾਤ ਸਰ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਭਰੇ ॥
ਕਰਿ ਦਇਆ ਮਇਆ ਦਇਆਲ ਸਾਚੇ ਸਬਦਿ ਮਿਲਿ ਗੁਣ ਗਾਵਓ ॥
ਨਾਨਕਾ ਹਰਿ ਵਰੁ ਦੇਖਿ ਬਿਗਸੀ ਮੁੰਧ ਮਨਿ ਓਮਾਹਓ ॥੧॥

ਮੁੰਧ ਸਹਜਿ ਸਲੋਨੜੀਏ ਇਕ ਪ੍ਰੇਮ ਬਿਨੰਤੀ ਰਾਮ ॥
ਮੈ ਮਨਿ ਤਨਿ ਹਰਿ ਭਾਵੈ ਪ੍ਰਭ ਸੰਗਮਿ ਰਾਤੀ ਰਾਮ ॥
ਪ੍ਰਭ ਪ੍ਰੇਮਿ ਰਾਤੀ ਹਰਿ ਬਿਨੰਤੀ ਨਾਮਿ ਹਰਿ ਕੈ ਸੁਖਿ ਵਸੈ ॥
ਤਉ ਗੁਣ ਪਛਾਣਹਿ ਤਾ ਪ੍ਰਭੁ ਜਾਣਹਿ ਗੁਣਹ ਵਸਿ ਅਵਗਣ ਨਸੈ ॥
ਤੁਧੁ ਬਾਝੁ ਇਕੁ ਤਿਲੁ ਰਹਿ ਨ ਸਾਕਾ ਕਹਣਿ ਸੁਨਣਿ ਨ ਧੀਜਏ ॥
ਨਾਨਕਾ ਪ੍ਰਿਉ ਪ੍ਰਿਉ ਕਰਿ ਪੁਕਾਰੇ ਰਸਨ ਰਸਿ ਮਨੁ ਭੀਜਏ ॥੨॥

ਸਖੀਹੋ ਸਹੇਲੜੀਹੋ ਮੇਰਾ ਪਿਰੁ ਵਣਜਾਰਾ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੋੁ ਵਣੰਜੜਿਆ ਰਸਿ ਮੋਲਿ ਅਪਾਰਾ ਰਾਮ ॥
ਮੋਲਿ ਅਮੋਲੋ ਸਚ ਘਰਿ ਢੋਲੋ ਪ੍ਰਭ ਭਾਵੈ ਤਾ ਮੁੰਧ ਭਲੀ ॥
ਇਕਿ ਸੰਗਿ ਹਰਿ ਕੈ ਕਰਹਿ ਰਲੀਆ ਹਉ ਪੁਕਾਰੀ ਦਰਿ ਖਲੀ ॥
ਕਰਣ ਕਾਰਣ ਸਮਰਥ ਸ੍ਰੀਧਰ ਆਪਿ ਕਾਰਜੁ ਸਾਰਏ ॥
ਨਾਨਕ ਨਦਰੀ ਧਨ ਸੋਹਾਗਣਿ ਸਬਦੁ ਅਭ ਸਾਧਾਰਏ ॥੩॥

ਹਮ ਘਰਿ ਸਾਚਾ ਸੋਹਿਲੜਾ ਪ੍ਰਭ ਆਇਅੜੇ ਮੀਤਾ ਰਾਮ ॥
ਰਾਵੇ ਰੰਗਿ ਰਾਤੜਿਆ ਮਨੁ ਲੀਅੜਾ ਦੀਤਾ ਰਾਮ ॥
ਆਪਣਾ ਮਨੁ ਦੀਆ ਹਰਿ ਵਰੁ ਲੀਆ ਜਿਉ ਭਾਵੈ ਤਿਉ ਰਾਵਏ ॥
ਤਨੁ ਮਨੁ ਪਿਰ ਆਗੈ ਸਬਦਿ ਸਭਾਗੈ ਘਰਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਫਲੁ ਪਾਵਏ ॥
ਬੁਧਿ ਪਾਠਿ ਨ ਪਾਈਐ ਬਹੁ ਚਤੁਰਾਈਐ ਭਾਇ ਮਿਲੈ ਮਨਿ ਭਾਣੇ ॥
ਨਾਨਕ ਠਾਕੁਰ ਮੀਤ ਹਮਾਰੇ ਹਮ ਨਾਹੀ ਲੋਕਾਣੇ ॥੪॥੧॥

पृ-४३५

राग आसा महला १ छंत घर १

१ॐ सतिगुर प्रसाद ॥

मुँध जोबनि बालड़ीए मेरा पिरु रलीआला राम ॥
धन पिर नेहु घणा रसि प्रीति दइआला राम ॥

पृ-४३६

धन पिरहि मेला होइ सुआमी आपि प्रभु किरपा करे ॥
सेजा सुहावी सँगि पिर कै सात सर अँमृित भरे ॥
करि दइआ मइआ दइआल साचे सबदि मिलि गुण गावओ ॥
नानका हरि वरु देखि बिगसी मुँध मनि ओमाहओ ॥१॥

मुँध सहजि सलोनड़ीए इक प्रेम बिनँती राम ॥
मै मनि तनि हरि भावै प्रभ सँगमि राती राम ॥
प्रभ प्रेमि राती हरि बिनँती नामि हरि कै सुखि वसै ॥
तउ गुण पछाणहि ता प्रभु जाणहि गुणह वसि अवगण नसै ॥
तुधु बाझु इकु तिलु रहि न साका कहणि सुनणि न धीजए ॥
नानका प्रिउ प्रिउ करि पुकारे रसन रसि मनु भीजए ॥२॥

सखीहो सहेलड़ीहो मेरा पिरु वणजारा राम ॥
हरि नामो वणँजड़िआ रसि मोलि अपारा राम ॥
मोलि अमोलो सच घरि ढोलो प्रभ भावै ता मुँध भली ॥
इकि सँगि हरि कै करहि रलीआ हउ पुकारी दरि खली ॥
करण कारण समरथ स्रीधर आपि कारज सारए ॥
नानक नदरी धन सोहागणि सबदु अभ साधारए ॥३॥

हम घरि साचा सोहिलड़ा प्रभ आइअड़े मीता राम ॥
रावे रँगि रातड़िआ मनु लीअड़ा दीता राम ॥
आपणा मनु दीआ हरि वरु लीआ जिउ भावै तिउ रावए ॥
तनु मनु पिर आगै सबदि सभागै घरि अँमृित फलु पावए ॥
बुधि पाठि न पाईऐ बहु चतुराईऐ भाइ मिलै मनि भाणे ॥
नानक ठाकुर मीत हमारे हम नाही लोकाणे ॥४॥१॥

राग आसा महला - १ छंत घर – १

डा. भाई वीर सिंह के अनुसार यह शब्द दो सहेलियों के बीच एक संवाद के रूप में है, जहाँ पर आयु में बड़ी सहेली विवाह के पश्चात अपने अति सुंदर पति के साथ अपार प्रेम का आनंद भोग रही है तथा वह अपनी प्रसन्नता का बखान अपने से छोटी सहेली से कर रही है (जो विवाहित तो है, पर अभी उस समय की रीतियों के अनुसार अपने पिता के घर पर है और वैवाहिक आनंद से अनभिज्ञ है) । ऐसी आनंद की बातें सुन कर बालिकावधू का मन भी युवा साथी को पाने के लिये उत्सुक हो जाता है । पर तब उसकी प्रसन्नवदना बड़ी सहेली स्पष्ट करती है कि वह एक साधारण मानव रूपी पति की बात नहीं कर रही, वह अमरत्व प्राप्त प्रभु रूपी पति की बात कर रही है । संभवतः, बड़ी सहेली गुरु के शिष्य का रूप है जो अपने जीवन को निर्दिष्ट सिख नियमों के अनुसार ढाल चुका है, जबकि छोटी सहेली उस मनुष्य के समान है जिसने अभी सीखना है कि एक गुरसिख से क्या तात्पर्य है ।

इसी संदर्भ में गुरु जी प्रौढ़ एवं प्रभु में लीन प्रसन्नवदना सहेली के रूपक में छोटी नववधू को परामर्श देते हुए कहते हैं: " हे मेरी यौवनमयी बालिकावधू, मेरा पति बहुत ही रंगीला तथा आश्रय देने वाला है। जैसे कि पति पत्नी के बीच बेहद प्रेम होता है, वैसा ही प्रेम भाव राम को अपने भक्तों के साथ है । किन्तु आत्मा रूपी वधू एवं प्रभु रूपी वर का मिलन तभी हो पाता है जब प्रभु स्वयं अपनी दया करते हैं ।प्रभु रूपी पति से मिलन के समय आत्मा रूपी वधू की सेज (अर्थात उसके मन) के सात समुद्र (पाँचो ज्ञानेन्द्रियाँ, मन तथा बुद्धि) प्रभु नाम के अँमृित

से भर जाते हैं, (इसलिये मेरा प्रस्ताव है कि प्रभु से प्रार्थना करके कहो) 'हे' दयालु प्रभु, मेरे पर दया और कृपा करो कि हम मिल कर दैवी वाणी द्वारा तेरी स्तुति गाते रहें । ओ' नानक, (जो आत्मा रूपी वधू ऐसी प्रार्थना करती रहती है उसे प्रभु एक दिन अवश्य प्राप्त होते हैं और तब) वह आत्मा रूपी वधू हरि रूपी पति को देख आनंद से खिल उठती है और उस मूढ़ नववधू के मन में अत्यधिक प्रेम भाव उमड़ पड़ता है "।(१)

आगे गुरु जी बालिकावधू की ओर से (सिख आत्मा) उसकी प्रौढ़ा सहेली को कहते हैं "हे शांत एवं धैर्यवती सुंदर सोहागिन, मेरी एक प्रेम भरी विनती है। (कृपया मुझे भी बताओ) कि कैसे प्रभु मेरे मन और तन को भा सकें और मैं भी उनके प्रेम के रंग में उनसे मिल जाऊँ"।अब गुरु जी बालिकावधू (सिख आत्मा) को उसकी प्रौढ़ा सहेली की ओर से उत्तर देते हैं ","(हे मेरी प्रिय सखी, मैं कहती हूँ कि जब आत्मा रूपी वधू) प्रभु के प्रेम में रंग जाती है, तथा प्रार्थना करती रहती है तो उसके नाम की धुन में वह आत्मिक शांति में रहती है।यदि तुम प्रभु के गुण समझ जायोगी तो उसे जान भी लोगी और फिर उसके गुण तुम्हारे में स्थिर होने लगेंगे, तथा तुम्हारे अवगुण भागने लगेंगे (और तब तुम कहोगी, 'हे प्रभु ') मैं तुम्हारे बिन एक क्षण भी नहीं रह सकती और मेरा मन केवल तेरे विषय में कहने और सुनने से ही शांत नहीं हो सकेगा। हे नानक तब पपीहे की भाँति आत्मा रूपी वधू, 'ओ मेरे पीआ, 'ओ मेरे पीआ' की रट मन तथा मुख से लगाते हुये प्रभु नाम के रस में भीगी रहेगी"।(२)

अब गुरु जी अपने सभी मित्रो तथा शिष्यों से कहते हैं " हे मेरे मित्रो एवं साथी गणों, मेरा प्रिय पति प्रभु प्रेम का व्यापारी है ।आत्मा रूपी वधू जिसने प्रभु नाम को ख़रीदा है वह जानती है कि राम नाम रस अपार मूल्य का है । हाँ, वह प्रभु अनमोल है और वह प्रियतम उसके सच्चे मन में बसता है और यदि प्रभु को भाता है तो वह आत्मा रूपी वधू सदाचारी हो जाती है । कुछ ऐसी वधू भी होती हैं जो हरि के साथ खेल क्रीड़ा में आनंद लेती हैं, जबकि मैं अति साधारण स्त्री हूँ और हरि के द्वार के बाहर खड़ी याचना कर रही हूँ, (कि मैं भी अंदर आ सकूँ, परन्तु सत्य तो यह है कि) प्रभु स्वयं ही सब कुछ करने के समर्थ हैं और वह स्वयं ही किसी को अपने साथ जोड़ने का काम भी पूरा करते हैं। नानक की दृष्टि में वह सोहागिन (आत्मा) धन्य है जो (गुरु के) शब्द को अपने हृदय का आधार बना लेती है "। (३)

अँत में, जैसे कि गुरु जी उस आत्मा रूपी नववधू के आनंद को प्रकट कर रहे हैं जो अपने प्रियतम (प्रभु) से मिलन का अनुभव कर रही है, उनका कहना है :"(हे मेरे मित्रो, मेरे हृदय रूपी) घर में सच्चे आनंदगीत गाये जा रहे हैं क्योंकि, (मेरे हृदय में) प्रभु मेरा सच्चा मित्र आया है । प्रेम में डूबा मेरा प्रिय मेरे साथ का आनंद ले रहा है और हम दोनों ने हृदय परिवर्तन कर लिया है । हाँ, मैंने अपना हृदय दिया है और प्रभु को अपने वर/पति के रूप में पा लिया है और अब जैसे भी उसे भाता है मेरे साथ आनंदित होता है। (मेरे व्यक्तिगत अनुभव के अनुसार मेरा यह निष्कर्ष है कि आत्मा रूपी वधू जो) गुरु के पवित्र शब्द के अनुसार अपना तन और मन अपने पति (प्रभु) को सौंप देती है, वह प्रभु नाम का अँमृत फल अपने हृदय में पाती है। (हे मेरे मित्रो) हमें प्रभु बुद्धि, विद्या या अति चतुराई से नहीं प्राप्त होते, वह उसी आत्मा रूपी वधू को मिलते हैं जो उसे प्रेम करती है और उसके मन को भाने लगती है । नानक कहते हैं कि अब (प्रभु) मेरे ठाकुर, मेरे मित्र बन गये हैं (और अब) मैं उनके लिए अनजान नहीं हूँ "।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु से मिलन का आनंद लेना चाहते हैं तो एक सिख संत आत्मा की भाँति हमें अपना तन, मन एवं आत्मा को प्रिय पति (प्रभु) को अर्पण कर देना चाहिये और प्रेम पूर्वक उसके द्वार पर प्रार्थना करते रहना चाहिये। एक दिन अपनी कृपा करके वह हमारी प्रार्थना सुनेंगे और हमें अपने दरबार (जो हमारा हृदय ही है) में प्रवेश देकर अनंत के लिये स्वीकार कर लेंगे ।

ਪੰਨਾ ੪੩੮

ਰਾਗੁ ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੧ ਛੰਤ ਘਰੁ ੨

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਤੂੰ ਸਭਨੀ ਥਾਈ ਜਿਥੈ ਹਉ ਜਾਈ ਸਾਚਾ ਸਿਰਜਣਹਾਰੁ ਜੀਉ ॥
ਸਭਨਾ ਕਾ ਦਾਤਾ ਕਰਮ ਬਿਧਾਤਾ ਦੂਖ ਬਿਸਾਰਣਹਾਰੁ ਜੀਉ ॥
ਦੂਖ ਬਿਸਾਰਣਹਾਰੁ ਸੁਆਮੀ ਕੀਤਾ ਜਾ ਕਾ ਹੋਵੈ ॥
ਕੋਟ ਕੋਟੰਤਰ ਪਾਪਾ ਕੇਰੇ ਏਕ ਘੜੀ ਮਹਿ ਖੋਵੈ ॥
ਹੰਸ ਸਿ ਹੰਸਾ ਬਗ ਸਿ ਬਗਾ ਘਟ ਘਟ ਕਰੇ ਬੀਚਾਰੁ ਜੀਉ ॥
ਤੂੰ ਸਭਨੀ ਥਾਈ ਜਿਥੈ ਹਉ ਜਾਈ ਸਾਚਾ ਸਿਰਜਣਹਾਰੁ ਜੀਉ ॥੧॥

ਜਿਨ੍ ਇਕ ਮਨਿ ਧਿਆਇਆ ਤਿਨ੍ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਤੇ ਵਿਰਲੇ ਸੰਸਾਰਿ ਜੀਉ ॥
ਤਿਨ ਜਮੁ ਨੇੜਿ ਨ ਆਵੈ ਗੁਰ ਸਬਦੁ ਕਮਾਵੈ ਕਬਹੁ ਨ ਆਵਹਿ ਹਾਰਿ ਜੀਉ ॥
ਤੇ ਕਬਹੁ ਨ ਹਾਰਹਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਗੁਣ ਸਾਰਹਿ ਤਿਨ੍ ਜਮੁ ਨੇੜਿ ਨ ਆਵੈ ॥
ਜੰਮਣੁ ਮਰਣੁ ਤਿਨ੍ਾ ਕਾ ਚੂਕਾ ਜੋ ਹਰਿ ਲਾਗੇ ਪਾਵੈ ॥
ਗੁਰਮਤਿ ਹਰਿ ਰਸੁ ਹਰਿ ਫਲੁ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਉਰ ਧਾਰਿ ਜੀਉ ॥
ਜਿਨ੍ ਇਕ ਮਨਿ ਧਿਆਇਆ ਤਿਨ੍ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਤੇ ਵਿਰਲੇ ਸੰਸਾਰਿ ਜੀਉ ॥੨॥

ਜਿਨਿ ਜਗਤੁ ਉਪਾਇਆ ਧੰਧੈ ਲਾਇਆ ਤਿਸੈ ਵਿਟਹੁ ਕੁਰਬਾਣੁ ਜੀਉ ॥
ਤਾ ਕੀ ਸੇਵ ਕਰੀਜੈ ਲਾਹਾ ਲੀਜੈ ਹਰਿ ਦਰਗਹ ਪਾਈਐ ਮਾਣੁ ਜੀਉ ॥
ਹਰਿ ਦਰਗਹ ਮਾਨੁ ਸੋਈ ਜਨੁ ਪਾਵੈ ਜੋ ਨਰੁ ਏਕੁ ਪਛਾਣੈ ॥
ਓਹੁ ਨਵ ਨਿਧਿ ਪਾਵੈ ਗੁਰਮਤਿ ਹਰਿ ਧਿਆਵੈ ਨਿਤ ਹਰਿ ਗੁਣ ਆਖਿ ਵਖਾਣੈ ॥
ਅਹਿਨਿਸਿ ਨਾਮੁ ਤਿਸੈ ਕਾ ਲੀਜੈ ਹਰਿ ਊਤਮੁ ਪੁਰਖੁ ਪਰਧਾਨੁ ਜੀਉ ॥
ਜਿਨਿ ਜਗਤੁ ਉਪਾਇਆ ਧੰਧੈ ਲਾਇਆ ਹਉ ਤਿਸੈ ਵਿਟਹੁ ਕੁਰਬਾਨੁ ਜੀਉ ॥੩॥

ਨਾਮੁ ਲੈਨਿ ਸਿ ਸੋਹਹਿ ਤਿਨ ਸੁਖ ਫਲ ਹੋਵਹਿ ਮਾਨਹਿ ਸੇ ਜਿਣਿ ਜਾਹਿ ਜੀਉ ॥
ਤਿਨ ਫਲ ਤੋਟਿ ਨ ਆਵੈ ਜਾ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਜੇ ਜੁਗ ਕੇਤੇ ਜਾਹਿ ਜੀਉ ॥
ਜੇ ਜੁਗ ਕੇਤੇ ਜਾਹਿ ਸੁਆਮੀ ਤਿਨ ਫਲ ਤੋਟਿ ਨ ਆਵੈ ॥
ਤਿਨ੍ ਜਰਾ ਨ ਮਰਣਾ ਨਰਕਿ ਨ ਪਰਣਾ ਜੋ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵੈ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਕਰਹਿ ਸਿ ਸੂਕਹਿ ਨਾਹੀ ਨਾਨਕ ਪੀੜ ਨ ਖਾਹਿ ਜੀਉ॥
ਨਾਮੁ ਲੈਨ੍ਿ ਸਿ ਸੋਹਹਿ ਤਿਨ੍ ਸੁਖ ਫਲ ਹੋਵਹਿ ਮਾਨਹਿ ਸੇ ਜਿਣਿ ਜਾਹਿ ਜੀਉ ॥੪॥੧॥੪॥

पृ-४३८

राग आसा महला १ छँत घर २

१ॐ सतिगुर प्रसादि ॥

तूँ सभनी थाई जिथै हउ जाई साचा सिरजणहारु जीउ ॥
सभना का दाता करम बिधाता दूख बिसारणहारु जीउ ॥
दूख बिसारणहारु सुआमी कीता जा का होवै ॥
कोट कोटँतर पापा केरे एक घड़ी महि खोवै ॥
हँस सि हँसा बग सि बगा घट घट करे बीचारु जीउ ॥
तूँ सभनी थाई जिथै हउ जाई साचा सिरजणहारु जीउ ॥१॥

जिन् इक मनि धिआइआ तिन् सुखु पाइआ
ते विरले सँसारि जीउ ॥
तिन जमु नेड़ि न आवै गुर सबदु कमावै
कबहु न आवहि हारि जीउ ॥
ते कबहु न हारहि हरि हरि गुण सारहि तिन् जमु नेड़ि न आवै ॥
जँमणु मरणु तिना् का चूका जो हरि लागे पावै ॥
गुरमति हरि रसु हरि फलु पाइआ हरि हरि नामु उर धारि जीउ ॥
जिन् इक मनि धिआइआ तिन् सुखु पाइआ
ते विरले सँसारि जीउ ॥२॥

जिनि जगतु उपाइआ धँधै लाइआ तिसै विटहु कुरबाणु जीउ ॥
ता की सेव करीजै लाहा लीजै हरि दरगह पाईऐ माणु जीउ ॥
हरि दरगह मानु सोई जनु पावै जो नरु एकु पछाणै ॥
ओहु नव निधि पावै गुरमति हरि धिआवै नित हरि गुण आखि वखाणै ॥
अहिनिसि नामु तिसै का लीजै हरि ऊतमु पुरखु परधानु जीउ ॥
जिनि जगतु उपाइआ धँधै लाइआ हउ तिसै विटहु कुरबानु जीउ ॥३॥

नामु लैनि सि सोहहि तिन सुख फल होवहि मानहि से जिणि जाहि जीउ ॥
तिन फल तोटि न आवै जा तिसु भावै जे जुग केते जाहि जीउ ॥
जे जुग केते जाहि सुआमी तिन फल तोटि न आवै ॥
तिन् जरा न मरणा नरकि न परणा जो हरि नामु धिआवै ॥
हरि हरि करहि सि सूकहि नाही नानक पीड़ न खाहि जीउ ॥
नामु लैनि् सि सोहहि तिन् सुख फल होवहि मानहि से जिणि जाहि जीउ ॥४॥१॥४॥

राग आसा महला -१ छँत घर -२

इस शब्द में गुरु जी प्रभु की महिमा का गुणगान करते हैं और साथ ही सिखाते हैं कि हम किस प्रकार से अपने सृजनकर्ता से प्रार्थना करें और उसे मन में बसायें ।

अपने प्रिय प्रभु से गुरु जी कहते हैं " हे प्रभु, मैं जहाँ भी जाता हूँ, तुम्हें हर स्थान पर पाता हूँ । तुम सच्चे सृजनकर्ता हो और सबके भाग्य विधाता हो (उनके पूर्व करमों के अनुसार) । तुम स्वामी हो, दुख बिसारणहार हो, तुम्हारा किया ही सब होता है । (हे मेरे मित्रो), वह एक क्षण में लाखों करोड़ों पापों को मिटा सकता है ।प्रभु तुम एक साधारण सदाचारी मनुष्य से लेकर एक अत्यंत गुणी मनुष्य और छोटे से दोषी से लेकर एक बड़े दुष्ट अपराधी तक प्रत्येक हृदय की दशा को देखते विचारते हो । हाँ, हे प्रभु, मैं जहाँ भी जाता हूँ (देखता हूँ) तुम हर जगह विद्यमान हो, तुम अनंत सृजनकर्ता हो "।(१)

प्रभु का ध्यान करने वालों को मिले आशीर्वादों का वर्णन गुरु जी करते हैं "(हे मेरे मित्रो) जिन्होंने भी एक चित्त होकर प्रभु का चिंतन अथवा विचार किया है, उन्हें शांति प्राप्त हुई है, पर ऐसे लोग संसार में बिरले हैं। जो लोग गुरु के शब्द के अनुसार जीवन यापन करते हैं, वह जीवन के खेल में कभी नहीं हार खाते और यमराज भी उनके निकट नहीं आते ।हाँ, वह कभी हार नहीं खाते, क्योंकि वह प्रभु की धुन में रहते हैं और उनके निकट यमदूत भी नहीं आते । जो प्रभु के चरणों की शरण में आ गये हैं उनके जनम मरण के फेर भी चुक गये हैं । गुरु की मति पर चलने से उन्हें हरि नाम के फल का रस प्राप्त हो गया है और वह नाम उन्होंने अपने हृदय में धारण कर लिया है । हाँ जिन्होंने भी एक चित्त होकर प्रभु नाम का चिंतन विचार किया है, उन्हें शांति प्राप्त हुयी है, पर ऐसे लोग संसार में बिरले हैं "।(२)

गुरु जी प्रभु के प्रति आभार प्रकट करते हुये हमें परामर्श देते हैं " मैं उस हरि पर बलिहारी हूँ, जिसने यह संसार रचा और प्रत्येक को उसके धंधे में लगा दिया । हम उस हरि की सेवा करके लाभ कमायें, क्योंकि इस प्रकार हम उसके दरबार में आदर पाते हैं । जो मनुष्य एक ईश्वर को मानता है, उसी को प्रभु दरबार में आदर सत्कार मिलता है । गुरु की मति के अनुसार जो मनुष्य हरि का ध्यान और नित्य प्रति हरि के गुणों का बखान करता है, वह नौ निधियों के भंडार पा लेता है । हरि उत्तम तथा प्रधान पुरुष हैं अत: दिन रात हमें उसी के नाम का जाप करना चाहिये। मैं उस हरि पर बलिहारी हूँ, जिसने इस संसार की उत्पत्ति की और प्रत्येक जीव को किसी धंधे में लगाया "।(३)

अंत में प्रभु नाम को जपने वालों को मिले आशीर्वादों पर गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे मित्रो), जो प्रभु नाम पर ध्यान करते हैं वह सुहाते हैं (अथवा अच्छे लगते हैं), उन्हें लोक एवं परलोक में सम्मान तथा आत्मिक सुख का फल मिलता है । यदि प्रभु को भाता है तो ऐसे लोगों को अनेक युगों के बीत जाने पर भी किसी सुख सुविधा की त्रुटि नहीं होती । कितने भी युग व्यतीत हो जायें स्वामी, उन्हें किसी सुख सुविधा अथवा फल की त्रुटि नहीं रहती । जो हरि का नाम जपता है, उसे न तो वृद्धावस्था का डर है, न मृत्यु का और न ही नर्क में जाकर यातना सहने का भय है । 'हे' नानक जो निरंतर हरि का नाम लेते हैं उनकी आत्मिक शांति कभी मिटती नहीं, उन्हें कोई पीड़ा नहीं सताती, (क्योंकि वह विश्वास करते हैं कि सुख एवं दुख दोनों समान हैं तथा हरि की देन हैं)। प्रभु का नाम जपने वाले सुहाते हैं तथा लोक और परलोक में सुख सुविधा का फल पाते हैं और जीवन का खेल जीत कर यहाँ से विदा लेते हैं "।(४-१-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें यह विश्वास रखना चाहिये कि प्रभु सर्वव्यापी है । वह प्रभु जिसने ब्रह्मांड रचा है उसने हर किसी के जीवन को किसी काम में लगा दिया है । जो प्रभु नाम का जाप करते हैं, वह शांति तथा सम्मान रुपी फल का आनंद लोक व परलोक में पाते हैं । वह इस संसार में से जीवन के खेल के विजेता के रूप में विदा लेते हैं ।

ਪੰਨਾ ੪੩੯

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੩ ਛੰਤ ਘਰੁ ੧ ॥

ਹਮ ਘਰੇ ਸਾਚਾ ਸੋਹਿਲਾ ਸਾਚੈ ਸਬਦਿ ਸੁਹਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਧਨ ਪਿਰ ਮੇਲੁ ਭਇਆ ਪ੍ਰਭਿ ਆਪਿ ਮਿਲਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਪ੍ਰਭਿ ਆਪਿ ਮਿਲਾਇਆ ਸਚੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਇਆ ਕਾਮਣਿ ਸਹਜੇ ਮਾਤੀ ॥
ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਸੀਗਾਰੀ ਸਚਿ ਸਵਾਰੀ ਸਦਾ ਰਾਵੇ ਰੰਗਿ ਰਾਤੀ ॥
ਆਪੁ ਗਵਾਏ ਹਰਿ ਵਰੁ ਪਾਏ ਤਾ ਹਰਿ ਰਸੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਇਆ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਸਵਾਰੀ ਸਫਲਿਉ ਜਨਮੁ ਸਬਾਇਆ ॥੧॥

ਦੂਜੜੈ ਕਾਮਣਿ ਭਰਮਿ ਭੁਲੀ ਹਰਿ ਵਰੁ ਨ ਪਾਏ ਰਾਮ ॥
ਕਾਮਣਿ ਗੁਣੁ ਨਾਹੀ ਬਿਰਥਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਏ ਰਾਮ ॥
ਬਿਰਥਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਏ ਮਨਮੁਖਿ ਇਆਣੀ ਅਉਗਣਵੰਤੀ ਝੂਰੇ ॥
ਆਪਣਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਿ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਤਾ ਪਿਰੁ ਮਿਲਿਆ ਹਦੂਰੇ ॥
ਦੇਖਿ ਪਿਰੁ ਵਿਗਸੀ ਅੰਦਰਹੁ ਸਰਸੀ ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਸੁਭਾਏ ॥
ਨਾਨਕ ਵਿਣੁ ਨਾਵੈ ਕਾਮਣਿ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਣੀ ਮਿਲਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਸੁਖੁ ਪਾਏ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੪੪੦

ਪਿਰੁ ਸੰਗਿ ਕਾਮਣਿ ਜਾਣਿਆ ਗੁਰਿ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਈ ਰਾਮ ॥
ਅੰਤਰਿ ਸਬਦਿ ਮਿਲੀ ਸਹਜੇ ਤਪਤਿ ਬੁਝਾਈ ਰਾਮ ॥
ਸਬਦਿ ਤਪਤਿ ਬੁਝਾਈ ਅੰਤਰਿ ਸਾਂਤਿ ਆਈ ਸਹਜੇ ਹਰਿ ਰਸੁ ਚਾਖਿਆ ॥
ਮਿਲਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਅਪਣੇ ਸਦਾ ਰੰਗੁ ਮਾਣੇ ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਸੁਭਾਖਿਆ ॥
ਪੜਿ ਪੜਿ ਪੰਡਿਤ ਮੋਨੀ ਥਾਕੇ ਭੇਖੀ ਮੁਕਤਿ ਨ ਪਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਬਿਨੁ ਭਗਤੀ ਜਗੁ ਬਉਰਾਨਾ ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਮਿਲਾਈ ॥੩॥

ਸਾ ਧਨ ਮਨਿ ਅਨਦੁ ਭਇਆ ਹਰਿ ਜੀਉ ਮੇਲਿ ਪਿਆਰੇ ਰਾਮ ॥
ਸਾ ਧਨ ਹਰਿ ਕੈ ਰਸਿ ਰਸੀ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਅਪਾਰੇ ਰਾਮ ॥
ਸਬਦਿ ਅਪਾਰੇ ਮਿਲੇ ਪਿਆਰੇ ਸਦਾ ਗੁਣ ਸਾਰੇ ਮਨਿ ਵਸੇ ॥
ਸੇਜ ਸੁਹਾਵੀ ਜਾ ਪਿਰਿ ਰਾਵੀ ਮਿਲਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਅਵਗਣ ਨਸੇ ॥
ਜਿਤੁ ਘਰਿ ਨਾਮੁ ਹਰਿ ਸਦਾ ਧਿਆਈਐ ਸੋਹਿਲੜਾ ਜੁਗ ਚਾਰੇ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਰਤੇ ਸਦਾ ਅਨਦੁ ਹੈ ਹਰਿ ਮਿਲਿਆ ਕਾਰਜ ਸਾਰੇ ॥੪॥੧॥੬॥

पृ-४३९

१ॐसतिगुर प्रसादि

आसा महला ३ छँत घर १॥

हम घरे साचा सोहिला साचै सबदि सुहाइआ राम ॥
धन पिर मेलु भइआ प्रभि आपि मिलाइआ राम ॥
प्रभि आपि मिलाइआ सचु मँनि वसाइआ कामणि सहजे माती ॥
गुर सबदि सीगारी सचि सवारी सदा रावे रँगि राती ॥
आपु गवाए हरि वरु पाए ता हरि रसु मँनि वसाइआ ॥
कहु नानक गुर सबदि सवारी सफलिउ जनमु सबाइआ ॥१॥

दूजड़ै कामणि भरमि भुली हरि वरु न पाए राम ॥
कामणि गुणु नाही बिरथा जनमु गवाए राम ॥
बिरथा जनमु गवाए मनमुखि इआणी अउगणवँती झूरे ॥
आपणा सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ ता पिरु मिलिआ हदूरे ॥
देखि पिरु विगसी अँदरहु सरसी सचै सबदि सुभाए ॥
नानक विण नावै कामणि भरमि भुलाणी मिलि प्रीतम सुखु पाए ॥२॥

पृ-४४०

पिरु सँगि कामणि जाणिआ गुरि मेलि मिलाई राम ॥
अँतरि सबदि मिली सहजे तपति बुझाई राम ॥
सबदि तपति बुझाई अँतरि सांति आई सहजे हरि रसु चाखिआ ॥
मिलि प्रीतम अपणे सदा रँगु माणे सचै सबदि सुभाखिआ ॥
पड़ि पड़ि पँडित मोनी थाके भेखी मुकति न पाई ॥
नानक बिनु भगती जगु बउराना सचै सबदि मिलाई ॥३॥

सा धन मनि अनदु भइआ हरि जीउ मेलि पिआरे राम ॥
सा धन हरि कै रसि रसी गुर कै सबदि अपारे राम ॥
सबदि अपारे मिले पिआरे सदा गुण सारे मनि वसे ॥
सेज सुहावी जा पिरि रावी मिलि प्रीतम अवगण नसे ॥
जितु घरि नामु हरि सदा धिआईऐ सोहिलड़ा जुग चारे ॥
नानक नाम रते सदा अनदु है हरि मिलिआ कारज सारे ॥४॥१॥६॥

आसा महला -३

इस शब्द में गुरु जी हमें अपने व्यक्तिगत अनुभव से बताते हैं कि हम किस प्रकार प्रभु से मिल सकते हैं और उसके बाद हम किस प्रकार के परम सुख तथा आनंद का अनुभव करने वाले हैं ।

वह कहते हैं "(हे मेरे मित्रो), मेरे घर (हृदय) में एक परम सुख देने वाला गायन हो रहा है, जो सच्चे शब्दों से सुसज्जित है । इस परम सुख का कारण यह है कि आत्मा रूपी वधू का मिलन प्रभु रूपी पति से हुया है और यह मिलन प्रभु ने स्वयं ही करवाया है ।प्रभु ने मिलन करवाने से पहले वधू के मन में सत्य को बसाया और फिर वधू को सहज में ही अपने प्रेम में वशीभूत कर लिया । गुरु के शब्द (गुरुवाणी) से सजी धजी एवं जीवन के सत्य से सँवरी वह सदा (प्रभु के) प्रेम रंग में लीन रहती है ।जब आत्मा रूपी वधू अपना मान त्याग कर हरि रूपी वर को पा लेती है, तब वह हरि नाम के मधुर रस को मन में बसा लेती है । नानक कहते हैं कि आत्मा रूपी वधू गुरु के शब्द से सज सँवर कर अपना सम्पूर्ण जीवन सफल बना लेती है "।(१)

आगे गुरु जी उन दूसरी प्रकार की वधूयों पर टिप्पणी करते हैं जो प्रभु की अपेक्षा दुविधा (सांसारिक मायामोह) में रहती हैं, कहते हैं " दुविधा में आत्मा रूपी वधू अनेक भ्रमों में भटक भूल जाती है और हरि रूपी पति को नहीं प्राप्त करती ।ऐसी वधू गुणहीन रहती है और अपना

जन्म व्यर्थ गँवा लेती है। हाँ, वह मूर्ख, अभिमानी तथा गुणविहीन वधू अपना जीवन व्यर्थ करते हुए पश्चाताप करती रहती है।परन्तु जब अपने सच्चे गुरु की सेवा करके स्थायी सुख प्राप्त हुया तो उसे प्रिय प्रभु सामने ही खड़े मिल गये। प्रभु (पति) को देख कर वह खिल उठी और अंदर तक सच्चे शब्द के प्रभाव में सरस गयी। 'हे' नानक (हमें स्मरण रखना चाहिये) आत्मा रुपी वधू प्रभु नाम के बिना भ्रमों में भटकती रहती है, केवल अपने प्रभु (पति) से मिलने के पश्चात ही उसे सुख शांति प्राप्त होती है "।(२)

अब गुरु जी उस (आत्मा रूपी)वधू के आनंद का वर्णन करते हैं जो गुरु के द्वारा अपने पति (प्रभु) से जुड़ चुकी है,वह कहते हैं "(हे मेरे मित्रो) गुरु के द्वारा प्रभु से मिलने पर आत्मा (वधू) ने प्रभु (प्रिय पति) की संगति को पहचाना है। तत्पश्चात,गुरु के शब्द द्वारा आत्मा (वधू) की इच्छाओं रूपी अग्नि की तपन बुझ गयी, अंदर शाँति छा गयी और सहज रूप से प्रभु नाम के रस का स्वाद मिला।अपने पति (प्रभु) से मिलन के पश्चात वह सदा उसके प्रेम का आनंद लेती है, तथा गुरु के सच्चे शब्द के द्वारा प्रभु के गुण बखानती है।बड़े बड़े शास्त्र पढ़ कर पंडित, मौनी बाबा व गेरुये वेशधारी सन्यासी थक गये, पर मुक्ति न पा सके।संक्षेप में, ओ नानक, प्रभु की भक्ति के बिना सांसारिक लोग मोह माया के प्रेम में बावरे हो गये हैं। केवल गुरु के सच्चे शब्द के द्वारा प्रभु किसी भी आत्मा को अपने में लीन कर लेते हैं "।(३)

गुरु के शब्द का अनुसरण करके प्रभु से जुड़ी आत्मा (व्यक्ति) के आनंदित जीवन का वर्णन करते हुये गुरु जी अंत में कहते हैं " उस वधू (आत्मा) का मन परम सुखी है जिसे प्रिय हरि प्राप्त हुये हैं। गुरु के अपार शब्द द्वारा आत्मा (वधू) पूर्णतया प्रभु प्रेम के रस में डूबी है। अपार शब्द द्वारा वह अपने प्यारे प्रभु से मिलती है और फिर प्रभु अपने सदैवी गुण वधू के मन में बसाते हैं। इन गुणों से वधू की सेज (अंतर मन) सुंदर सुहानी दिखाई देती है, तथा प्रियतम के साथ रमने से उसके अवगुण चले जाते हैं। (हे मेरे मित्र) जिस हृदय में सदा प्रभु नाम का ध्यान है वहाँ चारों युग (सदा) आनंदगीत होता रहता है। ओ' नानक, प्रभु नाम के प्रेम में लीन रहने वाले सदा आन्नदित रहते हैं और हरि के मिल जाने से उनके सारे काम सँवर जाते हैं "।(४-१-६)

इस शब्द का संदेश यह है कि आत्मा रूपी वधू जिसने अपने मन में प्रभु को पाने का आनंद प्राप्त किया है वह सदा शांत, प्रसन्न एवं परम सुख में रहती है। परन्तु जो आत्मा सांसारिक मायाजाल एवं शक्ति प्रदर्शन में जकड़ी है, वह त्रुटियों से भरी है तथा प्रभु को करम कांड, शास्त्र तथा धर्म के चोले पहन कर नहीं पा सकती। ईश्वर के साथ जुड़ने का अनुभव पाने का एक मात्र रास्ता यही है कि हम सच्चे प्रेम और श्रद्धा के साथ उसके नाम का ध्यान अपने हृदय में करें।

ਪੰਨਾ ੪੪੦

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੩ ਛੰਤ ਘਰੁ ੩ ॥

ਸਾਜਨ ਮੇਰੇ ਪ੍ਰੀਤਮਹੁ ਤੁਮ ਸਹ ਕੀ ਭਗਤਿ ਕਰੇਹੋ ॥
ਗੁਰੁ ਸੇਵਹੁ ਸਦਾ ਆਪਣਾ ਨਾਮੁ ਪਦਾਰਥੁ ਲੇਹੋ ॥
ਭਗਤਿ ਕਰਹੁ ਤੁਮ ਸਹੈ ਕੇਰੀ ਜੋ ਸਹ ਪਿਆਰੇ ਭਾਵਏ ॥
ਆਪਣਾ ਭਾਣਾ ਤੁਮ ਕਰਹੁ ਤਾ ਫਿਰਿ ਸਹ ਖੁਸੀ ਨ ਆਵਏ ॥
ਭਗਤਿ ਭਾਵ ਇਹੁ ਮਾਰਗੁ ਬਿਖੜਾ ਗੁਰ ਦੁਆਰੈ ਕੋ ਪਾਵਏ ॥
ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਜਿਸੁ ਕਰੇ ਕਿਰਪਾ ਸੋ ਹਰਿ ਭਗਤੀ ਚਿਤੁ ਲਾਵਏ ॥੧॥

ਮੇਰੇ ਮਨ ਬੈਰਾਗੀਆ ਤੂੰ ਬੈਰਾਗੁ ਕਰਿ ਕਿਸੁ ਦਿਖਾਵਹਿ ॥
ਹਰਿ ਸੋਹਿਲਾ ਤਿਨ੍ ਸਦ ਸਦਾ ਜੋ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵਹਿ ॥
ਕਰਿ ਬੈਰਾਗੁ ਤੂੰ ਛੋਡਿ ਪਾਖੰਡੁ ਸੋ ਸਹੁ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਜਾਣਏ ॥
ਜਲਿ ਥਲਿ ਮਹੀਅਲਿ ਏਕੋ ਸੋਈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਹੁਕਮੁ ਪਛਾਣਏ ॥
ਜਿਨਿ ਹੁਕਮੁ ਪਛਾਤਾ ਹਰੀ ਕੇਰਾ ਸੋਈ ਸਰਬ ਸੁਖ ਪਾਵਏ ॥
ਇਵ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਸੋ ਬੈਰਾਗੀ ਅਨਦਿਨੁ ਹਰਿ ਲਿਵ ਲਾਵਏ ॥੨॥

ਜਹ ਜਹ ਮਨ ਤੂੰ ਧਾਵਦਾ ਤਹ ਤਹ ਹਰਿ ਤੇਰੈ ਨਾਲੇ ॥
ਮਨ ਸਿਆਣਪ ਛੋਡੀਐ ਗੁਰ ਕਾ ਸਬਦੁ ਸਮਾਲੇ ॥
ਸਾਥਿ ਤੇਰੈ ਸੋ ਸਹੁ ਸਦਾ ਹੈ ਇਕੁ ਖਿਨੁ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸਮਾਲਹੇ ॥
ਜਨਮ ਜਨਮ ਕੇ ਤੇਰੇ ਪਾਪ ਕਟੇ ਅੰਤਿ ਪਰਮ ਪਦੁ ਪਾਵਹੇ ॥
ਸਾਚੇ ਨਾਲਿ ਤੇਰਾ ਗੰਢੁ ਲਾਗੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਦਾ ਸਮਾਲੇ ॥
ਇਉ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਜਹ ਮਨ ਤੂੰ ਧਾਵਦਾ ਤਹ ਹਰਿ ਤੇਰੈ ਸਦਾ ਨਾਲੇ ॥੩॥

ਸਤਿਗੁਰ ਮਿਲਿਐ ਧਾਵਤੁ ਥੰਮ੍ਹਿਆ ਨਿਜ ਘਰਿ ਵਸਿਆ ਆਏ ॥
ਨਾਮੁ ਵਿਹਾਝੇ ਨਾਮੁ ਲਏ ਨਾਮਿ ਰਹੇ ਸਮਾਏ ॥

ਪੰਨਾ ੪੪੧

ਧਾਵਤੁ ਥੰਮ੍ਹਿਆ ਸਤਿਗੁਰਿ ਮਿਲਿਐ ਦਸਵਾ ਦੁਆਰੁ ਪਾਇਆ ॥
ਤਿਥੈ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਭੋਜਨੁ ਸਹਜ ਧੁਨਿ ਉਪਜੈ ਜਿਤੁ ਸਬਦਿ ਜਗਤੁ
ਥੰਮ੍ਹਿਰਹਾਇਆ ॥
ਤਹ ਅਨੇਕ ਵਾਜੇ ਸਦਾ ਅਨਦੁ ਹੈ ਸਚੇ ਰਹਿਆ ਸਮਾਏ ॥
ਇਉ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਸਤਿਗੁਰਿ ਮਿਲਿਐ ਧਾਵਤੁ ਥੰਮ੍ਹਿਆ ਨਿਜ ਘਰਿ ਵਸਿਆ
ਆਏ ॥੪॥

ਮਨ ਤੂੰ ਜੋਤਿ ਸਰੂਪੁ ਹੈ ਆਪਣਾ ਮੂਲੁ ਪਛਾਣੁ ॥
ਮਨ ਹਰਿ ਜੀ ਤੇਰੈ ਨਾਲਿ ਹੈ ਗੁਰਮਤੀ ਰੰਗੁ ਮਾਣੁ ॥
ਮੂਲੁ ਪਛਾਣਹਿ ਤਾਂ ਸਹੁ ਜਾਣਹਿ ਮਰਣ ਜੀਵਣ ਕੀ ਸੋਝੀ ਹੋਈ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਏਕੋ ਜਾਣਹਿ ਤਾਂ ਦੂਜਾ ਭਾਉ ਨ ਹੋਈ ॥
ਮਨਿ ਸਾਂਤਿ ਆਈ ਵਜੀ ਵਧਾਈ ਤਾ ਹੋਆ ਪਰਵਾਣੁ ॥
ਇਉ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਮਨ ਤੂੰ ਜੋਤਿ ਸਰੂਪੁ ਹੈ ਅਪਣਾ ਮੂਲੁ ਪਛਾਣੁ ॥੫॥

ਮਨ ਤੂੰ ਗਾਰਬਿ ਅਟਿਆ ਗਾਰਬਿ ਲਦਿਆ ਜਾਹਿ ॥
ਮਾਇਆ ਮੋਹਣੀ ਮੋਹਿਆ ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਜੂਨੀ ਭਵਾਹਿ ॥
ਗਾਰਬਿ ਲਾਗਾ ਜਾਹਿ ਮੁਗਧ ਮਨ ਅੰਤਿ ਗਇਆ ਪਛੁਤਾਵਹੇ ॥
ਅਹੰਕਾਰੁ ਤਿਸਨਾ ਰੋਗੁ ਲਗਾ ਬਿਰਥਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਵਹੇ ॥
ਮਨਮੁਖ ਮੁਗਧ ਚੇਤਹਿ ਨਾਹੀ ਅਗੈ ਗਇਆ ਪਛੁਤਾਵਹੇ ॥
ਇਉ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਮਨ ਤੂੰ ਗਾਰਬਿ ਅਟਿਆ ਗਾਰਬਿ ਲਦਿਆ ਜਾਵਹੇ ॥੬॥

पृ-४४०

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

आसा महला ३ छँत घर ३

साजन मेरे प्रीतमहु तुम सह की भगति करेहो ॥
गुरु सेवहु सदा आपणा नामु पदारथु लेहो ॥
भगति करहु तुम सहै केरी जो सह पिआरे भावए ॥
आपणा भाणा तुम करहु ता फिरि सह खुसी न आवए ॥
भगति भाव इहु मारगु बिखड़ा गुर दुआरै को पावए ॥
कहै नानकु जिसु करे किरपा सो हरि भगती चितु लावए ॥१॥

मेरे मन बैरागीआ तूँ बैरागु करि किसु दिखावहि ॥
हरि सोहिला तिन् सद सदा जो हरि गुण गावहि ॥
करि बैरागु तूँ छोडि पाखँडु सो सहु सभु किछु जाणए ॥
जलि थलि महिअलि एको सोई गुरमुखि हुकमु पछाणए ॥
जिनि हुकमु पछाता हरी केरा सोई सरब सुख पावए ॥
इव कहै नानकु सो बैरागी अनदिनु हरि लिव लावए ॥२॥

जह जह मन तूँ धावदा तह तह हरि तेरै नाले ॥
मन सिआणप छोडीऐ गुर का सबदु समाले ॥
साथि तेरै सो सहु सदा है इकु खिनु हरि नाम समालहे ॥
जनम जनम के तेरे पाप कटे अँति परम पदु पावहे ॥
साचे नालि तेरा गँढु लागै गुरमुखि सदा समाले ॥
इउ कहै नानकु जह मन तूँ धावदा तह हरि तेरै सदा नाले ॥३॥

सतिगुर मिलिऐ धावतु थँम्हिआ निज घरि वसिआ आए ॥
नामु विहाझे नामु लए नामि रहे समाए ॥

प -४४१

धावतु थँम्हिआ सतिगुरि मिलिऐ दसवादुआरु पाइआ ॥
तिथै अँमृत भोजनु सहज धुनि उपजै जितु सबदि जगतु
थँम्हिरहाइआ ॥
तह अनेक वाजे सदा अनदु है सचे रहिआ समाए ॥
इउ कहै नानकु सतिगुरि मिलिऐ धावतु थँम्हिआ निज घरि वसिआ
आए ॥४॥

मन तूँ जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु ॥
मन हरि जी तेरै नालि है गुरमती रँगु माणु ॥
मूलु पछाणहि तां सहु जाणहि मरण जीवण की सोझी होई ॥
गुर परसादी एको जाणहि तां दूजा भाउ न होई ॥
मनि सांति आई वजी वधाई ता होआ परवाणु ॥
इउ कहै नानकु मन तूँ जोति सरूपु है अपणा मूलु पछाणु ॥५॥

मन तूँ गारबि अटिआ गारबि लदिआ जाहि ॥
माइआ मोहणी मोहिआ फिरि फिरि जूनी भवाहि ॥
गारबि लागा जाहि मुगध मन अँति गइआ पछुतावहे ॥
अँहकारु तिसना रोगु लगा बिरथा जनमु गवावहे ॥
मनमुख मुगध चेतहि नाही अगै गइआ पछुतावहे ॥
इउ कहै नानकु मन तूँ गारबि अटिआ गारबि लदिआ जावहे ॥६॥

ਮਨ ਤੂੰ ਮਤ ਮਾਣੁ ਕਰਹਿ ਜਿ ਹਉ ਕਿਛੁ ਜਾਣਦਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਿਮਾਣਾ ਹੋਹੁ ॥
ਅੰਤਰਿ ਅਗਿਆਨੁ ਹਉ ਬੁਧਿ ਹੈ ਸਚਿ ਸਬਦਿ ਮਲੁ ਖੋਹੁ ॥
ਹੋਹੁ ਨਿਮਾਣਾ ਸਤਿਗੁਰੂ ਅਗੈ ਮਤ ਕਿਛੁ ਆਪੁ ਲਖਾਵਹੇ ॥
ਆਪਣੈ ਅਹੰਕਾਰਿ ਜਗਤੁ ਜਲਿਆ ਮਤ ਤੂੰ ਆਪਣਾ ਆਪੁ ਗਵਾਵਹੇ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਕੈ ਭਾਣੈ ਕਰਹਿ ਕਾਰ ਸਤਿਗੁਰ ਕੈ ਭਾਣੈ ਲਾਗਿ ਰਹੁ ॥
ਇਉ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਆਪੁ ਛਡਿ ਸੁਖ ਪਾਵਹਿ ਮਨ ਨਿਮਾਣਾ ਹੋਇ ਰਹੁ ॥੭॥

मन तूँ मत माणु करहि जि हउ किछु जाणदा गुरमुखि निमाणा होहु ॥
अँतरि अगिआनु हउ बुधि है सचि सबदि मलु खोहु ॥
होहु निमाणा सतिगुरू अगै मत किछु आपु लखावहे ॥
आपणै अंहकारि जगतु जलिआ मत तूँ आपणा आपु गवावहे ॥
सतिगुर कै भाणै करहि कार सतिगुर कै भाणै लागि रहु ॥
इउ कहै नानकु आपु छडि सुख पावहि मन निमाणा होइ रहु ॥७॥

ਧੰਨੁ ਸੁ ਵੇਲਾ ਜਿਤੁ ਮੈ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮਿਲਿਆ ਸੋ ਸਹੁ ਚਿਤਿ ਆਇਆ ॥
ਮਹਾ ਅਨੰਦੁ ਸਹਜੁ ਭਇਆ ਮਨਿ ਤਨਿ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥
ਸੋ ਸਹੁ ਚਿਤਿ ਆਇਆ ਮੰਨਿ ਵਸਾਇਆ ਅਵਗਣ ਸਭਿ ਵਿਸਾਰੇ ॥
ਜਾ ਤਿਸੁ ਭਾਣਾ ਗੁਣ ਪਰਗਟ ਹੋਏ ਸਤਿਗੁਰ ਆਪਿ ਸਵਾਰੇ ॥
ਸੇ ਜਨ ਪਰਵਾਣੁ ਹੋਏ ਜਿਨੀ ਇਕੁ ਨਾਮੁ ਦਿੜਿਆ ਦੁਤੀਆ ਭਾਉ ਚੁਕਾਇਆ ॥
ਇਉ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਧੰਨੁ ਸੁ ਵੇਲਾ ਜਿਤੁ ਮੈ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮਿਲਿਆ ਸੋ ਸਹੁ ਚਿਤਿ ਆਇਆ ॥੮॥

धँनु सु वेला जितु मै सतिगुरु मिलिआ सो सहु चिति आइआ ॥
महा अनँदु सहजु भइआ मनि तनि सुखु पाइआ ॥
सो सहु चिति आइआ मँनि वसाइआ अवगण सभि विसारे ॥
जा तिसु भाणा गुण परगट होए सतिगुर आपि सवारे ॥
से जन परवाणु होए जिनी इकु नामु दिड़िआ दुतीआ भाउ चुकाइआ ॥
इउ कहै नानकु धँनु सु वेला जितु मै सतिगुरु मिलिआ सो सहु चिति आइआ ॥८॥

ਇਕਿ ਜੰਤ ਭਰਮਿ ਭੁਲੇ ਤਿਨਿ ਸਹਿ ਆਪਿ ਭੁਲਾਏ ॥
ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਫਿਰਹਿ ਹਉਮੈ ਕਰਮ ਕਮਾਏ ॥
ਤਿਨਿ ਸਹਿ ਆਪਿ ਭੁਲਾਏ ਕੁਮਾਰਗਿ ਪਾਏ ਤਿਨ ਕਾ ਕਿਛੁ ਨ ਵਸਾਈ ॥
ਤਿਨ ਕੀ ਗਤਿ ਅਵਗਤਿ ਤੂੰਹੈ ਜਾਣਹਿ ਜਿਨਿ ਇਹ ਰਚਨ ਰਚਾਈ ॥
ਹੁਕਮੁ ਤੇਰਾ ਖਰਾ ਭਾਰਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਕਿਸੈ ਬੁਝਾਏ ॥
ਇਉ ਕਹੈਨਾਨਕੁ ਕਿਆ ਜੰਤ ਵਿਚਾਰੇ ਜਾ ਤੁਧੁ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਏ ॥੯॥

इकि जँत भरमि भुले तिनि सहि आपि भुलाए ॥
दूजै भाइ फिरहि हउमै करम कमाए ॥
तिनि सहि आपि भुलाए कुमारगि पाए तिन का किछु न वसाई ॥
तिन की गति अवगति तूँहै जाणहि जिनि इह रचन रचाई ॥
हुकमु तेरा खरा भारा गुरमुखि किसै बुझाए ॥
इउ कहै नानकु किआ जँत विचारे जा तुधु भरमि भुलाए ॥९॥

ਪੰਨਾ ੪੪੨

ਸਚੇ ਮੇਰੇ ਸਾਹਿਬਾ ਸਚੀ ਤੇਰੀ ਵਡਿਆਈ ॥
ਤੂੰ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਬੇਅੰਤੁ ਸੁਆਮੀ ਤੇਰੀ ਕੁਦਰਤਿ ਕਹਣੁ ਨ ਜਾਈ ॥
ਸਚੀ ਤੇਰੀ ਵਡਿਆਈ ਜਾ ਕਉ ਤੁਧੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਈ ਸਦਾ ਤੇਰੇ ਗੁਣ ਗਾਵਹੇ ॥
ਤੇਰੇ ਗੁਣ ਗਾਵਹਿ ਜਾ ਤੁਧੁ ਭਾਵਹਿ ਸਚੇ ਸਿਉ ਚਿਤੁ ਲਾਵਹੇ ॥
ਜਿਸ ਨੋ ਤੂੰ ਆਪੇ ਮੇਲਹਿ ਸੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਰਹੈ ਸਮਾਈ ॥
ਇਉ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਸਚੇ ਮੇਰੇ ਸਾਹਿਬਾ ਸਚੀ ਤੇਰੀ ਵਡਿਆਈ ॥੧੦॥੨॥੭॥੫॥੨॥੭॥

पृ-४४२

सचे मेरे साहिबा सची तेरी वडिआई ॥
तूँ पारब्रहमु बेअँतु सुआमी तेरी कुदरति कहणु न जाई ॥
सची तेरी वडिआई जा कउ तुधु मँनि वसाई सदा तेरे गुण गावहे ॥
तेरे गुण गावहि जा तुधु भावहि सचे सिउ चितु लावहे ॥
जिस नो तूँ आपे मेलहि सु गुरमुखि रहै समाई ॥
इउ कहै नानकु सचे मेरे साहिबा सची तेरी वडिआई ॥१०॥२॥७॥५॥२॥७॥

आसा महला -३ छँत घर -३

इस शब्द में गुरु जी विस्तार से ईश्वर से मिलन के मार्ग का वर्णन करते हैं। सर्वप्रथम, वह हमें अपना प्रिय मित्र मानते हुये सम्बोधित करते हैं " हे' मेरे प्रिय मित्रो, तुम अपने प्रियतम (प्रभु) की पूजा करते रहो । सदा अपने गुरु की सेवा (पूजा) करते रहो और प्रभु नाम के पदार्थ को लेते रहो। हाँ तुम प्रियतम की पूजा करते रहो, जो हमारे प्रिय पति (प्रभु) को भाती है ।यदि तुम वही करते हो जो तुम्हारे मन को भाता है (करम कांड एवं तीर्थ यात्रा आदि) तब प्रियतम (प्रभु) प्रसन्न नहीं होंगे। किन्तु यह भक्ति का मार्ग बहुत बिखड़ा है और कोई बिरला ही गुरु के द्वार पर जाकर (अर्थात् गुरु के मार्ग दर्शन से) इसे पाता है ।नानक कहते हैं कि जिस पर प्रभु कृपालु हों केवल वही अपना मन हरि भक्ति में लगाता है "।(१)

प्रभु के प्रति भक्ति भाव एवं सांसारिक वस्तुयों से बैराग के झूठे प्रदर्शन पर अपने मन तथा परोक्ष में हमें भी, गुरु जी कहते हैं " ओ' मेरे छद्म बैरागी मन, तुम किसे अपना बैराग दिखा रहे हो ।क्योंकि हरि के गुण गाने वालों को तो सदैव ही दैवी संगीत आनंदित करता रहता है । (इस लिये 'हे' मेरे मन) तूँ अपने बैराग का पाखंड छोड़ और सच्चा बन, क्योंकि वह प्रिय प्रभु हमारे मन के अंदर का सब कुछ जानता है । वह एक ईश्वर, जल, थल व आकाश सभी जगह समाया है और गुरु का अनुयायी उसकी आज्ञा को पहचानता है । जिसने भी हरि की आज्ञा को स्वीकार किया है उसी को समस्त सुख प्राप्त होते हैं । नानक ऐसा कहते हैं कि वास्तव में वही बैरागी है जो दिन रात हरि भजन में लीन रहता है "। (२)।

हरि सदा हमारे साथ हैं, इसकी पुष्टि मन में करते हुये गुरु जी कहते हैं " हे' मेरे मन, तुम जहाँ जहाँ भी भागते हो, वहाँ वहाँ हरि तेरे साथ हैं । इसलिये हे' मेरे मन, तूँ अपनी चतुराई छोड़ और सदा गुरु की वाणी (शब्द) का अनुसरण कर । यदि तूँ एक क्षण के लिये भी हरि नाम का ध्यान करता है तो पता चलेगा कि प्रिय प्रभु सदा तेरे साथ हैं, तब तेरे जन्म जन्म के पाप कट जायेंगे और अंत में तुम परम पद (अथवा मोक्ष) पा लोगे ।हे' मेरे मन, यदि गुरु के अनुसार तुम सदा प्रभु का ध्यान करो तो उस सच्चे के साथ तेरी गाँठ बँध जायेगी, अथवा, घनिष्ठता हो जायेगी। अत: नानक कहते हैं हे' मेरे मन, जहाँ जहाँ तुम जाते हो, वहाँ वहाँ हरि सदा तेरे साथ हैं "।(३)

गुरु से मिलने तथा उसके परामर्श का अनुसरण करने पर हमें किस प्रकार का आशीर्वाद प्राप्त होता है, इसका वर्णन गुरु जी करते हुए कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), सच्चे गुरु के मिलने और उसका अनुसरण करने से हमारा भटकता मन थम जाता है और वह अपने घर (हमारे शरीर में प्रभु का निवास स्थान) में आकर बस जाता है । तत्पश्चात, वह प्रभु नाम को विचारता है, जपता है और उसी में समाया रहता है । हाँ, सच्चे गुरु के मिलने पर भटकता भागता मन रुक जाता है और तब उसे दसवाँ द्वार (हमारे मन में प्रभु के घर का प्रवेश द्वार) मिल जाता है । वहाँ पर दैवी सहज धुन, जो आत्मा के लिये अँमृत भोजन के समान है, उपजती है और उस शब्द की ध्वनि से प्रभु ने सम्पूर्ण जगत को थाम के रखा है । वहाँ अनेक वाद्य सदा बजते हैं, सदा आनंद रहता है क्योंकि, सब सच्चे में समाये हैं । ऐसा नानक कहते हैं कि भटकता मन सच्चे गुरु के मिलने पर थम जाता है और अपने घर में आकर बस जाता है"।(४)

अब गुरु जी अपने मन को जगा कर उसे उसके दैवी उद्‌गम के विषय पर चेता रहे हैं जिससे कि वह उस झूठे लोभ लालच के पीछे निरंतर ना भागता रहे जो उसके अस्तित्व के विरुद्ध है, वह कहते हैं " हे' मेरे मन, तुम दिव्य ज्योति के समान हो, तुम अपना वास्तविक रूप पहचानो । हे' मन, हरि जी सदा तेरे साथ हैं, गुरु की मति पर चल कर प्रभु के प्यार का आनंद लो ।यदि अपना मूल रूप पहचानोगे, तब प्रिय प्रभु को भी जान लोगे और फिर जन्म मरण का भेद भी समझ पायोगे ।जब गुरु की कृपा से यह पता लग जायेगा कि ईश्वर एक ही है (जो सबके मन में व्याप्त है) तो तुम्हारे मन में कोई दूसरी भावना अथवा दुविधा नहीं होगी ।इस प्रकार मन में शांति आती है तथा प्रसन्नता की धुन बजती है और तुम प्रभु के दरबार में स्वीकृति पाते हो इसलिये नानक कहते हैं, हे' मेरे मन, तुम ज्योति स्वरूप हो, अपना वास्तविक सत्य अथवा मूल रूप पहचानो "।(५)

किन्तु एक बार फिर अपने मन तथा हम सबको गुरु जी सचेत करते हैं कि अपना दैवी मूल रूप जानने की अपेक्षा हमारा मन अंहम से भरा है । वह कहते हैं "हे' मेरे मन, तुम घमंड से अटे पड़े हो और इसी घमंड से लदे हुए ही इस संसार से चले जायोगे । माया जाल मोहक है और इसी मोह के कारण तुम बार बार अनेक योनियों में घूमते रहते हो । अभिमान से मुग्ध और मूढ़ मन, अंत में परलोक जाकर भी पश्चात्ताप करोगे । इस प्रकार अंहकार तथा तृष्णा के रोगों से ग्रसित होकर व्यर्थ में जन्म गँवा दोगे । घमंड में मुग्ध अभिमानी मन, तुम चेतते नहीं हो कि तुम परलोक जाकर पछतायोगे । नानक ऐसा कहते हैं, हे' मेरे मन तुम अभिमान से अटे पड़े हो और उसी अभिमान से लदे हुये इस संसार से चले जायोगे "।(६)

गुरु जी अपने सहित हम सबके मन को परामर्श देते हुये कहते हैं " हे' मेरे मन, तू यह गर्व मत कर कि तूँ ज्ञानी है, कुछ जानता है, गुरु का शिष्य बन कर विनम्र बनो । तुम्हारे अंदर अज्ञान तथा अहमयुक्त बुद्धि है, इस अभिमान के मैल को गुरु के सच्चे शब्द द्वारा दूर करो । पूर्ण रूप से सच्चे गुरु के सम्मुख विनम्रतापूर्वक नतमस्तक रहो, तथा अपनी अहम भरी मति का प्रदर्शन नहीं करो । समस्त संसार अपने अंहकार से जला हुया है, पर तुम (और सब की तरह) स्वयं को मत नष्ट करो । जैसा सच्चे गुरु चाहें वैसा काम करो और उसी की इच्छा के अनुसार व्यस्त रहो। ऐसा ही नानक कहते हैं कि हे' मेरे मन, विनम्र होकर रहो और अपना अहम त्याग कर सुख शांति पायो "।(७)

अपने सतिगुरु से मिलने पर प्राप्त हुई प्रसन्नता को गुरु जी हमारे साथ साँझा करते हुये कहते हैं " वह समय धन्य है जब मैं अपने सतिगुरु से मिला और स्वामी मेरे मन में बस गये । मुझे सहज परम आनंद अनुभव हुया और तन मन को सुख प्राप्त हुया । हाँ, जब मैंने प्रिय स्वामी को स्मरण किया और उसे मन में बसाया तब मेरे सारे अवगुण बिसर गये । जब उस (प्रभु) को अच्छा लगा, तब मेरे अंदर गुण प्रकट होने लगे और सतिगुरु ने स्वयं मुझे सँवार दिया । वह भक्त जन जिन्होंने एक ईश्वर का नाम जपा और मन में उसे दृढ़ किया तब उनकी दुविधा चुक गयी और वह (उसके दरबार में) स्वीकृत हो गये । इसलिये नानक ऐसा कहते हैं कि वह समय धन्य है जब मैं अपने सतिगुरु से मिला और वह प्रिय स्वामी मेरे चित्त में आ बसे "।(८)

अब गुरु जी एक बार फिर उन अंहकारी जनों के विषय में सोचते हैं जो जन्म मरण के दुखद चक्करों में पड़े रहते हैं । गुरु जी दयाभाव से इन पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं "यह जीव भ्रमों में भूल भटक गये हैं और इनको प्रिय स्वामी ने स्वयं ही भटका दिया है । (ईश्वर की अपेक्षा) यह जीव सांसारिक मोह माया की भावना में घूमते हैं, तथा अंहम परिपूर्ण कर्म करते हैं । इनको प्रिय प्रभु ने स्वयं ही भुला कर कुमार्ग पर डाला हुया है, अत: इनका अपने पर कुछ भी नियंत्रण नहीं है। इस लिये गुरु जी प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं " हे' प्रभु, तुमने ही यह संसार रचा है (अच्छे तथा बुरे जनों का), इसलिये तुम्हीं इनकी अच्छी तथा बुरी गतिविधियों को जानते हो । तेरा हुक्म वास्तव में अत्यंत खरा और कठिन है जो किसी बिरले ही गुरु के प्यारे जन को समझ में आता है । इसलिये नानक ऐसा कहते हैं कि बेचारे जीव क्या समझ विचार कर सकते हैं यदि तुम्हीं (प्रभु) उन्हें भ्रमों में भटका देते हो "।(९)

अंत में गुरु जी उन लोगों (जो हरि कृपा से सत्य को समझ कर उसके साथ जुड़े हुये है) की ओर से प्रभु का धन्यवाद करते हुये कहते हैं " हे' मेरे सत्य स्वामी, तेरी महिमा सत्य है । तुम महान, अनंत, विश्व विधाता हो, कोई तेरी अपार रचना का बखान नहीं कर सकता । तेरी महिमा सत्य है, जिनके मन में तुमने अपने को बसा दिया है, वह सदा तेरे गुण गाते हैं । केवल वही, जो तुझे भाते हैं तेरे गुण गाते हैं और सच्चे प्रभु के साथ उनका मन रमा हुया है । किसी भी, गुरु के प्रिय जन को जब तुम अपने से मिला लेते हो वह तेरे में समाया रहता है । इसी लिये, नानक कहते हैं कि हे' मेरे सत्य स्वामी, तेरी महिमा सत्य है अपार है "।(१०-२-७-५-२-७)

यह सुंदर शब्द ऐसा संदेश देता है कि हमें अपने मन को यह समझाना चाहिये कि वह दिव्य ज्योति की एक किरण के समान है और उसे अपने सत्य तथा मूल दैवी रूप को स्थिर रखना है । गुरु के आदेशानुसार हमें प्रभु की पूजा हार्दिक प्रेम से करनी चाहिये । अपने अहम तथा चतुराई का त्याग करके गुरु की शिक्षा को विनम्र भाव से ग्रहण कर प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये । तब हमारा मन सांसारिक लोभ लालच में भटकना छोड़कर स्थिर एवं सहज अवस्था में दसवें द्वार में प्रवेश पा लेगा, जहाँ वह प्रभु से जुड़ कर दैवी संगीत की मधुर धुन का सदैवी आनंद प्राप्त कर सकेगा ।

ਪੰਨਾ ੪੪੨

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਝਿਮਿ ਝਿਮੇ ਝਿਮਿ ਝਿਮਿ ਵਰਸੈ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਧਾਰਾ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੪੪੩

ਗੁਰਮੁਖੇ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਦਰੀ ਰਾਮੁ ਪਿਆਰਾ ਰਾਮ ॥
ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਪਿਆਰਾ ਜਗਤ ਨਿਸਤਾਰਾ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਵਡਿਆਈ ॥
ਕਲਿਜੁਗਿ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਬੋਹਿਥਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਰਿ ਲਘਾਈ ॥
ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਸੁਹੇਲੇ ਗੁਰਮੁਖਿ ਕਰਣੀ ਸਾਰੀ ॥
ਨਾਨਕ ਦਾਤਿ ਦਇਆ ਕਰਿ ਦੇਵੈ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਨਿਸਤਾਰੀ ॥੧॥

ਰਾਮੋ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਜਪਿਆ ਦੁਖ ਕਿਲਵਿਖ ਨਾਸ ਗਵਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰ ਪਰਚੈ ਗੁਰ ਪਰਚੈ ਧਿਆਇਆ ਮੈ ਹਿਰਦੈ ਰਾਮੁ ਰਵਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਰਵਿਆ ਰਾਮੁ ਹਿਰਦੈ ਪਰਮ ਗਤਿ ਪਾਈ ਜਾ ਗੁਰ ਸਰਣਾਈ ਆਏ ॥
ਲੋਭ ਵਿਕਾਰ ਨਾਵ ਡੁਬਦੀ ਨਿਕਲੀ ਜਾ ਸਤਿਗੁਰਿ ਨਾਮੁ ਦਿੜਾਏ ॥
ਜੀਅ ਦਾਨੁ ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਦੀਆ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਚਿਤੁ ਲਾਏ ॥
ਆਪਿ ਕ੍ਰਿਪਾਲੁ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰਿ ਦੇਵੈ ਨਾਨਕ ਗੁਰ ਸਰਣਾਏ ॥੨॥

ਬਾਣੀ ਰਾਮ ਨਾਮ ਸੁਣੀ ਸਿਧਿ ਕਾਰਜ ਸਭਿ ਸੁਹਾਏ ਰਾਮ ॥
ਰੋਮੇ ਰੋਮਿ ਰੋਮਿ ਰੋਮੇ ਮੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਰਾਮੁ ਧਿਆਏ ਰਾਮ ॥
ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਧਿਆਏ ਪਵਿਤੁ ਹੋਇ ਆਏ ਤਿਸੁ ਰੂਪੁ ਨ ਰੇਖਿਆ ਕਾਈ ॥
ਰਾਮੋ ਰਾਮੁ ਰਵਿਆ ਘਟ ਅੰਤਰਿ ਸਭ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਭੂਖ ਗਵਾਈ ॥
ਮਨੁ ਤਨੁ ਸੀਤਲੁ ਸੀਗਾਰੁ ਸਭੁ ਹੋਆ ਗੁਰਮਤਿ ਰਾਮੁ ਪ੍ਰਗਾਸਾ ॥
ਨਾਨਕ ਆਪਿ ਅਨੁਗ੍ਰਹੁ ਕੀਆ ਹਮ ਦਾਸਨਿ ਦਾਸਨਿ ਦਾਸਾ ॥੩॥

ਜਿਨੀ ਰਾਮੋ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਵਿਸਾਰਿਆ ਸੇ ਮਨਮੁਖ ਮੂੜ ਅਭਾਗੀ ਰਾਮ ॥
ਤਿਨ ਅੰਤਰੇ ਮੋਹੁ ਵਿਆਪੈ ਖਿਨੁ ਖਿਨੁ ਮਾਇਆ ਲਾਗੀ ਰਾਮ ॥
ਮਾਇਆ ਮਲੁ ਲਾਗੀ ਮੂੜ ਭਏ ਅਭਾਗੀ ਜਿਨ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਨਹ ਭਾਇਆ ॥
ਅਨੇਕ ਕਰਮ ਕਰਹਿ ਅਭਿਮਾਨੀ ਹਰਿ ਰਾਮੋ ਨਾਮੁ ਚੋਰਾਇਆ ॥
ਮਹਾ ਬਿਖਮੁ ਜਮ ਪੰਥੁ ਦੁਹੇਲਾ ਕਾਲੂਖਤ ਮੋਹ ਅੰਧਿਆਰਾ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਆ ਤਾ ਪਾਏ ਮੋਖ ਦੁਆਰਾ ॥੪॥

ਰਾਮੋ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਗੁਰੂ ਰਾਮੁ ਗੁਰਮੁਖੇ ਜਾਣੈ ਰਾਮ॥
ਇਹੁ ਮਨੂਆ ਖਿਨੁ ਊਭ ਪਇਆਲੀ ਭਰਮਦਾ ਇਕਤੁ ਘਰਿ ਆਣੈ ਰਾਮ ॥
ਮਨੁ ਇਕਤੁ ਘਰਿ ਆਣੈ ਸਭ ਗਤਿ ਮਿਤਿ ਜਾਣੈ ਹਰਿ ਰਾਮੋ ਨਾਮੁ ਰਸਾਏ ॥
ਜਨ ਕੀ ਪੈਜ ਰਖ ਰਾਮ ਨਾਮਾ ਪ੍ਰਹਿਲਾਦ ਉਧਾਰਿ ਤਰਾਏ ॥
ਰਾਮੋ ਰਾਮੁ ਰਮੋ ਰਮੁ ਊਚਾ ਗੁਣ ਕਹਤਿਆ ਅੰਤੁ ਨ ਪਾਇਆ ॥
ਨਾਨਕ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਸੁਣਿ ਭੀਨੇ ਰਾਮੈ ਨਾਮਿ ਸਮਾਇਆ ॥੫॥

ਜਿਨ ਅੰਤਰੇ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਵਸੈ ਤਿਨ ਚਿੰਤਾ ਸਭ ਗਵਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਸਭਿ ਅਰਥਾ ਸਭਿ ਧਰਮ ਮਿਲੇ ਮਨਿ ਚਿੰਦਿਆ ਸੋ ਫਲੁ ਪਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਮਨ ਚਿੰਦਿਆ ਫਲੁ ਪਾਇਆ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਆ ਰਾਮ ਨਾਮ ਗੁਣ ਗਾਏ ॥
ਦੁਰਮਤਿ ਕਬੁਧਿ ਗਈ ਸੁਧਿਹੋਈ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਮਨੁ ਲਾਏ ॥

ਪੰਨਾ ੪੪੪

ਸਫਲੁ ਜਨਮੁ ਸਰੀਰੁ ਸਭੁ ਹੋਆ ਜਿਤੁ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਪਰਗਾਸਿਆ ॥
ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਭਜੁ ਸਦਾ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਿਜ ਘਰਿ ਵਾਸਿਆ ॥੬॥

पृ-४४२

आसा महला ४ ॥

झिमि झिमे झिमि झिमि वरसै अँमृित धारा राम ॥

पृ-४४३

गुरमुखे गुरमुखि नदरी रामु पिआरा राम ॥
राम नामु पिआरा जगत निसतारा राम नामि वडिआई ॥
कलिजुगि राम नामु बोहिथा गुरमुखि पार लघाई॥
हलति पलति राम नामि सुहेले गुरमुखि करणी सारी ॥
नानक दाति दइया करि देवै राम नामि निसतारी ॥१॥

रामो राम नामु जपिआ दुख किलविख नास गवाइआ राम ॥
गुर परचै गुर परचै धिआइआ मै हिरदै रामु रवाइआ राम ॥
रविआ रामु हिरदै परम गति पाई जा गुर सरणाई आए ॥
लोभ विकार नाव डुबदी निकली जा सतिगुरि नामु दिड़ाए ॥
जीअ दानु गुरि पूरै दीआ राम नामि चितु लाए ॥
आपि किृपालु किृपा करि देवै नानक गुर सरणाए ॥२॥

बाणी राम नाम सुणी सिधि कारज सभि सुहाए राम ॥
रोमे रोमि रोमि रोमे मै गुरमुखि रामु धिआए राम ॥
राम नामु धिआए पवितु होइ आए तिसु रूपु न रेखिआ काई ॥
रामो रामु रविआ घटि अँतरि सभ तृिसना भूख गवाई ॥
मनु तनु सीतलु सीगारू सभु होआ गुरमति रामु प्रगासा ॥
नानक आपि अनुग्रहु कीआ हम दासनि दासनि दासा ॥३॥

जिनी रामोराम नामु विसारिआ से मनमुख मूड़ अभागी राम ॥
तिन अँतरे मोहु विआपै खिनु खिनु माइआ लागी राम ॥
माइआ मलु लागी मूड़ भए अभागी जिन राम नामु नह भाइआ ॥
अनेक करम करहि अभिमानी हरि रामो नामु चोराइआ ॥
महा बिखमु जम पँथु दुहेला कालूखत मोह अँधिआरा ॥
नानक गुरमुखि नामु धिआइआ ता पाए मोख दुआरा ॥४॥

रामो राम नामु गुरू रामु गुरमुखे जाणै राम ॥
इहु मनूआ खिनु ऊभ पइआली भरमदा इकतु घरि आणै राम ॥
मनु इकतु घरि आणै सभ गति मिति जाणै हरि रामो नामु रसाए ॥
जन की पैज रखै राम नामा प्रहिलाद उधारि तराए ॥
रामो रामु रमो रमु ऊचा गुण कहतिआ अँतु न पाइआ ॥
नानक राम नामु सुणि भीने रामै नामि समाइआ ॥५॥

जिन अँतरे राम नामु वसै तिन चिँता सभ गवाइआ राम ॥
सभि अरथा सभि धरम मिले मन चिँदिआ सो फलु पाइआ राम ॥
मन चिँदिआ फलु पाइआ राम नामु धिआइआ राम नाम गुण गाए ॥
दुरमति कबुधि गई सुधि होई राम नामि मनु लाए ॥

पृ-४४४

सफलु जनमु सरीरू सभु होआ जितु राम नामु परगासिआ ॥
नानक हरि भजु सदा दिनु राती गुरमुखि निज घरि वासिआ ॥६

ਜਿਨ ਸਰਧਾ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਲਗੀ ਤਿਨ੍ ਦੂਜੈ ਚਿਤੁ ਨ ਲਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਜੇ ਧਰਤੀ ਸਭ ਕੰਚਨੁ ਕਰਿ ਦੀਜੈ ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਅਵਰੁ ਨ ਭਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਮਨਿ ਭਾਇਆ ਪਰਮ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਅੰਤਿ ਚਲਦਿਆ ਨਾਲਿ ਸਖਾਈ ॥
ਰਾਮ ਨਾਮ ਧਨੁ ਪੂੰਜੀ ਸੰਚੀ ਨਾ ਡੂਬੈ ਨਾ ਜਾਈ ॥
ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਇਸੁ ਜੁਗ ਮਹਿ ਤੁਲਹਾ ਜਮਕਾਲੁ ਨੇੜਿ ਨ ਆਵੈ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਰਾਮੁ ਪਛਾਤਾ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਆਪਿ ਮਿਲਾਵੈ ॥੭॥

जिन सरधा राम नामि लगी तिन् दूजै चितु न लाइआ राम ॥
जे धरती सभ कँचनु करि दीजै बिनु नावै अवरु न भाइआ राम ॥
राम नामु मनि भाइआ परम सुखु पाइआ अँति चलदिआ नालि सखाई ॥
राम नाम धनु पूँजी सँची ना डूबै ना जाई ॥
राम नामु इसु जुग महि तुलहा जमकालु नेड़ि न आवै ॥
नानक गुरमुखि रामु पछाता करि किरपा आपि मिलावै ॥७॥

ਰਾਮੋ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਸਤੇ ਸਤਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਣਿਆ ਰਾਮ ॥
ਸੇਵਕੋ ਗੁਰ ਸੇਵਾ ਲਾਗਾ ਜਿਨਿ ਮਨੁ ਤਨੁ ਅਰਪਿ ਚੜਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਮਨੁ ਤਨੁ ਅਰਪਿਆ ਬਹੁਤੁ ਮਨਿ ਸਰਧਿਆ ਗੁਰ ਸੇਵਕ ਭਾਇ ਮਿਲਾਏ ॥
ਦੀਨਾ ਨਾਥੁ ਜੀਆ ਕਾ ਦਾਤਾ ਪੂਰੇ ਗੁਰ ਤੇ ਪਾਏ ॥
ਗੁਰੂ ਸਿਖੁ ਸਿਖੁ ਗੁਰੂ ਹੈ ਏਕੋ ਗੁਰ ਉਪਦੇਸੁ ਚਲਾਏ ॥
ਰਾਮ ਨਾਮ ਮੰਤੁ ਹਿਰਦੈ ਦੇਵੈ ਨਾਨਕ ਮਿਲਣੁ ਸੁਭਾਏ ॥੮॥੨॥੯॥

रामो राम नामु सते सति गुरमुखि जाणिआ राम ॥
सेवको गुर सेवा लागा जिनि मनु तनु अरपि चड़ाइआ राम ॥
मनु तनु अरपिआ बहुतु मनि सरधिआ गुर सेवक भाइ मिलाए ॥
दीना नाथु जीआ का दाता पूरे गुर ते पाए ॥
गुरू सिखु सिखु गुरू है एको गुर उपदेसु चलाए ॥
राम नाम मँतु हिरदै देवै नानक मिलणु सुभाए ॥८॥२॥९॥

आसा महला – ४

यह शब्द एक ऐसे अति सुहाने दृश्य का चित्रात्मक वर्णन है जहाँ वर्षा ऋतु में कोमल और धीमी फुहार धरती पर गिरती है और हम इसकी सुंदरता का आनंद बनस्पति की ताजगी के साथ लेते हैं या फिर बारिश में घूमते हुये अपने ऊपर इसकी कोमल ठंडक का आनंद लेते हैं । इस सुंदर दृश्य का उपयोग गुरु जी अपने मन के उस परम सुख का वर्णन करने के लिये करते हैं जो प्रभु नाम के दैवी अँमृत की कोमल फुहार से उन्हें मिल रहा है ।

वह कहते हैं " प्रभु नाम के अँमृत की फुहार रिम झिम करती धीमे धीमे मेरे मन में बरस रही है । गुरु के द्वारा गुरु का अनुयायी अपने प्यारे राम को देख प्रसन्न होता है । प्रिय राम नाम जग को पार लगाता है, राम नाम की बहुत महिमा है । कलियुग में राम नाम एक जहाज़ के समान है जिससे गुरु को मानने वाले भवसागर को लाँघ जाते हैं । गुरु के अनुयायी जो हरि नाम के ध्यान को उत्कृष्ट समझते हैं, उन्हें लोक तथा परलोक में सुख,शांति प्राप्त है । इसलिये ओ' नानक जिसको प्रभु दया करके अपने नाम का दान देते हैं, उसका उद्धार हो जाता है "। (१)

व्यक्तिगत रूप से प्रभु नाम का ध्यान करते रहने के फलस्वरूप मिले आशीर्वादों पर गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो मेरा कहना है कि) राम नाम जपने पर सभी दुख और संकट प्रभु ने नष्ट कर दिये । गुरु से परिचय होने के पश्चात, राम नाम का ध्यान करने से मेरे हृदय में राम रच गये हैं । गुरु की शरण में आने पर, हृदय में राम नाम रचने के पश्चात मुझे परम गति प्राप्त हो गयी । प्रभु का नाम हृदय में दृढ़ होने (समाने) पर, मेरी जीवन नैया जो लोभ विकारों से लदी डूबने की दशा में थी वह बच निकली । (इसलिये, मेरा निष्कर्ष है कि) मेरे परिपूर्ण गुरु ने जिसके हृदय को राम नाम में लगा दिया उसे आध्यात्मिक रूप से जीवन दान दिया। अत: नानक कहते हैं कि गुरु की शरण में आने के बाद कृपालु ईश्वर स्वयं ही कृपा कर मनुष्य को नाम दान देते हैं"।(२)

प्रभु नाम के ध्यान में रहने के लाभ तथा आनंद का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो) जिसने भी प्रभु की प्रशंसा में कही गुरु की वाणी का श्रवण किया है उसके सभी कार्य सुंदर ढंग से सिद्ध हो गये हैं । इसलिये मैं गुरु का चेला, अपने रोम रोम से राम नाम का ध्यान करता हूँ । (मैंनें यह पाया है कि) जिस राम नाम का ध्यान करके लोग पवित्र हो जाते हैं उस राम की कोई रूप रेखा नहीं है । फलस्वरूप, जिनके अँतरमन में राम रचे हैं, उनकी सांसारिक भूख एवं तृष्णा लुप्त हो जाती है । ऐसे मनुष्य का तन मन शीतल तथा सुंदर होता है और गुरु की मति के द्वारा राम नाम के प्रकाश का उदय होता है । नानक कहते हैं, प्रभु स्वयं ही यह प्रेम भरा प्रयत्न करते हैं अन्यथा हम तो दासों के भी दास हैं "।(३)

अब गुरु जी उपरोक्त प्रकार के गुरु के अनुयायियों की तुलना उन दंभी लोगों से करते हैं जो गुरु को न मान कर स्वयं को अधिक बुद्धिमान और चतुर समझते हैं । वह कहते हैं " ऐसे अभिमानी, मूढ़ जिन्होंने राम नाम मन से बिसार रखा है, वह अभागे हैं । उनके अंदर सांसारिक मोह माया व्याप्त है और प्रत्येक क्षण वह माया के मोह में व्यस्त रहते हैं । हाँ, जिन्हें राम नाम नहीं भाता है उनके मन माया के मैल से भरे हैं और ऐसे मूढ़ अभागे हैं । यह अभिमानी, दंभी अनेक प्रकार के करम कांड करते हैं परन्तु हरि नाम से मन चुराते हैं । अत: ऐसे लोगों को यमराज के महा बीहड़, दुखद पथ पर चलना पड़ता है जो सांसारिक मोह रूपी कालिख के कारण अँधियारा है । किन्तु, ओ' नानक, जब भी गुरु का अनुयायी प्रभु के नाम का ध्यान करता है, तभी वह मोक्ष के द्वार को पा लेता है "।(४)

अब गुरु जी सबके लाभ के लिये एक व्यापक परामर्श देते हुये कहते हैं " गुरु के द्वारा गुरु का अनुयायी यह समझ जाता है कि राम नाम ही गुरु है तथा राम नाम ही सर्वव्यापी ईश्वर है । यह मन अत्यंत चंचल है जो एक क्षण में आकाश में (अथवा उत्तेजित) होता है और दूसरे क्षण पाताल में (अथवा खिन्नचित) चला जाता है, जबकि गुरु के अनुयायी का मन एकाग्र अथवा स्थिर रहता है । ऐसी स्थिर एकाग्र मनोदशा में वह उच्च आध्यात्मिक स्तर को जान लेता है और इस प्रकार राम नाम के मधुर स्वाद से ओत प्रोत रहता है । राम नाम से मनुष्य की प्रतिष्ठा

होती है जैसे कि ईश्वर ने प्रह्लाद भक्त का उद्धार कर उसे संकट से बचा लिया था । (हे मेरे मित्रो) सर्वव्यापी राम सर्वोच्च है, उसकी महिमा कितनी भी कह लो फिर भी उसका कोई अंत नहीं पाया जा सकता । ओ' नानक, राम नाम सुन सुन कर भक्त जनों का हृदय ईश्वर के प्रेम में भीग चुका है और वह राम नाम में समा गये हैं "।(५)

गुरु के शिष्य जिनका मन हरि नाम में रमा हुया है, उनका आचरण कितना सदाचारी बन जाता है तथा कितने आशीर्वाद वह पाते हैं, इसका वर्णन गुरु जी करते हैं " (हे मेरे मित्रो), जिनके अंदर राम नाम का वास है, वह अपने समस्त दुख और चिंता गवाँ चुके हैं । उन्हें जीवन के सभी अर्थ और धर्म मिल चुके हैं,तथा उनके मन की सभी इच्छायें फलीभूत हो गयी हैं । हाँ, उन्होंने राम नाम का ध्यान किया, उसकी महिमा का गायन किया और उनको मनोवांछित फल प्राप्त हुया । राम नाम में मन लगाने से उनकी दुरमति और भ्रष्ट बुद्धि शुद्ध हो गयी । राम नाम के प्रकाश का उदय होने से उनका शरीर तथा जन्म सब सफल हो गये । इसलिये, ओ' नानक, हरि नाम का भजन दिन रात निरंतर कर, जिससे कि गुरु का प्रिय शिष्य अपने घर (मन, प्रभु का निवास स्थान) में वास करे "।(६)

हरि प्रेम में रमे भक्त जनों की मनोदशा का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो) जिनके मन में राम नाम के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गयी है, वह अपना चित्त किसी दूसरी ओर नहीं लगाते । यदि सारी धरती स्वर्ण की भी बन जाये (और उन्हें भेंट की जाये), तब भी उन्हें हरि नाम के अतिरिक्त और कुछ नहीं भाता । उनके मन को केवल राम नाम भाता है, जिससे उन्हें जीवन में परम सुख मिलता है और जीवन के अंत समय तक एक सखा की भाँति साथ रहता है । इस प्रकार राम नाम रूपी संचित पूँजी न डूबती है और न कहीं और जा सकती है । (हे' मेरे मित्रो), राम नाम इस कलियुग में एक जहाज़ के समान है, जिसके कारण यमराज भी निकट नहीं आ सकते । ओ' नानक, गुरु के अनुयायी को राम ने पहचाना है और वह स्वयं ही कृपा करके भक्त को अपने में समा लेता है "।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो) राम का नाम सत्य है, अमर है, गुरु का अनुयायी ही केवल इस सत्य को समझ सका है । किन्तु, वही बिरला सेवक गुरु की सेवा में लगा है, जिसने अपना तन मन दोनों राम को अर्पित कर दिये हैं । ऐसा गुरु का सेवक, जिसने मन व तन अर्पित कर दिये हैं और मन में अपार श्रद्धा है गुरु को भाता है और उसका मिलन प्रभु से हो जाता है । वह जीवों को जीवन दान देने वाले दीनानाथ प्रभु को श्रेष्ठ गुरु द्वारा प्राप्त करता है । ऐसा गुरु का शिष्य एक उच्च अवस्था में पहुँच जाता है जहाँ पर गुरु शिष्य व शिष्य गुरु हो जाते हैं (अर्थात दोनों में कोई अंतर नहीं रहता) और दोनों ही राम नाम का उपदेश देते हैं । संक्षेप में, ओ नानक, गुरु सेवक के हृदय में राम नाम का मंत्र देता है और सेवक अगम्य रूप से राम के साथ मिल जाता है "।(८-२-९)

इस सुंदर शब्द का संदेश यह है कि विनम्रता पूर्वक हृदय की गहराई से अपने मन व तन को गुरु को अर्पण करते हुये जब हम उसके आदेश का पालन करते हैं तब वह राम नाम को हमारे मन में बसाते हैं । इसके पश्चात, हमारी त्रुटियाँ, जैसे हमारा अहम तथा सांसारिक लोभ लालच दूर होने लगते हैं । हमारा तन मन शुद्ध, शांत और सन्तुष्ट हो जाता है और हम प्रभु नाम के सरस एवं सहज परम सुख का आनंद लेते हैं, जिसकी तुलना उस मोहक और आनंदमयी स्थित से की जा सकती है जब कोमल ठंडी वर्षा की फुहार धरती पर गिरती है और सारी प्रकृति को मधुर, मनभावन, स्वच्छ और दैवी सुंदरता प्रदान करती है ।

ਪੰਨਾ ੪੪੫

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਸਤਜੁਗਿ ਸਭੁ ਸੰਤੋਖ ਸਰੀਰਾ ਪਗ ਚਾਰੇ ਧਰਮੁ ਧਿਆਨੁ ਜੀਉ ॥
ਮਨਿ ਤਨਿ ਹਰਿ ਗਾਵਹਿ ਪਰਮ ਸੁਖੁ ਪਾਵਹਿ ਹਰਿ ਹਿਰਦੈ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਿਆਨੁ ਜੀਉ ॥
ਗੁਣ ਗਿਆਨੁ ਪਦਾਰਥੁ ਹਰਿ ਹਰਿ ਕਿਰਤਾਰਥੁ ਸੋਭਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਹੋਈ ॥
ਅੰਤਰਿ ਬਾਹਰਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਏਕੋ ਦੂਜਾ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਲਿਵ ਲਾਈ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸਖਾਈ ਹਰਿ ਦਰਗਹ ਪਾਵੈ ਮਾਨੁ ਜੀਉ ॥
ਸਤਜੁਗਿ ਸਭੁ ਸੰਤੋਖ ਸਰੀਰਾ ਪਗ ਚਾਰੇ ਧਰਮੁ ਧਿਆਨੁ ਜੀਉ ॥੧॥

ਤੇਤਾ ਜੁਗੁ ਆਇਆ ਅੰਤਰਿ ਜੋਰੁ ਪਾਇਆ ਜਤੁ ਸੰਜਮ ਕਰਮ ਕਮਾਇ ਜੀਉ ॥
ਪਗੁ ਚਉਥਾ ਖਿਸਿਆ ਤ੍ਰੈ ਪਗ ਟਿਕਿਆ ਮਨਿ ਹਿਰਦੈ ਕ੍ਰੋਧੁ ਜਲਾਇ ਜੀਉ ॥
ਮਨਿ ਹਿਰਦੈ ਕ੍ਰੋਧੁ ਮਹਾ ਬਿਸਲੋਧੁ ਨਿਰਪ ਧਾਵਹਿ ਲੜਿ ਦੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥
ਅੰਤਰਿ ਮਮਤਾ ਰੋਗੁ ਲਗਾਨਾ ਹਉਮੈ ਅਹੰਕਾਰੁ ਵਧਾਇਆ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਕ੍ਰਿਪਾ ਧਾਰੀ ਮੇਰੈ ਠਾਕੁਰਿ ਬਿਖੁ ਗੁਰਮਤਿ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਲਹਿ ਜਾਇ ਜੀਉ ॥
ਤੇਤਾ ਜੁਗੁ ਆਇਆ ਅੰਤਰਿ ਜੋਰੁ ਪਾਇਆ ਜਤੁ ਸੰਜਮ ਕਰਮ ਕਮਾਇ ਜੀਉ ॥੨॥

ਜੁਗੁ ਦੁਆਪੁਰੁ ਆਇਆ ਭਰਮਿ ਭਰਮਾਇਆ ਹਰਿ ਗੋਪੀ ਕਾਨ੍ਹੁ ਉਪਾਇ ਜੀਉ ॥
ਤਪੁ ਤਾਪਨ ਤਾਪਹਿ ਜਗ ਪੁੰਨ ਆਰੰਭਹਿ ਅਤਿ ਕਿਰਿਆ ਕਰਮ ਕਮਾਇ ਜੀਉ ॥
ਕਿਰਿਆ ਕਰਮ ਕਮਾਇਆ ਪਗ ਦੁਇ ਖਿਸਕਾਇਆ ਦੁਇ ਪਗ ਟਿਕੈ ਟਿਕਾਇ ਜੀਉ ॥
ਮਹਾ ਜੁਧ ਜੋਧ ਬਹੁ ਕੀਨ੍ਹੇ ਵਿਚਿ ਹਉਮੈ ਪਚੈ ਪਚਾਇ ਜੀਉ ॥
ਦੀਨ ਦਇਆਲਿ ਗੁਰੁ ਸਾਧੁ ਮਿਲਾਇਆ ਮਿਲਿ ਸਤਿਗੁਰ ਮਲੁ ਲਹਿ ਜਾਇ ਜੀਉ ॥
ਜੁਗੁ ਦੁਆਪੁਰੁ ਆਇਆ ਭਰਮਿ ਭਰਮਾਇਆ ਹਰਿ ਗੋਪੀਕਾਨ੍ਹੁ ਉਪਾਇ ਜੀਉ ॥੩॥

ਪੰਨਾ ੪੪੬

ਕਲਿਜੁਗੁ ਹਰਿ ਕੀਆ ਪਗ ਤ੍ਰੈ ਖਿਸਕੀਆ ਪਗੁ ਚਉਥਾ ਟਿਕੈ ਟਿਕਾਇ ਜੀਉ ॥
ਗੁਰ ਸਬਦੁ ਕਮਾਇਆ ਅਉਖਧੁ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਕੀਰਤਿ ਹਰਿ ਸਾਂਤਿ ਪਾਇ ਜੀਉ ॥
ਹਰਿ ਕੀਰਤਿ ਰੁਤਿ ਆਈ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਵਡਾਈ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਖੇਤੁ ਜਮਾਇਆ॥
ਕਲਿਜੁਗਿ ਬੀਜੁ ਬੀਜੇ ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਸਭੁ ਲਾਹਾ ਮੂਲੁ ਗਵਾਇਆ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕਿ ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਪਾਇਆ ਮਨਿ ਹਿਰਦੈ ਨਾਮੁ ਲਖਾਇ ਜੀਉ ॥
ਕਲਜੁਗੁ ਹਰਿ ਕੀਆ ਪਗ ਤ੍ਰੈ ਖਿਸਕੀਆ ਪਗੁ ਚਉਥਾ ਟਿਕੈ ਟਿਕਾਇ ਜੀਉ ॥੪॥੪॥੧੧॥

पृ-४४५

आसा महला ४ ॥

सतजुगि सभु सँतोख सरीरा पग चारे धरमु धिआनु जीउ ॥
मनि तनि हरि गावहि परम सुखु पावहि हरि हिरदै हरि गुण गिआनु जीउ ॥
गुण गिआनु पदारथु हरि हरि किरतारथु सोभा गुरमुखि होई ॥
अँतरि बाहरि हरि प्रभु एको दूजा अवरु न कोई ॥
हरि हरि लिव लाई हरि नामु सखाई हरि दरगह पावहि पावै मानु जीउ ॥
सतजुगि सभु सँतोख सरीरा पग चारे धरमु धिआनु जीउ ॥१॥

तेता जुग आइआ अँतरि जोरु पाइआ जतु सँजम करम कमाइ जीउ ॥
पगु चउथा खिसिआ त्रे पग टिकिआ मनि हिरदै क्रोधु जलाइ जीउ ॥
मनि हिरदै क्रोधु महा बिसलोधु निरप धावहि लड़ि दुखु पाइया ॥
अँतरि ममता रोगु लगाना हउमै अँहकारु वधाइआ ॥
हरि हरि क्रिपा धारी मेरै ठाकुरि बिखु गुरमति हरि नामि लहि जाइ जीउ ॥
तेता जुगु आइआ अँतरि जोरु पाइआ जतु सँजम करम कमाइ जीउ ॥२॥

जुग दुआपुरु आइआ भरमि भरमाइआ हरि गोपी कानह् उपाइ जीउ ॥
तपु तापन तापहि जग पुँन आरँभहि अति किरिआ करम कमाइ जीउ ॥
किरिआ करम कमाइआ पग दुइ खिसकाइआ दुइ पग टिकै टिकाइ जीउ ॥
महा जुध जोध बहु कीने् विचि हउमै पचै पचाइ जीउ ॥
दीन दइआलि गुरु साधु मिलाइआ मिलि सतिगुर मलु लहि जाइ जीउ ॥
जुगु दुआपुरु आइआ भरमि भरमाइआ हरि गोपी कानह् उपाइ जीउ ॥३॥

पृ-४४६

कलिजुगु हरि कीआ पग त्रे खिसकीआ पगु चउथा टिकै टिकाइ जीउ ॥
गुर सबदु कमाइआ अउखधु हरि पाइआ हरि कीरति हरि सांति पाइ जीउ ॥
हरि कीरति रुति आई हरि नामु वडाई हरि हरि नामु खेतु जमाइआ ॥
कलिजुगि बीजु बीजे बिनु नावै सभु लाहा मूलु गवाइआ ॥
जन नानकि गुरु पूरा पाइआ मनि हिरदै नामु लखाइ जीउ ॥
कलजुगु हरि कीआ पग त्रे खिसकीआ पगु चउथा टिकै टिकाइ जीउ ॥४॥४॥११॥

आसा महला – ४

इस शब्द में गुरु जी दर्शाते हैं कि कैसे समय व्यतीत होने के साथ साथ मानव जीवन के नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्य निरंतर नीचे गिरते गये तथा विभिन्न युगों में लोगों ने मोक्ष पाने के हेतु किस प्रकार के उपाय किये और कैसे समस्त युगों, विशेषतया कलियुग में केवल हरि नाम

के मंत्र को ही सर्वोत्तम उपाय माना ।

मानव इतिहास का प्रथम युग, सतयुग (सत्य का युग) से आरंभ करते हुये गुरु जी कहते हैं "(ऐसा कहा जाता है कि) सतयुग में मनुष्य के मन में धर्म पर विश्वास चारों (दयालुता, दान, तपस्या तथा सत्य के) पैरों पर खड़ा होता था, जो कि सन्तुष्टि, पूर्ण विश्वास और प्रभु के चिंतन मनन के लिये आवश्यक हैं, इसलिये सभी जन संतोष में थे । सभी तन मन से एकाग्र हो हरि गुण गा कर परम सुख की प्राप्ति करते थे, उनके हृदय में हरि के गुणों का ज्ञान व्याप्त था । हाँ, जिनके पास दैवी ज्ञान का भंडार था वह अपने जीवन की सफलता के लिये हरि के प्रति कृतार्थ थे और ऐसे गुरु भक्तों को शोभा प्राप्त हुई । उन्हें अंदर तथा बाहर केवल एक ही प्रभु के अतिरिक्त और कोई दूसरा नहीं दिखाई देता था । वह सदा हरि नाम में लीन रहते थे, हरि नाम ही उनका सखा अथवा मित्र था, इसलिये उन्हें हरि दरबार में मान सम्मान भी मिलता था । हाँ, सतयुग में समस्त मानव जन सन्तुष्ट थे और (प्रभु के प्रति) उनकी धार्मिक आस्था चारों पैरों (स्तंभों) पर टिकी थी "। (१)

अगले त्रेतायुग पर गुरु जी का कथन है " जब त्रेतायुग आया, तब अनेक प्रकार के दबाव मानव मन पर बने, जिनके कारण लोगों ने ब्रह्मचार्य अथवा संयम की साधना जैसे कर्म किये । इस युग में धर्म और विश्वास का चौथा पैर खिसक (टूट) गया और वह तीन पैरों (स्तंभों) पर टिका रहा । लोगों के मन क्रोध में जलने लगे । बिच्छु के विष के समान हृदय के अंदर के क्रोध से राजा एक दूसरे से जाकर युद्ध करने लगे और दुख पाया । उनके अंदर माया मोह का रोग लगा और अहम अथवा अंहकार बहुत अधिक हो गया । किन्तु जिन पर मेरे हरि ने कृपा धारण की उन गुरु की मति मानने वालों का हरि नाम जपने से सारा विष उतर गया । हाँ, जब त्रेतायुग आया लोगों के मन के अंदर कई विचार ज़ोर डालने लगे, तब उन्होंने ब्रह्मचार्य, तप और संयम के करम करने आरंभ किये "।(२)

तीसरे युग, द्वापरयुग पर गुरु जी कहते हैं " द्वापरयुग आने पर मानव जीवन भ्रमों में भटका पाया गया और तब प्रभु ने गोपीयों एवं कृष्ण जैसे व्यक्तित्व पैदा किये । उस काल में लोग तप, तपस्या में व्यस्त हुये और भोज, यज्ञ, दान आदि, पुण्य के कार्य आरंभ किये, अनेक प्रकार के क्रिया करम भी अपनाये । इस प्रकार के क्रिया करमों से धर्म के दो पैर खिसक (टूट) गये और उसे दो पैरों (स्तंभों) पर टिकना पड़ा । अनेक महायोध्दायों ने बहुत युद्ध किये, फलस्वरुप अपने अभिमान में उन्होंने दूसरों का नाश किया तथा स्वयं भी नष्ट हुये। (किन्तु उस समय भी) दीन दयालु प्रभु ने साधु समान गुरु से जिनको मिलाया, सच्चे गुरु से मिलने पर उनका अहम रुपी सारा मैल उतर गया । अत: जब द्वापरयुग आया, लोग भ्रमों में भटकते थे, हरि ने उनके लिये गोपीयों और कृष्ण जैसे (महान लोग) अवतरित किये "।(३)

अंत में, चौथे वर्तमान कलियुग पर गुरु जी टिप्पणी करते हैं "जब प्रभु ने कलियुग प्रारंभ किया (तब स्थित इतनी बिगड़ गयी) कि धर्म के तीन पैर खिसक (टूट) गये और वह केवल चौथे पैर (स्तंभ) पर ही टिका (खड़ा) है । परन्तु, इस युग में भी जो गुरु की शिक्षा को अपनाते हैं, उन्हें हरि नाम औषधि के समान मिलता है, वह हरि की कीर्ति गाकर आत्मिक शांति पाते हैं । हरि का नाम उत्तम है उसकी महिमा गाने की ऋतु आई है, अत: उसके नाम का खेत उगाया है, पर जो भी कोई इस कलियुग में प्रभु नाम के अतिरिक्त किसी और प्रकार का बीज बोता है, वह सारी पूँजी और लाभ दोनों ही गँवा लेता है । परन्तु, जन नानक ने पूर्ण गुरु को पा लिया है जिसने हृदय को प्रभु नाम का प्रकाश दिया है। हाँ, जब हरि ने कलियुग प्रारंभ किया तब धर्म के तीन पैर (स्तंभ) गिर गये और वह केवल एक पैर पर खड़ा है "।(४-४-११)

इस शब्द का संदेश यह है कि समय बीतने के साथ साथ हमारे नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों का इतना ह्रास हो गया है कि सत्य, सदाचार तथा अन्य भले गुण दुर्लभ हो गये हैं और हम अपने अभिमान, मोह माया, क्रोध तथा दूसरे विकारों की अग्नि में भस्म हो रहे हैं । पर ऐसी स्थिति में भी हम गुरु के मार्ग दर्शन से प्रेरित होकर अपने सच्चे प्रेम और निष्ठा के साथ प्रभु नाम का ध्यान तथा उसका गुणगान करके जीवन में सच्ची शांति और स्थिरता प्राप्त कर सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੪੪੮

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੪ ਛੰਤ ॥

ਵਡਾ ਮੇਰਾ ਗੋਵਿੰਦੁ ਅਗਮ ਅਗੋਚਰੁ ਆਦਿ ਨਿਰੰਜਨੁ ਨਿਰੰਕਾਰੁ ਜੀਉ ॥
ਤਾ ਕੀ ਗਤਿ ਕਹੀ ਨ ਜਾਈ ਅਮਿਤਿ ਵਡਿਆਈ ਮੇਰਾ ਗੋਵਿੰਦੁ ਅਲਖ ਅਪਾਰ ਜੀਉ ॥
ਗੋਵਿੰਦੁ ਅਲਖ ਅਪਾਰੁ ਅਪਰੰਪਰੁ ਆਪੁ ਆਪਣਾ ਜਾਣੈ ॥
ਕਿਆ ਇਹ ਜੰਤ ਵਿਚਾਰੇ ਕਹੀਅਹਿ ਜੋ ਤੁਧੁ ਆਖਿ ਵਖਾਣੈ ॥
ਜਿਸ ਨੋ ਨਦਰਿ ਕਰਹਿ ਤੂੰ ਅਪਣੀ ਸੋ ਗੁਰਮੁਖਿ ਕਰੇ ਵੀਚਾਰੁ ਜੀਉ ॥
ਵਡਾ ਮੇਰਾ ਗੋਵਿੰਦੁ ਅਗਮ ਅਗੋਚਰੁ ਆਦਿ ਨਿਰੰਜਨੁ ਨਿਰੰਕਾਰੁ ਜੀਉ ॥੧॥

ਤੂੰ ਆਦਿ ਪੁਰਖੁ ਅਪਰੰਪਰੁ ਕਰਤਾ ਤੇਰਾ ਪਾਰੁ ਨ ਪਾਇਆ ਜਾਇ ਜੀਉ ॥
ਤੂੰ ਘਟ ਘਟ ਅੰਤਰਿ ਸਰਬ ਨਿਰੰਤਰਿ ਸਭ ਮਹਿ ਰਹਿਆ ਸਮਾਇ ਜੀਉ ॥
ਘਟ ਅੰਤਰਿ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਪਰਮੇਸਰੁ ਤਾ ਕਾ ਅੰਤੁ ਨ ਪਾਇਆ ॥
ਤਿਸੁ ਰੂਪੁ ਨ ਰੇਖ ਅਦਿਸਟੁ ਅਗੋਚਰੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਅਲਖੁ ਲਖਾਇਆ ॥
ਸਦਾ ਅਨੰਦਿ ਰਹੈ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ ਸਹਜੇ ਨਾਮਿ ਸਮਾਇ ਜੀਉ ॥
ਤੂੰ ਆਦਿ ਪੁਰਖੁ ਅਪਰੰਪਰੁ ਕਰਤਾ ਤੇਰਾ ਪਾਰੁ ਨ ਪਾਇਆ ਜਾਇ ਜੀਉ ॥੨॥

ਤੂੰ ਸਤਿ ਪਰਮੇਸਰੁ ਸਦਾ ਅਬਿਨਾਸੀ ਹਰਿ ਹਰਿ ਗੁਣੀ ਨਿਧਾਨੁ ਜੀਉ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਏਕੋ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ਤੂੰ ਆਪੇ ਪੁਰਖੁ ਸੁਜਾਨੁ ਜੀਉ ॥
ਪੁਰਖੁ ਸੁਜਾਨੁ ਤੂੰ ਪਰਧਾਨੁ ਤੁਧੁ ਜੇਵਡੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥
ਤੇਰਾ ਸਬਦੁ ਸਭੁ ਤੂੰਹੈ ਵਰਤਹਿ ਤੂੰ ਆਪੇ ਕਰਹਿ ਸੁ ਹੋਈ ॥
ਹਰਿ ਸਭ ਮਹਿ ਰਵਿਆ ਏਕੋ ਸੋਈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਲਖਿਆ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਜੀਉ ॥
ਤੂੰ ਸਤਿ ਪਰਮੇਸਰੁ ਸਦਾ ਅਬਿਨਾਸੀ ਹਰਿ ਹਰਿ ਗੁਣੀ ਨਿਧਾਨੁ ਜੀਉ ॥੩॥

ਸਭੁ ਤੂੰਹੈ ਕਰਤਾ ਸਭ ਤੇਰੀ ਵਡਿਆਈ ਜਿਉ ਭਾਵੈ ਤਿਵੈ ਚਲਾਇ ਜੀਉ ॥
ਤੁਧੁ ਆਪੇ ਭਾਵੈ ਤਿਵੈ ਚਲਾਵਹਿ ਸਭ ਤੇਰੈ ਸਬਦਿ ਸਮਾਇ ਜੀਉ ॥
ਸਭ ਸਬਦਿ ਸਮਾਵੈ ਜਾਂ ਤੁਧੁ ਭਾਵੈ ਤੇਰੈ ਸਬਦਿ ਵਡਿਆਈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੁਧਿ ਪਾਈਐ ਆਪੁ ਗਵਾਈਐ ਸਬਦੇ ਰਹਿਆ ਸਮਾਈ ॥
ਤੇਰਾ ਸਬਦੁ ਅਗੋਚਰੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਈਐ ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਸਮਾਇ ਜੀਉ ॥
ਸਭੁ ਤੂੰਹੈ ਕਰਤਾ ਸਭ ਤੇਰੀ ਵਡਿਆਈ ਜਿਉ ਭਾਵੈ ਤਿਵੈ ਚਲਾਇ ਜੀਉ ॥੪॥੭॥੧੪॥

पृ-४४८

आसा महला ४ छँत ॥

वडा मेरा गोविँदु अगम अगोचरु आदि निरँजनु निरँकारु जीउ ॥
ता की गति कही न जाई अमिति वडिआई मेरा गोविँदु अलख अपार जीउ ॥
गोविँदु अलख अपारु अपरँपरु आपु आपणा जाणै ॥
किआ इह जँत विचारे कहीअहि जो तुधु आखि वखाणै ॥
जिस नो नदरि करहि तूँ अपणी सो गुरमुखि करे वीचारु जीउ ॥
वडा मेरा गोविँदु अगम अगोचरु आदि निरँजनु निरँकारु जीउ ॥१॥

तूँ आदि पुरखु अपरँपरु करता तेरा पारु न पाइआ जाइ जीउ ॥
तूँ घट घट अँतरि सरब निरँतरि सभ महि रहिआ समाइ जीउ ॥
घट अँतरि पारब्रहमु परमेसरु ता का अँतु न पाइआ ॥
तिसु रूपु न रेख अदिसटु अगोचरु गुरमुखि अलखु लखाइआ ॥
सदा अनँदि रहै दिनु राती सहजे नामि समाइ जीउ ॥
तूँ आदि पुरखु अपरँपरु करता तेरा पारु न पाइआ जाइ जीउ ॥२॥

तूँ सति परमेसरु सदा अबिनासी हरि हरि गुणी निधानु जीउ ॥
हरि हरि प्रभु एको अवरु न कोई तूँ आपे पुरखु सुजानु जीउ ॥
पुरखु सुजानु तूँ परधानु तुधु जेवडु अवरु न कोई ॥
तेरा सबदु सभु तूँहै वरतहि तूँ आपे करहि सु होई ॥
हरि सभ महि रविआ एको सोई गुरमुखि लखिआ हरि नामु जीउ ॥
तूँ सति परमेसरु सदा अबिनासी हरि हरि गुणी निधानु जीउ ॥३॥

सभु तूँहै करता सभ तेरी वडिआई जिउ भावै तिवै चलाइ जीउ ॥
तुधु आपे भावै तिवै चलावहि सभ तेरै सबदि समाइ जीउ ॥
सभ सबदि समावै जां तुधु भावै तेरै सबदि वडिआई ॥
गुरमुखि बुधि पाईऐ आपु गवाईऐ सबदे रहिआ समाई ॥
तेरा सबदु अगोचरु गुरमुखि पाईऐ नानक नामि समाइ जीउ ॥
सभु तूँहै करता सभ तेरी वडिआई जिउ भावै तिवै चलाइ जीउ ॥४॥७॥१४॥

आसा महला -४

इस शब्द में गुरु जी हमें अवगत कराते हैं कि किस प्रकार प्रभु के गुण गायें और उसके नाम का ध्यान करें ।

पहले हमें सम्बोधित कर कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), मेरा गोविंद बहुत बड़ा है, पहुँच से बाहर है, दिखाई नहीं देता, आदि पुरुष है, किसी प्रभाव से अछूता तथा निराकार है ।उसकी गति कही नहीं जा सकती, उसकी श्रेष्ठता की कोई सीमा नहीं है, मेरा ईश्वर समझ से परे, अपार है। वह महान, स्वयं ही अपने को जानता है । हे प्रभु, उन मानव जीव बेचारों को क्या कहें जो तुम्हारे लिये कुछ कहना और बखानना चाहते हैं । हे ईश्वर, जिस पर तुम अपनी कृपा दृष्टि करते हो केवल वही मनुष्य गुरु की आज्ञानुसार तुम्हारे पर विचार और व्याख्या कर सकता है ।हाँ, मेरा गोविंद महान है, पहुँच से बाहर है, दिखाई नहीं देता, आदि पुरुष है, किसी भी सांसारिक मोहमाया के दुष्प्रभाव से अछूता तथा निराकार है "।(१)

अब, गुरु जी प्रभु को सीधा सम्बोधित करते हैं " हे प्रभु तुम आदि पुरुष हो, असीमित करनकरावनहार हो, तेरा कोई थाह नहीं पाया जाता। तुम निरंतर सबके अँतरमन में समाये रहते हो । हाँ, ऐसा श्रेष्ठ प्रभु, पारब्रहम, जिसका कोई ओर छोर नहीं पाया जा सकता । उसकी कोई रूप रेखा नहीं, वह अदृष्ट है और व्याख्या से बाहर है । किन्तु गुरु की कृपा से गुरु के शिष्य उस अभेद अदृष्ट (प्रभु) को देख पाते हैं । (प्रभु को समझने वाले) ऐसे लोग सदा दिन रात आनंद में रहते हैं और सहज भाव से ईश्वर नाम में समाये रहते हैं ।हे प्रभु, तुम आदि पुरुष हो, असीमित करनकरावनहार हो, तेरा कोई थाह नहीं पाया जा सकता "।(२)

गुरु जी का प्रभु से सीधा सम्बोधन है " हे' प्रभु, तुम सत्य हो, सदा परम ईश्वर हो, अविनाशी हो और समस्त गुणों के भंडार हो ।तुम केवल एक ही हरि तथा स्वामी हो, दूसरा और कोई नहीं है और स्वयं ही सर्वज्ञानी पुरुष हो । हाँ, तुम सर्वज्ञ महान पुरुष हो, तुम प्रधान हो, तुम्हारे जितना विशाल और कोई नहीं है । सभी स्थानों पर केवल तुम्हीं अपनी आज्ञा देते हो और जो तुम स्वयं करते हो वही होता है । हरि एक ही हैं जो सभी में रमे हैं और गुरु के किसी भी अनुयायी ने हरि नाम के द्वारा यह देख समझ लिया है । हे' प्रभु, तुम सत्य हो, सदा परम ईश्वर हो, अविनाशी हो और समस्त गुणों के भंडार हो " । (३)

अंत में गुरु जी कहते हैं " हे' ईश्वर, तुम समस्त (संसार) के सृजनकर्ता हो, सब तुम्हारी श्रेष्ठता है, जैसा तुम्हें भाता है वैसै ही तुम (ब्रह्मांड को) चलाते हो ।हाँ, तुम संसार को अपनी इच्छा से चलाते हो, सब तुम्हारी आज्ञा के अधीन उसी में समाये हैं । तेरे मन भाती आज्ञा की महिमा है कि सब उसमें समाये हैं । गुरु का अनुयायी गुरु के वचन से बुद्धि अथवा गुण पाकर अपना अहम गँवा देता है और तेरी आज्ञा में समाया रहता है । गुरु के अनुयायी नानक तेरी अदृष्ट आज्ञा पाकर तेरे नाम के ध्यान में लीन हो गये हैं । हाँ, हे' ईश्वर तुम समस्त (संसार) के सृजनकर्ता हो, सब तुम्हारी श्रेष्ठता है, जैसा तुम्हें भाता है वैसे ही तुम (ब्रह्मांड को) चलाते हो "।(४-७-१४)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें यह मान लेना चाहिये कि ईश्वर ही ब्रह्मांड का सृजनकर्ता है और जो भी हो रहा है वह उसी की आज्ञा या इच्छा से हो रहा है । हमारे लिये उत्तम यही है कि हम प्रभु की इच्छा को गुरु के शब्द द्वारा समझें और उसे विनम्रतापूर्वक स्वीकार करते हुये उसके नाम के ध्यान में लीन रहें ।

ਪੰਨਾ ੪੪੯

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਹਰਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਭਗਤਿ ਭੰਡਾਰ ਹੈ ਗੁਰ ਸਤਿਗੁਰ ਪਾਸੇ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਗੁਰੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਸਚਾ ਸਾਹੁ ਹੈ ਸਿਖ ਦੇਇ ਹਰਿ ਰਾਸੇ ॥
ਧਨੁ ਧੰਨੁ ਵਣਜਾਰਾ ਵਣਜੁ ਹੈ ਗੁਰੁ ਸਾਹੁ ਸਾਬਾਸੇ ॥
ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਗੁਰੁ ਤਿਨੀ ਪਾਇਆ ਜਿਨ ਧੁਰਿ ਲਿਖਤੁ ਲਿਲਾਟਿ
ਲਿਖਾਸੇ ॥੧॥

ਸਚੁ ਸਾਹੁ ਹਮਾਰਾ ਤੂੰ ਧਣੀ ਸਭੁ ਜਗਤੁ ਵਣਜਾਰਾ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਸਭ ਭਾਂਡੇ ਤੁਧੈ ਸਾਜਿਆ ਵਿਚਿ ਵਸਤੁ ਹਰਿ ਥਾਰਾ ॥
ਜੋ ਪਾਵਹਿ ਭਾਂਡੇ ਵਿਚਿ ਵਸਤੁ ਸਾ ਨਿਕਲੈ ਕਿਆ ਕੋਈ ਕਰੇ ਵੇਚਾਰਾ ॥

ਪੰਨਾ ੪੫੦

ਜਨ ਨਾਨਕ ਕਉ ਹਰਿ ਬਖਸਿਆ ਹਰਿ ਭਗਤਿ ਭੰਡਾਰਾ ॥੨॥

ਹਮ ਕਿਆ ਗੁਣ ਤੇਰੇ ਵਿਥਰਹ ਸੁਆਮੀ ਤੂੰ ਅਪਰ ਅਪਾਰੋ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸਾਲਾਹਹ ਦਿਨੁ ਰਾਤਿ ਏਹਾ ਆਸ ਆਧਾਰੋ ॥
ਹਮ ਮੂਰਖ ਕਿਛੂਅ ਨ ਜਾਣਹਾ ਕਿਵ ਪਾਵਹ ਪਾਰੋ ॥
ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਹਰਿ ਕਾ ਦਾਸੁ ਹੈ ਹਰਿ ਦਾਸ ਪਨਿਹਾਰੋ ॥੩॥

ਜਿਉ ਭਾਵੈ ਤਿਉ ਰਾਖਿ ਲੈ ਹਮ ਸਰਣਿ ਪ੍ਰਭ ਆਏ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਹਮ ਭੂਲਿ ਵਿਗਾੜਹ ਦਿਨਸੁ ਰਾਤਿ ਹਰਿ ਲਾਜ ਰਖਾਏ ॥
ਹਮ ਬਾਰਿਕ ਤੂੰ ਗੁਰੁ ਪਿਤਾ ਹੈ ਦੇ ਮਤਿ ਸਮਝਾਏ ॥
ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਦਾਸੁ ਹਰਿ ਕਾਂਢਿਆ ਹਰਿ ਪੈਜ ਰਖਾਏ ॥੪॥੧੦॥੧੭॥

पृ-४४९

आसा महला ४॥

हरि अँमृत भगति भँडार है गुर सतिगुर पासे राम राजे ॥
गुरु सतिगुरु सचा साहु है सिख देइ हरि रासे ॥
धनु धँनु वणजारा वणजु है गुरु साहु साबासे ॥
जनु नानकु गुरु तिनी् पाइआ जिन धुरि लिखतु लिलाटि
लिखासे ॥१॥

सचु साहु हमारा तूँ धणी सभु जगतु वणजारा राम राजे ॥
सभ भांडे तुधै साजिआ विचि वसतु हरि थारा ॥
जो पावहि भांडे विचि वसतु सा निकलै किआ कोई करे वेचारा ॥

प ४५०

जन नानक कउ हरि बखसिआ हरि भगति भँडारा ॥२॥

हम किआ गुण तेरे विथरह सुआमी तूँ अपर अपारो राम राजे ॥।
हरि नामु सालाहह दिनु राति एहा आस आधारो ॥
हम मूरख किछुअ न जाणहा किव पावहि पारो ॥
जनु नानकु हरि का दासु है हरि दास पनिहारो ॥३॥

जिउ भावै तिउ राखि लै हम सरणि प्रभ आए राम राजे ॥
हम भूलि विगाड़ह दिनसु राति हरि लाज रखाए ॥
हम बारिक तूँ गुरु पिता है दे मति समझाए ॥
जनु नानकु दासु हरि कांढिआ हरि पैज रखाए ॥४॥१०॥१७॥

आसा महला – ४

इस शब्द में गुरु जी अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर एक सच्चे गुरु की श्रेष्ठताओं का बखान कर रहे हैं, जिससे कि हम भी उसी प्रकार का आनंद प्राप्त कर सकें ।

वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो) हरि की अँमृत सरीखी भक्ति का भंडार केवल सच्चे गुरु के पास है और वह उस भंडार का सच्चा व्यापारी है जो प्रभु नाम की राशि अपने शिष्यों को देता है ।वह व्यापारी धन्य है जो ऐसी पवित्र वस्तु का व्यापार करता है तथा लेने वाले को उत्साहित करता है ।दास नानक कहते हैं कि ऐसा गुरु उसी को प्राप्त होता है जिनके मस्तक पर प्रारब्ध से ही ऐसा लिखा होता है "।(१)

अब गुरु जी समस्त मानव जाति की ओर से प्रार्थना करते हुये कहते हैं "हे' प्रभु तुम सदैव ही हमारे साहूकार हो तथा समस्त संसार तुम्हारा व्यापारी है ।(संसार के) समस्त जीव तुमने बर्तनों के समान रचे हैं और उनके अंदर की वस्तु (बुद्धि) भी तुम्हीं ने डाली है ।जैसी भी वस्तु (बुद्धि) बर्तन के अंदर डाली है, केवल वही उसमें से निकलती है, इसमें कोई बेचारा जीव क्या कर सकता है ।किन्तु नानक दास को हरि ने अपनी भक्ति का भंडार प्रदान किया है "।(२)

अपनी कृतज्ञता को एक विनम्र प्रार्थना के रूप में गुरु जी प्रकट करते हैं "हे' प्रभु, हम तेरे क्या और कौन से गुणों का विस्तार कर सकते हैं, तुम अपार हो, तुम्हारा कोई ओर छोर नहीं है । हम दिन रात तेरे नाम की स्तुति करते हैं, क्योंकि यही हमारी आशा है, आधार है । हम मूर्ख जन और कुछ नहीं जानते, अत: किस प्रकार तुम्हारा पार पा सकते हैं । नानक हरि का दास है, अथवा हरि के दासों का पनिहारा है "।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं "हे' प्रभु, हम तेरी शरण में आये हैं, जैसे भी तुम्हें भाये वैसे ही हमें रखो हम दिन रात भूलों अथवा त्रुटियों के कारण अपने को दोषी बनाते हैं, तुम्हीं हमारी लाज रखते हो ।हम तेरे बालक हैं, तुम हमारे पिता एंव गुरु हो, हमें तुम सुमति देकर समझायो । दास नानक हरि का सेवक है, उसके सम्मान की रक्षा हरि करते हैं "। (४-१०-१७)

इस शब्द का संदेश यह है कि इसमें कोई शंका नहीं कि हम भूलों और त्रुटियों से परिपूर्ण हैं, पर यदि हम सच्चाई एंव विनम्रता से एक निष्कपट बालक की भाँति गुरु की शिक्षा का अनुसरण करते हुये अपनी भूलें स्वीकार करलें और स्वयं को भविष्य के लिये सही मार्ग पर रखते हुये पूर्व पापों के लिये विनीत भाव से क्षमा प्रार्थना करें तो अवश्य ही एक कृपालु पिता अथवा स्वामी की भाँति प्रभु हमारे पर दया करेंगे और अतीत की समस्त भूलों को क्षमा कर हमें अपने साथ जोड़ कर कँठ से लगा लेंगे ।

ਪੰਨਾ ੪੫੧

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੪ ਛੰਤ ਘਰੁ ੫

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਮੇਰੇ ਮਨ ਪਰਦੇਸੀ ਵੇ ਪਿਆਰੇ ਆਉ ਘਰੇ ॥
ਹਰਿ ਗੁਰੂ ਮਿਲਾਵਹੁ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਘਰਿ ਵਸੈ ਹਰੇ ॥
ਰੰਗਿ ਰਲੀਆ ਮਾਣਹੁ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਹਰਿ ਕਿਰਪਾ ਕਰੇ ॥
ਗੁਰੁ ਨਾਨਕੁ ਤੁਠਾ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਮੇਲੇ ਹਰੇ ॥੧॥

ਮੈ ਪ੍ਰੇਮੁ ਨ ਚਾਖਿਆ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਭਾਉ ਕਰੇ ॥
ਮਨਿ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਨ ਬੁਝੀ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਨਿਤ ਆਸ ਕਰੇ ॥
ਨਿਤ ਜੋਬਨੁ ਜਾਵੈ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਜਮੁ ਸਾਸ ਹਿਰੇ ॥
ਭਾਗ ਮਣੀ ਸੋਹਾਗਣਿ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਉਰਿ ਧਾਰੇ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੪੫੨

ਪਿਰ ਰਤਿਅੜੇ ਮੈਡੇ ਲੋਇਣ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਚਾਤ੍ਰਿਕ ਬੂੰਦ ਜਿਵੈ ॥
ਮਨੁ ਸੀਤਲੁ ਹੋਆ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਹਰਿ ਬੂੰਦ ਪੀਵੈ ॥
ਤਨਿ ਬਿਰਹੁ ਜਗਾਵੈ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਨੀਦ ਨ ਪਵੈ ਕਿਵੈ ॥
ਹਰਿ ਸਜਣੁ ਲਧਾ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਨਾਨਕ ਗੁਰੂ ਲਿਵੈ ॥੩॥

ਚੜਿ ਚੇਤੁ ਬਸੰਤੁ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਭਲੀਅ ਰੁਤੇ ॥
ਪਿਰ ਬਾਝੜਿਅਹੁ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਆਂਗਣਿ ਧੂੜਿ ਲੁਤੇ ॥
ਮਨਿ ਆਸ ਉਡੀਣੀ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਦੁਇ ਨੈਨ ਜੁਤੇ ॥
ਗੁਰੁ ਨਾਨਕੁ ਦੇਖਿ ਵਿਗਸੀ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਜਿਉ ਮਾਤ ਸੁਤੇ ॥੪॥

ਹਰਿ ਕੀਆ ਕਥਾ ਕਹਾਣੀਆ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਸਤਿਗੁਰੂ ਸੁਣਾਈਆ ॥
ਗੁਰ ਵਿਟੜਿਅਹੁ ਹਉ ਘੋਲੀ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਮੇਲਾਈਆ ॥
ਸਭਿ ਆਸਾ ਹਰਿ ਪੂਰੀਆ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਮਨਿ ਚਿੰਦਿਅੜਾ ਫਲੁ ਪਾਇਆ ॥
ਹਰਿ ਤੁਠੜਾ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਨਾਮਿ ਸਮਾਇਆ ॥੫॥

ਪਿਆਰੇ ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਪ੍ਰੇਮੁ ਨ ਖੇਲਸਾ ॥
ਕਿਉ ਪਾਈ ਗੁਰੁ ਜਿਤੁ ਲਗਿ ਪਿਆਰਾ ਦੇਖਸਾ ॥
ਹਰਿ ਦਾਤੜੇ ਮੇਲਿ ਗੁਰੂ ਮੁਖਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਮੇਲਸਾ ॥
ਗੁਰੁ ਨਾਨਕੁ ਪਾਇਆ ਮੇਰੇ ਪਿਆਰੇ ਧੁਰਿ ਮਸਤਕਿ ਲੇਖੁ ਸਾ
॥੬॥੧੪॥੨੧॥

पृ-४५१

आसा महला ४ छँत घर ५

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

मेरे मन परदेसी वे पिआरे आउ घरे ॥
हरि गुरू मिलावहु मेरे पिआरे घरि वसै हरे ॥
रँगि रलीआ माणहु मेरे पिआरे हरि किरपा करे ॥
गुरु नानकु तुठा मेरे पिआरे मेले हरे ॥१॥

मै प्रेमु न चाखिआ मेरे पिआरे भाउ करे ॥
मनि तृिसना न बुझी मेरे पिआरे नित आस करे ॥
नित जोबनु जावै मेरे पिआरे जमु सास हिरे ॥
भाग मणी सोहागणि मेरे पिआरे नानक हरि उरि धारे ॥२॥

पृ-४५२

पिर रतिअड़े मैडे लोइण मेरे पिआरे चातृिक बूँद जिवै ॥
मनु सीतलु होआ मेरे पिआरे हरि बूँद पीवै ॥
तनि बिरहु जगावै मेरे पिआरे नीद न पवै किवै ॥
हरि सजणु लधा मेरे पिआरे नानक गुरू लिवै ॥३॥

चड़ि चेतु बसँतु मेरे पिआरे भलीअ रुते ॥
पिर बाझड़िअहु मेरे पिआरे आंगणि धूड़ि लुते ॥
मनि आस उडीणी मेरे पिआरे दुइ नैन जुते ॥
गुरु नानकु देखि विगसी मेरे पिआरे जिउ मात सुते ॥४॥

हरि कीआ कथा कहाणीआ मेरे पिआरे सतिगुरू सुणाईआ
गुरु विटड़िअहु हउ घोली मेरे पिआरे जिनि हरि मेलाईआ ॥
सभि आसा हरि पूरीआ मेरे पिआरे मनि चिँदिअड़ा फलु पाइआ ॥
हरि तुठड़ा मेरे पिआरे जनु नानकु नामि समाइआ ॥५॥

पिआरे हरि बिनु प्रेमु न खेलसा ॥
किउ पाई गुरु जितु लगि पिआरा देखसा ॥
हरि दातड़े मेलि गुरू मुखि गुरमुखि मेलसा ॥
गुरु नानकु पाइआ मेरे पिआरे धुरि मसतकि लेखु सा
॥६॥१४॥२१॥

आसा महला -४ छँत घर -५

यह शब्द गुरु जी की काव्य रचना की पराकाष्ठा का एक और उदाहरण है जहाँ वह प्रभु से बिछुड़ी मानव आत्मा की बेचैनी और तड़प को प्रभु से जुड़ जाने के पश्चात ऐसे आनंद और सुख में परिवर्तित होते हुए देखते हैं जैसे कि अपने प्रियतम के वियोग में एक दुखी तथा उदास प्रियतमा उससे पुनर्मिलन होने पर हर्षोल्लास से भर जाती है ।

गुरु जी स्वयं तथा अपने संगी साधुओं को सप्रेम कहते हैं "ओ' मेरे परदेसी मन, अपने घर लौट आओ (सांसारिक वस्तुयों की अपेक्षा अपने मन के अंदर प्रभु के विषय में विचार करो)। हे' मेरे प्रिय मित्र, मुझे हरि रूपी गुरु से मिलायो, (जिसकी सहायता से) मेरे घर (मन) में हरि बसने लगें । हे' मेरे प्रिय, हरि कृपा करें और तुम उसके प्रेम में रह कर जीवन में आनन्द ही आनन्द पायो । नानक कहते हैं, हे' मेरे प्रिय (मन), यदि गुरु कृपालु हो जायें तब वह हरि से मिला देते हैं "।(१)

अब गुरु जी विनीत भाव से प्रभु से दूर रहने के लिये स्वयं को दोषी मानते हुये अपनी मनोदशा का वर्णन करते हैं " हे' मेरे प्रिय, मैंने प्रभु

के प्रेम का स्वाद पूर्ण आस्था से नहीं लिया है, क्योंकि मेरे मन की तृष्णा (सांसारिक वस्तुयों के लिये) नहीं बुझी है, वह नित्य ही नयी इच्छा करने लगता है । हे'मेरे प्रिय, युवा अवस्था नित्य ही कम हो रही है और मृत्यु का राक्षस मेरे जीवन की सांसों का अंत करने के लिए उत्सुकता से इंतजार कर रहा है। नानक कहते हैं, हे' मेरे प्रिय, उस सोहागिन (आत्मा) के भाग्य में मणी है, जिसने हृदय में हरि को धारण किया है "।(२)

अपने प्रियतम के विरह में विक्षिप्त प्रियतमा की मनोदशा की तुलना स्वयं से करते गुरु जी हुए कहते हैं " हे' मेरे प्रिय जैसे पपीहा स्वाँति बूँद को तरसता है, वैसे ही प्रभु के प्रेम में रते हुये मेरे नयन उसे देखने को व्याकुल हैं । मेरे प्रिय, हरि नाम रूपी स्वाँति बूँद मिलने से मेरा मन शीतल होता है । मेरा तन (हरि के बिना) विरह के कारण जागता है और किसी प्रकार भी नींद नहीं आती है । परन्तु, हे' मेरे प्रिय, गुरु की कृपा से नानक ने (अचानक) हरि जैसे सज्जन को (अपने अंदर) ढूँढ लिया है "। (३)

अब गुरु जी बसंत की मनभावन ऋतु में प्रियतम से बिछुड़ी प्रियतमा की मनोदशा का वर्णन करते हुये कहते हैं " मेरे प्रिय, चैत्र के माह का आरंभ होने पर भली लगने वाली बसंत ऋतु आ गयी है । किन्तु, हे' मेरे प्रिय, प्रियतम के बिना मेरे आँगन में (हरियाली की जगह)धूल भरी हुयी है (हरि के बिना मेरी आत्मा सूनी है)। हे' मेरे प्रिय, मेरा मन उसकी प्रतीक्षा में है, मेरे दोनों नयन (बसंत ऋतु का मोहक दृश्य देखने की अपेक्षा) उसका राह देखने में व्यस्त हैं । गुरु नानक को देख कर मेरी आत्मा ऐसे खिल उठी है जैसे कि माता अपने पुत्र को देख कर प्रसन्न होती है, (क्योंकि मैं जानती हूँ कि गुरु अवश्य ही मुझे प्रिय प्रभु से मिला देंगे)।(४)

अब गुरुजी यह विवरण देते हैं कि किस प्रकार से वह प्रभु प्रेम में रमे और उसके साथ मिलन का आनंद पाया जिससे कि हम भी कुछ प्रेरणा ले सकें, वह कहते हैं "हे' मेरे प्रिय मेरे सच्चे गुरु ने ही मुझे हरि की कथा कहानियाँ सुनाई ।मैं अपने उस गुरु पर बलिहारी हूँ, जिसने मेरा मिलन हरि से करवाया, तत्पश्चात, मेरी सभी इच्छायें पूर्ण हो गयीं और मनवाँछित फल मिल गया । हे' मेरे प्रिय, हरि मेरे पर दयालु हैं और नानक दास उसके नाम भजन में समा चुके हैं "।(५)

केवल प्रभु से प्रेम करने के अतिरिक्त अन्य किसी और से प्रेम ना करने का प्रण करते हुए गुरु जी अपने मित्र तथा प्रभु से शब्द के अँत में कहते हैं " हे' मेरे प्रिय, यह प्रेम का खेल मैं हरि के बिना किसी और से नहीं खेलूँगा ।हे' मेरे प्रिय, मुझे बतायो कि मैं किस प्रकार उस गुरु को पा सकता हूँ, जिसकी सहायता से मैं प्यारे प्रभु को देख सकूँगा । ओ' मेरे दाता, प्रभु, मुझे गुरु से मिलाओ, जिसके द्वारा मैं तुमसे मिल सकूँ । हे मेरे प्रिय, (तुम्हारी सहायता से मैंने) गुरु नानक पा लिया है, क्योंकि भाग्य ने मस्तक पर ऐसा लिखा था "।(६-१४-२१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि मन में प्रभु के प्रति गहरा और वास्तविक प्रेम है जैसा कि एक विश्वसनीय पत्नी को अपने पति के साथ होता है और यदि हम सौभाग्य से एक ऐसे सच्चे गुरु से मिल सकें जो हमें सदाचार का राह दिखाये, तब हम अपने प्रिय हरि से मिल सकेंगे और उसकी सँगति का आनंद ले सकेंगे ।

ਪੰਨਾ ੪੫੩

ਆਸਾ ਛੰਤ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੪

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਹਰਿ ਚਰਨ ਕਮਲ ਮਨੁ ਬੇਧਿਆ ਕਿਛੁ ਆਨ ਨ ਮੀਠਾ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਮਿਲਿ ਸੰਤਸੰਗਤਿ ਆਰਾਧਿਆ ਹਰਿ ਘਟਿ ਘਟੇ ਡੀਠਾ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਹਰਿ ਘਟਿ ਘਟੇ ਡੀਠਾ ਅੰਮ੍ਰਿਤੋੁ ਵੂਠਾ ਜਨਮ ਮਰਨ ਦੁਖ ਨਾਠੇ ॥
ਗੁਣ ਨਿਧਿ ਗਾਇਆ ਸਭ ਦੂਖ ਮਿਟਾਇਆ ਹਉਮੈ ਬਿਨਸੀ ਗਾਠੇ ॥

ਪੰਨਾ ੪੫੪

ਪ੍ਰਿਉ ਸਹਜ ਸੁਭਾਈ ਛੋਡਿ ਨ ਜਾਈ ਮਨਿ ਲਾਗਾ ਰੰਗੁ ਮਜੀਠਾ ॥
ਹਰਿ ਨਾਨਕ ਬੇਧੇ ਚਰਨ ਕਮਲ ਕਿਛੁ ਆਨ ਨ ਮੀਠਾ ॥੧॥

ਜਿਉ ਰਾਤੀ ਜਲਿ ਮਾਛੁਲੀ ਤਿਉ ਰਾਮ ਰਸਿ ਮਾਤੇ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਗੁਰ ਪੂਰੈ ਉਪਦੇਸਿਆ ਜੀਵਨ ਗਤਿ ਭਾਤੇ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਜੀਵਨ ਗਤਿ ਸੁਆਮੀ ਅੰਤਰਜਾਮੀ ਆਪਿ ਲੀਏ ਲੜਿ ਲਾਏ ॥
ਹਰਿ ਰਤਨ ਪਦਾਰਥੋ ਪਰਗਟੋ ਪੂਰਨੋ ਛੋਡਿ ਨ ਕਤਹੂ ਜਾਏ ॥
ਪ੍ਰਭੁ ਸੁਘਰੁ ਸਰੂਪੁ ਸੁਜਾਨੁ ਸੁਆਮੀ ਤਾ ਕੀ ਮਿਟੈ ਨ ਦਾਤੇ ॥
ਜਲ ਸੰਗਿ ਰਾਤੀ ਮਾਛੁਲੀ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਮਾਤੇ ॥੨॥

ਚਾਤ੍ਰਿਕੁ ਜਾਚੈ ਬੂੰਦ ਜਿਉ ਹਰਿ ਪ੍ਰਾਨ ਅਧਾਰਾ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਮਾਲੁ ਖਜੀਨਾ ਸੁਤ ਭ੍ਰਾਤ ਮੀਤ ਸਭਹੂੰ ਤੇ ਪਿਆਰਾ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਸਭਹੂੰ ਤੇ ਪਿਆਰਾ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰਾਰਾ ਤਾ ਕੀ ਗਤਿ ਨਹੀ ਜਾਣੀਐ ॥
ਹਰਿ ਸਾਸਿ ਗਿਰਾਸਿ ਨ ਬਿਸਰੈ ਕਬਹੂੰ ਗੁਰ ਸਬਦੀ ਰੰਗੁ ਮਾਣੀਐ ॥
ਪ੍ਰਭੁ ਪੁਰਖੁ ਜਗਜੀਵਨੋ ਸੰਤ ਰਸੁ ਪੀਵਨੋ ਜਪਿ ਭਰਮ ਮੋਹ ਦੁਖ ਡਾਰਾ ॥
ਚਾਤ੍ਰਿਕੁ ਜਾਚੈ ਬੂੰਦ ਜਿਉ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਪਿਆਰਾ ॥੩॥

ਮਿਲੇ ਨਰਾਇਣ ਆਪਣੇ ਮਾਨੋਰਥੋ ਪੂਰਾ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਢਾਠੀ ਭੀਤਿ ਭਰੰਮ ਕੀ ਭੇਟਤ ਗੁਰੁ ਸੂਰਾ ਰਾਮ ਰਾਜੇ ॥
ਪੂਰਨ ਗੁਰ ਪਾਏ ਪੁਰਬਿ ਲਿਖਾਏ ਸਭ ਨਿਧਿ ਦੀਨ ਦਇਆਲਾ ॥
ਆਦਿ ਮਧਿ ਅੰਤਿ ਪ੍ਰਭੁ ਸੋਈ ਸੁੰਦਰ ਗੁਰ ਗੋਪਾਲਾ ॥
ਸੂਖ ਸਹਜ ਆਨੰਦ ਘਨੇਰੇ ਪਤਿਤ ਪਾਵਨ ਸਾਧੂ ਧੂਰਾ ॥
ਹਰਿ ਮਿਲੇ ਨਰਾਇਣ ਨਾਨਕਾ ਮਾਨੋਰਥੋੁ ਪੂਰਾ ॥੪॥੧॥੩॥

पृ-४५३

आसा छँत महला ५ घर ४

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हरि चरन कमल मनु बेधिआ किछु आन न मीठा राम राजे ॥
मिलि सँतसँगति आराधिया हरि घटि घटे डीठा राम राजे ॥
हरि घटि घटे डीठा अँमितो वूठा जनम मरन दुख नाठे ॥
गुण निधि गाइआ सभ दूख मिटाइआ हउमै बिनसी गाठे ॥

पृ-४५४

प्रिउ सहज सुभाई छोडि न जाई मनि लागा रँगु मजीठा ॥
हरि नानक बेधे चरन कमल किछु आन न मीठा ॥१॥

जिउ राती जलि माछुली तिउ राम रसि माते राम राजे ॥
गुर पूरै उपदेसिआ जीवन गति भाते राम राजे ॥
जीवन गति सुआमी अँतरजामी आपि लीए लड़ि लाए ॥
हरि रतन पदारथो परगटो पूरनो छोडि न कतहू जाए ॥
प्रभु सुघरु सरूपु सुजानु सुआमी ता की मिटै न दाते ॥
जल सँगि राती माछुली नानक हरि माते ॥२॥

चात्रिकु जाचै बूँद जिउ हरि प्रान अधारा राम राजे ॥
मालु खजीना सुत भ्रात मीत सभहूँ ते पिआरा राम राजे ॥
सभहूँ ते पिआरा पुरखु निरारा ता की गति नही जाणीऐ ॥
हरि सासि गिरासि न बिसरै कबहूँ गुर सबदी रँगु माणीऐ ॥
प्रभु पुरखु जगजीवनो सँत रसु पीवनो जपि भरम मोह दुख डारा ॥
चात्रिकु जाचै बूँद जिउ नानक हरि पिआरा ॥३॥

मिले नराइण आपणे मानोरथो पूरा राम राजे ॥
ढाठी भीति भरँम की भेटत गुरु सूरा राम राजे ॥
पूरन गुर पाए पुरबि लिखाए सभ निधि दीन दइआला ॥
आदि मधि अँति प्रभु सोई सुँदर गुर गोपाला ॥
सूख सहज आनँद घनेरे पतित पावन साधू धूरा ॥
हरि मिले नराइण नानका मानोरथो पूरा ॥४॥१॥३॥

आसा छँत महला -५ घर -४

इस शब्द में गुरु जी ऐसे भक्त जनों की मनोदशा का वर्णन करते है जो प्रभु प्रेम में पूर्ण रूप से रमे रह कर किस प्रकार के सुख एवं वरदानों के आनंद का अनुभव करती है।

वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), जिस मनुष्य का मन प्रभु के चरण कमलों में बिंधा हुया है उसे और कुछ भी मीठा नहीं लगता।वह संतों की संगति में मिल बैठ कर प्रभु की अराधना करता है और उसे हरि प्रत्येक हृदय में दृष्टिगोचर होते हैं। प्रत्येक हृदय में हरि के दिखाई देने पर हरि नाम के अँमृित में वह समा जाता है और उसके जन्म मरण के दुख पलायन कर जाते हैं। हरि के गुणों रुपी निधि का गायन करके ऐसा मनुष्य अपने सारे दुख मिटा लेता है और उसके अँतरमन में से अहम की गाँठों का विनाश हो जाता है।सहज भाव से प्रिय प्रभु ऐसे भक्त का साथ नहीं छोड़ते जिसका मन मजीठ के पक्के गहरे लाल रंग जैसे प्रभु प्रेम में रंगा हुआ हो।संक्षेप में ओ' नानक, जिसका मन हरि के पवित्र चरण कमलों में बींधा हुया है, उसे और कुछ मीठा नहीं लगता"।(१)

गुरु के दैवी संदेशों द्वारा सधे सँवरे भक्तों के मन का चित्रण करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), जिस किसी के मन को पूर्ण गुरु ने प्रभु नाम से सँवारा वह उस रस में ऐसे मतवाले रहते हैं, जैसे जल में मछली रमी रहती है। पूर्ण गुरु उन्हें जीवन में मोक्ष प्राप्त करने का

पाठ पढ़ाता है ।प्रभु, मोक्ष प्रदान करने वाले स्वामी, अंतरयामी हैं, वह स्वयं (गुरु के अनुयायी को) अपने साथ बाँध लेते हैं ।हरि नाम रूपी रत्न पदार्थ पूर्णतया (उस भक्त में) प्रकट होते हैं और हरि उसे छोड़ कर कहीं नहीं जाते ।प्रभु गुणवान हैं, अतिसुन्दर हैं, सर्वज्ञाता स्वामी हैं, उनकी अपार देन कभी समाप्त नहीं होती ।जैसे मछली जल से प्यार कर उसी में डूबी रहती है, उसी प्रकार हे' नानक (हरि को प्यार करने वाले) उसके प्यार में डूबे रहते हैं"।(२)

अब एक और सुंदर उदाहरण के साथ हरि के प्रेमियों के प्रेम का चित्रण करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), जैसे पपीहा स्वाति बूँद पर निर्भर है, वैसे ही हरि का नाम गुरु के अनुयायी के प्राणों का आधार है और उसे राम समस्त धन दौलत के भंडार, पुत्र (पुत्री), भाई (बहन), व मित्रो से अधिक प्रिय है । हाँ वह निराला महापुरुष जिसकी गति अथवा दशा कोई नहीं जान सकता, (गुरु के अनुयायियों के लिये) सबसे अधिक प्रिय है उनके मन में से प्रत्येक साँस तथा प्रत्येक ग्रास के साथ हरि नाम नहीं बिसरता और वह गुरु के शब्द के द्वारा हरि प्रेम का आनंद लेते हैं ।प्रभु, महापुरुष जग का जीवनदाता, जिसके नाम रूपी रस को सँतजन अपने जाप के द्वारा पीते हैं उनके मन में से भ्रम एवं मोहमाया के कष्ट निपट जाते हैं ।संक्षेप में, हे' नानक, जैसे पपीहा स्वाति बूँद पर निर्भर है, वैसे ही भक्त को हरि प्रिय हैं "।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे मित्रो), जो अपने नारायण से मिल चुके हैं, उनके जीवन का मनोरथ पूरा हो चुका है । उनके भ्रमों की भीति अथवा दीवार (प्रभु प्रेम के) धनी अथवा बलवान गुरु से भेंट होने के बाद गिर चुकी है ।पूर्ण गुरु को वही प्राप्त करते हैं जिनके भाग्य में गुणों की निधि वाले दीन दयालु ईश्वर ने लिखा होता है । (उनका ऐसा विश्वास है कि) सुन्दर गुरु गोपाल प्रभु, आदि, मध्य तथा अंत, समस्त में व्याप्त हैं ।जिन्हें साधु जन की चरण धूलि प्राप्त है वह अत्यंत शांति, सहजता और आनंद का अनुभव करते हैं तथा पतित (जन) भी पवित्र हो जाते हैं । संक्षेप में, ओ' नानक, जो भी नारायण में लीन हो चुका है, उसके जीवन का मनोरथ पूरा हो चुका है "।(४-१-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि जो जन भक्तों की पवित्र वाणी के द्वारा प्रभु के चरण कमलों में स्वयं को रमाये रखते हैं वह चिरकाल से बिछुड़े हुए प्रभु के साथ पुनर्मिलन के ध्येय को इस जीवन में प्राप्त कर लेते हैं ।

ਪੰਨਾ ੪੫੫

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਸਲੋਕੁ ॥

ਬਨੁ ਬਨੁ ਫਿਰਤੀ ਖੋਜਤੀ ਹਾਰੀ ਬਹੁ ਅਵਗਾਹਿ ॥
ਨਾਨਕ ਭੇਟੇ ਸਾਧ ਜਬ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ਮਨ ਮਾਹਿ ॥੧॥

ਛੰਤ ॥

ਜਾ ਕਉ ਖੋਜਹਿ ਅਸੰਖ ਮੁਨੀ ਅਨੇਕ ਤਪੇ ॥
ਬ੍ਰਹਮੇ ਕੋਟਿ ਅਰਾਧਹਿ ਗਿਆਨੀ ਜਾਪ ਜਪੇ ॥
ਜਪ ਤਾਪ ਸੰਜਮ ਕਿਰਿਆ ਪੂਜਾ ਅਨਿਕ ਸੋਧਨ ਬੰਦਨਾ ॥
ਕਰਿ ਗਵਨੁ ਬਸੁਧਾ ਤੀਰਥਹ ਮਜਨੁ ਮਿਲਨ ਕਉ ਨਿਰੰਜਨਾ ॥
ਮਾਨੁਖ ਬਨੁ ਤਿਨੁ ਪਸੂ ਪੰਖੀ ਸਗਲ ਤੁਝਹਿ ਅਰਾਧਤੇ ॥
ਦਇਆਲ ਲਾਲ ਗੋਬਿੰਦ ਨਾਨਕ ਮਿਲੁ ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਹੋਇ ਗਤੇ ॥੧॥

ਕੋਟਿ ਬਿਸਨ ਅਵਤਾਰ ਸੰਕਰ ਜਟਾਧਾਰ ॥
ਚਾਹਹਿ ਤੁਝਹਿ ਦਇਆਰ ਮਨਿ ਤਨਿ ਰੁਚ ਅਪਾਰ ॥
ਅਪਾਰ ਅਗਮ ਗੋਬਿੰਦ ਠਾਕੁਰ ਸਗਲ ਪੂਰਕ ਪ੍ਰਭ ਧਨੀ ॥
ਸੁਰ ਸਿਧ ਗਣ ਗੰਧਰਬ ਧਿਆਵਹਿ ਜਖ ਕਿੰਨਰ ਗੁਣ ਭਨੀ ॥
ਕੋਟਿ ਇੰਦ੍ਰ ਅਨੇਕ ਦੇਵਾ ਜਪਤ ਸੁਆਮੀ ਜੈ ਜੈ ਕਾਰ ॥
ਅਨਾਥ ਨਾਥ ਦਇਆਲ ਨਾਨਕ ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਮਿਲਿ ਉਧਾਰ ॥੨॥

ਕੋਟਿ ਦੇਵੀ ਜਾ ਕਉਸੇਵਹਿ ਲਖਿਮੀ ਅਨਿਕ ਭਾਤਿ ॥

ਪੰਨਾ ੪੫੬

ਗੁਪਤ ਪ੍ਰਗਟ ਜਾ ਕਉ ਅਰਾਧਹਿ ਪਉਣ ਪਾਣੀ ਦਿਨਸੁ ਰਾਤਿ ॥
ਨਖਿਅਤ੍ਰ ਸਸੀਅਰ ਸੂਰ ਧਿਆਵਹਿ ਬਸੁਧ ਗਗਨਾ ਗਾਵਏ ॥
ਸਗਲ ਖਾਣੀ ਸਗਲ ਬਾਣੀ ਸਦਾ ਸਦਾ ਧਿਆਵਏ ॥
ਸਿਮ੍ਰਿਤਿ ਪੁਰਾਣ ਚਤੁਰ ਬੇਦਹ ਖਟੁ ਸਾਸਤ੍ਰ ਜਾ ਕਉ ਜਪਾਤਿ ॥
ਪਤਿਤ ਪਾਵਨ ਭਗਤਿ ਵਛਲ ਨਾਨਕ ਮਿਲੀਐ ਸੰਗਿ ਸਾਤਿ ॥੩॥

ਜੇਤੀ ਪ੍ਰਭੂ ਜਨਾਈ ਰਸਨਾ ਤੇਤ ਭਨੀ ॥
ਅਨਜਾਨਤ ਜੋ ਸੇਵੈ ਤੇਤੀ ਨਹ ਜਾਇ ਗਨੀ ॥
ਅਵਿਗਤ ਅਗਨਤ ਅਥਾਹ ਠਾਕੁਰ ਸਗਲ ਮੰਝੇ ਬਾਹਰਾ ॥
ਸਰਬ ਜਾਚਿਕ ਏਕੁ ਦਾਤਾ ਨਹ ਦੂਰਿ ਸੰਗੀ ਜਾਹਰਾ ॥
ਵਸਿ ਭਗਤ ਥੀਆ ਮਿਲੇ ਜੀਆ ਤਾ ਕੀ ਉਪਮਾ ਕਿਤ ਗਨੀ ॥
ਇਹੁ ਦਾਨੁ ਮਾਨੁ ਨਾਨਕੁ ਪਾਏ ਸੀਸੁ ਸਾਧਹ ਧਰਿ ਚਰਨੀ ॥੪॥੨॥੫॥

पृ-४५५

आसा महला ५॥

सलोक ॥

बनु बनु फिरती खोजती हारी बहु अवगाहि ॥
नानक भेटे साध जब हरि पाइआ मन माहि ॥१॥

छँत ॥

जा कउ खोजहि असँख मुनी अनेक तपे ॥
ब्रहमे कोटि अराधहि गिआनी जाप जपे ॥
जप ताप सँजम किरिआ पूजा अनिक सोधन बँदना ॥
करि गवनु बसुधा तीरथह मजनु मिलन कउ निरँजना ॥
मानुख बनु तिनु पसू पँखी सगल तुझहि अराधते ॥
दइआल लाल गोबिंद नानक मिलु साधसँगति होइ गते ॥१॥

कोटि बिसन अवतार सँकर जटाधार ॥
चाहहि तुझहि दइआर मनि तनि रुच अपार ॥
अपार अगम गोबिँद ठाकुर सगल पूरक प्रभ धनी ॥
सुर सिध गण गँधरब धिआवहि जख किँनर गुण भनी ॥
कोटि इँद्र अनेक देवा जपत सुआमी जै जै कार ॥
अनाथ नाथ दइआल नानक साधसँगति मिलि उधार ॥२॥

कोटि देवी जा कउसेवहि लखिमी अनिक भाति ॥

प ४५६

गुपत प्रगट जा कउ अराधहि पउण पाणी दिनसु राति ॥
नखिअत्र ससीअर सूर धिआवहि बसुध गगना गावए ॥
सगल खाणी सगल बाणी सदा सदा धिआवए ॥
सिमिृति पुराण चतुर बेदह खटु सासत्र जा कउ जपाति ॥
पतित पावन भगति वछल नानक मिलीऐ सँगि साति ॥३॥

जेती प्रभू जनाई रसना तेत भनी ॥
अनजानत जो सेवै तेती नह जाइ गनी ॥
अविगत अगनत अथाह ठाकुर सगल मँझे बाहरा ॥
सरब जाचिक एकु दाता नह दूरि सँगी जाहरा ॥
वसि भगत थीआ मिले जीआ ता की उपमा कित गनी ॥
इहु दानु मानु नानकु पाए सीसु साधह धरि चरनी ॥४॥२॥५॥

आसा महला -५ सलोक

डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार इस शब्द में गुरु जी का यह विचार है कि सारी सृष्टि सृजनकर्ता की स्तुति में व्यस्त है । कुछ पूजा सचेत रूप से होती है जैसे कि साधु संत, देवदूत और देवी देवता के द्वारा और कुछ स्तुति अथवा पूजा अर्चना स्वत: हो रही है जैसे कि सूर्य, चन्द्रमा और तारों के द्वारा । परन्तु सर्वोत्तम एवं शुभ पूजा वही है जो साधु संतों तथा भक्त जनों की संगति में बैठ कर प्रभु की महिमा में की जाती है। सम्भवत: गुरु जी इसी लिये इस शब्द में निम्न रूप से कह रहे हैं :-

सलोक -

"मैं एक जंगल से दूसरे जंगल प्रभु को खोजता खोजता थक हार गया हूँ, बहुत ढूंढा ।किन्तु (मैं) नानक कहता हूँ कि जब मेरी भेंट साधु जन (गुरु) से हुई, मैंने प्रभु को अपने मन में ही पा लिया है"।(१)

छँत –

इसलिये गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे मित्रो), जिस प्रभु को असंख्य ऋषि मुनी और अनेक तपस्वी खोजते रहे, करोड़ों ब्रह्मा अराधते रहे और ज्ञानी ध्यानी जाप जपते रहे ।(उसे पाने के लिये) लोग कई प्रकार से जाप, तपस्या एवं संयम क्रियायें, पूजा पाठ और भजन वंदना आदि करते हैं । प्रभु से मिलन के लिये धरती का भ्रमण करके अनेकों पवित्र तीर्थ स्नान करते हैं (पर गुरु की कृपा से हरि साधु सँतों की सँगति में मिलते हैं)। इस लिये गुरु जी प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं " (हे' प्रभु), मनुष्य, वन, तृण, पशु, पक्षी सभी तेरी अराधना करते हैं । तुम, हे' दीन दयालु गोबिँद, कृपया, नानक को साधु सँतो की सँगति में मिलो जिससे कि उसका उद्धार हो सके ।(१)

प्रभु की महिमा को गुरु जी यहाँ प्रार्थना के रूप में व्यक्त करते हैं " हे' दयालु प्रभु, करोड़ों विष्णु तथा जटाधारी शंकर ने अवतरित होकर तन मन से तेरे में अपार रूचि से तुम दयालु को चाहा ।हे' अपार, अगम्य, गोविंद, स्वामी, सबकी कामना पूर्ण करने वाले धनी प्रभु, सभी देवता, सिद्ध, गंधर्व, यक्ष, किन्नर तेरे गुणगान करते हैं । करोड़ों इन्द्र, देवी देवता हे' स्वामी तेरा जाप तथा तेरी जय जयकार करते हैं । ओ' नानक, साधु संतों की संगति में अनाथों के नाथ, दयालु प्रभु से मिलन होने पर ही उद्धार होता है"।(२)

अत: गुरु जी हमें परामर्श देते हुये कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), करोड़ों देवियाँ, लक्ष्मी आदि अनेक प्रकार से जिसकी सेवा करती हैं । वायु, जल, दिन और रात जिसकी अराधना गुप्त अथवा प्रकट रूप से करते हैं । नक्षत्र, चन्द्रमा और सूर्य जिसका ध्यान करते हैं, धरती तथा आकाश गुण गाते हैं । जिसका ध्यान समस्त उपज (प्रकृति), समस्त वाणी (ध्वनि, भाषा) सदा सदा करती है ।जिसका जाप सारी स्मृतियाँ, पुराण, चारों वेद और छह शास्त्र करते हैं । ओ' नानक, हम उस पतित पावन, भक्त जनों के रक्षक को केवल संतों की संगति में ही प्राप्त कर सकते हैं "।(३)

शब्द के अंत में विनम्र भाव से गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), मेरी जिह्वा उतना ही कह सकती है जितना मुझे प्रभु ने जानने की शक्ति दी है । ब्रह्मांड में और भी कई जो तुम्हारी सेवा (पूजा अर्चना) करते हैं उनसे मैं अनजान हूँ, अतः, वह गिने नहीं जा सकते । वह स्वामी ठाकुर अदृष्य है उसे आँका नहीं जा सकता, अथाह है, वह सबके अंदर है और बाहर भी है । सभी याचक हैं, केवल वही एक दाता है, वह दूर नहीं है, वह हमारा संगी हमारे सम्मुख है ।वह स्वयं को भक्त जनों के वश में रखता है, उन्हें मिलता है (जो उसे प्रेम करते हैं) उनकी प्रशंसा किस प्रकार करूँ। नानक की केवल यही कामना है कि उसे अपना शीश प्रभु के ऐसे भक्त जनों के चरणों पर रखने का दान तथा सम्मान प्राप्त हो"।(४-२-५)

इस शब्द का संदेश यह है कि मानव जाति, देवी देवता, देवदूत, समस्त सृष्टि में निहित आकाश, धरती सूर्य, चन्द्रमा, तारे सभी प्रभु की महिमा गा रहे हैं । अनेक लोग उसे मिलने के लिये कई प्रयत्न, जैसे, कर्म कांड, व्रत, हवन और तीर्थ स्नान आदि करते हैं अथवा कई उसे धार्मिक एवं आध्यात्मिक ग्रन्थों के अध्ययन से खोजने का प्रयत्न करते हैं, परन्तु प्रभु केवल उन भक्तों को प्रेम करते हैं जो उसके नाम का ध्यान शुद्ध प्रेम और निष्ठा से करते हैं ।इस लिये प्रभु को पाने का सबसे सरल उपाय सच्चे संतों की सेवा तथा सँगति में उसका महिमागान एवं नाम का ध्यान करना है ।

ਪੰਨਾ ੪੫੭	**पृ-४५७**
ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**आसा महला ५॥**
ਸਲੋਕੁ ॥	**सलोकु॥**
ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਜਪੰਤਿਆ ਕਛੁ ਨ ਕਹੈ ਜਮਕਾਲੁ ॥ ਨਾਨਕ ਮਨੁ ਤਨੁ ਸੁਖੀ ਹੋਇ ਅੰਤੇ ਮਿਲੈ ਗੋਪਾਲੁ ॥੧॥	हरि हरि नामु जपँतिआ कछु न कहै जमकालु ॥ नानक मनु तनु सुखी होइ अँते मिलै गोपालु ॥१॥
ਛੰਤ ॥	**छँत ॥**
ਮਿਲਉ ਸੰਤਨ ਕੈ ਸੰਗਿ ਮੋਹਿ ਉਧਾਰਿ ਲੇਹੁ ॥ ਬਿਨਉ ਕਰਉ ਕਰ ਜੋੜਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦੇਹੁ ॥ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਮਾਗਉ ਚਰਣ ਲਾਗਉ ਮਾਨੁ ਤਿਆਗਉ ਤੁਮ੍ ਦਇਆ ॥ ਕਤਹੂੰ ਨ ਧਾਵਉ ਸਰਣਿ ਪਾਵਉ ਕਰੁਣਾ ਮੈ ਪ੍ਰਭ ਕਰਿ ਮਇਆ ॥ ਸਮਰਥ ਅਗਥ ਅਪਾਰ ਨਿਰਮਲ ਸੁਣਹੁ ਸੁਆਮੀ ਬਿਨਉ ਏਹੁ ॥ ਕਰ ਜੋੜਿ ਨਾਨਕ ਦਾਨੁ ਮਾਗੈ ਜਨਮ ਮਰਣ ਨਿਵਾਰਿ ਲੇਹੁ ॥੧॥	मिलउ सँतन कै सँगि मोहि उधारि लेहु ॥ बिनउ करउ कर जोड़ि हरि हरि नामु देहु ॥ हरि नामु मागउ चरण लागउ मानु तिआगउ तुम् दइआ ॥ कतहूँ न धावउ सरणि पावउ करुणा मै प्रभ करि मइआ ॥ समरथ अगथ अपार निरमल सुणहु सुआमी बिनउ एहु ॥ कर जोड़ि नानक दानु मागै जनम मरण निवारि लेहु ॥१॥
ਪੰਨਾ ੪੫੮	**पृ-४५८**
ਅਪਰਾਧੀ ਮਤਿਹੀਨੁ ਨਿਰਗੁਨੁ ਅਨਾਥੁ ਨੀਚੁ ॥ ਸਠ ਕਠੋਰੁ ਕੁਲਹੀਨੁ ਬਿਆਪਤ ਮੋਹ ਕੀਚੁ ॥ ਮਲ ਭਰਮ ਕਰਮ ਅਹੰ ਮਮਤਾ ਮਰਣੁ ਚੀਤਿ ਨ ਆਵਏ ॥ ਬਨਿਤਾ ਬਿਨੋਦ ਅਨੰਦ ਮਾਇਆ ਅਗਿਆਨਤਾ ਲਪਟਾਵਏ ॥ ਖਿਸੈ ਜੋਬਨੁ ਬਧੈ ਜਰੂਆ ਦਿਨ ਨਿਹਾਰੇ ਸੰਗਿ ਮੀਚੁ ॥ ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਆਸ ਤੇਰੀ ਸਰਣਿ ਸਾਧੂ ਰਾਖੁ ਨੀਚੁ ॥੨॥	अपराधी मतिहीनु निरगुनु अनाथु नीचु ॥ सठ कठोरु कुलहीनु बिआपत मोह कीचु ॥ मल भरम करम अहँ ममता मरणु चीति न आवए ॥ बनिता बिनोद अनँद माइआ अगिआनता लपटावए ॥ खिसै जोबनु बधै जरूआ दिन निहारे सँगि मीचु ॥ बिनवँति नानक आस तेरी सरणि साधू राखु नीचु ॥२॥
ਭਰਮੇ ਜਨਮ ਅਨੇਕ ਸੰਕਟ ਮਹਾ ਜੋਨ ॥ ਲਪਟਿ ਰਹਿਓ ਤਿਹ ਸੰਗਿ ਮੀਠੇ ਭੋਗ ਸੋਨ ॥ ਭ੍ਰਮਤ ਭਾਰ ਅਗਨਤ ਆਇਓ ਬਹੁ ਪ੍ਰਦੇਸਹ ਧਾਇਓ ॥ ਅਬ ਓਟ ਧਾਰੀ ਪ੍ਰਭ ਮੁਰਾਰੀ ਸਰਬ ਸੁਖ ਹਰਿ ਨਾਇਓ ॥ ਰਾਖਨਹਾਰੇ ਪ੍ਰਭ ਪਿਆਰੇ ਮੁਝ ਤੇ ਕਛੂ ਨ ਹੋਆ ਹੋਨ ॥ ਸੂਖ ਸਹਜ ਆਨੰਦ ਨਾਨਕ ਕ੍ਰਿਪਾ ਤੇਰੀ ਤਰੈ ਭਉਨ ॥੩॥	भरमे जनम अनेक सँकट महा जोन ॥ लपटि रहिओ तिह सँगि मीठे भोग सोन ॥ भ्रमत भार अगनत आइओ बहु प्रदेसह धाइओ ॥ अब ओट धारी प्रभ मुरारी सरब सुख हरि नाइओ ॥ राखनहारे प्रभ पिआरे मुझ ते कछू न होआ होन ॥ सूख सहज आनँद नानक क्रिपा तेरी तरै भउन ॥३॥
ਨਾਮ ਧਾਰੀਕ ਉਧਾਰੇ ਭਗਤਹ ਸੰਸਾ ਕਉਨ ॥ ਜੇਨ ਕੇਨ ਪਰਕਾਰੇ ਹਰਿ ਹਰਿ ਜਸੁ ਸੁਨਹੁ ਸ੍ਰਵਨ ॥ ਸੁਨਿ ਸ੍ਰਵਨ ਬਾਨੀ ਪੁਰਖ ਗਿਆਨੀ ਮਨਿ ਨਿਧਾਨਾ ਪਾਵਹੇ ॥ ਹਰਿ ਰੰਗਿ ਰਾਤੇ ਪ੍ਰਭ ਬਿਧਾਤੇ ਰਾਮ ਕੇ ਗੁਣ ਗਾਵਹੇ ॥ ਬਸੁਧ ਕਾਗਦ ਬਨਰਾਜ ਕਲਮਾ ਲਿਖਣ ਕਉ ਜੇ ਹੋਇ ਪਵਨ ॥ ਬੇਅੰਤ ਅੰਤੁ ਨ ਜਾਇ ਪਾਇਆ ਗਹੀ ਨਾਨਕ ਚਰਣ ਸਰਨ ॥੪॥੫॥੮॥	नाम धारीक उधारे भगतह सँसा कउन ॥ जेन केन परकारे हरि हरि जसु सुनहु स्रवन ॥ सुनि स्रवन बानी पुरख गिआनी मनि निधाना पावहे ॥ हरि रँगि राते प्रभ बिधाते राम के गुण गावहे ॥ बसुध कागद बनराज कलमा लिखण कउ जे होइ पवन ॥ बेअँत अतुँ न जाइ पाइआ गही नानक चरण सरन ॥४॥५॥८॥

आसा महला – ५

इस शब्द में गुरु जी प्रभु नाम का ध्यान करने वालों को मिले आशीर्वादों का संक्षिप्त वर्णन करते हैं और बताते हैं कि किस प्रकार की विनम्रता प्रेम और श्रद्धा के साथ हमें प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिए जिससे कि वह हमें अपने नाम के ध्यान का आशीर्वाद प्रदान करे । वह कहते हैं :

सलोक -

" (हे' मेरे मित्रो, यदि हम) प्रभु का नाम जपते हैं तो यमराज हमें कुछ नहीं कहेगा या डरायेगा ।ओ' नानक, (प्रभु नाम जपने से) तन मन सुख शांति में रहता है और अंत में प्रभु से मिलन होता है" ।(१)

इस लिये अति विनम्र भाव से गुरु जी प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं :-

छँत-

हे' हरि, मेरी हाथ जोड़ कर विनम्र प्रार्थना है कि संतों की संगति में रख कर मेरा उद्धार कर दो और अपने नाम का दान दो ।हे' दयालु हरि, मैं तुम्हारे नाम की तुमसे भिक्षा माँगता हूँ, अपनी दया करो (और मुझे आशीर्वाद दो कि) मेरा मन तेरे चरणों में रहे और मैं अपने अहम का त्याग करूँ ।हे' करूणानिधि प्रभु, दया करो कि इधर उधर न भटक कर तेरी शरण में रहूँ । हे' सर्वशक्तिमान अथाह, अपार, पवित्र स्वामी मेरी यह विनती सुन लो । नानक करबद्ध यह भिक्षा माँगते हैं कि उन्हें जन्म मरण के फेरों से मुक्ति दिला दो"। (१)

आगे गुरु जी हमें यह दर्शाते हैं कि कैसे हमें अपने गुणों पर अंहकार करने की अपेक्षा, अति विनम्र भाव से प्रभु से विनती करनी चाहिये । वह कहते हैं " हे' प्रभु, मैं एक अपराधी, बुद्धिहीन, गुणहीन, अनाथ, नीच हूँ । मैं दुष्ट, कठोर, कुलहीन हूँ जिसमें मोह माया का कीचड़ व्याप्त है । मेरे अंदर भ्रम, कर्म कांड, ममता मोह और अंहकार का मैल भरा है, तथा मन में मृत्यु का विचार नहीं आता है ।अपनी अज्ञानता के कारण स्त्री के साथ खेल-क्रीड़ा, माया के द्वारा आनंद इत्यादि में लिपटा हूँ (और इन कृत्यों के परिणामों को नही समझता) । मेरा यौवन काल घट रहा है, बृद्धावस्था आ रही है और यमराज उस दिन को देख रहे हैं, (जब वह मुझे मेरे दुष्कर्मों का दंड देकर आनंदित होंगे) । हे' प्रभु, तेरा दास नानक तुमसे इस आशा के साथ विनती करता है कि तुम कृपया इस नीच को साधु संतों की शरण में रखो"।(२)

अपनी प्रार्थना में आगे गुरु जी कहते हैं " हे' प्रभु, मैं अनेक जन्मों में भ्रमण कर चुका हूँ और अनेक योनियों के संकट झेल चुका हूँ । मैं मधुर भौतिक वस्तुयों के साथ लिपटा रहा । अपने ऊपर अनगिनत पापों के बोझ के कारण मैं बहुत से प्रदेशों में (अनेक प्रकार के जन्मों के रूप में) जाता रहा । पर अब हे' मेरे प्रभु मुरारी, मैं तेरी शरण में आया हूँ और मुझे तेरे नाम में समस्त सुख मिले हैं ।हे' मेरे रक्षक प्रिय प्रभु, मुझसे कुछ नहीं हुया (भवसागर पार नही हुया) और न होगा। नानक कहते हैं, (हे' प्रभु), जिस पर तेरी कृपा है उसे शांति, सहज आनंद और परम सुख प्राप्त होता है और वह भवसागर पार कर लेता है "।(३)

अंत में गुरु जी हम जैसे पापियों को उत्साहित करते हुए कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो) प्रभु ने तो उनका भी उद्धार किया है जो नाम मात्र के ही भक्त थे, तब फिर (प्रभु की सहायता के विषय पर) सच्चे भक्तों को शंका क्यों होती है ।इस लिये जैसे भी हो सके हरि का यश अपने कानों से सुनना चाहिये, क्योंकि ज्ञानी ध्यानी महापुरुषों के द्वारा बोली गयी पवित्र वाणी को सुनने से मन में प्रभु नाम की निधि प्राप्त होती है । हरि के रंग में रते जो विधाता प्रभु के गुण गाते हैं, वह भाग्यशाली हैं, क्योंकि यदि वह धरती को काग़ज़ बना लें और वनों को क़लम, तथा पवन को लेखक, तब भी उस अंतहीन प्रभु के गुणों का अंत नहीं हो सकता । इसलिये, नानक कहते हैं, मैंने प्रभु के चरणों में शरण ले ली है "।(४-५-८)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अभी तक दुष्कर्म अथवा पाप करते रहे हैं तो हमें हतोत्साहित नहीं होना चाहिये । हम शीघ्र ही गुरु (गुरु ग्रन्थ साहिब जी) की शरण में स्वयं को अर्पित कर प्रभु के नाम का ध्यान करें और उसके कीर्तन एवं गुणगान का श्रवण करें जिससे कि प्रभु अपनी कृपा करके जन्म मरण के आगामी कष्टों से हमें उबार लें ।

ਪੰਨਾ ੪੫੯

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਉਠਿ ਵੰਞੁ ਵਟਾਊੜਿਆ ਤੈ ਕਿਆ ਚਿਰੁ ਲਾਇਆ ॥
ਮੁਹਲਤਿ ਪੁੰਨੜੀਆ ਕਿਤੁ ਕੂੜਿ ਲੋਭਾਇਆ ॥
ਕੂੜੇ ਲੁਭਾਇਆ ਧੋਹੁ ਮਾਇਆ ਕਰਹਿ ਪਾਪ ਅਮਿਤਿਆ ॥
ਤਨੁ ਭਸਮ ਢੇਰੀ ਜਮਹਿ ਹੇਰੀ ਕਾਲਿ ਬਪੁੜੈ ਜਿਤਿਆ॥

ਪੰਨਾ ੪੬੦

ਮਾਲੁ ਜੋਬਨੁ ਛੋਡਿ ਵੈਸੀ ਰਹਿਓ ਪੈਨਣੁ ਖਾਇਆ ॥
ਨਾਨਕ ਕਮਾਣਾ ਸੰਗਿ ਜੁਲਿਆ ਨਹ ਜਾਇ ਕਿਰਤੁ ਮਿਟਾਇਆ ॥੧॥

ਫਾਥੋਹੁ ਮਿਰਗ ਜਿਵੈ ਪੇਖਿ ਰੈਣਿ ਚੰਦ੍ਰਾਇਣੁ ॥
ਸੂਖਹੁ ਦੂਖ ਭਏ ਨਿਤ ਪਾਪ ਕਮਾਇਣੁ ॥
ਪਾਪਾ ਕਮਾਣੇ ਛਡਹਿ ਨਾਹੀ ਲੈ ਚਲੇ ਘਤਿ ਗਲਾਵਿਆ ॥
ਹਰਿਚੰਦਉਰੀ ਦੇਖਿ ਮੂਠਾ ਕੂੜੁ ਸੇਜਾ ਰਾਵਿਆ ॥
ਲਬਿ ਲੋਭਿ ਅਹੰਕਾਰਿ ਮਾਤਾ ਗਰਬਿ ਭਇਆ ਸਮਾਇਣੁ ॥
ਨਾਨਕ ਮ੍ਰਿਗ ਅਗਿਆਨਿ ਬਿਨਸੇ ਨਹ ਮਿਟੈ ਆਵਣੁ ਜਾਇਣੁ ॥੨॥

ਮਿਠੈ ਮਖੁ ਮੁਆ ਕਿਉ ਲਏ ਓਡਾਰੀ ॥
ਹਸਤੀ ਗਰਤਿ ਪਇਆ ਕਿਉ ਤਰੀਐ ਤਾਰੀ ॥
ਤਰਣੁ ਦੁਹੇਲਾ ਭਇਆ ਖਿਨ ਮਹਿ ਖਸਮੁ ਚਿਤਿ ਨ ਆਇਓ ॥
ਦੂਖਾ ਸਜਾਈ ਗਣਤ ਨਾਹੀ ਕੀਆ ਅਪਣਾ ਪਾਇਓ ॥
ਗੁਝਾ ਕਮਾਣਾ ਪ੍ਰਗਟੁ ਹੋਆ ਈਤ ਉਤਹਿ ਖੁਆਰੀ ॥
ਨਾਨਕ ਸਤਿਗੁਰ ਬਾਝੁ ਮੂਠਾ ਮਨਮੁਖੋ ਅਹੰਕਾਰੀ ॥੩॥

ਹਰਿ ਕੇ ਦਾਸ ਜੀਵੇ ਲਗਿ ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਚਰਣੀ ॥
ਕੰਠਿ ਲਗਾਇ ਲੀਏ ਤਿਸੁ ਠਾਕੁਰ ਸਰਣੀ ॥
ਬਲ ਬੁਧਿ ਗਿਆਨੁ ਧਿਆਨੁ ਅਪਣਾ ਆਪਿ ਨਾਮੁ ਜਪਾਇਆ ॥
ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਆਪਿ ਹੋਆ ਆਪਿ ਜਗਤੁ ਤਰਾਇਆ ॥
ਰਾਖਿ ਲੀਏ ਰਖਣਹਾਰੈ ਸਦਾ ਨਿਰਮਲ ਕਰਣੀ ॥
ਨਾਨਕ ਨਰਕਿ ਨ ਜਾਹਿ ਕਬਹੂੰ ਹਰਿ ਸੰਤ ਹਰਿ ਕੀ ਸਰਣੀ ॥੪॥੨॥੧੧॥

पृ-४५९

आसा महला ५ ॥

उठि वँञु वटाऊड़िआ तै किआ चिरु लाइआ ॥
मुहलति पुनँड़ीआ कितु कूड़ि लोभाइआ ॥
कूड़े लुभाइआ धोहु माइआ करहि पाप अमितिआ ॥
तनु भसम ढेरी जमहि हेरी कालि बपुड़ै जितिआ ॥

पृ-४६०

मालु जोबनु छोडि वैसी रहिओ पैनणु खाइआ ॥
नानक कमाणा सँगि जुलिआ नह जाइ किरतु मिटाइआ ॥१॥

फाथोहु मिरग जिवै पेखि रैणि चँद्राइणु ॥
सूखहु दूख भए नित पाप कमाइणु ॥
पापा कमाणे छडहि नाही लै चले घति गलाविआ ॥
हरिचँदउरी देखि मूठा कूड़ु सेजा राविआ ॥
लबि लोभि अहँकारि माता गरबि भइआ समाइणु ॥
नानक मृिग अगिआनि बिनसे नहमिटै आवणु जाइणु ॥२॥

मिठै मखु मुआ किउ लए ओडारी ॥
हसती गरति पइआ किउ तरीऐ तारी ॥
तरणु दुहेला भइआ खिन महि खसमु चिति न आइओ ॥
दूखा सजाई गणत नाही कीआ अपणा पाइओ ॥
गुझा कमाणा प्रगटु होआ ईत उतहि खुआरी ॥
नानक सतिगुर बाझु मूठा मनमुखो अँहकारी ॥३॥

हरि के दास जीवे लगि प्रभ की चरणी ॥
कँठि लगाइ लीए तिसु ठाकुर सरणी ॥
बल बुधि गिआनु धिआनु अपणा आपि नामु जपाइआ ॥
साधसँगति आपि होआ आपि जगतु तराइआ ॥
राखि लीए रखणहारै सदा निरमल करणी ॥
नानक नरकि न जाहि कबहूँ हरि सँत हरि की सरणी ॥४॥२॥११॥

आसा महला -५

इस शब्द में गुरु जी हमें माया मोह (सांसारिक झमेलों) की निद्रा से जगाने का प्रयत्न करते हैं और प्रभु नाम का लाभ लेने का परामर्श देते हैं, क्योंकि केवल वही जन्म मरण के अनवरत दुख दर्द से बचा सकता है ।वह हमें ध्यान दिलाते हैं कि हम इस संसार में एक यात्री की भाँति हैं जो कि विदेश में थोड़े समय के लिये आया है । अतः, उस यात्री की भाँति विदेश की लुभावनी धन सम्पदा तथा कुरीतियों में संलग्न होकर गुम हो जाने की अपेक्षा हमारा मुख्य उद्देश्य प्रभु नाम का ध्यान करके उसके साथ पुनर्मिलन का होना चाहिए ।

गुरु जी हमें सम्बोधित करते हुये कहते हैं " हे' यात्री, उठो, (और अपने उद्देश्य पर फिर से आगे बढ़ो) क्यों देर कर रहे हो ? (क्या तुम देख नहीं रहे हो) कि संसार में तुम्हारा नियति समय समाप्त होने वाला है ।मैं चकित हूँ कि तुम किस झूठे मोह में जकड़े हो ? (ऐसा प्रतीत होता है कि) तुम माया के छलावे से मोहित हो, (सांसारिक धन दौलत व बल, जिसके लिये) तुम अनगिनत पाप कमाते हो ।(परन्तु स्मरण रहे कि अंत में) यह शरीर एक राख की ढेरी बन जायेगा, यमराज इसे देख रहे हैं और काल इस बिचारे मनुष्य पर विजय पा लेगा । तब तुम्हारा धन दौलत, यौवन की शक्ति, खाना पीना और कपड़े पहनना छुट जायेगा । ओ' नानक, अपने अच्छे और बुरे कर्मों की कमाई साथ जायेगी क्योंकि उन कर्मों का ब्यौरा कभी मिटता नहीं "।(१)

अब गुरु जी अपने उपदेश को कुछ अति सुंदर उदाहरणों से चित्रित करते हैं । सर्वप्रथम वह एक मृग का उदाहरण देते हैं जो एक शिकारी की मशाल के प्रकाश को चाँदनी समझ उसकी ओर दौड़ पड़ता है और शिकारी के तीर का निशाना बन जाता है ।अगला उदाहरण एक

काल्पनिक परन्तु सुंदर नगरी का देते हैं जो समुद्र तट या मरुस्थल में दिखाई पड़ने लगती है ।वह कहते हैं "हे' नाशवान मनुष्य, जैसे एक मृग मशाल की रोशनी को चन्द्रमा का प्रकाश समझ कर मारा जाता है, (उसी प्रकार तुम सांसारिक धन दौलत और सत्ता की चमक देख उसके झूठे मोह में फँस जाते हो, ऐसे) सुख आराम तुम्हारे दुख दर्द का कारण बन जाते हैं और तुम नित्य ही (उन सुखों के लिये) पाप कमाते हो । तुम्हारे किये पाप तुम्हें छोड़ेंगे नहीं, (और फिर यमराज इस कारण) तुम्हें गले में फंदा डाल कर ले जायेंगे (अतः तुम्हारे पाप कर्म तुम्हारे दुखों तथा मृत्यु का कारण बन जायेंगे)।ओ' नाशवान मानव, यह आकाश में एक काल्पनिक सुंदर नगरी देखने के समान है जहां तुम (सांसारिक मोहमाया की चमक दमक देख) धोखा खाते हो और झूठे सांसारिक सुखों की सेज का आनंद लेते हो ।लोभ, लालसा एवं अहंकार के गर्भ में समाये रहते हो ।ओ' नानक, मृग की भाँति मनुष्य अपने अज्ञान के कारण नष्ट हो रहे हैं और उनके जन्म मरण के फेरे समाप्त नहीं हो रहे हैं "।(२)

गुरु जी अब एक साधारण मक्खी का उदाहरण देते हैं जो मीठे के लालच में गुड़ से चिपक जाती है अथवा एक हाथी जो हथिनी की प्रतिमा देख कर गड्ढे में गिर कर फँस जाता है । वह कहते हैं "जैसे एक मक्खी मिठाई में चिपक कर उड़ नहीं पाती और मर जाती है (उसी प्रकार सांसारिक मोह माया से चिपका मनुष्य आत्मिक रूप से मर जाता है, या फिर) जैसे एक हाथी (हथिनी की प्रतिमा देख लालायित होकर) गड्ढे में गिर जाता है और फिर बाहर नहीं निकल पाता, उसी प्रकार जो मनुष्य एक क्षण भी स्वामी को मन में स्मरण नहीं करता, उसे भव सागर पार करने में कठिनाई होती है । उसके दुखों और दंड की कोई गिनती नहीं होती क्योंकि उसे अपने किये कर्मों का फल मिलता है । छुप कर किये गये पाप कर्म प्रकट हो जाते हैं, तथा लोक एवं परलोक में बर्बादी होती है । ओ' नानक, सच्चे गुरु की सहायता के बिना ऐसा स्वार्थी और अंहकारी मनुष्य अंत में ठगा जाता है और अपने जीवन को (आत्मिक रूप से) दुष्कर्मों में गँवा देता है "।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी, गुरु के अनुयायियों की जीवन शैली का वर्णन करते हैं कि किस प्रकार एक अंहकारी मनुष्य की अपेक्षा वह आनंद और परम सुख पाते हैं । उनका कहना है "हरि के भक्त उसके चरणों में रह कर (उन्नत आत्मिक) जीवन जीते हैं, शरण में आये भक्तों को स्वामी अपने कंठ से लगा कर रखते हैं ।वह स्वयं उन्हें आत्मिक बल, बुद्धि एवं ध्यान का दान देकर अपना नाम जपाते हैं ।वह स्वयं ही पवित्र साधुसंगति का रूप लेते हैं और स्वयं ही उन्हें भवसागर से पार लगा देते हैं । संक्षेप में, ओ' नानक, रक्षक (प्रभु) स्वयं अपने भक्त की रक्षा (दुष्कर्मों से) करते हैं । सदा हरि की शरण में रहने से संतों के कर्म पवित्र रहते हैं और वह कभी नर्क नहीं जाते "।(४-२-११)

इस शब्द का संदेश है कि इस संसार में हमारा पड़ाव बहुत छोटा और अनिश्चित काल के लिए है, अतः सांसारिक बल शक्ति तथा धन दौलत के लिये समय नष्ट करने की अपेक्षा, हमें अपने समय को शुभ कार्यों व प्रभु नाम के प्रेम में अर्पित करना चाहिए जिससे कि हम जन्म मरण के निरंतर दुख दर्द से स्वयं को बचा सकें ।

ਪੰਨਾ ੪੬੧

ਆਸਾ ਮਹਲਾ ੫ ਛੰਤ ਘਰੁ ੮

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਕਮਲਾ ਭ੍ਰਮ ਭੀਤਿ ਕਮਲਾ ਭ੍ਰਮ ਭੀਤਿ ਹੇ ਤੀਖਣ ਮਦ ਬਿਪਰੀਤਿ ਹੇ ਅਵਧ ਅਕਾਰਥ ਜਾਤ ॥
ਗਹਬਰ ਬਨ ਘੋਰ ਗਹਬਰ ਬਨ ਘੋਰ ਹੇ ਗ੍ਰਿਹ ਮੂਸਤ ਮਨ ਚੋਰ ਹੇ ਦਿਨਕਰੋ ਅਨਦਿਨੁ ਖਾਤ ॥
ਦਿਨਖਾਤ ਜਾਤ ਬਿਹਾਤ ਪ੍ਰਭ ਬਿਨੁ ਮਿਲਹੁ ਪ੍ਰਭ ਕਰੁਣਾ ਪਤੇ ॥

ਪੰਨਾ ੪੬੨

ਜਨਮ ਮਰਣ ਅਨੇਕ ਬੀਤੇ ਪ੍ਰਿਅ ਸੰਗ ਬਿਨੁ ਕਛੁ ਨਹ ਗਤੇ ॥
ਕੁਲ ਰੂਪ ਧੂਪ ਗਿਆਨਹੀਨੀ ਤੁਝ ਬਿਨਾ ਮੋਹਿ ਕਵਨ ਮਾਤ ॥
ਕਰ ਜੋੜਿ ਨਾਨਕੁ ਸਰਣਿ ਆਇਓ ਪ੍ਰਿਅ ਨਾਥ ਨਰਹਰ ਕਰਹੁ ਗਾਤ ॥੧॥

ਮੀਨਾ ਜਲਹੀਨ ਮੀਨਾ ਜਲਹੀਨ ਹੇ ਓਹੁ ਬਿਛੁਰਤ ਮਨ ਤਨ ਖੀਨ ਹੇ ਕਤ ਜੀਵਨੁ ਪ੍ਰਿਅ ਬਿਨੁ ਹੋਤ ॥
ਸਨਮੁਖ ਸਹਿ ਬਾਨ ਸਨਮੁਖ ਸਹਿ ਬਾਨ ਹੇ ਮ੍ਰਿਗ
ਅਰਪੇ ਮਨ ਤਨ ਪ੍ਰਾਨ ਹੇ ਓਹੁ ਬੇਧਿਓ ਸਹਜ ਸਰੋਤ॥
ਪ੍ਰਿਅ ਪ੍ਰੀਤਿ ਲਾਗੀ ਮਿਲੁ ਬੈਰਾਗੀ ਖਿਨੁ ਰਹਨੁ ਧ੍ਰਿਗੁ ਤਨੁ ਤਿਸੁ ਬਿਨਾ ॥
ਪਲਕਾ ਨ ਲਾਗੈ ਪ੍ਰਿਅ ਪ੍ਰੇਮ ਪਾਗੈ ਚਿਤਵੰਤਿ ਅਨਦਿਨੁ ਪ੍ਰਭ ਮਨਾ ॥
ਸ੍ਰੀਰੰਗ ਰਾਤੇ ਨਾਮ ਮਾਤੇ ਭੈ ਭਰਮ ਦੁਤੀਆ ਸਗਲ ਖੋਤ ॥
ਕਰਿ ਮਇਆ ਦਇਆ ਦਇਆਲ ਪੂਰਨ ਹਰਿ ਪ੍ਰੇਮ ਨਾਨਕ ਮਗਨ ਹੋਤ ॥੨॥

ਅਲੀਅਲ ਗੁੰਜਾਤ ਅਲੀਅਲ ਗੁੰਜਾਤ ਹੇ ਮਕਰੰਦ ਰਸ ਬਾਸਨ ਮਾਤ ਹੇ ਪ੍ਰੀਤਿ ਕਮਲ ਬੰਧਾਵਤ ਆਪ ॥
ਚਾਤ੍ਰਿਕ ਚਿਤ ਪਿਆਸ ਚਾਤ੍ਰਿਕ ਚਿਤ ਪਿਆਸ ਹੇ ਘਨ ਬੂੰਦ ਬਚਿਤ੍ਰਿ ਮਨਿ ਆਸ ਹੇ ਅਲ ਪੀਵਤ ਬਿਨਸਤ ਤਾਪ ॥
ਤਾਪਾ ਬਿਨਾਸਨ ਦੂਖ ਨਾਸਨ ਮਿਲੁ ਪ੍ਰੇਮੁ ਮਨਿ ਤਨਿ ਅਤਿ ਘਨਾ ॥
ਸੁੰਦਰੁ ਚਤੁਰੁ ਸੁਜਾਨ ਸੁਆਮੀ ਕਵਨ ਰਸਨਾ ਗੁਣ ਭਨਾ ॥
ਗਹਿ ਭੁਜਾ ਲੇਵਹੁ ਨਾਮੁ ਦੇਵਹੁ ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਧਾਰਤ ਮਿਟਤ ਪਾਪ ॥
ਨਾਨਕੁ ਜੰਪੈ ਪਤਿਤ ਪਾਵਨ ਹਰਿ ਦਰਸੁ ਪੇਖਤ ਨਹ ਸੰਤਾਪ ॥੩॥

ਚਿਤਵਉ ਚਿਤ ਨਾਥ ਚਿਤਵਉ ਚਿਤ ਨਾਥ ਹੇ ਰਖਿ ਲੇਵਹੁ ਸਰਣਿ ਅਨਾਥ ਹੇ ਮਿਲੁ ਚਾਉ ਚਾਈਲੇ ਪ੍ਰਾਨ ॥
ਸੁੰਦਰ ਤਨ ਧਿਆਨ ਸੁੰਦਰ ਤਨ ਧਿਆਨ ਹੇ ਮਨੁ ਲੁਬਧ
ਗੋਪਾਲ ਗਿਆਨ ਹੇ ਜਾਚਿਕ ਜਨ ਰਾਖਤ ਮਾਨ ॥
ਪ੍ਰਭ ਮਾਨ ਪੂਰਨ ਦੁਖ ਬਿਦੀਰਨ ਸਗਲ ਇਛ ਪੁਜੰਤੀਆ ॥
ਹਰਿ ਕੰਠਿ ਲਾਗੇ ਦਿਨ ਸਭਾਗੇ ਮਿਲਿ ਨਾਹ ਸੇਜ ਸੋਹੰਤੀਆ ॥
ਪ੍ਰਭ ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਧਾਰੀ ਮਿਲੇ ਮੁਰਾਰੀ ਸਗਲ ਕਲਮਲ ਭਏ ਹਾਨ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਮੇਰੀ ਆਸ ਪੂਰਨ ਮਿਲੇ ਸ੍ਰੀਧਰ ਗੁਣ ਨਿਧਾਨ ॥੪॥੧॥੧੪॥

पृ-४६१

आसा महला ५ छँत घर ८

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

कमला भ्रम भीति कमला भ्रम भीति हे तीखण मद बिपरीति हे अवध अकारथ जात ॥
गहबर बन घोर गहबर बन घोर हे गृिह मूसत मन चोर हे दिनकरो अनदिनु खात ॥
दिनखात जात बिहात प्रभ बिनु मिलहु प्रभ करुणा पते ॥

पृ-४६२

जनम मरण अनेक बीते प्रिय सँग बिनु कछु नह गते ॥
कुल रूप धूप गिआनहीनी तुझ बिना मोहि कवन मात ॥
कर जोड़ि नानकु सरणि आइओ प्रिय नाथ नरहर करहु गात ॥१॥

मीना जलहीन मीना जलहीन हे ओहु बिछुरत मन तन खीन हे कत जीवनु प्रिय बिनु होत ॥
सनमुख सहि बान सनमुख सहि बान हे मृिग अरपे मन तन प्रान हे
ओहु बेधिओ सहज सरोत ॥
प्रिय प्रीति लागी मिलु बैरागी खिनु रहनु ध्रिगु तनु तिसु बिना ॥
पलका न लागै प्रिय प्रेम पागै चितवँति अनदिनु प्रभ मना ॥
स्रीरँग राते नाम माते भै भरम दुतीआ सगल खोत ॥
करि मइआ दइआ दइआल पूरन हरि प्रेम नानक मगन होत ॥२॥

अलीअल गुँजात अलीअल गुँजात हे मकरँदरस बासन मात हे प्रीति कमल बँधावत आप ॥
चात्रिक चित पिआस चात्रिक चित पिआस हे घन बूँद बचित्रि मनि आस हे अल पीवत बिनसत ताप ॥
तापा बिनासन दूख नासन मिलु प्रेमु मनि तनि अति घना ॥
सुँदरु चतुरु सुजान सुआमी कवन रसना गुण भना ॥
गहि भुजा लेवहु नामु देवहु दृिसटि धारत मिटत पाप ॥
नानकु जँपै पतित पावन हरि दरसु पेखत नह सँताप ॥३॥

चितवउ चित नाथ चितवउ चित नाथ हे रखि लेवहु सरणि अनाथ हे मिलु चाउ चाईले प्रान॥
सुँदर तन धिआन सुँदर तन धिआन हे मनु लुबध
गोपाल गिआन हे जाचिक जन राखत मान ॥
प्रभ मान पूरन दुख बिदीरन सगल इछ पुजँतीआ ॥
हरि कँठि लागे दिन सभागे मिलि नाह सेज सोहँतीआ ॥
प्रभ दृिसटि धारी मिले मुरारी सगल कलमल भए हान ॥
बिनवँति नानक मेरी आस पूरन मिले स्रीधर गुण निधान ॥४॥१॥१४॥

आसा महला-५ छँत घर -६

डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार इस शब्द में मनुष्य के जीवन पर माया (सांसारिक धन दौलत एवं सत्ता शक्ति) का वर्चस्व होने के कारण उपजे नैतिक एवं आध्यात्मिक अँधकार का चित्रण है ।गुरु जी यहाँ पर कुछ सुंदर उदाहरणों के द्वारा यह दर्शाते हैं कि कैसे हमें

सांसारिक धन दौलत और शक्ति बल को प्यार करने की अपेक्षा प्रभु प्रेम में रमे रहना चाहिये ।

गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), माया एक भ्रमों की दीवार की भाँति है (जिसने मनुष्य को सृजनकर्ता से अलग कर दिया है)। हाँ, माया भ्रम की दीवार है, इसका गहरा नशा हमारी बुद्धि को भटकाता है । (इसलिये सांसारिक धन दौलत एवं शक्ति बल की भाल में उलझे) मनुष्य की आयु व्यर्थ हो जाती है । यह संसार भयानक रूप से एक अभेद्य जंगल की भाँति है ।इस भयानक जंगल में हमारा मन एक चोर की भाँति काम करता है और सूर्य दिन और रात के रूप में (अर्थात समय जा रहा है) नाशवान मनुष्य की अवधि को गृह में घुसे चूहे की भाँति खा रहा है ।(हाँ, मेरे मित्रो), प्रभु के बिना गुज़रते हुये दिन तुम्हारी शेष अवधि को निगल रहे हैं, (इसलिये प्रभु से प्रार्थना करो कि) हे' करुणामयी प्रभु, कृपा करके मुझे मिलो ।जन्म मरण के अनेकों फेरे हो गये, परन्तु प्रिय प्रभु की संगति के बिना मोक्ष नहीं है । हे' प्रभु, मैं ऊँची कुल का नहीं हूँ, मेरे पर रूप की चमक नहीं, कोई (दैवी) ज्ञान नहीं, अत: तेरे बिना मेरा कौन रक्षक है ? सो हे' प्रिय स्वामी नानक करबद्ध तेरी शरण में आया है, कृपा करके मेरा उद्धार करो "।(१)

गुरु जी अब चार उदाहरण देते हुये यह दर्शाते हैं कि किस प्रकार हमें प्रभु प्रेम में गहरी आस्था की आवश्यकता है । वह कहते हैं (हे' मेरे मित्रो) जल के बिना मछली, हाँ, जैसे ही मछली जल से बिछुड़ती है वह तन एवं मन से क्षीण हो जाती है, क्योंकि प्रिय जल के बिना जीवन कैसे रहेगा । इसी प्रकार शिकारी के सिंगा की मधुर ध्वनि सुन कर मृग उसकी ओर भागा चला आता है और मुख पर बाण को सहन करता हुया अपने मन, तन और प्राणों को अर्पण कर देता है "।

(हे' मेरे मित्रो) इसी प्रकार जो मनुष्य प्रभु के सच्चे प्रेम में लीन है, (वह अति दीन भाव से प्रभु से प्रार्थना करता है) हे' मेरे प्रिय प्रभु, आओ और मुझ वैरागी से मिलो, क्योंकि उस तन को धिक्कार है जो तेरे बिना एक क्षण भी रहे । हे' मेरे प्रिय प्रभु, तेरे प्रेम में इतना रमा हूँ कि एक पल भी पलक नही झपक पाता (तेरे बिना नींद नहीं आती) और दिन रात मन प्रभु को स्मरण करता है ।(ओ' मेरे मित्रो) जो भी प्रभु के रंग में रंगे हैं और नाम के ध्यान में हैं, उन्होंने अपने सारे भय, भ्रम एवं दुविधा गँवा दिये हैं ।हे' सर्वव्यापी दयालु हरि, दया करो, जिससे कि नानक सदा पूर्ण रूप से हरि के प्रेम में मग्न रहें "।(२)

सच्चे प्रेम के कुछ और उदाहरण देते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे मित्रो, देखो कितने) भँवरे फूलों पर गूँजते मँडराते हैं, क्योंकि वह फूलों के मधु तथा महक के नशे में मुग्ध हैं और कमल के फूलों के प्रेम में संध्या के समय स्वयं को उनके अंदर बँद करवा लेते हैं । इसी प्रकार, (यद्यपि नदियाँ और झीलें जल से परिपूर्ण हैं, परन्तु) चात्रिक के चित्त की विचित्र प्यास बादलों से एक बूँद के लिए है और केवल बादलों से जल पीकर ही उसकी धधकती प्यास मिटती है "।"(इसलिये) ओ' दुखविनाशक, संकटमोचन,(मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ, भिक्षा माँगता हूँ कि) मुझे आकर मिलो, मेरे मन और तन में तुम्हारे लिये असीम प्रेम है । ओ' मेरे सुंदर, चतुर, बुद्धिमान स्वामी तुम्हारे किन किन गुणों का बखान मैं अपनी जिह्वा से करूँ ? (हे' ईश्वर, मैं प्रार्थना करता हूँ कि) तुम मेरी बाँह पकड़ लो और अपने नाम का दान दो, क्योंकि तुम्हारी कृपा दृष्टि पड़ते ही (किसी के भी सारे) पाप नष्ट हो जाते हैं । इस लिये नानक पतित पावन प्रभु का जाप करते हैं, उस हरि का दर्शन करते ही कोई संताप नहीं बचता"।(३)

गुरु जी शब्द के अँत में प्रभु से एक अति सुंदर प्रार्थना इस आश्य के साथ करते हैं कि वह उसे स्वीकार करेंगे । वह कहते हैं:" हे' मेरे स्वामी, मैं बारम्बार अपने मन में केवल तुम्हें स्मरण करता हूँ, हे' मेरे नाथ तुम इस अनाथ को अपनी शरण में ले लो, हे' मेरे प्रिय, प्राणों के स्वामी, मेरे मन में तुमसे मिलने का बहुत चाव है । मेरे मन में तुम्हारा सुंदर रूप बसा है, हे' ब्रह्मांड के स्वामी, तेरे ज्ञान पर मेरा मन लुब्ध है, तुम द्वार पर खड़े याचकों के मान सम्मान के रक्षक हो ।हाँ, हे' प्रभु तुम पूर्ण रूप से उनका मान सम्मान रखते हो, उनके दुखों का निवारण करते हो और समस्त इच्छायें पूरी करते हो ।

अब, अपने प्रिय प्रभु के दर्शन करने पर अपनी भावनायें प्रकट करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे प्रभु, तुम्हारे दर्शन कर मेरी सभी इच्छाएँ पूर्ण हो गयी हैं, मैं अब हरि के कंठ से लगा हूँ, मेरे (जीवन के) शुभ दिन आ गये हैं और अपने वर (ईश्वर) के मिलन से मेरी सेज (मेरा हृदय) सुहानी हो गयी है । हाँ, प्रभु की कृपा दृष्टि हुयी और मुझे मुरारी मिल गये, अतः मेरे समस्त पूर्व पापकर्म समाप्त हो गये हैं ।नानक विनयपूर्वक कहते हैं कि गुणों के भंडार, प्रभु स्वामी से मिल कर मेरी आशा पूर्ण हो गयी है"। (४-१-१४-३५)

इस शब्द का यह संदेश है कि अपने जीवन को सांसारिक धन सम्पदा या बल शक्ति पर व्यर्थ करने की अपेक्षा, हमें निष्कप्ट तथा अति दीन भावना के साथ ईश्वर से प्रार्थना करते रहना चाहिये कि वह हमें अपना नाम जपने का आशीर्वाद दें, ताकि हम उसके प्रेम में रंग कर दिन रात उसका गुणगान करें। हो सकता है कि एक दिन हम उसकी कृपा दृष्टि से धन्य हो जायें और हमारे दुख पाप सदा के लिये नष्ट हो जायें ।

ਪੰਨਾ ੪੬੩

ਸਲੋਕ ਮਃ ੧ ॥

ਵਿਸਮਾਦੁ ਨਾਦ ਵਿਸਮਾਦੁ ਵੇਦ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਜੀਅ ਵਿਸਮਾਦੁ ਭੇਦ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਰੂਪ ਵਿਸਮਾਦੁ ਰੰਗ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਨਾਗੇ ਫਿਰਹਿਜੰਤ ॥

ਪੰਨਾ ੪੬੪

ਵਿਸਮਾਦੁ ਪਉਣੁ ਵਿਸਮਾਦੁ ਪਾਣੀ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਅਗਨੀ ਖੇਡਹਿ ਵਿਡਾਣੀ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਧਰਤੀ ਵਿਸਮਾਦੁ ਖਾਣੀ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਸਾਦਿ ਲਗਹਿ ਪਰਾਣੀ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਸੰਜੋਗੁ ਵਿਸਮਾਦੁ ਵਿਜੋਗੁ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਭੁਖ ਵਿਸਮਾਦੁ ਭੋਗੁ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਸਿਫਤਿ ਵਿਸਮਾਦੁ ਸਾਲਾਹ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਉਝੜ ਵਿਸਮਾਦੁ ਰਾਹ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਨੇੜੈ ਵਿਸਮਾਦੁ ਦੂਰਿ ॥
ਵਿਸਮਾਦੁ ਦੇਖੈ ਹਾਜਰਾ ਹਜੂਰਿ ॥
ਵੇਖਿ ਵਿਡਾਣੁ ਰਹਿਆ ਵਿਸਮਾਦੁ ॥
ਨਾਨਕ ਬੁਝਣੁ ਪੂਰੈ ਭਾਗਿ ॥੧॥

ਮਃ ੧ ॥

ਕੁਦਰਤਿ ਦਿਸੈ ਕੁਦਰਤਿ ਸੁਣੀਐ ਕੁਦਰਤਿ ਭਉ ਸੁਖ ਸਾਰੁ ॥
ਕੁਦਰਤਿ ਪਾਤਾਲੀ ਆਕਾਸੀ ਕੁਦਰਤਿ ਸਰਬ ਆਕਾਰੁ ॥
ਕੁਦਰਤਿ ਵੇਦ ਪੁਰਾਣ ਕਤੇਬਾ ਕੁਦਰਤਿ ਸਰਬ ਵੀਚਾਰੁ ॥
ਕੁਦਰਤਿ ਖਾਣਾ ਪੀਣਾ ਪੈਨ੍ਣੁ ਕੁਦਰਤਿ ਸਰਬ ਪਿਆਰੁ ॥
ਕੁਦਰਤਿ ਜਾਤੀ ਜਿਨਸੀ ਰੰਗੀ ਕੁਦਰਤਿ ਜੀਅ ਜਹਾਨ ॥
ਕੁਦਰਤਿ ਨੇਕੀਆ ਕੁਦਰਤਿ ਬਦੀਆ ਕੁਦਰਤਿ ਮਾਨੁ ਅਭਿਮਾਨੁ ॥
ਕੁਦਰਤਿ ਪਉਣੁ ਪਾਣੀ ਬੈਸੰਤਰੁ ਕੁਦਰਤਿ ਧਰਤੀ ਖਾਕੁ ॥
ਸਭ ਤੇਰੀ ਕੁਦਰਤਿ ਤੂੰ ਕਾਦਿਰੁ ਕਰਤਾ ਪਾਕੀ ਨਾਈ ਪਾਕੁ ॥
ਨਾਨਕ ਹੁਕਮੈ ਅੰਦਰਿ ਵੇਖੈ ਵਰਤੈ ਤਾਕੋ ਤਾਕੁ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਆਪੀਨ੍ਹੈ ਭੋਗ ਭੋਗਿ ਕੈ ਹੋਇ ਭਸਮੜਿ ਭਉਰੁ ਸਿਧਾਇਆ ॥
ਵਡਾ ਹੋਆ ਦੁਨੀਦਾਰੁ ਗਲਿ ਸੰਗਲੁ ਘਤਿ ਚਲਾਇਆ ॥
ਅਗੈ ਕਰਣੀ ਕੀਰਤਿ ਵਾਚੀਐ ਬਹਿ ਲੇਖਾ ਕਰਿ ਸਮਝਾਇਆ ॥
ਥਾਉ ਨ ਹੋਵੀ ਪਉਦੀਈ ਹੁਣਿ ਸੁਣੀਐ ਕਿਆ ਰੂਆਇਆ ॥
ਮਨਿ ਅੰਧੈ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ ॥੩॥

पृ-४६३

सलोक महला १॥

विसमादु नाद विसमादु वेद ॥
विसमादु जीअ विसमादु भेद ॥
विसमादु रूप विसमादु रँग ॥
विसमादु नागे फिरहिजँत ॥

पृ-४६४

विसमादु पउणु विसमादु पाणी ॥
विसमादु अगनी खेडहि विडाणी ॥
विसमादु धरती विसमादु खाणी ॥
विसमादु सादि लगहि पराणी ॥
विसमादु सँजोगु विसमादु विजोगु॥
विसमादु भुख विसमादु भोगु ॥
विसमादु सिफति विसमादु सालाह ॥
विसमादु उझड़ विसमादु राह ॥
विसमादु नेड़ै विसमादु दूरि ॥
विसमादु देखै हाजरा हजूरि ॥
वेखि विडाणु रहिआ विसमादु ॥
नानक बुझणु पूरै भागि ॥१॥

म: १॥

कुदरति दिसै कुदरति सुणीऐ कुदरति भउ सुख सारु ॥
कुदरति पाताली आकासी कुदरति सरब आकारु ॥
कुदरति वेद पुराण कतेबा कुदरति सरब वीचारु ॥
कुदरति खाणा पीणा पैनणु कुदरति सरब पिआरु ॥
कुदरति जाती जिनसी रँगी कुदरति जीअ जहान ॥
कुदरति नेकीआ कुदरति बदीआ कुदरति मानु अभिमानु ॥
कुदरति पउणु पाणी बैसँतरु कुदरति धरती खाकु ॥
सभ तेरी कुदरति तूँ कादिरु करता पाकी नाई पाकु ॥
नानक हुकमै अँदरि वेखै वरतै ताको ताकु ॥२॥

पउड़ी ॥

आपीन्है भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भउरु सिधाइआ ॥
वडा होआ दुनीदारु गलि सँगलु घति चलाइआ ॥
अगै करणी कीरति वाचीऐ बहि लेखा करि समझाइआ ॥
थाउ न होवी पउदीई हुणि सुणीऐ किआ रुआइआ ॥
मनि अँधै जनमु गवाइआ ॥३॥

सलोक महला – १

इस शब्द में गुरु जी मुदित भावना के साथ आश्चर्यचकित हो रहे हैं कि किस प्रकार उस अनंत प्रभु ने इतनी सृष्टि उत्पन्न कर उसे ऐसे अद्वितीय रूप से परिष्कृत किया है जो कि मानव बुद्धि से बाहर है ।यह सब देख मनुष्य ने उसके कुछ विस्मित करने वाले क्रिया कलापों को समझने का प्रयास निरंतर किया, पर और अधिक गहराई से कारण तथा परिणाम जानने के अनेकों प्रयत्न करने पर भी वह पूर्ण रूप से बौखला जाता है ।

इसलिये गुरु जी सरल भाव से कहते हैं " हे' प्रभु, इतने प्रकार के स्वर सुन कर, इतने वेद ग्रंथ आदि पढ़ कर, अनेक जीवों को देख कर और उनके अनगिनत भेद, भाव, अनेकों रूप व रंग देख कर कोई भी विस्मित (विसमाद की दशा- एक अनोखी दैवी शांति, अति आनन्द एवं आश्चर्य से भरी मनोदशा) हो जाता है ।विस्मय होता है जब (मानव के अतिरिक्त) सभी जंतु नग्न अवस्था में घूमते हैं (और जब देखते हैं कि) कहीं पवन चल रही है, कहीं पानी बह रहा है और कहीं अग्नि आश्चर्यजनक खेल दिखा रही है, तथा यह धरती देख कर, जो अनेक जीवों तथा वस्तुयों का सहारा है, विस्माद होता है । (हे'प्रभु, यह प्राकृतिक घटनायें या उत्पत्ति के साधन किसी को भी आश्चर्यचकित करते हैं, पर मैं यह कहता हूँ कि) यह हैरान करने वाला है कि किस प्रकार से मनुष्य इन साधनों को आनन्द से उपयोग करने में व्यस्त है, तथा यह भी आश्चर्यजनक क्रिया है जिसके द्वारा मनुष्यों में संयोग अथवा वियोग होता है । कहीं भुखमरी है और कहीं पर भोग लग रहे हैं, कहीं (ईश्वर की) स्तुति एवं सराहना की जाती है ।आश्चर्य है, कहीं सब उजाड़ रूप में है और कहीं (सुंदर ढंग से बनी) राहें हैं । कोई कहता है तुम निकट हो तो दूसरा कहता है कि तुम अति दूर हो, जबकि अन्य कई तुम्हें अपने सम्मुख देखते हैं ।यह समस्त कौतुक देख कर मैं अचम्भित हूँ । इसलिये, नानक कहते हैं कि केवल अपने अहोभाग्य से ही (मनुष्य) तुम्हारे विलक्षण चमत्कारों को समझ सकता है "।(१)

महला – १

दैवी प्रक्रियायों द्वारा उत्पन्न इतने विशाल एवं अद्भुत चमत्कारों से आश्चर्यचकित होते हुये गुरु जी हमें प्रभावित करते हैं कि यह चमत्कार स्वयंभू नहीं हो सकते, यह ईश्वर ही है जिसने यह चमत्कार रचे हैं और उन्हें विभिन्न रूपों में स्थापित किया है । इसलिये वह स्वीकारात्मक भाव से कहते हैं " हे', प्रभु, जो भी प्रकृति में दृष्टिगोचर है व श्रवण किया जा रहा है वह तेरे किये का चमत्कार है, (यहाँ तक कि तेरे नाम के) भय का भाव, जो कि एक प्रकार से सुख शांति का सार है, वह भी तुम्हारा खेल है । यह प्रकृति अथवा तुम्हारी शक्ति है जो पाताल, आकाश व ब्रह्मांड के समस्त आकारों में विद्यमान है । वेद, पुराण तथा अन्य पुस्तकों व ग्रंथों में व्यक्त समस्त विचारों का स्रोत भी केवल तेरी शक्ति से संभव है । तेरी ही प्रकृति का तेज है जो जीवों में खाने, पीने, पहनने और आपस में प्रेम करने की भावनाएँ उपजाता है । यह तेरा ही प्रताप है कि संसार में अनेक प्रजातियाँ, वस्तुयें, रंग और विभिन्न प्रकार के जीव हैं । यह तुम्हारी प्रबल शक्ति और इच्छा है कि सब प्रकार के गुण एवं पुण्य कार्य (शुभकर्म), दुष्कर्म, मान सम्मान अथवा अपमान, अभिमान अंहकार विद्यमान हैं । तुम्हारी शक्ति ही पवन, जल, अग्नि और धरती, तथा उस पर पड़ी धूल मिट्टी है । संक्षेप में, हे' प्रभु, सब तेरा खेल है, तुम्हीं समस्त (सृष्टि) के सृजनकर्ता हो और तुम्हारा नाम शुद्ध तथा पवित्र है । ओ' नानक (ईश्वर अपनी सृष्टि को) अपने शासन एवं अधिकार में रखते हैं और समस्त स्थानों पर स्वयं व्याप्त हैं "।(२)

पौड़ी

दूसरी पौड़ी में गुरु जी ने हमें बताया था कि एक सच्ची व्यवस्था के अंतर्गत केवल उन्हीं लोगों का उद्धार होगा और अनंत प्रभु में समा सकेंगे जो सत्य जीवन जीते हैं और निष्कप्ट भाव से प्रभु नाम से प्रेम करते हैं, जबकि झूठा जीवनयापन करने वाले अपमानित रूप से प्रभु से पृथक कर नर्क में धकेले जायेंगे और चिरकाल तक जन्म मरण के फेरों में पड़े रहेंगे । जीवन के अंतिम छोर पर मृत्यु के समय क्या होता है, इसका वर्णन गुरु जी इस पौड़ी में करते हुये कहते हैं " अपने दुखों तथा सुखों को भोगने के पश्चात (अंत में शरीर) भस्म का ढेर हो जाता है और (आत्मा रूपी) भँवरा इस संसार से सिधार जाता है । इस प्रकार, सांसारिक जंजालों में उलझा मनुष्य मृत्यु के पश्चात गले में ज़ंजीरें डाल कर (धर्म न्यायाधीश के न्यायालय में) घसीटा जाता है । वहाँ पर बैठ उसके जीवन भर के कर्मों (शुभकर्म अथवा दुष्कर्म)का लेखा जोखा उसे समझाया जाता है । (इस आधार पर जब मनुष्य के शुभकर्मों की तुलना में दुष्कर्म अधिक होते हैं, तब उसे कठोर दंड दिया जाता है और तत्पश्चात) इस दंड के थपेड़ों से बचने का कोई स्थान नहीं मिलता और ना ही कोई उसका रोना धोना और चीख़ पुकार सुन कर सहायता करता है ।केवल तभी उस मनुष्य को समझ में आता है कि मन के अंदर के अंधकार के कारण उसने इस जीवन को व्यर्थ में गँवा दिया है "।(३)

इस पौड़ी तथा संलग्न श्लोकों का संदेश है कि जब हम विलक्षण प्रभु के द्वारा रचित अद्भुत आश्चर्यों को देखते हैं तब हमें उसकी प्रशंसा के साथ साथ विस्माद भी होना चाहिए और विचारना चाहिए कि यह सब चमत्कार सर्वशक्तिमान प्रभु के ही रूप हैं तथा इनमें हमारा कुछ भी सहयोग नहीं है । अतः, इस संसार में रहते हुए चेतन एवं अचेतन भाव से प्रभु को स्मरण करें और उसके चमत्कारों का आनंद लें ।अन्यथा, जीवन के नियति समय के पश्चात् हम गले में ज़ंजीरें डाले यमराज के सम्मुख जायेंगे और अपने दुष्कर्मों के आधार पर कठोर दंड के भागी बन कर जन्म मरण के चक्रों में कष्ट पाते रहेंगे ।

ਪੰਨਾ ੪੬	**पृ-४६५**
ਸਲੋਕ ਮਃ ੧ ॥	**सलोक म: १॥**
ਮੁਸਲਮਾਨਾ ਸਿਫਤਿ ਸਰੀਅਤਿ ਪੜਿ ਪੜਿ ਕਰਹਿ ਬੀਚਾਰੁ ॥ ਬੰਦੇ ਸੇ ਜਿ ਪਵਹਿ ਵਿਚਿ ਬੰਦੀ ਵੇਖਣ ਕਉ ਦੀਦਾਰੁ ॥ ਹਿੰਦੂ ਸਾਲਾਹੀ ਸਾਲਾਹਨਿ ਦਰਸਨਿ ਰੂਪਿ ਅਪਾਰੁ ॥ ਤੀਰਥਿ ਨਾਵਹਿ ਅਰਚਾ ਪੂਜਾ ਅਗਰ ਵਾਸੁ ਬਹਕਾਰੁ ॥ ਜੋਗੀ ਸੁੰਨਿ ਧਿਆਵਨ੍ਹਿ ਜੇਤੇ ਅਲਖ ਨਾਮੁ ਕਰਤਾਰੁ ॥	मुसलमाना सिफति सरीअति पड़ि पड़ि करहि बीचारु ॥ बँदे से जि पवहि विचि बँदी वेखण कउ दीदारु ॥ हिँदू सालाही सालाहनि दरसनि रूपि अपारु ॥ तीरथि नावहि अरचा पूजा अगर वासु बहकारु ॥ जोगी सुँनि धिआवनि् जेते अलख नामु करतारु ॥
ਪੰਨਾ ੪੬੬	**प ४६६**
ਸੂਖਮ ਮੂਰਤਿ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨ ਕਾਇਆ ਕਾ ਆਕਾਰੁ ॥ ਸਤੀਆ ਮਨਿ ਸੰਤੋਖੁ ਉਪਜੈ ਦੇਣੈ ਕੈ ਵੀਚਾਰਿ ॥ ਦੇ ਦੇ ਮੰਗਹਿ ਸਹਸਾ ਗੂਣਾ ਸੋਭ ਕਰੇ ਸੰਸਾਰੁ ॥ ਚੋਰਾ ਜਾਰਾ ਤੈ ਕੂੜਿਆਰਾ ਖਾਰਾਬਾ ਵੇਕਾਰ ॥ ਇਕਿ ਹੋਦਾ ਖਾਇ ਚਲਹਿ ਐਥਾਊ ਤਿਨਾ ਭਿ ਕਾਈ ਕਾਰ ॥ ਜਲਿ ਥਲਿ ਜੀਆ ਪੁਰੀਆ ਲੋਆ ਆਕਾਰਾ ਆਕਾਰ ॥ ਓਇ ਜਿ ਆਖਹਿ ਸੁ ਤੂੰਹੈ ਜਾਣਹਿ ਤਿਨਾ ਭਿ ਤੇਰੀ ਸਾਰ ॥ ਨਾਨਕ ਭਗਤਾ ਭੁਖ ਸਾਲਾਹਣੁ ਸਚੁ ਨਾਮੁ ਆਧਾਰੁ ॥ ਸਦਾ ਅਨੰਦਿ ਰਹਹਿ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ ਗੁਣਵੰਤਿਆ ਪਾ ਛਾਰੁ ॥੧॥	सूखम मूरति नामु निरँजन काइआ का आकारु ॥ सतीआ मनि सँतोखु उपजै देणै कै वीचारि ॥ दे दे मँगहि सहसा गूणा सोभ करे सँसारु ॥ चोरा जारा तै कूड़िआरा खाराबा वेकार ॥ इकि होदा खाइ चलहि ऐथाऊ तिना भि काई कार ॥ जलि थलि जीआ पुरीआ लोआ आकारा आकार ॥ ओइ जि आखहि सु तूँहै जाणहि तिना भी तेरी सार ॥ नानक भगता भुख सालाहणु सचु नामु आधारु ॥ सदा अनँदि रहहि दिनु राती गुणवँतिआ पा छारु ॥१॥
ਮਃ ੧ ॥	**म: १॥**
ਮਿਟੀ ਮੁਸਲਮਾਨ ਕੀ ਪੇੜੈ ਪਈ ਕੁਮ੍ਹਿਆਰ ॥ ਘੜਿ ਭਾਂਡੇ ਇਟਾ ਕੀਆ ਜਲਦੀ ਕਰੇ ਪੁਕਾਰ ॥ ਜਲਿ ਜਲਿ ਰੋਵੈ ਬਪੁੜੀ ਝੜਿ ਝੜਿ ਪਵਹਿ ਅੰਗਿਆਰ ॥ ਨਾਨਕ ਜਿਨਿ ਕਰਤੈ ਕਾਰਣੁ ਕੀਆ ਸੋ ਜਾਣੈ ਕਰਤਾਰੁ ॥੨॥	मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुमि्आर ॥ घड़ि भांडे इटा कीआ जलदी करे पुकार ॥ जलि जलि रोवै बपुड़ी झड़ि झड़ि पवहि अँगिआर ॥ नानक जिनि करतै कारणु कीआ सो जाणै करतारु ॥२॥
ਪਉੜੀ ॥	**पउड़ी ॥**
ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਇਓ ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਇਆ ॥ ਸਤਿਗੁਰ ਵਿਚਿ ਆਪੁ ਰਖਿਓਨੁ ਕਰਿ ਪਰਗਟੁ ਆਖਿ ਸੁਣਾਇਆ ॥ ਸਤਿਗੁਰ ਮਿਲਿਐ ਸਦਾ ਮੁਕਤੁ ਹੈ ਜਿਨਿ ਵਿਚਹੁ ਮੋਹੁ ਚੁਕਾਇਆ ॥ ਉਤਮੁ ਏਹੁ ਬੀਚਾਰੁ ਹੈ ਜਿਨਿ ਸਚੇ ਸਿਉ ਚਿਤੁ ਲਾਇਆ ॥ ਜਗਜੀਵਨੁ ਦਾਤਾ ਪਾਇਆ ॥੬॥	बिनु सतिगुर किनै न पाइओ बिनु सतिगुर किनै न पाइआ ॥ सतिगुर विचि आपु रखिओनु करि परगटु आखि सुणाइआ ॥ सतिगुर मिलिऐ सदा मुकतु है जिनि विचहु मोहु चुकाइआ ॥ उतमु एहु बीचारु है जिनि सचे सिउ चितु लाइआ ॥ जगजीवनु दाता पाइआ ॥६॥

सलोक महला -१॥

इस श्लोक में गुरु जी विभिन्न प्रकार की धार्मिक विचार धारायों में आस्था रखने वालों के पूजा अराधना करने के ढंग और उनके व्यक्तिगत मतों और विश्वासों पर टिप्पणी करते हुए बताते हैं कि कैसे सभी अपनी अपनी धार्मिक आस्थाओं के विषय पर सोचते हैं।

वह कहते हैं " मुसलमान अपनी शरीयत के नियमों की सराहना करते हैं जिसे वह बारम्बार पढ़ते तथा विचारते हैं (उनके अनुसार) ईश्वर के भक्त केवल वही है जो शरीयत के नियमों से स्वयं को बाँध लें (जैसे कि, कुछ विशेष महीनों में व्रत रखना और मक्का की हज पर जाना) जो ईश्वर को पाने के लिये आवश्यक है। हिन्दू मत के लोग स्तुति योग्य निराकार प्रभु की स्तुति सुंदर प्रत्यक्ष माध्यमों के द्वारा करते हैं। वह तीर्थ स्थानों पर जाकर नहाते हैं, मूर्तियों पर फूल चढ़ाते हैं और अगरबत्ती जलाते हैं। योगी गण एकांत में तपस्या करते हैं और प्रभु को अलख निरंजन के नाम से सम्बोधित करते हैं उनके विचार से सृष्टिकर्ता सूक्ष्म रूप में माया से अनभिज्ञ है तथा समस्त बृहमांड उसी का रूप है। दान दक्षिणा का विचार दानी लोगों के मन को संतोष एवं प्रसन्नता देता है (किन्तु उनका दान स्वार्थ हीन भावना से नहीं होता) दान देते समय वह अपने मन में (प्रभु से) सहस्त्र गुना माँग रहे होते हैं, तथा (बाहर) संसार से अपनी शोभा भी करवाना चाहते हैं।

तथाकथित धार्मिक कहलाने वाले लोगों पर टिप्पणी करने के पश्चात, गुरु जी पाप कमाने वाले दुष्ट लोगों के आचार-विचार पर भी कहते

हैं " (दूसरी ओर कुछ लोग) चोर हैं कामुक हैं, झूठे, शैतान हैं, कई विकारों में फँसे अपने पूर्व शुभ कर्मों को नष्ट कर देते हैं, तथा इस संसार से ख़ाली हाथ चले जाते हैं । किस प्रकार के व्यर्थ कर्म है उनके ?" अंत में संसार के वह जीव जो मनुष्य की समझ से बाहर हैं उनके लिये गुरु जी कहते हैं " (हे प्रभु), अन्य जीव जल, थल, अनेक नगरों, दूसरे संसार अथवा तारापुँज में बसे हैं, जो भी कहते हैं तुम सब जानते हो, क्योंकि वह भी अपनी जीविका के लिये तुम्हारे पर आश्रित हैं ।परन्तु नानक कहते हैं कि सच्चे भक्त जिनहें सदा प्रभु नाम की प्रशंसा की भूख है, वह सच्चे के नाम पर आधारित हैं । वह दिन रात सदा आनंद में रहते हैं, तथा स्वयं को गुणी संत लोगों के चरणों की धूल समझते हैं "।(१)

महला-१

ऐसा कहा जाता है कि सातवें गुरु हरि राय जी के ज्येष्ठ पुत्र राम राय जी ने मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब के दरबार में उसे प्रसन्न करने हेतु इस शब्द की एक पंक्ति को अशुद्ध रूप में व्यक्त कर दिया था, जहाँ उन्होंने " मिट्टी मुसलमान की " के स्थान पर " मिट्टी बेईमान की " कह कर शब्द का वास्तविक भाव ही बदल दिया था (क्योंकि मुसलमान शव को मिट्टी में दबाते हैं) । गुरु नानक की पवित्र वाणी को अशुद्ध रूप में प्रस्तुत करने पर गुरु हरि राय जी पुत्र पर इतने क्रोधित हुए कि उसे मिलने से मना कर दिया और अँत समय पर अपने पाँच वर्षीय पुत्र हर किशन जी को आठवाँ गुरु स्थापित किया । ऐसा माना जाता है कि मौलिक शब्द की रचना गुरु नानक देव जी ने शेख़ मिठ्ठा नामक एक मुसलमान फ़क़ीर के प्रतिउत्तर में की थी, जो कहता था कि हिन्दू चूँकि शव को जला देते हैं, अत: वह कभी पुनर्जीवित नहीं हो सकते और स्वर्ग नहीं जा सकते ।ऐसे विचारों के उत्तर में गुरु नानक देव जी कहते हैं " (हे मेरे मित्र, तुम कहते हो कि हिन्दू रीतियों के अनुसार शव को जलाने पर उसे केवल नर्क ही मिलता है, तो इस तथ्य पर भी विचार करो कि कई बार) मुसलमान की कब्र की मिट्टी भी कुम्हार के हाथ पड़ सकती है (क्योंकि कुम्हार पुरानी क़ब्रों की मिट्टी बर्तन बनाने के लिये अधिक उपयुक्त मानते हैं) । इस मिट्टी से बर्तन और ईंट बना कर कुम्हार इनको जलती भट्ठी में डालता है, जलते हुये मिट्टी चटकती है (जैसे कि) वह ज़ोर से (सहायता के लिये) रो रही है ।इस प्रकार जलते हुये उस पर और अंगारे डाले जाते हैं और वह बेचारी मिट्टी और अधिक रोती है (जैसे कि वह नर्क में जल रही हो) (संक्षेप में, हे मेरे मित्र, नर्क अथवा स्वर्ग में जाने का निर्णय शव को जलाने या कब्र में दबाने पर नहीं होता)। नानक कहते हैं, केवल सृजनकर्ता (जिसने संसार रचा है) ही जानता है (कि कौन स्वर्ग जायेगा या कौन नर्क में)"।(२)

पौड़ी

इससे पहली पौड़ी में गुरु जी ने हमें बताया कि समस्त भोजन, कपड़े, धन सम्पदा यहाँ तक कि हमारा जीवन और शरीर भी प्रभु का दिया है । इस पौड़ी में वह कहते हैं कि हम किस प्रकार प्रभु को पायें, जिसने हमें हमारे जीवन सहित और सब कुछ भी दिया है ।

वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो) सच्चे गुरु के (मार्ग दर्शन के)बिना किसी ने अभी तक प्रभु (जीवन दाता) को नहीं पाया। हाँ, बिना सच्चे गुरु की सहायता के कभी कोई (प्रभु को) नहीं पा सका है, क्योंकि उसने स्वयं को सच्चे गुरु में ही ढाल दिया है । मैंने यह तथ्य सबके सामने प्रकट कर दिया है कि सच्चे गुरु के मिलने पर अपने अंदर के मोह और अहं को छोड़ सदा के लिये मुक्त होना है (और गुरु के मार्ग दर्शन पर चलना है)। सबसे उत्तम यही विचार है कि जिन्होंने अपने मन को अनंत प्रभु से जोड़ लिया है, वह उस प्रभु को पा गये हैं जिसने जग को जीवन दिया है "।(६)

इस शब्द का संदेश है कि शवों को विभिन्न रीतियों के अनुसार जलाने अथवा मिट्टी में दबाने की प्रक्रियायों पर अंहकार करने की अपेक्षा हमें सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन के अनुसार अपना मन ईश्वर में लगाना चाहिये और उसकी शिक्षा (गुरु ग्रंथ साहिब जी में निहित वाणी) को ग्रहण करना चाहिए । ऐसा करने से हमें अनंत शांति के साथ ऐसे प्रभु का साथ भी प्राप्त होगा जो समस्त संसार का जीवनदाता है ।

ਪੰਨਾ ੪੬੭

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੧ ॥

ਪੜਿ ਪੜਿ ਗਡੀ ਲਦੀਅਹਿ ਪੜਿ ਪੜਿ ਭਰੀਅਹਿ ਸਾਥ ॥
ਪੜਿ ਪੜਿ ਬੇੜੀ ਪਾਈਐ ਪੜਿ ਪੜਿ ਗਡੀਅਹਿ ਖਾਤ ॥

ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਬਰਸ ਬਰਸ ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਮਾਸ ॥
ਪੜੀਐ ਜੇਤੀ ਆਰਜਾ ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਸਾਸ ॥
ਨਾਨਕ ਲੇਖੈ ਇਕ ਗਲ ਹੋਰੁ ਹਉਮੈ ਝਖਣਾ ਝਾਖ ॥੧॥

ਮਃ ੧ ॥

ਲਿਖਿ ਲਿਖਿ ਪੜਿਆ ॥
ਤੇਤਾ ਕੜਿਆ ॥
ਬਹੁ ਤੀਰਥ ਭਵਿਆ ॥
ਤੇਤੋ ਲਵਿਆ ॥

ਬਹੁ ਭੇਖ ਕੀਆ ਦੇਹੀ ਦੁਖੁ ਦੀਆ ॥
ਸਹੁ ਵੇ ਜੀਆ ਅਪਣਾ ਕੀਆ ॥
ਅੰਨੁ ਨ ਖਾਇਆ ਸਾਦੁ ਗਵਾਇਆ ॥
ਬਹੁ ਦੁਖੁ ਪਾਇਆ ਦੂਜਾ ਭਾਇਆ ॥
ਬਸਤ੍ਰ ਨ ਪਹਿਰੈ ॥
ਅਹਿਨਿਸਿ ਕਹਰੈ ॥
ਮੋਨਿ ਵਿਗੂਤਾ ॥

ਕਿਉ ਜਾਗੈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਸੂਤਾ ॥
ਪਗ ਉਪੇਤਾਣਾ ॥
ਅਪਣਾ ਕੀਆ ਕਮਾਣਾ ॥
ਅਲੁ ਮਲੁ ਖਾਈ ਸਿਰਿ ਛਾਈ ਪਾਈ ॥
ਮੂਰਖਿ ਅੰਧੈ ਪਤਿ ਗਵਾਈ ॥
ਵਿਣੁ ਨਾਵੈ ਕਿਛੁ ਥਾਇ ਨ ਪਾਈ ॥
ਰਹੈ ਬੇਬਾਣੀ ਮੜੀ ਮਸਾਣੀ ॥
ਅੰਧੁ ਨ ਜਾਣੈ ਫਿਰਿ ਪਛੁਤਾਣੀ ॥

ਪੰਨਾ ੪੬੮

ਸਤਿਗੁਰੁ ਭੇਟੇ ਸੋ ਸੁਖੁ ਪਾਏ ॥
ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਏ ॥
ਨਾਨਕ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ਸੋ ਪਾਏ ॥
ਆਸ ਅੰਦੇਸੇ ਤੇ ਨਿਹਕੇਵਲੁ ਹਉਮੈ ਸਬਦਿ ਜਲਾਏ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਭਗਤ ਤੇਰੈ ਮਨਿ ਭਾਵਦੇ ਦਰਿ ਸੋਹਨਿ ਕੀਰਤਿ ਗਾਵਦੇ ॥
ਨਾਨਕ ਕਰਮਾ ਬਾਹਰੇ ਦਰਿ ਢੋਅ ਨ ਲਹਨੀ੍ ਧਾਵਦੇ ॥
ਇਕਿ ਮੂਲੁ ਨ ਬੁਝਨਿ੍ ਆਪਣਾ ਅਣਹੋਦਾ ਆਪੁ ਗਣਾਇਦੇ ॥
ਹਉ ਢਾਢੀ ਕਾ ਨੀਚ ਜਾਤਿ ਹੋਰਿ ਉਤਮ ਜਾਤਿ ਸਦਾਇਦੇ ॥
ਤਿਨ੍ ਮੰਗਾ ਜਿ ਤੁਝੈ ਧਿਆਇਦੇ ॥੯॥

पृ-४६७

सलोक म: १ ॥

पड़ि पड़ि गडी लदिअहि पड़ि पड़ि भरीअहि साथ ॥
पड़ि पड़ि बेड़ी पाईऐ पड़ि पड़ि गडीअहि खात ॥

पड़िअहि जेते बरस बरस पड़िअहि जेते मास ॥
पड़ीऐ जेती आरजा पड़िअहि जेते सास ॥
नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख ॥१॥

म: १॥

लिखि लिखि पड़िआ ॥
तेता कड़िआ ॥
बहु तीरथ भविआ ॥
तेतो लविआ ॥

बहु भेख कीआ देही दुखु दीआ ॥
सहु वे जीआ अपणा कीआ ॥
अँनु न खाइआ सादु गवाइआ ॥
बहु दुखु पाइआ दूजा भाइआ ॥
बसत्र न पहिरै ॥
अहिनिसि कहरै ॥
मोनि विगूता ॥

किउ जागै गुर बिनु सूता ॥
पग उपेताणा ॥
अपणा कीआ कमाणा ॥
अलु मलु खाई सिरि छाई पाई ॥
मूरखि अँधै पति गवाई ॥
विणु नावै किछु थाइ न पाई ॥
रहै बेबाणी मड़ी मसाणी ॥
अँधु न जाणै फिरि पछुताणी ॥

पृ-४६८

सतिगुरु भेटे सो सुखु पाए ॥
हरि का नामु मँनि वसाए ॥
नानक नदरि करे सो पाए ॥
आस अँदेसे ते निहकेवलु हउमै सबदि जलाए ॥२॥

पउड़ी ॥

भगत तेरै मनि भावदे दरि सोहनि कीरति गावदे
नानक करमा बाहरे दरि ढोअ न लहनी् धावदे ॥
इकि मूलु न बुझनि् आपणा अणहोदा आपु गणाइदे ॥
हउ ढाढी का नीच जाति होरि उतम जाति सदाइदे ॥
तिन् मँगा जि तुझै धिआइदे ॥९॥

सलोक महला – १

इस श्लोक में गुरु जी उन पंडितों और विद्यवानों पर टिप्पणी करते हैं जो अनेक ग्रंथ तथा पुस्तकें पढ़ कर अपने बृहत् ज्ञान पर घमंड करते हैं ।

वह कहते हैं “(यदि हम) गाड़ी भर पुस्तकें पढ़ लें, पढ़ पढ़ कर अपने पास ढेर लगा लें, पढ़ पढ़ कर किश्तियों में डाल दें अथवा (उनको चोरी से बचाने के लिये) तहखानों में भर दें, (फिर भी उनका कोई उपयोग नहीं है)। अनेक वर्षों तथा महीनों तक पढ़ते रहें, अपना सम्पूर्ण जीवन या अंतिम श्वास तक पढ़ते रहें, (परन्तु फिर भी सब प्रयत्न निष्फल हैं क्योंकि) ओ' नानक, केवल एक ही तथ्य (जो प्रभु के दरबार में) आवश्यक है (वह यह, कि उसके नाम का ध्यान रखना), अन्य सब कुछ अंहकार भाव का बड़बोलापन है ”।(१)

महला -१

उपरोक्त श्लोक में गुरु जी ने प्रभु के दरबार में पहुँचने के लिये यह कहा कि जब तक मनुष्य प्रभु में ध्यान न लगाये, ग्रंथों का अध्ययन एक निष्फल प्रयत्न है । इस श्लोक में वह अन्य कर्म कांड अथवा अभ्यासों पर टिप्पणी करते हैं जो कि सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन में निहित नहीं हैं और प्रभु के नाम पर भी केन्द्रित नहीं हैं ।

वह कहते हैं “ जितना अधिक कोई (ग्रंथों को) लिखता पढ़ता है वह उतना ही अंहकारी (चिड़चिड़ा) हो जाता है । कोई जितनी अधिक तीर्थ यात्रायें करता है उतना ही वह कौवे की भाँति अनर्थक ढंग से बोलता है । जितना ही कोई धार्मिक प्रकार के चोले अथवा वेष भूषा पहनता है उतना ही वह शरीर को कष्ट देता है ।(अत: ऐसे मनुष्य को हमें कहना पड़ता है) ओ' मेरे मित्र, अब अपने किये कर्मों का फल भुगतो ”। स्वयं पर किये गये कठोर एवं कष्टदायक दंडों की निष्फलता पर गुरु जी व्याख्या करते हुये कहते हैं “भोजन न करने अथवा व्रत रखने से (मनुष्य को कोई आत्मिक लाभ नहीं होता, वस्तुत: वह) भोजन के स्वाद का अवसर गँवा लेता है। इस दुविधाजनक स्थित में जहाँ प्रभु को छोड़ अन्य प्रकार के अभ्यास किये जाते हैं मनुष्य को अधिक कष्ट होते हैं। दिन और रात वस्त्र ना धारण करने से (गर्मी एवं सर्दी का) क़हर सहना पड़ता है ।(इसी प्रकार) मौन स्थित में रहने से कैसे (गुरु के मार्ग दर्शन के बिना अपनी अज्ञान की)निद्रा से जाग सकते हो ? नंगे पैर चलने से (जो दुख उठाओगे) तुम्हारे ही किये का परिणाम मिलेगा । इसी प्रकार (स्वास्थ्यवर्धक भोजन छोड़ कर) इधर उधर का निरर्थक भोजन खाकर और शीश पर भस्म का लेप लगा कर मूर्ख अन्धा व्यक्ति अपना सम्मान गँवा लेता है (तथा कोई भी आत्मिक गुण और लाभ नहीं प्राप्त कर पाता) । (प्रभु के दरबार में) उसके नाम के बिना कुछ भी स्वीकृत नहीं होता । मनुष्य भले ही जंगलों में, शमशान तथा क़ब्रिस्तानों में रहे, पर ऐसा अंधा और मूर्ख (ईश्वर के निकट जाने का सही मार्ग नहीं जानने पर) अंत में पश्चात्ताप करता है । जो मनुष्य सच्चे गुरु से भेंट करता है वह सुख शांति पाता है, (क्योंकि इस प्रकार) वह प्रभु नाम को अपने मन में बसा पाता है । ओ' नानक जिस किसी पर प्रभु की कृपा दृष्टि होती है उसी को सच्चे गुरु की प्राप्ति होती है और तब किसी प्रकार की आशा एवं भय से परे गुरु का कहा मान कर, मनुष्य अपने अंह को जला देता है (तत्पश्चात, प्रभु नाम रूपी शांति का स्रोत उसके मन में सरलता से प्रवाहित होने लगता है)।(२)

पौड़ी-

उपरोक्त दोनों श्लोकों में गुरु जी ने दृढ़ भाव से कहा है कि प्रभु नाम का ध्यान और गुणगान किये बिना अन्य समस्त कर्म कांड ग्रंथों का लेखन और अध्ययन इत्यादि, प्रभु के दरबार में मान्य नहीं है ।अब वह विनीत भाव से व्यक्त करते हैं कि प्रभु के भक्त उसका गुणगान करते हुये उसे आनंदित करते हैं । वह कहते हैं “(ओ' प्रभु), तुम्हारे भक्त तेरे द्वार पर तेरी कीर्ति का गुणगान करते हुये तेरे मन को कितना सुहाते हैं । परन्तु ओ' नानक, जिनके भाग्य में तेरे द्वार पर आश्रय नहीं है, वह इधर उधर भटकते हैं । (ओ' प्रभु), एक वह हैं जो अपने मूल रूप को नहीं जान पाते और बिना किसी आत्मिक गुणों के स्वयं को बहुत बड़ा गिनते हैं । हे' प्रभु, जब अन्य सभी अपने को उच्च जाति अथवा कुल का कहलाते हैं, मैं नीची जाति का भाट (तेरे द्वार पर) तुमसे केवल यही भिक्षा माँगता हूँ कि मुझे उनका सानिध्य दो जो तुम्हें ध्याते हैं ”।(९)

इस पौड़ी तथा पूर्व श्लोकों का संदेश यह है कि अनेक ग्रंथों के लेखन तथा अध्ययन का, कष्टदायक तपस्यायों अथवा धार्मिक चोले और वेशभूषा को धारण करने का, तथा विभिन्न प्रकार से स्वयं को कष्ट देने का कोई लाभ नहीं है जब तक हम सच्चे गुरु की संगति में उसके मार्ग दर्शन पर प्रभु का गुण गान तथा ध्यान अपनी पूर्ण श्रद्धा एवं प्रेम के साथ नहीं करते ।

ਪੰਨਾ ੪੬੯	पृ-४६९
ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੧ ॥	**सलोक म: १॥**
ਦੁਖੁ ਦਾਰੂ ਸੁਖੁ ਰੋਗੁ ਭਇਆ ਜਾ ਸੁਖੁ ਤਾਮਿ ਨ ਹੋਈ ॥ ਤੂੰ ਕਰਤਾ ਕਰਣਾ ਮੈ ਨਾਹੀ ਜਾ ਹਉ ਕਰੀ ਨ ਹੋਈ ॥੧॥	दुखु दारू सुखु रोगु भइआ जा सुखु तामि न होई ॥ तूँ करता करणा मै नाही जा हउ करी न होई ॥१॥
ਬਲਿਹਾਰੀ ਕੁਦਰਤਿ ਵਸਿਆ ॥ ਤੇਰਾ ਅੰਤੁ ਨ ਜਾਈ ਲਖਿਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	बलिहारी कुदरति वसिआ ॥ तेरा अँतु न जाई लखिआ ॥१॥रहाउ॥
ਜਾਤਿ ਮਹਿ ਜੋਤਿ ਜੋਤਿ ਮਹਿ ਜਾਤਾ ਅਕਲ ਕਲਾ ਭਰਪੂਰਿ ਰਹਿਆ ॥ ਤੂੰ ਸਚਾ ਸਾਹਿਬੁ ਸਿਫਤਿ ਸੁਆਲ੍ਹਿਉ ਜਿਨਿ ਕੀਤੀ ਸੋ ਪਾਰਿ ਪਇਆ ॥ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਕਰਤੇ ਕੀਆ ਬਾਤਾ ਜੋ ਕਿਛੁ ਕਰਣਾ ਸੁ ਕਰਿ ਰਹਿਆ ॥੨॥	जाति महि जोति जोति महि जाता अकल कला भरपूरि रहिआ ॥ तूँ सचा साहिबु सिफति सुआल्हिउ जिनि कीती सो पारि पइआ ॥ कहु नानक करते कीआ बाता जो किछु करणा सु करि रहिआ ॥२॥
ਮਃ ੨ ॥	**म: २॥**
ਜੋਗ ਸਬਦੰ ਗਿਆਨ ਸਬਦੰ ਬੇਦ ਸਬਦੰ ਬ੍ਰਾਹਮਣਹ ॥ ਖਤ੍ਰੀ ਸਬਦੰ ਸੂਰ ਸਬਦੰ ਸੂਦ੍ਰ ਸਬਦੰ ਪਰਾ ਕ੍ਰਿਤਹ ॥ ਸਰਬ ਸਬਦੰ ਏਕ ਸਬਦੰ ਜੇ ਕੋ ਜਾਣੈ ਭੇਉ ॥ ਨਾਨਕੁ ਤਾ ਕਾ ਦਾਸੁ ਹੈ ਸੋਈ ਨਿਰੰਜਨ ਦੇਉ ॥੩॥	जोग सबदँ गिआन सबदँ बेद सबदँ ब्राहमणह ॥ खत्री सबदँ सूर सबदँ सूद्र सबदँ परा कृतह ॥ सरब सबदँ एक सबदँ जे को जाणै भेउ ॥ नानकु ता का दासु है सोई निरँजन देउ ॥३॥
ਮਃ ੨ ॥	**म: २॥**
ਏਕ ਕ੍ਰਿਸਨੰ ਸਰਬ ਦੇਵਾ ਦੇਵ ਦੇਵਾ ਤ ਆਤਮਾ ॥ ਆਤਮਾ ਬਾਸੁਦੇਵਸ੍ਯਿ ਜੇ ਕੋ ਜਾਣੈ ਭੇਉ ॥ ਨਾਨਕੁ ਤਾ ਕਾ ਦਾਸੁ ਹੈ ਸੋਈ ਨਿਰੰਜਨ ਦੇਉ ॥੪॥	एक किृसनँ सरब देवा देव देवा त आतमा ॥ आतमा बासुदेवसि् जे को जाणै भेउ ॥ नानकु ता का दासु है सोई निरँजन देउ ॥४॥
ਮਃ ੧ ॥	**म: १॥**
ਕੁੰਭੇ ਬਧਾ ਜਲੁ ਰਹੈ ਜਲ ਬਿਨੁ ਕੁੰਭੁ ਨ ਹੋਇ ॥ ਗਿਆਨ ਕਾ ਬਧਾ ਮਨੁ ਰਹੈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਗਿਆਨੁ ਨ ਹੋਇ ॥੫॥	कुँभे बधा जलु रहै जल बिनु कुँभु न होइ ॥ गिआन का बधा मनु रहै गुर बिनु गिआनु न होइ ॥५॥
ਪਉੜੀ ॥	**पउड़ी ॥**
ਪੜਿਆ ਹੋਵੈ ਗੁਨਹਗਾਰੁ ਤਾ ਓਮੀ ਸਾਧੁ ਨ ਮਾਰੀਐ ॥ ਜੇਹਾ ਘਾਲੇ ਘਾਲਣਾ ਤੇਵੇਹੋ ਨਾਉ ਪਚਾਰੀਐ ॥ ਐਸੀ ਕਲਾ ਨ ਖੇਡੀਐ ਜਿਤੁ ਦਰਗਹ ਗਇਆ ਹਾਰੀਐ ॥ ਪੜਿਆ ਅਤੈ ਓਮੀਆ ਵੀਚਾਰੁ ਅਗੈ ਵੀਚਾਰੀਐ ॥	पड़िआ होवै गुनहगारु ता ओमी साधु न मारीऐ ॥ जेहा घाले घालणा तेवेहो नाउ पचारीऐ ॥ ऐसी कला न खेडीऐ जितु दरगह गइआ हारीऐ ॥ पड़िआ अतै ओमीआ वीचारु अगै वीचारीऐ ॥
ਪੰਨਾ ੪੭੦	**प ४७०**
ਮੁਹਿ ਚਲੈ ਸੁ ਅਗੈ ਮਾਰੀਐ ॥੧੨॥	मुहि चलै सु अगै मारीऐ ॥१२॥

सलोक महला – १

इस शब्द में गुरु जी हमें जीवन की अनेक घटनायों के विषय पर अति गहन गंभीर भाव से विवेक देने की बात करते हैं । वह कहते हैं "(ओ' ईश्वर, तुम्हारा यह संसार कैसा है, जहाँ पर) दुख तथा संताप का समय औषधि के समान सिद्ध होता है और सुख का समय रोग के समान, (क्योंकि सुख के समय मनुष्य प्राय: ईश्वर को भूल जाता है और कई प्रकार की व्यथाओं से कष्ट पाता है । परन्तु दुख के समय वह प्रभु की शरण में जाकर उत्सुकता से उसका ध्यान करता है, अत: दुख उसके लिये औषधि के समान सिद्ध होते हैं, किन्तु) जब भी कोई सच्ची आत्मिक शांति पा लेता है तो किसी भी दुख से उसे कष्ट नहीं होता। ओ' प्रभु, तुम्हीं कर्ता हो, सृजनहार हो, मैं कुछ भी नहीं, क्योंकि जब भी मैं अपने अहम के कारण कुछ करने का प्रयत्न करता हूँ, वह होता नहीं है "।(१)

यद्दिप ईश्वर अदृश्य है पर फिर भी वह प्रकृति में प्रत्येक स्थान पर बसा हुया है, इस तथ्य पर अब गुरु जी आश्चर्यचकित होकर कहते हैं "(हे' मेरे प्रभु) तुम अपनी सृजना में बसे हुये हो, मैं तुम पर बलिहारी हूँ, तुम्हारी लीला अंनत है "।(१- विराम)

ईश्वर को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे' प्रभु), तुम्हारा प्रकाश ब्रह्मांड में फैला हुया है, प्रत्येक जीव में तुम्हारी ज्योति है । तुम्हारे में कोई सांसारिक विशेषता नहीं है फिर भी तुम भरपूर शक्ति से हर स्थान पर समाये हो । तुम सच्चे अनंत स्वामी हो, तुम्हारी स्तुति अति सुंदर है, जिसने भी तेरी प्रशंसा की वही भव सागर से पार हो गया । ओ' नानक, उस सृजनकर्ता की कथायें कहो जिसने जो कुछ भी करना है, वही कर रहा है (उसको किसी से पूछना नहीं है)"।(२)

महला-२

अब गुरु जी हमें यह बताते हैं कि संसार में हमारा क्या कर्तव्य है । वह कहते हैं "एक योगी का वास्तविक धर्म (दैवी) ज्ञान अर्जित करना है । एक ब्राह्मण /पंडित का कर्तव्य वेद ग्रंथों को पढ़ कर विचारना है और एक क्षत्रीय का कर्तव्य युद्ध के मैदान में वीरता से युद्ध करना, जबकि शूद्र का कर्तव्य उन सबकी सेवा करना है । परन्तु सर्वोच्च कर्तव्य केवल एक शब्द 'प्रभु ' का ध्यान करना है। जिस मनुष्य को यह रहस्य ज्ञात है नानक उसका दास है (क्योंकि ऐसा मनुष्य) प्रभु का प्रतिरूप है "।(३)

महला -२

गुरु जी प्रभु के विषय में एक और रहस्य बताते हैं, तथा साथ में अन्य देवी देवतायों के विषय में (जिन में हिंदू धर्म के अनुयायी विश्वास रखते हैं) भी कहते हैं " एक ईश्वर, समस्त देवी देवताओं में सर्वोच्च है वह उन सबकी आत्मा है और वही आत्मा स्वयं प्रभु है । यदि किसी को इस रहस्य का आभास है (प्रभु की आत्मा का) तो नानक उसका दास है, क्योंकि वह प्राणी प्रभु का प्रतिरूप है "।(४)

महला-१

गुरु के मार्ग दर्शन की आवश्यकता पर एक सुंदर उदाहरण देते हुये गुरु जी दृढ़ भाव से कहते हैं "जैसे कि जल घड़े में बँधा रहता है, पर घड़े का अस्तित्व जल के बिना नहीं है, ठीक वैसे ही मन दैवी ज्ञान से बँधा (वश में) रहता है, परन्तु दैवी ज्ञान गुरु के (मार्ग दर्शन के) बिना नहीं प्राप्त हो सकता "।(५)

पौड़ी

अंत में गुरु जी परामर्श देते हैं " यदि एक ज्ञानी तथा पढ़ा लिखा व्यक्ति अपराधी है, तब (उसके स्थान पर) हमें एक अबोध अनपढ़ साधु को नहीं मारना चाहिये ।जिस प्रकार के कर्म (एक मनुष्य) करता है, वैसा ही उसके नाम का प्रचार होता है । हमें (धोखे और चतुराई का) ऐसा खेल नहीं खेलना चाहिये (जो संसार में हमें लाभप्रद हो, परन्तु) परलोक में जाने के समय हमारी पराजय हो जाये ।पढ़े लिखे ज्ञानी तथा अबोध अज्ञानी जनों के आचरण पर (प्रभु के दरबार में) सतर्कता से विचार किया जाता है । जो मनुष्य (गुरु को न मान कर) केवल अपनी मनमानी करता है वह परलोक में दंड पाता है "।(१२)

इस पौड़ी तथा पूर्व श्लोकों का संदेश यह है कि हमें अपने सुख व दुख में ईश्वर को नहीं भूलना चाहिये । हमें सदा उसे स्मरण रखते हुये उसका ध्यान करना चाहिये, क्योंकि वह सर्वोच्च स्वामी है ।परन्तु उसका ध्यान करने के लिये मन की एकाग्रता की आवश्यकता है, इसके लिये हमें दैवी ज्ञान होना चाहिये जो केवल गुरु से ही प्राप्त हो सकता है । प्रभु नाम के ध्यान में रहने के साथ साथ हमें अपना जीवन विनम्र भाव, ईमानदारी और न्याय संगत रूप से व्यतीत करना चाहिये तथा किसी भी ऐसे कार्य का भागी नहीं बनना चाहिये जिससे प्रभु के दरबार में हमारा सम्मान खो जाये ।

ਪੰਨਾ ੪੭੧

ਸਲੋਕ ਮਃ ੧ ॥

ਗਊ ਬਿਰਾਹਮਣ ਕਉ ਕਰੁ ਲਾਵਹੁ ਗੋਬਰਿ ਤਰਣੁ ਨ ਜਾਈ ॥
ਧੋਤੀ ਟਿਕਾ ਤੈ ਜਪਮਾਲੀ ਧਾਨੁ ਮਲੇਛਾਂ ਖਾਈ ॥
ਅੰਤਰਿ ਪੂਜਾ ਪੜਹਿ ਕਤੇਬਾ ਸੰਜਮੁ ਤੁਰਕਾ ਭਾਈ ॥
ਛੋਡੀਲੇ ਪਾਖੰਡਾ ॥
ਨਾਮਿ ਲਇਐ ਜਾਹਿ ਤਰੰਦਾ ॥੧॥

ਮਃ ੧ ॥

ਮਾਣਸ ਖਾਣੇ ਕਰਹਿ ਨਿਵਾਜ ॥
ਛੁਰੀ ਵਗਾਇਨਿ ਤਿਨ ਗਲਿ ਤਾਗ ॥
ਤਿਨ ਘਰਿ ਬ੍ਰਹਮਣ ਪੂਰਹਿ ਨਾਦ ॥
ਉਨ੍ਹਾ ਭਿ ਆਵਹਿ ਓਈ ਸਾਦ ॥
ਕੂੜੀ ਰਾਸਿ ਕੂੜਾ ਵਾਪਾਰੁ ॥
ਕੂੜੁ ਬੋਲਿ ਕਰਹਿ ਆਹਾਰੁ ॥
ਸਰਮ ਧਰਮ ਕਾ ਡੇਰਾ ਦੂਰਿ ॥
ਨਾਨਕ ਕੂੜੁ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰਿ ॥
ਮਥੈ ਟਿਕਾ ਤੇੜਿ ਧੋਤੀ ਕਖਾਈ ॥
ਹਥਿ ਛੁਰੀ ਜਗਤਕਾਸਾਈ ॥

ਪੰਨਾ ੪੭੨

ਨੀਲ ਵਸਤ੍ਰ ਪਹਿਰਿ ਹੋਵਹਿ ਪਰਵਾਣੁ ॥
ਮਲੇਛ ਧਾਨੁ ਲੇ ਪੂਜਹਿ ਪੁਰਾਣੁ ॥
ਅਭਾਖਿਆ ਕਾ ਕੁਠਾ ਬਕਰਾ ਖਾਣਾ ॥
ਚਉਕੇ ਉਪਰਿ ਕਿਸੈ ਨ ਜਾਣਾ ॥
ਦੇ ਕੈ ਚਉਕਾ ਕਢੀ ਕਾਰ ॥
ਉਪਰਿ ਆਇ ਬੈਠੇ ਕੂੜਿਆਰ ॥
ਮਤੁ ਭਿਟੈ ਵੇ ਮਤੁ ਭਿਟੈ ॥
ਇਹੁ ਅੰਨੁ ਅਸਾਡਾ ਫਿਟੈ ॥
ਤਨਿ ਫਿਟੈ ਫੇੜ ਕਰੇਨਿ ॥
ਮਨਿ ਜੂਠੈ ਚੁਲੀ ਭਰੇਨਿ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਸਚੁ ਧਿਆਈਐ ॥
ਸੁਚਿ ਹੋਵੈ ਤਾ ਸਚੁ ਪਾਈਐ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਚਿਤੈ ਅੰਦਰਿ ਸਭੁ ਕੋ ਵੇਖਿ ਨਦਰੀ ਹੇਠਿ ਚਲਾਇਦਾ ॥
ਆਪੇ ਦੇ ਵਡਿਆਈਆ ਆਪੇ ਹੀ ਕਰਮ ਕਰਾਇਦਾ ॥
ਵਡਹੁ ਵਡਾ ਵਡ ਮੇਦਨੀ ਸਿਰੇ ਸਿਰਿ ਧੰਧੈ ਲਾਇਦਾ ॥
ਨਦਰਿ ਉਪਠੀ ਜੇ ਕਰੇ ਸੁਲਤਾਨਾ ਘਾਹੁ ਕਰਾਇਦਾ ॥
ਦਰਿ ਮੰਗਨਿ ਭਿਖ ਨ ਪਾਇਦਾ ॥੧੬॥

पृ-४७१

सलोक म: १॥

गऊ बिराहमण कउ करु लावहु गोबरि तरणु न जाई ॥
धोती टिका तै जपमाली धानु मलेछां खाई ॥
अँतरि पूजा पड़हि कतेबा संजमु तुरका भाई ॥
छोडीले पाखँडा ॥
नामि लइऐ जाहि तरँदा ॥१॥

म: १॥

माणस खाणे करहि निवाज ॥
छुरी वगाइनि तिन गलि ताग ॥
तिन घरि ब्रहमण पूरहि नाद ॥
उना् भि आवहि ओई साद ॥
कूड़ी रासि कूड़ा वापारु ॥
कूड़ु बोलि करहि आहारु ॥
सरम धरम का डेरा दूरि ॥
नानक कूड़ु रहिआ भरपूरि ॥
मथै टिका तेड़ि धोती कखाई ॥
हथि छुरी जगतकासाई ॥

पृ-४७२

नील वसत्र पहिरि होवहि परवाणु ॥
मलेछ धानु ले पूजहि पुराणु ॥
अभाखिआ का कुठा बकरा खाणा ॥
चउके उपरि किसै न जाणा ॥
दे कै चउका कढी कार ॥
उपरि आइ बैठे कूड़िआर ॥
मतु भिटै वे मतु भिटै ॥
इहु अँनु असाडा फिटै ॥
तनि फिटै फेड़ करेनि ॥
मनि जूठै चुली भरेनि ॥
कहु नानक सचु धिआईऐ ॥
सुचि होवै ता सचु पाईऐ ॥२॥

पउड़ी ॥

चितै अँदरि सभु को वेखि नदरी हेठि चलाइदा ॥
आपे दे वडिआईआ आपे ही करम कराइदा ॥
वडहु वडा वड मेदनी सिरे सिरि धँधे लाइदा ॥
नदरि उपठी जे करे सुलताना घाहु कराइदा ॥
दरि मँगनि भिख न पाइदा ॥१६॥

सलोक महला -१

इस श्लोक में गुरु जी एक बार फिर तत्कालीन पंडित तथा उच्च समाज के दोहरेपन और कुटिलता का अनावरण करते हैं, जो कि मुस्लिम शासकों का साथ देते थे ।एक ओर तो वह ग़रीब ब्राह्मणों से गऊओं के पुल पार करने पर मार्ग शुल्क लेते थे, पर दूसरी ओर घरों के चौके के कच्चे फ़र्श गोबर से लीप कर सोचते थे कि उनका चौका शुद्ध हो गया है ।

ऐसे पंडितो को, जो भ्रष्ट मुस्लिम शासकों के साथी बने हुये थे, सम्बोधित करते हुये कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो) तुम ब्राह्मण तथा गऊ पर शुल्क लगाते हो, पर (स्मरण रहे कि) घर को गोबर से लीपने से तुम (भवसागर को) तैर कर पार नहीं कर सकते । तुम धोती पहनते हो, तिलक लगाते हो, माला जपते हो, पर धन-धान्य तुम म्लेच्छों (मुस्लिम, जिन्हें म्लेच्छ कहते हो) का दिया खाते हो । घर के अंदर छिप कर तुम अपने देवी- देवता की पूजा करते हो, पर बाहर तुम अरबी फ़ारसी की पुस्तकें पढ़ते हो और तुर्क भाईयों के नियम संयम मानते हो (जैसे कि किसी विशेष माह में व्रत रखना) । (हे' सज्जनों) इन पाखंडों को त्यागो, केवल प्रभु का नाम जपने से ही तुम (भवसागर) पार लग सकोगे "।(१)

महला-१

इस श्लोक में मुस्लिम शासकों तथा उनके हिंदू देशद्रोही साथियों के द्वारा दुखी दरिद्र साधारण जनता का निरंतर उत्पीड़न, छल कपट, तथा अन्याय करने पर गुरु जी और आगे कहते हैं " (भ्रष्ट मुस्लिम शासक, यद्दिप) नित्य नमाज़ पढ़ते हैं, पर (प्रजा का उत्पीड़न) मानव-भक्षक की भाँति करते हैं ।(क्षत्रीय योद्धा और सिपाही जनता से बलपूर्वक शुल्क लेते हैं, जैसे कि वह अपने कसाई समान शासकों की ओर से) छुरी चला रहे हैं, पर साथ ही वह गले में पवित्र जनेऊ धारण करते (स्वयं को श्रेष्ठ हिंदू समझते) हैं ।(इन दुष्ट क्षत्रियों के घरों में) ब्राह्मण/पंडित पूजा, हवन जैसे आयोजन तथा शंख नाद करते हैं, साथ ही बड़े भोज आदि का स्वाद तथा (दुष्कर्मो से कमाये धन का) आनंद लेते हैं। उनका धन झूठा है, उनका व्यापार झूठा है और वह झूठ बोल कर जीविका कमाते हैं । शर्म तथा धर्म का निवास उनसे अति दूर है । ओ' नानक, झूठ चारों ओर पूर्ण रूप से फैला है । माथे पर तिलक और कमर पर गेरुआ धोती पहन कर (ब्राह्मण केवल वाह्य रूप से ही पवित्रता का ढोंग करते हैं परन्तु वास्तविक जीवन में वह) जग में कसाई की भाँति हाथ में छुरी लिये हुये हैं (जैसे कि पीड़ितों का वध करने के लिए तत्पर हों) ।

उस समय के हिंदू अधिकारियों के छल कपट तथा दंभ पर गुरु जी व्याख्या करते हैं " अपने मुस्लिम शासकों से स्वीकृति पाने के लिये वह नीले रंग के वस्त्र धारण करते हैं । म्लेच्छों के धन से पुराणों की पूजा करते हैं । वह (मुस्लिम द्वारा पकाया) हलाल किये बकरे का माँस खाते हैं (जो कि एक हिंदू के लिये पूर्णतया अपवित्र है, तिस पर वह कहते हैं कि) कोई उनके चौके में नहीं आ सकता नहीं तो उनका भोजन अपवित्र हो जायेगा ।(गोबर से लिपे) चौके के फ़र्श पर अपने चारों ओर कार (सीमा) बनाकर वह झूठे (पंडित) आकर बैठते हैं (तथा बारम्बार कहते है कि) "निकट मत आओ और चौके को दूषित मत करो, नहीं तो हमारा यह भोजन भ्रष्ट हो जायेगा अथवा खाने योग्य नहीं रहेगा "।(परन्तु वास्तव में यही लोग) अपने भ्रष्ट तन से भ्रष्ट कर्म करते हैं । उनके मन में झूठ है, परन्तु वाह्य रूप से (अपनी पवित्रता सिद्ध करने के लिये) वह मुँह में पानी भर कुल्ले करते हैं । नानक कहते हैं कि हमें सच्चे एवं अनंत प्रभु का ध्यान करना चाहिये, पर हम तभी उस सच्चे प्रभु को पा सकते हैं, यदि हमारे मन में पवित्रता हो " ।(२)

पउड़ी

अब गुरु जी प्रभु की शक्ति पर टिप्पणी करते हैं "(वह अनंत प्रभु) अपने मन के अंदर सबको रखता है और सबको अपनी दया दृष्टि के नीचे चलाता है । वह स्वयं सबको सम्मान प्रदान करता है और वह स्वयं ही सबसे विभिन्न कार्य कराता है ।वह बड़ा है, वह सर्वोच्च है और उसका ब्रह्मांड सर्वोपरि है, तथा वह प्रत्येक को धंधे में लगाता है । यदि उसकी दृष्टि पलट जाये तो वह बादशाहों को भी एक घसियारे के समान कौड़ी कौड़ी का मोहताज कर देता है जो दर दर जाकर भिक्षा माँगने पर भी भिक्षा नहीं पाता "।(१६)

इस पौड़ी तथा पूर्व श्लोकों का संदेश यह है कि हमें दुष्ट और कपटी शासकों के दबाव में आकर दीन दुखी तथा ग़रीब लोगों का शोषण नहीं करना चाहिये । हम अपने आचार व्यवहार को चाहे कितना ही गुप्त रखें, ईश्वर हमारे सभी अच्छे और बुरे करमों को देख लेता है,। हम भले ही शासक हों, महाराजा हों या हमारे अधिकारी यदि भ्रष्ट कार्यों या उत्पीड़न में संलग्न हैं तो प्रभु हमारी सत्ता, शक्ति एवं धन सम्पदा तुरंत छीन कर हमें तुच्छ तथा दरिद्र दशा में पहुँचा सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੪੭੩

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੧ ॥

ਨਾਨਕ ਫਿਕੈ ਬੋਲਿਐ ਤਨੁ ਮਨੁ ਫਿਕਾ ਹੋਇ ॥
ਫਿਕੋ ਫਿਕਾ ਸਦੀਐ ਫਿਕੇ ਫਿਕੀ ਸੋਇ ॥
ਫਿਕਾ ਦਰਗਹ ਸਟੀਐ ਮੁਹਿ ਥੁਕਾ ਫਿਕੇ ਪਾਇ ॥
ਫਿਕਾ ਮੂਰਖੁ ਆਖੀਐ ਪਾਣਾ ਲਹੈ ਸਜਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੧ ॥

ਅੰਦਰਹੁ ਝੂਠੇ ਪੈਜ ਬਾਹਰਿ ਦੁਨੀਆ ਅੰਦਰਿ ਫੈਲੁ ॥
ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਜੇ ਨਾਵਹਿ ਉਤਰੈ ਨਾਹੀ ਮੈਲੁ ॥
ਜਿਨ੍ ਪਟੁ ਅੰਦਰਿ ਬਾਹਰਿ ਗੁਦੜੁ ਤੇ ਭਲੇ ਸੰਸਾਰਿ ॥
ਤਿਨ੍ ਨੇਹੁ ਲਗਾ ਰਬ ਸੇਤੀ ਦੇਖਨ੍ੇ ਵੀਚਾਰਿ ॥
ਰੰਗਿ ਹਸਹਿ ਰੰਗਿ ਰੋਵਹਿ ਚੁਪ ਭੀ ਕਰਿ ਜਾਹਿ ॥
ਪਰਵਾਹ ਨਾਹੀ ਕਿਸੈ ਕੇਰੀ ਬਾਝੁ ਸਚੇ ਨਾਹ ॥
ਦਰਿ ਵਾਟ ਉਪਰਿ ਖਰਚੁ ਮੰਗਾ ਜਬੈ ਦੇਇ ਤ ਖਾਹਿ ॥
ਦੀਬਾਨੁ ਏਕੋ ਕਲਮ ਏਕਾ ਹਮਾ ਤੁਮ੍ਾ ਮੇਲੁ ॥
ਦਰਿ ਲਏ ਲੇਖਾ ਪੀੜਿ ਛੁਟੈ ਨਾਨਕਾ ਜਿਉ ਤੇਲੁ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੪੭੪

ਪਉੜੀ ॥

ਆਪੇ ਹੀ ਕਰਣਾ ਕੀਓ ਕਲ ਆਪੇ ਹੀ ਤੈ ਧਾਰੀਐ ॥
ਦੇਖਹਿ ਕੀਤਾ ਆਪਣਾ ਧਰਿ ਕਚੀ ਪਕੀ ਸਾਰੀਐ ॥
ਜੋ ਆਇਆ ਸੋ ਚਲਸੀ ਸਭੁ ਕੋਈ ਆਈ ਵਾਰੀਐ ॥
ਜਿਸ ਕੇ ਜੀਅ ਪਰਾਣ ਹਹਿ ਕਿਉ ਸਾਹਿਬੁ ਮਨਹੁ ਵਿਸਾਰੀਐ ॥
ਆਪਣ ਹਥੀ ਆਪਣਾ ਆਪੇ ਹੀ ਕਾਜੁ ਸਵਾਰੀਐ ॥੨੦॥

पृ-४७३

सलोक महला १॥

नानक फिकै बोलिऐ तनु मनु फिका होइ ॥
फिको फिका सदीऐ फिके फिकी सोइ ॥
फिका दरगह सटीऐ मुहि थुका फिके पाइ ॥
फिका मूरखु आखीऐ पाणा लहै सजाइ ॥१॥

म: १॥

अँदरहु झूठे पैज बाहरि दुनीआ अँदरि फैलु ॥
अठसठि तीरथ जे नावहि उतरै नाही मैलु ॥
जिन् पटु अँदरि बाहरि गुदड़ु ते भले संसारि ॥
तिन् नेहु लगा रब सेती देखने् वीचारि ॥
रँगि हसहि रँगि रोवहि चुप भी करि जाहि ॥
परवाह नाही किसै केरी बाझु सचे नाह ॥
दरि वाट उपरि खरचु मँगा जबै देइ त खाहि ॥
दीबानु एको कलम एका हमा तुमा् मेलु ॥
दरि लए लेखा पीड़ि छुटै नानका जिउ तेलु ॥२॥

पृ-४७४

पउड़ी ॥

आपे ही करणा कीओ कल आपे ही तै धारीऐ ॥
देखहि कीता आपणा धरि कची पकी सारीऐ ॥
जो आइआ सो चलसी सभु कोई आई वारीऐ ॥
जिस के जीअ पराण हहि किउ साहिबु मनहु विसारीऐ ॥
आपण हथी आपणा आपे ही काजु सवारीऐ ॥२०॥

सलोक महला - १

कई बार हम आवेश, असावधानी अथवा क्रोध में कठोर भाषा का प्रयोग कर जाते हैं । इस शब्द में गुरु जी हमें ऐसी भाषा के परिणामों पर कहते हैं " ओ' नानक, वह मनुष्य जो असभ्य भाषा बोलता है, उसका तन मन भी असभ्य हो जाता है । ऐसा मनुष्य धृष्ट कहलाता है और उसकी प्रतिष्ठा भी उसके अनुरूप हो जाती है । ऐसा धृष्ट मनुष्य प्रभु के दरबार से बाहर निकाल दिया जाता है (इतना अपमानित होता है, जैसे कि) उसके मुख पर थूका जा रहा हो । संक्षेप में, असभ्य अथवा कठोर भाषा बोलने वाला मूर्ख कहलाता है (और प्रत्येक स्थान पर उसका इतना अनादर होता है, जैसे कि) उसे जूते से मार पड़ रही हो "।(१)

महला -१

डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार गुरु जी ने इस श्लोक का उच्चारण संभवत: तीर्थ स्थानों पर कुछ ढोंगी साधुयों के व्यवहार को देख कर किया है । वह कहते हैं " इस संसार में अनेक ऐसे मनुष्य फैले हैं जो अंदर से पाखंडी हैं पर वाह्य रूप से स्वयं को अति प्रतिष्ठित एवं पवित्र सिद्ध करते हैं ।ऐसे ढोंगी यदि अड़सठ तीर्थ स्थानों पर भी जा कर स्नान करलें तब भी उनके (मन का) मैल नहीं उतरेगा । दूसरी ओर (जो लोग दयालु अथवा अंदर से) रेशम के समान कोमल हृदय के हैं पर बाहर से गुदड़ी पहने हैं वह संसार में सदाचारी हैं । वह प्रभु के प्रेम में रंगे हैं और सदा उसके दर्शनों के लिये विचारते रहते हैं । प्रभु के रंग में वह कभी हँसते हैं, कभी रोते हैं, तथा कभी मौनवस्था में चले जाते हैं । उन्हें सच्चे प्रभु के अतिरिक्त किसी और की परवाह नहीं हैं । वह उसके (प्रभु) दरवाज़े पर जाकर सब कुछ माँगते हैं और जब वह देता है (आत्मिक भोजन) तब उसे आत्मसात करते हैं । (उन्हें इस तथ्य पर पूर्ण विश्वास है कि) केवल एक ही दीवान (न्यायाधीश) है (जो प्रत्येक को एक समान सच्चे नियम से न्याय देता है), उसके पास एक ही क़लम है, वहाँ (उसकी नयायसभा में) हम सभी छोटे बड़े लोग जब मिलेंगे तब वह अपनी सभा में हमारे कर्मों का लेखा जोखा पूछेगा, उस समय ओ' नानक, दोषी लोगों को कठोर दंड की इतनी पीड़ा होगी (और इस प्रकार उनके अश्रु निकलेंगे) जैसे कि कोल्हू में डाले गये बीजों में से तेल निकलता है "।(२)

पौड़ी

संसार के स्वभाव तथा मनुष्य के लिये क्या उत्तम है, इस पर गुरु जी अपना विचार रखते हुये कहते हैं " (हे' प्रभु), तुमने स्वयं यह सृष्टि रची है तथा अपनी ही शक्ति के द्वारा उसे संभाला है ।(जैसे कि अकेला बालक लूडो खेल रहा हो) ठीक वैसे ही प्रभु अपनी रची सृष्टि को निहारते हैं और विचारते हैं कि उनके कौन से मोहरे(जीव) विशिष्ट हो (पक) गये हैं, (अथवा निज घर में प्रवेश पाने के योग्य हो गये हैं) और कौन से अभी दोषी (कच्चे) हैं (अथवा संसार में जन्म मरण के फेर में रहने वाले है) । किन्तु एक तथ्य निश्चित है कि एक बार जो जीव संसार में आया है उसको जाना भी है, सभी की बारी आयेगी (इस संसार से जाने के लिये) । इस लिये जिस ईश्वर ने हमें यह जीवन तथा श्वास दिये हैं, उस स्वामी को कभी मन में से क्यों भुलाना चाहिए ?अपना जीवन सफल करने के लिये (अथवा प्रभु से निकटता प्राप्त करने के लिये) प्रभु नाम के ध्यान का कर्तव्य स्वयं पूर्ण करें "। (२०)

इस पौड़ी एवं पूर्व श्लोकों का संदेश यह है कि हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि प्रभु ने हमारे लिए इस संसार को एक रंगमंच के समान रच दिया है जिस पर सभी जीव अपना निर्धारित अभिनय करते हुए स्वयं को परिपक्व करते रहते हैं । अतः, हमें किसी के साथ भी कठोर और असभ्य भाषा का प्रयोग अथवा अपनी धर्मनिष्ठा का ढोंग नहीं करना चाहिए और सदैव सदाचार की राह पर चलते हुए प्रभु प्रेम में लीन रहना चाहिये जिससे कि एक दिन प्रभु अपनी कृपा करें और हमें अपने अनंत रूप में स्वीकार कर लें ।

ਪੰਨਾ ੪੭੬

ਆਸਾ ॥

ਗਜ ਸਾਢੇ ਤੈ ਤੈ ਧੋਤੀਆ ਤਿਹਰੇ ਪਾਇਨਿ ਤਗ ॥
ਗਲੀ ਜਿਨ੍ਾ ਜਪਮਾਲੀਆ ਲੋਟੇ ਹਥਿ ਨਿਬਗ ॥
ਓਇ ਹਰਿ ਕੇ ਸੰਤ ਨ ਆਖੀਅਹਿ ਬਾਨਾਰਸਿ ਕੇ ਠਗ ॥੧॥

ਐਸੇ ਸੰਤ ਨ ਮੋ ਕਉ ਭਾਵਹਿ ॥
ਡਾਲਾ ਸਿਉ ਪੇਡਾ ਗਟਕਾਵਹਿ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਬਾਸਨ ਮਾਂਜਿ ਚਰਾਵਹਿ ਊਪਰਿ ਕਾਠੀ ਧੋਇ ਜਲਾਵਹਿ ॥
ਬਸੁਧਾ ਖੋਦਿ ਕਰਹਿ ਦੁਇ ਚੂਲ੍ੇ ਸਾਰੇ ਮਾਣਸ ਖਾਵਹਿ ॥੨॥

ਓਇ ਪਾਪੀ ਸਦਾ ਫਿਰਹਿ ਅਪਰਾਧੀ ਮੁਖਹੁ ਅਪਰਸ ਕਹਾਵਹਿ ॥
ਸਦਾ ਸਦਾ ਫਿਰਹਿ ਅਭਿਮਾਨੀ ਸਗਲ ਕੁਟੰਬ ਡੁਬਾਵਹਿ ॥੩॥

ਜਿਤੁ ਕੋ ਲਾਇਆ ਤਿਤ ਹੀ ਲਾਗਾ ਤੈਸੇ ਕਰਮ ਕਮਾਵੈ ॥
ਕਹੁ ਕਬੀਰ ਜਿਸੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਭੇਟੈ ਪੁਨਰਪਿ ਜਨਮਿ ਨ ਆਵੈ ॥੪॥੨॥

पृ-४७६

आसा ॥

गज साढे तै तै धोतीआ तिहरे पाइनि तग ॥
गली जिना् जपमालीआ लोटे हथि निबग ॥
ओइ हरि के सँत न आखीअहि बानारसि के ठग ॥१॥

ऐसे सँत न मो कउ भावहि ॥
डाला सिउ पेडा गटकावहि ॥१॥रहाउ ॥

बासन मांजि चरावहि ऊपरि काठी धोइ जलावहि ॥
बसुधा खोदि करहि दुइ चूले् सारे माणस खावहि ॥२॥

ओइ पापी सदा फिरहि अपराधी मुखहु अपरस कहावहि ॥
सदा सदा फिरहि अभिमानी सगल कुटंब डुबावहि ॥३॥

जितु को लाइआ तित ही लागा तैसे करम कमावै ॥
कहु कबीर जिसु सतिगुरु भेटै पुनरपि जनमि न आवै ॥४॥२॥

राग आसा बानी भगता की
कबीर जीओ, नाम देव जीओ, रवि दास जीओ
आसा

इस शब्द में कबीर जी हमें उन ढोंगियों के विषय में चेतावनी देते हैं जो देखने सुनने में तो साधु संतों जैसा वेष तथा व्यवहार प्रकट करते हैं पर वास्तव में वह कपटी हैं और हर प्रकार से लूटना चाहते हैं । उस समय बहुधा अनेक बहुरुपिये ब्राह्मण का वेष धारण कर तीर्थ स्थानों, जैसे बनारस (पवित्र काशी नगरी)आदि में विचरण किया करते थे ।
ऐसे ढोंगी लोगों के व्यवहार पर कबीर जी का कहना है "(यद्दिप, यह लोग) साढ़े तीन गज की धोती तथा तीन धागों वाले जनेऊ पहने, गले में माला तथा हाथ में चमकते हुये लोटे पकड़े हैं(पर मेरे विचार में) उन्हें हरि के संत अथवा भक्त नहीं कहना चाहिये (वास्तव में) वह बनारस के ठग हैं "।(१)

इन बनावटी संतों के लिये कबीर जी कहते हैं " ऐसे (पाखंडी) संत मुझे बिलकुल नहीं भाते (जो न केवल जनता का धन लूटते हैं, उनका जीवन भी समाप्त कर देते हैं, अर्थात्) शाखा के साथ साथ पूरा वृक्ष ही गटक जाते हैं "। (१- विराम)

ऐसे लोगों के चरित्र पर कबीर जी आगे कहते हैं " (जनता को दिखाने के लिये कि वह कितने पवित्र एवं सदाचारी हैं) वह धरती खोद कर दो चूल्हे बनाते हैं, उन पर वह भली प्रकार से माँज कर बरतन चढ़ाते हैं, यहाँ तक कि चूल्हे में लकड़ी भी धोकर जलाते हैं।(परन्तु वास्तविक जीवन में वह इतने क्रूर और हृदयहीन हैं कि केवल लोगों से उनका धन तथा मूल्यवान सामान ही नहीं लूटते, वह उन्हें प्राय: मार कर शव को इतना क्षत विक्षत कर देते हैं, जैसे कि) पूरे मनुष्य शरीर का भक्षण कर लिया हो "।(२)

अब इन दुष्ट ठगों के व्यवहार तथा दुर्भाग्य पर कबीर जी व्यक्त करते हैं " ऐसे पापी चारों ओर घूमते रहते हैं (नये भोले शिकार की भाल में, परन्तु लोगों के बीच में) वह स्वयं को 'अपरस ' कहते हैं (अपरस-जो सांसारिक धन सम्पदा का स्पर्श भी न करता हो)।वह सदैव अभिमानयुक्त रूप में विचरण करते हैं(परिणामस्वरूप न केवल वह स्वयं, अपितु) अपने समस्त कुटुँब को भी डूबो देते हैं "।(३)

फिर भी, कबीर जी एक सच्चे संत की भाँति ऐसे लोगों पर दयालुता से विचार करते हैं और उनके ऐसे चरित्र का मूल कारण समझते हुये कहते हैं "(एक प्रकार से यह लोग असहाय हैं, कि) जिस धंधे में भी (प्रभु ने)मनुष्य को लगाया है वह उसी में व्यस्त है और वैसे ही कर्म करता है । अत: कबीर कहते हैं कि जो मनुष्य सच्चे गुरु से मिलता है (और उसके उपदेश का पालन करता है तथा प्रभु नाम का ध्यान सच्चाई से करता है) वह पुन: जन्म नहीं लेता है "। (४-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि संसार में अनेक ठग और कपटी लोग साधु संतों के छद्म वेष में घूम रहे हैं, परन्तु हमें उनके गुण और दोष सिद्ध करने में समय नष्ट नहीं करना चाहिये । अपितु, हमें सच्चे गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) के उपदेश को मान कर प्रभु नाम का प्रेम तथा श्रद्धा से ध्यान करना चाहिये जो जन्म मरण के चक्र में से मुक्ति दिलाने में सहायक होगा ।

ਪੰਨਾ ੪੭੭	**पृ-४७७**
ਆਸਾ ॥	**आसा ॥**
ਜਬ ਲਗੁ ਤੇਲੁ ਦੀਵੇ ਮੁਖਿ ਬਾਤੀ ਤਬ ਸੂਝੈ ਸਭੁ ਕੋਈ ॥	जब लगु तेलु दीवे मुखि बाती तब सूझै सभु कोई ॥
ਪੰਨਾ ੪੭੮	**प ४७८**
ਤੇਲ ਜਲੇ ਬਾਤੀ ਠਹਰਾਨੀ ਸੂੰਨਾ ਮੰਦਰੁ ਹੋਈ ॥੧॥	तेल जले बाती ठहरानी सूँना मंदरु होइ ॥१॥
ਰੇ ਬਉਰੇ ਤੁਹਿ ਘਰੀ ਨ ਰਾਖੈ ਕੋਈ ॥ ਤੂੰ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਜਪਿ ਸੋਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	रे बउरे तुहि घरी न राखै कोई ॥ तूँ राम नामु जपि सोई ॥१॥रहाउ॥
ਕਾ ਕੀ ਮਾਤ ਪਿਤਾ ਕਹੁ ਕਾ ਕੋ ਕਵਨ ਪੁਰਖ ਕੀ ਜੋਈ ॥ ਘਟ ਫੂਟੇ ਕੋਊ ਬਾਤ ਨ ਪੂਛੈ ਕਾਢਹੁ ਕਾਢਹੁ ਹੋਈ ॥੨॥	का की मात पिता कहु का को कवन पुरख की जोई ॥ घट फूटे कोऊ बात न पूछै काढहु काढहु होई ॥२॥
ਦੇਹੁਰੀ ਬੈਠੀ ਮਾਤਾ ਰੋਵੈ ਖਟੀਆ ਲੇ ਗਏ ਭਾਈ ॥ ਲਟ ਛਿਟਕਾਏ ਤਿਰੀਆ ਰੋਵੈ ਹੰਸੁ ਇਕੇਲਾ ਜਾਈ ॥੩॥	देहुरी बैठी माता रोवै खटीआ ले गए भाई ॥ लट छिटकाए तिरीआ रोवै हँसु इकेला जाई ॥३॥
ਕਹਤ ਕਬੀਰ ਸੁਨਹੁ ਰੇ ਸੰਤਹੁ ਭੈ ਸਾਗਰ ਕੈ ਤਾਈ ॥ ਇਸੁ ਬੰਦੇ ਸਿਰਿ ਜੁਲਮੁ ਹੋਤ ਹੈ ਜਮੁ ਨਹੀ ਹਟੈ ਗੁਸਾਈ ॥੪॥੯॥	कहत कबीर सुनहु रे सँतहु भै सागर कै ताई ॥ इसु बँदे सिरि जुलमु होत है जमु नही हटै गुसाई ॥४॥९॥

आसा

इस शब्द में कबीर जी हमें निश्चयात्मक रूप से आने वाली मृत्यु का स्मरण कराते हैं और सचेत करते हैं कि हम अपने सम्बन्धियों तथा मित्रो के प्रेम में मग्न होकर कोई दुष्कर्म अथवा पाप न कमायें।

मानव शरीर को एक दीपक तथा जीवन में श्वासों की तेल तथा बाती से तुलना करते हुये कबीर जी हमें सम्बोधित करते हैं "(हे' प्राणी), जब तक दीपक में तेल और बाती है तब तक सब कुछ दिखाई देता है। किन्तु जब सारा तेल जल जाता है तो बाती बुझ जाती है और तब सारा घर अंधकारमय एवं सुनसान हो जाता है, (इसी प्रकार जब तक शरीर में श्वास हैं और प्राणी जीवित है तब तक उसे सब कुछ अपना लगता है, परन्तु जब श्वास समाप्त हो जाते हैं, तब निष्प्राण शरीर कुछ देख सुन तथा कर नहीं पाता है)" ।(१)

मृत्यु के पश्चात प्राणी की असहाय दशा पर कबीर जी परामर्श देते हैं "हे' बावरे प्राणी, मृत्यु के पश्चात तुम्हें कोई एक घड़ी भर भी घर में नहीं रखता। इसलिये तुम प्रभु नाम का जाप करो (वही केवल तुम्हारे साथ जायेगा)"।(१- विराम)

मृत्यु के पश्चात दाह संस्कार के समय पर कबीर जी का कथन है " जब(जीवन रूपी) घड़ा टूट जाता है (अर्थात जब मनुष्य की मृत्यु हो जाती है, तब तुरंत ही) कोई कुछ और बात नहीं पूछता और सब पार्थिव शरीर को घर से निकाल कर ले जाने की बात करते हैं। मुझे बताओ, कौन उस समय विचारता है कि यह (मृतक) किसकी माता, पिता या किसका पति या पत्नी है "।(२)

सगे सम्बन्धियों तथा मृत आत्मा की दशा पर कबीर जी टिप्पणी करते हैं "घर की देहरी पर बैठी माता रो रही है, जबकि भाई (और अन्य सम्बन्धी एवं मित्र मृतक की) अर्थी को शमशान भूमि ले जाते हैं ; पत्नी बाल खोले विलाप कर रही है, जब कि (बेचारी) मृतात्मा अकेली ही (दूसरे संसार की यात्रा पर) जा रही है "।(३)

मानव जीवन में इतने हृदय विदारक दृष्य बारम्बार देखने पर कबीर जी अति भावनात्मक रूप से व्यक्त करते हैं "सुनो, हे' संतों, कबीर कहता है, इस भयावह भवसागर (जिसे मनुष्य अपना समझता है तथा अनेक दुष्कर्म एवं पाप कमाता है) से जाने के समय (मृत्यु के समय) मनुष्य को अति क्रूर दंड मिलता है, ओ' गुसाँई, उस समय यमराज मनुष्य को यातना देने से पीछे नहीं हटते "।(४-९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमारे सम्बंधी एवं मित्र हमें तभी तक प्यार करते हैं जब तक शरीर में प्राण हैं। जैसे ही हम अंतिम साँस लेते हैं, कोई नहीं रखना चाहता और तब केवल हमारी आत्मा ही हमारे कमाये उन पाप तथा दुष्कर्मों का दंड झेलती है, जो हमने अपने लिये या परिवार तथा मित्रो के लिये किये होते हैं।इसलिये, अपने तथा अन्य प्रिय जनों के लिये सांसारिक झमेलों में अधिक ग्रस्त होने की अपेक्षा हमें प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिए जो केवल अँत में हमारे साथ जायेगा और हमारा सहायक बनेगा।

ਪੰਨਾ ੪੭੯

ਆਸਾ ॥

ਕਾਹੂ ਦੀਨ੍ਹੇ ਪਾਟ ਪਟੰਬਰ ਕਾਹੂ ਪਲਘ ਨਿਵਾਰਾ ॥
ਕਾਹੂ ਗਰੀ ਗੋਦਰੀ ਨਾਹੀ ਕਾਹੂ ਖਾਨ ਪਰਾਰਾ ॥੧॥

ਅਹਿਰਖ ਵਾਦੁ ਨ ਕੀਜੈ ਰੇ ਮਨ ॥
ਸੁਕ੍ਰਿਤੁ ਕਰਿ ਕਰਿ ਲੀਜੈ ਰੇ ਮਨ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕੁਮ੍ਹਾਰੈ ਏਕ ਜੁ ਮਾਟੀ ਗੂੰਧੀ ਬਹੁ ਬਿਧਿ ਬਾਨੀ ਲਾਈ ॥
ਕਾਹੂ ਮਹਿ ਮੋਤੀ ਮੁਕਤਾਹਲ ਕਾਹੂ ਬਿਆਧਿ ਲਗਾਈ ॥੨॥

ਸੂਮਹਿ ਧਨੁ ਰਾਖਨ ਕਉ ਦੀਆ ਮੁਗਧੁ ਕਹੈ ਧਨੁ ਮੇਰਾ ॥

ਪੰਨਾ ੪੮੦

ਜਮ ਕਾ ਡੰਡੁ ਮੂੰਡ ਮਹਿ ਲਾਗੈ ਖਿਨ ਮਹਿ ਕਰੈ ਨਿਬੇਰਾ ॥੩॥

ਹਰਿ ਜਨੁ ਊਤਮੁ ਭਗਤੁ ਸਦਾਵੈ ਆਗਿਆ ਮਨਿ ਸੁਖੁ ਪਾਈ ॥
ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਸਤਿ ਕਰਿ ਮਾਨੈ ਭਾਣਾ ਮੰਨਿ ਵਸਾਈ ॥੪॥

ਕਹੈ ਕਬੀਰੁ ਸੁਨਹੁ ਰੇ ਸੰਤਹੁ ਮੇਰੀ ਮੇਰੀ ਝੂਠੀ ॥
ਚਿਰਗਟ ਫਾਰਿ ਚਟਾਰਾ ਲੈ ਗਇਓ ਤਰੀ ਤਾਗਰੀ ਛੂਟੀ ॥੫॥੩॥੧੬॥

पृ-४७९

आसा ॥

काहू दीने् पाट पटँबर काहू पलघ निवारा ॥
काहू गरी गोदरी नाही काहू खान परारा ॥१॥

अहिरख वादु न कीजै रे मन ॥
सुकृितु करि करि लीजै रे मन ॥१॥ रहाउ॥

कुमा्रै एक जु माटी गूँधी बहु बिधि बानी लाई ॥
काहू महि मोती मुकताहल काहू बिआधि लगाई ॥२॥

सूमहि धनु राखन कउ दीआ मुगधु कहै धनु मेरा ॥

प ४८०

जम का डंडु मूँड महि लागै खिन महि करै निबेरा ॥३॥

हरि जनु ऊतमु भगतु सदावै आगिआ मनि सुखु पाई ॥
जो तिसु भावै सति करि मानै भाणा मँनि वसाई ॥४॥

कहै कबीरू सुनहु रे सँतहु मेरी मेरी झूठी ॥
चिरगट फारि चटारा लै गइओ तरी तागरी छूटी ॥५॥३॥१६॥

आसा श्री कबीर जीओ की आसा

इस शब्द में कबीर जी हमें दूसरे लोगों की सुख समृद्धि पर ईर्ष्या करने की अपेक्षा, एक सन्तुष्ट तथा कृतज्ञतापूर्ण जीवन जीने का पाठ पढ़ाते हैं ।

वह कहते हैं "(यह ईश्वर की इच्छा है कि) किसी को सुंदर रेशमी वस्त्र, किसी को निवाड़ से बने पलंग मिले हैं, जबकि किसी को पेवन लगी गुदड़ी भी नहीं मिलती, तथा किसी के घर में पुआल (बिछाकर सोने के लिए सूखा घास) है ।(१)

दूसरे लोगों के सुख विलास के प्रति ईर्ष्या भावना रखने की अपेक्षा, कबीर जी अपने मन को ही समझाने के लिये कहते हैं " हे' मेरे मन तुम ईर्ष्या तथा असन्तोष में मत बड़बड़ायो जो भी तुम्हें ईश्वर देता है, तुम वही बारम्बार कृतज्ञ भाव से स्वीकार करो "।(१-विराम)

मनुष्यों के भाग्य तथा धन सम्पदा में इतना अधिक अंतर कैसे है, इस पर कबीर जी एक सुंदर उदाहरण देते हुये समझाते हैं और कहते हैं " एक कुम्हार एक ही प्रकार की गुँधी मिट्टी से विभिन्न प्रकार के रंग बिरंगे बर्तन बनाता है । यह भाग्य ही है कि किसी बर्तन में मोती और मोतियों के हार रखे जाते हैं, जबकि किसी दूसरे बर्तन में कुछ त्रुटि रह जाती है (तथा उसमें बेकार वस्तुयें रख दी जाती हैं)"।(२)

अब कबीर जी धन का संचय करने वाले कृपण अथवा लोभी व्यक्तियों के भाग्य के अंत पर कहते हैं "(प्राय: प्रभु) कृपण व्यक्ति को धन सुरक्षित रूप से रखने को देते हैं (किसी ग़रीब की सहायता के लिये), किन्तु वह मूर्ख धन के नशे में मुग्ध होकर सोचता है कि सारा धन मेरा है । परन्तु जब यमराज का डंडा सिर पर लगता है तब एक क्षण में ही निर्णय हो जाता है (कि वह धन सम्पदा उस कृपण की कभी भी नहीं है)"।(३)

प्रभु के एक सच्चे भक्त का व्यवहार कैसा होना चाहिये, इस पर कबीर जी कहते हैं " वह मनुष्य जो प्रभु के दास के समान रहता है और प्रभु की आज्ञा को स्वीकार करके मन में सुख पाता है वह प्रभु का उत्तम भक्त कहलाता है । जो प्रभु को भाता है उसे भक्त सत्य करके मानता है और जो हो रहा है उसे प्रभु की इच्छा मान कर अपने मन में स्वीकार करता है ।(४)

अँत में कबीर जी व्यक्त करते हैं " ओ' मेरे प्रिय संतो, सुनो, मेरा कहना है कि सभी लोभवश प्रत्येक वस्तु के लिए 'मेरी' 'मेरी' करते हैं, जो कि एक मिथ्या भाव है (क्योंकि, यह सब सदा नहीं रहता, जैसे कि) पिंजरा खोल कर बिलार उसके अंदर बंद चिड़िया को चट कर जाता

है और चिड़िया का दाना पानी वहीं छूट जाता है ।(इसी प्रकार, मृत्यु शरीर पर हावी होकर आत्मा को हर लेती है और मनुष्य की समस्त धन सम्पदा पीछे छूट जाती है ”।(५-३-१६)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें यह सोच कर दुखी नहीं होना चाहिये कि कोई कितना धन अर्जित कर रहा है अथवा किसके पास कितने सुख विलास के साधन हैं ।हमें जो भी प्रभु ने दिया है उसके लिये हमें प्रभु के प्रति आभारी होना चाहिये, तथा उसके दिये धन धान्य को ग़रीबों में बाँटना चाहिये। सदा प्रभु के नाम का ध्यान करना चाहिये, क्योंकि अंत में प्रभु नाम के अतिरिक्त कुछ भी हमारे साथ नहीं जायेगा ।

ਪੰਨਾ ੪੮੧

ਬਾਈਸ ਚਉਪਦੇ ਤਥਾ ਪੰਚਪਦੇ ਆਸਾ
ਸ੍ਰੀ ਕਬੀਰ ਜੀਉ ਕੇ ਤਿਪਦੇ ੮ ਦੁਤੁਕੇ ੭ ਇਕਤੁਕਾ ੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਬਿੰਦੁ ਤੇ ਜਿਨਿ ਪਿੰਡੁ ਕੀਆ ਅਗਨਿ ਕੁੰਡ ਰਹਾਇਆ ॥
ਦਸ ਮਾਸ ਮਾਤਾ ਉਦਰਿ ਰਾਖਿਆ ਬਹੁਰਿ ਲਾਗੀ ਮਾਇਆ ॥੧॥

ਪ੍ਰਾਨੀ ਕਾਹੇ ਕਉ ਲੋਭਿ ਲਾਗੇ ਰਤਨ ਜਨਮੁ ਖੋਇਆ ॥
ਪੂਰਬ ਜਨਮਿ ਕਰਮ ਭੂਮਿ ਬੀਜੁ ਨਾਹੀ ਬੋਇਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਬਾਰਿਕ ਤੇ ਬਿਰਧਿ ਭਇਆ ਹੋਨਾ ਸੋ ਹੋਇਆ ॥
ਜਾ ਜਮੁ ਆਇ ਝੋਟ ਪਕਰੈ ਤਬਹਿ ਕਾਹੇ ਰੋਇਆ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੪੮੨

ਜੀਵਨੈ ਕੀ ਆਸ ਕਰਹਿ ਜਮੁ ਨਿਹਾਰੈ ਸਾਸਾ ॥
ਬਾਜੀਗਰੀ ਸੰਸਾਰੁ ਕਬੀਰਾ ਚੇਤਿ ਢਾਲਿ ਪਾਸਾ ॥੩॥੧॥੨੩॥

पृ-४८१

बाईस चउपदे तथा पंचपदे आसा
श्री कबीर जीउ के तिपदे ८ दुतुके ७ इकतुका १

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

बिँदु ते जिनि पिँडु कीआ अगनि कुँड रहाइआ ॥
दस मास माता उदरि राखिआ बहुरि लागी माइआ ॥१॥

प्रानी काहे कउ लोभि लागे रतन जनमु खोइआ ॥
पूरब जनमि करम भूमि बीजु नाही बोइआ ॥१॥रहाउ॥

बारिक ते बिरधि भइआ होना सो होइआ ॥
जा जमु आइ झोट पकरै तबहि काहे रोइआ ॥२॥

पृ-४८२

जीवनै की आस करहि जमु निहारै सासा ॥
बाजीगरी सँसारु कबीरा चेति ढालि पासा ॥३॥१॥२३॥

आसा, श्री कबीर जी
तिपदे ८, दो-तुके ७, इक तुका १

इस शब्द में कबीर जी संक्षेप में जीवन की वास्तविकता के विषय में बात करते हैं और हमें परामर्श देते हैं कि मानव जीवन के सुअवसर को न गँवा कर हमें प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये जिससे हम जन्म मरण के फेरों से मुक्ति पा सकें ।

हमें सम्बोधित करते हुये कबीर जी कहते हैं "(हे' प्राणी, प्रभु ने) तुम्हारा शरीर (पिता के) बिंदु से सृजित किया, तथा तुम अग्नि कुंड (माता के गर्भ) में रहे । दस मास तक माता के गर्भ में (तुम्हें प्रभु ने सुरक्षित) रखा । (परन्तु जैसे ही तुम गर्भ से बाहर आये, तुम उस प्रभु को भूल गये) फिर से माया के (सांसारिक मोहमाया) साथ व्यस्त हो गये "।(१)

इसलिये, कबीर जी हमें तनिक क्रोध भाव से पूछते हैं " (हे प्राणी), तुमने क्यों लोभ लालच में फँस कर अपना रत्न समान जन्म (अमूल्य मानव जीवन) गँवा दिया । (ऐसा प्रतीत होता है कि) तुमने पूर्व जन्म में अपनी कर्म भूमि में (प्रभु नाम का) बीज नहीं बोया "।(१- विराम)

अब, कबीर जी हमें सावधान करते हैं कि यदि हम प्रभु नाम में अपना ध्यान नहीं लगाते हैं तो वर्तमान जीवन पद्धति में रहने के क्या परिणाम होगें । वह कहते हैं "(हे' प्राणी), तुम एक बालक से बड़े होकर वृद्ध हो गये हो, जो होना था वही हुया ।(परन्तु, यदि अभी भी तुम प्रभु नाम का ध्यान नही करते हो) तब क्यों रोते हो जब यमराज आकर तुम्हें बालों से पकड़ते हैं "।(२)

वृद्ध हो जाने के पश्चात भी और अधिक जीवित रहने की इच्छा पर कबीर जी हमें सतर्क करते हुये कहते हैं " (हे' प्राणी, इतना वृद्ध होने पर भी) तुम और अधिक जीने की आशा करते हो, किन्तु यमराज तो तुम्हारे (अंतिम) साँसों को निहार रहे हैं ।कबीर कहता है हे' प्राणी, यह संसार एक बाज़ीगर का खेल है, (इसलिये) अपना पासा पूरे ध्यान से फेंको (और अपनी पारी को सतर्कता से खेलो जिससे कि तुम जीवन की बाज़ी न हारो और जन्म मरण के दुखों को न सहो)"।(३--२३)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम अपने पूर्व तथा वर्तमान मानव जन्म को अभी तक झूठे सांसारिक सुख सुविधा की भाल में व्यर्थ करते रहे हैं । हमें यह विचारना चाहिये कि मृत्यु किसी भी समय आकर पकड़ सकती है । इसलिए इस मानव जन्म में हमें प्रभु नाम के ध्यान का पूर्ण लाभ लेना चाहिए जिससे कि हम एक पवित्र और सदाचारी जीवन जियें और ईश्वर ने मानव देह का जो सुअवसर हमें प्रदान किया है उसे पूर्व जन्मों की भाँति नष्ट ना करके जन्म-मरण के दुखद फेरों में से मुक्त होने के लिए उपयोग में लायें ।

ਪੰਨਾ ੪੮੪

ਆਸਾ ॥

ਪਹਿਲੀ ਕਰੂਪਿ ਕੁਜਾਤਿ ਕੁਲਖਨੀ ਸਾਹੁਰੈ ਪੇਈਐ ਬੁਰੀ ॥
ਅਬ ਕੀ ਸਰੂਪਿ ਸੁਜਾਨਿ ਸੁਲਖਨੀ ਸਹਜੇ ਉਦਰਿ ਧਰੀ ॥੧॥

ਭਲੀ ਸਰੀ ਮੁਈ ਮੇਰੀ ਪਹਿਲੀ ਬਰੀ ॥
ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਜੀਵਉ ਮੇਰੀ ਅਬ ਕੀ ਧਰੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕਹੁ ਕਬੀਰ ਜਬ ਲਹੁਰੀ ਆਈ ਬਡੀ ਕਾ ਸੁਹਾਗੁ ਟਰਿਓ ॥
ਲਹੁਰੀ ਸੰਗਿ ਭਈ ਅਬ ਮੇਰੈ ਜੇਠੀ ਅਉਰੁ ਧਰਿਓ॥੨॥੨॥੩੨॥

पृ-४८४

आसा

पहिली करूपि कुजाति कुलखनी साहुरै पेइऐ बुरी ॥
अब की सरूपि सुजानि सुलखनी सहजे उदरि धरी ॥१॥

भली सरी मुई मेरी पहिली बरी ॥
जुगु जुगु जीवउ मेरी अब की धरी ॥१॥रहाउ॥

कहु कबीर जब लहुरी आई बडी का सुहागु टरिओ ॥
लहुरी सँगि भई अब मेरै जेठी अउरु धरिओ ॥२॥२॥३२॥

आसा

इस शब्द में कबीर जी अपने मन की वर्तमान जाग्रत अवस्था की तुलना अपनी पूर्व की अज्ञानी अवस्था से एक अति सुंदर उदाहरण द्वारा करते हैं जिसमें वह अपनी अज्ञानता की अवस्था को पहली पत्नी और वर्तमान जाग्रत दशा को अपनी दूसरी पत्नी की समानता देते हैं ।

उपरोक्त रूपक के अनुसार, कबीर जी कहते हैं " (मेरी पूर्व अज्ञानी अवस्था तथा दुर्बुद्धि) मेरी पहली कुरूप, निम्न जाति तथा कुलक्षणी पत्नी की भाँति थी जो अपने ससुराल और मायके के घरों में बुरी समझी जाती थी । किन्तु, मेरी वर्तमान (चेतन अथवा जागरूक स्थिति) एक सुंदर, बुद्धिमती तथा सुलक्षणी पत्नी की भाँति है और उसे मैंने सहज ही में अपने हृदय में बसा लिया है "।(१)

अपनी पूर्व अज्ञानी अवस्था को त्यागने पर कबीर जी प्रसन्नता प्रकट करते हुये कहते हैं " कितना भला है कि मैंने अपनी पूर्व (अज्ञानी) दशा से मुक्ति पा ली है, जैसे कि मेरी पहली पत्नी की मृत्यु हो गयी हो । (अब मेरी प्रार्थना है कि) मेरी वर्तमान नयी पत्नी (जागृत अवस्था) युगों युगों तक जीवित रहे "।(१- विराम)

शब्द का अंत वह इस विचार से करते है " कबीर कहता है, जब नयी छोटी पत्नी आ गयी, तब बड़ी पत्नी (इतनी असंगत हो गयी, जैसे कि उस) का सुहाग ही समाप्त हो गया है ।(क्योंकि) अब छोटी सदा मेरे साथ रहती है तथा बड़ी किसी और के साथ ब्याही गयी है ।(दूसरे शब्दों में कबीर जी अब मन की नयी जागृत तथा धर्मपरायण अवस्था में पूर्ण प्रसन्नता पा रहे हैं और पहले वाली कुबुद्धि की दशा उन्हें छोड़ किसी अन्य को पीड़ित कर रही है "।(२-२-३२)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम मानव जीवन में लाभ प्राप्त करना चाहते हैं तो मन में से अहम और अज्ञानता का त्याग कर देना चाहिए और फिर अपने गुरु से सच्चा ज्ञान और सुबुद्धि पाकर प्रभु नाम में लीन रहना चाहिए, केवल तभी हम जीवन को सार्थक अथवा सफल कर सकेंगे

ਪੰਨਾ ੪੮੫

ਆਸਾ ॥

ਸਾਪੁ ਕੁੰਚ ਛੋਡੈ ਬਿਖੁ ਨਹੀ ਛਾਡੈ ॥
ਉਦਕ ਮਾਹਿ ਜੈਸੇ ਬਗੁ ਧਿਆਨੁ ਮਾਡੈ ॥੧॥

ਕਾਹੇ ਕਉ ਕੀਜੈ ਧਿਆਨੁ ਜਪੰਨਾ ॥
ਜਬ ਤੇ ਸੁਧੁ ਨਾਹੀ ਮਨੁ ਅਪਨਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਿੰਘਚ ਭੋਜਨੁ ਜੋ ਨਰੁ ਜਾਨੈ ॥
ਐਸੇ ਹੀ ਠਗਦੇਉ ਬਖਾਨੈ ॥੨॥

ਨਾਮੇ ਕੇਸੁਆਮੀ ਲਾਹਿ ਲੇ ਝਗਰਾ ॥

ਪੰਨਾ ੪੮੬

ਰਾਮ ਰਸਾਇਨ ਪੀਉ ਰੇ ਦਗਰਾ ॥੩॥੪॥

पृ-४८५

आसा ॥

सापु कुँच छोडै बिखु नही छाडै ॥
उदक माहि जैसे बगु धिआनु माडै ॥१॥

काहे कउ कीजै धिआनु जपँना ॥
जब ते सुधु नाही मनु अपना ॥१॥रहाउ ॥

सिँघच भोजनु जो नरु जानै ॥
ऐसे ही ठगदेउ बखानै ॥२॥

नामे के सुआमी लाहि ले झगरा ॥

पृ-४८६

राम रसाइन पीउ रे दगरा ॥३॥४॥

आसा

इस शब्द में भक्त नामदेव जी उन छली कपटी लोगों के चरित्र का वर्णन करते हैं जो साधुयों के वेष में स्वयं को पवित्र दिखाने का ढोंग करते हैं, परन्तु अँतरमन से वह वैसे ही झूठे तथा धोखेबाज़ रहते हैं । किन्तु नामदेव जी अन्य प्रभु भक्तों के समान ऐसे कपटी लोगों पर सीधा प्रहार नहीं करते हैं अपितु, परोक्ष रुप से वह स्वयं को उसी प्रकार की श्रेणी में रख कर हम सभी को ऐसी छलयुक्त और दिखावे से भरी प्रभु की पूजा एवं भक्ति के विरोध का परामर्श देते हैं । पहले वह झूठे अथवा कपटी प्रकार के प्रदर्शन के दो उदाहरण देते हुये कहते हैं “साँप अपनी केंचुली छोड़ देता है पर अपना विष नहीं त्यागता। (इसी प्रकार, एक मनुष्य आँखें बंद करके बेशक प्रभु के ध्यान में बैठा रहे पर वास्तव में वह एक ऐसा) बगुला है जो ध्यान लगाये हुए पानी में खड़ा हुआ है (क्योंकि, उसका ध्यान एकाग्रता से पानी में अपना शिकार अथवा मछली पकड़ने में लगा है) । (१)

अत: प्रभु की ओर सच्चे ध्यान के लिये मन की पवित्रता पर ज़ोर देते हुये नामदेव जी कहते हैं “(हे ‘ मेरे मित्रो), प्रभु नाम का ध्यान अथवा जाप क्यों करते हो, यदि हमने पहले अपने मन को ही शुद्ध नहीं किया है ”।(१- विराम)

अब नामदेव जी इस विषय पर एक और दृष्टांत देते हैं “एक सिंह जो निर्दयता से अन्य जानवरों को मार कर अपना भोजन बनाता है, यदि मनुष्य उसी प्रकार की कठोरता करके अपनी जीविका कमाता है तो वह ठगों (के गिरोह)का मुखिया कहलाता है”।(२)

अंत में, नामदेव जी हमसे साझा करते है कि कैसे उन्होंने प्रभु के सम्मुख अपनी सच्चाई स्वीकार की, तथा कैसे उन्हें प्रभु ने सच्चे मार्ग दर्शन का आशीर्वाद दिया । वह कहते हैं “ नामदेव के स्वामी ने उसके अँतरमन की दुविधा (प्रभु भक्ति तथा जीविकोपार्जन के साधनों के बीच का द्वंद) ही समाप्त करदी और कहा, हे’ मेरे नन्हे कपटी, झगड़ा हटाओ, जाओ और तुम भी राम के नाम का अँमृत पीओ ”।(३-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें किसी अपवित्र अथवा असत्य धँधे को नहीं अपनाना चाहिए और यदि हमारा मन अंदर से खोटा है तो हमें पवित्रता का ढोंग नहीं करना चाहिए । जब भी हम प्रभु को सच्ची भावना से स्मरण करते हैं तो वह हमें अपने नाम का उपहार देते हैं जो हमारे अँतरमन की दुविधाओं को दूर करने में सहायक होता है ।

ਪੰਨਾ ੪੮੭	पृ-४८७
ਮਹਲਾ ੫ ॥	महला ५॥
ਗੋਬਿੰਦ ਗੋਬਿੰਦ ਗੋਬਿੰਦ ਸੰਗਿ ਨਾਮਦੇਉ ਮਨੁ ਲੀਣਾ ॥ ਆਢ ਦਾਮ ਕੋ ਛੀਪਰੋ ਹੋਇਓ ਲਾਖੀਣਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	गोबिँद गोबिँद गोबिँद सँगि नामदेउ मनु लीणा ॥ आढ दाम को छीपरो होइओ लाखीणा ॥१॥ रहाउ॥
ਬੁਨਨਾ ਤਨਨਾ ਤਿਆਗਿ ਕੈ ਪ੍ਰੀਤਿ ਚਰਨ ਕਬੀਰਾ ॥ ਨੀਚ ਕੁਲਾ ਜੋਲਾਹਰਾ ਭਇਓ ਗੁਨੀਯ ਗਹੀਰਾ ॥੧॥	बुनना तनना तिआगि कै प्रीति चरन कबीरा ॥ नीच कुला जोलाहरा भइओ गुनीय गहीरा ॥१
ਰਵਿਦਾਸੁ ਢੁਵੰਤਾ ਢੋਰ ਨੀਤਿ ਤਿਨਿ ਤਿਆਗੀ ਮਾਇਆ ॥ ਪਰਗਟੁ ਹੋਆ ਸਾਧਸੰਗਿ ਹਰਿ ਦਰਸਨੁ ਪਾਇਆ ॥੨॥	रविदासु ढुवँता ढोर नीति तिनि तिआगी माइआ ॥ परगटु होआ साधसँगि हरि दरसनु पाइया ॥२॥
ਸੈਨੁ ਨਾਈ ਬੁਤਕਾਰੀਆ ਓਹੁ ਘਰਿ ਘਰਿ ਸੁਨਿਆ ॥ ਹਿਰਦੇ ਵਸਿਆ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਭਗਤਾ ਮਹਿ ਗਨਿਆ ॥੩॥	सैनु नाई बुतकारीआ ओहु घरि घरि सुनिआ ॥ हिरदे वसिआ पारब्रहमु भगता महि गनिआ ॥३॥
ਪੰਨਾ ੪੮੮	पृ-४८८
ਇਹ ਬਿਧਿ ਸੁਨਿ ਕੈ ਜਾਟਰੋ ਉਠਿ ਭਗਤੀ ਲਾਗਾ ॥ ਮਿਲੇ ਪ੍ਰਤਖਿ ਗੁਸਾਈਆ ਧੰਨਾ ਵਡਭਾਗਾ ॥੪॥੨॥	इह बिधि सुनि कै जाटरो उठि भगती लागा ॥ मिले प्रतखि गुसाईआ धँना वडभागा ॥४॥२॥

महला – ५

इस शब्द में पंचम गुरु अर्जुन देव जी हमें बताते हैं कि किस प्रकार भक्त धन्ना जी (निम्न जाति के जाट) को प्रभु नाम के ध्यान की प्रेरणा मिली, तथा प्रभु के प्रति सच्ची श्रद्धा के परिणाम स्वरूप उनका कल्याण किस प्रकार से हुया ।

उपरोक्त प्रश्न के उत्तर के रूप में गुरु जी धन्ना जी के जीवन के कुछ प्रसंग बताते हैं । वह भक्त नामदेव जी के उदाहरण से आरंभ करते हुये कहते हैं “(धन्ना जी ने औरों से सुना कि) नामदेव जी का मन गोबिँद, गोबिँद नाम को रटने में लीन रहने लगा । (इसका परिणाम यह हुया कि यह निम्न जाति का कपड़े की छपाई करने वाला) जिसकी समाज में दो पैसे क़ीमत थी (अर्थात अति दरिद्र था), इतना प्रतिष्ठित हो गया जैसे कि वह लखपति हो गया हो ”।(१-विराम)

अब गुरु जी कबीर जी का उदाहरण देते हुये कहते हैं “कबीर (जो जुलाहे थे) अपना ताने बाने का काम त्याग कर प्रभु के चरण कमलों की प्रीत में रम गये ।(प्रभु भक्ति के परिणाम स्वरूप) एक निम्न जाति के जुलाहे ने इतने गुण प्राप्त कर लिये कि वह गुणों के गहरे सागर बन गये ”।(१)

गुरु जी अगला उदाहरण भक्त रविदास जी का देते हुये कहते हैं “(हे’ मेरे मित्रो), रविदास जो कि नित्य ही मृत्युप्राप्त ढोरों (गाय भैंसो) को ढोया करते थे, सब सांसारिक मोह माया को त्याग (प्रभु भक्ति में स्वयं को रमा कर) संतों की संगति में इतने बड़े हो गये, जैसे कि किसी ने प्रभु के दर्शन पा लिये हों ”।(२)

अंत में गुरु जी सैन नाई का उदाहरण देते हुये कहते हैं “सैन नाई जो छोटे मोटे काम किया करता था, जब उसने श्रेष्ठतम प्रभु को मन में बसा लिया तब उसके नाम का प्रसंग घर घर में सुना जाने लगा और उसकी गणना प्रभु के भक्तों में होने लगी ”।(३)

शब्द का अंत करते हुये गुरु जी कहते हैं कि इन सभी संत कथायों का प्रभाव धन्ना जी पर क्या पड़ा। वह कहते हैं “ (प्रभु भक्ति की विधि के) सत्य प्रसंग सुन कर धन्ना जाट को प्रोत्साहन मिला और वह स्वयं भी प्रभु भक्ति में जुट गया ।(परिणाम यह हुआ कि) उसको सृष्टि के स्वामी के साक्षात दर्शन हुए और इस प्रकार धन्ना अति भाग्यशाली रहा । (४-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि जिसने भी प्रभु नाम का ध्यान सच्चे प्रेम और निष्ठा से किया उसी ने प्रभु से मिलन होने पर संसार में प्रसिद्धि प्राप्त की ।

ਪੰਨਾ ੪੯੦	**पृ-४९०**
ਰਾਗੁ ਗੂਜਰੀ ਮਹਲਾ ੩ ਘਰੁ ੧	**रागु गूजरी महला ३ घर १**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਧ੍ਰਿਗੁ ਇਵੇਹਾ ਜੀਵਣਾ ਜਿਤੁ ਹਰਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਨ ਪਾਇ ॥ ਜਿਤੁ ਕੰਮਿ ਹਰਿ ਵੀਸਰੈ ਦੂਜੈ ਲਗੈ ਜਾਇ ॥੧॥	धिगु इवेहा जीवणा जितु हरि प्रीति न पाइ ॥ जितु कँमि हरि वीसरै दूजै लगै जाइ ॥१॥
ਐਸਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵੀਐ ਮਨਾ ਜਿਤੁ ਸੇਵਿਐ ਗੋਵਿਦ ਪ੍ਰੀਤਿ ਊਪਜੈ ਅਵਰ ਵਿਸਰਿ ਸਭ ਜਾਇ ॥	ऐसा सतिगुरु सेविऐ मना जितु सेविऐ गोविद प्रीति ऊपजै अवर विसरि सभ जाइ ॥
ਹਰਿ ਸੇਤੀ ਚਿਤੁ ਗਹਿ ਰਹੈ ਜਰਾ ਕਾ ਭਉ ਨ ਹੋਵਈ ਜੀਵਨ ਪਦਵੀ ਪਾਇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	हरि सेती चितु गहि रहै जरा का भउ न होवई जीवन पदवी पाइ ॥१॥ रहाउ ॥
ਗੋਬਿੰਦ ਪ੍ਰੀਤਿ ਸਿਉ ਇਕੁ ਸਹਜੁ ਉਪਜਿਆ ਵੇਖੁ ਜੈਸੀ ਭਗਤਿ ਬਨੀ ॥ ਆਪ ਸੇਤੀ ਆਪੁ ਖਾਇਆ ਤਾ ਮਨੁ ਨਿਰਮਲੁ ਹੋਆ ਜੋਤੀ ਜੋਤਿ ਸਮਈ ॥੨॥	गोबिँद प्रीति सिउ इकु सहजु उपजिआ वेखु जैसी भगति बनी ॥ आप सेती आपु खाइआ ता मनु निरमलु होआ जोती जोति समई ॥२॥
ਬਿਨੁ ਭਾਗਾ ਐਸਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਨ ਪਾਈਐ ਜੇ ਲੋਚੈ ਸਭੁ ਕੋਇ ॥ ਕੂੜੈ ਕੀ ਪਾਲਿ ਵਿਚਹੁ ਨਿਕਲੈ ਤਾ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਹੋਇ ॥੩॥	बिनु भागा ऐसा सतिगुरु न पाईऐ जे लोचै सभु कोइ ॥ कूड़ै की पालि विचहु निकलै ता सदा सुखु होइ ॥३॥
ਨਾਨਕ ਐਸੇ ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਕਿਆ ਓਹੁ ਸੇਵਕੁ ਸੇਵਾ ਕਰੇ ਗੁਰ ਆਗੈ ਜੀਉ ਧਰੇਇ ॥ ਸਤਿਗੁਰ ਕਾ ਭਾਣਾ ਚਿਤਿ ਕਰੇ ਸਤਿਗੁਰੁ ਆਪੇ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇਇ ॥੪॥੧॥੩॥	नानक ऐसे सतिगुर की किआ ओहु सेवकु सेवा करे गुर आगै जीउ धरेइ ॥ सतिगुर का भाणा चिति करे सतिगुरु आपे कृपा करेइ ॥४॥१॥३॥

गूजरी महला-३ घर-१
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि प्रभु को स्मरण करना कितना आवश्यक है और एक गुरु जो हमारी इस काम में सहायता करता है उसकी सेवा हम कैसे करें ।

गुरु जी पहले एक टिप्पणी के साथ आरंभ करते हैं । वह कहते हैं "ऐसा जीवन धिक्कार है जिसने हरि की प्रीति में स्वयं को नहीं लीन किया । वह काम धंधा भी धिक्कारित है, जिसमें प्रभु को भूल कर अन्य दुविधाओं में लगे रहो ।(१)

प्रभु को ना भुलाने के ढंग की प्रस्तावना (स्वयं तथा हमारे मन के लिये भी) करते हुये कहते हैं ओ' मेरे मन, हमें ऐसे सच्चे गुरु की सेवा करनी चाहिए जो हमारे अंदर गोविंद के प्रति इतना प्रेम उपजाये कि और सब कुछ बिसर जाये ।हरि के प्रति मन इतनी गहन भावना में रहे कि आत्मिक रूप से जीवन उच्च स्तर पा ले और हमें अपनी वृद्धावस्था का भय न सताये ".(१-विराम)

अब गुरु जी हमसे स्वयं का अनुभव साझा करते हैं कि जब उन्होंने अपने गुरु के मार्ग दर्शन का अनुसरण किया, तब क्या हुया ? वह कहते हैं "(गुरु ने मेरे मन में प्रभु प्रेम को जाग्रत किया और) मैं गोविँद की प्रीत में इतने अद्भुत प्रकार से लीन हुया कि मेरा मन एक सहज अवस्था में आ गया। (और जब) मैंने स्वेच्छा से अहम पर विजय पाई तो मेरा मन निर्मल हो गया, तथा मेरी जीवन ज्योति (प्रभु) की ज्योति में समा गयी ".(२)

अपने गुरु को हल्के में लेने के विरोध में गुरु जी हमें सावधान करते हुये कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), कोई कितनी भी अधिक कातरता से चाहे तब भी बिना सौभाग्य के सच्चा गुरु सभी को प्राप्त नहीं हो सकता।(गुरु को मिलने के पश्चात) आत्मा तथा परमात्मा के बीच की दीवार ढह जाती है और तब सदा के लिये सुख शांति होती है ".(३)

अंत में गुरु जी बताते हैं कि हम किस प्रकार ऐसे सच्चे गुरु की सेवा करें जो हमें प्रभु के निकट ले जाकर उससे मिलाता है । वह कहते हैं " (यदि तुम पूछते हो कि), ओ' नानक, किस प्रकार की सेवा गुरु के सेवक को सच्चे गुरु के लिये करनी चाहिये, जो उसे प्रभु से मिलाये? (इसका उत्तर यह है कि) वह अपना जीवन ही गुरु को समर्पित करदे। प्रभु की इच्छा को मन में बसा कर रखे तभी सच्चे गुरु स्वयं उस पर कृपा करते हैं (तथा उसे प्रभु की इच्छा प्रसन्नता से स्वीकार करने का राह बताते हैं)".(४-१-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हमें प्रभु के प्रति सच्चा प्रेम है तो मन को सुख शांति प्राप्त होती है, परन्तु ऐसा सच्चा प्रेम सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन के द्वारा ही मन में उपजता है। इसलिये, हमें स्वयं को ऐसे गुरु के सम्मुख पूर्णतया समर्पित करते हुए अपनी श्रद्धा और आस्था के साथ उसके आदेश का पालन करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੪੯੧

ਗੂਜਰੀ ਮਹਲਾ ੩ ਪੰਚਪਦੇ ॥

ਨਾ ਕਾਸੀ ਮਤਿ ਊਪਜੈ ਨਾ ਕਾਸੀ ਮਤਿ ਜਾਇ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਮਿਲਿਐ ਮਤਿ ਊਪਜੈ ਤਾ ਇਹ ਸੋਝੀ ਪਾਇ ॥੧॥

ਹਰਿ ਕਥਾ ਤੂੰ ਸੁਣਿ ਰੇ ਮਨ ਸਬਦੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਇ ॥
ਇਹ ਮਤਿ ਤੇਰੀ ਥਿਰੁ ਰਹੈ ਤਾਂ ਭਰਮੁ ਵਿਚਹੁ ਜਾਇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਰਿ ਚਰਣ ਰਿਦੈ ਵਸਾਇ ਤੂ ਕਿਲਵਿਖ ਹੋਵਹਿ ਨਾਸੁ ॥
ਪੰਚ ਭੂ ਆਤਮਾ ਵਸਿ ਕਰਹਿ ਤਾ ਤੀਰਥ ਕਰਹਿ ਨਿਵਾਸੁ ॥੨॥

ਮਨਮੁਖਿ ਇਹੁ ਮਨੁ ਮੁਗਧੁ ਹੈ ਸੋਝੀ ਕਿਛੂ ਨ ਪਾਇ ॥
ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਨ ਬੁਝਈ ਅੰਤਿ ਗਇਆ ਪਛੁਤਾਇ ॥੩॥

ਇਹੁ ਮਨੁ ਕਾਸੀ ਸਭਿ ਤੀਰਥ ਸਿਮ੍ਰਿਤਿ ਸਤਿਗੁਰ ਦੀਆ ਬੁਝਾਇ ॥
ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਤਿਸੁ ਸੰਗਿ ਰਹਹਿ ਜਿਨ ਹਰਿ ਹਿਰਦੈ ਰਹਿਆ ਸਮਾਇ ॥੪॥

ਨਾਨਕ ਸਤਿਗੁਰ ਮਿਲਿਐ ਹੁਕਮੁ ਬੁਝਿਆ ਏਕੁ ਵਸਿਆ ਮਨਿ ਆਇ ॥
ਜੋ ਤੁਧੁ ਭਾਵੈ ਸਭੁ ਸਚੁ ਹੈ ਸਚੇਰਹੈ ਸਮਾਇ ॥੫॥੬॥੮॥

पृ-४९१

गूजरी महला ३ पँचपदे ॥

ना कासी मति ऊपजै ना कासी मति जाइ ॥
सतिगुर मिलिऐ मति ऊपजै ता इह सोझी पाइ ॥१॥

हरि कथा तूँ सुणि रे मन सबदु मँनि वसाइ ॥
इह मति तेरी थिरु रहै तां भरमु विचहु जाइ ॥१॥रहाउ॥

हरि चरण रिदै वसाइ तू किलविख होवहि नासु ॥
पँच भू आतमा वसि करहि ता तीरथ करहि निवासु ॥२॥

मनमुखि इहु मनु मुगधु है सोझी किछू न पाइ ॥
हरि का नामु न बुझई अँति गइआ पछुताइ ॥३॥

इहु मनु कासी सभि तीरथ सिमृति सतिगुर दीआ बुझाइ ॥
अठसठि तीरथ तिसु सँगि रहहि जिन हरि हिरदै रहिआ समाइ ॥४॥

नानक सतिगुर मिलिऐ हुकमु बुझिआ एकु वसिआ मनि आइ ॥
जो तुधु भावै सभु सचु है सचेरहै समाइ ॥५॥६॥८॥

गूजरी महला - ३
पँचपदे

इस शब्द में गुरु जी उन लोगों पर टिप्पणी करते हैं जिन्हें ऐसा विश्वास होता है कि काशी (जो बनारस के नाम से भी जाना जाता है) जैसे तीर्थ स्थान में रहने अथवा स्नान इत्यादि करने से वह दैवी ज्ञान पाकर पवित्र हो सकते हैं । परन्तु, गुरु जी यहाँ हमें यह बताते हैं कि हम कहाँ से दैवी ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और पवित्र जीवन जीने का सर्वोत्तम मार्ग क्या है ।

गुरु जी कहते हैं " (तीर्थ स्थानों पर रहने या स्नान करने से, जैसे कि) काशी में दैवी ज्ञान ना तो मन में उपजता है और ना ही वह चला जाता है । केवल सच्चे गुरु के मिलने पर (उसकी दैवी शिक्षा का पालन करने से) बुद्धि उपजती है और तब किसी को यह ज्ञानशक्ति प्राप्त होती है "।(१)

अत: अपने (हमारे भी) मन को निर्देश देते हुये गुरु जी कहते हैं "हे' मेरे मन, तुम हरि की कथा तथा उपदेश सुनो और उन शब्दों को मन में बसा लो, तभी तुम्हारे भ्रम एवं दुविधा मन में से जायेंगे और तुम्हारी यह बुद्धि शांत एवं स्थिर रहेगी "।(१-विराम)

उपरोक्त कथन के लाभ का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), यदि तुम हरि के चरण कमल अपने हृदय में बसा लो, तो तुम्हारे समस्त पापों तथा कष्टों का नाश हो जायेगा।यदि तुम्हारी आत्मा पाँचो प्रवृतियों को वश में कर लेती है तब तुम (अगम्य रूप से) तीर्थ (ईश्वर के निवास स्थान) में ही निवास करते हो"।(२)

किन्तु गुरु जी अपना मत प्रकट करते हैं "अंहकारी और स्वार्थी मनुष्य का मन बुद्धिहीन है, उसे आत्मिक रूप से कुछ सूझ नहीं पाता है। वह हरि के नाम का महत्व ही नहीं समझता तथा अंत में (इस संसार से) विदा होने के समय पश्चात्ताप करता हुया जाता है "। (३)

अब गुरु जी उस दैवी बुद्धि का वर्णन करते हैं जो किसी आत्मिक सूझ वाले को गुरु से प्राप्त होती है। वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), जिसको सच्चे गुरु ने (आत्मिक रूप से) सूझ (समझने की शक्ति) प्रदान की है, वह समझता है कि उसका मन ही काशी सहित सभी तीर्थों के समान है। जिसके हृदय में हरि समाये रहते हैं, समस्त अड़सठ तीर्थ स्थान उस मनुष्य के साथ ही रहते हैं "।(४)

अंत में गुरु जी कहते हैं "ओ' नानक, सच्चे गुरु से मिलने पर (तथा उसके उपदेशों का पालन करने से) प्रभु की इच्छा कोई समझने लगता है और फिर एक ही (प्रभु) उसके मन में आकर बस जाता है, तब वह मनुष्य कहने लगता है (हे' प्रभु) जैसा तुम्हें भाये वही सब सत्य है अवश्यंभावी है और ऐसे मनुष्य का मन सदैव उस सच्चे अनंत प्रभु में समाया रहता है ।(५-६-८)

इस शब्द का संदेश यह है कि तीर्थ स्थानों की यात्राओं अथवा वहाँ पर रहने से हमें विशेष प्रकार का आत्मिक ज्ञान नहीं प्राप्त होता । केवल, जब हम सच्चे गुरु के मिलने पर उसके निर्देशों की पालना और प्रभु नाम का ध्यान करते हैं तब हम वास्तविक रूप में सच्ची दैवी बुद्धि पाते हैं और अनंत प्रभु में रम जाते हैं ।

ਪੰਨਾ ੪੯੩	पृ-४९३
ਗੂਜਰੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥	**गूजरी महला ४॥**
ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਖੀ ਸਹੇਲੀ ਮੇਰੀ ਮੋ ਕਉ ਦੇਵਹੁ ਦਾਨੁ ਹਰਿ ਪ੍ਰਾਨ ਜੀਵਾਇਆ ॥ ਹਮ ਹੋਵਹ ਲਾਲੇ ਗੋਲੇ ਗੁਰਸਿਖਾ ਕੇ ਜਿਨ੍ਾ ਅਨਦਿਨੁ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਪੁਰਖੁ ਧਿਆਇਆ ॥੧॥	गुरमुखि सखी सहेली मेरी मो कउ देवहु दानु हरि प्रान जीवाइआ ॥ हम होवह लाले गोले गुरसिखा के जिना् अनदिनु हरि प्रभु पुरखु धिआइआ ॥१॥
ਮੇਰੈ ਮਨਿ ਤਨਿ ਬਿਰਹੁ ਗੁਰਸਿਖ ਪਗ ਲਾਇਆ ॥ ਮੇਰੇ ਪ੍ਰਾਨ ਸਖਾ ਗੁਰ ਕੇ ਸਿਖ ਭਾਈ ਮੋ ਕਉ ਕਰਹੁ ਉਪਦੇਸੁ ਹਰਿ ਮਿਲੈ ਮਿਲਾਇਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मेरै मनि तनि बिरहु गुरसिख पग लाइआ ॥ मेरे प्रान सखा गुर के सिख भाई मो कउ करहु उपदेसु हरि मिलै मिलाइआ ॥१॥रहाउ॥
ਪੰਨਾ ੪੯੪	**पृ-४९४**
ਜਾ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਭਾਵੈ ਤਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਮੇਲੇ ਜਿਨ੍ ਵਚਨ ਗੁਰੂ ਸਤਿਗੁਰ ਮਨਿ ਭਾਇਆ ॥ ਵਡਭਾਗੀ ਗੁਰ ਕੇ ਸਿਖ ਪਿਆਰੇ ਹਰਿ ਨਿਰਬਾਣੀ ਨਿਰਬਾਣ ਪਦੁ ਪਾਇਆ ॥੨॥	जा हरि प्रभ भावै ता गुरमुखि मेले जिन् वचन गुरू सतिगुर मनि भाइआ ॥ वडभागी गुर के सिख पिआरे हरि निरबाणी निरबाण पदु पाइआ ॥२॥
ਸਤਸੰਗਤਿ ਗੁਰ ਕੀ ਹਰਿ ਪਿਆਰੀ ਜਿਨ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਮੀਠਾ ਮਨਿ ਭਾਇਆ ॥ ਜਿਨ ਸਤਿਗੁਰ ਸੰਗਤਿ ਸੰਗੁ ਨ ਪਾਇਆ ਸੇ ਭਾਗਹੀਣ ਪਾਪੀ ਜਮਿ ਖਾਇਆ ॥੩॥	सतसँगति गुर की हरि पिआरी जिन हरि हरि नामु मीठा मनि भाइआ ॥ जिन सतिगुर सँगति सँगु न पाइआ से भागहीण पापी जमि खाइआ ॥३॥
ਆਪਿ ਕ੍ਰਿਪਾਲੁ ਕ੍ਰਿਪਾ ਪ੍ਰਭੁ ਧਾਰੇ ਹਰਿ ਆਪੇ ਗੁਰਮੁਖਿ ਮਿਲੈ ਮਿਲਾਇਆ ॥ ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਬੋਲੇ ਗੁਣ ਬਾਣੀ ਗੁਰਬਾਣੀ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਸਮਾਇਆ ॥੪॥੫॥	आपि किृपालु किृपा प्रभु धारे हरि आपे गुरमुखि मिलै मिलाइआ ॥ जनु नानकु बोले गुण बाणी गुरबाणी हरि नामि समाइआ ॥४॥५॥

गूजरी महला – ४

इस शब्द में गुरु जी हमें यह बताते हैं कि प्रभु के भक्त, जो गुरसिख (गुरु के शिष्य) कहलाते हैं उनका क्या महत्व है । साथ ही यह भी प्रकट करते हैं कि वह उनका कितना आदर करते हैं और उनसे क्या करने के लिए अपनी ओर से आग्रह करते हैं ।

ऐसे गुरसिखों से गुरु जी प्रार्थना करते हुये कहते हैं “ओ’ मेरे गुरसिख मित्रो तथा साथियों, मुझे प्रभु नाम का दान दो जो मेरे प्राणों को पुनर्जीवित करे, मैं उन गुरसिखों का सेवक तथा दास बन जाऊँगा, जिन्होंने दिन रात उस महामहिम प्रभु का ध्यान किया है ”।(१)

अब गुरु जी गुरसिखों से मिलाने के लिये प्रभु के प्रति आभार प्रकट करते हैं तथा गुरसिखों को विनयपूर्वक कहते हैं (ओ’ मेरे गुरसिख भाइयों, मैं प्रभु के प्रति आभारी हूँ क्योंकि) मेरे मन और तन में (प्रभु ने) गुरसिखों के चरणों के वास्ते प्रेम भर दिया है । हे’ मेरे गुरसिख भाइयों, तुम मुझे प्राणों जैसे प्रिय हो, मुझे ऐसा उपदेश दो कि तुम्हारे द्वारा हरि से मिल सकूँ ”।(१-विराम)

किन्तु, गुरु जी हमें सचेत करते हैं कि सच्चे गुरसिख से मिलना इतना सहज नहीं है । वह कहते हैं “ केवल जब प्रभु को भाता है, तभी वह गुरु के अनुयायियों से हमारा मिलाप करवाता है, तथा जिन्हें गुरु के वचन सुखद एवं मनभावन लगते हैं ।इसलिये, वह प्रिय गुरसिख अति भाग्यशाली हैं जिन्होंने निर्वाणप्राप्त हरि से निर्वाण पद प्राप्त कर लिया है ”।(२)

गुरु जी अब सतसँगति में रहने के लाभ एवं महत्व, तथा सतसँगति में न रहने पर होने वाली हानि का विवरण देते हुये कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो), गुरु की सतसंगति में जहाँ हरि का नाम मीठा तथा मनभावन लगता है वह हरि को प्रिय लगती है। किन्तु, जिन्हें सच्चे गुरु की सतसंगति का सानिध्य ही नहीं प्राप्त हुया वह भाग्यहीन हैं, पापी हैं तथा उनका भक्षण यमराज के द्वारा होता है (अर्थात उन्हें दंड मिलता है)”।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी एक बार और प्रभु की कृपा पर दृढ़ भाव से कहते हैं “ (हे’ मेरे मित्रो), जब दयालु प्रभु कृपा करते हैं तब वह स्वयं गुरु के द्वारा मनुष्य को मिलते हैं । यह सेवक, नानक भी प्रभु के गुणों से युक्त वाणी उच्चारित करते हैं, क्योंकि गुरुवाणी के उच्चारण से मनुष्य प्रभु नाम में विलीन हो जाता है ”।(४-५)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें सदा ईश्वर से यह प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें ऐसे गुरु के शिष्यों की सँगति का आशीर्वाद प्रदान करें जो प्रभु नाम में पहले से ही लीन रहते हों और उनके सानिध्य में हम भी सदैव प्रभु नाम का ध्यान अथवा उसकी स्तुति में कीर्तन गायन करते रहें और उस प्रभु में समाये रहें ।

ਪੰਨਾ ੪੯੫

ਗੂਜਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਹਰਿ ਧਨੁ ਜਾਪ ਹਰਿ ਧਨੁ ਤਾਪ ਹਰਿ ਧਨੁ ਭੋਜਨੁ ਭਾਇਆ ॥
ਨਿਮਖ ਨ ਬਿਸਰਉ ਮਨ ਤੇ ਹਰਿ ਹਰਿ ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਮਹਿ ਪਾਇਆ ॥੧॥

ਮਾਈ ਖਾਟਿ ਆਇਓ ਘਰਿ ਪੂਤਾ ॥
ਹਰਿ ਧਨੁ ਚਲਤੇ ਹਰਿ ਧਨੁ ਬੈਸੇ ਹਰਿ ਧਨੁ ਜਾਗਤ ਸੂਤਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਰਿ ਧਨੁ ਇਸਨਾਨੁ ਹਰਿ ਧਨੁ ਗਿਆਨੁ ਹਰਿ ਸੰਗਿ ਲਾਇ ਧਿਆਨਾ ॥
ਹਰਿ ਧਨੁ ਤੁਲਹਾ ਹਰਿ ਧਨੁ ਬੇੜੀ ਹਰਿ ਹਰਿ ਤਾਰਿਪਰਾਨਾ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੪੯੬

ਹਰਿ ਧਨ ਮੇਰੀ ਚਿੰਤ ਵਿਸਾਰੀ ਹਰਿ ਧਨਿ ਲਾਹਿਆ ਧੋਖਾ ॥
ਹਰਿ ਧਨ ਤੇ ਮੈ ਨਵ ਨਿਧਿ ਪਾਈ ਹਾਥਿ ਚਰਿਓ ਹਰਿ ਥੋਕਾ ॥੩॥

ਖਾਵਹੁ ਖਰਚਹੁ ਤੋਟਿ ਨ ਆਵੈ ਹਲਤ ਪਲਤ ਕੈ ਸੰਗੇ ॥
ਲਾਦਿ ਖਜਾਨਾ ਗੁਰਿ ਨਾਨਕ ਕਉ ਦੀਆ ਇਹੁ ਮਨੁ ਹਰਿ ਰੰਗਿ ਰੰਗੇ ॥੪॥੨॥੩॥

पृ-४९५

गूजरी महला ५ ॥

हरि धनु जाप हरि धनु ताप हरि धनु भोजनु भाइआ ॥
निमख न बिसरउ मन ते हरि हरि साधसँगति महि पाइआ ॥१॥

माई खाटि आइओ घरि पूता ॥
हरि धनु चलते हरि धनु बैसे हरि धनु जागत सूता ॥१॥रहाउ॥

हरि धनु इसनानु हरि धनु गिआनु हरि सँगि लाइ धिआना ॥
हरि धनु तुलहा हरि धनु बेड़ी हरि हरि तारिपराना ॥२॥

पृ-४९६

हरि धन मेरी चिँत विसारी हरि धनि लाहिआ धोखा ॥
हरि धन ते मै नव निधि पाई हाथि चरिओ हरि थोका ॥३॥

खावहु खरचहु तोटि न आवै हलत पलत कै सँगे ॥
लादि खजाना गुरि नानक कउ दीआ इहु मनु हरि रँगि रँगे ॥४॥२॥३॥

गूजरी महला – ५

सामान्यतया जब एक आज्ञाकारी बेटा विदेशों में जाता है और कुछ धन कमा कर घर लौटता है तो अपने माता पिता (विशेष कर माता) को अपनी कमाई धन दौलत तथा घर लाये हुये अन्य सामान के विषय में बताता है । यह सब देख सुन कर माता पिता प्रसन्न होते हैं तथा अपने पुत्र की और अधिक उन्नति की कामना करते हैं । किन्तु, इस शब्द में, गुरु जी एक ऐसी स्थित की कल्पना कर रहे हैं जहाँ वह माँ को आकर यह बताते हैं कि घर से जाने के पश्चात उन्होंने(अपने गुरु के निर्देशों के अनुसार) किस प्रकार की वस्तुयें तथा किस प्रकार का धन अर्जित किया है । डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार गुरु जी (पाँचवे गुरु अर्जन देव जी) ने इस शब्द का उच्चारण तब किया था जब उनके पिता गुरु रामदास जी ने पुत्र को प्रभु नाम का आशीर्वाद दिया तथा अगले गुरु के रूप में उनका अभिषेक किया था ।

विराम (रहाउ) वाली पंक्ति से पूर्व पंक्ति में गुरु जी कहते हैं "ओ' मेरी माता तेरा पुत्र धन कमा कर घर लौट आया है (परन्तु मैंने सांसारिक धन नहीं कमाया, अपितु), मैंने प्रभु नाम की सम्पदा कमायी है, जो कि, चलते, बैठते, रुकते, जागते तथा सोते (अर्थात हर समय) मेरे साथ रहती है "।(१-विराम)

शब्द का आरम्भ गुरु जी यह कहते हुये करते हैं कि प्रभु नाम का धन उनके लिये कितना आवश्यक है । वह कहते हैं "ओ' मेरी माता, प्रभु नाम का धन मेरा जाप है, प्रभु नाम का धन मेरी तपस्या है और यही हरि नाम का धन मेरा मनभावन भोजन है ।मैं अपने मन में से हरि को एक क्षण भी नहीं बिसरने देता, मैंने हरि (इस धन) को संत साधुओं की संगति में से प्राप्त किया है "। (१)

प्रभु नाम की सम्पदा के महत्व तथा प्रतिष्ठा पर और अधिक दृढ़ भाव से गुरु जी आगे कहते हैं " (हे' मेरी माँ), यह हरि नाम रूपी धन ही मेरा तीर्थ स्नान है, यही धन मेरा दैवी ज्ञान है और इसी हरि नाम के साथ मेरा ध्यान लगा हुया है । हाँ, हरि नाम का धन मेरी पतवार है, वही मेरी नैया है, हरि नाम ही मल्लाह है जिसने मुझे (सांसारिक जीवन रूपी सागर से) तैरा कर पार लगाया है"।(२)

हरि नाम रूपी सम्पदा से उन्हें किस प्रकार के आशीर्वाद प्राप्त हुये हैं, यह वर्णन करते हुये वह कहते हैं " इस हरि रूपी धन सम्पदा ने मेरी सारी चिंता बिसार दी है, तथा मेरे सारे छल कपट एवं संशय उतर गये हैं । (वास्तव में) यह एक उपयोगी वस्तु बहुलता से मेरे हाथों में आ गई है, क्योंकि, हरि नाम का धन मेरे लिये नव निधियों को प्राप्त करने जैसा है " ।(३)

हमारे सामान्य स्वभाव के विपरीत गुरु जी हरि नाम के भंडार का स्रोत हमसे गुप्त नहीं रखना चाहते, अपितु हमें स्पष्ट रूप से बता रहे हैं कि यह धन उन्हें किसने दिया और यदि हम चाहें तो हम भी उसके पास जाकर उस भंडार को माँग सकते हैं ।वह कहते हैं " (ओ' मेरी माता), गुरु ने नानक को (हरि नाम रूपी धन के) कोष से लाद दिया है, (और कहा है) " जाओ, प्रसन्न रहो और जैसे चाहो इस धन को खाओ और खर्च करो, यह कभी कम नहीं होगा तथा लोक परलोक में तुम्हारा साथ देगा "। अत: यह मन मेरा पूर्ण रूप से प्रभु के प्रेम के रंग में रंगा आनन्द पा रहा है "।(४-२-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि सांसारिक धन सम्पदा के पीछे भागने की अपेक्षा हमें सच्चे गुरु की सेवा करनी चाहिये और उसके निर्देश का पालन करना चाहिए, जिससे गुरु हम पर कृपा कर प्रभु नाम रूपी धन का आशीर्वाद दें जो हमें इहलोक तथा परलोक में असीम आनँद तथा संतोष प्रदान करेगा ।

ਪੰਨਾ ੪੯੭

ਗੂਜਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ਤਿਪਦੇ ਘਰੁ ੨

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਦੁਖ ਬਿਨਸੇ ਸੁਖ ਕੀਆ ਨਿਵਾਸਾ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਜਲਨਿ ਬੁਝਾਈ ॥
ਨਾਮੁ ਨਿਧਾਨੁ ਸਤਿਗੁਰੂ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ਬਿਨਸਿ ਨ ਆਵੈ ਜਾਈ ॥੧॥

ਹਰਿ ਜਪਿ ਮਾਇਆ ਬੰਧਨ ਤੂਟੇ ॥
ਭਏ ਕ੍ਰਿਪਾਲ ਦਇਆਲ ਪ੍ਰਭ ਮੇਰੇ ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਮਿਲਿ ਛੂਟੇ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੪੯੮

ਆਠ ਪਹਰ ਹਰਿ ਕੇ ਗੁਨ ਗਾਵੈ ਭਗਤਿ ਪ੍ਰੇਮ ਰਸਿ ਮਾਤਾ ॥
ਹਰਖ ਸੋਗ ਦੁਹੁ ਮਾਹਿ ਨਿਰਾਲਾ ਕਰਣੈਹਾਰੁ ਪਛਾਤਾ ॥੨॥

ਜਿਸ ਕਾ ਸਾ ਤਿਨ ਹੀ ਰਖਿ ਲੀਆ ਸਗਲ ਜੁਗਤਿ ਬਣਿ ਆਈ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭ ਪੁਰਖ ਦਇਆਲਾ ਕੀਮਤਿ ਕਹਣੁ ਨ ਜਾਈ ॥੩॥੧॥੯॥

पृ-४९७

गूजरी महला ५ तिपदे घर २

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

दुख बिनसे सुख कीआ निवासा त्रिसना जलनि बुझाई ॥
नामु निधानु सतिगुरु दृिड़ाइआ बिनसि न आवै जाई ॥१॥

हरि जपि माइआ बँधन तूटे ॥
भए कृिपाल दइआल प्रभ मेरे साधसँगति मिलि छूटे ॥१॥रहाउ॥

पृ-४९८

आठ पहर हरि के गुन गावै भगति प्रेम रसि माता ॥
हरख सोग दुहु माहि निराला करणैहारु पछाता ॥२॥

जिस का सा तिन ही रखि लीआ सगल जुगति बणि आई ॥
कहु नानक प्रभ पुरख दइआला कीमति कहणु न जाई ॥३॥१॥९॥

गूजरी महला - ५
तिपदे घर - २
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी उन श्रध्दालुओं की मनोस्थिति के विषय में बताते हैं, जिन्होंने प्रभु नाम के धन को प्राप्त किया हुया है ।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), जिस किसी में भी सच्चे गुरु ने प्रभु नाम के भंडार का बीज भली प्रकार से बोया है, वह मनुष्य (इस संसार में) आने तथा जाने की प्रक्रिया में नष्ट नहीं होता है । उसके समस्त दुखों का विनाश हो जाता है और सुख और आनन्द का निवास होता है, तथा (प्रभु का नाम सांसारिक) तृष्णा एवं इच्छा की अग्नि बुझा देता है "।(१)

जिन पर प्रभु कृपा करते है, उनको मिले आशीर्वादों को गुरु जी संक्षेप में कहते हैं "(हे' मेरे मित्रों, जिन पर) मेरे दयालु प्रभु कृपालु होते हैं वह साधु संतों की संगति में मिल बैठ कर छूट (सांसारिक मोह माया के बंधनों से मोक्ष पा) जाते हैं । हरि नाम के जाप से मनुष्य के माया मोह के बंधन टूट जाते हैं "।(१-विराम)

एक प्रभु भक्त के आचरण का वर्णन करते हुये कहते हैं "प्रभु भक्ति एवं प्रेम के रस में मस्त भक्त आठों पहर उसके गुण गाता है । (ऐसा श्रध्दालु) हर्ष तथा शोक दोनों स्थितियों में सहज अथवा अछूता रहता है, क्योंकि उसने वास्तविक रूप से सब कुछ करने वाले (प्रभु) को पहचान लिया है "। (२)

अँत में गुरु जी कहते हैं "जो भी कोई (प्रभु का) भक्त है उसे (प्रभु ने) बचा लिया है, तथा उस जीव की समस्त युक्तियाँ सफल हो गयी हैं । नानक कहते हैं कि प्रभु महा दयालु हैं, उनका मूल्य आँका नहीं जा सकता "।(३-१-९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम सदा सच्चे गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) के सम्मुख प्रार्थना करें कि वह हमें प्रभु नाम का दान दें तथा प्रभु से उसकी दयालुता के लिये प्रार्थी रहें कि वह हमें सदा साधु संतों की सँगति में रखें जहाँ पर हम प्रभु का गुणगान एवं ध्यान करें और प्रभु की दयालुता के भागी बनकर सांसारिक मायाजाल से मुक्त हों अथवा जन्म मरण के चक्र से बाहर निकल सकें ।

ਪੰਨਾ ੪੯੯

ਗੂਜਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਤੂੰ ਦਾਤਾ ਜੀਆ ਸਭਨਾ ਕਾ ਬਸਹੁ ਮੇਰੇ ਮਨ ਮਾਹੀ ॥
ਚਰਣ ਕਮਲ ਰਿਦ ਮਾਹਿ ਸਮਾਏ ਤਹ ਭਰਮੁ ਅੰਧੇਰਾ ਨਾਹੀ ॥੧॥

ਠਾਕੁਰ ਜਾ ਸਿਮਰਾ ਤੂੰ ਤਾਹੀ ॥
ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਸਰਬ ਪ੍ਰਤਿਪਾਲਕ ਪ੍ਰਭ ਕਉ ਸਦਾ ਸਲਾਹੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਾਸਿ ਸਾਸਿ ਤੇਰਾ ਨਾਮੁ ਸਮਾਰਉ ਤੁਮ ਹੀ ਕਉ ਪ੍ਰਭ ਆਹੀ ॥
ਨਾਨਕ ਟੇਕ ਭਈਕਰਤੇ ਕੀ ਹੋਰ ਆਸ ਬਿਡਾਣੀ ਲਾਹੀ ॥੨॥੧੦॥੧੯॥

पृ-४९९

गूजरी महला ५ ॥

तूँ दाता जीआ सभना का बसहु मेरे मन माही ॥
चरण कमल रिद माहि समाए तह भरमु अँधेरा नाही ॥१॥

ठाकुर जा सिमरा तूँ ताही ॥
करि किरपा सरब प्रतिपालक प्रभ कउ सदा सलाही ॥१॥रहाउ॥

सासि सासि तेरा नामु समारउ तुम ही कउ प्रभ आही ॥
नानक टेक भईकरते की होर आस बिडाणी लाही ॥२॥१०॥१९॥

गूजरी महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमें प्रकट करते हैं कि किस प्रकार से हमें अपने मन में प्रभु नाम को बसाने और स्मरण करने के लिए प्रयास करने हैं ।

वह प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं “ओ’ प्रभु तुम समस्त जीवों के दाता हो, कृपया मेरे मन में आकर बसो। क्योंकि, जिसके भी हृदय में तुम्हारे चरण कमल (तेरा नाम) समाये हैं, वहाँ पर किसी प्रकार के भ्रम (सांसारिक माया मोह) का अंधेरा नहीं है ”। (१)

एक पग और आगे बढ़ते हुये गुरु जी कहते हैं “ओ’ मेरे ठाकुर, जहाँ कहीं भी मैं तुम्हें स्मरण करता हूँ, तुम वहीं पर होते हो, अत: ओ’ सर्व प्रतिपालक, कृपा करो (और आशीर्वाद दो) कि मैं सदा अपने प्रभु की स्तुति करता रहूँ ”।(१- विराम)

अपनी प्रार्थना का अंत करते हुये गुरु जी कहते हैं “ओ’ प्रभु, मुझे आशीर्वाद दो कि मैं प्रत्येक श्वास के साथ तुम्हारे नाम का सिमरन करूँ और केवल तुम्हारी ही कामना करूँ । क्योंकि, ओ’ नानक जिस मनुष्य के आश्रयदाता प्रभु हो गये हैं उसे किसी और दूसरे की सहायता की आवश्यकता नहीं है ”।(२-१०-१९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम सदा अपनी आशा तथा विश्वास केवल प्रभु पर रखें और उसके नाम का स्मरण और ध्यान करें । इसके अतिरिक्त, हरि का ध्यान करने के साथ साथ यह प्रार्थना भी करें कि वह सदा हमें अपनी महिमा का गुणगान एवं चिंतन करने का वरदान दे ।

ਪੰਨਾ ੫੦੧

ਗੂਜਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦੀ ਪ੍ਰਭੁ ਧਿਆਇਆ ਗਈ ਸੰਕਾ ਤੂਟਿ ॥

ਪੰਨਾ ੫੦੨

ਦੁਖ ਅਨੇਰਾ ਭੈ ਬਿਨਾਸੇ ਪਾਪ ਗਏ ਨਿਖੂਟਿ ॥੧॥

ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮ ਕੀ ਮਨਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ॥
ਮਿਲਿ ਸਾਧ ਬਚਨ ਗੋਬਿੰਦ ਧਿਆਏ ਮਹਾ ਨਿਰਮਲ ਰੀਤਿ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਾਪ ਤਾਪ ਅਨੇਕ ਕਰਣੀ ਸਫਲ ਸਿਮਰਤ ਨਾਮ ॥
ਕਰਿ ਅਨੁਗ੍ਰਹੁ ਆਪਿ ਰਾਖੇ ਭਏ ਪੂਰਨ ਕਾਮ ॥੨॥

ਸਾਸਿ ਸਾਸਿ ਨ ਬਿਸਰੁ ਕਬਹੂੰ ਬ੍ਰਹਮ ਪ੍ਰਭ ਸਮਰਥ ॥
ਗੁਣ ਅਨਿਕ ਰਸਨਾ ਕਿਆ ਬਖਾਨੈ ਅਗਨਤ ਸਦਾ ਅਕਥ ॥੩॥

ਦੀਨ ਦਰਦ ਨਿਵਾਰਿ ਤਾਰਣ ਦਇਆਲ ਕਿਰਪਾ ਕਰਣ ॥
ਅਟਲ ਪਦਵੀ ਨਾਮ ਸਿਮਰਣ ਦ੍ਰਿੜੁ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਹਰਿ ਸਰਣ ॥੪॥੩॥੨੯॥

पृ-५०१

गूजरी महला ५॥

गुर प्रसादी प्रभु धिआइआ गई सँका तूटि ॥

पृ-५०२

दुख अनेरा भै बिनासे पाप गए निखूटि ॥१॥

हरि हरि नाम की मनि प्रीति ॥
मिलि साध बचन गोबिँद धिआए महा निरमल रीति ॥१॥रहाउ॥

जाप ताप अनेक करणी सफल सिमरत नाम ॥
करि अनुग्रहु आपि राखे भए पूरन काम ॥२॥

सासि सासि न बिसरु कबहूँ ब्रहम प्रभ समरथ ॥
गुण अनिक रसना किआ बखानै अगनत सदा अकथ ॥३॥

दीन दरद निवारि तारण दइआल किरपा करण ॥
अटल पदवी नाम सिमरण द्रिड़ु नानक हरि हरि सरण ॥४॥३॥२९॥

गूजरी महला – ५

अपने अनेक शब्दों में गुरु जी ने हमें यह समझाया कि यदि हम अपने मन की सभी प्रकार की चिंताओं तथा दुखों से मुक्त होकर पूर्ण शांति और सहजता प्राप्त करना चाहते हैं तो गुरु के निर्देश (जैसा गुरु ग्रंथ साहिब जी में कहा गया है) का अनुसरण करते हुये अपनी प्रत्येक श्वास के साथ प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये । अब, इस शब्द में गुरु जी हमें यह बता रहे हैं कि जब कोई गुरु की कृपा से प्रभु नाम का ध्यान करता है तो उसे क्या आशीर्वाद प्राप्त होते हैं।

वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), गुरु की कृपा से प्रभु नाम का ध्यान करने से मन की समस्त शंकाएँ टूट गई, तथा मनुष्य के मन में से सब प्रकार के भय संताप और अज्ञान के अँधेरे विलीन हो गये, एवं, सारे पाप तथा पापवृत्तियों का अँत हो गया ।(१)

गुरु की संगति में प्रभु के गुणगान करने से मनुष्य में किस प्रकार से क्रियाकलाप होता है, इस पर गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो, जो मनुष्य) साधु संतों के साथ बैठ कर प्रभु का ध्यान करता है उसके मन में प्रभु नाम के प्रति प्रेम उपजता है, जो कि (प्रभु को पाने के लिये) एक अति उत्तम एवं पवित्र साधन है।(१-विराम)

प्रभु नाम का ध्यान करने के कुछ अन्य लाभ तथा आशीर्वाद गिनाते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो) अनेक प्रकार की पूजा, जाप, तपस्या और कई अन्य प्रकार की धार्मिक प्रक्रियाएँ करने की अपेक्षा, केवल प्रभु नाम के सिमरन से ही काम बन जाते हैं ।क्योंकि, तब प्रभु स्वयं ही अपनी कृपा एवं स्नेह के साथ (अपने भक्त की) रक्षा करते हैं अतः उसके सारे काम (सफलतापूर्वक) पूर्ण हो जाते हैं "।(२)

अत: गुरु जी परामर्श देते हैं (हे' मेरे मित्रो), अपने प्रत्येक श्वास के साथ उस प्रभु को कभी भी न बिसारो, जो सर्वशक्तिमान है, सर्वव्यापी है तथा समर्थ है । उसके गुण अनगिनत हैं, जो वर्णन से बाहर हैं और इतने अनगिनत हैं कि हमारी जिह्वा भी उनका बखान कितना करे "।(३)

अत: गुरु जी इस शब्द का अंत यह कहते हुये करते हैं " (हे' मेरे मित्रों, प्रभु) दीन दुखियों के कष्टनिवारक हैं, भवसागर से पार कराने में सहायक हैं, प्रत्येक के लिये दयालुता के पुंज हैं । उस प्रभु के नाम का ध्यान करने से अमरत्व का पद प्राप्त होता है, इसलिये ओ' नानक, हरि की शरण (प्रभु नाम के ध्यान) में दृढ़ रहना है"।(४-३-२९)

इस शब्द का संदेश यह है कि गुरु के निर्देश के अनुसार प्रभु नाम का ध्यान ही प्रभु की पूजा अर्चना का सबसे सफल ढंग है । अन्य सभी कृत्य जैसे कि, जाप, तपस्या और धार्मिक कर्म कांड इसी में निहित हैं । जब हम प्रभु का ध्यान करते हैं तब वह अपनी दयालुता से हमारे समस्त दुख दर्द अथवा कष्टों का निवारण कर भवसागर से पार होने में हमारी सहायता करते हैं ।

ਪੰਨਾ ੫੦੩

ਗੂਜਰੀ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਕਵਨ ਕਵਨ ਜਾਚਹਿ ਪ੍ਰਭ ਦਾਤੇ ਤਾ ਕੇ ਅੰਤ ਨ ਪਰਹਿ ਸੁਮਾਰ ॥
ਜੈਸੀ ਭੂਖ ਹੋਇ ਅਭ ਅੰਤਰਿ ਤੂੰ ਸਮਰਥੁ ਸਚੁ ਦੇਵਣਹਾਰ ॥੧॥

ਐ ਜੀ ਜਪੁ ਤਪੁ ਸੰਜਮੁ ਸਚੁ ਅਧਾਰ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦੇਹਿ ਸੁਖੁ ਪਾਈਐ ਤੇਰੀ ਭਗਤਿ ਭਰੇ ਭੰਡਾਰ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸੁੰਨ ਸਮਾਧਿ ਰਹਹਿ ਲਿਵ ਲਾਗੇ ਏਕਾ ਏਕੀ ਸਬਦੁ ਬੀਚਾਰ ॥
ਜਲੁ ਥਲੁ ਧਰਣਿ ਗਗਨੁ ਤਹ ਨਾਹੀ ਆਪੇ ਆਪੁ ਕੀਆ ਕਰਤਾਰ ॥੨॥

ਨਾ ਤਦਿ ਮਾਇਆ ਮਗਨੁ ਨ ਛਾਇਆ ਨਾ ਸੂਰਜ ਚੰਦ ਨ ਜੋਤਿ ਅਪਾਰ ॥
ਸਰਬਦ੍ਰਿਸਟਿ ਲੋਚਨ ਅਭ ਅੰਤਰਿ ਏਕਾ ਨਦਰਿ ਸੁ ਤ੍ਰਿਭਵਣ ਸਾਰ ॥੩॥

ਪੰਨਾ ੫੦੪

ਪਵਣੁ ਪਾਣੀ ਅਗਨਿ ਤਿਨਿ ਕੀਆ ਬ੍ਰਹਮਾ ਬਿਸਨੁ ਮਹੇਸ ਅਕਾਰ ॥
ਸਰਬੇ ਜਾਚਿਕ ਤੂੰ ਪ੍ਰਭੁ ਦਾਤਾ ਦਾਤਿ ਕਰੇ ਅਪੁਨੈ ਬੀਚਾਰ ॥੪॥

ਕੋਟਿ ਤੇਤੀਸ ਜਾਚਹਿ ਪ੍ਰਭ ਨਾਇਕ ਦੇਦੇ ਤੋਟਿ ਨਾਹੀ ਭੰਡਾਰ ॥
ਊਂਧੈ ਭਾਂਡੈ ਕਛੁ ਨ ਸਮਾਵੈ ਸੀਧੈ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪਰੈ ਨਿਹਾਰ ॥੫॥

ਸਿਧ ਸਮਾਧੀ ਅੰਤਰਿ ਜਾਚਹਿ ਰਿਧਿ ਸਿਧਿ ਜਾਚਿ ਕਰਹਿ ਜੈਕਾਰ ॥
ਜੈਸੀ ਪਿਆਸ ਹੋਇ ਮਨ ਅੰਤਰਿ ਤੈਸੋ ਜਲੁ ਦੇਵਹਿ ਪਰਕਾਰ ॥੬॥

ਬਡੇ ਭਾਗ ਗੁਰੁ ਸੇਵਹਿ ਅਪੁਨਾ ਭੇਦੁ ਨਾਹੀ ਗੁਰਦੇਵ ਮੁਰਾਰ ॥
ਤਾ ਕਉ ਕਾਲੁ ਨਾਹੀ ਜਮੁ ਜੋਹੈ ਬੂਝਹਿ ਅੰਤਰਿ ਸਬਦੁ ਬੀਚਾਰ ॥੭॥

ਅਬ ਤਬ ਅਵਰੁ ਨ ਮਾਗਉ ਹਰਿ ਪਹਿ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨ ਦੀਜੈ ਪਿਆਰਿ ॥
ਨਾਨਕ ਚਾਤ੍ਰਿਕੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਜਲੁ ਮਾਗੈ ਹਰਿ ਜਸੁ ਦੀਜੈ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰਿ ॥੮॥੨॥

पृ-५०३

गूजरी महला १॥

कवन कवन जाचहि प्रभ दाते ता के अँत न परहि सुमार ॥
जैसी भूख होइ अभ अँतरि तूँ समरथु सचु देवणहार ॥१॥

ऐ जी जपु तपु सँजमु सचु अधार ॥
हरि हरि नामु देहि सुखु पाईऐ तेरी भगति भरे भँडार ॥१॥रहाउ॥

सुँन समाधि रहहि लिव लागे एका एकी सबदु बीचार ॥
जलु थलु धरणि गगनु तह नाही आपे आपु कीआ करतार ॥२॥

ना तदि माइआ मगनु न छाइआ न सूरज चँद न जोति अपार ॥
सरबदिसटि लोचन अभ अँतरि एका नदरि सु त्रिभवण सार ॥३॥

पृ-५०४

पवणु पाणी अगनि तिनि कीआ ब्रहमा बिसनु महेस अकार ॥
सरबे जाचिक तूँ प्रभु दाता दाति करे अपुनै बीचार ॥४॥

कोटि तेतीस जाचहि प्रभ नाइक देदे तोटि नाही भँडार ॥
ऊधे भांडै कछु न समावै सीधै अँमितु परै निहार ॥५॥

सिध समाधी अँतरि जाचहि रिधि सिधि जाचि करहि जैकार ॥
जैसी पिआस होइ मन अँतरि तैसो जलु देवहि परकार ॥६ ॥

बडे भाग गुरु सेवहि अपुना भेदु नाही गुरदेव मुरार ॥
ता कउ कालु नाही जमु जोहै बूझहि अँतरि सबदु बीचार॥७॥

अब तब अवरु न मागउ हरि पहि नामु निरँजन दीजै पिआरि ॥
नानक चात्रिकु अँमित जलु मागै हरि जसु दीजै किरपा धारि ॥८॥२॥

गूजरी महला – १

प्रभु की असीम स्तुति से परिपूर्ण पाठ 'जपुजी साहिब' एवं 'रहिरास साहिब' के शब्द 'सोदर तेरा केहा, सो घर केहा ' की भाँति यह शब्द भी गुरु जी की कवि कल्पना तथा प्रभु के प्रति सच्ची भक्ति की परिकाष्ठा को छूता है ।केवल अंतर यह है कि अनेक स्तुति गायन करने वालों पर विचार करने की अपेक्षा, इस शब्द में गुरु जी ने बारम्बार प्रभु के द्वार पर खड़े अनेकों प्रकार के याचकों का विवरण दिया है ।

अत्यधिक प्रशंसा तथा विस्मय के साथ गुरु जी प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं "(हे' प्रभु), कौन तथा कितने याचक तेरे द्वार पर माँगते हैं, उनका कोई अंत नहीं है, कोई गिनती नहीं है । (परन्तु, आश्चर्य है) जिसकी जैसी भूख (इच्छा) उसके अँतरमन में है, उसको सर्वदा वैसा ही दान देने के लिये तुम समर्थ हो "।(१)

एक याचक किस प्रकार की भूख या इच्छा पूरी करना चाहता है इससे गुरु जी का कोई अभिप्राय नहीं है, वह अपने ही लिये कहते हैं " (हे' प्रभु, मेरे लिये तुम्हारा नाम ही) मेरी पूजा है, तपस्या है, संयम है तथा सच्चा आधार है । हे' प्रभु तुम्हारी भक्ति से तुम्हारे भंडार भरे हुये हैं (यदि तुम वहाँ से) हरि नाम का दान दे दो, तब हम सुख शांति प्राप्त कर पायेंगे "।(१- विराम)

पहले गुरु जी उन याचकों अथवा भक्तों की गणना करते हैं जो ऐसी समाधि लगाते हैं कि पूर्ण रूप से शून्य अवस्था में पहुँच जाते हैं, जहाँ उनके मन में कोई विचार ही नहीं उपजता । वह कहते हैं " (हे' प्रभु), तुम्हारे ऐसे भक्त भी हैं जो तेरे ध्यान में शून्य अवस्था में समाधिस्थ हैं

(उनके मन में कोई विचार नहीं उपजता) वह केवल एक शब्द 'प्रभु' पर ही केन्द्रित होकर ध्यान करते हैं। (और इस मनोदशा में) केवल स्वयं सृजित सृजनकर्ता के अतिरिक्त वह जल, थल, आकाश आदि कुछ नहीं देख पाते "।(२)

उपरोक्त वर्णित शून्य की मनोदशा तथा प्रभु द्वारा ब्रह्मांड रचना से पूर्व की स्थित पर गुरु जी तनिक विस्तार से कहते हैं "(उस समय जब कुछ भी रचना अथवा सृजन नहीं हुया था, तब) माया (सांसारिक धन सम्पदा अथवा सत्ता शक्ति) नहीं थी, ना ही उसका मोहक छलावा, ना सूर्य ना चन्द्रमा और ना ही उनकी अपार ज्योति थी। (उस समय, केवल) सर्वदृष्टिमयी नेत्र, जो तीनों लोकों का समान दृष्टि से अवलोकन कर सकते थे वह (हे' प्रभु) तुम्हारे अँतर ही में थे "।(३)

ईश्वर ने जो भी कुछ अवयवों का आदिकाल में सृजन किया वह भी उसके द्वार पर प्रार्थी हैं, उनमें से कुछ को सूचीबद्ध करते हुये गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो, प्रभु जिसने) वायु, जल, अग्नि एवं ब्रह्मा, विष्णु, महेश जैसे देवता और अन्य आकारों की रचना की ।हे' प्रभु वह सब तेरे द्वार पर याचक हैं, तुम दाता हो और अपने विचार के अनुसार सबको वरदान देते हो ।(अर्थात्, किसी को क्या उपहार अथवा दान देना है यह तुम्हें किसी से पूछने विचारने की आवश्यकता नहीं है)।(४)

द्वार पर खड़े अनगिनत याचकों को दान देने के लिये प्रभु के पास अथाह भंडार हैं पर किसी को दान में कुछ मिला है कि नहीं, इसपर गुरु जी टिप्पणी करते हैं " तैंतीस करोड़ (अनगिनत) याचक प्रभु (दाता) के द्वार पर खड़े माँगते हैं । महान प्रभु सबको देते हैं, उनके भंडार में कोई कमी नहीं है ।जैसे कि उल्टे रखे बरतन में कुछ डालने पर उसमें समाता नहीं है, परन्तु जब वह सीधा रखा है तब वह अँमृतवर्षा से किनारे तक भर जाता है, (अर्थात, जो प्रभु के याचक हैं उन्हें प्रभु की कृपा का वरदान प्राप्त होता है, अन्यथा जिनका मन प्रभु की ओर नहीं है उन्हें कुछ नहीं मिल पाता)"।(५)

लोग विभिन्न प्रकार की याचनायें प्रभु से करते हैं और उन्हें क्या प्राप्त होता है इस पर गुरु जी कहते हैं "(हे' प्रभु), सिद्ध लोग अपनी समाधि में चमत्कारिक शक्तियों को पाने की याचना करते हैं, तथा रिद्धि सिद्धि पाकर तेरी जय जयकार करते हैं।जैसी प्यास (इच्छा) किसी के मन में होती है, तुम उसे उसी प्रकार का जल (वरदान) देते हो "।(६)

किन्तु फिर भी गुरु जी चिन्हित करते हैं कि वह लोग कितने भाग्यशाली हैं जो गुरु की सेवा करते हैं और उसकी वाणी को मानते हैं, कहते हैं " (हे मेरे मित्रो), वह अवश्य ही भाग्यशाली हैं जो गुरु की सेवा करते हैं और गुरु तथा प्रभु में भेद नहीं मानते ।वह गुरु के वचन अथवा कथन को अपने मन में विचारते हैं (तथा उसका अनुसरण करते हैं), अत: इन पर यमराज की क्रूर दृष्टि नहीं पड़ती, (अथवा, उन्हें यमराज का भय नहीं सताता)"।(७)

इसलिये, शब्द के अंत में गुरु जी यह इंगित करते हैं कि उन्हें स्वयं के लिये प्रभु से क्या माँगना है । वह कहते हैं " हे' प्रभु, अब तथा भविष्य के लिये भी मैं सदा तुमसे और कुछ नहीं, केवल यही माँगता हूँ कि तुम मुझे अपने पवित्र नाम का प्रेम दो । हाँ एक चात्रिक की भाँति नानक हरि यश रूपी अँमित जल की याचना करते हैं, (हे' प्रभु), अपनी कृपा करके यह दान दो "। (८-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें यह आभास होना चाहिये कि सभी जीव, छोटे बड़े देवी देवताओं सहित प्रभु के द्वार पर याचक हैं और वही केवल ब्रह्मांड में सभी का दाता है ।अत: हमें जो भी चाहिये, किसी और से नहीं केवल उसी प्रभु से माँगे और इसके लिए सर्वोत्तम ढंग यही है कि हम पहले गुरु के निर्देश को सुने और फिर सच्चाई से उसका इस प्रकार अनुसरण करें कि गुरु तथा ईश्वर के बीच कोई भेद ना रहे । हमें प्रभु से केवल उसके पवित्र नाम के अतिरिक्त और कुछ भी माँगने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि वही समस्त गुणों का भंडार है ।

ਪੰਨਾ ੫੦੫	**पृ- ५०५**
ਗੂਜਰੀ ਮਹਲਾ ੧ ਘਰੁ ੪	**गूजरी महला १ घर ४**
੧ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਭਗਤਿ ਪ੍ਰੇਮ ਆਰਾਧਿਤੰ ਸਚੁ ਪਿਆਸ ਪਰਮ ਹਿਤੰ ॥ ਬਿਲਲਾਪ ਬਿਲਲ ਬਿਨੰਤੀਆ ਸੁਖ ਭਾਇ ਚਿਤ ਹਿਤੰ ॥੧॥	भगति प्रेम आराधितँ सचु पिआस परम हितँ ॥ बिललाप बिलल बिनँतीआ सुख भाइ चित हितँ ॥१॥
ਜਪਿ ਮਨ ਨਾਮੁ ਹਰਿ ਸਰਣੀ ॥ ਸੰਸਾਰ ਸਾਗਰ ਤਾਰਿ ਤਾਰਣ ਰਮ ਨਾਮ ਕਰਿ ਕਰਣੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	जपि मन नामु हरि सरणी ॥ सँसार सागर तारि तारण रम नाम करि करणी ॥१॥ रहाउ ॥
ਏ ਮਨ ਮਿਰਤ ਸੁਭ ਚਿੰਤੰ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਹਰਿ ਰਮਣੰ ॥ ਮਤਿ ਤਤੁ ਗਿਆਨੰ ਕਲਿਆਣ ਨਿਧਾਨੰ ਹਰਿ ਨਾਮ ਮਨਿ ਰਮਣੰ ॥੨॥	ए मन मिरत सुभ चिँतँ गुर सबदि हरि रमणँ ॥ मति ततु गिआनँ कलिआण निधानँ हरि नाम मनि रमणँ ॥२॥
ਚਲ ਚਿਤ ਵਿਤ ਭ੍ਰਮਾ ਭ੍ਰਮੰ ਜਗੁ ਮੋਹ ਮਗਨ ਹਿਤੰ ॥ ਥਿਰੁ ਨਾਮੁ ਭਗਤਿ ਦਿੜੰ ਮਤੀ ਗੁਰ ਵਾਕਿ ਸਬਦ ਰਤੰ ॥੩॥	चल चित वित भ्रमा भ्रमँ जगु मोह मगन हितँ ॥ थिरु नामु भगति दिड़ँ मती गुर वाकि सबद रतँ ॥३॥
ਭਰਮਾਤਿ ਭਰਮੁ ਨ ਚੁਕਈ ਜਗੁ ਜਨਮਿ ਬਿਆਧਿ ਖਪੰ ॥ ਅਸਥਾਨੁ ਹਰਿ ਨਿਹਕੇਵਲੰ ਸਤਿ ਮਤੀ ਨਾਮ ਤਪੰ ॥੪॥	भरमाति भरमु न चूकई जगु जनमि बिआधि खपँ ॥ असथानु हरि निहकेवलँ सति मती नाम तपँ ॥४॥
ਇਹੁ ਜਗੁ ਮੋਹ ਹੇਤ ਬਿਆਪਿਤੰ ਦੁਖੁ ਅਧਿਕ ਜਨਮ ਮਰਣੰ ॥ ਭਜੁ ਸਰਣਿ ਸਤਿਗੁਰ ਊਬਰਹਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਰਿਦ ਰਮਣੰ ॥੫॥	इहु जगु मोह हेत बिआपितँ दुखु अधिक जनम मरणँ ॥ भजु सरणि सतिगुर ऊबरहि हरि नामु रिद रमणँ ॥५॥
ਗੁਰਮਤਿ ਨਿਹਚਲ ਮਨਿ ਮਨੁ ਮਨੰ ਸਹਜ ਬੀਚਾਰੰ ॥ ਸੋ ਮਨੁ ਨਿਰਮਲੁ ਜਿਤੁ ਸਾਚੁ ਅੰਤਰਿ ਗਿਆਨ ਰਤਨੁ ਸਾਰੰ ॥੬॥	गुरमति निहचल मनि मनु मनँ सहज बीचारँ ॥ सो मनु निरमलु जितु साचु अँतरि गिआन रतनु सारँ ॥६॥
ਭੈ ਭਾਇ ਭਗਤਿ ਤਰੁ ਭਵਜਲੁ ਮਨਾ ਚਿਤੁ ਲਾਇ ਹਰਿ ਚਰਣੀ ॥	भै भाइ भगति तरु भवजलु मना चितु लाइ हरि चरणी ॥
ਪੰਨਾ ੫੦੬	**पृ-५०६**
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹਿਰਦੈ ਪਵਿਤ੍ਰੁ ਪਾਵਨੁ ਇਹੁ ਸਰੀਰੁ ਤਉ ਸਰਣੀ ॥੭॥	हरि नामु हिरदै पवित्रु पावनु इहु सरीरु तउ सरणी ॥७॥
ਲਬ ਲੋਭ ਲਹਰਿ ਨਿਵਾਰਣੰ ਹਰਿ ਨਾਮ ਰਾਸਿ ਮਨੰ ॥ ਮਨੁ ਮਾਰਿ ਤੁਹੀ ਨਿਰੰਜਨਾ ਕਹੁ ਨਾਨਕਾ ਸਰਨੰ ॥੮॥੧॥੫॥	लब लोभ लहरि निवारणँ हरि नाम रासि मनँ ॥ मनु मारि तुही निरँजना कहु नानका सरनँ ॥८॥१॥५॥

गूजरी महला - १ घर ४

डा. भाई वीर सिंह जी के कथनानुसार, गुरु जी ने इस शब्द का उच्चारण काशी के एक पंडित के साथ हुये वार्तालाप के समय किया था। गुर जी का स्वभाव चूँकि अपने सामने वाले की भाषा प्रयोग करने का था, सो यह शब्द 'गाथा' भाषा (संस्कृत भाषा की उपबोली) में है जो कि उस समय की क्षेत्रीय भाषा थी । ऐसा प्रतीत होता है कि सब प्रकार की पूजा अर्चना तथा कर्म कांड करने के पश्चात् भी यह पंडित अपने मन को स्थिर अथवा सांसारिक इच्छायों से मुक्ति पाकर ईश्वर में लीन होने में समर्थ नहीं हो पा रहे थे, अत: यहाँ पर गुरु जी उन्हें आत्मिक रूप से सफल होने के लिये सही मार्ग अपनाने के लिए कुछ सुझाव देते हैं ।

वह कहते हैं "(ओ' मेरे मित्र), जो भक्त, प्रभु दर्शन की पिपासा में सच्चे प्रेम और भक्ति के साथ ध्यान करते हैं वह रोते हैं, विलाप करते हैं, विनती करते हैं (प्रभु दर्शन के लिये, तभी केवल) उनके मन को प्रभु प्रेम में दिव्य शांति मिलती है "।(१)

अत: गुरु जी स्वयं ही अपने मन को कहते हैं "ओ' मेरे मन, हरि की शरण लो, उसी का नाम जपो, क्योंकि (उसका नाम) एक जहाज़ के समान है जो मनुष्य को भवसागर से पार लगाता है, इसलिये तुम उसके नाम में लीन रहो "।(१ - विराम)

अपने मन को पुन: सावधान करते हुये गुरु जी कहते हैं "ओ' मेरे मन, प्रभु नाम जैसा पवित्र चिंतन त्याग कर तुम एक प्रकार से मृतप्राय

दशा में हो, उठो और गुरु के शब्द द्वारा हरि के नाम में रम जाओ । क्योंकि, हरि नाम में मन रमाने से दैवी ज्ञान मिलता है, तथा कल्याण के भंडार (प्रभु) प्राप्त होते हैं ”।(२)

उपरोक्त परामर्श देने का कारण गुरु जी बताते हैं “(ओ’ मेरे मित्र,) चंचल मन सांसारिक प्रलोभनों से शीघ्र प्रभावित होता है, (अत: समस्त) संसार ऐसे प्रलोभनों के भ्रम, आकर्षण एवं मोह से उन्मत्त है । परन्तु, प्रभु के भक्त अपने मन में यह दृढ़ कर लेते हैं कि गुरु के शब्द के द्वारा प्रभु नाम की भक्ति तथा ध्यान ही उन्हें (मन की) स्थिरता देता है ”।(३)

अब जैसे कि गुरु जी उस पंडित को प्रत्यक्ष प्रभु के दर्शन न पा सकने के कारण बता रहे हैं “(हे’ मेरे मित्र), इधर उधर भ्रमण (तीर्थ यात्रा आदि) करने से भ्रम नहीं समाप्त होते हैं, सारा संसार इसी कारण जन्म मरण की व्याधि में थका और खपा हुआ है ।केवल हरि का घर अथवा स्थान ही सत्य है, अत: जिनके पास दैवी मति है वही केवल हरि के नाम का जाप अथवा तप करते हैं ”।(४)

उपरोक्त निर्देश को तनिक विस्तृत रूप में गुरु जी कहते हैं “(ओ’ मेरे मित्र), यह जग सांसारिक मोह माया में व्याप्त है, अत: जन्म मरण के कष्टों और अनेक दुखों को सहता रहता है, इसलिये शीघ्रतम गुरु की शरण में जाओ तभी हरि नाम को हृदय में रमा कर संसार सागर से उबर सकोगे ”।(५)

गुरु का मार्ग दर्शन किस प्रकार से हमें सहायक है, इसकी व्याख्या करते हुये गुरु जी कहते हैं “(ओ’ मेरे मित्र, जब) गुरु के निर्देश हमारे मन में दृढ़ हो जाते हैं, तब वह बहुत सहज भाव से (उस दैवी ज्ञान को) विचारता अथवा मानता है । ऐसा मन निर्मल हो जाता है और उसके अंदर सच्चे ज्ञान का सार रूपी रत्न स्थिर हो जाता है ”।(६)

अब इसलिये अपने मन (और हमें भी) गुरु जी परामर्श देते हुये कहते हैं “(हे’ मेरे) मन, भय, प्रेम और भक्ति के द्वारा हरि चरणों में अपने को लगाओ और इस भवजल से पार हो जाओ । अपने हृदय में हरि का पवित्र नाम बसा लेने पर उससे प्रार्थना करो और कहो, हे’ प्रभु, मैं अपने शरीर को तुम्हारी शरण में समर्पित करता हूँ (तुम, कृपया, इसकी रक्षा करो)”।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्र), हरि नाम की राशि एवं धन सम्पदा, मन में उठने वाले सांसारिक मोहमाया और लोभ आदि विकारों की लहरों का निवारण करती है । अत:, नानक कहते हैं, हे’ पतितपावन प्रभु, मैं तेरी शरण में आया हूँ, तुम स्वयं ही मेरे मन की (लोभ लालसा की लहरों को) समाप्त करो”।(८-१-५)

इस शब्द का संदेश यह है कि जन्म मरण के दुख दर्द से दूर रहने और सांसारिक मोहमाया तथा लोभ लालसा से निवारण हेतु हमें गुरु की शरण में रहकर प्रभु से सहायता प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੫੦੭	**पृ-५०७**
ਗੂਜਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੨	**गूजरी महला ५ घर २**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਰਾਜਨ ਮਹਿ ਤੂੰ ਰਾਜਾ ਕਹੀਅਹਿ ਭੂਮਨ ਮਹਿ ਭੂਮਾ ॥ ਠਾਕੁਰ ਮਹਿ ਠਕੁਰਾਈ ਤੇਰੀ ਕੋਮਨ ਸਿਰਿ ਕੋਮਾ ॥੧॥	राजन महि तूँ राजा कहीअहि भूमन महि भूमा ॥ ठाकुर महि ठकुराई तेरी कोमन सिरि कोमा ॥१॥
ਪਿਤਾ ਮੇਰੋ ਬਡੋ ਧਨੀ ਅਗਮਾ ॥ ਉਸਤਤਿ ਕਵਨ ਕਰੀਜੈ ਕਰਤੇ ਪੇਖਿ ਰਹੇ ਬਿਸਮਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	पिता मेरो बडो धनी अगमा ॥ उसतति कवन करीजै करते पेखि रहे बिसमा ॥१॥रहाउ॥
ਸੁਖੀਅਨ ਮਹਿ ਸੁਖੀਆ ਤੂੰ ਕਹੀਅਹਿ ਦਾਤਨ ਸਿਰਿ ਦਾਤਾ ॥ ਤੇਜਨ ਮਹਿ ਤੇਜਵੰਸੀ ਕਹੀਅਹਿ ਰਸੀਅਨ ਮਹਿ ਰਾਤਾ ॥੨॥	सुखीअन महि सुखीआ तूँ कहीअहि दातन सिरि दाता ॥ तेजन महि तेजवँसी कहिअहि रसीअन महि राता ॥२॥
ਸੂਰਨ ਮਹਿ ਸੂਰਾ ਤੂੰ ਕਹੀਅਹਿ ਭੋਗਨ ਮਹਿ ਭੋਗੀ ॥ ਗ੍ਰਸਤਨ ਮਹਿ ਤੂੰ ਬਡੋ ਗ੍ਰਿਹਸਤੀ ਜੋਗਨ ਮਹਿ ਜੋਗੀ ॥੩॥	सूरन महि सूरा तूँ कहिअहि भोगन महि भोगी ॥ गृसतन महि तूँ बडो गृिहसती जोगन महि जोगी ॥३॥
ਕਰਤਨ ਮਹਿ ਤੂੰ ਕਰਤਾ ਕਹੀਅਹਿ ਆਚਾਰਨ ਮਹਿ ਆਚਾਰੀ ॥ ਸਾਹਨ ਮਹਿ ਤੂੰ ਸਾਚਾ ਸਾਹਾ ਵਾਪਾਰਨ ਮਹਿ ਵਾਪਾਰੀ ॥੪॥	करतन महि तूँ करता कहिअहि आचारन महि आचारी ॥ साहन महि तूँ साचा साहा वापारन महि वापारी ॥४॥
ਦਰਬਾਰਨ ਮਹਿ ਤੇਰੋ ਦਰਬਾਰਾ ਸਰਨ ਪਾਲਨ ਟੀਕਾ ॥ ਲਖਿਮੀ ਕੇਤਕ ਗਨੀ ਨ ਜਾਈਐ ਗਨਿ ਨ ਸਕਉ ਸੀਕਾ ॥੫॥	दरबारन महि तेरो दरबारा सरन पालन टीका ॥ लखिमी केतक गनी न जाईऐ गनि न सकउ सीका ॥५॥
ਨਾਮਨ ਮਹਿ ਤੇਰੋ ਪ੍ਰਭ ਨਾਮਾ ਗਿਆਨਨ ਮਹਿ ਗਿਆਨੀ ॥ ਜੁਗਤਨ ਮਹਿ ਤੇਰੀ ਪ੍ਰਭ ਜੁਗਤਾ ਇਸਨਾਨਨ ਮਹਿ ਇਸਨਾਨੀ ॥੬॥	नामन महि तेरो प्रभ नामा गिआनन महि गिआनी ॥ जुगतन महि तेरी प्रभ जुगता इसनानन महि इसनानी ॥६॥
ਸਿਧਨ ਮਹਿ ਤੇਰੀ ਪ੍ਰਭ ਸਿਧਾ ਕਰਮਨ ਸਿਰਿ ਕਰਮਾ ॥ ਆਗਿਆ ਮਹਿ ਤੇਰੀ ਪ੍ਰਭ ਆਗਿਆ ਹੁਕਮਨ ਸਿਰਿ ਹੁਕਮਾ ॥੭॥	सिधन महि तेरी प्रभ सिधा करमन सिरि करमा ॥ आगिआ महि तेरी प्रभ आगिआ हुकमन सिरि हुकमा ॥७॥
ਪੰਨਾ ੫੦੮	**पृ-५०८**
ਜਿਉ ਬੋਲਾਵਹਿ ਤਿਉ ਬੋਲਹ ਸੁਆਮੀ ਕੁਦਰਤਿ ਕਵਨ ਹਮਾਰੀ ॥ ਸਾਧਸੰਗਿ ਨਾਨਕ ਜਸੁ ਗਾਇਓ ਜੋ ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਅਤਿ ਪਿਆਰੀ ॥੮॥੧॥੮	जिउ बोलावहि तिउ बोलहि सुआमी कुदरति कवन हमारी ॥ साधसँगि नानक जसु गाइओ जो प्रभ की अति पिआरी ॥८॥१॥८॥

गूजरी महला -५ घर -२
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी हमें यह समझाते हैं कि हम किस प्रकार से उस दयालु सर्वशक्तिमान प्रभु की स्तुति का वर्णन करें जो हमें सब कुछ देने में सक्षम है तथा जो कुछ भी हमें चाहिए, वह देता है ।

गुरु जी ईश्वर को सम्बोधित करते हुये कहते हैं "हे' प्रभु, तुम्हें राजाओं के राजा कहा जाता है, अथवा ज़मींदारों में बड़े ज़मींदार हो ।ठाकुरों में सबसे बड़ी तुम्हारी ठकुराई है और सभी कौमों की सिरमौर तुम्हारी कौम है "।(१)

ईश्वर के प्रभुत्व को देखते हुये गुरु जी उसे पितातुल्य मानते हैं तथा कहते हैं "ओ' मेरे पिता, तुम अगम रूप से बहुत महान हो, हम तेरी क्या स्तुति करें, हम तो विस्मित होकर तेरे किये हुये अचरज देख रहे हैं "।(१-विराम)

प्रभु की प्रशंसा करते हुये गुरु जी आगे कहते हैं "ओ' प्रभु, आन्नदित लोगों में से तुम सबसे अधिक आन्नदित, तथा दाता जनों में से तुम सबसे बड़े दाता कहलाते हो।प्रतापी लोगों में से तुम अति प्रतापी, तथा सर्वोत्तम रसों में रते हुये तुम्हीं कहे जाते हो "। (२)

प्रसिद्धि प्राप्त अन्य लोगों की श्रेणियों में भी प्रभु को शीर्षस्थान देते हुये गुरु जी कहते हैं "(ओ' स्वामी) सूरमा तथा वीरों में से तुम सर्वोच्च

सूरमा और भोगियों में से बड़े भोगी कहलाते हो । गृहस्थ लोगों में से उच्च गृहस्थ, तथा योगियों में से महानतम योगी हो ”।(३)

गुरु जी इतने पर ही नहीं रुकते, वह कहते जा रहे हैं “ (ओ’ प्रभु) सृजन करने वालों में तुम श्रेष्ठ सृजनकर्ता और आचार्यों में सबसे पवित्र आचार्य कहलाते हो। अन्य शाह/साहूकारों से बड़े तथा सच्चे साहूकार हो और व्यापारियों में से अति उत्तम व्यापारी हो ”। (४)

अब गुरु जी राजा लोगों के भव्य दरबारों (जहाँ लोग आकर आदर से झुकते है) का उदाहरण देते हुये कहते हैं “ओ’ प्रभु, सभी दरबारों में से भव्य दरबार तुम्हारा हैं जहाँ सबको शरण मिलती है और उनकी पालना होती है ।जहाँ पर अनगिनत धन सम्पदा (लक्ष्मी) है, मैं तो (उस भंडार में से) सिक्के भी नहीं गिन सकता ”।(५)

अब गुरु जी उन लोगों की बात कर रहे हैं जिन्होंने धर्म दान एवं अन्य पुण्य कर्मों के द्वारा बहुत नाम तथा यश अर्जित किया है। वह कहते हैं “सभी यशस्वी अथवा नामी लोगों में से तुम्हारा नाम और यश सर्वोपरि है तथा सभी ज्ञानियों में से बड़े ज्ञानी तुम हो। हे प्रभु, सभी युक्तियों में तुम सबसे अधिक प्रवीण हो और पवित्रता में तुम सर्वोच्च हो ”। (६)

कुछ सिद्ध लोग चमत्कारिक विधियों के द्वारा दूसरों को प्रभावित करते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं “ हे’ प्रभु, सब सिद्धों में से तुम्हारी चमत्कारी शक्ति तथा कर्म सर्वोपरि हैं । हे’ प्रभु, तुम्हारी आज्ञा सबकी आज्ञा से और तेरा आदेश सभी के आदेशों से उपर है ”।(७)

गुरु जी विनम्रता से शब्द के अंत में कहते हैं “ओ’ स्वामी, हमारी अपनी कोई सामर्थ्य नहीं है, तुम जैसा बोलने को कहते हो, वही हम बोलते हैं । वह संतसंगति जो प्रभु को अति प्रिय है, उसमें बैठ कर नानक ने प्रभु का (थोड़ा बहुत) यशगान किया है ”।(८-१-८)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें किसी देवी देवता अथवा अन्य कोई भी सहायता अथवा आश्रय के लिये (चाहे वह धन सम्पदा, या नैतिक सहायता, या किसी और प्रकार का मार्ग दर्शन हो) दूसरों पर निर्भर नहीं होना चाहिये । हमें केवल उसी सर्वशक्तिमान परमेश्वर का आश्रय लेना चाहिये और केवल उसी की महिमा करनी चाहिये जो सर्वोपरि है ।

ਪੰਨਾ ੫੦੯

ਸਲੋਕੁ ॥

ਕਬੀਰ ਮੁਕਤਿ ਦੁਆਰਾ ਸੰਕੁੜਾ ਰਾਈ ਦਸਵੈ ਭਾਇ ॥
ਮਨੁ ਤਉ ਮੈਗਲੁ ਹੋਇ ਰਹਾ ਨਿਕਸਿਆ ਕਿਉ ਕਰਿ ਜਾਇ ॥

ਐਸਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਜੇ ਮਿਲੈ ਤੁਠਾ ਕਰੇ ਪਸਾਉ ॥
ਮੁਕਤਿ ਦੁਆਰਾ ਮੋਕਲਾ ਸਹਜੇ ਆਵਉ ਜਾਉ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਨਾਨਕ ਮੁਕਤਿ ਦੁਆਰਾ ਅਤਿ ਨੀਕਾ ਨਾਨ੍ਹਾ ਹੋਇ ਸੁ ਜਾਇ ॥
ਹਉਮੈ ਮਨੁ ਅਸਥੂਲੁ ਹੈ ਕਿਉ ਕਰਿ ਵਿਚੁ ਦੇ ਜਾਇ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਮਿਲਿਐ ਹਉਮੈਗਈ ਜੋਤਿ ਰਹੀ ਸਭ ਆਇ ॥

ਪੰਨਾ ੫੧੦

ਇਹੁ ਜੀਉ ਸਦਾ ਮੁਕਤੁ ਹੈ ਸਹਜੇ ਰਹਿਆ ਸਮਾਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਪ੍ਰਭਿ ਸੰਸਾਰੁ ਉਪਾਇ ਕੈ ਵਸਿ ਆਪਣੈ ਕੀਤਾ ॥
ਗਣਤੈ ਪ੍ਰਭੂ ਨ ਪਾਈਐ ਦੂਜੈ ਭਰਮੀਤਾ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਮਿਲਿਐ ਜੀਵਤੁ ਮਰੈ ਬੁਝਿ ਸਚਿ ਸਮੀਤਾ ॥
ਸਬਦੇ ਹਉਮੈ ਖੋਈਐ ਹਰਿ ਮੇਲਿ ਮਿਲੀਤਾ ॥
ਸਭ ਕਿਛੁ ਜਾਣੈ ਕਰੇ ਆਪਿ ਆਪੇ ਵਿਗਸੀਤਾ ॥੪॥

पृ-५०९

सलोक ॥

कबीर मुकति दुआरा सँकुड़ा राई दसवै भाइ ॥
मनु तउ मैगलु होइ रहा निकसिआ किउ कर जाइ ॥

ऐसा सतिगुरु जे मिलै तुठा करे पसाउ ॥
मुकति दुआरा मोकला सहजे आवउ जाउ ॥१॥

महला 3 ॥

नानक मुकति दुआरा अति नीका नाना् होइ सु जाइ ॥
हउमै मनु असथूलु है किउ करि विचु दे जाइ ॥
सतिगुर मिलिऐ हउमैगई जोति रही सभ आइ ॥

प ५१०

इहु जीउ सदा मुकतु है सहजे रहिआ समाइ ॥२॥

पउड़ी ॥

प्रभि सँसारु उपाइ कै वसि आपणै कीता ॥
गणतै प्रभू न पाईऐ दूजै भरमीता ॥
सतिगुर मिलिऐ जीवतु मरै बुझि सचि समीता ॥
सबदे हउमै खोईऐ हरि मेलि मिलीता ॥
सभ किछु जाणै करे आपि आपे विगसीता ॥४॥

सलोक

इस पौड़ी में गुरु जी मोक्ष पाने की धारणा पर प्रकाश डालते हैं। उनका कहना है कि मोक्ष को प्राप्त करना इतना कठिन क्यों है और हम कैसे इसे सरलता से प्राप्त कर सकते हैं।

गुरु जी सर्वप्रथम कबीर जी के एक दोहे को उद्धरित करते हैं जिसमें कबीर जी का कहना है "ओ' कबीर, मोक्ष का द्वार अति संकरा राई के दाने के दसवें भाग के समान है। (परन्तु साँसारिक मोहमाया के कारण) हमारा मन एक उन्मत्त हाथी के समान विशालकाय है, अत: हम कैसे उस द्वार में से निकल सकते हैं।(इसका केवल यही उपाय है कि) यदि हम ऐसे गुरु से मिलें जो हमसे प्रसन्न हों और कृपालु भी हो जायें तो मोक्ष का द्वार इतना बड़ा हो जाता है कि हम सहजता से उसके अंदर आ जा सकते हैं"।(१)

महला – ३

उपरोक्त श्लोक में कबीर जी ने कहा "मोक्ष द्वार राई के दाने के दसवें भाग के समान महीन है, पर हमारा मन एक उन्मत्त हाथी के समान बड़ा है, वह ऐसे छोटे द्वार से किस प्रकार निकल सकता है "?

इस श्लोक में गुरु अमरदास जी (तृतीय गुरु) कबीर जी से सहमति रखते हुये हमें कारण बताते हैं कि क्यों मन उन्मत्त हाथी की भाँति बड़ा है। वह कहते हैं " ओ' नानक, (इसमें कोई संशय नहीं है कि) मोक्ष का द्वार बहुत संकरा हैं और कोई बहुत ही नन्हा हो तभी वह उसमें से जा सकता है। परन्तु अंहकार के कारण मन स्थूल हो जाता है तब कैसे उस संकरे द्वार से निकल सकता है? (उत्तर यह है कि), सच्चे गुरु के मिलने पर मनुष्य के मन से अंहकार चला जाता है और उसके स्थान पर दैवी प्रकाश का पसार हो जाता है। तब हमारी आत्मा (मायामोह के अंहकार से) सदा के लिये मुक्ति पाकर (प्रभु में) सहजता से समाई रहती है"।(२)

पौड़ी

अब गुरु जी उपरोक्त दोनों श्लोकों को पौड़ी में भावनात्मक रूप से व्यक्त करते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), प्रभु ने संसार की उत्पत्ति करके उसे

अपने ही वश में रखा है, (हमें स्मरण रहे) अन्य भ्रमों में रह कर (कर्म कांड जैसे कि व्रत, तीर्थ स्नान, माला जपना इत्यादि) उनकी गणना करने से हमें प्रभु नहीं प्राप्त होंगे, अपितु, हम दुविधा (प्रभु को छोड़ मायामोह) में भटकते रहेंगे ।केवल सच्चे गुरु के मिलने पर (और उसे मानने के पश्चात मन सांसारिक आकर्षणों से विरक्त हो जाता है और तब) सांसारिक मायामोह के यथार्थ को सत्य रूप में पहचान कर (मनुष्य) जीवित रहते हुये भी मृत के समान रहता है । इस प्रकार गुरु के शब्द का अनुसरण कर हम अपने अहम को गँवा कर प्रभु से मिल जाते हैं । (हमें यह भी समझ लेना चाहिये कि प्रभु स्वयं) सब कुछ जानते हैं और करते हैं तथा स्वयं ही प्रसन्न होते हैं (सांसारिक खेल तमाशे देख कर) ”।(४)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम जब तक सच्चे गुरु से मिल कर उसके निर्देशों के अनुसार अपने अहम को पूर्ण रूप से नहीं त्यागते और जीवित रहते हुये मृत समान नहीं प्रतीत करते तब तक हमें मोक्ष नहीं मिल सकता, अथवा प्रभु के साथ मिलन नहीं हो पायेगा ।

ਪੰਨਾ ੫੧੧

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਜਿ ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵੇ ਆਪਣਾ ਤਿਸ ਨੋ ਪੂਜੇ ਸਭੁ ਕੋਇ ॥
ਸਭਨਾ ਉਪਾਵਾ ਸਿਰਿ ਉਪਾਉ ਹੈ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਪਰਾਪਤਿ ਹੋਇ ॥
ਅੰਤਰਿ ਸੀਤਲ ਸਾਤਿ ਵਸੈ ਜਪਿ ਹਿਰਦੈ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਹੋਇ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਖਾਣਾ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪੈਨਣਾ ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਵਡਾਈ ਹੋਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਏ ਮਨ ਗੁਰ ਕੀ ਸਿਖ ਸੁਣਿ ਹਰਿਪਾਵਹਿ ਗੁਣੀ ਨਿਧਾਨੁ ॥

ਪੰਨਾ ੫੧੨

ਹਰਿ ਸੁਖਦਾਤਾ ਮਨਿ ਵਸੈ ਹਉਮੈ ਜਾਇ ਗੁਮਾਨੁ॥
ਨਾਨਕ ਨਦਰੀ ਪਾਈਐ ਤਾ ਅਨਦਿਨੁ ਲਾਗੈ ਧਿਆਨੁ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਸਭੁ ਸਚੁ ਹੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਵਿਤਾ ॥
ਅੰਦਰਹੁ ਕਪਟੁ ਵਿਕਾਰੁ ਗਇਆ ਮਨੁ ਸਹਜੇ ਜਿਤਾ ॥
ਤਹ ਜੋਤਿ ਪ੍ਰਗਾਸੁ ਅਨੰਦ ਰਸੁ ਅਗਿਆਨੁ ਗਵਿਤਾ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਹਰਿ ਕੇ ਗੁਣ ਰਵੈ ਗੁਣ ਪਰਗਟੁਕਿਤਾ ॥
ਸਭਨਾ ਦਾਤਾ ਏਕੁ ਹੈ ਇਕੋ ਹਰਿ ਮਿਤਾ ॥੯॥

पृ-५११

सलोक महला ३॥

जि सतिगुरु सेवे आपणा तिस नो पूजे सभु कोइ ॥
सभना उपावा सिरि उपाउ है हरि नामु परापति होइ ॥
अँतरि सीतल साति वसै जपि हिरदै सदा सुखु होइ ॥
अँमृतु खाणा अँमृतु पैनणा नानक नामु वडाई होइ ॥१॥

महला ३॥

ए मन गुर की सिख सुणि हरिपावहि गुणी निधानु ॥

पृ-५१२

हरि सुखदाता मनि वसै हउमै जाइ गुमानु ॥
नानक नदरी पाइऐ ता अनदिनु लागै धिआनु ॥२॥

पउड़ी

सतु सँतोखु सभु सचु है गुरमुखि पविता ॥
अँदरहु कपटु विकारु गइआ मनु सहजे जिता ॥
तह जोति प्रगासु अनँद रसु अगिआनु गविता ॥
अनदिनु हरि के गुण रवै गुण परगटु किता ॥
सभना दाता एकु है इको हरि मिता ॥९॥

सलोक महला -३

इस शब्द में गुरु जी यह वर्णन करते हैं कि एक सच्चे गुरु के निर्देश को मान कर चलने से मनुष्य पर किस प्रकार से ईश्वर की कृपा होती है ।

वह कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), जो कोई भी अपने सच्चे गुरु की सेवा करता है, उसकी पूजा अथवा आदर सभी करते हैं ।(सबसे महत्वपूर्ण यह है कि) ऐसा मनुष्य प्रभु नाम को प्राप्त करता है जो कि (समस्त दुखों को दूर करने का) सर्वोत्तम उपाय है । प्रभु नाम का ध्यान करने से हृदय में सदा के लिये सुख, शांति और शीतलता बस जाती है । ओ' नानक, प्रभु नाम इतना महत्वपूर्ण है कि उसे जपने वाला जो कुछ भी खाता पहनता है उसे वह अँमृत समान लगता है "।(१)

महला -३

उपरोक्त बताये गये आशीर्वाद एवं लाभ जो प्रभु के ध्यान से प्राप्त होते हैं उनके लिये गुरु जी अपने (परोक्ष में हमारे भी) मन को सलाह देते हुये कहते हैं " ओ' मेरे मन, गुरु के दिये हुये परामर्श को सुनो जिससे तुम्हें भी हरि प्राप्त हो सकें जो गुणों के भंडार हैं । (ऐसा करने से) सुखों के दाता मन में आकर बसेंगे और (मन में से) अहम अथवा घमंड चले जायेंगे । ओ' नानक, जब (गुरु की) कृपा दृष्टि से हम प्रभु को पाते हैं तब दिन रात हमारा मन (उसी के) ध्यान में रहता है "।(२)

पौड़ी

गुरु की शिक्षा का अनुसरण करके प्रभु कृपा से प्राप्त लाभ का वर्णन करने के पश्चात शिष्य की मनोदशा एवं आचरण पर गुरु जी व्याख्या करते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), जो मनुष्य गुरु के निर्देश के अनुसार रहता है, वह (आचरण में) पवित्र हो जाता है, सत्य तथा संतोष पा लेता है और अनुभव करता है कि अनंत प्रभु सर्वव्यापी हैं । उसके अंतरमन से छल कपट एवं विकार चले जाते हैं और वह मन पर सहज ही विजय पा लेता है ।(इस मनोस्थित में) दैवी प्रकाश से अज्ञान का अँधकार गँवा कर आनंद रस प्राप्त होता है । तब मनुष्य दिन रात हरि के गुण गाता है और उसमें दैवी गुण प्रकट होते है (तत्पश्चात, मन में पूर्ण विश्वास हो जाता है कि) केवल एक हरि ही सबका दाता है और मित्र है "।(९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) के निर्देशों का पालन करना चाहिए जिससे हमारे मन में से अहम, अंहकार तथा अन्य त्रुटियाँ दूर हों और उनके स्थान पर सत्य, शांति एवं शीतलता आकर बसें । ऐसी मनोदशा के अन्तर्गत हम निरंतर प्रभु के गुणगान के द्वारा अँतरमन में दैवी प्रकाश के उत्सर्जन का अनुभव करते हुए दैवी आनंद पायेंगे ।

ਪੰਨਾ ੫੧੩

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਹਉਮੈ ਮਮਤਾ ਮੋਹਣੀ ਮਨਮੁਖਾ ਨੋ ਗਈ ਖਾਇ ॥
ਜੋ ਮੋਹਿ ਦੂਜੈ ਚਿਤੁ ਲਾਇਦੇ ਤਿਨਾ ਵਿਆਪਿ ਰਹੀ ਲਪਟਾਇ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਪਰਜਾਲੀਐ ਤਾ ਏਹ ਵਿਚਹੁ ਜਾਇ ॥
ਤਨੁ ਮਨੁ ਹੋਵੈ ਉਜਲਾ ਨਾਮੁ ਵਸੈ ਮਨਿ ਆਇ ॥
ਨਾਨਕ ਮਾਇਆ ਕਾ ਮਾਰਣੁ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਇਆ ਜਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਇਹੁ ਮਨੁ ਕੇਤੜਿਆ ਜੁਗ ਭਰਮਿਆ ਥਿਰੁ ਰਹੈ ਨ ਆਵੈ ਜਾਇ ॥
ਹਰਿ ਭਾਣਾ ਤਾ ਭਰਮਾਇਅਨੁ ਕਰਿ ਪਰਪੰਚੁ ਖੇਲੁ ਉਪਾਇ ॥
ਜਾ ਹਰਿ ਬਖਸੇ ਤਾ ਗੁਰਮਿਲੈ ਅਸਥਿਰੁ ਰਹੈ ਸਮਾਇ ॥

ਪੰਨਾ ੫੧੪

ਨਾਨਕ ਮਨ ਹੀ ਤੇ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ਨਾ ਕਿਛੁ ਮਰੈ ਨ ਜਾਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਕਾਇਆ ਕੋਟੁ ਅਪਾਰੁ ਹੈ ਮਿਲਣਾ ਸੰਜੋਗੀ ॥
ਕਾਇਆ ਅੰਦਰਿ ਆਪਿ ਵਸਿ ਰਹਿਆ ਆਪੇ ਰਸ ਭੋਗੀ ॥
ਆਪਿ ਅਤੀਤੁ ਅਲਿਪਤੁ ਹੈ ਨਿਰਜੋਗੁ ਹਰਿ ਜੋਗੀ ॥
ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਸੋ ਕਰੇ ਹਰਿ ਕਰੇ ਸੁ ਹੋਗੀ ॥
ਹਰਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਈਐ ਲਹਿ ਜਾਹਿ ਵਿਜੋਗੀ ॥੧੩॥

पृ-५१३

सलोक महला ३॥

हउमै ममता मोहणी मनमुखा नो गई खाइ ॥
जो मोहि दूजै चितु लाइदे तिना विआपि रही लपटाइ ॥
गुर कै सबदि परजालीऐ ता एह विचहु जाइ ॥
तनु मनु होवै उजला नामु वसै मनि आइ ॥
नानक माइआ का मारणु हरि नामु है गुरमुखि पाइआ जाइ ॥१॥

महला -३

इहु मनु केतड़िआ जुग भरमिआ थिरु रहै न आवै जाइ ॥
हरि भाणा ता भरमाइअनु करि परपँचु खेलु उपाइ ॥
जा हरि बखसे ता गुरमिलै असथिरु रहै समाइ ॥

पृ-५१४

नानक मन ही ते मनु मानिआ ना किछु मरै न जाइ ॥२॥

पौड़ी

काइआ कोटु अपारु है मिलणा सँजोगी ॥
काइआ अँदरि आपि वसि रहिआ आपे रस भोगी ॥
आपि अतीतु अलिपतु है निरजोगु हरि जोगी ॥
जो तिसु भावै सो करे हरि करे सु होगी ॥
हरि गुरमुखि नामु धिआईऐ लहि जाहि विजोगी ॥१३॥

सलोक महला -३

कभी कभी मनुष्य सोचता है कि यह मानव शरीर ही आत्मा की समस्त कठिनाइयों के लिये उत्तरदायी है, क्योंकि जब आत्मा शरीर में प्रवेश करती है तब वह सब प्रकार की दुष्प्रवृत्तियों, जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह (सांसारिक धन दौलत और सत्ता) इत्यादि में उलझ कर अनेकों कष्ट सहती है । इस पौड़ी में गुरु जी इस मिथ्या भ्रम को दूर करना चाह रहे हैं, तथा मानव शरीर के सही स्वभाव एवं अभिप्राय के विषय में बता रहे हैं । परन्तु, इससे पूर्व वह एक बार फिर से अँहकार और सब कुछ पाने का लोभ तथा अन्य दुष्प्रवृत्तियों के दुर्भाग्यपूर्ण परिणामों पर दृढ़ता से अपने भाव व्यक्त करते हैं ।

वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), अहम की भावना और प्रभुत्व की पृवृत्ति अति मनमोहक अवयव हैं जो कि एक अभिमानी मनुष्य को नष्ट कर देते हैं । जो (प्रभु को छोड़ कर) माया मोह में रुचि रखते हैं वह उनसे लिपट कर उनके अंदर व्याप जाती है, (उन्हें अपने विष से वश में रखती है)।किन्तु जब हम गुरु के शब्द के द्वारा इस (माया मोह तथा अभिमान) को जला देते हैं, तब यह हमारे अंदर से जाती है और हमारा मन और तन दोनों निर्मल हो जाते हैं और फिर प्रभु का नाम ह्रदय में आकर बस जाता है । (संक्षेप में), ओ' नानक, हरि का नाम ही माया रुपी विष का नाशक है और हरि नाम को गुरु का अनुसरण करके पाया जाता है "।(१)

महला - ३

उपरोक्त श्लोक में गुरु जी ने हमें कहा है कि यदि हम गुरु के शब्द के द्वारा अपना अंहकार एवं प्रभुत्व जला दें, तो यह हमारे मन में से चला जाता है । अब गुरु जी मन के कुछ और तथ्यों के विषय में कहते हैं " यह हमारा मन (आत्मा) कितने युगों से भ्रमों में भटकता रहा है, अर्थात स्थिर नहीं रहा, तथा (संसार में) इसका आवागमन निरंतर लगा हुया है ।किन्तु यह हरि की इच्छा है कि उसने इस भ्रमित संसार की रचना करके उसमें जीवों को प्रपंच में डाल दिया है और वह कालचक्र में पड़े रहते हैं । जब हरि दयालु होते हैं तभी गुरु से मिलाप होता है और अस्थिर मन हरि में समा जाता है । ओ' नानक, हमारा मन ही फिर अपने को (सच्चे सही मार्ग के लिये) विश्वास दिलाता है कि जन्म मरण कुछ नहीं है (केवल आत्मा का शरीरों में स्थानांतरण है, वैसे ही जैसे कि हम कपड़े बदलते हैं) "।(२)

पौड़ी

अब गुरु जी मानव शरीर के सही स्वभाव का वर्णन करते हुये कहते हैं "मानव की काया अथवा शरीर एक विशाल क़िले के समान है जो कि संयोग अथवा सौभाग्य से मिलता है । इसी काया के अंदर ईश्वर स्वयं बसते हैं और सब रसों को भोग रहे हैं, किन्तु वह योगी हरि स्वयं पूर्णतया निर्लिप्त हैं, अतीत हैं । जो भी हरि को भाता है वही वह करता है और जो वह करता है वही होता है । (हमारे वश में जो है वह यही है कि) हम गुरु की संगति में रह कर हरि नाम का ध्यान करें, तभी हरि से हमारा वियोग समाप्त होगा "।(१३)

इस पौड़ी का संदेश यह है कि मानव शरीर कई प्रकार के विकारों (माया, मोह, क्रोध, लोभ आदि) को जन्म देता है और आत्मा को सही अथवा सत्य के मार्ग से भटका देता है ।किन्तु फिर भी यह काया प्रभु का निवासस्थान है जहां पर रह कर अपने रचे हुये संसार के उस खेल का वह आनंद लेते हैं जिसमें मनुष्य अपनी दुष्ट पृवृत्तियों अथवा सांसारिक मोह माया से बँधे जन्म मरण के फेर में भटकते रहते हैं। इस प्रकार की अनर्गल गतिविधियों से बचाव के लिये हमें गुरु के मतानुसार प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये, जिससे हमारा प्रभु से वियोग समाप्त होगा और हम सदैवी रूप से प्रभु की संगति का आनंद पायेंगे ।

ਪੰਨਾ ੫੧੫

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਵਾਹੁ ਵਾਹੁ ਬਾਣੀ ਨਿਰੰਕਾਰ ਹੈ ਤਿਸੁ ਜੇਵਡੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਇ ॥
ਵਾਹੁ ਵਾਹੁ ਅਗਮ ਅਥਾਹੁ ਹੈ ਵਾਹੁ ਵਾਹੁ ਸਚਾ ਸੋਇ ॥
ਵਾਹੁ ਵਾਹੁ ਵੇਪਰਵਾਹੁ ਹੈ ਵਾਹੁ ਵਾਹੁ ਕਰੇ ਸੁ ਹੋਇ ॥
ਵਾਹੁ ਵਾਹੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਨਾਮੁ ਹੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਵੈ ਕੋਇ ॥
ਵਾਹੁ ਵਾਹੁ ਕਰਮੀਪਾਈਐ ਆਪਿ ਦਇਆ ਕਰਿ ਦੇਇ ॥

ਪੰਨਾ ੫੧੬

ਨਾਨਕ ਵਾਹੁ ਵਾਹੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਈਐ ਅਨਦਿਨੁ ਨਾਮੁ ਲਏਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਸਾਤਿ ਨ ਆਵਈ ਦੂਜੀ ਨਾਹੀ ਜਾਇ ॥
ਜੇ ਬਹੁਤੇਰਾ ਲੋਚੀਐ ਵਿਣੁ ਕਰਮੈ ਨ ਪਾਇਆ ਜਾਇ ॥
ਜਿਨ੍ਾ ਅੰਤਰਿ ਲੋਭ ਵਿਕਾਰੁ ਹੈ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਖੁਆਇ ॥
ਜੰਮਣੁ ਮਰਣੁ ਨ ਚੁਕਈ ਹਉਮੈ ਵਿਚਿ ਦੁਖੁ ਪਾਇ ॥
ਜਿਨ੍ਾ ਸਤਿਗੁਰ ਸਿਉ ਚਿਤੁ ਲਾਇਆ ਸੁ ਖਾਲੀ ਕੋਈ ਨਾਹਿ ॥
ਤਿਨ ਜਮ ਕੀ ਤਲਬ ਨ ਹੋਵਈ ਨਾ ਓਇ ਦੁਖ ਸਹਾਹਿ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਉਬਰੇ ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਸਮਾਹਿ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਢਾਢੀ ਤਿਸ ਨੋ ਆਖੀਐ ਜਿ ਖਸਮੈ ਧਰੇ ਪਿਆਰੁ॥
ਦਰਿ ਖੜਾ ਸੇਵਾ ਕਰੇ ਗੁਰ ਸਬਦੀ ਵੀਚਾਰੁ ॥
ਢਾਢੀ ਦਰੁ ਘਰੁ ਪਾਇਸੀ ਸਚੁ ਰਖੈ ਉਰ ਧਾਰਿ ॥
ਢਾਢੀ ਕਾ ਮਹਲੁ ਅਗਲਾ ਹਰਿ ਕੈ ਨਾਇ ਪਿਆਰਿ ॥
ਢਾਢੀ ਕੀ ਸੇਵਾ ਚਾਕਰੀ ਹਰਿ ਜਪਿ ਹਰਿ ਨਿਸਤਾਰਿ ॥੧੮॥

पृ-५१५

सलोक महला ३॥

वाहु वाहु बाणी निरँकार है तिसु जेवडु अवरु न कोइ ॥
वाहु वाहु अगम अथाहु है वाहु वाहु सचा सोइ ॥
वाहु वाहु वेपरवाहु है वाहु वाहु करे सु होइ ॥
वाहु वाहु अँमृत नामु है गुरमुखि पावै कोइ ॥
वाहु वाहु करमीपाईऐ आपि दइआ करि देइ ॥

पृ-५१६

नानक वाहु वाहु गुरमुखि पाईऐ अनदिनु नामु लएइ ॥१॥

महला ३॥

बिनु सतिगुर सेवे साति न आवई दूजी नाही जाइ ॥
जे बहुतेरा लोचीऐ विणु करमै न पाइआ जाइ ॥
जिना् अँतरि लोभ विकारु है दूजै भाइ खुआइ ॥
जँमणु मरणु न चुकई हउमै विचि दुखु पाइ ॥
जिना् सतिगुर सिउ चितु लाइआ सु खाली कोई नाहि ॥
तिन जम की तलब न होवई ना ओइ दुख सहाहि ॥
नानक गुरमुखि उबरे सचै सबदि समाहि ॥२॥

पउड़ी ॥

ढाढी तिस नो आखीऐ जि खसमै धरे पिआरु ॥
दरि खड़ा सेवा करे गुर सबदी वीचारु ॥
ढाढी दरु घरु पाइसी सचु रखै उर धारि ॥
ढाढी का महलु अगला हरि कै नाइ पिआरि ॥
ढाढी की सेवा चाकरी हरि जपि हरि निसतारि ॥१८॥

सलोक महला -३

अनेक पौड़ियों और शब्दों में गुरु जी ने हमें परामर्श दिया है कि प्रभु सत्य है, सदैवी है और गुरु की वाणी (गुरबाणी) भी सत्य है । सत्य प्रभु को पाने का एकमात्र उपाय यही है कि गुरु की आज्ञा मानो जिसका मुख्य आशय यह है कि दिन और रात हम प्रभु का धन्यवाद करें और प्रशंसा में वाह , वाह अथवा 'वाहेगुरु' वाहेगुरु' का उच्चारण करते रहें । इस शलोक में गुरु जी हमें वाह, वाह या वाहेगुरु, वाहेगुरु शब्द की उत्तमता एवं महत्व के विषय में बता रहे हैं और कहते हैं कि वह लोग कितने भाग्यशाली हैं जिन्हें यह मंत्र गुरु से प्राप्त होता है और वह इसे दिन और रात दोहराते रहते हैं ।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), निराकार प्रभु के लिये वाह, वाह (अत्यंत सुंदर) शब्द है, इससे बड़ा और कुछ भी नहीं । वह अगम (समझ से बाहर), अथाह और अद्भुत है, वह प्रशंसा से परे है । बारम्बार उस अँमृत नाम की महिमा उचित है, जो गुरु की कृपा से कोई बिरला ही कर पाता है ।यह सौभाग्य ही है कि हमें प्रभु की दयालुता से वाह, वाह या वाहेगुरु, वाहेगुरु कहने का सुअवसर मिला हुया है, ओ' नानक, केवल गुरु के द्वारा ही (हम यह उपहार) ग्रहण करते हैं (और जो कोई इसे पा लेता है वह) दिन और रात प्रभु नाम का ध्यान करता है "।(१)

महला -३

उपरोक्त शलोक में गुरु जी ने यह व्यक्त किया कि हमें प्रभु नाम की प्राप्ति केवल गुरु की कृपा से ही होती है । अब वह समझाते हैं कि गुरु से मार्ग दर्शन तथा निर्देश लेना हमारे लिये क्यों आवश्यक है । वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), सच्चे गुरु की सेवा और उसके मार्ग दर्शन के अतिरिक्त, हमें किसी दूसरी जगह से शांति नहीं प्राप्त हो सकती । हम चाहे कितनी भी इच्छा करें, बिना सौभाग्य के उस (प्रभु) को नहीं पाया जा सकता ।जिनके मन के अंदर लोभ, लालच का विकार है वह दुविधा (प्रभु की अपेक्षा माया के प्रति अधिक मोह) में ही समाप्त हो जाते हैं ।वह अपने अहम के कारण दुख पाते हैं और उनके जन्म मरण के चक्र का अंत नही होता । परन्तु जिन लोगों ने सच्चे गुरु से मन लगा

लिया है (उसकी शिक्षा का पालन किया है) वह कोई भी (प्रभु की कृपा एवं वरदान से) वंचित नहीं रहते। उन्हें (उनके करमों का लेखा जोखा करने के लिये) यमराज भी नहीं बुलाते और वह कोई दुख दर्द भी नही सहते ।संक्षेप में, ओ' नानक, गुरु के शिष्य (सांसारिक आपदायों से) उबर जाते हैं और गुरु के सच्चे शब्द अथवा शिक्षा से वह (प्रभु में) समा जाते हैं ”।(२)

पौड़ी

अब गुरु जी बताते हैं कि कौन गुरु का सच्चा शिष्य कहलाने योग्य है । इस संदर्भ में वह भाटों का उदाहरण देते हैं, जो तत्कालीन राजा रजवाड़ों, तथा अन्य प्रतिष्ठित धनाढ़य लोगों के द्वार पर खड़े उनका यशगान इस आशा से किया करते थे कि वह प्रसन्न होकर उन्हें पुरस्कार देंगे । सो गुरु जी कहते हैं “वही केवल (प्रभु का) सच्चा भाट कहा जा सकता है, जो अपने स्वामी के प्रेम में रमा हुया हो ।(प्रभु के) द्वार पर खड़े होकर वह गुरु के शब्द का ध्यान कर प्रभु की सेवा करे । ऐसा भाट जो हृदय में सच्चे प्रभु को बसाये हुये है, अवश्य ही उसके द्वार के अंदर प्रवेश पा सकेगा, तथा प्रभु के साथ इतना प्रेम उसे और अधिक ऊँचे महल (अर्थात, प्रभु के प्रति प्रेम भावना की अति प्रगाढ़ अवस्था) में ले जायेगा । संक्षेप में, उस भाट की सेवा एवं निष्ठा से यही अपेक्षा है कि वह प्रभु नाम का जाप करे और हरि उसे (सांसारिक भवसागर से) पार उतारने में सहायता करें ”।(१८)

इस पौड़ी का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु से मिलन चाहते हैं तो एक सत्य तथा निष्ठावान भाट की भाँति उसके द्वार पर खड़े रह कर किसी भी प्रकार की सेवा करने को तत्पर रहें और साथ ही उसका यशगान करते हुये कहें 'ओ' विलक्षण प्रभु, ओ' विलक्षण प्रभु, अथवा 'वाहेगुरु' 'वाहेगुरु'। एक ना एक दिन गुरु की कृपा से हम प्रभु में लीन होने योग्य बन सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੫੧੭

ਰਾਗੁ ਗੂਜਰੀ ਵਾਰ ਮਹਲਾ ੫

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੫ ॥

ਅੰਤਰਿ ਗੁਰੁ ਆਰਾਧਣਾ ਜਿਹਵਾ ਜਪਿ ਗੁਰ ਨਾਉ ॥
ਨੇਤ੍ਰੀ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੇਖਣਾ ਸ੍ਰਵਣੀ ਸੁਨਣਾ ਗੁਰ ਨਾਉ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਤੀ ਰਤਿਆ ਦਰਗਹ ਪਾਈਐ ਠਾਉ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਕਿਰਪਾ ਕਰੇ ਜਿਸ ਨੋ ਏਹ ਵਥੁ ਦੇਇ ॥
ਜਗ ਮਹਿ ਉਤਮ ਕਾਢੀਅਹਿ ਵਿਰਲੇ ਕੇਈ ਕੇਇ ॥੧॥

ਮਃ ੫ ॥

ਰਖੇ ਰਖਣਹਾਰਿ ਆਪਿ ਉਬਾਰਿਅਨੁ ॥
ਗੁਰ ਕੀ ਪੈਰੀ ਪਾਇ ਕਾਜ ਸਵਾਰਿਅਨੁ ॥
ਹੋਆ ਆਪਿ ਦਇਆਲੁ ਮਨਹੁ ਨ ਵਿਸਾਰਿਅਨੁ ॥
ਸਾਧ ਜਨਾ ਕੈ ਸੰਗਿ ਭਵਜਲੁ ਤਾਰਿਅਨੁ ॥
ਸਾਕਤ ਨਿੰਦਕ ਦੁਸਟ ਖਿਨ ਮਾਹਿ ਬਿਦਾਰਿਅਨੁ ॥
ਤਿਸੁ ਸਾਹਿਬ ਕੀ ਟੇਕ ਨਾਨਕ ਮਨੈ ਮਾਹਿ ॥

ਪੰਨਾ ੫੧੮

ਜਿਸੁ ਸਿਮਰਤ ਸੁਖੁ ਹੋਇ ਸਗਲੇ ਦੂਖ ਜਾਹਿ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਅਕੁਲ ਨਿਰੰਜਨ ਪੁਰਖੁ ਅਗਮੁ ਅਪਾਰੀਐ ॥
ਸਚੋ ਸਚਾ ਸਚੁ ਸਚੁ ਨਿਹਾਰੀਐ ॥
ਕੂੜੁ ਨ ਜਾਪੈ ਕਿਛੁ ਤੇਰੀ ਧਾਰੀਐ ॥
ਸਭਸੈ ਦੇ ਦਾਤਾਰੁ ਜੇਤ ਉਪਾਰੀਐ ॥
ਇਕਤੁ ਸੂਤਿ ਪਰੋਇ ਜੋਤਿ ਸੰਜਾਰੀਐ ॥
ਹੁਕਮੇ ਭਵਜਲ ਮੰਝਿ ਹੁਕਮੇ ਤਾਰੀਐ ॥
ਪ੍ਰਭ ਜੀਉ ਤੁਧੁ ਧਿਆਏ ਸੋਇ ਜਿਸੁ ਭਾਗੁ ਮਥਾਰੀਐ ॥
ਤੇਰੀ ਗਤਿ ਮਿਤਿ ਲਖੀ ਨ ਜਾਇ ਹਉ ਤੁਧੁ ਬਲਿਹਾਰੀਐ ॥੧॥

पृ-५१७

राग गूजरी वार महला ५

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सलोक महला ५ ॥

अँतरि गुरु आराधणा जिहवा जपि गुर नाउ ॥
नेत्री सतिगुरु पेखणा स्रवणी सुणणा गुर नाउ ॥
सतिगुर सेती रतिआ दरगह पाईऐ ठाउ ॥
कहु नानक किरपा करे जिस नो एह वथु देइ ॥
जग महि उतम काढीअहि विरले केई केइ ॥१॥

महला ५॥

रखे रखणहारि आपि उबारिअनु ॥
गुर की पैरी पाइ काज सवारिअनु ॥
होआ आपि दइआलु मनहु न विसारिअनु ॥
साध जना कै सँगि भवजलु तारिअनु ॥
साकत निँदक दुसट खिन माहि बिदारिअनु ॥
तिसु साहिब की टेक नानक मनै माहि ॥

पृ-५१८

जिसु सिमरत सुखु होए सगले दूख जाहि ॥२॥

पउड़ी ॥

अकुल निरँजन पुरखु अगमु अपारीऐ ॥
सचो सचा सचु सचु निहारीऐ ॥
कूड़ु ना जापै किछु तेरी धारीऐ ॥
सभसै दे दातारु जेत उपारीऐ ॥
इकतु सूति परोइ जोति सँजारीऐ ॥
हुकमे भवजल मँझि हुकमे तारीऐ ॥
प्रभ जीउ तुधु धिआए सोइ जिसु भागु मथारीऐ ॥
तेरी गति मिति लखी न जाए हउ तुधु बलिहारीऐ ॥१॥

राग गूजरी वार महला -५

तीसरे गुरु अमरदास जी ने 'गूजरी की वार ' काव्य रचना की समाप्ति इसी विचार के साथ ही कर दी थी कि सांसारिक धन सम्पदा और सत्ता की इच्छायें एवं आशायें हमें अनेक प्रकार के कुकृत्य अथवा पाप करने को बाध्य करती हैं, जिनके फलस्वरूप हमें जन्म मरण की वेदनायें और दुख दर्द मिलते हैं । इन इच्छायों तथा वेदनायों से मुक्ति पाने का एकमात्र उपाय केवल प्रभु नाम का ध्यान है । यहाँ पर अब गुरु अर्जन देव जी (पंचम गुरु) इस 'वार' को उसी राग 'गूजरी' से आरंभ करते हैं और कहते हैं कि कैसे हमें निरंतर प्रभु तथा गुरु का ध्यान प्रेमपूर्वक करते हुए अपना जीवन व्यतीत करना चाहिए ।

वह कहते हैं "हमें अपने मन के अंदर गुरु की अराधना तथा जिह्वा से गुरु के नाम का जाप करना चाहिये । अपने नेत्रों से गुरु को देखना और अपने कानों से गुरु नाम का श्रवण करना चाहिये । इस प्रकार सच्चे गुरु में रम कर हमें प्रभु के दरबार में ठिकाना प्राप्त होगा । नानक कहते हैं, प्रभु जिस पर कृपा करते हैं उसी को यह वरदान देते हैं । (ऐसे मनुष्य) संसार में उत्तम जाने जाते हैं, पर वह कोई बिरले ही होते हैं "।(१)

महला -५

उपरोक्त पंक्तियों में वर्णित महापुरुषों को ईश्वर किस प्रकार से वरदान देते हैं, इस पर गुरु जी अब कहते हैं " रक्षक प्रभु स्वयं (ऐसे महापुरुषों की) रक्षा करते हुये उन्हें (भवसागर से) उबार देते हैं और गुरु के चरणों की शरण में लाकर उनके कार्य सँवार देते हैं । वह प्रभु जिन पर स्वयं दयालु होते हैं, उन्हें अपने मन से बिसारते नहीं हैं (सदा उनका ध्यान रखते हैं)। उन्हें साधु जनों की संगति में रख कर भयानक भवजल से पार करवा देते हैं । एक क्षण में ही निर्दयी, दुष्ट तथा निंदा करने वालों का नाश कर देते हैं । इस लिये, ओ' नानक, ऐसे स्वामी का आश्रय एवं विश्वास मन में रखो, जिसके सिमरन से समस्त दुख जाते हैं और सुख प्राप्त होता है "।(२)

पउड़ी

अब गुरु जी प्रभु को सम्बोधित करते हुये उसके विलक्षण गुणों की चर्चा करते हैं, तथा प्रार्थना करते हुये कहते हैं " हे' मेरे प्रभु, तुम किसी विशेष कुल से नहीं हो, तुम पवित्र हो, तुम अगम (समझ से परे) हो, अपार हो । सदैवी सत्य हो और यह सत्य हम चारों ओर देखते हैं । तेरी रचना, अथवा, ब्रह्मांड कहीं से भी मिथ्या अथवा असत्य प्रतीत नहीं होता । जितना भी तुमने सृजित किया है उस सबके दाता तुम्हीं हो । माला के धागे के समान अपनी ज्योति का संचार सम्पूर्ण रचना में पिरोया हुआ है । तुम्हारी इच्छानुसार ही (सांसारिक मायाजाल के) मँझधार में कुछ बह जाते हैं और तुम्हारी इच्छानुसार ही कुछ पार उतर जाते हैं । ओ' मेरे प्रभु जी, तुम्हारा ध्यान वही कर पाते हैं जिनके भाग्य अथवा मस्तक पर (तुमने) लिखा हुआ है ।हे' परमेश्वर, तेरी गति तथा सीमा नहीं देखी और पायी जा सकती, मैं तुझ पर बलिहारी जाता हूँ "।(१)

इस पौड़ी का संदेश है कि यह प्रभु ही हैं जिन्होंने यह ब्रह्मांड रचा है और वही समस्त जीवों के पालनहार एवं दाता हैं । इस लिये, यदि हम उनके नाम का स्मरण करें तो वह सभी प्रकार के शत्रुओं सहित सांसारिक मायाजाल और सत्ता का लोभ इत्यादि (दुखों के मूल कारण) से हमारी रक्षा करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੫੧੯

ਸਲੋਕ ਮਃ ੫ ॥

ਲਗੜੀ ਸੁਥਾਨਿ ਜੋੜਣਹਾਰੈ ਜੋੜੀਆ ॥
ਨਾਨਕ ਲਹਰੀ ਲਖ ਸੈ ਆਨ ਡੁਬਣ ਦੇਇ ਨ ਮਾ ਪਿਰੀ ॥੧॥

ਮਃ ੫ ॥

ਬਨਿ ਭੀਹਾਵਲੈ ਹਿਕੁ ਸਾਥੀ ਲਧਮੁ ਦੁਖ ਹਰਤਾ ਹਰਿ ਨਾਮਾ ॥
ਬਲਿ ਬਲਿ ਜਾਈ ਸੰਤ ਪਿਆਰੇ ਨਾਨਕ ਪੂਰਨ ਕਾਮਾਂ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਪਾਈਅਨਿ ਸਭਿ ਨਿਧਾਨ ਤੇਰੈ ਰੰਗਿ ਰਤਿਆ ॥
ਨ ਹੋਵੀ ਪਛੋਤਾਉ ਤੁਧ ਨੋ ਜਪਤਿਆ ॥
ਪਹੁਚਿ ਨ ਸਕੈ ਕੋਇ ਤੇਰੀ ਟੇਕ ਜਨ ॥
ਗੁਰ ਪੂਰੇ ਵਾਹੁ ਵਾਹੁ ਸੁਖ ਲਹਾ ਚਿਤਾਰਿ ਮਨ ॥
ਗੁਰ ਪਹਿ ਸਿਫਤਿ ਭੰਡਾਰੁ ਕਰਮੀ ਪਾਈਐ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਨਦਰਿ ਨਿਹਾਲ ਬਹੁੜਿ ਨ ਧਾਈਐ ॥
ਰਖੈ ਆਪਿ ਦਇਆਲੁ ਕਰਿ ਦਾਸਾ ਆਪਣੇ ॥
ਹਰਿਹਰਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਜੀਵਾ ਸੁਣਿ ਸੁਣੇ ॥੭॥

पृ-५१९

सलोक महला ५॥

लगड़ी सुथानि जोड़नहारै जोड़ीआ ॥
नानक लहरी लख सै आन डुबण देइ न मा पिरी ॥१॥

महला ५॥

बनि भीहावलै हिकु साथी लधमु दुख हरता हरि नामा ॥
बलि बलि जाई संत पिआरे नानक पूरन कामां ॥२॥

पउड़ी ॥

पाईअनि सभि निधान तेरै रँगि रतिआ ॥
न होवी पछोताउ तुध नो जपतिआ ॥
पहुचि न सकै कोइ तेरी टेक जन ॥
गुर पूरे वाहु वाहु सुख लहा चितारि मन ॥
गुर पहि सिफति भँडारु करमी पाईऐ ॥
सतिगुर नदरि निहाल बहुड़ि न धाईऐ ॥
रखै आपि दइआलु करि दासा आपणे ॥
हरि हरि हरि हरि नामु जीवा सुणि सुणे ॥७॥

सलोक महला – ५

अनेक शब्दों में गुरु जी ने हमें आदेश दिये हैं कि जब भी हमारे पर किसी प्रकार का कष्ट आन पड़े तो हमें गुरु की शरण में जाना चाहिये, वह हमारी रक्षा करेंगे । इस श्लोक में वह सुंदर दृष्टान्त देते हैं कि किस प्रकार सांसारिक लालसा एवं कठिनाइयों के आक्रमणों से गुरु हमारी रक्षा करता है ।गुरु जी पहले एक छोटी नाव का उदाहरण देते हैं जो एक विकराल सागर के भँवर में हिचकोले खा रही है, परन्तु यदि वह एक दृढ़ लंगर से बाँध दी जाती है तब उसे कोई क्षति नहीं होती ।

उपरोक्त उदाहरण को लेकर गुरु जी कहते हैं "(मेरी आत्मा रूपी नैया के खिवैय्ये, मेरे गुरु ने) मेरी नाव को सुरक्षित स्थान पर जोड़ दिया है (प्रभु के चरणों में) । ओ' नानक, अब यदि वहाँ पर (सांसारिक लालसा अथवा कठिनाइयों की) लाखों लहरें भी आ कर टकरा जायें तब भी मेरा प्रिय (प्रभु) मुझे (भवसागर में) डूबने से बचा लेगा "।(१)

महला -५

आगे गुरु जी एक और सुंदर उदाहरण देते हैं । वह कहते हैं " मैंने एक भयावह बीहड़ (सांसारिक) जंगल में एक साथी प्रभु नाम को पा लिया है, जो मेरे सभी दुख हर लेता है। ओ' नानक, मैं बारम्बार अपने प्रिय सँत (गुरु) के बलिहारी जाता हूँ (जिसकी अनुकम्पा से) मेरे समस्त कार्य पूर्ण होते हैं "।(२)

पउड़ी

अब गुरु जी हमें यह बताते हैं कि हम कैसे प्रभु को उसके द्वारा प्रदत्त वरदानों के लिये धन्यवाद दें और उसके प्रेम में मग्न रहें । वह कहते हैं " (हे' प्रभु), तुम्हारे प्रेम में लीन रहने से हमें (संसार के) सभी भंडार प्राप्त हुये हैं । तुम्हारा ध्यान तथा जाप करने से कोई पश्चात्ताप नहीं करना पड़ता । जो भी भक्त जन तेरे आश्रय में आ जाते हैं उन्हें कोई छू भी नहीं पाता, हे' मेरे मन, वह पूर्ण गुरु महिमामयी है जिसे स्मरण करने से सुख और शांति मिलती है । गुरु के पास प्रभु की प्रशंसा से परिपूर्ण भंडार हैं, परन्तु वह (प्रभु की कृपा से) सौभाग्य से ही प्राप्त होते हैं ।यदि सच्चा गुरु अपनी कृपादृष्टि हमारे पर रखे तो हम और कहीं (अनेक योनियों में) नहीं भटकते । दयालु प्रभु हमें अपना दास बनाकर (भटकने से) हमारी रक्षा करता है । मैं बारम्बार केवल हरि, हरि का नाम श्रवण कर करके जीवित रहता हूँ "।(७)

इस पउड़ी का संदेश है कि यदि हम गुरु के द्वारा पूर्ण रूप से प्रभु में विश्वास रख कर उसकी शरण में रहते हैं और उसके नाम का ध्यान तथा जाप करते हैं तब वह सभी प्रकार की कठिन परिस्थितियों अथवा कष्टों से हमारी रक्षा करता है ।

ਪੰਨਾ ੫੨੧	**पृ-५२१**
ਸਲੋਕ ਮਃ ੫ ॥	**सलोक महला ५॥**
ਜਾ ਕਉ ਭਏ ਕ੍ਰਿਪਾਲ ਪ੍ਰਭ ਹਰਿ ਹਰਿ ਸੇਈ ਜਪਾਤ ॥ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰੀਤਿ ਲਗੀ ਤਿਨ ਰਾਮ ਸਿਉ ਭੇਟਤ ਸਾਧ ਸੰਗਾਤ ॥੧॥	जा कउ भए क्रिपाल प्रभ हरि हरि सेई जपात ॥ नानक प्रीति लगी तिन राम सिउ भेटत साध सँगात ॥१॥
ਮਃ ੫ ॥	**महला ५॥**
ਰਾਮੁ ਰਮਹੁ ਬਡਭਾਗੀਹੋ ਜਲਿ ਥਲਿ ਮਹੀਅਲਿ ਸੋਇ ॥ ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਅਰਾਧਿਐ ਬਿਘਨੁ ਨ ਲਾਗੈ ਕੋਇ ॥੨॥	रामु रमहु बडभागीहो जलि थलि महीअलि सोइ ॥ नानक नामि अराधिऐ बिघनु न लागै कोइ ॥२॥
ਪਉੜੀ ॥	**पउड़ी**
ਭਗਤਾ ਕਾ ਬੋਲਿਆ ਪਰਵਾਣੁ ਹੈ ਦਰਗਹ ਪਵੈ ਥਾਇ ॥ ਭਗਤਾ ਤੇਰੀ ਟੇਕ ਰਤੇ ਸਚਿ ਨਾਇ ॥ ਜਿਸ ਨੋਹੋਇ ਕ੍ਰਿਪਾਲੁ ਤਿਸ ਕਾ ਦੂਖੁ ਜਾਇ ॥	भगता का बोलिआ परवाणु है दरगह पवै थाइ ॥ भगता तेरी टेक रते सचि नाइ ॥ जिस नोहोइ क्रिपालु तिस का दूखु जाइ ॥
ਪੰਨਾ ੫੨੨	**पृ-५२२**
ਭਗਤ ਤੇਰੇ ਦਇਆਲ ਓਨ੍ਾ ਮਿਹਰ ਪਾਇ ॥ ਦੂਖੁ ਦਰਦੁ ਵਡ ਰੋਗੁ ਨ ਪੋਹੇ ਤਿਸੁ ਮਾਇ ॥ ਭਗਤਾ ਏਹੁ ਅਧਾਰੁ ਗੁਣ ਗੋਵਿੰਦ ਗਾਇ ॥ ਸਦਾ ਸਦਾ ਦਿਨੁ ਰੈਣਿ ਇਕੋ ਇਕੁ ਧਿਆਇ ॥ ਪੀਵਤਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਨਾਮੁ ਜਨ ਨਾਮੇ ਰਹੇ ਅਘਾਇ ॥੧੪॥	भगत तेरे दइआल ओना् मिहर पाइ ॥ दूखु दरदु वड रोगु न पोहे तिसु माइ ॥ भगता एहु अधारु गुण गोविँद गाइ ॥ सदा सदा दिनु रैणि इको इकु धिआइ ॥ पीवति अँमृित नामु जन नामे रहे अघाइ ॥१४॥

सलोक महला – ५

अनेक शब्दों में गुरु जी ने सच्चे प्रेम तथा श्रद्धा से प्रभु का ध्यान करने वाले भक्त जनों को मिले आशीर्वादों के विषय में हमें बताया है। इस पउड़ी में वह हमें बताते हैं कि वह कौन से सौभाग्यशाली भक्त हैं जो प्रभु नाम का ध्यान करते हैं।

गुरु जी कहते हैं "ओ' नानक, केवल वही जन प्रभु का ध्यान करते हैं जिन पर प्रभु दयालु होते हैं। वह साधु संतों से मिल कर उनकी संगति में प्रभु प्रेम में लीन रहते हैं"। (१)

महला -५

इसलिये गुरु जी हमें परामर्श देते हुये कहते हैं "ओ' सौभाग्यशाली जनों, उस ईश्वर का जाप करो जो जल,थल और आकाश में व्याप्त है। ओ' नानक, जब हम प्रभु नाम का ध्यान करते हैं तब (हमारी जीवन यात्रा में) कोई विघ्न नहीं आता "।(२)

पउड़ी

ईश्वर तथा उसके भक्तों के बीच कैसे सम्बन्ध होते हैं इस पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं " भक्त जन जो भी बोलते हैं, वह प्रभु के दरबार में स्वीकार होता है।ओ' प्रभु भक्त तेरे पर विश्वास करते हैं और तेरे सच्चे प्रेम एवं नाम में रमे रहते हैं। जिस पर ईश्वर दयावान होते हैं, उसके सारे दुख चले जाते हैं। ओ' दयालु ईश्वर, भक्त तेरे हैं और तुम उन पर कृपा करते हो। उन्हें कोई दुख दर्द, गंभीर रोग और कोई मायाजाल नहीं ग्रस्त करता। वह गोविंद के गुण गाते हैं और उसी पर अपना जीवन आधारित रखते हैं, सदैव दिन और रात केवल और केवल एक ही (प्रभु) का ध्यान तथा जाप करते हैं। वह अँमृत रूपी प्रभु नाम का रस पीते हैं और उसी नाम से तृप्त रहते हैं "। (१४)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि यदि हम स्वयं तथा अन्य सभी के लिए प्रभु के आशीर्वाद की कामना करते हैं, तथा अपने दुख दर्द से मुक्ति पाना चाहते हैं तो हमें ईश्वर का सच्चा भक्त बनना चाहिए। इस पद को प्राप्त करने के लिए हमें दिन रात संतों की सँगति में रह कर प्रभु नाम का ध्यान और गुणगान करना होगा।

ਪੰਨਾ ੫੨੩	**पृ-५२३**
ਸਲੋਕ ਮਃ ੫ ॥	**सलोक महला ५॥**
ਆਦਿ ਮਧਿ ਅਰੁ ਅੰਤਿ ਪਰਮੇਸਰਿ ਰਖਿਆ ॥ ਸਤਿਗੁਰਿ ਦਿਤਾ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਚਖਿਆ ॥ ਸਾਧਾ ਸੰਗੁ ਅਪਾਰੁ ਅਨਦਿਨੁ ਹਰਿ ਗੁਣ ਰਵੈ ॥ ਪਾਏ ਮਨੋਰਥ ਸਭਿ ਜੋਨੀ ਨਹ ਭਵੈ ॥ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਕਰਤੇ ਹਥਿ ਕਾਰਣੁ ਜੋ ਕਰੈ ॥ ਨਾਨਕੁ ਮੰਗੈ ਦਾਨੁ ਸੰਤਾ ਧੂਰਿ ਤਰੈ ॥੧॥	आदि मधि अरु अँति परमेसरि रखिआ ॥ सतिगुरि दिता हरि नामु अँम्रितु चखिआ ॥ साधा सँगु अपारु अनदिनु हरि गुण रवै ॥ पाए मनोरथ सभि जोनी नह भवै ॥ सभु किछु करते हथि कारणु जो करै ॥ नानकु मँगै दानु सँता धूरि तरै ॥१॥
ਮਃ ੫ ॥	**महला ५॥**
ਤਿਸ ਨੋ ਮੰਨਿ ਵਸਾਇ ਜਿਨਿ ਉਪਾਇਆ ॥ ਜਿਨਿ ਜਨਿ ਧਿਆਇਆ ਖਸਮੁ ਤਿਨਿ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥ ਸਫਲੁ ਜਨਮੁ ਪਰਵਾਨੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਇਆ ॥	तिस नो मँनि वसाइ जिनि उपाइआ ॥ जिनि जनि धिआइआ खसमु तिनि सुख पाइआ ॥ सफलु जनमु परवानु गुरमुखि आइआ ॥
ਹੁਕਮੈ ਬੁਝਿ ਨਿਹਾਲੁ ਖਸਮਿ ਫੁਰਮਾਇਆ ॥ ਜਿਸੁ ਹੋਆ ਆਪਿ ਕ੍ਰਿਪਾਲੁ ਸੁ ਨਹ ਭਰਮਾਇਆ ॥ ਜੋ ਜੋ ਦਿਤਾ ਖਸਮਿ ਸੋਈ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥ ਨਾਨਕ ਜਿਸਹਿ ਦਇਆਲੁ ਬੁਝਾਏ ਹੁਕਮੁ ਮਿਤ ॥ ਜਿਸਹਿ ਭੁਲਾਏ ਆਪਿ ਮਰਿ ਮਰਿ ਜਮਹਿ ਨਿਤ ॥੨॥	हुकमै बुझि निहालु खसमि फुरमाइआ ॥ जिसु होआ आपि क्रिपालु सु नह भरमाइआ ॥ जो जो दिता खसमि सोई सुखु पाइआ ॥ नानक जिसहि दइआलु बुझाए हुकमु मित ॥ जिसहि भुलाए आपि मरि मरि जमहि नित ॥२॥
ਪਉੜੀ ॥	**पउड़ी ॥**
ਨਿੰਦਕ ਮਾਰੇ ਤਤਕਾਲਿ ਖਿਨੁ ਟਿਕਣ ਨ ਦਿਤੇ ॥ ਪ੍ਰਭ ਦਾਸ ਕਾ ਦੁਖੁ ਨ ਖਵਿ ਸਕਹਿ ਫੜਿ ਜੋਨੀ ਜੁਤੇ ॥	निँदक मारे ततकालि खिनु टिकण न दिते ॥ प्रभ दास का दुखु न खवि सकहि फड़ि जोनी जुते ॥
ਪੰਨਾ ੫੨੪	**पृ-५२४**
ਮਥੇ ਵਾਲਿ ਪਛਾੜਿਅਨੁ ਜਮ ਮਾਰਗਿ ਮੁਤੇ ॥	मथे वालि पछाड़िअनु जम मारगि मुते ॥
ਦੁਖਿ ਲਗੈ ਬਿਲਲਾਣਿਆ ਨਰਕਿ ਘੋਰਿ ਸੁਤੇ ॥	दुखि लगै बिललाणिआ नरकि घोरि सुते ॥
ਕੰਠਿ ਲਾਇ ਦਾਸ ਰਖਿਅਨੁ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਸਤੇ ॥੨੦॥	कँठि लाइ दास रखिअनु नानक हरि सते ॥२०॥

सलोक महला -५

इससे पहली वाली पउड़ी में गुरु जी ने हमें बताया कि युगों के प्रारंभ से अथवा उससे भी पहले, ईश्वर स्वयं हमारी रक्षा करते रहें हैं। यहाँ इस पउड़ी में वह यह व्यक्त करते हैं कि किस प्रकार प्रभु हमारे जीवन के प्रत्येक पड़ाव पर आँतरिक तथा बाहरी शत्रुओं से हमारी रक्षा करते हैं।

वह कहते हैं " परमेश्वर ने सदा ही (अपने भक्तों को) आदि (बालवस्था) मध्य (युवावस्था) और अंत (वृद्धावस्था) तक हमें सुरक्षित रखा है। (प्रभु के द्वारा सुरक्षित जनों ने) सच्चे गुरु के द्वारा प्रदत्त हरि नाम रूपी अँमृत रस को चखा है और वह साधु संतों की अपार रूप से गुणी संगति में दिन रात हरि के गुण गाते हैं, जहाँ पर सभी मनोकामना पूर्ण होती हैं और अन्य योनियों में नही भटकना पड़ता। (जो भी हो रहा है उसका) कारण जो भी हो सभी कुछ उस सृजनकर्ता के हाथों में है, वही सब कुछ करता है। इसलिये, नानक यह दान माँग रहे हैं कि वह संतों के चरणों की धूल लेकर पार लग जायें "।(१)

महला – ५

इसलिये गुरु जी हमें सीधे सीधे यह परामर्श देते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो) जिसने तुम्हें बनाया है उसे अपने मन में बसाओ। जिस

किसी ने भी स्वामी का जाप अथवा ध्यान किया है उसे सुख प्राप्त हुया है । उस भक्त का जन्म सफल है तथा उसका (इस संसार में) आना स्वीकृत है । जैसे भी आदेश का उच्चारण स्वामी ने किया उसे समझने तथा मानने से प्रसन्नता होती है । जिस पर (ईश्वर) स्वयं कृपालु हैं वह (भक्त) कभी भी भ्रमों में नहीं रहता । जो कुछ भी स्वामी ने दे दिया उसी से वह सुखी है । ओ' नानक, जिस पर वह मित्र (प्रभु) दयालु हैं उस मनुष्य को वह अपनी इच्छा समझा देते हैं और जिस किसी को (सही मार्ग से) भटका देते हैं वह मनुष्य नित्य ही मरण अथवा जन्म में रहता है "।(२)

पउड़ी

प्रथम श्लोक में गुरु जी ने बताया कि कैसे हरि अपने भक्तजनों के जीवन की सभी अवस्थाओं में रक्षा और देखभाल करते हैं, तथा उन्हें अपने नाम के ध्यान में लगाते हैं । यहाँ पर वह यह व्यक्त करते हैं कि किस तत्परता से प्रभु अपने भक्तों को उन शत्रुयों तथा निंदकों से बचाते हैं जो उन्हें किसी भी प्रकार का कष्ट देने का प्रयास करते हैं । वह कहते हैं " (अपने भक्तों के) निंदकों को (प्रभु ने) तत्काल ही मार दिया, उन्हें एक क्षण भी नहीं टिकने दिया । प्रभु अपने सेवक का कोई भी दुख दर्द सहन नहीं कर सकते, अत: वह (निंदकों को) पकड़ कर योनियों के फेर में जोत देते हैं ।जैसे कि उन्हें सिर के बालों से पकड़ कर यमराज के मार्ग पर पछाड़ कर मारा हो जहाँ वह दुख एवं कष्ट पाने से विलाप करते हैं तथा घोर नर्क में सोते हैं । किन्तु ओ' नानक (किसी भी कष्ट से बचाने हेतु) सच्चे हरि अपने सेवकों को जैसे अपने कँठ से लगा कर रखते हैं "।(२०)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि यदि हम गुरु पर विश्वास रखें और उसके मार्ग दर्शन पर प्रभु नाम का ध्यान करें तो प्रभु आदि से अंत तक सब प्रकार के शत्रुओं से हमारी रक्षा करेंगे और हमें सदाचार और सत्य के मार्ग पर रखते हुए हमारे जीवन के ध्येय को, जो कि उसके नाम में लीन रह कर आनंद प्राप्त करने का है, पूर्ण करने में सहायता करेंगे

ਪੰਨਾ ੫੨੫	पृ-५२५
ਗੂਜਰੀ ਸ੍ਰੀ ਤ੍ਰਿਲੋਚਨ ਜੀਉ ਕੇ ਪਦੇ ਘਰੁ ੧	**गूजरी श्री त्रिलोचन जीउ के पदे घर १**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਅੰਤਰੁ ਮਲਿ ਨਿਰਮਲੁ ਨਹੀ ਕੀਨਾ ਬਾਹਰਿ ਭੇਖ ਉਦਾਸੀ ॥ ਹਿਰਦੈ ਕਮਲੁ ਘਟਿ ਬ੍ਰਹਮੁ ਨ ਚੀਨ੍ਹਾ ਕਾਹੇ ਭਇਆ ਸੰਨਿਆਸੀ ॥੧॥	अँतरु मलि निरमलु नही कीना बाहरि भेख उदासी ॥ हिरदै कमलु घटि ब्रहमु न चीना् काहे भइआ सँनिआसी ॥१॥
ਪੰਨਾ ੫੨੬	**पृ-५२६**
ਭਰਮੇ ਭੂਲੀ ਰੇ ਜੈ ਚੰਦਾ ॥ ਨਹੀ ਨਹੀ ਚੀਨ੍ਹਿਆ ਪਰਮਾਨੰਦਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	भरमे भूली रे जै चँदा ॥ नही नही चीनि्आ परमानँदा ॥१॥रहाउ॥
ਘਰਿ ਘਰਿ ਖਾਇਆ ਪਿੰਡੁ ਬਧਾਇਆ ਖਿੰਥਾ ਮੁੰਦਾ ਮਾਇਆ ॥ ਭੂਮਿ ਮਸਾਣ ਕੀ ਭਸਮ ਲਗਾਈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਤਤੁ ਨ ਪਾਇਆ ॥੨॥	घरि घरि खाइआ पिँडु बधाइआ खिँथा मुँदा माइआ ॥ भूमि मसाण की भसम लगाई गुर बिनु ततु न पाइआ ॥२॥
ਕਾਇ ਜਪਹੁ ਰੇ ਕਾਇ ਤਪਹੁ ਰੇ ਕਾਇ ਬਿਲੋਵਹੁ ਪਾਣੀ ॥ ਲਖ ਚਉਰਾਸੀਹ ਜਿਨ੍ਹਿ ਉਪਾਈ ਸੋ ਸਿਮਰਹੁ ਨਿਰਬਾਣੀ ॥੩॥	काइ जपहु रे काइ तपहु रे काइ बिलोवहु पाणी ॥ लख चउरासीह जिनि् उपाई सो सिमरहु निरबाणी ॥३॥
ਕਾਇ ਕਮੰਡਲੁ ਕਾਪੜੀਆ ਰੇ ਅਠਸਠਿ ਕਾਇ ਫਿਰਾਹੀ ॥ ਬਦਤਿ ਤ੍ਰਿਲੋਚਨੁ ਸੁਨੁ ਰੇ ਪ੍ਰਾਣੀ ਕਣ ਬਿਨੁ ਗਾਹੁ ਕਿ ਪਾਹੀ ॥੪॥੧॥	काइ कमँडलु कापड़ीआ रे अठसठि काइ फिराही ॥ बदति त्रिलोचनु सुनु रे प्राणी कण बिन गाहु कि पाही ॥४॥१॥

गूजरी श्री त्रिलोचन जी पदे घर १

इस शब्द में भक्त त्रिलोचन जी स्पष्ट रूप से जय चंद नामक व्यक्ति से वार्तालाप कर रहे हैं जो दिखावे से परिपूर्ण रीतियों एवं कर्मकांड में विश्वास रखता है । सो वह उसे तथा अन्य सभी लोगों को कुछ सारगर्भित परामर्श देते हैं जो शास्त्रीय पद्धतियों के अनुसार कर्म कांड में संलग्न रहते हैं ।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्र), दिखाने के लिये इस सन्यासी भेष का क्या लाभ है, जब कि अँतरमन का मैल निरमल नहीं किया है । यदि कमल रूपी हृदय (प्रभु प्रेम में नहीं खिला) अपने अंदर सर्वव्यापी ब्रह्म को नहीं पहचान पाया, तो फिर संन्यासी काहे को बन गये"।(१)

इसलिये त्रिलोचन जी अपने मित्र को कहते हैं "ओ' (मेरे मित्र) जय चंद, (यह संसार) भ्रमों में भूल भटक गया है।(क्योंकि इसने) परम आनंद देने वाले प्रभु को नहीं पहचाना "।(१-विराम)

योगियों तथा सन्यासियों को घर घर घूम कर भिक्षा माँगने के चलन पर त्रिलोचन जी टिप्पणी करते हैं "(ऐसे विचरण करने वाले योगी ने) द्वार से द्वार जाकर भिक्षा प्राप्त कर अपने शरीर का पालन कर लिया और कानों में मुंद्रायें, शरीर पर चोला तथा शमशानभूमि की भस्म लगा कर पूर्ण रूप से सन्यासी की माया रच ली, पर फिर भी गुरु के बिना (आत्मिक आनंद का) सार नहीं पाया "।(२)

अत: समस्त ऐसे लोगों को, जो वाह्य रूप से चोले तथा अन्य सन्यासियों वाले चिन्ह धारण तो कर लेते हैं पर प्रभु का ध्यान नहीं करते, त्रिलोचन जी कहते हैं " यह कर्म कांड वाले जप तप क्यों कर रहे हो (जो कि अर्थहीन है, अथवा) पानी को क्यों बिलोय रहे हो ।(ओ' मेरे मित्रो, इसकी अपेक्षा) उस निर्वाण प्रभु का सिमरन करो जिसने चौरासी लाख योनियों (जीवात्मायों) का सृजन किया है "।(३)

अपने परामर्श के अंत में वह कहते हैं "ओ' रे, चोले धारण करके तथा कमंडल लेकर अड़सठ तीर्थों में (दिशाहीन) क्यों तुम घूमते फिर रहे हो । त्रिलोचन कहते हैं, हे' प्राणी सुनो, दानों से रहित फसल को गाह कर क्या पायोगे (इसी प्रकार, प्रभु की प्रेम के साथ सेवा और ध्यान के बिना, दिखावे के लिए किये गये कर्म कांड एवं जाप तप से कोई लाभ नहीं मिलता)"।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि गुरु के मार्ग दर्शन और अपने मन में प्रभु के लिए सच्चे प्रेम एवं भक्ति के बिना हमारे अपनाये समस्त कठोर आत्म संयम के नियम, कर्म कांड तथा तीर्थ यात्रायें, सब निष्फल हैं ।यदि हम प्रभु को प्राप्त कर मुक्ति पाना चाहते हैं तो हमें अपने अँतरमन से गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) के मार्ग दर्शन पर प्रभु की अराधना करनी चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੫੨੭

ਦੇਵਗੰਧਾਰੀ ॥

ਅਬ ਹਮ ਚਲੀ ਠਾਕੁਰ ਪਹਿ ਹਾਰਿ ॥
ਜਬ ਹਮ ਸਰਣਿ ਪ੍ਰਭੂ ਕੀ ਆਈ ਰਾਖੁ ਪ੍ਰਭੂ ਭਾਵੈ ਮਾਰਿ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੫੨੮

ਲੋਕਨ ਕੀ ਚਤੁਰਾਈ ਉਪਮਾ ਤੇ ਬੈਸੰਤਰਿ ਜਾਰਿ ॥
ਕੋਈ ਭਲਾ ਕਹਉ ਭਾਵੈ ਬੁਰਾ ਕਹਉ ਹਮ ਤਨੁ ਦੀਓ ਹੈ ਢਾਰਿ ॥੧॥

ਜੋ ਆਵਤ ਸਰਣਿ ਠਾਕੁਰ ਪ੍ਰਭੁ ਤੁਮਰੀ ਤਿਸੁ ਰਾਖਹੁ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰਿ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਸਰਣਿ ਤੁਮਾਰੀ ਹਰਿ ਜੀਉ ਰਾਖਹੁ ਲਾਜ ਮੁਰਾਰਿ ॥੨॥੪॥

पृ-५२७

देवगँधारी ॥

अब हम चली ठाकुर पहि हारि ॥
जब हम सरणि प्रभू की आई राखु प्रभू भावै मारि ॥१॥रहाउ॥

पृ-५२८

लोकन की चतुराई उपमा ते बैसँतरि जारि ॥
कोई भला कहउ भावै बुरा कहउ हम तनु दीओ है ढारि ॥१॥

जो आवत सरणि ठाकुर प्रभु तुमरी तिसु राखहु किरपा धारि ॥
जन नानक सरणि तुमारी हरि जीउ राखहु लाज मुरारि ॥२॥४॥

देवगँधारी

यह गुरु जी की विलक्षणता है कि वह अपने व्यक्तिगत उदाहरण के द्वारा हमें सिखाते हैं कि कैसे लोगों के द्वारा की गयी प्रशंसा अथवा निंदा पर ध्यान ना देते हुये हम प्रभु के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित रहें। यह शब्द वास्तव में विनम्रता से परिपूर्ण श्रद्धा का उदाहरण है।

गुरु जी ईश्वर को सम्बोधित करते हैं "अब मैं हार कर (और सभी प्रयत्न करने के पश्चात) अंत में ठाकुर के पास जा रही हूँ, जब एक बार हे' प्रभु, मैं तेरी शरण में आ गयी हूँ तो चाहे मुझे बचा लो अथवा मार डालो "।(१-विराम)

एक बार फिर गुरु जी अपने उदाहरण से हमें सिखाते हैं कि यदि हम गुरु के निर्देशित मार्ग पर हैं तो हमें यह चिंता नहीं करनी चाहिये कि लोग हमारे लिये क्या कहते हैं अथवा, वह हमारे प्रशंसक हैं या निँदक हैं।

वह कहते हैं "मैंने पूर्ण रुप से (मन को भयमुक्त करके) लोगों की निंदा व उपमा को अग्नि में जला दिया है, (प्रभु के प्रति अपने पूर्ण समर्पण के लिये) चाहे कोई भला कहे, चाहे कोई बुरा कहे, मैंने अपने तन को (प्रभु के सम्मुख) भेंट कर दिया है "।(१)

शब्द का अंत गुरु जी प्रभु में अपना पूर्ण विश्वास रखते हुये विनम्रता से करते हैं और कहते हैं "ओ' मेरे स्वामी,(यह तुम्हारा नियम है कि) जो कोई भी तुम्हारी शरण में आता है, तुम कृपा करके उसकी रक्षा करते हो। हे' हरि जी, दुष्टदमनकर्ता, नानक जन तुम्हारी शरण में आया है, कृपया इसकी लाज रखो "।(२-४)

इस सुंदर एंव लघु शब्द का संदेश यह है कि बिना लोगों की परवाह किये हमें गुरु के सम्मुख पूर्णतया समर्पण करना चाहिये और जैसा उनका आदेश हो (गुरु ग्रंथ साहिब की गुरबाणी, अथवा आपके अँतरमन की आवाज़ के अनुसार) वैसा ही करो। प्रभु अपनी परम्परा के अनुसार अवश्य हमारी लाज रखेंगे।

लेखक का व्यक्तिगत अनुभव - मुझे स्मरण है कि जब मैं नाभा (पंजाब, भारत) के सिंचाई विभाग में SDO के पद पर काम कर रहा था तब अवैध रूप से एक झूठे बिल पर मुझे हस्ताक्षर करने के लिये बाध्य किया जा रहा था। तभी एकदम मेरे अँतरमन की आवाज़ ने कहा " दलजीत, गुरु तुम्हें अनजाने में की गई सभी गल्तियों से सुरक्षित रखेंगे, परन्तु तुम्हारे यह जानते हुए कि यह भ्रष्ट काम है तो वह तुम्हें नहीं बचायेंगे" । मैंने उस (आत्मिक) आदेश को मान कर बिल पर हस्ताक्षर करने के लिये मना कर दिया और कमरे से बाहर आ गया। तत्पश्चात, मुझे कई कठिनाइयों तथा तनाव की दशा से गुज़रना पड़ा पर अंत में मैं अपनी प्रतिष्ठा सहित किसी प्रकार की भी हानि से सुरक्षित रहा।

ਪੰਨਾ ੫੨੯

ਦੇਵਗੰਧਾਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਹਰਿ ਪ੍ਰਾਨ ਪ੍ਰਭੂ ਸੁਖਦਾਤੇ ॥
ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ਕਾਹੂ ਜਾਤੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸੰਤ ਤੁਮਾਰੇ ਤੁਮਰੇ ਪ੍ਰੀਤਮ ਤਿਨ ਕਉ ਕਾਲ ਨ ਖਾਤੇ ॥
ਰੰਗਿ ਤੁਮਾਰੈ ਲਾਲਭਏ ਹੈ ਰਾਮ ਨਾਮ ਰਸਿ ਮਾਤੇ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੫੩੦

ਮਹਾ ਕਿਲਬਿਖ ਕੋਟਿ ਦੋਖ ਰੋਗਾ ਪ੍ਰਭ ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਤੁਹਾਰੀ ਹਾਤੇ ॥
ਸੋਵਤ ਜਾਗਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਗਾਇਆ ਨਾਨਕ ਗੁਰ ਚਰਨ ਪਰਾਤੇ ॥੨॥੮॥

पृ-५२९

देवगँधारी महला ५॥

हरि प्रान प्रभू सुखदाते ॥
गुर प्रसादि काहू जाते ॥१॥रहाउ॥

सँत तुमारे तुमरे प्रीतम तिन कउ काल न खाते ॥
रँगि तुमारै लालभए है राम नाम रसि माते ॥१॥

पृ-५३०

महा किलबिख कोटि दोख रोगा प्रभ दिृसटि तुहारी हाते ॥
सोवत जागि हरि हरि हरि गाइआ नानक गुर चरन पराते ॥२॥८॥

देव गँधारी महला-५

इस शब्द में गुरु जी यह प्रकट करते हैं कि हम किस प्रकार से ईश्वर में पूर्ण आस्था रखते हुए विनम्र भाव से प्रार्थना करते रहें।

वह कहते हैं "ओ' प्रभु, मेरे प्राण एवं सुख शांति के दाता, गुरु की कृपा के द्वारा कोई बिरला ही तुम्हारे विषय में (कुछ) जान पाता है"।(१-विराम)

ईश्वर तथा उसके प्रिय संतों के सम्बन्धों पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं "ओ', मेरे प्रियतम प्रभु, तुम्हारे संत तुम्हें अत्यधिक प्रिय हैं, उन्हें (आत्मिक रूप से) काल नहीं ग्रस्त करता। वह तुम्हारे प्रेम के रंग में इतने रचे हैं कि उन पर लालिमा झलक रही है (लाल रंग, जो सच्चे प्रेम का चिन्ह माना जाता है) और वह सदा राम नाम के रस में मदमाते हैं"।(१)

गुरु जी प्रभु के प्रति अपना पूर्ण विश्वास प्रकट करते हुये इस शब्द का अंत करते हैं। वह कहते हैं "हे' ईश्वर, तुम्हारी केवल एक कृपा दृष्टि पड़ने से किसी के लाखों घोर अपराध, पाप, दुख तथा रोग हर जाते हैं। इसलिये, ओ' नानक, जो लोग गुरु के चरणों में आकर पड़ जाते हैं, उन्होंने (चाहे जो भी हो हर समय) सोते जागते हरि हरि नाम का गायन किया है"।(२-८)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु के कृपापात्र भी हैं, तब भी प्रभु नाम का ध्यान और उसका यश गायन करते रहो। ऐसा करने से हमारे दुख, रोग तथा पाप चाहे कितने भी बड़े हों, सब पूर्णतया नष्ट हो जायेंगे और हम भविष्य के जन्म मरण के भँवरों से बच सकेंगे।

ਪੰਨਾ ੫੩੧	पृ-५३१
ਦੇਵਗੰਧਾਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥	देवगँधारी महला ५॥
ਮਾਈ ਪ੍ਰਭ ਕੇ ਚਰਨਨਿਹਾਰਉ ॥	माई प्रभ के चरन निहारउ ॥
ਪੰਨਾ ੫੩੨	पृ-५३२
ਕਰਹੁ ਅਨੁਗ੍ਰਹੁ ਸੁਆਮੀ ਮੇਰੇ ਮਨ ਤੇ ਕਬਹੁ ਨ ਡਾਰਉ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	करहु अनुग्रहु सुआमी मेरे मन ते कबहु न डारउ ॥१॥रहाउ॥
ਸਾਧੂ ਧੂਰਿ ਲਾਈ ਮੁਖਿ ਮਸਤਕਿ ਕਾਮ ਕ੍ਰੋਧ ਬਿਖੁ ਜਾਰਉ ॥ ਸਭ ਤੇ ਨੀਚੁ ਆਤਮ ਕਰਿ ਮਾਨਉ ਮਨ ਮਹਿ ਇਹੁ ਸੁਖੁ ਧਾਰਉ ॥੧॥	साधू धूरि लाइ मुखि मसतकि काम क्रोध बिखु जारउ ॥ सभ ते नीचु आतम करि मानउ मन महि इहु सुखु धारउ ॥१॥
ਗੁਨ ਗਾਵਹ ਠਾਕੁਰ ਅਬਿਨਾਸੀ ਕਲਮਲ ਸਗਲੇ ਝਾਰਉ ॥ ਨਾਮ ਨਿਧਾਨੁ ਨਾਨਕ ਦਾਨੁ ਪਾਵਉ ਕੰਠਿ ਲਾਇ ਉਰਿ ਧਾਰਉ ॥੨॥੧੯॥	गुन गावह ठाकुर अबिनासी कलमल सगले झारउ ॥ नाम निधानु नानक दानु पावउ कँठि लाइ उरि धारउ ॥२॥१९॥

देवगँधारी महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमें अपना सहभागी बनाते हुए कहते हैं कि वह सदैव कितने आदरभाव से गुरु के चरणों की ओर देखते हैं, अर्थात्, वह अपने नित्य प्रति के आचरण, व्यवहार और प्रार्थना आदि, गुरबाणी की सम्मति के अनुसार करते हैं और साथ ही हमारे लिए भी उनके क्या सुझाव हैं ।

अत्यंत प्रेम, भक्ति तथा विनम्रता से गुरु जी कहते हैं "ओ' मेरी माता, मैं सदा श्रद्धापूर्ण भावना से प्रभु के चरण निहारता रहता हूँ । प्रेम से (उसे स्मरण करता हुया) कहता हूँ ओ' मेरे स्वामी, मैं अपने मन से तुम्हें कदापि ना निकालूँ "।(१-विराम)

गुरु जी प्रभु से अपनी प्रार्थना को और विस्तार से कहते हैं "(हे' प्रभु, मुझे आशीर्वाद दो कि) मैं साधू (गुरु) की चरण धूलि अपने मुख मस्तक पर लगाऊँ और (दूसरे शब्दों में, गुरु के आदेशानुसार अपनी बुद्धि को इस प्रकार ढाल लूँ, कि) काम क्रोध के विष को जला दूँ, तथा मेरी यह भी कामना है कि अपने मन में स्वयं को निम्न श्रेणी की आत्मा मान कर (विनम्रता के साथ इस) सुख को धारण कर लूँ "।(१)

गुरु जी हमें अपने साथ प्रभु के यशगान का निमंत्रण देते हुये शब्द के अंत में कहते हैं "(आओ, मेरे मित्रो), अविनाशी प्रभु के गुण हम सब मिल कर गायें और (इस प्रकार) अपने समस्त पापों को झाड़ फेंके । (ओ' प्रभु कामना करता हूँ कि तुम) नानक को अपने नाम के भंडार का दान दो जिसे मैं कंठ से लगा कर अपने हृदय में धारण कर लूँ "।(२-१९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें प्रभु से यह विनती करनी चाहिये कि वह हमें संतों की संगति और मार्ग दर्शन प्रदान करें ।उस संगति में हमें अपना अहम तथा अन्य दोष जैसे, काम, क्रोध व लोभ इत्यादि का त्याग करके प्रभु का गुणगान कर उसके नाम के ध्यान का वरदान अपने हृदय में बसा लेना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੫੩੩

ਦੇਵਗੰਧਾਰੀ ੫ ॥

ਦਰਸਨ ਨਾਮ ਕਉ ਮਨੁ ਆਛੈ ॥
ਭ੍ਰਮਿ ਆਇਓ ਹੈ ਸਗਲ ਥਾਨ ਰੇ ਆਹਿ ਪਰਿਓ ਸੰਤ ਪਾਛੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕਿਸੁ ਹਉ ਸੇਵੀ ਕਿਸੁ ਆਰਾਧੀ ਜੋ ਦਿਸਟੈ ਸੋਗਾਛੈ ॥

ਪੰਨਾ ੫੩੪

ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਕੀ ਸਰਨੀ ਪਰੀਐ ਚਰਣ ਰੇਨੁ ਮਨੁ ਬਾਛੈ ॥੧॥

ਜੁਗਤਿ ਨ ਜਾਨਾ ਗੁਨੁ ਨਹੀ ਕੋਈ ਮਹਾ ਦੁਤਰੁ ਮਾਇ ਆਛੈ ॥
ਆਇ ਪਇਓ ਨਾਨਕ ਗੁਰ ਚਰਨੀ ਤਉ ਉਤਰੀ ਸਗਲ ਦੁਰਾਛੈ ॥੨॥੨॥੨੮॥

पृ-५३३

देवगँधारी ५॥

दरसन नाम कउ मनु आछै ॥
भ्रमि आइओ है सगल थान रे आहि परिओ सँत पाछै ॥१॥रहाउ॥

किसु हउ सेवी किसु आराधी जो दिसटै सो गाछै ॥

पृ-५३४

साधसँगति की सरनी परीऐ चरण रेनु मनु बाछै ॥१॥

जुगति न जाना गुनु नहीं कोई महा दुतरु माइ आछै ॥
आइ पइओ नानक गुर चरनी तउ उतरी सगल दुराछै ॥(२-२-२८)

देवगँधारी -५

इस शब्द में गुरु जी स्वयं को उन लोगों की श्रेणी में रखते हैं जो प्रभु के प्रत्यक्ष दर्शन के लिये विभिन्न विश्वास एवं शास्त्रीय पद्धतियों को अपनाते हैं, या कई लोगों से निर्देश और शिक्षा लेते है, पर असफल रहते हैं। इस विषय पर स्वयं के अनुभव को साझा करते हुए गुरु जी यहाँ कहते हैं कि उनके द्वारा किये गए कुछ प्रयासों के निष्कर्ष कैसे रहे।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो) मेरे मन में प्रभु के दर्शन तथा उसके नाम का ध्यान करने की इच्छा है। मैं भ्रमित दशा में समस्त स्थानों का भ्रमण कर चुका हूँ (तथा कितने उपाय भी किये, परन्तु अब) मैं संत (गुरु) की शरण में आन पड़ा हूँ "।(१-विराम)

तथाकथित संत साधुयों तथा योगियों से वह संतुष्ट क्यों नही हो सके इसका वर्णन गुरु जी करते हुये कहते हैं "(मुझे नहीं पता) मैं किसकी सेवा करूँ अथवा किसकी आराधना करूँ, (क्योंकि) जिस किसी को मैं देखता हूँ वही नाशवान है। अतः, मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं साधु संतों की सँगति में शरण ले लूँ, क्योंकि उनकी चरण धूलि लेने (अर्थात् उनके प्रति विनम्र सेवा भाव) की मेरी हार्दिक इच्छा है "।(१)

गुरु जी ने अपनी मंदबुद्धि का त्याग कैसे किया, शब्द के अंत में वह व्यक्त करते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), सांसारिक मायाजाल एक भयानक सागर के समान है, जिसे लाँघना अति कठिन है। मुझे उसे पार करने का कोई उपाय नहीं पता और ना ही मेरे पास कोई ऐसा गुण है (जिससे पार लग सकूँ, इसलिये मैं), नानक, गुरु के चरणों में आन पड़ा और तब मेरी समस्त दुर्भावनायें चली गयीं (अतः, ईश्वर का ध्यान करने से मैंने सरलता से भवसागर को पार कर लिया)। (२-२- २८)

इस शब्द का संदेश है कि यदि हमारे पास कोई गुण भी नहीं और भवसागर को पार करने के लिये कुछ ज्ञान भी नहीं तो हमें और सब उपाय नियम अथवा शास्त्रीय पद्धतियाँ त्याग कर केवल गुरु के निर्देश पर प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये। तब हमारे सब दोष समाप्त होंगे और हम इस भयावह भवसागर को पार कर लेंगे।

ਪੰਨਾ ੫੩੫	**पृ-५३५**
ਦੇਵਗੰਧਾਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**देवगँधारी महला ५॥**
ਉਲਟੀ ਰੇ ਮਨ ਉਲਟੀ ਰੇ ॥ ਸਾਕਤ ਸਿਉ ਕਰਿ ਉਲਟੀ ਰੇ ॥ ਝੂਠੈ ਕੀ ਰੇ ਝੂਠੁ ਪਰੀਤਿ ਛੁਟਕੀ ਰੇ ਮਨ ਛੁਟਕੀ ਰੇ ਸਾਕਤ ਸੰਗਿ ਨ ਛੁਟਕੀ ਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	उलटी रे मन उलटी रे ॥ साकत सिउ करि उलटी रे ॥ झूठै की रे झूठु परीति छुटकी रे मन छुटकी रे साकत सँगि न छुटकी रे ॥१॥रहाउ॥
ਜਿਉ ਕਾਜਰ ਭਰਿ ਮੰਦਰੁ ਰਾਖਿਓ ਜੋ ਪੈਸੈ ਕਾਲੂਖੀ ਰੇ ॥ ਦੂਰਹੁ ਹੀ ਤੇ ਭਾਗਿ ਗਇਓ ਹੈ ਜਿਸੁ ਗੁਰ ਮਿਲਿ ਛੁਟਕੀ ਤ੍ਰਿਕੁਟੀ ਰੇ ॥੧॥	जिउ काजर भरि मँदरु राखिओ जो पैसै कालूखी रे ॥ दूरहु ही ते भागि गइओ है जिसु गुर मिलि छुटकी त्रिकुटी रे ॥१॥
ਮਾਗਉ ਦਾਨੁ ਕ੍ਰਿਪਾਲ ਕ੍ਰਿਪਾ ਨਿਧਿ ਮੇਰਾ ਮੁਖੁ ਸਾਕਤ ਸੰਗਿ ਨ ਜੁਟਸੀ ਰੇ ॥	मागउ दानु किृपाल किृपा निधि मेरा मुखु साकत सँगि न जुटसी रे ॥
ਪੰਨਾ ੫੩੬	**पृ-५३६**
ਜਨ ਨਾਨਕ ਦਾਸ ਦਾਸ ਕੋ ਕਰੀਅਹੁ ਮੇਰਾ ਮੂੰਡੁ ਸਾਧ ਪਗਾ ਹੇਠਿ ਰੁਲਸੀ ਰੇ ॥੨॥੪॥੩੭॥	जन नानक दास दास को करीअहु मेरा मूँडु साध पगा हेठि रुलसी रे ॥२॥४॥३७॥

देवगँधारी महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमें साकत (माया अथवा सत्ता के पुजारी) लोगों की संगति से दूर रहने का प्रस्ताव देते हैं ।

यहाँ वह अति दृढ़ भावना से स्वयं को (और परोक्ष में हमें भी) सम्बोधित करते हुये कहते हैं "हे' मेरे मन, लौट कर वापिस आ जाओ । साकत लोगों की संगति से लौट कर आ जाओ । हे' मित्र, झूठे लोगों का प्रेम अथवा मित्रता सदा झूठ ही होता है, अत: यह अंत तक नहीं रहता और अवश्य ही टूट जाता है। साकतों की संगति कभी भी किसी को दुर्भावनायों से मुक्ति नहीं पाने देती "।(१- विराम)

कुसंगति (बुरे लोगों से मित्रता) के क्या दुष्प्रभाव हो सकते हैं, इस पर गुरु जी एक सुंदर उदाहरण देते हुये कहते हैं " (हे' मेरे मन), काजल से भरे मंदिर में जो भी (कुछ) रखते हो, वह सब काला हो जाता है, (वैसे ही विधर्मी लोगों के संग साथ में रहने से दुष्ट प्रवृत्तियाँ पनपती हैं और अपयश प्राप्त होता है) । इसलिये, जो मनुष्य गुरु की संगति में रहकर त्रिकुटी (माया के तीन रूप - अधर्म, सामर्थ्य और वैभव की भावना) का त्याग कर चुका है वह अधर्मी लोगों को दूर से देखते ही भाग जाता है "।(१)

इसलिये गुरु जी स्वयं के लिये भी प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं " हे' मेरे कृपालु, दयानिधि, मैं तुमसे यह दान माँगता हूँ कि मुझे किसी साकत की संगति का सामना ना करना पड़े, अर्थात मेरा मुख किसी साकत को नही देखना चाहता । भक्त नानक विनती करते हैं कि तुम मुझे अपने दासों का दास बना कर रखो और मेरे शीश को साधु संतों के चरणों में लोटने दो "।(२-४-३७)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें अंहकारी, स्वार्थी अथवा सत्ता के भूखे लोगों की संगति से दूर रहना चाहिये और प्रभु के प्रिय भक्तों एवं संतों की विनीत रूप से सेवा करने की प्रार्थना करनी चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੫੩੭

ਰਾਗੁ ਬਿਹਾਗੜਾ ਛੰਤ ਮਹਲਾ ੪ ਘਰੁ ੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਈਐ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਅਮੋਲੇ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਰਸਿ ਬੀਧਾ ਹਰਿ ਮਨੁ ਪਿਆਰਾ ਮਨੁ ਹਰਿ ਰਸਿ ਨਾਮਿ ਝਕੋਲੇ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੫੩੮

ਗੁਰਮਤਿ ਮਨੁ ਠਹਰਾਈਐ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਅਨਤ ਨ ਕਾਹੂ ਡੋਲੇ ਰਾਮ ॥
ਮਨ ਚਿੰਦਿਅੜਾ ਫਲੁ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਗੁਣ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਬੋਲੇ ਰਾਮ ॥੧॥

ਗੁਰਮਤਿ ਮਨਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਵੁਠੜਾ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਮੁਖਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਬੈਣ ਅਲਾਏ ਰਾਮ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਬਾਣੀ ਭਗਤ ਜਨਾ ਕੀ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਮਨਿ ਸੁਣੀਐ ਹਰਿ ਲਿਵ ਲਾਏ ਰਾਮ ॥

ਚਿਰੀ ਵਿਛੁੰਨਾ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਪਾਇਆ ਗਲਿ ਮਿਲਿਆ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਏ ਰਾਮ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਮਨਿ ਅਨਦੁ ਭਇਆ ਹੈ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਅਨਹਤ ਸਬਦ ਵਜਾਏ ਰਾਮ ॥੨॥

ਸਖੀ ਸਹੇਲੀ ਮੇਰੀਆ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਕੋਈ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਆਣਿ ਮਿਲਾਵੈ ਰਾਮ ॥
ਹਉ ਮਨੁ ਦੇਵਉ ਤਿਸੁ ਆਪਣਾ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਹਰਿ ਕਥਾ ਸੁਣਾਵੈ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਦਾ ਅਰਾਧਿ ਹਰਿ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਮਨ ਚਿੰਦਿਅੜਾ ਫਲੁ ਪਾਵੈ ਰਾਮ ॥
ਨਾਨਕ ਭਜੁ ਹਰਿ ਸਰਣਾਗਤੀ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਵਡਭਾਗੀ ਨਾਮੁ ਧਿਆਏ ਰਾਮ ॥੩॥

ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਪ੍ਰਭ ਆਇ ਮਿਲੁ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਗੁਰਮਤਿ ਨਾਮੁ ਪਰਗਾਸੇ ਰਾਮ ॥
ਹਉ ਹਰਿ ਬਾਝੁ ਉਡੀਣੀਆ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਜਿਉ ਜਲ ਬਿਨੁ ਕਮਲ ਉਦਾਸੇ ਰਾਮ ॥

ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਮੇਲਾਇਆ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਹਰਿ ਸਜਣੁ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਪਾਸੇ ਰਾਮ ॥
ਧਨੁ ਧਨੁ ਗੁਰੂ ਹਰਿ ਦਸਿਆ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਜਨ ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਬਿਗਾਸੇ ਰਾਮ ॥੪॥੧॥

पृ-५३७

राग बिहागड़ा छँत महला ४ घर १

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हरि हरि नामु धिआईऐ मेरी जिँदुड़ीए गुरमुखि नामु अमोले राम ॥
हरि रसि बीधा हरि मनु पिआरा मनु हरि रसि नामि झकोले राम ॥

पृ-५३८

गुरमति मनु ठहराईऐ मेरी जिँदुड़ीए अनत न काहू डोले राम ॥
मन चिँदिअड़ा फलु पाइआ हरि प्रभु गुण नानक बाणी बोले राम ॥१॥

गुरमति मनि अँमृितु वुठड़ा मेरी जिँदुड़ीए मुखि अँमृित बैण अलाए राम ॥
अँमृित बाणी भगत जना की मेरी जिँदुड़ीए मनि सुणीऐ हरि लिव लाए राम ॥

चिरी विछुँना हरि प्रभु पाइआ गलि मिलिआ सहजि सुभाए राम ॥
जन नानक मनि अनदु भइआ है मेरी जिँदुड़ीए अनहत सबद वजाए राम ॥२॥

सखी सहेली मेरीआ मेरी जिँदुड़ीए कोई हरि प्रभु आणि मिलावै राम ॥
हउ मनु देवउ तिसु आपणा मेरी जिँदुड़ीए हरि प्रभ की हरि कथा सुणावै राम ॥
गुरमुखि सदा अराधि हरि मेरी जिँदुड़ीए मन चिँदिअड़ा फलु पावै राम ॥
नानक भजु हरि सरणागती मेरी जिँदुड़ीए वडभागी नामु धिआवै राम ॥३॥

करि किरपा प्रभ आइ मिलु मेरी जिँदुड़ीए गुरमति नामु परगासे राम ॥
हउ हरि बाझु उडीणीआ मेरी जिँदुड़ीए जिउ जल बिनु कमल उदासे राम ॥

गुर पूरै मेलाइआ मेरी जिँदुड़ीए हरि सजणु हरि प्रभु पासे राम ॥
धनु धनु गुरू हरि दसिआ मेरी जिँदुड़ीए जन नानक नामि बिगासे राम ॥४॥१॥

राग बिहागड़ा छँत महला -४, घर-१

यह शब्द गुरु जी की भक्तिरस से परिपूर्ण काव्य रचना का एक अति सुंदर उदाहरण है जिसमें प्रभु के प्रति उनकी निष्ठा, प्रेम एवं तीव्र अभिलाषा झलकती है । यहाँ पर वह बारम्बार अपनी जीवात्मा को (और परोक्ष में हमें भी) कहते हैं कि प्रभु से किस प्रकार के आदर एवं निष्कप्ट भाव के साथ क्या प्रार्थना करनी चाहिये ।वह यह भी हमें बताते हैं कि कैसे प्रभु नाम की लग्न में रह कर परम सुख पाना चाहिये, तथा प्रभु में लीन एक भक्त किस प्रकार के आशीर्वाद प्राप्त कर प्रसन्न रहता है ।

अपनी जीवात्मा को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं " ओ' मेरी आत्मा हरि का नाम जो गुरु की कृपा से प्राप्त होता है, वह अनमोल

है, हमें उसका बारम्बार ध्यान करना चाहिये । हे' मेरी आत्मा, जो मन हरि नाम के रस से बिंधा है वही हरि को प्रिय है, ऐसा मन हरि नाम रूपी रस में डूबा मग्न रहता है । हे' मेरी आत्मा, मेरा मन कहीं और (विभिन्न सांसारिक जंजालों में) ना भटक पाये,अत: इस मन को गुरु के मतों के अनुसार स्थिर दशा (प्रभु नाम के ध्यान) में रखो । ओ' नानक, हरि के गुणों से परिपूर्ण गुरु की वाणी का उच्चारण करते रहने से मन वांछित फल प्राप्त होते हैं "।(१)

जिस भी मनुष्य के मन में प्रभु नाम रूपी अँमृत बसा है उसे क्या क्या गुण तथा आशीर्वाद प्राप्त होते हैं, इसका ब्योरा देते हुये गुरु जी कहते हैं " हे' मेरी आत्मा, गुरु द्वारा प्रदान की गयी मति को मानने से मन में अँमृत भर जाता है और तब मुख से अँमृत वाणी का गायन होता है । हे' मेरी आत्मा, भक्त जनों की रची अँमृत वाणी को प्रेम से श्रवण करने से हरि (के पवित्र चरण कमलों) के साथ मन रम जाता है । (ऐसा करने से) जो मनुष्य चिर काल से प्रभु से बिछुड़ा है, वह उसे पा लेता है और अति सहज भाव से प्रभु उससे गले मिलते हैं। हे' मेरी आत्मा, (इसी प्रकार के अभ्यास से) भक्त नानक का (विचार है कि उनका) मन आन्नदित है क्योंकि उसमें अनाहत दैवी शब्द गूँज रहा है "।(२)

उपरोक्त प्रकार के अनुभव से उत्साहित गुरु जी प्रभु को मिलने के अभिलाषी हैं और कहते हैं कि वह किस प्रकार का मूल्य उस मनुष्य को चुकायें जो उन्हें प्रभु का जीवन- उपयोगी उपदेश सुनायेगा । गुरु के मार्ग दर्शन के अनुसार वह स्वयं अपनी आत्मा को प्रेम के साथ प्रभु नाम का ध्यान करने के लिये प्रोत्साहन देते हैं । अतः गुरु जी अपनी आत्मा को सम्बोधित करते हुये कहते हैं "हे' मेरी आत्मा, मेरे मित्रो अथवा साथियों से विनती करके कहो कि कोई आकर मुझे हरि से मिला दे ।हे' मेरी आत्मा, मैं उस मनुष्य को अपना मन अर्पण कर दूँगा जो मुझे प्रभु की दैवी कथा कह सुनायेगा । ओ' मेरी आत्मा, गुरु के मार्ग दर्शन पर सदा हरि की आराधना करो और मन वाँछित फल राम से पाओ ।नानक कहते हैं, हे' मेरी आत्मा, हरि की शरण में शीघ्र जाओ जिससे कि तुम प्रभु नाम का ध्यान करने का सौभाग्य प्राप्त कर सको "।(३)

गुरु जी अपनी आत्मा को (परोक्ष में हमें भी) यह प्रस्तावित करते हुये शब्द का अंत करते हैं कि हमें किस प्रकार से प्रभु से विनती करनी चाहिये और फिर गुरु के द्वारा प्रभु से जुड़ कर हमें किस प्रकार का आनन्द प्राप्त होता है । वह कहते हैं "ओ' मेरी आत्मा, प्रभु से विनती करके कहो, हे' प्रभु, कृपा करके आओ और मुझे मिलो, (परन्तु, स्मरण रखो कि) गुरु की मति के अनुसार चल कर ही मन में प्रभु नाम रूपी प्रकाश उदय होता है ।हे' मेरी आत्मा, हरि के बिना मैं नहीं रह सकता जैसे कि कमल का फूल जल के बिना मुरझा जाता है । हे' मेरी आत्मा, जिसे भी पूर्ण गुरु ने हरि से मिलाया है उसको हरि सज्जन चारों ओर दिखाई देते हैं । हे' मेरी आत्मा, वह गुरु बारम्बार धन्य हैं जिन्होंने मुझे हरि के विषय में बताया, इसलिये, भक्त नानक भी प्रभु नाम को पाकर अत्यंत उत्साहित एवं प्रसन्न हैं "।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि महान प्रभु का प्रेम तथा आशीर्वाद हम पाना चाहते हैं तो प्रभु के भक्तों की संगति में रहना चाहिये । उनके आदेशों के अनुसार हमें प्रभु नाम का ध्यान कर पूर्ण निष्ठा एवं विनम्रता के साथ प्रार्थना करनी चाहिये कि प्रभु हम पर अपनी कृपा करें और वरदान दें कि हम सदैव उसके नाम के ध्यान में लीन रहें ।

ਪੰਨਾ ੫੩੯	पृ-५३९
ਬਿਹਾਗੜਾ ਮਹਲਾ ੪ ॥	**बिहागड़ा महला ४॥**
ਹਉ ਬਲਿਹਾਰੀ ਤਿਨ੍ ਕਉ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਜਿਨ੍ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਅਧਾਰੋ ਰਾਮ ॥ ਗੁਰਿ ਸਤਿਗੁਰਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਬਿਖੁ ਭਉਜਲੁ ਤਾਰਣਹਾਰੋ ਰਾਮ ॥ ਜਿਨ ਇਕ ਮਨਿ ਹਰਿ ਧਿਆਇਆ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਤਿਨ ਸੰਤ ਜਨਾ ਜੈਕਾਰੋ ਰਾਮ ॥	हउ बलिहारी तिन् कउ मेरी जिंदुड़ीए जिन् हरि हरि नामु अधारो राम ॥ गुरि सतिगुरि नामु दृिड़ाइआ मेरी जिंदुड़ीए बिखु भउजलु तारणहारो राम ॥ जिन इक मनि हरि धिआइआ मेरी जिँदुड़ीए तिन सँत जना जैकारो राम ॥
ਪੰਨਾ ੫੪੦	**पृ-५४०**
ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਜਪਿ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਸਭਿ ਦੂਖ ਨਿਵਾਰਣਹਾਰੋ ਰਾਮ ॥੧॥	नानक हरि जपि सुखु पाइआ मेरी जिँदुड़ीए सभि दूख निवारणहारो राम ॥१॥
ਸਾ ਰਸਨਾ ਧਨੁ ਧੰਨੁ ਹੈ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਕੇਰੇ ਰਾਮ ॥ ਤੇ ਸ੍ਰਵਨ ਭਲੇ ਸੋਭਨੀਕ ਹਹਿ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਹਰਿ ਕੀਰਤਨੁ ਸੁਣਹਿ ਹਰਿ ਤੇਰੇ ਰਾਮ ॥	सा रसना धनु धँनु है मेरी जिँदुड़ीए गुण गावै हरि प्रभ केरे राम ॥ ते स्रवन भले सोभनीक हहि मेरी जिँदुड़ीए हरि कीरतनु सुणहि हरि तेरे राम ॥
ਸੋ ਸੀਸੁ ਭਲਾ ਪਵਿਤ੍ਰ ਪਾਵਨੁ ਹੈ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਜੋ ਜਾਇ ਲਗੈ ਗੁਰ ਪੈਰੇ ਰਾਮ ॥ ਗੁਰ ਵਿਟਹੁ ਨਾਨਕੁ ਵਾਰਿਆ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਚਿਤੇਰੇ ਰਾਮ ॥੨॥	सो सीसु भला पवित्र पावनु है मेरी जिँदुड़ीए जो जाइ लगै गुर पैरे राम ॥ गुर विटहु नानकु वारिआ मेरी जिँदुड़ीए जिनि हरि हरि नामु चितेरे राम ॥२॥
ਤੇ ਨੇਤ੍ਰ ਭਲੇ ਪਰਵਾਣੁ ਹਹਿ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਜੋ ਸਾਧੂ ਸਤਿਗੁਰੁ ਦੇਖਹਿ ਰਾਮ ॥ ਤੇ ਹਸਤ ਪੁਨੀਤ ਪਵਿਤ੍ਰ ਹਹਿ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਜੋ ਹਰਿ ਜਸੁ ਹਰਿ ਹਰਿ ਲੇਖਹਿ ਰਾਮ ॥ ਤਿਸੁ ਜਨ ਕੇ ਪਗ ਨਿਤ ਪੂਜੀਅਹਿ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਜੋ ਮਾਰਗਿ ਧਰਮ ਚਲੇਸਹਿ ਰਾਮ ॥ ਨਾਨਕੁ ਤਿਨ ਵਿਟਹੁ ਵਾਰਿਆ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਹਰਿ ਸੁਣਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਮਨੇਸਹਿ ਰਾਮ ॥੩॥	ते नेत्र भले परवाणु हहि मेरी जिँदुड़ीए जो साधू सतिगुरु देखहि राम ॥ ते हसत पुनीत पवित्र हहि मेरी जिँदुड़ीए जो हरि जसु हरि हरि लेखहि राम ॥ तिसु जन के पग नित पूजीअहि मेरी जिँदुड़ीए जो मारगि धरम चलेसहि राम ॥ नानकु तिन विटहु वारिआ मेरी जिँदुड़ीए हरि सुणि हरि नामु मनेसहि राम ॥3॥
ਧਰਤਿ ਪਾਤਾਲੁ ਆਕਾਸੁ ਹੈ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਸਭ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵੈ ਰਾਮ ॥ ਪਉਣੁ ਪਾਣੀ ਬੈਸੰਤਰੋ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਨਿਤ ਹਰਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਜਸੁ ਗਾਵੈ ਰਾਮ ॥	धरति पातालु आकासु है मेरी जिँदुड़ीए सभ हरि हरि नामु धिआवै राम ॥ पउणु पाणी बैसँतरो मेरी जिँदुड़ीए नित हरि हरि हरि जसु गावै राम ॥
ਵਣੁ ਤ੍ਰਿਣੁ ਸਭੁ ਆਕਾਰੁ ਹੈ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਮੁਖਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵੈ ਰਾਮ ॥ ਨਾਨਕ ਤੇ ਹਰਿ ਦਰਿ ਪੈਨ੍ਾਇਆ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ ਜੋ ਗੁਰਮੁਖਿ ਭਗਤਿ ਮਨੁ ਲਾਵੈ ਰਾਮ ॥੪॥੪॥	वणु त्रिणु सभु आकारु है मेरी जिँदुड़ीए मुखि हरि हरि नामु धिआवै राम ॥ नानक ते हरि दरि पैनाइआ मेरी जिँदुड़ीए जो गुरमुखि भगति मनु लावै राम ॥४॥४॥

बिहागड़ा महला -४

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि वह प्रभु का ध्यान करने वालों का कितना आदर सम्मान करते हैं और ऐसे भक्त कितने सौभाग्यशाली होते हैं ।

अपनी जीवात्मा को पुन: सम्बोधित करते हुये कहते हैं “ हे’ मेरी आत्मा, मैं उनके बलिहारी हूँ जिन्होंने प्रभु के नाम को (जीवन का) आधार माना है, हे’ मेरी आत्मा, सच्चे गुरु ने उनके मन में हरि का नाम दृढ़ किया जो उन्हें विषैले भवसागर से पार लगा देता है । हे’ मेरी आत्मा, जिन

संतों ने एकाग्र मन से हरि नाम का ध्यान किया उनकी जय जयकार होती है । नानक कहते हैं, हे' मेरी आत्मा, जिन्होंने हरि नाम का जाप किया उन्हें सुख प्राप्त हुया, क्योंकि राम सभी दुखों का निवारण करते हैं "।(१)

प्रभु नाम का ध्यान करने वालों को धन्य कहने के पश्चात गुरु जी शरीर के विभिन्न अंगों पर टिप्पणी करते हैं जो प्रभु नाम के ध्यान में सहायता करते हैं । वह कहते हैं "ओ' मेरी आत्मा, वह जिह्वा धन्य है जो प्रभु के गुण गाती है । वह कान कितने भले एवं सुशोभित हैं जो हरि के भजन कीर्तन का श्रवण करते हैं । हे' मेरी आत्मा, वह शीश कितना भला और पवित्र है, जो गुरु के चरणों में जाकर लगता है ।नानक उस गुरु के बलिहारी हैं, हे' मेरी आत्मा, जिसने मेरे हृदय में हरि नाम को चेताया है "।(२)

गुरु जी अब उन अंगों की प्रशंसा करते हैं जो प्रभु की महिमा को देखने और लिखने के लिये सहायक होते हैं । उनका कहना है " ओ' मेरी आत्मा, वह नेत्र कितने भले और स्वागत योग्य हैं जो साधू अथवा सच्चे गुरु के दर्शन करते हैं । वह हाथ कितने पावन पुनीत हैं, हे' मेरी आत्मा, जो हरि की महिमा हरि का यश लिखते हैं । हे' मेरी आत्मा हमें नित्य ही उस भक्त के पाँव पूजने चाहिये जो धर्म के मार्ग पर चलते हैं। हे' मेरी आत्मा, नानक उन पर बलिहारी हैं जो हरि के नाम का श्रवण करते हैं और हरि नाम में विश्वास रखते हैं "।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी हमें यह भी निर्देशित करते हैं कि केवल मनुष्य या अन्य जीव ही नहीं, अपितु समस्त ब्रह्मांड ही प्रभु नाम का ध्यान करता है । वह कहते हैं " हे' मेरी आत्मा, यह धरती, पाताल और आकाश सभी हरि हरि नाम ध्याते हैं । हे' मेरी आत्मा, पवन, जल तथा अग्नि भी नित्य हरि के यश का गायन करते हैं। हे' मेरी आत्मा, वन और वनस्पति का प्रत्येक तृण अपने मुख से हरि का नाम जपता है । नानक कहते हैं, हे' मेरी आत्मा, जिस भी गुरु के शिष्य का मन हरि नाम के साथ व्यस्त है उसे प्रभु के दरबार में सम्मान से सुसज्जित किया जाता है "।(४-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि शरीर के विभिन्न अंगों, जैसे कि हाथ, पैर, नेत्र एवं कान इत्यादि, सभी का उत्तम उपयोग कर गुरु के आदेशानुसार धर्म के मार्ग पर चलते हुये प्रभु की महिमा का गायन एवं श्रवण करें । क्योंकि, वह लोग जो पूर्ण रूप से अर्थात् तन, मन तथा आत्मा के सहयोग से प्रभु नाम का ध्यान करते हैं वह प्रभु के दरबार में सम्मान पाते हैं

ਪੰਨਾ ੫੪੧

ਬਿਹਾਗੜਾ ਮਹਲਾ ੫ ਛੰਤ ਘਰੁ ੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਹਰਿ ਕਾ ਏਕੁ ਅਚੰਭਉ ਦੇਖਿਆ ਮੇਰੇ ਲਾਲ ਜੀਉ ਜੋ ਕਰੇ ਸੁ ਧਰਮ ਨਿਆਏ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਰੰਗੁ ਅਖਾੜਾ ਪਾਇਓਨੁ ਮੇਰੇ ਲਾਲ ਜੀਉ ਆਵਣੁ ਜਾਣੁ ਸਬਾਏ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੫੪੨

ਆਵਣੁ ਤ ਜਾਣਾ ਤਿਨਹਿ ਕੀਆ ਜਿਨਿ ਮੇਦਨਿ ਸਿਰਜੀਆ ॥
ਇਕਨਾ ਮੇਲਿ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮਹਲਿ ਬੁਲਾਏ ਇਕਿ ਭਰਮਿ ਭੂਲੇ ਫਿਰਦਿਆ ॥

ਅੰਤੁ ਤੇਰਾ ਤੂੰਹੈ ਜਾਣਹਿ ਤੂੰ ਸਭ ਮਹਿ ਰਹਿਆ ਸਮਾਏ ॥
ਸਚੁ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਸੁਣਹੁ ਸੰਤਹੁ ਹਰਿ ਵਰਤੈ ਧਰਮ ਨਿਆਏ ॥੧॥

ਆਵਹੁ ਮਿਲਹੁ ਸਹੇਲੀਹੋ ਮੇਰੇ ਲਾਲ ਜੀਉ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਅਰਾਧੇ ਰਾਮ ॥
ਕਰਿ ਸੇਵਹੁ ਪੂਰਾ ਸਤਿਗੁਰੂ ਮੇਰੇ ਲਾਲ ਜੀਉ ਜਮ ਕਾ ਮਾਰਗੁ ਸਾਧੇ ਰਾਮ ॥

ਮਾਰਗੁ ਬਿਖੜਾ ਸਾਧਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਰਿ ਦਰਗਹ ਸੋਭਾ ਪਾਈਐ ॥
ਜਿਨ ਕਉ ਬਿਧਾਤੈ ਧੁਰਹੁ ਲਿਖਿਆ ਤਿਨ੍ਾ ਰੈਣਿ ਦਿਨੁ ਲਿਵ ਲਾਈਐ ॥

ਹਉਮੈ ਮਮਤਾ ਮੋਹੁ ਛੁਟਾ ਜਾ ਸੰਗਿ ਮਿਲਿਆ ਸਾਧੇ ॥
ਜਨੁ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਮੁਕਤੁ ਹੋਆ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਅਰਾਧੇ ॥੨॥

ਕਰ ਜੋੜਿਹੁ ਸੰਤ ਇਕਤ੍ਰ ਹੋਇ ਮੇਰੇ ਲਾਲ ਜੀਉ ਅਬਿਨਾਸੀ ਪੁਰਖੁ ਪੂਜੇਹਾ ਰਾਮ ॥
ਬਹੁ ਬਿਧਿ ਪੂਜਾ ਖੋਜੀਆ ਮੇਰੇ ਲਾਲ ਜੀਉ ਇਹੁ ਮਨੁ ਤਨੁ ਸਭੁ ਅਰਪੇਹਾ ਰਾਮ ॥

ਮਨੁ ਤਨੁ ਧਨੁ ਸਭੁ ਪ੍ਰਭੂ ਕੇਰਾ ਕਿਆ ਕੋ ਪੂਜ ਚੜਾਵਏ ॥
ਜਿਸੁ ਹੋਇ ਕ੍ਰਿਪਾਲੁ ਦਇਆਲੁ ਸੁਆਮੀ ਸੋ ਪ੍ਰਭ ਅੰਕਿ ਸਮਾਵਏ ॥

ਭਾਗੁ ਮਸਤਕਿ ਹੋਇ ਜਿਸ ਕੈ ਤਿਸੁ ਗੁਰ ਨਾਲਿ ਸਨੇਹਾ ॥
ਜਨੁ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਮਿਲਿ ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਪੂਜੇਹਾ ॥੩॥

ਦਹ ਦਿਸ ਖੋਜਤ ਹਮ ਫਿਰੇ ਮੇਰੇ ਲਾਲ ਜੀਉ ਹਰਿ ਪਾਇਅੜਾ ਘਰਿ ਆਏ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਮੰਦਰੁ ਹਰਿ ਜੀਉ ਸਾਜਿਆ ਮੇਰੇ ਲਾਲ ਜੀਉ ਹਰਿ ਤਿਸੁ ਮਹਿ ਰਹਿਆ ਸਮਾਏ ਰਾਮ ॥

ਸਰਬੇ ਸਮਾਣਾ ਆਪਿ ਸੁਆਮੀ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਰਗਟੁ ਹੋਇਆ ॥
ਮਿਟਿਆ ਅਧੇਰਾ ਦੂਖੁ ਨਾਠਾ ਅਮਿਉ ਹਰਿ ਰਸੁ ਚੋਇਆ ॥

ਜਹਾ ਦੇਖਾ ਤਹਾ ਸੁਆਮੀ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਸਭ ਠਾਏ ॥
ਜਨੁ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਸਤਿਗੁਰਿ ਮਿਲਾਇਆ ਹਰਿ ਪਾਇਅੜਾ ਘਰਿ ਆਏ ॥੪॥੧॥

पृ-५४१

बिहागड़ा महला ५ छँत घर १

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हरि का एकु अचँभउ देखिआ मेरे लाल जीउ जो करे सु धरम निआए राम ॥
हरि रँगु अखाड़ा पाइओनु मेरे लाल जीउ आवणु जाणु सबाए राम ॥

पृ-५४२

आवणु त जाणा तिनहि कीआ जिनि मेदनि सिरजीआ ॥
इकना मेलि सतिगुरु महलि बुलाए इकि भरमि भूले फिरदिआ ॥

अँतु तेरा तूँहै जाणहि तूँ सभ महि रहिआ समाए ॥
सचु कहै नानकु सुणहु सँतहु हरि वरतै धरम निआए ॥१॥

आवहु मिलहु सहेलीहो मेरे लाल जीउ हरि हरि नामु अराधे राम ॥
करि सेवहु पूरा सतिगुरू मेरे लाल जीउ जम का मारगु साधे राम ॥

मारगु बिखड़ा साधि गुरमुखि हरि दरगह सोभा पाइऐ ॥
जिन कउ बिधातै धुरहु लिखिआ तिना् रैणि दिनु लिव लाईऐ ॥

हउमै ममता मोहु छुटा जा सँगि मिलिआ साधे ॥
जनु कहै नानकु मुकतु होआ हरि हरि नामु अराधे ॥२॥

कर जोड़िहु सँत इकत्र होइ मेरे लाल जीउ अबिनासी पुरखु पूजेहा राम ॥
बहु बिधि पूजा खोजीआ मेरे लाल जीउ इहु मनु तनु सभु अरपेहा राम ॥

मनु तनु धनु सभु प्रभू केरा किआ को पूज चड़ावए ॥
जिसु होइ कृपालु दइआलु सुआमी सो प्रभ अँकि समावए ॥

भागु मसतकि होइ जिस कै तिसु गुर नालि सनेहा ॥
जनु कहै नानकु मिलि साधसँगति हरि हरि नामु पूजेहा ॥३॥

दह दिस खोजत हम फिरे मेरे लाल जीउ हरि पाइअड़ा घरि आए राम ॥
हरि मँदरु हरि जीउ साजिआ मेरे लाल जीउ हरि तिसु महि रहिआ समाए राम ॥

सरबे समाणा आपि सुआमी गुरमुखि परगटु होइआ ॥
मिटिआ अधेरा दूखु नाठा अमिउ हरि रसु चोइआ ॥

जहा देखा तहा सुआमी पारब्रहमु सभ ठाए ॥
जनु कहै नानकु सतिगुरि मिलाइआ हरि पाइअड़ा घरि आए ॥४॥१॥

बिहागड़ा महला -५
छँत घर -१

सम्भवत: हम सभी शेक्सपीअर के एक प्रसिद्ध उद्धरण से परिचित हैं जहाँ वह कहते हैं कि “यह संसार एक रंगमंच है और सभी स्त्री पुरुष केवल उसके पात्र हैं, वह उस पर आते और जाते रहते हैं ”। इस शब्द में गुरु जी भी अपने आत्मिक परिज्ञान के अनुसार समान विचार प्रकट कर रहे हैं ।

वह कहते हैं “हे’ मेरे प्रिय, मैंने हरि का एक अचंभा देखा है कि वह जो भी करता है वह धर्मपरायण एवं न्यायसंगत होता है । हे’ मेरे प्रिय, हरि ने इस संसार को एक अखाड़े की भाँति रचा है जहाँ पर सभी (खिलाड़ी अथवा पात्र) आते जाते हैं (अर्थात, जन्म लेते हैं अथवा मृत्यु को प्राप्त करते है)। यह वही है, जिसने इस धरती का सृजन किया और उस पर आने जाने की प्रकिया चलाई । अपनी कृपा से सच्चे गुरु से मिला कर कुछ लोगों को अपने महल में बुला लेता है और कुछ अन्य को भ्रमों में भटका देता है । (परन्तु, हे’ प्रभु) तुम्हीं अपनी सीमायें (अंत) जानते हो (और अपने सारे भेद, मैं तो केवल यही जानता हूँ कि) तुम सर्वव्यापी हो । परन्तु, हे’ संतों, कृपया सुनो, नानक यह सत्य कह रहे हैं कि हरि जो भी करते हैं वह धर्म और न्याय के अनुसार होता है ”।(१)

इस संसार रूपी कक्षा का छात्र मानते हुये गुरु जी हमें सम्बोधित करते हैं कि यदि हम परिश्रम के साथ अध्ययन नहीं करेंगे तो उत्तीर्ण नहीं होंगे और दुख पायेंगे । अत: गुरु जी परामर्श देते हुये कहते हैं “ आओ, मेरे प्रिय साथियों, आओ, हम हरि के नाम की बारम्बार आराधना करें । पूर्ण तथा सच्चे गुरु की सेवा करके हे’ प्रिय, अपनी आने वाली यमलोक की यात्रा का मार्ग सीधा तथा सरल बनालें (अर्थात, मृत्यु के पश्चात कोई दुख या यातना न झेलनी पड़े) । हाँ, गुरु के द्वारा यात्रा का कठिन एवं बिखड़ा मार्ग साध कर मृत्यु के पश्चात हरि के दरबार में शोभा प्राप्त करें ।जिन लोगों के भाग्य में विधाता ने अपनी भक्ति का वरदान लिखा है वह रात और दिन उसी में लीन रहते हैं । जब कोई संतों की संगति में रहता है, उसका अंहकार, ममता एवं मायामोह छूट जाता है । संक्षेप में, दास नानक कहते हैं कि हरि हरि के नाम की आराधना करने से मनुष्य (उपरोक्त प्रकार के विकारों से) मुक्त हो जाता है ”।(२)

कैसे प्रभु की पूजा की जाये अथवा हम उसे क्या भेंट करें, इस विषय पर गुरु जी हमें बताते हैं “ हे’ मेरे प्रिय बंधुओं, कर बद्ध होकर हम सब एकत्र हों और अविनाशी पुरुष (प्रभु) की पूजा करें । ओ’ मेरे प्रिय, मैंने पूजा की बहु विधियों की बहुत खोज की है और अपना तन मन भी उसे अर्पण किया है, परन्तु (मुझे विचार आया कि) तन, मन व धन सब कुछ (वास्तव में) प्रभु का ही तो है, तब फिर हम पूजा में उसे और क्या चढ़ा सकते हैं ।(तथ्य यह है कि) जब किसी पर स्वामी दयालु होते हैं, तब वह (प्रभु नाम अपने मन में रचा कर) उनके अंक में जा कर समा जाता है । जिसके मस्तक पर यह सौभाग्य लिखा है वह गुरु के साथ स्नेह कर लेता है ।अत: भक्त नानक कहते हैं, हे’ साधु संतों, आओ, हम सब संगति में बैठ हरि हरि के नाम की पूजा करें ”।(३)

अंत में गुरु जी हमसे अपना अनुभव साझा करते हैं कि उन्हें प्रभु की प्राप्ति कहाँ से हुई जिससे कि हम व्यर्थ में इधर उधर न भटकें । वह कहते हैं “ हे’ मेरे प्रिय, मैं दसों दिशायों (विभिन्न स्थानों जैसे कि जंगल, पर्वत सागर इत्यादि) में भटकता रहा, पर अंत में आकर हरि को घर (अपने हृदय) में ही पाया । हे’ मेरे प्रिय, हरि ने अपना मंदिर प्रत्येक जीव के अंदर ही प्रतिष्ठित किया है और उसी में समाया रहता है । यद्दिप कि स्वामी स्वयं सब के अंदर विद्यमान हैं, परन्तु गुरु की कृपा से ही वह स्वयं को प्रकट करते हैं और तब अंधकार लुप्त होता है, दुख पलायन कर जाता है और हरि नाम रूपी अँमित रस (मन में) प्रवाहित होने लगता है (तत्पश्चात, मैंने प्रभु में लीन रहने का आनन्द प्राप्त करना आरम्भ किया) । अब जहाँ भी देखता हूँ, स्वामी पारब्रह्म को समस्त स्थानों पर व्याप्त पाता हूँ । नानक दास कहते हैं कि सच्चे गुरु ने मुझे हरि के साथ मिलवा दिया जिनको मैंने अपने घर (हृदय) में ही आकर पाया ”।(४-१)

इस शब्द का संदेश है कि यह संसार एक रंग मंच है जहाँ पर प्रभु ने सभी प्राणियों को पात्र बना कर अपने एक नाटक की व्यवस्था की है। हम संसार के इस रंग मंच पर आते हैं और अपना पूर्वनिर्दिष्ट अभिनय करके विदा हो जाते हैं । हमें यह विचारना चाहिये कि जो भी हो रहा है, वह धर्मानुसार तथा न्यायपूर्ण ढंग से हो रहा है, अत: हमें किसी सांसारिक दुख दर्द के लिये असंतोष नही प्रकट करना चाहिये। इसके अतिरिक्त हमें गुरु के मार्ग दर्शन पर प्रभु की शरण में आकर उसके नाम का ध्यान करना चाहिये जिससे हमारी यह सांसारिक यात्रा शांतिपूर्ण एवं सुखदायी रहे, तथा हम जन्म मरण के अनेक चक्करों में पड़ने से बच सकें ।

ਪੰਨਾ ੫੪੩

ਬਿਹਾਗੜਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਗੁਰ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਪੂਰੇ ਅਨਦਿਨੁ ਨਾਮੁ ਵਖਾਣਾ ਰਾਮ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਬਾਣੀ ਉਚਰਾ ਹਰਿ ਜਸੁ ਮਿਠਾ ਲਾਗੈ ਤੇਰਾ ਭਾਣਾ ਰਾਮ ॥

ਕਰਿ ਦਇਆ ਮਇਆ ਗੋਪਾਲ ਗੋਬਿੰਦ ਕੋਇ ਨਾਹੀ ਤੁਝ ਬਿਨਾ ॥
ਸਮਰਥ ਅਗਥ ਅਪਾਰ ਪੂਰਨ ਜੀਉ ਤਨੁ ਧਨੁ ਤੁਮ੍ ਮਨਾ ॥

ਮੂਰਖ ਮੁਗਧ ਅਨਾਥ ਚੰਚਲ ਬਲਹੀਨ ਨੀਚ ਅਜਾਣਾ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਸਰਣਿ ਤੇਰੀ ਰਖਿ ਲੇਹੁ ਆਵਣ ਜਾਣਾ ॥੧॥

ਸਾਧਹ ਸਰਣੀ ਪਾਈਐ ਹਰਿ ਜੀਉ ਗੁਣ ਗਾਵਹ ਹਰਿ ਨੀਤਾ ਰਾਮ ॥
ਧੂਰਿ ਭਗਤਨ ਕੀ ਮਨਿ ਤਨਿ ਲਗਉ ਹਰਿ ਜੀਉ ਸਭ ਪਤਿਤ ਪੁਨੀਤਾ ਰਾਮ ॥

ਪਤਿਤਾ ਪੁਨੀਤਾ ਹੋਹਿ ਤਿਨ੍ ਸੰਗਿ ਜਿਨ੍ ਬਿਧਾਤਾ ਪਾਇਆ ॥
ਨਾਮ ਰਾਤੇ ਜੀਅ ਦਾਤੇ ਨਿਤ ਦੇਹਿ ਚੜਹਿ ਸਵਾਇਆ ॥

ਰਿਧਿ ਸਿਧਿ ਨਵ ਨਿਧਿ ਹਰਿ ਜਪਿ ਜਿਨੀ ਆਤਮੁ ਜੀਤਾ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕੁ ਵਡਭਾਗਿ ਪਾਈਅਹਿ ਸਾਧ ਸਾਜਨ ਮੀਤਾ ॥੨॥

ਜਿਨੀ ਸਚੁ ਵਣੰਜਿਆ ਹਰਿ ਜੀਉ ਸੇ ਪੂਰੇ ਸਾਹਾ ਰਾਮ ॥
ਬਹੁਤੁ ਖਜਾਨਾ ਤਿੰਨ ਪਹਿ ਹਰਿ ਜੀਉ ਹਰਿ ਕੀਰਤਨੁ ਲਾਹਾ ਰਾਮ ॥

ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਨ ਲੋਭੁ ਬਿਆਪੈ ਜੋ ਜਨ ਪ੍ਰਭ ਸਿਉ ਰਾਤਿਆ ॥
ਏਕੁ ਜਾਨਹਿ ਏਕੁ ਮਾਨਹਿ ਰਾਮ ਕੈ ਰੰਗਿ ਮਾਤਿਆ ॥

ਲਗਿ ਸੰਤ ਚਰਣੀ ਪੜੇ ਸਰਣੀ ਮਨਿ ਤਿਨਾ ਓਮਾਹਾ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕੁ ਜਿਨ ਨਾਮੁ ਪਲੈ ਸੇਈ ਸਚੇ ਸਾਹਾ ॥੩॥

ਨਾਨਕ ਸੋਈ ਸਿਮਰੀਐ ਹਰਿ ਜੀਉ ਜਾ ਕੀ ਕਲ ਧਾਰੀ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੫੪੪

ਗੁਰਮੁਖਿ ਮਨਹੁ ਨ ਵੀਸਰੈ ਹਰਿ ਜੀਉ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖੁ ਮੁਰਾਰੀ ਰਾਮ ॥
ਦੂਖੁ ਰੋਗੁ ਨ ਭਉ ਬਿਆਪੈ ਜਿਨ੍ਹੀ ਹਰਿ ਹਰਿ ਧਿਆਇਆ ॥
ਸੰਤ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ਤਰੇ ਭਵਜਲੁ ਪੂਰਬਿ ਲਿਖਿਆ ਪਾਇਆ ॥
ਵਜੀ ਵਧਾਈ ਮਨਿ ਸਾਂਤਿ ਆਈ ਮਿਲਿਆ ਪੁਰਖੁ ਅਪਾਰੀ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕੁ ਸਿਮਰਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਇਛ ਪੁੰਨੀ ਹਮਾਰੀ ॥੪॥੩॥

पृ-५४३

बिहागड़ा महला ५॥

करि किरपा गुर पारब्रहम पूरे अनदिनु नामु वखाणा राम ॥
अँम्रित बाणी उचरा हरि जसु मिठा लागै तेरा भाणा राम ॥

करि दइआ मइआ गोपाल गोबिँद कोइ नाही तुझ बिना ॥
समरथ अगथ अपार पूरन जीउ तनु धनु तुम् मना ॥

मूरख मुगध अनाथ चँचल बलहीन नीच अजाणा ॥
बिनवँति नानक सरणि तेरी रखि लेहु आवण जाणा ॥१॥

साधह सरणी पाईऐ हरि जीउ गुण गावह हरि नीता राम ॥
धूरि भगतन की मनि तनि लगउ हरि जीउ सभ पतित पुनीता राम ॥

पतिता पुनीता होहि तिन् सँगि जिन् बिधाता पाइआ ॥
नाम राते जीअ दाते नित देहि चड़हि सवाइआ ॥

रिधि सिधि नव निधि हरि जपि जिनी आतमु जीता ॥
बिनवँति नानकु वडभागि पाइअहि साध साजन मीता ॥२

जिनी सचु वणँजिआ हरि जीउ से पूरे साहा राम ॥
बहुतु खजाना तिँन पहि हरि जीउ हरि कीरतनु लाहा राम ॥

कामु क्रोधु न लोभु बिआपै जो जन प्रभ सिउ रातिआ ॥
एकु जानहि एकु मानहि राम कै रँगि मातिआ ॥

लगि सँत चरणी पड़े सरणी मनि तिना ओमाहा ॥
बिनवँति नानकु जिन नामु पलै सेई सचे साहा ॥३॥

नानक सोई सिमरीऐ हरि जीउ जा की कल धारी राम ॥

पृ-५४४

गुरमुखि मनहु न वीसरै हरि जीउ करता पुरखु मुरारी राम ॥
दूखु रोगु न भउ बिआपै जिनी् हरि हरि धिआइआ ॥
सँत प्रसादि तरे भवजलु पूरबि लिखिआ पाइआ ॥
वजी वधाई मनि सांति आई मिलिआ पुरखु अपारी ॥
बिनवँति नानकु सिमरि हरि हरि इछ पुँनी हमारी ॥४॥३॥

बिहागड़ा महला -५

इस शब्द में गुरु जी सिखाते हैं कि हम किस प्रकार से प्रभु से प्रार्थना करें कि वह दिन रात हमें अपने नाम के ध्यान में रहने का आशीर्वाद दें ।

प्रभु से उसके नाम का प्रसाद लेने के लिये उससे प्रार्थना करते हुये गुरु जी कहते हैं " ओ' मेरे सर्वश्रेष्ठ गुरु एवं पारब्रहम, कृपा करो कि मैं दिन रात तेरे नाम का बखान करूँ ।हरि, मैं तुम्हारे यश के हेतु अँमृत रूपी वाणी का उच्चारण करूँ और तेरा कुछ भी किया मुझे मीठा लगे । हे' सृष्टि के स्वामी, अपनी दया तथा उपकार करो, क्योंकि (मेरी सहायता के लिये) तुम्हारे बिना कोई नहीं है । ओ', सर्वशक्तिमान, अकथनीय,

अपार एवं पारंगत प्रभु जी, मेरा समस्त तन मन एवं धन तुम्हारा है । मैं मूर्ख, मंदबुद्धि, अनाथ, चंचल, क्षीण, अनजान तथा नीच हूँ । नानक तेरी शरण में आकर विनती करते हैं कि तुम आने तथा जाने (जन्म मरण के चक्र) से मेरी रक्षा करो ”।(१)

अब गुरु जी हमें सिखाते हैं कि संतों से सहायता पाने के लिये प्रभु से कैसे विनती करें । वह यह भी बताते हैं कि संतों की संगति का सौभाग्य प्राप्त कर लेने के पश्चात हमें और क्या आशीर्वाद प्राप्त करने चाहिये । वह कहते हैं “ओ’ प्रभु जी मुझे साधु संतों की शरण में रखो (जिससे उनकी संगति में) मैं नित्य ही हरि के गुण गाऊँ । मेरी इच्छा है कि संतों की चरण धूलि (अथवा उनकी पवित्र वाणी का सार) मेरे तन और मन को लग जाये, जो सभी पतित एवं पापी जनों को पुनीत करती है । जिन लोगों ने विधाता को पा लिया है उनकी संगति में पतित भी पुनीत हो जाते हैं । क्योंकि जो भी हरि नाम में रमे हुये हैं वह अन्य जीवों को आत्मिक प्रकाश का वरदान देने में सक्षम हैं और ऐसा दान नित्य प्रति दूना सवाया बढ़ जाता है । जिन्होंने हरि का जाप कर अपनी आत्मा पर विजय प्राप्त कर ली है वह रिद्धि, सिद्धि तथा नव निधियों को पा जाते हैं। नानक विनम्रता से कहते हैं कि बहुत सौभाग्य से हमें साधु स्वभाव के सज्जन अथवा मित्रों की संगति प्राप्त होती है ”।(२)

हरि के भक्तों के गुणों का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं “ हे’ हरि जी, पूर्ण रूप से साहूकार (संत) वही हैं, जिन्होंने सच (प्रभु के नाम) का व्यापार किया । हे’ हरि, उनके पास बहुत भंडार हैं तथा हरि का कीर्तन (इस व्यापार का) लाभांश है । जो भक्त प्रभु के प्रेम में रमे हुये हैं उनमें काम, क्रोध तथा लोभ की व्याप्ति नहीं होती है । वह राम के रंग में मदमाते हैं, उसी एक को जानते हैं और उसी में विश्वास रखते हैं । संत (गुरु) के चरणों की शरण में रहने से उनके मन में उत्साह और प्रसन्नता रहती है । विनम्र भाव से नानक कहते हैं कि जिनके आँचल में प्रभु नाम है, वही सच्चे (वास्तव में धनी) साहूकार हैं ”।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं “ ओ’ नानक, केवल उसी हरि का सिमरन करें जिसकी शक्ति ने ब्रह्मांड का भार सहन कर रखा है । गुरु का शिष्य अपने मन में से कभी भी सर्वशक्तिमान, दुष्टदमन हरि को बिसारता नहीं है ।जिन्होंने हरि की आराधना और ध्यान किया है, उन्हें कोई दुख, रोग और भय की व्याप्ति नहीं होती । संत (गुरु) के कृपापात्र होने से वह भवसागर पार कर लेते हैं और इस प्रकार अपने पूर्वनिर्धारित भाग्य के अनुसार फल पाते हैं । अपार प्रभु के मिल जाने के पश्चात, सब जगह बधाई नाद होता है और मन में शांति का आगमन होता है ।नानक विनती पूर्वक कहते हैं कि हरि हरि नाम के सिमरन से मेरी इच्छा फलीभूत हुयी है ”।(४-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपनी समस्त कठिनाइयों से मुक्ति पाकर अनन्त परम सुख की कामना करते हैं तो शुद्ध हृदय से ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह अपनी कृपा करके हमें संतों (गुरु ग्रंथ साहिब जी) के मार्ग दर्शन का आशीर्वाद प्रदान करें । गुरु से मार्ग दर्शन पाकर हमें दिन रात सच्चे प्रेम और श्रद्धा के साथ प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੫੪੫

ਬਿਹਾਗੜਾ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਖੋਜਤ ਸੰਤ ਫਿਰਹਿ ਪ੍ਰਭ ਪ੍ਰਾਣ ਅਧਾਰੇ ਰਾਮ ॥
ਤਾਣੁ ਤਨੁ ਖੀਨ ਭਇਆ ਬਿਨੁ ਮਿਲਤ ਪਿਆਰੇ ਰਾਮ ॥
ਪ੍ਰਭ ਮਿਲਹੁ ਪਿਆਰੇ ਮਇਆ ਧਾਰੇ ਕਰਿ ਦਇਆ ਲੜਿ ਲਾਇ ਲੀਜੀਐ ॥
ਦੇਹਿ ਨਾਮੁ ਅਪਨਾ ਜਪਉ ਸੁਆਮੀ ਹਰਿ ਦਰਸ ਪੇਖੇ ਜੀਜੀਐ ॥
ਸਮਰਥ ਪੂਰਨ ਸਦਾ ਨਿਹਚਲ ਊਚ ਅਗਮ ਅਪਾਰੇ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਧਾਰਿ ਕਿਰਪਾ ਮਿਲਹੁ ਪ੍ਰਾਨ ਪਿਆਰੇ ॥੧॥

ਜਪ ਤਪ ਬਰਤ ਕੀਨੇ ਪੇਖਨ ਕਉ ਚਰਣਾ ਰਾਮ ॥
ਤਪਤਿ ਨ ਕਤਹਿ ਬੁਝੈ ਬਿਨੁ ਸੁਆਮੀ ਸਰਣਾ ਰਾਮ ॥
ਪ੍ਰਭ ਸਰਣਿ ਤੇਰੀ ਕਾਟਿ ਬੇਰੀ ਸੰਸਾਰੁ ਸਾਗਰੁ ਤਾਰੀਐ ॥
ਅਨਾਥ ਨਿਰਗੁਨਿ ਕਛੁ ਨ ਜਾਨਾ ਮੇਰਾ ਗੁਣੁ ਅਉਗਣੁ ਨ ਬੀਚਾਰੀਐ ॥
ਦੀਨ ਦਇਆਲ ਗੋਪਾਲ ਪ੍ਰੀਤਮ ਸਮਰਥ ਕਾਰਣ ਕਰਣਾ ॥
ਨਾਨਕ ਚਾਤ੍ਰਿਕ ਹਰਿਬੂੰਦ ਮਾਗੈ ਜਪਿ ਜੀਵਾ ਹਰਿ ਹਰਿ ਚਰਣਾ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੫੪੬

ਅਮਿਅ ਸਰੋਵਰੋ ਪੀਉ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮਾ ਰਾਮ ॥
ਸੰਤਹ ਸੰਗਿ ਮਿਲੈ ਜਪਿ ਪੂਰਨ ਕਾਮਾ ਰਾਮ ॥
ਸਭ ਕਾਮ ਪੂਰਨ ਦੁਖ ਬਿਦੀਰਨ ਹਰਿ ਨਿਮਖ ਮਨਹੁ ਨ ਬੀਸਰੈ ॥
ਆਨੰਦ ਅਨਦਿਨੁ ਸਦਾ ਸਾਚਾ ਸਰਬ ਗੁਣ ਜਗਦੀਸਰੈ ॥
ਅਗਣਤ ਊਚ ਅਪਾਰ ਠਾਕੁਰ ਅਗਮ ਜਾ ਕੋ ਧਾਮਾ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਮੇਰੀ ਇਛ ਪੂਰਨ ਮਿਲੇ ਸ੍ਰੀਰੰਗ ਰਾਮਾ ॥੩॥

ਕਈ ਕੋਟਿਕ ਜਗ ਫਲਾ ਸੁਣਿ ਗਾਵਨਹਾਰੇ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਜਪਤ ਕੁਲ ਸਗਲੇ ਤਾਰੇ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਜਪਤ ਸੋਹੰਤ ਪ੍ਰਾਣੀ ਤਾ ਕੀ ਮਹਿਮਾ ਕਿਤ ਗਨਾ ॥
ਹਰਿ ਬਿਸਰੁ ਨਾਹੀ ਪ੍ਰਾਨ ਪਿਆਰੇ ਚਿਤਵੰਤਿ ਦਰਸਨੁ ਸਦ ਮਨਾ ॥
ਸੁਭ ਦਿਵਸ ਆਏ ਗਹਿ ਕੰਠਿ ਲਾਏ ਪ੍ਰਭ ਊਚ ਅਗਮ ਅਪਾਰੇ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਸਫਲੁ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਪ੍ਰਭ ਮਿਲੇ ਅਤਿ ਪਿਆਰੇ ॥੪॥੩॥੬॥

पृ-५४५

बिहागड़ा महला ५॥

खोजत सँत फिरहि प्रभ प्राण अधारे राम ॥
ताणु तनु खीन भइआ बिनु मिलत पिआरे राम ॥
प्रभ मिलहु पिआरे मइआ धारे करि दइआ लड़ि लाइ लीजीऐ ॥
देहि नामु अपना जपउ सुआमी हरि दरस पेखे जीजीऐ ॥
समरथ पूरन सदा निहचल ऊच अगम अपारे ॥
बिनवँति नानक धारि किरपा मिलहु प्रान पिआरे ॥१॥

जप तप बरत कीने पेखन कउ चरणा राम ॥
तपति न कतहि बुझै बिनु सुआमी सरणा राम ॥
प्रभ सरणि तेरी काटि बेरी सँसारु सागरु तारीऐ ॥
अनाथ निरगुनि कछु न जाना मेरा गुणु अउगणु न बीचारीऐ ॥
दीन दइआल गोपाल प्रीतम समरथ कारण करणा ॥
नानक चात्रिक हरिबूँद मागै जपि जीवा हरि हरि चरणा ॥२॥

पृ-५४६

अमिअ सरोवरो पीउ हरि हरि नामा राम ॥
सँतह सँगि मिलै जपि पूरन कामा राम ॥
सभ काम पूरन दुख बिदीरन हरि निमख मनहु न बीसरै ॥
आनँद अनदिनु सदा साचा सरब गुण जगदीसरै ॥
अगणत ऊच अपार ठाकुर अगम जा को धामा ॥
बिनवँति नानक मेरी इछ पूरन मिले स्रीरँग रामा ॥३॥

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम ॥
हरि हरि नामु जपत कुल सगले तारे राम ॥
हरि नामु जपत सोहँत प्राणी ता की महिमा कित गना ॥
हरि बिसरु नाही प्रान पिआरे चितवँति दरसनु सद मना ॥
सुभ दिवस आए गहि कँठि लाए प्रभ ऊच अगम अपारे ॥
बिनवँति नानक सफलु सभु किछु प्रभ मिले अति पिआरे ॥४॥३॥६॥

बिहागड़ा महला -५

इस शब्द में गुरु जी हमें कहते हैं कि कैसे सँत और भक्त जन प्रभु से प्रेम करते हैं, कैसे सदा उसे ढूँढते रहते हैं, कैसे उस से प्रार्थना करते हैं, तथा कितने स्नेह भरे शब्द उनके मुख से प्रभु के लिये निकलते हैं और उनके तन मन की क्या दशा होती है जब कभी उन्हें अपने प्रिय प्रभु से बिछड़ना पड़ता है ।

वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), संत और भक्तजन उस प्रभु की खोज में रहते हैं जो उनके प्राणों का आधार है ।अपने प्रिय प्रभु से न मिल सकने के कारण उनका तन क्षीण हो जाता है । ओ' मेरे प्रिय प्रभु, कृपा करो और मुझे अपने आँचल से लगा कर रखो । हे' मेरे स्वामी, मुझे अपने नाम का दान दो जो मैं सदा जपता रहूँ, हरि के दर्शन करके मैं जीवित हो जाता हूँ "।नानक प्रार्थना करते हैं "ओ' सर्वशक्तिमान, पूर्ण, सदा स्थिर रहने वाले, उच्च, अगम्य, अपार, प्राणों से भी प्रिय प्रभु कृपा करके मुझे आन मिलो "।(१)

गुरु जी हमें परोक्ष रूप से सब प्रकार के धर्म कर्म तथा शास्त्रीय विधियों द्वारा प्रचालित व्रत एवं जाप तप आदि से सावधान करते हैं । स्वयं को उस स्थित में रखते हुये कहते हैं "मैंने प्रभु के चरणों के दर्शन पाने के लिये अनेक जाप, तप तथा व्रत किये, परन्तु स्वामी की शरण में जाये बिना (मन की) तपन कभी शांत नहीं होती अतः (विविध प्रकार के कठोर संयम और नियम त्याग कर मैं) तुम्हारी शरण में आ गया हूँ, कृपा करके मेरे (सांसारिक) बंधन काट दो और भव सागर से पार करवा दो "।

अब गुरु जी प्रभु को अपनाने का एक और आवश्यक रूप दर्शाते हैं, वह है, उनकी अति विनम्र भावना, जिसके साथ वह कहते हैं " हे'

प्रभु, मैं अनाथ हूँ, निर्गुण हूँ, कुछ भी नहीं जानता, मेरा गुण अवगुण ना विचारो । हे' मेरे प्रियतम, दीन दयालु, सर्वशक्तिमान, कारण व कर्ता, (जैसे चात्रिक अपनी प्यास बुझाने के लिये वर्षा की बूँद के लिये तड़पता है, वैसे ही मैं) चात्रिक रूपी नानक हरि नाम रूपी बूँद को माँग रहा हूँ, जिसके जाप अथवा ध्यान से हरि के चरणों में (आत्मिक रूप से) जीवित रहूँ "।(२)

अब गुरु जी हमें सम्बोधित कर कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो, संतजनों की संगति) एक अँमृित से भरा सरोवर है, वहाँ से तुम हरि हरि नाम का अँमृित पीयो ।यह अँमृित नाम संतों की संगति में ही प्राप्त होता है जिसका जाप करने से हमारे सब कार्य पूर्ण होते हैं ।(प्रभु) हमारी सभी इच्छायें एवं कार्य पूर्ण करते हैं, तथा दुख दर्द का नाश करते हैं, वह हमारे मन में से एक क्षण के लिये भी नहीं बिसरने चाहिये । वह सदा सत्य हैं, सर्वगुणी हैं, जग के स्वामी हैं तथा दिन रात आनन्द के स्रोत हैं । वह ठाकुर अत्यंत ऊँचा है, अपार है, जिसका धाम अगम्य अथवा बुद्धि से परे है । नानक विनम्र भाव से कहते हैं " मेरी इच्छा पूर्ण हो गयी है, क्योंकि मुझे प्रभु श्रीरंग (लक्ष्मी के स्वामी) मिल गये हैं "।(३)

प्रभु का गुणगान और ध्यान करने वालों को मिले आशीर्वादों का वर्णन करते हुये शब्द के अंत में कहते हैं "जो प्रभु का गुणगान गाते तथा श्रवण करते हैं वह जग में करोड़ों के फल अथवा लाभ कमा लेते हैं । (इतना ही नहीं) प्रभु नाम जपने से उनके समस्त कुल का उद्धार हो जाता है ।हरि नाम का ध्यान अथवा जाप करने से वह प्राणी इतने सुहावने लगते हैं कि मैं नहीं जानता उनकी महिमा की गणना कैसे करूँ । वह सदा मन में प्रभु के दर्शन की अभिलाषा रखते हैं (तथा प्रार्थना करते हैं) हे' मेरे प्राण प्रिय, (हमारे मन में से) कभी भी ना बिसरना । वह सर्वोच्च, अगम्य तथा अपार प्रभु जब भी किसी को अपने कंठ से लगाते हैं, तो उसे आभास होता है कि उसके शुभ दिन आ गये हैं । नानक की विनती है कि जो भी अपने अति प्रिय प्रभु से मिलन प्राप्त कर लेते हैं उनके समस्त कार्य सफल रहते हैं "।(४-३-६)

इस शब्द का संदेश है कि यदि हम ईश्वर से मिलना चाहते हैं तो इधर उधर भटकने, कर्मकांड तथा शास्त्रीय विधियों को अपनाने की अपेक्षा, साधु जनों की संगति में रह कर उससे मिलने की प्रार्थना करते रहें। कौन जानता है कि वह कब हमारी प्रार्थनायों को सुन ले और अपनी कृपा से हमें अपने आन्दमयी रूप में लीन कर ले ।

<table>
<tr><td>

ਪੰਨਾ ੫੪੭

ਬਿਹਾਗੜਾ ਮਹਲਾ ੫ ਛੰਤ ॥

ਬੋਲਿ ਸੁਧਰਮੀੜਿਆ ਮੋਨਿ ਕਤ ਧਾਰੀ ਰਾਮ ॥
ਤੂ ਨੇਤ੍ਰੀ ਦੇਖਿ ਚਲਿਆ ਮਾਇਆ ਬਿਉਹਾਰੀ ਰਾਮ ॥
ਸੰਗਿ ਤੇਰੈ ਕਛੁ ਨ ਚਾਲੈ ਬਿਨਾ ਗੋਬਿੰਦ ਨਾਮਾ ॥
ਦੇਸ ਵੇਸ ਸੁਵਰਨ ਰੂਪਾ ਸਗਲ ਊਣੇ ਕਾਮਾ ॥
ਪੁਤ੍ਰ ਕਲਤ੍ਰ ਨ ਸੰਗਿ ਸੋਭਾ ਹਸਤ ਘੋਰਿ ਵਿਕਾਰੀ ॥
ਬਿਨਵੰਤ ਨਾਨਕ ਬਿਨੁ ਸਾਧਸੰਗਮ ਸਭ ਮਿਥਿਆ ਸੰਸਾਰੀ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੫੪੮

ਰਾਜਨ ਕਿਉ ਸੋਇਆ ਤੂ ਨੀਦ ਭਰੇ ਜਾਗਤ ਕਤ ਨਾਹੀ ਰਾਮ ॥
ਮਾਇਆ ਝੂਠੁ ਰੁਦਨੁ ਕੇਤੇ ਬਿਲਲਾਹੀ ਰਾਮ ॥
ਬਿਲਲਾਹਿ ਕੇਤੇ ਮਹਾ ਮੋਹਨ ਬਿਨੁ ਨਾਮ ਹਰਿ ਕੇ ਸੁਖੁ ਨਹੀ ॥
ਸਹਸ ਸਿਆਣਪ ਉਪਾਵ ਥਾਕੇ ਜਹ ਭਾਵਤ ਤਹ ਜਾਹੀ ॥
ਆਦਿ ਅੰਤੇ ਮਧਿ ਪੂਰਨ ਸਰਬਤ੍ਰ ਘਟਿ ਘਟਿ ਆਹੀ ॥
ਬਿਨਵੰਤ ਨਾਨਕ ਜਿਨ ਸਾਧਸੰਗਮੁ ਸੇ ਪਤਿ ਸੇਤੀ ਘਰਿ ਜਾਹੀ ॥੨॥

ਨਰਪਤਿ ਜਾਣਿ ਗ੍ਰਹਿਓ ਸੇਵਕ ਸਿਆਣੇ ਰਾਮ ॥
ਸਰਪਰ ਵੀਛੁੜਣਾ ਮੋਹੇ ਪਛੁਤਾਣੇ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿਚੰਦਉਰੀ ਦੇਖਿ ਭੂਲਾ ਕਹਾ ਅਸਥਿਤਿ ਪਾਈਐ ॥
ਬਿਨੁ ਨਾਮ ਹਰਿ ਕੇ ਆਨ ਰਚਨਾ ਅਹਿਲਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਈਐ ॥
ਹਉ ਹਉ ਕਰਤ ਨ ਤ੍ਰਿਸਨ ਬੂਝੈ ਨਹ ਕਾਂਮ ਪੂਰਨ ਗਿਆਨੇ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਬਿਨੁ ਨਾਮ ਹਰਿ ਕੇ ਕੇਤਿਆ ਪਛੁਤਾਨੇ ॥੩॥

ਧਾਰਿ ਅਨੁਗ੍ਰਹੋ ਅਪਨਾ ਕਰਿ ਲੀਨਾ ਰਾਮ ॥
ਭੁਜਾ ਗਹਿ ਕਾਢਿ ਲੀਓ ਸਾਧੂ ਸੰਗੁ ਦੀਨਾ ਰਾਮ ॥
ਸਾਧਸੰਗਮਿ ਹਰਿ ਅਰਾਧੇ ਸਗਲ ਕਲਮਲ ਦੁਖ ਜਲੇ ॥
ਮਹਾ ਧਰਮ ਸੁਦਾਨ ਕਿਰਿਆ ਸੰਗਿ ਤੇਰੈ ਸੇ ਚਲੇ ॥
ਰਸਨਾ ਅਰਾਧੈ ਏਕੁ ਸੁਆਮੀ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਮਨੁ ਤਨੁ ਭੀਨਾ ॥
ਨਾਨਕ ਜਿਸ ਨੋ ਹਰਿ ਮਿਲਾਏ ਸੋ ਸਰਬ ਗੁਣ ਪਰਬੀਨਾ ॥੪॥੬॥੯॥

</td><td>

पृ-५४७

बिहागड़ा महला ५ छँत ॥

बोलि सुधरमीड़िआ मोनि कत धारी राम ॥
तू नेत्री देखि चलिआ माइआ बिउहारी राम ॥
सँगि तेरै कछु न चाले बिना गोबिँद नामा ॥
देस वेस सुवरन रूपा सगल ऊणे कामा ॥
पुत्र कलत्र न सँगि सोभा हसत घोरि विकारी ॥
बिनवँति नानक बिनु साधसँगम सभ मिथिआ सँसारी ॥१॥

पृ-५४८

राजन किउ सोइआ तू नीद भरे जागत कत नाही राम ॥
माइआ झूठु रुदनु केते बिललाही राम ॥
बिललाहि केते महा मोहन बिनु नाम हरि के सुखु नही ॥
सहस सिआणप उपाव थाके जह भावत तह जाही ॥
आदि अँते मधि पूरन सरबत्र घटि घटि आही ॥
बिनवँति नानक जिन साधसँगमु से पति सेती घरि जाही ॥२॥

नरपति जाणि गृहिओ सेवक सिआणे राम ॥
सरपर वीछुड़णा मोहे पछुताणे राम ॥
हरिचँदउरी देखि भूला कहा असथिति पाईऐ ॥
बिनु नाम हरि के आन रचना अहिला जनमु गवाईऐ ॥
हउ हउ करत न त्रिसन बूझै नह कांम पूरन गिआने ॥
बिनवँति नानक बिनु नाम हरि के केतिआ पछुताने ॥३॥

धारि अनुग्रहो अपना करि लीना राम ॥
भुजा गहि काढि लीओ साधू सँगु दीना राम ॥
साधसँगमि हरि अराधे सगल कलमल दुख जले॥
महा धरम सुदान किरिआ सँगि तेरै से चले ॥
रसना अराधै एकु सुआमी हरि नामि मनु तनु भीना ॥
नानक जिस नो हरि मिलाए सो सरब गुण परबीना ॥४॥६॥९॥

</td></tr>
</table>

बिहागड़ा महला -५
छँत

डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार ऐसा कहा जाता है कि गुरु जी ने इस शब्द का उच्चारण किसी राजा की मृत्यु के समय पर किया था जिसने पहले से ही साधु संतों की सँगति में रह कर प्रभु नाम के ध्यान में रहना प्रारंभ कर दिया था । चूँकि, इस शब्द का संदेश एक सदैवी सत्य है, इसलिये गुरु जी ने इसका समावेश गुरु ग्रंथ साहिब जी में भी किया है । यह शब्द एक ऐसा दृष्य प्रस्तुत करता है जिसमें राजा मृत्यु के बहुत समीप है, यद्यपि वह सचेत है परन्तु बोलने में असमर्थ है । उसके आस पास सम्बन्धी तथा मित्रगण परस्पर अन्य कुछ विषयों पर वार्तालाप कर रहे हैं, परन्तु राजा प्रभु नाम पर ध्यान केंद्रित करने के प्रयत्न में है ।

राजा को सम्बोधित करते हुये वह कहते हैं "ओ' मेरे प्रिय प्रभु भक्त, तुमने मौन क्यों धारण किया हुआ है (बोलते क्यों नहीं) ? तुम स्वयं अपने नेत्रों से देख कर जा रहे हो कि यह माया (सांसारिक धन एवं सत्ता) एक व्यापार है ।गोविंद नाम के अतिरिक्त तेरे साथ और कुछ नहीं जायेगा । देश अथवा राज पाट, वेष वस्त्र, सोना चाँदी सभी कुछ निचले स्तर के हैं, किसी काम के नहीं । पुत्र, पत्नी सांसारिक शोभा एवं प्रतिष्ठा, कोई साथ नहीं देंगे, हाथी घोड़े, (नये समय की मंहगी गाड़ियाँ आदि) तुम्हें विकारों में खींचते हैं ।नानक विनीत भावना से कहते हैं कि साधू संत की संगति के अतिरिक्त और सब कुछ संसार में मिथ्या है (अर्थात, नाशवान है)"।(१)

राजा की दशा को देखते हुये, जिसकी आँखें बंद हैं सम्भवत: वह अपने अंतिम श्वासों में प्रभुनाम का ध्यान करने के प्रयास में है परन्तु आस पास खड़े लोगों के रुदन अथवा शोर से विचलित हो रहा है, गुरु जी उसे एक बार फिर कहते हैं " हे' मेरे प्रिय राजन, तुम क्यों सो रहे

हो, निद्रा से भरे हो, जागते क्यों नही ? (देखो) तुम्हारी इस झूठी माया (धन दौलत और सत्ता) के कारण इतने लोग रुदन कर रहे हैं, चीख - पुकार रहें हैं । हाँ माया जो अति मन मोहक है, उसके कारण कितने लोग रो रहे हैं, विलाप कर रहे हैं (पर वह समझ नहीं पाते कि) हरि के नाम के अतिरिक्त कहीं भी सुख शांति नहीं है । लोग हज़ारों उपाय अथवा चतुराइयाँ कर करके थक जाते हैं, परन्तु वहीं जाते हैं जहाँ प्रभु की इच्छा होती है। वह प्रभु समस्त जीवों के हृदय में आदि समय से लेकर मध्य एवं अंत समय तक पूर्ण रूप से व्याप्त रहते हैं। नानक विनय भाव से कहते हैं कि जो लोग संतों की संगति में रहते हैं वही आदर सम्मान सहित (प्रभु के) घर जाते हैं "।(२)

गुरु जी केवल एक कवि या संत ही नहीं, वह एक प्रवीण मनोवैज्ञानिक भी हैं । जब भी किसी पिता अथवा शासक का अंतिम समय निकट आता है तो उसे यह विचार कर चिंता होती है कि उसके जाने के पश्चात क्या होगा, कैसे होगा, कौन इस घर परिवार, व्यापार अथवा राज्य की देख भाल करेगा । अत: गुरु जी राजा की इस प्रकार की चिँता को दूर करने का प्रयत्न करते हुये उससे कहते हैं " हे' राजन, तुम्हारे राज्य में अनेक बुद्धिमान एवं कुशल लोग हैं (मंत्री, विद्वान एवं प्रबंधक आदि सभी बुद्धिमान हैं, अतः तुम्हें राज्य के लिए चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है) । परन्तु किसी एक दिन तो इन बुद्धिमान लोगों को भी सब माया मोह से बिछुड़ कर जाना है और तब सभी अंत में पश्चात्ताप करते हैं । जैसे कि मनुष्य एक सुंदर मृगतृष्णा के पीछे भूला भटकता रहता है, पर वह कभी पकड़ में नहीं आती, चूँकि वह अस्थिर है ; इसी प्रकार से हरि नाम का ध्यान ना करने के कारण हम संसार में अपना अनमोल मानव जीवन गँवा देते हैं । बारम्बार अपने अहम को शांत करने के प्रयत्न में हम न तो अपनी (सांसारिक माया मोह एवं लोभ की) तृष्णा को बुझा पाते हैं और न ही पूर्ण रूप से दैवी ज्ञान को प्राप्त कर सकते हैं । नानक विनीत भाव से कहते हैं कि हरि नाम को ना जपने से कितने लोग (अंत में) पश्चाताप करते हैं "।(३)

गुरु जी जानते हैं कि राजा उनके इस उपदेश कि प्रभु नाम के बिना और कुछ भी सत्य एवं सुंदर नहीं, को सुन और विचार कर अपने अंतिम श्वासों को प्रभु नाम के ध्यान में उपयोग करने वाले हैं, अतः वह उसे उत्साहित करते हुए एक शुभ संकेत देकर कहते हैं " हे मेरे प्रिय राजन, प्रभु ने अपनी कृपा और प्रेम से तुम्हें अपना लिया है, तुम्हें बाँह पकड़ कर (इस सांसारिक धन दौलत एवं शक्ति के) भँवर से बाहर निकाल लेने के पश्चात साधु संतों की सँगति प्रदान कर दी है । साधु संतों के संगम में हरि की आराधना करने से तुम्हारे सब कुकर्म अथवा पाप भस्म हो जायेंगे । अब प्रभु नाम जैसा महान धर्म, दान जैसा शुभ कर्म आदि सब तुम्हारे साथ चल रहे हैं । (मैं जानता हूँ कि अब) तुम्हारी जिह्वा एक ही स्वामी, हरि के नाम की आराधना का आनंद ले रही है और तुम्हारा मन और तन हरि नाम के रस में पूर्णतया भीगा है ।(क्योंकि ओ') नानक जिसे प्रभु स्वयं अपने में लीन करलें वह सर्वगुण सम्पन्न हो जाता है "।(४-६-९)

इस शब्द का संदेश यह है कि एक किसी दिन हमें मृत्यु को प्राप्त होना ही है । अत: उस समय किसी प्रकार की दुविधा होने से पूर्व ही हमें साधु संतों की संगति में रह कर प्रभु नाम का ध्यान एवं गुणगान करना चाहिए जिससे कि मृत्यु के समय हमें यह चिंता ना सताये कि हमारे घर परिवार का क्या होगा । यदि प्रभु चाहेंगे तो वह कृपा करके हमें अपने आन्नदमयी रूप में लीन होने का वरदान देंगे ।

ਪੰਨਾ ੫੪੯

ਸਲੋਕ ਮਃ ੩ ॥

ਮਨਿ ਪਰਤੀਤਿ ਨ ਆਈਆ ਸਹਜਿ ਨ ਲਗੋ ਭਾਉ ॥
ਸਬਦੈ ਸਾਦੁ ਨ ਪਾਇਓ ਮਨਹਠਿ ਕਿਆ ਗੁਣ ਗਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਆਇਆ ਸੋ ਪਰਵਾਣੁ ਹੈ ਜਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਚਿ ਸਮਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਆਪਣਾ ਆਪੁ ਨ ਪਛਾਣੈ ਮੂੜਾ ਅਵਰਾ ਆਖਿ ਦੁਖਾਏ ॥
ਮੁੰਢੈ ਦੀ ਖਸਲਤਿ ਨ ਗਈਆ ਅੰਧੇ ਵਿਛੁੜਿ ਚੋਟਾ ਖਾਏ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਕੈ ਭੈ ਭੰਨਿ ਨ ਘੜਿਓ ਰਹੈਅੰਕਿ ਸਮਾਏ ॥

ਪੰਨਾ ੫੫੦

ਅਨਦਿਨੁ ਸਹਸਾ ਕਦੇ ਨ ਚੂਕੈ ਬਿਨੁ ਸਬਦੈ ਦੁਖੁ ਪਾਏ ॥
ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਲੋਭੁ ਅੰਤਰਿ ਸਬਲਾ ਨਿਤ ਧੰਧਾ ਕਰਤ ਵਿਹਾਏ ॥
ਚਰਣ ਕਰ ਦੇਖਤ ਸੁਣਿ ਥਕੇ ਦਿਹ ਮੁਕੇ ਨੇੜੈ ਆਏ ॥
ਸਚਾ ਨਾਮੁ ਨ ਲਗੋ ਮੀਠਾ ਜਿਤੁ ਨਾਮਿ ਨਵ ਨਿਧਿ ਪਾਏ ॥
ਜੀਵਤੁ ਮਰੈ ਮਰੈ ਫੁਨਿ ਜੀਵੈ ਤਾਂ ਮੋਖੰਤਰੁ ਪਾਏ ॥
ਧੁਰਿ ਕਰਮੁ ਨ ਪਾਇਓ ਪਰਾਣੀ ਵਿਣੁ ਕਰਮਾ ਕਿਆ ਪਾਏ ॥
ਗੁਰ ਕਾ ਸਬਦੁ ਸਮਾਲਿ ਤੂ ਮੂੜੇ ਗਤਿ ਮਤਿ ਸਬਦੇ ਪਾਏ ॥
ਨਾਨਕ ਸਤਿਗੁਰੁ ਤਦ ਹੀ ਪਾਏ ਜਾਂ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਵਾਏ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਜਿਸ ਦੈ ਚਿਤਿ ਵਸਿਆ ਮੇਰਾ ਸੁਆਮੀ ਤਿਸ ਨੋ ਕਿਉ ਅੰਦੇਸਾ ਕਿਸੈ ਗਲੈ ਦਾ ਲੋੜੀਐ ॥
ਹਰਿ ਸੁਖਦਾਤਾ ਸਭਨਾ ਗਲਾ ਕਾ ਤਿਸ ਨੋ ਧਿਆਇਦਿਆ ਕਿਵ ਨਿਮਖ ਘੜੀ ਮੁਹੁ ਮੋੜੀਐ ॥
ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਧਿਆਇਆ ਤਿਸ ਨੋ ਸਰਬ ਕਲਿਆਣ ਹੋਏ ਨਿਤ ਸੰਤ ਜਨਾ ਕੀ ਸੰਗਤਿ ਜਾਇ ਬਹੀਐ ਮੁਹੁ ਜੋੜੀਐ ॥
ਸਭਿ ਦੁਖ ਭੁਖ ਰੋਗ ਗਏ ਹਰਿ ਸੇਵਕ ਕੇ ਸਭਿ ਜਨ ਕੇ ਬੰਧਨ ਤੋੜੀਐ ॥
ਹਰਿ ਕਿਰਪਾ ਤੇ ਹੋਆ ਹਰਿ ਭਗਤੁ ਹਰਿ ਭਗਤ ਜਨਾ ਕੈ ਮੁਹਿ ਡਿਠੈ ਜਗਤੁ ਤਰਿਆ ਸਭੁ ਲੋੜੀਐ ॥੪॥

पृ-५४९

सलोक महला ३॥

मनि परतीति न आईआ सहिज न लगो भाउ ॥
सबदै सादु न पाइओ मनहठि किआ गुण गाइ ॥
नानक आइआ सो परवाणु है जि गुरमुखि सचि समाइ ॥१॥

महला ३॥

आपणा आपु न पछाणै मूड़ा अवरा आखि दुखाए ॥
मुँढै दी खसलति न गईआ अँधे विछुड़ि चोटा खाए ॥
सतिगुर कै भै भँनि न घड़िओ रहैअँकि समाए ॥

पृ-५५०

अनदिनु सहसा कदे न चूकै बिनु सबदै दुखु पाए ॥
कामु क्रोधु लोभु अँतरि सबला नित धँधा करत विहाए ॥
चरण कर देखत सुणि थके दिह मुके नेड़ै आए ॥
सचा नामु न लगो मीठा जितु नामि नव निधि पाए ॥
जीवतु मरे मरै फुनि जीवै तां मोखँतरु पाए ॥
धुरि करमु न पाइओ पराणी विणु करमा किआ पाए ॥
गुर का सबदु समालि तू मूड़े गति मति सबदे पाए ॥
नानक सतिगुरु तद ही पाए जां विचहु आपु गवाए ॥२

पउड़ी ॥

जिस दै चिति वसिआ मेरा सुआमी तिस नो किउ अँदेसा किसै गलै दा लोड़ीऐ॥
हरि सुखदाता सभना गला का तिस नो धिआइदिआ किव निमख घड़ी मुहु मोड़ीऐ ॥
जिनि हरि धिआइआ तिस नो सरब कलिआण होए नित सँत जना की सँगति जाइ बहीऐ मुहु जोड़ीऐ ॥
सभि दुख भुख रोग गए हरि सेवक के सभि जन के बँधन तोड़ीऐ ॥
हरि किरपा ते होआ हरि भगतु हरि भगत जना कै मुहि डिठै जगतु तरिआ सभु लोड़ीऐ ॥४॥

सलोक महला – ३

इस पउड़ी का आरम्भ गुरु जी हमें यह कहते हुये करते हैं कि सच्चे प्रेम एवं श्रद्धा के बिना केवल एक छद्म इच्छा के अंतर्गत सँगति में बैठकर कुछ भजन कीर्तन व नित्य का पूजा- पाठ और धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन आदि करना सब निर्रथक है ।

वह कहते हैं “वह जिसके मन में सच्चा (गुरु के उपदेश और शिक्षा के प्रति) विश्वास नहीं है और प्रभु के लिये मन में सहज भाव से प्रेम नहीं है, गुरु के शब्द का कोई आत्मिक आनन्द अथवा स्वाद नहीं पाया है, तो उसे केवल मन के हठ अथवा दिखावे के लिये प्रभु गुणों के गायन कीर्तन करने का क्या लाभ है ? ओ’ नानक, केवल उसी मनुष्य का (इस संसार में) आना स्वीकृत है जो गुरु के अनुसार सच्चे अनंत प्रभु में समाया रहे ”।(१)

महला-३

अब गुरु जी उन अंहकारी मनुष्यों का स्वभाव तथा लक्षण बताते हैं, जो स्वयं को धर्मी कर्मी एवं पवित्र समझते हैं, गुरबाणी के पाठ का ढोंग करते हैं पर मन में प्रभु के लिये सच्चा प्रेम और श्रद्धा का भाव नहीं होता ।

वह कहते हैं "(एक अंहकारी) मूर्ख मनुष्य स्वयं को नहीं पहचानता, पर अन्य लोगों को बहुत कुछ (भला बुरा) बोल कर दुखी करता है। ऐसे मनुष्य का प्राकृतिक स्वभाव नहीं जाता और वह प्रभु से बिछुड़ा हुआ अँधा अथवा मूर्ख (अपने दुर्भाग्य के कारण) अनेकों चोटें खाता रहता है, क्योंकि उसने सच्चे गुरु का भय ना मान तथा अपने वास्तविक स्वभाव का त्याग ना कर स्वयं को नये रूप में नहीं ढाला, जिससे कि वह प्रभु के सुखद अँक में जाकर समा सके । ऐसे मनुष्य के मन में से भय और शंका किसी भी समय समाप्त नहीं होते और वह गुरु के शब्द पर ना विचारते हुए दुख पाता है । उसके अँतरमन में काम क्रोध और लोभ की प्रवृत्तियाँ सबल रहती हैं और वह नित्य ही (सांसारिक) धंधों में समय नष्ट करता है । (कुछ समय के पश्चात उसे ऐसा प्रतीत होता है कि) उसके पैर चल चल कर, हाथ काम कर कर के थक चुके हैं, आँखें तथा कान देखते सुनते रहने से थके हैं और जीवन के दिन समाप्त हो रहे हैं अथवा मृत्यु समीप आ गयी है । ऐसे जीव को प्रभु का सच्चा नाम कभी मधुर प्रतीत नहीं हुआ जिस नाम के द्वारा नव निधियाँ प्राप्त होती हैं । (इस मनुष्य को यह नहीं मालूम होता कि संसार में यदि) वह जीवित रह कर भी एक मरे हुये के समान (सांसारिक मोह माया से परे) रहे, तो वह मोक्ष प्राप्त करता है । किन्तु, यदि वह नाशवान प्राणी प्रारब्ध से ही शुभ कर्म लेकर नहीं जन्मा है तो अब कैसे अपने भाग्य में उन्हें पा सकता है । अतः: हे मूर्ख प्राणी, अब भी तुम गुरु के शब्दों को पहचानो और मन में बसाओ, क्योंकि उन्हीं शब्दों के द्वारा तेरी गति होगी अथवा मोक्ष प्राप्त होगा । परन्तु, ओ' नानक, कोई सच्चे गुरु का मार्ग तभी पा सकता है, जब वह अपने अँतरमन से अपना अंहकार पूर्ण रूप से नष्ट करदे "।(२)

पउड़ी

गुरु जी शब्द के अंत में उन सच्चे भक्तों के आचरण तथा मनोस्थित का विवरण देते हैं, जो मन में प्रभु को बसा कर उस पर पूर्ण विश्वास करते हैं ।वह कहते हैं " जिनके मन में मेरे स्वामी (प्रभु) बसे हुये हैं, उसे किसी प्रकार के भय अथवा शंका की क्या आवश्यकता है ।वह हरि सब प्रकार के सुखों के दाता हैं, तो हम कैसे एक घड़ी पल के लिये भी उसका ध्यान करने से अपना मुख मोड़ सकते हैं । जिसने भी हरि का ध्यान किया है, उसका सर्वमुखी कल्याण हुया है (इसलिये) हमें भी नित्य साधु संतों की संगति में जाकर बैठना चाहिये और उनके साथ विचार गोष्ठी करनी चाहिये । (ऐसा करने से) हरि के सेवकों के सारे दुख, भूख (इच्छायें), एवं रोग चले जाते हैं और वह सब बंधनों से मुक्त हो जाते हैं । क्योंकि, प्रभु की कृपा से ही कोई उसका भक्त बनता है, तथा उन भक्तों के दर्शन मात्र (तथा उनकी संगति) से ही जग के लोग इस भवसागर को तैर कर पार लग जाते हैं और सभी ऐसा ही चाहते हैं "।(४)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि हम केवल दिखाने के लिये गुरबाणी का पाठ अथवा प्रभु की प्रशंसा में भजन कीर्तन ना करें, अपितु, एक सच्चे सदाचारी की भाँति श्रद्धा और प्रेम के साथ उसके नाम का ध्यान तथा गुणगान करें । हमें कभी भी अपनी भक्ति भावना पर अंहकार नहीं करना चाहिये और अन्य लोगों पर किसी प्रकार से उँगली नहीं उठाना चाहिये । हमें सदा विनम्र भावना से रहना चाहिये और यदि प्रभु हमारे पर कृपा कर हमें अपना भी लें तो भी हमें विनम्रता के साथ प्रभु नाम के वरदान के लिये प्रार्थना करते रहना चाहिए।

ਪੰਨਾ ੫੫੧

ਸਲੋਕ ਮਃ ੩ ॥

ਸੇਖਾ ਅੰਦਰਹੁ ਜੋਰੁ ਛਡਿ ਤੂ ਭਉ ਕਰਿ ਝਲੁ ਗਵਾਇ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਭੈ ਕੇਤੇ ਨਿਸਤਰੇ ਭੈ ਵਿਚਿ ਨਿਰਭਉ ਪਾਇ ॥
ਮਨੁ ਕਠੋਰੁ ਸਬਦਿ ਭੇਦਿ ਤੂੰ ਸਾਂਤਿ ਵਸੈ ਮਨਿ ਆਇ ॥
ਸਾਂਤੀ ਵਿਚਿ ਕਾਰ ਕਮਾਵਣੀ ਸਾ ਖਸਮੁ ਪਾਏ ਥਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਕਾਮਿ ਕ੍ਰੋਧਿ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਇਓ ਪੁਛਹੁ ਗਿਆਨੀ ਜਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਪੰਨਾ ੫੫੨

ਮਨਮੁਖ ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਹੈ ਨਾਮਿ ਨ ਲਗੋ ਪਿਆਰੁ ॥
ਕੂੜੁ ਕਮਾਵੈ ਕੂੜੁ ਸੰਗ੍ਰਹੈ ਕੂੜੁ ਕਰੇ ਆਹਾਰੁ ॥
ਬਿਖੁ ਮਾਇਆ ਧਨੁ ਸੰਚਿ ਮਰਹਿ ਅੰਤੇ ਹੋਇ ਸਭੁ ਛਾਰੁ ॥
ਕਰਮ ਧਰਮ ਸੁਚ ਸੰਜਮ ਕਰਹਿ ਅੰਤਰਿ ਲੋਭੁ ਵਿਕਾਰੁ ॥
ਨਾਨਕ ਜਿ ਮਨਮੁਖੁ ਕਮਾਵੈ ਸੁ ਥਾਇ ਨਾ ਪਵੈ ਦਰਗਹਿ ਹੋਇ ਖੁਆਰੁ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਆਪੇ ਖਾਣੀ ਆਪੇ ਬਾਣੀ ਆਪੇ ਖੰਡ ਵਰਭੰਡ ਕਰੇ ॥
ਆਪਿ ਸਮੁੰਦੁ ਆਪਿ ਹੈ ਸਾਗਰੁ ਆਪੇ ਹੀ ਵਿਚਿ ਰਤਨ ਧਰੇ ॥
ਆਪਿ ਲਹਾਏ ਕਰੇ ਜਿਸੁ ਕਿਰਪਾ ਜਿਸ ਨੋ ਗੁਰਮੁਖਿ ਕਰੇ ਹਰੇ ॥
ਆਪੇ ਭਉਜਲੁ ਆਪਿ ਹੈ ਬੋਹਿਥਾ ਆਪੇ ਖੇਵਟੁ ਆਪਿ ਤਰੇ ॥
ਆਪੇ ਕਰੇ ਕਰਾਏ ਕਰਤਾ ਅਵਰੁ ਨ ਦੂਜਾ ਤੁਝੈ ਸਰੇ ॥੯॥

पृ-५५१

सलोक महला ३॥

सेखा अँदरहु जोरु छडि तू भउ करि झलु गवाइ ॥
गुर कै भै केते निसतरे भै विचि निरभउ पाइ॥
मनु कठोरु सबदि भेदि तूँ सांति वसै मनि आइ ॥
सांती विचि कार कमावणी सा खसमु पाए थाइ ॥
नानक कामि क्रोधि किनै न पाइओ पुछहु गिआनी जाइ ॥१॥

महला ३॥

पृ-५५२

मनमुख माइआ मोहु है नामि न लगो पिआरु ॥
कूड़ु कमावै कूड़ु संग्रहै कूड़ु करे आहारु ॥
बिखु माइआ धनु सँचि मरहि अँते होइ सभु छारु ॥
करम धरम सुच सँजम करहि अँतरि लोभ विकारु ॥
नानक जि मनमुखि कमावै सु थाइ ना पवै दरगहि होइ खुआरु ॥२॥

पउड़ी ॥

आपे खाणी आपे बाणी आपे खँड वरभँड करे ॥
आपि सुमुँद आपि है सागरु आपे ही विचि रतन धरे ॥
आपि लहाए करे जिसु किरपा जिस नो गुरमुखि करे हरे ॥
आपे भउजलु आपि है बोहिथा आपे खेवटु आपि तरे ॥
आपे करे कराए करता अवरु न दूजा तूझै सरे ॥९॥

सलोक महला – ३

डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि यह श्लोक किसी शेख़ (मुस्लिम समाज के धार्मिक तथा सामाजिक रूप से जाने माने एक वर्ग से सम्बंधित) को सम्बोधित करके कहा गया है, जो अति अभिमानी और हठी स्वभाव का था। यद्दिप, शब्द का सार हम सभी के लिये अनुकूल है।

गुरु जी शेख़ को कहते हैं " ओ' शेख़, तुम अपने अहम को त्याग दो, तथा अपने अंदर (प्रभु का) थोड़ा भय मानो और अपनी मूर्खता गँवा दो। गुरु के द्वारा प्रभु के भय को पाकर कितने लोगों का उद्धार हो गया है, तथा (प्रभु के भय में रहने से) वह सब निर्भय हो गये हैं। तुम अपने कठोर हृदय को गुरु के शब्दों की शिक्षा से भेदो जिससे कि तुम्हारे मन में शांति का वास हो जाये। प्रभु वही कार्य स्वीकार करते हैं जो शांतिपूर्वक किया जाता है। हे' नानक, किसी को भी काम और क्रोध के द्वारा प्रभु की प्राप्ति नहीं हुई, यह बात किसी भी ज्ञानी अथवा विद्वान से जाकर पूछ लो "।(१)

महला – ३

किन्तु उपरोक्त प्रकार के उपदेश अथवा ज्ञान से अनेक अंहकारी लोगों को कोई प्रभाव नहीं पड़ता, वह अपने मन के अनुसार अनेक अनुचित कृत्य करते रहते हैं जिसका गुरु जी विरोध करते हैं। ऐसे घमंडी लोगों की दशा एवं भाग्य पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं " अहम में पड़ा मनुष्य माया के मोह में रहता है, तथा प्रभु नाम से उसका कोई प्रेम अथवा लगाव नहीं होता। वह घमंडी जो (धन) कमाता है वह झूठ है, जो (धन) संग्रह करता है वह झूठ है और अपने आहार व्यवहार पर जो व्यय करता है वह भी झूठ है। जो धन वह संग्रह करके मरता है, विष है, क्योंकि, अंत में सभी कुछ राख (भस्म) के समान हो जाता है। (ऐसा अंहकारी मनुष्य जब) अनेक प्रकार के धार्मिक कर्मकांड एवं संयम नियमों का पालन कर रहा होता है (तब वह यह सब प्रभु प्रेम के कारण नहीं करता), अपितु, उसके मन में कई प्रकार के लोभ तथा विकार काम करते हैं। परन्तु ओ' नानक, जो भी कर्म ऐसे अंहकारी लोग करते हैं वह स्वीकृत नहीं होते और प्रभु के घर में वह अपमानित होते हैं "।(२)

पउड़ी

प्रभु सर्वव्यापी हैं और उनका नियंत्रण सभी पर है, ऐसा विचार गुरु जी पहले भी व्यक्त कर चुके हैं और अब फिर एक बार कहते हैं “प्रभु स्वयं सृजन के साधनों की उत्पत्ति करते हैं, तथा वाणी के रूप भी स्वयं ही हैं, वह स्वयं धरती के खंड (महाद्वीप) और आकाशगंगा हैं । स्वयं ही महासागर, स्वयं ही सागर हैं और स्वयं ही उनमें रत्न धर दिये हैं, वह स्वयं ही उस मनुष्य को वह सब (रत्न) देते हैं जिसे अपनी कृपा के द्वारा गुरु का अनुयायी बनाते हैं । वह स्वयं ही भवसागर हैं, स्वयं ही जहाज़ हैं स्वयं ही उसको खेने वाले केवट हैं तथा स्वयं ही उस सागर को तैर कर पार करते हैं । (संक्षेप में) यह सृजनकर्ता ही हैं जो प्रत्येक काम स्वयं ही करते हैं और करवाते हैं, हे' प्रभु, कोई और दूजा तेरे जैसा नहीं है ”।(९)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि हमें अपनी शक्तिशाली स्थिति पर गर्व अथवा घमंड करने की अपेक्षा, गुरु के विचारों के अनुसार सबके साथ विनम्रता तथा आदर प्रेम से व्यवहार करना चाहिये और अपना जीवन मिथ्या सांसारिक माया के संग्रहण में नहीं व्यर्थ करना चाहिये, अपितु, प्रभु में पूर्ण विश्वास रख कर यह विचारना चाहिये कि प्रभु ही सबका सृजनकर्ता है । हमें सच्चे गुरु के विचारों के अनुसार सदा प्रभु की कृपा और आशीर्वाद के लिये प्रार्थना करते रहना चाहिये । गुरु के मार्ग दर्शन पर चलकर सम्भवतः हम प्रभु नाम रूपी सच्चे रत्नों का धन पाने में सफल हो सकें और भवसागर के पार लग जायें ।

ਪੰਨਾ ੫੫੩	**पृ-५५३**
ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੫ ॥	**सलोक महला ५॥**
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਨ ਸਿਮਰਹਿ ਸਾਧਸੰਗਿ ਤੈ ਤਨਿ ਉਡੈ ਖੇਹ ॥ ਜਿਨਿ ਕੀਤੀ ਤਿਸੈ ਨ ਜਾਣਈਨਾਨਕ ਫਿਟੁ ਅਲੂਣੀ ਦੇਹ ॥੧॥	हरि नामु न सिमरहि साधसँगि तै तनि उडै खेह ॥ जिनि कीती तिसै न जाणई नानक फिटु अलूणी देह ॥१॥
ਪੰਨਾ ੫੫੪	**पृ-५५४**
ਮਃ ੫ ॥	**महला ५॥**
ਘਟਿ ਵਸਹਿ ਚਰਣਾਰਬਿੰਦ ਰਸਨਾ ਜਪੈ ਗੁਪਾਲ ॥ ਨਾਨਕ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਸਿਮਰੀਐ ਤਿਸੁ ਦੇਹੀ ਕਉ ਪਾਲਿ ॥੨॥	घटि वसहि चरणारबिँद रसना जपै गुपाल ॥ नानक सो प्रभु सिमरीऐ तिसु देही कउ पालि ॥२॥
ਪਉੜੀ ॥	**पउड़ी ॥**
ਆਪੇ ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਕਰਤਾ ਆਪਿ ਕਰੇ ਇਸਨਾਨੁ ॥ ਆਪੇ ਸੰਜਮਿ ਵਰਤੈ ਸੁਆਮੀ ਆਪਿ ਜਪਾਇਹਿ ਨਾਮੁ ॥ ਆਪਿ ਦਇਆਲੁ ਹੋਇ ਭਉ ਖੰਡਨੁ ਆਪਿ ਕਰੈ ਸਭੁ ਦਾਨੁ ॥ ਜਿਸ ਨੋ ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਪਿ ਬੁਝਾਏ ਸੋ ਸਦ ਹੀ ਦਰਗਹਿ ਪਾਏ ਮਾਨੁ ॥ ਜਿਸ ਦੀ ਪੈਜ ਰਖੈ ਹਰਿ ਸੁਆਮੀ ਸੋ ਸਚਾ ਹਰਿ ਜਾਨੁ ॥੧੪॥	आपे अठसठि तीरथ करता आपि करे इसनानु ॥ आपे सँझमि वरतै सवामी आपि जपाइहि नामु ॥ आपि दइआलु होइ भउ खँडनु आपि करै सभु दानु ॥ जिस नो गुरमुखि आपि बुझाए सो सद ही दरगहि पाए मानु ॥ जिस दी पैज रखै हरि सुआमी सो सचा हरि जानु ॥१४॥

सलोक महला – ५

इस श्लोक में गुरु जी प्रभु नाम का ध्यान ना करने के कारण हमें मिलने वाले परिणामों के विषय पर बता रहे हैं ।वह कहते हैं “ (हे’ मेरे मित्रो) वह शरीर, जो प्रभु नाम का सिमरन साधु संतों की संगति में नहीं करता (वह तन इतना कलंकित है कि) उस पर राख अथवा धूल उड़ती है ।ओ’ नानक, जिस प्रभु ने इस देह का सृजन किया है, यदि उसे ही नहीं जान पाये तो इस असार देह को धिक्कार है ”।(१)

महला -५

यहाँ गुरु जी बताते हैं कि जो तन अथवा मनुष्य प्रभु को प्रेम करता है और उसका ध्यान करता है, उसकी देख भाल हम कैसे करें ।वह कहते हैं “ ओ’ नानक, जिस तन अथवा मनुष्य के हृदय में प्रभु के चरण कमलों का निवास हो तथा जिसकी जिह्वा धरती के स्वामी का जाप करती हो, उस शरीर का भरण पोषण करना चाहिये ”।(२)

पउड़ी

इस पउड़ी में गुरु जी हमें एक बार फिर स्मरण कराते हैं कि प्रभु जो सब कुछ करते हैं वही प्रभु नाम का ध्यान करने के लिए तीर्थ स्थान स्थापित करते हैं और मनुष्य को अपने नाम के ध्यान का आनंद प्राप्त करने के लिए वहाँ भेजते हैं ।वह कहते हैं “(ओ’ मेरे मित्रो), प्रभु स्वयं ही अड़सठ तीर्थों के रचियता हैं और स्वयं ही वहाँ स्नान करते हैं । वह स्वामी स्वयं ही सभी आत्मसंयम के नियम मानते हैं और स्वयं ही अपने नाम का जाप करवाते हैं ।वह कृपालु हमारे सारे भय का खंडन करते हैं और सबको दान भी देते हैं । गुरु के द्वारा, जिस मनुष्य को प्रभु ने स्वयं दैवी ज्ञान प्रदान किया है, वह सदा ही प्रभु के घर में सम्मानित होता है । संक्षेप में, जिसके सम्मान की रक्षा हरि स्वामी स्वयं करते हैं (वह मनुष्य) सच्चा हरि भक्त है ”।(१४)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि प्रभु स्वयं अपनी कृपा करके हमें गुरु के पास सच्चा दैवी ज्ञान प्राप्त करने के लिये भेजते हैं । अत: हमें सदा प्रभु कृपा के लिये विनती करते रहना चाहिये कि वह हमें गुरु का मार्गदर्शन प्रदान करें और फिर उसकी सहायता से हम प्रभु नाम का ध्यान सच्चे प्रेम एवं श्रद्धा से करते रहें, क्योंकि उसके बिना मानव जीवन पूर्ण रूप से व्यर्थ है ।

ਪੰਨਾ ੫੫੫

ਸਲੋਕ ਮਃ ੩ ॥

ਹਉਮੈ ਵਿਚਿ ਜਗਤੁ ਮੁਆ ਮਰਦੋ ਮਰਦਾ ਜਾਇ ॥

ਪੰਨਾ ੫੫੬

ਜਿਚਰੁ ਵਿਚਿ ਦੰਮੁ ਹੈ ਤਿਚਰੁ ਨ ਚੇਤਈ ਕਿ ਕਰੇਗੁ ਅਗੈ ਜਾਇ ॥
ਗਿਆਨੀ ਹੋਇ ਸੁ ਚੇਤੰਨੁ ਹੋਇ ਅਗਿਆਨੀ ਅੰਧੁ ਕਮਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਏਥੈ ਕਮਾਵੈ ਸੋ ਮਿਲੈ ਅਗੈ ਪਾਏ ਜਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਧੁਰਿ ਖਸਮੈ ਕਾ ਹੁਕਮੁ ਪਇਆ ਵਿਣੁ ਸਤਿਗੁਰ ਚੇਤਿਆ ਨ ਜਾਇ ॥
ਸਤਿਗੁਰਿ ਮਿਲਿਐ ਅੰਤਰਿ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸਦਾ ਰਹਿਆ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥
ਦਮਿ ਦਮਿ ਸਦਾ ਸਮਾਲਦਾ ਦੰਮੁ ਨ ਬਿਰਥਾ ਜਾਇ ॥
ਜਨਮ ਮਰਨ ਕਾ ਭਉ ਗਇਆ ਜੀਵਨ ਪਦਵੀ ਪਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਇਹੁ ਮਰਤਬਾ ਤਿਸ ਨੋ ਦੇਇ ਜਿਸ ਨੋ ਕਿਰਪਾ ਕਰੇ ਰਜਾਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਆਪੇ ਦਾਨਾਂ ਬੀਨਿਆ ਆਪੇ ਪਰਧਾਨਾਂ ॥
ਆਪੇ ਰੂਪ ਦਿਖਾਲਦਾ ਆਪੇ ਲਾਇ ਧਿਆਨਾਂ ॥
ਆਪੇ ਮੋਨੀ ਵਰਤਦਾ ਆਪੇ ਕਥੈ ਗਿਆਨਾਂ॥
ਕਉੜਾ ਕਿਸੈ ਨ ਲਗਈ ਸਭਨਾ ਹੀ ਭਾਨਾ ॥
ਉਸਤਤਿ ਬਰਨਿ ਨ ਸਕੀਐ ਸਦ ਸਦ ਕੁਰਬਾਨਾ ॥੧੯॥

पृ-५५५

सलोक महला ३॥

हउमै विचि जगतु मुआ मरदो मरदा जाइ ॥

पृ-५५६

जिचरु विचि दँमु है तिचरु न चेतई कि करेगु अगै जाइ ॥
गिआनी होइ सु चेतँनु होइ अगिआनी अँधु कमाइ ॥
नानक एथै कमावै सो मिलै अगै पाए जाइ ॥१॥

महला ३॥

धुरि खसमै का हुकमु पइआ विणु सतिगुर चेतिआ न जाइ ॥
सतिगुरि मिलिऐ अँतरि रवि रहिआ सदा रहिआ लिव लाइ ॥
दमि दमि सदा समालदा दँमु न बिरथा जाइ ॥
जनम मरन का भउ गइआ जीवन पदवी पाइ ॥
नानक इहु मरतबा तिस नो देइ जिस नो किरपा करे रजाइ ॥२॥

पउड़ी ॥

आपे दानां बीनिआ आपे परधानां ॥
आपे रूप दिखालदा आपे लाइ धिआनां ॥
आपे मोनी वरतदा आपे कथै गिआनां ॥
कउड़ा किसै न लगई सबना ही भाना ॥
उसतति बरनि न सकीऐ सद सद कुरबाना ॥१९॥

सलोक महला – ३

इस श्लोक में गुरु जी संसार की ऐसी दुखद अवस्था पर टिप्पणी करते हैं जहाँ पर मनुष्य अपने अहम अथवा अँहकार के कारण नष्ट होता जा रहा है । साथ ही वह यह भी बताते हैं कि ऐसी दशा से बचने के लिए हमारे पास एक राह भी है ।

वह कहते हैं “ अंहकार के कारण संसार मरणासन्न हो गया है और मरता ही चला जा रहा है, (इस व्याधि से मनुष्य दुखी है, परन्तु वह इतना महामूर्ख है कि) जब तक शरीर में साँस है तब तक वह चेतता नहीं कि आगे जाकर क्या करेगा (यमराज के हाथों उसे क्या दंड मिलेगा)। यदि कोई मनुष्य ज्ञानी है तो वह समझता है अथवा चेतन रहता है (कि आगे जाकर क्या होगा), पर एक मूर्ख अज्ञानी मनुष्य अपने अज्ञान के अंधकार में मूर्खतापूर्ण कार्य करता चला जाता है । ओ’ नानक, (यह तो निश्चित ही है कि) जो कोई भी इस लोक में जैसा कमाता है, उसे परलोक जाकर वैसा ही फल मिलता है ”।(१)

महला – ३

उपर गुरु जी ने हमें बताया कि प्रभु को स्मरण करने के क्या लाभ हैं, अब वह यहाँ पर यह बताते हैं कि कैसे गुरु का मार्ग दर्शन प्रभु को स्मरण करने के लिये अति आवश्यक है ।

वह कहते हैं “ आदि काल से ही प्रभु द्वारा यह नियति है कि सच्चे गुरु (के मार्ग दर्शन के) बिना हम चेतनता नहीं प्राप्त कर सकते । सच्चे गुरु के मिलने के उपरांत ही प्रभु अँतरमन में समाते हैं और तब मनुष्य सदा उस प्रभु में लीन रहता है, वह प्रत्येक श्वास के साथ प्रभु को स्मरण करता है और अपना एक भी श्वास (प्रभु को स्मरण किये बिना) व्यर्थ नहीं जाने देता । प्रत्येक श्वास में प्रभु को स्मरण करने पर मनुष्य को मिले आशीर्वादों का लेखा देते हुये गुरु जी आगे कहते हैं “ (प्रभु का स्मरण करने से) जन्म मरण का भय चला जाता है और मनुष्य को जीवन में एक सहज स्थान प्राप्त होता है । ओ’ नानक, प्रभु ऐसा उच्च स्थान उसी को प्रदान करते हैं जिस पर वह स्वेच्छा से कृपा करते हैं ”।(२)

पउड़ी

अब प्रभु के कुछ अद्धितीय गुणों पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु स्वयं ही बुद्धिमान हैं, दूरदर्शी हैं, सर्वोच्च हैं (कोई उनकी इच्छा को टाल नहीं सकता)। वह अपना रूप स्वयं ही दिखाते हैं और स्वयं ही किसी को अपने ध्यान में लीन करते हैं ।वह स्वयं ही मौनवस्था को धारण करते हैं और स्वयं ही ज्ञानपूर्वक कथा कहते हैं । वह किसी को भी कड़वा स्वाद नहीं देते (अथवा त्याज्य नहीं लगते), सबके ही मनभावन हैं । उनकी स्तुति का वर्णन नहीं कर सकते, अत: सदा और सदा हम उन पर बलिहारी हैं "।(१९)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि यदि हम अंहकारी लोगों के द्वारा उत्पन्न किये गये दुख क्लेश से भरे संसार में जन्म मरण के निरंतर फेरों से परे रहना चाहते हैं तो सच्चे गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) के विचारों पर चल कर प्रभु नाम में प्रेम और श्रध्दा से ध्यान लगायें । सम्भवत:, किसी न किसी दिन वह प्रभु अपनी कृपा कर हमारे हृदय में आकर बस जायें और अपने अनंत रूप में हमें एक उच्च स्थान प्रदान करने का आशीर्वाद दे दें ।

ਪੰਨਾ ੫੫੭

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੧ ਘਰੁ ੨ ॥

ਮੋਰੀ ਰੁਣ ਝੁਣ ਲਾਇਆ ਭੈਣੇ ਸਾਵਣੁ ਆਇਆ ॥
ਤੇਰੇ ਮੁੰਧ ਕਟਾਰੇ ਜੇਵਡਾ ਤਿਨਿ ਲੋਭੀ ਲੋਭ ਲੁਭਾਇਆ ॥
ਤੇਰੇ ਦਰਸਨ ਵਿਟਹੁ ਖੰਨੀਐ ਵੰਞਾ ਤੇਰੇ ਨਾਮ ਵਿਟਹੁ ਕੁਰਬਾਣੋ ॥
ਜਾ ਤੂ ਤਾ ਮੈ ਮਾਣੁ ਕੀਆ ਹੈ ਤੁਧੁ ਬਿਨੁ ਕੇਹਾ ਮੇਰਾ ਮਾਣੋ ॥
ਚੂੜਾ ਭੰਨੁ ਪਲੰਘ ਸਿਉ ਮੁੰਧੇ ਸਣੁ ਬਾਹੀ ਸਣੁ ਬਾਹਾ ॥
ਏਤੇ ਵੇਸਕਰੇਦੀਏ ਮੁੰਧੇ ਸਹੁ ਰਾਤੋ ਅਵਰਾਹਾ ॥

ਪੰਨਾ ੫੫੮

ਨਾ ਮਨੀਆਰੁ ਨ ਚੂੜੀਆ ਨਾ ਸੇ ਵੰਗੁੜੀਆਹਾ ॥
ਜੋ ਸਹ ਕੰਠਿ ਨ ਲਗੀਆ ਜਲਨੁ ਸਿ ਬਾਹੜੀਆਹਾ ॥
ਸਭਿ ਸਹੀਆ ਸਹੁ ਰਾਵਣਿ ਗਈਆ ਹਉ ਦਾਧੀ ਕੈ ਦਰਿ ਜਾਵਾ ॥
ਅੰਮਾਲੀ ਹਉ ਖਰੀ ਸੁਚਜੀ ਤੈ ਸਹ ਏਕਿ ਨ ਭਾਵਾ ॥
ਮਾਠਿ ਗੁੰਦਾਈਂ ਪਟੀਆ ਭਰੀਐ ਮਾਗ ਸੰਧੂਰੇ ॥
ਅਗੈ ਗਈ ਨ ਮੰਨੀਆ ਮਰਉ ਵਿਸੂਰਿ ਵਿਸੂਰੇ ॥
ਮੈ ਰੋਵੰਦੀ ਸਭੁ ਜਗੁ ਰੁਨਾ ਰੁੰਨੜੇ ਵਣਹੁ ਪੰਖੇਰੂ ॥
ਇਕੁ ਨ ਰੁਨਾ ਮੇਰੇ ਤਨ ਕਾ ਬਿਰਹਾ ਜਿਨਿ ਹਉ ਪਿਰਹੁ ਵਿਛੋੜੀ ॥
ਸੁਪਨੈ ਆਇਆ ਭੀ ਗਇਆ ਮੈ ਜਲੁ ਭਰਿਆ ਰੋਇ ॥
ਆਇ ਨ ਸਕਾ ਤੁਝ ਕਨਿ ਪਿਆਰੇ ਭੇਜਿ ਨ ਸਕਾ ਕੋਇ ॥
ਆਉ ਸਭਾਗੀ ਨੀਦੜੀਏ ਮਤੁ ਸਹੁ ਦੇਖਾ ਸੋਇ॥
ਤੈ ਸਾਹਿਬ ਕੀ ਬਾਤ ਜਿ ਆਖੈ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਕਿਆ ਦੀਜੈ ॥
ਸੀਸੁ ਵਢੇ ਕਰਿ ਬੈਸਣੁ ਦੀਜੈ ਵਿਣੁ ਸਿਰ ਸੇਵ ਕਰੀਜੈ ॥
ਕਿਉ ਨ ਮਰੀਜੈ ਜੀਅੜਾ ਨ ਦੀਜੈ ਜਾ ਸਹੁ ਭਇਆ ਵਿਡਾਣਾ ॥੧॥੩॥

पृ-५५७

वडहँस महला १ घर २॥

मोरी रुण झुण लाइआ भैणे सावणु आइआ ॥
तेरे मुँध कटारे जेवडा तिनि लोभी लोभ लुभाइआ ॥
तेरे दरसन विटहु खँनीऐ वँझा तेरे नाम विटहु कुरबाणो ॥
जा तू ता मै माणु कीआ है तुधु बिनु केहा मेरा माणो ॥
चूड़ा भँनु पलँघ सिउ मुँधे सणु बाही सणु बाहा ॥
एते वेसकरेदीए मुँधे सहु रातो अवराहा ॥

पृ-५५८

ना मनीआरु न चूड़ीआ ना से वँगुड़ीआहा ॥
जो सह कँठि न लगीआ जलनु सि बाहड़ीआहा ॥
सभि सहीआ सहु रावणि गइआ हउ दाधी कै दरि जावा ॥
अँमाली हउ खरी सुचजी तै सह एकि न भावा ॥
माठि गुँदाईं पटीआ भरीऐ मागसँधूरे ॥
अगै गई न मँनीआ मरउ विसूरि विसूरे ॥
मै रोवँदी सभु जगु रुना रुँनड़े वणहु पँखेरू ॥
इकु न रुना मेरे तन का बिरहा जिनि हउ पिरहु विछोड़ी ॥
सुपनै आइआ भी गइआ मै जलु भरिआ रोइ ॥
आइ न सका तुझ कनि पिआरे भेजि न सका कोइ ॥
आउ सभागी नीदड़ीए मतु सहु देखा सोइ ॥
तै साहिब की बात जि आखै कहु नानक किआ दीजै ॥
सीसु वढे करि बैसणु दीजै विणु सिर सेव करीजै ॥
किउ न मरीजै जीअड़ा न दीजै जा सहु भइआ विडाणा ॥१॥३॥

वडहँस महला -१ घर-२

यह शब्द गुरु जी की काव्यरचना का श्रेष्ठतम रूप है जहाँ पर उन्होंने मानव आत्मा को अपने प्रियतम के प्रति प्रेम परिपूर्ण आनंद, तथा बिछोह के संताप जैसी संवेदनशील भावनायों को (प्रभु के परिपेक्ष में) प्रस्तुत किया है। वह यहाँ एक बार फिर एक भोली नवयौवना वधू का उदाहरण लेते हैं जो कि अपने प्रियतम का मन जीतने का प्रयास तो कर रही है, परन्तु, अभी तक सफलता नहीं प्राप्त कर सकी । यह शब्द भौगोलिक दृष्टि से पंजाब की पृष्ठभूमि में रचा गया है, जहाँ पर वर्षा ऋतु के आगमन का स्वागत सभी कृषक करते हैं क्योंकि वर्षा आने पर फ़सलें और अन्य सारी बनस्पति लहलहा उठती है, मोर नाचते हैं तथा युवतियाँ बृक्षों पर झूले डाल प्रेम भरे गीत गाती हुयी झूलती हैं परन्तु, जो भी कोई नवयौवना वधूएँ अपने प्रियतम से बिछुड़ी हुयी हैं उनकी विरह वेदना वर्णन से बाहर है ।

इस शब्द में गुरु जी स्वयं को वैसी ही एक अभागी भोली भाली वधू के रूप में कल्पना करते हैं जो यह देखती है कि वर्षा ऋतु आ गयी है सुंदर मोर विभोर होकर नाच रहे हैं नवयौवना वधुएँ अपने अपने पतियों के संग आन्नदित हैं, पर वह अपने पति (प्रभु)से बिछुड़ी विरह वेदना झेल रही है ।

एक बिछुड़ी वधू के रूप में गुरु जी अपने हृदय की वेदना को प्रकट करते हुये कहते हैं " ओ' मेरी बहना, देखो वर्षा ऋतु आ गयी है, मोर प्रसन्नता से नाच रहे हैं (परन्तु मेरे लिये तो यह विरह की ऋतु है) । ओ' मेरे प्रिय, तुम्हारे नयन एक ख़ंजर की भाँति हैं, जो जादू भरे हैं, इन्होंने मेरा हृदय पूर्ण रूप से लुभा लिया है, (ओ' मेरे प्रिय) मैं तुम्हारे दर्शनों को लिये खंड खंड में कटने को तैयार हूँ और तेरे नाम के वास्ते बलिहारी हूँ । (हे' मेरे प्रिय) जब तुम मेरे पास हो तो मुझे गर्व होता है, पर तुम्हारे बिना मेरा कैसा गर्व ?"

नवविवाहिता, परन्तु पति से बिछुड़ी वधू के हृदय के संताप को व्यक्त करते हुये गुरु जी कहते हैं " हे' नवयौवना वधू, अपनी चूड़े से भरी भुजाओं को पलंग की पाटियों पर मार कर चूड़ा तोड़ डालो । (क्योंकि, इतना) श्रृंगार तथा सुंदर वेश करने के पश्चात भी तुम्हारा पति किसी और के प्रेम में है । तुम्हें पता नहीं कि न चूड़ी वाले के पास और न ही तुम्हारे पास इतनी सुंदर चूड़ियाँ और कड़े (प्रभु को लुभाने वाले गुण) हैं जो कि प्रियतम को मोह लें । क्या उन भुजायों को दग्ध हो जाना चाहिये जिन्होंने प्रियतम को कंठ नही लगाया "।

नवयौवना वधुएँ जो अपने अपने पतियों के साथ प्रसन्न हैं उनकी ओर देखते हुए गुरु जी विरहिणी वधू का स्थान लेते हुये कहते हैं “मेरी सभी सखियाँ अपने अपने प्रियतमों के साथ क्रीड़ारत हैं, मैं अभागी कर्मजली किसके द्वार पर जाऊँ ? (शास्त्रीय विधि के अनुसार) मेरे कर्म तथा विचार खरे अथवा सच्चे हैं, (ऐसा प्रतीत होता है) हे’ मेरे पतिदेव, तुम्हें एक भी नहीं भाता । मैंने अपने केशों को गूँथ कर चोटियाँ बनायीं, माँग में सिंदूर भरा, पर जब मैं तुम्हारे सम्मुख गयी तो तुमने मुझे नहीं माना तथा स्वीकार किया, तब मैं (इतनी दुखी तथा हताश हुयी कि) रो रो कर मरणासन हो गयी । मैं इतना रोई (जैसे कि) समस्त संसार ही वन, जीव एवं पक्षियों सहित रो रहा है। परन्तु, कोई एक नहीं रोया, वह था मेरे तन के अंदर मेरे मन का स्वभाव जिसके कारण मैं अपने प्रिय से बिछुड़ गयी”।

आगे गुरु जी दृष्य को थोड़ा मोड़ कर अपने को उस स्थिति में लाते हैं जहां पर वधू अपने प्रिय पति को स्वप्न में देखती है, पर वह स्वप्न शीघ्र ही समाप्त हो जाता है, उसकी निद्रा खुलती है और कुछ नहीं मिलता । वह पुन: सोने का प्रयत्न करती है जिससे कि वही स्वप्न फिर से आये और वह अपने पति से मिल सके । इसी संदर्भ में गुरु जी कहते हैं “ यद्दिप, मेरा प्रियतम मेरे स्वप्न में आया पर फिर चला गया, मेरी आँखों में जल भर गया, मैं रोयी । हे’ प्रभु, मैं तुम्हारे पास नहीं आ सकती (क्योंकि, मुझे पता नहीं कि तुम कहाँ हो) और मैं किसी (संदेशवाहक) को भी नहीं भेज सकती । अत:, मैं कहती हूँ, हे’ सौभाग्यशाली निद्रा, आओ, सम्भवत: मैं अपने स्वामी को अपनी नींद में ही देख सकूँ ”।

प्रेम भावना से भरी वधू के रूप का चित्रण एवं टीका टिप्पणी के पश्चात, अब गुरु जी हमें वास्तविक प्रियतम प्रभु के पास पुन: ले आते हैं और परोक्ष रुप से हमें प्रस्ताव देते हैं कि हम प्रभु से इसी प्रकार का प्रेम करें ।वह दर्शाते हैं कि हमें किस प्रकार के बलिदान के लिए तत्पर रहना चाहिए यदि कोई प्रभु के विषय पर हमसे कुछ साझा करता है या उसके साथ मिलन का राह बताता है । वह कहते हैं “(यदि कोई मुझसे पूछे) ओ’ नानक, हमें उस मनुष्य को क्या देना चाहिये जो हमें, हे’ स्वामी, तुम्हारे विषय में कुछ बताये । (तो मेरा उत्तर यह होगा कि, सर्वप्रथम हम) अपना शीश काट कर (उस मनुष्य को) बैठने का स्थान दें और फिर बिना शीश के ही उसकी सेवा करें । हाँ, हमें क्यों नहीं मरना चाहिये अथवा अपना जीवन त्यागना चाहिये, यदि हमारा प्रियतम हमारे लिये पराया हो गया है ?” (१-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें प्रभु के प्रति उसी प्रकार का निष्कपट एवं आत्म समर्पित प्रेम होना चाहिये, जैसा कि एक नवयौवना भोली वधू के मन में अपने प्रिय पति के लिये होता है और उसी वधू की तरह अपने प्रियतम प्रभु की एक झलक पाने के लिये अपना सब कुछ न्योछावर करने के योग्य बनें ।

ਪੰਨਾ ੫੫੯

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਚੁ ਸੰਜਮੁ ਤਤੁ ਗਿਆਨੁ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਾਚੇ ਲਗੈ ਧਿਆਨੁ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੫੬੦

ਗੁਰਮੁਖਿ ਮਨ ਮੇਰੇ ਨਾਮੁ ਸਮਾਲਿ ॥
ਸਦਾ ਨਿਬਹੈ ਚਲੈ ਤੇਰੈ ਨਾਲਿ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਤਿ ਪਤਿ ਸਚੁ ਸੋਇ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਅੰਤਰਿ ਸਖਾਈ ਪ੍ਰਭੁ ਹੋਇ ॥੨॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਿਸ ਨੋ ਆਪਿ ਕਰੇ ਸੋ ਹੋਇ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਪਿ ਵਡਾਈ ਦੇਵੈ ਸੋਇ ॥੩॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਬਦੁ ਸਚੁ ਕਰਣੀ ਸਾਰੁ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਨਕ ਪਰਵਾਰੈ ਸਾਧਾਰੁ ॥੪॥੬॥

पृ-५५९

वडहँस महला ३॥

गुरमुखि सचु संजमु ततु गिआनु ॥
गुरमुखि साचे लगै धिआनु ॥१॥

पृ-५६०

गुरमुखि मन मेरे नामु समालि ॥
सदा निबहै चलै तेरै नालि ॥रहाउ॥

गुरमुखि जाति पति सचु सोइ ॥
गुरमुखि अँतरि सखाई प्रभु होइ ॥२॥

गुरमुखि जिस नो आपि करे सो होइ ॥
गुरमुखि आपि वडाई देवै सोइ ॥३॥

गुरमुखि सबदु सचु करणी सारु ॥
गुरमुखि नानक परवारै साधारु ॥४॥६॥

वडहँस महला – ३

इस शब्द में गुरु जी यह बताते हैं कि जब हम गुरु की शरण में उसके मार्ग दर्शन पर चलते हैं तो हमें किस प्रकार के आशीर्वाद प्राप्त होते हैं जो हमें मोक्ष के राह पर ले जाते हैं तथा हमारे परिवार के लिये आत्मिक रूप से सहायक सिद्ध होते हैं ।

गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), गुरु के विचारों का अनुसरण कर हम सत्य, आत्मसयंम एवं दैवी ज्ञान का सार प्राप्त करते हैं । गुरु के विचारों द्वारा हमारा मन सच्चे अनंत प्रभु के ध्यान में लगा रहता है "।(१)

अत: गुरु जी स्वयं के मन (और वास्तव में हमारे मन) को परामर्श देते हुये कहते हैं " ओ' मेरे मन गुरु के आश्रय में प्रभु नाम को संभाल कर रखो, जो सदा तुम्हारा साथ देगा और तुम्हारे साथ भी जायेगा "।(विराम)

अब गुरु जी गुरु के अनुयायी के उच्च विचारों का वर्णन करते हुये कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), गुरु के शिष्य के लिये प्रभु स्वयं ही उसकी जाति तथा सम्मान हैं । गुरु के शिष्य का अँतरमन जानता है कि प्रभु उसके सखा और शुभचिंतक हैं "।(२)

गुरु का अनुयायी कभी अहम का शिकार न बने, इसलिये उसे सतर्क करते हुये गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), गुरु का शिष्य वैसा ही मनुष्य बनता है जैसा प्रभु स्वयं बनाना चाहें । प्रभु स्वयं ही उस शिष्य को सम्मान भी देते हैं "।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), गुरु के उपदेशों का अनुसरण अथवा पालन करने पर शिष्य जीवन में सत्य कर्मों का सार पा लेता है । हे' नानक, गुरु का शिष्य अपने सम्पूर्ण परिवार को (आत्मिक रूप से) सुखी और सुंदर आधार प्रदान करता है "।(४-६)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें सदा प्रभु से विनती करनी चाहिये कि वह हमें गुरु के आश्रय में उनके विचारों का पालन करने का आशीर्वाद प्रदान करें जिससे कि हम निरंतर उन विचारों के अनुसार प्रभु नाम का ध्यान करते रहें और सत्य, सदाचारी तथा सहजता से परिपूर्ण जीवन पद्धति को अपनायें ।

ਪੰਨਾ ੫੬੧

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੪ ਘਰੁ ੨

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਮੈ ਮਨਿ ਵਡੀ ਆਸ ਹਰੇ ਕਿਉ ਕਰਿ ਹਰਿ ਦਰਸਨੁ ਪਾਵਾ ॥
ਹਉ ਜਾਇ ਪੁਛਾ ਅਪਨੇ ਸਤਗੁਰੈ ਗੁਰ ਪੁਛਿ ਮਨੁ ਮੁਗਧੁ ਸਮਝਾਵਾ ॥
ਭੂਲਾ ਮਨੁ ਸਮਝੈ ਗੁਰ ਸਬਦੀ ਹਰਿ ਹਰਿ ਸਦਾ ਧਿਆਏ ॥
ਨਾਨਕ ਜਿਸੁ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ਮੇਰਾ ਪਿਆਰਾ ਸੋ ਹਰਿ ਚਰਣੀ ਚਿਤੁ ਲਾਏ ॥੧॥

ਹਉ ਸਭਿ ਵੇਸ ਕਰੀ ਪਿਰ ਕਾਰਣਿ ਜੇ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਸਾਚੇ ਭਾਵਾ ॥
ਸੋ ਪਿਰੁ ਪਿਆਰਾ ਮੈ ਨਦਰਿ ਨ ਦੇਖੈ ਹਉ ਕਿਉ ਕਰਿ ਧੀਰਜੁ ਪਾਵਾ ॥
ਜਿਸੁ ਕਾਰਣਿ ਹਉ ਸੀਗਾਰੁ ਸੀਗਾਰੀ ਸੋ ਪਿਰੁ ਰਤਾ ਮੇਰਾ ਅਵਰਾ ॥
ਨਾਨਕ ਧਨੁ ਧੰਨੁ ਧੰਨੁ ਸੋਹਾਗਣਿ ਜਿਨਿ ਪਿਰੁ ਰਾਵਿਅੜਾ ਸਚੁ ਸਵਰਾ ॥੨॥

ਹਉ ਜਾਇ ਪੁਛਾ ਸੋਹਾਗ ਸੁਹਾਗਣਿ ਤੁਸੀ ਕਿਉ ਪਿਰੁ ਪਾਇਅੜਾ ਪ੍ਰਭੁ ਮੇਰਾ ॥
ਮੈ ਊਪਰਿ ਨਦਰਿ ਕਰੀ ਪਿਰਿ ਸਾਚੈ ਮੈ ਛੋਡਿਅੜਾ ਮੇਰਾ ਤੇਰਾ ॥
ਸਭੁ ਮਨੁ ਤਨੁ ਜੀਉ ਕਰਹੁ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਕਾ ਇਤੁ ਮਾਰਗਿ ਭੈਣੇ ਮਿਲੀਐ ॥
ਆਪਨੜਾ ਪ੍ਰਭੁ ਨਦਰਿ ਕਰਿ ਦੇਖੈ ਨਾਨਕ ਜੋਤਿ ਜੋਤੀ ਰਲੀਐ ॥੩॥

ਜੋ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਕਾ ਮੈ ਦੇਇ ਸਨੇਹਾ ਤਿਸੁ ਮਨੁ ਤਨੁ ਅਪਣਾ ਦੇਵਾ ॥
ਨਿਤ ਪਖਾ ਫੇਰੀ ਸੇਵ ਕਮਾਵਾ ਤਿਸੁ ਆਗੈ ਪਾਣੀ ਢੋਵਾਂ ॥
ਨਿਤ ਨਿਤ ਸੇਵ ਕਰੀਹਰਿ ਜਨ ਕੀ ਜੋ ਹਰਿ ਹਰਿ ਕਥਾ ਸੁਣਾਏ ॥

ਪੰਨਾ ੫੬੨

ਧਨੁ ਧੰਨੁ ਗੁਰੂ ਗੁਰ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਨਾਨਕ ਮਨਿ ਆਸ ਪੁਜਾਏ ॥੪॥

ਗੁਰੁ ਸਜਣੁ ਮੇਰਾ ਮੇਲਿ ਹਰੇ ਜਿਤੁ ਮਿਲਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵਾ ॥
ਗੁਰ ਸਤਿਗੁਰ ਪਾਸਹੁ ਹਰਿ ਗੋਸਟਿ ਪੂਛਾਂ ਕਰਿ ਸਾਂਝੀ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵਾਂ ॥
ਗੁਣ ਗਾਵਾ ਨਿਤ ਨਿਤ ਸਦ ਹਰਿ ਕੇ ਮਨੁ ਜੀਵੈ ਨਾਮੁ ਸੁਣਿ ਤੇਰਾ ॥
ਨਾਨਕ ਜਿਤੁ ਵੇਲਾ ਵਿਸਰੈ ਮੇਰਾ ਸੁਆਮੀ ਤਿਤੁ ਵੇਲੈ ਮਰਿ ਜਾਇ ਜੀਉ ਮੇਰਾ ॥੫॥

ਹਰਿ ਵੇਖਣ ਕਉ ਸਭੁ ਕੋਈ ਲੋਚੈ ਸੋ ਵੇਖੈ ਜਿਸੁ ਆਪਿ ਵਿਖਾਲੇ ॥
ਜਿਸ ਨੋ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ਮੇਰਾ ਪਿਆਰਾ ਸੋ ਹਰਿ ਹਰਿ ਸਦਾ ਸਮਾਲੇ ॥
ਸੋ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸਦਾ ਸਦਾ ਸਮਾਲੇ ਜਿਸੁ ਸਤਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਮੇਰਾ ਮਿਲਿਆ ॥
ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਜਨ ਹਰਿ ਇਕੇ ਹੋਏ ਹਰਿ ਜਪਿ ਹਰਿ ਸੇਤੀ ਰਲਿਆ ॥੬॥੧॥੩॥

पृ-५६१

वडहँस महला ४ घर २

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

मै मनि वडी आस हरे किउ करि हरि दरसनु पावा ॥
हउ जाइ पुछा अपने सतगुरै गुर पुछि मनु मुगधु समझावा ॥
भूला मनु समझै गुर सबदी हरि हरि सदा धिआए ॥
नानक जिसु नदरि करे मेरा पिआरा सो हरि चरणी चितु लाए ॥१॥

हउ सभि वेस करी पिर कारणि जे हरि प्रभ साचे भावा ॥
सो पिरु पिआरा मै नदरि न देखै हउ किउ करि धीरजु पावा ॥
जिसु कारणि हउ सीगारु सीगारी सो पिरु रता मेरा अवरा ॥
नानक धनु धँनु धँनु सोहागणि जिनि पिरु राविअड़ा सचु सवरा ॥२॥

हउ जाइ पुछा सोहाग सुहागणि तुसी किउ पिरु पाइअड़ा प्रभु मेरा ॥
मै ऊपरि नदरि करी पिरि साचै मै छोडिअड़ा मेरा तेरा ॥
सभु मनु तनु जीउ करहु हरि प्रभ का इतु मारगि भैणे मिलिऐ ॥
आपनड़ा प्रभु नदरि करि देखै नानक जोति जोती रलीऐ ॥३॥

जो हरि प्रभ का मै देइ सनेहा तिसु मनु तनु अपणा देवा ॥
नित पखा फेरी सेव कमावा तिसु आगै पाणी ढोवां ॥
नित नित सेव करीहरि जन की जो हरि हरि कथा सुणाए ॥

पृ-५६२

धनु धँनु गुरू गुर सतिगुरु पूरा नानक मनि आस पुजाए ॥४॥

गुरु सजणु मेरा मेलि हरे जितु मिलि हरि नामु धिआवा ॥
गुर सतिगुर पासहु हरि गोसटि पूछां करि सांझी हरि गुण गावां ॥
गुण गावा नित नित सद हरि के मनु जीवै नामु सुणि तेरा ॥
नानक जितु वेला विसरै मेरा सुआमी तितु वेलै मरि जाइ जीउ मेरा ॥५॥

हरि वेखण कउ सभु कोई लोचै सो वेखै जिसु आपि विखाले ॥
जिस नो नदरि करे मेरा पिआरा सो हरि हरि सदा समाले ॥
सो हरि हरि नामु सदा सदा समाले जिसु सतगुरु पूरा मेरा मिलिआ ॥
नानक हरि जन हरि इके होए हरि जपि हरि सेती रलिआ ॥६॥१॥३॥

वडहँस महला-४ घर-२
१ओंकार सतगुर प्रसाद

इस शब्द में गुरु जी स्वयं को एक ऐसे गुरु के शिष्य की भूमिका में रखते हैं जो अपने प्रिय प्रभु की एक झलक पाने के लिये आतुर है, परन्तु उसे अपने गुणों तथा योग्यता पर पूर्ण विश्वास नहीं है कि वह प्रभु के दर्शनों के लायक है अथवा नहीं ।इसलिये हमसे साझा करता है कि वह वैसा बनने के लिये किन उपायों पर मन में विचार कर रहा है और अंत में उसे अपने समस्त प्रयासों के द्वारा कैसे निष्कर्ष प्राप्त होते हैं ।

गुरु जी जैसे स्वयं से बात करते हुये कहते हैं " " हरि के लिए मेरे मन में बड़ी अभिलाषा है और मैं कैसे उसके दर्शन प्राप्त कर सकता हूँ।

(सोचता हूँ) मैं अपने सच्चे गुरु से जाकर पूछूँ और गुरु से पूछ कर अपने मुग्ध अर्थात मूढ़ मन को समझाऊँ । (क्योंकि, मैं जानता हूँ कि) जब मेरा भूला भटका मन गुरु के वचनों से समझेगा तब फिर यह सदा हरि हरि के नाम का ध्यान करेगा । ओ' नानक, जिस पर भी मेरे प्रिय प्रभु अपनी कृपा दृष्टि करते हैं वह मनुष्य हरि के चरणों में मन लगा लेता है "।(१)

अभी भी स्वयं से बात करते हुये गुरु जी कहते हैं " अपने प्रिय स्वामी से मिलन हेतु मैं समस्त प्रकार के वेष (धार्मिक कपड़े अथवा चोले आदि)धारण करता हूँ, सम्भवतः मैं हरि, प्रभु सच्चे के मन को भा जाऊँ, परन्तु मेरा वह प्रियतम मेरी ओर एक झलक भी नहीं देखता, सो मैं किस प्रकार से अपने मन को धैर्य बँधाऊँ । वह प्रियतम जिसके लिये मैंने इतने श्रृंगार किये, वह स्वामी मेरा कहीं और (गुरुप्रेमी आत्मा रूपी वधूओं के साथ) व्यस्त है । ओ' नानक, वह सोहागिन बारम्बार धन्य है, जो सच्चे अनंत स्वामी के सानिध्य में आनंद पा रही है "।(२)

गुरु जी एक बार फिर नवयौवना वधू के रूप में यह व्यक्त करते हैं कि स्वामी प्रभु यदि कृत्रिम रुप की शुद्धता अथवा पवित्रता से जरा भी आकर्षित नहीं होते, तब वह क्या करती है । वह कहते हैं "मैं जाकर एक सोहागिन से पूछती हूँ कि तुमने किस प्रकार से प्रभु, मेरे स्वामी को प्राप्त किया, (तब वह उत्तर देती है) मेरे सच्चे प्रियतम ने मेरे पर कृपा दृष्टि डाली और मैंने 'मेरा' व 'तेरा' के भेदभाव त्याग दिये ।(मैं तुम्हें कहती हूँ) अपना मन, तन एवं जीव सब हरि प्रभु को सौंप दो, (क्योंकि) ओ' मेरी बहना, इसी मार्ग पर चल कर प्रभु से मिल सकते हैं ।अपने प्रभु जब कृपा दृष्टि हमारे पर करेंगे तभी, ओ' नानक हमारी जीवन ज्योति उस प्रभु की महाज्योति में लीन होती है "।(३)

अब गुरु जी यह दर्शाते हैं कि हम किस प्रकार से उस मनुष्य के आभारी हो सकते हैं जो हमें प्रभु के विषय में बताये अथवा उसका कोई संदेशा दे । यहां भी वह नवयौवना वधू जो अपने पति को ढूँढ रही है उसके रूपक में गुरु जी कहते हैं " मैं अपना तन मन उसी को अर्पण कर दूँगी जो मुझे मेरे हरि का संदेशा देगा ।(मैं उसकी किसी भी सेवा के लिये तैयार हूँ जैसे कि) नित्य ही पंखा झुलाने की सेवा करूँगी तथा उसके लिये पानी भी ढोकर लाऊँगी । मैं नित्यप्रति उस हरि के भक्त की सेवा करूँगी जो मुझे हरि की कथा सुनायेगा । वह गुरु, वह पूर्ण सच्चे गुरु धन्य हैं जो नानक के मन की अभिलाषा (प्रभु मिलन) को परिपूर्ण करते हैं "।(४)

परन्तु गुरु जी को यह विदित है कि हम गुरु से तभी मिल सकते हैं जब ईश्वर हमें उससे मिलायें । इसलिये वह प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं "मेरा मिलन मेरे सज्जन मित्र अथवा गुरु के साथ करवा दो, जिससे मिल कर मैं तुम्हारे नाम का ध्यान कर सकूँ । मैं सच्चे गुरु से गोष्ठी करके उससे पूछ सकूँ (हे' हरि, तुम्हारे गुणों के विषय पर) तथा उसके साथ हरि के गुण साँझा कर उन्हें गाऊँ ।मैं नित्यप्रति हरि के गुण गाऊँ (क्योंकि, हे' प्रभु), तेरा नाम सुन कर मेरा मन पुनर्जीवित हो जाता है । हे' मेरे स्वामी, जिस समय भी मैं अथवा नानक के मन में से तुम्हारा नाम बिसरता है, उसी समय मेरा जीवन मृत्युप्राय हो जाता है "।(५)

अंत में, अपने व्यक्तिगत अनुभव तथा ज्ञान पर आधारित भावना से गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो) सब लोग हरि के दर्शनों के लिये लालायित हैं, परन्तु उसे केवल वही देख पाता है जिसको हरि स्वयं को दिखलाना चाहते हैं ।जिसके उपर मेरे प्रिय हरि की कृपा दृष्टि होती है वही हरि हरि नाम सदा पा सकता है ।हाँ, वही हरि हरि नाम सदा जपता है, जिसे मेरा पूर्ण रुप से सच्चा गुरु प्राप्त हुया है । इस प्रकार, हे' नानक, हरि का भक्त एवं हरि एक रूप हो जाते हैं और फिर हरि नाम जपने से भक्त हरि में जाकर लीन हो जाता है "।(६-१-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु से जुड़ना चाहते हैं तथा अनंत में लीन होने का वरदान चाहते हैं तो हमें गुरु की सँगति और मार्ग दर्शन को प्राप्त करके प्रभु के गुणों का प्रेम तथा श्रद्धा से बारम्बार गान करना चाहिए जिससे कि हम अँत में उसी प्रभु में लीन हो सकें ।

ਪੰਨਾ ੫੬੩

ਵਡਹੰਸੁ ਮਃ ੫ ॥

ਤੂ ਜਾਣਾਇਹਿ ਤਾ ਕੋਈ ਜਾਣੈ ॥
ਤੇਰਾ ਦੀਆ ਨਾਮੁ ਵਖਾਣੈ ॥੧॥

ਤੂ ਅਚਰਜੁ ਕੁਦਰਤਿਤੇਰੀ ਬਿਸਮਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੫੬੪

ਤੁਧੁ ਆਪੇ ਕਾਰਣੁ ਆਪੇ ਕਰਣਾ ॥
ਹੁਕਮੇ ਜੰਮਣੁ ਹੁਕਮੇ ਮਰਣਾ ॥੨॥
ਨਾਮੁ ਤੇਰਾ ਮਨ ਤਨ ਆਧਾਰੀ ॥
ਨਾਨਕ ਦਾਸੁ ਬਖਸੀਸ ਤੁਮਾਰੀ ॥੩॥੮॥

पृ-५६३

वडहँसु महला ५॥

तू जाणाइहि ता कोई जाणै ॥
तेरा दीया नामु वखाणै ॥१॥

तू अचरजु कुदरतितेरी बिसमा ॥१॥ रहाउ॥

पृ-५६४

तुधु आपे कारणु आपे करणा ॥
हुकमे जँमणु हुकमे मरणा ॥२॥
नामु तेरा मन तन आधारी ॥
नानक दासु बखसीस तुमारी ॥३॥८॥

वडहँस महला – ५

इस शब्द में गुरु जी यह स्वीकार करते हैं कि हम प्रभु की कृपा से ही उसका ध्यान करते हैं, उसे जान पाते हैं तथा उसके कौतुकों पर आश्चर्यचकित होते हैं ।

वह कहते हैं " हे' प्रभु, जब तुम स्वयं ही अपने को प्रकट करते हो, केवल तभी कोई तुम्हें जान पाता है, तथा तेरे द्वारा दिये नाम का बखान करता है "।(१)

इस लिये इतना अचंभित करने वाली प्रभु की लीला तथा प्रकृति पर गुरु जी कहते हैं "प्रभु, तुम आश्चर्यजनक हो और तुम्हारी रची हुई प्रकृति विस्मयपूर्ण है "।(१- विराम)

महान प्रभु के अद्वितीय गुणों पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं " हे ' ईश्वर, तुम्हीं समस्त कारणों के कारण हो और तुम्हीं सबके कर्ता हो । तुम्हारे कहने करने से ही (समस्त जीवों का) जन्म होता है, तथा तुम्हारे आदेश से ही उनकी मृत्यु होती है "।(२)

शब्द के अंत में प्रभु के नाम के गुण गाते हुये गुरु जी कहते हैं " (ओ' प्रभु), तुम्हारे नाम का ध्यान मन एवं तन को आधार देता है और तुम्हारे दास नानक को (तुम्हारे नाम के ध्यान का) उपहार प्राप्त हुया है "।(३-८)

इस शब्द का संदेश यह है कि इसमें कोई संशय नहीं कि प्रभु सर्वशक्तिमान है, वही कारण है और कर्ता भी है, जिसके आदेश पर समस्त जन्म तथा मरण होते हैं । इस लिये हमारा यह कर्तव्य होना चाहिये कि हम विनम्रतापूर्वक उससे प्रार्थना करते रहें कि वह हमें अपना नाम जपने का वरदान दे ।

ਪੰਨਾ ੫੬੫

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੧ ਛੰਤ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਕਾਇਆ ਕੂੜਿ ਵਿਗਾੜਿ ਕਾਹੇ ਨਾਈਐ ॥
ਨਾਤਾ ਸੋ ਪਰਵਾਣੁ ਸਚੁ ਕਮਾਈਐ ॥
ਜਬ ਸਾਚ ਅੰਦਰਿ ਹੋਇ ਸਾਚਾ ਤਾਮਿ ਸਾਚਾ ਪਾਈਐ ॥

ਪੰਨਾ ੫੬੬

ਲਿਖੇ ਬਾਝਹੁ ਸੁਰਤਿ ਨਾਹੀ ਬੋਲਿ ਬੋਲਿ ਗਵਾਈਐ ॥
ਜਿਥੈ ਜਾਇ ਬਹੀਐ ਭਲਾ ਕਹੀਐ ਸੁਰਤਿ ਸਬਦੁ ਲਿਖਾਈਐ ॥
ਕਾਇਆ ਕੂੜਿ ਵਿਗਾੜਿ ਕਾਹੇ ਨਾਈਐ ॥੧॥

ਤਾ ਮੈ ਕਹਿਆ ਕਹਣੁ ਜਾ ਤੁਝੈ ਕਹਾਇਆ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਮੇਰੈ ਮਨਿ ਭਾਇਆ ॥
ਨਾਮੁ ਮੀਠਾ ਮਨਹਿ ਲਾਗਾ ਦੂਖਿ ਡੇਰਾ ਢਾਹਿਆ ॥
ਸੂਖੁ ਮਨ ਮਹਿ ਆਇ ਵਸਿਆ ਜਾਮਿ ਤੈ ਫੁਰਮਾਇਆ ॥
ਨਦਰਿ ਤੁਧੁ ਅਰਦਾਸਿ ਮੇਰੀ ਜਿੰਨਿ ਆਪੁ ਉਪਾਇਆ ॥
ਤਾ ਮੈ ਕਹਿਆ ਕਹਣੁ ਜਾ ਤੁਝੈ ਕਹਾਇਆ ॥੨॥

ਵਾਰੀ ਖਸਮੁ ਕਢਾਏ ਕਿਰਤੁ ਕਮਾਵਣਾ ॥
ਮੰਦਾ ਕਿਸੈ ਨ ਆਖਿ ਝਗੜਾ ਪਾਵਣਾ ॥
ਨਹ ਪਾਇ ਝਗੜਾ ਸੁਆਮਿ ਸੇਤੀ ਆਪਿ ਆਪੁ ਵਞਾਵਣਾ ॥
ਜਿਸੁ ਨਾਲਿ ਸੰਗਤਿ ਕਰਿ ਸਰੀਕੀ ਜਾਇ ਕਿਆ ਰੂਆਵਣਾ ॥
ਜੋ ਦੇਇ ਸਹਣਾ ਮਨਹਿ ਕਹਣਾ ਆਖਿ ਨਾਹੀ ਵਾਵਣਾ ॥
ਵਾਰੀ ਖਸਮੁ ਕਢਾਏ ਕਿਰਤੁ ਕਮਾਵਣਾ ॥੩॥

ਸਭ ਉਪਾਈਅਨੁ ਆਪਿ ਆਪੇ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ॥
ਕਉੜਾ ਕੋਇ ਨ ਮਾਗੈ ਮੀਠਾ ਸਭ ਮਾਗੈ ॥
ਸਭੁ ਕੋਇ ਮੀਠਾ ਮੰਗਿ ਦੇਖੈ ਖਸਮ ਭਾਵੈ ਸੋ ਕਰੇ ॥
ਕਿਛੁ ਪੁੰਨ ਦਾਨ ਅਨੇਕ ਕਰਣੀ ਨਾਮ ਤੁਲਿ ਨ ਸਮਸਰੇ ॥
ਨਾਨਕਾ ਜਿਨ ਨਾਮੁ ਮਿਲਿਆ ਕਰਮੁ ਹੋਆ ਧੁਰਿ ਕਦੇ ॥
ਸਭ ਉਪਾਈਅਨੁ ਆਪਿ ਆਪੇ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ॥੪॥੧॥

पृ-५६५

वडहँसु महला १ छँत

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

काइया कूड़ि विगाड़ि काहे नाईऐ ॥
नाता सो परवाणु सचु कमाईऐ ॥
जब साच अँदरि होइ साचा तामि साचा पाईऐ ॥

पृ-५६६

लिखे बाझहु सुरति नाही बोलि बोलि गवाईऐ ॥
जिथै जाइ बहीऐ भला कहीऐ सुरति सबदु लिखाइऐ ॥
काइआ कूड़ि विगाड़ि काहे नाईऐ ॥१॥

ता मै कहिआ कहणु जा तुझै कहाइआ ॥
अँमृितु हरि का नामु मेरै मनि भाइआ ॥
नामु मीठा मनहि लागा दूखि डेरा ढाहिआ ॥
सूखु मन महि आइ वसिआ जामि तै फुरमाइआ ॥
नदरि तुधु अरदासि मेरी जिँनि आपु उपाइआ ॥
ता मै कहिआ कहणु जा तुझै कहाइआ ॥२॥

वारी खसमु कढाए किरतु कमावणा ॥
मँदा किसै न आखि झगड़ा पावणा ॥
नह पाइ झगड़ा सुआमि सेती आपि आपु वंञावणा ॥
जिसु नालि सँगति करि सरीकी जाइ किआ रूआवणा ॥
जो देइ सहणा मनहि कहणा आखि नाही वावणा ॥
वारी खसमु कढाए किरतु कमावणा ॥३॥

सभ उपाईअनु आपि आपे नदरि करे ॥
कउड़ा कोइ न मागै मीठा सभ मागै ॥
सभु कोइ मीठा मँगि देखै खसम भावै सो करे ॥
किछु पुँन दान अनेक करणी नाम तुलि न समसरे ॥
नानका जिन नामु मिलिआ करमु होआ धुरि कदे ॥
सभ उपाईअनु आपि आपे नदरि करे ॥४॥१॥

वडहँस महला -१
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

यहाँ गुरु जी लोगों के सामान्य व्यवहार पर टिप्पणी कर रहें हैं जो वैसे तो तीर्थ स्थानों पर जाकर पवित्र होने के लिये स्नान करते हैं, परन्तु फिर भी उनके मन में झूठ, ईर्ष्या, तथा अन्य कई विकार भरे रहते हैं ।वह कई प्रकार के कर्म कांड तथा शास्त्रीय विधि विधान की पालना करते हैं, परन्तु कोई आपदा पड़ने पर अत्यंत दुखी होते हैं । गुरु जी इस प्रकार के जन मानस पर अपने विचार व्यक्त करते हुये हमें बताते हैं कि कौन सा मार्ग अथवा कैसा आचरण जीवन को शांति प्रदान कर सकता है तथा भविष्य में भी हमें आन्नद के राह पर रख सकता है ।

वह कहते हैं " (तीर्थ स्थान पर जाकर) स्नान करने का क्या लाभ, जबकि हमारी काया पहले से ही झूठ (और अन्य कुविचारों) के कारण अपवित्र है । क्योंकि वह तीर्थ स्नान तभी (प्रभु के घर में) स्वीकार हो सकता है जब हम अपने जीवन को सत्य के मार्ग पर चलायें (और प्रभु के सच्चे नाम का ध्यान करें) । जब मन के अंदर सच होता है, तभी कोई सच्चा होता है और तभी उसे सच्चे (प्रभु) की प्राप्ति होती है । भाग्य में यदि (प्रभु के द्वारा) यह सब पूर्व लिखित नहीं है तब तक यह तथ्य समझने की किसी को सुधि ही नहीं होती और हम व्यर्थ में बोल बोल कर अपना जीवन गँवा देते हैं । (अत:) हम जहाँ कहीं भी जाकर बैठें, वहाँ शुभ एवं भली कथनी कहें तथा अपनी बुद्धि में (गुरु की शिक्षा के) शब्द लिख कर रखें । अन्यथा, तीर्थ स्नान करने का कोई लाभ नहीं जबकि शरीर मिथ्या (तथा अन्य विकारों) से अपवित्र है "।(१)

गुरु जी विनम्रता से ईश्वर को सम्बोधित कर कहते हैं "(हे' प्रभु, केवल जब) तुमने मुझे कहा तो मैंने तेरा नाम कहा और तुम्हारा अँमृत रूपी नाम मेरे मन को भला लगा। जब (प्रभु का नाम) मन को मधुर लगा तो दुखों के डेरे गिर गये (मेरे सभी दुख और कठिनाइयाँ लुप्त हो गयीं), हाँ, जब तुमने आदेश दिया उसके पश्चात ही मेरे मन में सुख शांति का बसेरा हुया । ओ' प्रभु (इन दुखों तथा कठिनाइयों पर विजय पाने के लिये) मैं तुम्हें केवल एक प्रार्थना ही भेंट करता हूँ (शेष सब कुछ तो) तुम्हारी ही कृपा से है जिसने स्वयं का भी सृजन किया है । हे' प्रभु, मैंने (तुम्हारा नाम) केवल तब कहा जब तुमने मुझसे कहलवाया "।(२)

अब गुरु जी इन कारणों पर प्रकाश डालते हैं कि हम इस संसार में क्यों आते हैं और हमारा आचरण यहाँ किस प्रकार का होना चाहिए, उनका कहना है "हमारे पूर्व कर्मों के अनुसार, स्वामी हमें इस (मानव जीवन के) खेल में पारी देते हैं। इस लिये हमें किसी को भला बुरा कह कर झगड़ा नहीं करना चाहिये, (क्योंकि, सभी जीवों की रचना प्रभु ने की है अत: किसी से झगड़ा करना प्रभु से झगड़ने के समान निंदनीय है, हमें पता होना चाहिये कि) प्रभु के साथ झगड़ा करने में स्वयं हमारा ही विनाश है । जिसकी संगति में हमें रहना है अथवा जिसके पास हमें जाकर (दुख दर्द दूर करने के लिये) रोना पड़े, उसके साथ झगड़ा अथवा शत्रुता करने का कोई लाभ नहीं । अपितु, जो भी सुख व दुख (प्रभु की ओर से) हमारे पर आयें उन्हें प्रसन्नता से स्वीकार कर मन में कहो और सहो, किसी से कुछ कहना अथवा शिकायत करना बेकार है (हमें अपना समय तथा प्रभु से मिली कृपा को गँवाना नहीं चाहिये) । (हमें ध्यान रहे कि) पूर्व कर्मों के अनुसार ही स्वामी हमें इस (जीवन के) खेल में पारी देते हैं "।(३)

गुरु जी इस शब्द का अंत हमें संसार की वास्तविकता तथा व्यवहार का विवरण देते हुये करते हैं । वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), प्रभु ने स्वयं सबका सृजन किया है और (वह जब भी चाहे, जिस पर भी चाहे) अपनी कृपा दृष्टि करता है । (परन्तु, आश्चर्य है कि) कोई भी कड़वा (अथवा दुख, दर्द) नहीं माँगता और सभी मधुर एवं आनंददायक जीवन चाहते हैं । हाँ, सभी कोई सुख शांति के लिये प्रार्थना करता है, परन्तु स्वामी को जो भाता है वही वह करता है । (कई लोग अपने जीवन में शांति एवं समृद्धि के लिये) दान पुण्य आदि अनेक ऐसे काम करते हैं, (परन्तु) प्रभु के नाम के तुल्य कुछ भी नहीं है । ओ' नानक, जिन्हें भी प्रभु नाम का उपहार मिला हुआ है वह उनके पूर्व कर्मों पर आधारित प्रभु का आशीर्वाद है ।(किन्तु, हमें आशा रखनी चाहिये) क्योंकि, प्रभु ने सबकी रचना की है और वही सब पर (जब भी वह चाहे) कृपा दृष्टि करता है "।(४-१)

इस शब्द का संदेश है कि हमें दूसरों को भला बुरा नहीं कहना चाहिए और अपनी स्थितियों पर असंतोष नहीं दिखलाना चाहिये । हमें प्रभु के प्रति उसकी कृपा के लिये आभारी होना चाहिये, तथा सत्य के मार्ग पर जीवनयापन करना चाहिये । प्रभु की इच्छा समझ कर अपने सुख और दुख सम भाव से स्वीकार करने चाहिये । प्रभु से उसकी कृपा पाने के लिये विनती तथा उसका ध्यान निरंतर करें, एक दिन वह अवश्य ही हमारी प्रार्थना सुनेंगे ।

ਪੰਨਾ ੫੬੭

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੩ ਛੰਤ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਆਪਣੇ ਪਿਰ ਕੈ ਰੰਗਿ ਰਤੀ ਮੁਈਏ ਸੋਭਾਵੰਤੀ ਨਾਰੇ ॥
ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਮਿਲਿ ਰਹੀ ਮੁਈਏ ਪਿਰੁ ਰਾਵੇ ਭਾਇ ਪਿਆਰੇ ॥
ਸਚੈ ਭਾਇ ਪਿਆਰੀ ਕੰਤਿ ਸਵਾਰੀ ਹਰਿ ਹਰਿ ਸਿਉ ਨੇਹੁ ਰਚਾਇਆ ॥
ਆਪੁ ਗਵਾਇਆ ਤਾ ਪਿਰੁ ਪਾਇਆ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਸਮਾਇਆ ॥
ਸਾ ਧਨ ਸਬਦਿ ਸੁਹਾਈ ਪ੍ਰੇਮ ਕਸਾਈ ਅੰਤਰਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਪਿਆਰੀ ॥
ਨਾਨਕ ਸਾ ਧਨ ਮੇਲਿ ਲਈ ਪਿਰਿ ਆਪੇ ਸਾਚੈ ਸਾਹਿ ਸਵਾਰੀ ॥੧॥

ਨਿਰਗੁਣਵੰਤੜੀਏ ਪਿਰੁ ਦੇਖਿ ਹਦੂਰੇ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਿਨੀ ਰਾਵਿਆ ਮੁਈਏ ਪਿਰੁ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰੇ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੫੬੮

ਪਿਰੁ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰੇ ਵੇਖੁ ਹਜੂਰੇ ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਏਕੋ ਜਾਤਾ ॥
ਧਨ ਬਾਲੀ ਭੋਲੀ ਪਿਰੁ ਸਹਜਿ ਰਾਵੈ ਮਿਲਿਆ ਕਰਮ ਬਿਧਾਤਾ ॥

ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਰਸੁ ਚਾਖਿਆ ਸਬਦਿ ਸੁਭਾਖਿਆ ਹਰਿ ਸਰਿ ਰਹੀ ਭਰਪੂਰੇ ॥
ਨਾਨਕ ਕਾਮਣਿ ਸਾ ਪਿਰ ਭਾਵੈ ਸਬਦੇ ਰਹੈ ਹਦੂਰੇ ॥੨॥

ਸੋਹਾਗਣੀ ਜਾਇ ਪੂਛਹੁ ਮੁਈਏ ਜਿਨੀ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਵਾਇਆ ॥
ਪਿਰ ਕਾ ਹੁਕਮੁ ਨ ਪਾਇਓ ਮੁਈਏ ਜਿਨੀ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਨ ਗਵਾਇਆ ॥

ਜਿਨੀ ਆਪੁ ਗਵਾਇਆ ਤਿਨੀ ਪਿਰੁ ਪਾਇਆ ਰੰਗ ਸਿਉ ਰਲੀਆ ਮਾਣੈ ॥
ਸਦਾ ਰੰਗਿ ਰਾਤੀ ਸਹਜੇ ਮਾਤੀ ਅਨਦਿਨੁ ਨਾਮੁ ਵਖਾਣੈ ॥

ਕਾਮਣਿ ਵਡਭਾਗੀ ਅੰਤਰਿ ਲਿਵ ਲਾਗੀ ਹਰਿ ਕਾ ਪ੍ਰੇਮੁ ਸੁਭਾਇਆ ॥
ਨਾਨਕ ਕਾਮਣਿ ਸਹਜੇ ਰਾਤੀ ਜਿਨਿ ਸਚੁ ਸੀਗਾਰੁ ਬਣਾਇਆ ॥੩॥

ਹਉਮੈ ਮਾਰਿ ਮੁਈਏ ਤੂ ਚਲੁ ਗੁਰ ਕੈ ਭਾਏ ॥
ਹਰਿ ਵਰੁ ਰਾਵਹਿ ਸਦਾ ਮੁਈਏ ਨਿਜ ਘਰਿ ਵਾਸਾ ਪਾਏ ॥

ਨਿਜ ਘਰਿ ਵਾਸਾ ਪਾਏ ਸਬਦੁ ਵਜਾਏ ਸਦਾ ਸੁਹਾਗਣਿ ਨਾਰੀ ॥
ਪਿਰੁ ਰਲੀਆਲਾ ਜੋਬਨੁ ਬਾਲਾ ਅਨਦਿਨੁ ਕੰਤਿ ਸਵਾਰੀ ॥

ਹਰਿ ਵਰੁ ਸੋਹਾਗੋ ਮਸਤਕਿ ਭਾਗੋ ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਸੁਹਾਏ ॥
ਨਾਨਕ ਕਾਮਣਿ ਹਰਿ ਰੰਗਿ ਰਾਤੀ ਜਾ ਚਲੈ ਸਤਿਗੁਰ ਭਾਏ ॥੪॥੧॥

पृ-५६७

वडहँस महला ३ छँत

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

आपणे पिर कै रँगि रती मुईए सोभावंती नारे ॥
सचै सबदि मिलि रही मुईए पिरु रावे भाइ पिआरे ॥
सचै भाइ पिआरी कँति सवारी हरि हरि सिउ नेहु रचाइआ ॥
आपु गवाइआ ता पिरु पाइआ गुर कै सबदि समाइआ ॥
सा धन सबदि सुहाई प्रेम कसाई अँतरि प्रीति पिआरी ॥
नानक सा धन मेलि लई पिरि आपे साचै साहि सवारी ॥१॥

निरगुणवँतड़ीए पिरु देखि हदूरे राम ॥
गुरमुखि जिनी राविआ मुईए पिरु रवि रहिआ भरपूरे राम ॥

पृ-५६८

पिरु रवि रहिआ भरपूरे वेखु हजूरे जुगि जुगि एको जाता ॥
धन बाली भोली पिरु सहजि रावै मिलिआ करम बिधाता ॥

जिनि हरि रसु चाखिआ सबदि सुभाखिआ हरि सरि रही भरपूरे ॥
नानक कामणि सा पिर भावै सबदे रहै हदूरे ॥२॥

सौहागणी जाइ पूछहु मुईए जिनी विचहु आपु गवाइआ ॥
पिर का हुकमु न पाइओ मुईए जिनी विचहु आपु न गवाइआ ॥

जनी आपु गवाइआ तिनी पिरु पाइआ रँग सिउ रलीआ माणै ॥
सदा रँगि राती सहजे माती अनदिनु नामु वखाणै ॥

कामणि वडभागी अँतरि लिव लागी हरि का प्रेमु सुभाइआ ॥
नानक कामणि सहजे राती जिनि सचु सीगारु बणाइआ ॥३॥

हउमै मारि मुईए तू चलु गुर कै भाए ॥
हरि वरु रावहि सदा मुईए निज घरि वासा पाए ॥

निज घरि वासा पाए सबदु वजाए सदा सुहागणि नारी ॥
पिरु रलीआला जोबनु बाला अनुदिनु कँति सवारी ॥

हरि वरु सौहागो मसतकि भागो सचै सबदि सुहाए ॥
नानक कामणि हरि रँगि राती जा चलै सतिगुर भाए ॥४॥१॥

वडहँस महला -३
१ओंकार सतगुर प्रसाद

इस शब्द में गुरु जी दो वधुयों का रूपक प्रस्तुत कर रहे हैं, जिसमें से एक अपने पति के प्रेम में पूर्णतया रमी उसके सानिध्य का आनन्द ले रही है, जबकि दूसरी जो पति से प्रेम तो करती है परन्तु संसार के अन्य प्रलोभनों से आकर्षित होने के कारण पति से आत्मिक तथा शारीरिक रूप से पृथक है। यह दोनों प्रकार की वधूएँ, वास्तव में दो श्रेणी के लोगों को चिह्नित करती हैं एक तो वह गुरु के भक्त जो प्रभु की इच्छा को स्वीकार कर स्वयं का समर्पण कर देते हैं और दूसरे, जो पूर्ण रूप से अँहकारी तो नहीं होते पर फिर भी सांसारिक मोहमाया अथवा सत्ता के लोभ में भटकते रहते हैं, इसलिये प्रभु के साथ उनका लगाव अधिक नहीं रहता। गुरु जी इन दोनों प्रकार के लोगों को स्नेहपूर्वक ढंग से प्रिय मित्र कहते हुये सम्बोधित करते हैं।

सर्वप्रथम, वह प्रभु के साथ संलग्न वधू से कहते हैं “ओ मेरी प्रिय वधू, अपने पति (ईश्वर) के प्रेम में रमी तुम एक शोभावंती नारी हो ; (गुरु के) सच्चे शब्द के द्वारा तुम अपने प्रिय से मिल कर उसके प्रेम का आनन्द ले रही हो । वह वधू (आत्मा) जिसने अनंत प्रभु में स्वयं को लीन कर लिया है और उसी के प्रेम में दृढ़ है, उसके पति (प्रभु) ने वधू के जीवन को सजाया सँवारा है ।जब वधू ने अपना अहम गँवा दिया, तब उसने अपने पति (प्रभु) को अपने अंदर ही पा लिया और गुरु के वचनों द्वारा उसका मन प्रभु में समा गया । वधू रूपी आत्मा, प्रभु के प्रेम में सम्मोहित गुरु के वचनों शब्दों से सज्जित, अपने अंदर से प्रभु प्रेम में स्थिर है । ओ’ नानक, प्रिय पति (प्रभु) ने स्वयं ही इस वधू को अपने साथ मिला लिया है तथा, उसी सच्चे साहिब ने उसे सजाया सँवारा है ”।(१)

अब गुरु जी दूसरी वधू (आत्मा) जो कि अपने अहम तथा अन्य त्रुटियों के कारण भटक रही है उसे भी उसी स्नेह एवं प्रेम से सम्बोधित करते हुये कहते हैं “ ओ’ मेरी गुणहीन वधू (आत्मा), देख, तेरा पति तेरे सम्मुख है । हे’ प्रिय, (आत्मा रूपी वधूएँ) जिन्होंने गुरु के द्वारा प्रभु के सानिध्य का आनंद पाया है (उन्होंने देखा है कि) पति सर्वव्यापी हैं । प्रिय प्रभु को अपने सम्मुख सर्वव्यापी देख कर भोली वधू समझ जाती है कि वह एक ही प्रभु युगों युगों से समाया हुआ है, तब वह सहज भाव से अपने प्रियतम के साथ रम जाती है, क्योंकि उसने अपने कर्म विधाता को पा लिया है । (ऐसी भोली निष्कपट वधू जिसने) पति (हरि) के प्रेम का मधुर रस चखा है एवं अति सुंदर (गुरु के) शब्दों का उच्चारण किया है वह सदा पूर्ण रूप से हरि के प्रेम रस के सरोवर में डूबी रहती है । ओ’ नानक, (आत्मा रूपी) वही वधू प्रभु को भाती है जो(गुरु के) शब्दों द्वारा सदा उसके सम्मुख रहे, (दूसरे शब्दों में, गुरु के शब्द के अनुसार सदा प्रभु के सानिध्य में स्वयं को प्रतीत करे)”।(२)

प्रभु से बिछुड़ी हुयी आत्मा रूपी वधू के साथ गुरु जी अब अपना संवाद पुनः आगे बढ़ाते हैं और उसे अहम त्यागने के महत्व पर समझाने का प्रयत्न करते हुये कहते हैं “ हे’ मेरी प्रिय वधू (आत्मा), जाओ और उन सोहागिन वधूओं (जो प्रभु में रत हैं) से पूछो, जिन्होंने अपने अंदर से अहम को गँवा दिया है (और प्रभु की इच्छा के अंदर रहती हैं) । परन्तु जिन्होंने अपने मन में से अहम को नहीं गँवाया है वह अपने प्रियतम (प्रभु) का आदेश नहीं समझ सकीं । जिन्होंने भी अपने मन में से अहम अथवा अहंकार को त्याग दिया उन्होंने अपने प्रियतम (प्रभु) को पा लिया है और वह (अपने प्रिय प्रभु के सानिध्य का) आनन्द मना रही हैं । (ऐसी आत्मा रूपी वधू) सदा ही अपने प्रियतम (प्रभु) के प्रेम के नशे में मदमाती, सहज भाव से दिन रात प्रभु नाम का बखान करती है । ऐसी वधू (आत्मा) अत्यंत भाग्यशाली है जिसके मन में प्रभु की लग्न लगी है और जिसे प्रभु का प्रेम सुहावना प्रतीत होता है ।(संक्षेप में) ओ’ नानक, वह आत्मा रूपी वधू सदा ही सहज भाव में लीन रहती है जिसने अनंत प्रभु के सच्चे शब्द से स्वयं का श्रृंगार किया है ”।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में एक बार फिर सामान्य मनुष्य की आत्मा रूपी वधू को अपना अहम शांत करने का परामर्श देते हुये कहते हैं “ हे’ मेरी प्रिय (आत्मा रूपी) वधू अपने अंहकार को नष्ट करो और गुरु की भावना के अनुसार चलो । जो आत्मा रूपी वधू (गुरु के अनुसार) हरि रूपी वर के साथ रम जाती है वह अपने (हरि के) घर में (एक अति आनंदित सोहागिन की भाँति) निवास प्राप्त करती है । अपने वर (हरि) के घर में निवास पाकर वह सोहागिन (हरि से संलग्न आत्मा) सदा अपने सुहाग (पति रूपी हरि) के ही गुणों का नाद करती है ।उसका प्रियतम (प्रभु)निराला मनमौजी है, बलशाली है, तथा उस नवयौवना बाला (आत्मा) को दिन रात वह कंत सँवारता सजाता रहता है । उस आत्मा रूपी वधू के मस्तक पर सौभाग्य लिखा हुआ है जिसे (गुरु के) सच्चे और सुहाने शब्द के द्वारा हरि जैसे वर का सदैवी सानिध्य प्राप्त है । हे’ नानक, यदि यह (आत्मा रूपी) वधू सच्चे गुरु की भावना के अनुसार अपना आचरण रखे, तो वह हरि के रंग में रची रहेगी ”। (४-१)

इस सुंदर शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अनंत रूप से मोहक एवं रूपवान प्रभु के प्रेम तथा आशीर्वाद का आनन्द प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें गुरु के परामर्श पर प्रभु के प्रेम में ठीक उसी प्रकार लीन रहना होगा जैसे कि एक नवयौवना, भोली और मनमोहिनी वधू अपने पति के प्रेम में डूबी रहती है ।

ਪੰਨਾ ੫੬੯

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਰਤਨ ਪਦਾਰਥ ਵਣਜੀਅਹਿ ਸਤਿਗੁਰਿ ਦੀਆ ਬੁਝਾਈ ਰਾਮ ॥
ਲਾਹਾ ਲਾਭੁ ਹਰਿ ਭਗਤਿ ਹੈ ਗੁਣ ਮਹਿ ਗੁਣੀ ਸਮਾਈ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੫੭੦

ਗੁਣ ਮਹਿ ਗੁਣੀ ਸਮਾਏ ਜਿਸੁ ਆਪਿ ਬੁਝਾਏ ਲਾਹਾ ਭਗਤਿ ਸੈਸਾਰੇ ॥
ਬਿਨੁ ਭਗਤੀ ਸੁਖੁ ਨ ਹੋਈ ਦੂਜੈ ਪਤਿ ਖੋਈ ਗੁਰਮਤਿ ਨਾਮੁ ਅਧਾਰੇ ॥
ਵਖਰੁ ਨਾਮੁ ਸਦਾ ਲਾਭੁ ਹੈ ਜਿਸ ਨੋ ਏਤੁ ਵਾਪਾਰਿ ਲਾਏ ॥
ਰਤਨ ਪਦਾਰਥ ਵਣਜੀਅਹਿ ਜਾਂ ਸਤਿਗੁਰੁ ਦੇਇ ਬੁਝਾਏ ॥੧॥

ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਸਭੁ ਦੁਖੁ ਹੈ ਖੋਟਾ ਇਹੁ ਵਾਪਾਰਾ ਰਾਮ ॥
ਕੂੜੁ ਬੋਲਿ ਬਿਖੁ ਖਾਵਣੀ ਬਹੁ ਵਧਹਿ ਵਿਕਾਰਾ ਰਾਮ ॥
ਬਹੁ ਵਧਹਿ ਵਿਕਾਰਾ ਸਹਸਾ ਇਹੁ ਸੰਸਾਰਾ ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਪਤਿ ਖੋਈ ॥
ਪੜਿ ਪੜਿ ਪੰਡਿਤ ਵਾਦੁ ਵਖਾਣਹਿ ਬਿਨੁ ਬੂਝੇ ਸੁਖੁ ਨ ਹੋਈ ॥
ਆਵਣ ਜਾਣਾ ਕਦੇ ਨ ਚੂਕੈ ਮਾਇਆ ਮੋਹ ਪਿਆਰਾ ॥
ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਸਭੁ ਦੁਖੁ ਹੈ ਖੋਟਾ ਇਹੁ ਵਾਪਾਰਾ ॥੨॥

ਖੋਟੇ ਖਰੇ ਸਭਿ ਪਰਖੀਅਨਿ ਤਿਤੁ ਸਚੇ ਕੈ ਦਰਬਾਰਾ ਰਾਮ ॥
ਖੋਟੇ ਦਰਗਹ ਸੁਟੀਅਨਿ ਊਭੇ ਕਰਨਿ ਪੁਕਾਰਾ ਰਾਮ ॥
ਊਭੇ ਕਰਨਿ ਪੁਕਾਰਾ ਮੁਗਧ ਗਵਾਰਾ ਮਨਮੁਖਿ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ ॥
ਬਿਖਿਆ ਮਾਇਆ ਜਿਨਿ ਜਗਤੁ ਭੁਲਾਇਆ ਸਾਚਾ ਨਾਮੁ ਨ ਭਾਇਆ ॥
ਮਨਮੁਖ ਸੰਤਾ ਨਾਲਿ ਵੈਰੁ ਕਰਿ ਦੁਖੁ ਖਟੇ ਸੰਸਾਰਾ ॥
ਖੋਟੇ ਖਰੇ ਪਰਖੀਅਨਿ ਤਿਤੁ ਸਚੈ ਦਰਵਾਰਾ ਰਾਮ ॥੩॥

ਆਪਿ ਕਰੇ ਕਿਸੁ ਆਖੀਐ ਹੋਰੁ ਕਰਣਾ ਕਿਛੂ ਨ ਜਾਈ ਰਾਮ ॥
ਜਿਤੁ ਭਾਵੈ ਤਿਤੁ ਲਾਇਸੀ ਜਿਉ ਤਿਸ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਰਾਮ ॥
ਜਿਉ ਤਿਸ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਆਪਿ ਕਰਾਈ ਵਰੀਆਮੁ ਨ ਫੁਸੀ ਕੋਈ ॥
ਜਗਜੀਵਨੁ ਦਾਤਾ ਕਰਮਿ ਬਿਧਾਤਾ ਆਪੇ ਬਖਸੇ ਸੋਈ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਆਪੁ ਗਵਾਈਐ ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਪਤਿ ਪਾਈ ॥
ਆਪਿ ਕਰੇ ਕਿਸੁ ਆਖੀਐ ਹੋਰੁ ਕਰਣਾ ਕਿਛੂ ਨ ਜਾਈ ॥੪॥੪॥

पृ-५६९

वडहँस महला ३ ॥

रतन पदारथ वणजीअहि सतिगुरि दीआ बुझाई राम ॥
लाहा लाभु हरि भगति है गुण महि गुणी समाई राम ॥

पृ-५७०

गुण महि गुणी समाए जिसु आपि बुझाए लाहा भगति सैसारे ॥
बिनु भगती सुखु न होई दूजै पति खोई गुरमति नामु अधारे ॥
वखरु नामु सदा लाभु है जिस नो एतु वापारि लाए ॥
रतन पदारथ वणजीअहि जां सतिगुरु देइ बुझाए ॥१॥

माइआ मोहु सभु दुखु है खोटा इहु वापारा राम ॥
कूड़ु बोलि बिखु खावणी बहु वधहि विकारा राम ॥
बहु वधहि विकारा सहसा इहु सँसारा बिनु नावै पति खोई ॥
पड़ि पड़ि पँडित वादु वखाणहि बिनु बूझे सुखु न होई ॥
आवण जाणा कदे न चूकै माइआ मोह पिआरा ॥
माइआ मोहु सभु दुखु है खोटा इहु वापारा ॥२॥

खोटे खरे सभि परखीअनि तितु सचे कै दरबारा राम ॥
खोटे दरगह सुटीअनि ऊभे करनि पुकारा राम ॥
ऊभे करनि पुकारा मुगध गवारा मनमुखि जनमु गवाइआ ॥
बिखिआ माइआ जिनि जगतु भुलाइआ साचा नामु न भाइआ ॥
मनमुख सँता नालि वैरु करि दुखु खटे सँसारा ॥
खोटे खरे परखीअनि तितु सचै दरवारा राम ॥३॥

आपि करे किसु आखीऐ होरु करणा किछू न जाई राम ॥
जितु भावै तितु लाइसी जिउ तिस दी वडिआई राम ॥
जिउ तिस दी वडिआई आपि कराई वरीआमु न फुसी कोई ॥
जगजीवनु दाता करमि बिधाता आपे बखसे सोई ॥
गुर परसादी आपु गवाईऐ नानक नामि पति पाई ॥
आपि करे किसु आखीऐ होरु करणा किछू न जाई ॥४॥४॥

वडहँस महला – ३

गुरु जी का यहाँ यह कथन है कि प्रभु नाम रूपी बहुमूल्य रत्नों के व्यापार में कितनी अपार प्रतिष्ठा एवं सहजता उपलब्ध है, तथा इस धँधे में व्यस्त रहने पर कितना आनंद प्राप्त होता है और आशीर्वाद मिलते हैं। साथ ही वह यह भी बताते हैं कि ऐसे व्यवसाय कितने बीहड़ अथवा दुखदायी हैं जिनमें लगे रह कर हम सांसारिक मायामोह के पीछे भागते रहते हैं और ईश्वर के घर में दंड के भागी बनते हैं, जबकि सदाचारी जन वहाँ आदर सम्मान पाते हैं।

सर्वप्रथम प्रभु नाम के व्यवसाय के लक्षणों को व्यक्त करते हुये गुरु जी कहते हैं : “ (हे’ मेरे मित्रो), मेरे सच्चे गुरु ने मुझे यह विचार दिया है कि (संसारिक वस्तुयों की अपेक्षा) हमें (प्रभु नाम रूपी) रत्नों जैसे पदार्थों का व्यापार करना चाहिये। इस व्यापार में हरि की भक्ति का लाभ है जिसके द्वारा एक गुणी व्यक्ति गुणों के स्रोत (प्रभु) में जाकर समा जाता है। हाँ, जिसे (प्रभु) स्वयं सुझाव देते हैं तब वह व्यक्ति इस संसार में प्रभु भक्ति का लाभ उठाकर अत्यंत गुणी हो जाता है और गुणों के स्रोत (ईश्वर) में लीन हो जाता है ”।

गुरु जी आगे कहते हैं “जिस किसी को भी (प्रभु) इस (हरि नाम के) धंधे में लगाते हैं, वह इसे अपने जीवन का आधार मान (पूर्ण विश्वास कर) लेता है, कि केवल प्रभु भक्ति से ही जीवन में सुख शांति है, जबकि दूसरी ओर सांसारिक दुविधा (मायामोह) से मान मर्यादा खो जाती है। जिसे भी प्रभु ने नाम रूपी रत्नों के व्यवसाय में लगाया है उसे सदा ही इस सामग्री के व्यापार से लाभ प्राप्त हुया है। परन्तु हम इस रत्न पदार्थ का व्यापार तभी कर पाते हैं जब केवल सच्चे गुरु (इस लाभ के विषय में) समझाते हैं ”।(१)

अब गुरु जी यह बताते हैं कि सांसारिक मायामोह एवं सामर्थ्य कितना दुखद और हानिपूर्वक है । वह कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो) सांसारिक मायामोह केवल दुख है और यह व्यापार खोटा अथवा हानिकारक है । इसमें झूठ बोलना विष खाने जैसा है, तथा अनेक विकार उत्पन्न होते हैं । हाँ, इस प्रकार संसार में बहुत अधिक विकार सहसा पनप जाते हैं, तथा प्रभु नाम के बिना मान मर्यादा खो जाती है "।

किस प्रकार से कुछ धूर्त लोग इस स्थिति का लाभ उठाते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं " पंडित लोग शास्त्र पढ़ पढ़ कर कई प्रकार के वाद अपवाद बखानते हैं परन्तु (प्रभु) नाम के महत्व को जाने बूझे बिना सुख शांति नहीं होती । (इस लिये, अंत में परिणाम यह होता है कि) जिसके मन में मायामोह से अधिक प्रेम है उसका इस संसार से आना और जाना कभी समाप्त नहीं होता । (अत:, हमें समझना चाहिये कि) मायामोह अति दुखदायी है और यह व्यापार खोटा अथवा झूठा है"।(२)

अब गुरु जी सदगुणी और दुष्ट लोगों के भाग्य की तुलना करते हुये कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), सभी खरे अथवा खोटे मनुष्य प्रभु के दरबार में परखे जाते हैं । खोटे अथवा दुष्ट लोग अस्वीकृत कर (खोटे सिक्कों की भाँति) दरबार से बाहर फेंक दिये जाते हैं, जहाँ से खड़े वह चीख़ पुकार करते हैं । हाँ, बाहर खड़े (प्रभु के दरबार से) यह मूर्ख गँवार दुखों के कारण चीख़ पुकार करते हुये अपने अहम में जीवन व्यर्थ में गँवाते हैं । इस विष रूपी मायामोह में सारा जगत ही भूल भटक गया है, तथा इसे (प्रभु का) सच्चा नाम नहीं सुहाता है । तद्उपरांत, ऐसे अंहकारी लोग सँतों से बैर की भावना रख कर संसार में और भी अधिक दुख कमाते हैं। (सांसारिक लोग समझ नहीं पाते हैं कि) सदाचारी अथवा दुष्ट सभी प्रभु के सच्चे दरबार में परखे जाते हैं (जहाँ वह अपने पूर्व कर्मों के अनुसार पुरस्कार या दंड के भागी बनते हैं)"।(३)

गुरु जी का कहना है कि हमें कभी भी स्वयं को गर्वित अथवा घमंडी नहीं मानना चाहिये कि हम अमुक से अधिक अच्छे हैं । वह हमें सावधान करना चाहते हैं कि प्रभु स्वयं ही भले अथवा बुरे जीवों का सृजन करते हैं, अत: हमें अपनी शिष्टता और सामर्थ्य पर अंहकार की भावना नहीं होनी चाहिये।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो, प्रभु) स्वयं ही भले और बुरे को बनाते हैं, उनके लिये कोई भी कुछ कह या कर नहीं सकता है ।उन्हें जैसा भायेगा अथवा जो उनकी इच्छा या महिमा में होगा, वह वैसा ही (जीव से) करवायेंगे । हाँ, उनकी महिमा तथा महानता है क्योंकि वह स्वयं ही सब करवाते हैं, उनके लिये कोई भी वीर अथवा भीरु नहीं है (वीर अथवा भीरु हम अपने लिये हैं)। उस (प्रभु) ने संसार को जीवन दान दिया है और सभी के कर्मों के विधाता हैं तथा स्वयं ही उन्हें क्षमा भी प्रदान करते हैं । नानक कहते हैं कि यदि गुरु की कृपा से (उसे मान कर) हम अपना अहम त्याग दें और प्रभु नाम में रम जायें, तो हम आदर सम्मान पाते हैं (उसके दरबार में) । (परन्तु, सदा स्मरण रखें कि प्रभु) स्वयं ही सब कुछ करते हैं, दूसरा और कोई नहीं जिसके पास हम कुछ फ़रियाद कर सकें, अथवा (जीवन के सत्य पर) और अधिक कुछ कह सकें"।(४-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि सांसारिक सामर्थ्य तथा मायामोह एक झूठा व्यवसाय एवं प्रवृत्ति है । इसलिये, गुरु की भावना के अनुसार हम सांसारिक आसक्तियों को त्याग कर प्रभु नाम में ध्यान लगायें तथा प्रसन्नता से प्रभु की इच्छा को स्वीकार करें । तभी हम लोक तथा परलोक में आदरसम्मान प्राप्त करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੫੭੧

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਏ ਮਨ ਮੇਰਿਆ ਆਵਾ ਗਉਣੁ ਸੰਸਾਰੁ ਹੈ ਅੰਤਿ ਸਚਿ ਨਿਬੇੜਾ ਰਾਮ ॥
ਆਪੇ ਸਚਾ ਬਖਸਿ ਲਏ ਫਿਰਿ ਹੋਇ ਨ ਫੇਰਾ ਰਾਮ ॥
ਫਿਰਿ ਹੋਇ ਨ ਫੇਰਾ ਅੰਤਿ ਸਚਿ ਨਿਬੇੜਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਮਿਲੈ ਵਡਿਆਈ ॥
ਸਾਚੈ ਰੰਗਿ ਰਾਤੇ ਸਹਜੇ ਮਾਤੇ ਸਹਜੇ ਰਹੇ ਸਮਾਈ ॥
ਸਚਾ ਮਨਿ ਭਾਇਆ ਸਚੁ ਵਸਾਇਆ ਸਬਦਿ ਰਤੇ ਅੰਤਿ ਨਿਬੇਰਾ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਰਤੇ ਸੇ ਸਚਿ ਸਮਾਣੇ ਬਹੁਰਿ ਨ ਭਵਜਲਿ ਫੇਰਾ ॥੧॥

ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਸਭੁ ਬਰਲੁ ਹੈ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਖੁਆਈ ਰਾਮ ॥
ਮਾਤਾ ਪਿਤਾ ਸਭੁ ਹੇਤੁ ਹੈ ਹੇਤੇ ਪਲਚਾਈ ਰਾਮ ॥
ਹੇਤੇ ਪਲਚਾਈ ਪੁਰਬਿ ਕਮਾਈ ਮੇਟਿ ਨ ਸਕੈ ਕੋਈ ॥
ਜਿਨਿ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਸਾਜੀ ਸੋ ਕਰਿ ਵੇਖੈ ਤਿਸੁ ਜੇਵਡੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥
ਮਨਮੁਖਿ ਅੰਧਾ ਤਪਿ ਤਪਿ ਖਪੈ ਬਿਨੁ ਸਬਦੈ ਸਾਂਤਿ ਨ ਆਈ ॥
ਨਾਨਕ ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਸਭੁ ਕੋਈ ਭੁਲਾ ਮਾਇਆ ਮੋਹਿ ਖੁਆਈ ॥੨॥

ਏਹੁ ਜਗੁ ਜਲਤਾ ਦੇਖਿ ਕੈ ਭਜਿ ਪਏ ਹਰਿ ਸਰਣਾਈ ਰਾਮ ॥
ਅਰਦਾਸਿ ਕਰੀ ਗੁਰ ਪੂਰੇ ਆਗੈ ਰਖਿ ਲੇਵਹੁ ਦੇਹੁ ਵਡਾਈ ਰਾਮ ॥
ਰਖਿ ਲੇਵਹੁ ਸਰਣਾਈ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਵਡਾਈ ਤੁਧੁ ਜੇਵਡੁ ਅਵਰੁ ਨ ਦਾਤਾ ॥
ਸੇਵਾ ਲਾਗੇ ਸੇ ਵਡਭਾਗੇ ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਏਕੋ ਜਾਤਾ ॥
ਜਤੁ ਸਤੁ ਸੰਜਮੁ ਕਰਮ ਕਮਾਵੈ ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਗਤਿ ਨਹੀ ਪਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਤਿਸ ਨੋ ਸਬਦੁ ਬੁਝਾਏ ਜੋ ਜਾਇ ਪਵੈ ਹਰਿ ਸਰਣਾਈ ॥੩॥

ਜੋ ਹਰਿ ਮਤਿ ਦੇਇ ਸਾ ਊਪਜੈ ਹੋਰ ਮਤਿ ਨ ਕਾਈ ਰਾਮ ॥
ਅੰਤਰਿ ਬਾਹਰਿ ਏਕੁ ਤੂ ਆਪੇ ਦੇਹਿ ਬੁਝਾਈ ਰਾਮ ॥
ਆਪੇ ਦੇਹਿ ਬੁਝਾਈ ਅਵਰ ਨ ਭਾਈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਰਿ ਰਸੁ ਚਾਖਿਆ ॥
ਦਰਿ ਸਾਚੈ ਸਦਾ ਹੈ ਸਾਚਾ ਸਾਚੈਸਬਦਿ ਸੁਭਾਖਿਆ ॥

ਪੰਨਾ ੫੭੨

ਘਰ ਮਹਿ ਨਿਜ ਘਰੁ ਪਾਇਆ ਸਤਿਗੁਰੁ ਦੇਇ ਵਡਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਜੋ ਨਾਮਿ ਰਤੇ ਸੇਈ ਮਹਲੁ ਪਾਇਨਿ ਮਤਿ ਪਰਵਾਣੁ ਸਚੁ ਸਾਈ
॥੪॥੬॥

पृ-५७१

वडहँसु महला ३॥

ए मन मेरिआ आवा गउणु संसारु है अँति सचि निबेड़ा राम ॥
आपे सचा बखसि लए फिरि होइ न फेरा राम ॥
फिरि होइ न फेरा अँति सचि निबेड़ा गुरमुखि मिलै वडिआई ॥
साचै रँगि राते सहजे माते सहजे रहे समाई ॥
सचा मनि भाइआ सचु वसाइआ सबदि रते अँति निबेरा ॥
नानक नामि रते से सचि समाणे बहुरि न भवजलि फेरा ॥१॥

माइआ मोहु सभु बरलु है दूजै भाइ खुआई राम ॥
माता पिता सभु हेतु है हेते पलचाई राम ॥
हेते पलचाई पुरबि कमाई मेटि न सकै कोई ॥
जिनि सिृसटि साजी सो करि वेखै तिसु जेवडु अवरु न कोई ॥
मनमुखि अँधा तपि तपि खपै बिनु सबदै सांति न आई ॥
नानक बिनु नावै सभु कोई भुला माइआ मोहि खुआई ॥२॥

एहु जगु जलता देखि कै भजि पए हरि सरणाई राम ॥
अरदासि करीं गुर पूरे आगै रखि लेवहु देहु वडाई राम ॥
रखि लेवहु सरणाई हरि नामु वडाई तुधु जेवडु अवरु न दाता ॥
सेवा लागे से वडभागे जुगि जुगि एको जाता ॥
जतु सतु सँजमु करम कमावै बिनु गुर गति नही पाई ॥
नानक तिस नो सबदु बुझाए जो जाइ पवै हरि सरणाई ॥३॥

जो हरि मति देइ सा ऊपजै होर मति न काई राम ॥
अँतरि बाहरि एकु तू आपे देहि बुझाई राम ॥
आपे देहि बुझाई अवर न भाई गुरमुखि हरि रसु चाखिआ ॥
दरि साचै सदा है साचा साचैसबदि सुभाखिआ ॥

पृ-५७२

घर महि निज घरु पाइआ सतिगुरु देइ वडाई ॥
नानक जो नामि रते सेई महलु पाइनि मति परवाणु सचु साई
॥४॥६॥

वडहँस महला – ३

इस शब्द में गुरु जी संसार की क्षणभंगुरता पर टिप्पणी करते हैं, जहाँ पर निरंतर जन्म मरण का चक्र अथवा आत्मा का पुनर्जन्म निश्चित है । यहाँ वह बताते हैं कि इस प्रक्रिया के क्या कारण है, तथा इस दुखद आवागमन के चक्र को समाप्त करने का क्या उपाय है ।

अपने मन को (और हमें भी) सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं " हे मेरे मन, (सांसारिक माया मोह मनुष्य को) इस संसार में आवागमन में डाले रखता है, अंत में सच्चे (प्रभु से नाता जोड़ने) के द्वारा ही इस चक्र से निपट सकते हैं । जिसे भी सच्चा (प्रभु) क्षमा कर दे, उसका इस संसार में फेरा समाप्त हो जाता है । हाँ, अंत में सच्चे (प्रभु) के द्वारा निपटाने पर फिर और फेरा नहीं लगता है, अथवा गुरु के भक्त को सम्मान प्राप्त होता है । ऐसे भक्त सच्चे (प्रभु के प्रेम) के रंग में रंगे सहज रूप में मदमाते रह कर (उसी प्रभु में) सहजे ही समाये होते हैं । उनके मन को सच्चा (प्रभु) भाता है, वह सच्चे (प्रभु) को मन में बसाते हैं और गुरु के सच्चे शब्द में रमे हुये अंत में मुक्त हो (निपट) जाते हैं । ओ' नानक जो भी (प्रभु के) नाम में लीन हैं वह सच्चे में ही समा जाते हैं और तब उनका इस भयानक भवजल में फेरा नहीं लगता "।(१)

गुरु जी आगे सांसारिक मायामोह पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (हे' मेरे मन) यह समस्त माया मोह एक प्रकार का पागलपन है, जो प्रभु की अपेक्षा, दूसरे प्रकार (सम्बंधी, धन सम्पदा) के प्रलोभनों में भटकाता है । माता पिता (तथा अन्य सम्बंधों) का मोह एक प्रकार से झूठा है और यह संसार इस झूठे मोह में उलझा हुया है । परन्तु यह सब (सम्बंधों के) मोह के बंधन पूर्व जन्मों के कर्मों के परिणाम हैं, जिन्हें कोई

भी नहीं मिटा सकता । वह जिसने इस सृष्टि का सृजन किया है, वही इसे सृजित करके देख रहा है, उससे बड़ा और कोई नहीं है (उसके निर्णय को कौन ललकार सकता है) । इसलिए, जो कोई भी अँहकार से अँधा होकर अपने अंदर की जलन से बारम्बार तपता और दुखी रहता है उसे गुरु के शब्द अथवा विचारों के बिना शांति नही प्राप्त हो सकती । संक्षेप में, ओ' नानक, प्रभु के नाम के ध्यान के बिना सब कोई माया मोह के जाल में भटक गया है" ।(२)

मोहमाया के झूठे बंधनों में बँधे सारे संसार को एक प्रकार से जलता हुया देख कर हमें क्या करना चाहिये, इस पर गुरु जी कहते हैं " (झूठे लोभ लालच अथवा मोहपाश में) इस संसार को जलते देख कर वह लोग जो हरि की शरण में शीघ्रता से भाग कर आ गये, उन्होंने पूर्ण गुरु को विनती (अरदास) करते हुए कहा "(ओ' गुरु), हमारी रक्षा करो तथा हमें प्रभु के नाम का वरदान दो । हाँ, हमें कृपया अपनी शरण में रखो अपने हरि नाम की महिमा प्रदान करो, क्योंकि तुम्हारे जैसा महान दाता और कोई नहीं है "। (इस प्रकार) जो (गुरु की) सेवा में लग गये (और उसके विचारों के अनुसार जीवन को ढाल लिया) वह महा सौभाग्यशाली रहे, उन्होंने जान लिया कि युगों युगों से एक ही ईश्वर है। परन्तु जो लोग बिना गुरु के मार्ग दर्शन के कर्म कांड के द्वारा ब्रह्मचर्य दान दक्षिणा अथवा संयम आदि की विधियाँ करते रहते हैं वह जीवन में आत्मिक रूप से गति अथवा मुक्ति नहीं पाते । किन्तु, ओ' नानक, जो भी कोई जाकर हरि की शरण लेता है वह गुरु के शब्द (प्रभु नाम की शिक्षा) को समझ बूझ लेता है "।(३)

शब्द के अँत में गुरु जी एक बार फिर मनुष्य की भली तथा दुष्ट प्रवृत्तियों सहित सँसार की सभी गतिविधियों पर प्रभु के नियंत्रण के महत्व को दृढ़ रूप से कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो) जैसी भी मति अथवा बुद्धि हरि किसी (मनुष्य) को देते हैं, वही उस में उपजती अथवा प्रकट होती है, क्योंकि उस (मनुष्य) में और किसी प्रकार की मति है ही नहीं । (हे' प्रभु) उसके मन के अंदर एवं बाहरी रूप में केवल तुम्हीं हो और तुम्हीं उसको समझा देते हो । हाँ, जब तुम्हीं उस मनुष्य को (सच्चाई) समझाते हो तब उसे किसी और की मति नहीं भाती है, अपितु, वह गुरु के द्वारा हरि के नाम का अँमृत रस चखता है ।सच्चे (प्रभु) के दरबार में ऐसा मनुष्य सदा ही सच्चा (सम्मान योग्य) माना जाता है और वह सच्चे शब्द के द्वारा प्रभु नाम की सुंदर भाषा का उच्चारण करता है ।सच्चे गुरु का वरदान पाने पर मनुष्य अपने मन के अंदर ही प्रभु का घर पा लेता है । संक्षेप में, ओ' नानक, केवल जो जन प्रभु के नाम में लीन हैं, वही उसके महल में प्रवेश पाते हैं तथा उनकी मति अथवा बुद्धि (जिसके कारण वह प्रभु नाम का ध्यान करने योग्य बनते है) सच्चे स्वामी को स्वीकृत होती है "।(४-६)

इस शब्द का संदेश यह है कि सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य का मोह एक प्रकार की उन्मत्तता है जो इस संसार में निरंतर हमारे आवागमन का कारण है । यह चक्र केवल प्रभु नाम का ध्यान करने से ही टूटता है और हम मुक्त होते हैं । परन्तु, प्रभु नाम को पाने के लिये हमें गुरु का मार्ग दर्शन लेना होगा, जिसके द्वारा हम प्रभु की कृपा से उसके नाम का वरदान पा सकते हैं, जो हमें उसके दरबार में प्रवेश देगा, जहाँ पर स्थाई परम आनंद है तथा आवागमन के फेरे नहीं हैं ।

ਪੰਨਾ ੫੭੩	पृ-५७३
ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੪ ॥	वडहँसु महला ४॥
ਹਰਿ ਸਤਿਗੁਰ ਹਰਿ ਸਤਿਗੁਰ ਮੇਲਿ ਹਰਿ ਸਤਿਗੁਰ ਚਰਣ ਹਮ ਭਾਇਆ ਰਾਮ ॥ ਤਿਮਰ ਅਗਿਆਨੁ ਗਵਾਇਆ ਗੁਰ ਗਿਆਨੁ ਅੰਜਨੁ ਗੁਰਿ ਪਾਇਆ ਰਾਮ ॥ ਗੁਰ ਗਿਆਨ ਅੰਜਨੁ ਸਤਿਗੁਰੂ ਪਾਇਆ ਅਗਿਆਨ ਅੰਧੇਰ ਬਿਨਾਸੇ ॥ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵਿ ਪਰਮ ਪਦੁ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਜਪਿਆ ਸਾਸ ਗਿਰਾਸੇ ॥ ਜਿਨ ਕੰਉ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭਿ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰੀ ਤੇ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵਾ ਲਾਇਆ ॥ ਹਰਿ ਸਤਿਗੁਰ ਹਰਿ ਸਤਿਗੁਰ ਮੇਲਿ ਹਰਿ ਸਤਿਗੁਰ ਚਰਣ ਹਮ ਭਾਇਆ ॥੧॥	हरि सतिगुर हरि सतिगुर मेलि हरि सतिगुर चरण हम भाइआ राम ॥ तिमर अगिआनु गवाइआ गुर गिआनु अँजनु गुरि पाइआ राम ॥ गुर गिआन अँजनु सतिगुरू पाइआ अगिआन अँधेर बिनासे ॥ सतिगुर सेवि परम पदु पाइआ हरि जपिआ सास गिरासे ॥ जिन कँउ हरि प्रभि किरपा धारी ते सतिगुर सेवा लाइआ ॥ हरि सतिगुर हरि सतिगुर मेलि हरि सतिगुर चरण हम भाइआ ॥१॥
ਮੇਰਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮੇਰਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪਿਆਰਾ ਮੈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਰਹਣੁ ਨ ਜਾਈ ਰਾਮ ॥ ਹਰਿ ਨਾਮੋ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦੇਵੈ ਮੇਰਾ ਅੰਤਿ ਸਖਾਈ ਰਾਮ ॥ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਮੇਰਾ ਅੰਤਿ ਸਖਾਈ ਗੁਰਿ ਸਤਿਗੁਰਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ॥ ਜਿਥੈ ਪੁਤੁ ਕਲਤ੍ਰੁ ਕੋਈ ਬੇਲੀ ਨਾਹੀ ਤਿਥੈ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਛਡਾਇਆ ॥ ਧਨੁ ਧਨੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰੰਜਨੁ ਜਿਤੁ ਮਿਲਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਈ ॥ ਮੇਰਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮੇਰਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪਿਆਰਾ ਮੈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਰਹਣੁ ਨ ਜਾਈ ॥੨॥	मेरा सतिगुरु मेरा सतिगुरु पिआरा मै गुर बिनु रहणु न जाई राम ॥ हरि नामो हरि नामु देवै मेरा अँति सखाई राम ॥ हरि हरि नामु मेरा अँति सखाई गुरि सतिगुरि नामु दृिड़ाइआ ॥ जिथै पुतु कलत्रु कोई बेली नाही तिथै हरि हरि नामि छडाइआ ॥ धनु धनु सतिगुरु पुरखु निरँजनु जितु मिलि हरि नामु धिआई ॥ मेरा सतिगुरु मेरा सतिगुरु पिआरा मै गुर बिनु रहणु न जाई ॥२॥
ਪੰਨਾ ੫੭੪	**पृ-५७४**
ਜਿਨੀ ਦਰਸਨੁ ਜਿਨੀ ਦਰਸਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਪੁਰਖ ਨ ਪਾਇਆ ਰਾਮ ॥ ਤਿਨ ਨਿਹਫਲੁ ਤਿਨ ਨਿਹਫਲੁ ਜਨਮੁ ਸਭੁ ਬ੍ਰਿਥਾ ਗਵਾਇਆ ਰਾਮ ॥ ਨਿਹਫਲੁ ਜਨਮੁ ਤਿਨ ਬ੍ਰਿਥਾ ਗਵਾਇਆ ਤੇ ਸਾਕਤ ਮੁਏ ਮਰਿ ਝੂਰੇ ॥ ਘਰਿ ਹੋਦੈ ਰਤਨਿ ਪਦਾਰਥਿ ਭੂਖੇ ਭਾਗਹੀਣ ਹਰਿ ਦੂਰੇ ॥ ਹਰਿ ਹਰਿ ਤਿਨ ਕਾ ਦਰਸੁ ਨ ਕਰੀਅਹੁ ਜਿਨੀ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਨ ਧਿਆਇਆ ॥ ਜਿਨੀ ਦਰਸਨੁ ਜਿਨੀ ਦਰਸਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਪੁਰਖ ਨ ਪਾਇਆ ॥੩॥	जिनी दरसनु जिनी दरसनु सतिगुर पुरख न पाइआ राम ॥ तिन निहफलु तिन निहफलु जनमु सभु बृिथा गवाइआ राम ॥ निहफलु जनमु तिन बृिथा गवाइआ ते साकत मुए मरि झूरे ॥ घरि होदै रतनि पदारथि भूखे भागहीण हरि दूरे ॥ हरि हरि तिन का दरसु न करीअहु जिनी हरि हरि नामु न धिआइआ ॥ जिनी दरसनु जिनी दरसनु सतिगुर पुरख न पाइआ ॥३॥
ਹਮ ਚਾਤ੍ਰਿਕ ਹਮ ਚਾਤ੍ਰਿਕ ਦੀਨ ਹਰਿ ਪਾਸਿ ਬੇਨੰਤੀ ਰਾਮ ॥ ਗੁਰ ਮਿਲਿ ਗੁਰ ਮੇਲਿ ਮੇਰਾ ਪਿਆਰਾ ਹਮ ਸਤਿਗੁਰ ਕਰਹ ਭਗਤੀ ਰਾਮ ॥ ਹਰਿ ਹਰਿ ਸਤਿਗੁਰ ਕਰਹ ਭਗਤੀ ਜਾਂ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰੇ ॥ ਮੈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ਬੇਲੀ ਗੁਰੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪ੍ਰਾਣ ਹਮ੍ਾਰੇ ॥ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਗੁਰਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜ੍ਹਾਇਆ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹਰਿ ਸਤੀ ॥ ਹਮ ਚਾਤ੍ਰਿਕ ਹਮ ਚਾਤ੍ਰਿਕ ਦੀਨ ਹਰਿ ਪਾਸਿ ਬੇਨੰਤੀ ॥੪॥੩॥	हम चात्रिक हम चात्रिक दीन हरि पासि बेनँती राम ॥ गुर मिलि गुर मेलि मेरा पिआरा हम सतिगुर करह भगती राम ॥ हरि हरि सतिगुर करह भगती जां हरि प्रभु किरपा धारे ॥ मै गुर बिनु अवरु न कोई बेली गुरु सतिगुरु प्राण हमा्रे ॥ कहु नानक गुरि नामु दृिड़ाइआ हरि हरि नामु हरि सती ॥ हम चात्रिक हम चात्रिक दीन हरि पासि बेनँती ॥४॥३॥

वडहँस महला - ४

इस शब्द में गुरु जी उन आशीर्वादों का वर्णन कर रहे हैं जो उन्हें सच्चे गुरु से मिलने के पश्चात प्राप्त हुये। वह उन लोगों पर भी टिप्पणी कर रहे हैं जिन्होंने सच्चे गुरु से मिलने का सुअवसर नहीं पाया और प्रभु नाम का आश्रय नहीं लिया।

ईश्वर को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं " (ओ' प्रभु), मुझे सच्चे गुरु से मिलाओ, ऐसे गुरु के चरणों में रहना मुझे बहुत भाता है। जिसने भी गुरु के ज्ञान रूपी अंजन को (आँखों में) डाला है उसके मन में से अज्ञान रूपी अँधेरा समाप्त हो गया है। (हाँ, जिनकी आँखों में) सच्चे गुरु ने ज्ञान रूपी अंजन डाला, उनके अज्ञान रूपी अंधेरे का विनाश हो गया। तब सच्चे गुरु की सेवा कर (अर्थात, उसके मार्ग दर्शन का अनुसरण कर) प्रभु नाम का जाप अथवा ध्यान करते रहने से परम पद (मोक्ष) पाया और हरि का नाम प्रत्येक साँस अथवा ग्रास के साथ जपा। जिन पर भी हरि ने कृपा करनी चाही उन्हें सच्चे गुरु की सेवा में लगा दिया।(इस लिये मैं एक बार फिर कहता हूँ) ओ' प्रभु, मुझे सच्चे गुरु से मिलाओ, क्योंकि गुरु के चरणों में रहना (सेवा करना) मुझे बहुत भाता है"।(१)

सच्चे गुरु क्यों इतना भाते हैं, इसे स्पष्ट करते हुये गुरु जी कहते हैं “ मेरा सच्चा गुरु मुझे इतना प्रिय है कि मैं उसके बिना नहीं रह सकता, (क्योंकि) वह मुझे हरि का नाम प्रदान करता है जो मेरा अंत तक (तथा उसके पश्चात भी) सखा एवं सहायक सिद्ध होगा ।मेरे हरि का नाम मेरे अँत तक मित्र की भाँति साथ रहेगा, जिसे कि मेरे सच्चे गुरु ने मेरे मन में दृढ़ किया (बसाया) ।जहाँ पर कोई पुत्र, कोई पत्नी, कोई साथी अथवा सहायक नहीं, वहाँ हरि का नाम ही हमें छुड़वाता (मुक्ति दिलवाता) है ।अत:, उस सच्चे पवित्र गुरु का बारम्बार धन्यवाद है जिससे मिलने पर मैंने हरि नाम का ध्यान किया । मेरा सच्चा गुरु मुझे इतना प्रिय है कि मैं उसके बिना नहीं रह सकता ”।(२)

आगे गुरु जी उन अभागे लोगों पर टिप्पणी करते हैं जो गुरु के मार्ग दर्शन को आवश्यक नहीं समझते । वह कहते हैं “ वह लोग जिन्होंने सच्चे गुरु के दर्शन नहीं पाये हैं उन्होंने अपना मानव जन्म व्यर्थ में ही गवाँ दिया । हाँ, उन (माया तथा सामर्थ्य के) पुजारियों ने अपना जन्म व्यर्थ में ही गँवा दिया, तथा दुख और पश्चाताप में ही मर गये ।वह इतने अभागे हैं कि घर में (हृदय में) ही सब रत्न पदार्थ (प्रभु का नाम) होते हुये भूखे (प्रभु के वरदान के अभाव में) रहते हैं और हरि से दूर भी । ईश्वर करे कि तुम ऐसे लोगों को न देखो, जिन्होंने हरि के नाम का ध्यान नहीं किया और जिन्होंने सच्चे गुरु के दर्शन (तथा उनकी शिक्षा) भी नहीं पाये ”।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में प्रभु से एक विनम्र प्रार्थना करते हैं कि वह उन्हें सच्चे गुरु के सम्पर्क में सदा बनायें रखने की कृपा करें । वह कहते हैं “ (हे’ मेरे मित्रो, प्रभु हमारे लिये एक मेघ के समान हैं और) हम एक दीन चात्रिक (पपीहे) की भाँति उस प्रभु से विनती करते हैं कि हे’ प्रभु, हमें हमारे प्रिय सच्चे गुरु से मिलाओ और उस सच्चे से मिलने के पश्चात हम प्रभु का ध्यान करें। (परन्तु) सच्चे गुरु से मिलने के बाद भी हम प्रभु का ध्यान तभी कर सकते हैं जब वह स्वयं हम पर अपनी कृपा करें । गुरु के बिना मेरा और कोई सखा अथवा मित्र नहीं है, वह सच्चा गुरु हमारे प्राणों के समान है । नानक कहते हैं कि “गुरु ने प्रभु का अनंत नाम मेरे अंदर दृढ़ कर के बसाया । (एक बार फिर कहता हूँ कि प्रभु एक मेघ के समान है, और) मैं एक दीन चात्रिक के भाँति (सच्चे गुरु के सम्पर्क में रहने के लिये) हरि के पास विनती करता हूँ ”।(४-३)

इस शब्द का संदेश है कि इसमें कोई भी संदेह नहीं कि हमें प्रभु से मिलन के लिये एक गुरु के दिशा निर्देश की आवश्यकता है, परन्तु गुरु के दिशा निर्देश के लिये भी हमें प्रभु से विनम्र प्रार्थना करनी होगी कि वह हमें सच्चे गुरु से मिलाने की कृपा करें । सच्चे गुरु हमारे मन में प्रभु के नाम को दृढ़ करेंगे (बसायेंगे) और तब हम उसके नाम के ध्यान तथा उसकी दया से उसी प्रभु में लीन होने का आशीर्वाद पाने के योग्य हो सकेंगे ।

ਪੰਨਾ ੫੭੫

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਦੇਹ ਤੇਜਨੜੀ ਹਰਿ ਨਵ ਰੰਗੀਆ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰ ਗਿਆਨੁ ਗੁਰੂ ਹਰਿ ਮੰਗੀਆ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੫੭੬

ਗਿਆਨ ਮੰਗੀ ਹਰਿ ਕਥਾ ਚੰਗੀ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਗਤਿ ਮਿਤਿ ਜਾਣੀਆ ॥
ਸਭੁ ਜਨਮੁ ਸਫਲਿਉ ਕੀਆ ਕਰਤੈ ਹਰਿ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਵਖਾਣੀਆ ॥
ਹਰਿ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਸਲਾਹਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਹਰਿ ਭਗਤਿ ਹਰਿ ਜਨ ਮੰਗੀਆ ॥
ਜਨੁ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਸੁਣਹੁ ਸੰਤਹੁ ਹਰਿ ਭਗਤਿ ਗੋਵਿੰਦ ਚੰਗੀਆ ॥੧॥

ਦੇਹ ਕੰਚਨ ਜੀਨੁ ਸੁਵਿਨਾ ਰਾਮ ॥
ਜੜਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਰਤੰਨਾ ਰਾਮ ॥
ਜੜਿ ਨਾਮ ਰਤਨੁ ਗੋਵਿੰਦ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਮਿਲੇ ਹਰਿ ਗੁਣ ਸੁਖ ਘਣੇ ॥
ਗੁਰ ਸਬਦੁ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਆ ਵਡਭਾਗੀ ਹਰਿ ਰੰਗ ਹਰਿ ਬਣੇ ॥
ਹਰਿ ਮਿਲੇ ਸੁਆਮੀ ਅੰਤਰਜਾਮੀ ਹਰਿ ਨਵਤਨ ਹਰਿ ਨਵ ਰੰਗੀਆ ॥
ਨਾਨਕੁ ਵਖਾਣੈ ਨਾਮੁ ਜਾਣੈ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਮੰਗੀਆ ॥੨॥

ਕੜੀਆਲੁ ਮੁਖੇ ਗੁਰਿ ਅੰਕਸੁ ਪਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਮਨੁ ਮੈਗਲੁ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਵਸਿ ਆਇਆ ਰਾਮ ॥
ਮਨੁ ਵਸਗਤਿ ਆਇਆ ਪਰਮ ਪਦੁ ਪਾਇਆ ਸਾ ਧਨ ਕੰਤਿ ਪਿਆਰੀ ॥
ਅੰਤਰਿ ਪ੍ਰੇਮੁ ਲਗਾ ਹਰਿ ਸੇਤੀ ਘਰਿ ਸੋਹੈ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਨਾਰੀ ॥
ਹਰਿ ਰੰਗਿ ਰਾਤੀ ਸਹਜੇ ਮਾਤੀ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਹਰਿ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ॥
ਨਾਨਕ ਜਨੁ ਹਰਿ ਦਾਸੁ ਕਹਤੁ ਹੈ ਵਡਭਾਗੀ ਹਰਿ ਹਰਿ ਧਿਆਇਆ ॥੩॥

ਦੇਹ ਘੋੜੀ ਜੀ ਜਿਤੁ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਮਿਲਿ ਸਤਿਗੁਰ ਜੀ ਮੰਗਲੁ ਗਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਗਾਇ ਮੰਗਲੁ ਰਾਮ ਨਾਮਾ ਹਰਿ ਸੇਵ ਸੇਵਕ ਸੇਵਕੀ ॥
ਪ੍ਰਭ ਜਾਇ ਪਾਵੈ ਰੰਗ ਮਹਲੀ ਹਰਿ ਰੰਗੁ ਮਾਣੈ ਰੰਗ ਕੀ ॥
ਗੁਣ ਰਾਮ ਗਾਏ ਮਨਿ ਸੁਭਾਏ ਹਰਿ ਗੁਰਮਤੀ ਮਨਿ ਧਿਆਇਆ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰੀ ਦੇਹ ਘੋੜੀ ਚੜਿ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ॥
੪॥੨॥੬॥

पृ-५७५

वडहँसु महला ४॥

देह तेजनड़ी हरि नव रँगीआ राम ॥
गुर गिआनु गुरू हरि मँगीआ राम ॥

पृ-५७६

गिआन मँगी हरि कथा चँगी हरि नामु गति मिति जाणीआ ॥
सभु जनमु सफलिउ कीआ करतै हरि राम नामि वखाणीआ ॥
हरि राम नामु सलाहि हरि प्रभ हरि भगति हरि जन मँगीआ ॥
जनु कहै नानकु सुणहु सँतहु हरि भगति गोविँद चँगीआ ॥१॥

देह कँचन जीनु सुविना राम ॥
जड़ि हरि हरि नामु रतँना राम ॥
जड़ि नाम रतनु गोविँद पाइआ हरि मिले हरि गुण सुख घणे ॥
गुर सबदु पाइआ हरि नामु धिआइआ वडभागी हरि रँग हरि बणे ॥
हरि मिले सुआमी अँतरजामी हरि नवतन हरि नव रँगीआ ॥
नानकु वखाणै नामु जाणै हरि नामु हरि प्रभ मँगीआ ॥२॥

कड़ीआलु मुखे गुरि अँकसु पाइआ राम ॥
मनु मैगलु गुर सबदि वसि आइआ राम ॥
मनु वसगति आइआ परम पदु पाइआ सा धन कँति पिआरी ॥
अँतरि प्रेमु लगा हरि सेती घरि सोहै हरि प्रभ नारी ॥
हरि रँगि राती सहजे माती हरि प्रभु हरि हरि पाइआ ॥
नानक जनु हरि दासु कहतु है वडभागी हरि हरि धिआइआ ॥३॥

देह घोड़ी जी जितु हरि पाइआ राम ॥
मिलि सतिगुर जी मँगलु गाइआ राम ॥
हरि गाइ मँगलु राम नामा हरि सेव सेवक सेवकी ॥
प्रभ जाइ पावै रँग महली हरि रँगु माणै रँग की ॥
गुण राम गाए मनि सुभाए हरि गुरमती मनि धिआइआ ॥
जन नानक हरि किरपा धारी देह घोड़ी चड़ि हरि पाइआ
॥४॥२॥६॥

वडहँस महला – ४

यह शब्द " घोड़ियाँ " नामक रचना का अंतिम शब्द है जो कि पंजाब के पुराने रीति रिवाज के अनुसार विवाह में दूल्हे के घोड़ी पर चढ़ने के समय महिलायों द्वारा गाये जाने वाले मंगल गीतों पर आधारित हैं। इस शब्द से पहले वाले शब्द में गुरु जी ने हमें बताया है कि यह हमारा कर्तव्य है कि हम अपने घोड़ी रूपी शरीर (वास्तव में अपनी बुद्धि एवं विचारों की प्रक्रियायों) को गुरु के शब्दों की सहायता से उचित प्रकार के अभ्यास के साथ नियंत्रण में रखें, तथा इसका उपयोग प्रभु के नाम के ध्यान और उसमें लीन होने में करें। इस शब्द में गुरु जी अपने उपरोक्त परामर्श के अनुसरण का अनुभव साझा करते हैं।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), यह शरीर एक सुंदर घोड़ी के समान है, जो प्रभु के नये शुद्ध रंग में रंगी है, तथा यह गुरु से दैवी ज्ञान को माँगती है। हाँ, इसने दैवी ज्ञान तथा प्रभु की सुंदर एवं सहज कथा को माँगा है; इसने साथ ही यह भी जान लिया है कि हरि नाम का ध्यान ही (सांसारिक मोह से) मुक्ति पाने का मार्ग है। सृजनकर्ता प्रभु ने इसके सम्पूर्ण जीवन को सफल बना दिया है क्योंकि इसने राम के नाम को बखाना है। हाँ, (ओ' मेरे मित्रो) प्रभु के भक्त सदा राम नाम की सराहना करते हैं और प्रभु भक्ति की माँग करते रहते हैं। (संक्षेप में) भक्त नानक कहते हैं " हे' संतों सुनो, गोविंद अथवा हरि की भक्ति करना सदा ही सुखद है "।(१)

घोड़ी के रूपक में ही गुरु जी आगे कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), मानव शरीर जो प्रभु नाम का ध्यान करता है वह सुनहरी हरि नाम रूपी रत्नों से जड़ी काठी पहने सुंदर कँचन देही वाली एक घोड़ी के समान है । जिस मनुष्य के घोड़ी रूपी शरीर ने हरि नाम रूपी रत्नों से जड़ी काठी को धारण किया उसे गोविंद अथवा हरि मिल गये और वह हरि के गुणों को आत्मसात कर अनेक सुखों का भागी बना । हाँ, गुरु के शब्दों तथा विचारों को पाकर (अनुसरण कर) वह हरि नाम के ध्यान में लग कर सौभाग्यशाली बन गये और हरि के प्रेम के रंग में वैसे ही हो गये । उन्हें हरि एक स्वामी तथा अंतरयामी के रूप में मिले, जो कि सदैव ही शुद्ध तन अथवा नवीन रंगों में होते हैं । परन्तु नानक कहते हैं (जैसे कि एक वधू अपने पति से एक बार प्रेम पाने के बाद भी निरंतर उससे और अधिक से अधिक प्रेम की याचना करती रहती है, वैसे ही), जो मनुष्य हरि नाम को जान जाता है वह बारम्बार प्रभु से उसी के नाम की याचना करता है "।(२)

सुंदर छोटी घोड़ी, एक हाथी और नवयौवना वधू के रूपक को और अधिक विस्तृत करते हुये गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो) गुरु ने जिस घोड़ी रुपी मानव शरीर को लगाम लगा मुख में अंकुश डाल दिया है उसका विशाल हाथी जैसा मन गुरु के शब्द से वश में आ गया है। तब मानव की वधू रूपी आत्मा जिसका मन वश में आ गया है, उसे आत्मिक रूप से उच्च परम पद प्राप्त हो गया है और वह पति रुपी प्रभु की प्रिया (आत्मा) धन्य है । उसके मन के अंदर हरि के लिये अत्यंत प्रेम है और ऐसी नारी (आत्मा) हरि के साथ अपने घर के अंदर अति सुहानी दिखती है । हाँ, वधू रूपी आत्मा प्रभु के प्रेम के रंग में रची सहज रूप में मदमाती रह कर हरि को पा लेती है । इस लिये हरि के दास, नानक कहते हैं कि " वह सौभाग्यशाली हैं जो प्रभु नाम के ध्यान में रहते हैं "।(३)

गुरु जी शब्द का अंत यह कहते हुये करते हैं " (हे' मेरे मित्रों, यह मानव) शरीर उस सुंदर घोड़ी जैसा है (जिस पर सवार होकर उसकी आत्मा ने) हरि को पाया और गुरु से मिलने के पश्चात वह (हरि की स्तुति में) मंगलगीत गाता है । जो भी कोई हरि की प्रशंसा में मंगल गीत गाता है तथा एक सेवक की भावना से उसकी सेवा में नाम का ध्यान सच्ची श्रद्धा से करता है, तब प्रभु उसे अपने रंग महल में पहुँचा देते हैं जहाँ वह प्रभु की कृपा एवं संगति का आनंद लेता है । ऐसा मनुष्य प्रेम पूर्वक श्रद्धा के साथ हरि के गुण गाता है और गुरु की मति अथवा निर्देश के अनुसार रह कर मन में प्रभु का ध्यान तथा चिंतन करता है । ओ' नानक, वह भक्त जिस पर प्रभु कृपा करते हैं उसने अपने घोड़ी रूपी शरीर पर सवारी करके प्रभु को पा लिया है "।(४-२-६)

इस शब्द का संदेश इस प्रकार है कि हमारा मानव शरीर बहुत उपयोगी हो सकता है यदि हम उसे गुरु के निर्देशों के अनुशासन में एक घोड़ी की भाँति नियंत्रित कर प्रभु की स्तुति के गायन तथा उसके नाम के ध्यान में उपयोग करें ।इस प्रकार हमारा शरीर प्रभु से मिलन के लिए एक अच्छा उपकरण है ।

ਪੰਨਾ ੫੭੭

ਸਲੋਕੁ ॥

ਦੇਹ ਅੰਧਾਰੀ ਅੰਧ ਸੁੰਞੀ ਨਾਮ ਵਿਹੂਣੀਆ ॥
ਨਾਨਕ ਸਫਲ ਜਨੰਮੁ ਜੈ ਘਟਿ ਵੁਠਾ ਸਚੁ ਧਣੀ ॥੧॥

ਛੰਤੁ ॥

ਤਿਨ ਖੰਨੀਐ ਵੰਞਾਂ ਜਿਨ ਮੇਰਾ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਡੀਠਾ ਰਾਮ ॥
ਜਨ ਚਾਖਿ ਅਘਾਣੇ ਹਰਿ ਹਰਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਮੀਠਾ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਮਨਹਿ ਮੀਠਾ ਪ੍ਰਭੂ ਤੂਠਾ ਅਮਿਉ ਵੂਠਾ ਸੁਖ ਭਏ ॥
ਦੁਖ ਨਾਸ ਭਰਮ ਬਿਨਾਸ ਤਨ ਤੇ ਜਪਿ ਜਗਦੀਸ ਈਸਹ ਜੈ ਜਏ ॥
ਮੋਹ ਰਹਤ ਬਿਕਾਰਥਾਕੇ ਪੰਚ ਤੇ ਸੰਗੁ ਤੂਟਾ ॥

ਪੰਨਾ ੫੭੮

ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਤਿਨ ਖੰਨੀਐ ਵੰਞਾ ਜਿਨ ਘਟਿ ਮੇਰਾ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਵੂਠਾ ॥੩॥

पृ-५७७

सलोक ॥

देह अँधारी अँध सुँजी नाम विहूणीआ ॥
नानक सफल जनँमु जै घटि वुठा सचु धणी ॥

छँतु ॥

तिन खँनीऐ वँजां जिन मेरा हरि प्रभु डीठा राम ॥
जन चाखि अघाणे हरि हरि अँमृतु मीठा राम ॥
हरि मनहि मीठा प्रभू तूठा अमिउ वूठा सुख भए ॥
दुख नास भरम बिनास तन ते जपि जगदीस ईसह जै जए ॥
मोह रहत बिकारथाके पँच ते सँगु तूटा ॥

पृ-५७८

कहु नानक तिन खँनीऐ वँञां जिन घटि मेरा हरि प्रभु वूठा ॥३॥

राग वडहँस महला -५ छँत घर -४

सलोक

इस सलोक में गुरु जी यह बताते हैं कि यदि कोई प्रभु को पा लेता है तो उसे किस प्रकार के आशीर्वादों का आनंद प्राप्त होता है और जो प्रभु को नही देख पाता है उसे किस प्रकार की हानि की भावना प्रतीत होती है ।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), वह शरीर अंधा है तथा (अज्ञान के) अंधेरे में रहता है जो प्रभु नाम से सूना है । ओ' नानक, उनका जीवन सफल है जिन्होंने अपने मन के अंदर सच्चे स्वामी को देख लिया है "।(१)

छँत

गुरु जी कहते हैं " मैं उन पर बलिहारी हूँ जिन्होंने मेरे हरि प्रभु को देखा है ।ऐसे भक्त जन हरि नाम के मीठे अँमृत को पीकर तृप्त हो गये हैं और उन्हें यह प्रभु नाम रुपी अँमृत मधुर लगता है।उनके मन को हरि मीठे लगते हैं, प्रभु उन पर प्रसन्न होते हैं, अँमृत उनके मन में बस जाता है तथा जीवन में सुख छा जाता है। प्रभु के नाम का ध्यान तथा जगत के ईश्वर की जय जयकार करने वाले के शरीर के सब दुखों तथा मन के भ्रमों का विनाश हो जाता है। वह मोहपाश से रहित हैं, उनका साथ पाँच विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अंहकार) से थक टूट जाता है। नानक कहते हैं, " मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ जिन्होंने अपने हृदय में मेरे हरि को बसाया है "।(३)

इस शब्द का संदेश यह है कि मानव जीवन के लिए प्रभु का नाम इसलिए इतना अधिक आवश्यक है कि इसके बिना वह अज्ञान के पूर्ण अँधकार में रहता है और दैवी ज्ञान तथा बुद्धि विहीन होता है । पर जो भी कोई प्रभु को मन में बसा लेता है उसके दुख दर्द चले जाते हैं और वह परम आनंद पा लेता है ।

ਪੰਨਾ ੫੭੯

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਆਵਹੁ ਮਿਲਹੁ ਸਹੇਲੀਹੋ ਸਚੜਾ ਨਾਮੁ ਲਏਹਾਂ ॥
ਰੋਵਹ ਬਿਰਹਾ ਤਨ ਕਾ ਆਪਣਾ ਸਾਹਿਬੁ ਸੰਮ੍ਾਲੇਹਾਂ ॥
ਸਾਹਿਬੁ ਸਮ੍ਾਲਿਹ ਪੰਥੁ ਨਿਹਾਲਿਹ ਅਸਾ ਭਿ ਓਥੈ ਜਾਣਾ ॥
ਜਿਸ ਕਾ ਕੀਆ ਤਿਨ ਹੀ ਲੀਆ ਹੋਆ ਤਿਸੈ ਕਾ ਭਾਣਾ ॥
ਜੋ ਤਿਨਿ ਕਰਿ ਪਾਇਆ ਸੁ ਆਗੈ ਆਇਆ ਅਸੀ ਕਿ ਹੁਕਮੁ ਕਰੇਹਾ ॥
ਆਵਹੁ ਮਿਲਹੁ ਸਹੇਲੀਹੋ ਸਚੜਾ ਨਾਮੁ ਲਏਹਾ ॥੧॥

ਮਰਣੁ ਨ ਮੰਦਾ ਲੋਕਾ ਆਖੀਐ ਜੇ ਮਰਿ ਜਾਣੈ ਐਸਾ ਕੋਇ ॥
ਸੇਵਿਹੁ ਸਾਹਿਬੁ ਸੰਮ੍ਰਥੁ ਆਪਣਾ ਪੰਥੁ ਸੁਹੇਲਾ ਆਗੈ ਹੋਇ ॥
ਪੰਥਿ ਸੁਹੇਲੈ ਜਾਵਹੁ ਤਾਂ ਫਲੁ ਪਾਵਹੁ ਆਗੈ ਮਿਲੈ ਵਡਾਈ ॥
ਭੇਟੈ ਸਿਉ ਜਾਵਹੁ ਸਚਿ ਸਮਾਵਹੁ ਤਾਂ ਪਤਿ ਲੇਖੈ ਪਾਈ ॥
ਮਹਲੀ ਜਾਇ ਪਾਵਹੁ ਖਸਮੈ ਭਾਵਹੁ ਰੰਗ ਸਿਉ ਰਲੀਆ ਮਾਣੈ ॥
ਮਰਣੁ ਨ ਮੰਦਾ ਲੋਕਾ ਆਖੀਐ ਜੇ ਕੋਈ ਮਰਿ ਜਾਣੈ ॥੨॥

ਮਰਣੁ ਮੁਣਸਾ ਸੂਰਿਆ ਹਕੁ ਹੈ ਜੋ ਹੋਇ ਮਰਨਿ ਪਰਵਾਣੋ ॥

ਪੰਨਾ ੫੮੦

ਸੂਰੇ ਸੇਈ ਆਗੈ ਆਖੀਅਹਿ ਦਰਗਹ ਪਾਵਹਿ ਸਾਚੀ ਮਾਣੋ ॥
ਦਰਗਹ ਮਾਣੁ ਪਾਵਹਿ ਪਤਿ ਸਿਉ ਜਾਵਹਿ ਆਗੈ ਦੂਖੁ ਨ ਲਾਗੈ ॥
ਕਰਿ ਏਕੁ ਧਿਆਵਹਿ ਤਾਂ ਫਲੁ ਪਾਵਹਿ ਜਿਤੁ ਸੇਵਿਐ ਭਉ ਭਾਗੈ ॥
ਊਚਾ ਨਹੀ ਕਹਣਾ ਮਨ ਮਹਿ ਰਹਣਾ ਆਪੇ ਜਾਣੈ ਜਾਣੋ ॥
ਮਰਣੁ ਮੁਣਸਾਂ ਸੂਰਿਆ ਹਕੁ ਹੈ ਜੋ ਹੋਇ ਮਰਹਿ ਪਰਵਾਣੋ ॥੩॥

ਨਾਨਕ ਕਿਸ ਨੋ ਬਾਬਾ ਰੋਈਐ ਬਾਜੀ ਹੈ ਇਹੁ ਸੰਸਾਰੋ ॥
ਕੀਤਾ ਵੇਖੈ ਸਾਹਿਬੁ ਆਪਣਾ ਕੁਦਰਤਿ ਕਰੇ ਬੀਚਾਰੋ ॥
ਕੁਦਰਤਿ ਬੀਚਾਰੇ ਧਾਰਣ ਧਾਰੇ ਜਿਨਿ ਕੀਆ ਸੋ ਜਾਣੈ ॥
ਆਪੇ ਵੇਖੈ ਆਪੇ ਬੂਝੈ ਆਪੇ ਹੁਕਮੁ ਪਛਾਣੈ ॥
ਜਿਨਿ ਕਿਛੁ ਕੀਆ ਸੋਈ ਜਾਣੈ ਤਾ ਕਾ ਰੂਪੁ ਅਪਾਰੋ ॥
ਨਾਨਕ ਕਿਸ ਨੋ ਬਾਬਾ ਰੋਈਐ ਬਾਜੀ ਹੈ ਇਹੁ ਸੰਸਾਰੋ ॥੪॥੨॥

पृ-५७९

वडहँसु महला १॥

आवहु मिलहु सहेलीहो सचड़ा नामु लएहां ॥
रोवह बिरहा तन का आपणा साहिबु सँमालेहां ॥
साहिबु समालिह पँथु निहालिह असा भि ओथै जाणा ॥
जिस का कीआ तिन ही लीआ होआ तिसै का भाणा ॥
जो तिनि करि पाइआ सु आगै आइआ असी कि हुकमु करेहा ॥
आवहु मिलहु सहेलीहो सचड़ा नामु लएहा ॥१॥

मरणु न मँदा लोका आखीऐ जे मरि जाणै ऐसा कोइ ॥
सेविहु साहिबु सँमृथु आपणा पँथु सुहेला आगै होइ ॥
पँथि सुहेलै जावहु तां फलु पावहु आगै मिलै वडाई ॥
भेटै सिउ जावहु सचि समावहु तां पति लेखै पाई ॥
महली जाइ पावहु खसमै भावहु रंग सिउ रलीआ माणै ॥
मरणु न मँदा लोका आखीऐ जे कोई मरि जाणै ॥२॥

मरणु मुणसा सूरिआ हकु है जो होइ मरनि परवाणो ॥

पृ-५८०

सूरे सेई आगै आखीअहि दरगह पावहि साची माणो ॥
दरगह माणु पावहि पति सिउ जावहि आगै दूखु न लागै ॥
करि एकु धिआवहि तां फलु पावहि जितु सेविऐ भउ भागै ॥
ऊचा नही कहणा मन महि रहणा आपे जाणै जाणो ॥
मरणु मुणसां सूरिआ हकु है जो होइ मरहि परवाणो ॥३॥

नानक किस नो बाबा रोईऐ बाजी है इहु सँसारो ॥
कीता वेखै साहिबु आपणा कुदरति करे बीचारो ॥
कुदरति बीचारे धारण धारे जिनि कीआ सो जाणै ॥
आपे वेखै आपे बूझै आपे हुकमु पछाणै ॥
जिनि किछु कीआ सोई जाणै ता का रूपु अपारो ॥
नानक किस नो बाबा रोईऐ बाजी है इहु सँसारो ॥४॥२॥

वडहँस महला – १

यह शब्द एक 'अलाहुणी' है (एक शोकगीत, जो महिलायों द्वारा किसी की मृत्यु पर गाया जाता है)। इस शब्द में गुरु जी बता रहें हैं कि किसी भी मृत्यु के समय हमें किस प्रकार के विषयों का ध्यान रखते हुये गाना चाहिये ।

गुरु जी जैसे स्वयं किसी की मृत्यु पर उन शोकाकुल महिलायों के साथ बैठ कर शोकगीत गा रहे हों, अतः वैसी ही मनोदशा में वह कह रहे हैं " आओ, मेरी प्रिय सखियों, हम मिल कर सच्चे (प्रभु के) नाम पर विचार करें । हम तन के (और आत्मा का प्रभु से) बिछुड़ने पर रोयें और अपने स्वामी को स्मरण करें ।हाँ, स्वामी को स्मरण करें और अपने आने वाले उस राह को सुंदर बनायें जहाँ हमें भी (एक दिन) जाना है। (बिछुड़ चुकी आत्मा के लिये हमें यह विचारना चाहिये कि) जिसे भी (सृजनकर्ता ने) रचा है, उसी ने (अपनी रचना को) वापिस ले लिया है, अर्थात उसी की इच्छानुसार सब हुया है । जो भी किसी ने (पूर्व) कर्म किये, उन्हीं के फल उस ने पाये, हमारा इसमें क्या वश अथवा (दैवी इच्छा के विपरीत) निर्देश चल सकता है ।अत:, ओ' मेरी सखियों, आओ, हम मिल कर सच्चे (प्रभु के) नाम पर ध्यान करें "।(१)

अब गुरु जी मृत्यु के समय हमारे अंदर आने वाले विचारों पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), हम कभी मृत्यु को बुरा नहीं कहेंगे यदि, वास्तव में किसी को इस प्रकार से मरना आता हो । (मृत्यु को सरल सुखद बनाने के लिये मेरा विचार है कि अपने जीवन काल में) तुम समर्थ स्वामी का ध्यान करो जिससे (मरणोपरांत) तुम्हारा आगे का मार्ग सुखद हो जाए । क्योंकि, यदि तुम इस संतोषमयी राह (प्रभु नाम के ध्यान) पर चलकर जाते हो, तो तुम्हें उसका फल मिलेगा, (प्रभु के दरबार में) मान सम्मान प्राप्त होगा ।यदि तुम (प्रभु के सम्मुख

उसके नाम की) भेंट लेकर जाते हो तो तुम उस सच्चे में ही समा जायोगे और तुम्हारा सम्मान स्थापित हो जायेगा ।(इस प्रकार, तुम्हें) प्रभु के महल में स्थान प्राप्त होगा । तुम प्रभु के मनभावन बनोगे तथा उसके साथ आनंद लोगे ।(तब तुम समझ पायोगे कि) हमें मृत्यु को शोकाकुल दुर्घटना नहीं कहना चाहिये यदि किसी को मरने का ऐसा ढंग आता है ”।(२)

अब गुरु जी उन कुछ लोगों पर टिप्पणी करते हैं जो कि युद्ध में वीरगति प्राप्त करते है । वह बताते हैं कि किस प्रकार की मृत्यु एक सच्ची एवं सही मृत्यु है, चाहे वह युद्धभूमि में ही हो और प्रभु के दरबार में सम्मान के योग्य हो । वह कहते हैं “ वीर सैनिक की मृत्यु भी बहुत पवित्र है यदि वह (प्रभु के दरबार में) स्वीकृत है । वही केवल शूरवीर कहे जा सकते हैं जिन्हें प्रभु के दरबार में मान सम्मान प्राप्त होता है ।वह यहाँ (संसार) से भी सम्मानित होकर जाते हैं और (प्रभु के) दरबार में भी सम्मान पाते हैं जहाँ उन्हें कोई दुख दर्द नहीं सताता । वह एक ही प्रभु का ध्यान एकाग्रता से कर उसका फल पाते हैं, (क्योंकि) उसकी सेवा (प्रभु के ध्यान) से मन का भय और भ्रम सब पलायन कर जाते हैं। (वह सीख लेते हैं कि राह में आये कष्टों और कठिनाइयों के विषय पर) ऊँचे स्वर में न बोलें, जो भी है वह अपने मन में रखना है (क्योंकि उन्हें विश्वास है कि) उनका प्रभु स्वयं सब (राह में आई रुकावटों को) जानता है । हाँ, एक योद्धा की मृत्यु पवित्र है, यदि उसका मरना (प्रभु के दरबार में) स्वीकृत है ”।(३)

शब्द के अँत में गुरु जी एक बार फिर हमें स्मरण कराते हैं कि मृत्यु जैसे दुखद समय पर रोना व्यर्थ है क्योंकि यह विलाप एक छलावे के लिये है, जैसे कि हम किसी को एक नाटक में अथवा एक चलचित्र के पट पर मरते हुये देख कर रोते हैं । अत: वह कहते हैं “ओ’ नानक, हम किसके लिये, भाई इतना रोते हैं यह संसार तो खेल की एक बाजी है (मायावी है) । वह स्वामी जिसने यह सब सृजित किया है, वही (अपनी कृति को) देखता है, विचारता है । वही इस प्रकृति को देख विचार कर आश्रय देता है । स्वयं ही देखता है, समझता बूझता है (कि हर कोई क्या कर रहा है) एवं स्वयं ही अपना निर्देश जानता है (कि क्या कैसा और कब होना चाहिये) । हाँ, जिसने यह सब किया धरा है, वही सब जानता है (कि क्या कुछ चाहिये)और (इस प्रकार) उसके रूप अपार हैं । ओ’ नानक, हम किसके लिये रोयें तथा विलाप करें, क्योंकि यह सारा संसार ही एक खेल की बाजी (केवल एक छलावा, झूठ)” है ।(४-२)

इस शब्द का संदेश है कि अपने प्रियजनों की मृत्यु के समय रोने तथा विलाप करने की अपेक्षा, हमें आत्मा के परमात्मा से बिछुड़ने के कारण से रोना चाहिये । हमें यह समझना चाहिये कि एक न एक दिन हमें भी इस यात्रा पर जाना है, अत:, अपने जीवन काल में प्रभु का ध्यान करना चाहिए जिससे कि जब हम उसके दरबार में जायें तो सम्मानपूर्वक ढंग से जायें। अंत में, किसी की मृत्यु पर हमें रोना नहीं चाहिये क्योंकि यह संसार प्रभु का रचा खेल है जो केवल एक छलावा मात्र है ।

ਪੰਨਾ ੫੮੧

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਬਾਬਾ ਆਇਆ ਹੈ ਉਠਿ ਚਲਣਾ ਇਹੁ ਜਗੁ ਝੂਠੁ ਪਸਾਰੋਵਾ ॥
ਸਚਾ ਘਰੁ ਸਚੜੈ ਸੇਵੀਐ ਸਚੁ ਖਰਾ ਸਚਿਆਰੋਵਾ ॥
ਕੂੜਿ ਲਬਿ ਜਾਂ ਥਾਇ ਨ ਪਾਸੀ ਅਗੈ ਲਹੈ ਨ ਠਾਓ ॥
ਅੰਤਰਿ ਆਉ ਨ ਬੈਸਹੁ ਕਹੀਐ ਜਿਉ ਸੁੰਞੈ ਘਰਿ ਕਾਓ ॥
ਜੰਮਣੁ ਮਰਣੁ ਵਡਾ ਵੇਛੋੜਾ ਬਿਨਸੈ ਜਗੁ ਸਬਾਏ ॥
ਲਬਿ ਧੰਧੈ ਮਾਇਆ ਜਗਤੁਭੁਲਾਇਆ ਕਾਲੁ ਖੜਾ ਰੂਆਏ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੫੮੨

ਬਾਬਾ ਆਵਹੁ ਭਾਈਹੋ ਗਲਿ ਮਿਲਹ ਮਿਲਿ ਮਿਲਿ ਦੇਹ ਆਸੀਸਾ ਹੇ ॥
ਬਾਬਾ ਸਚੜਾ ਮੇਲੁ ਨ ਚੁਕਈ ਪ੍ਰੀਤਮ ਕੀਆ ਦੇਹ ਅਸੀਸਾ ਹੇ ॥
ਆਸੀਸਾ ਦੇਵਹੋ ਭਗਤਿ ਕਰੇਵਹੋ ਮਿਲਿਆ ਕਾ ਕਿਆ ਮੇਲੋ ॥
ਇਕਿ ਭੂਲੇ ਨਾਵਹੁ ਥੇਹਹੁ ਥਾਵਹੁ ਗੁਰ ਸਬਦੀ ਸਚੁ ਖੇਲੋ ॥
ਜਮ ਮਾਰਗਿ ਨਹੀ ਜਾਣਾ ਸਬਦਿ ਸਮਾਣਾ ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਸਾਚੈ ਵੇਸੇ ॥
ਸਾਜਨ ਸੈਣ ਮਿਲਹੁ ਸੰਜੋਗੀ ਗੁਰ ਮਿਲਿ ਖੋਲੇ ਫਾਸੇ ॥੨॥

ਬਾਬਾ ਨਾਂਗੜਾ ਆਇਆ ਜਗ ਮਹਿ ਦੁਖੁ ਸੁਖੁ ਲੇਖੁ ਲਿਖਾਇਆ ॥
ਲਿਖਿਅੜਾ ਸਾਹਾ ਨਾ ਟਲੈ ਜੇਹੜਾ ਪੁਰਬਿ ਕਮਾਇਆ ॥
ਬਹਿ ਸਾਚੈ ਲਿਖਿਆ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਬਿਖਿਆ ਜਿਤੁ ਲਾਇਆ ਤਿਤੁ ਲਾਗਾ ॥
ਕਾਮਣਿਆਰੀ ਕਾਮਣ ਪਾਏ ਬਹੁ ਰੰਗੀ ਗਲਿ ਤਾਗਾ ॥
ਹੋਛੀ ਮਤਿ ਭਇਆ ਮਨੁ ਹੋਛਾ ਗੁੜੁ ਸਾ ਮਖੀ ਖਾਇਆ ॥
ਨਾ ਮਰਜਾਦੁ ਆਇਆ ਕਲਿ ਭੀਤਰਿ ਨਾਂਗੋ ਬੰਧਿ ਚਲਾਇਆ ॥੩॥

ਬਾਬਾ ਰੋਵਹੁ ਜੇ ਕਿਸੈ ਰੋਵਣਾ ਜਾਨੀਅੜਾ ਬੰਧਿ ਪਠਾਇਆ ਹੈ ॥
ਲਿਖਿਅੜਾ ਲੇਖੁ ਨ ਮੇਟੀਐ ਦਰਿ ਹਾਕਾਰੜਾ ਆਇਆ ਹੈ ॥
ਹਾਕਾਰਾ ਆਇਆ ਜਾ ਤਿਸੁ ਭਾਇਆ ਰੁੰਨੇ ਰੋਵਣਹਾਰੇ ॥
ਪੁਤ ਭਾਈ ਭਾਤੀਜੇ ਰੋਵਹਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਅਤਿ ਪਿਆਰੇ ॥
ਭੈ ਰੋਵੈ ਗੁਣ ਸਾਰਿ ਸਮਾਲੇ ਕੋ ਮਰੈ ਨ ਮੁਇਆ ਨਾਲੇ ॥
ਨਾਨਕ ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਜਾਣ ਸਿਜਾਣਾ ਰੋਵਹਿ ਸਚੁ ਸਮਾਲੇ ॥੪॥੫॥

पृ-५८१

वडहँसु महला १॥

बाबा आइआ है उठि चलणा इहु जगु झूठु पसारोवा ॥
सचा घरु सचड़ै सेवीऐ सचु खरा सचिआरोवा ॥
कूड़ि लबि जां थाइ न पासी अगै लहै न ठाओ ॥
अँतरि आउ न बैसहु कहीऐ जिउ सुँञै घरि काओ ॥
जँमणु मरणु वडा वेछोड़ा बिनसै जगु सबाए ॥
लबि धँधै माइआ जगतुभुलाइआ कालु खड़ा रुआए ॥१॥

पृ-५८२

बाबा आवहु भाईहो गलि मिलह मिलि मिलि देह आसीसा हे ॥
बाबा सचड़ा मेलु न चुकई प्रीतम कीआ देह असीसा हे ॥
आसीसा देवहो भगति करेवहो मिलिआ का किआ मेलो ॥
इकि भूले नावहु थेहहु थावहु गुर सबदी सचु खेलो ॥
जम मारगि नही जाणा सबदि समाणा जुगि जुगि साचै वेसे ॥
साजन सैण मिलहु सँजोगी गुर मिलि खोले फासे ॥२॥

बाबा नांगड़ा आइआ जग महि दुखु सुखु लेखु लिखाइआ ॥
लिखिअड़ा साहा ना टलै जेहड़ा पुरबि कमाइआ ॥
बहि साचै लिखिआ अँमृतु बिखिआ जितु लाइआ तितु लागा ॥
कामणिआरी कामण पाए बहु रँगी गलि तागा ॥
होछी मति भइआ मनु होछा गुड़ु सा मखी खाइआ ॥
ना मरजादु आइआ कलि भीतरि नांगो बँधि चलाइआ ॥३॥

बाबा रोवहु जे किसै रोवणा जानीअड़ा बँधि पठाइआ है ॥
लिखिअड़ा लेखु न मेटीऐ दरि हाकारड़ा आइआ है ॥
हाकारा आइआ जा तिसु भाइआ रुँने रोवणहारे ॥
पुत भाई भातीजे रोवहि प्रीतम अति पिआरे ॥
भै रोवै गुण सारि समाले को मरै न मुइआ नाले ॥
नानक जुगि जुगि जाण सिजाणा रोवहि सचु समाले ॥४॥५॥

वडहँस महला - अलाहुणी – ५

इस अलाहुणी में गुरु जी संसार की स्वभाविक स्थिति पर और अधिक व्याख्या करते हुये दो प्रकार के लोगों के भाग्य की तुलना करते हैं ; एक जो सच्चे प्रभु को स्मरण करते है और दूसरे जो प्रभु को भुला देते हैं । वह यह भी हमें बताते हैं कि क्यों कोई इस संसार में आता है और सांसारिक सुख अथवा दुख भोग कर अपने निर्धारित समय पर विदा हो जाता है । अतः, किसी मृत्यु के समय किस प्रकार का व्यवहार उचित और वांछित है ।

गुरु जी कहते हैं " ओ' मेरे आदरणीय मित्रो, जो भी इस संसार में आया है उसे कभी तो उठ जाना ही है, क्योंकि यह जग (एक प्रकार से क्षणिक) झूठ का पसारा है । किसी को भी अपना सच्चा एवं अनंत घर केवल सच्चे (अनादि प्रभु) की सेवा और ध्यान से ही प्राप्त होता है, क्योंकि सच्चे प्रभु के ध्यान से ही जीवन में कोई पवित्र बन पाता है तथा सच्चे (प्रभु) की झलक अपने मन में पाने योग्य होता है ।(दूसरी ओर) झूठ और लोभ पर जीने वाले लोग ना ही इहलोक और ना ही परलोक में कोई (विश्राम का) स्थान प्राप्त कर पाते हैं ।जैसे एक सूने घर में कौये को कुछ खाने को नहीं मिल पाता, ठीक उसी प्रकार से (झूठ पर रहने वाले) मनुष्य को कोई नहीं कहता कि " आओ, अंदर आकर बैठो" । जन्म के उपरांत मृत्यु वियोग का बड़ा कारण है और समस्त विश्व का विनाश इसी प्रकार से होता है ।सांसारिक माया अथवा सामर्थ्य के लोभ ने समस्त संसार को भुला भटका रखा है और काल (यमराज) सिर पर खड़ा इसे रूलाता रहता है "।(१)

इसलिये गुरु जी बिछुड़ी आत्मा और हम सबके हित में एक सही सुझाव देते हैं, वह सभी मित्रो एवं साथियों से कहते हैं " आओ, मेरे भाई बहनों और साथियों, हम सब मिलकर एक दूसरे के गले मिल मिल कर बिछुड़ी आत्मा को शुभ कामनायें एवं आशीष दें (और सच्चे प्रभु के साथ इसके मिलन के लिये प्रार्थना करें)। ओ' मेरे आदरणीय मित्रो, सच्चे (प्रभु) के साथ मेल कभी नहीं टूटता, अतः हमें बिछुड़ी आत्मा को

अपने प्रियतम से मिलन की आशीष देनी चाहिये । हाँ, हमें अपनी शुभ कामना देनी चाहिये तथा प्रभु की भक्ति भी करना चाहिये, किन्तु जो (भक्त प्रभु से) पहले से ही मिल चुके हैं उनको क्या मिलायोगे । इसकी अपेक्षा, उन कुछ लोगों पर विचार करो जो प्रभु नाम से बिछुड़ कर (संतों की संगति से दूर होकर) भटक गये हैं, वह गुरु के वचन से सच्चे जीवन का खेल खेलें । जो लोग गुरु के शब्द (गुरबाणी) में समाये हैं उन्हें यम के मार्ग पर नहीं जाना होता, वह सदैव युगों युगों से सच्चे अनंत (प्रभु) के साथ जुड़े रहते हैं । इसलिये, मेरे मित्रो और साथियों, आओ और पवित्र संगति में बैठो, (क्योंकि जिन्होंने ऐसी संगति में आकर भाग लिया) गुरु से मिलने के पश्चात उनके (सांसारिक जंजालों के) फंदे खुल गये "।(२)

अब गुरु जी हमें उस स्थिति के विषय पर अवगत कराते हैं जिसमें जब कोई संसार में आता है तो वह कैसे विशेष रूप से व्यवहार करता है और क्यों जीवन में सुख दुख झेलता है । वह कहते हैं " ओ' मेरे आदरणीय मित्रो, संसार में हर कोई पूर्वलिखित दुख और सुख भाग्य में लिखा कर नग्न अवस्था में जन्म लेता है । जन्म के समय से ही उसके जाने का समय निश्चित है वह टल नहीं सकता और इसी प्रकार पूर्व कमाये सुख एवं दुख भी नहीं बदल सकते । ओ' मेरे मित्रो, सच्चे प्रभु ने बैठ अँमृत तथा विष (सुख व दुख)के लेख (किसी के भी भाग्य में) लिख दिये और जो कुछ भी किसी को मिल गया वह उसी में व्यस्त हो गया । (उसके उपर से सांसारिक मायामोह तथा सामर्थ्य रूपी) जादूगरनी अथवा मोहिनी अनेक प्रकार के मोहक रंग बिरंगे धागे गले में डालती है (सांसारिक आकर्षण मनुष्य को रिझाते है) । कारणवश, ओछी मति अथवा बुद्धि वाले मनुष्य का मन भी ओछा होकर (झूठ में फँस कर) मक्खी की भाँति गुड़ खाने के लिये चिपक कर वहीं (सांसारिक माया जाल में) समाप्त हो जाता है । (अंततः) इस कलियुग में मनुष्य (संसार में) अमर्यादित रूप में आता है और उसी प्रकार नग्न अवस्था में ही बँधा चला जाता है "।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं " ओ' मेरे आदरणीय मित्रो, यदि रोना चाहते हो तो रो लो, (परन्तु यह जान लो कि तुम्हारा प्रिय जन) यहाँ से बाँध कर भेज दिया गया है । क्योंकि, जब यमदूत एक बार दरवाज़े पर आ गये हैं तो पूर्वलिखित भाग्य को मिटाया नहीं जा सकता (उस मनुष्य को अवश्य ही यहाँ से जाना पड़ेगा) । हाँ, जब भी ईश्वर की इच्छा होगी तभी यमदूत आयेंगे (और तत्काल ले जायेंगे) और रोने वाले (मित्र व सम्बँधी) रोते हैं । पुत्र, भाई, भतीजे तथा अन्य सम्बंधी अपने अति प्रिय जाने वाले के लिये रोते और विलाप करते हैं ।कितने इस भय में रोते हैं कि अब उनका जीवन जाने वाले के बिना कैसे चलेगा (क्योंकि वह उस पर निर्भर करते हैं) और कई उसके गुणों के लिये, परन्तु, फिर भी कोई मरने वाले के साथ नहीं मरता। किन्तु, ओ' नानक, युगों युगों से वही मनुष्य बुद्धिमान माना जाता है, जो ऐसे समय पर प्रभु के विचार एवं स्मरण में रोता है"।(४-५)

इस अलाहुणी का संदेश है कि प्रभु द्वारा लिखे लेख अनिवार्य हैं, जिन पर रोने एवं विलाप करने से उन्हें टाला या बदला नहीं जा सकता। अतः, यदि हम किसी मृत्यु पर रोना भी चाहें तो इस रुदन में प्रभु के प्रति भय मान कर उससे लाभ लेना चाहिए, क्योंकि, ऐसा भय हमें संसार में झूठ अथवा दुष्कर्मों से दूर रखेगा । हम स्वयं को प्रभु की महिमा और ध्यान में लगायें, जिससे प्रभु अपनी कृपा कर हमारे जन्म मरण के फेरों को सदा के लिये समाप्त कर दें।

ਪੰਨਾ ੫੮੩

ਵਡਹੰਸੁ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਸੁਣਿਅਹੁ ਕੰਤ ਮਹੇਲੀਹੋ ਪਿਰੁ ਸੇਵਿਹੁ ਸਬਦਿ ਵੀਚਾਰਿ ॥
ਅਵਗਣਵੰਤੀ ਪਿਰੁ ਨ ਜਾਣਈ ਮੁਠੀ ਰੋਵੈ ਕੰਤ ਵਿਸਾਰਿ ॥
ਰੋਵੈ ਕੰਤ ਸੰਮਾਲਿ ਸਦਾ ਗੁਣ ਸਾਰਿ ਨਾ ਪਿਰੁ ਮਰੈ ਨ ਜਾਏ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਤਾ ਸਬਦਿ ਪਛਾਤਾ ਸਾਚੈ ਪ੍ਰੇਮਿ ਸਮਾਏ ॥
ਜਿਨਿ ਅਪਣਾ ਪਿਰੁ ਨਹੀ ਜਾਤਾ ਕਰਮ ਬਿਧਾਤਾ ਕੂੜਿ ਮੁਠੀ ਕੂੜਿਆਰੇ ॥
ਸੁਣਿਅਹੁ ਕੰਤ ਮਹੇਲੀਹੋ ਪਿਰੁ ਸੇਵਿਹੁ ਸਬਦਿ ਵੀਚਾਰੇ ॥੧॥

ਸਭੁ ਜਗੁ ਆਪਿ ਉਪਾਇਓਨੁ ਆਵਣੁ ਜਾਣੁ ਸੰਸਾਰਾ ॥
ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਖੁਆਇਅਨੁ ਮਰਿ ਜੰਮੈ ਵਾਰੋ ਵਾਰਾ ॥
ਮਰਿ ਜੰਮੈ ਵਾਰੋ ਵਾਰਾ ਵਧਹਿ ਬਿਕਾਰਾ ਗਿਆਨ ਵਿਹੂਣੀ ਮੂਠੀ ॥
ਬਿਨੁ ਸਬਦੈ ਪਿਰੁ ਨ ਪਾਇਓ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਓ ਰੋਵੈ ਅਵਗੁਣਿਆਰੀ ਝੂਠੀ ॥
ਪਿਰੁ ਜਗਜੀਵਨੁ ਕਿਸ ਨੋ ਰੋਈਐ ਰੋਵੈ ਕੰਤੁ ਵਿਸਾਰੇ ॥
ਸਭੁ ਜਗੁ ਆਪਿ ਉਪਾਇਓਨੁ ਆਵਣੁ ਜਾਣੁ ਸੰਸਾਰੇ ॥੨॥

ਸੋ ਪਿਰੁ ਸਚਾ ਸਦ ਹੀ ਸਾਚਾ ਹੈ ਨਾ ਓਹੁ ਮਰੈ ਨ ਜਾਏ ॥
ਭੂਲੀ ਫਿਰੈ ਧਨ ਇਆਣੀਆ ਰੰਡ ਬੈਠੀ ਦੂਜੈ ਭਾਏ ॥
ਰੰਡ ਬੈਠੀ ਦੂਜੈ ਭਾਏ ਮਾਇਆ ਮੋਹਿ ਦੁਖੁ ਪਾਏ ਆਵ ਘਟੈ ਤਨੁ ਛੀਜੈ ॥
ਜੋ ਕਿਛੁ ਆਇਆ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਜਾਸੀ ਦੁਖੁ ਲਾਗਾ ਭਾਇ ਦੂਜੈ ॥
ਜਮਕਾਲੁ ਨ ਸੂਝੈ ਮਾਇਆ ਜਗੁ ਲੂਝੈ ਲਬਿ ਲੋਭਿ ਚਿਤੁ ਲਾਏ ॥
ਸੋ ਪਿਰੁ ਸਾਚਾ ਸਦ ਹੀ ਸਾਚਾ ਨਾ ਓਹੁ ਮਰੈ ਨ ਜਾਏ ॥੩॥

ਇਕਿ ਰੋਵਹਿ ਪਿਰਹਿ ਵਿਛੁੰਨੀਆ ਅੰਧੀ ਨਾ ਜਾਣੈ ਪਿਰੁ ਨਾਲੇ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਸਾਚਾ ਪਿਰੁ ਮਿਲੈ ਅੰਤਰਿ ਸਦਾ ਸਮਾਲੇ ॥
ਪਿਰੁ ਅੰਤਰਿ ਸਮਾਲੇ ਸਦਾ ਹੈ ਨਾਲੇ ਮਨਮੁਖਿ ਜਾਤਾ ਦੂਰੇ ॥
ਇਹੁ ਤਨੁ ਰੁਲੈ ਰੁਲਾਇਆ ਕਾਮਿ ਨ ਆਇਆ ਜਿਨਿ ਖਸਮੁ ਨ ਜਾਤਾ ਹਦੂਰੇ ॥

ਪੰਨਾ ੫੮੪

ਨਾਨਕ ਸਾ ਧਨ ਮਿਲੈ ਮਿਲਾਈ ਪਿਰੁ ਅੰਤਰਿ ਸਦਾ ਸਮਾਲੇ ॥
ਇਕਿ ਰੋਵਹਿ ਪਿਰਹਿ ਵਿਛੁੰਨੀਆ ਅੰਧੀ ਨ ਜਾਣੈ ਪਿਰੁ ਹੈ ਨਾਲੇ ॥੪॥੨॥

पृ-५८३

वडहँसु महला ३॥

सुणिअहु कँत महेलीहो पिरु सेविहु सबदि वीचारि ॥
अवगणवँती पिरु न जाणई मुठी रोवै कँत विसारि ॥
रोवै कँत सँमालि सदा गुण सारि ना पिरु मरै न जाए ॥
गुरमुखि जाता सबदि पछाता साचै प्रेमि समाए ॥
जिनि अपणा पिरु नहीं जाता करम बिधाता कूड़ि मुठी कूड़िआरे ॥
सुणिअहु कँत महेलीहो पिरु सेविहु सबदि वीचारे ॥१॥

सभु जगु आपि उपाइओनु आवणु जाणु सँसारा ॥
माइआ मोहु खुआइअनु मरि जँमै वारो वारा ॥
मरि जँमै वारो वारा वधहि बिकारा गिआन विहूणी मूठी ॥
बिनु सबदै पिरु न पाइओ जनमु गवाइओ रोवै अवगुणिआरी झूठी ॥
पिरु जगजीवनु किस नो रोईऐ रोवै कँतु विसारे ॥
सभु जगु आपि उपाइओनु आवणु जाणु सँसारे ॥२॥

सो पिरु सचा सद ही साचा है ना ओहु मरै न जाए ॥
भूली फिरै धन इआणीआ रँड बैठी दूजै भाए ॥
रँड बैठी दूजै भाए माइआ मोहि दुखु पाए आव घटै तनु छीजै॥
जो किछु आइआ सभु किछु जासी दुखु लागा भाइ दूजै ॥
जमकालु न सूझै माइआ जगु लूझै लबि लोभि चितु लाए ॥
सो पिरु साचा सद ही साचा न ओहु मरै न जाए ॥३॥

इकि रोवहि पिरहि विछुँनीआ अँधी ना जाणै पिरु नाले ॥
गुर परसादी साचा पिरु मिलै अँतरि सदा समाले ॥
पिरु अँतरि समाले सदा है नाले मनमुखि जाता दूरे ॥
इहु तनु रुलै रुलाइआ कामि न आइआ जिनि खसमु न जाता हदूरे ॥

पृ-५८४

नानक सा धन मिलै मिलाई पिरु अँतरि सदा समाले ॥
इकि रोवहि पिरहि विछुँनीआ अँधी न जाणै पिरु है नाले ॥४॥२॥

वडहँस महला - ३
(तृतीय गुरु जी की अलाहुणी)

इस अलाहुणी में गुरु जी मनुष्य आत्माओं की तुलना प्रभु की पत्नियों के रूप में करते हुए उन्हें दो श्रेणियों में विभाजित करते हैं । इन दोनों में से एक वह हैं जो गुणवान हैं और वास्तव में अपने प्रिय प्रभु से मिलने के लिये अति आतुर हैं, तथा दूसरी श्रेणी में वह हैं जो अयोग्य हैं और प्रभु को भुला कर सांसारिक मायामोह में लिप्त हैं । उसके पश्चात वह आगे कहते हैं कि हम क्यों अपने प्रियतम (प्रभु) से बिछुड़े हुये हैं और कैसे उसके साथ हमारा पुनर्मिलन संभव है ।

गुरु जी कहते हैं " सुनो हे' सुहागिनों , तुम अपने पति से मिलन के लिए आतुर हो तो मेरा प्रस्ताव है कि तुम उसकी सेवा गुरु के शब्द (गुरबाणी) के विचारों द्वारा करो । अयोग्य अथवा अवगुणी वधू (आत्मा) अपने प्रियतम (प्रभु) को ना जानने और उसे बिसारे रखने के कारण (सांसारिक मायामोह से) ठगी होने के दुख में रोती है ।जिसका प्रियतम (प्रभु) कभी मरता नहीं और कहीं जाता भी नहीं वह आत्मा रूपी वधू उसके गुणों का सार जान कर रोती है और तब वह गुरु के शब्द के द्वारा पति (अनंत प्रभु) को पहचान कर सच्चे प्रेम के साथ उसमें समा जाती है । परन्तु , जिन्होंने अपने प्रियतम तथा कर्म विधाता (प्रभु) को नहीं जाना वह झूठी वधूएँ (आत्मा , संसार में पसरे) झूठ द्वारा ठगी जाती हैं । अतः, हे' पति (प्रभु) की सुहागिनों सुनो , अपने प्रियतम की सेवा (गुरु के) शब्दों को विचारते हुए करो "।(१)

अब गुरु जी संसार पर टिप्पणी करते हैं कि यह क्यों निरंतर जन्म मरण के दुख झेल रहा है । वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो, प्रभु ने) स्वयं इस समस्त संसार को उपजाया है, तथा जन्म मरण की व्यवस्था की है। (उसने ही) सांसारिक मायामोह में (हमें) भटका कर बारम्बार जन्म मरण में डाला है । (मानव आत्मा के) बारम्बार जन्म मरण से विकार और पाप बढ़ते हैं, फलस्वरूप दैवी ज्ञान से विहीन वह ठगी जाती है (जीवन के सत्य से बाहर रहती है)। (गुरु के) शब्द के बिना (विचार को ना मान आत्मा रूपी वधू) अपने प्रियतम को नहीं प्राप्त कर पाती, अत: वह झूठी, अवगुणी रोती रहती है और अपना जीवन व्यर्थ कर लेती है । परन्तु, प्रियतम (प्रभु) स्वयं ही संसार के जीवनदाता हैं तो हमें क्यों किसी की मृत्यु पर रोना चाहिये ? वास्तव में, (आत्मा रूपी वधू को) पति (प्रभु) को भुलाने बिसारने पर रोना चाहिये ।(हमें याद रखना चाहिये कि प्रभु ने) स्वयं ही समस्त संसार का सृजन किया है तथा उसमें जन्म मरण की व्यवस्था की है " ।(२)

अवगुणी वधू क्यों दुखी होकर रोती है इसकी और आगे व्याख्या करते हुये गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो, वह) पति (प्रभु) अनादि है, सदा रहता है, वह कभी मरता नहीं, कहीं जाता नहीं । परन्तु, मूर्ख वधू (प्रभु को) भूली हुयी इधर उधर घूमती है और दूसरे के प्रेम में (सांसारिक माया मोह में) एक विधवा की भाँति बैठी है । हाँ, वह वधू (आत्मा) प्रभु को छोड़ दूसरे के प्रेम अथवा माया मोह में एक विधवा की भाँति बैठी हुयी दुख पा रही है और (समय के साथ साथ) उसका तन क्षीण हो रहा है, आयु कम हो रही है । (परन्तु, तब भी उसे समझ में नहीं आता कि) जो भी इस संसार में आया है, वह सब कुछ (एक दिन) चला जायेगा, इसी दुविधा में रहने से (किसी प्रिय जन के बिछुड़ने पर) प्रत्येक जन अति प्रभावित अथवा दुखी होता है । यह जगत लोभ, माया तथा वासना के अंतर्गत परस्पर लड़ता झगड़ता रहता है और इसके मन में अपने लिये यम के समय (मृत्यु) का कोई ध्यान नहीं आता है । (किन्तु, संसार यह नहीं समझ पाता कि प्रभु, हमारा) पति अनादि अंनत है, सदा रहेगा, वह कभी मरता नहीं, कहीं नहीं जाता "।(३)

अंत में गुरु जी उन अनजान व मूर्ख वधुयों (आत्मायों) के लिये भी दयाभाव प्रकट करते हैं, जो यह नहीं जानती कि प्रियतम (प्रभु) हमारे अँतरमन में ही बसते हैं और वह किस प्रकार से उसे प्राप्त कर सकती हैं। इस पर वह कहते हैं " कुछ (आत्मा रूपी) वधुयें, जो प्रियतम से बिछुड़ी होने के कारण रोती हैं, वह अँधी व मूर्ख यह नहीं जानतीं समझतीं कि उनका प्रियतम उनके साथ ही है । जो वधू रूपी आत्मा गुरु की कृपा द्वारा सच्चे प्रियतम को मन में समा कर रखती है, उसे वह सदा के लिये प्राप्त हो जाते हैं ।(ऐसी आत्मा रूपी वधू, प्रभु) प्रियतम को एक बार मन में बसा कर जान लेती है कि वह सदैव उसके साथ है, परन्तु एक अंहकारी (आत्मा) यही समझती है कि प्रभु उससे बहुत दूर हैं। अत:, जिन्होंने भी स्वामी को अपने सम्मुख नहीं समझा व पाया उनका यह शरीर पापकर्मों में लगा रहने से व्यर्थ हो जाता है और किसी काम नहीं आता । (संक्षेप में) ओ' नानक, जो वधू रूपी आत्मा अपने अँतरमन में पति (प्रभु) को सदा स्मरण करती है (गुरु की सहायता से), वह उसे पा लेती है ।(परन्तु कुछ आत्मा रूपी वधू) जो अपने प्रियतम से बिछुड़ी हुयी हैं वह दुखी होकर रोती हैं, क्योंकि वह मूर्ख तथा अंधी यह नहीं जानतीं कि प्रियतम उनके साथ ही है "।(४-२)

उक्त अलाहुणी का संदेश है कि हमें उन आत्मा रूपी वधूयों जैसा बनने का प्रयत्न करना चाहिये जो गुरु के निर्देश को मान कर प्रभु को अपने हृदय में बसाती हैं और विश्वास रखती हैं कि वह सदैव उनके साथ हैं। प्रभु के गुणों को स्मरण करते हुये हमें उसके पवित्र नाम पर विचार करना चाहिये । कौन जानता है कि एक दिन हमारे उपर उनकी कृपा वृष्टि हो और हमें उनके नाम के ध्यान में लीन रहने का वरदान प्राप्त हो जाये ।

ਪੰਨਾ ੫੮੫

ਵਡਹੰਸ ਕੀ ਵਾਰ ਮਹਲਾ ੪ ਲਲਾਂ ਬਹਲੀਮਾ ਕੀ ਧੁਨਿ ਗਾਵਣੀ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਸਲੋਕ ਮਃ ੩ ॥

ਸਬਦਿ ਰਤੇ ਵਡ ਹੰਸ ਹੈ ਸਚੁ ਨਾਮੁ ਉਰਿ ਧਾਰਿ ॥
ਸਚੁ ਸੰਗ੍ਰਹਹਿ ਸਦ ਸਚਿ ਰਹਹਿ ਸਚੈ ਨਾਮਿ ਪਿਆਰਿ ॥
ਸਦਾ ਨਿਰਮਲ ਮੈਲੁ ਨ ਲਗਈ ਨਦਰਿ ਕੀਤੀ ਕਰਤਾਰਿ ॥
ਨਾਨਕ ਹਉ ਤਿਨ ਕੈ ਬਲਿਹਾਰਣੈ ਜੋ ਅਨਦਿਨੁ ਜਪਹਿ ਮੁਰਾਰਿ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਮੈ ਜਾਨਿਆ ਵਡ ਹੰਸੁ ਹੈ ਤਾ ਮੈ ਕੀਆ ਸੰਗੁ ॥
ਜੇ ਜਾਣਾ ਬਗੁ ਬਪੁੜਾ ਤ ਜਨਮਿ ਨ ਦੇਦੀ ਅੰਗੁ ॥੨॥

ਮਃ ੩ ॥

ਹੰਸਾ ਵੇਖਿ ਤਰੰਦਿਆ ਬਗਾਂ ਭਿ ਆਯਾ ਚਾਉ ॥
ਡੁਬਿ ਮੁਏ ਬਗ ਬਪੁੜੇ ਸਿਰੁ ਤਲਿ ਉਪਰਿ ਪਾਉ ॥੩॥

ਪਉੜੀ ॥

ਤੂ ਆਪੇ ਹੀ ਆਪਿ ਆਪਿ ਹੈ ਆਪਿ ਕਾਰਣੁ ਕੀਆ ॥
ਤੂ ਆਪੇ ਆਪਿ ਨਿਰੰਕਾਰੁ ਹੈ ਕੋ ਅਵਰੁ ਨ ਬੀਆ ॥
ਤੂ ਕਰਣ ਕਾਰਣ ਸਮਰਥੁ ਹੈ ਤੂ ਕਰਹਿ ਸੁ ਥੀਆ ॥
ਤੂ ਅਣਮੰਗਿਆ ਦਾਨੁ ਦੇਵਣਾ ਸਭਨਾਹਾ ਜੀਆ ॥
ਸਭਿ ਆਖਹੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਵਾਹੁ ਵਾਹੁ ਜਿਨਿ ਦਾਨੁ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਮੁਖਿ ਦੀਆ ॥੧॥

पृ-५८५

वडहँस की वार महला ४ ललां बहलीमा की धुनि गावणी

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

सलोक महला ३॥

सबदि रते वड हँस है सचु नामु उरि धारि ॥
सचु सँग्रहहि सद सचि रहहि सचै नामि पिआरि ॥
सदा निरमल मैलु न लगई नदरि कीती करतारि ॥
नानक हउ तिन कै बलिहारणै जो अनदिनु जपहि मुरारि ॥ १॥

महला ३॥

मै जानिआ वड हँसु है ता मै कीआ सँगु ॥
जे जाणा बगु बपुड़ा त जनमि न देदी अँगु ॥२॥

महला ३॥

हँसा वेखि तरँदिआ बगां भि आया चाउ ॥
डुबि मुए बग बपुड़े सिरु तलि उपरि पाउ ॥३॥

पउड़ी ॥

तू आपे ही आपि आपि है आपि कारणु कीआ ॥
तू आपे आपि निरँकारु है को अवरु न बीआ ॥
तू करण कारण समरथु है तू करहि सु थीआ ॥
तू अणमँगिआ दानु देवणा सभनाहा जीआ ॥
सभि आखहु सतिगुरु वाहु वाहु जिनि दानु हरि नामु मुखि दीआ ॥१॥

वडहँस की वार महला - ४
(ललां बहलीमा की धुन पर गाना चाहिये)

सलोक महला – ३

यह काव्य " ललां- बहलीमा " नामक काव्य की धुन पर गाया जाना चाहिये । डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार ललां और बहलीमा दोनों भाई थे और छोटी मोटी रियासतों के राजा अथवा ज़मींदार थे । एक बार, ललां की फ़सल को बचाने के लिये बहलीमा ने इस वचन पर अपने खालों से पानी दिया कि फ़सल पकने पर वह उसका छठवाँ भाग बहलीमा को देगा ।परन्तु, ललां ने अपना वह वचन पूरा नहीं किया और ऐसी स्थिति में दोनों वीरों की जम कर लड़ाई हुई, जिसमें बहलीमा जीत गया । इस कहानी पर आधारित उस समय के भाटों ने यह काव्य रचा व गाया । गुरु जी द्वारा रचा यह काव्य उस काव्य की धुन पर गाया जाना मान्य है ।

गुरु जी इस काव्य का आरम्भ सच्चे तथा दूसरे प्रकार के स्वाँगधारी झूठे संतों पर एक टिप्पणी से करते हैं। वह सच्चे संतों की तुलना हँसों से और स्वाँगधारियों अथवा झूठे साधुयों की तुलना बगुलों से करते हुये दोनों श्रेणियों के बीच का अंतर व्यक्त करते हैं ।

वह कहते हैं "जो गुरु के शब्द (विचारों) में लीन हैं, वह सुंदर हँसों के समान हैं, उन्होंने सच्चे प्रभु का नाम अपने हृदय में धारण किया हुआ है । (सच्चे हँसों की भाँति जो केवल मोती चुगते हैं) यह सच्चे संत सदा सच को ही संग्रह करते हैं, सच पर ही रहते हैं और सच्चे प्रभु के नाम से ही प्रेम करते हैं ।प्रभु ने सदा उन पर दया दृष्टि रखी है और वह सदा पवित्र अथवा निरमल रहते हैं (कोई दुर्भावना नहीं रखते) उन पर

किसी प्रकार की मैल का प्रभाव नहीं पड़ता । जो दिन और रात दुष्टदमन प्रभु का ध्यान करते हैं, नानक उनके बलिहारी हैं ”। (१)

महला -३

अब गुरु जी परोक्ष रूप से हमें ऐसे झूठे संतों के बहकावे अथवा धोखे में आने से बचने के लिये सावधान करते हैं और फिर से हँस अथवा बगुले के रूपक में उन्हें सम्बोधित करते हुये कहते हैं “ मैंने उसे सुंदर सच्चा हँस (वास्तव में सच्चा संत) समझ कर उसके साथ संगति की, पर यदि मुझे पता होता कि यह बेचारा तो एक (धोखेबाज़) बगुला है, तो मैं उसे पूरा जीवन अपने पास न आने देती ”।(२)

महला -३

गुरु जी एक बार फिर उन बगुले रूपी झूठे संतों का वर्णन करते हैं जो हँसों (सच्चे संतों) को तालाब में तैरते हुये (अर्थात, आध्यात्मिक आनंद में) देखते हैं और तब वह स्वयं भी उसी में तैरने का अभ्यास करते हैं पर डूब जाते हैं । वह कहते हैं “ हँसों को तैरते देख बगुलों को भी (तैरने का) चाव आ गया । परन्तु, जब उन्होंने सिर के बल पैर उपर कर पानी में डुबकी लगायी तब वह बेचारे बगुले डूब कर मर गये । (इसी प्रकार, जब सच्चे संतों को प्रभु में लीन होकर परम आंनद लेते हुए अथवा सँगति में उनका आदर सम्मान देखा तो झूठे स्वाँगी संत भी उसी प्रकार का आनंद एवं सम्मान पाने का प्रयत्न करने लगे, किन्तु उनके मन के अंदर छिपा कपट जब बाहर प्रकट हुया तो वह डूब गये, अर्थात, वह पवित्र धार्मिक संगति में से अपमानित कर निकाल दिये गये) ”।(३)

पउड़ी

अंत में गुरु जी अपनी भक्ति भावना से कहते हैं “ओ’ ईश्वर, तुम केवल स्वयं ही हो और अपने इस (ब्रह्मांड के) सृजन का कारण भी स्वयं हो ।तुम निराकार हो, तुम्हारे बिना और कोई नहीं है । कुछ भी करने या कारण के लिये समर्थ हो और वही होता है जो तुम करते हो । तुम सभी जीवों को बिना किसी के माँगे दान देते हो । इस लिये, आओ, हम सब मिल कर बारम्बार धन्यवाद करें उस सच्चे गुरु का, जिसने हमें प्रभु का नाम जपने की श्रेष्ठ भेंट प्रदान की ”।(१)

इस पउड़ी का संदेश है कि किसी भी संत अथवा बाहर से पवित्र रूप में दिखाई देने वाले संत का अनुसरण करने से पहले भली भाँति यह निश्चित करलें कि कोई हमें धोखे अथवा प्रपंच से ठग ना ले । केवल तभी हमें किसी संत की संगति अथवा उसकी शिक्षा को स्वीकार करना चाहिये । परन्तु सबसे सुखद स्थित हमारे लिये यही है कि हम अपने अनंत गुरु, गुरु ग्रंथ साहिब जी के अनुसार चलें, जिसमें सारे सिख गुरुजनों तथा अन्य कई समकालीन प्रभु के भक्त जनों की शिक्षा के सारांश दिये गये हैं ।

ਪੰਨਾ ੫੮੭

ਸਲੋਕ ਮਃ ੩ ॥

ਸਜਣ ਮਿਲੇ ਸਜਣਾ ਜਿਨ ਸਤਗੁਰ ਨਾਲਿ ਪਿਆਰੁ ॥
ਮਿਲਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਤਿਨੀ ਧਿਆਇਆ ਸਚੈ ਪ੍ਰੇਮਿ ਪਿਆਰੁ ॥
ਮਨ ਹੀ ਤੇ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਅਪਾਰਿ ॥
ਏਹਿ ਸਜਣ ਮਿਲੇ ਨ ਵਿਛੁੜਹਿ ਜਿ ਆਪਿ ਮੇਲੇ ਕਰਤਾਰਿ ॥
ਇਕਨਾ ਦਰਸਨ ਕੀ ਪਰਤੀਤਿ ਨ ਆਈਆ ਸਬਦਿ ਨ ਕਰਹਿ ਵੀਚਾਰੁ ॥
ਵਿਛੁੜਿਆ ਕਾ ਕਿਆ ਵਿਛੁੜੈ ਜਿਨਾ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਪਿਆਰੁ ॥
ਮਨਮੁਖ ਸੇਤੀ ਦੋਸਤੀ ਥੋੜੜਿਆ ਦਿਨ ਚਾਰਿ ॥
ਇਸੁ ਪਰੀਤੀ ਤੁਟਦੀ ਵਿਲਮੁ ਨ ਹੋਵਈ ਇਤੁ ਦੋਸਤੀ ਚਲਨਿ ਵਿਕਾਰ ॥
ਜਿਨਾ ਅੰਦਰਿ ਸਚੇ ਕਾ ਭਉ ਨਾਹੀ ਨਾਮਿ ਨ ਕਰਹਿ ਪਿਆਰੁ ॥
ਨਾਨਕ ਤਿਨ ਸਿਉ ਕਿਆ ਕੀਚੈ ਦੋਸਤੀ ਜਿ ਆਪਿ ਭੁਲਾਏ ਕਰਤਾਰਿ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਇਕਿ ਸਦਾ ਇਕਤੈ ਰੰਗਿ ਰਹਹਿ ਤਿਨ ਕੈ ਹਉ ਸਦ ਬਲਿਹਾਰੈ ਜਾਉ ॥
ਤਨੁ ਮਨੁ ਧਨੁ ਅਰਪੀ ਤਿਨ ਕਉ ਨਿਵਿ ਨਿਵਿ ਲਾਗਉ ਪਾਇ ॥
ਤਿਨ ਮਿਲਿਆ ਮਨੁ ਸੰਤੋਖੀਐ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਭੁਖ ਸਭ ਜਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਰਤੇ ਸੁਖੀਏ ਸਦਾ ਸਚੇ ਸਿਉ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਤਿਸੁ ਗੁਰਕਉ ਹਉ ਵਾਰਿਆ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਕੀ ਹਰਿ ਕਥਾ ਸੁਣਾਈ ॥

ਪੰਨਾ ੫੮੮

ਤਿਸੁ ਗੁਰ ਕਉ ਸਦ ਬਲਿਹਾਰਣੈ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਸੇਵਾ ਬਣਤ ਬਣਾਈ ॥
ਸੋ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪਿਆਰਾ ਮੇਰੈ ਨਾਲਿ ਹੈ ਜਿਥੈ ਕਿਥੈ ਮੈਨੋ ਲਏ ਛਡਾਈ ॥
ਤਿਸੁ ਗੁਰ ਕਉ ਸਾਬਾਸਿ ਹੈ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਸੋਝੀ ਪਾਈ ॥
ਨਾਨਕੁ ਗੁਰ ਵਿਟਹੁ ਵਾਰਿਆ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦੀਆ ਮੇਰੇ ਮਨ ਕੀ ਆਸ ਪੁਰਾਈ ॥੫॥

पृ-५८७

सलोक महला ३॥

सजण मिले सजणा जिन सतगुर नालि पिआरु ॥
मिलि प्रीतम तिनी धिआइआ सचै प्रेमि पिआरु ॥
मन ही ते मनु मानिआ गुर कै सबदि अपारि ॥
एहि सजण मिले न विछुड़हि जि आपि मेले करतारि ॥
इकना दरसन की परतीति न आईआ सबदि न करहि वीचारु ॥
विछुड़िआ का किआ विछुड़ै जिना दूजै भाइ पिआरु ॥
मनमुख सेती दोसती थोड़ड़िआ दिन चारि ॥
इसु परीती तुटदी विलमु न होवई इतु दोसती चलनि विकार ॥
जिना अँदरि सचे का भउ नाही नामि न करहि पिआरु ॥
नानक तिन सिउ किआ कीचै दोसती जि आपि भुलाए करतारि ॥१॥

महला ३॥

इकि सदा इकतै रँगि रहहि तिन कै हउ सद बलिहारै जाउ ॥
तनु मनु धनु अरपी तिन कउ निवि निवि लागउ पाइ ॥
तिन मिलिआ मनु सँतोखीऐ त्रिसना भुख सभ जाइ ॥
नानक नामि रते सुखीए सदा सचे सिउ लिव लाइ ॥२॥

पउड़ी ॥

तिसु गुरकउ हउ वारिआ जिनि हरि की हरि कथा सुणाई ॥

पृ-५८८

तिसु गुर कउ सद बलिहारणै जिनि हरि सेवा बणत बणाई ॥
सो सतिगुरु पिआरा मेरै नालि है जिथै किथै मैनो लए छडाई ॥
तिसु गुर कउ साबासि है जिनि हरि सोझी पाई ॥
नानकु गुर विटहु वारिआ जिनि हरि नामु दीआ मेरे मन की आस पुराई ॥५॥

सलोक महला – ३

गुरु जी इस शब्द में गुरु के अनुयायियों और अभिमानी लोगों से मित्रता के गुणों की तुलना करते हैं। वह एक प्रकार से यह भी व्यक्त करते हैं कि किस प्रकार के लोगों के साथ सम्पर्क रखते हुए अपनी मित्रता को बढ़ाना चाहिए।

वह कहते हैं "सज्जन अथवा भद्र पुरुष अपने जैसे सज्जन लोगों से मिलना चाहते हैं जिन्हें सच्चे गुरु से प्रेम होता है।मिल कर वह सच्चे तथा प्रियतम प्रभु को प्रेम और स्नेह से स्मरण करते हैं। वह मन ही मन में गुरु की शिक्षा अथवा शब्द का अपार रूप स्वीकार करते हैं। ऐसे सज्जन तथा गुणी मित्र एक बार मिलने पर कभी बिछुड़ते नहीं, क्योंकि प्रभु ने स्वयं उन्हें मिलाया है"।

दूसरी ओर, वह भी हैं जिन्हें प्रभु की झलक पाने में कोई विश्वास नहीं है और ना ही वह (गुरु के) शब्दों पर विचार, अथवा अनुसरण करते हैं।(परन्तु हमें ऐसे लोगों की चिंता नहीं करनी चाहिये, क्योंकि) वह तो पहले से ही अपनी दुविधा (सांसारिक मायाजाल) के प्रेम में पड़े (प्रभु से) बिछुड़े हुये हैं। (हमें स्मरण रखना चाहिये कि) अहंकारी लोगों के साथ मित्रता थोड़े दिनों के लिये ही चल पाती है। ऐसी प्रीत अथवा मित्रता टूटने में विलम्ब नहीं लगता, क्योंकि ऐसी मित्रता में विकार अथवा दुष्कर्म चलते हैं। (जब अभिमानी लोग आपस में मिलते हैं तो वह किसी भले काम के लिये नहीं सोचते, उनकी प्रवृत्ति कुकर्मों की ओर होती है और जब उनके व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्ध नहीं होते तब वह एक दूसरे से दूर हो जाते हैं) । इसलिये ओ' नानक ऐसे लोगों से मित्रता करने का क्या लाभ, जिनके मन में प्रभु का भय नहीं है, जो प्रभु के नाम से प्रेम नहीं करते और जिनको प्रभु ने स्वयं ही भुला दिया हो"।(१)

महला -३

अब गुरु जी, गुरु के अनुयायियों के गुण बताते हैं जो प्रभु के प्रेम में सच्ची निष्ठा रखते हैं तथा निरंतर उसमें लीन रहते हैं और एक प्रकार से पहले से ही सुरक्षित हैं। वह कहते हैं " जो सदा एक ही ईश्वर के रंग में रंगे रहते हैं मैं उनके बलिहारी हूँ। मैं अपना तन, मन और धन अर्पण करता हूँ (और श्रद्धा के साथ) बारम्बार झुक कर उनके पाँव लगता हूँ। क्योंकि ऐसे (महान) लोगों से मिल कर मन को संतोष मिलता है तथा सब प्रकार से (सांसारिक इच्छाओं की) भूख एवं तृष्णा चली जाती है। ओ' नानक, जो लोग प्रभु के नाम में रचे हुये हैं और उसी सच्चे के प्रेम में लीन रहते हैं वह सदा सुखी और प्रसन्न रहते हैं "।(२)

पउड़ी

गुरु के भक्त तथा अहंकारी लोगों की मित्रता में अंतर बताने के पश्चात, गुरु जी ने हमें गुरु के अनुयायियों के गुण भी बताये और अब वह तृतीय तथा अंतिम स्थिति पर ले आते हैं जो कि गुरु से हमारे सम्बन्ध को दर्शाती है। वह कहते हैं " मैं उस गुरु पर बलिहारी हूँ, जिसने मुझे हरि की कथा सुनाई है। मैं उस गुरु पर बलिहारी हूँ, जिसने मेरे लिये हरि की सेवा करने का प्रबंध किया है। मेरा प्रिय, सच्चा गुरु सदा मेरे साथ है, जहाँ कहीं भी मैं होता हूँ वह मुझे बचा लेता है। वह गुरु धन्य है जिसने मुझे हरि के विषय में इतना समझने की बुद्धि प्रदान की। संक्षेप में, नानक उस गुरु पर बलिहारी है जिसने हरि नाम का उपहार देकर मेरे मन की इच्छा को पूर्ण किया "।(५)

इस शब्द का संदेश यह है यदि हम अपनी मन की इच्छायों को संतुष्ट करके जीवन को सफल बनाना चाहते हैं तो हमें उन भले सज्जनों से मित्रता करनी चाहिये जो कि सदाचारी धार्मिक जीवन शैली में जीते हैं और साथ ही अंहकारी लोगों की संगति से दूर रह कर गुरु की शिक्षा का अनुसरण करते हैं। दूसरे, जो लोग सदा प्रभु के नाम में लीन रहते हैं उनके प्रति पूर्ण रूप से आदरभाव रखते हुये उनके अनुसार चलना चाहिये। अंत में, हमें गुरु से परामर्श लेकर हर समय प्रभु के नाम का दान प्राप्त करना चाहिये तब प्रभु अपनी कृपा कर हमारी सभी इचछायें पूर्ण करेंगे और हम मोक्ष के राह पर चलेंगे।

ਪੰਨਾ ੫੮੯

ਸਲੋਕ ਮਃ ੩ ॥

ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਜੀਅ ਕੇ ਬੰਧਨਾ ਵਿਚਿ ਹਉਮੈ ਕਰਮ ਕਮਾਹਿ ॥
ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਠਉਰ ਨ ਪਾਵਹੀ ਮਰਿ ਜੰਮਹਿ ਆਵਹਿ ਜਾਹਿ ॥
ਬਿਨੁਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਫਿਕਾ ਬੋਲਣਾ ਨਾਮੁ ਨ ਵਸੈ ਮਨ ਮਾਹਿ ॥

ਪੰਨਾ ੫੯੦

ਨਾਨਕ ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਜਮ ਪੁਰਿ ਬਧੇ ਮਾਰੀਅਨਿ ਮੁਹਿ ਕਾਲੈ ਉਠਿ ਜਾਹਿ ॥੧॥

ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਜਾਲਉ ਐਸੀ ਰੀਤਿ ਜਿਤੁ ਮੈ ਪਿਆਰਾ ਵੀਸਰੈ ॥
ਨਾਨਕ ਸਾਈ ਭਲੀ ਪਰੀਤਿ ਜਿਤੁ ਸਾਹਿਬ ਸੇਤੀ ਪਤਿ ਰਹੈ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਹਰਿ ਇਕੋ ਦਾਤਾ ਸੇਵੀਐ ਹਰਿ ਇਕੁ ਧਿਆਈਐ ॥
ਹਰਿ ਇਕੋ ਦਾਤਾ ਮੰਗੀਐ ਮਨ ਚਿੰਦਿਆ ਪਾਈਐ ॥
ਜੇ ਦੂਜੇ ਪਾਸਹੁ ਮੰਗੀਐ ਤਾ ਲਾਜ ਮਰਾਈਐ ॥
ਜਿਨਿ ਸੇਵਿਆ ਤਿਨਿ ਫਲੁ ਪਾਇਆ ਤਿਸੁ ਜਨ ਕੀ ਸਭ ਭੁਖ ਗਵਾਈਐ ॥
ਨਾਨਕੁ ਤਿਨ ਵਿਟਹੁ ਵਾਰਿਆ ਜਿਨ ਅਨਦਿਨੁ ਹਿਰਦੈ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਈਐ ॥੧੦॥

पृ-५८९

सलोक महला ३॥

बिनु सतिगुर सेवे जीअ के बँधना विचि हउमै करम कमाहि ॥
बिनु सतिगुर सेवे ठउर न पावही मरि जँमहि आवहि जाहि ॥
बिनुसतिगुर सेवे फिका बोलणा नामु न वसै मन माहि ॥

पृ-५९०

नानक बिनु सतिगुर सेवे जम पुरि बधे मारीअनि मुहि कालै उठि जाहि ॥१॥

महला १॥

जालउ ऐसी रीति जितु मै पिआरा वीसरै ॥
नानक साई भली परीति जितु साहिब सेती पति रहै ॥२॥

पउड़ी ॥

हरि इको दाता सेवीऐ हरि इकु धिआईऐ ॥
हरि इको दाता मँगीऐ मन चिँदिआ पाईऐ ॥
जे दूजै पासहु मँगीऐ ता लाज मराईऐ ॥
जिनि सेविआ तिनि फलु पाइआ तिसु जन की सभ भुख गवाईऐ ॥
नानकु तिनि विटहु वारिआ जिन अनदिनु हिरदै हरि नामु धिआईऐ ॥१०॥

सलोक महला -३

इस शब्द में गुरु जी, प्रभु के प्रति प्रेम और उसकी आराधना करने के लिए सच्चे गुरु की सेवा के महत्व और आवश्यकता पर हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं।

वह कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), सच्चे गुरु की सेवा और उसके आदेश को न माने बिना अहम भाव में सम्पन्न किये गये सभी कर्मकांड (तीर्थ यात्रा, व्रत इत्यादि) जीवन के बँधन हैं। अत:, बिना सच्चे गुरु की सेवा और उसके अनुसरण के ऐसे लोगों को कोई स्थायी ठिकाना नहीं प्राप्त होता और वह जन्म मरण के द्वारा (संसार में) आते जाते रहते हैं।बिना सच्चे गुरु की सेवा तथा अनुसरण के वह अनर्गल बातें करते हैं और उनके मन में प्रभु का नाम नहीं बस पाता। ओ' नानक, बिना सच्चे गुरु की सेवा के वह संसार से मुँह काला करके चले जाते हैं तथा यमलोक में बांध कर दंडित किये जाते हैं"।(१)

महला -१

प्रभु को वास्तविक एवं सच्चा प्रेम किये बिना हम कई कर्म कांड अथवा रीतियाँ नियमित रूप से एक यंत्र की भाँति करते चले जाते हैं, इस विषय पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं " मैं ऐसी नियमित रीतियों को जला कर नष्ट कर दूँगा जिनके कारण मैं अपने प्रिय प्रभु को बिसर जाऊँ। ओ' नानक, केवल उसी प्रकार का प्रेम उत्कृष्ट है जिसके द्वारा मेरा सम्मान प्रभु के सम्मुख बना रहे "। (२)

पउड़ी

गुरु जी इस पउड़ी के द्वारा अंत में केवल एक प्रभु का ध्यान और उसकी सेवा करने की आवश्यकता पर दृढ़ता से कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो) हमारे लिये केवल एक ही दाता हरि है, उसी एक हरि की हम सेवा तथा ध्यान करें। जब हम एक ही दाता से दान माँगते हैं तो मन वांछित फल मिलता है (किन्तु, हरि को छोड़) किसी और दूसरे(देवी, देवता अथवा मनुष्य) से माँगते हैं तो अपनी लाज एवं मान मर्यादा को मार देते हैं।जिन्होंने भी प्रभु (एक ही हरि का ध्यान) की सेवा की उन्हें (प्रभु के नाम के रूप में) सफल जीवन मिला और उनकी (समस्त सांसारिक इचछायों की) भूख समाप्त हो गई।अत: नानक उन पर बलिहारी हैं जो दिन रात अपने हृदय में हरि नाम का ध्यान करते हैं"।(१०)

इस शब्द का संदेश है कि यदि हम अपनी सभी इच्छायों को पूर्ण करने और साथ ही प्रभु में लीन रहने का आनंद लेना चाहते हैं तो हमें केवल एक ही प्रभु की पूजा करनी चाहिये । इसके अतिरिक्त, हमें सच्चे गुरु के आदेशों के अनुसार रहना चाहिये तथा किसी और प्रकार के कर्मकांड अथवा नियमित रीतियाँ, जो हमें प्रभु प्रेम से दूर करें या भुला दें, नहीं करना चाहिये । क्योंकि देवी देवताओं को प्रसन्न करने के लिये यांत्रिक रूप से की गयी पूजा पाठ तथा शास्त्रीय विधियाँ सब निष्फल हैं ।

ਪੰਨਾ ੫੯੧

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਜਗਤੁ ਮੁਆ ਬਿਰਥਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇ ॥
ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਅਤਿ ਦੁਖੁ ਲਗਾ ਮਰਿ ਜੰਮੈ ਆਵੈ ਜਾਇ ॥
ਵਿਸਟਾ ਅੰਦਰਿ ਵਾਸੁ ਹੈ ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਜੂਨੀ ਪਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਜਮੁ ਮਾਰਸੀ ਅੰਤਿ ਗਇਆ ਪਛੁਤਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਇਸੁ ਜਗ ਮਹਿ ਪੁਰਖੁ ਏਕੁ ਹੈ ਹੋਰ ਸਗਲੀ ਨਾਰਿਸਬਾਈ ॥

ਪੰਨਾ ੫੯੨

ਸਭਿ ਘਟ ਭੋਗਵੈ ਅਲਿਪਤੁ ਰਹੈ ਅਲਖੁ ਨ ਲਖਣਾ ਜਾਈ ॥
ਪੂਰੈ ਗੁਰਿ ਵੇਖਾਲਿਆ ਸਬਦੇ ਸੋਝੀ ਪਾਈ ॥
ਪੁਰਖੈ ਸੇਵਹਿ ਸੇ ਪੁਰਖ ਹੋਵਹਿ ਜਿਨੀ ਹਉਮੈ ਸਬਦਿ ਜਲਾਈ ॥
ਤਿਸ ਕਾ ਸਰੀਕੁ ਕੋ ਨਹੀ ਨਾ ਕੋ ਕੰਟਕੁ ਵੈਰਾਈ ॥
ਨਿਹਚਲ ਰਾਜੁ ਹੈ ਸਦਾ ਤਿਸੁ ਕੇਰਾ ਨਾ ਆਵੈ ਨਾ ਜਾਈ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਸੇਵਕੁ ਸੇਵਾ ਕਰੇ ਹਰਿ ਸਚੇ ਕੇ ਗੁਣ ਗਾਈ ॥
ਨਾਨਕੁ ਵੇਖਿ ਵਿਗਸਿਆ ਹਰਿ ਸਚੇ ਕੀ ਵਡਿਆਈ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਜਿਨ ਕੈ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਵਸਿਆ ਸਦ ਹਿਰਦੈ ਹਰਿ ਨਾਮੋ ਤਿਨ ਕੰਉ ਰਖਣਹਾਰਾ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਪਿਤਾ ਹਰਿ ਨਾਮੋ ਮਾਤਾ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸਖਾਈ ਮਿਤ੍ਰੁ ਹਮਾਰਾ ॥
ਹਰਿ ਨਾਵੈ ਨਾਲਿ ਗਲਾ ਹਰਿ ਨਾਵੈ ਨਾਲਿ ਮਸਲਤਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹਮਾਰੀ ਕਰਦਾ ਨਿਤ ਸਾਰਾ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹਮਾਰੀ ਸੰਗਤਿ ਅਤਿ ਪਿਆਰੀ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਕੁਲੁ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਪਰਵਾਰਾ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕੰਉ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹਰਿ ਗੁਰਿ ਦੀਆ ਹਰਿ ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਸਦਾ ਕਰੇ ਨਿਸਤਾਰਾ ॥੧੫॥

पृ-५९१

सलोक महला ३॥

बिनु सतिगुर सेवे जगतु मुआ बिरथा जनमु गवाइ ॥
दूजै भाइ अति दुखु लगा मरि जँमै आवै जाइ ॥
विसटा अँदरि वासु है फिरि फिरि जूनी पाइ ॥
नानक बिनु नावै जमु मारसी अँति गइआ पछुताइ ॥१॥

महला ३॥

इसु जग महि पुरखु एकु है होर सगली नारिसबाई ॥

पृ-५९२

सभि घट भोगवै अलिपतु रहै अलखु न लखणा जाई ॥
पूरै गुरि वेखालिआ सबदे सोझी पाई ॥
पुरखै सेवहि से पुरख होवहि जिनी हउमै सबदि जलाई ॥
तिस का सरीकु को नही ना को कँटकु वैराई ॥
निहचल राजु है सदा तिसु केरा ना आवै ना जाई ॥
अनदिनु सेवकु सेवा करे हरि सचे के गुण गाई ॥
नानकु वेखि विगसिआ हरि सचे की वडिआई ॥२॥

पउड़ी ॥

जिन कै हरि नामु वसिआ सद हिरदै हरि नामो तिन कँउ रखणहारा ॥
हरि नामु पिता हरि नामो माता हरि नामु सखाई मित्रु हमारा ॥
हरि नावै नालि गला हरि नावै नालि मसलति हरि नामु हमारी करदा नित सारा ॥
हरि नामु हमारी सँगति अति पिआरी हरि नामु कुलु हरि नामु परवारा ॥
जन नानक कँउ हरि नामु हरि गुरि दीआ हरि हलति पलति सदा करे निसतारा ॥१५॥

सलोक महला -३

इस शब्द में गुरु जी कहते हैं कि कैसे गुरु की सेवा तथा उसकी मति का अनुसरण किये बिना संसार दुखी हो रहा है और यदि हम गुरु की मति अनुसार प्रभु के नाम का आश्रय नहीं लेते तो किस प्रकार के दुख और संताप हमें झेलने पड़ सकते हैं ।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो) सच्चे गुरु की सेवा (गुरु की मति के अनुसार चलने) के बिना अपना जन्म व्यर्थ में गँवा कर संसार मर रहा है । क्योंकि, दूसरे (सांसारिक मायाजाल अथवा सामर्थ्य के) विषयों से प्रेम होने के कारण वह अनेक कष्टों से पीड़ित है, अतः, मरने तथा जन्म लेने के फलस्वरूप आने और जाने का ताँता लगा हुया है ।इस प्रकार से इसका निवास मैल के अंदर है और बारम्बार अनेक योनियों को प्राप्त होता है । ओ' नानक, प्रभु के नाम का ध्यान न करने से अंत समय पर पश्चाताप करते हुये जाओगे और यमराज से दंड भी मिलेगा ".(१)

महला -३

अब गुरु जी एक प्रसिद्ध रूपक के द्वारा (लगभग पाँच सौ वर्ष पूर्व का) उदाहरण देते हैं जब भारतीय समाज में पुरुषों का स्वामित्व सर्वोपरि रहा है और स्त्रियाँ आर्थिक तथा सामाजिक रूप से पूर्णतया पुरुषों पर निर्भर होती थीं, अत: वह पुरुष को लुभाने तथा अपने वश में करने के लिये सदा प्रयत्नशील रहती थीं ।उपरोक्त संदर्भ में ब्रह्मांड की समस्त शक्तियों में ईश्वर को सर्वोपरि स्थान पर रखते हुए गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), इस संसार में एक ही पुरुष है, तथा अन्य सभी (मानव जीव) उसकी स्त्रियों के समान हैं । वह सभी के हृदय में व्याप्त

है, परन्तु फिर भी अलिप्त रहता है अतः वह अगम्य पुरुष हमारी दृष्टि और समझ से परे है । किन्तु, पूर्ण गुरु ने दिखा दिया और अपनी वाणी (गुरुबाणी) अथवा शब्द के द्वारा हमें (प्रभु के विषय में आवश्यकता अनुसार) समझा दिया है ।इसके अतिरिक्त, जो गुरु के शब्द अथवा कथन के अनुसार अपने अहम को जला डालते हैं, वह महान पुरुष (प्रभु) की सेवा (ध्यान में लीनता) से महान पुरुष (प्रभु) की प्रतिमूर्ति हो जाते हैं । उस (प्रभु) का कोई प्रतिद्वंद्वी नहीं है, न ही कोई काँटे समान पीड़ा देने वाला बैरी है । उसका राज्य सदा अनंत है, अचल है, ना वह आता है, न वह जाता है (क्योंकि वह जन्म मरण से परे है) । इसलिये, एक सच्चा भक्त दिन रात उस सच्चे हरि की सेवा में रह कर उसके गुण गाता रहता है । नानक उस सच्चे हरि की इतनी प्रशंसा तथा महिमा देख सुन कर प्रसन्नता से खिल उठे हैं ”।(२)

पउड़ी

अब गुरु जी प्रभु के नाम की इतनी प्रतिष्ठा एवं शक्ति की महिमा के विषय पर बात करते हुये कहते हैं “ (हे’ मेरे मित्रो)’ जिनके हृदय में सदा के लिये हरि का नाम बस गया है, वही हरि नाम उनकी रक्षा करता है ।(ऐसे लोग आश्वस्त हैं कि) हरि नाम पिता है, हरि नाम ही माता है, तथा हरि नाम ही मित्र अथवा सखा है । हरि के नाम के साथ ही हमारा वार्तालाप है, हरि नाम के साथ ही हमारा विचार विमर्श है और हरि नाम नित्य ही हमारी सब प्रकार से देख भाल करता है ।हरि नाम ही हमारी प्रिय संगति है, हरि का नाम ही हमारा कुल है, हरि नाम परिवार है। गुरु ने भक्त नानक को हरि नाम (का उपहार) दिया है जो लोक तथा परलोक दोनों में सदा पार लगाता है ”।(१५)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि गुरु का मार्ग दर्शन अति अनिवार्य है और सच्चे गुरु के बिना हमें पीड़ा एवं दुख के अतिरिक्त और कुछ भी अनुभव नहीं हो सकेगा । हमें यह भी सोचने की आवश्यकता है कि हम प्रभु की पत्नियों के समान हैं, जहाँ पति (प्रभु) के पास समस्त शक्ति है और केवल सच्चा गुरु ही हमें हमारे पति (प्रभु) से मिलवा सकता है । अंततः, सच्चा गुरु हमें प्रभु नाम से जोड़ता है जो कि स्वयं में अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है, क्योंकि यदि हम इस प्रकार से प्रभु नाम में रच जाते हैं तब हमें किसी और की सहायता, परामर्श एवं रक्षा की आवश्यकता नहीं रहती । केवल प्रभु नाम का ध्यान ही हमें उसकी राह पर डाल कर लोक तथा परलोक में हमारी रक्षा के लिये प्रयाप्त है ।

ਪੰਨਾ ੫੯੩

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਮਨਹਠਿ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਇਓ ਸਭ ਥਕੇ ਕਰਮ ਕਮਾਇ ॥
ਮਨਹਠਿ ਭੇਖ ਕਰਿ ਭਰਮਦੇ ਦੁਖੁ ਪਾਇਆ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ॥
ਰਿਧਿ ਸਿਧਿ ਸਭੁ ਮੋਹੁ ਹੈ ਨਾਮੁ ਨ ਵਸੈ ਮਨਿ ਆਇ ॥
ਗੁਰ ਸੇਵਾ ਤੇ ਮਨੁ ਨਿਰਮਲੁ ਹੋਵੈ ਅਗਿਆਨੁ ਅੰਧੇਰਾ ਜਾਇ ॥
ਨਾਮੁ ਰਤਨੁ ਘਰਿ ਪਰਗਟੁ ਹੋਆ ਨਾਨਕ ਸਹਜਿ ਸਮਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਪੰਨਾ ੫੯੪

ਸਬਦੈ ਸਾਦੁ ਨ ਆਇਓ ਨਾਮਿ ਨ ਲਗੋ ਪਿਆਰੁ ॥
ਰਸਨਾ ਫਿਕਾ ਬੋਲਣਾ ਨਿਤ ਨਿਤ ਹੋਇ ਖੁਆਰੁ ॥
ਨਾਨਕ ਕਿਰਤਿ ਪਇਐ ਕਮਾਵਣਾ ਕੋਇ ਨ ਮੇਟਣਹਾਰੁ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਧਨੁ ਧਨੁ ਸਤ ਪੁਰਖੁ ਸਤਿਗੁਰੂ ਹਮਾਰਾ ਜਿਤੁ ਮਿਲਿਐ ਹਮ ਕਉ ਸਾਂਤਿ ਆਈ ॥
ਧਨੁ ਧਨੁ ਸਤ ਪੁਰਖੁ ਸਤਿਗੁਰੂ ਹਮਾਰਾ ਜਿਤੁ ਮਿਲਿਐ ਹਮ ਹਰਿ ਭਗਤਿ ਪਾਈ ॥
ਧਨੁ ਧਨੁ ਹਰਿ ਭਗਤੁ ਸਤਿਗੁਰੂ ਹਮਾਰਾ ਜਿਸ ਕੀ ਸੇਵਾ ਤੇ ਹਮ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥
ਧਨੁ ਧਨੁ ਹਰਿ ਗਿਆਨੀ ਸਤਿਗੁਰੂ ਹਮਾਰਾ ਜਿਨਿ ਵੈਰੀ ਮਿਤ੍ਰੁ ਹਮ ਕਉ ਸਭ ਸਮ ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਦਿਖਾਈ ॥
ਧਨੁ ਧਨੁ ਸਤਿਗੁਰੂ ਮਿਤ੍ਰੁ ਹਮਾਰਾ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਨਾਮ ਸਿਉ ਹਮਾਰੀ ਪ੍ਰੀਤਿ ਬਣਾਈ ॥੧੯॥

पृ-५९३

सलोकु महला ३॥

मनहठि किनै न पाइओ सभ थके करम कमाइ ॥
मनहठि भेख करि भरमदे दुखु पाइआ दूजै भाइ ॥
रिधि सिधि सभु मोहु है नामु न वसै मनि आइ ॥
गुर सेवा ते मनु निरमलु होवै अगिआनु अँधेरा जाइ ॥
नामु रतनु घरि परगटु होआ नानक सहजि समाइ ॥१॥

महला ३॥

पृ-५९४

सबदै सादु न आइओ नामि न लगो पिआरु ॥
रसना फिका बोलणा नित नित होइ खुआरु ॥
नानक किरति पइऐ कमावणा कोइ न मेटणहारु ॥२॥

पउड़ी ॥

धनु धनु सत पुरखु सतिगुरू हमारा जितु मिलिऐ हम कउ सांति आई ॥
धनु धनु सत पुरखु सतिगुरू हमारा जितु मिलिऐ हम हरि भगति पाई ॥
धनु धनु हरि भगतु सतिगुरू हमारा जिस की सेवा ते हम हरि नामि लिव लाई ॥
धनु धनु हरि गिआनी सतिगुरू हमारा जिनि वैरी मित्रु हम कउ सभ सम दृिसटि दिखाई ॥
धनु धनु सतिगुरू मित्रु हमारा जिनि हरि नाम सिउ हमारी प्रीति बणाई ॥१९॥

सलोकु महला ३॥

इस शब्द में गुरु जी सच्चे गुरु की विशेषतायों अथवा गुणों का विस्तृत वर्णन करते हैं जो हमें प्रभु नाम का वरदान प्राप्त करने में सहायक बनता है, वह प्रभु नाम, जो इस संसार में एक उत्कृष्ट वस्तु है। साथ ही वह हमें धर्म के नाम पर किये जाने वाले कर्मकांड, रीतियों एवं तपस्या व्रत आदि से सतर्क करते हैं जहाँ हम अपनी सामान्य इच्छायों अथवा प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन कर, अनेकों व्रत, लंबी अवधि तक विभिन्न मुद्रायों में खड़े रहना, शरीर को कई प्रकार से यातना देना जैसे कि नग्न अवस्था में रहना और कीलों लगी शय्या पर सोना, इत्यादि, क्रियायें करते हैं।

किन्तु, जहाँ तक ईश्वर से सम्बंध है उस पर गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), (सामान्य इच्छा के विरुद्ध) मन के हठ से विभिन्न प्रकार के कर्म बहुतों ने किये और कर कर के थक गये, परन्तु किसी को प्रभु की प्राप्ति नहीं हुयी। मन के हठ से (साधु संतों वाली) कई प्रकार की वेश भूषा धारण कर (प्रभु को भुलाकर सांसारिक मोहमाया का प्रेम) अन्य भ्रमों में भटकते हुये दुख और पीड़ा पाते रहे। रिद्धि सिद्धि तथा अन्य चमत्कारिक शक्तियों का प्रदर्शन भी एक प्रकार का मोह है जिसके कारण प्रभु का नाम मन में आकर नहीं बसता। गुरु की सेवा से ही मन निर्मल अथवा पवित्र होता है और अज्ञान का अँधेरा छँट जाता है। ओ' नानक, जब (प्रभु) नाम रूपी रत्न मन के भीतर चमकता है, तब स्वत: ही मन सहज भाव से प्रभु के ध्यान में समा जाता है"।(१)

महला -३

अब, गुरु जी उन लोगों की दशा पर टिप्पणी करते हैं जो गुरु की शिक्षा तथा उपदेश को ना सुन कर प्रभु नाम का ध्यान नहीं करते। वह कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), जिस मनुष्य को गुरु के शब्द (गुरबाणी) का स्वाद नहीं आया और प्रभु नाम से प्रेम नहीं हुआ, वह अनर्गल भाषा बोलता है जिसके कारण वह नित्य ही दुख पाता है। किन्तु, ओ' नानक, (वह मनुष्य भी असहाय है, क्योंकि) वह जो भी अपने कर्मों द्वारा

कमाता है उसके भाग्य में (प्रभु के द्वारा) पूर्वनिर्धारित है जिसे कोई मिटा नहीं सकता "।(२)

पउड़ी

गुरु जी शब्द का अंत इस पउड़ी से करते हैं जिसमें वह गुरु के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं जिसने उन्हें प्रभु के नाम पर विचारने की दैवी बुद्धि प्रदान की ।वह कहते हैं "मेरा सच्चा गुरु, सच्चा पुरुष बारम्बार धन्य है जिससे मिल कर मुझे शांति मिली है । सच्चा पुरुष, मेरा सच्चा गुरु धन्य है जिससे मिल कर मुझे हरि की भक्ति मिली है । मेरा सच्चा गुरु, हरि का भक्त धन्य है, जिसकी सेवा करके मैंने हरि के नाम में स्वयं को लीन किया । हमारा सच्चा गुरु हरि का ज्ञानी धन्य है, जिसने मुझे शत्रु अथवा मित्र को सम दृष्टि से देखना सिखाया । (संक्षेप में) वह सच्चा गुरु मेरा मित्र धन्य और प्रशंसनीय है, जिसने हरि नाम के साथ मेरा प्रेम उपजाया "।(१९)

इस शब्द का संदेश है कि हमें स्वयं को किसी प्रकार के कठोर आत्मसंयम, शारीरिक कष्ट अथवा यातना में बाध्य करने का कोई लाभ नहीं है । यदि हम हरि की मित्रता को कंठ से लगाना चाहते हैं तथा उसके नाम के ध्यान में लीन होना चाहते हैं तो हमें गुरु की शिक्षा एवं निर्देश का पालन प्रेम तथा निष्ठा से करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੫੯੫

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੧ ਘਰੁ ੧ ॥

ਮਨੁ ਹਾਲੀ ਕਿਰਸਾਣੀ ਕਰਣੀ ਸਰਮੁ ਪਾਣੀ ਤਨੁ ਖੇਤੁ ॥
ਨਾਮੁ ਬੀਜੁ ਸੰਤੋਖੁ ਸੁਹਾਗਾ ਰਖੁ ਗਰੀਬੀ ਵੇਸੁ ॥
ਭਾਉ ਕਰਮ ਕਰਿ ਜੰਮਸੀ ਸੇ ਘਰ ਭਾਗਠ ਦੇਖੁ ॥੧॥

ਬਾਬਾ ਮਾਇਆ ਸਾਥਿ ਨ ਹੋਇ ॥
ਇਨਿ ਮਾਇਆ ਜਗੁ ਮੋਹਿਆ ਵਿਰਲਾ ਬੂਝੈ ਕੋਇ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਾਣੁ ਹਟੁ ਕਰਿ ਆਰਜਾ ਸਚੁ ਨਾਮੁ ਕਰਿ ਵਥੁ ॥
ਸੁਰਤਿ ਸੋਚ ਕਰਿ ਭਾਂਡਸਾਲ ਤਿਸੁ ਵਿਚਿ ਤਿਸ ਨੋ ਰਖੁ ॥
ਵਣਜਾਰਿਆ ਸਿਉ ਵਣਜੁ ਕਰਿ ਲੈ ਲਾਹਾ ਮਨ ਹਸੁ ॥੨॥

ਸੁਣਿ ਸਾਸਤ ਸਉਦਾਗਰੀ ਸਤੁ ਘੋੜੇ ਲੈ ਚਲੁ ॥
ਖਰਚੁ ਬੰਨੁ ਚੰਗਿਆਈਆ ਮਤੁ ਮਨ ਜਾਣਹਿ ਕਲੁ ॥
ਨਿਰੰਕਾਰ ਕੈ ਦੇਸਿ ਜਾਹਿ ਤਾ ਸੁਖਿ ਲਹਹਿ ਮਹਲੁ ॥੩॥

ਲਾਇ ਚਿਤੁ ਕਰਿ ਚਾਕਰੀ ਮੰਨਿ ਨਾਮੁ ਕਰਿ ਕੰਮੁ ॥

ਪੰਨਾ ੫੯੬

ਬੰਨੁ ਬਦੀਆ ਕਰਿ ਧਾਵਣੀ ਤਾ ਕੋ ਆਖੈ ਧੰਨੁ ॥
ਨਾਨਕ ਵੇਖੈ ਨਦਰਿ ਕਰਿ ਚੜੈ ਚਵਗਣ ਵੰਨੁ ॥੪॥੨॥

पृ-५९५

सोरठि महला १ घर १ ॥

मनु हाली किरसाणी करणी सरमु पाणी तनु खेतु ॥
नामु बीजु सँतोखु सुहागा रखु गरीबी वेसु ॥
भाउ करम करि जँमसी से घर भागठ देखु ॥१॥

बाबा माइआ साथि न होइ ॥
इनि माइआ जगु मोहिआ विरला बूझै कोइ ॥रहाउ॥

हाणु हटु कर आरजा सचु नामु करि वथु ॥
सुरति सोच करि भांडसाल तिसु विचि तिस नो रखु ॥
वणजारिआ सिउ वणजु करि लै लाहा मन हसु ॥२॥

सुणि सासत सउदागरी सतु घोड़े लै चलु ॥
खरचु बनुँ चँगिआईआ मतु मन जाणहि कलु ॥
निरँकार कै देसि जाहि ता सुखि लहहि महलु ॥३॥

लाइ चितु करि चाकरी मँनि नामु करि कँमु ॥

पृ-५९६

बँनु बदीआ करि धावणी ता को आखै धँनु॥
नानक वेखै नदरि करि चड़ै चवगण वँनु ॥४॥२॥

सोरठि महला -१ घर -१

गुरु जी की रचनायों में यह एक विशेषता पाई जाती है कि जब भी वह कोई वार्तालाप अथवा उपदेश किसी विशेष समुदाय या श्रेणी के लोगों के साथ करते हैं तब उन्हीं की भाषा एवं सामाजिक स्थिति के अनुसार बोलते हैं। उदाहरण के लिये, जैसे वह विवाहित लोगों के बीच में हैं तब वह वर व वधू के अनुरूप बात करते हैं। यदि वह किसी विशेष व्यवसाय सम्बंधित लोगों के साथ हैं तो वह उसी व्यवसाय की भाषा का प्रयोग करते हैं। इस शब्द में वह चारों प्रकार के मूलभूत व्यवसायों से सम्बंधित लोगों की बात करते हैं, जो कि संसार में अस्थाई रूप का सांसारिक धन अर्जित करते हैं ; पर कैसे वह सब प्रभु नाम रूपी स्थाई और सदैवी धन सम्पदा अर्जित कर सकते हैं इस पर उनके विशेष सुझाव हैं। डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि किसी व्यवसाय को अपनाने के विषय पर गुरु जी का अपने पिता से कभी कोई तर्क हुया था, तत्पश्चात, किसी समय उन्होंने अपने सर्वहितैषी विचार इस शब्द के रूप में व्यक्त किये।

सर्वप्रथम, वह कृषि के व्यवसाय पर कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो, यदि तुम ऐसी सम्पदा अर्जित करना चाहते हो जो तुमसे कभी न बिछुड़े और मृत्यु के पश्चात भी तुम्हारे साथ जाये तो) अपने मन को एक कृषक के भाँति परिश्रमी बनाओ, अपने तन को एक खेत मान कर उसे सींचने के लिये परिश्रम का पानी लगाओ। (तब इस प्रकार से सधे हुये) खेत में प्रभु नाम का बीज डाल कर सन्तुष्टि रूपी पाटला फेरो, (जिससे कि सांसारिक इच्छाओं रूपी चिड़ियाँ बीज न खा सकें) तथा खेत में फ़सल की रक्षा अपने विनम्रता रूपी दीन वेष में रह कर करो। और तब तुम देखोगे कि प्रेम भावना से किये गये कर्म के फलस्वरूप प्रभु नाम रूपी बीज अति प्रफुल्लित हो गया और यह सौभाग्यशाली घर (प्रभु नाम से) भर गया है "।(१)

अपने उपदेश का मुख्य संदेश देते हुये गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे आदरणीय मित्रो), सांसारिक धन सम्पदा अंत तक साथ नहीं देती। संसार के बिरले लोग ही समझ बूझ पाते हैं कि इस माया ने सारे जगत को मोह में डाला हुया है "।(विराम)

अब, गुरु जी एक दुकानदार (व्यापारी) का उदाहरण देते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), अपनी घटती आयु को एक हाट/दुकान मान कर उसमें प्रभु नाम रूपी माल सामान एवं वस्तुयें रखो। अपनी स्वयं की एकाग्र बुद्धि तथा विचार को भंडारघर बनाओ और उसमें (प्रभु नाम) को जमा करो। तद्उपरांत, अन्य व्यापारियों (प्रभु नाम के प्रेमियों) के साथ व्यापार करके अच्छा लाभ कमाओ और मन में प्रसन्न रहो "।(२)

आगे, गुरु जी घोड़ों की सौदागरी का उदाहरण देते हुये कहते हैं "(ओ' मेरे प्रिय मित्र), शास्त्र (घोड़ों के क्रय और विक्रय पर लिखी गयी

प्रसिद्ध पुस्तकें) को सुनो, घोड़ों की सौदागरी के लिये यहाँ से सत्य के घोड़े ले चलो (जीवन में सत्य पर रहो) और राह में आगे (आत्मा) के ख़र्च के लिये भले कर्मों को पल्लू में बाँध लो, कल पर मत टालो (क्योंकि पता नहीं कल मन का क्या हो) । यदि तुम उस निराकार प्रभु के देश में (इन सब गुणों को लेकर) जायोगे तो वहाँ उसके महल में सुखद स्थान प्राप्त करोगे "।(३)

अब गुरु जी शब्द के अंत में साधारण कर्मचारियों का उदाहरण लेकर उन्हें कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), तुम अपना समस्त काम मन लगा कर श्रद्धा के साथ करो और प्रभु नाम पर अपने विश्वास को ही अपना धंधा समझो ।पाप कर्मों से स्वयं को दूर रखने का प्रयास करोगे, तभी तुम्हें सब धन्य कहेंगे और प्रशंसा करेंगे । ओ' नानक, तब प्रभु तुम्हें कृपा दृष्टि से देखेंगे और तुम्हारा आदर तथा वेतन चौगुने हो जायेंगे "।(४-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम चाहे कोई भी व्यवसाय अथवा धंधा करें, हमें अपना जीवन सत्य एवं संतोष के साथ व्यतीत करना चाहिये तथा पाप और दुष्कर्मों से बचना चाहिये । परन्तु, सबसे आवश्यक बात यह है कि हमें सदा प्रभु के नाम में प्रेम के साथ लीन रहते हुए आनँद का अनुभव करना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੫੯੭

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਤੂ ਪ੍ਰਭ ਦਾਤਾ ਦਾਨਿ ਮਤਿ ਪੂਰਾ ਹਮ ਥਾਰੇ ਭੇਖਾਰੀ ਜੀਉ ॥
ਮੈ ਕਿਆ ਮਾਗਉ ਕਿਛੁ ਥਿਰੁ ਨ ਰਹਾਈ ਹਰਿ ਦੀਜੈ ਨਾਮੁ ਪਿਆਰੀ ਜੀਉ ॥੧॥

ਘਟਿ ਘਟਿ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਬਨਵਾਰੀ ॥
ਜਲਿ ਥਲਿ ਮਹੀਅਲਿ ਗੁਪਤੋ ਵਰਤੈ ਗੁਰ ਸਬਦੀ ਦੇਖਿ ਨਿਹਾਰੀ ਜੀਉ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਮਰਤ ਪਇਆਲ ਅਕਾਸੁ ਦਿਖਾਇਓ ਗੁਰਿ ਸਤਿਗੁਰਿ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰੀ ਜੀਉ ॥
ਸੋ ਬ੍ਰਹਮੁ ਅਜੋਨੀ ਹੈ ਭੀ ਹੋਨੀ ਘਟ ਭੀਤਰਿ ਦੇਖੁ ਮੁਰਾਰੀ ਜੀਉ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੫੯੮

ਜਨਮ ਮਰਨ ਕਉ ਇਹੁ ਜਗੁ ਬਪੁੜੋ ਇਨਿ ਦੂਜੈ ਭਗਤਿ ਵਿਸਾਰੀ ਜੀਉ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਮਿਲੈ ਤ ਗੁਰਮਤਿ ਪਾਈਐ ਸਾਕਤ ਬਾਜੀ ਹਾਰੀ ਜੀਉ ॥੩॥

ਸਤਿਗੁਰ ਬੰਧਨ ਤੋੜਿ ਨਿਰਾਰੇ ਬਹੁੜਿ ਨ ਗਰਭ ਮਝਾਰੀ ਜੀਉ ॥
ਨਾਨਕ ਗਿਆਨ ਰਤਨੁ ਪਰਗਾਸਿਆ ਹਰਿ ਮਨਿ ਵਸਿਆ ਨਿਰੰਕਾਰੀ ਜੀਉ ॥੪॥੮॥

पृ-५९७

सोरठि महला १॥

तू प्रभ दाता दानि मति पूरा हम थारे भेखारी जीउ ॥
मै किआ मागउ किछु थिरु न रहाई हरि दीजै नामु पिआरी जीउ ॥१॥

घटि घटि रवि रहिआ बनवारी ॥
जलि थलि महिअलि गुपतो वरतै गुर सबदी देखि निहारी जीउ ॥रहाउ॥

मरत पइआल अकासु दिखाइओ गुरि सतिगुरि किरपा धारी जीउ ॥
सो ब्रहमु अजोनी है भी होनी घट भीतरि देखु मुरारी जीउ ॥२ ॥

पृ-५९८

जनम मरन कउ इहु जगु बपुड़ो इनि दूजै भगति विसारी जीउ ॥
सतिगुरु मिलै त गुरमति पाईऐ साकत बाजी हारी जीउ ॥३ ॥

सतिगुर बँधन तोड़ि निरारे बहुड़ि न गरभ मझारी जीउ ॥
नानक गिआन रतनु परगासिआ हरि मनि वसिआ निरँकारी जीउ ॥४॥८॥

सोरठि महला -१ चौपदा -८

इस शब्द में गुरु जी ईश्वर के कुछ विशिष्ट गुणों की चर्चा करते हैं और समझाते हैं कि ऐसे श्रेष्ठ एवं सर्वशक्तिमान प्रभु से हम किस प्रकार के दान अथवा उपहार की याचना कर सकते हैं ।

अत:, गुरु जी शब्द के आरंभ में कहते हैं " (हे' प्रभु), तुम महान दाता हो, विवेक से परिपूर्ण हो, हम तो केवल तुम्हारे आगे एक भिक्षुक हैं । (मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि) मैं तुमसे क्या माँगू क्योंकि, कुछ भी स्थिर नहीं रहता, अत: तुम केवल मुझे प्रिय लगने वाले अपने हरि नाम का दान दे दो, (क्योंकि, संसार में सदा स्थिर रहने वाली एक यही वस्तु है) "।(१)

आगे गुरु जी प्रभु के सर्वव्यापी एवं सर्वशक्तिमान रूप पर कहते हैं " प्रिय प्रभु प्रत्येक हृदय में व्याप्त है, वह गुप्त रूप से जल, थल और आकाश में सक्रिय है। (हे' मेरे मन) गुरु के शब्द की सहायता से (गुरु के मार्ग दर्शन के द्वारा) जाओ और अपनी आँखों से देखो "।(विराम)

गुरु ने कैसे उन्हें प्रभु का सर्वव्यापी रूप दिखाने में सहायता की, इस पर गुरु जी कहते हैं " मेरे गुरु, सच्चे गुरु ने मेरे उपर कृपा की और मुझे मृत्युलोक, पाताल लोक तथा आकाश में प्रभु का व्याप्त रूप दिखलाया,(और मुझे यह भी समझ में आया कि) प्रभु योनियों रहित हैं, वह अभी भी हैं, तथा सदा रहेंगे ।(ओ' मेरे मित्र) अहम का नाश करने वाले उस प्रभु को अपने हृदय के अंदर झाँक कर देखो "।(२)

संसार की दशा पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं "यह अबोध अभागा संसार जन्म मरण का भागी है तथा दूसरे (प्रभु को छोड़ सांसारिक) झमेलों में पड़े हुये इसने प्रभु की भक्ति को बिसार दिया है । यदि हम सच्चे गुरु से मिल सकें तो उससे प्राप्त किये आदेशों अथवा मति से प्रभु के भक्त बन सकते हैं, परन्तु (बिना श्रद्धा भक्ति के) अंहकारी मनुष्य अपने जीवन की बाजी हार जाते हैं "।(३)

गुरु जी शब्द का अंत यह कहते हुये करते हैं कि जो लोग सच्चे गुरु से मिल कर उसके आदेशों का अनुसरण करते हैं उन्हें किस प्रकार के वरदान प्राप्त होते हैं । वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो, जिन्होंने भी गुरु के आदेशों का पालन किया) सच्चे गुरु ने उनके समस्त सांसारिक बंधन तोड़ उन्हें मुक्त कर दिया और वह फिर से गर्भ में नहीं आये । क्योंकि, ओ' नानक, उनके मन के भीतर दैवी ज्ञान का रत्न प्रकाशित हो जाता है, (जिसके कारण वह देख पाते हैं कि) उनके मन में निरँकार प्रभु का निवास हो गया है "।(४-८)

इस शब्द का संदेश है कि सभी प्रकार की धन सम्पदा, ज़मीन जायदाद और सामर्थ्य अस्थाई है, अत: हमें ऐसी सांसारिक वस्तुयों के पीछे भागना तथा इन्हें बटोरना नहीं चाहिये। हम केवल प्रभु से उसके अनंत अथवा सदैवी नाम की याचना करें और गुरु के शब्दों के विचारानुसार प्रभु को अपने हृदय के अंदर और बाहर चारों ओर व्याप्त देखें ।

ਪੰਨਾ ੫੯੯

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੩ ਘਰੁ ੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਸੇਵਕ ਸੇਵ ਕਰਹਿ ਸਭਿ ਤੇਰੀ ਜਿਨ ਸਬਦੈ ਸਾਦੁ ਆਇਆ ॥
ਗੁਰ ਕਿਰਪਾ ਤੇ ਨਿਰਮਲੁ ਹੋਆ ਜਿਨਿ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਵਾਇਆ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਗੁਣ ਗਾਵਹਿ ਨਿਤ ਸਾਚੇ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਸੁਹਾਇਆ ॥੧॥

ਮੇਰੇ ਠਾਕੁਰ ਹਮ ਬਾਰਿਕ ਸਰਣਿ ਤੁਮਾਰੀ ॥
ਏਕੋ ਸਚਾ ਸਚੁ ਤੂ ਕੇਵਲੁ ਆਪਿ ਮੁਰਾਰੀ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਾਗਤ ਰਹੇ ਤਿਨੀ ਪ੍ਰਭੁ ਪਾਇਆ ਸਬਦੇ ਹਉਮੈ ਮਾਰੀ ॥
ਗਿਰਹੀ ਮਹਿ ਸਦਾ ਹਰਿ ਜਨ ਉਦਾਸੀ ਗਿਆਨ ਤਤ ਬੀਚਾਰੀ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਿ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਰਾਖਿਆ ਉਰ ਧਾਰੀ ॥੨॥

ਇਹੁ ਮਨੂਆ ਦਹ ਦਿਸਿ ਧਾਵਦਾ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਖੁਆਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੬੦੦

ਮਨਮੁਖ ਮੁਗਧੁ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਨ ਚੇਤੈ ਬਿਰਥਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਭੇਟੇ ਤਾ ਨਾਉ ਪਾਏ ਹਉਮੈ ਮੋਹੁ ਚੁਕਾਇਆ ॥੩॥

ਹਰਿ ਜਨ ਸਾਚੇ ਸਾਚੁ ਕਮਾਵਹਿ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਵੀਚਾਰੀ ॥
ਆਪੇ ਮੇਲਿ ਲਏ ਪ੍ਰਭਿ ਸਾਚੈ ਸਾਚੁ ਰਖਿਆ ਉਰ ਧਾਰੀ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਵਹੁ ਗਤਿ ਮਤਿ ਪਾਈ ਏਹਾ ਰਾਸਿ ਹਮਾਰੀ ॥੪॥੧॥

पृ-५९९

सोरठि महला ३ घर १

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सेवक सेव करहि सभि तेरी जिन सबदै सादु आइआ ॥
गुर किरपा ते निरमलु होआ जिनि विचहु आपु गवाइआ ॥
अनदिनु गुण गावहि नित साचे गुर कै सबदि सुहाइआ ॥१॥

मेरे ठाकुर हम बारिक सरणि तुमारी ॥
एको सचा सचु तू केवलु आपि मुरारी ॥रहाउ ॥

जागत रहे तिनी प्रभु पाइआ सबदे हउमै मारी ॥
गिरही महि सदा हरि जन उदासी गिआन तत बीचारी ॥
सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ हरि राखिआ उर धारी ॥२॥

इहु मनूआ दह दिसि धावदा दूजै भाइ खुआइआ ॥

पृ-६००

मनमुख मुगधु हरि नामु न चेतै बिरथा जनमु गवाइआ ॥
सतिगुरु भेटे ता नाउ पाए हउमै मोहु चुकाइआ ॥३॥

हरि जन साचे साचु कमावहि गुर कै सबदि वीचारी ॥
आपे मेलि लए प्रभि साचै साचु रखिआ उर धारी ॥
नानक नावहु गति मति पाई एहा रासि हमारी ॥४॥१॥

सोरठ महला -३ घर -१
१ओंकार सत गुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी हमें बता रहे हैं कि कौन प्रभु का सच्चा सेवक है और कैसे मानवगण अपने को मायामोह से बचाते हुये प्रभु के सच्चे सेवक बन कर उसमें लीन हो सकते हैं ।

गुरु जी प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं “ (हे’ प्रभु), जिन्हें (गुरु के) शब्द के रस का स्वाद भला प्रतीत हुआ है, वह सब सेवक तेरी सेवा (पूजा पाठ) करते हैं । गुरु की कृपा से जिसने भी अपने अंदर से अहम गँवा दिया है वह पवित्र अथवा निर्मल हो गया है । जो भी लोग गुरु के शब्द पर विचार तथा अभ्यास करते हैं तथा दिन और रात अनंत प्रभु की महिमा का गायन करते हैं, वह (जीवनशैली को) सुंदर तथा सुहाना बना लेते हैं ”।(१)

आगे बढ़ने से पहले, गुरु जी विनीत भाव से कहते हैं “ ओ’ मेरे स्वामी, हम तेरे बालक तेरी शरण में आये हैं । ओ’ प्रभु, केवल तुम्हीं एक सच्चे अनंत हो और केवल तुम्हीं दुष्टदमन हो ”।(विराम)

गुरु के विचारों का अनुसरण करने वाले प्रभु के सेवकों को किस प्रकार के गुण और वरदान प्राप्त होते हैं इसका वर्णन करते हुये अब गुरु जी कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो), जिन्होंने भी गुरु के विचारों का अभ्यास कर अपने अहम को नष्ट कर दिया और (सांसारिक आकर्षणों के प्रति) जीवन में जागते अथवा सतर्क रहे, उन्होंने प्रभु को पा लिया । जो भी भक्त जन दैवी ज्ञान का तत्व पा लेते हैं वह अपने गृह परिवार में रहते हुये भी (सांसारिक मायामोह से) अछूते अथवा उदासीन रहते हैं । सच्चे गुरु की सेवा तथा अनुसरण के द्वारा जिन्होंने प्रभु को अपने हृदय में धारण किया है, वह सदा सुख और शांति का आनंद लेते हैं ”।(२)

अब गुरु जी मनुष्य की एक ऐसी सामान्य मनोवृत्ति पर टिप्पणी करते हैं जब वह मन के वश होकर चलता है तब उसे किस प्रकार के परिणाम प्राप्त होते हैं । वह कहते हैं “(ओ’ मेरे मित्रो), यह हमारा मन सभी दसों दिशायों में भटकता है, तथा दूसरे (प्रभु की अपेक्षा, संसार के मायाजाल के) प्रलोभनों में व्यस्त रह कर नष्ट हो जाता है ।मूर्ख, अंहकारी मनुष्य जो हरि नाम को नहीं स्मरण करता, अपना मानव जीवन

व्यर्थ में गँवा लेता है । परन्तु यदि कोई सच्चे गुरु से मिलने पर उसके विचारों को ग्रहण कर हरि नाम के वरदान को पा जाता है तो उसका सांसारिक मोह व अहम चुक जाता है ”।(३)

किन्तु, गुरु के अनुयायियों के लिये गुरु जी कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो), गुरु के कथनों पर विचार करने से हरि के भक्त जन सदा सच्चे प्रभु के नाम का लाभ अर्जित करते हैं ।उन्होंने अपने हृदय में सच्चे प्रभु का नाम धारण किये रखा और तब उस प्रभु ने स्वयं उनको अपने साथ मिला लिया । ओ’ नानक, प्रभु नाम के द्वारा ही उन्होंने (अपने मन में तथा दैवी स्तर पर भी) परम गति एवं मति प्राप्त की है और यही हमारी पूँजी है ”।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि केवल गुरु के शब्द अथवा कथन के द्वारा ही हम प्रभु को प्राप्त करने के योग्य हो सकते हैं, परन्तु जो लोग सांसारिक प्रलोभनों के प्रेम में व्यस्त रहते हैं वह अपने बहुमूल्य मानव जीवन को व्यर्थ में गँवा देते हैं ।

ਪੰਨਾ ੬੦੧

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਸੋ ਸਿਖੁ ਸਖਾ ਬੰਧਪੁ ਹੈ ਭਾਈ ਜਿ ਗੁਰ ਕੇ ਭਾਣੇ ਵਿਚਿ ਆਵੈ ॥
ਆਪਣੈ ਭਾਣੈ ਜੋ ਚਲੈ ਭਾਈ ਵਿਛੁੜਿ ਚੋਟਾ ਖਾਵੈ ॥
ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੁਖੁ ਕਦੇ ਨ ਪਾਵੈ ਭਾਈ ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਪਛੋਤਾਵੈ ॥੧॥

ਹਰਿ ਕੇ ਦਾਸ ਸੁਹੇਲੇ ਭਾਈ ॥

ਪੰਨਾ ੬੦੨

ਜਨਮ ਜਨਮ ਕੇ ਕਿਲਬਿਖ ਦੁਖ ਕਾਟੇ ਆਪੇ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਈ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਇਹੁ ਕੁਟੰਬੁ ਸਭੁ ਜੀਅ ਕੇ ਬੰਧਨ ਭਾਈ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾ ਸੈਂਸਾਰਾ ॥
ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਬੰਧਨ ਟੂਟਹਿ ਨਾਹੀ ਗੁਰਮੁਖਿ ਮੋਖ ਦੁਆਰਾ ॥
ਕਰਮ ਕਰਹਿ ਗੁਰ ਸਬਦੁ ਨ ਪਛਾਣਹਿ ਮਰਿ ਜਨਮਹਿ ਵਾਰੋ ਵਾਰਾ ॥੨॥

ਹਉ ਮੇਰਾ ਜਗੁ ਪਲਚਿ ਰਹਿਆ ਭਾਈ ਕੋਇ ਨ ਕਿਸ ਹੀ ਕੇਰਾ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਮਹਲੁ ਪਾਇਨਿ ਗੁਣ ਗਾਵਨਿ ਨਿਜ ਘਰਿ ਹੋਇ ਬਸੇਰਾ ॥
ਐਥੈ ਬੂਝੈ ਸੁ ਆਪੁ ਪਛਾਣੈ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਹੈ ਤਿਸੁ ਕੇਰਾ ॥੩॥

ਸਤਿਗੁਰੂ ਸਦਾ ਦਇਆਲੁ ਹੈ ਭਾਈ ਵਿਣੁ ਭਾਗਾ ਕਿਆ ਪਾਈਐ ॥
ਏਕ ਨਦਰਿ ਕਰਿ ਵੇਖੈ ਸਭ ਊਪਰਿ ਜੇਹਾ ਭਾਉ ਤੇਹਾ ਫਲੁ ਪਾਈਐ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਵਸੈ ਮਨ ਅੰਤਰਿ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਵਾਈਐ ॥੪॥੬॥

पृ-६०१

सोरठि महला ३॥

सो सिखु सखा बँधपु है भाई जि गुर के भाणे विचि आवे ॥
आपणै भाणै जो चलै भाई विछुड़ि चोटा खावै ॥
बिनु सतिगुर सुखु कदे न पावै भाई फिरि फिरि पछोतावै ॥१॥

हरि के दास सुहेले भाई ॥

पृ-६०२

जनम जनम के किलबिख दुख काटे आपे मेलि मिलाई ॥ रहाउ ॥

इहु कुटँबु सभु जीअ के बँधन भाई भरमि भुला सैंसारा ॥
बिनु गुर बँधन टूटहि नाही गुरमुखि मोख दुआरा ॥
करम करहि गुर सबदु न पछाणहि मरि जनमहि वारो वारा ॥२॥

हउ मेरा जगु पलचि रहिआ भाई कोइ न किस ही केरा ॥
गुरमुखि महलु पाइनि गुण गावनि निज घरि होइ बसेरा ॥
ऐथै बूझै सु आपु पछाणै हरि प्रभु है तिसु केरा ॥३॥

सतिगुरू सदा दइआलु है भाई विणु भागा किआ पाईऐ ॥
एक नदरि करि वेखै सभ ऊपरि जेहा भाउ तेहा फलु पाईऐ ॥
नानक नामु वसै मन अँतरि विचहु आपु गवाईऐ ॥४॥६॥

सोरठ महला - ३
चौपदा -६-१८

प्रायः बहुत लोगों के बीच इस विषय पर वाद विवाद अथवा तर्क विचार होते हैं कि गुरु का सच्चा शिष्य (सिख) कौन है । अपनी अपनी जीवन शैली के अनुसार सभी विभिन्न परिभाषा देते हैं । कुछ का कहना है कि वास्तव में सच्चे सिख वही हैं, जिन्होंने अँमितपान किया है । अन्य कई यह दावा करते हैं कि अँमितपान आवश्यक नहीं है, केवल जीवन को सत्य रूप से जीना तथा किसी दूसरे को दुख दर्द ना देना एक अच्छे सिख के लिये प्रयाप्त है । जबकि, कई औरों का विचार है कि और कुछ नहीं, केवल सिख परिवार में जन्म लेने वाले ही सच्चे सिख हैं । गुरु जी इस शब्द को एक सच्चे सिख की परिभाषा के साथ आरम्भ करते हैं, तथा कहते हैं कि ऐसी जीवनशैली का पालन करने वाला मनुष्य किस प्रकार के वरदान प्राप्त कर लेता है और जो इस प्रकार के आचरण के विपरीत रहता है उसे किस प्रकार के संकट और दुखों का सामना करना पड़ता है ।

वह कहते हैं " ओ' भाइयों (और बहनों), वही मनुष्य एक सच्चा सिख, सखा व बंधु है, जो गुरु की इच्छानुसार रहे (अथवा जिसकी जीवन अनुचर्या गुरु के मार्ग दर्शन के अनुसार हो, किन्तु), मेरे भाइयों (व बहनों) जो कोई अपनी स्वयं की इच्छा (अहम) के अनुसार रहता है वह (प्रभु से) बिछुड़ कर (अपने जीवन में) आहत होता है । संक्षेप में, सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन के बिना कभी भी किसी को सुख शांति प्राप्त नहीं होती और फिर बारम्बार पछताना पड़ता है "।(१)

प्रभु के भक्तों को मिलने वाली शांति एवं सुख का संक्षिप्त वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं "(गुरु के मार्ग पर चलने वाले एक प्रकार से हरि के सेवक बन जाते हैं) हे' भाइयों (व बहनों) हरि के दास सदा सुखी तथा आनंदित रहते हैं, (क्योंकि गुरु के द्वारा) हरि ने स्वयं उन (भक्तजनों) से मिल कर उनके जन्म जन्म से एकत्रित कष्ट और पापकर्म काट दिये हैं "।(१-विराम)

गुरु की शिक्षा का अनुसरण करना क्यों आवश्यक है और जो मनुष्य गुरु की शिक्षा को ना मानते हुये सांसारिक झमेलों में व्यस्त रहता है उसे किस प्रकार के दुख दर्द सहने पड़ते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं " ओ' मेरे भाइयों (और बहनों, गुरु के विचारों के अनुसार ना रहने से) यह कुटुंब व परिवार सभी जीव की आत्मा के लिए बँधन हैं, इसी कारण समस्त संसार भ्रमों में भूला भटका हुया है । बिना गुरु के (निर्देशों के) यह बंधन नहीं टूटते हैं, पर जो गुरु का अनुयायी है उसके लिये (सांसारिक बंधनों से) मुक्ति का द्वार खुला है ।दूसरी ओर, जो लोग गुरु के शब्द का महत्व ना पहचान कर सांसारिक कामों में व्यस्त रहते हैं, वह बारम्बार मरण तथा जन्म की प्रक्रिया में पड़े रहते हैं "।(२)

सांसारिक परिस्थितियाँ जिनसे घिरा हुआ हर कोई क्यों दुख दर्द पाता है जबकि गुरु के अनुयायी प्रभु की सँगति में सहज भाव की दशा में रहते हैं, इस तथ्य पर गुरु जी कहते हैं " ओ' भाइयों (व बहनों), अहम और स्वार्थ में समस्त जगत उलझा हुया है, यहाँ कोई किसी की चिंता नहीं करता । परन्तु गुरु के अनुयायी प्रभु की महिमा का गुण गान करने वाले उसके महल में, अर्थात अपने हृदय रूपी घर के अंदर बसेरा पा लेते हैं । जब कोई (संसार में) स्वयं को समझ बूझ लेता है और पहचान लेता है, तब हरि ही सदा के लिये उसके सहायक व स्वामी बने रहते हैं "।(३)

गुरु जी अब यहाँ एक प्रश्न का उत्तर देते हुए शब्द का अंत करते हैं कि यदि प्रभु सब पर दयालु हैं, तो क्यों कुछ लोग उसकी दया के पात्र नहीं बनते और कुछ बन जाते हैं ? वह कहते हैं " ओ' मेरे भाइयों (व बहनों), सच्चा गुरु सभी पर सर्वदा दयालु है, परन्तु बिना सौभाग्य के हम क्या प्राप्त कर सकते हैं ।वह सबके उपर एक ही जैसी दृष्टि रखता है तथा अपनी कृपा की वृष्टि करता है, किन्तु, जैसा जिसका भाव अथवा मनोदशा (गुरु के प्रति) होती है, उसे वैसा ही फल मिलता है, (ठीक उसी प्रकार, जैसे वर्षा सभी स्थानों पर समान रूप से होती है परन्तु जो खेत समतल अथवा भली प्रकार से जोत कर बोये हुए होते हैं वह वर्षा से लाभान्वित होकर फल फूल जाते हैं, पर मरुस्थल अथवा छोटी पहाड़ियाँ वैसा लाभ नहीं ले पातीं, क्योंकि, वर्षा का पानी उन से बह जाता है । संक्षेप में) ओ' नानक, जब हम अपने अँतरमन में से अहम को नष्ट कर पाते हैं, केवल तभी प्रभु के नाम का निवास वहाँ पर हो सकता है "।(४-६)

इस शब्द का संदेश यह है कि वह लोग जो गुरु की इच्छा एवं अभिलाषा के अनुयायी हैं, वह शांति और प्रसन्नता से रहते हैं जबकि अंहकारी अथवा अभिमानी लोग दुख और पश्चाताप झेलते हैं और बारम्बार जन्म मरण के दुखद फेरों में फँसे रहते हैं ।

ਪੰਨਾ ੬੦੩	**पृ-६०३**
ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੩ ॥	**सोरठि महला ३॥**
ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਬਹੁਤਾ ਦੁਖੁ ਲਾਗਾ ਜੁਗ ਚਾਰੇ ਭਰਮਾਈ ॥ ਹਮ ਦੀਨ ਤੁਮ ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਦਾਤੇ ਸਬਦੇ ਦੇਹਿ ਬੁਝਾਈ ॥੧॥	बिनु सतिगुर सेवे बहुता दुखु लागा जुग चारे भरमाई ॥ हम दीन तुम जुगु जुगु दाते सबदे देहि बुझाई ॥१॥
ਹਰਿ ਜੀਉ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰਹੁ ਤੁਮ ਪਿਆਰੇ ॥ ਸਤਿਗੁਰੁ ਦਾਤਾ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਵਹੁ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦੇਵਹੁ ਆਧਾਰੇ ॥ ਰਹਾਉ ॥	हरि जीउ किृपा करहु तुम पिआरे ॥ सतिगुरु दाता मेलि मिलावहु हरि नामु देवहु आधारे ॥रहाउ॥
ਮਨਸਾ ਮਾਰਿ ਦੁਬਿਧਾ ਸਹਜਿ ਸਮਾਣੀ ਪਾਇਆ ਨਾਮੁ ਅਪਾਰਾ ॥ ਹਰਿ ਰਸੁ ਚਾਖਿ ਮਨੁ ਨਿਰਮਲੁ ਹੋਆ ਕਿਲਬਿਖ ਕਾਟਣਹਾਰਾ॥੨॥	मनसा मारि दुबिधा सहजि समाणी पाइआ नामु अपारा ॥ हरि रसु चाखि मनु निरमलु होआ किलबिख काटणहारा ॥२॥
ਪੰਨਾ ੬੦੪	**पृ-६०४**
ਸਬਦਿ ਮਰਹੁ ਫਿਰਿ ਜੀਵਹੁ ਸਦ ਹੀ ਤਾ ਫਿਰਿ ਮਰਣੁ ਨ ਹੋਈ ॥ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਨਾਮੁ ਸਦਾ ਮਨਿ ਮੀਠਾ ਸਬਦੇ ਪਾਵੈ ਕੋਈ ॥੩॥	सबदि मरहु फिरि जीवहु सद ही ता फिरि मरणु न होई ॥ अँमृतु नामु सदा मनि मीठा सबदे पावै कोई ॥३॥
ਦਾਤੈ ਦਾਤਿ ਰਖੀ ਹਥਿ ਅਪਣੈ ਜਿਸੁ ਭਾਵੈ ਤਿਸੁ ਦੇਈ ॥ ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਰਤੇ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਦਰਗਹ ਜਾਪਹਿ ਸੇਈ ॥੪॥੧੧॥	दातै दाति रखी हथि अपणै जिसु भावै तिसु देई ॥ नानक नामि रते सुखु पाइआ दरगह जापहि सेई ॥४॥११॥

सोरठ महला -३ चौपदा -११-२३

इस शब्द में गुरु जी बताते हैं कि गुरु के मार्ग दर्शन के बिना कोई कितने दुख पाता है । इस लिए यहाँ, वह हमें यह प्रकट करते हैं कि कैसे गुरु के आदेशानुसार चल कर प्रभु से आशीर्वाद पाने की प्रार्थना करें और उसके नाम का वरदान प्राप्त करें जो कि जीवन में शांति तथा आत्मिक आनंद का स्रोत है अतः, वह प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे पूज्य प्रभु), बिना सच्चे गुरु की सेवा अथवा अनुसरण के मानव आत्मा अत्यंत दुख पाती है और चारों युग (सर्वदा) भ्रमों में भटकती रहती है ।हे' प्रभु, हम बहुत दीन (तुम्हारे द्वार पर एक याचक के समान) हैं और तुम युगों युगों से दाता रहे हो, अतः, (गुरु के) शब्द द्वारा हमें (जीवन को सही राह पर रखने की) समझ बूझ दो "।(१)

प्रभु से वास्तव में उन्हें क्या चाहिये, इस पर गुरु जी कहते हैं " ओ' मेरे प्रिय प्रभु, तुम कृपा करो और सच्चे उपकारी गुरु को हमसे मिलाओ, जो तुमसे मिलाये और हमें हरि का नाम जीवन के आधार के रूप में दे दे "।(विराम)

गुरु के द्वारा प्रभु के नाम की भेंट पाकर मनुष्य को जो आशीर्वाद प्राप्त होते हैं उनका वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), जिसने भी अपनी (सांसारिक) इच्छायों को समाप्त करके हरि के अपार नाम को प्राप्त किया उसने अपनी दुविधा को सहज अवस्था में ढाल दिया । हरि नाम रुपी रस का स्वाद चखने के पश्चात उस मनुष्य का मन निर्मल और पवित्र हो जाता है, क्योंकि, (हरि नाम में) समस्त कष्ट तथा पापों को काट फेंकने की शक्ति है "।(२)

गुरु की आज्ञानुसार रहने से सांसारिक इच्छाओं को शांत कर लेने से प्राप्त अतिरिक्त लाभ पर गुरु जी यहाँ कह रहे हैं " (ओ' मेरे मित्रो), गुरु के कथन अनुसार यदि तुम (सांसारिक इच्छायों को ऐसे त्याग दो जैसे कि तुम उनके लिए) मर चुके हो, तब तुम (आत्मिक रूप से) सदा के लिए जिओगे और फिर तुम्हारा (आत्मिक) मरण कभी नहीं होगा ।(ओ' मेरे मित्रो) मन को सदा मीठा लगने वाला अँमृत रुपी हरि का नाम किसी बिरले को ही (गुरु) के शब्द द्वारा प्राप्त होता है "।(३)

अंत में गुरु जी हमें बताते हैं कि इस (हरि नाम जैसी) बहुमूल्य वस्तु का रक्षक कौन है । वह कहते हैं " उस दाता (प्रभु) ने अपने नाम का दान अपने हाथ में ही रखा हुआ है जो वह अपनी भावना अथवा इच्छा के अनुसार जिसे चाहता है उसे देता है । ओ' नानक, जो हरि नाम में रमे हुये हैं उन्होंने ही सुख शांति पाई है और केवल वही उसके दरगाह में स्वीकृत हैं "।(४-११)

इस शब्द का संदेश है कि केवल गुरु के शब्द के द्वारा ही किसी के मन की दुविधा समाप्त हो सकती है और वह मनुष्य प्रभु नाम के गुण और महिमा को समझ सकता है । केवल हरि नाम रुपी अँमृत का पान करने से किसी के समस्त कुकर्म और पाप मिट जाते हैं और वह मनुष्य सदा शांति में रहता है, तथा प्रभु के दरबार में सम्मान पाता है।

ਪੰਨਾ ੬੦੫

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਆਪੇ ਕੰਡਾ ਆਪਿ ਤਰਾਜੀ ਪ੍ਰਭਿ ਆਪੇ ਤੋਲਿ ਤੋਲਾਇਆ ॥
ਆਪੇ ਸਾਹੁ ਆਪੇ ਵਣਜਾਰਾ ਆਪੇ ਵਣਜੁ ਕਰਾਇਆ ॥
ਆਪੇ ਧਰਤੀ ਸਾਜੀਅਨੁ ਪਿਆਰੈ ਪਿਛੈ ਟੰਕੁ ਚੜਾਇਆ ॥੧॥

ਮੇਰੇ ਮਨ ਹਰਿ ਹਰਿ ਧਿਆਇ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਨਿਧਾਨੁ ਹੈ ਪਿਆਰਾ ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਮੀਠਾ ਲਾਇਆ ॥
ਰਹਾਉ ॥

ਆਪੇ ਧਰਤੀ ਆਪਿ ਜਲੁ ਪਿਆਰਾ ਆਪੇ ਕਰੇ ਕਰਾਇਆ ॥
ਆਪੇ ਹੁਕਮਿ ਵਰਤਦਾ ਪਿਆਰਾ ਜਲੁ ਮਾਟੀ ਬੰਧਿ ਰਖਾਇਆ ॥
ਆਪੇ ਹੀ ਭਉਪਾਇਦਾ ਪਿਆਰਾ ਬੰਨਿ ਬਕਰੀ ਸੀਹੁ ਹਢਾਇਆ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੬੦੬

ਆਪੇ ਕਾਸਟ ਆਪਿ ਹਰਿ ਪਿਆਰਾ ਵਿਚਿ ਕਾਸਟ ਅਗਨਿ ਰਖਾਇਆ ॥
ਆਪੇ ਹੀ ਆਪਿ ਵਰਤਦਾ ਪਿਆਰਾ ਭੈ ਅਗਨਿ ਨ ਸਕੈ ਜਲਾਇਆ ॥
ਆਪੇ ਮਾਰਿ ਜੀਵਾਇਦਾ ਪਿਆਰਾ ਸਾਹ ਲੈਦੇ ਸਭਿ ਲਵਾਇਆ ॥੩॥

ਆਪੇ ਤਾਣੁ ਦੀਬਾਣੁ ਹੈ ਪਿਆਰਾ ਆਪੇ ਕਾਰੈ ਲਾਇਆ ॥
ਜਿਉ ਆਪਿ ਚਲਾਏ ਤਿਉ ਚਲੀਐ ਪਿਆਰੇ ਜਿਉ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਮੇਰੇ
ਭਾਇਆ ॥
ਆਪੇ ਜੰਤੀ ਜੰਤੁ ਹੈ ਪਿਆਰਾ ਜਨ ਨਾਨਕ ਵਜਹਿ ਵਜਾਇਆ ॥੪॥੪॥

पृ-६०५

सोरठि महला ४॥

आपे कँडा आपि तराजी प्रभि आपे तोलि तोलाइआ ॥
आपे साहु आपे वणजारा आपे वणजु कराइआ ॥
आपे धरती साजीअनु पिआरै पिछै टंकु चड़ाइआ ॥१॥

मेरे मन हरि हरि धिआइ सुखु पाइआ ॥
हरि हरि नामु निधानु है पिआरा गुरि पूरै मीठा लाइआ ॥रहाउ॥

आपे धरती आपि जलु पिआरा आपे करे कराइआ ॥
आपे हुकमि वरतदा पिआरा जलु माटी बँधि रखाइआ ॥
आपे ही भउ पाइदा पिआरा बँनि बकरी सीहु हढाइआ ॥२॥

पृ-६०६

आपे कासट आपि हरि पिआरा विचि कासट अगनि रखाइआ ॥
आपे ही आपि वरतदा पिआरा भै अगनि न सकै जलाइआ ॥
आपे मारि जीवाइदा पिआरा साह लैदे सभि लवाइआ ॥३॥

आपे ताणु दीबाणु है पिआरा आपे कारै लाइआ ॥
जिउ आपि चलाए तिउ चलीऐ पिआरे जिउ हरि प्रभ मेरे भाइआ ॥
आपे जँती जँतु है पिआरा जन नानक वजहि वजाइआ ॥४॥४॥

सोरठ महला - ४
चौपदा -४-२८

इस शब्द में गुरु जी यह चित्रित करते हैं कि कैसे ईश्वर ब्रह्मांड के प्रत्येक रूप में व्याप्त है, कैसे वह इस ब्रह्मांड के आश्चर्यजनक विस्तार को व्यवस्थित कर रहा है और कैसे विभिन्न तत्व, ग्रह मंडल, अद्भुत पदार्थ और अलौकिक घटनायें जो प्रत्यक्ष रूप में एक दूसरे के विरुद्ध हैं उन्हें अपने अधिकार अथवा आदेश के अनुसार आदि काल से अत्यंत नियमित रूप से नियंत्रित कर रहा है।

एक दुकानदार का उत्कृष्ट उदाहरण देते हुये गुरु जी शब्द के आरंभ में कहते हैं " (इस संसार रूपी दुकान में) प्रभु स्वयं ही तराज़ू है, स्वयं ही उसमें काँटा है और तोल को तोलने वाला भी है (उसी ने संतुलन रखा हुया है)। वह स्वयं ही साहूकार है, स्वयं व्यापारी है और स्वयं ही सौदा करता है। उस प्रिय प्रभु ने स्वयं इस धरती को स्थापित किया तथा उसकी धुरी पर उसे संतुलित किया, (केवल अपने निर्देश के द्वारा ब्रह्मांड को पूर्ण संतुलन में रखा हुआ है)"।(१)

अब गुरु जी स्वयं अपने मन को सम्बोधित कर कहते हैं " हे' मेरे मन, हरि हरि नाम का ध्यान करने से ही (किसी को) सुख शांति प्राप्त होती है। हरि का नाम सुखों का मधुर भंडार है, (जिसने भी गुरु की शरण ली) पूर्ण गुरु ने उस (मनुष्य) को मधुरता में व्यस्त कर दिया "। (विराम)

समस्त स्थानों, जल, थल तथा वनस्पति में प्रभु की व्यापकता को विस्तृत करते हुये गुरु जी कहते हैं " वह प्रिय प्रभु स्वयं ही धरती है, स्वयं ही पानी है तथा स्वयं ही सब कुछ करता है और करवाता है। वह प्रिय प्रभु स्वयं निर्देश देता है (और इसी कारण) माटी तथा जल को बाँध रखा है (यद्दिप धरती पानी से घिरी हुई है, पर प्रभु की आज्ञा के कारण जल माटी को तोड़ नहीं पाता, जैसे कि) अपने निर्देश से बकरी और शेर को इकट्ठे बाँध कर चला रहा है "।(२)

एक और सुंदर उदाहरण देते हुये गुरु जी यहाँ यह चित्रित करते है कि कैसे प्रभु के निर्देश में विभिन्न सशक्त तत्त्व अथवा पदार्थ साथ ही साथ काम करते हैं। वह कहते हैं " प्रिय (प्रभु), स्वयं ही काठ (लकड़ी) है, (स्वयं ही अग्नि का रचयिता है) और स्वयं ही काठ में अग्नि को रखने वाला है। वह प्रिय स्वयं ही (उस काठ में) विद्यमान है और उसके भय में अग्नि (काठ को) जला नहीं सकती। वह प्रिय (प्रभु)

स्वयं ही मारने वाला है और स्वयं ही जीवित करता है, सभी जीव साँस लेते हैं जिन्हें वह साँस लेने की योग्यता देता है ”।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं “ वह प्रिय (प्रभु) स्वयं ही शक्ति है, स्वयं ही शासक है और वही प्रत्येक (जीव) को उसके कार्य में व्यस्त रखता है । अतः, ओ’ मेरे मित्रो, हमें (अपना जीवन) वैसे ही रहना चाहिये जैसी मेरे प्रिय हरि की इच्छा हो । भक्त नानक कहते हैं, प्रिय प्रभु स्वयं ही एक संगीतज्ञ हैं, स्वयं ही सब प्रकार के (समस्त जीवों के रूप में) वाद्य हैं और यह सभी वाद्य (जीव) उसी प्रकार बजते हैं जैसे वह (प्रभु) उन्हें बजाता है (सभी जीव उसके अनुसार कर्म कर रहे हैं)”।(४-४)

इस शब्द का संदेश है कि जो सब कुछ हो रहा है उसका कारण तथा कर्ता प्रभु ही है ।वह जो भी, जिस प्रकार से भी करवाना चाहता है हमें उसी प्रकार से करना चाहिये । परन्तु प्रभु की इच्छा एवं निर्देश को समझने के लिये इस प्रकार की बुद्धि, भावना और ज्ञान हमें केवल गुरु के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है ।

ਪੰਨਾ ੬੦੭	पृ-६०७
ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੪ ਪੰਚਪਦਾ ॥	**सोरठि महला ४ पँचपदा ॥**
ਅਚਰੁ ਚਰੈ ਤਾ ਸਿਧਿ ਹੋਈ ਸਿਧੀ ਤੇ ਬੁਧਿ ਪਾਈ ॥ ਪ੍ਰੇਮ ਕੇ ਸਰ ਲਾਗੇ ਤਨ ਭੀਤਰਿ ਤਾ ਭ੍ਰਮੁ ਕਾਟਿਆ ਜਾਈ ॥੧॥	अचरु चरै ता सिधि होई सिधी ते बुधि पाई ॥ प्रेम के सर लागे तन भीतरि ता भ्रमु काटिआ जाई ॥१॥
ਮੇਰੇ ਗੋਬਿਦ ਅਪੁਨੇ ਜਨ ਕਉ ਦੇਹਿ ਵਡਿਆਈ ॥ ਗੁਰਮਤਿ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਪਰਗਾਸਹੁ ਸਦਾ ਰਹਹੁ ਸਰਣਾਈ ॥ ਰਹਾਉ ॥	मेरे गोबिद अपुने जन कउ देहि वडिआई ॥ गुरमति राम नामु परगासहु सदा रहहु सरणाई ॥रहाउ॥
ਇਹੁ ਸੰਸਾਰੁ ਸਭੁ ਆਵਣ ਜਾਣਾ ਮਨ ਮੂਰਖ ਚੇਤਿ ਅਜਾਣਾ ॥ ਹਰਿ ਜੀਉ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰਹੁ ਗੁਰੁ ਮੇਲਹੁ ਤਾ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਸਮਾਣਾ ॥੨॥	इहु सँसारु सभु आवण जाणा मन मूरख चेति अजाणा ॥ हरि जीउ क्रिपा करहु गुरु मेलहु ता हरि नामि समाणा ॥२॥
ਜਿਸ ਕੀ ਵਥੁ ਸੋਈ ਪ੍ਰਭੁ ਜਾਣੈ ਜਿਸ ਨੋ ਦੇਇ ਸੁ ਪਾਏ ॥ ਵਸਤੁ ਅਨੂਪ ਅਤਿ ਅਗਮ ਅਗੋਚਰ ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਅਲਖੁ ਲਖਾਏ ॥੩॥	जिस की वथु सोई प्रभु जाणै जिस नो देइ सु पाए ॥ वसतु अनूप अति अगम अगोचर गुरु पूरा अलखु लखाए ॥३॥
ਜਿਨਿ ਇਹ ਚਾਖੀ ਸੋਈ ਜਾਣੈਗੂੰਗੇ ਕੀ ਮਿਠਿਆਈ ॥	जिनि इह चाखी सोई जाणै गूँगे की मिठिआई ॥
ਪੰਨਾ ੬੦੮	**पृ-६०८**
ਰਤਨੁ ਲੁਕਾਇਆ ਲੂਕੈ ਨਾਹੀ ਜੇ ਕੋ ਰਖੈ ਲੁਕਾਈ ॥੪॥	रतनु लुकाइआ लूकै नाही जे को रखै लुकाई ॥४॥
ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਤੇਰਾ ਤੂ ਅੰਤਰਜਾਮੀ ਤੂ ਸਭਨਾ ਕਾ ਪ੍ਰਭੁ ਸੋਈ ॥ ਜਿਸ ਨੋ ਦਾਤਿ ਕਰਹਿ ਸੋ ਪਾਏ ਜਨ ਨਾਨਕ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥੫॥੯॥	सभु किछु तेरा तू अँतरजामी तू सभना का प्रभु सोई ॥ जिस नो दाति करहि सो पाए जन नानक अवरु न कोई ॥५॥१॥

सोरठ महला - ४ पँचपदा

इस शब्द में गुरु जी आत्मा के उद्धार के लिये प्रभु नाम को अति आवश्यक बताते हुये टिप्पणी करते हैं । वह यह भी बताते हैं कि एक साधारण मनुष्य के लिये प्रभु नाम का वरदान प्राप्त करना कितना कठिन है, क्योंकि, इस नाम का बारम्बार उच्चारण करना अविश्वसनीय रूप से कठिन, थकाने वाला अथवा उबाऊ है । यह ऐसी खाने की वस्तु के समान है जो स्वास्थ्य के लिये तो लाभदायक है, परन्तु, इतनी स्वादहीन अथवा अरोचक है कि कोई इसे चखना भी नहीं चाहता । अत: गुरु जी प्रभु नाम का ध्यान करने की क्रिया की तुलना एक स्वास्थ्यवर्धक, परन्तु, स्वादहीन भोजन से करते हुए भी हमें उसके गुणों तथा महिमा से अवगत कराते हैं ।

वह कहते हैं " (अच्छे स्वास्थ्य के लिये जैसे मनुष्य) न खाने योग्य खाना भी खाता है, (उसी प्रकार, जब कोई पूर्णतया एकाग्र मन से प्रभु नाम का ध्यान करता है, जो कि एक अत्यंत कठिन काम है) तब उसे आत्मिक शुद्धता एवं पूर्णता प्राप्त होती है और ऐसी पूर्ण दशा के द्वारा ही(दैवी) बुद्धि मिलती है । जब प्रभु प्रेम के तीर तन के अंदर जाकर लगते हैं, तभी मन के भ्रम दूर होते हैं "।(१)

अत: गुरु जी विनम्र भावना से कहते हैं " ओ' मेरे ब्रह्मांड के स्वामी, अपने भक्त को सम्मान प्रदान करो, गुरु की मति के अनुसार (मेरे मन में) राम के नाम का प्रकाश उत्पन्न करो (और आशीर्वाद दो कि) मैं सदा तुम्हारी शरण में रहूँ "। (विराम)

और अधिक विनम्रता से स्वयं को हमारे जैसे अंहमयुक्त लोगों की श्रेणी में रखते हुये गुरु जी कहते हैं " यह समस्त संसार आने और जाने (जन्म और मरण) में लगा है, अत:, ओ' मेरे मूर्ख, अज्ञानी मन थोड़ा चेतो, (और प्रभु से कहो) ओ' मेरे प्रिय प्रभु, कृपा करो और मुझे गुरु से मिलाओ जिससे कि मैं हरि के नाम में (अथवा तुम्हारे नाम में) समा सकूँ "।(२)

प्रभु नाम जैसी बहुमूल्य तथा कठिनाई से प्राप्त होने वाली उपयोगी वस्तु को कैसे प्राप्त किया जा सकता है इस पर गुरु जी व्याख्या करते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो, प्रभु नाम जैसी) वस्तु प्रभु की ही है और (इसका मूल्य) प्रभु ही जानता है, (केवल वही जन) उसे प्राप्त कर सकता है जिसे वह देता है । यह वस्तु अद्धितीय रूप से सुंदर, अत्यंत अगम्य एवं अगोचर है और इस वस्तु के अभेद्य रहस्य को खोलने अथवा दिखाने के लिए पूर्ण गुरु सहायता करते हैं "।(३)

गुरु जी अब बताते हैं कि प्रभु नाम की वस्तु अकथनीय रूप से कितनी सुंदर व आनंददायक है । वह कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो) केवल वही इस (वस्तु) का स्वाद बता सकता है जिसने इसको चखा है, क्योंकि, यह एक ऐसी मिठाई है जिसे एक गूँगे ने खाया हो (मिठाई खाकर

गूँगा स्वाद तो ले रहा है और प्रसन्न दिखाई दे रहा है, पर कुछ भी बताने में असमर्थ है) । इसी प्रकार, जैसे एक रत्न (प्रभु नाम रूपी) का प्रकाश अथवा चमक चाहे कोई कितना भी छिपाने का प्रयत्न करले पर उसे छिपाया नहीं जा सकता ।(४)

इसलिये, शब्द के अंत में गुरु जी कहते हैं " ओ' प्रभु, सब कुछ तुम्हारा है, तुम अँतरयामी हो और तुम सभी के हो । भक्त नानक कहते हैं (प्रभु) जिसे अपने नाम का उपहार देते हैं केवल वही मनुष्य इसे पा सकता है, कोई और दूसरा (ऐसा दान) देने वाला नहीं है "।(५-९)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम संसार में अबाध रूप से परिचालित जन्म मरण की व्यवस्था से बाहर होना चाहते हैं तो हमें प्रभु नाम का उपहार प्राप्त करने के लिये उन से प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें पूर्ण गुरु के द्वारा मार्ग दर्शन का वरदान दें । क्योंकि, केवल गुरु ही हमारे मन को उचित प्रकार से साध कर प्रभु नाम के ध्यान में एकाग्रचित्त कर सकते हैं और प्रभु ही केवल इस बहुमूल्य वस्तु के स्वामी एवं दाता हैं ।

ਪੰਨਾ ੬੦੯	पृ-६०९
ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**सोरठि महला ५॥**
ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਭੇਟਿਓ ਵਡਭਾਗੀ ਮਨਹਿ ਭਇਆ ਪਰਗਾਸਾ ॥ ਕੋਇ ਨ ਪਹੁਚਨਹਾਰਾ ਦੂਜਾ ਅਪੁਨੇ ਸਾਹਿਬ ਕਾ ਭਰਵਾਸਾ ॥੧॥	गुरु पूरा भेटिओ वडभागी मनहि भइआ परगासा ॥ कोइ न पहुचनहारा दूजा अपुने साहिब का भरवासा ॥१॥
ਅਪੁਨੇ ਸਤਿਗੁਰ ਕੈ ਬਲਿਹਾਰੈ ॥ ਆਗੈ ਸੁਖੁ ਪਾਛੈ ਸੁਖ ਸਹਜਾ ਘਰਿ ਆਨੰਦੁ ਹਮਾਰੈ ॥ ਰਹਾਉ ॥	अपुने सतिगुर कै बलिहारै ॥ आगै सुखु पाछै सुख सहजा घरि आनँदु हमारै ॥रहाउ॥
ਅੰਤਰਜਾਮੀ ਕਰਣੈਹਾਰਾ ਸੋਈ ਖਸਮੁ ਹਮਾਰਾ ॥ ਨਿਰਭਉ ਭਏ ਗੁਰ ਚਰਣੀ ਲਾਗੇ ਇਕ ਰਾਮ ਨਾਮ ਆਧਾਰਾ ॥੨॥	अँतरजामी करणैहारा सोई खसमु हमारा ॥ निरभउ भए गुर चरणी लागे इक राम नाम आधारा ॥२॥
ਸਫਲ ਦਰਸਨੁ ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਪ੍ਰਭੁ ਹੈ ਭੀ ਹੋਵਨਹਾਰਾ ॥ ਕੰਠਿ ਲਗਾਇ ਅਪੁਨੇ ਜਨ ਰਾਖੇ ਅਪੁਨੀ ਪ੍ਰੀਤਿ ਪਿਆਰਾ ॥੩॥	सफल दरसनु अकाल मूरति प्रभु है भी होवनहारा ॥ कँठि लगाइ अपुने जन राखे अपुनी प्रीति पिआरा ॥३॥
ਵਡੀ ਵਡਿਆਈ ਅਚਰਜ ਸੋਭਾ ਕਾਰਜੁ ਆਇਆ ਰਾਸੇ ॥	वडी वडिआई अचरज सोभा कारजु आइआ रासे ॥
ਪੰਨਾ ੬੧੦	**पृ-६१०**
ਨਾਨਕ ਕਉ ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਭੇਟਿਓ ਸਗਲੇ ਦੂਖ ਬਿਨਾਸੇ ॥੪॥੫॥	नानक कउ गुरु पूरा भेटिओ सगले दूख बिनासे ॥४॥५॥

सोरठ महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमसे साझा करते हैं कि वह अपने गुरु और प्रभु पर पूर्ण विश्वास रख कर किस प्रकार के आनन्द का अनुभव कर रहे हैं ।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो) अपने अहोभाग्य से मेरी पूर्ण गुरु से भेंट हो गयी है और मेरा मन (दैवी ज्ञान से) प्रकाशमयी हो गया है, (मैंने समझ लिया है कि ईश्वर के अतिरिक्त) और कोई दूसरा (सहायता के) लिये आने वाला नहीं है, अत: मुझे अपने स्वामी पर पूर्ण विश्वास है "।(१)

अपने गुरु के प्रति आभार प्रकट करते हुये गुरु जी कहते हैं " मैं अपने सच्चे गुरु पर बलिहारी हूँ, (जिसकी कृपा से) मुझे सुख शांति मिली है और भविष्य में भी सुख सहज में रहूँगा, अत: हमारा मन अति आनन्दित अवस्था में है "।(विराम)

गुरु से मिलने के पश्चात जो वरदान उन्हें आनंद प्रदान कर रहे हैं उनका वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो, जब से) गुरु के चरणों की शरण में आया हूँ, एक राम नाम ही जीवन आधार बन गया है, तथा (मन) निर्भय हो गया है और वह अंतरयामी (प्रभु) जो सब कुछ करने में समर्थ है, वही मेरा स्वामी है"।(२)

प्रभु के प्रति अपने विश्वास को और अधिक विस्तार से बताते हुये गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), उस अमरत्व की मूर्ति प्रभु के दर्शन अत्यंत सफल हैं, जो सदा से रहा है और सदा ही रहने वाला है। वह प्रिय, अपने भक्तों को अति प्रेमपूर्वक भाव से अपने कंठ से लगा कर रखता है "।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), उस (प्रभु) की महिमा महान है, उसकी शोभा आश्चर्यजनक है और (उसकी कृपा से जीवन का ध्येय प्राप्त हो गया अथवा) समस्त काम सिद्ध हो गये हैं । नानक को पूर्ण गुरु प्राप्त हो गये हैं (जिनके मार्ग दर्शन से) सभी दुख दर्द का विनाश हो गया है "।(४-५)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम पूर्ण गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) के मार्ग दर्शन का अनुसरण करके प्रभु का ध्यान करते रहें तो वह हमारे रक्षक बने रहेंगे और हमारी सभी कठिनाइयाँ समाप्त हो जायेंगी । ऐसी स्थिति में हम लोक तथा परलोक में शांति और सहजता प्राप्त कर सकेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੧੧

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੨ ਚਉਪਦੇ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਏਕੁ ਪਿਤਾ ਏਕਸ ਕੇ ਹਮ ਬਾਰਿਕ ਤੂ ਮੇਰਾ ਗੁਰ ਹਾਈ ॥
ਸੁਣਿ ਮੀਤਾ ਜੀਉ ਹਮਾਰਾ ਬਲਿ ਬਲਿ ਜਾਸੀ ਹਰਿਦਰਸਨੁ ਦੇਹੁ ਦਿਖਾਈ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੬੧੨

ਸੁਣਿ ਮੀਤਾ ਧੂਰੀ ਕਉ ਬਲਿ ਜਾਈ ॥
ਇਹੁ ਮਨੁ ਤੇਰਾ ਭਾਈ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪਾਵ ਮਲੋਵਾ ਮਲਿ ਮਲਿ ਧੋਵਾ ਇਹੁ ਮਨੁ ਤੈ ਕੂ ਦੇਸਾ ॥
ਸੁਣਿ ਮੀਤਾ ਹਉ ਤੇਰੀ ਸਰਣਾਈ ਆਇਆ ਪ੍ਰਭ ਮਿਲਉ ਦੇਹੁ ਉਪਦੇਸਾ ॥੨॥

ਮਾਨੁ ਨ ਕੀਜੈ ਸਰਣਿ ਪਰੀਜੈ ਕਰੈ ਸੁ ਭਲਾ ਮਨਾਈਐ ॥
ਸੁਣਿ ਮੀਤਾ ਜੀਉ ਪਿੰਡੁ ਸਭੁ ਤਨੁ ਅਰਪੀਜੈ ਇਉ ਦਰਸਨੁ ਹਰਿ ਜੀਉ ਪਾਈਐ ॥੩॥

ਭਇਓ ਅਨੁਗ੍ਰਹੁ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ਸੰਤਨ ਕੈ ਹਰਿ ਨਾਮਾ ਹੈ ਮੀਠਾ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕਉ ਗੁਰਿ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰੀ ਸਭੁ ਅਕੁਲ ਨਿਰੰਜਨੁ ਡੀਠਾ ॥੪॥੧॥੧੨॥

पृ-६११

सोरठि महला ५ घरु २ चउपदे

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई ॥
सुणि मीता जीउ हमारा बलि बलि जासी हरिदरसनु देहु दिखाई ॥१॥

पृ-६१२

सुणि मीता धूरी कउ बलि जाई ॥
इहु मनु तेरा भाई ॥रहाउ॥

पाव मलोवा मलि मलि धोवा इहु मनु तै कू देसा ॥
सुणि मीता हउ तेरी सरणाई आइआ प्रभ मिलउ देहु उपदेसा ॥२॥

मानु न कीजै सरणि परीजै करै सु भला मनाईऐ ॥
सुणि मीता जीउ पिंडु सभु तनु अरपीजै इउ दरसनु हरि जीउ पाईऐ ॥३॥

भइओ अनुग्रहु प्रसादि सँतन कै हरि नामा है मीठा ॥
जन नानक कउ गुरि किरपा धारी सभु अकुल निरँजनु डीठा ॥४॥१॥१२॥

सोरठ महला -५ घर-२ चउपदे
१ओंकार सतिगुर प्रसाद

इस शब्द में गुरु जी यह व्यक्त करते हैं कि हमें सही मार्ग दर्शन तथा प्रभु प्राप्ति के लिए किस प्रकार से गुरु से निकटता रखनी चाहिए। गुरु जी ऐसा विचार केवल अपनी कल्पना के आधार पर ही नहीं दे रहे हैं, अपितु, वह अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर कह रहे हैं कि उन्होंने (पंचम गुरु अर्जन देव जी ने) अपने गुरु एवं पिता गुरु रामदास जी (चतुर्थ गुरु) से कैसे और क्या पूछा और फिर उन्हें क्या उत्तर मिला ।

अतः, अपने पिता एवं गुरु को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं “ (ओ' मेरे प्रिय पिता), हम सब बालक एक ही पिता की संतान हैं, तुम मेरे गुरु (तथा आत्मिक मार्ग दर्शक) भी हो । हे' मेरे प्रिय आदरणीय मित्र, सुनो, मेरा जीवन बारम्बार तुम्हारे पर बलिहारी है, यदि तुम मुझे हरि के दर्शन करवा दो “ ।(१)

अपनी विनम्र भावना से गुरु जी आगे कहते हैं “ओ' मेंरे मित्र, मैं तुम्हारे चरणों की धूलि पर बलिहारी हूँ, मैं अपने मन को तुम्हें सौंपता हूँ (जो भी तुम मुझे करने को कहोगे वही मैं करूँगा पर मुझे हरि के दर्शन करवा दो) ।(विराम)

और आगे गुरु जी कहते हैं “ मैं तुम्हारे पैरों की मालिश करूँगा, उन्हें भली प्रकार से मल कर धोऊँगा और अपने मन को तुम्हें अर्पण कर दूँगा । हे' मेरे मित्र, सुनो, मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ, मुझे ऐसा उपदेश दो कि मैं प्रभु से मिल सकूँ ”।(२)

अब, गुरु जी अपने पिता गुरु रामदास जी से की गयी इस विनम्र प्रार्थना के प्रतिउत्तर को हमसे साझा करते हुये कहते हैं “(इस विनम्र प्रार्थना को सुनने के पश्चात मेरे पिता ने कहा, ओ' मेरे पुत्र) किसी प्रकार का अभिमान ना करो, (प्रभु की) शरण में पड़े रहो और जो भी (प्रभु) करते हैं उसी में अपना कल्याण अथवा भला मानो ।ओ' मेरे मित्र, सुनो, अपना समस्त जीवन और तन उस (प्रभु) को अर्पण करदो, इसी प्रकार से ही हम महान हरि के दर्शन पा सकते हैं ”।(३)

अंत में अपने गुरु से प्राप्त परामर्श के अनुसरण से पाये गये परिमाण को गुरु जी व्यक्त करते हुये कहते हैं “ संतों (गुरु) की अत्यंत कृपा

से मिले इस वरदान से (मुझे अब) हरि नाम मधुर लगने लगा है । गुरु ने भक्त नानक पर पूर्ण कृपा की और उसने कुलरहित, पवित्र प्रभु को सर्वव्यापी रूप में देख लिया है ”।(४-१-१२)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम कृपानिधान, पवित्र तथा सर्वव्यापक प्रभु के दर्शन करना चाहते हैं तो हमें विनम्र भाव से गुरु के मार्ग दर्शन पर बिना किसी अहम भावना के अपने तन मन सहित सभी कुछ प्रभु को अर्पण कर देना चाहिए और जो भी प्रभु करें उसी में विश्वास रखना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੬੧੩

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੨ ॥

ਮਾਤ ਗਰਭ ਮਹਿ ਆਪਨ ਸਿਮਰਨੁ ਦੇ ਤਹ ਤੁਮ ਰਾਖਨਹਾਰੇ ॥
ਪਾਵਕ ਸਾਗਰ ਅਥਾਹ ਲਹਰਿ ਮਹਿ ਤਾਰਹੁ ਤਾਰਨਹਾਰੇ ॥੧॥

ਮਾਧੌ ਤੂ ਠਾਕੁਰੁ ਸਿਰਿ ਮੋਰਾ ॥
ਈਹਾ ਊਹਾ ਤੁਹਾਰੋ ਧੋਰਾ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕੀਤੇ ਕਉ ਮੇਰੈ ਸੰਮਾਨੈ ਕਰਣਹਾਰੁ ਤ੍ਰਿਣੁ ਜਾਨੈ ॥
ਤੂ ਦਾਤਾ ਮਾਗਨ ਕਉ ਸਗਲੀ ਦਾਨੁ ਦੇਹਿ ਪ੍ਰਭ ਭਾਨੈ ॥੨॥

ਖਿਨ ਮਹਿ ਅਵਰੁ ਖਿਨੈ ਮਹਿ ਅਵਰਾ ਅਚਰਜ ਚਲਤ ਤੁਮਾਰੇ ॥
ਰੂੜੋ ਗੂੜੋ ਗਹਿਰ ਗੰਭੀਰੋ ਊਚੌ ਅਗਮ ਅਪਾਰੇ ॥੩॥

ਪੰਨਾ ੬੧੪

ਸਾਧਸੰਗਿ ਜਉ ਤੁਮਹਿ ਮਿਲਾਇਓ ਤਉ ਸੁਨੀ ਤੁਮਾਰੀ ਬਾਣੀ ॥
ਅਨਦੁ ਭਇਆ ਪੇਖਤ ਹੀ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਤਾਪ ਪੁਰਖ ਨਿਰਬਾਣੀ ॥੪॥੭॥੧੮॥

पृ-६१३

सोरठि महला ५ घर २

मात गरभ महि आपन सिमरनु दे तह तुम राखनहारे ॥
पावक सागर अथाह लहरि महि तारहु तारनहारे ॥१॥

माधौ तू ठाकुरु सिरि मोरा ॥
इहा ऊहा तुहारो धोरा ॥रहाउ॥

कीते कउ मेरै सँमानै करणहारु त्रिणु जानै ॥
तू दाता मागन कउ सगली दानु देहि प्रभ भानै ॥२॥

खिन महि अवरु खिनै महि अवरा अचरज चलत तुमारे ॥
रूड़ो गूड़ो गहिर गंभीरो ऊचौ अगम अपारे ॥३॥

पृ-६१४

साधसँगि जउ तुमहि मिलाइओ तउ सुनी तुमारी बाणी ॥
अनदु भइआ पेखत ही नानक प्रताप पुरख निरबाणी ॥४॥७॥१८॥

सोरठ महला -५ घर -२

इस शब्द में गुरु जी यह प्रकट करते हैं कि कि ईश्वर द्वारा प्रदत्त रक्षा और अन्य वरदानों के लिए हमें उस पर पूर्ण विश्वास होना चाहिए, तथा हम कैसे उससे प्रार्थना करें कि वह हमारी रक्षा करें एवं हमारे सम्मान को बचायें ।

अति कृतज्ञ भाव से गुरु जी प्रभु से कहते हैं “ओ’ मेरे रक्षक, अपनी भक्ति अथवा ध्यान का दान देकर तुम माता के गर्भ (की अग्नि) से हमारी रक्षा करते हो ।

(अब कृपा करके उसी प्रकार से) हमें अग्नियुक्त संसार रूपी सागर में उठती (इच्छा, पापकर्म एवं दुर्भावनाओं की) अथाह भीषण लहरों पर से तैरा कर पार उतार दो ”।(१)

प्रभु में अपना पूर्ण विश्वास व्यक्त करते हुये गुरु जी कहते हैं “ हे’ माधव, तुम मेरे सिर के स्वामी हो, यहाँ इस लोक में तथा वहाँ परलोक में मुझे तुम्हारा ही सहारा अथवा आधार है ”।(विराम)

यदि कोई व्यक्ति किसी की जरा सी भी सहायता करता है तो उसकी प्रयाप्त मिथ्या प्रशंसा की जाती है, परन्तु, प्रभु जिसने हमारा सृजन करके सब कुछ प्रदान किया, उसकी प्रशंसा उचित रूप से नहीं होती । मानव स्वभाव की इस दुर्बलता अथवा त्रुटि को गुरु जी स्वीकार करते हुये कहते हैं “ओ’ प्रभु, (यह मूर्ख मानव) तेरे द्वारा रची हुयी छोटी सी वस्तु को एक महान पर्वत समान समझता है, परन्तु करने वाले (सृजनकर्ता) को एक तृण के तुल्य जानता है । (पर, वास्तविकता यह है कि) तुम दाता हो, तथा समस्त ब्रह्मांड तुम्हारे समक्ष एक याचक है और तुम अपनी भावना अनुसार सबको दान देते हो ”।(२)

प्रभु द्वारा प्रदान की गयी सुंदरता, बुद्धि एवं उसकी विलक्षणता को स्वीकार कर उसे सराहते हुये गुरु जी कहते हैं “ हे’ प्रभु, तुम सुंदर हो, अद्भुत रूप से गूढ़ हो, गहन गंभीर, अति महान, अप्राप्य एवं अपार हो। एक क्षण में एक रूप, तथा दूसरे क्षण में कुछ दूसरे रूप में होते हो, तुम्हारे खेल आश्चर्य जनक रूप से चकित करने वाले हैं ”।(३)

गुरु जी एक बार फिर प्रभु को उसके द्वारा प्रदान किये गये वरदानों के लिये धन्यवाद देते हुये शब्द के अंत में कहते हैं “हे’ प्रभु, जब तुमने मुझे साधुसंतों (गुरु) की संगति प्रदान की, तब मैंने तुम्हारी दैवी वाणी को सुना और उस इच्छा विहीन, सर्वव्यापी महान प्रभु के प्रताप को देखते ही नानक का मन आनंद विभोर हो गया ”। (४-७-१८)

इस शब्द का संदेश यह है कि प्रभु महान तथा अपार हैं । वह सभी स्थितियों में हमारे सहायक और रक्षक हैं, अतः हमें उन पर पूर्ण रूप से दृढ़ विश्वास होना चाहिये । यदि हम उनकी कृपा दृष्टि चाहते हैं तो हमें सच्चे गुरु की शिक्षा का श्रवण एवं पालन करते हुये प्रभु की महिमा में कीर्तन तथा उसके नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੬੧੫	**पृ-६१५**
ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**सोरठि महला ५॥**
ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਸਰਣਿ ਸਗਲ ਭੈ ਲਾਥੇ ਦੁਖ ਬਿਨਸੇ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥ ਦਇਆਲੁ ਹੋਆ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਸੁਆਮੀ ਪੂਰਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਧਿਆਇਆ ॥੧॥	प्रभ की सरणि सगल भै लाथे दुख बिनसे सुखु पाइआ ॥ दइआलु होआ पारब्रहमु सुआमी पूरा सतिगुरु धिआइआ॥१॥
ਪ੍ਰਭ ਜੀਉ ਤੂ ਮੇਰੋ ਸਾਹਿਬੁ ਦਾਤਾ ॥ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਪ੍ਰਭ ਦੀਨ ਦਇਆਲਾ ਗੁਣ ਗਾਵਉ ਰੰਗਿ ਰਾਤਾ ॥ ਰਹਾਉ ॥	प्रभ जीउ तू मेरो साहिबु दाता ॥ करि किरपा प्रभ दीन दइआला गुण गावउ रँगि राता ॥रहाउ॥
ਸਤਿਗੁਰਿ ਨਾਮੁ ਨਿਧਾਨੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ਚਿੰਤਾ ਸਗਲ ਬਿਨਾਸੀ ॥	सतिगुरि नामु निधानु दृड़ाइआ चिँता सगल बिनासी ॥
ਪੰਨਾ ੬੧੬	**पृ-६१६**
ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਅਪੁਨੋ ਕਰਿ ਲੀਨਾ ਮਨਿ ਵਸਿਆ ਅਬਿਨਾਸੀ ॥੨॥	करि किरपा अपुनो करि लीना मनि वसिआ अबिनासी ॥२॥
ਤਾ ਕਉ ਬਿਘਨੁ ਨ ਕੋਊ ਲਾਗੈ ਜੋ ਸਤਿਗੁਰਿ ਅਪੁਨੈ ਰਾਖੇ ॥ ਚਰਨ ਕਮਲ ਬਸੇ ਰਿਦ ਅੰਤਰਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਹਰਿ ਰਸੁ ਚਾਖੇ ॥੩॥	ता कउ बिघनु न कोऊ लागै जो सतिगुरि अपुनै राखे ॥ चरन कमल बसे रिद अँतरि अँमृत हरि रसु चाखे ॥३॥
ਕਰਿ ਸੇਵਾ ਸੇਵਕ ਪ੍ਰਭ ਅਪੁਨੇ ਜਿਨਿ ਮਨ ਕੀ ਇਛ ਪੁਜਾਈ ॥ ਨਾਨਕ ਦਾਸ ਤਾ ਕੈ ਬਲਿਹਾਰੈ ਜਿਨਿ ਪੂਰਨ ਪੈਜ ਰਖਾਈ ॥੪॥੧੪॥੨੫॥	करि सेवा सेवक प्रभ अपुने जिनि मन की इछ पुजाई ॥ नानक दास ता कै बलिहारै जिनि पूरन पैज रखाई ॥४॥१४॥२५॥

सोरठ महला -५

इस शब्द में गुरु जी हमें यह बताते हैं कि जब भी लोगों ने प्रभु की शरण ली तब उनके दुख संताप कैसे समाप्त हो गये, तथा किस प्रकार के परम सुख उन्हें प्राप्त हुये।गुरु जी अपने व्यक्तिगत अनुभव को व्यक्त करते हुये कहते हैं "प्रभु की शरण में जाने पर मेरे समस्त भय दूर हो गये, दुखों का विनाश हो गया और सुख शांति प्राप्त हो गयी । हाँ, जब मैंने अपने पूर्ण गुरु का ध्यान किया तब सर्वव्यापी स्वामी (प्रभु) मेरे पर दयालु हो गये "।(१)

अब, गुरु जी प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं " हे' मेरे प्रभु जी, तुम मेरे स्वामी हो, मेरे दाता हो । हे' दीन दयाल प्रभु, मेरे पर ऐसी कृपा करो कि मैं तुम्हारे प्रेम के रंग में रंगा तुम्हारे गुण सदा गाता रहूँ " ।(विराम)

गुरु की शरण में जाने के पश्चात क्या हुया, इसे व्यक्त करते हुये गुरु जी कहते हैं " (शरण में जाने के पश्चात) सच्चे गुरु ने मेरे मन में प्रभु नाम के भंडार को आसीन कर दिया और मेरी समस्त चिंताओं का विनाश हो गया । उस प्रभु की कृपा ने मुझे अपना (भक्त) बना लिया और वह अविनाशी मेरे मन में आकर बसने लग गया "।(२)

इसलिये अपने व्यक्तिगत तथा गुरु की शरण में गये अन्य लोगों के अनुभव के आधार पर गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो, जिसे भी) सच्चे गुरु अपना बना कर रखते हैं उसके जीवन में किसी प्रकार के विघ्न नहीं आते । यदि किसी के हृदय में (प्रभु के) चरण कमलों का वास हो गया है, तब वह मनुष्य हरि नाम रूपी अँमित रस का स्वाद चखता है "।(३)

अत:, गुरु जी परामर्श देते हुये कहते हैं " ओ' प्रभु के सेवक, अपने उस प्रभु की सेवा करो जिसने तुम्हारे मन की इच्छा को परिपूर्ण किया। सेवक नानक उस (प्रभु) पर बलिहारी है, जिसने उसकी मान मर्यादा की पूर्ण रूप से रक्षा की "।(४-१४-२५)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने मन के अंदर से सब प्रकार के भय, भ्रम, कष्ट अथवा दुख दर्द से मुक्ति पाना चाहते हैं तो हमें सच्चे गुरु की शरण में जाकर प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये, जिसके परिणाम स्वरूप प्रभु हमारे हृदय में वास करने लगेंगे और हम परम आनंद का अनुभव करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੧੭

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਅਬਿਨਾਸੀ ਜੀਅਨ ਕੋ ਦਾਤਾ ਸਿਮਰਤ ਸਭ ਮਲੁ ਖੋਈ ॥
ਗੁਣ ਨਿਧਾਨ ਭਗਤਨ ਕਉ ਬਰਤਨਿ ਬਿਰਲਾ ਪਾਵੈ ਕੋਈ ॥੧॥

ਮੇਰੇ ਮਨ ਜਪਿ ਗੁਰ ਗੋਪਾਲ ਪ੍ਰਭੁ ਸੋਈ ॥
ਜਾ ਕੀ ਸਰਣਿ ਪਇਆਂ ਸੁਖੁ ਪਾਈਐ ਬਾਹੁੜਿ ਦੂਖੁ ਨ ਹੋਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥
ਵਡਭਾਗੀ ਸਾਧਸੰਗੁ ਪਰਾਪਤਿ ਤਿਨ ਭੇਟਤ ਦੁਰਮਤਿ ਖੋਈ ॥

ਪੰਨਾ ੬੧੮

ਤਿਨ ਕੀ ਧੂਰਿ ਨਾਨਕੁ ਦਾਸੁ ਬਾਛੈ ਜਿਨ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਰਿਦੈ ਪਰੋਈ ॥੨॥੫॥੩੩॥

पृ-६१७

सोरठि महला ५॥

अबिनासी जीअन को दाता सिमरत सभ मलु खोई ॥
गुण निधान भगतन कउ बरतनि बिरला पावै कोई ॥१॥

मेरे मन जपि गुर गोपाल प्रभु सोई ॥
जा की सरणि पइआं सुखु पाइऐ बाहुड़ि दूखु न होई ॥१॥रहाउ॥

वडभागी साधसँगु परापति तिन भेटत दुरमति खोई ॥

पृ-६१८

तिन की धूरि नानक दासु बाछै जिन हरि नामु रिदै परोई ॥२॥ ५॥३३॥

सोरठ महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि प्रभु का ध्यान करते रहने से उन्हें तथा अन्य सभी को किस प्रकार के वरदान प्राप्त हुए और हमें वह किस प्रकार के सुझाव दे रहे हैं ।

वह कहते हैं “(हे’ मेरे मित्रो) वह अविनाशी प्रभु सबका जीवन दाता है, उसे स्मरण करने से मन की समस्त मैल (दुष्ट विचार) समाप्त हो जाती है ।

वह प्रभु गुणों का भंडार है जिसकी आवश्यकता उसके भक्तजनों को सदा रहती है, परन्तु कोई बिरला ही उसे प्राप्त कर पाता है ”।(१)

अत: स्वयं को (परोक्ष में हमें भी) गुरु जी कहते हैं “ ओ’ मेरे मन, उसी गुरु गोपाल अथवा प्रभु को जपो, जिसकी शरण में जाकर हमें सुख शांति प्राप्त होती है और फिर कोई दुख दर्द नहीं होता “।(१-विराम)

शब्द के अंत में गुरु जी कहते हैं “ (हे’ मेरे मित्रो), केवल अपने अहोभाग्य के द्वारा ही किसी को साधु संतों की संगति प्राप्त होती है और ऐसी सँगति मिलने के पश्चात दुर्मति दूर होती है अत:, नानक को उनकी चरण धूलि वांछित है जिनके हृदय में हरि का नाम पिरोया हुआ है ”। (२-५-३३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने मन में से दुर्भावनायों को मिटाना चाहते हैं और सदा के लिये अपने कष्टों का निवारण माँगते हैं तो साधु संतों की संगति में रह कर हमें प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੬੧੯

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਹਮਰੀ ਗਣਤ ਨ ਗਣੀਆ ਕਾਈ ਅਪਣਾ ਬਿਰਦੁ ਪਛਾਣਿ ॥
ਹਾਥ ਦੇਇ ਰਾਖੇ ਕਰਿ ਅਪੁਨੇ ਸਦਾ ਸਦਾ ਰੰਗੁ ਮਾਣਿ ॥੧॥

ਸਾਚਾ ਸਾਹਿਬੁ ਸਦ ਮਿਹਰਵਾਣ ॥
ਬੰਧੁ ਪਾਇਆ ਮੇਰੈ ਸਤਿਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਹੋਈ ਸਰਬ ਕਲਿਆਣ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜੀਉ ਪਾਇ ਪਿੰਡੁ ਜਿਨਿ ਸਾਜਿਆ ਦਿਤਾ ਪੈਨਣੁ ਖਾਣੁ ॥
ਅਪਣੇ ਦਾਸ ਕੀ ਆਪਿ ਪੈਜ ਰਾਖੀ ਨਾਨਕ ਸਦ ਕੁਰਬਾਣੁ ॥੨॥੧੬॥੪੪॥

पृ-६१९

सोरठि महला ५॥

हमरी गणत न गणीआ काई अपणा बिरदु पछाणि ॥
हाथ देइ राखे करि अपुने सदा सदा रँगु माणि ॥१॥

साचा साहिबु सद मिहरवाण ॥
बँधु पाइआ मेरै सतिगुरि पूरै होई सरब कलिआण ॥रहाउ॥

जीउ पाइ पिँडु जिनि साजिआ दिता पैनणु खाणु ॥
अपणे दास की आपि पैज राखी नानक सद कुरबाणु
॥२॥१६॥४४॥

सोरठ महला – ५

यह शब्द पंचम गुरु श्री गुरु अर्जन देव जी द्वारा क्रमानुसार लिखे गये पाँच शब्दों में से एक है। इन शब्दों का उच्चारण उन्होंने प्रभु की प्रशंसा में उस समय किया था जब उनके पुत्र एक गंभीर रोग के संताप से मुक्त हुये थे। इसके अतिरिक्त, वह एक और विचार स्पष्ट करना चाहते हैं कि हमें अपने किसी प्रयास के लिये, जैसे कि कोई शास्त्रीय विधि एवं कर्म कांड आदि करने पर मन में अभिमान की भावना से ग्रस्त हो कर प्रभु से किसी प्रतिफल की आशा नहीं करनी चाहिए अपितु, हमें यह सोचना चाहिये कि जब भी प्रभु हमारी प्रार्थना को सुनते हैं, अथवा हमारे कष्टों का निवारण करते हैं तो वह केवल अपने दयालु स्वभाव के कारण करते हैं, उस समय वह हमारे गुण अथवा दोष नहीं देखते। अत:, हमें सदैव उनके प्रति विनम्र एवं आभारी रह कर यह विश्वास रखना चाहिये कि प्रभु की कृपा तथा दयालुता करने की अपनी ही परम्परा है और वह सदैव अपने भक्तजनों तथा प्रेमियों की रक्षा करते हैं।

इसी भावना के साथ गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु ने मेरे कोई गुणों अथवा दोषों को नहीं गिना, केवल अपनी स्वयं की परम्परा के अंतर्गत उसने अपना कृपाहस्त हम सब पर रख कर अपने लोगों की रक्षा की, जिसके कारण मैंने सदैव उसके प्रेम का आनंद उठाया है"।(१)

प्रभु ने उनके ऊपर कितनी महान कृपा की, इसका वर्णन गुरु जी करते हुये कहते हैं "सच्चा प्रभु मेरे पर सदा दयालु है। मेरे सच्चे गुरु ने (मेरे सभी कष्टों, एंव मेरे पुत्र की व्यथा को) बाँध (रोक) दिया और अब चारों ओर पूर्ण कल्याण एवं आनंद है"।(विराम)

गुरु जी शब्द के अंत में प्रभु के प्रति आभार प्रकट करते हुये कहते हैं "(मैं) नानक, सदा ही (उस प्रभु पर) बलिहारी हूँ जिसने मेरे इस शरीर को सृजित किया, सँवारा, एंव उसमें जीवात्मा स्थापित की, खाने पहनने के लिये भोजन तथा वस्त्र दिये और अपने सेवक की मान मर्यादा की स्वयं रक्षा की"। (२-१६-४४)

इस शब्द का संदेश यह है कि जब भी हम किसी संकट में होते हैं और प्रभु से सहायता एवं रक्षा चाहते हैं तो हमें उसके पास जाकर यह नहीं कहना चाहिये कि ओ' प्रभु, मैंने तुम्हारी इतनी पूजा तथा ध्यान किया, इसलिये तुम मेरे मन वांछित कार्य पूर्ण करो, अपितु, पूर्ण विनम्रता के साथ हमें कहना चाहिये कि हे' प्रभु, मेरे दोषों तथा त्रुटियों की गणना मत करना और अपने सेवकों अथवा भक्तों की रक्षा अपनी परम्परा एवं कृपा के अनुसार करते हुये मेरे इस संकट का भी विमोचन करो।

ਪੰਨਾ ੬੨੧

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰੀ ॥
ਪ੍ਰਭਿ ਪੂਰੀ ਲੋਚ ਹਮਾਰੀ ॥
ਕਰਿ ਇਸਨਾਨੁ ਗ੍ਰਿਹਿ ਆਏ ॥
ਅਨਦ ਮੰਗਲ ਸੁਖ ਪਾਏ ॥੧॥

ਸੰਤਹੁ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਨਿਸਤਰੀਐ ॥
ਊਠਤ ਬੈਠਤ ਹਰਿ ਹਰਿ ਧਿਆਈਐਅਨਦਿਨੁ ਸੁਕ੍ਰਿਤੁ ਕਰੀਐ ॥੧॥
ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੬੨੨

ਸੰਤ ਕਾ ਮਾਰਗੁ ਧਰਮ ਕੀ ਪਉੜੀ ਕੋ ਵਡਭਾਗੀ ਪਾਏ ॥
ਕੋਟਿ ਜਨਮ ਕੇ ਕਿਲਬਿਖ ਨਾਸੇ ਹਰਿ ਚਰਣੀ ਚਿਤੁ ਲਾਏ ॥੨॥

ਉਸਤਤਿ ਕਰਹੁ ਸਦਾ ਪ੍ਰਭ ਅਪਨੇ ਜਿਨਿ ਪੂਰੀ ਕਲ ਰਾਖੀ ॥
ਜੀਅ ਜੰਤ ਸਭਿ ਭਏ ਪਵਿਤ੍ਰਾ ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਸਚੁ ਸਾਖੀ ॥੩॥

ਬਿਘਨ ਬਿਨਾਸਨ ਸਭਿ ਦੁਖ ਨਾਸਨ ਸਤਿਗੁਰਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ॥
ਖੋਏ ਪਾਪ ਭਏ ਸਭਿ ਪਾਵਨ ਜਨ ਨਾਨਕ ਸੁਖਿ ਘਰਿ ਆਇਆ ॥
੪॥੩॥੫੩॥

पृ-६२१

सोरठि महला ५॥

गुरि पूरै किरपा धारी ॥
प्रभि पूरी लोच हमारी ॥
करि इसनानु ग्रिहि आए ॥
अनद मँगल सुख पाए ॥१॥

सँतहु राम नामि निसतरीऐ ॥
ऊठत बैठत हरि हरि धिआइऐ अनदिनु सुकिृतु करीऐ ॥१॥रहाउ ॥

पृ-६२२

सँत का मारगु धरम की पउड़ी को वडभागी पाए ॥
कोटि जनम के किलबिख नासे हरि चरणी चितु लाए ॥२॥

उसतति करहु सदा प्रभ अपने जिनि पूरी कल राखी ॥
जीअ जँत सभि भए पवित्रा सतिगुर की सचु साखी ॥३॥

बिघन बिनासन सभि दुख नासन सतिगुरि नामु दृिड़ाइआ ॥
खोए पाप भए सभि पावन जन नानक सुखि घरि आइआ
॥४॥३॥५३॥

सोरठ महला – ५

इस शब्द में गुरु जी अपने गुरु की कृपा से प्राप्त शांति एवं सहजता रूपी आशीर्वाद का वर्णन कर रहे हैं जिससे उनके सभी दुख दर्द दूर हो गये और उन्होंने प्रभु नाम का ध्यान किया । अपना अनुभव बताते हुये वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), पूर्ण गुरु ने मेरे पर कृपा की और उस प्रभु ने मेरी (प्रभु नाम के ध्यान की) इच्छा पूरी की । (और अब मुझे प्रतीत हो रहा है कि जैसे) मैं स्नान करके (अर्थात हृदय से पवित्र होकर) अपने घर वापिस आ गया हूँ (अथवा प्रभु को स्वयं में पा लिया है) और अब सब प्रकार से आनन्द, मंगल तथा सुख प्राप्त हो गया है "।(१)

अतः अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर गुरु जी स्नेह भाव से एक प्रस्ताव देते हुए कहते हैं " ओ' मेरे प्रिय संत जनों, राम के नाम से ही हमारा उद्धार होता है, इस लिये (प्रत्येक दशा में) उठते बैठते हरि के नाम का ध्यान करें और दिन रात शुभ कर्म करें (तथा प्रभु को धन्यवाद दें)"।(१-विराम)

किन्तु, गुरु जी का मानना है "संतों के मार्ग पर (जो नित्य प्रति सत्य, निष्कप्ट एवं विनम्र भावनाओं के साथ सादगी और पवित्रता पर आधारित होता है) चल कर, धर्म की सीढ़ी पर चढ़ने वाले कोई सौभाग्यशाली ही होते हैं। उनके करोड़ों जन्मों के कष्टों अथवा पापों का नाश हो जाता है और वह अपना मन हरि के चरणों में लगा लेते हैं "।(२)

इसलिये, गुरु जी हमें सुमति देते हुये कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), अपने प्रभु की सदा प्रशंसा करो, जिसने अपनी पूर्ण शक्ति का प्रदर्शन किया है, (इस प्रकार से) समस्त जीव जंतु पवित्र हुये हैं और यही सच्चे गुरु का सच्चा अथवा अनंत आश्वासन है "।(३)

शब्द के अंत में, गुरु जी स्वयं के अनुभव का वर्णन करते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), सच्चे गुरु ने विघ्न विनाशी अथवा समस्त दुखों का नाश करने वाले प्रभु का नाम मेरे हृदय में दृढ़ कर दिया है । अत: मेरे सारे पाप लुप्त हो गये हैं, सब कोई पवित्र हो गया है और सेवक नानक के घर (हृदय) में सुख शांति आ गयी है "।(४-३-५३)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें गुरु से मार्ग दर्शन लेते हुये प्रभु के नाम का ध्यान करना चाहिये, तभी हमारी समस्त दुष्प्रवृत्तियाँ एवं पाप धुल पायेंगे । हम निर्मल अथवा पवित्र होंगे और स्थाई रूप से शांति, सहजभाव और परम आनंद की दशा का अनुभव करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੨੩	पृ-६२३
ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**सोरठि महला ५॥**
ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਚਰਨੀ ਲਾਇਆ ॥ ਹਰਿ ਸੰਗਿ ਸਹਾਈ ਪਾਇਆ ॥ ਜਹ ਜਾਈਐ ਤਹਾ ਸੁਹੇਲੇ ॥ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਪ੍ਰਭਿ ਮੇਲੇ ॥੧॥	गुरि पूरै चरनी लाइआ ॥ हरि सँगि सहाई पाइआ ॥ जह जाईऐ तहा सुहेले ॥ करि किरपा प्रभि मेले ॥१॥
ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵਹੁ ਸਦਾ ਸੁਭਾਈ ॥ ਮਨ ਚਿੰਦੇ ਸਗਲੇ ਫਲ ਪਾਵਹੁ ਜੀਅ ਕੈ ਸੰਗਿ ਸਹਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ॥	हरि गुण गावहु सदा सुभाई ॥ मन चिँदे सगले फल पावहु जीअ कै सँगि सहाई ॥१॥रहाउ॥
ਨਾਰਾਇਣ ਪ੍ਰਾਣ ਅਧਾਰਾ ॥ ਹਮ ਸੰਤ ਜਨਾਂ ਰੇਨਾਰਾ ॥ ਪਤਿਤ ਪੁਨੀਤ ਕਰਿ ਲੀਨੇ ॥ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਹਰਿ ਜਸੁ ਦੀਨੇ ॥੨॥	नाराइण प्राण अधारा ॥ हम सँत जनां रेनारा ॥ पतित पुनीत कर लीने ॥ करि किरपा हरि जसु दीने ॥२॥
ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਕਰੇ ਪ੍ਰਤਿਪਾਲਾ ॥ ਸਦ ਜੀਅ ਸੰਗਿ ਰਖਵਾਲਾ ॥ ਹਰਿ ਦਿਨੁ ਰੈਨਿ ਕੀਰਤਨੁ ਗਾਈਐ ॥ ਬਹੁੜਿ ਨ ਜੋਨੀ ਪਾਈਐ ॥੩॥	पारब्रहमु करे प्रतिपाला ॥ सद जीअ सँगि रखवाला ॥ हरि दिनु रैनि कीरतनु गाईऐ ॥ बहुड़ि न जोनी पाईऐ ॥३॥
ਜਿਸੁ ਦੇਵੈ ਪੁਰਖੁ ਬਿਧਾਤਾ ॥ ਹਰਿ ਰਸੁ ਤਿਨ ਹੀ ਜਾਤਾ ॥ ਜਮਕੰਕਰੁ ਨੇੜਿ ਨ ਆਇਆ ॥ ਸੁਖੁ ਨਾਨਕ ਸਰਣੀ ਪਾਇਆ ॥੪॥੯॥੫੯॥	जिसु देवै पुरखु बिधाता ॥ हरि रसु तिन ही जाता ॥ जमकँकरु नेड़ि न आइआ ॥ सुखु नानक सरणी पाइआ ॥४॥९॥५९॥

सोरठ महला – ५

गुरु जी इस शब्द में अपने गुरु की सेवा अथवा भक्ति के फलस्वरूप प्राप्त हुये आशीर्वादों का वर्णन करते हैं ।

वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), पूर्ण गुरु ने मुझे अपने चरण कमलों से लगा लिया है, (इस विनम्र सेवा के फलस्वरूप) मैंने प्रभु को हर स्थान पर अपने सहायक के रूप में पाया है । प्रभु ने अपनी कृपा से मुझे अपने साथ रखा है और अब मैं जहाँ भी जाता हूँ वहीं प्रसन्न रहता हूँ "।(१)

इसलिये गुरु जी सुझाव देते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), सदा पूर्ण भक्ति भावना के साथ प्रभु के गुण गाओ (ऐसा करने से) तुम अपने मन वाँछित फल पायोगे और प्रभु तुम्हारे जीवन में सदा सहायक रहेंगे "। (१-विराम)

स्वयं के अनुभव एवं मन के विचार को विस्तृत करते हुये गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), नारायण मेरे प्राणों के आधार हैं ।(प्रतीत करता हूँ कि) मैं संतजनों के चरणों की धूल के समान हूँ ।(संतों ने) कृपा करके अनेक पापी तथा पतित लोगों को हरि नाम का यश प्रदान करके उन्हें पवित्र बना दिया है "।(२)

गुरु जी फिर स्वयं के अनुभव के आधार पर परामर्श देते हैं "(ओ मेरे मित्रो), सर्वव्यापी प्रभु सदा हमारी पालना करता है । हमारे साथ रह कर सदा जीवात्मा की रक्षा करता है । (इसलिये) हमें दिन और रात उसके गुणों का कीर्तन करना चाहिये, (ऐसा करने से) हमें बारम्बार अनेक जन्मों में नहीं आना पड़ेगा "।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी यह स्पष्ट करते हैं कि प्रभु नाम का वरदान कितना मधुर है । वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), हरि नाम रूपी मधुर रस का स्वाद वही जान सकता है जिसे हमारा भाग्य विधाता ऐसा वरदान प्रदान करता है । संक्षेप में, नानक कहते हैं कि जब कोई हरि की शरण में आकर सुख प्राप्त कर लेता है तो यमराज की मार का भय उसके निकट नहीं आता "।(४-९-५९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें हरि नाम का ध्यान और उसकी महिमा का गुणगान कीर्तन पूर्ण प्रेम एवं श्रद्धा से करते रहना चाहिये। इस प्रकार वह प्रभु सदा हमारे साथ रहेंगे तथा हमारे मन की समस्त इच्छायें परिपूर्ण करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੨੫

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਜਿਤੁ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਚਿਤਿ ਆਇਆ ॥
ਸੋ ਘਰੁ ਦਯਿ ਵਸਾਇਆ॥

ਪੰਨਾ ੬੨੬

ਸੁਖ ਸਾਗਰੁ ਗੁਰੁ ਪਾਇਆ ॥
ਤਾ ਸਹਸਾ ਸਗਲ ਮਿਟਾਇਆ ॥੧॥

ਹਰਿ ਕੇ ਨਾਮ ਕੀ ਵਡਿਆਈ ॥
ਆਠ ਪਹਰ ਗੁਣ ਗਾਈ ॥
ਗੁਰ ਪੂਰੇ ਤੇ ਪਾਈ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਅਕਥ ਕਹਾਣੀ ॥
ਜਨ ਬੋਲਹਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਬਾਣੀ ॥
ਨਾਨਕ ਦਾਸ ਵਖਾਣੀ ॥
ਗੁਰ ਪੂਰੇ ਤੇ ਜਾਣੀ ॥੨॥੨॥੬੬॥

पृ-६२५

सोरठि महला ५॥

जितु पारब्रहमु चिति आइआ ॥
सो घरु दयि वसाइआ ॥

पृ-६२६

सुख सागरु गुरु पाइआ ॥
ता सहसा सगल मिटाइआ ॥१॥

हरि के नाम की वडिआई ॥
आठ पहर गुण गाई ॥
गुर पूरे ते पाई ॥रहाउ॥

प्रभ की अकथ कहाणी ॥
जन बोलहि अँमृत बाणी ॥
नानक दास वखाणी ॥
गुर पूरे ते जाणी ॥२॥२॥६६॥

सोरठ महला – ५

यहाँ इस शब्द में गुरु जी प्रभु नाम की महिमा का बखान करते हैं, हम उसे कैसे प्राप्त करते हैं और जब प्रभु हमारे हृदय में आ बिराजते हैं, अथवा, हम नाम के ध्यान में लीन रहते हैं तब क्या होता है ।

वह कहते हैं “ (ओ' मेरे मित्रो), जब पारब्रहम हृदय में आते हैं तो वह घर (अथवा, हृदय में प्रसन्नता एवं गुणों को) बसा देते हैं ।जब किसी को गुरु की संगति प्राप्त होती है तो सुखों का सागर मिल जाता है और (गुरु के द्वारा) सभी प्रकार के भय (मनुष्य के मन में से) मिट जाते हैं” ।(१)

अत: गुरु जी प्रकट करते हैं “(ओ' मेरे मित्रो), उपरोक्त कथन में हरि के नाम की महिमा है और यह तथ्य मुझे पूर्ण गुरु ने समझाया है इसलिये मैं आठों पहर प्रभु के ही गुण गाता हूँ ”।(विराम)

अंत में गुरु जी कहते हैं “(ओ' मेरे मित्रो), प्रभु की कथा अकथनीय है, उसके भक्तजन (उसकी प्रशंसा में) अँमित रूपी गुरबाणी का उच्चारण करते रहते हैं । दास नानक कहते हैं कि उन्होंने पूर्ण गुरु के द्वारा इस तथ्य को समझा और जाना है ”।(२-२-६६)

इस शब्द का संदेश है कि हम अपने गुरु के निर्देश के अनुसार प्रभु का ध्यान करते रहें तथा दिन रात उसकी महिमा का गायन करें, जिससे प्रभु कृपा करके हमारे हृदय में आ बसें, तब हमारे समस्त भय दूर होंगे और हम पूर्ण आनंद में रहेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੨੭

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਪਰਮੇਸਰਿ ਦਿਤਾ ਬੰਨਾ ॥
ਦੁਖ ਰੋਗ ਕਾ ਡੇਰਾ ਭੰਨਾ ॥
ਅਨਦ ਕਰਹਿ ਨਰ ਨਾਰੀ ॥
ਹਰਿਹਰਿ ਪ੍ਰਭਿ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰੀ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੬੨੮

ਸੰਤਹੁ ਸੁਖੁ ਹੋਆ ਸਭ ਥਾਈ ॥
ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਪੂਰਨ ਪਰਮੇਸਰੁ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸਭਨੀ ਜਾਈ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਧੁਰ ਕੀ ਬਾਣੀ ਆਈ ॥
ਤਿਨਿ ਸਗਲੀ ਚਿੰਤ ਮਿਟਾਈ ॥
ਦਇਆਲ ਪੁਰਖ ਮਿਹਰਵਾਨਾ ॥
ਹਰਿ ਨਾਨਕ ਸਾਚੁ ਵਖਾਨਾ ॥੨॥੧੩॥੭੭॥

पृ-६२७

सोरठि महला ५॥

परमेसरि दिता बँना ॥
दुख रोग का डेरा भँना ॥
अनद करहि नर नारी ॥
हरिहरि प्रभि किरपा धारी ॥१॥

पृ-६२८

सँतहु सुखु होआ सभ थाई ॥
पारब्रहमु पूरन परमेसरु रवि रहिआ सभनी जाई ॥रहाउ॥

धुर की बाणी आई ॥
तिनि सगली चिँत मिटाई ॥
दइआल पुरख मिहरवाना ॥
हरि नानक साचु वखाना ॥२॥१३॥७७॥

सोरठ महला – ५

इस शब्द में गुरु जी प्रभु को अपना धन्यवाद देते हैं और हमसे यह भी साझा करते हैं कि कैसे ईश्वर ने पूर्ण रूप से उनके समस्त दुख एवं कष्ट मिटा दिये हैं, तथा कैसे दैवी वाणी से उनकी सारी चिंतायें दूर होगयी हैं ।

गुरु जी कहते हैं “(ओ’ मेरे मित्रो), उस परमेश्वर ने कुछ ऐसी रोक लगायी है कि मेरे समस्त दुख एवं रोगों का डेरा (आश्रय स्थान) ध्वस्त हो गया है । हरि ने कुछ ऐसी कृपा बनाये रखी है कि सभी नर नारी आनंदमंगल में हैं ”।(१)

इसलिये, गुरु जी हमें अति मित्रतापूर्ण मधुर भावना के साथ कहते हैं “ओ मेरे प्रिय संतों, चारों ओर सुख एवं आनंद है, (और मैं यह देख पा रहा हूँ, कि) पारब्रहम पूर्ण परमेश्वर सभी स्थानों पर रमे हुये हैं ”।(विराम)

शब्द का अँत गुरु जी उन पंक्तियों से करते हैं जो अति प्रसिद्ध हैं तथा बहुधा दोहराई जाती हैं और हमारी ऐसी आस्था को प्रकट करती हैं कि गुरु ग्रंथ साहिब में गुरु जनों के द्वारा दिए गए यह शब्द अथवा भजन वास्तविक रूप में दैवी हैं । गुरु जी कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो, मेरे मन में) प्रभु की ऐसी दिव्य वाणी आई है जिसने मेरे मन की समस्त चिँतायों को मिटा दिया है । नानक सत्य ही कह रहे हैं कि दयालु महापुरुष (प्रभु) मेरे ऊपर अति कृपालु हैं ”।(२-१३-७७)

इस शब्द का संदेश है कि गुरु ग्रंथ साहिब में निहित दैवी वाणी स्वयं प्रभु के द्वारा दिये गये शब्द हैं । यदि हम अपने मन में इस वाणी का संदेश बसा कर इसका अनुसरण जीवन में करेंगे तो हमारे दुख दर्द तथा चिंतायें दूर होंगी और हम प्रभु की अनंत आनंदमयी संगति में रह कर प्रसन्नता के भागी बने रहेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੨੯

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਆਗੈ ਸੁਖੁ ਮੇਰੇ ਮੀਤਾ ॥
ਪਾਛੇ ਆਨਦੁ ਪ੍ਰਭਿ ਕੀਤਾ ॥
ਪਰਮੇਸੁਰਿ ਬਣਤ ਬਣਾਈ ॥
ਫਿਰਿ ਡੋਲਤ ਕਤਹੂ ਨਾਹੀ ॥੧॥

ਸਾਚੇ ਸਾਹਿਬ ਸਿਉ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ॥
ਹਰਿ ਸਰਬ ਨਿਰੰਤਰਿ ਜਾਨਿਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੬੩੦

ਸਭ ਜੀਅ ਤੇਰੇ ਦਇਆਲਾ ॥
ਅਪਨੇ ਭਗਤ ਕਰਹਿ ਪ੍ਰਤਿਪਾਲਾ ॥
ਅਚਰਜੁ ਤੇਰੀ ਵਡਿਆਈ ॥
ਨਿਤ ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਧਿਆਈ ॥੨॥੨੩॥੮੭॥

पृ-६२९

सोरठि महला ५॥

आगे सुखु मेरे मीता ॥
पाछे आनदु प्रभि कीता ॥
परमेसुरि बणत बणाई ॥
फिरि डोलत कतहू नाही ॥१॥

साचे साहिब सिउ मनु मानिआ ॥
हरि सरब निरँतरि जानिआ ॥१॥रहाउ॥

पृ-६३०

सभ जीअ तेरे दइआला ॥
अपने भगत करहि प्रतिपाला ॥
अचरजु तेरी वडिआई ॥
नित नानक नामु धिआई ॥२॥२३॥८७॥

सोरठ महला – ५

इस शब्द में गुरु जी प्रभु से पूर्व प्राप्त अपने वरदानों को हमसे साझा करते हैं तथा भविष्य में वह प्रभु नाम के ध्यान के फलस्वरूप और क्या पाने की आशा रखते हैं।

वह कहते हैं “ओ' मेरे मित्रो, प्रभु ने पहले भी अति आनंदित रखा और भविष्य में भी वह मुझे सुख देगा। उस परमेश्वर ने कुछ ऐसा प्रबंध किया है कि मेरा मन अब कभी भी अस्थिर दशा में नहीं जाता ”।(१)

कैसे यह सब घटित हुया, इस पर गुरु जी संक्षेप में कहते हैं “ (ओ' मेरे मित्रो जब), मेरे मन ने सच्चे स्वामी को मान लिया (कि वह शक्तिशाली तथा दयालु हैं), तो मैंने जाना कि वह हरि समस्त (स्थानों तथा सभी जीवों) में निरंतर व्याप्त हैं ”।(१- विराम)

गुरु जी शब्द के अंत में कहते हैं “हे' मेरे दयालु प्रभु, समस्त जीव तेरे ही हैं, तुम अपने भक्त जनों की रक्षा एवं पालना करते हो। तेरी महिमा आश्चर्यचकित करती है, अतएव, नानक नित्य ही तेरा नाम ध्याते हैं ”। (२-२३- ८७)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम दयालु ईश्वर से अपनी रक्षा तथा आनंदित जीवन के लिए कामना करते हैं तो हमें नित्यप्रति उसके नाम का ध्यान करना चाहिये।

ਪੰਨਾ ੬੩੧	**पृ-६३१**
ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੯ ॥	**सोरठि महला ९॥**
ਮਨ ਰੇ ਕਉਨੁ ਕੁਮਤਿ ਤੈ ਲੀਨੀ ॥ ਪਰ ਦਾਰਾ ਨਿੰਦਿਆ ਰਸ ਰਚਿਓ ਰਾਮ ਭਗਤਿ ਨਹਿ ਕੀਨੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मन रे कउनु कुमति तै लीनी ॥ पर दारा निंदिआ रस रचिओ राम भगति नहि कीनी ॥१॥रहाउ॥
ਮੁਕਤਿ ਪੰਥੁ ਜਾਨਿਓ ਤੈ ਨਾਹਨਿ ਧਨ ਜੋਰਨ ਕਉ ਧਾਇਆ ॥	मुकति पँथु जानिओ तै नाहनि धन जोरन कउ धाइआ ॥
ਪੰਨਾ ੬੩੨	**पृ-६३२**
ਅੰਤਿ ਸੰਗ ਕਾਹੂ ਨਹੀ ਦੀਨਾ ਬਿਰਥਾ ਆਪੁ ਬੰਧਾਇਆ ॥੧॥	अँति सँग काहू नही दीना बिरथा आपु बँधाइआ ॥१॥
ਨਾ ਹਰਿ ਭਜਿਓ ਨ ਗੁਰ ਜਨੁ ਸੇਵਿਓ ਨਹ ਉਪਜਿਓ ਕਛੁ ਗਿਆਨਾ ॥ ਘਟ ਹੀ ਮਾਹਿ ਨਿਰੰਜਨੁ ਤੇਰੈ ਤੈ ਖੋਜਤ ਉਦਿਆਨਾ ॥੨॥	ना हरि भजिओ न गुर जनु सेविओ नह उपजिओ कछु गिआना ॥ घट ही माहि निरँजनु तेरै तै खोजत उदिआना ॥२॥
ਬਹੁਤੁ ਜਨਮ ਭਰਮਤ ਤੈ ਹਾਰਿਓ ਅਸਥਿਰ ਮਤਿ ਨਹੀ ਪਾਈ ॥ ਮਾਨਸ ਦੇਹ ਪਾਇ ਪਦ ਹਰਿ ਭਜੁ ਨਾਨਕ ਬਾਤ ਬਤਾਈ ॥੩॥੩॥	बहुतु जनम भरमत तै हारिओ असथिर मति नही पाई ॥ मानस देह पाइ पद हरि भजु नानक बात बताई ॥३॥३॥

सोरठ महला – ९

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि सामान्यतः अपने जीवन को सार्थक करने के लिये प्रभु नाम में ध्यान लगाने की अपेक्षा, हम इसे सांसारिक धन सम्पदा तथा सामर्थ्य पाने और दूसरों की निंदा अथवा बुराई करने में ही व्यर्थ कर देते हैं, और कुछ नहीं तो अपनी आकांक्षायों तथा अन्य आकर्षणों में ही व्यस्त रहते हैं । इस शब्द में गुरु जी स्वयं को हमारी स्थिति में रख कर हमें यह दर्शाते हैं कि कैसे हम अपने मन को समझा कर उसे सही मार्ग पर रहने के लिए नियंत्रित रखें ।

गुरु जी मन को सम्बोधित करते हुये कहते हैं "ओ' मेरे मन, तुमने कहाँ से यह कुमति पायी है कि पराई स्त्रियों (अथवा पुरुषों के सहवास) या दूसरों की निंदा रूपी रसास्वादन में व्यस्त रहते हो और राम की भक्ति नहीं करते "।(१- विराम)

ऐसे कुकर्मों के परिणामों के विषय पर गुरु जी स्वयं (अप्रत्यक्ष रूप से, हम) को सावधान करते हुये कहते हैं "(ओ' मेरे मन, अभी तक) तुमने मुक्ति के मार्ग को समझने का प्रयत्न नहीं किया अपितु तुम धन संचय करने के लिये ही दौड़ते रहे । (परन्तु स्मरण रहे कि) अंत में (तुम समझ पायोगे कि) यह सब (संचित धन सम्पदा) कुछ भी साथ नहीं देगा और तुम व्यर्थ ही में (इस मायाजाल एवं सामर्थ्य के) बँधनों में बँधे रहे "।(१)

जो लोग भ्रांतियों से घिरे स्वयं को सांसारिक मोहमाया से मुक्त कराने के लिये पर्वतों अथवा जंगलों में चले जाते हैं उन पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), ना तो आपने हरि का भजन किया ना गुरु जनों की सेवा की और ना ही दैवी ज्ञान पाने के लिए मन में कुछ विचार किया ।वह पवित्र प्रभु तो तेरे घट (हृदय) के अंदर ही हैं पर तुम उसे उद्यानों अथवा जंगलों में खोजते फिर रहे हो "।(२)

गुरु जी शब्द के अंत में कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), अनेक जन्मों में भ्रमण करने के कारण तुम थक हार चुके हो पर तुम्हारे अस्थिर मन ने यह मति नहीं पायी (कि जन्म मरण के फेरों से कैसे मुक्ति पायी जाय) । नानक को (गुरु ने) यह बात बताई है कि (हे' नाशवान प्राणी) मनुष्य देह का पद पाने के पश्चात तुम हरि के नाम का ध्यान करो (कम से कम इस मानव जीवन में तुम इस ध्येय को पूर्ण करने में सक्षम हो, सम्भवतः इसी कारण तुम संसार में आये हो) "।(३-३)

इस शब्द का संदेश है कि हम अपना बहुमूल्य मानव जीवन इन सांसारिक मिथ्या कर्मों में जैसे, दूसरों की निंदा, झूठ तथा अन्य कुकर्म इत्यादि में व्यर्थ न करें । इसकी अपेक्षा, हम अपने मानव जीवन का सदुपयोग गुरु के मार्ग दर्शन पर चल कर प्रभु नाम के ध्यान में करें और उस ईश्वर को अपने मन में ही प्राप्त करने का प्रयास करें ।

ਪੰਨਾ ੬੩੩

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੯ ॥

ਜੋ ਨਰੁ ਦੁਖ ਮੈ ਦੁਖੁ ਨਹੀ ਮਾਨੈ ॥
ਸੁਖ ਸਨੇਹੁ ਅਰੁ ਭੈ ਨਹੀ ਜਾ ਕੈ ਕੰਚਨ ਮਾਟੀ ਮਾਨੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਨਹ ਨਿੰਦਿਆ ਨਹ ਉਸਤਤਿ ਜਾ ਕੈ ਲੋਭੁ ਮੋਹੁ ਅਭਿਮਾਨਾ ॥
ਹਰਖ ਸੋਗ ਤੇ ਰਹੈ ਨਿਆਰਉ ਨਾਹਿ ਮਾਨ ਅਪਮਾਨਾ ॥੧॥

ਆਸਾ ਮਨਸਾ ਸਗਲ ਤਿਆਗੈ ਜਗ ਤੇ ਰਹੈ ਨਿਰਾਸਾ ॥
ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਜਿਹ ਪਰਸੈ ਨਾਹਨਿ ਤਿਹ ਘਟਿ ਬ੍ਰਹਮੁ ਨਿਵਾਸਾ ॥੨॥

ਗੁਰ ਕਿਰਪਾ ਜਿਹ ਨਰ ਕਉ ਕੀਨੀ ਤਿਹ ਇਹ ਜੁਗਤਿ ਪਛਾਨੀ ॥
ਨਾਨਕ ਲੀਨ ਭਇਓ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿਉ ਜਿਉ ਪਾਨੀ ਸੰਗਿ ਪਾਨੀ ॥੩॥੧੧॥

पृ-६३३

सोरठि महला ९ ॥

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै ॥
सुख सनेहु अरु भै नही जा कै कँचन माटी मानै ॥१॥रहाउ॥

नह निँदिआ नह उसतति जा कै लोभु मोहु अभिमाना ॥
हरख सोग ते रहै निआरउ नाहि मान अपमाना ॥१ ॥

आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा ॥
कामु क्रोधु जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रहमु निवासा ॥२॥

गुर किरपा जिह नर कउ कीनी तिह इह जुगति पछानी ॥
नानक लीन भइओ गोबिँद सिउ जिउ पानी सँगि पानी ॥३॥११॥

सोरठ महला – ९

इस शब्द से पूर्व के कई शब्दों में गुरु जी ने एक साधारण व्यक्ति के सामान्य स्वभाव पर टिप्पणी की है कि वह सांसारिक धन सम्पदा, सगे सम्बंधियों, मित्रों आदि में हर समय व्यस्त रहता है ।इस शब्द में वह एक दैवी रूप से बुद्धिजीवी मनुष्य के गुणों के विषय में हमें बताते हैं, जो सदा गुरु के निर्देशों को पूर्ण रूप से आत्मसात करके, गृहस्थ जीवन में रहते हुये भी प्रभु में अपने मन को रमाये रखता है ।

वह कहते हैं “(ओ' मेरे मित्रो), जो मनुष्य दुख को सहते हुये भी दुखी नहीं होता और जिसको सुख, आनंद, स्नेह अथवा भय में भी अंतर नहीं लगता, तथा सोने को मिट्टी के समान मानता है ।(दूसरे शब्दों में, जिसके मन में इतनी शांति तथा सहज भाव है कि वह संकट के समय नहीं हारता एवं किसी महान अवसर पर अहम का भाव नहीं रखता, तथा जिसके लिये धनी और निर्धन में कोई अंतर नहीं, वही एक सच्चा दैवी रूप से बुद्धिमान व्यक्ति है)”।(१-विराम)

गुरु जी इस प्रकार के बुद्धिजीवी व्यक्ति के आचरण का वर्णन करते हुये कहते हैं “(ऐसा व्यक्ति) किसी की निंदा नहीं करता और ना ही प्रशंसा, (और न ही किसी प्रकार की भावना) लोभ, मोह एवं अभिमान के प्रति प्रकट करता है ।ऐसा मनुष्य हर्ष, शोक, मान या अपमान इत्यादि की अवस्थायों से अछूता रहता है, (अथवा उसका विश्वास अडिग रहता है) ”।(१)

दैवी रूप से इस प्रकार के बुद्धिजीवी मनुष्य के आचरण का वर्णन और आगे करते हुये गुरु जी कहते हैं “ ऐसी बुद्धि वाला जीवन सभी आशायों एवं इच्छायों को त्याग कर संसार में एक निराशा (वैराग्य) की भावना के साथ रहता है, जिसे काम तथा क्रोध जैसे विकार छूते नहीं, ऐसे पावन जीव के हृदय में ब्रह्म का निवास होता है ”।(२)

गुरु जी शब्द के अँत में यह बताते हैं कि वह मनुष्य कौन हैं जो इस प्रकार की सहज और शांत अवस्था को पा लेते हैं । उनका कहना है “ जिस मनुष्य पर गुरु ने कृपा की वही इस युक्ति (अर्थात्, सभी प्रकार की अवस्थाओं में सहज रूप से रहना) को पहचान सका है । नानक कहते हैं कि ऐसा मनुष्य गोविँद में इस प्रकार लीन होकर रहता है जैसे पानी के साथ पानी का मिलना, (अथवा नदी का सागर में जाकर एक हो जाना)”।(३-११)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु में लीन होकर अनंत सुख प्राप्त करना चाहें तो हमें गुरु की कृपा के लिये प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें ऐसी बुद्धि प्रदान करें कि हम सांसारिक दुख दर्द, हर्ष, उल्लास, लोभ, मोह, मान तथा अपमान की भावनायों से उपर उठ सकें और तब संसार में रहते हुये भी संसार से अधिक प्रभु से प्रेम करने का प्रयत्न करें ।

ਪੰਨਾ ੬੩੫

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੧ ਤਿਤੁਕੀ ॥

ਆਸਾ ਮਨਸਾ ਬੰਧਨੀ ਭਾਈ ਕਰਮ ਧਰਮ ਬੰਧਕਾਰੀ ॥
ਪਾਪਿ ਪੁੰਨਿ ਜਗੁ ਜਾਇਆ ਭਾਈ ਬਿਨਸੈ ਨਾਮੁ ਵਿਸਾਰੀ ॥
ਇਹ ਮਾਇਆ ਜਗਿ ਮੋਹਣੀ ਭਾਈ ਕਰਮ ਸਭੇ ਵੇਕਾਰੀ ॥੧॥

ਸੁਣਿ ਪੰਡਿਤ ਕਰਮਾ ਕਾਰੀ ॥
ਜਿਤੁ ਕਰਮਿ ਸੁਖੁ ਊਪਜੈ ਭਾਈ ਸੁ ਆਤਮ ਤਤੁ ਬੀਚਾਰੀ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਾਸਤੁ ਬੇਦੁ ਬਕੈ ਖੜੋ ਭਾਈ ਕਰਮ ਕਰਹੁ ਸੰਸਾਰੀ ॥
ਪਾਖੰਡਿ ਮੈਲੁ ਨ ਚੂਕਈ ਭਾਈ ਅੰਤਰਿ ਮੈਲੁ ਵਿਕਾਰੀ ॥
ਇਨ ਬਿਧਿ ਡੂਬੀ ਮਾਕੁਰੀ ਭਾਈ ਊਂਡੀ ਸਿਰ ਕੈ ਭਾਰੀ ॥੨॥

ਦੁਰਮਤਿ ਘਣੀ ਵਿਗੂਤੀ ਭਾਈ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਖੁਆਈ ॥
ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਨਾਮੁ ਨ ਪਾਈਐ ਭਾਈ ਬਿਨੁ ਨਾਮੈ ਭਰਮੁ ਨ ਜਾਈ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵੇ ਤਾ ਸੁਖੁ ਪਾਏ ਭਾਈ ਆਵਣੁ ਜਾਣੁ ਰਹਾਈ ॥੩॥

ਸਾਚੁ ਸਹਜੁ ਗੁਰ ਤੇ ਊਪਜੈ ਭਾਈ ਮਨੁ ਨਿਰਮਲੁ ਸਾਚਿ ਸਮਾਈ ॥
ਗੁਰੁ ਸੇਵੇ ਸੋ ਬੂਝੈ ਭਾਈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਮਗੁ ਨ ਪਾਈ ॥
ਜਿਸੁ ਅੰਤਰਿ ਲੋਭੁ ਕਿ ਕਰਮ ਕਮਾਵੈ ਭਾਈ ਕੂੜੁ ਬੋਲਿ ਬਿਖੁ ਖਾਈ ॥੪॥

ਪੰਡਿਤ ਦਹੀ ਵਿਲੋਈਐ ਭਾਈ ਵਿਚਹੁ ਨਿਕਲੈ ਤਥੁ ॥
ਜਲੁ ਮਥੀਐ ਜਲੁ ਦੇਖੀਐ ਭਾਈ ਇਹੁ ਜਗੁ ਏਹਾ ਵਥੁ ॥
ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਭਰਮਿ ਵਿਗੂਚੀਐ ਭਾਈ ਘਟਿ ਘਟਿ ਦੇਉ ਅਲਖੁ ॥੫॥

ਇਹੁ ਜਗੁ ਤਾਗੋ ਸੂਤ ਕੋ ਭਾਈ ਦਹ ਦਿਸ ਬਾਧੋ ਮਾਇ ॥
ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਗਾਠਿ ਨ ਛੂਟਈ ਭਾਈ ਥਾਕੇ ਕਰਮ ਕਮਾਇ ॥
ਇਹੁ ਜਗੁ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਇਆ ਭਾਈ ਕਹਣਾ ਕਿਛੂ ਨ ਜਾਇ ॥੬॥

ਗੁਰ ਮਿਲਿਐ ਭਉ ਮਨਿ ਵਸੈ ਭਾਈ ਭੈ ਮਰਣਾ ਸਚੁ ਲੇਖੁ ॥
ਮਜਨੁ ਦਾਨੁ ਚੰਗਿਆਈਆ ਭਾਈ ਦਰਗਹ ਨਾਮੁ ਵਿਸੇਖੁ॥

ਪੰਨਾ ੬੩੬

ਗੁਰੁ ਅੰਕਸੁ ਜਿਨਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ਭਾਈ ਮਨਿ ਵਸਿਆ ਚੂਕਾ ਭੇਖੁ ॥੭॥

ਇਹੁ ਤਨੁ ਹਾਟੁ ਸਰਾਫ ਕੋ ਭਾਈ ਵਖਰੁ ਨਾਮੁ ਅਪਾਰੁ ॥
ਇਹੁ ਵਖਰੁ ਵਾਪਾਰੀ ਸੋ ਦ੍ਰਿੜੈ ਭਾਈ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਕਰੇ ਵੀਚਾਰੁ ॥
ਧਨੁ ਵਾਪਾਰੀ ਨਾਨਕਾ ਭਾਈ ਮੇਲਿ ਕਰੇ ਵਾਪਾਰੁ ॥੮॥੨॥

पृ-६३५

सोरठि महला १ तितुकी ॥

आसा मनसा बँधनी भाई करम धरम बँधकारी ॥
पापि पुँनि जगु जाइआ भाई बिनसै नामु विसारी ॥
इह माइआ जगि मोहणी भाई करम सभे वेकारी ॥१॥

सुणि पँडित करमा कारी ॥
जितु करमि सुखु ऊपजै भाई सु आतम ततु बीचारी ॥रहाउ॥

सासतु बेदु बकै खड़ो भाई करम करहु सँसारी ॥
पाखँडि मैलु न चूकई भाई अँतरि मैलु विकारी ॥
इन बिधि डूबी माकुरी भाई ऊंडी सिर कै भारी ॥२॥

दुरमति घणी विगूती भाई दूजै भाइ खुआई ॥
बिनु सतिगुर नामु न पाईऐ भाई बिनु नामै भरमु न जाई ॥
सतिगुरु सेवे ता सुखु पाए भाई आवणु जाणु रहाई ॥३ ॥

साचु सहजु गुर ते ऊपजै भाई मनु निरमलु साचि समाई ॥
गुरु सेवे सो बूझै भाई गुर बिनु मगु न पाई ॥
जिसु अँतरि लोभु कि करम कमावै भाई कूड़ु बोलि बिखु खाई ॥४॥

पँडित दही विलोईऐ भाई विचहु निकलै तथु ॥
जलु मथीऐ जलु देखीऐ भाई इहु जगु एहा वथु ॥
गुर बिनु भरमि विगूचीऐ भाई घटि घटि देउ अलखु ॥५ ॥

इहु जगु तागो सूत को भाई दह दिस बाधो माइ ॥
बिनु गुर गाठि न छूटई भाई थाके करम कमाइ ॥
इहु जगु भरमि भुलाइआ भाई कहणा किछू न जाइ ॥६

गुर मिलिऐ भउ मनि वसै भाई भै मरणा सचु लेखु ॥
मजनु दानु चँगिआईआ भाई दरगह नामु विसेखु ॥

पृ-६३६

गुरु अँकसु जिनि नामु दिृड़ाइआ भाई मनि वसिआ चूका भेखु ॥७॥

इहु तनु हाटु सराफ को भाई वखरु नामु अपारु ॥
इहु वखरु वापारी सो दिृड़े भाई गुर सबदि करे वीचारु ॥
धनु वापारी नानका भाई मेलि करे वापारु ॥८॥२॥

सोरठ महला - १ तितुकी

इस शब्द में गुरु जी संसार में लोगों की समस्त प्रकार की आशाओं, इच्छाओं तथा दुविधाओं में सदा तल्लीन रहने की सामान्य प्रवृत्ति पर टिप्पणी करते हैं। कुछ लोग जो शास्त्रीय विधियों के अनुसार कर्म कांड में लगे रहते हैं वह सोचते हैं कि उनका उद्धार इस प्रकार की रीतियों अथवा शिष्टाचार निभाने से हो जायेगा। गुरु जी यहाँ पर इन सब प्रकार की विधियों के अंतिम परिणामों पर प्रकाश डालते हुये यह बताना चाहते हैं कि जन्म मरण के फेरों से मुक्ति पाकर अंत में प्रभु के द्वार पर स्वीकृति पाने का सर्वोत्तम राह कौन सा है।

गुरु जी हमें सम्बोधित करते हुये कहते हैं "हे' मेरे भाइयों, आशायें और मन की इच्छायें, तथा धर्म कर्म की सभी रीतियाँ मानव आत्मा के लिये बँधन हैं। पाप और पुण्य जैसी धार्मिक विधियों तथा मत पर विश्वास रखने से संसार जन्म लेता है और प्रभु नाम को बिसारने से उसका

विनाश होता है । संक्षेप में यह सांसारिक खेल अथवा माया का रूप अति मन मोहक है जो जग को छल रहा है, तथा सभी कर्मकांड विकार उत्पन्न करते हैं अथवा अर्थहीन हैं "।(१)

अब गुरु जी उन पंडित एवं पुजारी लोगों का उल्लेख करते हैं जो कर्मकांड तथा शास्त्रीय विधियों के शिष्टाचार में पारंगत होते है । वह कहते हैं " हे' कर्मकाण्डी पंडित, सुनो, (यह शिष्टाचार और रीतियाँ निभाने की अपेक्षा) किसी ऐसे तथ्य पर विचार करो भाई, जिससे आत्मा में सुख शांति का प्रादुर्भाव हो "।(विराम)

ऐसा पँडित, जो केवल दूसरों को उपदेश देता है परन्तु स्वयं वैसा सही मार्ग नहीं अपनाता, उसके आचरण पर गुरु जी टिप्पणी करते हुए कहते हैं "ओ' भाई पँडित, तुम खड़े होकर लोगों को शास्त्र वेदों का अनुसरण करने के लिये भाषण देते हो, परन्तु, तुम स्वयं सांसारिक कर्म करते हो (जो तुम्हें जन्म मरण के फेर में बाँधे रखते हैं) । हे' भाई, ऐसे पाखंडी कर्मों से पापों की मैल नहीं धुल सकती, अपितु, मन के अंदर विकारों का समावेश ठीक उसी प्रकार से प्रभावित करेगा, जैसे कि एक मकड़ी अपने ही जाल में सिर के बल उल्टी फँस कर समाप्त हो जाती है "।(२)

गुरु जी अब हमारा ध्यान मिथ्या ज्ञान अथवा दुर्मति की समस्या पर खींचते हैं, जो हमें अनुचित एवं निरर्थक सांसारिक कार्यों में भटकाती है । वह कहते हैं " हे' मेरे भाई, मिथ्या ज्ञान अथवा दुर्मति अति निरर्थक है, जिसके कारण संसार (भटक कर) नष्ट होता है । हे' मेरे भाई, (सच तो यह है कि) सच्चे गुरु के बिना प्रभु नाम को नहीं पाया जा सकता और बिना नाम को पाये मन के भ्रमों से मुक्ति नहीं मिल सकती। सच्चे गुरु की सेवा (अर्थात्, गुरबाणी द्वारा प्राप्त मार्ग दर्शन पर चलने) से ही शांति एवं सुख पाया जा सकता है, तथा आने जाने (जन्म मरण) के फेरों से मुक्ति प्राप्त होती है "।(३)

गुरु की सेवा अथवा गुरबाणी के अनुसार जीवन चलाने के अन्य लाभों का विवरण देते हुये गुरु जी कहते हैं " हे' मेरे भाई, गुरु की सहायता से ही (मन के अंदर) सत्य एवं संतुलन का उदय होता है और तब मन निर्मल होकर सच्चे (प्रभु) में समाता है ।जो गुरु की सेवा करता है वही बूझ पाता है कि गुरु के बिना (धर्म का) सही मार्ग नहीं पाया जा सकता । परन्तु, जिसके मन में (सांसारिक धन सम्पदा का) लोभ तथा अन्य विकार हैं, उसे ऐसे (भले) कर्म करने का क्या लाभ, वह तो झूठ एवं अपशब्द बोल कर (स्वयं की आत्मा के लिये) विष ही खाता रहता है "।(४)

गुरु जी अब कुछ स्पष्ट उदाहरणों द्वारा खोखली कर्मकाण्डी विधियों को नि:सार चित्रित करते हैं, तथा जीवन में सही मार्ग दर्शन के लिये गुरु की आवश्यकता पर ज़ोर देते हैं । वह कहते हैं " ओ' पंडित, यदि हम दही को बिलोते हैं तो उसमें से तथ्य (मक्खन) निकलता है, पर यदि पानी को मथते हैं तो वह पानी ही दिखाई देता है (और कुछ नहीं), यह जगत भी वैसी ही वस्तु है, (यदि तुम प्रभु नाम का ध्यान निष्कपट भाव से करोगे, तो प्रभु को पा लोगे, परन्तु खोखले कर्मकाण्ड करते रहने से कुछ भी हाथ नहीं आयेगा)।किन्तु, हे' मेरे भाई, बिना गुरु के (निर्देश के) हम भ्रमों में भटक जाते हैं, (और यह नहीं देख पाते कि) वह अगम्य प्रभु प्रत्येक हृदय में व्याप्त है "।(५)

संसार की क्षणभंगुरता तथा उसकी जटिलतायों में से सफलतापूर्वक बाहर निकलने के लिये गुरु की सहायता की आवश्यकता पर गुरु जी कहते हैं " ओ' मेरे भाई, यह संसार सूत के कच्चे धागे जैसा है जो (सांसारिक धन सम्पदा और सत्ता के प्रलोभनों से पूर्णतया उलझा हुया) सभी दसों दिशाओं से माया के साथ बँधा हुआ है ।हे' भाई, अनेकों लोग कई प्रकार के कर्मकांड करके थक चुके हैं, पर गुरु की सहायता के बिना इस सांसारिक मायाजाल की गाँठें नहीं खुल सकतीं । संक्षेप में, यह संसार (मायाजाल व कर्मकाण्डों के) भ्रमों में इतना अधिक भूला भटका हुया है कि कुछ कहा नहीं जा सकता "।(६)

गुरु के मार्ग दर्शन के गुणों की गणना करते हुए गुरु जी कहते हैं " ओ' मेरे भाईयों, गुरु से मिलन के पश्चात मन में प्रभु का भय बसता है, (और यह समझ में आता है) कि प्रभु के भय में मरना ही सच्चा सौभाग्य है और तब हम यह भी समझ पाते हैं कि प्रभु के घर में शरीर की पवित्रता अथवा स्नान, दान तथा अन्य कर्मों की अपेक्षा प्रभु नाम का विशेष महत्व है । हे' भाई, गुरु एक अंकुश के समान है जिसकी सहायता से प्रभु नाम मन में दृढ़ होता है, फलस्वरूप हमारे मन के समस्त झूठ एवं छलकप्ट समाप्त हो जाते हैं और वहाँ पर प्रभु आ बसते हैं "।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं "ओ' मेरे भाइयों, यह शरीर एक सर्राफ़ की दुकान के समान है जहाँ पर अपार प्रभु नाम की वस्तु (का व्यापार होता) है । परन्तु, हे' भाई, यह वस्तु वही व्यापारी संचित कर सकता है जो गुरु के शब्द को विचारता है । ओ' नानक, वह व्यापारी धन्य है जो गुरु की संगति में जाकर यह व्यापार करता है "।(८-२)

इस शब्द का यह संदेश है कि यदि हम सांसारिक उलझनों तथा मायाजाल को त्यागना चाहते हैं तो खोखले कर्मकाण्ड और दिखावे भरी शिष्टाचार की विधियाँ करने की अपेक्षा अपने अहम को शांत कर गुरु की शिक्षा एवं संगति में रहकर प्रभु नाम का ध्यान करें, जिससे कि प्रभु हमारे मन में आ बसें और हम उसके अनंत रूप में सदैव आनंदित रहें ।

ਪੰਨਾ ੬੩੭

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੩ ਘਰੁ ੧ ਤਿਤੁਕੀ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਭਗਤਾ ਦੀ ਸਦਾ ਤੂ ਰਖਦਾ ਹਰਿ ਜੀਉ ਧੁਰਿ ਤੂ ਰਖਦਾ ਆਇਆ ॥
ਪ੍ਰਹਿਲਾਦ ਜਨ ਤੁਧੁ ਰਾਖਿ ਲਏ ਹਰਿ ਜੀਉ ਹਰਣਾਖਸੁ ਮਾਰਿ ਪਚਾਇਆ ॥
ਗੁਰਮੁਖਾ ਨੋ ਪਰਤੀਤਿ ਹੈ ਹਰਿ ਜੀਉ ਮਨਮੁਖ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਇਆ ॥੧॥

ਹਰਿ ਜੀ ਏਹ ਤੇਰੀ ਵਡਿਆਈ ॥
ਭਗਤਾ ਕੀ ਪੈਜ ਰਖੁ ਤੂ ਸੁਆਮੀ ਭਗਤ ਤੇਰੀ ਸਰਣਾਈ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਭਗਤਾ ਨੋ ਜਮੁ ਜੋਹਿ ਨ ਸਾਕੈ ਕਾਲੁ ਨ ਨੇੜੈ ਜਾਈ ॥
ਕੇਵਲ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਮਨਿ ਵਸਿਆ ਨਾਮੇ ਹੀ ਮੁਕਤਿ ਪਾਈ ॥
ਰਿਧਿ ਸਿਧਿ ਸਭ ਭਗਤਾ ਚਰਣੀ ਲਾਗੀ ਗੁਰ ਕੈ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਈ ॥੨॥

ਮਨਮੁਖਾ ਨੋ ਪਰਤੀਤਿ ਨ ਆਵੀ ਅੰਤਰਿ ਲੋਭ ਸੁਆਉ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਿਰਦੈ ਸਬਦੁ ਨ ਭੇਦਿਓ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਨ ਲਾਗਾ ਭਾਉ ॥
ਕੂੜ ਕਪਟ ਪਾਜੁ ਲਹਿ ਜਾਸੀ ਮਨਮੁਖ ਫੀਕਾ ਅਲਾਉ ॥੩॥

ਭਗਤਾ ਵਿਚਿ ਆਪਿ ਵਰਤਦਾ ਪ੍ਰਭ ਜੀ ਭਗਤੀ ਹੂ ਤੂ ਜਾਤਾ ॥
ਮਾਇਆ ਮੋਹ ਸਭਲੋਕ ਹੈ ਤੇਰੀ ਤੂ ਏਕੋ ਪੁਰਖੁ ਬਿਧਾਤਾ ॥

ਪੰਨਾ ੬੩੮

ਹਉਮੈ ਮਾਰਿ ਮਨਸਾ ਮਨਹਿ ਸਮਾਣੀ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਪਛਾਤਾ ॥੪॥

ਅਚਿੰਤ ਕੰਮ ਕਰਹਿ ਪ੍ਰਭ ਤਿਨ ਕੇ ਜਿਨ ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਪਿਆਰਾ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦਿ ਸਦਾ ਮਨਿ ਵਸਿਆ ਸਭਿ ਕਾਜ ਸਵਾਰਣਹਾਰਾ ॥
ਓਨਾ ਕੀ ਰੀਸ ਕਰੇ ਸੁ ਵਿਗੁਚੈ ਜਿਨ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਹੈ ਰਖਵਾਰਾ ॥੫॥

ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਇਆ ਮਨਮੁਖਿ ਭਉਕਿ ਮੁਏ ਬਿਲਲਾਈ ॥
ਆਵਹਿ ਜਾਵਹਿ ਠਉਰ ਨ ਪਾਵਹਿ ਦੁਖ ਮਹਿ ਦੁਖਿ ਸਮਾਈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਹੋਵੈ ਸੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪੀਵੈ ਸਹਜੇ ਸਾਚਿ ਸਮਾਈ ॥੬॥

ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਜਨਮੁ ਨ ਛੋਡੈ ਜੇ ਅਨੇਕ ਕਰਮ ਕਰੈ ਅਧਿਕਾਈ ॥
ਵੇਦ ਪੜਹਿ ਤੈ ਵਾਦ ਵਖਾਣਹਿ ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਪਤਿ ਗਵਾਈ ॥
ਸਚਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਸਾਚੀ ਜਿਸੁ ਬਾਣੀ ਭਜਿ ਛੂਟਹਿ ਗੁਰ ਸਰਣਾਈ ॥੭॥

ਜਿਨ ਹਰਿ ਮਨਿ ਵਸਿਆ ਸੇ ਦਰਿ ਸਾਚੇ ਦਰਿ ਸਾਚੈ ਸਚਿਆਰਾ ॥
ਓਨਾ ਦੀ ਸੋਭਾ ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਹੋਈ ਕੋਇ ਨ ਮੇਟਣਹਾਰਾ ॥
ਨਾਨਕ ਤਿਨ ਕੈ ਸਦ ਬਲਿਹਾਰੈ ਜਿਨ ਹਰਿ ਰਾਖਿਆ ਉਰਿ ਧਾਰਾ ॥੮॥੧॥

पृ-६३७

सोरठि महला ३ घरु १ तितुकी

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

भगता दी सदा तू रखदा हरि जीउ धुरि तू रखदा आइआ ॥
प्रहिलाद जन तुधु राखि लए हरि जीउ हरणाखसु मारि पचाइआ ॥
गुरमुखा नो परतीति है हरि जीउ मनमुख भरमि भुलाइआ ॥१॥

हरि जी एह तेरी वडिआई ॥
भगता की पैज रखु तू सुआमी भगत तेरी सरणाई ॥रहाउ॥

भगता नो जमु जोहि न साकै कालु न नेड़ै जाई ॥
केवल राम नामु मनि वसिआ नामे ही मुकति पाई ॥
रिधि सिधि सभ भगता चरणी लागी गुर कै सहजि सुभाई ॥२॥

मनमुखा नो परतीति न आवी अँतरि लोभ सुआउ ॥
गुरमुखि हिरदै सबदु न भेदिओ हरि नामि न लागा भाउ ॥
कूड़ कपट पाजु लहि जासी मनमुख फीका अलाउ ॥३॥

भगता विचि आपि वरतदा प्रभ जी भगती हू तू जाता ॥
माइआ मोह सभलोक है तेरी तू एको पुरखु बिधाता ॥

पृ-६३८

हउमै मारि मनसा मनहि समाणी गुर कै सबदि पछाता ॥४॥

अचिँत कँम करहि प्रभ तिन के जिन हरि का नामु पिआरा ॥
गुर परसादि सदा मनि वसिआ सभि काज सवारणहारा ॥
ओना की रीस करे सु विगुचै जिन हरि प्रभु है रखवारा ॥५॥

बिनु सतिगुर सेवे किनै न पाइआ मनमुखि भउकि मुए बिललाई ॥
आवहि जावहि ठउर न पावहि दुख महि दुखि समाई ॥
गुरमुखि होवै सु अँमृितु पीवै सहजे साचि समाई ॥६॥

बिनु सतिगुर सेवे जनमु न छोडै जे अनेक करम करै अधिकाई ॥
वेद पड़हि तै वाद वखाणहि बिनु हरि पति गवाई ॥
सचा सतिगुरु साची जिसु बाणी भजि छूटहि गुर सरणाई ॥७॥

जिन हरि मनि वसिआ से दरि साचे दरि साचै सचिआरा ॥
ओना दी सोभा जुगि जुगि होई कोइ न मेटणहारा ॥
नानक तिन कै सद बलिहारै जिन हरि राखिआ उरि धारा ॥८॥१॥

सोरठ महला-३ घर-१ तितुकी-१

इस शब्द में गुरु जी परामर्श देते हैं कि हम प्रभु पर पूर्ण विश्वास रखते हुये उसके सच्चे प्रेमी तथा भक्त बनें । वह हमें यह भी विश्वास दिलाना चाहते हैं कि यदि हम उसके सच्चे भक्त बनते हैं तो वह अपने बच्चों की भाँति हमारी रक्षा करता है, क्योंकि यह उसका नियम है । गुरु जी अपने कथनों की पुष्टि कई पौराणिक कथायों के आधार पर भी करते हैं । वह यह भी बताते हैं कि जो लोग प्रभु पर विश्वास नहीं रखते और केवल सांसारिक धन सम्पदा की चिंता करते हैं, उनका अंत में क्या होता है ।

सर्व प्रथम, गुरु जी भक्त प्रह्लाद और उसके पिता हिरण्यकशयप का उदाहरण देते हैं । हिरण्यकशयप को उसकी अपनी पूर्व तपस्या के बल पर यह वरदान प्राप्त था कि वह किसी भी स्वाभाविक स्थिति में मृत्यु को नहीं पायेगा, जैसे कि, कोई मनुष्य अथवा जानवर उसे नहीं मार सकता, ना वह दिन में मरेगा न रात में, न वह घर के अंदर मरेगा और ना ही घर के बाहर । इस प्रकार के वरदानों के फलस्वरुप वह एक अँहकारी राजा बन गया और स्वयं को ईश्वर समझते हुये क्रूर आदेश दिया कि प्रभु के स्थान पर प्रजा उसकी पूजा करे । उसने अपने पुत्र प्रह्लाद को कई बार मार डालने का प्रयास किया जो पिता का कहा न मान कर केवल प्रभु की भक्ति करता था ।अंत में जब पुत्र को मृत्यु देने के लिए उसे लोहे के अत्यंत गर्म स्तंभ से बाँधा जाने लगा, तभी ईश्वर नरसिंह के रुप में स्तंभ से प्रकट हुये (आधा मनुष्य तथा आधा सिंह का रुप) और हिरण्यकशयप को मार कर भक्त प्रह्लाद की रक्षा की । वह समय संध्या का था जब ना दिन और ना ही रात, मारने वाले नरसिंह अवतार जो ना पूर्ण मनुष्य और ना ही जानवर, तथा मरने का स्थान, घर का द्वार जो ना घर के अंदर और ना ही घर से बाहर ।

यहाँ गुरु जी प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं "हे' मेरे प्रिय प्रभु, संसार की उत्पत्ति के समय से ही तुम सदैव अपने भक्तों के सम्मान की रक्षा करते आ रहे हो । हरि जी तुमने, हिरणाकशयप जैसे राक्षस का वध करके अपने भक्त, प्रह्लाद की रक्षा की । अत: ओ' हरि जी, गुरु के भक्तों को तुम पर पूर्ण विश्वास है (कि अंतत:, तुम उनकी रक्षा करोगे , परन्तु) अंहकारी मनुष्य सदा भ्रमों में ही भूले भटके रहते हैं "।(१)

गुरु जी हरि से कहते हैं " हे' मेरे प्रिय हरि, यह तेरी महिमा है (कि तुम भक्तों के सम्मान की रक्षा करते हो, सो पुन: एक बार) हे' स्वामी, जो भक्त तुम्हारी शरण में हैं उनके सम्मान की रक्षा करो"।(विराम)

भक्तों पर न्योछावर किये गये प्रभु के वरदानों का वर्णन गुरु जी करते हैं "(हे' मेरे मित्रो), यमराज भक्त जनों को ढूँढ भी नहीं सकता, अतः मृत्यु का भय उनके निकट नहीं आता, उनके मन में केवल (मृत्यु के भय की अपेक्षा) राम का नाम ही बसा रहता है और उसके द्वारा वह मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं । इसके अतिरिक्त, वह गुरु के (मार्ग दर्शन) द्वारा इतनी सहज अवस्था में रहते हैं कि सब प्रकार की रिद्धि व सिद्धियाँ स्वाभाविक रुप से उनके चरणों में आ लगती हैं "।(२)

दूसरी ओर, अंहकारी लोगों की मानसिक दशा एवं आचरण पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), अंहकारी लोगों के मन में प्रभु के प्रति पूर्ण विश्वास नहीं उत्पन्न होता, क्योंकि, उनके अंदर लोभ और स्वार्थ भरा होता है । उनके हृदय को गुरु के शब्द नहीं भेद पाते तथा उन्हें हरि के नाम से तनिक भी प्रेम नहीं होता । ऐसा अभिमानी फीकी एवं नि:सार भाषा बोलता है (परन्तु, एक ना एक दिन) उसके झूठ तथा कपट का आवरण उतर जाता है (और संसार को उसकी वास्तविकता का ज्ञान हो जाता है)"।(३)

प्रभु द्वारा पाये आशीर्वादों से आन्नदित भक्तों के आचरण पर गुरु जी एक बार फिर से कहते हैं "ओ' प्रभु जी, तुम भक्तों के अँतरमन में व्याप्त रहते हो और तुम्हारे भक्त जन भी तुम्हें जानते हैं । यह संसार तथा इसमें पसरा माया मोह सब तुम्हारी ही रचना है और तुम्हीं केवल एक महान पुरुष विधाता हो । भक्त जनों ने अपने अहम को नष्ट करके अपने मन में यह (तथ्य) धारण कर लिया है और गुरु के शब्दों द्वारा वह तुम्हारी (शक्ति) पहचानते हैं "। (४)

प्रभु किस प्रकार से अपने भक्तों की सहायता करते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं " हे' प्रभु, जिन्हें तुम्हारा नाम प्रिय है उनके जाने बिना ही तुम उनके सब कार्य सम्पन्न कर देते हो । गुरु की कृपा से जिनके भी मन में प्रभु का निवास है उनके समस्त कार्य वह सँवार देता है । (संक्षेप में), जिनका रक्षक हरि है उनका जो कोई भी प्रतिद्वन्द्वी है वह नष्ट हो जाता है "।(५)

एक बार फिर अभिमानी लोगों की स्थिति पर गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), सच्चे गुरु की सेवा अथवा उसके निर्देशों का पालन किये बिना किसी ने भी (प्रभु को) नहीं पाया और अंहकारी मनुष्य तो (कुत्ते की भाँति) भौंकता, चिल्लाता ही समाप्त हो जाता है । वह इस संसार में आता जाता ही रहता है, अथवा कोई ठिकाना उसे प्राप्त नहीं होता, दुख पाता है और दुखों में ही समा जाता है । परन्तु, जो गुरु का भक्त होता है (तथा उसकी शरण में रहता है) वह (प्रभु नाम रुपी) अँमृत का पान करता है और सहज भाव से ही सच्चे अनंत (प्रभु) में समा जाता है "।(६)

मानव जीवन में मोक्ष तथा आनंद पाने के लिये सच्चे गुरु की कृपा एवं मार्ग दर्शन की आवश्यकता को एक बार फिर से स्पष्ट करते हुये गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), कितने भी अधिक शास्त्रीय विधियाँ या कर्मकाण्ड कोई कर ले, पर सच्चे गुरु की सेवा (मार्ग दर्शन के अनुसरण के) बिना जन्म (मरण का फेर) छुट नहीं सकता । जो भी कोई वेदों का पाठ करता है और उन पर वाद संवाद करता है वह भी हरि को प्राप्त किये बिना अपना सम्मान गँवा लेता है । (ओ' मेरे प्रिय मित्रो) सच्चा गुरु अमर है, तथा अमर उसकी वाणी है, उस गुरु की शरण में जो जाते हैं वह उसकी वाणी के भजन के द्वारा मुक्त हो जाते हैं "।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), जिनके मन में हरि का निवास है वह उस सच्चे (प्रभु) के द्वार पर स्वीकृत हैं ।उनकी महिमा युगों युगों तक गायी जाती है जिसे कोई मिटाने वाला नहीं है । नानक उन भक्तजनों पर सदा बलिहारी हैं जिन्होंने अपने हृदय में हरि को धारण कर रखा है"।(८-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें हरि के सच्चे भक्त बनने का प्रयास करना चाहिये तथा मन में पूर्ण विश्वास रखना चाहिये कि जिस प्रकार से प्रभु अपने भक्तजनों की रक्षा सदैव करते रहे हैं, वैसे ही वह हमारी तथा हमारे सम्मान की रक्षा भी करेंगे । परन्तु, यदि हम अपने अहम में रह कर गुरु की शिक्षा का पालन नहीं करते हैं तो हम कष्ट पायेंगे और अंत में पश्चाताप करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੩੯

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੧ ਅਸਟਪਦੀਆ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਸਭੁ ਜਗੁ ਜਿਨਹਿ ਉਪਾਇਆ ਭਾਈ ਕਰਣ ਕਾਰਣ ਸਮਰਥੁ ॥
ਜੀਉ ਪਿੰਡੁ ਜਿਨਿ ਸਾਜਿਆ ਭਾਈ ਦੇ ਕਰਿ ਅਪਣੀ ਵਥੁ ॥
ਕਿਨਿ ਕਹੀਐ ਕਿਉ ਦੇਖੀਐ ਭਾਈ ਕਰਤਾ ਏਕੁ ਅਕਥੁ ॥
ਗੁਰੁ ਗੋਵਿੰਦੁ ਸਲਾਹੀਐ ਭਾਈ ਜਿਸ ਤੇ ਜਾਪੈ ਤਥੁ ॥੧॥

ਮੇਰੇ ਮਨ ਜਪੀਐ ਹਰਿ ਭਗਵੰਤਾ ॥
ਨਾਮ ਦਾਨੁ ਦੇਇ ਜਨ ਅਪਨੇ ਦੂਖ ਦਰਦ ਕਾ ਹੰਤਾ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਾ ਕੈ ਘਰਿ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਹੈ ਭਾਈ ਨਉ ਨਿਧਿ ਭਰੇ ਭੰਡਾਰ ॥
ਤਿਸ ਕੀ ਕੀਮਤਿ ਨਾ ਪਵੈ ਭਾਈ ਊਚਾ ਅਗਮ ਅਪਾਰ ॥
ਜੀਅ ਜੰਤ ਪ੍ਰਤਿਪਾਲਦਾ ਭਾਈ ਨਿਤ ਨਿਤ ਕਰਦਾ ਸਾਰ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਭੇਟੀਐ ਭਾਈ ਸਬਦਿ ਮਿਲਾਵਣਹਾਰ ॥੨॥

ਸਚੇ ਚਰਣ ਸਰੇਵੀਅਹਿ ਭਾਈ ਭ੍ਰਮੁ ਭਉ ਹੋਵੈ ਨਾਸੁ ॥
ਮਿਲਿ ਸੰਤ ਸਭਾ ਮਨੁ ਮਾਂਜੀਐ ਭਾਈ ਹਰਿ ਕੈ ਨਾਮਿ ਨਿਵਾਸੁ ॥
ਮਿਟੈ ਅੰਧੇਰਾ ਅਗਿਆਨਤਾ ਭਾਈ ਕਮਲ ਹੋਵੈ ਪਰਗਾਸੁ ॥
ਗੁਰ ਬਚਨੀ ਸੁਖੁ ਊਪਜੈ ਭਾਈ ਸਭਿ ਫਲ ਸਤਿਗੁਰ ਪਾਸਿ ॥੩॥

ਪੰਨਾ ੬੪੦

ਮੇਰਾ ਤੇਰਾ ਛੋਡੀਐ ਭਾਈ ਹੋਈਐ ਸਭ ਕੀ ਧੂਰਿ ॥
ਘਟਿ ਘਟਿ ਬ੍ਰਹਮੁ ਪਸਾਰਿਆ ਭਾਈ ਪੇਖੈ ਸੁਣੈ ਹਜੂਰਿ ॥
ਜਿਤੁ ਦਿਨਿ ਵਿਸਰੈ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਭਾਈ ਤਿਤੁ ਦਿਨਿ ਮਰੀਐ ਝੂਰਿ ॥
ਕਰਨ ਕਰਾਵਨ ਸਮਰਥੋ ਭਾਈ ਸਰਬ ਕਲਾ ਭਰਪੂਰਿ ॥੪॥

ਪ੍ਰੇਮ ਪਦਾਰਥੁ ਨਾਮੁ ਹੈ ਭਾਈ ਮਾਇਆ ਮੋਹ ਬਿਨਾਸੁ ॥
ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਤਾ ਮੇਲਿ ਲਏ ਭਾਈ ਹਿਰਦੈ ਨਾਮ ਨਿਵਾਸੁ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਕਮਲੁ ਪ੍ਰਗਾਸੀਐ ਭਾਈ ਰਿਦੈ ਹੋਵੈ ਪਰਗਾਸੁ ॥
ਪ੍ਰਗਟੁ ਭਇਆ ਪਰਤਾਪੁ ਪ੍ਰਭ ਭਾਈ ਮਉਲਿਆ ਧਰਤਿ ਅਕਾਸੁ ॥੫॥

ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਸੰਤੋਖਿਆ ਭਾਈ ਅਹਿਨਿਸਿ ਲਾਗਾ ਭਾਉ ॥
ਰਸਨਾ ਰਾਮੁ ਰਵੈ ਸਦਾ ਭਾਈ ਸਾਚਾ ਸਾਦੁ ਸੁਆਉ ॥
ਕਰਨੀ ਸੁਣਿ ਸੁਣਿ ਜੀਵਿਆ ਭਾਈ ਨਿਹਚਲੁ ਪਾਇਆ ਥਾਉ ॥
ਜਿਸੁ ਪਰਤੀਤਿ ਨ ਆਵਈ ਭਾਈ ਸੋ ਜੀਅੜਾ ਜਲਿ ਜਾਉ ॥੬॥

ਬਹੁ ਗੁਣ ਮੇਰੇ ਸਾਹਿਬੈ ਭਾਈ ਹਉ ਤਿਸ ਕੈ ਬਲਿ ਜਾਉ ॥
ਓਹੁ ਨਿਰਗੁਣੀਆਰੇ ਪਾਲਦਾ ਭਾਈ ਦੇਇ ਨਿਥਾਵੇ ਥਾਉ ॥
ਰਿਜਕੁ ਸੰਬਾਹੇ ਸਾਸਿ ਸਾਸਿ ਭਾਈ ਗੂੜਾ ਜਾ ਕਾ ਨਾਉ ॥
ਜਿਸੁ ਗੁਰੁ ਸਾਚਾ ਭੇਟੀਐ ਭਾਈ ਪੂਰਾ ਤਿਸੁ ਕਰਮਾਉ ॥੭॥

ਤਿਸੁ ਬਿਨੁ ਘੜੀ ਨ ਜੀਵੀਐ ਭਾਈ ਸਰਬ ਕਲਾ ਭਰਪੂਰਿ ॥
ਸਾਸਿ ਗਿਰਾਸਿ ਨ ਵਿਸਰੈ ਭਾਈ ਪੇਖਉ ਸਦਾ ਹਜੂਰਿ ॥
ਸਾਧੂ ਸੰਗਿ ਮਿਲਾਇਆ ਭਾਈ ਸਰਬ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰਿ ॥
ਜਿਨਾ ਪ੍ਰੀਤਿ ਨ ਲਗੀਆ ਭਾਈ ਸੇ ਨਿਤ ਨਿਤ ਮਰਦੇ ਝੂਰਿ ॥੮॥

ਅੰਚਲਿ ਲਾਇ ਤਰਾਇਆ ਭਾਈ ਭਉਜਲੁ ਦੁਖੁ ਸੰਸਾਰੁ ॥

पृ-६३९

सोरठि महला ५ घर १ असटपदीआ

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सभु जगु जिनहि उपाइआ भाई करण कारण समरथु ॥
जीउ पिंडु जिनि साजिआ भाई दे करि अपणी वथु ॥
किनि कहीऐ किउ देखीऐ भाई करता एकु अकथु ॥
गुरु गोविंदु सलाहीऐ भाई जिस ते जापै तथु ॥१॥

मेरे मन जपीऐ हरि भगवँता ॥
नाम दानु देइ जन अपने दूख दरद का हँता ॥रहाउ॥

जा कै घरि सभु किछु है भाई नउ निधि भरे भँडार ॥
तिस की कीमति ना पवै भाई ऊचा अगम अपार ॥
जीअ जँत प्रतिपालदा भाई नित नित करदा सार ॥
सतिगुरु पूरा भेटीऐ भाई सबदि मिलावणहार ॥२॥

सचे चरण सरेवीअहि भाई भ्रमु भउ होवै नासु ॥
मिलि सँत सभा मनु मांजीऐ भाई हरि कै नामि निवासु ॥
मिटै अँधेरा अगिआनता भाई कमल होवै परगासु ॥
गुर बचनी सुखु ऊपजै भाई सभि फल सतिगुर पासि ॥३॥

पृ-६४०

मेरा तेरा छोडीऐ भाई होईऐ सभ की धूरि ॥
घटि घटि ब्रहमु पसारिआ भाई पेखै सुणै हजूरि ॥
जितु दिनि विसरै पारब्रहमु भाई तितु दिनि मरीऐ झूरि ॥
करन करावन समरथो भाई सरब कला भरपूरि ॥४॥

प्रेम पदारथु नामु है भाई माइआ मोह बिनासु ॥
तिसु भावै ता मेलि लए भाई हिरदै नाम निवासु ॥
गुरमुखि कमलु प्रगासीऐ भाई रिदै होवै परगासु ॥
प्रगटु भइआ परतापु प्रभ भाई मउलिआ धरति अकासु ॥५॥

गुरि पूरै सँतोखिआ भाई अहिनिसि लागा भाउ ॥
रसना रामु रवै सदा भाई साचा सादु सुआउ ॥
करणी सुणि सुणि जीविआ भाई निहचलु पाइआ थाउ ॥
जिसु परतीति न आवई भाई सो जीअड़ा जलि जाउ ॥६॥

बहु गुण मेरे साहिबै भाई हउ तिस कै बलि जाउ ॥
ओहु निरगुणीआरे पालदा भाई देइ निथावे थाउ ॥
रिजकु सँबाहे सासि सासि भाई गूड़ा जा का नाउ ॥
जिसु गुरु साचा भेटीऐ भाई पूरा तिसु करमाउ ॥७॥

तिसु बिनु घड़ी न जीवीऐ भाई सरब कला भरपूरि ॥
सासि गिरासि न विसरै भाई पेखउ सदा हजूरि ॥
साधू सँगि मिलाइआ भाई सरब रहिआ भरपूरि ॥
जिना प्रीति न लगीआ भाई से नित नित मरदे झूरि ॥८॥

अँचलि लाइ तराइआ भाई भउजलु दुखु सँसारु ॥

ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਨਦਰਿ ਨਿਹਾਲਿਆ ਭਾਈ ਕੀਤੋਨੁ ਅੰਗੁ ਅਪਾਰੁ ॥
ਮਨੁ ਤਨੁ ਸੀਤਲੁ ਹੋਇਆ ਭਾਈ ਭੋਜਨੁ ਨਾਮ ਅਧਾਰੁ ॥
ਨਾਨਕ ਤਿਸੁ ਸਰਣਾਗਤੀ ਭਾਈ ਜਿ ਕਿਲਬਿਖ ਕਾਟਣਹਾਰੁ ॥੯॥੧॥

करि किरपा नदरि निहालिआ भाई कीतोनु अँगु अपारु ॥
मनु तनु सीतलु होइआ भाई भोजनु नाम अधारु ॥
नानक तिसु सरणागती भाई जि किलबिख काटणहारु ॥९॥१॥

सोरठ महला-५ घर-१ असटपदीआ
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी ईश्वर के कुछ गुणों की चर्चा करते हैं कि किस प्रकार वह हमें जीवन के श्वास प्रदान कर जीविका भी प्रदान करता है । वह गुरु तथा ईश्वर के सम्बंध के विषय में भी बताते हैं कि कैसे इस भेद को गुरु की वाणी (गुरबाणी) के द्वारा समझा जा सकता है, तथा उस प्रभु को पाने के लिए उसे स्मरण करना क्यों इतना आवश्यक है ।

गुरु जी कहते हैं “हे’ मेरे भाईयों, जिसने यह समस्त संसार की उत्पत्ति की है, वही सब कुछ करने अथवा कराने का सामर्थ्य रखता है । उसने ही, हे’ भाई, अपनी शक्ति एवं पदार्थ के द्वारा हमारे शरीर और आत्मा को व्यवस्थित किया है । हे’ भाई, (प्रश्न यह है कि) कैसे कहें और कैसे देखें कि वह करने वाला कितना अकथनीय है । हे’ भाई, हमें गुरु तथा गोविंद दोनों की महिमा का मंडन करना चाहिये, क्योंकि, गुरु प्रभु का ही स्वरूप है जिसके द्वारा प्रभु के तथ्य को जान पाते हैं ”।(१)

इसलिये, स्वयं को (तथा हमें भी) गुरु जी परामर्श देते हुये कहते हैं “ ओ’ मेरे मन, ईश्वरनाम का जाप करें जो हमारा भाग्य विधाता है। वह अपने नाम का दान अपने भक्तों को देता है, तथा दुख दर्द का हरण करता है ”।(विराम)

एक बार फिर से गुरु जी प्रभु के गुणों, तथा उसके साथ जुड़ने के लिए सर्वोत्तम उपाय का वर्णन करते हुये कहते हैं “ हे’ मेरे भाईयों, उस (प्रभु) के घर में सब कुछ है, उस घर में नव निधियों का भंडार भरा है जिसका मूल्य आँका नहीं जा सकता और उस (प्रभु) का महान रूप हमारी बुद्धि से परे है और अपार है । हे’ भाई, वह सभी जीव जन्तुओं की पालना करता है और नित्यप्रति उनकी सार अथवा ध्यान रखता है । उसको मिलने के लिये, हे’ भाईयो, हमें पूर्ण सच्चे गुरु से जाकर भेंट करनी चाहिये, क्योंकि उसके शब्द (गुरबाणी) का मनन विचार प्रभु से मिलाने में सक्षम है ।(२)

उपरोक्त भावना को और आगे विस्तृत करते हुये गुरु जी कहते हैं “ हे भाईयों, सच्चे प्रभु की चरण सेवा (प्रभु नाम के ध्यान) से हमारे मन में से सभी प्रकार के भय तथा भ्रमों का नाश होता है ।संतों की संगति में रह कर मन को माँज लें (पवित्र व साफ़ करलें) ताकि उसमें हरि के नाम का निवास हो सके ।फिर उसमें से अज्ञानता का अँधकार दूर होगा और हृदय रूपी कमल (प्रसन्न होकर) खिल उठेगा । हे’ भाईयो, गुरु के वचनों (का पालन करने) से मन में सुख का आगमन होता है और हम सभी (इच्छायों की पूर्ति रूपी) फल सच्चे गुरु से प्राप्त करते हैं ”।(३)

संसार में रहते हुये हमारा स्वयं का आचरण कैसा होना चाहिये, इस पर गुरु जी कुछ सुझाव देते हुये कहते हैं “ हे’ भाईयों, हमें ‘ मेरा और तेरा ‘ की प्रवृति का त्याग करके (सबके चरणों की) धूलि के समान विनीत होना चाहिये । हे’ भाई, पारब्रहम प्रभु का घट घट में पसार है, वह सभी कुछ ऐसे देखता और सुनता है जैसे कि वह वहीं उपस्थित हो ।(अतः हमें अपने मन में प्रभु के लिये प्रयाप्त प्रेम अथवा भय रखना चाहिये,) जिस दिन भी हम अपने मन में से उसे बिसार देंगे, उसी दिन हम पश्चाताप से मृतप्राय हो जायेंगे, क्योंकि, वह (प्रभु) सब कुछ करने अथवा कराने की सामर्थ्य रखता है और वह समस्त शक्तियों से परिपूर्ण है ”।(४)

प्रभु नाम के प्रति सच्चा प्रेम होने के गुण बताते हुये गुरु जी कहते हैं “ हे’ मेरे भाईयों, जिनके मन में प्रभु नाम से प्रेम रूपी पदार्थ स्थिर है उनके अंदर से सांसारिक माया मोह का विनाश हो चुका है । प्रभु को यदि भाता है, तो हे’ भाई, वह किसी को भी अपने साथ मिला लेता है और तब उस मनुष्य के मन में प्रभु का निवास होता है । गुरु के द्वारा गुरु के भक्त का कमल रूपी हृदय प्रसन्नता से खिल उठता है और उसमें (दैवी बुद्धि का) प्रकाश होता है । जब प्रभु की महिमा अथवा प्रताप प्रकट होता है (प्रभु की शक्ति का आभास होता है), हे’ भाई, तब धरती और आकाश खिल उठते हैं ”।(५)

पूर्ण गुरु से जब किसी को जो उपहार तथा आशीर्वाद प्राप्त होते है, उनका वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं “ हे’ भाईयों, पूर्ण गुरु से जो भी (भक्त) संतुष्ट हो जाता है, वह दिन रात (प्रभु के) प्रेम में संलग्न हो जाता है । उसकी जिह्वा सर्वदा राम नाम को जपने में सच्चे (मधुर) स्वाद का आनंद लेती रहती है और ऐसा आनंद उसका नियमित ध्येय बन जाता है ।जो प्रभु की प्रक्रियायों को सुन सुन कर जीवन पाता है, हे’ भाई, वह उसके दरबार में अमर और अचल स्थान पाता है ।परन्तु, हे’ भाईयों, जिस भी आत्मा अथवा जीव को (गुरु पर) विश्वास नहीं होता है वह आत्मा भस्म हो जाती है ”।(६)

प्रभु में क्या क्या गुण हैं और हम कैसे उससे मिल सकते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं “ मेरे स्वामी में अनेक गुण हैं और हे’ भाई, मैं उस पर बलिहारी हूँ । हे’ भाईयों, वह निर्गुणी जीवों की भी पालना करता है, तथा वह विस्थापितों को भी स्थान देता है । हे’ भाईयों, जिसका नाम अति गहन (अथाह) है वह प्रत्येक श्वास के साथ साथ हमें जीविका भी प्रदान करता है । हे’ भाईयों, जो भी कोई पूर्ण तथा सच्चे गुरु से भेंट

कर पाता है उसका भाग्य अति उत्तम है (क्योंकि, गुरु के द्वारा ही प्रभु से मिलन होता है) "। (७)

गुरु जी स्वयं कैसे प्रभु को स्मरण करते हैं तथा सच्चे गुरु के लिये उनके मन में कितना महत्व है, इस पर वह कहते हैं " हे' मेरे भाईयों, वह प्रभु सभी कला से परिपूर्ण है, मैं उसके बिना एक घड़ी भी जीवित नहीं रह सकता । हे' भाई, मेरा प्रयास है कि मेरे मन में से वह एक श्वास तथा एक ग्रास भर के समय के लिये भी ना बिसर सके और मैं उसे सदा अपने सम्मुख देखता रहूँ । हे' भाई, मैं उस (प्रभु से) साधु संतों की संगति के द्वारा ही मिल पाया हूँ और अब मैं उसे समस्त स्थानों में व्याप्त पाता हूँ । परन्तु, हे' भाई, जिन्हें ऐसे प्रभु से प्रेम और प्रीत नहीं हुयी, वह नित्य ही दुख और पश्चाताप से मरते रहते हैं "।(८)

प्रभु नाम का ध्यान करते रहने से प्राप्त हुये आशीर्वादों को हमसे साझा करते हुये गुरु जी शब्द के अंत में कहते हैं " हे' भाईयों, (अपने पूर्ण स्नेह के साथ प्रभु ने जैसे) मुझे अपना आँचल पकड़ा कर इस भवजल अथवा दुखों से भरे संसार रूपी सागर से पार उतार दिया है । ओ' भाईयों, (उस प्रभु ने) अपनी कृपा भरी दृष्टि से मुझे कृतज्ञ किया और मेरी अपार सहायता की और तब, हे' भाई, प्रभु का नाम मेरा आत्मिक भोजन अथवा आधार बन गया, तथा मेरा तन मन शीतल और शांत हो गया। (संक्षेप में), नानक उस प्रभु की शरण पा गये हैं, जो सभी पाप अथवा दुष्कर्मों को काट कर फेंकने योग्य है "।(९-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम गुरु के निर्देशों का पालन कर प्रभु नाम का ध्यान धरें तो हम जीवन में शांति, स्थिरता एवं सदैवी आधार का ऐसा स्रोत पा लेंगे जो हमें समस्त ब्रह्मांड के रचियता से मिलाने में सहायक सिद्ध होगा ।

ਪੰਨਾ ੬੪੧

ਸੋਰਠਿ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੨ ਅਸਟਪਦੀਆ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਪਾਠੁ ਪੜਿਓ ਅਰੁ ਬੇਦੁ ਬੀਚਾਰਿਓ ਨਿਵਲਿ ਭੁਅੰਗਮ ਸਾਧੇ ॥
ਪੰਚ ਜਨਾ ਸਿਉ ਸੰਗੁ ਨ ਛੁਟਕਿਓ ਅਧਿਕ ਅਹੰਬੁਧਿ ਬਾਧੇ ॥੧॥

ਪਿਆਰੇ ਇਨ ਬਿਧਿ ਮਿਲਣੁ ਨ ਜਾਈ ਮੈ ਕੀਏ ਕਰਮ ਅਨੇਕਾ ॥
ਹਾਰਿ ਪਰਿਓ ਸੁਆਮੀ ਕੈ ਦੁਆਰੈ ਦੀਜੈ ਬੁਧਿ ਬਿਬੇਕਾ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਮੋਨਿ ਭਇਓ ਕਰਪਾਤੀ ਰਹਿਓ ਨਗਨ ਫਿਰਿਓ ਬਨ ਮਾਹੀ ॥
ਤਟਤੀਰਥ ਸਭ ਧਰਤੀ ਭ੍ਰਮਿਓ ਦੁਬਿਧਾ ਛੁਟਕੈ ਨਾਹੀ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੬੪੨

ਮਨ ਕਾਮਨਾ ਤੀਰਥ ਜਾਇ ਬਸਿਓ ਸਿਰਿ ਕਰਵਤ ਧਰਾਏ ॥
ਮਨ ਕੀ ਮੈਲੁ ਨ ਉਤਰੈ ਇਹ ਬਿਧਿ ਜੇ ਲਖ ਜਤਨ ਕਰਾਏ ॥੩॥

ਕਨਿਕ ਕਾਮਿਨੀ ਹੈਵਰ ਗੈਵਰ ਬਹੁ ਬਿਧਿ ਦਾਨੁ ਦਾਤਾਰਾ ॥
ਅੰਨ ਬਸਤ੍ਰ ਭੂਮਿ ਬਹੁ ਅਰਪੇ ਨਹ ਮਿਲੀਐ ਹਰਿ ਦੁਆਰਾ ॥੪॥

ਪੂਜਾ ਅਰਚਾ ਬੰਦਨ ਡੰਡਉਤ ਖਟੁ ਕਰਮਾ ਰਤੁ ਰਹਤਾ ॥
ਹਉ ਹਉ ਕਰਤ ਬੰਧਨ ਮਹਿ ਪਰਿਆ ਨਹ ਮਿਲੀਐ ਇਹ ਜੁਗਤਾ ॥੫॥

ਜੋਗ ਸਿਧ ਆਸਣ ਚਉਰਾਸੀਹ ਏ ਭੀ ਕਰਿ ਕਰਿ ਰਹਿਆ ॥
ਵਡੀ ਆਰਜਾ ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਜਨਮੈ ਹਰਿ ਸਿਉ ਸੰਗੁ ਨ ਗਹਿਆ ॥੬॥

ਰਾਜ ਲੀਲਾ ਰਾਜਨ ਕੀ ਰਚਨਾ ਕਰਿਆ ਹੁਕਮੁ ਅਫਾਰਾ ॥
ਸੇਜ ਸੋਹਨੀ ਚੰਦਨੁ ਚੋਆ ਨਰਕ ਘੋਰ ਕਾ ਦੁਆਰਾ ॥੭॥

ਹਰਿ ਕੀਰਤਿ ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਹੈ ਸਿਰਿ ਕਰਮਨ ਕੈ ਕਰਮਾ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਤਿਸੁ ਭਇਓ ਪਰਾਪਤਿ ਜਿਸੁ ਪੁਰਬ ਲਿਖੇ ਕਾ ਲਹਨਾ ॥੮॥

ਤੇਰੋ ਸੇਵਕੁ ਇਹ ਰੰਗਿ ਮਾਤਾ ॥
ਭਇਓ ਕ੍ਰਿਪਾਲੁ ਦੀਨ ਦੁਖ ਭੰਜਨੁ ਹਰਿ ਹਰਿ ਕੀਰਤਨਿ ਇਹੁ ਮਨੁ ਰਾਤਾ ॥
ਰਹਾਉ ਦੂਜਾ ॥੧॥੩॥

पृ-६४१

सोरठि महला ५ घर २ असटपदीआ

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

पाठु पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ निवलि भुअँगम साधे ॥
पँच जना सिउ सँगु न छुटकिओ अधिक अहँबुधि बाधे ॥१॥

पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मै कीए करम अनेका ॥
हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका ॥रहाउ॥

मोनि भइओ करपाती रहिओ नगन फिरिओ बन माही ॥
तटतीरथ सभ धरती भ्रमिओ दुबिधा छुटकै नाही ॥२॥

पृ-६४२

मन कामना तीरथ जाइ बसिओ सिरि करवत धराए ॥
मन की मैलु न उतरै इह बिधि जे लख जतन कराए ॥३॥

कनिक कामिनी हैवर गैवर बहु बिधि दानु दातारा ॥
अँन बसत्र भूमि बहु अरपे नह मिलीऐ हरि दुआरा ॥४॥

पूजा अरचा बँदन डँडउत खटु करमा रतु रहता ॥
हउ हउ करत बँधन महि परिआ नह मिलीऐ इह जुगता ॥५॥

जोग सिध आसण चउरासीह ए भी करि करि रहिआ ॥
वडी आरजा फिरि फिरि जनमै हरि सिउ सँगु न गहिआ ॥६॥

राज लीला राजन की रचना करिआ हुकमु अफारा ॥
सेज सोहनी चँदनु चोआ नरक घोर का दुआरा ॥७॥

हरि कीरति साधसँगति है सिरि करमन कै करमा ॥
कहु नानक तिसु भइओ परापति जिसु पुरब लिखे का लहना ॥८॥

तेरो सेवकु इह रँगि माता ॥
भइओ क्रिपाल दीन दुख भँजनु हरि हरि कीरतनि इहु मनु राता
॥रहाउ दूजा ॥१॥३॥

सोरठ महला -५ घर-२ असटपदीआ
१ ओंकार सतिगुर प्रसादि

ऐसा प्रतीत होता है कि गुरु जी से कभी किसी ऐसे सज्जन की भेंट हुई जो सब प्रकार के कर्मकाण्ड, स्नान ध्यान, पूजापाठ एवं शारीरिक रूप से योगासन और कठिन तपस्या आदि करके थक चुके थे, पर फिर भी मन के लोभ लालच मिटाने में असफल रहने के साथ साथ मन की शांति भी ना प्राप्त कर पाये थे ।

उन्होंने गुरु जी से मार्ग दर्शन के लिये सहायता माँगी । गुरु जी ने उनके विचार सुनने के पश्चात जो उत्तर दिया वह हम सबके लिये भी लाभदायक है ।

वह सज्जन अपनी कथा कहते हैं "(ओ' गुरु जी), मैंने बहुत साहित्य पढ़ा, वेदों का अध्ययन किया तथा विचारा ।अनेक योग आसन, जैसे, निवली और भुयंगम (शरीर के अंदर से सफ़ाई तथा श्वास की यौगिक प्रक्रियाओं) आदि की साधना भी की, परन्तु फिर भी मैं अपने

पाँचो विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अंहकार)से छूट नहीं सका, अपितु, बुद्धि को और अधिक अंहकार ने बाँध लिया है ”।(१)

वह गुरु जी से अति स्नेहपूर्वक भाव से कहते हैं “(ओ’ मेरे गुरु जी) मैंने शास्त्रीय विधि से अनेक करम कर लिये (और अब इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि) इस प्रकार की विधियों से कोई प्रभु को नहीं पा सकता । सो मैं हार थक कर, ओ’ मेरे स्वामी, तेरे द्वार पर आया हूँ, कृपया, मुझे (सही अथवा ग़लत समझने के लिये) बुद्धि और विवेक प्रदान करो ”।(विराम)

अपने द्वारा किये गये अन्य कई कर्मकाण्ड का विवरण देते हुये वह कहते हैं “ मैंने मौनव्रत धारण किये, हाथ में कमंडल लेकर जंगलों में नग्नावस्था में घूमता रहा । धरती के समस्त तीर्थ तटों पर भ्रमण करता रहा, परन्तु मन की दुविधा (सांसारिक मायामोह एवं सामर्थ्य के आकर्षणों) से छूट नहीं सका ”।(२)

अनेक विधियों को स्वयं पर प्रयोग करने, तथा अन्य कई लोगों को और अधिक कठिन उपायों को क्रियान्वित करते हुए देखने के पश्चात, वह सज्जन गुरु जी से अपने मन के विचारों को साझा करते हुये कहते हैं “ (ओ’ गुरु जी, मेरा अंत में विचार यही है कि यदि) अपने मन की इच्छानुसार कोई किसी भी तीर्थस्थान पर जाकर बस जाये और (पुराने मूढ़ विश्वासों के अनुसार) अपने शीश पर आरा रख कर कटवा ले, या इसी प्रकार के और भी लाख यत्न करले पर फिर भी मन की मैल (मन की दुर्भावनायें) नहीं उतरती ”।(३)

(अंत में देखिये - ‘ संक्षिप्त सूचना ‘)

अनेक प्रकार की बहुमूल्य दान दक्षिणा देने वालों के विषय पर वह सज्जन कहते हैं “ (ओ’ गुरु जी, मैंने देखा है कि यदि कोई) कई प्रकार के दान, जैसे, स्वर्ण, सुंदर स्त्रियाँ, घोड़े, हाथी, भोजन, अन्न, कपड़े तथा भूमि आदि, कितना भी अर्पित करदे, फिर भी उसे हरि के द्वार की प्राप्ति नहीं होती ”।(४)

शास्त्रीय विधियों द्वारा किये गये शिष्टाचारी पूजा पाठ एवं कर्मकाण्ड पर वह सज्जन कहते हैं “(मैंने देखा है कि) यदि कोई विभिन्न विधियों से पूजा पाठ, अर्चना, वंदना, डंडवत् प्रणाम इत्यादि समस्त छ: प्रकार की चेष्टायें करे, फिर भी वह अपने अहम के बँधनों में पड़ा रहता है और इन सभी प्रकार की युक्तियों को अपना कर भी प्रभु से नहीं मिल पाता है ”।(५)

प्रभु को पाने के उद्देश्य से जो लोग योगासन अथवा योगाभ्यास करते हैं, उस पर वह कहते हैं “ अनेक योगी तथा श्रेष्ठ अभ्यासी लोग समस्त चौरासी प्रकार के आसन कर करके रह गये, (और इस प्रकार से किसी ने) दीर्घ आयु भी प्राप्ति कर ली हो, पर फिर भी वह बारम्बार जन्म पाते रहे और हरि की संगति नही पा सके”।(६)

अंत में राजा रजवाड़ों एवं अन्य सामर्थ्यपूर्ण धनी लोगों की जीवनशैली पर टिप्पणी करते हुये वह सज्जन कहते हैं “ (मैंने उन लोगों को भी देखा है) जो राजा तथा धनी हैं उन्होंने सब प्रकार के सुख एवं विलास की वस्तुयों का भोग किया, राजायों वाले समस्त आडम्बर तथा अखंड शासन किये, सुंदर सेजों, चंदन तथा अन्य सुगँधियों का उपभोग किया, (परन्तु, यह सब आडम्बर) घोर नर्क के द्वार पर ले जाते हैं”।(७)

ऐसे समस्त निर्रथक क्रिया कलापों, कर्मकांडों तथा योग क्रियायों को सुनने के पश्चात गुरु जी उस सज्जन को (तथा हमें भी) प्रभु के निकट आने का सर्वोत्तम उपाय तथा स्थान बताते हुये कहते हैं “ हे’ भाईयों, इन समस्त कर्मों में से सर्वोपरि कर्म यह है कि साधु संतों की संगति में बैठ कर हरि के यश को विचारा जाये । परन्तु नानक का कहना है कि वही सौभाग्यशाली मनुष्य इस अवसर को पा सकता है जिसे पूर्वकर्मों में लिखे का लाभ मिल रहा हो ”।(८)

शब्द के अँत में गुरु जी प्रभु से अपने सम्बोधन का ढंग हमें प्रकट करते हुए कहते हैं “ हे’ मेरे प्रभु, तेरा यह सेवक तेरे ही रंग में मुग्ध है, हे’ दीनों के दुखभंजनकर्ता, तुमने कृपालु बनकर मेरे इस मन को हरि हरि नाम के यश का कीर्तन करने में रमा दिया है ”।(विराम दूसरा -१-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु को पाना चाहते हैं तो समस्त खोखले कर्मकाण्ड, शास्त्रीय विधियाँ एवं शिष्टाचार, दान दक्षिणा, योग आसन इत्यादि करना निष्फल है । वास्तव में ऐसे सभी प्रकार के अभ्यास हमारे अहम को और अधिक बढ़ावा देते हैं और हमें नर्क की ओर ढकेलते हैं । उत्तम उपाय यही है कि हमारी प्रभु से यही प्रार्थना हो कि वह हमें संतों की सँगति प्रदान करें जहाँ बैठ कर हम उस दयानिधि प्रभु का यशगायन करते रहें ।

संक्षिप्त सूचना - सम्भवत: अनेक पाठकों को विश्वास न हो पाये कि किसी समय अपने शरीर को टुकड़ों में कटवाने की परम्परा भी थी । यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि भोले व उदार प्रवृत्ति के तीर्थ यात्रियों को पूर्ण रूप से लूटने के विचार से कुछ धूर्त व दुष्ट पंडित पुजारी ऐसा विश्वास दिलाते थे कि यदि कोई अपने अहम को मिटा कर जीवन में मुक्ति पाना चाहता है तो वह किसी विशेष तीर्थ स्थान पर जाकर अपने शीश पर आरा रख कर कटवा ले तब वह सीधा स्वर्ग का भागी बन जायेगा । इस प्रकार से वह उस मनुष्य को मार कर उसका सारा माल लूट लेते थे ।

ਪੰਨਾ ੬੪੩

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਮਾਇਆ ਮਮਤਾ ਮੋਹਣੀ ਜਿਨਿ ਵਿਣੁ ਦੰਤਾ ਜਗੁ ਖਾਇਆ ॥
ਮਨਮੁਖ ਖਾਧੇ ਗੁਰਮੁਖਿ ਉਬਰੇ ਜਿਨੀ ਸਚਿ ਨਾਮਿ ਚਿਤੁ ਲਾਇਆ ॥
ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਜਗੁ ਕਮਲਾ ਫਿਰੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਦਰੀ ਆਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੬੪੪

ਧੰਧਾ ਕਰਤਿਆ ਨਿਹਫਲੁ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ ਸੁਖਦਾਤਾ ਮਨਿ ਨ ਵਸਾਇਆ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਤਿਨਾ ਕਉ ਮਿਲਿਆ ਜਿਨ ਕਉ ਧੁਰਿ ਲਿਖਿ ਪਾਇਆ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਘਰ ਹੀ ਮਹਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਭਰਪੂਰੁ ਹੈ ਮਨਮੁਖਾ ਸਾਦੁ ਨ ਪਾਇਆ ॥
ਜਿਉ ਕਸਤੂਰੀ ਮਿਰਗੁ ਨ ਜਾਣੈ ਭ੍ਰਮਦਾ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਇਆ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਤਜਿ ਬਿਖੁ ਸੰਗ੍ਰਹੈ ਕਰਤੈ ਆਪਿ ਖੁਆਇਆ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਵਿਰਲੇ ਸੋਝੀ ਪਈ ਤਿਨਾ ਅੰਦਰਿ ਬ੍ਰਹਮੁ ਦਿਖਾਇਆ ॥
ਤਨੁ ਮਨੁ ਸੀਤਲੁ ਹੋਇਆ ਰਸਨਾ ਹਰਿ ਸਾਦੁ ਆਇਆ ॥
ਸਬਦੇ ਹੀ ਨਾਉ ਊਪਜੈ ਸਬਦੇ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਇਆ ॥
ਬਿਨੁ ਸਬਦੈ ਸਭੁ ਜਗੁ ਬਉਰਾਨਾ ਬਿਰਥਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਏਕੋ ਸਬਦੁ ਹੈ ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਇਆ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਸੋ ਹਰਿ ਪੁਰਖੁ ਅਗੰਮੁ ਹੈ ਕਹੁ ਕਿਤੁ ਬਿਧਿ ਪਾਈਐ ॥
ਤਿਸੁ ਰੂਪੁ ਨ ਰੇਖ ਅਦ੍ਰਿਸਟੁ ਕਹੁ ਜਨ ਕਿਉ ਧਿਆਈਐ ॥
ਨਿਰੰਕਾਰੁ ਨਿਰੰਜਨੁ ਹਰਿ ਅਗਮੁ ਕਿਆ ਕਹਿ ਗੁਣ ਗਾਈਐ ॥
ਜਿਸੁ ਆਪਿ ਬੁਝਾਏ ਆਪਿ ਸੁ ਹਰਿ ਮਾਰਗਿ ਪਾਈਐ ॥
ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਵੇਖਾਲਿਆ ਗੁਰ ਸੇਵਾ ਪਾਈਐ ॥੪॥

पृ-६४३

सलोकु महला ३॥

माइआ ममता मोहणी जिनि विणु दँता जगु खाइआ ॥
मनमुख खाधे गुरमुखि उबरे जिनी सचि नामि चितु लाइआ ॥
बिनु नावै जगु कमला फिरै गुरमुखि नदरी आइआ ॥

पृ-६४४

धँधा करतिआ निहफलु जनमु गवाइआ सुखदाता मनि न वसाइआ ॥
नानक नामु तिना कउ मिलिआ जिन कउ धुरि लिखि पाइआ ॥१॥

महला ३॥

घर ही महि अँमृतु भरपूरु है मनमुखा सादु न पाइआ ॥
जिउ कसतूरी मिरगु न जाणै भ्रमदा भरमि भुलाइआ ॥
अँमृतु तजि बिखु सँग्रहै करतै आपि खुआइआ ॥
गुरमुखि विरले सोझी पई तिना अँदरि ब्रहमु दिखाइआ ॥
तनु मनु सीतलु होइआ रसना हरि सादु आइआ ॥
सबदे ही नाउ ऊपजै सबदे मेलि मिलाइआ ॥
बिनु सबदै सभु जगु बउराना बिरथा जनमु गवाइआ ॥
अँमृतु एको सबदु है नानक गुरमुखि पाइआ ॥२॥

पउड़ी ॥

सो हरि पुरखु अँगमु है कहु कितु बिधि पाइऐ ॥
तिसु रूपु न रेख अदृसटु कहु जन किउ धिआईऐ ॥
निरँकारु निरँजनु हरि अगमु किआ कहि गुण गाईऐ ॥
जिसु आपि बुझाए आपि सु हरि मारगि पाईऐ ॥
गुरि पूरै वेखालिआ गुर सेवा पाईऐ ॥४॥

सलोक महला – ३

इस शब्द में गुरु जी हमें यह बताते हैं कि मायाजाल अर्थात सांसारिक धन सम्पदा और सामर्थ्य ने किस प्रकार से तमाम लोगों को भटका कर नष्ट किया है और कैसे गुरु के शिष्यों ने स्वयं को ऐसी स्थिति से बचाया है ।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), माया से प्रेम अति मनमोहक है (इतना अधिक कि लोग अनायास ही इस में बहक जाते हैं, जैसे कि) बिना दाँतों के ही उसने जगत को खा लिया है । विशेष रूप से अहंकारी लोग इसके द्वारा खाये जाते हैं, जब कि गुरु के शिष्य जिन्होंने सच्चे (प्रभु) के नाम को मन में बसाया हुया है वह उबरे रहते हैं । गुरु के विचारों द्वारा यह स्पष्ट हो गया है कि प्रभु के नाम के बिना संसार उन्मत्त दशा में भटक रहा है । सांसारिक जंजाल अर्थात् धंधों में उलझे रहने से (नाशवान मानव ने) अपना जन्म निष्फल रूप से गँवा दिया और मन में सुख एवं शांति के दाता को नहीं बसाया । परन्तु, ओ' नानक, केवल उन्हीं को प्रभु नाम मिल सका है जिनके भाग्य में पूर्वनिर्धारित था "।(१)

महला ३॥

कहाँ से प्रभु के नाम का वरदान पाया जा सकता है और इससे क्या लाभ अथवा आशीर्वाद प्राप्त होते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), अपना ही घर (हृदय) अँमित से (प्रभु के नाम से) परिपूर्ण है, परन्तु, अंहकारी जीव (मानव) इस अँमित का स्वाद नहीं ले पाते। जैसे कि एक मृग अपने अंदर ही छिपी कस्तूरी को नहीं जान पाता और भ्रम में पड़ा बन में भ्रमण करता रहता है। (इसी प्रकार मनुष्य) अपने अंदर के छिपे अँमित को छोड़ कर (सांसारिक धन सम्पदा रूपी) विष का संग्रह करता रहता है (पर वह असमर्थ है, क्योंकि) सृजनकर्ता ने स्वयं ही उसे (सही मार्ग से) भटका रखा है ।किन्हीं बिरले ही गुरु के शिष्यों को आत्मज्ञान हुआ और उन्हें उनके मन के अंदर ही गुरु ने

प्रभु को दिखा दिया ।तब उनका तन मन शीतल हो गया और उनकी जिह्वा को (प्रभु नाम के उच्चारण का) मीठा स्वाद प्राप्त हुया । हे' मेरे मित्रो, केवल गुरु के शब्द (गुरबाणी) द्वारा ही प्रभु का नाम मन में अंकुरित होता है और शब्द के विचार द्वारा ही प्रभु से आत्मा का मिलन हो पाता है । परन्तु, गुरु के शब्द (गुरबाणी) पर विचार ना करने से सारा संसार बावरा सा होकर भटक रहा है, तथा मानव जीवन व्यर्थ हो रहा है। (संक्षेप में) हे' नानक, गुरु का शब्द (वाणी) एक ही ऐसा अँमृत (जीवनदाता) है जो केवल गुरु के शिष्य को ही प्राप्त होता है "।(२)

पउड़ी

गुरु जी अब हमें यह बताते हैं कि हम उस प्रभु को कहाँ ढूँढ सकते हैं जो अगम्य है, हमारी पहुँच से बाहर है और जिसके विषय में हम कुछ भी नहीं जानते उसका ध्यान हम कैसे कर सकते हैं । गुरु जी हमसे एक प्रश्न के रूप में पूछते हैं " (हे' मेरे मित्रो), महानपुरुष हरि अगम्य है, अर्थात, हमारी बुद्धि से परे है, उसे हम किस विधि से प्राप्त कर सकते हैं ? वह अदृष्य है, तथा उसकी कोई रूप रेखा का ज्ञान नहीं है, कहो, हे' भक्तजन, हम उसका ध्यान कैसै करें ? उसका कोई आकार नहीं है, वह पवित्र प्रभु हमारी बुद्धि से बाहर है, उसके कौनसे और कैसे गुणों का बखान करके गायन किया जा सकता है । (इसका उत्तर यह है कि), जिसे प्रभु समझाना बुझाना चाहते हैं वह स्वयं ही उस मनुष्य को अपने राह पर डाल (सच्चे गुरु से मिला) देते हैं, (और गुरु उस मनुष्य की सहायता करके प्रभु को उसके अँतरमन में ही देखने समझने का ज्ञान देते हैं) । पूर्ण गुरु ने मुझे स्पष्ट रूप से प्रकट कर दिया कि उसकी सेवा करके (अर्थात, उसके निर्देश के अनुसार चलकर) हम प्रभु को पा लेते हैं "।(४)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि यदि हम सांसारिक मायाजाल के समस्त दुख दर्द एवं कठिनाइयों से मुक्ति चाहते हैं तो प्रभु नाम रूपी मधुर रस का पान करते हुए उससे जुड़े रहें । तब, सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य के पीछे भागने की अपेक्षा हमें गुरु की शरण में जाकर उसका आदेश लेना चाहिये । ऐसा करने से हम अपने हृदय के अंदर ही प्रभु नाम रूपी दैवी अँमृत का स्वाद पा सकेंगे और प्रभु के जीवनदायी प्रेम में लीन होकर उसे अपने हृदय के अंदर ही समझने विचारने और उसकी उपस्थिति का आभास पाने लगेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੪੫

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਪੰਨਾ ੬੪੬

ਵਿਣੁ ਨਾਵੈ ਸਭਿ ਭਰਮਦੇ ਨਿਤ ਜਗਿ ਤੋਟਾ ਸੈਸਾਰਿ ॥
ਮਨਮੁਖਿ ਕਰਮ ਕਮਾਵਣੇ ਹਉਮੈ ਅੰਧੁ ਗੁਬਾਰੁ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪੀਵਣਾ ਨਾਨਕ ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰਿ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਸਹਜੇ ਜਾਗੈ ਸਹਜੇ ਸੋਵੈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਅਨਦਿਨੁ ਉਸਤਤਿ ਹੋਵੈ ॥
ਮਨਮੁਖ ਭਰਮੈ ਸਹਸਾ ਹੋਵੈ ॥
ਅੰਤਰਿ ਚਿੰਤਾ ਨੀਦ ਨ ਸੋਵੈ ॥
ਗਿਆਨੀ ਜਾਗਹਿ ਸਵਹਿ ਸੁਭਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਰਤਿਆ ਬਲਿ ਜਾਉ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਸੇ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵਹਿ ਜੋ ਹਰਿ ਰਤਿਆ ॥
ਹਰਿ ਇਕੁ ਧਿਆਵਹਿ ਇਕੁ ਇਕੋ ਹਰਿ ਸਤਿਆ ॥
ਹਰਿ ਇਕੋ ਵਰਤੈ ਇਕੁ ਇਕੋ ਉਤਪਤਿਆ ॥
ਜੋ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵਹਿ ਤਿਨ ਡਰੁ ਸਟਿ ਘਤਿਆ ॥
ਗੁਰਮਤੀ ਦੇਵੈ ਆਪਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਰਿ ਜਪਿਆ ॥੯॥

पृ-६४५

सलोक महला ३॥

पृ-६४६

विणु नावै सभि भरमदे नित जगि तोटा सैसारि ॥
मनमुखि करम कमावणे हउमै अँधु गुबारु ॥
गुरमुखि अँमितु पीवणा नानक सबदु वीचारि ॥१॥

महला ३ ॥

सहजे जागै सहजे सोवै ॥
गुरमुखि अनदिनु उसतति होवै ॥
मनमुख भरमै सहसा होवै ॥
अँतरि चिँता नीद न सोवै ॥
गिआनी जागहि सवहि सुभाइ ॥
नानक नामि रतिआ बलि जाउ ॥२॥

पउड़ी ॥

से हरि नामु धिआवहि जो हरि रतिआ ॥
हरि इकु धिआवहि इकु इको हरि सतिआ ॥
हरि इको वरतै इकु इको उतपतिआ ॥
जो हरि नामु धिआवहि तिन डरु सटि घतिआ ॥
गुरमती देवै आपि गुरमुखि हरि जपिआ ॥९॥

सलोक महला – ३

इस शब्द में गुरु जी हमें यह बता रहे हैं कि हृदय के अंदर उपस्थित प्रभु नाम के अचूक भंडार का लाभ ना लेते हुये कैसे संसार में लोग आत्मिक रूप से कष्ट अथवा हानि में रहते हैं और अहंकार भाव से की गयी चेष्टाओं एवं कृत्यों द्वारा अपने दुख दर्द को और अधिक बढ़ा लेते हैं । वह यह भी संकेत देते हैं कि गुरु के ऐसे शिष्य बहुत कम हैं जो प्रभु नाम रूपी जीवनदायी अँमृत रस का पान करते हैं और शांति भरा सुखी जीवन जीते हैं ।

वह कहते हैं "प्रभु नाम का ध्यान किये बिना सब लोग ध्येयहीन भाव से घूमते रहते हैं और इस प्रकार नित्य ही संसार में (आत्मिक रूप से) सारहीनता बढ़ती जाती है । अंहकारी अथवा अभिमानी लोग अपने अहम की अँधकारमयी धुँध के गुबार में कुकर्म करते रहते हैं । परन्तु, नानक कहते हैं कि गुरु के शिष्य गुरु के शब्द (वाणी) पर विचार एवं अनुसरण कर अँमृत पीते हैं "।(१)

महला – ३

अब गुरु जी गुरु के शिष्यों और अंहकारी लोगों की मनोदशा की तुलना करते हुये कहते हैं " (हे' मेरे मित्रों, एक गुरु का शिष्य) सहज अवस्था में जागता है और सहज अवस्था में सोता है (अथवा जागते सोते वह हर समय प्रभु के ध्यान में रहता है) ।वह दिन रात प्रभु की प्रशंसा करना चाहता है । परन्तु, एक अहमयुक्त मनुष्य इधर उधर लक्ष्यहीन घूमता है । चूँकि, उसके मन में चिंता भरी रहती है इसलिये वह (आत्मिक रूप से शांत होकर) सो नहीं पाता । जब कि एक आत्मिक रूप से ज्ञानी पुरुष (प्रभु के) प्रेम में ही सोता और जागता है । नानक उन पर बलिहारी हैं जो (प्रभु के) नाम में रमे हुये हैं "।(२)

पउड़ी

अंत में, गुरु जी प्रभु का ध्यान करने वालों के गुण बताते हुये कहते हैं " जो प्रभु के प्रेम में मग्न होते हैं वही उसके नाम का ध्यान करते हैं। वह उस एक ही हरि का ध्यान करते हैं जो एक हरि सर्वशक्तिमान है । (उनका विश्वास है कि) वह एक ही हरि अमर और सर्वव्यापी है और उस एक ने सारी सृष्टि का सृजन किया है । अत:, जो हरि का नाम जपते हैं वह (मन में से सारा) डर निकाल फेंकते हैं ।(किन्तु, ईश्वर स्वयं

ही) गुरु के निर्देशों का वरदान देता है और गुरु के द्वारा ही (वह शिष्य) हरि का नाम जपता रहता है ”।(९)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि यदि हम अपने मन के समस्त भय से मुक्ति पाना चाहते हैं और सुख, शांति एवं सहज अवस्था में रहना चाहते हैं तो निश दिन सांसारिक जंजालों में भटकते रहने की अपेक्षा, हमें जीवन में गुरु के मार्ग दर्शन को अपना कर ईश्वर के नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੬੪੭

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਹਸਤੀ ਸਿਰਿ ਜਿਉ ਅੰਕਸੁ ਹੈ ਅਹਰਣਿ ਜਿਉ ਸਿਰੁ ਦੇਇ ॥
ਮਨੁ ਤਨੁ ਆਗੈ ਰਾਖਿ ਕੈ ਊਭੀ ਸੇਵ ਕਰੇਇ ॥

ਪੰਨਾ ੬੪੮

ਇਉ ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਪੁ ਨਿਵਾਰੀਐ ਸਭੁ ਰਾਜੁ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਕਾ ਲੇਇ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੁਝੀਐ ਜਾ ਆਪੇ ਨਦਰਿ ਕਰੇਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਜਿਨ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਆ ਆਏ ਤੇ ਪਰਵਾਣੁ ॥
ਨਾਨਕ ਕੁਲ ਉਧਾਰਹਿ ਆਪਣਾ ਦਰਗਹ ਪਾਵਹਿ ਮਾਣੁ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਖੀਆ ਸਿਖ ਗੁਰੂ ਮੇਲਾਈਆ ॥
ਇਕਿ ਸੇਵਕ ਗੁਰ ਪਾਸਿ ਇਕਿ ਗੁਰਿ ਕਾਰੈ ਲਾਈਆ ॥
ਜਿਨਾ ਗੁਰੁ ਪਿਆਰਾ ਮਨਿ ਚਿਤਿ ਤਿਨਾ ਭਾਉ ਗੁਰੂ ਦੇਵਾਈਆ ॥
ਗੁਰ ਸਿਖਾ ਇਕੋ ਪਿਆਰੁ ਗੁਰ ਮਿਤਾ ਪੁਤਾ ਭਾਈਆ ॥
ਗੁਰੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਬੋਲਹੁ ਸਭਿ ਗੁਰੁ ਆਖਿ ਗੁਰੂ ਜੀਵਾਈਆ ॥੧੪॥

पृ-६४७

सलोक महला ३॥

हसती सिरि जिउ अँकसु है अहरणि जिउ सिरु देइ ॥
मनु तनु आगै राखि कै ऊभी सेव करेइ ॥

पृ-६४८

इउ गुरमुखि आपु निवारीऐ सभु राजु सिृसटि का लेइ ॥
नानक गुरमुखि बुझीऐ जा आपे नदरि करेइ ॥१॥

महला ३॥

जिन गुरमुखि नामु धिआइआ आए ते परवाणु ॥
नानक कुल उधारहि आपणा दरगह पावहि माणु ॥२॥

पउड़ी

गुरमुखि सखीआ सिख गुरु मेलाईआ ॥
इकि सेवक गुर पासि इकि गुरि कारै लाईआ ॥
जिना गुरु पिआरा मनि चिति तिना भाउ गुरु देवाईआ ॥
गुर सिखा इको पिआरु गुर मिता पुता भाईआ ॥
गुरु सतिगुरु बोलहु सभि गुरु आखि गुरु जीवाईआ ॥१४॥

सलोक महला-३

इस शब्द में गुरु जी एक सुंदर उदाहरण के द्वारा यह दर्शाते हैं कि हमें कैसे किसी चतुराई और तर्क के बिना भक्तिभाव के साथ गुरु की आज्ञा तथा उपदेश को सच्चे मन से स्वीकार करते हुए अपने जीवन की दिशा को मोड़ देना चाहिए । वह कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो), जैसे कि हाथी के सिर पर महावत का अँकुश उसे उसके मार्ग पर चलने का लक्ष्य देता है और जैसे एक निहाई हथौड़े की मार सहती है, उसी प्रकार एक गुरु के शिष्य को अपना तन और मन गुरु को अर्पण कर (अर्थात, गुरु के निर्देश अथवा आज्ञा का पालन करने से होने वाली कठिनाई तथा कारण को विचारे बिना) उसकी सेवा में तत्पर रहना चाहिये । इस प्रकार, गुरु का शिष्य अपने अहम का निवारण स्वयं ही कर लेता है, (और मन में इतना संतुष्ट रहता है) जैसे कि उसने समस्त सृष्टि का राज्य पा लिया हो ।परन्तु, हे’ नानक, जब प्रभु स्वयं अपनी कृपा दृष्टि हमारे पर करते हैं तभी हम गुरु की शिक्षा के द्वारा ऐसी स्थिति को समझ बूझ पाते हैं ”।(१)

महला -३

गुरु की इच्छा एवं शिक्षा की पालना के लिये जो गुरु के शिष्य स्वयं को पूर्ण रूप से समर्पित कर देते हैं उन्हें क्या लाभ और वरदान प्राप्त होते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो), गुरु के अनुयायी (जिन्होंने स्वयं को पूर्ण रूप से गुरु को समर्पित करके उसके निर्देशों का पालन किया है, वह) प्रभु नाम का ध्यान करते हैं, अत: उनका आना स्वीकृत है, सफल है । ओ’ नानक, ऐसे भक्तजन अपने कुल का भी उद्धार करते हैं तथा प्रभु के दरबार में भी उन्हें सम्मान प्राप्त होता है”।(२)

पउड़ी

गुरु जी आगे बताते हैं कि अपने शिष्यों के साथ गुरु का व्यवहार कैसा है, तथा जब शिष्य एकत्र होते हैं तो वह क्या करते हैं । वह गुरु के शिष्यों की तुलना अपनी अंतरंग स्त्री मित्रों अथवा सखियों से करते हुए कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो), गुरु ने अपने शिष्यों अथवा सखियों को एकत्र किया है ।जिसमें से कुछ तो गुरु के पास रहकर गुरु की सेवा करती हैं, तथा कुछ औरों को दूसरे कार्यों में लगा दिया है । जिन (शिष्यों) के मन अथवा हृदय में गुरु का प्यार बसा है उनको गुरु अपने प्रेम का दान देते हैं । गुरु अपने शिष्यों, मित्रों, पुत्रों, पुत्रियों, तथा भाई बहनों को एक जैसा ही प्रेम करते हैं। (अत:, ओ’ गुरु के शिष्यों), तुम सब मिल कर सच्चे गुरु के नाम का उच्चारण करो, क्योंकि, जब हम “गुरु” शब्द का उच्चारण करते हैं तो वह हमें (आत्मिक रूप से) जीवन दान देते हैं ”।(१४)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि हमें अपने तन मन तथा आत्मा सभी कुछ गुरु की इच्छा एवं निर्देश के अनुसार समर्पित कर देना चाहिए। फलस्वरूप, हमारा अहम समाप्त होगा और हम अपने मन में संतुष्टि एवं आनंद का अनुभव इस प्रकार से करेंगे जैसे कि हम समस्त धरती पर राज्य कर रहे हों । हमें यह भी ध्यान रखना चाहिये कि गुरु अपने सभी शिष्यों को पुत्र पुत्रियों मित्रों तथा भाई बहनों के समान प्रेम करते हैं ।इसलिये, हमें अपने गुरु की प्रशंसा और उसके नाम का उच्चारण बारम्बार करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੬੪੯	**पृ-६४९**
ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥	**सलोक महला ३॥**
ਬ੍ਰਹਮੁ ਬਿੰਦੈ ਤਿਸ ਦਾ ਬ੍ਰਹਮਤੁ ਰਹੈ ਏਕ ਸਬਦਿ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥ ਨਵ ਨਿਧੀ ਅਠਾਰਹ ਸਿਧੀ ਪਿਛੈ ਲਗੀਆ ਫਿਰਹਿ ਜੋ ਹਰਿ ਹਿਰਦੈ ਸਦਾ ਵਸਾਇ ॥ ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਨਾਉ ਨ ਪਾਈਐ ਬੁਝਹੁ ਕਰਿ ਵੀਚਾਰੁ ॥ ਨਾਨਕ ਪੂਰੈ ਭਾਗਿ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮਿਲੈ ਸੁਖੁ ਪਾਏ ਜੁਗ ਚਾਰਿ ॥੧॥	ब्रहमु बिंदै तिस दा ब्रहमतु रहै एक सबदि लिव लाइ ॥ नव निधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि जो हरि हिरदै सदा वसाइ ॥ बिनु सतिगुर नाउ न पाईऐ बुझहु करि वीचारु ॥ नानक पूरै भागि सतिगुरु मिलै सुखु पाए जुग चारि ॥१॥
ਮਃ ੩ ॥	**महला ३॥**
ਕਿਆ ਗਭਰੂ ਕਿਆ ਬਿਰਧਿ ਹੈ ਮਨਮੁਖ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਭੁਖ ਨ ਜਾਇ ॥ ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਬਦੇ ਰਤਿਆ ਸੀਤਲੁ ਹੋਏ ਆਪੁ ਗਵਾਇ ॥ ਅੰਦਰੁ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਸੰਤੋਖਿਆ ਫਿਰਿ ਭੁਖ ਨ ਲਗੈਆਇ ॥	किआ गभरू किआ बिरधि है मनमुख त्रिसना भुख न जाइ ॥ गुरमुखि सबदे रतिआ सीतलु होए आपु गवाइ ॥ अँदरु त्रिपति सँतोखिआ फिरि भुख न लगै आइ ॥
ਪੰਨਾ ੬੫੦	**पृ-६५०**
ਨਾਨਕ ਜਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਕਰਹਿ ਸੋ ਪਰਵਾਣੁ ਹੈ ਜੋ ਨਾਮਿ ਰਹੇ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥੨॥	नानक जि गुरमुखि करहि सो परवाणु है जो नामि रहे लिव लाइ ॥२॥
ਪਉੜੀ ॥	**पउड़ी ॥**
ਹਉ ਬਲਿਹਾਰੀ ਤਿੰਨ ਕੰਉ ਜੋ ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਿਖਾ ॥ ਜੋ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਦੇ ਤਿਨ ਦਰਸਨੁ ਪਿਖਾ ॥ ਸੁਣਿ ਕੀਰਤਨੁ ਹਰਿ ਗੁਣ ਰਵਾ ਹਰਿ ਜਸੁ ਮਨਿ ਲਿਖਾ ॥ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸਲਾਹੀ ਰੰਗ ਸਿਉ ਸਭਿ ਕਿਲਵਿਖ ਕ੍ਰਿਖਾ ॥ ਧਨੁ ਧੰਨੁ ਸੁਹਾਵਾ ਸੋ ਸਰੀਰੁ ਥਾਨੁ ਹੈ ਜਿਥੈ ਮੇਰਾ ਗੁਰੁ ਧਰੇ ਵਿਖਾ ॥੧੯॥	हउ बलिहारी तिँन कँउ जो गुरमुखि सिखा ॥ जो हरि नामु धिआइदे तिन दरसनु पिखा ॥ सुणि कीरतनु हरि गुण रवा हरि जसु मनि लिखा ॥ हरि नामु सलाही रँग सिउ सभि किलविख क्रिखा ॥ धनु धँनु सुहावा सो सरीरु थानु है जिथै मेरा गुरु धरे विखा ॥१९॥

सलोक महला -३

कुछ लोग स्वयं को दूसरों से अधिक श्रेष्ठ अथवा उच्च स्तर का मानते हैं । विशेष रूप से हिन्दू मत में, ब्राह्मण जाति के लोग दूसरी अन्य जातियों के लोगों से अपने को ऊँचा समझते हैं । इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि वास्तव में कौन सच्चे ब्राह्मण अथवा उच्च जाति के हैं और किस प्रकार से वह समाज में अपने ब्राह्मणत्व तथा उच्च स्तर को बनाये रख सकते हैं ।

वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), एक ब्राह्मण जब केवल एक ईश्वर को मानता है और एक शब्द (प्रभु के नाम) में लीन हुया रहता है, तब उसका ब्राह्मणत्व (अथवा समाज में उच्च स्तर) बना रहता है । समस्त नौ निधियाँ (जैसे, धन, स्वास्थ्य, सत्ता इत्यादि) और अठारह सिद्धियाँ, (अतिरिक्त आत्मिक शक्तियाँ जो चमत्कार दिखाने में प्रयोग होती हैं, जैसे छोटा अथवा बड़ा हो जाना या दिखाई देना और लुप्त हो जाना) उसी मनुष्य के पीछे पीछे घूमती हैं जो सदा हरि के नाम को हृदय में बसाये रखता है । (परन्तु, हे' मेरे मित्रो), अपने अंदर से सोच विचार करके बूझो और इस तथ्य को समझो कि सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन के बिना हम प्रभु नाम (अथवा, दैवी प्रेम और आत्मबोध) को नहीं पा सकते हैं । हे' नानक, केवल सौभाग्य से ही सच्चे गुरु का मार्ग दर्शन प्राप्त हो पाता है जो हमें चारों युगों (सदैव) के लिये सुख देता है "।(१)

महला -३

गुरु जी यहाँ अंहकारी लोगों और गुरु के शिष्यों की मनोदशा की तुलना करते हुये कहते हैं " कोई भी अभिमानी मनुष्य, चाहे वह युवा हो अथवा वृद्ध, उसके मन में से इच्छायों की भूख तथा तृष्णा समाप्त नहीं हो पाती है।(परन्तु, वह गुरु का भक्त जो) गुरु के शब्द (वाणी) में रमा हुया है वह मन में संतुष्ट एवं शांत है और अहम को गँवा चुका है। जब अँतरमन इतना तृप्त और संतुष्ट हो तब (सांसारिक धन सम्पदा अथवा सामर्थ्य की) भूख आकर नहीं लगती ।अत: गुरु का भक्त जो प्रभु के नाम में लीन रहता है, हे' नानक, वह जो भी करता है सभी कुछ (प्रभु के दरबार में) स्वीकार होता है "।(२)

पउड़ी

गुरु जी अंत में इस पउड़ी में यह कहते हैं " मैं उन सिखों (शिष्यों) के बलिहारी हूँ जो गुरु के अनुयायी हैं । (मेरी इच्छा है कि) मैं उनके दर्शन करूँ जो हरि के नाम का ध्यान करते हैं । हरि नाम का कीर्तन उनसे श्रवण कर मैं हरि के गुणों में रम जाऊँ और उसके यश को मन में लिख दूँ, अथवा बसा लूँ ।प्रेम एवं श्रद्धा के साथ प्रभु नाम की प्रशंसा करके मैं अपने समस्त पाप अथवा दुष्कर्मों को उखाड़ के फेंक दूँ ।(इसलिये मेरा कहना है कि) वह शरीर नामक स्थान बारम्बार धन्य है और सुहावना है जहाँ मेरा गुरु बिराजमान हुया दिखाई देता है "।(१९)

इस पउड़ी का यह संदेश है कि गुरु के जो शिष्य सदा प्रभु के प्रेम में लीन रहते हैं हमें उनकी संगति में आकर प्रभु की महिमा में कीर्तन करना चाहिये तथा मन में उसके यश को दृढ़ता के साथ बसाना चाहिए । फलस्वरूप, हम बौधिक रूप से इतने संतुष्ट तथा सहज रहेंगे, मानो सांसारिक धन सम्पदा और सामाजिक रूप से उच्च स्तर पाने की हमारी सभी इच्छायें परिपूर्ण और शांत हो चुकी हैं ।

ਪੰਨਾ ੬੫੧

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਗੁਰ ਸੇਵਾ ਤੇ ਸੁਖੁ ਊਪਜੈ ਫਿਰਿ ਦੁਖੁ ਨ ਲਗੈ ਆਇ ॥
ਜੰਮਣੁ ਮਰਣਾ ਮਿਟਿ ਗਇਆ ਕਾਲੈ ਕਾ ਕਿਛੁ ਨ ਬਸਾਇ ॥
ਹਰਿ ਸੇਤੀ ਮਨੁ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸਚੇ ਰਹਿਆ ਸਮਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਹਉ ਬਲਿਹਾਰੀ ਤਿੰਨ ਕਉ ਜੋ ਚਲਨਿ ਸਤਿਗੁਰ ਭਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਬਿਨੁ ਸਬਦੈ ਸੁਧੁ ਨ ਹੋਵਈ ਜੇ ਅਨੇਕ ਕਰੈ ਸੀਗਾਰ ॥

ਪੰਨਾ ੬੫੨

ਪਿਰ ਕੀ ਸਾਰ ਨ ਜਾਣਈ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਪਿਆਰੁ ॥
ਸਾ ਕੁਸੁਧ ਸਾ ਕੁਲਖਣੀ ਨਾਨਕ ਨਾਰੀ ਵਿਚਿ ਕੁਨਾਰਿ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਹਰਿ ਹਰਿ ਅਪਣੀ ਦਇਆ ਕਰਿ ਹਰਿ ਬੋਲੀ ਬੈਣੀ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਈ ਹਰਿ ਉਚਰਾ ਹਰਿ ਲਾਹਾ ਲੈਣੀ ॥
ਜੋ ਜਪਦੇ ਹਰਿ ਹਰਿ ਦਿਨਸੁ ਰਾਤਿ ਤਿਨ ਹਉ ਕੁਰਬੈਣੀ ॥
ਜਿਨਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮੇਰਾ ਪਿਆਰਾ ਅਰਾਧਿਆ ਤਿਨ ਜਨ ਦੇਖਾ ਨੈਣੀ ॥
ਹਉ ਵਾਰਿਆ ਅਪਣੇ ਗੁਰੂ ਕਉ ਜਿਨਿ ਮੇਰਾ ਹਰਿ ਸਜਣੁ ਮੇਲਿਆ ਸੈਣੀ ॥੨੪॥

पृ-६५१

सलोक महला ३॥

गुर सेवा ते सुखु ऊपजै फिरि दुखु न लगै आइ ॥
जँमणु मरणा मिटि गइआ कालै का किछु न बसाइ ॥
हरि सेती मनु रवि रहिआ सचे रहिआ समाइ ॥
नानक हउ बलिहारी तिँन कउ जो चलनि सतिगुर भाइ ॥१॥

महला ३॥

बिनु सबदै सुधु न होवई जे अनेक करै सीगार ॥

पृ-६५२

पिर की सार न जाणई दूजै भाइ पिआरु ॥
सा कुसुध सा कुलखणी नानक नारी विचि कुनारि ॥२॥

पउड़ी ॥

हरि हरि अपणी दइआ करि हरि बोली बैणी ॥
हरि नामु धिआई हरि उचरा हरि लाहा लैणी ॥
जो जपदे हरि हरि दिनसु राति तिन हउ कुरबैणी ॥
जिना सतिगुरु मेरा पिआरा अराधिआ तिन जन देखा नैणी ॥
हउ वारिआ अपणे गुरू कउ जिनि मेरा हरि सजणु मेलिआ सैणी ॥२४॥

सलोक महला -३

इस शब्द में गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि जब हम गुरु की सेवा में रह कर गुरबाणी अथवा उसके आदेशों के अनुसार रहते हैं तो कैसा अनुभव होता है ।

वह कहते हैं " गुरु की सेवा करने (उसके परामर्शों के अनुसार रहने) से सुख शांति का प्रादुर्भाव होता है और फिर किसी प्रकार का दुख आकर नहीं लगता ।(छोटी अथवा साधारण कठिनाइयों को तो क्या कहें) जन्म मरण का फेर ही मिट जाता है, क्योंकि काल (अथवा यमराज) का कुछ भी वश उस मनुष्य पर नहीं रह जाता है ।(इस स्थिति में) हरि के साथ उसका मन रम जाता है और वह सच्चे (प्रभु) में समाया रहता है । अत:, मैं नानक, उनके उपर बलिहारी हूँ जो गुरु की भावना तथा इच्छा के अनुसार (गुरबाणी के विचारों को मान कर) चलते हैं "।(१)

महला -३

अब गुरु जी उस मनुष्य के विषय में बात करते हैं जिसका आचरण गुरु की वाणी के अनुसार नहीं होता, फलस्वरूप, आत्मिक रूप से वह निम्न स्तर का माना जाता है । ऐसे मनुष्य की तुलना एक वधू से करते हुए गुरु जी कहते हैं " गुरु के शब्द अथवा वाणी का अनुसरण किये बिना, वधू (रूपी आत्मा) शुद्ध अथवा पावन नहीं है चाहे वह कितने ही अनेक प्रकार के श्रंगार (साधू संतों के वेश) कर ले । यदि वह वधू (आत्मा) दूसरे (सांसारिक माया) से प्रेम करती है, तो वह अपने प्रियतम के सार तथा महत्व को कैसे जान सकेगी । हे' नानक, ऐसी (आत्मा रूपी) वधू, अशुद्ध है, कुलक्ष्णी है तथा नारियों में से एक पापिन नारी है " ।(२)

पउड़ी

उपरोक्त कथन के संदर्भ में गुरु जी यह बतलाते हैं कि हमें हरि से क्या प्रार्थना करनी चाहिये ।वह कहते हैं " हे' हरि, अपनी दया करो कि मैं हरि (तुम्हारी महिमा) के वचन बोलूँ । मैं हरि नाम का ध्यान करूँ, हरि नाम का उच्चारण करूँ और हरि नाम का लाभ प्राप्त करूँ । जो लोग दिन रात हरि नाम का जाप करते हैं, मैं उन पर बलिहारी हूँ । मेरी इच्छा है कि मैं उन भक्तजनों को अपने नयनों से देखूँ, जिन्होंने मेरे प्रिय सच्चे गुरु की आराधना की है । मैं अपने गुरु पर बलिहारी हूँ जिसने हरि जैसे सज्जन को एक मित्र के रूप में मुझसे मिलवा दिया "।(२४)

इस पउड़ी का संदेश है कि गुरु की शिक्षा एवं आदेशों के अनुसार हमें दिन रात हरि नाम का ध्यान और उसकी महिमा का गुणगान करना अति आवश्यक है और ऐसा वरदान पाने के लिए हमें प्रभु से प्रार्थना करते रहना चाहिए । साथ ही यह भी कामना करनी चाहिए कि हरि हमें ऐसे संतों की सँगति प्रदान करें जो सदा प्रभु नाम के ध्यान तथा यशगान में लीन रहते हों ।

ਪੰਨਾ ੬੫੩

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਏ ਮਨ ਹਰਿ ਜੀ ਧਿਆਇ ਤੂ ਇਕ ਮਨਿ ਇਕ ਚਿਤਿ ਭਾਇ ॥
ਹਰਿ ਕੀਆ ਸਦਾ ਸਦਾ ਵਡਿਆਈਆ ਦੇਇ ਨ ਪਛੋਤਾਇ ॥
ਹਉ ਹਰਿ ਕੈ ਸਦ ਬਲਿਹਾਰਣੈ ਜਿਤੁ ਸੇਵਿਐ ਸੁਖੁ ਪਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਮਿਲਿ ਰਹੈ ਹਉਮੈ ਸਬਦਿ ਜਲਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਆਪੇ ਸੇਵਾ ਲਾਇਅਨੁ ਆਪੇ ਬਖਸ ਕਰੇਇ ॥
ਸਭਨਾ ਕਾ ਮਾ ਪਿਉ ਆਪਿ ਹੈ ਆਪੇ ਸਾਰ ਕਰੇਇ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਨਿ ਤਿਨ ਨਿਜ ਘਰਿ ਵਾਸੁ ਹੈ ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਸੋਭਾ ਹੋਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਤੂ ਕਰਣ ਕਾਰਣ ਸਮਰਥੁਹਹਿ ਕਰਤੇ ਮੈ ਤੁਝ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥

ਪੰਨਾ ੬੫੪

ਤੁਧੁ ਆਪੇ ਸਿਸਟਿ ਸਿਰਜੀਆ ਆਪੇ ਫੁਨਿ ਗੋਈ ॥
ਸਭੁ ਇਕੋ ਸਬਦੁ ਵਰਤਦਾ ਜੋ ਕਰੇ ਸੁ ਹੋਈ ॥
ਵਡਿਆਈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਦੇਇ ਪ੍ਰਭੁ ਹਰਿ ਪਾਵੈ ਸੋਈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਨਕ ਆਰਾਧਿਆ ਸਭਿ ਆਖਹੁ ਧੰਨੁ ਧੰਨੁ ਧੰਨੁ ਗੁਰੁ ਸੋਈ ॥੨੯॥੧॥ ਸੁਧੁ

पृ-६५३

सलोक महला ३॥

ए मन हरि जी धिआइ तू इक मनि इक चिति भाइ ॥
हरि कीआ सदा सदा वडिआईआ देइ न पछोताइ ॥
हउ हरि कै सद बलिहारणै जितु सेविऐ सुखु पाइ ॥
नानक गुरमुखि मिलि रहै हउमै सबदि जलाइ ॥१॥

महला ३॥

आपे सेवा लाइअनु आपे बखस करेइ ॥
सभना का मा पिउ आपि है आपे सार करेइ ॥
नानक नामु धिआइनि तिन निज घरि वासु है जुगु जुगु सोभा होइ ॥२॥

पउड़ी ॥

तू करण कारण समरथुहहि करते मै तुझ बिनु अवरु न कोई ॥

पृ-६५४

तुधु आपे सिसटि सिरजीआ आपे फुनि गोई ॥
सभु इको सबदु वरतदा जो करे सु होई ॥
वडिआई गुरमुखि देइ प्रभु हरि पावै सोई ॥
गुरमुखि नानक आराधिआ सभि आखहु धँनु धँनु धँनु गुरु सोई ॥२९॥१॥सुधु

सलोक महला – ३

सोरठि की वार (काव्य रचना) की इस अंतिम पउडी में गुरू जी स्वयं अपने मन को और परोक्ष में हमें भी प्रेम और श्रद्धा के साथ प्रभु नाम का ध्यान करने का परामर्श देते हैं । वह हमें यह भी बताते हैं कि किस प्रकार से प्रभु सदा हम जीवों पर अपने महान आशीर्वादों की बौछार करता रहता है और अनेकों उपहार देने के उपरांत भी मानवीय प्रवृत्ति की भाँति पश्चाताप नहीं करता ।

वह कहते हैं " ओ' मेरी आत्मा, तुम एकाग्र मन एवं प्रेम भाव के साथ प्रिय हरि जी का स्मरण अथवा ध्यान करो ।हरि की यह महानता सदा सदा से रही है कि वह कभी (आशीर्वाद अथवा उपहार) देकर खेद नहीं करते । अतः, मैं सदैव ही हरि पर बलिहारी रहता हूँ, जिसकी सेवा करने से शांति और सुख प्राप्त होता है । ओ' नानक, गुरु के भक्त अपने अहम को गुरु के शब्द (वाणी) द्वारा भस्म करके प्रभु के साथ सदा लीन रहते हैं "।(१)

महला -३

आगे, प्रभु की एक और अनूठी शक्ति एवं सामर्थ्य को गुरु जी व्यक्त करते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), प्रभु स्वयं ही (हम जीवों को) अपनी सेवा में लगाते हैं और स्वयं ही क्षमा कर देते हैं । वह स्वयं ही समस्त (जीवों) के माता पिता के समान हैं और स्वयं ही (सबकी) सार अथवा देख रेख एवं सहायता करते हैं । ओ' नानक, जो (भक्तजन प्रभु) नाम का ध्यान करते हैं वह अपने घर में वास करते हैं (अपने मन में स्थिर रहते हैं) और उनकी प्रशंसा तथा शोभा युगों युगों तक होती रहती है "।(२)

पउड़ी

गुरु जी इस काव्य रचना के अंत में प्रभु की असीमित शक्तियों को स्वीकार करते हुए उस पर अपने पूर्ण विश्वास के साथ कहते हैं " ओ' सृजनकर्ता, तुम कुछ भी करने तथा उसके कारण के समर्थ हो, मेरे विचार में तेरे बिना कोई और दूसरा नहीं हैं ।तुमने स्वयं ही इस सृष्टि का सृजन किया है और फिर स्वयं ही उसे नष्ट किया है । सभी ओर एक ही (ईश्वर) का शासन है, जो भी वह करता है वही होता है । जिस किसी

को भी प्रभु गुरु के द्वारा यश प्रदान करते हैं उसी को हरि प्राप्त होते हैं । ओ' नानक, कोई भी भक्त केवल गुरु के द्वारा ही प्रभु की आराधना कर सकता है, अतः समस्त जन उस गुरु को बारम्बार धन्य धन्य कहो "। (२९-१- शुद्ध किया गया)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम शांति और यश प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें गुरु की शरण में जाकर सच्चे प्रेम और एकाग्र मन से प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये । हमें प्रभु के प्रति सदा आभारी रहना चाहिये जो हमें अनेकों उपहार देता रहता है और कभी भी उनके लिए उसे खेद नहीं होता ।हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि केवल उसी की कृपा से मनुष्य को गुरु का मार्ग दर्शन एवं प्रभु नाम का आनंद और यश प्राप्त होता है ।

ਪੰਨਾ ੬੫੫

ਕਿਆ ਪੜੀਐ ਕਿਆ ਗੁਨੀਐ ॥
ਕਿਆ ਬੇਦ ਪੁਰਾਨਾਂ ਸੁਨੀਐ ॥
ਪੜੇ ਸੁਨੇ ਕਿਆ ਹੋਈ ॥
ਜਉ ਸਹਜ ਨ ਮਿਲਿਓ ਸੋਈ ॥੧॥

ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਨ ਜਪਸਿ ਗਵਾਰਾ ॥
ਕਿਆ ਸੋਚਹਿ ਬਾਰੰ ਬਾਰਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਅੰਧਿਆਰੇ ਦੀਪਕੁ ਚਹੀਐ॥

ਪੰਨਾ ੬੫੬

ਇਕ ਬਸਤੁ ਅਗੋਚਰ ਲਹੀਐ ॥
ਬਸਤੁ ਅਗੋਚਰ ਪਾਈ ॥
ਘਟਿ ਦੀਪਕੁ ਰਹਿਆ ਸਮਾਈ ॥੨॥

ਕਹਿ ਕਬੀਰ ਅਬ ਜਾਨਿਆ ॥
ਜਬ ਜਾਨਿਆ ਤਉ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ॥
ਮਨ ਮਾਨੇ ਲੋਗੁ ਨ ਪਤੀਜੈ ॥
ਨ ਪਤੀਜੈ ਤਉ ਕਿਆ ਕੀਜੈ ॥੩॥੭॥

पृ-६५५

किआ पड़ीऐ किआ गुनीऐ ॥
किआ बेद पुरानां सुनीऐ ॥
पड़े सुने किआ होई ॥
जउ सहज न मिलिओ सोई ॥१॥

हरि का नामु न जपसि गवारा ॥
किआ सोचहि बारँ बारा ॥१॥रहाउ॥

अँधिआरे दीपकु चहीऐ ॥

पृ-६५६

इक बसतु अगोचर लहीऐ ॥
बसतु अगोचर पाई ॥
घटि दीपकु रहिआ समाई ॥२॥

कहि कबीर अब जानिआ ॥
जब जानिआ तउ मनु मानिआ ॥
मन माने लोगु न पतीजै ॥
न पतीजै तउ किआ कीजै ॥३॥७॥

राग सोरठ बाणी भक्त कबीर जी की घर -१
१ओंकार सतिगुर प्रसाद सलोक (७)

इस शब्द में कबीर जी हमें पवित्र ग्रंथों एवं पुस्तकों का प्रचलित रूप से पठन, गायन, मंत्र अथवा श्लोक आदि के उच्चारण करते रहने पर तनिक सचेत करना चाहते हैं । उनके अनुसार यदि हम अपने जीवन में उस अगम्य प्रभु के महत्व और इस प्रकार के पठन-पाठन तथा अनेक कर्मकांडी प्रकियायों के बीच का अंतर ही नहीं समझ पाते हैं तो इन सभी ग्रंथों को पढ़ने सुनने का कोई लाभ नहीं है ।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो) धार्मिक ग्रंथों, जैसे, वेद पुराणों को पढ़ने, सुनने तथा विचारने का क्या लाभ है । इन सबको पढ़ सुन कर क्या होगा, यदि हम सहज रूप में उस (प्रभु) से ही नहीं मिल पाते हैं "। (१)

अतः अपने (परोक्ष में हमारे भी) मन को झिंझोड़ते हुये कबीर जी कहते हैं " हे' मेरे गँवार मन, तू हरि का नाम नहीं जपता है, बारम्बार तू क्या सोच विचार कर रहा है "।(१-विराम)

कबीर जी अब दैवी ज्ञान की आवश्यकता और उसके वास्तविक ध्येय पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (जैसे कि अपने आस पास के अँधियारे को दूर करने के लिये दीपक की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार) हमें अपने अंदर के अंधकार को हटाने के लिये दैवी ज्ञान का दीपक चाहिए और यह दीपक एक ऐसी अगोचर वस्तु (प्रभु का नाम) है, जो हमारी साधारण बुद्धि से परे है। जब इस अगोचर वस्तु को कोई पा लेता है तब दैवी ज्ञान का दीपक उसके मन में समाया रहता है ।"।(२)

इस बहुमूल्य वस्तु को पा लेने के पश्चात कबीर जी अपने मन की दशा को दर्शाते हुये कहते हैं " (ओ' लोगों), कबीर कहता है कि मैंने अब उस अगम्य प्रभु को जान लिया है और चूँकि, अब जान चुका हूँ तो मेरा मन (उस सर्वव्यापी ईश्वर पर) विश्वास करता है । (किन्तु, मैंने देखा है कि) लोग केवल मेरे मन की शांति और विश्वास पर संतुष्ट नहीं होते (वह फिर भी प्रभु की प्राप्ति के लिये कुछ न कुछ कर्मकाण्ड करते रहते हैं । इस लिये उनके साथ वाद विवाद करने का कोई लाभ नहीं और अंत में हमें कहना पड़ता है कि) यदि वह प्रभावित होकर विश्वास नहीं करते हैं तो हम क्या कर सकते हैं, (अतः हमें उनके साथ विवाद में पड़ कर समय नष्ट नहीं करना चाहिये "।(३-७)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम उस अगम्य प्रभु को अपने हृदय के अंदर पहचानने में असफल हैं तो धार्मिक ग्रंथों आदि को पढ़ना सुनना व्यर्थ है । प्रभु को एक बार मन में पहचान लेने पर हमें दूसरे लोगों के व्यंग्य की चिंता नहीं करनी चाहिये । हमें प्रभु नाम के ध्यान में लीन रह कर सहज अवस्था का आनंद प्राप्त करते रहना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੬੫੭

ਰਾਗੁ ਸੋਰਠਿ ਬਾਣੀ ਭਗਤ ਰਵਿਦਾਸ ਜੀ ਕੀ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਜਬ ਹਮ ਹੋਤੇ ਤਬ ਤੂ ਨਾਹੀ ਅਬ ਤੂਹੀ ਮੈ ਨਾਹੀ ॥
ਅਨਲ ਅਗਮ ਜੈਸੇ ਲਹਰਿ ਮਇ ਓਦਧਿ ਜਲ ਕੇਵਲ ਜਲ ਮਾਂਹੀ ॥੧॥

ਮਾਧਵੇ ਕਿਆ ਕਹੀਐ ਭ੍ਰਮੁ ਐਸਾ ॥
ਜੈਸਾ ਮਾਨੀਐ ਹੋਇ ਨ ਤੈਸਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਨਰਪਤਿ ਏਕੁ ਸਿੰਘਾਸਨਿ ਸੋਇਆ ਸੁਪਨੇ ਭਇਆ ਭਿਖਾਰੀ ॥
ਅਛਤ ਰਾਜ ਬਿਛੁਰਤ ਦੁਖੁ ਪਾਇਆ ਸੋ ਗਤਿਭਈ ਹਮਾਰੀ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੬੫੮

ਰਾਜ ਭੁਇਅੰਗ ਪ੍ਰਸੰਗ ਜੈਸੇ ਹਹਿ ਅਬ ਕਛੁ ਮਰਮੁ ਜਨਾਇਆ ॥
ਅਨਿਕ ਕਟਕ ਜੈਸੇ ਭੂਲਿ ਪਰੇ ਅਬ ਕਹਤੇ ਕਹਨੁ ਨ ਆਇਆ ॥੩॥

ਸਰਬੇ ਏਕੁ ਅਨੇਕੈ ਸੁਆਮੀ ਸਭ ਘਟ ਭੋੁਗਵੈ ਸੋਈ ॥
ਕਹਿ ਰਵਿਦਾਸ ਹਾਥ ਪੈ ਨੇਰੈ ਸਹਜੇ ਹੋਇ ਸੁ ਹੋਈ ॥੪॥੧॥

पृ-६५७

राग सोरठि बाणी भगत रविदास जी की

१ओंकार सतिगुर प्रसाद ॥

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही ॥
अनल अगम जैसे लहरि मइ ओदधि जल केवल जल मांही ॥१॥

माधवे किआ कहीऐ भ्रमु ऐसा ॥
जैसा मानीऐ होइ न तैसा ॥१॥रहाउ॥

नरपति एकु सिँघासनि सोइआ सुपने भइआ भिखारी ॥
अछत राज बिछुरत दुखु पाइआ सो गति भई हमारी ॥२॥

पृ-६५८

राज भुइअँग प्रसंग जैसे हहि अब कछु मरमु जनाइआ ॥
अनिक कटक जैसे भूलि परे अब कहते कहनु न आइआ ॥३॥

सरबे एकु अनेकै सुआमी सभ घट भोगवै सोई ॥
कहि रविदास हाथ पै नेरै सहजे होइ सु होई ॥४॥१॥

राग सोरठ बानी भगत रविदास जी की
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस सुंदर शब्द में भक्त रविदास जी कहते हैं कि कैसे हम प्रभु के विभिन्न रूपों के अंश हैं, परन्तु, अपनी अज्ञानता तथा अहम के कारण उसे संसार से भिन्न समझते हैं । रविदास जी यहाँ हमारा यह भ्रम दूर करना चाह रहे हैं ।

सर्वप्रथम, वह प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं " (हे' प्रभु), जब तक हम होते हैं (क्योंकि अहम के कारण हम स्वयं के लिये ऐसा ही समझते हैं), तब तक तुम (प्रभु हमारे अंदर) नहीं हो, परन्तु (मेरा अहम जाने के पश्चात तुम मेरे अंदर प्रकट हो गये हो अतः) अब तुम हो और मैं नहीं हूँ । (अब मैं जान गया हूँ कि जैसे) सागर में प्रचंड चक्रवात के समय अनेकों विभिन्न प्रकार की लहरें उत्पन्न होती हैं जो वास्तव में जल में ही केवल जल का दूसरा रूप है, (इसी प्रकार, सभी जीव तेरा ही प्रतिरूप हैं)"।(१)

इसलिये, रविदास जी विनम्रता से स्वीकार करते हैं और कहते हैं " हे' माधव, हम क्या कहें, हम अपनी आशंकाओं में इतने भ्रमित रहते हैं कि जिसे वास्तविक मानते रहते हैं वह वैसा नहीं होता है "।(१-विराम)

स्वनिर्मित आशंकाओं तथा भ्रमों का एक उदाहरण देते हुये रविदास जी कहते हैं " जैसे कि सिंहासन पर बैठा एक राजा नींद आने पर स्वप्न में भी अक्षत राज पाट से बिछुड़ने पर स्वयं को भिक्षुक के रूप में देख कर दुख से विचलित हो जाता है, ठीक उसी प्रकार की गति (दशा)हमारी भी है "।(२)

सत्य को उन्होंने कैसे जाना, इस पर रविदास जी एक प्रसिद्ध उदाहरण का वर्णन करते हुये कहते हैं " जैसे कि, प्रसंग में आता है कि एक रस्सी किसी को एक साँप के भाँति दिखाई देती है, उसी प्रकार मैं प्रभु तथा उसकी रचना का मर्म कुछ जान गया हूँ । जैसे अनेक प्रकार के सोने से बने) कंगनों को भ्रम से कोई भी उन्हें भिन्न धातुओं से बने सोच सकता है (परन्तु वास्तव में वह सब एक ही सोने से बने हैं), यदि मैं अब यह कहने का प्रयत्न करूँ (कि प्रभु तथा उसके द्वारा सृजित जीवों में भिन्नता है) तो ऐसा नहीं कह पाऊँगा "।(३)

अंत में रविदास जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), वह विलक्षण एक ही स्वामी अनेकों (जीवों) में व्याप्त है और सभी के हृदय में वही जीवन को भोगता है । रविदास कहते हैं कि वह हमारे हाथों से भी अधिक हमारे निकट है और जो कुछ भी सहज व नैसर्गिक रूप से हो रहा है वही होगा (अतः हमें उस प्रभु की इच्छा के अनुसार जो भी हो रहा है वह प्रसन्नता से स्वीकार करना चाहिये, तथा चिंता ना करते हुये उसे बदलने का प्रयास नहीं करना चाहिये)"।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि ईश्वर सर्वव्यापी है, प्रत्येक जीव के हृदय में है, परन्तु अपने अहम के कारण हम स्वयं को उससे भिन्न समझते हैं । यह केवल अहम ही है जिसके कारण मानव जाति के बीच समस्त लड़ाई झगड़े होते हैं । इस लिये, प्रभु को सभी स्थानों एवं प्रत्येक हृदय में व्याप्त देखने के लिये हमें अपने अहम को मिटाने की आवश्यकता है , तत्पश्चात् हम शांति से रहेंगे और प्रभु में लीन रह कर आनंद प्राप्त करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੬੦

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੧ ਘਰੁ ੧ ਚਉਪਦੇ

ੴ ਸਤਿ ਨਾਮੁ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰਭਉ ਨਿਰਵੈਰੁ ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਅਜੂਨੀ ਸੈਭੰ ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਜੀਉ ਡਰਤੁ ਹੈ ਆਪਣਾ ਕੈ ਸਿਉ ਕਰੀ ਪੁਕਾਰ ॥
ਦੂਖ ਵਿਸਾਰਣੁ ਸੇਵਿਆ ਸਦਾ ਸਦਾ ਦਾਤਾਰੁ ॥੧॥

ਸਾਹਿਬੁ ਮੇਰਾ ਨੀਤ ਨਵਾ ਸਦਾ ਸਦਾ ਦਾਤਾਰੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਅਨਦਿਨੁ ਸਾਹਿਬੁ ਸੇਵੀਐ ਅੰਤਿ ਛਡਾਏ ਸੋਇ ॥
ਸੁਣਿ ਸੁਣਿ ਮੇਰੀ ਕਾਮਣੀ ਪਾਰਿ ਉਤਾਰਾ ਹੋਇ ॥੨॥

ਦਇਆਲ ਤੇਰੈ ਨਾਮਿ ਤਰਾ ॥
ਸਦ ਕੁਰਬਾਣੈ ਜਾਉ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਰਬੰ ਸਾਚਾ ਏਕੁ ਹੈ ਦੂਜਾ ਨਾਹੀ ਕੋਇ ॥
ਤਾ ਕੀ ਸੇਵਾ ਸੋ ਕਰੇ ਜਾ ਕਉ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ॥੩॥

ਤੁਧੁ ਬਾਝੁ ਪਿਆਰੇ ਕੇਵ ਰਹਾ ॥
ਸਾ ਵਡਿਆਈ ਦੇਹਿ ਜਿਤੁ ਨਾਮਿ ਤੇਰੇ ਲਾਗਿ ਰਹਾਂ ॥
ਦੂਜਾ ਨਾਹੀ ਕੋਇ ਜਿਸੁ ਆਗੈ ਪਿਆਰੇ ਜਾਇ ਕਹਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸੇਵੀ ਸਾਹਿਬੁ ਆਪਣਾ ਅਵਰੁ ਨ ਜਾਚੰਉ ਕੋਇ ॥
ਨਾਨਕੁ ਤਾ ਕਾ ਦਾਸੁ ਹੈ ਬਿੰਦ ਬਿੰਦ ਚੁਖ ਚੁਖ ਹੋਇ ॥੪॥

ਸਾਹਿਬ ਤੇਰੇ ਨਾਮ ਵਿਟਹੁ ਬਿੰਦ ਬਿੰਦ ਚੁਖ ਚੁਖ ਹੋਇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥੪॥੧॥

पृ-६६०

धनासरी महला १ घर १ चउपदे

१ओंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभँ गुर प्रसादि ॥

जीउ डरतु है आपणा कै सिउ करी पुकार ॥
दूख विसारणु सेविआ सदा सदा दातारु ॥१॥

साहिबु मेरा नीत नवा सदा सदा दातारु ॥१॥रहाउ॥

अनदिनु साहिबु सेवीऐ अँति छडाए सोइ ॥
सुणि सुणि मेरी कामणी पारि उतारा होइ ॥२॥

दइआल तेरै नामि तरा ॥
सद कुरबाणै जाउ ॥१॥रहाउ॥

सरबँ साचा एकु है दूजा नाही कोइ ॥
ता की सेवा सो करे जा कउ नदरि करे ॥३॥

तुधु बाझु पिआरे केव रहा ॥
सा वडिआई देहि जितु नामि तेरे लागि रहां ॥
दूजा नाही कोइ जिसु आगै पिआरे जाइ कहा ॥१॥रहाउ॥

सेवी साहिबु आपणा अवरु न जाचँउ कोइ ॥
नानकु ता का दासु है बिँद बिँद चुख चुख होइ ॥४॥

साहिब तेरे नाम विटहु बिँद बिँद चुख चुख होइ ॥१॥रहाउ ॥४॥१॥

धनासरी महला - १ चउपदे

इस शब्द में गुरु जी जैसे प्रत्यक्ष रूप से प्रभु से वार्तालाप करते हुए अपनी वधू रूपी आत्मा का प्रभु रूपी पति से बिछुड़े होने पर विरह वेदना तथा उसके प्रति प्रेम की भावना दर्शाते हैं। इस प्रकार से वह परोक्ष रूप से प्रकट करते हैं कि हमारे मन में प्रभु के लिये कितना प्रेम एवं श्रद्धा होनी चाहिए।

हमारे जैसी स्थिति में स्वयं को रखते हुये गुरु जी अपने मन के भय को प्रकट करते हुये कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो, यह संसार दुखों का सागर है, तथा इन कष्टों को देख कर) मेरी आत्मा भयभीत है (और मैं विक्षिप्त हूँ कि सहायता के लिये) किसके पास जाकर गुहार लगाऊँ? (अतः, इधर उधर समस्त सम्भावनायों पर विचार करने के पश्चात) मैंने दुखों को बिसारने वाले उस प्रभु की सेवा और भक्ति की, जो कि सदा से ही उपकारी और दाता हैं"।(१)

इस दाता का एक अनूठा गुण हमारे साथ साझा करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), मेरा स्वामी (इतना उदार है कि वह) नित्य ही नये प्रकार के उपहार देता है, प्रत्येक दिन वह एक नये दाता के रूप में सदा और सदा देता रहता है"।(१-विराम)

इसलिये अपने (तथा परोक्ष में हमारे) मन को गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरी आत्मा), दिन रात हम अपने स्वामी की सेवा (विचार और मनन) करें, क्योंकि, यही प्रभु अँत में हमें (कष्टों से) बचायेंगे। हाँ, हे' मेरी आत्मा, अथवा बुद्धि, ध्यान से सुनो, (उस प्रभु का ध्यान करने से ही) इस भयावह भवसागर से पार उतरा जाता है"।(२)

गुरु जी अब प्रभु को ही सम्बोधित करते हुये कहते हैं "(ओ' मेरे) दयालु प्रभु तेरे नाम (का ध्यान करने) के कारण ही मैं (भयानक

भवसागर को) तैर कर पार लग सकता हूँ, इसलिये, तुम्हारे पर सदा बलिहारी हूँ ”।(१-विराम)

किसी और दूसरे पर कभी नहीं केवल एक ही प्रभु पर ध्यान करना कितना आवश्यक है इस पर गुरु जी कहते हैं “(ओ’ मेरे मित्रो), समस्त में केवल एक ही सच्चा प्रभु समाया है, उसके अतिरिक्त और कोई दूसरा नहीं है । वह जिस पर भी अपनी कृपा दृष्टि करता है केवल वही उसकी सेवा (उसके नाम का ध्यान) कर पाता है ”।(३)

गुरु जी फिर से एक बार प्रेमपूर्वक भाव से प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं “ ओ’ मेरे प्रिय, (क्योंकि, मैं तुम्हारे बिना व्यग्र हो जाता हूँ, अतः) मैं कैसे तुम्हारे बिना रहूँ ? कृपया, मुझे ऐसा महा वरदान दो, जिसके निमित्त मैं सदा तेरे नाम में संलग्न रहूँ । क्योंकि, हे’ मेरे प्रिय, यहाँ और कोई दूसरा नहीं है, जिसके सम्मुख जाकर मैं (अपनी व्यथा का) वर्णन कर सकूँ ”।(१-विराम)

एक ईश्वर पर अपने विश्वास की पुनरुक्ति करते हुये गुरु जी कहते हैं “ (हे’ मेरे मित्रो), मैं केवल अपने स्वामी की सेवा में रहता हूँ, तथा किसी और दूसरे को परखना नहीं चाहता । नानक, उस (प्रभु) के दास हैं और उनका रोम रोम (सर्वस्व) उस पर बलिहारी है ”।(४)

अंत में वह एक बार फिर कहते हैं “हे’ मेरे स्वामी, मेरा रोम रोम (सर्वस्व) तेरे नाम पर बलिहारी है ”।(१-विराम-४-१)

इस शब्द का संदेश है कि केवल एक ही प्रभु है जो भयावह भवसागर से हमारा बचाव तथा उद्धार कर सकता है इसलिये, किसी अन्य का नहीं केवल उसी एक के नाम का ध्यान अथवा पूजा पाठ करना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੬੬੧

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਜੀਉ ਤਪਤੁ ਹੈ ਬਾਰੋ ਬਾਰ ॥
ਤਪਿ ਤਪਿ ਖਪੈ ਬਹੁਤੁ ਬੇਕਾਰ ॥
ਜੈ ਤਨਿ ਬਾਣੀ ਵਿਸਰਿ ਜਾਇ ॥
ਜਿਉ ਪਕਾ ਰੋਗੀ ਵਿਲਲਾਇ ॥੧॥

ਬਹੁਤਾ ਬੋਲਣੁ ਝਖਣੁ ਹੋਇ ॥
ਵਿਣੁ ਬੋਲੇ ਜਾਣੈ ਸਭੁ ਸੋਇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਿਨਿ ਕਨ ਕੀਤੇ ਅਖੀ ਨਾਕੁ ॥
ਜਿਨਿ ਜਿਹਵਾਦਿਤੀ ਬੋਲੇ ਤਾਤੁ ॥

ਪੰਨਾ ੬੬੨

ਜਿਨਿ ਮਨੁ ਰਾਖਿਆ ਅਗਨੀ ਪਾਇ ॥
ਵਾਜੈ ਪਵਣੁ ਆਖੈ ਸਭ ਜਾਇ ॥੨॥

ਜੇਤਾ ਮੋਹੁ ਪਰੀਤਿ ਸੁਆਦ ॥
ਸਭਾ ਕਾਲਖ ਦਾਗਾ ਦਾਗ ॥
ਦਾਗ ਦੋਸ ਮੁਹਿ ਚਲਿਆ ਲਾਇ ॥
ਦਰਗਹ ਬੈਸਣ ਨਾਹੀ ਜਾਇ ॥੩॥

ਕਰਮਿ ਮਿਲੈ ਆਖਣੁ ਤੇਰਾ ਨਾਉ ॥
ਜਿਤੁ ਲਗਿ ਤਰਣਾ ਹੋਰੁ ਨਹੀ ਥਾਉ ॥
ਜੇ ਕੋ ਡੂਬੈ ਫਿਰਿ ਹੋਵੈ ਸਾਰ ॥
ਨਾਨਕ ਸਾਚਾ ਸਰਬ ਦਾਤਾਰ ॥੪॥੩॥੫॥

पृ-६६१

धनासरी महला १॥

जीउ तपतु है बारो बार ॥
तपि तपि खपै बहुतु बेकार ॥
जै तनि बाणी विसरि जाइ ॥
जिउ पका रोगी विललाइ ॥१॥

बहुता बोलणु झखणु होइ ॥
विणु बोले जाणै सभु सोइ ॥१॥रहाउ॥

जिनि कन कीते अखी नाकु ॥
जिनि जिहवादिती बोले तातु ॥

पृ-६६२

जिनि मनु राखिआ अगनी पाइ ॥
वाजै पवणु आखै सभ जाइ ॥२॥

जेता मोहु परीति सुआद ॥
सभा कालख दागा दाग ॥
दाग दोस मुहि चलिआ लाइ ॥
दरगह बैसण नाही जाइ ॥३॥

करमि मिलै आखणु तेरा नाउ ॥
जितु लगि तरणा होरु नही थाउ ॥
जे को डूबै फिरि होवै सार ॥
नानक साचा सरब दातार ॥४॥३॥५॥

धनासरी महला – १

कुछ लेखकों के अनुसार गुरु जी ने इस शब्द का उच्चारण एक कोढ़ी भिखारी से मिलने पर किया था । गुरु जी ने उसे केवल शरीर का ही नहीं, अपितु, आत्मा का भी उपचार करने का उपाय बताया । यह शब्द हमें भी हमारे दुखों के कारणों के विषय पर कुछ बहुमूल्य सुझाव देता है कि हम किस प्रकार से किसी भी कष्ट अथवा सँताप से उबर कर शांति से रह सकते हैं ।

गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो, हमारा) मन बार बार बहुत तप्त अथवा दुखी होता है, पर बारम्बार दुखी हो कर खीझना बहुत बेकार है। जो मानव शरीर प्रभु की वाणी को बिसरा देता है, वह एक पुराने अथवा दीर्घरोगी (जैसे कि एक कोढ़ी) की भाँति रोता तड़पता है "।(१)

किन्तु, इस प्रकार के रोने की निरर्थकता पर गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), अपनी किसी भी बात पर अधिक बोलना अथवा असंतोष प्रकट करना निष्फल है, क्योंकि, (हमारे) बिना कुछ बोले ही (प्रभु) सब कुछ जानते हैं "।(१-विराम)

गुरु जी इसलिये सलाह देते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), जिसने हमें कान, आँखें और नाक दिये हैं, वह (प्रभु) जिसने जिह्वा दी है जो इतना तेज़ बोलती है, जिसने हमारे शरीर को माता के गर्भ की अग्नि में रखा, श्वासों की ध्वनि दी, हम सब कुछ कह सकते हैं और कहीं भी जा सकते हैं, (उस प्रभु के नाम पर हमें ध्यान करना चाहिये)"।(२)

अब गुरु जी हमें झूठे सांसारिक मायामोह, धन सम्पदा एवं आनंदभोग के विषयों से सतर्क करते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), सांसारिक मायामोह, सम्बंध, धन सम्पदा, सामर्थ्य और जिह्वा के स्वाद आदि सब कुछ (हमारी आत्मा पर) काले धब्बे हैं ।ऐसे धब्बों अथवा दोषों से युक्त आत्मा अथवा मनुष्य जब यहाँ संसार से जाता है तो उसे प्रभु के दरबार में रहने का स्थान प्राप्त नहीं होता"।(३)

परन्तु, गुरु जी के मन में पापी लोगों के लिये भी दयाभाव है, अतः, वह हमारी ओर से प्रभु को विनम्रता के साथ कहते हैं " (ओ' प्रभु),

केवल तुम्हारी कृपा से ही किसी को तुम्हारे नाम का उच्चारण करने की बुद्धि तथा सौभाग्य प्राप्त होता है और उस में लीन होकर ही कोई भवसागर को तैर कर पार हो सकता है, क्योंकि और कोई स्थान नहीं (जहाँ पर कोई स्वयं को सुरक्षित रख सके) । परन्तु, ओ' नानक, यदि कोई (इस भवसागर के दुखों में) डूब रहा हो, तो वह अभी भी (प्रभु नाम के ध्यान का) सार पाकर स्वयं को बचा सकता है, क्योंकि वह सच्चा कृपालु प्रभु सदा से ही सबको देने वाला अनंत दाता है ”।(४-३-५)

इस शब्द का संदेश है कि यदि प्रभु नाम को भुला कर इस सांसारिक मोहमाया एवं झूठे आनंद भोग में उलझे रहते हैं तो हम अत्यंत दुखी होते हैं और दीर्घरोग के रोगी की भाँति रोते तड़पते हैं । इस प्रकार की दशा में शारीरिक अथवा आत्मिक कष्टों के निवारण के लिए ईश्वर से प्रार्थना करें कि वह कृपा करके हमें अपने पवित्र नाम का दान दें, जो हमारे समस्त कष्ट दूर कर सकता है ।

ਪੰਨਾ ੬੬੩

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੩ ਘਰੁ ੨ ਚਉਪਦੇ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਇਹੁ ਧਨੁ ਅਖੁਟੁ ਨ ਨਿਖੁਟੈ ਨ ਜਾਇ ॥
ਪੂਰੈ ਸਤਿਗੁਰਿ ਦੀਆ ਦਿਖਾਇ ॥
ਅਪੁਨੇ ਸਤਿਗੁਰ ਕਉ ਸਦ ਬਲਿ ਜਾਈ ॥
ਗੁਰ ਕਿਰਪਾ ਤੇ ਹਰਿ ਮੰਨਿ ਵਸਾਈ ॥੧॥

ਸੇ ਧਨਵੰਤ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥
ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਹਰਿ ਧਨੁ ਪਰਗਾਸਿਆ ਹਰਿ ਕਿਰਪਾ ਤੇ ਵਸੈ ਮਨਿ ਆਇ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਅਵਗੁਣ ਕਾਟਿ ਗੁਣ ਰਿਦੈ ਸਮਾਇ ॥
ਪੂਰੇ ਗੁਰ ਕੈ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਇ ॥
ਪੂਰੇ ਗੁਰ ਕੀ ਸਾਚੀ ਬਾਣੀ ॥
ਸੁਖ ਮਨ ਅੰਤਰਿ ਸਹਜਿ ਸਮਾਣੀ ॥੨॥

ਏਕੁ ਅਚਰਜੁ ਜਨ ਦੇਖਹੁ ਭਾਈ ॥
ਦੁਬਿਧਾ ਮਾਰਿ ਹਰਿ ਮੰਨਿ ਵਸਾਈ ॥
ਨਾਮੁ ਅਮੋਲਕੁ ਨ ਪਾਇਆ ਜਾਇ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦਿ ਵਸੈ ਮਨਿ ਆਇ ॥੩॥

ਸਭ ਮਹਿ ਵਸੈ ਪ੍ਰਭੁ ਏਕੋ ਸੋਇ ॥
ਗੁਰਮਤੀ ਘਟਿ ਪਰਗਟੁ ਹੋਇ ॥
ਸਹਜੇ ਜਿਨਿ ਪ੍ਰਭੁ ਜਾਣਿਪਛਾਣਿਆ ॥

ਪੰਨਾ ੬੬੪

ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਮਿਲੈ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ॥੪॥੧॥

पृ-६६३

धनासरी महला ३ घर २ चउपदे

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इहु धनु अखुटु न निखुटै न जाइ ॥
पूरै सतिगुरि दीआ दिखाइ ॥
अपुने सतिगुर कउ सद बलि जाई ॥
गुर किरपा ते हरि मँनि वसाई ॥१॥

से धनवँत हरि नामि लिव लाइ ॥
गुरि पूरै हरि धनु प्रगासिआ हरि किरपा ते वसै मनि आइ ॥रहाउ॥

अवगुण काटि गुण रिदै समाइ ॥
पूरे गुर कै सहजि सुभाइ ॥
पूरे गुर की साची बाणी ॥
सुख मन अँतरि सहजि समाणी ॥२॥

एकु अचरजु जन देखहु भाई ॥
दुबिधा मारि हरि मँनि वसाई ॥
नामु अमोलकु न पाइआ जाइ ॥
गुर परसादि वसै मनि आइ ॥३॥

सभ महि वसै प्रभु एको सोइ ॥
गुरमती घटि परगटु होइ ॥
सहजे जिनि प्रभु जाणिपछाणिआ ॥

पृ-६६४

नानक नामु मिलै मनु मानिआ ॥४॥१॥

धनासरी महला - ३ घर-२ चउपदे
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

सामान्यतः हम सांसारिक धन सम्पदा, सामर्थ्य एवं अन्य वस्तुओं के पीछे ऐसे भागे रहते हैं जैसे कि यह सब वैभव और सम्पत्ति हमें सदा के लिये हर्षोल्लासित रखेंगे।परन्तु, साथ ही साथ हम दुखी और चिंतित भी रहते हैं कि कहीं हमारी धन सम्पदा व ऐश्वर्य छिन न जाये। इस शब्द में गुरु जी हमें प्रभु नाम का धन संचय करने का परामर्श देते हैं, जो ना कभी समाप्त हो सकता है और ना ही चोरी हो सकता है, अपितु, हमें उसके द्वारा अनंत आनंद प्राप्त होता है। वह यह भी बताते हैं कि यह धन हम कहाँ से बटोर सकते हैं।

प्रभु नाम की सम्पदा की संस्तुति गुरु जी क्यों कर रहे हैं, इस पर उनका कहना है" (हे मेरे मित्रो), मेरे परिपूर्ण गुरु ने मुझे यह दिखा दिया है कि (प्रभु नाम का) यह असीम धन ना कभी कम पड़ता है और ना ही कहीं जा सकता है। मैं सदा ही अपने सच्चे गुरु के उपर बलिहारी जाता हूँ, क्योंकि, उसी की कृपा से अपने मन में हरि नाम को बसा सका हूँ"।(१)

जिन्होंने भी हरि नाम के धन को प्राप्त कर लिया है वह वास्तव में कितने धनी तथा सौभाग्यशाली हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो, वास्तव में) वही धनवान हैं जिन्होंने स्वयं को हरि के नाम में लीन कर लिया है। पूर्ण गुरु ने हरि धन से (दैवी ज्ञान से) उनके मन को प्रकाश दिया है और हरि की कृपा रूपी सम्पदा उनके मन में आकर बस गयी है"।(१-विराम)

पूर्ण गुरु से किसी को कौनसे वरदान, लाभ और आशीर्वाद प्राप्त होते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं "(गुरु की शरण में जो कोई भी आता है) वह पूर्ण गुरु के सहज एवं शांत स्वभाव के द्वारा अपने मन के समस्त अवगुणों को काट अथवा नाश करके गुणों का समावेश कर लेता

है। (हे' मेरे मित्रो), पूर्ण गुरु की पवित्र तथा सत्य वाणी अनायास ही सहज और अनंत रूप से मन के अंदर समा कर सुख शांति देती है "।(२)

गुरु द्वारा प्रदत्त आशीर्वादों में से एक और आश्चर्यजनक तथ्य पर गुरु जी ध्यान दिलाते हुये कहते हैं "(हे' भाई, गुरु द्वारा) आश्चर्यचकित करने वाली एक और बात देखो कि (जो कोई भी उसकी शरण में जाता है) वह उस मनुष्य के मन की दुविधाओं (सांसारिक मोहमाया) को नष्ट करके वहाँ हरि नाम को बसा देता है । (हमें यह भी स्मरण रखना चाहिये कि) प्रभु का अनमोल नाम किसी और विधि से नहीं पाया जा सकता (यह तो केवल) गुरु की कृपा से ही मन में आकर बस पाता है "।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), सभी (जीवों) में एक ही प्रभु का निवास है । पर वह गुरु की मति, प्रेरणा एवं उपदेश लेने से ही किसी के अँतरमन में प्रकट होता है ।ओ' नानक, जिन्होंने भी उस ईश्वर को सहज तथा सूक्ष्म भाव से विचार कर पहचान लिया वह जानते हैं कि उसका नाम तभी प्राप्त होता है जब मन (उस सर्वशक्तिमान पर) विश्वास करने लगता है "।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि सांसारिक धन सम्पदा एवं ऐश्वर्य के पीछे भागने की अपेक्षा, हमें गुरु के मार्ग दर्शन अथवा उसके उपदेशों को मान कर प्रभु नाम रूपी धन को एकत्र करना चाहिए जो सांसारिक धन सम्पत्ति की अपेक्षा कहीं अधिक उत्तम है । क्योंकि, यह धन हमें अनंत शांति, सहज भाव और अटूट आनंद प्रदान करता है।

ਪੰਨਾ ੬੬੫

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਕਾਚਾ ਧਨੁ ਸੰਚਹਿ ਮੂਰਖ ਗਾਵਾਰ ॥
ਮਨਮੁਖ ਭੂਲੇ ਅੰਧ ਗਾਵਾਰ ॥
ਬਿਖਿਆ ਕੈ ਧਨਿ ਸਦਾ ਦੁਖੁ ਹੋਇ ॥
ਨਾ ਸਾਥਿ ਜਾਇ ਨ ਪਰਾਪਤਿ ਹੋਇ ॥੧॥

ਸਾਚਾ ਧਨੁ ਗੁਰਮਤੀ ਪਾਏ ॥
ਕਾਚਾ ਧਨੁ ਫੁਨਿ ਆਵੈ ਜਾਏ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਮਨਮੁਖਿ ਭੂਲੇ ਸਭਿ ਮਰਹਿ ਗਵਾਰ ॥
ਭਵਜਲਿ ਡੂਬੇ ਨ ਉਰਵਾਰਿ ਨ ਪਾਰਿ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਭੇਟੇ ਪੂਰੈ ਭਾਗਿ ॥
ਸਾਚਿ ਰਤੇ ਅਹਿਨਿਸਿ ਬੈਰਾਗਿ ॥੨॥

ਚਹੁ ਜੁਗ ਮਹਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਸਾਚੀ ਬਾਣੀ ॥
ਪੂਰੈ ਭਾਗਿ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਸਮਾਣੀ ॥
ਸਿਧ ਸਾਧਿਕ ਤਰਸਹਿ ਸਭਿ ਲੋਇ ॥
ਪੂਰੈ ਭਾਗਿ ਪਰਾਪਤਿ ਹੋਇ ॥੩॥

ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਸਾਚਾ ਸਾਚਾ ਹੈ ਸੋਇ ॥
ਊਤਮ ਬ੍ਰਹਮੁ ਪਛਾਣੈ ਕੋਇ ॥
ਸਚੁ ਸਾਚਾ ਸਚੁ ਆਪਿ ਦ੍ਰਿੜਾਏ ॥

ਪੰਨਾ ੬੬੬

ਨਾਨਕ ਆਪੇ ਵੇਖੈ ਆਪੇ ਸਚਿ ਲਾਏ ॥੪॥੭॥

पृ-६६५

धनासरी महला ३॥

काचा धनु सँचहि मूरख गावार ॥
मनमुख भूले अँध गावार ॥
बिखिआ कै धनि सदा दुखु होइ ॥
ना साथि जाइ न परापति होइ ॥१॥

साचा धनु गुरमती पाए ॥
काचा धनु फुनि आवै जाए ॥ रहाउ॥

मनमुखि भूले सभि मरहि गवार ॥
भवजलि डूबे न उरवारि न पारि ॥
सतिगुरु भेटे पूरै भागि ॥
साचि रते अहिनिसि बैरागि ॥२॥

चहु जुग महि अँमृतु साची बाणी ॥
पूरै भागि हरि नामि समाणी ॥
सिध साधिक तरसहि सभि लोइ ॥
पूरै भागि परापति होइ ॥३॥

सभु किछु साचा साचा है सोइ ॥
ऊतम ब्रहमु पछाणै कोइ ॥
सचु साचा सचु आपि दृिड़ाए ॥

पृ-६६६

नानक आपे वेखै आपे सचि लाए ॥४॥७॥

धनासरी महला – ३

इस शब्द में गुरु जी कहते हैं कि हम अपनी मूर्खतावश जिस मिथ्या सांसारिक धन सम्पदा के पीछे भागते रह कर अपने जीवन को व्यर्थ करते रहते हैं वह हमें कितने दुःख तथा कष्ट देती है । इसलिये, वह हमें बताते हैं कि किस प्रकार की सम्पदा सदैवी रूप से शांतिदायक है और हम कैसे उसे प्राप्त कर सकते हैं ।

वह अपना मत प्रकट करते हैं "जो लोग बुद्धिहीन, मूर्ख और गँवार हैं वह कच्चे (सांसारिक) धन का संचय करते हैं । ऐसे अंहकारी, अँधे तथा मूर्ख (सही मार्ग से) भूले भटके हुये हैं ।(वह यह नहीं समझ पाते कि) विष के समान सांसारिक धन से सदा दुख मिलता है । यह धन ना तो अंत में किसी के साथ जाता है और ना ही इस से कोई (आत्मिक) लाभ प्राप्त होता है "।(१)

अब गुरु जी मिथ्या अथवा अल्पजीवी सांसारिक धन के वास्तविक स्वभाव तथा कैसे सच्ची और सदैवी सम्पदा को ग्रहण किया जा सकता है, इन दोनों विषयों पर कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो) मिथ्या, अल्पजीवी सांसारिक (काचा) धन बारम्बार आता जाता रहता है, परन्तु, सच्चा, सदैवी (प्रभु नाम रूपी) धन किसी को गुरु की मति अथवा ज्ञान उपदेश पाकर मिलता है "।(१- विराम)

गुरु जी अब अंहकारी लोग जो मिथ्या सांसारिक धन के पीछे भागते रहते हैं उनके स्वभाव एवं भाग्य की तुलना सौभाग्यशाली गुरु के भक्तजनों से करते हुये कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), सभी भूले भटके, अंहकारी तथा गँवार (आत्मिक रूप से) मृतप्राय हैं । वह सब भयावह भवसागर में डूबे हुये हैं (वह लोक अथवा परलोक कहीं भी आनंद नहीं पाते), ना वह इस किनारे लग पाते हैं और ना ही दूसरे किनारे पर । परन्तु, पूर्ण भाग्यशाली जो सच्चे गुरु से भेंट पा लेते हैं (गुरु से मार्ग दर्शन लेकर प्रभु नाम का ध्यान करते है) वह दिन रात सच्चे (प्रभु) में रमे रहते हैं और (माया के मोह से) वैराग्य पा लेते हैं "।(२)

गुरु की वाणी (गुरबाणी) से मिले आशीर्वादों पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), चारों युगों में गुरु की सच्ची वाणी

जीवन में अँमृत के समान काम करती है ।(इसके द्वारा) अपने पूर्ण सौभाग्य से कोई हरि के नाम के ध्यान में समा पाता है । चारों ओर से सभी सिद्ध पुरुष, गुणी एवं साधु लोग (प्रभु नाम के धन की) याचना करते हैं, परन्तु, यह किसी अति भाग्यशाली को ही प्राप्त होता है ”।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में प्रभु और उसके सृजन की व्यवस्था पर एक सामान्य टिप्पणी करते हुये कहते है “ (ओ’ मेरे मित्रो), कोई बिरला मनुष्य ही है जो उस महान एवं उत्तम ब्रह्म को पहचान पाता है (और तब यह जान जाता है कि) जो भी दृश्य हम देख रहे हैं वह सत्य है तथा प्रभु (जो सृजनकर्ता है) भी सत्य है । सच्चे और अंनत प्रभु स्वयं ही सत्य को (स्वयं के लिये) दृढ़ करते हैं, ओ’ नानक, वह (प्रभु) स्वयं ही (अपनी सृष्टि को) देखते हैं और स्वयं ही सबको उस सत्य में लगाये अथवा बाँधे रखते हैं ”।(४-७)

इस शब्द का संदेश यह है कि सांसारिक धन सम्पदा जो अंत में दुखों का कारण ही बनती है, उसके पीछे भाग कर जीवन को व्यर्थ गँवाने की अपेक्षा, हमें अपने समय का सदुपयोग प्रभु नाम रूपी सच्ची सम्पदा को एकत्र करने में करना चाहिये । तब हम सुख शांति और आनंद प्राप्त करेंगे । किन्तु केवल सच्चे प्रभु की कृपा द्वारा ही हम अपनी सांसारिक अल्पजीवी धन सम्पदा की भाल की प्रवृत्ति को मोड़ कर प्रभु नाम रूपी सदैवी तथा सच्ची सम्पदा पाने की ओर लगा सकते हैं ।अतः, सदाचार के मार्ग पर रहने के लिए हमें सदैव प्रभु की कृपा के लिए प्रार्थना करते रहना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੬੬੭

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਹਮ ਅੰਧੁਲੇ ਅੰਧ ਬਿਖੈ ਬਿਖੁ ਰਾਤੇ ਕਿਉ ਚਾਲਹ ਗੁਰ ਚਾਲੀ ॥
ਸਤਗੁਰੁ ਦਇਆ ਕਰੇ ਸੁਖਦਾਤਾ ਹਮ ਲਾਵੈ ਆਪਨ ਪਾਲੀ ॥੧॥

ਗੁਰਸਿਖ ਮੀਤ ਚਲਹੁ ਗੁਰ ਚਾਲੀ ॥
ਜੋ ਗੁਰੁ ਕਹੈ ਸੋਈ ਭਲ ਮਾਨਹੁ ਹਰਿ ਹਰਿ ਕਥਾ ਨਿਰਾਲੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਰਿ ਕੇ ਸੰਤ ਸੁਣਹੁ ਜਨ ਭਾਈ ਗੁਰੁ ਸੇਵਿਹੁ ਬੇਗਿ ਬੇਗਾਲੀ ॥
ਸਤਗੁਰੁ ਸੇਵਿ ਖਰਚੁ ਹਰਿ ਬਾਧਹੁ ਮਤ ਜਾਣਹੁ ਆਜੁ ਕਿ ਕਾਲ੍ਹ੍ਹੀ ॥੨॥

ਹਰਿ ਕੇ ਸੰਤ ਜਪਹੁ ਹਰਿ ਜਪਣਾ ਹਰਿ ਸੰਤੁ ਚਲੈ ਹਰਿ ਨਾਲੀ ॥
ਜਿਨ ਹਰਿ ਜਪਿਆ ਸੇ ਹਰਿ ਹੋਏ ਹਰਿ ਮਿਲਿਆ ਕੇਲ ਕੇਲਾਲੀ ॥੩॥

ਹਰਿ ਹਰਿ ਜਪਨੁ ਜਪਿ ਲੋਚ ਲੋਚਾਨੀ ਹਰਿ ਕਿਰਪਾ ਕਰਿ ਬਨਵਾਲੀ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਸੰਗਤਿ ਸਾਧ ਹਰਿ ਮੇਲਹੁ ਹਮ ਸਾਧ ਜਨਾ ਪਗ ਰਾਲੀ ॥੪॥੪॥

पृ-६६७

धनासरी महला ४॥

हम अँधुले अँध बिखै बिखु राते किउ चालह गुर चाली ॥
सतगुरु दइआ करे सुखदाता हम लावै आपन पाली ॥१॥

गुरसिख मीत चलहु गुर चाली ॥
जो गुरु कहै सोई भल मानहु हरि हरि कथा निराली ॥१॥रहाउ॥

हरि के सँत सुणहु जन भाई गुरु सेविहु बेगि बेगाली ॥
सतगुरु सेवि खरचु हरि बाधहु मत जाणहु आजु कि काली् ॥२॥

हरि के सँत जपहु हरि जपणा हरि सँतु चलै हरि नाली ॥
जिन हरि जपिआ से हरि होए हरि मिलिआ केल केलाली ॥३॥

हरि हरि जपनु जपि लोच लोचानी हरि किरपा करि बनवाली ॥
जन नानक सँगति साध हरि मेलहु हम साध जना पग राली ॥४॥४

धनासरी महला – ४

इस शब्द में गुरु जी कह रहें हैं कि कैसे हम मानव जाति के लोग अपकारी सांसारिक प्रवृत्तियों में लिप्त हैं और यह भी प्रकट करते हैं कि हम साधु संतों की सँगति में ईश्वर का ध्यान करके स्वयं को ऐसी स्थिति से कैसे बचा सकते हैं ।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), हम मूर्ख, अँधे (सांसारिक मायामोह अथवा सामर्थ्य के) विषैले अँधकार से ग्रस्त हैं, अतः, गुरु के बताये मार्ग पर कैसे चलें । यदि सच्चा, सुखों का दान देने वाला कृपालु गुरु दया करे तो वह हमें अपना पल्ला पकड़ा दे "।(१)

अतः, अति निष्कप्ट रूप एवं प्रेम भाव से वह आग्रह करते हैं "ओ' मेरे गुरसिख (गुरु के भक्त) मित्रों, गुरु के बताये मार्ग पर चलो, जो भी गुरु कहे उसी में अपना भला समझो, क्योंकि, हरि की कथा अथवा विचार अनोखा ही होता है (केवल गुरु ही जानते हैं कि हमारे लिये क्या सबसे अच्छा रहेगा)"।(१-विराम)

पता नहीं कब अकस्मात् किसी भी क्षण हमारी जीवन लीला समाप्त हो जाये, इस तथ्य को विचारते हुये गुरु जी हमें कहते हैं " ओ' ईश्वर के भक्तों तथा संतों, मेरे भाईयों सुनो, गुरु की सेवा (उसके उपदेशों का पालन) जितनी भी जल्दी (बिना कोई समय गँवाये) हो सके, करलो । गुरु की सेवा रूपी धन को ख़र्च करके हरि को पा लो, यह मत विचारो कि यह काम आज करूँ कि कल पर छोड़ दूँ (क्योंकि, कोई नहीं जानता कि मृत्यु का संदेश कब आ जाये)"।(२)

जब हम प्रभु का ध्यान करते हैं तो क्या लाभ होते हैं इस पर गुरु जी का कथन है " ओ' ईश्वर के संतों, हरि नाम का जाप करो, क्योंकि, हरि नाम को जपने से हरि के संत (मृत्यु के पश्चात) हरि के साथ चलते है ।(वास्तव में) वह हरि नाम का जाप करने से उसके साथ एक होकर उसके खेल एवं क्रीड़ामयी रूप में लीन हो जाते हैं "।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में हमें यह आभास कराते हैं कि वह प्रभु नाम का ध्यान तथा संतों की सेवा करना कितना मूल्यवान समझते हैं । वह कहते हैं "ओ' ब्रह्मांड के स्वामी, मैं हरि, हरि नाम के जाप के लिये अति लालायित हूँ, सो हे' हरि अपनी कृपा करो और भक्त नानक को साधु संतों की संगति से मिला दो जिससे कि मैं उनकी चरणा धूलि (विनम्र सेवा के अवसर) को पाता रहूँ "।(४-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि जीवन का और अधिक समय व्यर्थ किये बिना हमें गुरु के मार्ग दर्शन तथा उपदेशों का अनुसरण करके हरि के नाम का ध्यान करना चाहिये । साथ ही हमें प्रेम और श्रद्धा भाव से हरि के संतों की सेवा करनी चाहिये, जिससे प्रभु अपनी दया करके हमें अपने साथ मिला लें ।

ਪੰਨਾ ੬੬੯

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਇਛਾ ਪੂਰਕੁ ਸਰਬ ਸੁਖਦਾਤਾ ਹਰਿ ਜਾ ਕੈ ਵਸਿ ਹੈ ਕਾਮਧੇਨਾ ॥
ਸੋ ਐਸਾ ਹਰਿ ਧਿਆਈਐ ਮੇਰੇਜੀਅੜੇ ਤਾ ਸਰਬ ਸੁਖ ਪਾਵਹਿ ਮੇਰੇ ਮਨਾ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੬੭੦

ਜਪਿ ਮਨ ਸਤਿ ਨਾਮੁ ਸਦਾ ਸਤਿ ਨਾਮੁ ॥
ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਮੁਖ ਊਜਲ ਹੋਈ ਹੈ ਨਿਤ ਧਿਆਈਐ ਹਰਿ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰੰਜਨਾ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਹ ਹਰਿ ਸਿਮਰਨੁ ਭਇਆ ਤਹ ਉਪਾਧਿ ਗਤੁ ਕੀਨੀ ਵਡਭਾਗੀ ਹਰਿ ਜਪਨਾ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕਉ ਗੁਰਿ ਇਹ ਮਤਿ ਦੀਨੀ ਜਪਿ ਹਰਿ ਭਵਜਲੁ ਤਰਨਾ ॥੨॥੬॥੧੨॥

पृ-६६९

धनासरी महला ४॥

इछा पूरकु सरब सुखदाता हरि जा कै वसि है कामधेना ॥
सो ऐसा हरि धिआईऐ मेरेजीअड़े ता सरब सुख पावहि मेरे मना ॥१॥

पृ-६७०

जपि मन सति नामु सदा सति नामु ॥
हलति पलति मुख ऊजल होई है नित धिआईऐ हरि पुरखु निरँजना ॥रहाउ॥

जह हरि सिमरनु भइआ तह उपाधि गतु कीनी वडभागी हरि जपना ॥
जन नानक कउ गुरि इह मति दीनी जपि हरि भवजलु तरना ॥२॥६॥१२॥

धनासरी महला – ४

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि प्रभु का ध्यान करना कितना लाभप्रद है और ऐसा करने से किस प्रकार के मंगलमयी वरदान हमें प्राप्त होते हैं ।

स्वयं के (परोक्ष में हमारे) मन को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं " हे' मेरे मन, प्रभु हमारी समस्त इच्छायों को पूर्ण करता है, वह समस्त सुखों का दाता है जिसके वश में कामधेनु (पौराणिक कथाओं में उद्धरित इच्छापूर्णि गाय) है । ओ' मेरे मन, यदि तुम ऐसे हरि का ध्यान करोगे तो तुम्हें समस्त सुख एवं आनंद प्राप्त होंगे "।(१)

इसलिये, गुरु जी स्वयं को तथा हमें पुनः कहते हैं " हे' मेरे मन, सदा सच्चे सदैवी (प्रभु के) नाम को जपो । नित्य ही उस निरँजन महान हरि का ध्यान करने से लोक तथा परलोक में हमारा मुख उज्जवल होता है "।(विराम)

अंत में गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मन), जहाँ पर भी हरि का भजन पूजन होता है वहाँ से समस्त दुख संताप पलायन कर जाते हैं, अतः, हरि के नाम का जाप और ध्यान करना अति भाग्यशाली है । भक्तजन नानक को गुरु ने यह मति अथवा ज्ञान दिया है कि हरि नाम जपने से हम भवसागर को तैर कर पार लग जाते हैं "।(२-६-१२)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम जीवन की सभी कठिनाइयों अथवा दुखों से मुक्त होकर अपनी इच्छायों की पूर्ति करते हुये मोक्ष प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें उस सदैवी सच्चे हरि का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੬੭੧

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਜਿਸ ਕਾ ਤਨੁ ਮਨੁ ਧਨੁ ਸਭੁ ਤਿਸ ਕਾ ਸੋਈ ਸੁਘੜੁ ਸੁਜਾਨੀ ॥
ਤਿਨ ਹੀ ਸੁਣਿਆ ਦੁਖੁ ਸੁਖੁ ਮੇਰਾ ਤਉ ਬਿਧਿ ਨੀਕੀ ਖਟਾਨੀ ॥੧॥

ਜੀਅ ਕੀ ਏਕੈ ਹੀ ਪਹਿ ਮਾਨੀ ॥
ਅਵਰਿ ਜਤਨ ਕਰਿ ਰਹੇ ਬਹੁਤੇਰੇ ਤਿਨ ਤਿਲੁ ਨਹੀ ਕੀਮਤਿ ਜਾਨੀ ॥ ਰਹਾਉ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਨਾਮੁ ਨਿਰਮੋਲਕੁ ਹੀਰਾ ਗੁਰਿ ਦੀਨੋ ਮੰਤਾਨੀ ॥
ਡਿਗੈ ਨ ਡੋਲੈ ਦ੍ਰਿੜੁ ਕਰਿ ਰਹਿਓ ਪੂਰਨ ਹੋਇ ਤ੍ਰਿਪਤਾਨੀ ॥੨॥

ਓਇ ਜੁ ਬੀਚ ਹਮ ਤੁਮ ਕਛੁ ਹੋਤੇ ਤਿਨ ਕੀ ਬਾਤ ਬਿਲਾਨੀ ॥

ਪੰਨਾ ੬੭੨

ਅਲੰਕਾਰ ਮਿਲਿ ਥੈਲੀ ਹੋਈ ਹੈ ਤਾ ਤੇ ਕਨਿਕ ਵਖਾਨੀ ॥੩॥

ਪ੍ਰਗਟਿਓ ਜੋਤਿ ਸਹਜ ਸੁਖ ਸੋਭਾ ਬਾਜੇ ਅਨਹਤ ਬਾਨੀ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਨਿਹਚਲ ਘਰੁ ਬਾਧਿਓ ਗੁਰਿ ਕੀਓ ਬੰਧਾਨੀ ॥੪॥੫॥

पृ-६७१

धनासरी महला ५॥

जिस का तनु मनु धनु सभु तिस का सोई सुघड़ु सुजानी ॥
तिन ही सुणिआ दुखु सुखु मेरा तउ बिधि नीकी खटानी ॥१॥

जीअ की एकै ही पहि मानी ॥
अवरि जतन करि रहे बहुतेरे तिन तिलु नही कीमति जानी ॥रहाउ॥

अँमृत नामु निरमोलकु हीरा गुरि दीनो मँतानी ॥
डिगै न डोलै दिड़ु करि रहिओ पूरन होइ तृिपतानी ॥२ ॥

ओइ जु बीच हम तुम कछुहोते तिन की बात बिलानी ॥

पृ-६७२

अँलकार मिलि थैली होई है ता ते कनिक वखानी ॥३॥

प्रगटिओ जोति सहज सुख सोभा बाजे अनहत बानी ॥
कहु नानक निहचल घरु बाधिओ गुरि कीओ बँधानी ॥४॥५॥

धनासरी महला – ५

बहुधा हमारा मन बेचैन अथवा चिंतित रहता है, परन्तु, ऐसी स्थिति से विपरीत गुरु जी अपने मन की वर्तमान आनंदित अवस्था का वर्णन करते हुए बताते हैं कि वह कैसे इस शांतिमय मनोदशा को पाने योग्य बन सके ।

वह कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो), मेरा समस्त तन, मन और धन जिसका है, वह (प्रभु) अति बुद्धिमान एवं निपुण है । जब उस (प्रभु) ने मेरे सुखों तथा दुखों की कथा सुनी तो मैंने (प्रभु से जुड़ने की) एक अच्छी विधि ढूँढ़ निकाली ”।(१)

इस स्थिति में आने से पहले क्या हुया, इसका वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं “(ओ’ मेरे मित्रो), मेरी आत्मा ने केवल एक ही (प्रभु) पर विश्वास अथवा निश्चय किया ।(प्रभु के प्रति मेरे विश्वास के विरुद्ध) अन्य कई लोगों ने अनेक प्रयत्न किये, परन्तु, मेरे मन ने (उनकी बातों का) तिल भर भी मूल्य नहीं जाना ”।(विराम)

अपने गुरु से प्रभु नाम का मंत्र लेने के पश्चात गुरु जी ने किस प्रकार के आशीर्वादों का आनंद लिया, इस तथ्य को हमसे साझा करते हुये गुरु जी कहते हैं “(हे’ मेरे मित्रो, प्रभु नाम का)अँमृतमयी मंत्र जैसा अनमोल हीरा मुझे मेरे गुरु ने दिया है । अब मेरा मन कभी निराश नहीं होता, संशयित नहीं होता, अपितु, अब यह (प्रभु के उपर) दृढ़ विश्वास करता है और पूर्ण रूप से तृप्त हो गया है “ ।(२)

अपने मन के अंदर से अनेक संघर्षों, अस्थिरतायों अथवा दोषों पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो), मेरे तथा अन्य लोगों के बीच में जो भी विरोधाभास अथवा विवाद थे, वह सब बातें अब समाप्त हो गयी हैं । ठीक उसी प्रकार, जैसे अनेक अलंकारों (गहनों) को मिला कर गला देने के पश्चात वह एक सोने का पिंड कहलाता है । (ऐसी ही स्थिति मेरे मन की हो गयी है जहाँ मै स्वयं तथा अन्य सभी को एक ही ईश्वर का अंश प्रतीत करता हूँ)”।(३)

शब्द के अंत में अपने मन की आनंदित अवस्था के लिये गुरु के प्रति आभार प्रकट करते हुये गुरु जी कहते हैं “मेरे मन के अंदर प्रभु ने एक ज्योति प्रज्वलित करदी है, जिसके द्वारा मुझे सुख, सहजभाव एवं शोभा प्राप्त हुयी है तथा मन में दिव्यवाणी का संगीत अनवरत रुप से बज रहा है । नानक कहते हैं कि (अब मेरा मन ऐसी स्थिर अवस्था में है जैसे कि प्रभु ने) वहाँ एक अचल घर बना लिया है और गुरु ने उसे बनाने में सहायता की है ”।(४-५)

इस शब्द का संदेश यह है कि प्रभु से दूर रखने वाली मन की अस्थिरताओं तथा दुष्ट प्रवृत्तियों से मुक्ति पाकर यदि हम प्रभु की आनंदमयी छाया में रहना चाहते हैं तो गुरु के उपदेश अथवा विचारों का अनुसरण कर उससे प्रभु नाम के मंत्र की याचना करें और प्रभु से जुड़े रहें ।

ਪੰਨਾ ੬੭੩	**पृ-६७३**
ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**धनासरी महला ५॥**
ਤੁਮ ਦਾਤੇ ਠਾਕੁਰ ਪ੍ਰਤਿਪਾਲਕ ਨਾਇਕ ਖਸਮ ਹਮਾਰੇ ॥	तुम दाते ठाकुरप्रतिपालक नाइक खसम हमारे ॥
ਪੰਨਾ ੬੭੪	**पृ-६७४**
ਨਿਮਖ ਨਿਮਖ ਤੁਮ ਹੀ ਪ੍ਰਤਿਪਾਲਹੁ ਹਮ ਬਾਰਿਕ ਤੁਮਰੇ ਧਾਰੇ ॥੧॥	निमख निमख तुम ही प्रतिपालहु हम बारिक तुमरे धारे ॥१॥
ਜਿਹਵਾ ਏਕ ਕਵਨ ਗੁਨ ਕਹੀਐ ॥ ਬੇਸੁਮਾਰ ਬੇਅੰਤ ਸੁਆਮੀ ਤੇਰੋ ਅੰਤੁ ਨ ਕਿਨ ਹੀ ਲਹੀਐ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	जिहवा एक कवन गुन कहीऐ ॥ बेसुमार बेअँत सुआमी तेरो अँतु न किन ही लहीऐ ॥१॥रहाउ॥
ਕੋਟਿ ਪਰਾਧ ਹਮਾਰੇ ਖੰਡਹੁ ਅਨਿਕ ਬਿਧੀ ਸਮਝਾਵਹੁ ॥ ਹਮ ਅਗਿਆਨ ਅਲਪ ਮਤਿ ਥੋਰੀ ਤੁਮ ਆਪਨ ਬਿਰਦੁ ਰਖਾਵਹੁ ॥੨॥	कोटि पराध हमारे खँडहु अनिक बिधी समझावहु ॥ हम अगिआन अलप मति थोरी तुम आपन बिरदु रखावहु ॥२॥
ਤੁਮਰੀ ਸਰਣਿ ਤੁਮਾਰੀ ਆਸਾ ਤੁਮ ਹੀ ਸਜਨ ਸੁਹੇਲੇ ॥ ਰਾਖਹੁ ਰਾਖਨਹਾਰ ਦਇਆਲਾ ਨਾਨਕ ਘਰ ਕੇ ਗੋਲੇ ॥੩॥੧੨॥	तुमरी सरणि तुमारी आसा तुम ही सजन सुहेले ॥ राखहु राखनहार दइआला नानक घर के गोले ॥३॥१२॥

धनासरी महला – ५

यहाँ गुरु जी प्रकट करते हैं कि कैसे पूर्ण विनम्रता के साथ हम प्रभु से प्रार्थना करें कि वह हमारे अंदर त्रुटियों के होते हुए भी हमारी रक्षा करे ।

वह कहते हैं "हे' प्रभु, तुम हमारे दाता हो, ठाकुर, रक्षक, पालनहार और नायक स्वामी हो । पल पल तुम्हीं हमारी रक्षा तथा पालना करते हो, हम तो तुम पर आश्रित तुम्हारे बालक हैं "।(१)

प्रभु के असीमित गुणों तथा स्वयं की अति सीमित योग्यतायों पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' प्रभु, तुम्हारे गुण अनंत हैं) हमारे पास केवल एक जिह्वा है (जिसके द्वारा हम) तुम्हारे कौन कौन से गुणों का वर्णन करें । हे' अनंत अपार स्वामी, तेरी सीमा का अंत कोई नहीं समझ सकता है "।(१-विराम)

अपने बारम्बार किये गये दोषों एवं अपराधों के लिए प्रभु से प्राप्त अनेकों बार की क्षमा को स्वीकार करते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे' प्रभु), तुम हमारे लाखों अपराधों का खंडन करके हमें अनेक प्रकार की विधियों से समझाते हो, परन्तु, हम अज्ञानी हैं, हमारी बुद्धि मंद है, (पर फिर भी तुम हमारी त्रुटियों पर ध्यान नहीं देते) और तुम अपनी मर्यादा को रखते हो (अर्थात, हमारी रक्षा करते हो)"।(२)

अंत में गुरु जी कहते हैं "(हे' प्रभु) हम तुम्हारी शरण में हैं, तुम्हीं हमारी आशा हो और तुम्हीं केवल हमारे सहायक मित्र हो । नानक कहते हैं, हे' दयालु प्रभु तुम्हीं हमारे रक्षक हो, रक्षा करो, हम तुम्हारे घर में दास हैं "।(३-१२)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमने चाहे कितने भी अपराध किये हों, चाहे हमारे में कितनी त्रुटियाँ हों, फिर भी यदि हम प्रभु से विनम्रतापूर्वक एक बालक की भाँति स्नेह से विनती करें तो अवश्य ही वह हमें क्षमा करके हमारी रक्षा करेगा ।

ਪੰਨਾ ੬੭੫

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਦੀਨ ਦਰਦ ਨਿਵਾਰਿ ਠਾਕੁਰ ਰਾਖੈ ਜਨ ਕੀ ਆਪਿ ॥
ਤਰਣ ਤਾਰਣ ਹਰਿ ਨਿਧਿ ਦੂਖੁ ਨ ਸਕੈ ਬਿਆਪਿ ॥੧॥

ਸਾਧੂ ਸੰਗਿ ਭਜਹੁ ਗੁਪਾਲ ॥
ਆਨ ਸੰਜਮ ਕਿਛੁ ਨ ਸੂਝੈ ਇਹ ਜਤਨ ਕਾਟਿ ਕਲਿ ਕਾਲ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਆਦਿ ਅੰਤਿ ਦਇਆਲ ਪੂਰਨ ਤਿਸੁ ਬਿਨਾ ਨਹੀ ਕੋਇ ॥
ਜਨਮ ਮਰਣ ਨਿਵਾਰਿ ਹਰਿ ਜਪਿ ਸਿਮਰਿ ਸੁਆਮੀ ਸੋਇ ॥੨॥

ਬੇਦ ਸਿੰਮ੍ਰਿਤਿ ਕਥੈ ਸਾਸਤ ਭਗਤ ਕਰਹਿ ਬੀਚਾਰੁ ॥
ਮੁਕਤਿ ਪਾਈਐ ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਬਿਨਸਿ ਜਾਇ ਅੰਧਾਰੁ ॥੩॥

ਚਰਨ ਕਮਲ ਅਧਾਰੁ ਜਨਕਾ ਰਾਸਿ ਪੂੰਜੀ ਏਕ ॥

ਪੰਨਾ ੬੭੬

ਤਾਣੁ ਮਾਣੁ ਦੀਬਾਣੁ ਸਾਚਾ ਨਾਨਕ ਕੀ ਪ੍ਰਭ ਟੇਕ ॥੪॥੨॥੨੦॥

पृ-६७५

धनासरी महला ५॥

दीन दरद निवारि ठाकुर राखै जन की आपि ॥
तरण तारण हरि निधि दूखु न सकै बिआपि ॥१॥

साधू सँगि भजहु गुपाल ॥
आन सँजम किछु न सूझै इह जतन काटि कलि काल ॥रहाउ॥

आदि अँति दइआल पूरन तिसु बिना नही कोइ ॥
जनम मरण निवारि हरि जपि सिमरि सुआमी सोइ ॥२॥

बेद सिँमृति कथै सासत भगत करहि बीचारु ॥
मुकति पाईऐ साधसँगति बिनसि जाइ अँधारु ॥३॥

चरन कमल अधारु जनका रासि पूँजी एक ॥

पृ-६७६

ताणु माणु दीबाणु साचा नानक की प्रभ टेक ॥४॥२॥२०॥

धनासरी महला – ५

इस शब्द में गुरु जी प्रभु की दयालुता एवं क्षमादान देने की प्रवृत्ति पर दृढ़ भाव से टिप्पणी करते हुए यह भी कहते हैं कि वह कैसे अपनी शरण में आये भक्तों को आशीर्वाद देते हैं ।

गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), दीन दुखी लोगों के दर्द एवं कष्टों का निवारण कर ठाकुर स्वयं अपने भक्तों के सम्मान की रक्षा करते हैं । गुणों के भंडार प्रभु एक जहाज़ के समान हमें (भवसागर के) पार लगाते हैं, (उनकी शरण में जाने से) कोई कष्ट हमारे अंदर व्याप्त नहीं हो सकता "।(१)

अतः, गुरु जी हमें निर्देश देते हैं " ओ' मेरे मित्रो), साधु संतों की संगति में रह कर ब्रह्मांड के स्वामी गोपाल को भजो । इस राह के अतिरिक्त मुझे और कोई उपाय नहीं सूझता, (इस लिये, हे' मेरे मित्र मैं यह सुझाव देता हूँ कि) प्रभु का ध्यान करने की युक्ति के द्वारा तुम काल का फंदा काट सकते हो "।(विराम)

आदि काल से ईश्वर की दयालुता एवं क्षमादान की परम्परा को पुनः दृढ़ करते हुये गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), आदि से लेकर अंत तक ईश्वर अपने जीवों पर दयालु रहते हैं, उनके बिना कोई और दूसरा नहीं है । इसलिये, जन्म मरण के दुखों के निवारण के लिये उसी स्वामी का जाप, स्मरण तथा भजन करो "।(२)

गुरु जी हमें फिर से स्मरण कराना चाहते हैं कि केवल वही साधु संतों की संगति की आवश्यकता पर ज़ोर नहीं दे रहे हैं, अपितु, सभी धार्मिक पुस्तकों का भी यही निष्कर्ष है । वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), सभी हिंदू शास्त्र, जैसे, वेद, स्मृतियों का कथन है और भक्त जनों का भी विचार है कि साधु संतों की संगति में रह कर हम मोक्ष प्राप्त करते हैं और अज्ञान के अँधकार का विनाश हो जाता है "।(३)

प्रभु के प्रति उनकी भावना क्या है, इसका वर्णन गुरु जी शब्द के अंत में करते हुये कहते हैं "(जहाँ तक मेरा अपना विचार है) प्रभु के चरण कमल (प्रभु के नाम का ध्यान) उसके भक्तजनों का आधार हैं, वही उनकी राशि अर्थात् एकमात्र पूँजी हैं । (संक्षेप में), नानक कहते हैं कि केवल प्रभु में उनका विश्वास ही उनकी शक्ति, सम्मान और सच्चा दीवान (प्रार्थना करने के लिये एक दरबार) है "।(४-२-२०)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने जन्म मरण के फेरों व जीवन के अन्य सभी कष्टों से मुक्त होना चाहते हैं तो हमें प्रभु नाम को जीवन का आधार बना कर संतों की संगति में उसकी महिमा का गान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੬੭੭

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਜਹ ਜਹ ਪੇਖਉ ਤਹ ਹਜੂਰਿ ਦੂਰਿ ਕਤਹੁ ਨ ਜਾਈ ॥
ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸਰਬਤ੍ਰ ਮੈ ਮਨ ਸਦਾ ਧਿਆਈ ॥੧॥

ਈਤ ਊਤ ਨਹੀ ਬੀਛੁੜੈ ਸੋ ਸੰਗੀ ਗਨੀਐ ॥
ਬਿਨਸਿ ਜਾਇ ਜੋ ਨਿਮਖ ਮਹਿ ਸੋ ਅਲਪ ਸੁਖੁ ਭਨੀਐ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪ੍ਰਤਿਪਾਲੈ ਅਪਿਆਉ ਦੇਇ ਕਛੁ ਊਨ ਨ ਹੋਈ ॥
ਸਾਸਿ ਸਾਸਿ ਸੰਮਾਲਤਾ ਮੇਰਾ ਪ੍ਰਭੁ ਸੋਈ ॥੨॥

ਅਛਲ ਅਛੇਦ ਅਪਾਰ ਪ੍ਰਭ ਊਚਾ ਜਾ ਕਾ ਰੂਪੁ ॥
ਜਪਿ ਜਪਿ ਕਰਹਿ ਅਨੰਦੁ ਜਨ ਅਚਰਜ ਆਨੂਪੁ ॥੩॥

ਸਾ ਮਤਿ ਦੇਹੁਦਇਆਲ ਪ੍ਰਭ ਜਿਤੁ ਤੁਮਹਿ ਅਰਾਧਾ ॥

ਪੰਨਾ ੬੭੮

ਨਾਨਕੁ ਮੰਗੈ ਦਾਨੁ ਪ੍ਰਭ ਰੇਨ ਪਗ ਸਾਧਾ ॥੪॥੩॥੨੭॥

पृ-६७७

धनासरी महला ५॥

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई ॥
रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई ॥१॥

ईत ऊत नही बीछुड़ै सो संगी गनीऐ ॥
बिनसि जाइ जो निमख महि सो अलप सुखु भनीऐ ॥रहाउ॥

प्रतिपालै अपिआउ देइ कछु ऊन न होई ॥
सासि सासि सँमालता मेरा प्रभु सोई ॥२॥

अछल अछेद अपार प्रभ ऊचा जा का रूपु ॥
जपि जपि करहि अनँदु जन अचरज आनूपु ॥३॥

सा मति देहुदइआल प्रभ जितु तुमहि अराधा ॥

पृ-६७८

नानकु मँगै दानु प्रभ रेन पग साधा ॥४॥३॥२७॥

धनासरी महला – ५

इस शब्द में गुरु जी एक प्रभु भक्त की ऐसी मनोस्थिति का वर्णन कर रहे हैं जिसमें वह अपने पूर्ण विश्वास के साथ प्रभु नाम का ध्यान करते रहने के कारण किस प्रकार से आनंदित और सुख की दशा में रहता है ।

वह भक्त की ओर से कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो) मैं जहाँ भी देखता हूँ वहीं उस (प्रभु को) अपने सम्मुख पाता हूँ, वह कभी भी मुझसे दूर कहीं नहीं जाते । वह सर्वत्र में व्याप्त हैं (और मैं कहता रहता हूँ) ओ' मेरे मन, सदा उसका ध्यान करो ".(१)

सांसारिक सम्बंधों, मित्रों अथवा सुख विलास में समय नष्ट करने की अपेक्षा, प्रभु से मित्रता और प्रेम करने के लिये हमें प्रेरित करते हुये गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), जो हमसे इधर उधर (लोक तथा परलोक में) कहीं न बिछुड़े, (उसी प्रभु को हमें सच्चा) साथी गिनना चाहिये । जो पल में नष्ट हो जाये उस अल्पकालीन सुख का कोई अस्तित्व नहीं "।(विराम)

प्रभु द्वारा प्रदत्त आशीर्वादों पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (मेरा प्रभु), सभी जीवों के भोजन की व्यवस्था करके उनकी पालना करता है, किसी भी वस्तु की कोई कमी (उसके भंडार में) नहीं होती । मेरा वही प्रभु प्रत्येक श्वास में हमारी रक्षा करता है "।(२)

प्रभु के अनूठे गुणों की व्याख्या करते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो, वह प्रभु) किसी छल से रहित हैं, वह किसी छेद अथवा हानि से रहित हैं, अपार हैं, उनकी शक्ति तथा रुप महान है । उस अप्रतिम, आश्चर्य से भरपूर, अति सुंदर प्रभु का जाप एवं ध्यान करके उसके भक्त अति आन्नदित होते हैं "।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी हमें यह प्रकट करते हैं कि हमें प्रभु से क्या माँगना चाहिये। वह कहते हैं " हे' दयालु प्रभु, मुझे ऐसी बुद्धि का वरदान दो जिसके द्वारा मैं तुम्हारी आराधना करूँ । हे' प्रभु, नानक तुमसे एक दान की भिक्षा माँगते हैं कि वह साधु संतों की चरणधूलि (विनम्र सेवा) पाते रहें "।(४-३-२७)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम एक ऐसा मित्र चाहते हैं जो हमसे लोक अथवा परलोक में ना बिछुड़े, तथा हमारी पूर्ण सुरक्षा और पालना करे तो हमें अपनी प्रत्येक श्वास के साथ प्रभु का ध्यान करना चाहिये तथा उससे संतों (गुरु ग्रंथ साहिब जी) की विनम्र सेवा का वरदान माँगना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੬੭੯	पृ-६७९
ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**धनासरी महला ५॥**
ਜਾ ਕਉ ਹਰਿ ਰੰਗੁ ਲਾਗੋ ਇਸੁ ਜੁਗ ਮਹਿ ਸੋ ਕਹੀਅਤ ਹੈ ਸੂਰਾ ॥ ਆਤਮ ਜਿਣੈ ਸਗਲ ਵਸਿ ਤਾ ਕੈ ਜਾ ਕਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ॥੧॥	जा कउ हरि रँगु लागो इसु जुग महि सो कहीअत है सूरा ॥ आतम जिणै सगल वसि ता कै जा का सतिगुरू पूरा ॥१॥
ਪੰਨਾ ੬੮੦	**पृ-६८०**
ਠਾਕੁਰੁ ਗਾਈਐ ਆਤਮ ਰੰਗਿ ॥ ਸਰਣੀ ਪਾਵਨ ਨਾਮ ਧਿਆਵਨ ਸਹਜਿ ਸਮਾਵਨ ਸੰਗਿ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	ठाकुरु गाईऐ आतम रँगि ॥ सरणी पावन नाम धिआवन सहजि समावन सँगि ॥१॥रहाउ॥
ਜਨ ਕੇ ਚਰਨ ਵਸਹਿ ਮੇਰੈ ਹੀਅਰੈ ਸੰਗਿ ਪੁਨੀਤਾ ਦੇਹੀ ॥ ਜਨ ਕੀ ਧੂਰਿ ਦੇਹੁ ਕਿਰਪਾ ਨਿਧਿ ਨਾਨਕ ਕੈ ਸੁਖੁ ਏਹੀ ॥੨॥੪॥੩੫॥	जन के चरन वसहि मेरै हीअरै सँगि पुनीता देही ॥ जन की धूरि देहु किरपा निधि नानक कै सुखु एही ॥२॥४॥३५॥

धनासरी महला – ५

इससे पूर्व के अनेक शब्दों में गुरु जी ने हमें प्रभु के नाम का ध्यान करने का परामर्श दिया है जिसका आशय केवल राम नाम दोहराते रहने का ही नहीं, अपितु, सच्चे निष्कप्ट स्नेह एवं प्रेम भाव के साथ ईश्वर में रमे रहने का है । परन्तु, मनुष्य के मन की समस्या यह है कि वह प्रभु के ध्यान की अपेक्षा सांसारिक मायामोह, धन दौलत एवं सत्ता की लोभ लालसा को सन्तुष्ट करता रहता है, अतः प्रभु के साथ उसका प्रेम सरलता से नहीं उपज पाता । दूसरा कारण यह भी है कि यदि कोई अपने जीवन को प्रभु के ध्यान में लगाने का प्रयत्न भी करना चाहता है तो उसके अपने ही मित्रगण एवं सम्बन्धी उसका उपहास करने लगते हैं और कई प्रकार से उसे निरुत्साहित करते हैं ।

इसलिये, गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रों, जिस किसी को भी) इस युग में हरि का रंग लगा है अथवा हरि से प्रेम उपजा है तो वह वास्तव में शूरवीर कहलाता है । जिस किसी का भी सच्चा गुरु पूर्ण है, वह अपनी आत्मा पर विजय पा लेता है और सभी कुछ उसके वश में हो जाता है"।(१)

गुरु जी अब हमें यह बताते हैं कि प्रभु से प्रेम करने के लिये हमें क्या करना चाहिये और तत्पश्चात हमें कौनसे और कैसे वरदान प्राप्त होते हैं । वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), हमें अपने अंतर मन से ठाकुर अथवा स्वामी की महिमा का गायन करना चाहिये । (इस प्रकार) प्रभु की शरण को पाकर, तथा उसके नाम का ध्यान करते हुए मनुष्य अति सहज एवं शांतिपूर्ण ढंग से उस प्रभु में समा जाता है "।(१-विराम)

शब्द के अंत में गुरु जी प्रभु से गंभीरता तथा अति विनम्रता से प्रार्थना करते हुये कहते हैं "(हे' प्रभु, दया करो और वरदान दो कि) भक्त जनों के चरण कमल (उनके पवित्र विचार) मेरे हृदय में वास करें और उनके साथ मेरी देही भी पुनीत हो जाये । हे' कृपानिधान, मुझे अपने भक्तजनों की चरण धूलि प्राप्त (विनम्रता से उनकी सेवा) करने का वरदान दो, क्योंकि नानक के लिये यही एक सच्चा सुख है "।(२-४-३५)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सच्चे सुख का आनंद पाना चाहते हैं तो सबके उपहास व अपवाद की चिंता ना करते हुए साहस के साथ गुरु से मार्ग दर्शन पाकर प्रेम और श्रद्धा से प्रभु का ध्यान करें । एक दिन प्रभु अपनी अनुकम्पा करेंगे और लोक तथा परलोक में हमें सच्चा आनंद एवं सम्मान प्रदान करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੮੨

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਅਉਖੀ ਘੜੀ ਨ ਦੇਖਣ ਦੇਈ ਅਪਨਾ ਬਿਰਦੁ ਸਮਾਲੇ ॥
ਹਾਥ ਦੇਇ ਰਾਖੈ ਅਪਨੇ ਕਉ ਸਾਸਿ ਸਾਸਿ ਪ੍ਰਤਿਪਾਲੇ ॥੧॥

ਪ੍ਰਭ ਸਿਉ ਲਾਗਿ ਰਹਿਓ ਮੇਰਾ ਚੀਤੁ ॥
ਆਦਿ ਅੰਤਿ ਪ੍ਰਭੁ ਸਦਾ ਸਹਾਈ ਧੰਨੁ ਹਮਾਰਾ ਮੀਤੁ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਮਨਿ ਬਿਲਾਸ ਭਏ ਸਾਹਿਬ ਕੇ ਅਚਰਜ ਦੇਖਿ ਬਡਾਈ ॥
ਹਰਿ ਸਿਮਰਿ ਸਿਮਰਿ ਆਨਦ ਕਰਿ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭਿ ਪੂਰਨ ਪੈਜ ਰਖਾਈ ॥੨॥੧੫॥੪੬॥

पृ-६८२

धनासरी महला ५॥

अउखी घड़ी न देखण देई अपना बिरदु समाले ॥
हाथ देइ राखै अपने कउ सासि सासि प्रतिपाले ॥१॥

प्रभ सिउ लागि रहिओ मेरा चीतु ॥
आदि अँति प्रभु सदा सहाई धँनु हमारा मीतु ॥रहाउ॥

मनि बिलास भए साहिब के अचरज देखि बडाई ॥
हरि सिमरि सिमरि आनद करि नानक प्रभि पूरन पैज रखाई ॥२॥१५॥४६॥

धनासरी महला – ५

अनेक पूर्व शब्दों में गुरु जी ने हमें बताया कि यदि हम सच्चे मन से प्रभु भक्ति में आस्था रखें तो वह सभी शत्रुयों से हमारी रक्षा करता है और हमारी समस्त यथार्थ इच्छायें पूर्ण करता है। इस शब्द में वह इस तथ्य को फिर से निश्चित करते हैं और व्यक्त करते हैं कि वह स्वयं प्रभु के आश्चर्यजनक कौतुकों को देखकर प्रभावित हुये हैं।

वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो, प्रभु अपने भक्तजनों को) कभी भी कष्ट और दुख भरी कठिन घड़ी अथवा समय नहीं झेलने देते, (क्योंकि वह सदा अपने भक्तजनों की रक्षा करने की) अपनी परम्परा को स्मरण रखते हैं । (जैसे कि) वह अपना हाथ बढ़ा कर अपने भक्त जनों की (समस्त प्रकार के कष्टों से) रक्षा करते हुए प्रत्येक श्वास उनकी प्रतिपालना कर रहे हों "।(१)

प्रभु के साथ अपनी मित्रता पर पूर्ण निश्चय और विश्वास होने के कारण शांतिमयी मनोस्थित में गुरु जी कहते हैं " मेरा मन प्रभु से लगा हुया है । मेरा मित्र धन्य है, क्योंकि वह प्रभु आदि से लेकर अंत तक हर समय मेरा सहायक है "।(विराम)

अंत में गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), प्रभु की आश्चर्यजनक महिमा देखकर मेरा मन परम आन्नदित हो उठता है । (मैं स्वयं को कहता हूँ कि) हे' नानक, प्रभु ने तुम्हारे सम्मान की पूर्ण रूप से रक्षा की है, इसलिये तुम प्रभु नाम का बारम्बार ध्यान करते हुये आनंदित रहो "।(२-१५-४६)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने जीवन में एक सच्चा सहायक एवं आश्रयदाता चाहते हैं जो सर्वशक्तिमान हो और सदा हमारी रक्षा करते हुए हमारे सम्मान को बचाये तो हमें उसी प्रभु का सच्चा भक्त बनना चाहिए, जिसका शाश्वत नियम है कि वह कभी भी कोई कष्ट अथवा कठिनाई अपने भक्तजनों पर नहीं आने देता ।

ਪੰਨਾ ੬੮੩

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੧੨

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਬੰਦਨਾ ਹਰਿ ਬੰਦਨਾ ਗੁਣ ਗਾਵਹੁ ਗੋਪਾਲ ਰਾਇ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਵਡੈ ਭਾਗਿ ਭੇਟੇ ਗੁਰਦੇਵਾ ॥
ਕੋਟਿ ਪਰਾਧ ਮਿਟੇਹਰਿ ਸੇਵਾ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੬੮੪

ਚਰਨ ਕਮਲ ਜਾ ਕਾ ਮਨੁ ਰਾਪੈ ॥
ਸੋਗ ਅਗਨਿ ਤਿਸੁ ਜਨ ਨ ਬਿਆਪੈ ॥੨॥

ਸਾਗਰੁ ਤਰਿਆ ਸਾਧੂ ਸੰਗੇ ॥
ਨਿਰਭਉ ਨਾਮੁ ਜਪਹੁ ਹਰਿ ਰੰਗੇ ॥੩॥

ਪਰ ਧਨ ਦੋਖ ਕਿਛੁ ਪਾਪ ਨ ਫੇੜੇ ॥
ਜਮ ਜੰਦਾਰੁ ਨ ਆਵੈ ਨੇੜੇ ॥੪॥

ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਅਗਨਿ ਪ੍ਰਭਿ ਆਪਿ ਬੁਝਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਉਧਰੇ ਪ੍ਰਭ ਸਰਣਾਈ ॥੫॥੧॥੫੫॥

पृ-६८३

धनासरी महला ५ घर १२

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

बँदना हरि बँदना गुण गावहु गोपाल राइ ॥रहाउ॥

वडै भागि भेटे गुरदेवा ॥
कोटि पराध मिटेहरि सेवा ॥१॥

पृ-६८४

चरन कमल जा का मनु रापै ॥
सोग अगनि तिसु जन न बिआपै ॥२॥

सागरु तरिआ साधू सँगे ॥
निरभउ नामु जपहु हरि रँगे ॥३॥

पर धन दोख किछु पाप न फेड़े ॥
जम जँदारु न आवै नेड़े ॥४॥

त्रिसना अगनि प्रभि आपि बुझाई ॥
नानक उधरे प्रभ सरणाई ॥५॥१॥५५॥

धनासरी महला - ५
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द से पूर्व के अनेक शब्दों में गुरु जी हमें बता चुके हैं कि यदि हम माया के दुष्प्रभावों से बच निकलना चाहते हैं जो हमें प्रभु से दूर रख कर अथवा उसे बिसरा कर अन्य कई प्रकार के दुखों और कष्टों में डाल देती है तो हमें प्रभु से प्रार्थना करके उसके नाम का ध्यान करने का वरदान माँगना चाहिये जो हमें लोक तथा परलोक में भी शांति एवं आनंद प्रदान करेगा ।इस शब्द में वह पुनः निश्चयात्मक भाव से इस विषय पर कहते हैं कि किस प्रकार से प्रभु का ध्यान हमें किसी दुष्कर्म अथवा पापवृत्ति से नियंत्रित करता है, तथा मृत्यु के प्रति मन में किसी प्रकार के भय को आने से रोकता है ।

वह कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), बारम्बार हरि की वंदना करो और सच्चे महान प्रभु के गुण गाओ "।(विराम)

जो मनुष्य गुरु से मार्ग दर्शन का वरदान पा चुका है वह कितना सौभाग्यशाली है, इस पर गुरु जी अपना विचार व्यक्त करते हैं " (ओ' मेरे मित्रो) बड़े सौभाग्य से बुद्धि प्रदान करने वाले गुरु से भेंट होती है (जो प्रभु को पाने का सही मार्ग दिखलाता है, उस गुरु का अनुसरण करने पर) हरि की सेवा अथवा शरण में जाने (हरि नाम के ध्यान) से किसी के भी लाखों अपराध मिट जाते हैं "।(१)

प्रभु नाम के प्रेम में रमे रहने से अन्य क्या लाभ मनुष्य को होते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), जिस मनुष्य का भी मन प्रभु के चरण कमलों (उसके पवित्र नाम) में रम जाता है उसके मन में किसी भी प्रकार के दुख संताप की अग्नि (सांसारिक वृत्तियाँ) व्याप्त नहीं होती ।(२)

इसलिये, गुरु जी परामर्श देते हैं (ओ' मेरे मित्रो), यदि तुम हरि नाम के रंग (प्रेम) में डूब कर निर्भीक रूप से उसके नाम का ध्यान करते हो, तो संतों (गुरु) की संगति में भवसागर को तैर कर पार हो जाते हो "।(३)

प्रभु नाम के ध्यान के फलस्वरूप प्राप्त वरदानों की सूची में अन्य कुछ और मिलने वाले आशीर्वाद कौन से हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), प्रभु नाम के ध्यान में रहने वाला पराये धन की चोरी, पापकर्म अथवा अन्य किसी झंझट से दूर रहता है, अतः, भयानक यमदूत भी (ऐसे मनुष्य के) निकट नहीं आते "।(४)

अंत में गुरु जी कहते हैं (ओ' मेरे मित्रो, प्रभु का ध्यान करने वालों की) सांसारिक प्रलोभनों की तृष्णा रूपी अग्नि प्रभु ने स्वयं ही बुझा (शांत कर) दी है । हे' नानक, उनका उद्धार हो गया है जो प्रभु की शरण में आ गये हैं "।(५-१-५५)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम समस्त दुष्प्रवृत्तियों एवं पापकर्मों को जीवन के बहीखाते में से मिटाना चाहते हैं तो हमें गुरु का मार्गदर्शन पाने के लिये प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिए जो हमारे लिए सच्चे प्रेम और श्रद्धा के साथ प्रभु नाम का ध्यान करने के लिए सहायक होगा ।

ਪੰਨਾ ੬੮੫

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੧ ਘਰੁ ੨ ਅਸਟਪਦੀਆ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਗੁਰੁ ਸਾਗਰੁ ਰਤਨੀ ਭਰਪੂਰੇ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਸੰਤ ਚੁਗਹਿ ਨਹੀ ਦੂਰੇ ॥
ਹਰਿ ਰਸੁ ਚੋਗ ਚੁਗਹਿ ਪ੍ਰਭ ਭਾਵੈ ॥
ਸਰਵਰ ਮਹਿ ਹੰਸੁ ਪ੍ਰਾਨਪਤਿ ਪਾਵੈ ॥੧॥

ਕਿਆ ਬਗੁ ਬਪੁੜਾ ਛਪੜੀ ਨਾਇ ॥
ਕੀਚੜਿ ਡੂਬੈ ਮੈਲੁ ਨ ਜਾਇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਰਖਿ ਰਖਿ ਚਰਨ ਧਰੇ ਵੀਚਾਰੀ ॥
ਦੁਬਿਧਾ ਛੋਡਿ ਭਏ ਨਿਰੰਕਾਰੀ ॥
ਮੁਕਤਿ ਪਦਾਰਥੁ ਹਰਿ ਰਸ ਚਾਖੇ ॥
ਆਵਣ ਜਾਣ ਰਹੇ ਗੁਰਿ ਰਾਖੇ ॥੨॥

ਸਰਵਰ ਹੰਸਾ ਛੋਡਿ ਨ ਜਾਇ ॥
ਪ੍ਰੇਮ ਭਗਤਿ ਕਰਿ ਸਹਜਿ ਸਮਾਇ ॥
ਸਰਵਰ ਮਹਿ ਹੰਸੁ ਹੰਸ ਮਹਿ ਸਾਗਰੁ ॥
ਅਕਥ ਕਥਾ ਗੁਰ ਬਚਨੀ ਆਦਰੁ ॥੩॥

ਸੁੰਨ ਮੰਡਲ ਇਕੁ ਜੋਗੀ ਬੈਸੇ ॥
ਨਾਰਿ ਨ ਪੁਰਖੁ ਕਹਹੁ ਕੋਊ ਕੈਸੇ ॥
ਤ੍ਰਿਭਵਣ ਜੋਤਿ ਰਹੇ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥
ਸੁਰਿ ਨਰ ਨਾਥ ਸਚੇ ਸਰਣਾਈ ॥੪॥

ਆਨੰਦ ਮੂਲੁ ਅਨਾਥ ਅਧਾਰੀ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਭਗਤਿ ਸਹਜਿ ਬੀਚਾਰੀ ॥
ਭਗਤਿ ਵਛਲ ਭੈ ਕਾਟਣਹਾਰੇ ॥
ਹਉਮੈ ਮਾਰਿ ਮਿਲੇ ਪਗੁ ਧਾਰੇ ॥੫॥

ਅਨਿਕ ਜਤਨ ਕਰਿ ਕਾਲੁ ਸੰਤਾਏ॥
ਮਰਣੁ ਲਿਖਾਇ ਮੰਡਲ ਮਹਿ ਆਏ ॥

ਪੰਨਾ ੬੮੬

ਜਨਮੁ ਪਦਾਰਥੁ ਦੁਬਿਧਾ ਖੋਵੈ ॥
ਆਪੁ ਨ ਚੀਨਸਿ ਭ੍ਰਮਿ ਭ੍ਰਮਿ ਰੋਵੈ ॥੬॥

ਕਹਤਉ ਪੜਤਉ ਸੁਣਤਉ ਏਕ ॥
ਧੀਰਜ ਧਰਮੁ ਧਰਣੀਧਰ ਟੇਕ ॥
ਜਤੁ ਸਤੁ ਸੰਜਮੁ ਰਿਦੈ ਸਮਾਏ ॥
ਚਉਥੇ ਪਦ ਕਉ ਜੇ ਮਨੁ ਪਤੀਆਏ ॥੭॥

ਸਾਚੇ ਨਿਰਮਲ ਮੈਲੁ ਨ ਲਾਗੈ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਭਰਮ ਭਉ ਭਾਗੈ ॥
ਸੂਰਤਿ ਮੂਰਤਿ ਆਦਿ ਅਨੂਪੁ ॥
ਨਾਨਕੁ ਜਾਚੈ ਸਾਚੁ ਸਰੂਪੁ ॥੮॥੧॥

पृ-६८५

धनासरी महला १ घर २ असटपदीआ

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

गुरु सागरु रतनी भरपूरे ॥
अँमृतु संत चुगहि नही दूरे ॥
हरि रसु चोग चुगहि प्रभ भावै ॥
सरवर महि हँसु प्रानपति पावै ॥१॥

किआ बगु बपुड़ा छपड़ी नाइ ॥
कीचड़ि डूबै मैलु न जाइ ॥१॥रहाउ ॥

रखि रखि चरन धरे वीचारी ॥
दुबिधा छोडि भए निरँकारी ॥
मुकति पदारथु हरि रस चाखे ॥
आवण जाण रहे गुरि राखे ॥२॥

सरवर हँसा छोडि न जाइ ॥
प्रेम भगति करि सहजि समाइ ॥
सरवर महि हँसु हँस महि सागरु ॥
अकथ कथा गुर बचनी आदरु ॥३॥

सुँन मँडल इकु जोगी बैसे ॥
नारि न पुरखु कहहु कोऊ कैसे ॥
त्रिभवण जोति रहे लिव लाई ॥
सुरि नर नाथ सचे सरणाई ॥४॥

आनँद मूलु अनाथ अधारी ॥
गुरमुखि भगति सहजि बीचारी ॥
भगति वछल भै काटणहारे ॥
हउमै मारि मिले पगु धारे ॥५॥

अनिक जतन करि कालु सँताए ॥
मरणु लिखाइ मँडल महि आए ॥

पृ-६८६

जनमु पदारथु दुबिधा खोवै ॥
आपु न चीनसि भ्रमि भ्रमि रोवै ॥६॥

कहतउ पड़तउ सुणतउ एक ॥
धीरज धरमु धरणीधर टेक ॥
जतु सतु सँजमु रिदै समाए ॥
चउथे पद कउ जे मनु पतीआए ॥७॥

साचे निरमल मैलु न लागै ॥
गुर कै सबदि भरम भउ भागै ॥
सूरति मूरति आदि अनूपु ॥
नानकु जाचै साचु सरूपु ॥८॥१॥

धनासरी महला - १: अष्टपदीआ
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द से पूर्व के कई शब्दों में गुरु जी सँत (गुरु) के निर्देशों के अनुसार प्रभु नाम का ध्यान करने के लिये दृढ़ता से कहते रहे हैं । इस अष्टपदी में वह एक सच्चे गुरु के गुणों का वर्णन कर रहे हैं और किस प्रकार एक सच्चा भक्त गुरु के निर्देश और उसके बृहत् दैवी ज्ञान से लाभान्वित होता है ।

गुरु जी यहाँ गुरु को मोती एवं रत्नों का सागर तथा भक्त को मोती चुगने वाले हँस की समानता देते हुए कहते हैं "(ओ मेरे मित्रो), गुरु (प्रभु नाम तथा दैवी ज्ञान रुपी) रत्नों से भरपूर सागर के समान है और संत (भक्त, हँसों के समान) अँमृत रुपी मोती (दैवी ज्ञान) को चुगते हैं, इसलिये सागर से दूर नहीं जाते । जब एक सँत प्रभु नाम के रस का स्वाद पाता है तो प्रभु को भाता है और तब वह हँस (रुपी सँत) अपने प्राण प्रिय प्रभु को (गुरु रुपी) सागर में प्राप्त कर लेता है "।(१)

परन्तु, गुरु जी हमें छद्म गुरु तथा पाखंडी भक्तों से सावधान करते हैं । वह ऐसे गुरु को एक कीचड़ भरे पोखर तथा पाखंडी भक्त की एक बगुले से तुलना करते हुये कहते हैं " उस बिचारे बगुले का क्या, जो एक पोखर में नहाता है और कीचड़ में डूब कर और अधिक मैला हो जाता है । (दूसरे शब्दों में, सागर रुपी गुरु को त्याग कर अन्य देवी देवतायों की पूजा करना और झूठे कपटी साधुयों का अनुसरण करना पोखर में स्नान करने के समान है जहाँ पर और अधिक मैल, अथवा, सांसारिक मायामोह रुपी कीचड़ अपने उपर लग जाता है)"।(१-विराम)

आगे गुरु जी हमें बताते हैं कि विचारवान लोगों को किस प्रकार के वरदान प्राप्त होते हैं जो प्रभु के ध्यान में रहते हुए अपना जीवन निर्वाह सत्य एवं विवेक के साथ करते हैं और झूठे पाखंडी साधु संतों के जाल में नहीं फँसते । वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो, विचारवान, सचेत लोग) जीवन में सोच विचार कर आगे पग रखते हैं । वह अपने मन की दुविधायों को त्याग कर निराकार प्रभु के भक्त बन जाते हैं । मुक्तिदायक प्रभु नाम रुपी पदार्थ का रस चखने से उनका आना जाना (जन्म मरण का फेर) समाप्त हो जाता है, क्योंकि, गुरु ने उनकी रक्षा की है "।(२)

गुरु और उसके सच्चे भक्त के बीच के आत्मिक सम्बंध को पुनः एक झील एवं हँस के रुप में प्रस्तुत करते हुये गुरु जी कहते हैं " ओ' मेरे मित्रो, जैसे कि हँस झील को छोड़ कर कहीं नहीं जाता (और अपना मोती रुपी भोजन वहीं से प्राप्त करता है, वैसे ही एक भक्त जो अपने गुरु को नही त्यागता) वह प्रेमपूर्वक ध्यान करने से (दैवी) सहज दशा में मग्न हो जाता है । इस प्रकार (हँस रुपी) भक्त अथवा सिख (सागर रुपी) गुरु में लीन रहता है और (सागर रुपी) गुरु (हँस रुपी) भक्त में समाया रहता है । वास्तव में यह कथा अकथनीय है (हम यह कह सकते हैं कि) गुरु के वचनों को सुनकर उनका पालन करने वाला शिष्य सभी स्थानों पर आदर प्राप्त करता है "।(३)

अपने गुरु में इस प्रकार से लीन रहने वाले मनुष्य की आत्मिक स्थित पर गुरु जी कहते हैं "ओ' मेरे मित्रो, जो मनुष्य गुरु की कृपा से प्रभु के ध्यान में योगियों की भाँति शून्य दशा में बैठे हैं (जिसमें नर एवं नारी में कोई भेद भाव नहीं रहता) किसी प्रकार से कोई भी उन्हें नारी अथवा पुरुष नहीं कह सकता क्योंकि, वह सदा उस प्रभु में रमे रहते हैं जिसका दैवी प्रकाश त्रिभुवन (तीनों लोक) में व्याप्त है, तथा देवता अथवा मनुष्य दोनों ही सदा उस अनंत स्वामी की शरण चाहते हैं "।(४)

प्रभु की श्रेष्ठतायों और गुरु की सभा संगति का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रों, गुरु की सभा संगति रुपी झील में हँस रुपी) गुरु के भक्त जन उस प्रभु को पा लेते हैं जो दैवी आनंद का स्त्रोत है और अनाथों का आधार अथवा आश्रय है। प्रभु के गुणों पर विचार तथा उसके नाम का ध्यान करते रहने से गुरु के भक्त सहज अवस्था में रहते हैं ।(वह यह समझ लेते हैं कि प्रभु) भक्तजनों को प्रेम करते हैं और भय का नाश करने वाले हैं। अपने अहम को त्याग कर (गुरु की पवित्र सभा संगति में यह भक्त जन) प्रभु के चरणों को हृदय में बसा कर उसके साथ मिल जाते हैं "।(५)

सांसारिक रुप रेखा तथा गुरु के भक्तों के परिज्ञान पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (ओ'मेरे मित्रो, गुरु के भक्त यह समझते हैं कि) हम इस सांसारिक मंडल में अपनी मृत्यु भाग्य में पहले से ही लिखवा कर आये हैं, अतः, हम अनेकों यत्न करलें मृत्यु हमें फिर भी सतायेगी । (परन्तु, फिर भी एक अंहकारी मनुष्य) अपना मूल्यवान जीवन पदार्थों (सांसारिक धन दौलत का प्रेम) की दुविधा में गँवा देता है। ऐसा मनुष्य स्वयं को नहीं पहचान पाता और भ्रमों में ही रोता रहता है"।(६)

उपरोक्त स्थिति की तुलना गुरु के भक्तों के आचरण से करते हुये गुरु जी कहते हैं " (एक गुरु का भक्त) केवल एक ही प्रभु के विषय पर कहता, पढ़ता एवं सुनता है और उसी प्रभु में अपना धैर्य,धर्म तथा विश्वास रखता है । यदि ऐसे मनुष्य का मन चतुर्थ दशा (सुख और आनंद की दशा) में रहने का अभ्यासी हो जाता है, तब शुद्धता, सत्यता व संयम सभी आकर हृदय में बसने लगते हैं "।(७)

अष्टपदी के अंत में, गुरु जी मन के आनंद की चतुर्थ दशा में व्याप्त गुरु के शिष्यों के गुणों का वर्णन करते हुए कहते हैं " जो भी सच्चे (प्रभु) में लीन रह कर निर्मल हो गये हैं, उनके मन में मैल (दुष्प्रवृत्तियाँ) नहीं लगती । गुरु के वचनों के पालन से उनके भय तथा भ्रम भाग जाते हैं । वह प्रभु जिसका स्वरुप अति सुंदर, अद्वितीय है और जो आदिकाल से विद्यमान है, नानक उस सच्चे अनंत प्रभु की याचना करते हैं "।(८-१)

इस अष्टपदी का संदेश यह है कि यदि हम अपने प्रिय प्रभु से चिरकाल से बिछुड़े हुए हैं और उसके साथ पुनर्मिलन चाहते हैं तो हमें दैवी ज्ञान तथा गुणों से भरपूर सागर रुपी गुरु से मार्ग दर्शन लेना चाहिए । उसकी पवित्र सँगति में प्रभु नाम का ध्यान करते हुए अपने आचरण को ऐसा सदाचारी एवं पवित्र बनायें कि मन में पूर्ण सुख शांति और आनंद की चतुर्थ दशा को प्राप्त करने योग्य बन सकें ।

ਪੰਨਾ ੬੮੭

ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ ੧ ਛੰਤ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਤੀਰਥਿ ਨਾਵਣ ਜਾਉ ਤੀਰਥੁ ਨਾਮੁ ਹੈ ॥
ਤੀਰਥੁ ਸਬਦ ਬੀਚਾਰੁ ਅੰਤਰਿ ਗਿਆਨੁ ਹੈ ॥
ਗੁਰ ਗਿਆਨੁ ਸਾਚਾ ਥਾਨੁ ਤੀਰਥੁ ਦਸ ਪੁਰਬ ਸਦਾ ਦਸਾਹਰਾ ॥
ਹਉ ਨਾਮੁ ਹਰਿ ਕਾ ਸਦਾ ਜਾਚਉ ਦੇਹੁ ਪ੍ਰਭ ਧਰਣੀਧਰਾ ॥
ਸੰਸਾਰੁ ਰੋਗੀ ਨਾਮੁ ਦਾਰੂ ਮੈਲੁ ਲਾਗੈ ਸਚ ਬਿਨਾ ॥
ਗੁਰ ਵਾਕੁ ਨਿਰਮਲੁ ਸਦਾ ਚਾਨਣੁ ਨਿਤ ਸਾਚੁ ਤੀਰਥੁ ਮਜਨਾ ॥੧॥

ਸਾਚਿ ਨ ਲਾਗੈ ਮੈਲੁ ਕਿਆ ਮਲੁ ਧੋਈਐ ॥
ਗੁਣਹਿ ਹਾਰੁ ਪਰੋਇ ਕਿਸ ਕਉ ਰੋਈਐ ॥
ਵੀਚਾਰਿ ਮਾਰੈ ਤਰੈ ਤਾਰੈ ਉਲਟਿ ਜੋਨਿ ਨ ਆਵਏ ॥
ਆਪਿ ਪਾਰਸੁ ਪਰਮ ਧਿਆਨੀ ਸਾਚੁ ਸਾਚੇ ਭਾਵਏ ॥
ਆਨੰਦੁ ਅਨਦਿਨੁ ਹਰਖੁ ਸਾਚਾ ਦੂਖ ਕਿਲਵਿਖ ਪਰਹਰੇ ॥
ਸਚੁ ਨਾਮੁ ਪਾਇਆ ਗੁਰਿ ਦਿਖਾਇਆ ਮੈਲੁ ਨਾਹੀ ਸਚ ਮਨੇ ॥੨॥

ਸੰਗਤਿ ਮੀਤ ਮਿਲਾਪੁ ਪੂਰਾ ਨਾਵਣੋ ॥

ਪੰਨਾ ੬੮੮

ਗਾਵੈ ਗਾਵਣਹਾਰੁ ਸਬਦਿ ਸੁਹਾਵਣੋ ॥
ਸਾਲਾਹਿ ਸਾਚੇ ਮੰਨਿ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੁੰਨ ਦਾਨ ਦਇਆ ਮਤੇ ॥
ਪਿਰ ਸੰਗਿ ਭਾਵੈ ਸਹਜਿ ਨਾਵੈ ਬੇਣੀ ਤ ਸੰਗਮੁ ਸਤ ਸਤੇ ॥

ਆਰਾਧਿ ਏਕੰਕਾਰੁ ਸਾਚਾ ਨਿਤ ਦੇਇ ਚੜੈ ਸਵਾਇਆ ॥
ਗਤਿ ਸੰਗਿ ਮੀਤਾ ਸੰਤਸੰਗਤਿ ਕਰਿ ਨਦਰਿ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਇਆ ॥੩॥

ਕਹਣੁ ਕਹੈ ਸਭੁ ਕੋਇ ਕੇਵਡੁ ਆਖੀਐ ॥
ਹਉ ਮੂਰਖੁ ਨੀਚੁ ਅਜਾਣੁ ਸਮਝਾ ਸਾਖੀਐ ॥
ਸਚੁ ਗੁਰ ਕੀ ਸਾਖੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਭਾਖੀ ਤਿਤੁ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ਮੇਰਾ ॥
ਕੂਚੁ ਕਰਹਿ ਆਵਹਿ ਬਿਖੁ ਲਾਦੇ ਸਬਦਿ ਸਚੈ ਗੁਰੁ ਮੇਰਾ ॥
ਆਖਣਿ ਤੋਟਿ ਨ ਭਗਤਿ ਭੰਡਾਰੀ ਭਰਿਪੁਰਿ ਰਹਿਆ ਸੋਈ ॥
ਨਾਨਕ ਸਾਚੁ ਕਹੈ ਬੇਨੰਤੀ ਮਨੁ ਮਾਂਜੈ ਸਚੁ ਸੋਈ ॥੪॥੧॥

पृ-६८७

धनासरी महला १ छँत

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है ॥
तीरथु सबद बीचारु अँतरि गिआनु है ॥
गुर गिआनु साचा थानु तीरथु दस पुरब सदा दसाहरा ॥
हउ नामु हरि का सदा जाचउ देहु प्रभ धरणीधरा ॥
सँसारु रोगी नामु दारू मैलु लागै सच बिना ॥
गुर वाकु निरमलु सदा चानणु नित साचु तीरथु मजना ॥१॥

साचि न लागै मैलु किआ मलु धोईऐ ॥
गुणहि हारु परोइ किस कउ रोईऐ ॥
वीचारि मारै तरै तारै उलटि जोनि न आवए ॥
आपि पारसु परम धिआनी साचु साचे भावए ॥
आनँदु अनदिनु हरखु साचा दूख किलविख परहरे ॥
सचु नामु पाइआ गुरि दिखाइआ मैलु नाही सच मने ॥२॥

सँगति मीत मिलापु पूरा नावणो ॥

पृ-६८८

गावै गावणहारु सबदि सुहावणो ॥
सालाहि साचे मँनि सतिगुरु पुँन दान दइया मते ॥
पिर सँगि भावै सहजि नावै बेणी त सँगमु सत सते ॥

आराधि एकँकारु साचा नित देइ चड़ै सवाइआ ॥
गति सँगि मीता सँतसँगति करि नदरि मेलि मिलाइआ ॥३॥

कहणु कहै सभु कोइ केवडु आखीऐ ॥
हउ मूरखु नीचु अजाणु समझा साखीऐ ॥
सचु गुर की साखी अँमृत भाखी तितु मनु मानिआ मेरा ॥
कूचु करहि आवहि बिखु लादे सबदि सचै गुरु मेरा ॥
आखणि तोटि न भगति भँडारी भरिपुरि रहिआ सोई ॥
नानक साचु कहै बेनँती मनु मांजै सचु सोई ॥४॥१॥

धनासरी महला - १ छँत

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि वह अपने मन की अनुचित प्रवृत्तियों को त्यागने के लिए किस प्रकार के तीर्थों की यात्रा पर जाते हैं और अपने अनुभवों पर आधारित किस प्रकार के परामर्श वह हमें यहाँ दे रहे हैं ।

वह कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), मैं भी तीर्थ स्नान करने जाता हूँ, (परन्तु, मेरे लिये) सच्ची तीर्थ यात्रा (प्रभु का) नाम है तथा अँतरमन का दैवी ज्ञान एवं विचार ही एक तीर्थ के समान है । (हाँ, मेरे लिये दैवी) ज्ञान जो गुरु ने प्रदान किया है वही मेरा सदैवी तीर्थ स्थान है, जहाँ पर दस अति शुभ पर्व, दशहरे के उत्सव के समान होते हैं । मैं सदा प्रभु के नाम की याचना करता हूँ (तथा प्रार्थना करता हूँ कि) ओ' प्रभु, धरती के आधार, मुझे अपने नाम का दान दो (क्योंकि, मैं जानता हूँ कि समस्त) संसार (दुष्कर्मों रूपी रोगों से) रोगी है और (प्रभु का) नाम ही उसकी औषधि है, सच्चे (नाम) के बिना (पतित विचारों) की मैल लग जाती है । गुरु की वाणी निर्मल और पवित्र है, जो कि सदा (दुष्कर्मों के राह से दूर रहने के लिये) प्रकाश प्रदान करती है (ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि) सत्य के तीर्थ में नित्य ही स्नान किया हो " ।(१)

गुरु जी सत्य के तीर्थ स्नान के गुणों को और विस्तार से कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), जब हम सत्य के पवित्र स्थान पर स्नान करते हैं और

सत्य का जीवन जीना आरम्भ करते हैं, तब हमें दुष्कर्मों की मैल दूषित नहीं करती , अतः कौन सी मैल धोयेंगे । (हम ऐसा कह सकते हैं कि जब) गुणों की माला गूँथ कर (अपने गले में) पहन ली है तो अब रोने के लिये कोई भी सम्भावना शेष नहीं है । (हाँ, जो कोई भी गुरु की वाणी पर) विचार करके (अपने तथा दूसरों के) मन को शुद्ध एवं शांत कर लेता है, वह (भवसागर में से) स्वयं तथा अन्य सभी को भी तैरा कर पार करा देता है और फिर दुबारा संसार में जन्म नहीं लेता है ।इस प्रकार वह पारस पत्थर के समान पवित्रता का प्रतीक बन कर परम ध्यानी बन जाता है जो प्रभु को भाता है । ऐसे मनुष्य के अंदर दिन रात हर्ष व आनंद की दशा व्याप्त रहती है और किसी दुष्कर्मों द्वारा मिले दुख दर्द का हरण हो जाता है । गुरु के द्वारा दिखाए (गये राह पर चल कर) सच्चे (प्रभु) के नाम को जो भी कोई पा लेता है उसके (पवित्र) मन में फिर से (दुष्कर्मों की) मैल नहीं लगती ”।(२)

अब गुरु जी यह बताते हैं कि हमें कहाँ और कैसे स्नान करना चाहिये, जो कि वास्तव में पवित्र एवं मुक्तिदायक है और उसकी क्या विशेषतायें हैं ।वह कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो) संगति में (प्रभु जैसे सच्चे) मित्र से मिलना ही परम पवित्र स्नान है । उस प्रशंसनीय (प्रभु) की प्रशंसा तथा स्तुति को गुरु के शब्द (वाणी) द्वारा गाकर (किसी का भी जीवन) सुहावना हो जाता है । सच्चे गुरु पर विश्वास करके तथा उसकी सुमति को मान कर जो (प्रभु) की स्तुति करते हैं, उनकी बुद्धि एवं स्वभाव पुण्य दान देने वाला और दयालु हो जाता है ।जब सहज भावना के साथ कोई (पवित्र सभा संगति रूपी सरोवर में) नहाता है तब उसे प्रिय (प्रभु) की संगति मन भाती है, जैसे कि उसने त्रिवेणी (गंगा, यमुना व सरस्वती) के संगम में पवित्र अथवा सच्चा स्नान किया हो । इसलिये (ओ’ मेरे मित्रो), एक सच्चे, सृष्टि के रचियता की आराधना करो जो नित्य ही हमें अधिक से अधिक अथवा सवाये रूप में देता है ।गुरु के साथ पवित्र सभा संगति में किसी की भी आत्मिक दशा परम अवस्था में आ जाती है और उस (प्रभु) की कृपा दृष्टि ऐसे मनुष्य को उसी से मिला देती है ”।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी हमसे प्रभावित रूप में प्रभु के अनगिनत एवं अकथनीय गुणों के विषय पर कहते हैं “ (ओ’ मेरे मित्रो), सभी कोई प्रभु के गुणों का वर्णन करता है (कि वह महान है), पर वह कितना महान है यह कोई नहीं कह सकता । मैं एक नीच, मूर्ख अथवा अनजान केवल किसी विश्वसनीय प्रमाण के द्वारा ही समझ सकता हूँ । मेरा मन इस प्रमाण को मान चुका है कि सच्चे गुरु की वाणी अँमृत सरीखी है और निश्चय दिलाती है कि (साधारण विनाशी जीव इस संसार में सांसारिक धन व सत्ता का) विष लाद कर आता है और चला जाता है (वह संसार में से पहले से भी अधिक विषम स्थिति में जाता है, अतः वह जन्म मरण के फेर में रहता है । किन्तु कुछ और हैं) जो गुरु के सच्चे शब्द (अनंत प्रभु की महिमा में कही गई वाणी) के द्वारा मेरे गुरु से मिलते हैं (और फिर गुरु उन्हें बचा लेते हैं) । (ओ’ मेरे मित्रो, प्रभु के गुण अपरिमित हैं जिनका) उच्चारण करने से (उसके गुणों में) कोई कमी नहीं आती है, उसकी भक्ति के भंडार परिपूर्ण हैं (अर्थात् भक्ति के भंडार के उपहारों को बाँटने से उनमें कभी भी कोई कमी नहीं आती), वह प्रभु सर्वव्यापी है । नानक कहते हैं, जो भी (कोई अँतरमन से प्रभु से) सच्ची विनती करता है और अपने मन को पवित्र कर लेता है, वह सच्चे (प्रभु) का ही रूप बन जाता है ”।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि मन में से दूषित विचारों को हटाये बिना तीर्थ स्थानों पर जाकर शारीरिक रूप से स्नान करने की अपेक्षा हमें अपने कर्मों को शुद्ध करते हुये प्रभु प्रेम में लीन रहना चाहिये, तथा गुरु के निर्देश पर मन की सच्ची श्रद्धा और प्रेम के साथ प्रभु नाम का ध्यान करें । तब हम संसार के सभी तीर्थ स्नानों के गुण प्राप्त कर लेंगे । दूसरे शब्दों में, सच्चा तीर्थ स्थान हमारे अपने मन में है, जहाँ हम गुरु के मार्ग दर्शन के अनुसरण से प्रभु नाम के ध्यान में ही प्रभु को पा सकते हैं।

ਪੰਨਾ ੬੯੦

ਧਨਾਸਰੀ ਛੰਤ ਮਹਲਾ ੪ ਘਰੁ ੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਹਰਿ ਜੀਉ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇ ਤਾ ਨਾਮੁ ਧਿਆਈਐ ਜੀਉ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਮਿਲੈ ਸੁਭਾਇ ਸਹਜਿ ਗੁਣ ਗਾਈਐ ਜੀਉ ॥
ਗੁਣ ਗਾਇ ਵਿਗਸੈ ਸਦਾ ਅਨਦਿਨੁ ਜਾ ਆਪਿ ਸਾਚੇ ਭਾਵਏ ॥
ਅਹੰਕਾਰੁ ਹਉਮੈ ਤਜੈ ਮਾਇਆ ਸਹਜਿ ਨਾਮਿ ਸਮਾਵਏ ॥
ਆਪਿ ਕਰਤਾ ਕਰੇ ਸੋਈ ਆਪਿ ਦੇਇ ਤ ਪਾਈਐ ॥
ਹਰਿ ਜੀਉ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇ ਤਾ ਨਾਮੁ ਧਿਆਈਐ ਜੀਉ ॥੧॥

ਅੰਦਰਿ ਸਾਚਾ ਨੇਹੁ ਪੂਰੇ ਸਤਿਗੁਰੈ ਜੀਉ ॥
ਹਉ ਤਿਸੁ ਸੇਵੀ ਦਿਨੁ ਰਾਤਿ ਮੈ ਕਦੇ ਨ ਵੀਸਰੈ ਜੀਉ ॥
ਕਦੇ ਨ ਵਿਸਾਰੀ ਅਨਦਿਨੁ ਸਮ੍ਾਰੀ ਜਾ ਨਾਮੁ ਲਈ ਤਾ ਜੀਵਾ ॥
ਸ੍ਰਵਣੀ ਸੁਣੀ ਤ ਇਹੁ ਮਨੁ ਤ੍ਰਿਪਤੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪੀਵਾ ॥
ਨਦਰਿ ਕਰੇ ਤਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮੇਲੇ ਅਨਦਿਨੁ ਬਿਬੇਕ ਬੁਧਿ ਬਿਚਰੈ ॥
ਅੰਦਰਿ ਸਾਚਾ ਨੇਹੁ ਪੂਰੇ ਸਤਿਗੁਰੈ ॥੨॥

ਸਤਸੰਗਤਿ ਮਿਲੈ ਵਡਭਾਗਿ ਤਾ ਹਰਿ ਰਸੁ ਆਵਏ ਜੀਉ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਰਹੈ ਲਿਵ ਲਾਇ ਤ ਸਹਜਿ ਸਮਾਵਏ ਜੀਉ ॥
ਸਹਜਿ ਸਮਾਵੈ ਤਾ ਹਰਿ ਮਨਿ ਭਾਵੈ ਸਦਾ ਅਤੀਤੁ ਬੈਰਾਗੀ ॥
ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਸੋਭਾ ਜਗ ਅੰਤਰਿ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਲਿਵ ਲਾਗੀ ॥
ਹਰਖ ਸੋਗ ਦੁਹਾ ਤੇ ਮੁਕਤਾ ਜੋ ਪ੍ਰਭੁ ਕਰੇ ਸੁ ਭਾਵਏ ॥
ਸਤਸੰਗਤਿ ਮਿਲੈ ਵਡਭਾਗਿ ਤਾ ਹਰਿ ਰਸੁ ਆਵਏ ਜੀਉ ॥੩॥

ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਦੁਖੁ ਹੋਇ ਮਨਮੁਖ ਜਮਿ ਜੋਹਿਆ ਜੀਉ ॥
ਹਾਇ ਹਾਇ ਕਰੇ ਦਿਨੁ ਰਾਤਿ ਮਾਇਆ ਦੁਖਿ ਮੋਹਿਆ ਜੀਉ ॥
ਮਾਇਆ ਦੁਖਿ ਮੋਹਿਆ ਹਉਮੈ ਰੋਹਿਆ ਮੇਰੀ ਮੇਰੀ ਕਰਤ ਵਿਹਾਵਏ ॥
ਜੋ ਪ੍ਰਭੁ ਦੇਇ ਤਿਸੁ ਚੇਤੈ ਨਾਹੀ ਅੰਤਿ ਗਇਆ ਪਛੁਤਾਵਏ ॥
ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਕੋ ਸਾਥਿ ਨ ਚਾਲੈ ਪੁਤ੍ਰ ਕਲਤ੍ਰ ਮਾਇਆ ਧੋਹਿਆ ॥
ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਦੁਖੁ ਹੋਇ ਮਨਮੁਖਿ ਜਮਿ ਜੋਹਿਆ ਜੀਉ ॥੪॥

ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਲੇਹੁ ਮਿਲਾਇ ਮਹਲੁ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ਜੀਉ ॥
ਸਦਾ ਰਹੈ ਕਰ ਜੋੜਿ ਪ੍ਰਭੁ ਮਨਿ ਭਾਇਆ ਜੀਉ ॥
ਪ੍ਰਭੁ ਮਨਿ ਭਾਵੈ ਤਾ ਹੁਕਮਿ ਸਮਾਵੈ ਹੁਕਮੁ ਮੰਨਿ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਜਪਤ ਰਹੈ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ ਸਹਜੇ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਆ ॥
ਨਾਮੋ ਨਾਮੁ ਮਿਲੀ ਵਡਿਆਈ ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਮਨਿ ਭਾਵਏ ॥
ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਲੇਹੁ ਮਿਲਾਇ ਮਹਲੁ ਹਰਿ ਪਾਵਏ ਜੀਉ ॥੫॥੧॥

पृ-६९०

धनासरी छँत महला ४ घर १

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हरि जीउ क्रिपा करे ता नामु धिआईऐ जीउ ॥
सतिगुरु मिलै सुभाइ सहिज गुण गाईऐ जीउ ॥
गुण गाइ विगसै सदा अनदिनु जा आपि साचे भावए ॥
अँहकारु हउमै तजै माइआ सहिज नामि समावए ॥
आपि करता करे सोई आपि देइ त पाईऐ ॥
हरि जीउ क्रिपा करे ता नामु धिआईऐ जीउ ॥१

अँदरि साचा नेहु पूरे सतिगुरै जीउ ॥
हउ तिसु सेवी दिनु राति मै कदे न वीसरै जीउ ॥
कदे न विसारी अनदिनु समा्री जा नामु लई ता जीवा ॥
स्रवणी सुणी त इहु मनु त्रिपते गुरमुखि अँम्रितु पीवा ॥
नदरि करे ता सतिगुरु मेले अनदिनु बिबेक बुधि बिचरै ॥
अँदरि साचा नेहु पूरे सतिगुरै ॥२॥

सतसँगति मिलै वडभागि ता हरि रसु आवए जीउ ॥
अनदिनु रहै लिव लाइ त सहजि समावए जीउ ॥
सहजि समावै ता हरि मनि भावै सदा अतीतु बैरागी ॥
हलति पलति सोभा जग अँतरि राम नामि लिव लागी ॥
हरख सोग दुहा ते मुक्ता जो प्रभु करे सु भावए ॥
सतसँगति मिलै वडभागि ता हरि रसु आवए जीउ ॥३॥

दूजै भाइ दुखु होइ मनमुख जमि जोहिआ जीउ ॥
हाइ हाइ करे दिनु राति माइआ दुखि मोहिआ जीउ ॥
माइआ दुखि मोहिआ हउमै रोहिआ मेरी मेरी करत विहावए ॥
जो प्रभु देइ तिसु चेतै नाही अँति गइआ पछुतावए ॥
बिनु नावै को साथि न चालै पुत्र कलत्र माइआ धोहिआ ॥
दूजै भाइ दुखु होइ मनमुखि जमि जोहिआ जीउ ॥४॥

करि किरपा लेहु मिलाइ महलु हरि पाइआ जीउ ॥
सदा रहै कर जोड़ि प्रभु मनि भाइआ जीउ ॥
प्रभु मनि भावै ता हुकमि समावै हुकमु मँनि सुखु पाइआ ॥
अनदिनु जपत रहै दिनु राती सहजे नामु धिआइआ ॥
नामो नामु मिली वडिआई नानक नामु मनि भावए ॥
करि किरपा लेहु मिलाइ महलु हरि पावए जीउ ॥५॥१॥

धनासरी छँत महला -४ घर-१
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

पूर्व के अनेक शब्दों में गुरु जी ने दृढ़ भाव से यही कहा है कि हम गुरु से मार्ग दर्शन लेते हुए उसके निर्देशों के अनुसार प्रभु नाम का ध्यान करें । इस शब्द में वह यह तथ्य सिद्ध करना चाहते हैं कि पवित्र संगति तथा प्रभु नाम के ध्यान का वरदान तभी प्राप्त होता है जब प्रभु स्वयं अपनी कृपा हमारे उपर करते हैं । दूसरे शब्दों में यदि हम कोई भी ऐसा काम, जैसे कि संतों के सत्संग में जाना अथवा गुरु के निर्देशानुसार जीवनयापन और प्रभु नाम का ध्यान करते हैं तो इन गतिविधियों पर अभिमान करने की अपेक्षा हमें प्रभु के प्रति आभारी होना चाहिये कि उसने अपने बहूमूल्य नाम का वरदान देकर हमारे पर अपनी दया एवं कृपा की है ।

इसलिये गुरु जी कहते हैं “(ओ’ मेरे मित्रो), जब हरि जी कृपा करते हैं, तभी हम उनके नाम का ध्यान कर सकते हैं और जब हम सच्चे

गुरु से स्वाभाविक रूप से मिलते हैं तो सहज अवस्था में (प्रभु के) गुणों का गान करते हैं । जब सच्चे (प्रभु) को भाता है तब उसके गुणों को सदा दिन रात गाने से मन प्रफुल्लित रहता है तत्पश्चात, वह मनुष्य अंहकार अथवा अहम और सांसारिक मायाजाल को त्याग कर (प्रभु) नाम के द्वारा शांति तथा सहज अवस्था में समा जाता है । (अंततः, सभी कुछ केवल) सृजनकर्ता (प्रभु) स्वयं ही करता है और जब वह स्वयं प्रदान करता है तभी हम (उस वरदान को) पा सकते हैं । अतः, जब हरि जी कृपा करते हैं, तभी हम उनके नाम का ध्यान कर पाते हैं "।(१)

यहाँ पर गुरु जी स्वयं की मनोदशा को हमारे साथ साझा करते हुए व्यक्त करते हैं कि कैसे सच्चे गुरु ने उनके मन के अंदर प्रभु नाम को बसाया और अब दिन रात वह क्या करते हैं । वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), पूर्ण गुरु ने प्रभु के प्रति मेरे अँतरमन में सच्चा स्नेह उत्पन्न किया है और अब मैं दिन रात उस (प्रभु की) सेवा अथवा ध्यान में रहता हूँ, वह कभी मेरे मन में से बिसरता नहीं । हाँ, मैं कभी उसे बिसराता नहीं और दिन रात उसे (अपने हृदय में) स्मरण करता हूँ (ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे) मैं प्रभु नाम के ध्यान के कारण ही जीवित हूँ । जब उस (प्रभु) के नाम को श्रवण करता हूँ तो मेरा यह मन (सांसारिक मोहमाया से) तृप्त हो जाता है और तब गुरु के शब्द द्वारा मैं (प्रभु नाम रुपी) अँमृत रस पीता हूँ । (किन्तु) जब वह (प्रभु) अपनी कृपा दृष्टि करते हैं तब वह सच्चे गुरु से मिलन करवाते हैं और तभी दिन रात (मन में) विवेक अथवा बुद्धि का संचार होता है । पूर्ण तथा निपुण गुरु ने प्रभु के प्रति मेरे अँतरमन में सच्चा स्नेह उत्पन्न किया है "।(२)

संतों के सत्संग में जाकर आशीर्वाद लेने की आवश्यकता पर और अधिक विस्तार से गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), जब किसी अति सौभाग्यशाली को सच्चे संतों की संगति का वरदान प्राप्त होता है तो उसे प्रभु नाम रुपी रस का आनंद आता है । यदि कोई दिन रात (प्रभु में) लीन रहता है तो वह सहज अवस्था में समा जाता है । सहज अवस्था में समाने पर वह हरि के मन को भाता है और सदा के लिये (मायामोह से) वैराग्य पा लेता है । राम नाम में रमे रहने से लोक परलोक में उसकी शोभा फैलती है । ऐसा मनुष्य हर्ष एवं शोक दोनों (के प्रभाव) से मुक्त रहता है और जो भी प्रभु करते हैं उसे सब भाता है ।(ओ' मेरे मित्रो), जब किसी अति सौभाग्यशाली मनुष्य को सच्चे संतों की संगति का वरदान प्राप्त होता है तो वह हरि नाम रुपी रस का स्वाद पाता है "।(३)

अब गुरु जी उन लोगों की मनोस्थिति का वर्णन करते हैं जो प्रभु को प्रेम करने की अपेक्षा, अपनी धन सम्पदा, अधिकारी प्रवृत्तियों अथवा सगे सम्बन्धियों आदि की दुविधायों में पड़े रहते हैं । वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो, जब प्रभु की अपेक्षा) जो अंहकारी मनुष्य सांसारिक दुविधायों के प्रेम में रहता है वह दुख का भागी होता है और यमदूत उसके पीछे लगे रहते हैं । सांसारिक मायाजाल के दुखों से मोहित (अथवा भ्रमित) वह दिन रात 'हाय', 'हाय' करता है, तथा अहम से ग्रसित ' यह मेरा है', 'यह मेरा है' कहते तथा रोते हुये जीवन व्यतीत कर देता है। जो भी प्रभु ने प्रदान किया है उसके प्रति वह मन में आभारी नहीं होता और अंत में संसार छोड़ते समय पश्चाताप करता है । अंत समय पर, प्रभु नाम के अतिरिक्त साथ में और कुछ भी नहीं जाता तथा सांसारिक सम्बंध, पुत्र, पत्नी और धन सम्पदा सब धोखा देते हैं । (हाँ, मेरे मित्रो, जब प्रभु की अपेक्षा) जो अंहकारी मनुष्य सांसारिक दुविधायों से प्रेम करता है वह दुखों का भागी होता है और यमदूत उसका पीछा करते हैं " ।(४)

शब्द के अंत में गुरु जी प्रभु को विनम्र भावना से सम्बोधित करते हुये कहते हैं " हे' हरि जी, आपने कृपा करके (जिसको भी) अपने साथ मिला लिया, उसको ही हरि का महल प्राप्त हो गया । ऐसा मनुष्य सदा (तुम्हारे सम्मुख) करबद्ध रहता है, (क्योंकि) उसके मन को प्रभु भाते हैं । मन को भाने वाले प्रभु के निर्देश अथवा आज्ञा में वह समा जाता है, तथा आज्ञा का पालन करने में वह सुख का अनुभव करता है । वह दिन और रात प्रभु नाम का जाप करता है और शांत सहज दशा में प्रभु नाम का ध्यान करता है । तब, हे' नानक, प्रभु का नाम ही मन को आन्नदित करता है, उसी के नाम के ध्यान द्वारा ही उसे महिमा प्राप्त होती है । हे' हरि जी, आपने कृपा करके (जिसे भी) अपने साथ मिला लिया, उसे ही हरि का महल प्राप्त हो जाता है "।(५-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु के साथ रह कर अनंत शांति पाना चाहते हैं तो अपने अँहकार का त्याग करते हुए संतजनों की सँगति में गुरु ग्रंथ साहिब जी के निर्देशों के अनुसार प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिए । यदि यह सब प्रभु को भाता है तो वह हमें अपने साथ जोड़ लेंगे ।

ਪੰਨਾ ੬੯੧

ਰਾਗੁ ਧਨਾਸਰੀ ਬਾਣੀ ਭਗਤ ਕਬੀਰ ਜੀ ਕੀ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਸਨਕ ਸਨੰਦ ਮਹੇਸ ਸਮਾਨਾਂ ॥
ਸੇਖਨਾਗਿ ਤੇਰੋ ਮਰਮੁ ਨ ਜਾਨਾਂ ॥੧॥

ਸੰਤਸੰਗਤਿ ਰਾਮੁ ਰਿਦੈ ਬਸਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਨੂਮਾਨ ਸਰਿ ਗਰੁੜ ਸਮਾਨਾਂ ॥
ਸੁਰਪਤਿ ਨਰਪਤਿ ਨਹੀ ਗੁਨ ਜਾਨਾਂ ॥੨॥

ਚਾਰਿ ਬੇਦ ਅਰੁ ਸਿੰਮ੍ਰਿਤਿ ਪੁਰਾਨਾਂ ॥
ਕਮਲਾਪਤਿ ਕਵਲਾ ਨਹੀ ਜਾਨਾਂ ॥੩॥

ਕਹਿ ਕਬੀਰ ਸੋ ਭਰਮੈ ਨਾਹੀ ॥
ਪਗ ਲਗਿ ਰਾਮ ਰਹੈ ਸਰਨਾਂਹੀ ॥੪॥੧॥

पृ-६९१

राग धनासरी बाणी भगत कबीर जी की

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सनक सनँद महेस समानां ॥
सेखनागि तेरो मरमु न जानां ॥१॥

सँतसँगति रामु रिदै बसाई ॥१॥रहाउ ॥

हनूमान सरि गरुड़ समानां ॥
सुरपति नरपति नही गुन जानां ॥२॥

चारि बेद अरु सिँमिृति पुरानां ॥
कमलापति कवला नही जानां ॥३॥

कहि कबीर सो भरमै नाही ॥
पग लगि राम रहै सरनांही ॥४॥१॥

राग धनासरी बाणी भगत कबीर जी की
१ओंकार सतगुरि प्रसादि

इस शब्द में भक्त कबीर जी हमें बताते हैं कि कोई भी प्रभु की सीमा अर्थात् उसका रहस्य नहीं पा सका है और तब वह समझाते हैं कि हमें उसके निकट पहुँचने, अथवा उसे पाकर एक होने के लिये क्या करना चाहिये ।

कबीर जी पहले ब्रह्मा जी के सनक एवं सानंद नामक पुत्रों, महेश (शिवजी) और शेषनाग (जिनके सहस्त्र शीश हैं और वह प्रतिदिन हर एक जिह्वा से विष्णु जी को नये नाम से सम्बोधित करते हैं) के लिये कहते हैं " (हे' प्रभु), सनक, सानंद, महेश एवं शेषनाग जैसे महान देवता गण भी तुम्हारा रहस्य नहीं समझ पाये हैं "।(१)

अतः कबीर जी हमें समझाते हुये कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो, यदि आप लोग प्रभु को पाना चाहते हो, तो) संतों की संगति में रह कर राम को (अँतरमन से राम का ध्यान करके) अपने हृदय में बसाओ "।(१- विराम)

प्रभु के रहस्यमयी अथवा गूढ़ रूप को थोड़े विस्तार से कबीर जी व्यक्त करते हुये कहते हैं (ओ' मेरे मित्रो) हनुमान जी जैसा व्यक्तित्व, गरुड़ के समान पक्षियों के राजा, देवतागणों के राजा (इंद्रदेव) तथा, अनेकों मनुष्यों के राजा भी उस (ईश्वर) के गुणों की सीमा को नहीं आँक सके "।(२)

केवल इतना ही नहीं, कबीर जी और आगे भी कहते हैं " (समस्त) चारों वेद, स्मृतियाँ पुराण और कमलापति (विष्णु) भी उस (प्रभु) की थाह को नहीं जान सके "।(३)

इस शब्द का अंत कबीर जी हमें यह कहते हुये करते हैं कि कैसे कोई स्वयं को अनेक प्रकार के भ्रमों से बचा सकता है, जब कि, अनेक देवी तथा देवता गण प्रभु का सच्चा रूप नहीं ढूँढ पाये और उसके रहस्य को नहीं सुलझा सके । " कबीर कहते हैं कि वह मनुष्य कभी भ्रमों में नहीं भटकता जो राम की शरण में ही रह कर उसके चरणों (अथवा उसके नाम के ध्यान) में लगा रहता है "।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि प्रभु का रूप और रहस्य सुलझाने की अपेक्षा, हमें उसके नाम का ध्यान करने की ओर अधिक रुचि रखनी चाहिये । स्नेह एवं प्रेम से उसे स्मरण करते हुये संत जनों की संगति में रह कर हमें उसकी महिमा का गायन करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੬੯੩	**पृ-६९३**
ਪਹਿਲ ਪੁਰੀਏ ਪੁੰਡਰਕ ਵਨਾ ॥ ਤਾ ਚੇ ਹੰਸਾ ਸਗਲੇ ਜਨਾਂ ॥ ਕ੍ਰਿਸ੍ਨਾ ਤੇ ਜਾਨਊ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਚੰਤੀ ਨਾਚਨਾ ॥੧॥	पहिल पुरीए पुँडरक वना ॥ ता चे हँसा सगले जनां ॥ क्रिसना् ते जानऊ हरि हरि नाचँती नाचना ॥१॥
ਪਹਿਲ ਪੁਰਸਾਬਿਰਾ ॥ ਅਥੋਨ ਪੁਰਸਾਦਮਰਾ ॥ ਅਸਗਾ ਅਸ ਉਸਗਾ ॥ ਹਰਿ ਕਾ ਬਾਗਰਾ ਨਾਚੈ ਪਿੰਧੀ ਮਹਿ ਸਾਗਰਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	पहिल पुरसाबिरा ॥ अथोन पुरसादमरा ॥ असगा अस उसगा ॥ हरि का बागरा नाचै पिँधी महि सागरा ॥१॥रहाउ॥
ਨਾਚੰਤੀ ਗੋਪੀ ਜੰਨਾ ॥ ਨਈਆ ਤੇ ਬੈਰੇ ਕੰਨਾ ॥ ਤਰਕੁ ਨ ਚਾ ॥ ਭ੍ਰਮੀਆ ਚਾ ॥ ਕੇਸਵਾ ਬਚਉਨੀ ਅਈਏ ਮਈਏ ਏਕ ਆਨ ਜੀਉ ॥੨॥	नाचँती गोपी जँना ॥ नईआ ते बैरे कँना ॥ तरकु न चा ॥ भ्रमीआ चा ॥ केसवा बचउनी अईए मईए एक आन जीउ ॥२॥
ਪੰਨਾ ੬੯੪	**पृ-६९४**
ਪਿੰਧੀ ਉਭਕਲੇ ਸੰਸਾਰਾ ॥ ਭ੍ਰਮਿ ਭ੍ਰਮਿ ਆਏ ਤੁਮ ਚੇ ਦੁਆਰਾ ॥ ਤੂ ਕੁਨੁ ਰੇ ॥ ਮੈ ਜੀ ॥ ਨਾਮਾ ॥ ਹੋ ਜੀ ॥ ਆਲਾ ਤੇ ਨਿਵਾਰਣਾ ਜਮ ਕਾਰਣਾ ॥੩॥੪॥	पिँधी उभकले सँसारा ॥ भ्रमि भ्रमि आए तुम चे दुआरा ॥ तू कुनु रे ॥ मै जी ॥ नामा ॥ हो जी ॥ आला ते निवारणा जम कारणा ॥३॥४॥

धनासरी बाणी भगत नाम देव जी की ३.४
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में भक्त नामदेव जी हिंदू मत के अनुसार धरती की स्थापना का उल्लेख करते हैं, तथा किस प्रकार से मनुष्य सहित समस्त जीवन का विकास हुआ और अब किस प्रकार की प्रक्रिया चल रही है । अँत में वह प्रभु के साथ अपने इन विचारों पर हुए लघु वार्तालाप की चर्चा भी करते हैं ।

वह कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), सर्वप्रथम पूर्ण प्रभु थे, फिर यह संसार सुंदर श्वेत कमल के फूलों के वन के रूप में सृजित हुआ, जिसमें समस्त जीव (पवित्र एवं सत्य रूप में) हँसो के समान थे और यह प्रभु की रचना अपने रचियता के स्वर पर नृत्य कर रही है "। (१)

उपरोक्त धारणा को स्पष्ट करते हुये नामदेव जी कहते हैं "सर्वप्रथम, ईश्वर प्रकट हुये, (तब उन्होंने सृष्टि अथवा) माया का सृजन किया। तत्पश्चात, प्रभु एवं माया के बीच योग हुया (और इस संसार की रचना तथा स्थापना हुई)। अतः, जो कुछ इस (माया) का है, वास्तविकता में वह प्रभु का है । इस लिये, यह संसार प्रभु का बाग़ अथवा फुलवारी के भाँति है, (जहाँ माया अथवा सांसारिक धन सम्पदा और सामर्थ्य के लिये उन्मत्त होकर उसके घटक) रहट के जल के डिब्बों की भाँति नाच रहे हैं "।(१-विराम)

एक बार फिर नामदेव जी हमें सम्बोधित करते हुये कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), यह मानव जन (कृष्ण की) गोपियों की भाँति नाच रहे हैं और उनके बीच में प्रभु स्वयं भी हैं (जो नाच रहे हैं, क्योंकि) और हो भी कौन सकता है ? इसके लिये कोई तर्क न करो और अपने भ्रम का त्याग करो । क्योंकि, यह प्रभु के वचन हैं कि "मैं तथा माया एक हैं और एक जैसे हैं "।(२)

नामदेव जी अब प्रभु के साथ हुये वार्तालाप का वर्णन करते हैं । प्रभु को सम्बोधित करते हुये वह कहते हैं " हे' प्रभु, जैसे कि रहट में घूमते जल के डिब्बे उपर नीचे आते जाते रहते हैं, वैसे ही, संसार में (विभिन्न जातियों के रूप में अनेकों जीव आते जाते रहते हैं) परन्तु, हे' प्रभु, (अनेक जन्मों में) भ्रमण कर करके मैं तुम्हारे द्वार पर आया हूँ,

प्रभु तब प्रश्न करते हैं " तुम कौन हो ?"

नामदेव जी उत्तर देते हैं " श्रीमान, मैं नामा हूँ "।

प्रभु पूछते हैं " तो तुम क्या चाहते हो "।

नामदेव जी का उत्तर है " श्रीमान, मैं यमराज के कारण भयभीत हूँ, (कृपया) इस मृत्यु के भय (अथवा, संसार में बारम्बार जन्म मरण की प्रकिया से) मेरा निवारण कर दो "।(३-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि प्रभु ने ही प्रकृति और ब्रह्मांड सहित सभी कुछ सृजित किया है ।परन्तु, हम प्रभु को बिसरा कर सांसारिक मोहमाया और सत्ता के पीछे इस प्रकार से भागते रहते हैं जैसे कि रहट में लगे जल के डिब्बे उपर नीचे घूमते रहते हैं । प्रभु की शरण में रह कर उसके नाम का ध्यान करने रहने से ही हम ऐसी स्थिति से मुक्त हो सकते हैं ।"।

ਪੰਨਾ ੬੯੬	पृ-६९६
ਜੈਤਸਰੀ ਮਹਲਾ ੪ ਘਰੁ ੧ ਚਉਪਦੇ	जैतसरी महला ४ घर १ चउपदे
੧ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥
ਮੇਰੈ ਹੀਅਰੈ ਰਤਨੁ ਨਾਮੁ ਹਰਿ ਬਸਿਆ ਗੁਰਿ ਹਾਥੁ ਧਰਿਓ ਮੇਰੈ ਮਾਥਾ ॥ ਜਨਮ ਜਨਮ ਕੇ ਕਿਲਬਿਖ ਦੁਖ ਉਤਰੇ ਗੁਰਿ ਨਾਮੁ ਦੀਓ ਰਿਨੁ ਲਾਥਾ ॥੧॥	मेरै हीअरै रतनु नामु हरि बसिआ गुरि हाथु धरिओ मेरै माथा ॥ जनम जनम के किलबिख दुख उतरे गुरि नामु दीओ रिनु लाथा ॥१॥
ਮੇਰੇ ਮਨ ਭਜੁ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਸਭਿ ਅਰਥਾ ॥ ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਜੀਵਨੁ ਬਿਰਥਾ ॥ ਰਹਾਉ ॥	मेरे मन भजु राम नामु सभि अरथा ॥ गुरि पूरै हरि नामु दृिड़ाइआ बिनु नावै जीवनु बिरथा ॥रहाउ॥
ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਮੂੜ ਭਏ ਹੈ ਮਨਮੁਖ ਤੇ ਮੋਹ ਮਾਇਆ ਨਿਤ ਫਾਥਾ ॥ ਤਿਨ ਸਾਧੂ ਚਰਣ ਨ ਸੇਵੇ ਕਬਹੂ ਤਿਨ ਸਭੁ ਜਨਮੁ ਅਕਾਥਾ ॥੨॥	बिनु गुर मूड़ भए है मनमुख ते मोह माइआ नित फाथा ॥ तिन साधू चरण न सेवे कबहू तिन सभु जनमु अकाथा ॥२॥
ਜਿਨ ਸਾਧੂ ਚਰਣ ਸਾਧ ਪਗ ਸੇਵੇ ਤਿਨ ਸਫਲਿਓ ਜਨਮੁ ਸਨਾਥਾ ॥ ਮੋ ਕਉ ਕੀਜੈ ਦਾਸੁ ਦਾਸ ਦਾਸਨ ਕੋ ਹਰਿ ਦਇਆ ਧਾਰਿ ਜਗੰਨਾਥਾ ॥੩॥	जिन साधू चरण साध पग सेवे तिन सफलिओ जनमु सनाथा ॥ मो कउ कीजै दासु दास दासन को हरि दइआ धारि जगँनाथा ॥३॥
ਹਮ ਅੰਧੁਲੇ ਗਿਆਨਹੀਨ ਅਗਿਆਨੀ ਕਿਉ ਚਾਲਹ ਮਾਰਗਿ ਪੰਥਾ ॥ ਹਮ ਅੰਧੁਲੇ ਕਉ ਗੁਰ ਅੰਚਲੁ ਦੀਜੈ ਜਨ ਨਾਨਕ ਚਲਹ ਮਿਲੰਥਾ ॥੪॥	हम अँधुले गिआनहीन अगिआनी किउ चालह मारगि पँथा ॥ हम अँधुले कउ गुर अँचलु दीजै जन नानक चलह मिलँथा ॥४॥

जैतसरी महला-४ घर-१ चउपदे
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी हमें यह बता रहे हैं कि जब गुरु ने अपनी कृपा करके आशीर्वाद प्रदान किये तब उन्हें कैसे वरदान और सुख प्राप्त हुये। वह यह भी बताते हैं कि हम गुरु के सम्मुख किस प्रकार से प्रार्थना करें और प्रभु नाम का जीवन में क्या महत्व है ।

वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), जब गुरु ने अपना वरदहस्त मेरे सिर पर रखा, तब मेरे हृदय में हरि नाम रूपी रत्न आकर बस गया । जब गुरु ने मुझे (प्रभु के) नाम (का वरदान) दिया, तब मेरे जन्म जन्म से एकत्रित पाप कर्म एवं दुखदर्द सब चले गये और मेरा (प्रभु द्वारा प्रदत्त श्वासों का) ऋण उतर गया "।(१)

इसलिये, गुरु जी स्वयं को (और हमें भी) समझाते हुये कहते हैं " ओ' मेरे मन, सभी प्रकार के उद्देश्य अथवा अर्थ के लिये प्रभु नाम का ध्यान करो । पूर्ण गुरु ने मुझे प्रभु नाम में दृढ़ किया है, प्रभु नाम के बिना जीवन व्यर्थ है "।(विराम)

गुरु जी अभिमानी लोगों के आचरण पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), गुरु के मार्ग दर्शन को न पाकर अभिमानी मनुष्य मूर्ख हो गये हैं और नित्य ही मोह माया के जाल में फँसते जाते हैं । ऐसे मनुष्यों ने कभी साधु संतों (गुरु) के चरणों की सेवा नहीं की (गुरबाणी अथवा गुरु के शब्दों को नहीं सुना), इसलिये, उनका मानव जन्म निरर्थक है "।(२)

दूसरी ओर, गुरु के अनुयायियों के लिये वह कहते हैं " जिन्होंने साधु संतों के चरणों की सेवा की (गुरु की वाणी अथवा गुरबाणी के उपदेशों को विनम्रतापूर्वक सुना और अनुसरण किया), उनका समस्त जीवन सफल हो गया । इसलिये, हे' जगन्नाथ, तुम दया धारण करके मुझे हरि के दासों का भी दास बना दो "।(३)

गुरु जी अँत में प्रकट करते हैं कि प्रभु से किस प्रकार से प्रार्थना करें जिससे कि हम भी गुरु का मार्गदर्शन प्राप्त कर सकें । उनका कहना है " हे' प्रभु, हम अज्ञानी, अँधे और बुद्धिहीन लोग हैं, सो सही मार्ग पर कैसे चल सकते हैं ? भक्त नानक प्रार्थना करते हैं कि हे' गुरु, हम अँधों को अपना आँचल पकड़ा दो (अपना मार्ग दर्शन दो), ताकि हम सब एकसुर होकर तुम्हारे साथ चल सकें "।(४)

इस शब्द का संदेश है कि गुरु से मुख मोड़ कर सांसारिक जंजालों में फँसे रहने की अपेक्षा, हमें प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें सच्चे गुरु की विनम्रतापूर्वक सेवा एवं मार्ग दर्शन का अवसर प्रदान करें । गुरु के निर्देशों के पालन से हमें प्रभु नाम का वरदान मिल सकता है और अंत में हम एक बार पुनः चिरकाल से बिछुड़े हुए प्रभु से मिलन प्राप्त कर जीवन के ध्येय को परिपूर्ण कर सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੬੯੭

ਜੈਤਸਰੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਜਿਨ ਹਰਿ ਹਿਰਦੈ ਨਾਮੁ ਨ ਬਸਿਓ ਤਿਨ ਮਾਤ ਕੀਜੈ ਹਰਿ ਬਾਂਝਾ ॥
ਤਿਨ ਸੁੰਞੀ ਦੇਹ ਫਿਰਹਿ ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਓਇ ਖਪਿ ਖਪਿ ਮੁਏ ਕਰਾਂਝਾ ॥੧॥

ਮੇਰੇ ਮਨ ਜਪਿ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਹਰਿ ਮਾਝਾ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਕ੍ਰਿਪਾਲਿ ਕ੍ਰਿਪਾ ਪ੍ਰਭਿ ਧਾਰੀ ਗੁਰਿ ਗਿਆਨੁ ਦੀਓ ਮਨੁ ਸਮਝਾ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਰਿ ਕੀਰਤਿ ਕਲਜੁਗਿ ਪਦੁ ਊਤਮੁ ਹਰਿ ਪਾਈਐ ਸਤਿਗੁਰ ਮਾਝਾ ॥
ਹਉ ਬਲਿਹਾਰੀ ਸਤਿਗੁਰ ਅਪੁਨੇ ਜਿਨਿ ਗੁਪਤੁ ਨਾਮੁ ਪਰਗਾਝਾ ॥੨॥

ਦਰਸਨੁ ਸਾਧ ਮਿਲਿਓ ਵਡਭਾਗੀ ਸਭਿ ਕਿਲਬਿਖ ਗਏ ਗਵਾਝਾ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਸਾਹੁ ਪਾਇਆ ਵਡ ਦਾਣਾ ਹਰਿ ਕੀਏ ਬਹੁ ਗੁਣ ਸਾਝਾ ॥੩॥

ਪੰਨਾ ੬੯੮

ਜਿਨ ਕਉ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੀ ਜਗਜੀਵਨਿ ਹਰਿ ਉਰਿ ਧਾਰਿਓ ਮਨ ਮਾਝਾ ॥
ਧਰਮ ਰਾਇ ਦਰਿ ਕਾਗਦ ਫਾਰੇ ਜਨ ਨਾਨਕ ਲੇਖਾ ਸਮਝਾ ॥੪॥੫॥

पृ-६९७

जैतसरी महला ४॥

जिन हरि हिरदै नामु न बसिओ तिन मात कीजै हरि बांझा ॥
तिन सुँञी देह फिरहि बिनु नावै ओइ खपि खपि मुए करांझा ॥१॥

मेरे मन जपि राम नामु हरि माझा ॥
हरि हरि कृिपालि कृिपा प्रभि धारी गुरि गिआनु दीओ मनु समझा ॥रहाउ॥

हरि कीरति कलजुगि पदु ऊतमु हरि पाईऐ सतिगुर माझा ॥
हउ बलिहारी सतिगुर अपुने जिनि गुपतु नामु परगाझा ॥२॥

दरसनु साध मिलिओ वडभागी सभि किलबिख गए गवाझा ॥
सतिगुरु साहु पाइआ वड दाणा हरिकीए बहु गुण साझा ३॥

पृ-६९८

जिन कउ कृिपा करी जगजीवनि हरि उरि धारिओ मन माझा ॥
धरम राइ दरि कागद फारे जन नानक लेखा समझा ॥४॥५॥

जैतसरी महला – ४

इस से पूर्व अनेक शब्दों में गुरु जी ने प्रभु नाम का आश्रय लेने की आवश्यकता पर हमें दृढ़ रुप से समझाया है । इस शब्द में वह फिर से एक बार कह रहे हैं कि प्रभु का नाम हमारे लिये कितना आवश्यक और महत्वपूर्ण है, तथा वह लोग कितने अभागे हैं जो प्रभु नाम के वरदान से वंचित रहते हैं और उस स्वामी की कृपा के बिना कितना कष्ट झेलते हैं ।

अपने विचारों को व्यक्त करते हुये गुरु जी कहते हैं “ओ’ प्रभु, जिनके हृदय में हरि नाम नहीं बसा है उनकी माता को बाँझ कर दो । हरि नाम के बिना उनका शरीर सूना अथवा अकेला भटकता है और वह भटक भटक कर रोते कराहते हुये मर खप जाते हैं ”।(१)

इसलिये गुरु जी अपने मन को और परोक्ष में हमें भी परामर्श देते हुये कहते हैं “ओ’ मेरे मन, उस हरि नाम का ध्यान करो जो तुम्हारे ही मन के अंदर रहता है ।(ओ’ मेरे मित्रो, जब) कृपालु प्रभु ने कृपा धारण की और गुरु ने दैवी ज्ञान मुझे दिया, तब मेरे मन ने (प्रभु नाम के महत्व को) समझा ”।(१-विराम)

प्रभु की महिमा में कीर्तन करने के महत्व पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं “ओ’ मेरे मित्रो), कलियुग में हरि की कीर्ति, अथवा, उसका महिमागान करना उत्कृष्ट कार्य है और हम सच्चे गुरु के द्वारा हरि को प्राप्त कर लेते हैं ।अतः, मैं अपने सच्चे गुरु पर बलिहारी हूँ, जिसने इस प्रभु नाम का गुप्त भेद मेरे सम्मुख प्रकट किया ”।(२)

अब गुरु जी हमें बताते हैं कि जब उन्हें गुरु द्वारा मार्ग दर्शन प्राप्त हुया तो कैसा अनुभव हुया । वह कहते हैं “ यह मेरा पूर्व निर्दिष्ट सौभाग्य है कि मुझे साधु (गुरु) के दर्शन हुये और मेरे समस्त पाप और दुष्कर्म लुप्त हो गये । मैंने ऐसे साहूकार एवं बुद्धिमान सच्चे गुरु का मार्ग दर्शन पाया जिसने मेरे साथ हरि के अनेक गुणों को साझा किया (और मैंने अपने अंदर उस अनंत प्रभु के अनेकों गुणों तथा सदाचार को आत्मसात कर लिया ”।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं “(ओ’ मेरे मित्रो), जिनके उपर भी जगजीवन दाता (प्रभु) ने कृपा की, उन्होंने ही हरि को अपने हृदय में धारण कर लिया । दास नानक कहते हैं कि धर्मराज ने अपने दरबार में उन के लेखे-जोखे के काग़ज़ फाड़ दिये हैं, क्योंकि उनका सब हिसाब- किताब चुक गया है (अतः वह जन्म मरण के और दुख-दर्द नहीं पायेंगे)”।(४-५)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम भविष्य में जन्म मरण के संताप से दूर रहना चाहते हैं तो हमें प्रभु से यह कामना करनी चाहिये कि वह सच्चे गुरु का मार्गदर्शन प्रदान करे जिसके निर्देशों के अनुसार हम प्रभु नाम के ध्यान में रह कर उससे सदा जुड़े रहें और अपने पूर्व अर्जित पाप और दुष्कर्मों को मिटा सकें ।

ਪੰਨਾ ੭੦੦

ਜੈਤਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੩

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਕੋਈ ਜਾਨੈ ਕਵਨੁ ਈਹਾ ਜਗਿ ਮੀਤੁ ॥
ਜਿਸੁ ਹੋਇ ਕ੍ਰਿਪਾਲੁ ਸੋਈ ਬਿਧਿ ਬੂਝੈ ਤਾ ਕੀ ਨਿਰਮਲ ਰੀਤਿ ॥੧॥
ਰਹਾਉ ॥

ਮਾਤ ਪਿਤਾ ਬਨਿਤਾ ਸੁਤ ਬੰਧਪ ਇਸਟ ਮੀਤ ਅਰੁ ਭਾਈ ॥
ਪੂਰਬ ਜਨਮ ਕੇ ਮਿਲੇ ਸੰਜੋਗੀ ਅੰਤਹਿ ਕੋ ਨ ਸਹਾਈ ॥੧॥

ਮੁਕਤਿ ਮਾਲ ਕਨਿਕ ਲਾਲ ਹੀਰਾ ਮਨ ਰੰਜਨ ਕੀ ਮਾਇਆ ॥
ਹਾ ਹਾ ਕਰਤ ਬਿਹਾਨੀ ਅਵਧਹਿ ਤਾ ਮਹਿ ਸੰਤੋਖੁ ਨ ਪਾਇਆ ॥੨॥

ਹਸਤਿ ਰਥ ਅਸ੍ਵ ਪਵਨ ਤੇਜ ਧਣੀ ਭੂਮਨ ਚਤੁਰਾਂਗਾ ॥
ਸੰਗਿ ਨ ਚਾਲਿਓ ਇਨ ਮਹਿ ਕਛੂਐ ਊਠਿ ਸਿਧਾਇਓ ਨਾਂਗਾ ॥੩॥

ਹਰਿ ਕੇ ਸੰਤ ਪ੍ਰਿਅ ਪ੍ਰੀਤਮ ਪ੍ਰਭ ਕੇ ਤਾ ਕੈ ਹਰਿ ਹਰਿ ਗਾਈਐ ॥
ਨਾਨਕ ਈਹਾ ਸੁਖੁ ਆਗੈ ਮੁਖ ਊਜਲ ਸੰਗਿ ਸੰਤਨ ਕੈ ਪਾਈਐ ॥੪॥੧॥

पृ-७००

जैतसरी महला ५ घर ३

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

कोई जानै कवनु ईहा जगि मीतु ॥
जिसु होइ क्रिपालु सोई बिधि बूझै ता की निरमल रीति ॥१॥
रहाउ॥

मात पिता बनिता सुत बँधप इसट मीत अरु भाई ॥
पूरब जनम के मिले सँजोगी अँतहि को न सहाई ॥१ ॥

मुकति माल कनिक लाल हीरा मन रँजन की माइआ ॥
हा हा करत बिहानी अवधहि ता महि सँतोखु न पाइआ ॥२॥

हसति रथ असव् पवन तेज धणी भूमन चतुरांगा ॥
सँगि न चालिओ इन महि कछूऐ ऊठि सिधाइओ नांगा ॥३॥

हरि के सँत प्रिअ प्रीतम प्रभ के ता कै हरि हरि गाईऐ ॥
नानक ईहा सुखु आगै मुख ऊजल सँगि सँतन कै पाईऐ ॥४॥१॥

जैतसरी महला-५ घर-३
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी हमारा ध्यान एक कड़वे सच की ओर ले जाते हैं जहाँ विशेष कर किसी मृत्यु अथवा शोक के समय पर हमें अपने सगे सम्बंधियों मित्रों एवं अपनी धन सम्पदा पर भरोसा होता है कि वह आड़े समय पर हमारे काम आयेंगे । वह यह भी बताते हैं कि हमारा सच्चा मित्र कौन है और उससे किस प्रकार से सहायता ले सकते हैं ।

वह कहते हैं "कोई बिरला ही है जो वास्तव में जानता है कि इस संसार में कौन एक सच्चा मित्र है । जिस पर प्रभु कृपा करते हैं, केवल वही (सच्चा मित्र पाने की) इस विधि को समझता है, (और) उसकी जीवन रीति पवित्र तथा निर्मल है "।(१-विराम)

क्यों कुछ लोग हमारे सम्बंधी तथा मित्र होते हैं, इस कारण की व्यवस्था के विषय में गुरु जी कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो, हमारे) माता, पिता, पत्नी, पुत्र, बँधु, प्रिय मित्र और भाई, सभी यहाँ (एक ही स्थान पर) एकत्र होकर मिलते हैं, क्योंकि यह पूर्व जन्मों के संयोग हैं, परन्तु, अंत समय पर कोई भी सच्चा सहायक नहीं बन पाता "।(१)

अब गुरु जी सांसारिक माया पर टिप्पणी करते हैं, जिसे उचित अथवा अनुचित प्रकार से एकत्र करने के लिये हर कोई दिन रात व्यस्त रहता है । वह कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो, यह सब पदार्थ, जैसे कि) मोतीओं की माला, सोना, लाल, हीरे इत्यादि, मन को प्रसन्न करने के लिये छलावे भर हैं । इन सब पदार्थों में फँस 'हाय', 'हाय' करते हुये समस्त आयु समाप्त हो जाती है, पर (किसी को भी) उसमें सन्तुष्टि नहीं प्राप्त हुई "।(२)

तत्कालीन सुख विलास एवं ठाठ- बाट के साजो-सामान, जैसे कि, सुंदर घोड़े, हाथी और रथ इत्यादि (जो कि आजकल के कारों, मोटरों अथवा हेलीकाप्टर के समानांतर हैं) के लिये गुरु जी कहते हैं " (ओ' मेरे मित्रो), कोई भी यदि हाथी, रथ, पवन की गति से भी द्रुतगामी घोड़े, भूमि में धनी (ज़मींदार) अथवा चारों प्रकार की सेना का स्वामी हो, परन्तु, अंत में इन सबमें से कुछ भी साथ नहीं चलेगा, अपितु, नग्न अवस्था में ही (इस संसार से) उठ कर सिधार जायेगा "।(३)

शब्द का अंत गुरु जी यह कहते हुये करते हैं कि हमें लोक तथा परलोक में शांति प्राप्त करने के लिये क्या करना चाहिये । वह कहते हैं "(ओ' मेरे मित्रो), प्रभु को अपने संत अति प्रिय हैं और हमें उनकी संगति में हरि के नाम का बारम्बार उच्चारण तथा गायन करना चाहिये। नानक कहते हैं, (इस प्रकार) संतों की संगति में रह कर हम इस लोक में सुख पाते हैं और आगे परलोक में भी सम्मान के भागी होते हैं अथवा मुख उज्ज्वल रहता है "।(४-१)

इस शब्द का संदेश है कि हमें निश्चित रूप से यह समझ लेना चाहिए कि अँत समय पर सगे सम्बन्धी, मित्र अथवा धन सम्पदा कोई भी हमारा सच्चा सहायक नहीं बन पाता ।यदि हम इस लोक में सुख शांति और परलोक में सम्मान प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें प्रभु के प्रेमी संतों की संगति में रह कर प्रभु की प्रशंसा एवं महिमा में भजन कीर्तन करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੭੦੧	पृ-७०१
ਜੈਤਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**जैतसरी महला ५**
ਕੋਈ ਜਨੁ ਹਰਿ ਸਿਉ ਦੇਵੈ ਜੋਰਿ ॥ ਚਰਨ ਗਹਉ ਬਕਉ ਸੁਭ ਰਸਨਾ ਦੀਜਹਿ ਪ੍ਰਾਨ ਅਕੋਰਿ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	कोई जनु हरि सिउ देवै जोरि ॥ चरन गहउ बकउ सुभ रसना दीजहि प्रान अकोरि ॥१॥रहाउ ॥
ਮਨੁ ਤਨੁ ਨਿਰਮਲ ਕਰਤ ਕਿਆਰੋ ਹਰਿ ਸਿੰਚੈ ਸੁਧਾ ਸੰਜੋਰਿ ॥ ਇਆ ਰਸ ਮਹਿ ਮਗਨੁ ਹੋਤ ਕਿਰਪਾ ਤੇ ਮਹਾ ਬਿਖਿਆ ਤੇ ਤੋਰਿ ॥੧॥	मनु तनु निरमल करत किआरो हरि सिँचै सुधा सँजोरि ॥ इआ रस महि मगनु होत किरपा ते महा बिखिआ ते तोरि ॥१॥
ਆਇਓ ਸਰਣਿ ਦੀਨ ਦੁਖ ਭੰਜਨ ਚਿਤਵਉ ਤੁਮ੍ਰੀ ਓਰਿ ॥	आइओ सरणि दीन दुख भँजन चितवउ तुमरी ओरि ॥
ਪੰਨਾ ੭੦੨	**पृ-७०२**
ਅਭੈ ਪਦੁ ਦਾਨੁ ਸਿਮਰਨੁ ਸੁਆਮੀ ਕੋ ਪ੍ਰਭ ਨਾਨਕ ਬੰਧਨ ਛੋਰਿ ॥੨॥੫॥੯॥	अभै पदु दानु सिमरनु सुआमी को प्रभ नानक बँधन छोरि ॥२॥५॥९॥

जैतसरी महला – ५

इस शब्द में गुरु जी यह दर्शाते हैं कि एक मध्यस्थ कर्ता (गुरु) को पाने के लिये हमें कैसे प्रार्थना करनी चाहिये, जो प्रभु से जोड़ने के लिये हमारी सहायता कर सके । वह यह भी कहते हैं कि अँमृत रूपी पवित्र गुरबाणी (गुरु का शब्द) के द्वारा अपने तन एवं मन को कोई बिरले ही लोग वास्तविक रूप से निर्मल कर पाते हैं ।

अत्याधिक विनम्रता पूर्ण भाव से गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो), यदि कोई भक्त जन मुझे हरि से जोड़ (मिला) दे तो मैं उसके चरणों में चला जाऊँगा, जिह्वा से (उसकी प्रशंसा में) शुभ वचन बोलूँगा और प्राण भी भेंट कर दूँगा "।(१-विराम)

परन्तु, गुरु जी अपना यह विचार कहते हैं " (हे मेरे मित्रो, कोई बिरला मनुष्य ही अपने) तन एवं मन को एक सुंदर साफ़ क्यारी की भाँति बनाकर उसे पवित्र हरि नाम रूपी पानी से सींचता है और अँमृत संजोता है। महा विषैले (सांसारिक मायामोह के) बंधन तोड़ कर प्रभु की कृपा से वह(दैवी) रस के स्वाद में मग्न हो जाता है "।(१)

ऐसे आशीर्वाद पाने के लिये हम कैसे प्रार्थना करें, इस पर शब्द के अंत में गुरु जी कहते हैं " हे प्रभु, दीनों के दुख भंजन करने वाले, मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ और (तुम्हारे आशीर्वाद के लिये) तुम्हारी ओर देख रहा हूँ । हे प्रभु, नानक को समस्त (सांसारिक) बंधनों से मुक्त करदो और उसे अभय दान देकर स्वामी (प्रभु नाम) के सिमरन (ध्यान) में लगा दो "।(२-५-९)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर अपने स्वामी प्रभु से जुड़ना चाहते हैं तो हमें ऐसे संत (गुरु) के मार्ग दर्शन की आवश्यकता है जो हमारे तन एवं मन को सब प्रकार के मिथ्या प्रलोभनों एवं कामनायों से निर्मल करे और साथ ही हम प्रभु से प्रार्थना करते रहें कि वह हमें अपने नाम के ध्यान में लीन रहने का आशीर्वाद दें ।

ਪੰਨਾ ੭੦੩

ਜੈਤਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ਛੰਤ ਘਰੁ ੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਸਲੋਕ ॥

ਦਰਸਨ ਪਿਆਸੀ ਦਿਨਸੁ ਰਾਤਿ ਚਿਤਵਉ ਅਨਦਿਨੁ ਨੀਤ ॥
ਖੋਲ੍ਹਿ ਕਪਟ ਗੁਰਿ ਮੇਲੀਆ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਸੰਗਿ ਮੀਤ ॥੧॥

ਛੰਤ ॥

ਸੁਣਿ ਯਾਰ ਹਮਾਰੇ ਸਜਣ ਇਕ ਕਰਉ ਬੇਨੰਤੀਆ ॥
ਤਿਸੁ ਮੋਹਨ ਲਾਲ ਪਿਆਰੇ ਹਉ ਫਿਰਉ ਖੋਜੰਤੀਆ ॥
ਤਿਸੁ ਦਸਿ ਪਿਆਰੇ ਸਿਰੁ ਧਰੀ ਉਤਾਰੇ ਇਕ ਭੋਰੀ ਦਰਸਨੁ ਦੀਜੈ ॥
ਨੈਨ ਹਮਾਰੇ ਪ੍ਰਿਅ ਰੰਗ ਰੰਗਾਰੇ ਇਕੁ ਤਿਲੁ ਭੀ ਨਾ ਧੀਰੀਜੈ ॥
ਪ੍ਰਭ ਸਿਉ ਮਨੁ ਲੀਨਾ ਜਿਉ ਜਲ ਮੀਨਾ ਚਾਤ੍ਰਿਕ ਜਿਵੈ ਤਿਸੰਤੀਆ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਪਾਇਆ ਸਗਲੀ ਤਿਖਾ ਬੁਝੰਤੀਆ ॥੧॥

ਯਾਰ ਵੇ ਪ੍ਰਿਅ ਹਭੇ ਸਖੀਆ ਮੂ ਕਹੀ ਨ ਜੇਹੀਆ ॥
ਯਾਰ ਵੇ ਹਿਕ ਡੂੰ ਹਿਕ ਚਾੜੈ ਹਉ ਕਿਸੁ ਚਿਤੇਹੀਆ ॥
ਹਿਕ ਦੂੰ ਹਿਕਿ ਚਾੜੇ ਅਨਿਕ ਪਿਆਰੇ ਨਿਤ ਕਰਦੇ ਭੋਗ ਬਿਲਾਸਾ ॥
ਤਿਨਾ ਦੇਖਿ ਮਨਿ ਚਾਉ ਉਠੰਦਾ ਹਉ ਕਦਿ ਪਾਈ ਗੁਣਤਾਸਾ ॥
ਜਿਨੀ ਮੈਡਾ ਲਾਲੁ ਰੀਝਾਇਆ ਹਉ ਤਿਸੁ ਆਗੈ ਮਨੁ ਡੇਂਹੀਆ ॥
ਨਾਨਕੁ ਕਹੈ ਸੁਣਿ ਬਿਨਉ ਸੁਹਾਗਣਿ ਮੂ ਦਸਿ ਡਿਖਾ ਪਿਰੁ ਕੇਹੀਆ ॥੨॥

ਯਾਰ ਵੇ ਪਿਰੁ ਆਪਣ ਭਾਣਾ ਕਿਛੁ ਨੀਸੀ ਛੰਦਾ ॥

ਪੰਨਾ ੭੦੪

ਯਾਰ ਵੇ ਤੈ ਰਾਵਿਆ ਲਾਲਨੁ ਮੂ ਦਸਿ ਦਸੰਦਾ ॥
ਲਾਲਨੁ ਤੈ ਪਾਇਆ ਆਪੁ ਗਵਾਇਆ ਜੈ ਧਨ ਭਾਗ ਮਥਾਣੇ ॥
ਬਾਂਹ ਪਕੜਿ ਠਾਕੁਰਿ ਹਉ ਘਿਧੀ ਗੁਣ ਅਵਗਣ ਨ ਪਛਾਣੇ ॥
ਗੁਣ ਹਾਰੁ ਤੈ ਪਾਇਆ ਰੰਗੁ ਲਾਲੁ ਬਣਾਇਆ ਤਿਸੁ ਹਭੋ ਕਿਛੁ ਸੁਹੰਦਾ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਧੰਨਿ ਸੁਹਾਗਣਿ ਸਾਈ ਜਿਸੁ ਸੰਗਿ ਭਤਾਰੁ ਵਸੰਦਾ ॥੩॥

ਯਾਰ ਵੇ ਨਿਤ ਸੁਖ ਸੁਖੇਦੀ ਸਾ ਮੈ ਪਾਈ ॥
ਵਰੁ ਲੋੜੀਦਾ ਆਇਆ ਵਜੀ ਵਾਧਾਈ ॥
ਮਹਾ ਮੰਗਲੁ ਰਹਸੁ ਥੀਆ ਪਿਰੁ ਦਇਆਲੁ ਸਦ ਨਵ ਰੰਗੀਆ ॥
ਵਡ ਭਾਗਿ ਪਾਇਆ ਗੁਰਿ ਮਿਲਾਇਆ ਸਾਧ ਕੈ ਸਤਸੰਗੀਆ ॥
ਆਸਾ ਮਨਸਾ ਸਗਲ ਪੂਰੀ ਪ੍ਰਿਅ ਅੰਕਿ ਅੰਕੁ ਮਿਲਾਈ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕੁ ਸੁਖ ਸੁਖੇਦੀ ਸਾ ਮੈ ਗੁਰ ਮਿਲਿ ਪਾਈ ॥੪॥੧॥

पृ-७०३

जैतसरी महला ५ छँत घर १

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सलोक ॥

दरसन पिआसी दिनसु राति चितवउ अनदिनु नीत ॥
खोलि् कपट गुरि मेलीआ नानक हरि सँगि मीत ॥१॥

छँत

सुणि यार हमारे सजण इक करउ बेनँतीआ ॥
तिसु मोहन लाल पिआरे हउ फिरउ खोजँतीआ ॥
तिसु दसि पिआरे सिरु धरी उतारे इक भोरी दरसनु दीजै ॥
नैन हमारे प्रिअ रँग रँगारे इकु तिलु भी ना धीरीजै ॥
प्रभ सिउ मनु लीना जिउ जल मीना चात्रिक जिवै तिसँतीआ ॥
जन नानक गुरु पूरा पाइआ सगली तिखा बुझँतीआ ॥१॥

यार वे प्रिअ हभे सखीआ मू कही न जेहीआ ॥
यार वे हिक डूँ हिक चाड़ै हउ किसु चितेहीआ ॥
हिक दूँ हिकि चाड़े अनिक पिआरे नित करदे भोग बिलासा ॥
तिना देखि मनि चाउ उठँदा हउ कदि पाई गुणतासा ॥
जिनी मैडा लालु रीझाइआ हउ तिसु आगै मनु डेंहीआ ॥
नानकु कहै सुणि बिनउ सुहागणि मू दसि डिखा पिरु केहीआ ॥२॥

यार वे पिरु आपण भाणा किछु नीसी छँदा ॥

पृ-७०४

यार वे तै राविआ लालनु मू दसि दसँदा ॥
लालनु तै पाइआ आपु गवाइआ जै धन भाग मथाणे ॥
बांह पकड़ि ठाकुरि हउ घिधी गुण अवगण न पछाणे ॥
गुण हारु तै पाइआ रँगु लालु बणाइआ तिसु हभो किछु सुहँदा ॥
जन नानक धँनि सुहागणि साई जिसु सँगि भतारु वसँदा ॥३॥

यार वे नित सुख सुखेदी सा मै पाई ॥
वरु लोड़ीदा आइआ वजी वाधाई ॥
महा मँगलु रहसु थीआ पिरु दइआलु सद नव रँगीआ ॥
वड भागि पाइआ गुरि मिलाइआ साध कै सतसँगीआ ॥
आसा मनसा सगल पूरी प्रिअ अँकि अँकु मिलाई ॥
बिनवँति नानकु सुख सुखेदी सा मै गुर मिलि पाई ॥४॥१॥

जैतसरी महला - ५ छँत घर – १

यह शब्द सम्भवतः गुरु जी की काव्य कल्पना का एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जहाँ वह स्वयं को एक भोली नवयौवना वधू के रूप में कल्पना करते हैं जो यह देखती है कि उसके अन्य मित्र (सँत) अपने प्रियतम (प्रभु) की सँगति का आनंद पा रहे हैं और वह सभी इसकी तुलना में कहीं अधिक सुंदर (आत्मिक रूप से अधिक ज्ञानी) हैं, अतः वह प्रभु की सँगति में आनंद एवं उल्लास का अनुभव कर रहे हैं । उन सभी को हर्षित देख कर इस वधू का हृदय भी मनोहर प्रभु को पाने के लिए लालायित हो उठा है ।

सलोक

किस प्रकार वह प्रभु की कामना करते रहे और कैसे गुरु ने उनका मिलन प्रभु से करवाया इस पर गुरु जी संक्षिप्त रूप से कहते हैं "(हे मेरे मित्रो, मैं अपने प्रिय) प्रभु के दर्शन के लिये इतनी प्यासी रही हूँ कि मैं नित्य ही दिन रात उसका राह देखती रही ।नानक कहते हैं, गुरु ने (मेरे मन के) द्वार खोल कर (सांसारिक बंधनों से मुक्त करके) मुझे मेरे मीत (प्रभु) से मिला दिया"।(१)

छँत

अब गुरु जी विस्तार से बताते हैं कि कैसे यह सब घटित हुया, कैसे वह अपने एक संत मित्र के पास गये और उससे कहा " हे मेरे प्रिय मित्र, मेरी बात सुनो, मैं तुमसे एक विनती करता हूँ कि मैं अपने प्रिय, मन को मोह लेने वाले रत्न सरीखे (प्रभु) को खोजता फिर रहा हूँ, (हे मेरे) प्रिय मित्र, मुझे बतायो कि वह कहाँ है, (मैं इतना लालायित हूँ कि) क्षण भर दर्शन पाने के लिए अपना सर कटवा कर उसके सम्मुख रख दूँगा । मेरे नेत्र अपने प्रिय के प्रेम में इतने रंगे हुये हैं कि उसे देखे बिना एक तिल (क्षण) भर का भी धैर्य उनके पास नहीं है । मेरा हृदय प्रभु में इस प्रकार लीन है जैसे कि जल में मछली, अथवा, जैसे चात्रिक स्वाति बूँद के लिये अतृप्त रहता है । भक्त नानक कहते हैं जब से उन्हें पूर्ण गुरु की प्राप्ति हुयी है, (प्रभु दर्शन के लिये) उनकी समस्त तृष्णा शांत अथवा बुझ गयी है "।(१)

अब गुरु जी प्रियतम (प्रभु) के प्रति अपना प्रेम तथा उसे पाने की अभिलाषा को हमारे साथ साझा करते हुए विनीत रूप में कहते हैं "हे मेरे मित्र, (मुझे विदित है कि अन्य संत जन जो प्रभु की संगति का आनंद पा रहे हैं) वह सभी (प्रभु की) प्रिय सखियाँ हैं जो मेरे समान (अवगुणी) नहीं हैं । हे मेरे मित्र, (मैं देखता हूँ कि) वह सभी एक से एक बढ़ चढ़ कर सुंदर (और गुणवान) हैं, ऐसे में मुझे कौन देखेगा ? हाँ, वह अनेकों (प्रभु को) प्रिय हैं क्योंकि वह एक से बढ़कर एक सुंदर हैं, तथा नित्य ही उसकी सँगति में (आत्मिक) भोग विलास का आनंद ले रही हैं ।उन्हें (प्रसन्न) देख कर मेरे मन में भी चाव उठता है (और यह भी विचार आता है कि प्रभु संगति का आनंद पाने के लिये) मैं भी कब ऐसे गुणों के भंडार को प्राप्त करूँगी।मैं अपने हृदय को उन (संत रूपी वधूयों) के सम्मुख समर्पित करती हूँ जिन्होंने मेरे प्रियतम (प्रभु) को रिझा लिया है । नानक कहते हैं, हे' (प्रभु की) सोहागिन, मेरी विनती सुनो और मुझे बताओ कि हमारे प्रियतम कैसे दिखाई देते हैं "।(२)

गुरु जी एक बार फिर अपने प्रिय (संत) मित्र से कहते हैं " हे मेरे मित्र, (मेरा विचार है कि प्रभु) हमारा प्रियतम, अपनी इच्छा से सब करता है, वह किसी पर आश्रित नहीं है । हे मेरे मित्र, तुम उस प्रियतम की संगति का आनंद ले चुके हो, मैं तुमसे पूछता हूँ, कृपया मुझे भी बताओ कि वह कहाँ है ? क्या तुमने हमारे उस प्रियतम को अपना आप (अहम को) गँवा कर प्राप्त किया है ? अथवा, ऐसा तो नहीं है कि (प्रभु) उसी वधू को मिलते हैं जिसके भाग्य में (लिखा) हो ?"

(सोहागिन उत्तर देती है) " हे मेरी प्रिय मित्र, मैं केवल यही जानती हूँ कि) ठाकुर ने स्वयं ही मुझे बाँह से थाम लिया और कंठ से लगा लिया, उसने मेरे गुणों और अवगुणों पर ध्यान नहीं दिया "। उस सोहागिन की सुंदरता को निहार कर गुरु जी प्रभु को सम्बोधित करते हैं "(हे प्रभु, आत्मा रूपी वधू), जिसे तुमने गुणों की माला से सजाया है, (अपने प्रेम के) गहन लाल रंग से रंगा है उस पर सब कुछ सुहाता है । भक्त नानक का कथन है कि वह सुहागिन धन्य है जिसके साथ उसका पति बसता है "।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में हमसे यह साझा करते हैं कि प्रभु के साथ मिलन की अभिलाषा पूर्ण होने पर वह कितने आनंद का अनुभव कर रहे हैं । वह कहते हैं " हे मेरे मित्र, मेरी ऐसी इच्छा जिसके लिये मैं नित्य ही मन्नत माँगता था, वह मैंने पा ली है । हाँ, मुझे जैसे वर की खोज थी (वही मुझे ब्याहने) आ गया और (मेरे हृदय रूपी घर में) बधाई बज रही है । मन में महान मंगलमयी स्थिति का आभास हो रहा है क्योंकि मेरा प्रियतम दयालु है तथा सदा ही नये रंग में रंगा रहता है । यह मेरा महान सौभाग्य है कि ऐसा (अद्भुत प्रियतम) मुझे मिला जिसे केवल गुरु ने ही साधु संतों की सँगति के द्वारा मुझसे मिलवाया । अब मेरी समस्त आशायें अथवा मन की इच्छायें परिपूर्ण हो गयी हैं और मेरे प्रियतम ने मुझे अपने अंक में भर लिया है । (संक्षेप में), भक्त नानक विनती करते हैं कि " जिस अभिलाषा के लिये मैं मन्नत माँगता था वह मैंने गुरु से मिल कर प्राप्त कर ली है "।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु से मिलन का आनंद पाना चाहते हैं तो हमें अपने गुणों और उपलब्धियों का घमंड कभी नहीं करना चाहिये, इसकी अपेक्षा, हमें प्रभु में लीन भक्त जनों के साथ प्रतिस्पर्धा करनी चाहिये । प्रभु से उसकी दयालुता के लिये सदा विनम्र प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें संतों की संगति और सच्चे गुरु का मार्ग दर्शन प्रदान करें, जो हमें इतना गुणी बना दें कि स्वयं प्रभु हमें अपनी बाँहों में लेकर अपने साथ जोड़ कर रखें ।

ਪੰਨਾ ੭੦੫

ਜੈਤਸਰੀ ਮਹਲਾ ੫ ਵਾਰ ਸਲੋਕਾ ਨਾਲਿ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਸਲੋਕ ॥

ਆਦਿ ਪੂਰਨ ਮਧਿ ਪੂਰਨ ਅੰਤਿ ਪੂਰਨ ਪਰਮੇਸੁਰਹ ॥
ਸਿਮਰੰਤਿ ਸੰਤ ਸਰਬਤ੍ਰ ਰਮਣੰ ਨਾਨਕ ਅਘਨਾਸਨ ਜਗਦੀਸੁਰਹ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੭੦੬

ਪੇਖਨ ਸੁਨਨ ਸੁਨਾਵਨੋ ਮਨ ਮਹਿ ਦ੍ਰਿੜੀਐ ਸਾਚੁ ॥
ਪੂਰਿ ਰਹਿਓ ਸਰਬਤ੍ਰ ਮੈ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਰੰਗਿ ਰਾਚੁ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਹਰਿ ਏਕੁ ਨਿਰੰਜਨੁ ਗਾਈਐ ਸਭ ਅੰਤਰਿ ਸੋਈ ॥
ਕਰਣ ਕਾਰਣ ਸਮਰਥ ਪ੍ਰਭੁ ਜੋ ਕਰੇ ਸੁ ਹੋਈ ॥
ਖਿਨ ਮਹਿ ਥਾਪਿ ਉਥਾਪਦਾ ਤਿਸੁ ਬਿਨੁ ਨਹੀ ਕੋਈ ॥
ਖੰਡ ਬ੍ਰਹਮੰਡ ਪਾਤਾਲ ਦੀਪ ਰਵਿਆ ਸਭ ਲੋਈ ॥
ਜਿਸੁ ਆਪਿ ਬੁਝਾਏ ਸੋ ਬੁਝਸੀ ਨਿਰਮਲ ਜਨੁ ਸੋਈ ॥੧॥

पृ-७०५

जैतसरी महला ५ वार सलोका नालि

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सलोक ॥

आदि पूरन मधि पूरन अँति पूरन परमेसुरह ॥
सिमरँति सँत सरबत्र रमणँ नानक अघनासन जगदीसुरह ॥१॥

पृ-७०६

पेखन सुनन सुनावनो मन महि दृिड़ीऐ साचु ॥
पूरि रहिओ सरबत्र मै नानक हरि रँगि राचु ॥२॥

पउड़ी ॥

हरि एकु निरँजनु गाईऐ सभ अँतरि सोई ॥
करण कारण समरथ प्रभु जो करे सु होई ॥
खिन महि थापि उथापदा तिसु बिनु नही कोई ॥
खँड ब्रहमँड पाताल दीप रविआ सभ लोई ॥
जिसु आपि बुझाए सो बुझसी निरमल जनु सोई ॥१॥

जैतसरी महला - ५ वार सलोका नाल
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

सिख मत में वर्तमान परम्परा के अनुसार श्री गुरु ग्रंथ साहिब के अखंड पाठ के समय उपरोक्त वार (काव्य) का प्रारंभ सम्पूर्ण पाठ की प्रक्रिया का मध्य बिंदु माना जाता है ।अतः जब पाठी (पाठ करने वाला) इस स्थान पर पहुँचता है तब दूसरा कोई तुरंत उठ कर धन्यवाद स्वरूप प्रार्थना (अरदास) करता है कि ईश्वर ने निर्विघ्न रूप से मध्य तक पाठ पूर्ण होने में सहायता की । ऐसा माना जाता है कि कुछ शिष्यों के इस आग्रह पर कि हिंदू मत में गरुड़ पुराण (जिसका पाठ हिंदू परिवारों में किसी की मृत्यु पर आयोजित किया जाता है) के विकल्प में किसी प्रकार की रचना अथवा उपदेश होना चाहिये, तब गुरु जी ने इस वार का उच्चारण किया जो तीन भाषायों में रची गयी । प्रथम श्लोक ' सहिसकृति ' भाषा में लिखा गया, जो एक प्रकार से ' पाली' और ' प्राकृत ' (पुरातन हिंदू एवं बौद्ध भाषाएँ) भाषाओं का मिश्रण है । दूसरा श्लोक दक्षिणी पंजाबी भाषा में है और पउड़ी पूर्वी तथा मध्य पंजाब की पंजाबी भाषा में है। वास्तविक रूप से, दूसरा श्लोक एक प्रकार से प्रथम श्लोक का अनुवाद है और पउड़ी में उसकी विस्तृत व्याख्या है । इस प्रकार, कोई भी श्रोता अथवा पाठक पाठ होते समय इस वार के संदेश को सरलता से समझ सकता है । उपरोक्त दिये गये कारणवश, कई सिख परिवारों में किसी मृत्यु के पश्चात परम्परागत रूप से दस दिनों तक इस वार का पाठ अथवा व्याख्या की जाती है । यहाँ लेखक इस ' वार ' की व्याख्या अपनी विचारबुद्धि के अनुसार निम्न प्रकार से दे रहे हैं ।

सलोक

आरंभ में गुरु जी प्रभु की सदैवी सर्वव्यापकता पर ध्यान दिलाते हैं और संतों द्वारा प्रभु को पूज्य माने जाने पर कहते हैं " (हे मेरे मित्रो), परमेश्वर पूर्ण रूप से सृष्टि के आदि काल अथवा उससे भी पूर्व के समय से उपस्थित हैं, वह (अब) मध्य में भी हैं और पूर्ण रूप से सृष्टि के अंत तथा उसके पश्चात भी उपस्थित रहेंगे । हे नानक, समस्त संत एवं भक्त जन उस सर्वव्यापी सृष्टि के स्वामी, सर्वपापविनाशी का स्मरण और ध्यान करते हैं "।(१)

अतः गुरु जी परामर्श देते हैं "(हे मेरे मित्रो), ऐसे अनंत सच्चे प्रभु का नाम मन में दृढ़ता के साथ बसाने के लिये हमें उस नाम को देखना, सुनना और सुनाना चाहिये । हे' नानक, ऐसे हरि के रंग में पूर्ण रूप से रचे रहो जो सर्वत्र में व्याप्त है "।(२)

पउड़ी

इस संदेश की विस्तार से व्याख्या करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे मित्रो), उस एक पवित्र हरि, जो सब के अँतरमन में व्याप्त हैं उसकी

महिमा का गायन करो । वह सब कुछ करने के लिये समर्थ हैं और कुछ भी करने तथा होने का कारण भी ; केवल वही होता है जो वह (स्वयं) करता है ।वह एक क्षण में सृजन करता है तथा (समस्त का) नाश करता है, उसके बिना और कोई नहीं है (जो यह सब करने के योग्य हो) । उसकी ज्योति का प्रकाश सभी खंडों, धरती, ब्रह्मांड, पाताल और द्वीपों में रम रहा है । किन्तु, (प्रभु) स्वयं ही जिसे समझने बूझने की शक्ति देते हैं वही (प्रभु के अद्भुत रहस्य को) बूझ पाता है और ऐसा मनुष्य निर्मल है ।(१)

इस पउड़ी के संदेश के अनुसार हमें यह विचारना चाहिए कि प्रभु सर्वव्यापी हैं ।वह आदिकाल से उपस्थित हैं, वर्तमान में भी हैं और भविष्य में सृष्टि के अंत के पश्चात भी रहेंगे । वह पापकर्मों का विनाश करते हैं । यदि हम निर्मल एवं सदाचारी बनना चाहते हैं तो हमें सदा उस ईश्वर के नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੭੦੭

ਸਲੋਕ ॥

ਬਸੰਤਿ ਸ੍ਵਰਗ ਲੋਕਹ ਜਿਤਤੇ ਪ੍ਰਿਥਵੀ ਨਵ ਖੰਡਣਹ ॥
ਬਿਸਰੰਤ ਹਰਿ ਗੋਪਾਲਹ ਨਾਨਕ ਤੇ ਪ੍ਰਾਣੀ ਉਦਿਆਨ ਭਰਮਣਹ ॥੧॥

ਕਉਤਕ ਕੋਡ ਤਮਾਸਿਆ ਚਿਤਿ ਨ ਆਵਸੁ ਨਾਉ ॥
ਨਾਨਕ ਕੋੜੀ ਨਰਕ ਬਰਾਬਰੇ ਉਜੜੁ ਸੋਈ ਥਾਉ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਮਹਾ ਭਇਆਨ ਉਦਿਆਨ ਨਗਰ ਕਰਿ ਮਾਨਿਆ ॥
ਝੂਠ ਸਮਗ੍ਰੀ ਪੇਖਿ ਸਚੁ ਕਰਿ ਜਾਨਿਆ ॥

ਪੰਨਾ ੭੦੮

ਕਾਮ ਕ੍ਰੋਧਿ ਅਹੰਕਾਰਿ ਫਿਰਹਿ ਦੇਵਾਨਿਆ ॥
ਸਿਰਿ ਲਗਾ ਜਮ ਡੰਡੁ ਤਾ ਪਛੁਤਾਨਿਆ ॥
ਬਿਨੁ ਪੂਰੇ ਗੁਰਦੇਵ ਫਿਰੈ ਸੈਤਾਨਿਆ ॥੯॥

पृ-७०७

सलोक ॥

बसँति सवरग लोकह जितते पृथवी नव खँडणह ॥
बिसरँत हरि गोपालह नानक ते प्राणी उदिआन भरमणह ॥१॥

कउतक कोड तमासिआ चिति न आवसु नाउ ॥
नानक कोड़ी नरक बराबरे उजड़ु सोई थाउ ॥२॥

पउड़ी ॥

महा भइआन उदिआन नगर करि मानिआ ॥
झूठ समग्री पेखि सचु करि जानिआ ॥

पृ-७०८

काम क्रोधि अहँकारि फिरहि देवानिआ ॥
सिरि लगा जम डँडु ता पछुतानिआ ॥
बिनु पूरे गुरदेव फिरै सैतानिआ ॥९॥

जैतसरी महला-५ वार सलोका नाल
१ओंकार सतिगुर प्रसादि
सलोक (९)

इस शब्द में गुरु जी यह व्यक्त करते हैं कि कैसे कोई भी स्थान अनेक सांसारिक सुख सुविधायों के होते हुये भी प्रभु के नाम के बिना नर्क के समान है ।

वह कहते हैं " (हे मेरे मित्रो, भले ही कुछ लोग) स्वर्ग के समान (सुंदर) देश में रहें, अथवा पृथ्वी के नव खंडों पर विजय पा लें, परन्तु, हे नानक, यदि वह विश्व के स्वामी हरि को बिसार देते हैं तो मानो वह प्राणी जंगलों में (लक्षहीन रूप से) भटक रहे हैं "।(१)

अब गुरु जी ऐसे स्थान पर टिप्पणी करते हैं जहाँ पर किसी के लिये समस्त सुख आनंद तो उपलब्ध हों, किन्तु, प्रभु नाम विहीन हो । वह कहते हैं "(हे मेरे मित्रो, यदि कोई ऐसे स्थान पर रहता हो जहाँ पर) अनेकों कौतुक, क्रीड़ा तथा तमाशे हों, परन्तु, हे नानक, यदि हृदय में ईश्वर का नाम नहीं है तो वह करोड़ नर्कों के समान है और वह स्थान उजड़ जाता है "।(२)

पउड़ी

गुरु जी अब संसार की सामान्य दशा पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (हे मेरे मित्रो, यह संसार) एक भयानक घने जंगल की भाँति है, परन्तु, (कई मूर्ख लोग) इसे एक (सुंदर सुखदायी) नगर के समान मानते हैं । वह मिथ्या नश्वर सामग्री को देख कर उसे सत्य एवं सदैवी समझते हैं । काम, क्रोध और अहम के नशे में उन्मत्त होकर पागलों की भाँति घूमते हैं । परन्तु, जब उनके सर पर यमराज का डंडा लगता है तब वह पश्चाताप करते हैं । (संक्षेप में), पूर्ण गुरु के (मार्ग दर्शन) के बिना ऐसा मनुष्य शैतान की भाँति घूमता रहता है "।(९)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि यदि हम विशाल महलों में बस रहे हों और सब प्रकार के सुख विलास का आनंद ले रहे हों परन्तु फिर भी यदि हम ईश्वर का ध्यान नहीं कर रहे हैं तो ऐसे सब स्थान नर्क के समान हैं और अंत में हम पश्चाताप करेंगे । अतः ऐसी निराशाजनक स्थिति से बचने के लिये हमें गुरु के निर्देशों के अनुसार अपना आचरण शुद्ध रखना चाहिये और प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੭੦੯	पृ-७०९
ਸਲੋਕ ॥	**सलोक**
ਦਇਆ ਕਰਣੰ ਦੁਖ ਹਰਣੰ ਉਚਰਣੰ ਨਾਮ ਕੀਰਤਨਹ ॥ ਦਇਆਲਪੁਰਖ ਭਗਵਾਨਹ ਨਾਨਕ ਲਿਪਤ ਨ ਮਾਇਆ ॥੧॥	दइआ करणँ दुख हरणँ उचरणँ नाम कीरतनह ॥ दइआलपुरख भगवानह नानक लिपत न माइआ ॥१॥
ਪੰਨਾ ੭੧੦	**पृ-७१०**
ਭਾਹਿ ਬਲੰਦੜੀ ਬੁਝਿ ਗਈ ਰਖੰਦੜੋ ਪ੍ਰਭੁ ਆਪਿ ॥ ਜਿਨਿ ਉਪਾਈ ਮੇਦਨੀ ਨਾਨਕ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਜਾਪਿ ॥੨॥	भाहि बलँदड़ी बुझि गई रखँदड़ो प्रभु आपि ॥ जिनि उपाई मेदनी नानक सो प्रभु जापि ॥२॥
ਪਉੜੀ ॥	**पउड़ी ॥**
ਜਾ ਪ੍ਰਭ ਭਏ ਦਇਆਲ ਨ ਬਿਆਪੈ ਮਾਇਆ ॥ ਕੋਟਿ ਅਘਾ ਗਏ ਨਾਸ ਹਰਿ ਇਕੁ ਧਿਆਇਆ ॥ ਨਿਰਮਲ ਭਏ ਸਰੀਰ ਜਨ ਧੂਰੀ ਨਾਇਆ ॥ ਮਨ ਤਨ ਭਏ ਸੰਤੋਖ ਪੂਰਨ ਪ੍ਰਭੁ ਪਾਇਆ ॥ ਤਰੇ ਕੁਟੰਬ ਸੰਗਿ ਲੋਗ ਕੁਲ ਸਬਾਇਆ ॥੧੮॥	जा प्रभ भए दइआल न बिआपै माइआ ॥ कोटि अघा गए नास हरि इकु धिआइआ ॥ निरमल भए सरीर जन धूरी नाइआ ॥ मन तन भए सँतोख पूरन प्रभु पाइआ ॥ तरे कुटँब सँगि लोग कुल सबाइआ ॥१८॥

जैतसरी महला - ५ वार सलोकां नाल
१ओंकार सतिगुर प्रसादि
सलोक (१८)

इस श्लोक में गुरु जी हमें यह कहते हैं कि किस प्रकार के आशीर्वाद किसी को प्राप्त हो सकते हैं जब वह गुरु की शिक्षा को ग्रहण कर प्रभु की महिमा का गान करता है ।

वह कहते हैं "हे नानक, दयालु ईश्वर अपनी दयालुता से (उस मनुष्य के) दुखों का हरण करता है, जो उसके नाम का उच्चारण एवं कीर्तन करता है । उस ईश्वर की दयालुता से, हे नानक, वह (सांसारिक) मायामोह में लिप्त नहीं होता "।(१)

इसलिये गुरु जी स्वयं को और परोक्ष में हमें भी सम्बोधित करते हुये कहते हैं "हे नानक, उस प्रभु का जाप करो जिसने इस धरती (सृष्टि) का सृजन किया है । (क्योंकि, जिन्होंने प्रभु नाम का ध्यान किया है उनके मन में तीव्र वेदना की) ज्वाला शांत हो गयी है और प्रभु ने स्वयं उनकी रक्षा की है "।(२)

पउड़ी

गुरु जी अब हमें बताते हैं कि प्रभु नाम का ध्यान करने वाले भक्तजनों पर वह प्रभु किस प्रकार से आशीर्वादों की बौछार करते हैं । उनका कथन है " (हे मेरे मित्रो), जब प्रभु दयालु होते हैं तब मनुष्य के मन में मायामोह नहीं व्याप्त होता ।(जिन्होंने) एक प्रभु के नाम का ध्यान किया, उनके करोड़ों पापों का नाश हो गया । जब कोई भक्त जन गुरु की चरणधूलि में नहा लेता है (अर्थात, गुरु की सेवा में लीन रहता है) तब उसका शरीर निर्मल हो जाता है । उसका तन और मन पूर्ण प्रभु को पाकर सुख शांति तथा संतोष का अनुभव करता है । (प्रभु के ध्यान में रहने वाले इस मनुष्य के) कुटँब, सँगी साथी तथा समस्त कुल का उद्धार हो जाता है "।(१८)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने समस्त दुख दर्द अथवा शोक संताप से मुक्त होना चाहते हैं तथा सांसारिक मोहमाया के प्रभावों से बचना चाहते हैं तो हमें प्रभु की भक्ति और भजन में ध्यान लगाना चाहिये, जिससे कि प्रभु हम पर कृपा कर शांति, संतोष का वरदान दें और हमारी रक्षा करें ।

ਪੰਨਾ ੭੧੧

ਟੋਡੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਹਰਿ ਬਿਸਰਤ ਸਦਾ ਖੁਆਰੀ ॥
ਤਾ ਕਉ ਧੋਖਾ ਕਹਾ ਬਿਆਪੈ ਜਾ ਕਉ ਓਟ ਤੁਹਾਰੀ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੭੧੨

ਬਿਨੁ ਸਿਮਰਨ ਜੋ ਜੀਵਨੁ ਬਲਨਾ ਸਰਪ ਜੈਸੇ ਅਰਜਾਰੀ ॥
ਨਵ ਖੰਡਨ ਕੋ ਰਾਜੁ ਕਮਾਵੈ ਅੰਤਿ ਚਲੈਗੋ ਹਾਰੀ॥੧॥

ਗੁਣ ਨਿਧਾਨ ਗੁਣ ਤਿਨ ਹੀ ਗਾਏ ਜਾ ਕਉ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰੀ ॥
ਸੋ ਸੁਖੀਆ ਧੰਨੁ ਉਸੁ ਜਨਮਾ ਨਾਨਕ ਤਿਸੁ ਬਲਿਹਾਰੀ ॥੨॥੨॥

पृ-७११

टोडी महला ५॥

हरि बिसरत सदा खुआरी ॥
ता कउ धोखा कहा बिआपै जा कउ ओटतुहारी ॥रहाउ॥

प ७१२

बिनु सिमरन जो जीवनु बलना सरप जैसे अरजारी ॥
नव खँडन को राजु कमावै अँति चलैगो हारी ॥१॥

गुण निधान गुण तिन ही गाए जा कउ किरपा धारी ॥
सो सुखीआ धँनु उसु जनमा नानक तिसु बलिहारी ॥२॥२॥

टोडी महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमें यह बताते हैं कि प्रभु को स्मरण न करने के क्या निष्कर्ष होते हैं और यदि उसके नाम का ध्यान नहीं करते हैं तो हम किस प्रकार का जीवन जीते हैं ।

प्रभु तथा हमें सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं “(हे मेरे मित्रो), हरि को बिसारने से सदा ही पीड़ा एवं कष्ट होते हैं, परन्तु, हे हरि, उन मनुष्यों को कहाँ से धोखा (दुख अथवा क्लेश) व्याप्त हो सकता है, जिनको तुम्हारा आश्रय प्राप्त है ”।(विराम)

आगे गुरु जी कुछ सुंदर उदाहरण देकर हमें दर्शाते हैं कि प्रभु नाम का ध्यान न करने वाले मनुष्य का जीवन कितना अभागा होता है । वह कहते हैं “ (हे मेरे मित्रो), प्रभु का ध्यान न करने वाले का जीवन दीर्घायु सर्प के जीवन जैसा है (जो दीर्घायु तो होता है, पर साथ में दूसरों के लिये विष भी उगलता रहता है और देखते ही डसने के लिये तत्पर रहता है) । यद्दिप, कोई पृथ्वी के नौ खंडों पर राज्य भी करता रहे, फिर भी (प्रभु को स्मरण किये बिना इस संसार से) वह अंत समय पर एक पराजित की भाँति ही चला जायेगा ”।(१)

शब्द के अंत में गुरु जी एक और आवश्यक विषय पर विचारते हैं कि प्रभु नाम के ध्यान और उसकी महिमा में गायन कीर्तन का सुअवसर सरलता से नहीं प्राप्त होता । वह कहते हैं “(हे मेरे मित्रो), केवल वही मनुष्य गुणों के भंडार प्रभु के गुण गा सका है, जिस पर प्रभु ने स्वयं अपनी कृपा धारण की । उसका जन्म धन्य है, उसका जीवन शांतिमय है और नानक उस (सौभाग्यशाली मनुष्य) पर बलिहारी हैं ”।(२-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम चाहे कितनी भी दीर्घायु, धनधान्य और शक्ति सामर्थ्य का आनंद ले रहे हों उनका कोई महत्व नहीं है, क्योंकि, यदि प्रभु नाम का ध्यान नहीं करते तो अँत में हमें दुख संताप झेलने पड़ेंगे । अतः, हमें प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिये कि वह अपनी कृपा कर ऐसा वरदान दे कि हम सदैव उसके नाम का ध्यान और उसकी महिमा का गान करते रहें ।

ਪੰਨਾ ੭੧੩

ਟੋਡੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਰਸਨਾ ਗੁਣ ਗੋਪਾਲ ਨਿਧਿ ਗਾਇਣ ॥
ਸਾਂਤਿ ਸਹਜੁ ਰਹਸੁ ਮਨਿ ਉਪਜਿਓ ਸਗਲੇ ਦੂਖ ਪਲਾਇਣ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੭੧੪

ਜੋ ਮਾਗਹਿ ਸੋਈ ਸੋਈ ਪਾਵਹਿ ਸੇਵਿ ਹਰਿ ਕੇ ਚਰਣ ਰਸਾਇਣ ॥
ਜਨਮ ਮਰਣ ਦੁਹਹੂ ਤੇ ਛੂਟਹਿ ਭਵਜਲੁ ਜਗਤੁ ਤਰਾਇਣ ॥੧॥

ਖੋਜਤ ਖੋਜਤ ਤਤੁ ਬੀਚਾਰਿਓ ਦਾਸ ਗੋਵਿੰਦ ਪਰਾਇਣ ॥
ਅਬਿਨਾਸੀ ਖੇਮ ਚਾਹਹਿ ਜੇ ਨਾਨਕ ਸਦਾ ਸਿਮਰਿ ਨਾਰਾਇਣ
॥੨॥੫॥੧੦॥

पृ ७१३

टोडी महला ५॥

रसना गुण गोपाल निधि गाइण ॥
सांति सहजु रहसु मनि उपजिओ सगले दूख पलाइण ॥१॥रहाउ॥

पृ ७१४

जो मागहि सोई सोई पावहि सेवि हरि के चरण रसाइण ॥
जनम मरण दुहहू ते छूटहि भवजलु जगतु तराइण ॥१॥

खोजत खोजत ततु बीचारिओ दास गोविँद पराइण ॥
अबिनासी खेम चाहहि जे नानक सदा सिमरि नाराइण
॥२॥५॥१०॥

टोडी महला - ५

इस शब्द में गुरु जी अपने अनुभव के आधार पर भक्तजनों के द्वारा प्राप्त उन आशीर्वादों की गणना करते हैं जिनका आनंद उन्होंने प्रभु की महिमागान के द्वारा पाया ।

वह कहते हैं “ (हे मेरे मित्रो), जिन्होंने, सृष्टि के पालक, गुणनिधान प्रभु के गुणों का गान अपनी जिह्वा से किया, उनके मन में शांति, सहजता और आनंद का उत्थान हो जाता है और उनके समस्त दुख संकटों का पलायन हो जाता है ”।(१-विराम)

प्रभु नाम के ध्यान से अन्य उपलब्धियों को गिनाते हुये गुरु जी कहते हैं “(हे’ मेरे मित्रो), हरि के चरण कमल की सेवा (प्रभु नाम रूपी अँमृत रस का पान) करने के फलस्वरुप, भक्तजन जो भी माँगते हैं वही सब कुछ पा लेते हैं । (वह भविष्य में) जन्म और मरण दोनों से छूट कर संसार के भवसागर को तैर कर पार हो जाते हैं ”।(१)

गुरु जी शब्द के अंत में अपना निष्कर्ष देते हुये कहते हैं “ (हे मेरे मित्रो), बारम्बार खोजने और विचारने से मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि प्रभु के दास सदा सृष्टि के स्वामी की सहायता पर आश्रित रहते है । अतः, नानक कहते हैं (हे मानव), यदि तुम अविनाशी (प्रभु) से क्षमा तथा अनंत आनंद पाना चाहते हो तो सदा सर्वव्यापी नारायण को स्मरण करो ”।(२-५-१०)

इस शब्द का संदेश यह है कि प्रभु का गुणगान करना लाभप्रद है क्योंकि यह हमारे समस्त दुख रोग दूर करता है, अनंत सुखदायी है और जन्म मरण के कष्टों से हमारी रक्षा करता है ।

ਪੰਨਾ ੭੧੬

ਟੋਡੀ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੫ ਦੁਪਦੇ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਐਸੋ ਗੁਨੁ ਮੇਰੋ ਪ੍ਰਭ ਜੀ ਕੀਨ ॥
ਪੰਚ ਦੋਖ ਅਰੁ ਅਹੰ ਰੋਗ ਇਹ ਤਨ ਤੇ ਸਗਲ ਦੂਰਿ ਕੀਨ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਬੰਧਨ ਤੋਰਿ ਛੋਰਿ ਬਿਖਿਆ ਤੇ ਗੁਰ ਕੋ ਸਬਦੁ ਮੇਰੈ ਹੀਅਰੈ ਦੀਨ ॥
ਰੂਪੁ ਅਨਰੂਪੁ ਮੋਰੋ ਕਛੁ ਨ ਬੀਚਾਰਿਓ ਪ੍ਰੇਮ ਗਹਿਓ ਮੋਹਿ ਹਰਿ ਰੰਗ ਭੀਨ ॥੧॥

ਪੇਖਿਓ ਲਾਲਨੁ ਪਾਟ ਬੀਚ ਖੋਏ ਅਨਦ ਚਿਤਾ ਹਰਖੇ ਪਤੀਨ ॥
ਤਿਸ ਹੀ ਕੋ ਗ੍ਰਿਹੁ ਸੋਈ ਪ੍ਰਭੁ ਨਾਨਕ ਸੋ ਠਾਕੁਰੁ ਤਿਸ ਹੀ ਕੋ ਧੀਨ ॥੨॥੧॥੨੦॥

पृ ७१६

टोडी महला ५ घर ५ दुपदे

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

ऐसो गुनु मेरो प्रभ जी कीन ॥
पँच दोख अरु अँह रोग इह तन ते सगल दूरि कीन ॥रहाउ॥

बँधन तोरि छोरि बिखिआ ते गुर को सबदु मेरै हीअरै दीन ॥
रूपु अनरूपु मोरो कछु न बीचारिओ प्रेम गहिओ मोहि हरि रँग भीन ॥१॥

पेखिओ लालनु पाट बीच खोए अनद चिता हरखे पतीन ॥
तिस ही को गृहु सोई प्रभु नानक सो ठाकुरु तिस ही को धीन ॥२॥१॥२०॥

टोडी महला ५ घर ५ दुपदे

इस शब्द में गुरु जी हमें कहते हैं कि जब उन्होंने प्रभु की महिमा का गान किया तथा अपने मन को प्रेम और श्रद्धा के साथ उसमें लीन कर दिया, तब उन्हें किस प्रकार के आशीर्वाद उस प्रभु से प्राप्त हुये ।

गुरु जी कहते हैं " (हे मेरे मित्रो), मेरे परोपकारी प्रभु ने मुझे ऐसे गुण का वरदान दिया है कि उसके द्वारा मेरे तन (व मन) में से सभी पाँचों दोष और अहम के रोग पूर्ण रूप से दूर हो गये हैं "।(विराम)

किस विधि से प्रभु ने आशीर्वाद दिया, इसका वर्णन गुरु जी करते हैं । वह कहते हैं "(हे मेरे मित्रो, सांसारिक मायामोह एवं सत्ता के) विषैले बँधनों को तोड़ कर मुझे मुक्त कर दिया और मेरे हृदय में गुरु के शब्द (वाणी) को बसा दिया । उसने मेरा रूप अथवा कुरूप कुछ नहीं विचारा, बस मुझे प्रेम से पकड़ कर अपने रंग में भिगो दिया "।(१)

प्रभु को निकट देखकर अपनी मन:स्थिति का वर्णन करते हुये गुरु जी शब्द के अंत में कहते हैं (हे मेरे मित्रो, जब से) प्रभु एवं मेरे बीच में से पाट हट गये हैं और मैंने सुंदर (प्रभु) को देख लिया है मेरा मन हर्ष से प्रफुल्लित है । अब (मुझे) नानक को ऐसा प्रतीत होता है कि यह शरीर प्रभु का गृह है, वह ठाकुर अथवा स्वामी है और मैं उसके अधीन (दास) हूँ "। (२-१-२०)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सांसारिक उलझनों से छूटना चाहते हैं और परम आनंद की स्थिति को पाकर हर्षित रहना चाहते हैं तो हमें गुरु के निर्देशों को मन में बसा कर प्रेम और श्रद्धा से प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये । किसी एक दिन, कृपालु प्रभु हमें प्रेम से अपने कंठ लगायेंगे और ऐसे सदाचार का वरदान देंगे जिससे हमारे सभी दोष नष्ट हो जायेंगे और हम परम शांति एवं आनंद में रहेंगे ।

ਪੰਨਾ ੭੧੭

ਟੋਡੀ ਮਃ ੫ ॥

ਮਾਈ ਮੇਰੇ ਮਨ ਕੋ ਸੁਖੁ ॥
ਕੋਟਿ ਅਨੰਦ ਰਾਜ ਸੁਖੁ ਭੁਗਵੈ ਹਰਿ ਸਿਮਰਤ ਬਿਨਸੈ ਸਭ ਦੁਖੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕੋਟਿ ਜਨਮ ਕੇ ਕਿਲਬਿਖ ਨਾਸਹਿ ਸਿਮਰਤ ਪਾਵਨ ਤਨ ਮਨ ਸੁਖ ॥
ਦੇਖਿ ਸਰੂਪੁ ਪੂਰਨੁ ਭਈ ਆਸਾ ਦਰਸਨੁ ਭੇਟਤ ਉਤਰੀ ਭੁਖ ॥੧॥

ਚਾਰਿ ਪਦਾਰਥ ਅਸਟ ਮਹਾ ਸਿਧਿ ਕਾਮਧੇਨੁ ਪਾਰਜਾਤ ਹਰਿ ਹਰਿ ਰੁਖੁ ॥
ਨਾਨਕ ਸਰਨਿ ਗਹੀ ਸੁਖ ਸਾਗਰ ਜਨਮ ਮਰਨ ਫਿਰਿ ਗਰਭ ਨ ਧੁਖੁ ॥੨॥੧੦॥੨੯॥

प ७१७

टोडी महला ५॥

माई मेरे मन को सुखु ॥
कोटि अनँद राज सुखु भुगवै हरि सिमरत बिनसै सभ दुखु ॥१॥ रहाउ ॥

कोटि जनम के किलबिख नासहि सिमरत पावन तन मन सुख ॥
देखि सरूपु पूरनु भई आसा दरसनु भेटत उतरी भुख ॥१॥

चारि पदारथ असट महा सिधि कामधेनु पारजात हरि हरि रुखु ॥
नानक सरनि गही सुख सागर जनम मरन फिरि गरभ न धुखु ॥२॥१०॥२९॥

टोडी महला - ५

इससे पूर्व के शब्द में गुरु जी ने हमें बताया कि यदि हम शांति एवं आनंद चाहते हैं तथा जन्म मरण के दुख तथा अन्य कष्टों को बारम्बार भोगने से बचना चाहते हैं, तो हमें संत (गुरु) के मार्ग दर्शन के द्वारा प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये । इस शब्द में वह प्रभु नाम का ध्यान करने से मिले वरदानों का वर्णन करते हैं ।

विनम्र भावना से वह हमें कहते हैं "हे माता, प्रभु नाम के ध्यान से मेरे मन को (ऐसा) सुख प्राप्त हुया है जैसे कि मैं करोड़ों साम्राज्यों का सुख भोग रहा होऊँ, (मेरा विचार है कि) हरि नाम के स्मरण करने से समस्त दुखों का विनाश होता है ।(१- विराम)

प्रभु नाम का ध्यान करने की महिमा को अधिक विस्तृत करते हुये वह कहते हैं " (हे माता), प्रभु नाम का स्मरण और ध्यान करने से करोड़ों जन्मों के कष्ट और पाप नाश होते हैं तथा तन और मन दोनों पवित्र होकर सुख एवं शांति प्राप्त कर लेते हैं । (प्रभु के) सुंदर रूप को देख कर मेरी समस्त आशायें अथवा इच्छायें पूर्ण हो गयी हैं तथा उसके दर्शन (झलक) पाकर मेरी भूख (सांसारिक वस्तुओं के लिये) चली गयी है "।(१)

शब्द के अँत में गुरु जी एक और आवश्यक गोपनीय भेद हमसे साझा करते हुये कहते हैं " (हे माता, मैंने वास्तव में यह जाना है कि) प्रभु स्वयं ही जीवन के चारों पदार्थ (स्वास्थ्य, धन सम्पदा, विश्वास और सुंदरता) हैं, वही अष्ट महा सिद्धि तथा कामधेनु हैं और वही हरि, पारिजात वृक्ष (इन्द्रदेव के उद्यान में लगा इच्छापूर्ति वृक्ष) भी हैं । अतः, नानक ने उसी सुखों के सागर (प्रभु) की शरण ले ली है, जिसके कारण उन्हें जन्म मरण और गर्भ की अग्नि के कष्ट फिर नहीं होंगे "।(२-१०-२९)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने अनेकों जन्मों के पापकर्मों और जन्म मरण के कष्टों का निवारण चाहते हैं और लाखों साम्राज्यों के समान आनंद, हर्ष और सुख शान्ति भोगना चाहते हैं तो हमें गुरु के निर्देशों के अनुसार प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੭੧੯

ਬੈਰਾੜੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਹਰਿ ਜਨੁ ਰਾਮ ਨਾਮ ਗੁਨ ਗਾਵੈ ॥
ਜੇ ਕੋਈ ਨਿੰਦ ਕਰੇ ਹਰਿ ਜਨ ਕੀ ਅਪੁਨਾ ਗੁਨੁ ਨ ਗਵਾਵੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜੋ ਕਿਛੁ ਕਰੇ ਸੁ ਆਪੇ ਸੁਆਮੀ ਹਰਿ ਆਪੇ ਕਾਰ ਕਮਾਵੈ ॥
ਹਰਿ ਆਪੇ ਹੀ ਮਤਿ ਦੇਵੈ ਸੁਆਮੀ ਹਰਿ ਆਪੇ ਬੋਲਿ ਬੁਲਾਵੈ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੭੨੦

ਹਰਿ ਆਪੇ ਪੰਚ ਤਤੁ ਬਿਸਥਾਰਾ ਵਿਚਿ ਧਾਤੂ ਪੰਚ ਆਪਿ ਪਾਵੈ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮੇਲੇ ਆਪੇ ਹਰਿ ਆਪੇ ਝਗਰੁ ਚੁਕਾਵੈ ॥੨॥੩॥

पृ-७१९

बैराड़ी महला ४॥

हरि जनु राम नाम गुन गावै ॥
जे कोई निंद करे हरि जन की अपुना गुनु न गवावै ॥१॥रहाउ ॥

जो किछु करे सु आपे सुआमी हरि आपे कार कमावै ॥
हरि आपे ही मति देवै सुआमीहरि आपे बोलि बुलावै ॥१॥

पृ-७२०

हरि आपे पँच ततु बिसथारा विचि धातू पँच आपि पावै ॥
जन नानक सतिगुरु मेले आपे हरि आपे झगरु चुकावै ॥२॥३॥

बैराड़ी महला - ४

इस शब्द में गुरु जी हमें प्रभु के सच्चे भक्तों के गुणों का परिचय देते हैं कि वह कैसे प्रत्येक अवस्था में उसका गुणगान करते रहते हैं ।

गुरु जी कहते हैं "(हे मेरे मित्रो), हरि का भक्त सदा राम नाम का गुण गाता है । यदि कोई उस हरि के जन की निंदा भी करता है (वह उसकी चिंता किये बिना) अपने गुण (प्रभु का महिमागान) को गँवाता नहीं" । (१-विराम)

क्यों एक भक्त अपनी निंदा अथवा आलोचना को मन पर ना लगाते हुये प्रभु के गुणगान में व्यस्त रहता है, इस तथ्य को गुरु जी स्पष्ट करते हुये कहते हैं "(हे मेरे मित्रो, भक्त जन अपनी आलोचना सुनते हुये भी अपना स्वभाव नहीं त्यागता है, क्योंकि, वह जानता है कि) जो भी स्वामी (प्रभु) कर रहे हैं, वह स्वयं कर रहे हैं और वही हरि सब कार्य कर रहे हैं । वह हरि स्वयं ही किसी को ऐसी मति (बुद्धि) प्रदान करते हैं और स्वयं ही उससे ऐसे शब्दों एवं भाषा का उच्चारण करवाते हैं, (दूसरे शब्दों में, सम्भवतः, प्रभु ही भक्त का अपने में विश्वास परखने के लिये निंदक को भक्त की निंदा करने के लिये उकसाते हैं) "।(१)

गुरु जी शब्द के अंत में प्रभु तथा इस संसार की वास्तविक मूल धारणायों पर ध्यान दिलाते हुये कहते हैं "(हे मेरे मित्रो), हरि ने स्वयं ही पाँच तत्वों (वायु, अग्नि, जल, धरती व आकाश से इस सृष्टि) का विस्तार किया है और उसी ने उसमें पाँच धातुयों (प्रवृत्तियाँ ; दृष्टि, वाणी, स्वाद, स्पर्श तथा कामुकता) को रचाया है । भक्त नानक कहते हैं कि हरि स्वयं सच्चे गुरु को अपने भक्त से मिलाते हैं और स्वयं ही सब प्रकार की दुविधा का निवारण करते हैं "।(२-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें प्रभु की महिमा का गुणगान करते रहना चाहिये । हमारा विश्वास प्रभु पर इतना दृढ़ होना चाहिये कि यदि कोई हमारी हँसी उड़ाये अथवा निंदा करने का प्रयास करे तब भी हमें अपने अच्छे स्वभाव का त्याग ना करते हुए उसका सम्मान करना चाहिए ।हमें यह मान लेना चाहिये कि निंदक जो भी कर रहे हैं वह उनके वश में नहीं है, क्योंकि यह प्रभु की अपनी योजना है और वह स्वयं ही हमारे कष्ट भी दूर करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੭੨੧

ਤਿਲੰਗ ਮਹਲਾ ੧ ਘਰੁ ੩

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਇਹੁ ਤਨੁ ਮਾਇਆ ਪਾਹਿਆ ਪਿਆਰੇ ਲੀਤੜਾ ਲਬਿ ਰੰਗਾਏ ॥

ਪੰਨਾ ੭੨੨

ਮੇਰੈ ਕੰਤ ਨ ਭਾਵੈ ਚੋਲੜਾ ਪਿਆਰੇ ਕਿਉ ਧਨ ਸੇਜੈ ਜਾਏ ॥੧॥

ਹੰਉ ਕੁਰਬਾਨੈ ਜਾਉ ਮਿਹਰਵਾਨਾ ਹੰਉ ਕੁਰਬਾਨੈ ਜਾਉ ॥
ਹੰਉ ਕੁਰਬਾਨੈ ਜਾਉ ਤਿਨਾ ਕੈ ਲੈਨਿ ਜੋ ਤੇਰਾ ਨਾਉ ॥
ਲੈਨਿ ਜੋ ਤੇਰਾ ਨਾਉ ਤਿਨਾ ਕੈ ਹੰਉ ਸਦ ਕੁਰਬਾਨੈ ਜਾਉ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕਾਇਆ ਰੰਙਣਿ ਜੇ ਥੀਐ ਪਿਆਰੇ ਪਾਈਐ ਨਾਉ ਮਜੀਠ ॥
ਰੰਙਣ ਵਾਲਾ ਜੇ ਰੰਙੈ ਸਾਹਿਬੁ ਐਸਾ ਰੰਗੁ ਨ ਡੀਠ ॥੨॥

ਜਿਨ ਕੇ ਚੋਲੇ ਰਤੜੇ ਪਿਆਰੇ ਕੰਤੁ ਤਿਨਾ ਕੈ ਪਾਸਿ ॥
ਧੂੜਿ ਤਿਨਾ ਕੀ ਜੇ ਮਿਲੈ ਜੀ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਕੀ ਅਰਦਾਸਿ ॥੩॥

ਆਪੇ ਸਾਜੇ ਆਪੇ ਰੰਗੇ ਆਪੇ ਨਦਰਿ ਕਰੇਇ ॥
ਨਾਨਕ ਕਾਮਣਿ ਕੰਤੈ ਭਾਵੈ ਆਪੇ ਹੀ ਰਾਵੇਇ ॥੪॥੧॥੩॥

प ७२१

तिलँग महला १ घर ३

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

इहु तनु माइआ पाहिआ पिआरे लीतड़ा लबि रँगाए ॥

पृ-७२२

मेरै कँत न भावै चोलड़ा पिआरे किउ धन सेजै जाए ॥१॥

हँउ कुरबानै जाउ मिहरवाना हँउ कुरबानै जाउ ॥
हँउ कुरबानै जाउ तिना कै लैनि जो तेरा नाउ ॥
लैनि जो तेरा नाउ तिना कै हँउ सद कुरबानै जाउ ॥१॥रहाउ॥

काइआ रँगणि जे थीऐ पिआरे पाइऐ नाउ मजीठ ॥
रँगण वाला जे रँगे साहिबु ऐसा रँगु न डीठ ॥२॥

जिन के चोले रतड़े पिआरे कँतु तिना कै पासि ॥
धूड़ि तिना की जे मिलै जी कहु नानक की अरदासि ॥३॥

आपे साजे आपे रँगे आपे नदरि करेइ ॥
नानक कामणि कँतै भावै आपे ही रावेइ ॥४॥१॥३॥

तिलंग महला-१ घर-३

गुरु जी के उत्कृष्ट काव्य की सुंदरता यह है कि वह प्रतिदिन के सामान्य जीवन में से अद्भुत उदाहरणों को उद्धृत करते हैं जो हमें प्रभु के निकट जाने अथवा उसके प्रति प्रेम भाव रखने तथा मिलन की इच्छा को जगाते हैं। इस शब्द में वह मानव आत्मा की तुलना एक ऐसी स्त्री से करते हैं जो अपने वस्त्रों को अति सुंदर रंगों में रंग कर पहनती है, परन्तु, फिर भी उसका पति उससे प्रसन्न नहीं होता, क्योंकि, वह जानता है कि उसकी पत्नी उसके साथ सच्चा प्रेम करने की अपेक्षा उसकी धन सम्पदा के लिए अधिक लालायित है। इस उदाहरण के द्वारा गुरु जी का आशय यह है कि यदि हम प्रभु को साधुओं वाले परिवेश एवं खोखले कर्मकांडों से रिझाना चाहते हैं और उसके साथ सच्चा प्रेम नहीं करते तो खेद के साथ कहना पड़ेगा कि हम राह भटक गए हैं।

सर्वप्रथम वह हमें सम्बोधित करते हुए कहते हैं " हे मेरे प्रिय, तुम्हारे यह (शारीरिक) वस्त्र माया (सांसारिक धन सम्पदा एवं सत्ता) के लोभ रूपी रंग में रंगे हुए हैं। तुम्हारा ऐसा परिधान मेरे प्रियतम पति को किंचित् मात्र भी नहीं भाता, अतः, ऐसी स्त्री कैसे पति की सेज पर जा सकती है (अर्थात्, ऐसी आत्मा प्रभु की सँगति का आनंद कैसे ले सकती है) "।(१)

किस प्रकार के लोग गुरु जी को मनभावन और आदरणीय लगते हैं, इस पर वह कहते हैं " हे' मेरे कृपालु प्रभु, मैं क़ुर्बान होता हूँ जो तुम्हारा नाम लेते हैं, मैं उन पर क़ुर्बान हूँ। जो तुम्हारे नाम का ध्यान करते हैं मैं उन पर सदा बलिहारी हूँ "।(१-विराम)

सुंदर रंगों वाले वस्त्रों के रूपक का पुनः प्रयोग कर गुरु जी यह व्यक्त करते हैं कि हम कैसे अपने पति (प्रभु) को मोहित कर उसे पा सकते हैं। वह कहते हैं " हे' मेरे प्रिय, यदि तुम्हारी काया (शरीर) रंगने वाला कुंड बन जाये और तुम उसमें प्रभु नाम रूपी मजीठ का पक्का रंग डाल दो तो (प्रभु स्वयं ही अपने प्रेम से रचा कर) ऐसा सुंदर रंग देते हैं जो पहले कभी किसी ने देखा ना हो (अर्थात्, तुम प्रभु के प्रेम में ऐसे रम जायोगे कि वैसा अनुभव तुमने पहले कभी नहीं किया होगा)।(२)

जो प्रभु के प्रेम के रंग में रंगे हुए हैं गुरु जी उनका कितना सम्मान करते हैं, इसका वर्णन करते हुये वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो, वह आत्मा जो प्रभु के प्रेम में लीन रहती हैं, मानो) उनके परिधान सुंदर लाल रंग (प्रेम का रंग) में रंगे हुए हैं और उनके प्रिय पति (प्रभु) उनके साथ हैं(ऐसी आत्मा के धारक इतने पवित्र तथा पूज्य हैं कि) नानक उनकी चरणधूलि पाने के लिए प्रार्थना करते हैं "।(३)

किन्तु, शब्द के अँत में गुरु जी इस एक आवश्यक बिंदु पर ध्यान दिलाते हैं कि कहीं हम अपनी छद्म पवित्रता और प्रभु प्रेम पर गर्वित

ना हो जायें। वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो, प्रभु वास्तव में) स्वयं ही किसी को (अपने प्रेम के रंग में) सजाता सँवारता तथा रंगता है और स्वयं ही उस पर कृपा दृष्टि करता है। तभी हे' नानक, वधू (आत्मा) पति (प्रभु) को भाती है और वह स्वयं ही उसमें रम जाता है "।(४-१-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि प्रभु के साथ सच्चे प्रेम के बिना पवित्र भक्त का रूप पाने के लिए संतों वाले गेरुये परिधान धारण करने अथवा अन्य कर्मकांड करने की अपेक्षा हमें प्रभु से विनती करनी चाहिए कि वह कृपा करके हमें अपने सच्चे प्रेम में रमायें और हम उसके नाम का ध्यान पूर्ण श्रद्धा के साथ करें जिससे कि हम उसके साथ जुड़ने योग्य बन सकें।

ਪੰਨਾ ੭੨੩

ਤਿਲੰਗ ਘਰੁ ੨ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਤੁਧੁ ਬਿਨੁ ਦੂਜਾ ਨਾਹੀ ਕੋਇ ॥
ਤੂ ਕਰਤਾਰੁ ਕਰਹਿ ਸੋ ਹੋਇ ॥
ਤੇਰਾ ਜੋਰੁ ਤੇਰੀ ਮਨਿ ਟੇਕ ॥
ਸਦਾ ਸਦਾ ਜਪਿ ਨਾਨਕ ਏਕ ॥੧॥

ਸਭ ਊਪਰਿ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਦਾਤਾਰੁ ॥
ਤੇਰੀ ਟੇਕ ਤੇਰਾਆਧਾਰੁ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੭੨੪

ਹੈ ਤੂਹੈ ਤੂ ਹੋਵਨਹਾਰ ॥ ਅਗਮ ਅਗਾਧਿ ਊਚ ਆਪਾਰ ॥
ਜੋ ਤੁਧੁ ਸੇਵਹਿ ਤਿਨ ਭਉ ਦੁਖੁ ਨਾਹਿ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦਿ ਨਾਨਕ ਗੁਣ ਗਾਹਿ ॥੨॥

ਜੋ ਦੀਸੈ ਸੋ ਤੇਰਾ ਰੂਪੁ ॥
ਗੁਣ ਨਿਧਾਨ ਗੋਵਿੰਦ ਅਨੂਪ ॥
ਸਿਮਰਿ ਸਿਮਰਿ ਸਿਮਰਿ ਜਨ ਸੋਇ ॥
ਨਾਨਕ ਕਰਮਿ ਪਰਾਪਤਿ ਹੋਇ ॥੩॥

ਜਿਨਿ ਜਪਿਆ ਤਿਸ ਕਉ ਬਲਿਹਾਰ ॥
ਤਿਸ ਕੈ ਸੰਗਿ ਤਰੈ ਸੰਸਾਰ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭ ਲੋਚਾ ਪੂਰਿ ॥
ਸੰਤ ਜਨਾ ਕੀ ਬਾਛਉ ਧੂਰਿ ॥੪॥੨॥

पृ-७२३

तिलँग घर २ महला ५॥

तुधु बिनु दूजा नाही कोइ ॥
तू करतारु करहि सो होइ ॥
तेरा जोरु तेरी मनि टेक ॥
सदा सदा जपि नानक एक ॥१॥

सभ ऊपरि पारब्रहमु दातारु ॥
तेरी टेक तेराआधारु ॥रहाउ ॥

पृ-७२४

है तूहै तू होवनहार ॥ अगम अगाधि ऊच आपार ॥
जो तुधु सेवहि तिन भउ दुखु नाहि ॥
गुर परसादि नानक गुण गाहि ॥२॥

जो दीसै सो तेरा रूपु ॥
गुण निधान गोविँद अनूप ॥
सिमरि सिमरि सिमरि जन सोइ ॥
नानक करमि परापति होइ ॥३॥

जिनि जपिआ तिस कउ बलिहार ॥
तिस कै सँगि तरै सँसार ॥
कहु नानक प्रभ लोचा पूरि ॥
सँत जना की बाछउ धूरि ॥४॥२॥

तिलँग घर-२ महला-५

इस शब्द में गुरु जी हमें यह प्रकट करते हैं कि सदा सांसारिक धन दौलत एवं सामर्थ्य के पीछे भागते रहने की अपेक्षा, हमें प्रभु से कैसे विनती करनी चाहिये कि हम सदा अपने प्रिय सृजनकर्ता प्रभु नाम के प्रति प्रेम और ध्यान में जीवन व्यतीत करते हुये सही मार्ग पर चल सकें ।

गुरु जी का पहले यह प्रस्ताव है कि हम कैसे ईश्वर से प्रार्थना करें । अतः, वह प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं " (हे' प्रभु), तुम्हारे बिना कोई दूसरा (स्वामी) नहीं है । तुम्हीं करनहार (सृजनकर्ता) हो, जो करते हो वही होता है । हमारे मन में तुम्हारे लिये आस्था है कि तुम शक्तिवान हो । (इसलिये), हे' नानक उसी एक (प्रभु का) जाप सदा और सदा करो "।(१)

गुरु जी फिर प्रभु को सम्बोधित करते हैं " हे सर्वव्यापी, दानशील तुम सर्वोपरि हो । (सारी सृष्टि) तुम्हारे विश्वास और आधार पर आश्रित है "।(विराम)

गुरु जी प्रभु की प्रशंसा में और आगे कहते हैं "(हे' प्रभु), तुम सदा रहे हो, तुम हो और सदा रहोगे । हे' अगम्य, गहन, उच्च तथा अपार प्रभु, जो तुम्हारी सेवा (पूजा पाठ व ध्यान) करते हैं, उन्हें किसी प्रकार का दुख और भय नहीं सताता ।नानक कहते हैं कि गुरु की कृपा से वह सदा तेरा गुणगान करते हैं "।(२)

गुरु जी अब शेष संसार की वास्तविकता पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं " हे' गुणों के भंडार, सृष्टि के स्वामी, अद्वितीय रूप वाले प्रभु, जो भी हम देख पा रहे हैं वह सब तेरा ही रूप (विस्तार) है । हे' भक्तजनों, उसी (प्रभु) का बारम्बार स्मरण तथा भजन करो । हे' नानक, केवल सौभाग्य से ही (किसी को प्रभु का ध्यान करने का अवसर) प्राप्त होता है "।(३)

शब्द के अँत में गुरु जी व्यक्त करते हैं कि प्रभु का ध्यान करने वाले कितने आदरणीय हैं । वह कहते हैं " जो प्रभु का नाम जपते हैं, मैं उन पर बलिहारी हूँ, (क्योंकि), उनकी संगति में रहने वाले संसार के अन्य लोगों का भी उद्धार होता है । नानक कहते हैं, मैं सँत जनों की चरणधूलि की याचना करता हूँ, हे' प्रभु मेरी यह इच्छा पूर्ण करो "।(४-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि प्रभु के बिना और कोई नहीं है । वह सर्वशक्तिमान है, सर्वोच्च है । हमें विनीत भाव से संत (गुरु) के निर्देशानुसार प्रभु का ध्यान और उसकी महिमा का गुणगान करना चाहिये । ऐसा करते रहने से हम सदैवी सुख शांति एवं आनंद की प्राप्ति कर पायेंगे ।

ਪੰਨਾ ੭੨੫

ਤਿਲੰਗ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਹਰਿ ਕੀਆ ਕਥਾ ਕਹਾਣੀਆ ਗੁਰਿ ਮੀਤਿ ਸੁਣਾਈਆ ॥
ਬਲਿਹਾਰੀ ਗੁਰ ਆਪਣੇ ਗੁਰ ਕਉ ਬਲਿ ਜਾਈਆ ॥੧॥

ਆਇ ਮਿਲੁ ਗੁਰਸਿਖ ਆਇ ਮਿਲੁ ਤੂ ਮੇਰੇ ਗੁਰੂ ਕੇ ਪਿਆਰੇ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਰਿ ਕੇ ਗੁਣ ਹਰਿ ਭਾਵਦੇ ਸੇ ਗੁਰੂ ਤੇ ਪਾਏ ॥
ਜਿਨ ਗੁਰ ਕਾ ਭਾਣਾ ਮੰਨਿਆ ਤਿਨ ਘੁਮਿ ਘੁਮਿ ਜਾਏ ॥੨॥

ਜਿਨ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪਿਆਰਾ ਦੇਖਿਆ ਤਿਨ ਕਉ ਹਉ ਵਾਰੀ ॥
ਜਿਨ ਗੁਰ ਕੀ ਕੀਤੀ ਚਾਕਰੀ ਤਿਨ ਸਦ ਬਲਿਹਾਰੀ ॥੩॥

ਹਰਿ ਹਰਿ ਤੇਰਾ ਨਾਮੁ ਹੈ ਦੁਖ ਮੇਟਣਹਾਰਾ ॥
ਗੁਰ ਸੇਵਾ ਤੇ ਪਾਈਐ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਿਸਤਾਰਾ ॥੪॥

ਜੋ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਦੇ ਤੇ ਜਨ ਪਰਵਾਨਾ ॥
ਤਿਨ ਵਿਟਹੁ ਨਾਨਕੁ ਵਾਰਿਆ ਸਦਾ ਸਦਾ ਕੁਰਬਾਨਾ ॥੫॥

ਸਾ ਹਰਿ ਤੇਰੀ ਉਸਤਤਿ ਹੈ ਜੋ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਭਾਵੈ ॥
ਜੋ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਿਆਰਾ ਸੇਵਦੇ ਤਿਨ ਹਰਿ ਫਲੁ ਪਾਵੈ ॥੬॥

ਜਿਨਾ ਹਰਿ ਸੇਤੀ ਪਿਰਹੜੀ ਤਿਨਾ ਜੀਅ ਪ੍ਰਭ ਨਾਲੇ ॥
ਓਇ ਜਪਿ ਜਪਿ ਪਿਆਰਾ ਜੀਵਦੇ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸਮਾਲੇ ॥੭॥

ਜਿਨ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਿਆਰਾ ਸੇਵਿਆ ਤਿਨ ਕਉ ਘੁਮਿ ਜਾਇਆ ॥
ਓਇ ਆਪਿ ਛੁਟੇ ਪਰਵਾਰ ਸਿਉ ਸਭੁ ਜਗਤੁ ਛਡਾਇਆ ॥੮॥

ਗੁਰਿ ਪਿਆਰੈ ਹਰਿ ਸੇਵਿਆ ਗੁਰੁ ਧੰਨੁ ਗੁਰੁ ਧੰਨੋ ॥
ਗੁਰਿ ਹਰਿ ਮਾਰਗੁ ਦਸਿਆ ਗੁਰ ਪੁੰਨੁ ਵਡ ਪੁੰਨੋ ॥੯॥

ਪੰਨਾ ੭੨੬

ਜੋ ਗੁਰਸਿਖ ਗੁਰੁ ਸੇਵਦੇ ਸੇ ਪੁੰਨ ਪਰਾਣੀ ॥
ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਤਿਨ ਕਉ ਵਾਰਿਆ ਸਦਾ ਸਦਾ ਕੁਰਬਾਣੀ ॥੧੦॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਖੀ ਸਹੇਲੀਆ ਸੇ ਆਪਿ ਹਰਿ ਭਾਈਆ ॥
ਹਰਿ ਦਰਗਹ ਪੈਨਾਈਆ ਹਰਿ ਆਪਿ ਗਲਿ ਲਾਈਆ ॥੧੧॥

ਜੋ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਦੇ ਤਿਨ ਦਰਸਨੁ ਦੀਜੈ ॥
ਹਮ ਤਿਨ ਕੇ ਚਰਣ ਪਖਾਲਦੇ ਧੂੜਿ ਘੋਲਿ ਘੋਲਿ ਪੀਜੈ ॥੧੨॥

ਪਾਨ ਸੁਪਾਰੀ ਖਾਤੀਆ ਮੁਖਿ ਬੀੜੀਆ ਲਾਈਆ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਕਦੇ ਨ ਚੇਤਿਓ ਜਮਿ ਪਕੜਿ ਚਲਾਈਆ ॥੧੩॥

ਜਿਨ ਹਰਿ ਨਾਮਾ ਹਰਿ ਚੇਤਿਆ ਹਿਰਦੈ ਉਰਿ ਧਾਰੇ ॥
ਤਿਨ ਜਮੁ ਨੇੜਿ ਨ ਆਵਈ ਗੁਰਸਿਖ ਗੁਰ ਪਿਆਰੇ ॥੧੪॥

ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਨਿਧਾਨੁ ਹੈ ਕੋਈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਣੈ ॥
ਨਾਨਕ ਜਿਨ ਸਤਿਗੁਰੁ ਭੇਟਿਆ ਰੰਗਿ ਰਲੀਆ ਮਾਣੈ ॥੧੫॥

पृ-७२५

तिलँग महला ४ ॥

हरि कीआ कथा कहाणीआ गुरि मीति सुणाईआ ॥
बलिहारी गुर आपणे गुर कउ बलि जाईआ ॥१॥

आइ मिलु गुरसिख आइ मिलु तू मेरे गुरू के पिआरे ॥रहाउ ॥

हरि के गुण हरि भावदे से गुरू ते पाए ॥
जिन गुर का भाणा मँनिआ तिन घुमि घुमि जाए ॥२॥

जिन सतिगुरु पिआरा देखिआ तिन कउ हउ वारी ॥
जिन गुर की कीती चाकरी तिन सद बलिहारी ॥३॥

हरि हरि तेरा नामु है दुख मेटणहारा ॥
गुर सेवा ते पाईऐ गुरमुखि निसतारा ॥४॥

जो हरि नामु धिआइदे ते जन परवाना ॥
तिन विटहु नानकु वारिआ सदा सदा कुरबाना ॥५॥

सा हरि तेरी उसतति है जो हरि प्रभ भावै ॥
जो गुरमुखि पिआरा सेवदे तिन हरि फलु पावै ॥६॥

जिना हरि सेती पिरहड़ी तिना जीअ प्रभ नाले ॥
ओइ जपि जपि पिआरा जीवदे हरि नामु समाले ॥७॥

जिन गुरमुखि पिआरा सेविआ तिन कउ घुमि जाइआ ॥
ओइ आपि छुटे परवार सिउ सभु जगतु छडाइआ ॥८॥

गुरि पिआरै हरि सेविआ गुरू धँनु गुरू धँनो ॥
गुरि हरि मारगु दसिआ गुर पुँनु वड पुँनो ॥९॥

पृ-७२६

जो गुरसिख गुरु सेवदे से पुँन पराणी ॥
जनु नानकु तिन कउ वारिआ सदा सदा कुरबाणी ॥१०॥

गुरमुखि सखी सहेलीआ से आपि हरि भाईआ ॥
हरि दरगह पैनाईआ हरि आपि गलि लाईआ ॥११॥

जो गुरमुखि नामु धिआइदे तिन दरसनु दीजै ॥
हम तिन के चरण पखालदे धूड़ि घोलि घोलि पीजै ॥१२॥

पान सुपारी खातीआ मुखि बीड़ीआ लाईआ ॥
हरि हरि कदे न चेतिओ जमि पकड़ि चलाईआ ॥१३॥

जिन हरि नामा हरि चेतिआ हिरदै उरि धारे ॥
तिन जमु नेड़ि न आवई गुरसिख गुर पिआरे ॥१४॥

हरि का नामु निधानु है कोई गुरमुखि जाणै ॥
नानक जिन सतिगुरु भेटिआ रँगि रलीआ माणै ॥१५॥

ਸਤਿਗੁਰੁ ਦਾਤਾ ਆਖੀਐ ਤੁਸਿ ਕਰੇ ਪਸਾਓ ॥ ਹਉ ਗੁਰ ਵਿਟਹੁ ਸਦ ਵਾਰਿਆ ਜਿਨਿ ਦਿਤੜਾ ਨਾਓ ॥੧੬॥	सतिगुरु दाता आखीऐ तुसि करे पसाओ ॥ हउ गुर विटहु सद वारिआ जिनि दितड़ा नाओ ॥१६॥
ਸੋ ਧੰਨੁ ਗੁਰੂ ਸਾਬਾਸਿ ਹੈ ਹਰਿ ਦੇਇ ਸਨੇਹਾ ॥ ਹਉ ਵੇਖਿ ਵੇਖਿ ਗੁਰੂ ਵਿਗਸਿਆ ਗੁਰ ਸਤਿਗੁਰ ਦੇਹਾ ॥੧੭॥	सो धँनु गुरू साबासि है हरि देइ सनेहा ॥ हउ वेखि वेखि गुरू विगसिआ गुर सतिगुर देहा ॥१७॥
ਗੁਰ ਰਸਨਾ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਬੋਲਦੀ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਸੁਹਾਵੀ ॥ ਜਿਨ ਸੁਣਿ ਸਿਖਾ ਗੁਰੁ ਮੰਨਿਆ ਤਿਨਾ ਭੁਖ ਸਭ ਜਾਵੀ ॥੧੮॥	गुर रसना अँमृितु बोलदी हरि नामि सुहावी ॥ जिन सुणि सिखा गुरु मँनिआ तिना भुख सभ जावी ॥१८॥
ਹਰਿ ਕਾ ਮਾਰਗੁ ਆਖੀਐ ਕਹੁ ਕਿਤੁ ਬਿਧਿ ਜਾਈਐ ॥ ਹਰਿ ਹਰਿ ਤੇਰਾ ਨਾਮੁ ਹੈ ਹਰਿ ਖਰਚੁ ਲੈ ਜਾਈਐ ॥੧੯॥	हरि का मारगु आखीऐ कहु कितु बिधि जाईऐ ॥ हरि हरि तेरा नामु है हरि खरचु लै जाईऐ ॥१९॥
ਜਿਨ ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਰਿ ਆਰਾਧਿਆ ਸੇ ਸਾਹ ਵਡ ਦਾਣੇ ॥ ਹਉ ਸਤਿਗੁਰ ਕਉ ਸਦ ਵਾਰਿਆ ਗੁਰ ਬਚਨਿ ਸਮਾਣੇ ॥੨੦॥	जिन गुरमुखि हरि आराधिआ से साह वड दाणे ॥ हउ सतिगुर कउ सद वारिआ गुर बचनि समाणे ॥२०॥
ਤੂ ਠਾਕੁਰੁ ਤੂ ਸਾਹਿਬੋ ਤੂਹੈ ਮੇਰਾ ਮੀਰਾ ॥ ਤੁਧੁ ਭਾਵੈ ਤੇਰੀ ਬੰਦਗੀ ਤੂ ਗੁਣੀ ਗਹੀਰਾ ॥੨੧॥	तू ठाकुरु तू साहिबो तूहै मेरा मीरा ॥ तुधु भावै तेरी बँदगी तू गुणी गहीरा ॥२१॥
ਆਪੇ ਹਰਿ ਇਕ ਰੰਗੁ ਹੈ ਆਪੇ ਬਹੁ ਰੰਗੀ ॥ ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਨਾਨਕਾ ਸਾਈ ਗਲ ਚੰਗੀ ॥੨੨॥੨॥	आपे हरि इक रँगु है आपे बहु रँगी ॥ जो तिसु भावै नानका साई गल चँगी ॥२२॥२॥

तिलँग महला – ४

इस शब्द में गुरु जी एक बार फिर से अपनी काव्य कल्पना के शिखर को छूते हुये प्रभु के प्रति अपनी चाह और प्रगाढ़ प्रेम का प्रदर्शन करते हैं। प्रभु के लिए तो क्या कहें, वह तो शब्द के प्रारंभ से ही कहने लगते हैं कि वह गुरु के शिष्यों (गुरसिखों) को कितना मूल्यवान तथा सम्मानित समझते हैं जो उन्हीं की भाँति प्रभु से प्रेम करते हैं और उसके दर्शन पाने के अभिलाषी हैं।

सर्वप्रथम उनका कथन है कि अपने गुरु अथवा मित्र से क्यों और कितना प्रेम करते हैं, वह कहते हैं"(हे' मेरे मित्रो), मेरे गुरु अथवा मित्र ने ही मुझे प्रभु की कथायें और कहानियाँ सुनाई थी, अतः, मैं अपने गुरु पर बलिहारी हूँ "।(१)

गुरु जी केवल अपने गुरु को ही प्रेम नहीं करते, अपितु, वह अन्य सभी गुरु के भक्तजनों से मिलने की तीव्र अभिलाषा को भी प्रकट करते हुए कहते हैं "(कृपया), आओ, गुरु के शिष्यो और मुझे मिलो, हाँ, तुम आन मिलो मेरे गुरु के प्रिय शिष्यो "।(विराम)

वह गुरु से इतना प्रेम क्यों करते हैं तथा गुरु का कहा मानने वालों का क्यों इतना सम्मान करते हैं, इसका कारण गुरु जी बताते हैं " (हे' मेरे मित्रो), हरि का गुणगान हरि को भाता है और यह गुणगान करना मैंने अपने गुरु से सीखा है तथा जिन्होंने भी गुरु की इच्छा का पालन किया है, मैं उन पर बारम्बार बलिहारी हूँ "।(२)

उपरोक्त भाव को और विस्तृत करते हुये गुरु जी कहते हैं " मैं उन पर बलिहारी हूँ जिन्होंने मेरे प्रिय सच्चे गुरु को देखा है। मैं सदा उन पर बलिहारी हूँ जिन्होंने गुरु की चाकरी (अर्थात, पूर्ण भक्ति भावना से उनकी शिक्षा की पालना) की है "।(३)

प्रभु को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं " हे' हरि, तुम्हारा नाम समस्त दुखों को मिटाने वाला है और इसको हम गुरु की सेवा के द्वारा पा सकते हैं, तथा गुरु की कृपा से ही हमारा (इस भयावह भवसागर से) उद्धार होता है "।(४)

गुरु जी प्रभु नाम का ध्यान करने वालों का कितना सम्मान करते हैं, इस पर वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), जो भक्त हरि नाम का ध्यान करते हैं वह (हरि को) स्वीकृत हैं, नानक उन पर सदा सदा बलिहारी हैं, क़ुर्बान हैं "।(५)

हरि की सच्ची स्तुति कैसी होती है इसे स्पष्ट करते हुये गुरु जी कहते हैं " (हे' हरि), केवल वही तुम्हारी सच्ची स्तुति है जो तुम्हें भाती है, (इसलिये) जो अपने प्रिय प्रभु की सेवा (भजन, ध्यान)गुरु के द्वारा (प्रेम एवं श्रद्धा से गुरु की वाणी का गायन) करते हैं उन्हें हरि (अपने नाम के ध्यान का) फल देते हैं "।(६)

हरि को सच्चा प्रेम करने वालों के कुछ गुणों के विषय पर गुरु जी कहते हैं " जिन्हें हरि से प्रेम है, उनका मन सदैव प्रभु के साथ ही लगा रहता है, जैसे कि वह अपने प्रिय का जाप करने के लिये ही जीवित हों और हरि नाम का धन बटोर कर सँभाल रहे हों "।(७)

इसलिये, एक बार फिर गुरु जी हमें यह बताते हैं कि वह प्रभु के सच्चे प्रेमियों का कितना आदर करते हैं वह कहते हैं " जिन गुरु के शिष्यों ने प्रिय प्रभु की सेवा (ध्यान एवं पूजा) की है, मैं उन पर न्योछावर हूँ। वह स्वयं भी अपने परिवार सहित मुक्त हुए हैं और समस्त जग को भी

(प्रभु नाम के ध्यान में लगा कर) मुक्त करवाया है ”।(८)

अपने गुरु की प्रशंसा में एक पग और आगे बढ़ाते हुये गुरु जी कहते हैं “ मेरा प्रिय गुरु धन्य और धन्य है (क्योंकि, उसी की कृपा से मैंने) प्रिय हरि की सेवा (ध्यान एवं पूजा) की है, (वास्तव में) गुरु ने ही मुझे हरि तक पहुँचने का मार्ग बताया, अतः गुरु ने यह बहुत बड़ा पुण्य का काम मेरे लिये किया है ”।(९)

वह शिष्य जो गुरु के निर्देशानुसार चलते हैं उनके गुणों पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं “ वह गुरमुख (गुरु के भक्त) धन्य हैं, पुण्य हैं, जो गुरु की सेवा (उसके आदेशों का पालन) करते हैं । भक्त नानक उन पर सदा बलिहार जाते हैं, क़ुर्बान जाते हैं ”।(१०)

गुरु के शिष्यों की प्रशंसा को आगे बढ़ाते हुये गुरु जी कहते हैं “ गुरमुख (गुरु के शिष्य) सखियाँ एवं मित्र सभी हरि को भाते हैं, वह हरि के दरबार में सम्मानित हैं और हरि ने स्वयं उन्हें अपने कंठ से लगाया है ”।(११)

इसलिये, गुरु जी हरि से प्रार्थना करते हुये कहते हैं “ (हे’ प्रभु), मुझे उन गुरमुखों (गुरु के अनुयायियों) के दर्शनों का वरदान दो जो तुम्हारे नाम का ध्यान करते हैं । हमें उनके चरण पखार कर चरण धूलि को घोल घोल कर पीना है ”। (१२)

जो लोग मिथ्या सांसारिक आमोद प्रमोद में व्यस्त रहकर जीवन व्यर्थ करते रहते हैं, उनके भाग्य पर अब गुरु जी कहते हैं “ वह वधू (आत्मा) जो अपना जीवन मिथ्या सुख एवं आनंद, जैसे कि पान सुपारी खाने तथा बीड़ी मुख में लेकर पीने में समय नष्ट करती रहती हैं और कभी हरि नाम को नहीं चेतती, वह यमराज की पकड़ में (नर्क) चली जाती हैं ”।(१३)

दूसरी ओर, जो लोग सदा अपने हृदय में हरि नाम को धारण किये रखते हैं वह कितने वरदान पाते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं “ जो हरि नाम को स्मरण करते हैं और उसे अपने हृदय का आधार बना लेते हैं, वह सच्चे गुरसिख (गुरु के शिष्य) हैं और गुरु को प्रिय हैं, यमराज का भय उनके निकट भी नहीं आता ”।(१४)

अतः, प्रभु नाम के गुणों पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं “ (हे’ मेरे मित्रो) हरि नाम एक अनोखा भंडार है, किन्तु, इसका भेद कोई बिरला ही गुरु का अनुयायी जान पाता है । नानक कहते हैं, जिसने भी सच्चे गुरु से भेंट की है (अथवा, उसके निर्देश को माना है, वह इस भंडार को पाकर आत्मिक रूप से) अत्यंत आन्नद मनाता है ”।(१५)

सच्चे गुरु के गुणों को और अधिक विस्तार से गुरु जी कहते हैं “सच्चा गुरु (हरि नाम का) दाता कहा जाता है । जब वह सन्तुष्ट होता है तब (यह दान) देता है । मैं उस गुरु पर सदा बलिहारी हूँ जिसने मुझे (प्रभु) नाम का उपहार दिया है ”।(१६)

अपने गुरु के गुणों के प्रति कितना आदर भाव एवं उसके दर्शन के लिए कितनी लालसा है, इस पर वह कहते हैं “ वह गुरु धन्य है, प्रशंसनीय है जो हमें (दैवी) संदेश देता है । मैं सच्चे गुरु को सदेह देख देख कर प्रफुल्लित होता हूँ “ ।(१७)

गुरु को केवल सदेह देख कर ही गुरु जी मोहित नहीं होते हैं वह गुरु की जिह्वा से उच्चारित वाणी भी सुन कर गदगद होते हैं और कहते हैं “गुरु की रसना हरि के नाम से सुसज्जित होकर अँमृत वाणी का उच्चारण करती है, जो अति भली लगती है, जिसे सुन समझ कर जो गुरु के जन उसे मानते हैं, उनकी समस्त (सांसारिक प्रलोभनों के प्रति) भूख चली जाती है ”।(१८)

गुरु जी अब एक प्रश्न पूछते हैं कि हरि से भेंट कैसे हो, परन्तु, साथ ही वह स्वयं इसका उत्तर भी देते हैं । वह कहते हैं “ हम हरि से मिलने के लिये जाने के मार्ग की बात करते हैं, कृपया बताओ, हम इस मार्ग पर किस विधि से जा सकते हैं ? हे’ हरि, यह तेरा नाम ही है जो हमारा सहायक है, इसलिये हरि का नाम हमें अपने साथ हरि के राह में ख़र्च के रूप में लेकर जाना चाहिये ”।(१९)

अतः, प्रभु का ध्यान करने वाले गुरु के शिष्यों की प्रशंसा में गुरु जी कहते हैं “ (हे मेरे मित्रो), जिन गुरु के शिष्यों ने हरि के नाम की आराधना की है वह (प्रभु नाम की पूँजी से) बहुत बड़े साहूकार बन गये हैं, मैं उस सच्चे गुरु पर सदा बलिहारी हूँ जिसकी वाणी तथा वचनों के द्वारा वह सब (हरि के नाम में) समा गये हैं ”।(२०)

किन्तु, प्रभु नाम का ध्यान करने पर गुरु जी ने एक और अति आवश्यक तथ्य पाया है । वह कहते है “ हे’ हरि तुम मेरे स्वामी हो, तुम मेरे ठाकुर हो, तुम मेरे राजा हो, यदि तुम्हें अच्छा लगे तो क्या मैं तुम्हारी वँदना कर सकता हूँ, क्योंकि तुम गुणों के भंडार हो ”।(२१)

शब्द के अंत में हरि के अपूर्व गुण पर गुरु जी टिप्पणी करते हैं जो कि हमारे लिये भी अति उत्तम विचार है । वह कहते हैं “ (हे’ मेरे मित्रो) हरि स्वयं कभी एक रंग रूप में प्रकट होते हैं और कभी स्वयं ही अनेक रंगों में । नानक का विचार है कि जो भी उस (प्रभु) को भाता है वही बात (हमारे लिये) सर्वोपरि है ”। (२२-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें उन गुरु के शिष्यों अथवा गुरमुखों की संगति भालना चाहिये जो गुरु के निर्देशानुसार प्रभु नाम का ध्यान करते हों । हमारे मन में गुरु के प्रति इतना गूढ़ प्रेम होना चाहिये कि उसकी एक झलक हमें प्रफुल्लित कर दे और जो कुछ भी प्रभु को भाता है उसे हम अपने लिए उत्तम मानते हुए स्वीकार करें ।

ਪੰਨਾ ੭੨੮

ੴ ਸਤਿ ਨਾਮੁ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰਭਉ
ਨਿਰਵੈਰੁ ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਅਜੂਨੀ ਸੈਭੰ ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੧ ਚਉਪਦੇ ਘਰੁ ੧

ਭਾਂਡਾ ਧੋਇ ਬੈਸਿ ਧੂਪੁ ਦੇਵਹੁ ਤਉ ਦੂਧੈ ਕਉ ਜਾਵਹੁ ॥
ਦੂਧੁ ਕਰਮ ਫੁਨਿ ਸੁਰਤਿ ਸਮਾਇਣੁ ਹੋਇ ਨਿਰਾਸ ਜਮਾਵਹੁ ॥੧॥

ਜਪਹੁ ਤ ਏਕੋ ਨਾਮਾ ॥
ਅਵਰਿ ਨਿਰਾਫਲ ਕਾਮਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਇਹੁ ਮਨੁ ਈਟੀ ਹਾਥਿ ਕਰਹੁ ਫੁਨਿ ਨੇਤ੍ਰਉ ਨੀਦ ਨ ਆਵੈ ॥
ਰਸਨਾ ਨਾਮੁ ਜਪਹੁ ਤਬ ਮਥੀਐ ਇਨ ਬਿਧਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪਾਵਹੁ ॥੨॥

ਮਨੁ ਸੰਪਟੁ ਜਿਤੁ ਸਤ ਸਰਿ ਨਾਵਣੁ ਭਾਵਨ ਪਾਤੀ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਕਰੇ ॥
ਪੂਜਾ ਪ੍ਰਾਣ ਸੇਵਕੁ ਜੇ ਸੇਵੇ ਇਨ੍ਹ ਬਿਧਿ ਸਾਹਿਬੁ ਰਵਤੁ ਰਹੈ ॥੩॥

ਕਹਦੇ ਕਹਹਿ ਕਹੇ ਕਹਿ ਜਾਵਹਿ ਤੁਮ ਸਰਿ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥
ਭਗਤਿ ਹੀਣੁ ਨਾਨਕੁ ਜਨੁ ਜੰਪੈ ਹਉ ਸਾਲਾਹੀ ਸਚਾ ਸੋਈ ॥੪॥੧॥

पृ-७२८

१ओंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ
निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभँ गुर प्रसादि ॥

रागु सूही महला १ चउपदे घर १

भांडा धोइ बैसि धूपु देवहु तउ दूधैकउ जावहु ॥
दूधु करम फुनि सुरति समाइणु होइ निरास जमावहु ॥१॥

जपहु त एको नामा ॥
अवरि निराफल कामा ॥१॥ रहाउ ॥

इहु मनु ईटी हाथि करहु फुनि नेत्रउ नीद न आवै
रसना नाम जपहु तब मथीऐ इन बिधि अँमृतु पावहु ॥२॥

मनु सँपटु जितु सत सरि नावणु भावन पाती त्रिपति करे ॥
पूजा प्राण सेवकु जे सेवे इन् बिधि साहिबु रवतु रहै ॥३॥

कहदे कहहि कहे कहि जावहि तुम सरि अवरु न कोई ॥
भगति हीणु नानकु जनु जँपै हउ सालाही सचा सोई ॥४॥१॥

राग सूही महला-१ चउपदे घर-१

सम्पूर्ण गुरु ग्रंथ साहिब जी में प्रत्येक स्थान पर मुख्य रूप से प्रभु नाम का ध्यान करने की आवश्यकता पर बारम्बार दृढ़ता से कहा गया है ।परन्तु, प्रश्न यह है कि वास्तविकता में यह कैसे किया जाये ? इस कार्य को आरंभ करने से पहले हमें कौन से प्रबंध करने की आवश्यकता है और क्या सावधानियाँ हमें बरतनी चाहिये जिससे कि हमारे प्रयत्न सफल रहें और हम प्रभु को अपने हृदय में अनुभव कर सकें ।

इस शब्द में गुरु जी उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर देने के लिये दो उदाहरण देते हैं । प्रथम उदाहरण वह तत्कालीन सामान्य ग्रामीण जीवन में से लेते हैं, जहाँ दही को मथ कर मक्खन निकाला जाता था । उन दिनों में जब कोई मशीनें नहीं थी मक्खन बनाने के लिये मिट्टी की हांडी को पानी से अच्छी प्रकार से धोने के पश्चात धूप में रख कर, अथवा, जलते हुये कोयले को डाल कर सुखाया जाता था उसके पश्चात उसमें हल्का गर्म दूध डाला जाता और थोड़ा सा पहले का रखा हुया दही मिलाकर उसे दही के रूप में जमाने के लिए रात भर के लिए छोड़ दिया जाता ।अगली सुबह उस दही में मथनी डाल कर तब तक मथा जाता, जब तक मक्खन उपर तैरने लगे । दही की मात्रा अधिक होने पर उसे मथने की प्रक्रिया के लिए एक बड़ी मथनी के डंडे में एक रस्सी लपेट कर उसे दही में घुमाया जाता है और रस्सी के दोनों छोर को सरलता से पकड़ने के लिये उसमें दो छोटे लकड़ी के टुकड़े जिन्हें यहाँ ईटी कहा गया है बाँधे जाते हैं ।

मक्खन बनाने की उपरोक्त विधि के रूपक का उपयोग गुरु जी यहाँ प्रभु नाम के ध्यान की प्रक्रिया में करते हैं, जहाँ मक्खन के स्थान पर प्रभु नाम रूपी अँमृत को पाने का प्रयास है । वह कहते हैं " (हे मेरे मित्रो), पहले तुम बैठ कर बर्तन धोते हो, फिर उसे धूप में रख कर शुद्ध (असंक्रमित) करते हो और फिर दूध लेने जाते हो और जाग लगा कर उसका दही जमाते हो ।(इसी प्रकार, यदि तुम प्रभु नाम रूपी अँमृत को पाना चाहते हो तो) पहले तुम अपने अँतरमन रूपी बर्तन को दुर्भावनायों का मैल हटा कर शुद्ध करो और फिर उसमें शुभ कर्मों रूपी दूध को डालो, तदुपरांत प्रभु चरणों में लगे ध्यान रूपी दही से उस दूध को जमाओ (इस प्रकार से सांसारिक इच्छाओं एवं आशायों का त्याग करो)। दूसरे शब्दों में, सांसारिक प्रलोभनों को छोड़ कर, अथवा, उनसे निराश होकर शांति और सहजता की दशा में रहो "।(१)

एक बार फिर हमें सांसारिक धंधों, तथा प्रभु की प्राप्ति के लिये अन्य निरर्थक कर्मकांडों, जैसे कि तीर्थ यात्राओं पर जाना, व्रत रखना इत्यादि, से सावधान करने के लिये गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), केवल एक ही प्रभु नाम का जाप करो, अन्य सब प्रकार के कर्म (कर्मकांड, व्रत, संयम इत्यादि) निष्फल हैं "।(१- विराम)

उपरोक्त उदाहरण को फिर से लेकर गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), इस मन रूपी ईटी (मथनी पर लिपटी रस्सी के दोनों छोर पर बँधे छोटे लकड़ी के टुकड़े) को हाथों में पकड़ कर रखो और फिर से नेत्रों में नींद न आने दो (अर्थात, सांसारिक प्रलोभनों की नींद रूपी लालसा के प्रति मन को नियंत्रित रखो) । मथनी से मथते समय रस्सी को पकड़े रह कर प्रभु नाम को अपनी रसना से जपते रहो और इस विधि से तुम प्रभु नाम रूपी अँमृत पाते हो "।(२)

अब गुरु जी दूसरा उदाहरण हिंदू धर्म में पूजा की उस पद्धति से लेते हैं, जहाँ कुछ हिंदू परिवारों में पूजा के समय ठाकुर जी की छोटी मूर्ति जो पूजा घर में रखी रहती है, उसे वहाँ से निकाल कर स्नान करवाते हैं और फिर उसे सिंहासन पर बिराजमान करा कर पुष्प एवं पत्तियाँ अर्पित करते हुए पूजा प्रारंभ की जाती है ।

इस रूपक का प्रयोग करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो, एक ऐसे हिंदू पुजारी अथवा भक्त की भाँति) अपने मन को ठाकुर जी की मूर्ति रखने का स्थान अथवा सिंहासन बनालें और संतों की संगति रुपी पानी से स्नान करालें तथा (प्रभु को प्रसन्न करने के लिये) अपनी श्रद्धा रुपी पुष्प पत्ती चढ़ायें । इस विधि से जो सेवक अपने प्राणों से प्रभु की सेवा करता है, वह अपने स्वामी की संगति में रमा हुया मग्न रहता है "।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी प्रभु को विनीत भाव से सम्बोधित करते हुये कहते हैं " हे' प्रभु (देवी देवतायों के प्रति), अनेकों लोग बहुत कुछ कहते हैं और यह सब कहते कहते वह इस संसार से विदा हो जाते हैं, परन्तु (मैं जानता हूँ कि) कोई और दूसरा तुम्हारे जैसा नहीं है ।भक्ति विहीन नानक जन भी पूजा करता है, परन्तु, (मैं केवल) उस एक सच्चे अनंत (प्रभु) की ही सराहना करता हूँ "।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु नाम का अँमृत पाना चाहते हैं और उस प्रभु को अपने हृदय में रखना चाहते हैं तो हमें सर्वप्रथम अपने मन को गुरु के उपदेश के द्वारा निर्मल करना होगा और नेक कर्म करते हुये प्रभु नाम का भजन गायन करते रहना होगा । दूसरा, हमें अपने मन को दुर्भावनायों से मुक्त, शुद्ध रूप में वैसे ही रखना होगा, जैसे कि ठाकुर जी का स्थान अथवा सिंहासन । उस अनंत प्रभु को संतों की संगति रूपी जल से प्रतिदिन स्नान करवा कर उसकी पूजा एवं प्रशंसा में भजन कीर्तन रूपी पुष्प पत्ती भेंट करना होगा ।

ਪੰਨਾ ੭੩੦

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਭਾਂਡਾ ਹਛਾ ਸੋਇ ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਵਸੀ ॥
ਭਾਂਡਾ ਅਤਿ ਮਲੀਣੁ ਧੋਤਾ ਹਛਾ ਨ ਹੋਇਸੀ ॥

ਗੁਰੂ ਦੁਆਰੈ ਹੋਇ ਸੋਝੀ ਪਾਇਸੀ ॥
ਏਤੁ ਦੁਆਰੈ ਧੋਇ ਹਛਾ ਹੋਇਸੀ ॥
ਮੈਲੇ ਹਛੇ ਕਾ ਵੀਚਾਰੁ ਆਪਿ ਵਰਤਾਇਸੀ ॥

ਮਤੁ ਕੋ ਜਾਣੈ ਜਾਇ ਅਗੈ ਪਾਇਸੀ ॥
ਜੇਹੇ ਕਰਮ ਕਮਾਇ ਤੇਹਾ ਹੋਇਸੀ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਉ ਆਪਿ ਵਰਤਾਇਸੀ॥
ਚਲਿਆ ਪਤਿ ਸਿਉ ਜਨਮੁ ਸਵਾਰਿ ਵਾਜਾ ਵਾਇਸੀ ॥

ਮਾਣਸੁ ਕਿਆ ਵੇਚਾਰਾ ਤਿਹੁ ਲੋਕ ਸੁਣਾਇਸੀ ॥
ਨਾਨਕ ਆਪਿ ਨਿਹਾਲ ਸਭਿ ਕੁਲ ਤਾਰਸੀ ॥੧॥੪॥੬॥

पृ-७३०

सूही महला १॥

भांडा हछा सोइ जो तिसु भावसी ॥
भांडा अति मलीणु धोता हछा न होइसी ॥

गुरू दुआरै होइ सोझी पाइसी ॥
एतु दुआरै धोइ हछा होइसी ॥
मैले हछे का वीचारु आपि वरताइसी ॥

मतु को जाणै जाइ अगै पाइसी ॥
जेहे करम कमाइ तेहा होइसी ॥
अँम्रितु हरि का नाउ आपि वरताइसी ॥
चलिआ पति सिउ जनमु सवारि वाजा वाइसी ॥

माणसु किआ वेचारा तिहु लोक सुणाइसी ॥
नानक आपि निहाल सभि कुल तारसी ॥१॥४॥६॥

सूही महला – १

इस शब्द में गुरु जी हमें यह बताते हैं कि किस प्रकार का बर्तन अथवा हृदय अच्छा और निर्मल है जो (प्रभु नाम का) उपहार डालने योग्य हैं । इसका निर्णय कौन करता है कि कैसे और कहाँ इस हृदय रूपी बर्तन को कोई निर्मल अथवा शुद्ध कर सकता है और किस प्रकार के आशीर्वाद ऐसे मनुष्य को प्राप्त होते हैं । वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), केवल वही बर्तन (हृदय) पवित्र है जो उस (प्रभु) को भाता है । यदि वह बर्तन रूपी हृदय अति मलीन (मन के अंदर दुर्भावनायों का निवास) है तो वह (शरीर) बाहर से धोने (स्नान) से अच्छा अथवा निर्मल नहीं होगा । केवल गुरु के द्वार पर जाकर (जहाँ गुरु की वाणी को सुनने तथा विचारने करने के लिए) सूझ बूझ अथवा ज्ञान प्राप्त होता है । यदि कोई (अपने मन को) इस द्वार पर जाकर धोता है तो (वह प्रभु को मनभावना लगने के लिये) बहुत अच्छा है । परन्तु, यह निर्णय तो प्रभु स्वयं ही करेगा कि कौनसा (बर्तन अथवा हृदय) पवित्र है और कौनसा मलिन (भावनाओं से ग्रस्त) है ।

यह किसी को भी नहीं सोचना चाहिये कि उसे अगले जन्म में जाकर (मन को पवित्र करने का) ज्ञान मिलेगा, (यह प्रकृति का नियम है कि इस जन्म में) कोई जैसे कर्म करता है वैसे ही उसे (अगले जन्म में) प्राप्त होता है । (अंत में, यह प्रभु ही हैं जो) स्वयं अँमित रूपी नाम को सभी में वितरित करते हैं । (सौभाग्यशाली मनुष्य जो ऐसे वरदान को पा लेता है) वह अपना मानव जन्म सँवार कर सम्मान सहित कीर्तिमान होकर (इस संसार से) जाता है । उसकी महिमा इस बेचारे मानव लोक में तो क्या, तीनों लोकों में सुनाई देती है । संक्षेप में, हे' नानक, ऐसा मनुष्य स्वयं भी अति आन्नदित रहता है और अपने समस्त कुल का भी उद्धार करता है "।(१-४-६)

इस शब्द का संदेश है कि केवल अपने शरीर को बाहर से धोने अथवा स्नान करने से हम अपने मन के अंदर के दुषविचारों को नहीं धो सकते हैं । मन की शुद्धता केवल गुरु की पवित्र पावन संगति में बैठ कर उसकी गुरबाणी पर मनन चिंतन करने से ही प्राप्त होती है । हमें ऐसा नहीं मान लेना चाहिये कि हम यह प्रक्रिया आगामी जन्म में ग्रहण करेंगे, क्योंकि हमारा अगला जन्म इस जन्म के कर्मों पर आधारित होगा ।दूसरा तथ्य यह है कि ईश्वर स्वयं ही यह निर्णय लेते हैं कि कौन से मनुष्य का हृदय रूपी बर्तन उनके नाम रूपी अँमृत को पाने के लिये यथाचित रूप से शुद्ध है और जो मनुष्य इस उपहार को पा लेता है वह स्वयं तथा समस्त कुल के लिये सम्मान तथा मोक्ष पाता है ।

ਪੰਨਾ ੭੩੧	पृ-७३१
ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥	**सूही महला ४॥**
ਹਰਿ ਨਾਮਾ ਹਰਿ ਰੰਙੁ ਹੈ ਹਰਿ ਰੰਙੁ ਮਜੀਠੈ ਰੰਙੁ ॥ ਗੁਰਿ ਤੁਠੈ ਹਰਿ ਰੰਗੁ ਚਾੜਿਆ ਫਿਰਿ ਬਹੁੜਿ ਨ ਹੋਵੀ ਭੰਙੁ ॥੧॥	हरि नामा हरि रँगु है हरि रँगु मजीठै रँङ ॥ गुरि तुठै हरि रँगुचाड़िआ फिरि बहुड़ि न होवी भँङु ॥१॥
ਪੰਨਾ ੭੩੨	**पृ-७३२**
ਮੇਰੇ ਮਨ ਹਰਿ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਕਰਿ ਰੰਙੁ ॥ ਗੁਰਿ ਤੁਠੈ ਹਰਿ ਉਪਦੇਸਿਆ ਹਰਿ ਭੇਟਿਆ ਰਾਉ ਨਿਸੰਙੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मेरे मन हरि राम नामि करि रँङु ॥ गुरि तुठै हरि उपदेसिआ हरि भेटिआ राउ निसँङु ॥१॥ रहाउ ॥
ਮੁੰਧ ਇਆਣੀ ਮਨਮੁਖੀ ਫਿਰਿ ਆਵਣ ਜਾਣਾ ਅੰਙੁ ॥ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਚਿਤਿ ਨ ਆਇਓ ਮਨਿ ਦੂਜਾ ਭਾਉ ਸਹਲੰਙੁ ॥੨॥	मुँध इआणी मनमुखी फिरि आवण जाणा अँङु ॥ हरि प्रभु चिति न आइओ मनि दूजा भाउ सहलँङु ॥२॥
ਹਮ ਮੈਲੁ ਭਰੇ ਦੁਹਚਾਰੀਆ ਹਰਿ ਰਾਖਹੁ ਅੰਗੀ ਅੰਙੁ ॥ ਗੁਰਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਸਰਿ ਨਵਲਾਇਆ ਸਭਿ ਲਾਥੇ ਕਿਲਵਿਖ ਪੰਙੁ ॥੩॥	हम मैलु भरे दुहचारीआ हरि राखहु अँगी अँङु ॥ गुरि अँमृत सरि नवलाइआ सभि लाथे किलविख पँङु ॥३॥
ਹਰਿ ਦੀਨਾ ਦੀਨ ਦਇਆਲ ਪ੍ਰਭੁ ਸਤਸੰਗਤਿ ਮੇਲਹੁ ਸੰਙੁ ॥ ਮਿਲਿ ਸੰਗਤਿ ਹਰਿ ਰੰਗੁ ਪਾਇਆ ਜਨ ਨਾਨਕ ਮਨਿ ਤਨਿ ਰੰਙੁ ॥੪॥੩॥	हरि दीना दीन दइआल प्रभु सतसँगति मेलहु सँङु ॥ मिलि सँगति हरि रँगु पाइआ जन नानक मनि तनि रँङु ॥४॥३॥

सूही महला – ४

गुरु ग्रंथ साहिब जी में आदि से लेकर अंत तक गुरु जी बारम्बार प्रभु के नाम के ध्यान की नितांत आवश्यकता तथा उससे मिलने वाले आशीर्वादों पर दृढ़ता से कहते रहे हैं । किन्तु, कई बार हम यह आश्चर्य करते हैं कि वास्तव में प्रभु नाम का क्या महत्व है, तथा कैसे उसके नाम का ध्यान किया जाये ? क्या प्रभु नाम को समाधि लगाकर एक मंत्र की भाँति निरंतर दोहराया जाये, अथवा कुछ धार्मिक पुस्तकें पढ़ी जायें, या कोई और विधि अपनायी जाये । इस शब्द में गुरु जी इन प्रश्नों का उत्तर देते हैं ।

वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), हरि का नाम हरि से प्रेम अथवा उसका रंग है और यह हरि का रंग बहुत पक्का मजीठै रंग जैसा है (भारत में पाये जाने वाले मजीठ के पेड़ से प्राप्त किया जाने वाला पक्का लाल रंग) । यदि गुरु एक बार कृपालु हो जाये तो वह इस हरि के रंग (हरि के प्रेम) को भक्त पर इतना पक्का चढ़ा देते हैं कि वह फिर फीका नहीं पड़ता"।(१)

गुरु जी अपने मन को (परोक्ष में हमें भी) कहते हैं " हे' मेरे मन, हरि के नाम के रंग (प्रेम) में रंग जायो । यदि गुरु कृपालु हो जायें और (किसी को) हरि नाम का उपदेश देदें, तो निश्चय ही वह मनुष्य महान हरि से मिल जाता है "।(१- विराम)

किन्तु, सामान्य मनुष्य की तुलना एक नवयौवना, मूर्ख तथा अंहकारी वधू से करते हुये गुरु जी कहते हैं " अंहकारी होने के कारण मूर्ख वधू (अथवा, ऐसी आत्मा जो गुरु के उपदेश को ना मान कर अपनी मनमानी करती है, अतः सदैव ही उस) का इस संसार में आना जाना निश्चित हो जाता है, क्योंकि, उसका मन दूसरे के प्रेम (सांसारिक मायाजाल एवं सामर्थ्य) में संलग्न रहता है, तथा हरि का नाम उसके हृदय में आता ही नहीं है "।(२)

प्रभु से कैसे प्रार्थना की जाये और प्रार्थना करने से हमें कैसा अनुभव होता है, इस पर अब गुरु जी कहते हैं " (हे' प्रभु), हम मैल (दुष्कर्मों) से भरे हुये हैं, दुराचारी हैं, हे' हरि, हमारे अंगरक्षक बन कर हमारी रक्षा करो, पापकर्मों से बचाओ ।(हे' मेरे मित्रो, जिसे भी) गुरु ने प्रभु नाम रूपी अँमृत के सरोवर में नहला दिया है उसके समस्त कष्टों और पापकर्मों का कीचड़ उतर गया है "।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में हमारी ओर से प्रार्थना करते हैं और उसके परिणाम का वर्णन करते हुये कहते हैं " हे' हरि, दीनों पर दयालुता करने वाले, हे' प्रभु, मुझे संतों की सच्ची संगति के साथ मिलवा दो । (वह मनुष्य जिसकी प्रार्थना स्वीकार हो गयी) संतों की सँगति में जाकर उसने हरि के प्रेम को पा लिया और हे' नानक ऐसे भक्त का तन और मन (प्रभु के) रंग में रंग गया "।(४-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें गुरु का मार्ग दर्शन दें और संतजनों की संगति से जोड़ कर रखें, जहाँ पर प्रभु के नाम का कीर्तन और ध्यान करते रहने से हम उसके रंग अथवा प्रेम में लीन हो सकें । एक बार जब गुरु दयालु होकर हमें उस दैवी प्रेम में रमा देते हैं तो वह मजीठ के पक्के लाल रंग की भाँति सदा चढ़ा रहेगा और हमारे अंदर से दुष्प्रवृत्तियों का मैल फीका पड़ जायेगा ।

ਪੰਨਾ ੭੩੩	**पृ-७३३**
ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥	**सूही महला ४॥**
ਜਿਥੈ ਹਰਿ ਆਰਾਧੀਐ ਤਿਥੈ ਹਰਿ ਮਿਤੁ ਸਹਾਈ ॥	जिथै हरि आराधीऐ तिथै हरि मितु सहाई ॥
ਪੰਨਾ ੭੩੪	**पृ-७३४**
ਗੁਰ ਕਿਰਪਾ ਤੇ ਹਰਿ ਮਨਿ ਵਸੈ ਹੋਰਤੁ ਬਿਧਿ ਲਇਆ ਨ ਜਾਈ ॥੧॥	गुर किरपा ते हरि मनि वसै होरतु बिधि लइआ न जाई ॥१॥
ਹਰਿ ਧਨੁ ਸੰਚੀਐ ਭਾਈ ॥ ਜਿ ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਹਰਿ ਹੋਇ ਸਖਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	हरि धनु सँचीऐ भाई ॥ जि हलति पलति हरि होइ सखाई ॥१॥रहाउ ॥
ਸਤਸੰਗਤੀ ਸੰਗਿ ਹਰਿ ਧਨੁ ਖਟੀਐ ਹੋਰ ਥੈ ਹੋਰਤੁ ਉਪਾਇ ਹਰਿ ਧਨੁ ਕਿਤੈ ਨ ਪਾਈ ॥ ਹਰਿ ਰਤਨੈ ਕਾ ਵਾਪਾਰੀਆ ਹਰਿ ਰਤਨ ਧਨੁ ਵਿਹਾਝੇ ਕਚੈ ਕੇ ਵਾਪਾਰੀਏ ਵਾਕਿ ਹਰਿ ਧਨੁ ਲਇਆ ਨ ਜਾਈ ॥੨॥	सतसँगती सँगि हरि धनु खटीऐ होर थै होरतु उपाइ हरि धनु कितै न पाई ॥ हरि रतनै का वापारीआ हरि रतन धनु विहाझे कचै के वापारीऐ वाकि हरि धनु लइआ न जाई ॥२॥
ਹਰਿ ਧਨੁ ਰਤਨੁ ਜਵੇਹਰੁ ਮਾਣਕੁ ਹਰਿ ਧਨੈ ਨਾਲਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਵੇਲੈ ਵਤੈ ਹਰਿ ਭਗਤੀ ਹਰਿ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥ ਹਰਿ ਧਨੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਵੇਲੈ ਵਤੈ ਕਾ ਬੀਜਿਆ ਭਗਤ ਖਾਇ ਖਰਚਿ ਰਹੇ ਨਿਖੁਟੈ ਨਾਹੀ ॥ ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਹਰਿ ਧਨੈ ਕੀ ਭਗਤਾ ਕਉ ਮਿਲੀ ਵਡਿਆਈ ॥੩॥	हरि धनु रतनु जवेहरु माणकु हरि धनै नालि अँमृत वेलै वतै हरि भगती हरि लिव लाई ॥ हरि धनु अँमृत वेलै वतै का बीजिआ भगत खाइ खरचि रहे निखुटै नाही ॥ हलति पलति हरि धनै की भगता कउ मिली वडिआई ॥३॥
ਹਰਿ ਧਨੁ ਨਿਰਭਉ ਸਦਾ ਸਦਾ ਅਸਥਿਰੁ ਹੈ ਸਾਚਾ ਇਹੁ ਹਰਿ ਧਨੁ ਅਗਨੀ ॥ ਤਸਕਰੈ ਪਾਣੀਐ ਜਮਦੂਤੈ ਕਿਸੈ ਕਾ ਗਵਾਇਆ ਨ ਜਾਈ ॥ ਹਰਿ ਧਨ ਕਉ ਉਚਕਾ ਨੇੜਿ ਨ ਆਵਈ ਜਮੁ ਜਾਗਾਤੀ ਡੰਡੁ ਨ ਲਗਾਈ ॥੪॥	हरि धनु निरभउ सदा सदा असथिरु है साचा इहु हरि धनु अगनी ॥ तसकरै पाणीऐ जमदूतै किसै का गवाइआ न जाई ॥ हरि धन कउ उचका नेड़ि न आवई जमु जागाती डँडु न लगाई ॥४॥
ਸਾਕਤੀ ਪਾਪ ਕਰਿ ਕੈ ਬਿਖਿਆ ਧਨੁ ਸੰਚਿਆ ਤਿਨਾ ਇਕ ਵਿਖ ਨਾਲਿ ਨ ਜਾਈ ॥ ਹਲਤੈ ਵਿਚਿ ਸਾਕਤ ਦੁਹੇਲੇ ਭਏ ਹਥਹੁ ਛੁੜਕਿ ਗਇਆ ਅਗੈ ਪਲਤਿ ਸਾਕਤੁ ਹਰਿ ਦਰਗਹ ਢੋਈ ਨ ਪਾਈ ॥੫॥	साकती पाप करि कै बिखिआ धनु सँचिआ तिना इक विख नालि न जाई ॥ हलतै विचि साकत दुहेले भए हथहु छुड़कि गइआ अगै पलति साकतु हरि दरगहि ढोई न पाई ॥५॥
ਇਸੁ ਹਰਿ ਧਨ ਕਾ ਸਾਹੁ ਹਰਿ ਆਪਿ ਹੈ ਸੰਤਹੁ ਜਿਸ ਨੋ ਦੇਇ ਸੁ ਹਰਿ ਧਨੁ ਲਦਿ ਚਲਾਈ ॥ ਇਸੁ ਹਰਿ ਧਨੈ ਕਾ ਤੋਟਾ ਕਦੇ ਨ ਆਵਈ ਜਨ ਨਾਨਕ ਕਉ ਗੁਰਿ ਸੋਝੀ ਪਾਈ ॥੬॥੩॥੧੦॥	इसु हरि धन का साहु हरि आपि है सँतहु जिस नो देइ सु हरि धनु लदि चलाई ॥ इसु हरि धनै का तोटा कदे न आवई जन नानक कउ गुरि सोझी पाई ॥६॥३॥१०॥

सूही महला – ४

हमारे में से अधिकतम लोग इस विचार से धन दौलत संचित करते हैं, अथवा मित्रों एवं सम्बंधियों के निकट रहने का प्रयत्न करते हैं कि किसी आपदा के समय वह उन पर आश्रित रह सकें। परन्तु, बहुतों का यह अनुभव है कि किसी ऐसी स्थिति आने पर धन चोरी अथवा समाप्त हो चुका होता है और मित्र सम्बंधी कई बार सहायक बन नहीं पाते, अथवा सहायक बनना नहीं चाहते। अतः, गुरु जी इस शब्द में दूसरे प्रकार के धन का वर्णन करते हैं, जिसे कोई चोर नहीं ले जा सकता, उस पर कर नहीं लग सकता, अथवा किसी प्रकार की प्राकृतिक आपदा में वह नष्ट नहीं हो सकता। गुरु जी एक ऐसे मित्र का वर्णन भी करते हैं जिसे हम जहाँ और जब भी स्मरण करें, वह सदैव हमारी सहायता करता है।

पहले उस मित्र के लिये गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), जहाँ कहीं भी हम हरि की आराधना करते हैं वह हरि वहीं हमारे मित्र के रूप में सहायक होते हैं। किन्तु, केवल गुरु की कृपा से ही हरि हमारे मन में आकर बसते हैं, किसी और विधि से उन्हें प्राप्त नहीं किया जा सकता"।(१)

आगे वह बताते हैं कि किस प्रकार का धन हमें संचित करने का प्रयास करना चाहिये । वह कहते हैं " हे' मेरे भाइयो, हरि नाम रूपी धन का संचय करो, जो हरि हमें लोक तथा परलोक दोनों स्थान पर सखा की भाँति सहायक है "।(१-विराम)

अब गुरु जी हमें यह बताते हैं कि हम कैसे और कहाँ से प्रभु नाम रूपी धन प्राप्त कर सकते हैं । वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), संतों की संगति में हम हरि नाम रूपी धन अर्जित कर सकते हैं, किसी और जगह अथवा किसी भी और उपाय से इस हरि धन को नहीं पाया जा सकता है ।केवल हरि नाम रूपी रत्नों का व्यापारी ही हरि नाम रूपी रत्नों को ख़रीदता है, जबकि एक कच्चा (सांसारिक सम्पदा का) व्यापारी वाचालता के द्वारा हरि नाम रूपी धन का व्यापार तो करता है किन्तु, उससे यह धन प्राप्त नहीं किया जा सकता । (दूसरे शब्दों में, सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन पर संतों की सँगति में प्रभु नाम के गुणगान के द्वारा हम प्रभुनाम रूपी धन का उपार्जन कर सकते हैं जो झूठे पाखंडी संतों की मीठी वाचालता को सुन कर नहीं मिल सकता ")।(२)

अब गुरु जी हमें बताते हैं कि प्रभु नाम की सम्पदा कितनी मान्य तथा अनमोल है और हम किस प्रकार से प्रचुर मात्रा में इसे संजो कर इसका आनंद ले सकते हैं ।वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), हरि नाम का धन कई रत्नों, लाल, हीरे मोती जैसा बहुमूल्य है, अतः, भोर के अँमृतमयी समय पर हरि के भक्त स्वयं को उसकी भक्ति में लीन कर लेते हैं । प्रातः काल के समय हरि नाम रूपी धन का बोया बीज (इतनी प्रचुर मात्रा में उग जाता है कि) भक्त कितना भी उसे प्रयोग करलें, खा लें, (अपने तथा अन्य लोगों के आत्मिक उद्धार के लिये) खर्च करलें, वह कभी समाप्त नहीं होता । अतः, हरि नाम रूपी धन के कारण भक्त जनों को लोक तथा परलोक दोनों में प्रतिष्ठा प्राप्त होती है "।(३)

हरि नाम रूपी धन के एक और अनूठे गुण का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), हरि नाम के धन को किसी प्रकार का भय नहीं है, यह स्थिर है एवं सदैवी है । यह सच्चा हरि नाम का धन अग्नि, जल, तस्करी, यमदूत आदि, किसी भी प्रकार से गँवाया नहीं जा सकता । इस हरि धन को लेने कोई उच्चका भी निकट नहीं आ सकता और ना ही यमराज इस पर किसी प्रकार का हर्ज़ाना लगा सकते हैं (अर्थात, इसके गुणों को निरर्थक कर सकते हैं) "।(४)

सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य के पुजारी, जो धन का संचय करने के लिये कुकर्म करने से भी पीछे नहीं हटते, उनके भाग्य पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), माया और सामर्थ्य के पुजारी पापकर्म करके विष रूपी धन का संचय करते हैं, जो उनके साथ (मृत्यु के समय) एक पग भी नहीं चलता । (वास्तव में) माया के ऐसे पुजारी इस लोक में अति व्याकुल होते हैं, जब यह माया कई प्रकार के कारणों से (जैसे बजार में मंदी, व्यापार में घाटा, चोरी व अन्य प्राकृतिक आपदाओं आदि से) उनके हाथों में से छुट जाती है और परलोक में भी हरि के द्वार पर ठिकाना नहीं पाते "।(५)

शब्द के अंत में गुरु जी हरि नाम रूपी धन के एक अति विशिष्ट गुण का वर्णन करते हुये कहते हैं "हे' मेरे प्रिय संत जनों, हरि स्वयं ही हरि नाम रूपी धन का साहूकार है, वह इसे जिसको भी देता है वही केवल इस हरि नाम के धन को लाद कर ले जाता है ।(संक्षेप में) हरि नाम का धन कभी कम नहीं पड़ता और यह विचारशक्ति अथवा सूझ बूझ भक्त नानक ने गुरु से प्राप्त की है "।(६-३-१०)

इस शब्द का संदेश इस प्रकार है कि यदि हम यह निश्चित करना चाहते हैं कि हमारे पास ऐसा धन हो जो केवल इस जन्म में ही हमारा सहायक ना बने, अपितु, मृत्यु के पश्चात भी हमारे लिये उपयोगी हो तो हमें सांसारिक धन सम्पदा का संचय अथवा मित्र सम्बंधियों का सहारा लेने की अपेक्षा प्रभु नाम के धन को अर्जित करके एकत्र करने का प्रयत्न करना चाहिये । यह धन सदा हमारे साथ चलेगा, कभी समाप्त नहीं होगा और लोक तथा परलोक में हमें इससे यश प्राप्त होगा । हरि नाम रूपी धन का उपार्जन हम संत जनों की संगति में गुरु के आदेशानुसार प्रभु के गुणगान तथा उसके नाम का ध्यान करने से कर सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੭੩੫	पृ-७३५
ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥	**सूही महला ४॥**
ਜਿਨ ਕੈ ਅੰਤਰਿ ਵਸਿਆ ਮੇਰਾ ਹਰਿ ਹਰਿ ਤਿਨ ਕੇ ਸਭਿ ਰੋਗ ਗਵਾਏ ॥ ਤੇ ਮੁਕਤ ਭਏ ਜਿਨ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਆ ਤਿਨ ਪਵਿਤੁ ਪਰਮ ਪਦੁ ਪਾਏ ॥੧॥	जिन कै अँतरि वसिआ मेरा हरि हरि तिन के सभि रोग गवाए ॥ ते मुकत भए जिन हरि नामु धिआइआ तिन पवितु परम पदु पाए ॥१॥
ਮੇਰੇ ਰਾਮ ਹਰਿ ਜਨ ਆਰੋਗ ਭਏ ॥ ਗੁਰ ਬਚਨੀ ਜਿਨਾ ਜਪਿਆ ਮੇਰਾ ਹਰਿ ਹਰਿ ਤਿਨ ਕੇ ਹਉਮੈ ਰੋਗ ਗਏ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मेरे राम हरि जन आरोग भए ॥ गुर बचनी जिना जपिआ मेरा हरि हरि तिन के हउमै रोग गए ॥१॥ रहाउ॥
ਬ੍ਰਹਮਾ ਬਿਸਨੁ ਮਹਾਦੇਉ ਤ੍ਰੈ ਗੁਣ ਰੋਗੀ ਵਿਚਿ ਹਉਮੈ ਕਾਰ ਕਮਾਈ ॥ ਜਿਨਿ ਕੀਏ ਤਿਸਹਿ ਨ ਚੇਤਹਿ ਬਪੁੜੇ ਹਰਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਸੋਝੀ ਪਾਈ ॥੨॥	बृहमा बिसनु महादेउ त्रै गुण रोगी विचि हउमै कार कमाई ॥ जिनि कीए तिसहि न चेतहि बपुड़े हरि गुरमुखि सोझी पाई ॥२॥
ਹਉਮੈ ਰੋਗਿ ਸਭੁ ਜਗਤੁ ਬਿਆਪਿਆ ਤਿਨ ਕਉ ਜਨਮ ਮਰਣ ਦੁਖੁ ਭਾਰੀ ॥	हउमै रोगि सभु जगतु बिआपिआ तिन कउ जनम मरण दुखु भारी ॥
ਪੰਨਾ ੭੩੬	पृ-७३६
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਕੋ ਵਿਰਲਾ ਛੂਟੈ ਤਿਸੁ ਜਨ ਕਉ ਹਉ ਬਲਿਹਾਰੀ ॥੩॥	गुर परसादी को विरला छूटै तिसु जन कउ हउ बलिहारी ॥३॥
ਜਿਨਿ ਸਿਸਟਿ ਸਾਜੀ ਸੋਈ ਹਰਿ ਜਾਣੈ ਤਾ ਕਾ ਰੂਪੁ ਅਪਾਰੋ ॥ ਨਾਨਕ ਆਪੇ ਵੇਖਿ ਹਰਿ ਬਿਗਸੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਬ੍ਰਹਮ ਬੀਚਾਰੋ ॥੪॥੩॥੧੪॥	जिनि सिसटि साजी सोई हरि जाणै ता का रूपु अपारो ॥ नानक आपे वेखि हरि बिगसै गुरमुखि ब्रहम बीचारो ॥४॥३॥१४॥

सूही महला – ४

इस शब्द में गुरु जी हमें समझाते हैं कि जब कोई गुरु के आदेश को मान कर हरि नाम का ध्यान करता है और हरि उसके हृदय में आ बिराजते हैं तब उसे किस प्रकार के वरदान प्राप्त होते हैं ।

वह सार्वजनिक रूप से कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), जिनके अँतरमन में मेरे हरि बस गये हैं उनके समस्त रोग अथवा दुख हरि ने दूर कर दिये हैं । जिन्होंने भी हरि नाम का ध्यान किया है वह मोक्ष पा गये हैं और उन्होंने (प्रभु से एक होने पर) पवित्र परम पद प्राप्त कर लिया है "।(१)

जो लोग अहम के रोग (मानव जीवन के कष्टों का मूल कारण) से मुक्त हैं उनके लिये गुरु जी कहते हैं " हे' मेरे राम, तुम्हारे भक्त (अहम के रोग से) आरोग्य हो चुके हैं । हाँ, गुरु के वचनों का पालन कर जिन्होंने भी मेरे हरि का जाप किया उनके मन में से अहम के रोग चले गये "।(१-विराम)

गुरु जी अब यह बताते हैं कि देवतागण भी इस अहम के रोग से मुक्त नहीं हैं । वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), तीनों देवतागण, ब्रह्मा, विष्णु तथा महादेव भी (जो क्रमशः ब्रह्मांड के सृजन, पालन तथा प्रलय के अधिकारी माने जाते हैं) तीनों सांसारिक प्रवृत्तियों (पाप, पुण्य, सामर्थ्य) तथा अहम के रोग से ग्रसित होकर अपना कार्य करते रहे । इन बेचारों ने (कष्ट पाये, क्योंकि) उस हरि को नहीं स्मरण रखा जिसका किया सब कुछ है । केवल गुरु की शिक्षा का पालन करने वाले ही हरि के विषय में सही सूझ बूझ पाते हैं " ।(२)

अतः गुरु जी विचार प्रकट करते हैं " (हे' मेरे मित्रो), समस्त संसार में अहम का रोग व्याप्त है, इसलिये, सभी जन्म मरण के भारी दुखों से संतप्त हैं ।कोई बिरला ही गुरु की कृपा से (इस अहम के रोग से) छुटा हुया है और ऐसे भक्त जन पर मैं बलिहारी हूँ "।(३)

शब्द का अंत गुरु जी यह कहते हुये करते हैं "(हे' मेरे मित्रो), जिसने इस सृष्टि का सृजन किया और सजाया सँवारा, केवल वही हरि जानता है (कि ऐसा क्यों है), उस हरि का रूप अपार है, असीमित है । हे' नानक, वह हरि स्वयं ही (अपनी रचना को) देख कर प्रफुल्लित होते हैं । गुरु की कृपा के द्वारा ही किसी को दैवी विचारों के प्रति बुद्धि प्राप्त होती है "।(४-३-१४)

इस शब्द का संदेश यह है कि केवल मनुष्य ही नहीं, अपितु, देवतागण भी अहम के रोग से पीड़ित हैं और इसी रोग के कारण हर कोई जन्म मरण के कष्टों को भोग रहा है । यदि हम इस रोग से मुक्ति पाना चाहते हैं तो हमें गुरु की शिक्षा का पालन और प्रभु नाम का ध्यान करने की आवश्यकता है । केवल तभी हमारा अहम नष्ट होगा और हम प्रभु के साथ एक रूप होकर परम पद पायेंगे ।

ਪੰਨਾ ੭੩੭

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਉਮਕਿਓ ਹੀਉ ਮਿਲਨ ਪ੍ਰਭ ਤਾਈ ॥
ਖੋਜਤ ਚਰਿਓ ਦੇਖਉ ਪ੍ਰਿਅ ਜਾਈ ॥
ਸੁਨਤ ਸਦੇਸਰੋ ਪ੍ਰਿਅ ਗ੍ਰਿਹਿ ਸੇਜ ਵਿਛਾਈ ॥
ਭ੍ਰਮਿ ਭ੍ਰਮਿ ਆਇਓ ਤਉ ਨਦਰਿ ਨ ਪਾਈ ॥੧॥

ਕਿਨ ਬਿਧਿ ਹੀਅਰੋ ਧੀਰੈ ਨਿਮਾਨੋ ॥
ਮਿਲੁ ਸਾਜਨ ਹਉ ਤੁਝੁ ਕੁਰਬਾਨੋ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਏਕਾ ਸੇਜ ਵਿਛੀ ਧਨ ਕੰਤਾ ॥
ਧਨ ਸੂਤੀ ਪਿਰੁ ਸਦ ਜਾਗੰਤਾ ॥
ਪੀਓ ਮਦਰੋ ਧਨ ਮਤਵੰਤਾ ॥
ਧਨ ਜਾਗੈ ਜੇ ਪਿਰੁ ਬੋਲੰਤਾ ॥੨॥

ਭਈ ਨਿਰਾਸੀ ਬਹੁਤੁ ਦਿਨ ਲਾਗੇ ॥
ਦੇਸ ਦਿਸੰਤਰ ਮੈ ਸਗਲੇ ਝਾਗੇ ॥

ਪੰਨਾ ੭੩੮

ਖਿਨੁ ਰਹਨੁ ਨ ਪਾਵਉ ਬਿਨੁ ਪਗ ਪਾਗੇ ॥
ਹੋਇ ਕ੍ਰਿਪਾਲੁ ਪ੍ਰਭ ਮਿਲਹ ਸਭਾਗੇ ॥੩॥

ਭਇਓ ਕ੍ਰਿਪਾਲੁ ਸਤਸੰਗਿ ਮਿਲਾਇਆ ॥
ਬੂਝੀ ਤਪਤਿ ਘਰਹਿ ਪਿਰੁ ਪਾਇਆ ॥
ਸਗਲ ਸੀਗਾਰ ਹੁਣਿ ਮੁਝਹਿ ਸੁਹਾਇਆ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਗੁਰਿ ਭਰਮੁ ਚੁਕਾਇਆ ॥੪॥

ਜਹ ਦੇਖਾ ਤਹ ਪਿਰੁ ਹੈ ਭਾਈ ॥
ਖੋਲ੍ਹਿਓ ਕਪਾਟੁ ਤਾ ਮਨੁ ਠਹਰਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ਦੂਜਾ ॥੫॥

पृ-७३७

सूही महला ५॥

उमकिओ हीउ मिलन प्रभ ताई ॥
खोजत चरिओ देखउ प्रिय जाई ॥
सुनत सदेसरो प्रिय ग्रिहि सेज विछाई ॥
भ्रमि भ्रमि आइओ तउ नदरि न पाई ॥१॥

किन बिधि हीअरो धीरै निमानो ॥
मिलु साजन हउ तुझु कुरबानो ॥१॥रहाउ॥

एका सेज विछी धन कँता ॥
धन सूती पिरु सद जागँता ॥
पीओ मदरो धन मतवँता ॥
धन जागै जे पिरु बोलँता ॥२॥

भई निरासी बहुतु दिन लागे ॥
देस दिसँतर मै सगले झागे ॥

पृ-७३८

खिनु रहनु न पावउ बिनु पग पागे ॥
होइ किृपाल प्रभ मिलह सभागे ॥३॥

भइओ किृपाल सतसँगि मिलाइआ ॥
बूझी तपति घरहि पिरु पाइआ ॥
सगल सीगार हुणि मुझहि सुहाइआ ॥
कहु नानक गुरि भरमु चुकाइआ ॥४॥

जह देखा तह पिरु है भाई ॥
खोलिओ कपाटु ता मनु ठहराई ॥१॥ रहाउ दूजा ॥५॥

सूही महला – ५

यह शब्द गुरु जी की काव्य कल्पना की एक और प्रमुख रचना है । यहाँ पर वह मानव आत्मा की तुलना एक ऐसी वधू से करते हैं जो प्रभु के प्रेम में उसे सुदूर स्थानों पर खोजने के प्रयत्न तो करती है पर वह सांसारिक मोह माया के मद में उन्मादित अपनी सुध में नहीं रहती और कष्ट पाती है । यहाँ दुर्भाग्य की बात यह है कि उसका पति (प्रभु) उसी की सेज पर है पर वह वधू (मानव आत्मा) अपने मद में इतनी बेसुध है कि पति (प्रभु) को पहचान नहीं पाती । यह तो तभी हो सकता है जब उसका पति (प्रभु) उसे जगाये और वह अपनी निद्रा में से उठ कर पति को देखे और पहचाने । केवल तभी वह उससे मिलन का सुख और आनंद पा सकती है ।

मानव आत्मा के उक्त रूपक का उपयोग करते हुये गुरु जी कहते हैं " प्रभु से मिलने के लिये मेरा हृदय अति उत्कंठित है । इसलिये, मैं अपने प्रियतम को देखने के लिये उसे खोजने निकली हूँ । अपने प्रिय (के आने) का संदेसा सुनते ही मैंने स्वागत के लिये अपने घर (हृदय) में सेज बिछाई । परन्तु, उसकी खोज में इधर उधर (जंगलों, तीर्थ स्थानों आदि में) भ्रमण करने के पश्चात भी उसे देख नहीं पाई "।(१)

अतः, अत्यंत पीड़ा एवं वेदना के साथ आत्मा रूपी वधू रुदन करती है और कहती है "(हे' मेरे प्रियतम), किस विधि से मेरा यह संतप्त हृदय धैर्य पाये, हे' मेरे प्रिय, (कृपया), मुझे आकर मिलो, मैं तुझ पर बलिहारी हूँ "।(१- विराम)

मानव आत्मा रूपी वधू एवं उसके पति (प्रभु) के बीच जो दुखद स्थित है, उसका चित्रण करते हुये गुरु जी कहते हैं " केवल एक ही सेज (हृदय में) दोनों, मानव आत्मा रूपी वधू एवं उसके पति के लिये बिछी हुयी है । किन्तु, वधू सो रही है और पति सदा जागते रहते हैं । क्योंकि, वधू (अहम की) मदिरा को पीकर उसके उन्माद में बेसुध है, परन्तु, वह वधू जाग सकती है यदि प्रियतम (प्रभु) उसे स्वयं बोल कर जगा दें

"।(२)

परन्तु, जिस समय तक प्रभु उसे न बुलायें, वह वधू (आत्मा) जंगलों, पर्वतों तथा तीर्थ स्थानों में भटकती फिरती है और अपने प्रियतम प्रभु को कहीं नहीं मिल पाती । इसलिये, उस अभागी वधू (आत्मा) की ओर से गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे प्रिय प्रभु), बहुत दिन हो गये हैं (तुमसे मिली नहीं) अतः, मैं अति निराश हूँ । मैं अनेक देश विदेशों में सभी जगह देख चुकी (पर तुम्हें नहीं पा सकी) । (हे' मेरे प्रियतम), मैं एक क्षण भी तुम्हारे चरण पखारे बिना रह नहीं सकती । हे' प्रभु, यह मेरा सौभाग्य होगा यदि तुम कृपालु होकर मुझे मिलो "।(३)

आत्मा रूपी वधू की प्रेममयी तथा निष्कप्ट प्रार्थना के परिणाम पर गुरु जी कहते हैं "(मेरी प्रार्थना सुन कर, प्रभु) मेरे पर दयालु हो गये और मुझे (गुरु अथवा संतों की) सच्ची संगति से मिला दिया । तत्पश्चात, मेरी (सांसारिक इच्छाओं रूपी) अग्नि की तपन शांत हो गयी और मैंने अपने ही घर (हृदय) में प्रियतम (प्रभु) को पा लिया । नानक कहते हैं, गुरु ने मेरे सारे भ्रम चुका दिये हैं और अब मुझे अपने समस्त श्रृंगार (आत्मिक विशेषतायें) स्वयं पर सुहावने दिखते हैं "।(४)

शब्द के अंत में, गुरु जी प्रिय प्रभु को देखने के पश्चात अपनी मनोदशा का वर्णन करते हुये कहते हैं " जब गुरु ने कपाट खोले (भ्रमों के आवरण को मन में से हटाया) तो मेरे मन को ठहराव आ गया और अब हे' भाई, जहाँ भी देखता हूँ वहीं पर मेरा प्रिय (प्रभु) होता है "।(१-दूसरा विराम-५)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु के साथ एक होकर परम आनंद पाना चाहते हैं तो हमें संतों की संगति में जाकर गुरु के आदेश लेने चाहिये । उन आदेशों के आधार पर हमें सांसारिक मोहमाया, सामर्थ्य एवं इच्छायों के विष से अपने मन को मुक्त करना चाहिये । तब गुरु हमारे समस्त भ्रम दूर कर देंगे और हमें अपने हृदय में ही प्रभु को पाने के लिए सहायता करेंगे ।तत्पश्चात, हम अपने मन के अंदर, अपने सम्मुख और अपने चारों ओर परम आनंदित करने वाली प्रभु की छवि को पाकर सदैव आनंदित रहेंगे ।

ਪੰਨਾ ੭੩੯

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਜਾ ਕੈ ਦਰਸਿ ਪਾਪ ਕੋਟਿ ਉਤਾਰੇ ॥
ਭੇਟਤ ਸੰਗਿ ਇਹੁ ਭਵਜਲੁ ਤਾਰੇ ॥੧॥

ਓਇ ਸਾਜਨ ਓਇ ਮੀਤ ਪਿਆਰੇ ॥
ਜੋ ਹਮ ਕਉ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਚਿਤਾਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਾ ਕਾ ਸਬਦੁ ਸੁਨਤ ਸੁਖ ਸਾਰੇ ॥
ਜਾ ਕੀ ਟਹਲ ਜਮਦੂਤ ਬਿਦਾਰੇ ॥੨॥

ਜਾ ਕੀ ਧੀਰਕ ਇਸੁ ਮਨਹਿ ਸਧਾਰੇ ॥
ਜਾ ਕੈ ਸਿਮਰਣਿ ਮੁਖ ਉਜਲਾਰੇ ॥੩॥

ਪ੍ਰਭ ਕੇ ਸੇਵਕ ਪ੍ਰਭਿ ਆਪਿ ਸਵਾਰੇ ॥
ਸਰਣਿਨਾਨਕ ਤਿਨ੍ ਸਦ ਬਲਿਹਾਰੇ ॥੪॥੭॥੧੩॥

पृ-७३९

सूही महला ५॥

जा कै दरसि पाप कोटि उतारे ॥
भेटत सँगि इहु भवजलु तारे ॥१॥

ओइ साजन ओइ मीत पिआरे ॥
जो हम कउ हरि नामु चितारे ॥१॥रहाउ॥

जा का सबदु सुनत सुख सारे ॥
जा की टहल जमदूत बिदारे ॥२॥

जा की धीरक इसु मनहि सधारे ॥
जा कै सिमरणि मुख उजलारे ॥३॥

प्रभ के सेवक प्रभि आपि सवारे ॥
सरणिनानक तिन् सद बलिहारे ॥४॥७॥१३॥

सूही महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमें बता रहे हैं कि वह किन लोगों को अपना परम प्रिय मित्र मानते हैं और अपने मन में उनके लिए कितना प्रेम और आदरभाव रखते हैं ।

वह कहते हैं "वह (मेरे अंतरंग मित्र है) जिनकी एक झलक अथवा दर्शन से करोड़ों पाप उतर जाते हैं और जिनसे भेंट होने पर यह भवसागर पार हो जाता है "।(१)

गुरु जी आगे कहते हैं "हाँ वह मेरे शुभचिंतक हैं और मेरे परम प्रिय मित्र हैं, जो हमें हरि का नाम स्मरण करवाते हैं "। (१- विराम)

अपने मित्रों की नैतिक योग्यतायों के विषय पर आगे गुरु जी कहते हैं "वह (संत मेरे मित्र हैं) जिनके शब्द (गुरबाणी) सुन कर समस्त सुख मिलते हैं और जिनकी सेवा करने से यमदूत भी दूर रहते हैं "।(२)

किन्तु, केवल इतना ही नहीं, गुरु जी कहते हैं " वह (संत मेरे मित्र हैं) जो इतना धैर्य देते हैं कि यह मेरा मन सुखी एवं सधा रहता है और (उनकी संगति में प्रभु का) ध्यान करने से मुख उजला होता है (सम्मान प्राप्त होता है) "।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु स्वयं अपने सेवकों (भक्तजनों) को सजाते सँवारते हैं । नानक उनकी शरण में रह कर सदैव उन पर बलिहारी हैं "।(४-७-१३)

इस शब्द का संदेश यह है कि सांसारिक अथवा व्यवहारिक मनुष्यों का अनुसरण करने की अपेक्षा, हम प्रभु के भक्त अथवा संतों से मित्रता करें और उनकी शरण में रह कर प्रभु के नाम का ध्यान करना सीखें, जिससे कि उनकी सँगति में प्रभु के गुणगान करते हुए अपने समस्त भय और भ्रम को त्याग कर दैवी सुख शांति का आनंद प्राप्त करें ।

ਪੰਨਾ ੭੪੧

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਗੁਰ ਅਪੁਨੇ ਊਪਰਿ ਬਲਿ ਜਾਈਐ ॥
ਆਠ ਪਹਰ ਹਰਿ ਹਰਿ ਜਸੁ ਗਾਈਐ ॥੧॥

ਸਿਮਰਉ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਅਪਨਾ ਸੁਆਮੀ ॥
ਸਗਲ ਘਟਾ ਕਾ ਅੰਤਰਜਾਮੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਚਰਣ ਕਮਲ ਸਿਉ ਲਾਗੀ ਪ੍ਰੀਤਿ ॥
ਸਾਚੀ ਪੂਰਨ ਨਿਰਮਲ ਰੀਤਿ ॥੨॥

ਸੰਤ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ਵਸੈ ਮਨ ਮਾਹੀ ॥
ਜਨਮ ਜਨਮ ਕੇ ਕਿਲਵਿਖ ਜਾਹੀ ॥੩॥

ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਪ੍ਰਭ ਦੀਨ ਦਇਆਲਾ ॥
ਨਾਨਕੁ ਮਾਗੈਸੰਤ ਰਵਾਲਾ ॥੪॥੧੭॥੨੩॥

पृ-७४१

सूही महला ५॥

गुर अपुने ऊपरि बलि जाईऐ ॥
आठ पहर हरि हरि जसु गाईऐ ॥१॥

सिमरउ सो प्रभु अपना सुआमी ॥
सगल घटा का अँतरजामी ॥१॥रहाउ॥

चरण कमल सिउ लागी प्रीति ॥
साची पूरन निरमल रीति ॥२॥

सँत प्रसादि वसै मन माही ॥
जनम जनम के किलविख जाही ॥३॥

करि किरपा प्रभ दीन दइआला ॥
नानकु मागैसँत रवाला ॥४॥१७॥२३॥

सूही महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमें अपने गुरु के पूर्ण सम्मान तथा उसके आदेशों का पालन करने के महत्व पर प्रभावित रूप से कह रहे हैं । वह हमसे यह भी साझा करते हैं कि वह स्वयं इस प्रक्रिया को कैसे करते हैं और उन्हें किस प्रकार के वरदान प्राप्त हुये हैं ।

वह कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), हमें अपने गुरु पर सदा बलिहारी रहना चाहिये तथा (उसके आदेशों का पालन करते हुये) आठों पहर हरि के यश का गायन करना चाहिये "।(१)

वह स्वयं क्या करते हैं, इस पर गुरु जी का कथन है "(हे' मेरे मित्रो), मैं उस प्रभु अथवा अपने स्वामी का सिमरन करता हूँ जो सभी जीवों का अँतरयामी है "।(१-विराम)

अपनी वर्तमान मनोदशा पर गुरु जी का कहना है "(हे' मेरे मित्रो, गुरु की कृपा से) मुझे प्रभु के चरण कमलों से अत्यंत प्रेम है और (प्रभु से मिलन के लिये) यह विधि पूर्ण रूप से निर्मल है "।(२)

संतों (गुरु) की कृपा से मिले वरदानों पर गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), संत (गुरु) की कृपा के द्वारा जिस मनुष्य के मन में प्रभु आकर बसने लग जाते हैं उसके जन्म जन्म के कष्ट एवं पापकर्म चले जाते हैं "।(३)

अतः, इस शब्द की समाप्ति पर गुरु जी प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं "हे' दीनदयालु प्रभु, अपनी कृपा करो, नानक तुमसे संतों की चरण धूलि (अति विनीत भावना से परिपूर्ण सेवा) की भिक्षा माँगते हैं "।(४-१७-२३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने समस्त जन्मों के पाप अथवा कुकर्मों को मिटाने के लिए प्रभु की शरण में जाना चाहते हैं तो हमें अपने गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) की सेवा के गुणों और मूल्यों को पहचानना चाहिए । यह सेवा अति विनीत भाव अथवा पूर्ण सम्मान और ध्यान के साथ गुरबाणी को श्रवण करने, विचारने और उसमें निहित आदेशों के पालन के द्वारा ही परिपूर्ण होती है ।

ਪੰਨਾ ੭੪੩

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਬਹਤੀ ਜਾਤ ਕਦੇ ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਨ ਧਾਰਤ ॥
ਮਿਥਿਆ ਮੋਹ ਬੰਧਹਿ ਨਿਤ ਪਾਰਚ ॥੧॥

ਮਾਧਵੇ ਭਜੁ ਦਿਨ ਨਿਤ ਰੈਣੀ ॥
ਜਨਮੁ ਪਦਾਰਥੁ ਜੀਤਿ ਹਰਿ ਸਰਣੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕਰਤ ਬਿਕਾਰ ਦੋਊ ਕਰ ਝਾਰਤ ॥
ਰਾਮ ਰਤਨੁ ਰਿਦ ਤਿਲੁ ਨਹੀ ਧਾਰਤ ॥੨॥

ਭਰਣ ਪੋਖਣ ਸੰਗਿ ਅਉਧ ਬਿਹਾਣੀ ॥

ਪੰਨਾ ੭੪੪

ਜੈ ਜਗਦੀਸ ਕੀ ਗਤਿ ਨਹੀ ਜਾਣੀ ॥੩॥

ਸਰਣਿ ਸਮਰਥ ਅਗੋਚਰ ਸੁਆਮੀ ॥
ਉਧਰੁ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭ ਅੰਤਰਜਾਮੀ ॥੪॥੨੭॥੩੩॥

पृ-७४३

सूही महला ५॥

बहती जात कदे दृिसटि न धारत ॥
मिथिआ मोह बँधहि नित पारच ॥१॥

माधवे भजु दिन नित रैणी ॥
जनमु पदारथु जीति हरि सरणी ॥१॥रहाउ॥

करत बिकार दोऊ कर झारत ॥
राम रतनु रिद तिलु नही धारत ॥ २॥

भरण पोखण सँगि अउध बिहाणी ॥

पृ-७४४

जै जगदीस की गति नही जाणी ॥३॥

सरणि समरथ अगोचर सुआमी ॥
उधरु नानक प्रभ अँतरजामी ॥४॥२७॥३३॥

सूही महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमें सतर्क करते हैं कि हमारा जीवन कितनी शीघ्रता से व्यतीत होता जा रहा है और जल्दी ही यह समाप्त हो सकता है । अतः, प्रभु, जिससे कि हम एक अंतराल से बिछुड़े हुये हैं, उसे पाने के इस दुर्लभ अवसर को कहीं हम गँवा न दें ।

हमारी सामान्य मनोदशा पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो, एक बहती हुयी नदी की भाँति) तुम्हारा जीवन चला जा रहा है, परन्तु, तुम कभी भी इसकी ओर नहीं देखते (जीवन के इस तथ्य पर विचार नहीं करते, अपितु, तुम अपने तन के) मिथ्या मोहपाश में सदा बँधे हुए हो जो कि तुम्हारी आत्मा के लिए मात्र एक वेश के समान है "।(१)

हमें क्या करना चाहिये, इस पर वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), दिन और रात नित्य ही सृष्टि के स्वामी का ध्यान और भजन करो और इस प्रकार उसकी शरण में जाकर जीवन के तथ्य पर विजय प्राप्त करो (अर्थात प्रभु के साथ जुड़ने का लक्ष्य पूर्ण करो)"।(१-विराम)

एक बार फिर से जीवन के सत्य को उघाड़ते हुए गुरु जी हमें कहते हैं (हे' मानव), तुम दोनों हाथ झाड़ कर सब प्रकार के कुकर्म करते जा रहे हो, परन्तु, राम के नाम रूपी रत्न को तिल भर भी हृदय में धारण करने का प्रयत्न नहीं करते (अथवा, तुम अपनी समस्त शक्ति और समय पापकर्मों में गँवा देते हो, परन्तु, प्रभु को स्मरण करने के लिये तुम्हारे पास एक क्षण का समय भी नहीं होता ") ।(२)

हमारी जीवन पद्धति पर आगे टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' मानव), तुम्हारी समस्त जीवन अवधि तुम्हारे शरीर के पालन पोषण में व्यतीत हो जाती है, परन्तु, तुमने कभी भी जय जयकारी जगत के स्वामी प्रभु की गति अथवा गुणों को जानने का प्रयत्न नहीं किया "।(३)

गुरु जी अपनी कृपा करते हुये हमें बताते है कि प्रभु से अपने कल्याण के लिये कैसे प्रार्थना करें ।वह कहते हैं " हे' शक्तिशाली, अगोचर, स्वामी, हे' अँतरयामी प्रभु, नानक तुम्हारी शरण में है कृपया उसका उद्धार करो "।(४-२७-३३)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें एक क्षण के लिए रुक कर स्वयं के आचरण को देखना परखना चाहिए कि हम किस प्रकार से धन सम्पदा एवं सत्ता की प्राप्ति के लिए अपने जीवन को विभिन्न जंजालों में उलझा कर व्यतीत करते रहते हैं । यह अच्छा रहेगा कि हम ऐसी भागदौड़ तथा उलझनों को तुरंत छोड़ कर प्रभु नाम के ध्यान पर स्वयं को केंद्रित करें, अन्यथा, क्या पता किसी दिन अचानक हम इस संसार से विदा ले लें और प्रभु मिलन के मुख्य अभिप्राय से कहीं हमारा यह मानव जन्म वंचित ही ना रह जाये ।

ਪੰਨਾ ੭੪੫

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਜਿਨਿ ਮੋਹੇ ਬ੍ਰਹਮੰਡ ਖੰਡ ਤਾਹੂ ਮਹਿ ਪਾਉ ॥
ਰਾਖਿ ਲੇਹੁ ਇਹੁ ਬਿਖਈ ਜੀਉ ਦੇਹੁ ਅਪੁਨਾ ਨਾਉ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਾ ਤੇ ਨਾਹੀ ਕੋ ਸੁਖੀ ਤਾ ਕੈ ਪਾਛੈ ਜਾਉ ॥
ਛੋਡਿ ਜਾਹਿ ਜੋ ਸਗਲ ਕਉ ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਲਪਟਾਉ ॥੧॥

ਕਰਹੁ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੁਣਾਪਤੇ ਤੇਰੇ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਉ ॥
ਨਾਨਕ ਕੀ ਪ੍ਰਭ ਬੇਨਤੀ ਸਾਧਸੰਗਿ ਸਮਾਉ ॥੨॥੩॥੪੩॥

प ७४५

सूही महला ५॥

जिनि मोहे ब्रहमँड खँड ताहू महि पाउ ॥
राखि लेहु इहु बिखई जीउ देहु अपुना नाउ ॥१॥रहाउ॥

जा ते नाही को सुखी ता कै पाछै जाउ ॥
छोडि जाहि जो सगल कउ फिरि फिरि लपटाउ ॥१॥

करहु क्रिपा करुणापते तेरे हरि गुण गाउ ॥
नानक की प्रभबेनती साधसँगि समाउ ॥२॥३॥४३॥

सूही महला – ५

इससे पूर्व के अनेक शब्दों में गुरु जी ने हमें समझाया है कि यदि हम वास्तव में शांतिमय तथा पूर्ण आनंद की स्थिति में रहना चाहते हैं तो हमें गुरु की शरण लेकर उसका निर्देश मानना चाहिये । परन्तु, हम इस प्रकार के उपदेशों को नहीं सुनते, अपितु, सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य के पीछे भागते रहते हैं और फिर कष्ट भोगते हैं । अतएव, गुरु जी स्वयं को हमारी स्थित में रखते हुये इस दशा पर टिप्पणी करते हैं और बताते हैं कि भटकी हुयी और गल्त राह से निकल कर सही मार्ग पर आने के लिये प्रभु से हम किस प्रकार से प्रार्थना करें ।

हमारी ओर से गुरु जी कहते हैं " (हे' प्रभु, यह माया) जिसने समस्त ब्रह्मांड तथा खंडों के लोगों को मोहपाश में ले रखा है, मैं भी उसी (मायाजाल) में पड़ा हुया हूँ । (हे' प्रभु), कृपा करके अपने नाम का दान देकर ऐसे विष युक्त जीव (मानव) की रक्षा करो "।(१-विराम)

इस स्थिति को और विस्तृत करते हुये गुरु जी (हमारी ओर से) स्वीकार करते हैं " (हे' प्रभु), जिस (माया के प्रभाव) से कोई भी सुखी नही है, उसी माया के पीछे मैं भी भाग रहा हूँ और (यह माया जो) अंत में सभी को छोड़ कर चली जाती है मैं उसके लिये बार बार लालायित होता हूँ "।(१)

इसलिये, गुरु जी शब्द के अंत में हमारी ओर से प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं " हे' करुणापति प्रभु, दया करो कि मैं तुम्हारे गुणों को गाऊँ । साधु संतों की पवित्र सँगति में समा जाने के लिए नानक प्रभु से विनती करते हैं "।(२-३-४३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम संसार के मायाजाल में उलझना नहीं चाहते और अपने मन को सांसारिक धन सम्पदा के लोभ से दूर रख कर आत्मिक रूप से धनाढ्य होना चाहते हैं तो हमें साधु संतों की पवित्र संगति का वरदान पाने के लिये प्रभु से विनती करनी चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੭੪੭	**पृ ७४७**
ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**सूही महला ५॥**
ਕਰਮ ਧਰਮ ਪਾਖੰਡ ਜੋ ਦੀਸਹਿ ਤਿਨ ਜਮੁ ਜਾਗਾਤੀ ਲੂਟੈ ॥ ਨਿਰਬਾਣ ਕੀਰਤਨੁ ਗਾਵਹੁ ਕਰਤੇ ਕਾ ਨਿਮਖ ਸਿਮਰਤ ਜਿਤੁ ਛੂਟੈ ॥੧॥	करम धरम पाखँड जो दीसहि तिन जमु जागाती लूटै ॥ निरबाण कीरतनु गावहु करते का निमख सिमरत जितु छूटै ॥१॥
ਸੰਤਹੁ ਸਾਗਰੁ ਪਾਰਿ ਉਤਰੀਐ ॥ ਜੇ ਕੋ ਬਚਨੁ ਕਮਾਵੈ ਸੰਤਨ ਕਾ ਸੋ ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਤਰੀਐ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	सँतहु सागरु पारि उतरीऐ ॥ जे को बचनु कमावै सँतन का सो गुर परसादी तरीऐ ॥१॥रहाउ॥
ਕੋਟਿ ਤੀਰਥ ਮਜਨ ਇਸਨਾਨਾ ਇਸੁ ਕਲਿ ਮਹਿ ਮੈਲੁ ਭਰੀਜੈ ॥ ਸਾਧਸੰਗਿ ਜੋ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ਸੋ ਨਿਰਮਲੁ ਕਰਿ ਲੀਜੈ ॥੨॥	कोटि तीरथ मजन इसनाना इसु कलि महि मैलु भरीजै ॥ साधसँगि जो हरि गुण गावै सो निरमलु करि लीजै ॥२॥
ਬੇਦ ਕਤੇਬ ਸਿਮ੍ਰਿਤਿ ਸਭਿ ਸਾਸਤ ਇਨ੍ਹ ਪੜਿਆ ਮੁਕਤਿ ਨ ਹੋਈ ॥ ਏਕੁ ਅਖਰੁ ਜੋ ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਪੈ ਤਿਸ ਕੀ ਨਿਰਮਲ ਸੋਈ ॥੩॥	बेद कतेब सिमृति सभि सासत इन् पड़िआ मुकति न होई ॥ एकु अखरु जो गुरमुखि जापै तिस की निरमल सोई ॥३॥
ਖਤ੍ਰੀ ਬ੍ਰਾਹਮਣ ਸੂਦ ਵੈਸ ਉਪਦੇਸੁ ਚਹੁ ਵਰਨਾ ਕਉ ਸਾਝਾ ॥	खत्री ब्राहमण सूद वैस उपदेसु चहु वरना कउ साझा ॥
ਪੰਨਾ ੭੪੮	**पृ ७४८**
ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਜਪੈ ਉਧਰੈ ਸੋ ਕਲਿ ਮਹਿ ਘਟਿ ਘਟਿ ਨਾਨਕ ਮਾਝਾ ॥੪॥੩॥੫੦॥	गुरमुखि नामु जपै उधरै सो कलि महि घटि घटि नानक माझा ॥४॥३॥५०॥

सूही महला – ५

इस शब्द में गुरु जी हमें सभी नियमों, शास्त्रीय विधियों तथा अन्य प्रक्रियायों से सतर्क करते हैं और चाहते हैं कि हम प्रभु के नाम पर ही एकाग्रचित्त होकर केवल उसका आश्रय लें, जो हमारे लिए उस तक पहुँचने की विश्वसनीय राह है ।

वह कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), वह समस्त शास्त्रीय विधियाँ, धार्मिक रीतियाँ, कर्मकांड एवं पाखँड जो संसार में दृष्टिगोचर हैं उन्हें यमदूत लूट कर ले जाते हैं (अर्थात, यह समस्त प्रक्रियायें हमें जन्म मरण के फेरों से नहीं बचा पायेंगी) । अतः, (सांसारिक इच्छायों से) निर्वाण लेकर उस सृजनहार प्रभु का यश गाओ, जिसका एक पल भर सिमरन करने से कोई भी (यमराज के फँदे से) छूट जाता है "।(१)

अपने उपदेश को पुनः दृढ़ करते हुये गुरु जी कहते हैं " हे' मेरे प्रिय संतों, (प्रभु नाम का ध्यान करने से) हम भवसागर को तैर कर पार लग जाते हैं । जो कोई भी संतों के वचन तथा विचारों का पालन करता है वह गुरु अथवा संतो की कृपा से पार हो जाता है "।(१- विराम)

अनेक जाने माने तीर्थ स्थानों पर स्नान करने की प्रथा पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), इस कलियुग में करोड़ों तीर्थ स्थानों पर स्नान करने से (पाप कर्मों का) मैल और भी अधिक भर जाता है । जबकि साधु संतों की सँगति में जो जन हरि के गुण गाता है वह स्वयं को पवित्र तथा निर्मल कर लेता है "।(२)

विभिन्न धर्मों के पवित्र ग्रंथ एवं पुस्तकें पढ़ने के विषय पर गुरु जी का कथन है " (हे' मेरे मित्रो), वेदों, कतेबों (मुस्लमान, यहूदी तथा ईसाई मत के धार्मिक ग्रंथ), तथा सभी स्मृतियों, शास्त्रों का अध्ययन करने से मोक्ष नहीं प्राप्त होता । (दूसरी ओर), जो कोई गुरु का शिष्य, गुरु की कृपा से एक अक्षर(१ओंकार) का पाठ पढ़ लेता है अथवा उसी का जाप करता है वही (लोक तथा परलोक में) शुद्ध एवं प्रतिष्ठित रहता है "।(३)

गुरु जी एक सार्वभौमिक संदेश देते हुये शब्द के अंत में कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), क्षत्री, ब्राह्मण, शूद्र और वैश्य चारों वर्णों में सभी के लिये एक साझा उपदेश है कि इस कलियुग में जो गुरु का शिष्य गुरु की कृपा से (प्रभु) नाम का जाप और ध्यान करता है उसका उद्धार हो जाता है और उसे, हे' नानक, प्रभु प्रत्येक हृदय में बसे दिखाई देते हैं "।(४-३-५०)

इस शब्द का संदेश यह है कि विभिन्न धार्मिक रीतियों, नियमों अथवा शास्त्रीय विधियों को सम्पन्न करने और धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन पर समय लगाने की अपेक्षा हमें प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये और यह स्मरण रखना चाहिये कि प्रभु प्रत्येक के हृदय में व्याप्त हैं । तभी केवल हम मोक्ष को प्राप्त कर सकेंगे ।

ਪੰਨਾ ੭੪੯

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਜਿਸ ਕੇ ਸਿਰ ਊਪਰਿ ਤੂੰ ਸੁਆਮੀ ਸੋ ਦੁਖੁ ਕੈਸਾ ਪਾਵੈ ॥
ਬੋਲਿ ਨ ਜਾਣੈ ਮਾਇਆ ਮਦਿ ਮਾਤਾ ਮਰਣਾ ਚੀਤਿ ਨ ਆਵੈ ॥੧॥

ਮੇਰੇ ਰਾਮ ਰਾਇ ਤੂੰ ਸੰਤਾ ਕਾ ਸੰਤ ਤੇਰੇ ॥

ਪੰਨਾ ੭੫੦

ਤੇਰੇ ਸੇਵਕ ਕਉ ਭਉ ਕਿਛੁ ਨਾਹੀ ਜਮੁ ਨਹੀ ਆਵੈ ਨੇਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜੋ ਤੇਰੈ ਰੰਗਿ ਰਾਤੇ ਸੁਆਮੀ ਤਿਨ੍ ਕਾ ਜਨਮ ਮਰਣ ਦੁਖੁ ਨਾਸਾ ॥
ਤੇਰੀ ਬਖਸ ਨ ਮੇਟੈ ਕੋਈ ਸਤਿਗੁਰ ਕਾ ਦਿਲਾਸਾ ॥੨॥

ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਨਿ ਸੁਖ ਫਲ ਪਾਇਨਿ ਆਠ ਪਹਰ ਆਰਾਧਹਿ ॥
ਤੇਰੀ ਸਰਣਿ ਤੇਰੈ ਭਰਵਾਸੈ ਪੰਚ ਦੁਸਟ ਲੈ ਸਾਧਹਿ ॥੩॥

ਗਿਆਨੁ ਧਿਆਨੁ ਕਿਛੁ ਕਰਮੁ ਨ ਜਾਣਾ ਸਾਰ ਨ ਜਾਣਾ ਤੇਰੀ ॥
ਸਭ ਤੇ ਵਡਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਨਾਨਕੁ ਜਿਨਿ ਕਲ ਰਾਖੀ ਮੇਰੀ ॥੪॥੧੦॥੫੭॥

पृ- ७४९

सूही महला ५॥

जिस के सिर ऊपरि तूँ सुआमी सो दुखु कैसा पावै ॥
बोलि न जाणै माइआ मद माता मरणा चीति न आवै ॥१॥

मेरे राम राइ तूँ सँता का सँत तेरे ॥

पृ ७५०

तेरे सेवक कउ भउ किछु नाही जमु नही आवै नेरे ॥१॥रहाउ॥

जो तेरै रँगि राते सुआमी तिन् का जनम मरण दुखु नासा ॥
तेरी बखस न मेटै कोई सतिगुर का दिलासा ॥२॥

नामु धिआइनि सुख फल पाइनि आठ पहर आराधहि ॥
तेरी सरणि तेरै भरवासै पँच दुसट लै साधहि ॥३॥

गिआनु धिआनु किछु करमु न जाणा सार न जाणा तेरी ॥
सभ ते वडा सतिगुरु नानकु जिनि कल राखी मेरी ॥४॥१०॥५७॥

सूही महला - ५

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि यदि हम ईश्वर को अपना सच्चा मित्र और रक्षक मानते हुये उस पर अपनी निष्ठा रखें तब हमें किस प्रकार के आशीर्वाद और कैसे आश्वासन प्राप्त होते हैं।

प्रभु के भक्तों की निष्ठा के विषय पर गुरु जी कहते हैं " हे' स्वामी, जिस (भक्त) के सिर के ऊपर तुम (एक रक्षक के समान) हो वह कैसे कोई दुख पा सकता है ? (ऐसा भक्त सदा विनम्र भाव से रहता है और) यह भी नहीं जानता कि कैसे वह माया रूपी मदिरा से उन्मादित होकर (दुष्ट) वचन बोले, (साथ ही ऐसा मनुष्य इतना भय मुक्त होता है कि उसे अपनी) मृत्यु का भय भी हृदय में नहीं आता "।(१)

प्रभु तथा उसके भक्तों के बीच की अंतरंग मित्रता तथा भक्त की भयरहित मनोदशा पर गुरु जी संक्षेप में कहते हैं "हे मेरे राम और मेरे महामहिम, तुम संतों के हो और संत तुम्हारे हैं । तुम्हारे सेवक अथवा भक्त को लेशमात्र भी भय नहीं है, क्योंकि, उसके पास यमदूत नहीं फटकते, (अथवा, वह मृत्यु से भयभीत नहीं रहता) "।(१- विराम)

जो भी भक्तजन प्रभु के प्रेम में लीन हैं उन्हें मिले वरदानों के आनंद का और आगे वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं " हे' मेरे स्वामी, जो तुम्हारे प्रेम के रंग में रंगे हुये हैं उनके जन्म मरण के दुख पलायन कर गये हैं, (क्योंकि), उन्हें सच्चे गुरु की ओर से पूर्ण आश्वासन है कि जो कुछ भी तुमने उनको प्रदान किया है उसे कोई मिटा नहीं सकता "।(२)

भक्तों की मनोदशा तथा उनके आचरण पर आगे टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' प्रभु, तुम्हारे संत) तेरे नाम का ध्यान करते हैं (ऐसा करने के) फलस्वरूप वह (मन की) शांति पाते हैं और आठों पहर तुम्हारी आराधना करते रहते हैं । तुम्हारी शरण में आकर तुम्हारे भरोसे और सहायता से पाँच दुष्टों अथवा विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अंहकार) को साध कर (अथवा वश में) रखते हैं "।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में कहते हैं "(हे' प्रभु), मुझे किसी प्रकार का (दैवी) ज्ञान नहीं है, मुझे ध्यान करना भी नहीं आता, ना ही कोई अच्छा कर्म जानता हूँ और ना ही तुम्हारी कोई सार अथवा तथ्य जानता हूँ । (परन्तु, तुम्हारी कृपा से) सबसे बड़े सच्चे गुरु नानक (से मिला) जिसने मेरे मान सम्मान की रक्षा (प्रभु, तेरे दरबार में) की "।(४-१०-५७)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सभी सांसारिक चिंतायों यहाँ तक कि मृत्यु के भय से भी मुक्त होना चाहते हैं तो हमें गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) की शरण में जाकर प्रभु के नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੭੫੧

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੧ ਕਾਫੀ ਘਰੁ ੧੦

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਮਾਣਸ ਜਨਮੁ ਦੁਲੰਭੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਇਆ ॥
ਮਨੁ ਤਨੁ ਹੋਇ ਚੁਲੰਭੁ ਜੇ ਸਤਿਗੁਰ ਭਾਇਆ ॥੧॥

ਚਲੈ ਜਨਮੁ ਸਵਾਰਿ ਵਖਰੁ ਸਚੁ ਲੈ ॥
ਪਤਿ ਪਾਏ ਦਰਬਾਰਿ ਸਤਿਗੁਰ ਸਬਦਿ ਭੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਮਨਿ ਤਨਿ ਸਚੁ ਸਲਾਹਿ ਸਾਚੇ ਮਨਿ ਭਾਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੭੫੨

ਲਾਲਿ ਰਤਾ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਪਾਇਆ ॥੨॥

ਹਉ ਜੀਵਾ ਗੁਣ ਸਾਰਿ ਅੰਤਰਿ ਤੂ ਵਸੈ ॥
ਤੂੰ ਵਸਹਿ ਮਨ ਮਾਹਿ ਸਹਜੇ ਰਸਿ ਰਸੈ ॥੩॥

ਮੂਰਖ ਮਨ ਸਮਝਾਇ ਆਖਉ ਕੇਤੜਾ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਇ ਰੰਗਿ ਰੰਗੇਤੜਾ ॥੪॥

ਨਿਤ ਨਿਤ ਰਿਦੈ ਸਮਾਲਿ ਪ੍ਰੀਤਮੁ ਆਪਣਾ ॥
ਜੇ ਚਲਹਿ ਗੁਣ ਨਾਲਿ ਨਾਹੀ ਦੁਖੁ ਸੰਤਾਪਣਾ ॥੫॥

ਮਨਮੁਖ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਣਾ ਨਾ ਤਿਸੁ ਰੰਗੁ ਹੈ ॥
ਮਰਸੀ ਹੋਇ ਵਿਡਾਣਾ ਮਨਿ ਤਨਿ ਭੰਗੁ ਹੈ ॥੬॥

ਗੁਰ ਕੀ ਕਾਰ ਕਮਾਇ ਲਾਹਾ ਘਰਿ ਆਣਿਆ ॥
ਗੁਰਬਾਣੀ ਨਿਰਬਾਣੁ ਸਬਦਿ ਪਛਾਣਿਆ ॥੭॥

ਇਕ ਨਾਨਕ ਕੀ ਅਰਦਾਸਿ ਜੇ ਤੁਧੁ ਭਾਵਸੀ ॥
ਮੈ ਦੀਜੈ ਨਾਮ ਨਿਵਾਸੁ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵਸੀ ॥੮॥੧॥੩॥

पृ ७५१

सूही महला १ काफी घर १०

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

माणस जनमु दुलँभु गुरमुखि पाइआ ॥
मनु तनु होइ चुलँभु जे सतिगुर भाइआ ॥१॥

चलै जनमु सवारि वखरु सचु लै ॥
पति पाए दरबारि सतिगुर सबदि भै ॥१॥रहाउ॥

मनि तनि सचु सलाहि साचे मनि भाइआ ॥

पृ ७५२

लालि रता मनु मानिआ गुरु पूरा पाइआ ॥२॥

हउ जीवा गुण सारि अँतरि तू वसै ॥
तूँ वसहि मन माहि सहजे रसि रसै ॥३॥

मूरख मन समझाइ आखउ केतड़ा ॥
गुरमुखि हरि गुण गाइ रँगि रँगेतड़ा ॥४॥

नित नित रिदै समालि प्रीतमु आपणा ॥
जे चलहि गुण नालि नाही दुखु सँतापणा ॥५॥

मनमुख भरमि भुलाणा ना तिसु रँगु है ॥
मरसी होइ विडाणा मनि तनि भँगु है ॥६॥

गुर की कार कमाइ लाहा घरि आणिआ ॥
गुरबाणी निरबाणु सबदि पछाणिआ ॥७॥

इक नानक की अरदासि जे तुधु भावसी ॥
मै दीजै नाम निवासु हरि गुण गावसी ॥८॥१॥३॥

सूही महला-१ काफी घर १०
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी गुरमुखों (गुरु के अनुयायियों) के आचरण के विषय पर बता रहे हैं जो प्रेम और श्रद्धा के साथ प्रभु नाम के ध्यान में लीन रहते हैं तथा उन्हें प्राप्त होने वाले कुछ वरदानों की चर्चा भी वह यहाँ कर रहे हैं ।

सर्वप्रथम वह गुरु के गुणों पर बात करते हुये कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), मानव जीवन को पाना अति दुर्लभ है, इस (अवसर) का प्राप्त होना गुरु की कृपा से ही होता है । यदि सच्चे गुरु को भाता है तभी किसी का मन और तन (प्रभु के प्रेम के रंग से) अतिरंजित हो पाता है " ।(१)

जो शिष्य अथवा अनुयायी गुरु से प्रेम और उसका आदर करते हैं, उन्हें मिले वरदानों का उल्लेख गुरु जी यहाँ करते हैं " (हे' मेरे मित्रो, प्रभु नाम रुपी) सच्ची सामग्री के द्वारा अपना जन्म सँवार कर जो इस संसार से जाते हैं, वह सच्चे गुरु के शब्द के आदर तथा भय में रहने के कारण प्रभु के दरबार में सम्मान प्राप्त करते हैं "।(१-विराम)

गुरु के अनुयायियों के आचरण के फलस्वरुप उन्हें प्राप्त आशीर्वादों पर गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), तन एवं मन के पूर्ण समर्पण द्वारा अनंत (प्रभु) की सराहना करने से गुरु का अनुयायी सच्चे (प्रभु) के मन को भाता है और तब प्रभु प्रेम में पूर्ण रुप से रमे होने के कारण मन में निष्ठा उपज जाती है । (इस प्रकार अनुयायी) पूर्ण गुरु को पा लेता है ।(२)

अतः, गुरु जी स्वयं के लिये भी प्रार्थना करते हैं " (हे' प्रभु)' यदि तुम मेरे अँतरमन में आकर बस जाते हो तो मैं तुम्हारे गुणों के सार से जीवित हो उठता हूँ । हाँ, (हे' प्रभु), यदि तुम मेरे मन में बसते हो तो (तुम्हारे प्रेम का) रस सहज रूप से मेरे अँतर में समाता है " ।(३)

गुरु जी अब अपने मन को सावधान करते हुये कहते हैं " हे मेरे मूर्ख मन, मैंने कितनी बार तुम्हें समझाया है और कहा है कि गुरु के द्वारा हरि के गुण गान करने पर तुम उसके (हरि के) प्रेम के रंग में चोखे रंग जाते हो "।(४)

गुरु जी अपने मन को फिर से सम्बोधित करते हैं "(हे' मेरे मन), नित्य ही अपने प्रियतम (प्रभु) को अपने हृदय में स्मरण करो । यदि तुम इसी गुण (प्रभु का ध्यान) के साथ इस संसार से विदा लेते हो, तब तुम किसी दुख और संताप से स्वयं को त्रस्त नहीं अनुभव करोगे "।(५)

किन्तु, किसी अंहकारी मनुष्य की मनोदशा एवं भाग्य पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं " एक अंहकारी मनुष्य अपने भ्रमों में ही सब कुछ भूला रहता है, (क्योंकि, प्रभु प्रेम का) रंग उसे नहीं चढ़ा होता। वह अपने अंतिम समय पर कष्ट में मरेगा, क्योंकि, उसका तन और मन सदा छिन्न भिन्न दशा में रहते हैं ।(६)

गुरु के अनुयायियों के आचरण तथा उन्हें मिले आशीर्वादों पर एक बार फिर से गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), गुरु के आदर्शों पर चलने अथवा सेवा करने के उपलक्ष्य में (गुरु के भक्त) अपने घर (हृदय) में लाभ अर्जित कर वापिस आते हैं ।गुरु के शब्दों (पवित्र वाणी) पर विचार करके उन्होंने निर्वाण (प्रभु) को पहचाना है "।(७)

शब्द के अंत में गुरु जी एक प्रार्थना करते हुये कहते हैं " (हे' प्रभु) यदि तुम्हें भाये, तो नानक की एक विनती है कि मेरे (हृदय में) अपने नाम का निवास दो, जिस से कि सदा हरि के गुण गाता रहूँ "।(८-१-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम इस अनमोल मानव जीवन को सफल बनाना चाहते हैं तो हमें हर समय पूर्ण निष्ठा और शुद्ध हृदय से प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये । ऐसा करने से इस संसार में भी यश प्राप्त होगा और प्रभु के दरबार में भी हमें सम्मान से स्वीकार किया जायेगा ।

ਪੰਨਾ ੭੫੩

ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੩ ਘਰੁ ੧ ਅਸਟਪਦੀਆ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਨਾਮੈ ਹੀ ਤੇ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਹੋਆ ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਨਾਮੁ ਨ ਜਾਪੈ ॥
ਗੁਰ ਕਾ ਸਬਦੁ ਮਹਾ ਰਸੁ ਮੀਠਾ ਬਿਨੁ ਚਾਖੇ ਸਾਦੁ ਨ ਜਾਪੈ ॥
ਕਉਡੀ ਬਦਲੈ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ ਚੀਨਸਿ ਨਾਹੀ ਆਪੈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਹੋਵੈ ਤਾ ਏਕੋ ਜਾਣੈ ਹਉਮੈ ਦੁਖੁ ਨ ਸੰਤਾਪੈ ॥੧॥

ਬਲਿਹਾਰੀ ਗੁਰ ਅਪਣੇ ਵਿਟਹੁ ਜਿਨਿ ਸਾਚੇ ਸਿਉ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥
ਸਬਦੁ ਚੀਨ੍ਹਿ ਆਤਮੁ ਪਰਗਾਸਿਆ ਸਹਜੇ ਰਹਿਆ ਸਮਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਗਾਵੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੂਝੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਬਦੁ ਬੀਚਾਰੇ ॥
ਜੀਉ ਪਿੰਡੁ ਸਭੁ ਗੁਰ ਤੇ ਉਪਜੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਕਾਰਜ ਸਵਾਰੇ ॥
ਮਨਮੁਖਿ ਅੰਧਾ ਅੰਧੁ ਕਮਾਵੈ ਬਿਖੁ ਖਟੇ ਸੰਸਾਰੇ ॥
ਮਾਇਆ ਮੋਹਿ ਸਦਾ ਦੁਖੁ ਪਾਏ ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਅਤਿ ਪਿਆਰੇ ॥੨॥

ਸੋਈ ਸੇਵਕੁ ਜੇ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਚਾਲੈ ਸਤਿਗੁਰ ਭਾਏ ॥
ਸਾਚਾ ਸਬਦੁ ਸਿਫਤਿ ਹੈ ਸਾਚੀ ਸਾਚਾ ਮੰਨਿ ਵਸਾਏ ॥
ਸਚੀ ਬਾਣੀ ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਖੈ ਹਉਮੈ ਵਿਚਹੁ ਜਾਏ ॥
ਆਪੇ ਦਾਤਾ ਕਰਮੁ ਹੈ ਸਾਚਾ ਸਾਚਾ ਸਬਦੁ ਸੁਣਾਏ ॥੩॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਘਾਲੇ ਗੁਰਮੁਖਿ ਖਟੇ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਜਪਾਏ ॥
ਸਦਾ ਅਲਿਪਤੁ ਸਾਚੈ ਰੰਗਿ ਰਾਤਾ ਗੁਰ ਕੈ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਏ ॥
ਮਨਮੁਖੁ ਸਦ ਹੀ ਕੂੜੋ ਬੋਲੈ ਬਿਖੁ ਬੀਜੈ ਬਿਖੁ ਖਾਏ ॥
ਜਮਕਾਲਿ ਬਾਧਾ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਦਾਧਾ ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਕਵਣੁ ਛਡਾਏ ॥੪॥

ਸਚਾ ਤੀਰਥੁ ਜਿਤੁ ਸਤ ਸਰਿ ਨਾਵਣੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਪਿ ਬੁਝਾਏ ॥
ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਦਿਖਾਏ ਤਿਤੁ ਨਾਤੈ ਮਲੁ ਜਾਏ ॥
ਸਚਾ ਸਬਦੁ ਸਚਾ ਹੈ ਨਿਰਮਲੁ ਨਾ ਮਲੁ ਲਗੈ ਨ ਲਾਏ ॥
ਸਚੀ ਸਿਫਤਿ ਸਚੀ ਸਾਲਾਹ ਪੂਰੇ ਗੁਰ ਤੇ ਪਾਏ ॥੫॥

ਤਨੁ ਮਨੁ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਹਰਿ ਤਿਸੁ ਕੇਰਾ ਦੁਰਮਤਿ ਕਹਣੁ ਨ ਜਾਏ ॥
ਹੁਕਮੁ ਹੋਵੈ ਤਾ ਨਿਰਮਲੁ ਹੋਵੈ ਹਉਮੈ ਵਿਚਹੁ ਜਾਏ ॥
ਗੁਰ ਕੀ ਸਾਖੀ ਸਹਜੇ ਚਾਖੀ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਅਗਨਿ ਬੁਝਾਏ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਰਾਤਾ ਸਹਜੇ ਮਾਤਾ ਸਹਜੇ ਰਹਿਆ ਸਮਾਏ ॥੬॥

ਪੰਨਾ ੭੫੪

ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਸਤਿ ਕਰਿ ਜਾਣੈ ਗੁਰ ਕੈ ਭਾਇ ਪਿਆਰੇ ॥
ਸਚੀ ਵਡਿਆਈ ਗੁਰ ਤੇ ਪਾਈ ਸਚੈ ਨਾਇ ਪਿਆਰੇ ॥
ਏਕੋ ਸਚਾ ਸਭ ਮਹਿ ਵਰਤੈ ਵਿਰਲਾ ਕੋ ਵੀਚਾਰੇ ॥
ਆਪੇ ਮੇਲਿ ਲਏ ਤਾ ਬਖਸੇ ਸਚੀ ਭਗਤਿ ਸਵਾਰੇ ॥੭॥

ਸਭੋ ਸਚੁ ਸਚੁ ਸਚੁ ਵਰਤੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਕੋਈ ਜਾਣੈ ॥
ਜੰਮਣ ਮਰਣਾ ਹੁਕਮੋ ਵਰਤੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਪੁ ਪਛਾਣੈ ॥
ਨਾਮੁ ਧਿਆਏ ਤਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਭਾਏ ਜੋ ਇਛੈ ਸੋ ਫਲੁ ਪਾਏ ॥
ਨਾਨਕ ਤਿਸ ਦਾ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਹੋਵੈ ਜਿ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਵਾਏ ॥੮॥੧॥

पृ ७५३

राग सूही महला ३ घर १ असटपदीआ

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

नामै ही ते सभु किछु होआ बिनु सतिगुर नामु न जापै ॥
गुर का सबदु महा रसु मीठा बिनु चाखे सादु न जापै ॥
कउडी बदलै जनमु गवाइआ चीनसि नाही आपै ॥
गुरमुखि होवै ता एको जाणै हउमै दुखु न सँतापै ॥१॥

बलिहारी गुर अपणे विटहु जिनि साचे सिउ लिव लाई ॥
सबदु चीन्हि आतमु परगासिआ सहजे रहिआ समाई ॥१॥रहाउ॥

गुरमुखि गावै गुरमुखि बूझै गुरमुखि सबदु बीचारे ॥
जीउ पिँडु सभु गुर ते उपजै गुरमुखि कारज सवारे ॥
मनमुखि अँधा अँधु कमावै बिखु खटे सँसारे ॥
माइआ मोहि सदा दुखु पाए बिनु गुर अति पिआरे ॥२॥

सोई सेवकु जे सतिगुर सेवे चालै सतिगुर भाए ॥
साचा सबदु सिफति है साची साचा मँनि वसाए ॥
सची बाणी गुरमुखि आखै हउमै विचहु जाए ॥
आपे दाता करमु है साचा साचा सबदु सुणाए ॥३॥

गुरमुखि घालै गुरमुखि खटे गुरमुखि नामु जपाए ॥
सदा अलिपतु साचै रँगि राता गुर कै सहजि सुभाए ॥
मनमुखु सद ही कूड़ो बोलै बिखु बीजै बिखु खाए ॥
जमकालि बाधा त्रिसना दाधा बिनु गुर कवणु छडाए ॥४॥

सचा तीरथु जितु सत सरि नावणु गुरमुखि आपि बुझाए ॥
अठसठि तीरथ गुर सबदि दिखाए तितु नातै मलु जाए ॥
सचा सबदु सचा है निरमलु ना मलु लगै न लाए ॥
सची सिफति सची सालाह पूरे गुर ते पाए ॥५॥

तनु मनु सभु किछु हरि तिसु केरा दुरमति कहणु न जाए ॥
हुक्मु होवै ता निरमलु होवै हउमै विचहु जाए ॥
गुर की साखी सहजे चाखी त्रिसना अगनि बुझाए ॥
गुर कै सबदि राता सहजे माता सहजे रहिआ समाए ॥६॥

पृ ७५४

हरि का नामु सति करि जाणै गुर कै भाइ पिआरे ॥
सची वडिआई गुर ते पाई सचै नाइ पिआरे ॥
एको सचा सभ महि वरतै विरला को वीचारे ॥
आपे मेलि लए ता बखसे सची भगति सवारे ॥७॥

सभो सचु सचु सचु वरतै गुरमुखि कोई जाणै ॥
जँमण मरणा हुकमो वरतै गुरमुखि आपु पछाणै ॥
नामु धिआए ता सतिगुरु भाए जो इछै सो फलु पाए ॥
नानक तिस दा सभु किछु होवै जि विचहु आपु गवाए ॥८॥१॥

राग सूही महला-३ घर-१ असटपदीआ
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द से पूर्व के अनेकों शब्दों में गुरु जी ने हमें प्रभु के नाम का ध्यान करने के लिये प्रेरित किया है और बताया है कि ऐसा करने से कितने वरदान प्राप्त होते हैं । इस शब्द में वह यह स्पष्ट करते हैं कि प्रभु का नाम क्यों इतना आवश्यक है, तथा उसका क्या महत्व है । वह यह भी हमें बताते हैं कि जो लोग इस तथ्य को समझते और विचारते हैं, उनका आचरण कैसा होता है और वह कितने आशीर्वादों का आनंद लेते हैं ।

प्रारंभ में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जो भी होता है वह (प्रभु के) नाम से ही होता है, परन्तु, सच्चे गुरु के (मार्ग दर्शन के) बिना प्रभु नाम को समझ पाना और उसका जाप करना संभव नहीं होता (ना ही उसकी प्रशंसा कर सकते हैं) । गुरु के शब्द (गुरबाणी) रुपी रस का स्वाद अति मीठा होता है, जिसको चखे बिना नहीं जाना जा सकता । जो मनुष्य स्वयं पर विचार नहीं करता वह इस जन्म को कौड़ियों के भाव गँवा देता है ।परन्तु, यदि कोई गुरु का अनुयायी है तो वह उस एक (प्रभु) को पहचानने से अपने अंहकार को गँवा कर दुख और संताप नहीं झेलता "।(१)

इसलिये, गुरु जी सच्चा मार्ग दर्शन देने वाले अपने गुरु को धन्यवाद देते हुये कहते हैं : " मैं अपने गुरु पर बलिहारी हूँ जिसने मुझे सच्चे (प्रभु) के प्रेम में लीन रहना सिखाया । गुरु के शब्द (वाणी) को समझने और विचारने से मेरी आत्मा (दैवी ज्ञान से) प्रकाशमयी हो गयी है और मैं सहज रूप से उस (अनंत प्रभु) में समा गया हूँ "।(१- विराम)

अब गुरु जी, गुरु के अनुयायियों तथा अंहकारी मनुष्यों के आचरण की तुलना करते हुये कहते हैं: " (हे' मेरे मित्रो), गुरु का अनुयायी (प्रभु के गुण) गाता है (गुरबाणी अथवा गुरु के शब्द का महत्व और अर्थ) समझता है और उस पर विचार करता है । फलस्वरूप, गुरु के द्वारा उसका तन और प्राण पूर्ण रुप से पुनर्जन्म ले लेता है और गुरु के मार्ग दर्शन से ही उसके समस्त कार्य सँवर जाते है अथवा सफल हो जाते हैं । (जबकि दूसरी ओर) अंहकार से अँधा हुया मनुष्य मूर्खतापूर्ण कार्य करता है और संसार में केवल (धन सम्पदा और सामर्थ्य रुपी) विष को अर्जित करता है । अतः, अति प्रिय गुरु के (मार्ग दर्शन के) बिना (अंहकारी मानव) सांसारिक माया मोह के लोभ और लालसा में सदा दुख भोगता है "।(२)

गुरु जी अब हमें बताते हैं कि गुरु का अनुयायी अथवा सच्चा सेवक कौन है । वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), केवल वही व्यक्ति (गुरु का सच्चा) सेवक है जो सच्चे गुरु के निर्देशानुसार चल कर उसकी सेवा करता है और सच्चे गुरु को भाता है ।(वह सेवक समझता है कि गुरु का) सच्चा शब्द अमर है, उस (प्रभु) की महिमा सच्ची अथवा अनंत है, इसलिये, वह (गुरु का आदेश मान कर) सच्चे (प्रभु) को मन में बसा लेता है । गुरु का अनुयायी (इस प्रकार, गुरु की) वाणी का उच्चारण करता रहता है, फलस्वरूप, उसके मन में से अहम की भावना समाप्त हो जाती है ।(गुरु के ऐसे भक्त का विश्वास है कि प्रभु) स्वयं ही दाता हैं तथा उसकी देन मुझ भक्त का अहोभाग्य है, अतः, वह (गुरु के सत्य एवं अनंत शब्द को गाता है तथा) अन्य सबको भी सुनाता है "।(३)

गुरु जी फिर एक बार गुरु के शिष्यों तथा अंहकारी मनुष्यों के लक्षणों की तुलना में कहते हैं : " गुरु का अनुयायी कड़ा परिश्रम करके (प्रभु के सच्चे नाम की सम्पदा) अर्जित करता है और अन्य सबको भी प्रभु नाम के ध्यान के लिये प्रेरित करता है । गुरु द्वारा प्रदत्त सहज एवं शांत प्रवृत्तियों तथा अनंत प्रभु के प्रेम के रंग में रमा हुया (गुरु का शिष्य) सदा सांसारिक मोहमाया से निर्लिप्त रहता है । जबकि एक अहंकारी मनुष्य सदा ही झूठ बोलता है (वह कुकर्म करता है और हानिकारक फल पाता है) और इस प्रकार वह विष का बीज बोता है और विष ही खाता है ।अतएव, ऐसा अंहकारी मनुष्य (सांसारिक) तृष्णा से दग्ध होता है और यमदूत मृत्यु के समय उसे बाँध लेते हैं, पर गुरु के बिना अब उसे कौन छुड़ा सकता है "।(४)

कुछ लोग अपने जीवन काल में किसी एक समय पर यह विचारते हैं कि वह अनेक पाप करते रहे हैं और मृत्यु के पश्चात नर्क में ढकेले जा सकते हैं । अतः, वह इस विश्वास के साथ अनेकों तीर्थ अथवा पवित्र स्थानों की यात्रा करते हैं कि वहाँ पर स्नान करने से उनके पाप धुल जायेंगे और वह दंड मुक्त हो जायेंगे । ऐसे अँधविशवासों पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी हमें बताते हैं कि सच्चा एवं पवित्र तीर्थ स्थान कौन सा है, तथा कौन सा सच्चा (आत्मिक) स्नान हमें वास्तव में मुक्ति प्रदान कर सकता है। वह कहते हैं :(हे' मेरे मित्रो, गुरु की वाणी अथवा शब्द ही) सच्चा तीर्थ स्थान है और केवल (सच्चा गुरु ही) अपने शिष्य को इस सच्चे सरोवर में नहाने का ढंग समझाता है । गुरु के शब्द (वाणी रूपी सरोवर) का स्नान अड़सठ तीर्थों के स्नान के गुणों के समान है, जिसमें नहा कर (समस्त पापकर्मों का) मैल निकल जाता है। (गुरु का शब्द) इतना सत्य है और अनंत रूप से पवित्र है कि वह ना स्वयं (कुकर्मों से) मैला हो पाता है और ना ही किसी मनुष्य को (जो इसमें नहाता है उसे अहम से) मैला होने देता है ।सच्चे पूर्ण गुरु के द्वारा मनुष्य (प्रभु की) सच्ची महिमा एवं गुणों की सच्चे रूप में स्तुति करना समझ पाता है "।(५)

गुरु जी हमें स्मरण कराते हैं कि हमारा असितत्व प्रभु के द्वारा ही है और हमें शांति से रहने के लिये सांसारिक लोभ तथा इच्छायों की तृष्णा कैसे बुझानी चाहिये । इस पर वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), हमारा यह तन मन सभी कुछ हरि का है, परन्तु, हम अपनी मंदबुद्धि के कारण इस सत्य को नहीं कह पाते । यह तो जब (हरि का) आदेश होता है, तब अंदर से अहम भावना जाती है और मन निर्मल होता है। उसी

के पश्चात, गुरु की शिक्षा एवं निर्देशों का स्वाद सहज रूप से चखते रहने से (सांसारिक इच्छाओं रूपी) अग्नि की तृष्णा बुझती है। जब कोई प्रेम से गुरु के शब्द (वाणी) में सहज रूप से लीन रहता है तब वह अप्रत्यक्ष रूप से उसी (दैवी ज्ञान) में समा जाता है"।(६)

गुरु के शिष्यों के आचरण तथा अन्य गुणों पर गुरु जी आगे कहते हैं : (हे' मेरे मित्रो, गुरु का अनुयायी) हरि के नाम पर विश्वास करता है और उसे सत्य मानता है अतः वह गुरु के मन को प्रिय लगता है । गुरु के द्वारा (प्रभु) के सच्चे नाम से प्रेम करने पर ऐसा मनुष्य सच्चा सम्मान पाता है । कोई बिरला ही (इस तथ्य पर) विचार कर पाता है कि केवल एक ही अनंत प्रभु सभी में व्याप्त हैं और जब वही प्रभु किसी मनुष्य को अपने साथ मिला (एकरूप कर) लेते हैं तो वह उसे क्षमा करके सच्ची अनंत भक्ति प्रदान कर उसे सँवार देते हैं "।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), कोई बिरला ही गुरु का अनुयायी समझ पाता है कि सभी स्थानों पर सच और सच्चा अनंत (प्रभु) व्याप्त है । गुरु का शिष्य स्वयं को पहचान कर यह समझ लेता है कि जन्म तथा मरण (प्रभु के द्वारा) निर्देशित है । जब कोई प्रभु नाम की आराधना करता है तो वह सच्चे गुरु को भाता है और फिर उसे इच्छित फल प्राप्त होते हैं । संक्षेप में, हे' नानक, उस मनुष्य के सभी कार्य सम्पन्न होते हैं जो अपने अँतरमन में से अहम का त्याग कर देता है "।(८-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने इस बहुमूल्य जीवन को व्यर्थ नहीं करना चाहते हैं तो हमें गुरु के निर्देशों को सुन कर यह समझना चाहिये कि हमारा शरीर तथा अन्य सभी कुछ प्रभु का ही है। अतः, यह हमारा कर्तव्य है कि हम तीर्थ स्थानों पर ना जाकर तथा अन्य शास्त्रीय विधियों को ना मानते हुए गुरु की सच्ची वाणी के द्वारा प्रभु से प्रेम करें और उसके निर्देश में रहें । इस प्रकार से हमारा मन दुष्ट प्रवृत्तियों अथवा अहम से मुक्त रहेगा और हम शान्ति, सहज एवं आनंद की दशा में सच्चे प्रभु के ध्यान में लीन रहेंगे ।

ਪੰਨਾ ੭੫੫

ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੩ ਘਰੁ ੧੦

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਦੁਨੀਆ ਨ ਸਾਲਾਹਿ ਜੋ ਮਰਿ ਵੰਞਸੀ ॥
ਲੋਕਾ ਨ ਸਾਲਾਹਿ ਜੋ ਮਰਿ ਖਾਕੁ ਥੀਈ ॥੧॥

ਵਾਹੁ ਮੇਰੇ ਸਾਹਿਬਾ ਵਾਹੁ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਦਾ ਸਲਾਹੀਐ ਸਚਾ ਵੇਪਰਵਾਹੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਦੁਨੀਆ ਕੇਰੀ ਦੋਸਤੀ ਮਨਮੁਖ ਦਝਿ ਮਰੰਨਿ ॥
ਜਮ ਪੁਰਿ ਬਧੇ ਮਾਰੀਅਹਿ ਵੇਲਾ ਨ ਲਾਹੰਨਿ ॥੨॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਨਮੁ ਸਕਾਰਥਾ ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਲਗੰਨਿ ॥
ਆਤਮ ਰਾਮੁ ਪ੍ਰਗਾਸਿਆ ਸਹਜੇ ਸੁਖਿ ਰਹੰਨਿ ॥੩॥

ਗੁਰ ਕਾ ਸਬਦੁ ਵਿਸਾਰਿਆ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਰਚੰਨਿ ॥
ਤਿਸਨਾ ਭੁਖ ਨ ਉਤਰੈ ਅਨਦਿਨੁ ਜਲਤ ਫਿਰੰਨਿ ॥੪॥

ਦੁਸਟਾ ਨਾਲਿ ਦੋਸਤੀ ਨਾਲਿ ਸੰਤਾ ਵੈਰੁ ਕਰੰਨਿ ॥
ਆਪਿ ਡੁਬੇ ਕੁਟੰਬ ਸਿਉ ਸਗਲੇ ਕੁਲ ਡੋਬੰਨਿ ॥੫॥

ਨਿੰਦਾ ਭਲੀ ਕਿਸੈ ਕੀ ਨਾਹੀ ਮਨਮੁਖ ਮੁਗਧ ਕਰੰਨਿ ॥
ਮੁਹ ਕਾਲੇ ਤਿਨ ਨਿੰਦਕਾ ਨਰਕੇ ਘੋਰਿ ਪਵੰਨਿ ॥੬॥

ਏ ਮਨ ਜੈਸਾ ਸੇਵਹਿ ਤੈਸਾ ਹੋਵਹਿ ਤੇਹੇ ਕਰਮ ਕਮਾਇ ॥
ਆਪਿ ਬੀਜਿ ਆਪੇ ਹੀ ਖਾਵਣਾ ਕਹਣਾ ਕਿਛੂ ਨ ਜਾਇ ॥੭॥

ਮਹਾ ਪੁਰਖਾ ਕਾ ਬੋਲਣਾ ਹੋਵੈ ਕਿਤੈ ਪਰਥਾਇ ॥
ਓਇ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਭਰੇ ਭਰਪੂਰ ਹਹਿ ਓਨਾ ਤਿਲੁ ਨ ਤਮਾਇ ॥੮॥

ਗੁਣਕਾਰੀ ਗੁਣ ਸੰਘਰੈ ਅਵਰਾ ਉਪਦੇਸੇਨਿ ॥
ਸੇ ਵਡਭਾਗੀ ਜਿ ਓਨਾ ਮਿਲਿ ਰਹੇ ਅਨਦਿਨੁ ਨਾਮੁ ਲਏਨਿ ॥੯॥

ਦੇਸੀ ਰਿਜਕੁ ਸੰਬਾਹਿ ਜਿਨਿ ਉਪਾਈ ਮੇਦਨੀ ॥
ਏਕੋ ਹੈ ਦਾਤਾਰੁ ਸਚਾ ਆਪਿ ਧਣੀ ॥੧੦॥

ਸੋ ਸਚੁ ਤੇਰੈ ਨਾਲਿ ਹੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਦਰਿ ਨਿਹਾਲਿ ॥
ਆਪੇ ਬਖਸੇ ਮੇਲਿ ਲਏ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਸਦਾ ਸਮਾਲਿ ॥੧੧॥

ਮਨੁ ਮੈਲਾ ਸਚੁ ਨਿਰਮਲਾ ਕਿਉ ਕਰਿ ਮਿਲਿਆ ਜਾਇ ॥
ਪ੍ਰਭੁ ਮੇਲੇ ਤਾ ਮਿਲਿ ਰਹੈ ਹਉਮੈ ਸਬਦਿ ਜਲਾਇ ॥੧੨॥

ਸੋ ਸਹੁ ਸਚਾ ਵੀਸਰੈ ਧ੍ਰਿਗੁ ਜੀਵਣੁ ਸੰਸਾਰਿ ॥
ਨਦਰਿ ਕਰੇ ਨਾ ਵੀਸਰੈ ਗੁਰਮਤੀ ਵੀਚਾਰਿ ॥੧੩॥

ਸਤਿਗੁਰੁ ਮੇਲੇ ਤਾ ਮਿਲਿ ਰਹਾ ਸਾਚੁ ਰਖਾ ਉਰ ਧਾਰਿ ॥
ਮਿਲਿਆ ਹੋਇ ਨ ਵੀਛੁੜੈ ਗੁਰ ਕੈ ਹੇਤਿ ਪਿਆਰਿ ॥੧੪॥

ਪਿਰੁ ਸਾਲਾਹੀ ਆਪਣਾ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਵੀਚਾਰਿ ॥

पृ ७५५

राग सूही महला ३ घर १०

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

दुनीआ न सालाहि जो मरि वँञसी ॥
लोका न सालाहि जो मरि खाकु थीई ॥१॥

वाहु मेरे साहिबा वाहु ॥
गुरमुखि सदा सालाहीऐ सचा वेपरवाहु ॥१॥रहाउ॥

दुनीआ केरी दोसती मनमुख दझि मरँनि ॥
जमु पुरि बधे मारीअहि वेला न लाहँनि ॥२॥

गुरमुखि जनमु सकारथा सचै सबदि लगँनि ॥
आतम रामु प्रगासिआ सहजे सुखि रहँनि ॥३॥

गुर का सबदु विसारिआ दूजै भाइ रचँनि ॥
तिसना भुख न उतरै अनदिनु जलत फिरँनि ॥४॥

दुसटा नालि दोसती नालि सँता वैरु करँनि ॥
आपि डुबे कुटँब सिउ सगले कुल डोबँनि ॥५॥

निँदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करँनि ॥
मुह काले तिन निँदका नरके घोरि पवँनि ॥६॥

ए मन जैसा सेवहि तैसा होवहि तेहे करम कमाइ ॥
आपि बीजि आपे ही खावणा कहणा किछू न जाइ ॥७॥

महा पुरखा का बोलणा होवै कितै परथाइ ॥
ओइ अँमृत भरे भरपूर हहि ओना तिलु न तमाइ ॥८॥

गुणकारी गुण सँघरै अवरा उपदेसेनि ॥
से वडभागी जि ओना मिलि रहे अनदिनु नामु लएनि ॥९॥

देसी रिजकु सँबाहि जिनि उपाई मेदनी ॥
एको है दातारु सचा आपि धणी ॥१०॥

सो सचु तेरै नालि है गुरमुखि नदरि निहालि ॥
आपे बखसे मेलि लए सो प्रभु सदा समालि ॥११॥

मनु मैला सचु निरमला किउ करि मिलिआ जाइ ॥
प्रभु मेले त मिलि रहै हउमै सबदि जलाइ ॥१२॥

सो सहु सचा वीसरै धृगु जीवाणु सँसारि ॥
नदरि करे ना वीसरै गुरमती वीचारि ॥१३॥

सतिगुरु मेले ता मिलि रहा साचु रखा उर धारि ॥
मिलिआ होइ न वीछुड़ै गुर कै हेति पिआरि ॥१४॥

पिरु सालाही आपणा गुर कै सबदि वीचारि ॥

ਮਿਲਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਸੋਭਾਵੰਤੀ ਨਾਰਿ ॥੧੫॥

मिलि प्रीतम सुखु पाइआ सोभावँती नारि ॥१५॥

ਮਨਮੁਖ ਮਨੁ ਨ ਭਿਜਈ ਅਤਿ ਮੈਲੇ ਚਿਤਿ ਕਠੋਰ ॥
ਸਪੈ ਦੁਧੁ ਪੀਆਈਐ ਅੰਦਰਿ ਵਿਸੁ ਨਿਕੋਰ ॥੧੬॥

मनमुख मनु न भिजई अति मैले चिति कठोर ॥
सपै दुधु पीआईऐ अँदरि विसु निकोर ॥१६॥

ਆਪਿ ਕਰੇ ਕਿਸੁ ਆਖੀਐ ਆਪੇ ਬਖਸਣਹਾਰੁ ॥
ਗੁਰ ਸਬਦੀ ਮੈਲੁ ਉਤਰੈ ਤਾ ਸਚੁ ਬਣਿਆ ਸੀਗਾਰੁ ॥੧੭॥

आपि करे किसु आखीऐ आपे बखसणहारु ॥
गुर सबदी मैलु उतरै ता सचु बणिआ सीगारु ॥१७॥

ਪੰਨਾ ੭੫੬

पृ ७५६

ਸਚਾ ਸਾਹੁ ਸਚੇ ਵਣਜਾਰੇ ਓਥੈ ਕੂੜੇ ਨ ਟਿਕੰਨਿ ॥
ਓਨਾ ਸਚੁ ਨ ਭਾਵਈ ਦੁਖ ਹੀ ਮਾਹਿ ਪਚੰਨਿ ॥੧੮॥

सचा साहु सचे वणजारे ओथै कूड़े न टिकँनि ॥
ओना सचु न भावई दुख ही माहि पचँनि ॥१८॥

ਹਉਮੈ ਮੈਲਾ ਜਗੁ ਫਿਰੈ ਮਰਿ ਜੰਮੈ ਵਾਰੋ ਵਾਰ ॥
ਪਇਐ ਕਿਰਤਿ ਕਮਾਵਣਾ ਕੋਇ ਨ ਮੇਟਣਹਾਰ ॥੧੯॥

हउमै मैला जगु फिरै मरि जँमै वारो वार ॥
पइऐ किरति कमावणा कोइ न मेटणहार ॥१९॥

ਸੰਤਾ ਸੰਗਤਿ ਮਿਲਿ ਰਹੈ ਤਾ ਸਚਿ ਲਗੈ ਪਿਆਰੁ ॥
ਸਚੁ ਸਲਾਹੀ ਸਚੁ ਮਨਿ ਦਰਿ ਸਚੈ ਸਚਿਆਰੁ ॥੨੦॥

सँता सँगति मिलि रहै ता सचि लगै पिआरु ॥
सचु सलाही सचु मनि दरि सचै सचिआरु ॥२०॥

ਗੁਰ ਪੂਰੇ ਪੂਰੀ ਮਤਿ ਹੈ ਅਹਿਨਿਸਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇ ॥
ਹਉਮੈ ਮੇਰਾ ਵਡ ਰੋਗੁ ਹੈ ਵਿਚਹੁ ਠਾਕਿ ਰਹਾਇ ॥੨੧॥

गुर पूरे पूरी मति है अहिनिसि नामु धिआइ ॥
हउमै मेरा वड रोगु है विचहु ठाकि रहाइ॥२१॥

ਗੁਰੁ ਸਾਲਾਹੀ ਆਪਣਾ ਨਿਵਿ ਨਿਵਿ ਲਾਗਾ ਪਾਇ ॥
ਤਨੁ ਮਨੁ ਸਉਪੀ ਆਗੈ ਧਰੀ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਵਾਇ ॥੨੨॥

गुरु सालाही आपणा निवि निवि लागा पाइ ॥
तनु मनु सउपी आगै धरी विचहु आपु गवाइ ॥२२॥

ਖਿੰਚੋਤਾਣਿ ਵਿਗੁਚੀਐ ਏਕਸੁ ਸਿਉ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥
ਹਉਮੈ ਮੇਰਾ ਛਡਿ ਤੂ ਤਾ ਸਚਿ ਰਹੈ ਸਮਾਇ ॥੨੩॥

खिँचोताणि विगुचीऐ एकसु सिउ लिव लाइ ॥
हउमै मेरा छडि तू ता सचि रहै समाइ ॥२३॥

ਸਤਿਗੁਰ ਨੋ ਮਿਲੇ ਸਿ ਭਾਇਰਾ ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਲਗੰਨਿ ॥
ਸਚਿ ਮਿਲੇ ਸੇ ਨ ਵਿਛੁੜਹਿ ਦਰਿ ਸਚੈ ਦਿਸੰਨਿ ॥੨੪॥

सतिगुर नो मिले सि भाइरा सचै सबदि लगँनि ॥
सचि मिले से न विछुड़हि दरि सचै दिसँनि ॥२४॥

ਸੇ ਭਾਈ ਸੇ ਸਜਣਾ ਜੋ ਸਚਾ ਸੇਵੰਨਿ ॥
ਅਵਗਣ ਵਿਕਣਿ ਪਲ੍ਰਨਿ ਗੁਣ ਕੀ ਸਾਝ ਕਰੰਨ੍ਹਿ ॥੨੫॥

से भाई से सजणा जो सचा सेवँनि ॥
अवगण विकणि पलरनि गुण की साझ करँन्हि ॥२५॥

ਗੁਣ ਕੀ ਸਾਝ ਸੁਖੁ ਊਪਜੈ ਸਚੀ ਭਗਤਿ ਕਰੇਨਿ ॥
ਸਚੁ ਵਣੰਜਹਿ ਗੁਰ ਸਬਦ ਸਿਉ ਲਾਹਾ ਨਾਮੁ ਲਏਨਿ ॥੨੬॥

गुण की साझ सुखु ऊपजै सची भगति करेनि ॥
सचु वणँजहि गुर सबद सिउ लाहा नामु लएनि ॥२६॥

ਸੁਇਨਾ ਰੁਪਾ ਪਾਪ ਕਰਿ ਕਰਿ ਸੰਚੀਐ ਚਲੈ ਨ ਚਲਦਿਆ ਨਾਲਿ ॥
ਵਿਣੁ ਨਾਵੈ ਨਾਲਿ ਨ ਚਲਸੀ ਸਭ ਮੁਠੀ ਜਮਕਾਲਿ ॥੨੭॥

सुइना रुपा पाप करि करि सँचीऐ चलै न चलदिआ नालि ॥
विणु नावै नालि न चलसी सभ मुठी जमकालि ॥२७॥

ਮਨ ਕਾ ਤੋਸਾ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹੈ ਹਿਰਦੈ ਰਖਹੁ ਸਮ੍ਾਲਿ ॥
ਏਹੁ ਖਰਚੁ ਅਖੁਟੁ ਹੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਿਬਹੈ ਨਾਲਿ ॥੨੮॥

मन का तोसा हरि नामु है हिरदै रखहु समा्लि ॥
एहु खरचु अखुटु है गुरमुखि निबहै नालि ॥२८॥

ਏ ਮਨ ਮੂਲਹੁ ਭੁਲਿਆ ਜਾਸਹਿ ਪਤਿ ਗਵਾਇ ॥
ਇਹੁ ਜਗਤੁ ਮੋਹਿ ਦੂਜੈ ਵਿਆਪਿਆ ਗੁਰਮਤੀ ਸਚੁ ਧਿਆਇ ॥੨੯॥

ए मन मूलहु भुलिआ जासहि पति गवाइ ॥
इहु जगतु मोहि दूजै विआपिआ गुरमती सचु धिआइ ॥२९॥

ਹਰਿ ਕੀ ਕੀਮਤਿ ਨ ਪਵੈ ਹਰਿ ਜਸੁ ਲਿਖਣੁ ਨ ਜਾਇ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਮਨੁ ਤਨੁ ਰਪੈ ਹਰਿ ਸਿਉ ਰਹੈ ਸਮਾਇ ॥੩੦॥

हरि की कीमति न पवै हरि जसु लिखणु न जाइ ॥
गुर कै सबदि मनु तनु रपै हरि सिउ रहै समाइ ॥३०॥

ਸੋ ਸਹੁ ਮੇਰਾ ਰੰਗੁਲਾ ਰੰਗੇ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਇ ॥
ਕਾਮਣਿ ਰੰਗੁ ਤਾ ਚੜੈ ਜਾ ਪਿਰ ਕੈ ਅੰਕਿ ਸਮਾਇ ॥੩੧॥

सो सहु मेरा रँगुला रँगे सहजि सुभाइ ॥
कामणि रँगु ता चड़ै जा पिर कै अँकि समाइ ॥३१॥

ਚਿਰੀ ਵਿਛੁੰਨੇ ਭੀ ਮਿਲਨਿ ਜੋ ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵੰਨਿ ॥ ਅੰਤਰਿ ਨਵ ਨਿਧਿ ਨਾਮੁ ਹੈ ਖਾਨਿ ਖਰਚਨਿ ਨ ਨਿਖੁਟਈ ਹਰਿ ਗੁਣ ਸਹਜਿ ਰਵੰਨਿ ॥੩੨॥	चिरी विछुँने भी मिलनि जो सतिगुरु सेवँनि ॥ अँतरि नव निधि नामु है खानि खरचनि न निखुटई हरि गुण सहजि रवँनि ॥३२॥
ਨਾ ਓਇ ਜਨਮਹਿ ਨਾ ਮਰਹਿ ਨਾ ਓਇ ਦੁਖ ਸਹੰਨਿ ॥ ਗੁਰਿ ਰਾਖੇ ਸੇ ਉਬਰੇ ਹਰਿ ਸਿਉ ਕੇਲ ਕਰੰਨਿ ॥੩੩॥	ना ओइ जनमहि ना मरहि ना ओइ दुख सहँनि ॥ गुरि राखे से उबरे हरि सिउ केल करँनि ॥३३॥
ਸਜਣ ਮਿਲੇ ਨ ਵਿਛੁੜਹਿ ਜਿ ਅਨਦਿਨੁ ਮਿਲੇ ਰਹੰਨਿ ॥ ਇਸੁ ਜਗ ਮਹਿ ਵਿਰਲੇ ਜਾਣੀਅਹਿ ਨਾਨਕ ਸਚੁ ਲਹੰਨਿ ॥੩੪॥੧॥੩॥	सजण मिले न विछुड़हि जि अनदिनु मिले रहँनि ॥ इसु जग महि विरले जाणीअहि नानक सचु लहँनि ॥३४॥१॥३॥

राग सूही महला -३ घर-१०
१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

इस शब्द में गुरु जी हमें सदाचारी और सफल जीवन व्यतीत करने के लिये कुछ अति आवश्यक संदेश देते हैं, जिन्हें अपनाने से ना केवल हमें ही आनंद और सम्मान मिलेगा, अपितु, हमारे सभी मित्र और सम्बन्धी भी उनसे लाभान्वित होंगे ।

सर्वप्रथम गुरु जी की टिप्पणी उन अनेक लोगों के सामान्य स्वभाव पर है जो शक्तिशाली, धनवान और प्रतिष्ठित लोगों से अनुग्रह प्राप्त करने के लिये उनकी मिथ्या प्रशंसा करते रहते हैं ।परन्तु,अंत में उन्हें निराशा ही मिलती है, क्योंकि, या तो वह उच्च लोग वचन देने के पश्चात सहायता देना नहीं चाहते या फिर वह अपनी सत्ता एंव प्रभाव से वंचित हो चुके हों और यह भी हो सकता है कि वह अपनी सांसारिक यात्रा ही समाप्त कर चुके हों। अतः, गुरु जी हमें कहते हैं : "(हे' मानव) इस संसार की मिथ्या प्रशंसा ना करो जिसने अंत में मरना है अथवा लोगों की मिथ्या प्रशंसा मत करो जो मर कर एक दिन ख़ाक हो जायेंगे "।(१)

गुरु जी अब प्रकट करते हैं कि किसकी प्रशंसा एवं यश का वर्णन हम करें । प्रभु को सम्बोधित करते हुये वह कहते हैं : " हे' मेरे स्वामी तेरी वाह वाह करता हूँ । (हे' मेरे मित्रो), गुरु के शिष्यों को सदा गुरु की वाणी के द्वारा उस सच्चे परमेश्वर की प्रशंसा करनी चाहिये "।(१- विराम)

अनेक अंहकारी लोग जो सांसारिक रूप से प्रभावशाली लोगों से मित्रता करने के प्रयास में रहते हैं, उन पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं : " अंहकारी लोग संसार में (प्रभावशाली लोगों से) मित्रता करने के प्रयासों में ही (थक जाते हैं) जल मरते हैं (वह प्रभु की पूजा पाठ में अपना ध्यान और समय नहीं लगाते) ।अतः (मृत्यु के पश्चात) वह यमलोक में बाँध कर मारे जाते हैं और उन्हें (प्रभु नाम का ध्यान करने का) दूसरा अवसर नहीं मिलता (जिससे उनकी रक्षा हो सके) " ।(२)

परन्तु, गुरु के अनुयायियों के लिये गुरु जी कहते हैं : " गुरु के अनुयायियों का जन्म सफल है, क्योंकि, वह गुरु के सच्चे शब्द (वाणी) से एकलय हैं । उनकी आत्मा को सर्वव्यापी राम ने प्रकाशमयी कर दिया है इस लिये वह सहज रूप से सुखी एवं प्रसन्न रहते हैं "।(३)

अंहकारी मनुष्यों के आचार व्यवहार पर गुरु जी फिर एक बार टिप्पणी करते हुये कहते हैं :" (अंहकारी मनुष्य) गुरु के शब्द (वाणी) को बिसार कर दूसरी (सांसारिक) प्रवृत्तियों में रचे रहते हैं (व्यस्त रहते हैं) ।उनकी (सांसारिक लोभ लालसा की) भूख एवं तृष्णा कभी समाप्त नहीं होती और दिन रात वह इसी दुख की जलन में भटकते रहते हैं "।(४)

अंहकारी व्यक्तियों के आचरण पर गुरु जी और आगे कहते हैं : " (ऐसे लोगों की) दुष्ट लोगों से मित्रता और संतों से उनका बैर होता है । अतः, वह परिवार सहित (भवसागर में) डूबते हैं और अपने सारे वंश को भी डुबो देते हैं (अर्थात, वह स्वयं को तो नष्ट करते ही हैं, साथ में अपने पूरे कुल को भी असम्मानित करते हैं)"।(५)

ऐसे लोगों की एक और दुष्प्रवृत्ति का वर्णन गुरु जी यहाँ करते हैं : " किसी की निंदा करना भला कार्य नहीं है, परन्तु, यह मूर्ख तथा अहमी लोग ऐसा (निंदा) करने में आनंद पाते हैं । पर अंत में इन निंदकों का मुख काला होता है और वह घोर नर्क के भागी बनते हैं "।(६)

अतः, गुरु जी अपने मन को (वास्तव में हमें भी) सम्मति देते हैं : " हे' मेरे मन, (यह स्मरण रख) जिस किसी की तुम जैसी सेवा करोगे (अथवा उसे मानोगे), वैसा ही होगा और उस कर्म का वैसा ही फल अर्जित करोगे ।(प्रकृति का नियम है कि) जैसा " बीज बोओगे वैसा ही काटोगे और वही खाओगे", इसके आगे और कुछ नहीं कहा जा सकता (इस नियम के विरुद्ध जाने पर फिर तुम्हें अपने कर्मों के फल भोगने होंगे "।(७)

इस लिये, अब गुरु जी हमें पवित्र महापुरुषों की संगति से जुड़ने की प्रेरणा देते हुये कहते हैं : "(हे मेरे मित्रो, जो कुछ भी) महापुरुष उच्चारित करते हैं उसका गंभीर आशय होता है । वह स्वयं (प्रभु नाम रूपी) अँमृत से परिपूर्ण होते हैं तथा उनके मन के अंदर एक तिल भर भी कोई स्वार्थ अथवा बैर भावना नहीं होती (वह जो भी कहते हैं दूसरों के लिये कल्याणकारी होता है)"।(८)

ऐसे पवित्र लोगों की संगति के गुणों का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), ऐसे गुणवान (पवित्र महापुरुष) गुणों को संग्रह करते हैं तथा अन्य सभी को भी (वैसा ही करने का) उपदेश देते हैं । वह लोग सौभाग्यशाली हैं जो ऐसे (महापुरुषों) से मिलते हैं (और फिर उनकी संगति में)दिन रात (प्रभु के) नाम का ध्यान करते हैं "।(९)

गुरु जी अब मनुष्य तथा उसके परिवार के भरण पोषण के लिये अन्य लोगों पर निर्भरता के पहलू पर अपना विचार प्रकट करते हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्र, स्मरण रहे कि) वह (प्रभु) जिसने इस धरती का सृजन किया है, वही सबको जीविका (तथा, आहार) भी देता है। एक वही दाता है और वही स्वयं सच्चा एवं धनवान स्वामी है "।(१०)

परन्तु, बहुधा हम ऐसे आश्वासन को नकारते हुए सोचते हैं कि पता नहीं ईश्वर कहाँ है ? और हम तुरंत ही अपनी आवश्यकता को पूरा करने के लिए किसी को ढूँढते हैं । ऐसी स्थिति में गुरु जी का कथन है " (हे' मानव), वह सच्चा अनंत प्रभु सदा तेरे साथ है, गुरु के आदेश का पालन करते हुये (आत्मिक दृष्टि से)उसे देख कर आनंदित रहो । वह (प्रभु) स्वयं अपनी कृपा से तुम्हें क्षमा करके अपने साथ मिला लेता है, उसी प्रभु को (तुम मन में) सदा स्मरण करो "।(११)

किन्तु, गुरु जी हमें सतर्क करते हुये कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, हमारा) मन मैला है, जबकि सच्चा (अनंत प्रभु) अति निर्मल है, ऐसी दशा में कैसे हम (उस पवित्र प्रभु से) मिल सकते हैं ? (प्रतिउत्तर में) यदि, प्रभु मिलाना चाहें तो (गुरु की) वाणी के द्वारा (हम अपने) अहम को नष्ट करके उसे मिल सकते हैं "।(१२)

अब गुरु जी यह बताते हैं कि प्रभु को कभी भी ना भुलाना कितना आवश्यक है, वह यह भी कहते हैं कि यह कैसे निश्चित किया जाये कि ऐसा कभी ना हो । अतः उनका कथन है : " (हे' मेरे मित्रो), यदि हम उस सच्चे अनंत प्रियतम को भुला देंगे तो संसार में हमारा जीवन धिक्कार है । परन्तु, यदि हम गुरु की मति पर विचार करते रहें (और उसका अनुसरण करें) तो (प्रभु की) कृपा दृष्टि बनी रहने के कारण हम उसे नहीं बिसार पायेंगे " ।(१३)

अतः, अपनी वर्तमान मनोदशा का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : " हे मेरे मित्रो, मैं यह जानता हूँ) कि यदि सच्चा गुरु मुझे (उस प्रभु के साथ) मिलाता है तो मैं उस सच्चे (प्रभु) को अपने हृदय में धारण करके रखूँगा । वह मनुष्य जो गुरु के प्रेम एवं स्नेह के द्वारा प्रभु से मिला हुया हो, दोबारा उससे बिछुड़ नहीं सकता "।(१४)

अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर गुरु जी हमें कहते हैं : " जो (आत्मा रूपी) वधू गुरु के शब्द (वाणी) को विचारने से अपने प्रियतम की सराहना करती है वह प्रिय प्रभु से मिल कर सुख पाती है और शोभावंती नारी बन जाती है "।(१५)

गुरु जी फिर से अंहकारी लोगों के आचरण पर आते हैं और कहते हैं कि यह लोग क्यों ऐसा व्यवहार करते हैं । वह कहते हैं : " (हे मेरे मित्रो), अंहकारी लोगों का मन मैला तथा इतना कठोर होता है कि वह किसी भी (सच्ची एवं भली बात से) पसीजते नहीं । वह सर्प की भाँति हैं, जिन्हें दूध पिलाने से कोई अंतर नहीं पड़ता, क्योंकि, उनके अंदर तो विशुद्ध विष ही है "।(१६)

अंहकारी जनों का हृदय क्यों इतना मैला होता है और वह कभी क्यों नहीं पवित्र हो पाता ? इस प्रकार के कारणों पर गुरु जी के विचार हैं " (हे' मेरे मित्रो, जब प्रभु स्वयं) सब कुछ कर रहे हैं तो हम किसे कैसे (भला अथवा बुरा) कह सकते हैं । वह प्रभु स्वयं ही सबको क्षमा प्रदान करके उन पर कृपा करते हैं ।(अत: जब) गुरु के शब्द (वाणी) पर विचार करने के पश्चात मन की मैल (अहम भावना) उतरती है तभी आत्मा सच्चे सदैवी (प्रभु रुपी) श्रृंगार से सुसज्जित होती है "।(१७)

प्रभु के दरबार में सत्य का क्या महत्व है, इस पर गुरु जी कहते हैं : (हे' मेरे मित्रो) , यह साहूकार (नाम रूपी सम्पदा का स्वामी , प्रभु) अनंत सत्य है तथा उस सम्पदा के व्यापारी भी अनंत रूप में सच्चे हैं, झूठे लोग वहाँ पर बिल्कुल नहीं टिक पाते, क्योंकि, इन्हें सत्य नहीं भाता, इसी कारण वह दुख दर्द में ही समाप्त हो जाते हैं "।(१८)

अब गुरु जी संसार के सामान्य व्यवहार पर टिप्पणी करते हैं तथा कहते हैं : (हे' मेरे मित्रो), समस्त संसार अहम के मैल से युक्त होकर भटकता फिर रहा है, इसलिये वह बारम्बार जन्म मरण के फेर में रहता है । प्रारब्ध के अनुसार (पूर्व जन्मों के कर्मों के फलस्वरूप) जो भी किसी को करना है, उसे (प्रभु के बिना)कोई भी नहीं मिटा सकता "।(१९)

गुरु जी, चूँकि, प्रत्येक के प्रति दयालु हैं, इस लिये वह हमें बताते हैं कि इस जन्म में कोई कैसे करे कि उसे जन्म मरण का कष्ट फिर से ना भोगना पड़े । वह कहते हैं : (हे' मेरे मित्रो, यदि कोई) संतों की संगति में रहता है तो उसे सच्चे अनंत प्रभु से प्रेम हो जाता है । सच्चे प्रभु की महिमा सच्चे (निष्ठा एवं प्रेम परिपूर्ण) मन से करने से कोई भी सच्चे अनंत प्रभु के दरबार में सच्चे रूप में स्वीकार किया जाता है, (और इस प्रकार, संतों की संगति में अनंत प्रभु को प्रेम करने से कोई भी अपने जन्म मरण के फेरों को समाप्त करके प्रभु में व्याप्त हो सकता है ") ।(२०)

गुरु के उपदेशों अथवा विचारों के गुणों पर टिप्पणी करते हुये वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), पूर्ण गुरु की मति भी पूर्ण होती है, इस लिये (गुरु की मति को मानने से) जो लोग दिन रात (प्रभु) नाम का ध्यान करते रहते हैं वह अपने अँतरमन को दृढ़ता के साथ अंहकार अथवा स्वार्थ जैसे गंभीर रोग से बचा कर रखते हैं "।(२१)

इसलिये, गुरु जी स्वयं के लिये भी कहते हैं : " (मेरी कामना है कि मैं) अपने गुरु की प्रशंसा करता रहूँ (और सम्मानपूर्वक) झुक झुक कर उसके चरण छूता रहूँ तथा अँतरमन में से अपने अहम को त्याग कर उसके सम्मुख अपने तन मन को समर्पित कर दूँ "।(२२)

एक और परामर्श देते हुये गुरु जी हमें कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), हम कई प्रकार की खींच तान में पड़े अपना नाश कर लेते हैं, इस लिये तुम्हें केवल एक ही प्रभु में ध्यान लगाना चाहिये । तुम अपना अहम तथा ' मैं ' और ' मेरा ' की भावना को त्याग दो तभी तुम सच्चे अनंत प्रभु में समाये रह सकोगे "।(२३)

सच्चे गुरु के आदेश का पालन करने वालों को क्या वरदान मिलते हैं तथा गुरु जी उनका कितना आदर करते हैं, इस पर उनका कथन है

:"(हे' मेरे मित्रो, जो) सच्चे गुरु से मिलते हैं (और, उसके उपदेश को मानते हैं) वह सब मेरे भाई बंधु हैं, क्योंकि, वह सच्चे शब्द (गुरबाणी) में लीन हो जाते हैं । इस प्रकार से जो अनंत प्रभु से जुड़ते हैं वह फिर से उससे बिछुड़ते नहीं और सच्चे (प्रभु) के द्वार पर सम्मानित रूप में दिखाई देते हैं "।(२४)

गुरु के शिष्य किस प्रकार से अपने अवगुणों तथा दोषों से मुक्त होते हैं और प्रभु उनको कितना प्रेम करते हैं, इसका वर्णन यहाँ गुरु जी करते हुये कहते हैं : " वह सब मेरे भाई, बहन तथा परम मित्र हैं जो सच्चे (प्रभु) की सेवा (भक्ति और ध्यान) करते हैं । तब उनके अवगुण दूर होने लगते हैं, गुणों का विकास होने लगता है और वह (दैवी) गुणों की साझेदारी भी करते हैं "।(२५)

गुरुजनों की सँगति में बैठ कर प्राप्त किये गये दैवी गुणों तथा आशीर्वादों के प्रति गुरु जी विस्तार से कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, गुरु की संगति में) दैवी गुणों की साझेदारी बढ़ाने से मन में सुख शांति का जन्म होता है और फिर (वह सब प्रभु की) सच्ची भक्ति करते हैं । गुरु के शब्द (वाणी) के द्वारा सभी सत्य का व्यापार करते हैं और (प्रभु) नाम रूपी राशि का लाभ कमाते हैं "।(२६)

गुरु जी सांसारिक धन सम्पदा का संचय करने के हेतु किये गये पाप कर्म और अंत में उस सम्पदा के निरर्थक हो जाने पर एक बार फिर हमें सतर्क करते हैं और साथ ही प्रभु नाम की सम्पदा को एकत्र करने के गुणों पर बात करते हुये कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), हम अनेक पाप कर्म करके सोना, चाँदी एवं धन का संचय करते हैं, परन्तु, (संसार से) चलते समय कुछ भी साथ नहीं जाता । केवल (प्रभु के) नाम के बिना कुछ भी हमारे साथ नहीं जायेगा, (इस प्रकार) समस्त संसार यमराज के द्वारा ठगा जाता है " ।(२७)

इसलिये, गुरु जी परामर्श देते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), मन के भंडार में हरि का नाम है, इसे अपने हृदय में सम्हाल कर रखो । तुम्हारे ख़र्च के लिये यह 'धन' अक्षय है और अँत तक गुरु के शिष्य का निर्वाह इसके साथ होता है "।(२८)

अतः, अपने मन (वास्तविक रूप में हमारे मन) को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं : " हे' मेरे मन, तुम मूल रूप से (प्रभु को) भुला चुके हो, (यदि तुम इसी प्रकार भूले भटके रहे) तो अपना आदर सम्मान गवाँ कर संसार से चले जायोगे । यह संसार तो मोहमाया (सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य) की दुविधा में व्याप्त है, (परन्तु, तुम) गुरु की मति अथवा उपदेश के अनुसार सच्चे अनंत (प्रभु) का ध्यान करो "।(२९)

अब गुरु जी हरि के यश तथा गुरु के आदेशों के गुणों के विषय पर कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), हरि का मोल आँका नहीं जा सकता तथा उसका यश लिखा नहीं जा सकता । केवल गुरु के शब्द (गुरबाणी) के द्वारा जब कोई तन मन से (हरि के) प्रेम में रम जाता है तब वह हरि में समाया रहता है "।(३०)

गुरु के अनुयायी, जो प्रभु के प्रेम में रंगे रहते हैं उनको प्राप्त आनंद के अनुभव की उपमा गुरु जी एक नवयौवना वधू के गूढ़ पति प्रेम से देते हुये कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), मेरा प्रियतम पति (प्रभु) अति रंगीले स्वभाव वाला है, वह सहज भाव से (आत्मा रूपी वधू को अपने प्रेम में) रंग देता है । परन्तु, उस कामिनी (आत्मा रूपी वधू) पर रंग तभी चढ़ पाता है जब वह अपने प्रियतम के अँक में जाकर समाती है (अर्थात, जब आत्मा सच्चाई के साथ प्रभु को स्मरण करती है और स्वयं को उसे समर्पित कर देती है)"।(३१)

गुरु के आदेशों की पालना करने से प्राप्त गुणों का विस्तार करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), हरि से एक अंतराल से बिछुड़े रहने के पश्चात जो सच्चे गुरु की सेवा (गुरु के आदेशों का पालन) करने लग जाते हैं, वह भी (हरि से) मिल जाते हैं ।(ऐसा करने से) उनके अँतरमन को हरि का नाम नव निधियों के रूप में प्राप्त होता है (जो इतना अधिक है कि) जितना चाहें खायें तथा खर्च करें कभी समाप्त नहीं होता, अतः, वह (प्रभु की) महिमा को सहज भाव से उच्चारित करते रहते हैं "।(३२)

गुरु के ऐसे अनुयायियों को हरि से प्राप्त वरदानों के आनंद का वर्णन गुरु जी करते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, वह गुरु के अनुयायी जो गुरु के शब्द के द्वारा हरि में समाये हुये हैं) ना वह कभी जन्म लेते हैं, ना वह मरते हैं और ना ही कोई दुखदर्द सहते हैं । (संक्षेप में), जिनकी रक्षा गुरु करते हैं उनका उद्धार हो जाता है और वह हरि के साथ प्रेम क्रीड़ा का आनंद लेते हैं "।(३३)

शब्द के अंत में गुरुजी हमें बताते हैं कि गुरु के बिरले ही शिष्य जो दिन रात हरि नाम के ध्यान में रमें रहते हैं उनका हरि के साथ मिलन कितना सदैवी है । वह कहते हैं : "(हे मेरे मित्रो), वह भक्त जो दिन रात प्रभु के साथ मिले रहते हैं (हरि नाम के ध्यान के द्वारा) वह कभी उससे बिछुड़ते नहीं । किन्तु, हे' नानक, (प्रत्यक्ष रूप से) इस जग में ऐसे लोग बिरले ही जाने जाते हैं जो सच्चे अनंत प्रभु से इस प्रकार से एकरूप हो सके हैं "।(३४)

इस शब्द में अनेक संदेश निहित हैं । सर्वप्रथम, हमें यह समझ में आ जाना चाहिये कि सांसारिक लोगों की मिथ्या प्रशंसा का कोई लाभ नहीं, क्योंकि, वह अल्पायु हैं, अतः, चिरकाल तक हमारी सहायता नहीं कर सकते । इसलिये, हमें सदा प्रभु की प्रशंसा और उसका ध्यान करना चाहिये जो अनंत है और मरणोपरांत भी हमारा सहायक है । द्वितीय, हमें अपने दंभ एवं अहम का त्याग करने के साथ साथ सांसारिक धन सम्पदा अथवा सामर्थ्य के संग्रहण में व्यस्त रहने की अपेक्षा प्रभु के सच्चे संतों की ऐसी संगति का अनुसरण करना चाहिये जो हमें अनंत प्रेम अथवा उस पर विश्वास करने का राह दिखाये । इस प्रकार से प्रभु नाम में लीन रहने से संभव है कि एक दिन हम भी उसके साथ अनंत में विलीन हो जायें ।

ਪੰਨਾ ੭੫੭

ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ ਅਸਟਪਦੀਆ ਮਹਲਾ ੪ ਘਰੁ ੨

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਕੋਈ ਆਣਿ ਮਿਲਾਵੈ ਮੇਰਾ ਪ੍ਰੀਤਮੁ ਪਿਆਰਾ ਹਉ ਤਿਸੁ ਪਹਿ ਆਪੁ ਵੇਚਾਈ ॥੧॥

ਦਰਸਨੁ ਹਰਿ ਦੇਖਣ ਕੈ ਤਾਈ ॥
ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰਹਿ ਤਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮੇਲਹਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਈ ॥੧॥ਰਹਾਉ ॥

ਜੇ ਸੁਖੁ ਦੇਹਿ ਤ ਤੁਝਹਿ ਅਰਾਧੀ ਦੁਖਿ ਭੀ ਤੁਝੈ ਧਿਆਈ ॥੨॥

ਜੇ ਭੁਖ ਦੇਹਿ ਤ ਇਤ ਹੀ ਰਾਜਾ ਦੁਖ ਵਿਚਿ ਸੂਖ ਮਨਾਈ ॥੩॥

ਤਨੁ ਮਨੁ ਕਾਟਿ ਕਾਟਿ ਸਭੁ ਅਰਪੀ ਵਿਚਿ ਅਗਨੀ ਆਪੁ ਜਲਾਈ ॥੪॥

ਪਖਾ ਫੇਰੀ ਪਾਣੀ ਢੋਵਾ ਜੋ ਦੇਵਹਿ ਸੋ ਖਾਈ ॥੫॥

ਨਾਨਕੁ ਗਰੀਬੁ ਢਹਿ ਪਇਆ ਦੁਆਰੈ ਹਰਿ ਮੇਲਿ ਲੈਹੁ ਵਡਿਆਈ ॥੬॥

ਅਖੀ ਕਾਢਿ ਧਰੀ ਚਰਣਾ ਤਲਿ ਸਭ ਧਰਤੀ ਫਿਰਿ ਮਤ ਪਾਈ ॥੭॥

ਜੇ ਪਾਸਿ ਬਹਾਲਹਿ ਤਾ ਤੁਝਹਿ ਅਰਾਧੀ ਜੇ ਮਾਰਿ ਕਢਹਿ ਭੀ ਧਿਆਈ ॥੮॥

ਜੇ ਲੋਕੁ ਸਲਾਹੇ ਤਾ ਤੇਰੀ ਉਪਮਾ ਜੇ ਨਿੰਦੈ ਤ ਛੋਡਿ ਨ ਜਾਈ ॥੯॥

ਜੇ ਤੁਧੁ ਵਲਿ ਰਹੈ ਤਾ ਕੋਈ ਕਿਹੁ ਆਖਉ ਤੁਧੁ ਵਿਸਰਿਐ ਮਰਿ ਜਾਈ ॥੧੦॥

ਵਾਰਿ ਵਾਰਿ ਜਾਈ ਗੁਰ ਊਪਰਿ ਪੈ ਪੈਰੀ ਸੰਤ ਮਨਾਈ ॥੧੧॥

ਨਾਨਕੁ ਵਿਚਾਰਾ ਭਇਆ ਦਿਵਾਨਾ ਹਰਿ ਤਉ ਦਰਸਨ ਕੈ ਤਾਈ ॥੧੨॥

ਝਖੜੁ ਝਾਗੀ ਮੀਹੁ ਵਰਸੈ ਭੀ ਗੁਰੁ ਦੇਖਣ ਜਾਈ ॥੧੩॥

ਸਮੁੰਦੁ ਸਾਗਰੁ ਹੋਵੈ ਬਹੁ ਖਾਰਾ ਗੁਰਸਿਖੁ ਲੰਘਿ ਗੁਰ ਪਹਿ ਜਾਈ ॥੧੪॥

ਜਿਉ ਪ੍ਰਾਣੀ ਜਲ ਬਿਨੁ ਹੈ ਮਰਤਾ ਤਿਉ ਸਿਖੁ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਮਰਿ ਜਾਈ ॥੧੫॥

ਪੰਨਾ ੭੫੮

ਜਿਉ ਧਰਤੀ ਸੋਭ ਕਰੇ ਜਲੁ ਬਰਸੈ ਤਿਉ ਸਿਖੁ ਗੁਰ ਮਿਲਿ ਬਿਗਸਾਈ ॥੧੬॥

ਸੇਵਕ ਕਾ ਹੋਇ ਸੇਵਕੁ ਵਰਤਾ ਕਰਿ ਕਰਿ ਬਿਨਉ ਬੁਲਾਈ ॥੧੭॥

ਨਾਨਕ ਕੀ ਬੇਨੰਤੀ ਹਰਿ ਪਹਿ ਗੁਰ ਮਿਲਿ ਗੁਰ ਸੁਖੁ ਪਾਈ ॥੧੮॥

पृ ७५७

राग सूही असटपदीआ महला ४ घर २

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा हउ तिस पहि आपु वेचाई ॥१॥

दरसनु हरि देखण कै ताई ॥

क्रिपा करहि ता सतिगुरु मेलहि हरि हरि नामु धिआई ॥१॥रहाउ ॥

जे सुखु देहि त तुझहि अराधी दुखि भी तुझै धिआई ॥२॥

जे भुख देहि त इत ही राजा दुख विचि सूख मनाई ॥३॥

तनु मनु काटि काटि सभु अरपी विचि अगनी आपु जलाई ॥४॥

पखा फेरी पाणी ढोवा जो देवहि सो खाई ॥५॥

नानकु गरीबु ढहि पइआ दुआरै हरि मेलि लैहु वडिआई ॥६॥

अखी काढि धरी चरणा तलि सभ धरती फिरि मत पाई ॥७॥

जे पासि बहालहि ता तुझहि अराधी जे मारि कढहि भी धिआई ॥८॥

जे लोकु सलाहे ता तेरी उपमा जे निंदै त छोडि न जाई ॥९॥

जे तुधु वलि रहै ता कोई किहु आखउ तुधु विसरिऐ मरि जाई ॥१०

वारि वारि जाई गुर ऊपरि पै पैरी सँत मनाई ॥११॥

नानकु विचारा भइआ दिवाना हरि तउ दरसन कै ताई ॥१२॥

झखड़ु झागी मीहु वरसै भी गुरु देखण जाई ॥१३॥

समुँदु सागरु होवै बहु खारा गुरसिखु लँघि गुर पहि जाई ॥१४॥

जिउ प्राणी जल बिनु है मरता तिउ सिखु गुर बिनु मरि जाई ॥१५॥

पृ ७५८

जिउ धरती सोभ करे जलु बरसै तिउ सिखु गुर मिलि बिगसाई ॥१६॥

सेवक का होइ सेवकु वरता करि करि बिनउ बुलाई ॥१७॥

नानक की बेनँती हरि पहि गुर मिलि गुर सुखु पाई ॥१८॥

ਤੂ ਆਪੇ ਗੁਰੁ ਚੇਲਾ ਹੈ ਆਪੇ ਗੁਰ ਵਿਚੁ ਦੇ ਤੁਝਹਿ ਧਿਆਈ ॥੧੯॥	तू आपे गुरु चेला है आपे गुर विचु दे तुझहि धिआई ॥१९॥
ਜੋ ਤੁਧੁ ਸੇਵਹਿ ਸੋ ਤੂਹੈ ਹੋਵਹਿ ਤੁਧੁ ਸੇਵਕ ਪੈਜ ਰਖਾਈ ॥੨੦॥	जो तुधु सेवहि सो तूहै होवहि तुधु सेवक पैज रखाई ॥२०॥
ਭੰਡਾਰ ਭਰੇ ਭਗਤੀ ਹਰਿ ਤੇਰੇ ਜਿਸੁ ਭਾਵੈ ਤਿਸੁ ਦੇਵਾਈ ॥੨੧॥	भँडार भरे भगती हरि तेरे जिसु भावै तिसु देवाई ॥२१॥
ਜਿਸੁ ਤੂੰ ਦੇਹਿ ਸੋਈ ਜਨੁ ਪਾਏ ਹੋਰ ਨਿਹਫਲ ਸਭ ਚਤੁਰਾਈ ॥੨੨॥	जिसु तूँ देहि सोई जनु पाए होर निहफल सभ चतुराई ॥२२॥
ਸਿਮਰਿ ਸਿਮਰਿ ਸਿਮਰਿ ਗੁਰੁ ਅਪੁਨਾ ਸੋਇਆ ਮਨੁ ਜਾਗਾਈ ॥੨੩॥	सिमरि सिमरि सिमरि गुरु अपुना सोइआ मनु जागाई ॥२३॥
ਇਕੁ ਦਾਨੁ ਮੰਗੈ ਨਾਨਕੁ ਵੇਚਾਰਾ ਹਰਿ ਦਾਸਨਿ ਦਾਸੁ ਕਰਾਈ ॥੨੪॥	इकु दानु मँगै नानकु वेचारा हरि दासनु दासु कराई ॥२४॥
ਜੇ ਗੁਰੁ ਝਿੜਕੇ ਤ ਮੀਠਾ ਲਾਗੈ ਜੇ ਬਖਸੇ ਤ ਗੁਰ ਵਡਿਆਈ ॥੨੫॥	जे गुरु झिड़के त मीठा लागै जे बखसे त गुर वडिआई ॥२५
ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੋਲਹਿ ਸੋ ਥਾਇ ਪਾਏ ਮਨਮੁਖਿ ਕਿਛੁ ਥਾਇ ਨ ਪਾਈ ॥੨੬॥	गुरमुखि बोलहि सो थाइ पाए मनमुखि किछु थाइ न पाई ॥२६॥
ਪਾਲਾ ਕਕਰੁ ਵਰਫ ਵਰਸੈ ਗੁਰਸਿਖੁ ਗੁਰ ਦੇਖਣ ਜਾਈ ॥੨੭॥	पाला ककरु वरफ वरसै गुरसिखु गुर देखण जाई ॥२७॥
ਸਭੁ ਦਿਨਸੁ ਰੈਣਿ ਦੇਖਉ ਗੁਰੁ ਅਪੁਨਾ ਵਿਚਿ ਅਖੀ ਗੁਰ ਪੈਰ ਧਰਾਈ ॥੨੮॥	सभु दिनसु रैणि देखउ गुरु अपुना विचि अखी गुर पैर धराई ॥२८॥
ਅਨੇਕ ਉਪਾਵ ਕਰੀ ਗੁਰ ਕਾਰਣਿ ਗੁਰ ਭਾਵੈ ਸੋ ਥਾਇ ਪਾਈ ॥੨੯॥	अनेक उपाव करी गुर कारणि गुर भावै सो थाइ पाई ॥२९॥
ਰੈਣਿ ਦਿਨਸੁ ਗੁਰ ਚਰਣ ਅਰਾਧੀ ਦਇਆ ਕਰਹੁ ਮੇਰੇ ਸਾਈ ॥੩੦॥	रैणि दिनसु गुर चरण अराधी दइआ करहु मेरे साई ॥३०॥
ਨਾਨਕ ਕਾ ਜੀਉ ਪਿੰਡੁ ਗੁਰੂ ਹੈ ਗੁਰ ਮਿਲਿ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਅਘਾਈ ॥੩੧॥	नानक का जीउ पिँडु गुरू है गुर मिलि तृपति अघाई ॥३१॥
ਨਾਨਕ ਕਾ ਪ੍ਰਭੁ ਪੂਰਿ ਰਹਿਓ ਹੈ ਜਤ ਕਤ ਤਤ ਗੋਸਾਈ ॥੩੨॥੧॥	नानक का प्रभु पूरि रहिओ है जत कत तत गोसाई ॥३२॥१॥

राग सूही असटपदीआ महला-४ घर-२
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

सिख विचारधारा के अनुसार एक सिख को गुरु बनाम ईश्वर जैसे महत्वपूर्ण विषय पर अति रोचक विरोधाभास दिखाई देता है, जहाँ एक ओर तो यह कहा जाता है कि गुरु अपने पवित्र विचारों द्वारा हमें प्रभु से जोड़ते हैं जबकि दूसरी ओर यह भी व्यक्त किया जाता है कि जब प्रभु की कृपा होगी तभी उस सच्चे गुरु से हमारी भेंट हो पायेगी जो प्रभु की राह पर हमें ले जायेगा । अतः, इस शब्द में गुरु जी अति विनम्रता एवं निष्कप्ट रूप से प्रभु और गुरु दोनों के साथ ही मिलने के लिए अपनी प्रेममयी भावनायों की अभिव्यक्ति करते हैं ।

वह कहते हैं : " यदि कोई आकर मुझे मेरे प्रियतम प्यारे (प्रभु) से मिलवा दे तो मैं उसके पास स्वयं को बेच दूँगा (अर्थात, उसे सब कुछ दे दूँगा) "।(१)

गुरु जी स्वीकार करते हैं कि प्रभु नाम के ध्यान द्वारा ही प्रभु से मिलन होता है, परन्तु, जब किसी को गुरु के मार्ग दर्शन का वरदान मिलता है तभी वह प्रभु नाम का ध्यान कर पाता है । अतः, वह कहते हैं : "(हे' प्रभु), यदि तुम कृपा करो, तो मुझे सच्चे गुरु से मिलवा दो जिसके द्वारा मैं तुम्हारे दर्शन पाने के लिये सदा हरि (तुम्हारे) नाम का ध्यान करूँ "।(१-विराम)

अब गुरु जी प्रभु की इच्छा को पूर्णतया स्वीकार करते हुये प्रेम से कहते हैं : "(हे' प्रभु), यदि तुम मुझे सुख दोगे तो भी मैं तुम्हारी आराधना करूँगा और दुख में भी तुम्हारा ध्यान करूँगा ।(२)

यदि तुम मुझे भूख दोगे तो मैं स्वयं को भरा पेट समझूँगा (भूख में भी सन्तुष्ट)और दुख में रह कर भी सुख का अनुभव करूँगा "।(३)

पूर्ण रूप से समर्पित भावना के साथ गुरु जी का कथन है : "(हे' प्रभु, तुम्हारी झलक पाने के लिये यदि करना पड़ा तो) मैं अपना मन और तन सब टुकड़ों में काट काट कर तुम्हें अर्पण कर दूँगा और स्वयं को अग्नि में डाल कर जला दूँगा ।(४) (मेरी इच्छा है कि) मैं (तुम्हारे भक्तों) को पंखा झोलूँ, उनके लिये पानी ढो कर लाऊँ तथा जो तुम दो वही खाऊँ ।(५) यह ग़रीब नानक तुम्हारे द्वार पर गिरा हुआ है, हे' हरि कृपा करके इसे अपना लो, इसी में तुम्हारा बड़प्पन और महिमा है "।(६)

सच्चे गुरु को ढूँढ़ निकालने के लिये वह कितना अधिक प्रयास करने के लिये तत्पर हैं इसका विवरण देते हुये गुरु जी कहते हैं : " (हे' प्रभु), मैं अपनी आँखें भी निकाल कर गुरु के चरणों के तले रख दूँगा तथा (गुरु से) मति पाने के लिये सारी धरती का भ्रमण भी कर सकता हूँ "।(७)

प्रभु के साथ अपने प्रेम की सीमा का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' प्रभु), तुम मुझे अपने पास बैठा लोगे तो भी तुम्हारी आराधना करूँगा और यदि मार कर भगा दोगे तब भी तुम्हारा ही ध्यान करूँगा ।(८) यदि, लोग मेरी प्रशंसा करेंगे (तो मैं समझूँगा कि) यह तेरी ही उपमा अथवा यश है और यदि वह मेरी निंदा करते हैं तब भी मैं तुम्हें छोड़ कर नहीं जाऊँगा ।(९) यदि तुम मेरे साथ हो तो कोई कुछ भी कहे मुझे उसकी चिंता नहीं, परन्तु, जब तुम मेरे मन में से बिसर जायोगे (तब मुझे ऐसा प्रतीत होगा जैसे कि) मैं मर गया हूँ ।(१०) मैं अपने गुरु पर बारम्बार बलिहारी हूँ तथा मैं अपने (गुरु अथवा) संत के चरणों में पड़ उन्हें मना लूँगा ।(११) (संक्षेप में, हे' हरि) नानक बेचारा तुम्हारे दर्शन पाने के लिये दीवाना (विक्षिप्त) हो गया है "।(१२)

प्रभु से मिलाने वाले गुरु की झलक पाने के लिये अपने समर्पण की भावना को प्रकट करते हुये कहते हैं " हे' प्रभु, कितनी भी आँधी चले, तूफ़ान आये और भारी वर्षा हो, मैं उस सब के बीच भी अपने गुरु को देखने के लिये अवश्य जाऊँगा ।(१३) यदि उसके सम्मुख अति खारे पानी वाला महान सागर भी हो, तब भी गुरु का शिष्य उसे लाँघ कर गुरु के पास जायेगा "।(१४)

एक सच्चा सिख अपने गुरु से क्यों इतना प्रेम करता है कि वह उसके लिये इतने जोखिम उठाने के लिए तत्पर है, गुरु जी यहाँ उन कारणों को व्यक्त करते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), जैसे कि एक प्राणी जल के बिना मर जाता है, उसी प्रकार एक शिष्य गुरु के बिना मृत्यु को प्राप्त हो जाता है ।(१५) दूसरी ओर, जैसे वर्षा होने पर धरती सुंदर दिखाई देती है उसी प्रकार एक शिष्य गुरु को देखकर अत्यंत हर्षित होता है "।(१६)

अतः, गुरु जी प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं : " (हे' मेरे प्रभु, मुझे आशीर्वाद दो कि) मैं गुरु के सेवक का भी सेवक बन कर रहूँ और उस के साथ सदा आदर और विनीत भाव से बात करूँ ।(१७) हरि के सम्मुख नानक विनती करते हैं कि वह (कृपा करें और) गुरु से मिला दें, क्योंकि, गुरु से मिलकर बहुत सुख एवं आनंद प्राप्त होता है "।(१८)

अब गुरु जी प्रभु के कुछ अनूठे गुणों को स्वीकार करते हैं और कहते हैं कि कैसे वह अपने भक्तों का सम्मान करता है और कैसे प्रत्येक जन उसकी कृपा पाने के लिये उस पर आश्रित है । उनका कथन है : " (हे' हरि), तुम स्वयं ही गुरु हो और स्वयं ही शिष्य हो, मैं गुरु के द्वारा तुम्हारा ध्यान करता हूँ । (१९) जो तुम्हारी पूजा एवं भक्ति करते हैं वह तुम्हारे जैसे बन जाते हैं, तुम उस सेवक अथवा भक्त के सम्मान की रक्षा करते हो ।(२०) तुम्हारे पास भक्ति के भंडार भरे पड़े हैं, परन्तु, हे' हरि, जो कोई तुम्हें भाता है उसी को तुम (गुरु के द्वारा अपनी भक्ति) प्रदान करते हो ।(२१) हाँ, जिसे तुम देते हो केवल वही जन (तुम्हारी भक्ति को) प्राप्त करता है, अन्य कोई भी चतुराई अथवा चेष्टा निष्फल है ।(२२) इसलिये, (हे' हरि, मेरी यह कामना तथा प्रार्थना है कि) मैं अपने गुरु का बारम्बार जाप एवं सिमरन करके अपने सोते हुये मन को (सांसारिक लोभ लालसा की निद्रा से) जगा लूँ ।(२३) (हे' हरि), यह बेचारा नानक, केवल एक ही दान तुमसे माँगता है कि तुम उसे अपने दासों का दास बना लो "।(२४)

इतना सब कहने के पश्चात, अपने गुरु के प्रति अत्यधिक सम्मान, शुद्ध भक्ति भावना तथा पूर्ण विश्वास प्रकट करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' प्रभु, यदि मेरे में कोई त्रुटि है और) गुरु डाँटते हैं तो मुझे मीठा लगता है,(मुझे बिल्कुल भी अखरता नहीं, किन्तु) यदि वह मुझे क्षमा करते हैं तो वह गुरु का बड़प्पन है ।(२५) (क्योंकि मैं जानता हूँ कि) जो भी गुरु के शिष्य कहते हैं उसे गुरु स्वीकार करते हैं, परन्तु, जो कुछ भी एक अंहकारी मनुष्य कहता और करता है उसे कोई स्थान नहीं मिलता ।(२६) एक गुरु का शिष्य(इतना अधिक समर्पित होता है कि) कितना भी पाला सर्दी हो अथवा बर्फ़बारी हो रही हो, वह गुरु के दर्शन के लिये अवश्य जाता है ।(२७) अतः, (मेरी इच्छा है कि मैं) दिन और रात हर समय अपने गुरु को निहारूँ और गुरु के चरणों (उसके मीठे वचन तथा स्मृतियों) को अपनी आँखों में बसा लूँ ।(२८) (मैं जानता हूँ कि) मैं गुरु के लिये अनेकों प्रकार के कार्य अथवा उपाय करता रहूँ,परन्तु, जो भी कुछ उसे भाता है, वही वह स्वीकार करता है ।(२९) हे' मेरे स्वामी, बस इतनी दया करो कि मैं दिन और रात गुरु के चरणों (उसकी पवित्र वाणी) की आराधना करूँ "।(३०)

शब्द के अंत में गुरु जी का कथन है कि वह अपने गुरु पर कितना अधिक निर्भर करते हैं और ईश्वर के प्रति उनके क्या विचार हैं । वह कहते हैं : "(हे' प्रभु), गुरु मेरी आत्मा एवं शरीर के समान हैं तथा उनसे मिल कर मेरी तृष्णा अघा गयी है ।(३१) (गुरु की कृपा से उन्हें यह समझ में आ गया है कि) नानक के प्रभु और सृष्टि के स्वामी यहाँ, वहाँ और सभी स्थानों पर पूर्ण रूप से व्याप्त हैं "।(३२)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमारे मन में गुरु के प्रति भरपूर श्रद्धा, विश्वास एवं प्रेम होना चाहिये, वह चाहे कितनी दूर हो, अथवा कैसा भी वातावरण हो हमें अवश्य ही वहाँ जाकर उसके दर्शन करने चाहिये । इसके अतिरिक्त, हमारे मन में गुरु के लिये इतना सम्मान होना चाहिये कि वह चाहे हमें कितना भी दंड दे अथवा अप्रसन्न हो तब भी हमें उससे प्रेम करते रहना चाहिये और उसके दंड में अपना कोई लाभ और भला विचारते हुए उसके वचनों को मधुर समझना चाहिए ।
तीसरा तथ्य यह है कि गुरु के मार्ग दर्शन के अनुसार प्रभु का ध्यान करते रहने से मन में ऐसे आनंद एवं संतोष का अनुभव होना चाहिए कि किसी प्रकार के कष्ट और पीड़ा को प्रभु की इच्छा मान कर सहर्ष स्वीकार कर सकें ।

ਪੰਨਾ ੭੬੦

ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੩

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਮਿਥਨ ਮੋਹ ਅਗਨਿ ਸੋਕ ਸਾਗਰ ॥
ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਉਧਰੁ ਹਰਿ ਨਾਗਰ ॥੧॥

ਚਰਣ ਕਮਲ ਸਰਣਾਇ ਨਰਾਇਣ ॥
ਦੀਨਾ ਨਾਥ ਭਗਤ ਪਰਾਇਣ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਅਨਾਥਾ ਨਾਥ ਭਗਤ ਭੈ ਮੇਟਨ ॥
ਸਾਧਸੰਗਿ ਜਮਦੂਤ ਨ ਭੇਟਨ ॥੨॥

ਜੀਵਨ ਰੂਪ ਅਨੂਪ ਦਇਆਲਾ ॥
ਰਵਣ ਗੁਣਾ ਕਟੀਐ ਜਮ ਜਾਲਾ ॥੩॥

ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਨਾਮੁ ਰਸਨ ਨਿਤ ਜਾਪੈ ॥
ਰੋਗ ਰੂਪ ਮਾਇਆ ਨ ਬਿਆਪੈ ॥੪॥

ਜਪਿ ਗੋਬਿੰਦ ਸੰਗੀ ਸਭਿ ਤਾਰੇ ॥
ਪੋਹਤ ਨਾਹੀ ਪੰਚ ਬਟਵਾਰੇ ॥੫॥

ਮਨ ਬਚ ਕ੍ਰਮ ਪ੍ਰਭੁ ਏਕੁ ਧਿਆਏ ॥
ਸਰਬ ਫਲਾ ਸੋਈ ਜਨੁ ਪਾਏ ॥੬॥

ਧਾਰਿ ਅਨੁਗ੍ਰਹੁ ਅਪਨਾ ਪ੍ਰਭਿ ਕੀਨਾ ॥
ਕੇਵਲ ਨਾਮੁ ਭਗਤਿ ਰਸੁ ਦੀਨਾ ॥੭॥

ਆਦਿ ਮਧਿ ਅੰਤਿ ਪ੍ਰਭੁ ਸੋਈ ॥
ਨਾਨਕ ਤਿਸੁ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥੮॥੧॥੨॥

पृ ७६०

राग सूही महला ५ घर ३

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

मिथन मोह अगनि सोक सागर ॥
करि किरपा उधरु हरि नागर ॥१॥

चरण कमल सरणाइ नराइण ॥
दीना नाथ भगत पराइण ॥१॥रहाउ ॥

अनाथा नाथ भगत भै मेटन ॥
साधसँगि जमदूत न भेटन ॥२॥

जीवन रूप अनूप दइआला ॥
रवण गुणा कटीऐ जम जाला ॥३॥

अँमृित नामु रसन नित जापै ॥
रोग रूप माइआ न बिआपै ॥४॥

जपि गोबिँद सँगी सभि तारे ॥
पोहत नाही पँच बटवारे ॥५॥

मन बच क्रम प्रभु एकु धिआए ॥
सरब फला सोई जनु पाए ॥६॥

धारि अनुग्रहु अपना प्रभि कीना ॥
केवल नामु भगति रसु दीना ॥७॥

आदि मधि अँति प्रभु सोई ॥
नानक तिसु बिनु अवरु न कोई ॥८॥१॥२॥

राग सूही महला-५ घर-३
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी संसार की व्यथित दशा पर टिप्पणी करते हैं और समझाते हैं कि सांसारिक प्रलोभनों से बचाने के लिए प्रभु से किस प्रकार से विनती करें ।

गुरु जी ईश्वर से कह रहे हैं : हे' मेरे सर्वोपरि प्रभु, यह संसार मिथ्या मोह (इच्छायों) की अग्नि और शोक का सागर है, अपनी कृपा करो और (इसमें डूबने से बचा कर) हमारा उद्धार करो "।(१)

अपनी प्रार्थना में आगे वह कहते हैं : " हे' नारायण, दीनानाथ, भक्तों के हितैषी, हम तेरे चरण कमलों की शरण में हैं "।(१-विराम)

प्रभु तथा उसके समस्त संतों पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु अनाथों के नाथ हैं और भक्तजनों के भय को मिटाते हैं प्रभु की सँगति में जो भी साधु संत रहते हैं, उनकी भेंट यमदूतों के साथ नहीं होती "।(२)

वह और आगे कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), जीवन के प्रतिरूप, अनूप, एवं दयालु प्रभु के गुण गान से यमराज के मृत्युजाल के फंदे कट जाते हैं (और हम जन्म मरण के फेरों से मुक्त हो जाते हैं ।)"(३)

प्रभु नाम के ध्यान के फलस्वरूप मिले वरदानों का विवरण देते हुये गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), जो मनुष्य नित्य ही अपनी जिह्वा

से अँमृत रूपी प्रभु नाम का जाप करता है, उसके अंदर मायारूपी (सांसारिक धन सम्पदा एवं सत्ता का) रोग नहीं व्याप्त होता (जो कि कष्टों का कारण है)"।(४)

गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), सृष्टि के स्वामी (प्रभु) का ध्यान धरने से कोई (स्वयं को तो बचाता ही है, पर) सब संगी साथियों का भी उद्धार करता है और उस पर पाँच विकारों (काम क्रोध, लोभ, मोह तथा अंहकार) का भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता है "।(५)

प्रभु का ध्यान करने से प्राप्त अन्य लाभ पर गुरु जी का कथन है : "(हे' मेरे मित्रो), वह मनुष्य जो मन, वचन एवं अपने कर्मों के द्वारा एक ही प्रभु का ध्यान करता है उसको जीवन में सभी फल प्राप्त होते हैं "।(६)

जिस किसी को प्रभु अपना भक्त स्वीकार कर लेते हैं उसे किस प्रकार के वरदान वह देते हैं इस पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु ने अपनी कृपा एवं प्रेम से जिसे भी अपना लिया, उसे ही केवल अपने पवित्र नाम की अँमृत रस रूपी भक्ति का स्वाद प्रदान किया "।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), (सृष्टि के) आदि काल से लेकर मध्य तथा अंत तक एक वही प्रभु है (जो स्वामी है) । हे' नानक, उसके बिना कोई और (दूसरा स्वामी) नहीं है "।(८-१-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सांसारिक इच्छायों, मिथ्याभावों तथा अन्य सामाजिक कुप्रभावों की अग्नि से बचना चाहते हैं और काम, क्रोध एवं लोभ आदि जैसे अँतरमन के विकारों से मुक्ति पाने की इच्छा रखते हैं तो प्रभु से उसकी दया दृष्टि की प्रार्थना करें कि वह हमें अपने नाम के ध्यान का वरदान देकर अपने साथ जोड़ कर रखें ।

ਪੰਨਾ ੭੬੧

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਸਿਮ੍ਰਿਤਿ ਬੇਦ ਪੁਰਾਣ ਪੁਕਾਰਨਿ ਪੋਥੀਆ ॥
ਨਾਮ ਬਿਨਾ ਸਭਿ ਕੂੜੁ ਗਾਲ੍ਹੀ ਹੋਛੀਆ ॥੧॥

ਨਾਮੁ ਨਿਧਾਨੁ ਅਪਾਰੁ ਭਗਤਾ ਮਨਿ ਵਸੈ ॥
ਜਨਮ ਮਰਣ ਮੋਹੁ ਦੁਖੁ ਸਾਧੂ ਸੰਗਿ ਨਸੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਮੋਹਿ ਬਾਦਿ ਅਹੰਕਾਰਿ ਸਰਪਰ ਰੁੰਨਿਆ ॥
ਸੁਖੁ ਨ ਪਾਇਨ੍ਹਿ ਮੂਲਿ ਨਾਮ ਵਿਛੁੰਨਿਆ ॥੨॥

ਮੇਰੀ ਮੇਰੀ ਧਾਰਿ ਬੰਧਨਿ ਬੰਧਿਆ ॥
ਨਰਕਿ ਸੁਰਗਿ ਅਵਤਾਰ ਮਾਇਆ ਧੰਧਿਆ ॥੩॥

ਸੋਧਤ ਸੋਧਤ ਸੋਧਿ ਤਤੁ ਬੀਚਾਰਿਆ ॥
ਨਾਮ ਬਿਨਾ ਸੁਖੁ ਨਾਹਿ ਸਰਪਰ ਹਾਰਿਆ ॥੪॥

ਪੰਨਾ ੭੬੨

ਆਵਹਿ ਜਾਹਿ ਅਨੇਕ ਮਰਿ ਮਰਿ ਜਨਮਤੇ ॥
ਬਿਨੁ ਬੂਝੇ ਸਭੁ ਵਾਦਿ ਜੋਨੀ ਭਰਮਤੇ ॥੫॥

ਜਿਨ੍ਹ ਕਉ ਭਏ ਦਇਆਲ ਤਿਨ੍ਹ ਸਾਧੂ ਸੰਗੁ ਭਇਆ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਤਿਨ੍ਹੀ ਜਨੀ ਜਪਿ ਲਇਆ ॥੬॥

ਖੋਜਹਿ ਕੋਟਿ ਅਸੰਖ ਬਹੁਤੁ ਅਨੰਤ ਕੇ ॥
ਜਿਸੁ ਬੁਝਾਏ ਆਪਿ ਨੇੜਾ ਤਿਸੁ ਹੇ ॥੭॥

ਵਿਸਰੁ ਨਾਹੀ ਦਾਤਾਰ ਆਪਣਾ ਨਾਮੁ ਦੇਹੁ ॥
ਗੁਣ ਗਾਵਾ ਦਿਨੁ ਰਾਤਿ ਨਾਨਕ ਚਾਉ ਏਹੁ ॥੮॥੨॥੫॥੧੬॥

पृ ७६१

सूही महला ५॥

सिमिृति बेद पुराण पुकारनि पोथीआ ॥
नाम बिना सभि कूड़ु गाली्ह होछीआ ॥१॥

नामु निधानु अपारु भगता मनि वसै ॥
जनम मरण मोहु दुखु साधू सँगि नसै ॥१॥रहाउ॥

मोहि बादि अँहकारि सरपर रुँनिआ ॥
सुखु न पाइनि्ह मूलि नाम विछुँनिआ ॥२॥

मेरी मेरी धारि बँधनि बँधिआ ॥
नरकि सुरगि अवतार माइआ धँधिआ ॥३॥

सोधत सोधत सोधि ततु बीचारिआ ॥
नाम बिना सुखु नाहि सरपर हारिआ ॥४॥

पृ ७६२

आवहि जाहि अनेक मरि मरि जनमते ॥
बिनु बूझे सभु वादि जोनी भरमते ॥५॥

जिन्ह कउ भए दइआल तिन्ह साधू सँगु भइआ ॥
अँमृतु हरि का नामु तिनी्ह जनी जपि लइआ ॥६॥

खोजहि कोटि असँख बहुतु अनँत के ॥
जिसु बुझाए आपि नेड़ा तिसु हे ॥७॥

विसरु नाही दातार आपणा नामु देहु ॥
गुण गावा दिनु राति नानक चाउ एहु ॥८॥२॥५॥१६॥

सूही महला – ५

इस शब्द से पूर्व के अनेक शब्दों में गुरु जी हमें हमारे सामान्य दोषों जैसे कि दुविधा, लोभ, अंहकार आदि को त्याग कर प्रभु के नाम का आश्रय लेने के लिये उपदेश देते रहे हैं । इस शब्द में उनका कथन है कि प्रभु के नाम पर आश्रित होना क्यों इतना आवश्यक है और यदि हम मिथ्या सांसारिक जंजालों में फँस कर स्वयं के अहम और लोभ लालसा इत्यादि की सन्तुष्टि के लिये अनेक कर्मों में व्यस्त रहते हैं तो कैसे परिणाम मिलते हैं । वह यहाँ यह भी बता रहे हैं कि प्रभु से मिलन के राह पर गुरु हमें किस प्रकार से सहायता करते हैं ।

प्रारंभ में ही गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), कुछ लोग जो प्रभु नाम का ध्यान किये बिना उच्च स्वर में स्मृति, वेद, पुराणों तथा अन्य पवित्र पुस्तकों का पाठ करते हैं तो वह सब कुछ झूठ है, ओछा है तथा पूर्णरूपेण निर्रथक है "।(१)

कहाँ से तथा कैसे प्रभु नाम की वस्तु को प्राप्त किया जा सकता है, इस पर गुरु जी का कथन है : " हे' मेरे मित्रो, प्रभु नाम का अपार भंडार उसके भक्तों के मन में वास करता है और साधु संतों (गुरु) की संगति में प्रभु नाम का ध्यान करने से हमारे जन्म मरण के दुख तथा सांसारिक मायामोह आदि सब पलायन कर जाते हैं "।(१- विराम)

जो जन गुरु के आदेश को नहीं सुनते मानते और मिथ्या सांसारिक मोहमाया में उलझे रहते हैं, उनकी दशा पर गुरु जी कहते हैं : " हे' मेरे मित्रो, जिनके मन में सांसारिक मोहमाया, वाद-विवाद एवं अहम के भाव पूर्ण रूप से रचे हुए हैं, वह मूलरूप से प्रभु नाम से बिछुड़े रह कर सुख शांति नहीं पाते और अंत में रोते हैं "।(२)

गुरु का कहा ना सुन कर प्रभु नाम का ध्यान ना करने वालों के भाग्य पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : " हे' मेरे मित्रो, ऐसे अंहकारी लोग जो 'मेरी' 'मेरी' करके स्वार्थ के बँधनों से बँधे हैं और सांसारिक माया के धंधों में लिप्त हैं, वह नर्क तथा स्वर्ग (सुख और दुख) में बारम्बार आते जाते रहते हैं "।(३)

अतः अपने समस्त विचारों तथा विवेचनायों के सार को साझा करते हुये गुरु जी कहते हैं : " हे' मेरे मित्रो, बारम्बार विचार तथा विवेचना और शोध करने के पश्चात मैंने इस तथ्य को समझा है कि प्रभु नाम के बिना कोई भी सुख शांति नहीं प्राप्त कर सकता है और अंत में वह (जीवन का खेल) हार जाता है ।(४)

संसार में मानव जीवन की सामान्य दशा पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं : " हे' मेरे मित्रो, अनेकों जीव इस संसार में आते जाते रहते हैं, बारम्बार मरते हैं और जन्म लेते हैं । (प्रभु को) बिना बूझे पहचाने जो भी करते हैं वह सब निरर्थक विवाद है, इस लिये वह अनेक योनियों में भ्रमण करते रहते हैं "।(५)

जो प्रभु नाम का ध्यान करते हैं वह सौभाग्यशाली लोग कौन हैं, इस पर गुरु जी अब कहते हैं " हे' मेरे मित्रो, जिन लोगों पर प्रभु दयालु हुये, उन्हें साधू संतों (गुरु) की संगति तथा मार्ग दर्शन का वरदान प्राप्त हुया और इन भाग्यशाली जनों ने अँमृत रूपी हरि के नाम का जाप एवं ध्यान किया " ।(६)

ऐसे लोग कितने बिरले हैं, जिन पर प्रभु अपनी कृपा दृष्टि करते हैं तथा उनके निकट रहते हैं इस पर गुरु जी कहते हैं : " हे' मेरे मित्रो, करोड़ों अथवा असंख्य लोग उस अनंत (प्रभु) की खोज में लगे रहते हैं, परन्तु वह प्रभु केवल उसी के निकट आते हैं जिसे वह स्वयं के प्रति विचार के योग्य समझते हैं (प्रभु का तथ्य समझने के लिये हमारे स्वयं के प्रयास प्रयाप्त नहीं हैं)"।(७)

शब्द के अंत में गुरु जी हमें बताते हैं कि हमें प्रभु के सम्मुख किस प्रकार से प्रार्थना करनी चाहिये । वह अपनी पूर्ण श्रद्धा एवं प्रेमभाव के साथ कहते हैं : " हे' मेरे उपकारी दाता, मुझे कभी बिसारना नहीं और कृपया मुझे अपने नाम का दान दो । नानक की केवल यही एक इच्छा और चाव है कि वह हर समय, दिन और रात तुम्हारा गुणगान करे "।(८-२-५-१६)

इस शब्द का संदेश यह है कि प्रभु नाम के ध्यान के बिना सभी और उपाय एवं विधियाँ, जैसे, पवित्र पुस्तकों तथा शास्त्रों का पाठ इत्यादि, सब खोखले और निष्फल प्रयास हैं । जो लोग अंहकारी अथवा सांसारिक प्रवृत्तियों में उलझे रहते हैं वह निश्चित रूप से कष्ट पाते हैं । अंत में, प्रभु को ढूँढ़ने के लिये हम स्वयं चाहे कितने भी प्रयत्न करलें, परन्तु, जब तक प्रभु की कृपा के द्वारा गुरु का मार्ग दर्शन नहीं प्राप्त करेंगे हम प्रभु की झलक नहीं पा सकते ।

ਪੰਨਾ ੭੬੩

ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ ਛੰਤ ਮਹਲਾ ੧ ਘਰੁ ੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਭਰਿ ਜੋਬਨਿ ਮੈ ਮਤ ਪੇਈਅੜੈ ਘਰਿ ਪਾਹੁਣੀ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਮੈਲੀ ਅਵਗਣਿ ਚਿਤਿ ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਗੁਣ ਨ ਸਮਾਵਨੀ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਗੁਣ ਸਾਰ ਨ ਜਾਣੀ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਣੀ ਜੋਬਨੁ ਬਾਦਿ ਗਵਾਇਆ ॥
ਵਰੁ ਘਰੁ ਦਰੁ ਦਰਸਨੁ ਨਹੀ ਜਾਤਾ ਪਿਰ ਕਾ ਸਹਜੁ ਨ ਭਾਇਆ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਪੂਛਿ ਨ ਮਾਰਗਿ ਚਾਲੀ ਸੂਤੀ ਰੈਣਿ ਵਿਹਾਣੀ ॥
ਨਾਨਕ ਬਾਲਤਣਿ ਰਾਡੇਪਾ ਬਿਨੁ ਪਿਰ ਧਨ ਕੁਮਲਾਣੀ ॥੧॥

ਬਾਬਾ ਮੈ ਵਰੁ ਦੇਹਿ ਮੈ ਹਰਿ ਵਰੁ ਭਾਵੈ ਤਿਸ ਕੀ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਜੁਗ ਚਾਰਿ ਤ੍ਰਿਭਵਣ ਬਾਣੀ ਜਿਸ ਕੀ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਤ੍ਰਿਭਵਣ ਕੰਤੁ ਰਵੈ ਸੋਹਾਗਣਿ ਅਵਗਣਵੰਤੀ ਦੂਰੇ ॥
ਜੈਸੀ ਆਸਾ ਤੈਸੀ ਮਨਸਾ ਪੂਰਿ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰੇ ॥
ਹਰਿ ਕੀ ਨਾਰਿ ਸੁ ਸਰਬ ਸੁਹਾਗਣਿ ਰਾਂਡ ਨ ਮੈਲੈ ਵੇਸੇ ॥
ਨਾਨਕ ਮੈ ਵਰੁ ਸਾਚਾ ਭਾਵੈ ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਤੈਸੇ ॥੨॥

ਬਾਬਾ ਲਗਨੁ ਗਣਾਇ ਹੰ ਭੀ ਵੰਞਾ ਸਾਹੁਰੈ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਸਾਹਾ ਹੁਕਮੁ ਰਜਾਇ ਸੋ ਨ ਟਲੈ ਜੋ ਪ੍ਰਭੁ ਕਰੈ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਕਿਰਤੁ ਪਇਆ ਕਰਤੈ ਕਰਿ ਪਾਇਆ ਮੇਟਿ ਨ ਸਕੈ ਕੋਈ ॥
ਜਾਞੀ ਨਾਉ ਨਰਹ ਨਿਹਕੇਵਲੁ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਤਿਹੁ ਲੋਈ ॥
ਮਾਇ ਨਿਰਾਸੀ ਰੋਇ ਵਿਛੁੰਨੀ ਬਾਲੀ ਬਾਲੈ ਹੇਤੇ ॥
ਨਾਨਕ ਸਾਚ ਸਬਦਿ ਸੁਖ ਮਹਲੀ ਗੁਰ ਚਰਣੀ ਪ੍ਰਭੁ ਚੇਤੇ ॥੩॥

पृ ७६३

राग सूही छँत महला १ घर १

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

भरि जोबनि मै मत पेईअड़ै घरि पाहुणी बलि राम जीउ ॥
मैली अवगणि चिति बिनु गुर गुण न समावनी बलि राम जीउ ॥
गुण सार न जाणी भरमि भुलाणी जोबनु बादि गवाइआ ॥
वरु घरु दरु दरसनु नही जाता पिर का सहजु न भाइआ ॥
सतिगुर पूछि न मारगि चाली सूती रैणि विहाणी ॥
नानक बालतणि राडेपा बिनु पिर धन कुमलाणी ॥१॥

बाबा मै वरु देहि मै हरि वरु भावै तिस की बलि राम जीउ ॥
रवि रहिआ जुग चारि त्रिभवण बाणी जिस की बलि राम जीउ ॥
त्रिभवण कँतु रवै सोहागणि अवगणवँती दूरे ॥
जैसी आसा तैसी मनसा पूरि रहिआ भरपूरे ॥
हरि की नारि सु सरब सुहागणि रांड न मैलै वेसे ॥
नानक मै वरु साचा भावै जुगि जुगि प्रीतम तैसे ॥२॥

बाबा लगनु गणाइ हँ भी वँञां साहुरै बलि राम जीउ ॥
साहा हुकमु रजाइ सो न टलै जो प्रभु करै बलि राम जीउ ॥
किरतु पइआ करतै करि पाइआ मेटि न सकै कोई ॥
जाञीं नाउ नरह निहकेवलु रवि रहिआ तिहु लोई ॥
माइ निरासी रोइ विछुँनी बाली बालै हेते ॥
नानक साच सबदि सुख महली गुर चरणी प्रभु चेते ॥३॥

ਪੰਨਾ ੭੬੪

ਬਾਬੁਲਿ ਦਿਤੜੀ ਦੂਰਿ ਨਾ ਆਵੈ ਘਰਿ ਪੇਈਐ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਰਹਸੀ ਵੇਖਿ ਹਦੂਰਿ ਪਿਰਿ ਰਾਵੀ ਘਰਿ ਸੋਹੀਐ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਸਾਚੇ ਪਿਰ ਲੋੜੀ ਪ੍ਰੀਤਮ ਜੋੜੀ ਮਤਿ ਪੂਰੀ ਪਰਧਾਨੇ ॥
ਸੰਜੋਗੀ ਮੇਲਾ ਥਾਨਿ ਸੁਹੇਲਾ ਗੁਣਵੰਤੀ ਗੁਰ ਗਿਆਨੇ ॥
ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਸਦਾ ਸਚੁ ਪਲੈ ਸਚੁ ਬੋਲੈ ਪਿਰ ਭਾਏ ॥
ਨਾਨਕ ਵਿਛੁੜਿ ਨਾ ਦੁਖੁ ਪਾਏ ਗੁਰਮਤਿ ਅੰਕਿ ਸਮਾਏ ॥੪॥੧॥

पृ ७६४

बाबुलि दितड़ी दूरि ना आवै घरि पेईऐ बलि राम जीउ ॥
रहसी वेखि हदूरि पिरि रावी घरि सोहीऐ बलि राम जीउ ॥
साचे पिर लोड़ी प्रीतम जोड़ी मति पूरी परधाने ॥
सँजोगी मेला थानि सुहेला गुणवँती गुर गिआने ॥
सतु सँतोखु सदा सचु पलै सचु बोलै पिर भाए ॥
नानक विछुड़ि ना दुखु पाए गुरमति अँकि समाए ॥४॥१॥

राग सूही छँत महला-१ घर-१
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी मानव आत्मा को एक ऐसी अल्हड़ युवती के रूप में प्रस्तुत करते हैं जिसने अभी तक के जीवन में ऐसे गुणों को पाने की चिंता नहीं की जो उसे एक योग्य वर (प्रभु) के साथ विवाह करने (जुड़ने) के लिए सहायक सिद्ध हों ।परन्तु, बाद में वह अपनी भूल समझ जाती है और अपने पिता (गुरु) को वैसे आवश्यक गुण सिखाने के लिये कहती है जो उसे अपने मँगेतर के साथ मिलने के लिए अपेक्षित हैं । तत्पश्चात, वह अपनी माता (सांसारिक मायामोह) को छोड़ कर अपने पति के घर जाती है और अनेक गुणों से सम्पन्न होने के कारण पति के घर में उसका स्वागत होता है तथा सभी उसका सम्मान करते हैं । एक प्रकार से यह शब्द अनेकों मानव जीवों की कथा है जो अपनी युवावस्था में सही मार्ग से भटके रहे, परन्तु, बाद में उन्होंने अपनी त्रुटियों को समझा और गुरु की शरण में उसके मार्ग दर्शन का अनुसरण करने से प्रभु के साथ एकाकार हो गये ।

मनुष्य की आत्मा रूपी वधू जिसे यह आभास होता है कि वह अपनी युवावस्था व्यर्थ में गँवा रही है, उसकी ओर से गुरु जी कहते हैं : " "हे' मेरे मित्रो, अपने यौवन के आवेश में मैं अहम की मदिरा के मद में खोयी रही । मुझे यह विचार ही नहीं आया कि यह संसार मेरे माता पिता के घर के समान है, जहाँ पर मैं केवल एक अतिथि के भाँति हूँ । हाँ, मैंने अपना यौवन दुष्कर्मों में व्यतीत किया और मेरी आत्मा अनेक धब्बों (दोषों) से मैली हो गयी और अब गुरु के मार्ग दर्शन के बिना मेरे मन में कोई गुण नहीं समा सकता । भ्रमों में भूली रहने के कारण मैं

प्रभु के गुणों का सार नहीं पा सकी और अपना यौवन व्यर्थ के वाद विवादों में गँवा दिया । मैंने अपने वर (प्रभु) के घर द्वार के नियमों एवं विचारों को देखने जानने की परवाह नहीं की, तथा अपने प्रियतम (प्रभु) का सहज भाव भी मन को नहीं भाया । अपने प्रियतम से मिलने के हेतु, मैंने सच्चे गुरु से मार्ग दर्शन लेकर सही राह पर चलने का प्रयास नहीं किया । मेरा समस्त यौवन ऐसी मूढ़ता में इस प्रकार से व्यतीत हो गया जैसे कि, अब तक के जीवन को एक रात समझ कर केवल सो कर गँवा दिया हो । संक्षेप में, मैं नानक कहता हूँ कि मैंनें अपना यौवन काल इस प्रकार से व्यतीत किया है, जैसै कि, मैं एक बालविधवा होऊँ और यह विधवा प्रियतम के प्रेम के बिना अपनी सुंदरता एवं लावण्य को खोकर मुरझा गयी है ।(१)

ऐसा भी होता है कि किसी विशेष घटना अथवा मन के आवेग के कारण कई लोग अपने पूर्व दुष्कर्मों को त्याग कर सही मार्ग को अपना लेते हैं । गुरु जी अब यहाँ इस वधू (आत्मा) को कुछ ऐसी ही दशा में चित्रित करते हैं जिसने अपनी भूल को पहचान लिया है और वह अब अपने पिता (गुरु) से ऐसे निर्देश लेना चाहती है जो उसे अपने प्रियतम (प्रभु) का वरण करने योग्य बना सकें और वह उससे एकरूप हो सके। अतः, गुरु जी पुनः आत्मा रुपी वधू की ओर से कहते हैं : " हे' मेरे आदरणीय पिता (गुरु), मुझे वर दो कि मैं अपने हरि रुपी वर को एक सुंदर तथा मनभावनी वधू लगूँ और उसकी हो सकूँ । वह जो चारों युगों से रमा हुया है और त्रिभवन में उसकी ख्याति है । वह तीनों लोकों का स्वामी अपनी सोहागिनों (गुरु के शिष्यों) की संगति में आन्नद पाता है अथवा रमा रहता है, परन्तु, अवगुणी वधूयों (अंहकारी आत्मा) को दूर रखता है । जैसी भी इच्छा या आशा वधू (आत्मा) की होती है, उसके मन की वही इच्छा (प्रभु) पूर्ण करता है। हरि की स्त्री (हरि के साथ एकाकार हुयी आत्मा) सदैव उसकी सोहागिन बनी रहती है तथा उसे कभी भी विधवा के मैले वेष में नहीं रहना पड़ता । नानक कहते हैं कि मेरा सच्चा वर मुझे मनभावन लगता रहे और युगों युगों तक प्रियतम वैसा ही रहे "।(२)

अब गुरु जी वधू रुपी आत्मा की आकांक्षायों का वर्णन करते हैं जो अपने पति से मिलने के लिये आतुर है । वह उसकी ओर से कहते हैं: " हे' मेरे आदरणीय पिता, कोई शुभ मुहूर्त निकलवाओ, तो मैं भी अपने ससुराल को जाऊँ "। गुरु जी, वधू के आग्रह का उत्तर उसके पिता की ओर से देते हुये कहते हैं : "(हे' मेरी प्रिय पुत्री), जीव के अपने पूर्व कर्मों के अनुसार प्रभु ने पहले से ही अपने निर्देशों की नियति की हुई है (युग्ल जोड़ी को बनाने के लिये और तोड़ने के लिये भी) तथा जो भी प्रभु करते हैं, उसे टाला नहीं जा सकता । (दूसरे शब्दों में) जो भी सृजनकर्ता ने किसी के भाग्य में लिख रखा है, उसे कोई मिटा नहीं सकता । प्रभु, जो सब जीवों से परे हैं और तीनों लोक में समाये हुये हैं वह अपने संतों की बारात में एक वर बन कर गुणी एवं योग्य वधू (आत्मा) को ब्याहते हैं । तत्पश्चात, वधू का मन प्रभु के साथ ऐसा रम जाता है कि उसकी मति जो सांसारिक मायाजाल से अभी तक मोहित थी, एक माता की भाँति बेटी से बिछुड़ने के दुख में रुदन करती है, (क्योंकि, अब वधू पति से अधिक प्रेम करती है) । हे' नानक, गुरु की सच्ची वाणी के निर्देश के द्वारा अब यह आत्मा रुपी वधू सुख शांति से प्रभु के सुखदायी महलों में रहती है और गुरु की सेवा अथवा चरणों में रह कर प्रभु को सदा मन में बसाये रखती है "।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी उस मन की अंतिम दशा का वर्णन करते हैं जो गुरु के उपदेश के द्वारा प्रभु के साथ सदा जुड़ा रहा और उसका आशीर्वाद पाकर प्रसन्न रहा । अँतरमन के ऐसे आनन्द की तुलना वह उस वधू से करते हैं जो अपने पति के घर में पूर्ण रूप से स्वीकृत है तथा घर का एक अधिकृत एवं सम्मानित सदस्य मानी जाती है । यहाँ, उस विवाहिता और सम्मानित वधू (आत्मा) की ओर से गुरु जी कहते हैं: " मेरे पिता (गुरु ने मेरे सांसारिक प्रलोभनों से भरे विचारों को पूर्ण रूप से ऐसे बदल दिया है, जैसे कि उसने) मुझे इतनी दूर ब्याह दिया हो कि मैं पुन: इस मायके के घर में ना आ सकूँ (तथापि, जन्म मरण के फेरों में से मुक्ति)। (ऐसा प्रतीत होता है कि जब) सच्चे प्रियतम ने देखा कि आत्मा रुपी वधू गुणवती है तथा उसके लिये उपयुक्त है तब उसने वधू के साथ स्वयं को मिला लिया ।वधू की मति पूर्ण रूप से सध गयी और उसे उच्च स्थान प्रदान किया गया । सौभाग्य से वह अपने पति से एकरूप हो गयी और उसका जीवन पति की संगति में सुखदायक हो गया, गुरु से ज्ञान पाकर वह गुणवती हो गयी । अब उसके मन में सदा सत्य है, सदाचार और संतोष है, वह सत्य वचन बोलती है और प्रियतम के मन को भाती है । हे' नानक, ऐसी वधू (आत्मा)अपने पति (प्रभु) से ना तो कभी बिछुड़ेगी और ना ही कभी जन्म मरण की पीड़ा को सहेगी तथा गुरु की मति को सदा मान कर प्रभु के अँक में समाई रहेगी "।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि जब तक हम संसार में जीवित हैं हमें व्यर्थ की सांसारिक प्रवृत्तियों में समय नष्ट नहीं करना चाहिये । इसकी अपेक्षा, गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) से शिक्षा लेकर इस अवसर का सदुपयोग करना चाहिये । गुरु की शिक्षा प्रभु के ध्यान के साथ साथ जीवन को सदाचार की राह पर रखती है और अंत में जब हम इस संसार से विदा लें तो सम्भवतः प्रभु हमें स्वीकार करलें और हम जन्म मरण की दुखद पीड़ा एवं यातनाओं से छूट पा सकें ।

ਪੰਨਾ ੭੬੫

ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ ਛੰਤ ਮਹਲਾ ੧ ਘਰੁ ੪ ॥

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਜਿਨਿ ਕੀਆ ਤਿਨਿ ਦੇਖਿਆ ਜਗੁ ਧੰਧੜੈ ਲਾਇਆ ॥
ਦਾਨਿ ਤੇਰੈ ਘਟਿ ਚਾਨਣਾ ਤਨਿ ਚੰਦੁ ਦੀਪਾਇਆ ॥
ਚੰਦੋ ਦੀਪਾਇਆ ਦਾਨਿ ਹਰਿ ਕੈ ਦੁਖੁ ਅੰਧੇਰਾ ਉਠਿ ਗਇਆ ॥
ਗੁਣ ਜੰਞ ਲਾੜੇ ਨਾਲਿ ਸੋਹੈ ਪਰਖਿ ਮੋਹਣੀਐ ਲਇਆ ॥
ਵੀਵਾਹੁ ਹੋਆ ਸੋਭ ਸੇਤੀ ਪੰਚ ਸਬਦੀ ਆਇਆ ॥
ਜਿਨਿ ਕੀਆ ਤਿਨਿ ਦੇਖਿਆ ਜਗੁ ਧੰਧੜੈ ਲਾਇਆ ॥੧॥

ਹਉ ਬਲਿਹਾਰੀ ਸਾਜਨਾ ਮੀਤਾ ਅਵਰੀਤਾ ॥
ਇਹੁ ਤਨੁ ਜਿਨ ਸਿਉ ਗਾਡਿਆ ਮਨੁ ਲੀਅੜਾ ਦੀਤਾ ॥
ਲੀਆ ਤ ਦੀਆ ਮਾਨੁ ਜਿਨ੍ ਸਿਉ ਸੇ ਸਜਨ ਕਿਉ ਵੀਸਰਹਿ ॥
ਜਿਨ੍ ਦਿਸਿ ਆਇਆ ਹੋਹਿ ਰਲੀਆ ਜੀਅ ਸੇਤੀ ਗਹਿ ਰਹਹਿ ॥
ਸਗਲ ਗੁਣ ਅਵਗਣੁ ਨ ਕੋਈ ਹੋਹਿ ਨੀਤਾ ਨੀਤਾ ॥
ਹਉ ਬਲਿਹਾਰੀ ਸਾਜਨਾ ਮੀਤਾ ਅਵਰੀਤਾ ॥੨॥

ਗੁਣਾ ਕਾ ਹੋਵੈ ਵਾਸੁਲਾ ਕਢਿ ਵਾਸੁ ਲਈਜੈ ॥
ਜੇ ਗੁਣ ਹੋਵਨ੍ਹਿ ਸਾਜਨਾ ਮਿਲਿ ਸਾਝ ਕਰੀਜੈ ॥

ਪੰਨਾ ੭੬੬

ਸਾਝ ਕਰੀਜੈ ਗੁਣਹ ਕੇਰੀ ਛੋਡਿ ਅਵਗਣ ਚਲੀਐ ॥
ਪਹਿਰੇ ਪਟੰਬਰ ਕਰਿ ਅਡੰਬਰ ਆਪਣਾ ਪਿੜੁ ਮਲੀਐ ॥
ਜਿਥੈ ਜਾਇ ਬਹੀਐ ਭਲਾ ਕਹੀਐ ਝੋਲਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪੀਜੈ ॥
ਗੁਣਾ ਕਾ ਹੋਵੈ ਵਾਸੁਲਾ ਕਢਿ ਵਾਸੁ ਲਈਜੈ ॥੩॥

ਆਪਿ ਕਰੇ ਕਿਸੁ ਆਖੀਐ ਹੋਰੁ ਕਰੇ ਨ ਕੋਈ ॥
ਆਖਣ ਤਾ ਕਉ ਜਾਈਐ ਜੇ ਭੂਲੜਾ ਹੋਈ ॥
ਜੇ ਹੋਇ ਭੂਲਾ ਜਾਇ ਕਹੀਐ ਆਪਿ ਕਰਤਾ ਕਿਉ ਭੁਲੈ ॥
ਸੁਣੇ ਦੇਖੇ ਬਾਝੁ ਕਹਿਐ ਦਾਨੁ ਅਣਮੰਗਿਆ ਦਿਵੈ ॥
ਦਾਨੁ ਦੇਇ ਦਾਤਾ ਜਗਿ ਬਿਧਾਤਾ ਨਾਨਕਾ ਸਚੁ ਸੋਈ ॥
ਆਪਿ ਕਰੇ ਕਿਸੁ ਆਖੀਐ ਹੋਰੁ ਕਰੇ ਨ ਕੋਈ ॥੪॥੧॥੪॥

पृ ७६५

राग सूही छँत महला १ घर ४ ॥

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

जिनि कीआ तिनि देखिआ जगु धँधड़ै लाइआ ॥
दानि तेरै घटि चानणा तनि चँदु दीपाइआ ॥
चँदो दीपाइआ दानि हरि कै दुखु अँधेरा उठि गइआ ॥
गुण जँज लाड़े नालि सोहै परखि मोहणीऐ लइआ ॥
वीवाहु होआ सोभ सेती पँच सबदी आइआ ॥
जिनि कीआ तिनि देखिआ जगु धँधड़ै लाइआ ॥१॥

हउ बलिहारी साजना मीता अवरीता ॥
इहु तनु जिन सिउ गाडिआ मनु लीअड़ा दीता ॥
लीआ त दीआ मानु जिन् सिउ से सजन किउ वीसरहि ॥
जिन् दिसि आइआ होहि रलीआ जीअ सेती गहि रहहि ॥
सगल गुण अवगणु न कोई होहि नीता नीता ॥
हउ बलिहारी साजना मीता अवरीता ॥२॥

गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ॥
जे गुण होवन् साजना मिलि साझ करीजै

पृ ७६६

साझ करीजै गुणह केरी छोडि अवगण चलीऐ ॥
पहिरे पटँबर करि अडँबर आपणा पिड़ु मलीऐ ॥
जिथै जाइ बहीऐ भला कहीऐ झोलि अँमृतु पीजै ॥
गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ॥३॥

आपि करे किसु आखीऐ होरु करे न कोई ॥
आखण ता कउ जाईऐ जे भूलड़ा होई ॥
जे होइ भूला जाइ कहीऐ आपि करता किउ भुलै ॥
सुणे देखे बाझु कहिऐ दानु अणमँगिआ दिवै ॥
दानु देइ दाता जगि बिधाता नानका सचु सोई ॥
आपि करे किसु आखीऐ होरु करे न कोई ॥४॥१॥४॥

१ओंकार सतिगुर प्रसादि
राग सूही छँत महला-१ घर-४

इस शब्द में गुरु जी बता रहे हैं कि हमें अपनी त्रुटियों का त्याग करके ऐसे गुणों को धारण करने के लिए क्या करना चाहिए जिनके द्वारा हम अपने प्रियतम (प्रभु) में लीन होने के योग्य बन सकें ।

सर्वप्रथम, गुरु जी एक अवलोकन करते हैं और कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), वह (हरि), जिसने इस सृष्टि का सृजन किया है उसी ने इसकी देख भाल की है और जगत (के सभी जीवों) को (अपने अपने) धँधे में लगा रखा है । (परन्तु, हे' हरि) यह तुम्हारा ही दिया हुया दान है कि किसी के मन के अंदर (दैवी ज्ञान का) ऐसा प्रकाश हो गया जैसे कि उसके तन में चँद्रमा रूपी दीपक प्रदीप्त हो गया हो । हाँ, जब हरि की कृपा के दान से किसी के अंदर (ज्ञानरूपी) चँद्रमा का प्रकाश होता है, तब सभी प्रकार के दुखों (व अज्ञान) का अँधकार (वहाँ से) लुप्त हो जाता है ।किन्तु, जैसे कि एक बारात के गुण दूल्हे के साथ ही सुहाते हैं, उसी प्रकार, एक मोहिनी रुपमती आत्मा रूपी वधू के गुण भी सराहनीय हैं जिसने अपने पति (हरि) को देख परख कर चुना है और यदि वर (हरि) उसके मन में बसा है । (वधू का) ऐसा विवाह भव्य रूप अथवा धूम धाम से होता है और (हरि रूपी) दूल्हा बैंड बाजे रूपी पाँच दिव्य शब्दों के साथ वधू से विवाह रचाने आता है (जो वधू के

मन में बसा है) । हाँ, वह हरि जिसने इस सृष्टि का सृजन किया है, उसी ने इसकी देख भाल की है और जगत (के सभी जीवों) को (अपने अपने) धँधे में लगा रखा है "।(१)

संतस्वभाव वाले अपने जिन मित्रों के साथ आनंद प्राप्त किया और सदाचारी गुणों को साझा किया उनके प्रति अपने विचारों को हमसे प्रकट करते हुये गुरु जी कहते हैं : " मैं अपने उन सज्जन मित्रों पर बलिहारी हूँ जो सांसारिक नियमों तथा रीतियों से अप्रभावित हैं । मैंने शारीरिक रूप से स्वयं को उनके बीच में ही उपस्थित रख कर मन के विचारों का विनिमय किया । जिन सज्जन साथियों के साथ मन के गहन विचारों का लेन देन हुया उन्हें मैं किस प्रकार से बिसार सकता हूँ । जिन्हें देख कर मैं आनंद से भर जाता हूँ उन्हें मै अपने साथ अपने प्राणों की भाँति रखता हूँ । नित्य प्रति, वह नये नये गुण प्राप्त करते रहते हैं तथा उनके अंदर कोई भी अवगुण नहीं है । मैं अपने उन सज्जन मित्रों पर बलिहारी हूँ, जो सांसारिक दोषों एवं रीतियों से अप्रभावित हैं"।(२)

गुरु जी अब व्यक्त करते हैं कि हम उन गुणों को अधिकतम रूप में कैसे प्राप्त करें जो हमें पवित्र प्रभु को पाने के योग्य बना सकें । वह एक रूपक का उपयोग करते हुए कहते हैं : " यदि हमारे पास गुणों का इत्रदान है तो हम उसे निकाल कर खोलें और उसमें से सुगंधि का आनंद लें, इसी प्रकार यदि हम जानते हैं कि हमारे सज्जन मित्रों के पास गुण हैं तो उनसे मिल कर हम उन गुणों को साझा कर लें । हाँ, हमें उन गुणों को (गुरु के शिष्यों के बीच) साझा करना चाहिये और अवगुणों को त्याग कर गुरु के निर्देशों के अनुसार चलना चाहिये । सुंदर रेशमी परिधानों (गुणों) को धारण कर और सज धज कर (जीवन को सदाचारी एवं सुंदर बना कर) संसार के मंच पर स्थान लें (और अपना कर्तव्य पूर्ण करें) । हम जहाँ भी जाकर बैठें वहीं सबके लिये भला ही कहें और सांसारिक अनर्गल को हटा कर (प्रभु नाम रूपी) अँमृत का पान करें। हाँ, यदि हमारे पास गुणों का इत्रदान है तो हम उसे निकाल कर खोलें और उसमें से सुगंधि (गुणों) का आनंद लें "।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु स्वयं ही सब कुछ कर रहा है और कोई कुछ नहीं कर रहा, अतः और किसी को हम क्या कहें (अथवा क्या शिकायत करें)। परन्तु, किसी को शिकायत भी तो तभी की जा सकती है जब किसी ने कोई भूल की हो । हाँ, यदि उस (प्रभु) ने कोई भूल की भी हो तो हम जाकर उसे कह सकते हैं, परन्तु, वह स्वयं ही तो सृष्टि का सृजनकर्ता है, वह कैसे भूल कर सकता है। वही सब कुछ देखता सुनता है और बिना कहे, बिना माँगे सबको दान देता है । वह जग विधाता सब को दान देने वाला दाता है, हे' नानक, वही सच है, अनंत है । पुनः, प्रभु स्वयं ही सब कुछ कर रहा है, किसी और को हम क्या कह सकते हैं जब और कोई कुछ कर ही नहीं रहा?"।(४-१-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें अपने संतस्वभावी एवं गुणी मित्रों से सदाचार तथा दैवी गुणों को प्राप्त करने के प्रयास एवं गुरु के उपदेश तथा निर्देशों के अनुसार प्रभु नाम के ध्यान में रहना चाहिए । गुरु के उपदेश एवं निर्देशों के अनुसार प्रभु नाम का ध्यान करते रहना चाहिये । हमें यह मान लेना होगा कि प्रभु सदैव अभ्रान्त है वह कभी भूल नहीं करता, अतः, हमें उसके किसी भी कृत्य के प्रति शिकायत नहीं होनी चाहिये, अपितु, उसकी किसी भी इच्छा अथवा आज्ञा का पालन हमारे लिए अधिक सुखदायी है ।

ਪੰਨਾ ੭੬੭

ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ ਛੰਤ ਮਹਲਾ ੩ ਘਰੁ ੨

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਸੁਖ ਸੋਹਿਲੜਾ ਹਰਿ ਧਿਆਵਹੁ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਰਿ ਫਲੁ ਪਾਵਹੁ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਫਲੁ ਪਾਵਹੁ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵਹੁ ਜਨਮ ਜਨਮ ਕੇ ਦੂਖ ਨਿਵਾਰੇ ॥
ਬਲਿਹਾਰੀ ਗੁਰ ਅਪਣੇ ਵਿਟਹੁ ਜਿਨਿ ਕਾਰਜ ਸਭਿ ਸਵਾਰੇ ॥
ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇ ਹਰਿ ਜਾਪਹੁ ਸੁਖ ਫਲ ਹਰਿ ਜਨ ਪਾਵਹੁ ॥
ਨਾਨਕੁ ਕਹੈ ਸੁਣਹੁ ਜਨ ਭਾਈ ਸੁਖ ਸੋਹਿਲੜਾ ਹਰਿ ਧਿਆਵਹੁ ॥੧॥

ਸੁਣਿ ਹਰਿ ਗੁਣ ਭੀਨੇ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਏ ॥
ਗੁਰਮਤਿ ਸਹਜੇ ਨਾਮੁ ਧਿਆਏ ॥
ਜਿਨ ਕਉ ਧੁਰਿ ਲਿਖਿਆ ਤਿਨ ਗੁਰੁ ਮਿਲਿਆ ਤਿਨ ਜਨਮ ਮਰਣ ਭਉ ਭਾਗਾ ॥

ਪੰਨਾ ੭੬੮

ਅੰਦਰਹੁ ਦੁਰਮਤਿ ਦੂਜੀ ਖੋਈ ਸੋ ਜਨੁ ਹਰਿ ਲਿਵ ਲਾਗਾ ॥
ਜਿਨ ਕਉ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕੀਨੀ ਮੇਰੈ ਸੁਆਮੀ ਤਿਨ ਅਨਦਿਨੁ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਏ ॥
ਸੁਣਿ ਮਨ ਭੀਨੇ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਏ ॥੨॥

ਜੁਗ ਮਹਿ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਨਿਸਤਾਰਾ ॥
ਗੁਰ ਤੇ ਉਪਜੈ ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰਾ ॥
ਗੁਰ ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰਾ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਪਿਆਰਾ ਜਿਸੁ ਕਿਰਪਾ ਕਰੇ ਸੁ ਪਾਏ ॥
ਸਹਜੇ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ ਕਿਲਵਿਖ ਸਭਿ ਗਵਾਏ ॥
ਸਭੁ ਕੋ ਤੇਰਾ ਤੂ ਸਭਨਾ ਕਾ ਹਉ ਤੇਰਾ ਤੂ ਹਮਾਰਾ ॥
ਜੁਗ ਮਹਿ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਨਿਸਤਾਰਾ ॥੩॥

ਸਾਜਨ ਆਇ ਵੁਠੇ ਘਰ ਮਾਹੀ ॥
ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵਹਿ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਅਘਾਹੀ ॥
ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਇ ਸਦਾ ਤ੍ਰਿਪਤਾਸੀ ਫਿਰਿ ਭੂਖ ਨ ਲਾਗੈ ਆਏ ॥
ਦਹ ਦਿਸਿ ਪੂਜ ਹੋਵੈ ਹਰਿ ਜਨ ਕੀ ਜੋ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਏ ॥
ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਆਪੇ ਜੋੜਿ ਵਿਛੋੜੇ ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਕੋ ਦੂਜਾ ਨਾਹੀ ॥
ਸਾਜਨ ਆਇ ਵੁਠੇ ਘਰ ਮਾਹੀ ॥੪॥੧॥

पृ ७६७

राग सूही छँत महला ३ घर २

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सुख सोहिलड़ा हरि धिआवहु ॥
गुरमुखि हरि फलु पावहु ॥
गुरमुखि फलु पावहु हरि नामु धिआवहु जनम जनम के दूख निवारे ॥
बलिहारी गुर अपणे विटहु जिनि कारज सभि सवारे ॥
हरि प्रभु क्रिपा करे हरि जापहु सुख फल हरि जन पावहु ॥
नानकु कहै सुणहु जन भाई सुख सोहिलड़ा हरि धिआवहु ॥१॥

सुणि हरि गुण भीने सहजि सुभाए ॥
गुरमति सहजे नामु धिआए ॥
जिन कउ धुरि लिखिआ तिन गुरु मिलिआ तिन जनम मरण भउ भागा ॥

पृ ७६८

अँदरहु दुरमति दूजी खोई सो जनु हरि लिव लागा ॥
जिन कउ क्रिपा कीनी मेरै सुआमी तिन अनदिनु हरि गुण गाए ॥
सुणि मन भीने सहजि सुभाए ॥२॥

जुग महि राम नामु निसतारा ॥
गुर ते उपजै सबदु वीचारा ॥
गुर सबदु वीचारा राम नामु पिआरा जिसु किरपा करे सु पाए ॥
सहजे गुण गावै दिनु राती किलविख सभि गवाए ॥
सभु को तेरा तू सभना का हउ तेरा तू हमारा ॥
जुग महि राम नामु निसतारा॥३॥

साजन आइ वुठे घर माही ॥
हरि गुण गावहि तृिपति अघाही ॥
हरि गुण गाइ सदा तृिपतासी फिरि भूख न लागै आए ॥
दह दिसि पूज होवै हरि जन की जो हरि हरि नामु धिआए ॥
नानक हरि आपे जोड़ि विछोड़े हरि बिनु को दूजा नाही ॥
साजन आइ वुठे घर माही ॥४॥१॥

राग सूही छँत महला-३ घर-२
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि किस प्रकार की सफलता और वरदान मिलते हैं जब हम गुरु के आदेशों को मान कर प्रभु के गुणगान करते हैं और वह आकर हमारे मन में घर बसा लेते हैं ।

गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, हरि की महिमा में) आनंदगीत गाओ और उसकी आराधना करो । गुरु के आदेश को मान कर हरि नाम रूपी फल को प्राप्त करोगे । हाँ, वह हरि जो जन्म जन्म के दुखों का निवारण करता है उसके नाम का ध्यान गुरु के मार्ग पर चलकर करो और फल पाओ । अपने गुरु पर सदा बलिहारी रहो जिसने तुम्हारे सभी कार्य (इहलोक तथा परलोक में) सँवार दिये हैं । हे' हरि के भक्तजनों (सदा विनती करो कि) हरि, सब के स्वामी तुम पर कृपा करें और तुम उसके नाम का जाप करो तथा सुख शांन्ति का वरदान पाओ । नानक कहते हैं, हे' भक्त जनों मेरे भाइयो सुनो, हरि की महिमा में दैवी आनंदगीत गाओ और उसके नाम की आराधना करो "।(१)

हरि की महिमा में आनंदगीतों का श्रवण एवं गायन करते रहने से मनुष्य को प्राप्त होने वाले वरदानों के दैवी सुखों पर गुरु जी कहते हैं :

" (हे' मेरे मित्रो), हरि के गुणों को श्रवण करने से भक्तों का मन सहज अवस्था में रम जाता है और वह गुरु की मति को मानते हुए सहज रूप में (हरि) नाम की आराधना करते हैं । किन्तु, जिनके प्रारब्ध में लिखा हुया है उन्हीं को गुरु की प्राप्ति हुई और उन के मन में से जन्म मरण के भय का पलायन हो गया । जिस मनुष्य ने अँतरमन में से दुर्मति तथा सांसारिक दुविधायों को त्याग दिया उसका मन हरि में लीन हो गया। हाँ, जिन लोगों पर मेरे स्वामी (प्रभु) ने कृपा की उन्होंने दिन रात हरि के गुणों एवं महिमा का गान किया । (इसी कारण मैं कहता हूँ कि) हरि की महिमा को श्रवण करने से भक्तों का मन सहज भाव में भीग जाता है"।(२)

गुरु जी का अब यह विचार है कि हरि के नाम का ध्यान एवं भजन कीर्तन करने के लिये गुरु तथा हरि, दोनों की कृपा की आवश्यकता क्यों है । इस पर वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), इस युग में राम के नाम का ध्यान करने से ही कल्याण होता है, परन्तु, किसी के अंदर गुरु के शब्द (वाणी) पर विचार करने की इच्छा और योग्यता गुरु के द्वारा ही उपजती है । गुरु के शब्द अथवा वाणी पर विचार और अनुसरण करने से (केवल उसी मनुष्य को) राम नाम प्रिय लगता है तथा प्राप्त होता है, जिस पर (हरि की) कृपा होती है । तब वह मनुष्य सहज भाव में आकर दिन रात (हरि के) गुण गाता है और अपने समस्त कष्टों तथा दुष्कर्मों को गवाँ लेता है । (ऐसा भक्त अथवा शिष्य फिर स्वयं ही यह कहता है, हे' प्रभु) सभी जन तेरे हैं और तुम सभी के हो ; मैं तुम्हारा हूँ और तुम मेरे हो । (और वास्तव में) इस युग में राम के नाम का ध्यान करने से ही कल्याण होता है "।(३)

जिन भक्तजनों के मन में हरि आ बसे हैं उनके दैवी आनन्द का वर्णन गुरु जी शब्द के अंत में करते हुये कहते हैं : " जिनके घर में (मन के अंदर) प्रिय सज्जन मित्र (हरि) दयालु होकर आ बसे हैं, वह पूर्ण रूप से तृप्त होकर हरि के गुण गाते हैं । हरि के गुण गाने से उनकी तृष्णा सदा के लिये तृप्त हो जाती है और (सांसारिक मायामोह की) भूख फिर से आकर नहीं लगती । (केवल यही नहीं) जो भक्त हरि नाम की आराधना करता रहता है उस की संसार की दसों दिशायों में पूजा एवं ख्याति होती है । किन्तु, हे' नानक (हरि) स्वयं ही मनुष्य को अपने साथ जोड़ते हैं और बिछोह भी दे देते हैं । उस हरि के बिना और कोई दूसरा नहीं (जो कुछ करता हो) । जिनके घर में (मन के अंदर) सज्जन मित्र (हरि) दयालु होकर आ बसते हैं (वह सदा सन्तुष्ट रहता है)"।(४-१)

इस शब्द का संदेश इस प्रकार है कि यदि हम हरि के साथ एकाकार होकर दैवी आन्नद पाना चाहते हैं तो हमें गुरु के आदेशों पर विचार और उनका अनुसरण करके हरि का यशगान करना चाहिये और शांति एवं सहज अवस्था में उसके नाम का जाप एवं ध्यान करना चाहिये। यदि हमारे प्रारब्ध में लिखा है तो प्रभु स्वयं ही हमारे मन में आ बसेंगे और फिर किसी पीड़ा अथवा कष्ट का आभास नहीं रहेगा ।

ਪੰਨਾ ੭੬੯

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਜੁਗ ਚਾਰੇ ਧਨ ਜੇ ਭਵੈ ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੋਹਾਗੁ ਨ ਹੋਈ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੭੭੦

ਨਿਹਚਲੁ ਰਾਜੁ ਸਦਾ ਹਰਿ ਕੇਰਾ ਤਿਸੁ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ਰਾਮ ॥
ਤਿਸੁ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ਸਦਾ ਸਚੁ ਸੋਈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਏਕੋ ਜਾਣਿਆ ॥
ਧਨ ਪਿਰ ਮੇਲਾਵਾ ਹੋਆ ਗੁਰਮਤੀ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਮਿਲਿਆ ਤਾ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਨਾਵੈ ਮੁਕਤਿ ਨ ਹੋਈ ॥
ਨਾਨਕ ਕਾਮਣਿ ਕੰਤੈ ਰਾਵੇ ਮਨਿ ਮਾਨਿਐ ਸੁਖੁ ਹੋਈ ॥੧॥

ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਿ ਧਨ ਬਾਲੜੀਏ ਹਰਿ ਵਰੁ ਪਾਵਹਿ ਸੋਈ ਰਾਮ ॥
ਸਦਾ ਹੋਵਹਿ ਸੋਹਾਗਣੀ ਫਿਰਿ ਮੈਲਾ ਵੇਸੁ ਨ ਹੋਈ ਰਾਮ ॥
ਫਿਰਿ ਮੈਲਾ ਵੇਸੁ ਨ ਹੋਈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੂਝੈ ਕੋਈ ਹਉਮੈ ਮਾਰਿ ਪਛਾਣਿਆ ॥
ਕਰਣੀ ਕਾਰ ਕਮਾਵੈ ਸਬਦਿ ਸਮਾਵੈ ਅੰਤਰਿ ਏਕੋ ਜਾਣਿਆ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਪ੍ਰਭੁ ਰਾਵੇ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ ਆਪਣਾ ਸਾਚੀ ਸੋਭਾ ਹੋਈ ॥
ਨਾਨਕ ਕਾਮਣਿ ਪਿਰੁ ਰਾਵੇ ਆਪਣਾ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਪ੍ਰਭੁ ਸੋਈ ॥੨॥

ਗੁਰ ਕੀ ਕਾਰ ਕਰੇ ਧਨ ਬਾਲੜੀਏ ਹਰਿ ਵਰੁ ਦੇਇ ਮਿਲਾਏ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਕੈ ਰੰਗਿ ਰਤੀ ਹੈ ਕਾਮਣਿ ਮਿਲਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਸੁਖੁ ਪਾਏ ਰਾਮ ॥
ਮਿਲਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਸੁਖੁ ਪਾਏ ਸਚਿ ਸਮਾਏ ਸਚੁ ਵਰਤੈ ਸਭ ਥਾਈ ॥
ਸਚਾ ਸੀਗਾਰੁ ਕਰੇ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ ਕਾਮਣਿ ਸਚਿ ਸਮਾਈ ॥
ਹਰਿ ਸੁਖਦਾਤਾ ਸਬਦਿ ਪਛਾਤਾ ਕਾਮਣਿ ਲਇਆ ਕੰਠਿ ਲਾਏ ॥
ਨਾਨਕ ਮਹਲੀ ਮਹਲੁ ਪਛਾਣੈ ਗੁਰਮਤੀ ਹਰਿ ਪਾਏ ॥੩॥

ਸਾ ਧਨ ਬਾਲੀ ਧੁਰਿ ਮੇਲੀ ਮੇਰੈ ਪ੍ਰਭਿ ਆਪਿ ਮਿਲਾਈ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰਮਤੀ ਘਟਿ ਚਾਨਣੁ ਹੋਆ ਪ੍ਰਭੁ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸਭ ਥਾਈ ਰਾਮ ॥
ਪ੍ਰਭੁ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸਭ ਥਾਈ ਮੰਨਿ ਵਸਾਈ ਪੂਰਬਿ ਲਿਖਿਆ ਪਾਇਆ ॥
ਸੇਜ ਸੁਖਾਲੀ ਮੇਰੇ ਪ੍ਰਭ ਭਾਣੀ ਸਚੁ ਸੀਗਾਰੁ ਬਣਾਇਆ ॥
ਕਾਮਣਿ ਨਿਰਮਲ ਹਉਮੈ ਮਲੁ ਖੋਈ ਗੁਰਮਤਿ ਸਚਿ ਸਮਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਆਪਿ ਮਿਲਾਈ ਕਰਤੈ ਨਾਮੁ ਨਵੈ ਨਿਧਿ ਪਾਈ ॥੪॥੩॥੪॥

पृ-७६९

सूही महला ३ ॥

जुग चारे धन जे भवै बिनु सतिगुर सोहागु न होई राम ॥

पृ-७७०

निहचलु राजु सदा हरि केरा तिसु बिनु अवरु न कोई राम ॥
तिसु बिनु अवरु न कोई सदा सचु सोई गुरमुखि एको जाणिआ ॥
धन पिर मेलावा होआ गुरमती मनु मानिआ ॥
सतिगुरु मिलिआ ता हरि पाइआ बिनु हरि नावै मुकति न होई ॥
नानक कामणि कँतै रावे मनि मानिऐ सुखु होई ॥१॥

सतिगुरु सेवि धन बालड़ीए हरि वरु पावहि सोई राम ॥
सदा होवहि सोहागणी फिरि मैला वेसु न होई राम ॥
फिरि मैला वेसु न होई गुरमुखि बूझै कोई हउमै मारि पछाणिआ ॥
करणी कार कमावै सबदि समावै अँतरि एको जाणिआ ॥
गुरमुखि प्रभु रावे दिनु राती आपणा साची सोभा होई ॥
नानक कामणि पिरु रावे आपणा रवि रहिआ प्रभु सोई ॥२॥

गुर की कार करे धन बालड़ीए हरि वरु देइ मिलाए राम ॥
हरि कै रँगि रती है कामणि मिलि प्रीतम सुखु पाए राम ॥
मिलि प्रीतम सुखु पाए सचि समाए सचु वरतै सभ थाई ॥
सचा सीगारु करे दिनु राती कामणि सचि समाई ॥
हरि सुखदाता सबदि पछाता कामणि लइआ कँठि लाए ॥
नानक महली महलु पछाणै गुरमती हरि पाए ॥३॥

सा धन बाली धुरि मेली मेरै प्रभि आपि मिलाई राम ॥
गुरमती घटि चानणु होआ प्रभु रवि रहिआ सभ थाई राम ॥
प्रभु रवि रहिआ सभ थाई मँनि वसाई पूरबि लिखिआ पाइआ ॥
सेज सुखाली मेरे प्रभ भाणी सचु सीगारु बणाइआ ॥
कामणि निरमल हउमै मलु खोई गुरमति सचि समाई ॥
नानक आपि मिलाई करतै नामु नवै निधि पाई ॥४॥३॥४॥

सूही महला - ३

जिस प्रकार से जल की धारा पर्वतों से नीचे की ओर बहती हुयी अंत में अपने मुख्य स्रोत सागर में जाकर मिल जाती है, उसी प्रकार से सिख मत के अनुसार मानव आत्मा का ध्येय भी अपने आदि स्रोत (प्रभु) में लीन होना है । यहाँ पर, आत्मा की इस स्थिति की तुलना गुरु जी एक नवयौवना वधू से करते हैं जो सदैव अपने पति के साथ रहने की तीव्र अभिलाषा रखती है । वधू के रूपक के उपयोग द्वारा गुरु जी यह भी व्यक्त करते हैं कि हमें कहाँ से मार्ग दर्शन लेना चाहिए, तथा अन्य कौन से उपाय करने की आवश्यकता है जो कि आत्मा (वधू)को प्रभु (पति) से मिलाने में सहायक हों और फिर ऐसी मानव आत्मा रूपी वधू किस प्रकार के वरदानों का आनंद पाती है ।

गुरु जी मानो हमें ही आत्मा रूपी वधू के रूपक में रख कर कह रहे हैं : "(हे' मेरे मित्रो), यदि वधू (आत्मा) चारों युगों तक भी इधर उधर भटकती रहे तब भी उसे सच्चे गुरु के (मार्ग दर्शन के) बिना अपना सोहाग (प्रभु) नहीं मिलता । हरि के राज्य के नियम सदा के लिये स्थिर हैं और उसके बिना कोई दूसरा नहीं है, वही सदैवी रुप में है। गुरु के शिष्य की (आत्मा ने) यह समझ लिया है कि वही एक (उसका सच्चा वर) है । जब गुरु की मति एवं उपदेश से (शिष्य की) आत्मा इस सत्य को समझ जाती है तब उस वधू (आत्मा) का मिलन अपने प्रियतम (हरि) से हो जाता है । परन्तु, जब आत्मारूपी वधू सच्चे गुरु से मिल पाई (और उसने गुरु की मति को माना)तभी उसे हरि (पति) मिले, (और उसे यह विचार आया कि) हरि के नाम के बिना मुक्ति नहीं पायी जा सकती। हे' नानक, यदि मन (हरि नाम के ध्यान के लिये) आश्वस्त है, तभी कामिनी वधू रूपी आत्मा अपने कँत (हरि) में समा कर सुख आनंद पाती है "।(१)

गुरु जी आत्मा रूपी वधू के रूपक में जैसे हमें ही कह रहे हैं : " हे' अल्हड़ बालिका (आत्मा), सच्चे गुरु की सेवा (अर्थात, उसके आदेशों की पालना) करो जिससे कि तुम हरि रूपी वर को प्राप्त कर सको । तुम सदा सोहागिन ही रहोगी और तुम्हारा वेष कभी भी मैला (एक विधवा का वेष) ना हो पायेगा । हाँ, फिर कभी भी वेष मैला ना होगा (क्योंकि फिर कभी भी हरि से ना बिछुड़ोगी), पर कोई बिरली गुरु के शिष्य की आत्मा ही अपने अहम का नाश करने के पश्चात इस भेद को बूझ पाती है । ऐसी आत्मा रूपी वधू शुभ कार्य (प्रभु नाम का ध्यान) करती है, (गुरु की) वाणी में व्यस्त रहती है और अँतरमन से वह केवल एक ही (हरि) को जानती है । गुरु के शिष्य की ऐसी आत्मा रूपी वधू अपने वर (हरि) का ध्यान दिन रात हर समय करती है और सच्ची शोभा पाती है । हे' नानक, (इस प्रकार वह) कामिनी वधू (आत्मा) अपने वर (हरि) में आनंद के साथ रमी रहती है और वह हरि सर्वव्यापी हैं "।(२)

मानव आत्मा को अपना उपदेश देते हुये गुरु जी आगे कहते हैं : " हे' बालिका वधू, वही करो जो गुरु करने के लिए कहते हैं और तब फिर वह तुम्हें तुम्हारे वर हरि से मिला देंगे । वह कामिनी वधू हरि के रंग में रँगी हुयी है और अपने प्रियतम से मिल कर सुखमयी शांति का आनंद लेती है । हाँ, वह अपने प्रियतम से मिल कर सुखी है और सच्चे अनंत (प्रभु) में समायी है और वह सच्चा हरि सदा सभी स्थानों में व्याप्त है। दिन और रात वह कामिनी वधू (आत्मा) सदैवी सच्चे गुणों के साथ श्रृंगार करती है और सच्चे (हरि) के ध्यान में समायी रहती है । (इस प्रकार सच्चे गुरु की वाणी) शब्द के द्वारा (आत्मा रूपी) वधू ने पहचान लिया है कि वर (हरि) सुखों के दाता हैं, अतः, उसने हरि को अपने कँठ से लगा लिया है । संक्षेप में, हे' नानक, (आत्मा रूपी) वधू ने गुरु की मति और आदेश को पाकर अनेक महलों में से हरि के महल को पहचान लिया है और हरि को प्राप्त कर लिया है "।(३)

कहीं ऐसा तो नहीं कि जब कोई व्यक्ति प्रभु को पाने में सफल हो जाता है तब वह स्वयं पर गर्वित होने लगे, इस पर गुरु जी अँत में कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), वह बालिकावधू (आत्मा) जिसे प्रभु ने अपने साथ मिलाया है, उसके प्रारब्ध में प्रभु ने आरंभ से ही ऐसा नियत कर दिया था । गुरु के आदेशानुसार उस वधू के हृदय में ऐसा प्रकाश (दैवी ज्ञान प्रकट) हुआ कि प्रभु सभी जगह व्याप्त हैं । प्रभु की सर्वव्यापकता के तथ्य को मन में बसा कर वधू (आत्मा) ने अपने प्रारब्ध में लिखे हुये को स्वीकार कर लिया । (इस वधू ने) अपने हृदय रूपी सेज का श्रृंगार सच्चे गुणों के द्वारा कर दिया जो मेरे प्रभु को मनभावन लगी और वह सेज (हृदय) आनंदित एवं सुखदायी हो गयी । (इस प्रकार आत्मा रूपी) कामिनी वधू गुरु से मति पाकर अपने अहम रूपी मैल को उतारने के पश्चात अपने अँतरमन में से निर्मल हो जाती है और अनंत प्रभु में समा जाती है । हे' नानक, सृजनकर्ता ने स्वयं वधू को अपने साथ मिला लिया और वधू (आत्मा) को जैसे प्रभु नाम के रूप में नौ निधियाँ प्राप्त हो गयीं (आत्मा इतनी आनंदित हो उठी) "।(४-३-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम सच्चे गुरु की शिक्षा और उपदेशों का अनुसरण किये बिना प्रभु को प्राप्त नहीं कर सकते । केवल गुरु के निर्देश के द्वारा ही अहम को त्याग कर हम अपने मन को निर्मल बना सकते हैं और तब गुरु के आदर्शों को मानते हुये स्वयं को सच्चे गुणों से सुसज्जित करके ही प्रभु से एकरूप होने के योग्य बन सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੭੭੧

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਜੇ ਲੋੜਹਿ ਵਰੁ ਬਾਲੜੀਏ ਤਾ ਗੁਰ ਚਰਣੀ ਚਿਤੁ ਲਾਏ ਰਾਮ ॥
ਸਦਾ ਹੋਵਹਿ ਸੋਹਾਗਣੀ ਹਰਿ ਜੀਉ ਮਰੈ ਨ ਜਾਏ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਜੀਉ ਮਰੈ ਨ ਜਾਏ ਗੁਰ ਕੈ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਏ ਸਾ ਧਨ ਕੰਤ ਪਿਆਰੀ ॥
ਸਚਿ ਸੰਜਮਿ ਸਦਾ ਹੈ ਨਿਰਮਲ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਸੀਗਾਰੀ ॥
ਮੇਰਾ ਪ੍ਰਭੁ ਸਾਚਾ ਸਦ ਹੀ ਸਾਚਾ ਜਿਨਿ ਆਪੇ ਆਪੁ ਉਪਾਇਆ ॥
ਨਾਨਕ ਸਦਾ ਪਿਰੁ ਰਾਵੇ ਆਪਣਾ ਜਿਨਿ ਗੁਰ ਚਰਣੀ ਚਿਤੁ ਲਾਇਆ ॥੧॥

ਪਿਰੁ ਪਾਇਅੜਾ ਬਾਲੜੀਏ ਅਨਦਿਨੁ ਸਹਜੇ ਮਾਤੀ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰਮਤੀ ਮਨਿ ਅਨਦੁ ਭਇਆ ਤਿਤੁ ਤਨਿ ਮੈਲੁ ਨ ਰਾਤੀ ਰਾਮ ॥
ਤਿਤੁ ਤਨਿ ਮੈਲੁ ਨ ਰਾਤੀ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭਿ ਰਾਤੀ ਮੇਰਾ ਪ੍ਰਭੁ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਏ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਰਾਵੇ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਅਪਣਾ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਵਾਏ ॥
ਗੁਰਮਤਿ ਪਾਇਆ ਸਹਜਿ ਮਿਲਾਇਆ ਅਪਣੇ ਪ੍ਰੀਤਮ ਰਾਤੀ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਮਿਲੈ ਵਡਿਆਈ ਪ੍ਰਭੁ ਰਾਵੇ ਰੰਗਿ ਰਾਤੀ ॥੨॥

ਪਿਰੁ ਰਾਵੇ ਰੰਗਿ ਰਾਤੜੀਏ ਪਿਰ ਕਾ ਮਹਲੁ ਤਿਨ ਪਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਸੋ ਸਹੋ ਅਤਿ ਨਿਰਮਲੁ ਦਾਤਾ ਜਿਨਿ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਵਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਵਿਚਹੁ ਮੋਹੁ ਚੁਕਾਇਆ ਜਾ ਹਰਿ ਭਾਇਆ ਹਰਿ ਕਾਮਣਿ ਮਨਿ ਭਾਣੀ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ਨਿਤ ਸਾਚੇ ਕਥੇ ਅਕਥ ਕਹਾਣੀ ॥
ਜੁਗ ਚਾਰੇ ਸਾਚਾ ਏਕੋ ਵਰਤੈ ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੭੭੨

ਨਾਨਕ ਰੰਗਿ ਰਵੈ ਰੰਗਿ ਰਾਤੀ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਸੇਤੀ ਚਿਤੁ ਲਾਇਆ ॥੩॥

ਕਾਮਣਿ ਮਨਿ ਸੋਹਿਲੜਾ ਸਾਜਨ ਮਿਲੇ ਪਿਆਰੇ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰਮਤੀ ਮਨੁ ਨਿਰਮਲੁ ਹੋਆ ਹਰਿ ਰਾਖਿਆ ਉਰਿ ਧਾਰੇ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਰਾਖਿਆ ਉਰਿ ਧਾਰੇ ਅਪਨਾ ਕਾਰਜੁ ਸਵਾਰੇ ਗੁਰਮਤੀ ਹਰਿ ਜਾਤਾ ॥
ਪ੍ਰੀਤਮਿ ਮੋਹਿ ਲਇਆ ਮਨੁ ਮੇਰਾ ਪਾਇਆ ਕਰਮ ਬਿਧਾਤਾ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਿ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਵਸਿਆ ਮੰਨਿ ਮੁਰਾਰੇ ॥
ਨਾਨਕ ਮੇਲਿ ਲਈ ਗੁਰਿ ਅਪੁਨੈ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਸਵਾਰੇ ॥੪॥੫॥੬॥

पृ ७७१

सूही महला ३॥

जे लोड़हि वरु बालड़ीए ता गुर चरणी चितु लाए राम ॥
सदा होवहि सोहागणी हरि जीउ मरै न जाए राम ॥
हरि जीउ मरै न जाए गुर कै सहजि सुभाए सा धन कँत पिआरी ॥
सचि सँजमि सदा है निरमल गुर कै सबदि सीगारी ॥
मेरा प्रभु साचा सद ही साचा जिनि आपे आपु उपाइआ ॥
नानक सदा पिरु रावे आपणा जिनि गुर चरणी चितु लाइआ ॥१॥

पिरु पाइअड़ा बालड़ीए अनदिनु सहजे माती राम ॥
गुरमती मनि अनदु भइआ तितु तनि मैलु न राती राम ॥
तितु तनि मैलु न राती हरि प्रभि राती मेरा प्रभु मेलि मिलाए ॥
अनदिनु रावे हरि प्रभु अपणा विचहु आपु गवाए ॥
गुरमति पाइआ सहजि मिलाइआ अपणे प्रीतम राती ॥
नानक नामु मिलै वडिआई प्रभु रावे रँगि राती ॥२॥

पिरु रावे रँगि रातड़ीए पिर का महलु तिन पाइआ राम ॥
सो सहो अति निरमलु दाता जिनि विचहु आपु गवाइआ राम ॥
विचहु मोहु चुकाइआ जा हरि भाइआ हरि कामणि मनि भाणी ॥
अनदिनु गुण गावै नित साचे कथे अकथ कहाणी ॥
जुग चारे साचा एको वरतै बिनु गुर किनै न पाइआ ॥

पृ ७७२

नानक रँगि रवै रँगि राती जिनि हरि सेती चितु लाइआ ॥३॥

कामणि मनि सोहिलड़ा साजन मिले पिआरे राम ॥
गुरमती मनु निरमलु होआ हरि राखिआ उरि धारे राम ॥
हरि राखिआ उरि धारे अपना कारजु सवारे गुरमती हरि जाता ॥
प्रीतमि मोहि लइआ मनु मेरा पाइआ करम बिधाता ॥
सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ हरि वसिआ मँनि मुरारे ॥
नानक मेलि लई गुरि अपुनै गुर कै सबदि सवारे ॥४॥५॥६॥

सूही महला - ३

यह एक सत्य है कि प्रत्येक नवयुवती जीवन में सर्वोत्तम वर पाने की अभिलाषा रखती हैं । इस शब्द में गुरु जी मानव आत्मा की तुलना इसी प्रकार की अल्हड़ युवती के साथ कर रहे हैं जो एक चिरकाल जीवी बलवान युवक को वर के रूप में पाना चाहती है जिससे कि उसे कभी वैधव्य की दुखद स्थिति को ना झेलना पड़े, क्योंकि, तत्कालीन सामाजिक एवं आर्थिक स्थितियों में एक स्त्री सामान्यतः पूर्ण रूप से अपने पति पर ही निर्भर रहती थी ।

गुरु जी, हमें विवाह योग्य कन्या के रूपक में ढाल कर सम्बोधित करते हैं : " हे' प्रिय अल्हड़ कन्या, यदि तुम (अपने स्वप्नों के अनुसार) वर को ढूँढ रही हो तो मन का ध्यान गुरु के चरणों (गुरु की वाणी)में लगाओ । तब तुम सदा के लिये सोहागिन रहोगी, क्योंकि, हरि जी (तुम्हारा पति) ना तो कभी मरेंगे और ना कहीं जायेंगे । हाँ, हरि जी ना तो कभी मरते हैं और ना कहीं जाते हैं और जो वधू गुरु के सहज स्वभाव को मान लेती है, वह अपने कँत हरि को प्रिय लगती है । (गुरु की शिक्षा एवं उपदेशों को अपनाने के कारण वह ऐसी सौम्य और गुणी बन जाती है कि) सदा ही सत्य और संयम को अपना कर अँतरमन से निर्मल और पवित्र हो जाती है तथा गुरु की वाणी के द्वारा (उसके जीवन का) श्रृंगार हो जाता है । (हे' मेरे मित्रो), मेरा प्रभु सच्चा और अनंत है, जिसने स्वयं का सृजन किया वह सदैव सच्चा एवं अनंत रहता है । नानक कहते हैं कि जिस वधू रूपी आत्मा ने गुरु के चरणों (गुरबाणी) में अपना मन लगा लिया है वह सदा ही अपने प्रियतम (प्रभु) में लीन रह कर आन्दित रहती है ".(१)

वह वधू, जिसने अपने प्रियतम का साथ पा लिया है उसके आनंद को अधिक विस्तार से गुरु जी व्यक्त करते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), जिस नवयौवना वधू (आत्मा) ने प्रियतम (प्रभु) को प्राप्त कर लिया है वह सहज भाव से दिन रात (उसके प्रेम में) मदमाती रहती है । गुरु की मति पर चल कर उसके मन में आनंद रहता है तथा उसके तन पर तनिक भी (दुषविचारों का) मैल नहीं लगता । हाँ, हरि के प्रेम में रमे रहने से उसके तन पर (दुष्ट भावनायों का) मैल बिल्कुल नहीं लगता और (गुरु के द्वारा) प्रभु उससे स्वयं ही मिलते हैं । अपने अँतरमन में से दंभ को त्याग कर दिन रात वह अपने प्रभु को स्मरण करती है तथा उसी में लीन रहती है । गुरु के आदेशों के प्रभाव से सहजता की दशा को प्राप्त करने पर वह अपने प्रियतम (प्रभु) से मिल पायी और अब वह उसी प्रिय के प्रेम में रमी रहती है । संक्षेप में, हे' नानक, प्रभु के नाम का स्मरण करने और उसके रंग में रंगे रहने से (संसार में) ख्याति प्राप्त होती है "।(२)

एक बार पुनः आत्मा रूपी वधू के रूपक में गुरु जी हमें सम्बोधित करते हुए उन लोगों के आचरण एवं जीवन चरित्र पर संक्षेप में विचार प्रकट करते हैं जिन्होंने प्रभु को पा लिया है । उनका कहना है : " हे' वधू रूपी आत्मा, अपने पति रूपी प्रभु प्रेम के रंग में रंगी, (तुम्हें स्मरण रहे कि) जिसने सदा अपने पवित्र एवं दाता पति का ध्यान किया और अंदर से अहम को गवाँ दिया, केवल तभी उसे प्रियतम का महल प्राप्त हुया । जब प्रभु को लगता है कि वधू (रूपी आत्मा) ने अँतरमन में से स्वयं (अहम) को गवाँ दिया है तब उस के मन को अपनी कामिनी वधू (आत्मा) मनभावनी प्रतीत होती है । (ऐसी वधू) दिन रात सच्चे (प्रभु) के गुण गाती है तथा (उसकी प्रशंसा में) अकथनीय कथायें अथवा कहानियाँ कहती है । (वह विचारती है कि) चारों युगों से व्याप्त एक ही (हरि) को किसी ने भी गुरु की सहायता और मार्ग दर्शन के बिना कभी प्राप्त नहीं किया । किन्तु, हे' नानक, जिस भी आत्मा रूपी वधू ने अपना ह्दय प्रभु में लीन किया हुया है, वह सदा उसके प्रेम में डूबी हुयी उसके साथ आनंद पाती है "।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में उस आत्मा रूपी वधू के आनंद का वर्णन करते हैं जो अपने प्रियतम प्रभु के साथ जुड़ी हुयी है । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), वह कामिनी वधू जो अपने प्रियतम प्यारे (प्रभु) से मिल चुकी है उसके ह्दय में (प्रसन्नता के कारण) आनंदगीत बज रहे हैं। (ऐसा इस लिये हुया क्योंकि) गुरु की मति के अनुसार चलने से अँतरमन निर्मल हो गया और वहाँ उसने हरि को धारण कर लिया । हरि को ह्दय में धारण करने से उसके जीवन के सभी कार्य अथवा ध्येय सम्पन्न हो गये और गुरु की मति एवं सहायता से उसने हरि को भी जान लिया । (जब कोई पूछता है तो वह कहती है कि) " मेरे प्रियतम ने मेरा मन मोह लिया है और मैंने अपने भाग्य विधाता को प्राप्त कर लिया है । सच्चे गुरु की सेवा (अनुसरण) करने से मुझे सदा सुख मिला है तथा मेरे मन में दुष्ट दमनकारी हरि आकर बस गये हैं । संक्षेप में, हे' नानक, (आत्मा रूपी वधू) जिसने जीवन को गुरु के शब्द (वाणी) द्वारा सँवार लिया है उसे गुरु ने प्रभु के साथ मिला दिया है "।(४-५-६)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने प्रियतम प्रभु के साथ एकरूप होकर दैवी आनंद पाना चाहते हैं तो हमें गुरु की आज्ञा एवं परामर्श के अनुसार अपना जीवन पवित्र बनाकर प्रेम और श्रद्धा से प्रभु की महिमा के निमित्त गायन कीर्तन करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੭੭੩

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਹਰਿ ਪਹਿਲੜੀ ਲਾਵ ਪਰਵਿਰਤੀ ਕਰਮ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਬਾਣੀ ਬ੍ਰਹਮਾ ਵੇਦੁ ਧਰਮੁ ਦ੍ਰਿੜਹੁ ਪਾਪ ਤਜਾਇਆ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਧਰਮੁ ਦ੍ਰਿੜਹੁ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵਹੁ ਸਿਮ੍ਰਿਤਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਆਰਾਧਹੁ ਸਭਿ ਕਿਲਵਿਖ ਪਾਪ ਗਵਾਇਆ ॥
ਸਹਜ ਅਨੰਦੁ ਹੋਆ ਵਡਭਾਗੀ ਮਨਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਮੀਠਾ ਲਾਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੭੭੪

ਜਨੁ ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਲਾਵ ਪਹਿਲੀ ਆਰੰਭੁ ਕਾਜੁ ਰਚਾਇਆ ॥੧॥

ਹਰਿ ਦੂਜੜੀ ਲਾਵ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੁਰਖੁ ਮਿਲਾਇਆ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਨਿਰਭਉ ਭੈ ਮਨੁ ਹੋਇ ਹਉਮੈ ਮੈਲੁ ਗਵਾਇਆ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਨਿਰਮਲੁ ਭਉ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਇਆ ਹਰਿ ਵੇਖੈ ਰਾਮੁ ਹਦੂਰੇ ॥
ਹਰਿ ਆਤਮ ਰਾਮੁ ਪਸਾਰਿਆ ਸੁਆਮੀ ਸਰਬ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰੇ ॥
ਅੰਤਰਿ ਬਾਹਰਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਏਕੋ ਮਿਲਿ ਹਰਿ ਜਨ ਮੰਗਲ ਗਾਏ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਦੂਜੀ ਲਾਵ ਚਲਾਈ ਅਨਹਦ ਸਬਦ ਵਜਾਏ ॥੨॥

ਹਰਿ ਤੀਜੜੀ ਲਾਵ ਮਨਿ ਚਾਉ ਭਇਆ ਬੈਰਾਗੀਆ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਸੰਤ ਜਨਾ ਹਰਿ ਮੇਲੁ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ਵਡਭਾਗੀਆ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਨਿਰਮਲੁ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਇਆ ਮੁਖਿ ਬੋਲੀ ਹਰਿ ਬਾਣੀ ॥
ਸੰਤ ਜਨਾ ਵਡਭਾਗੀ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਕਥੀਐ ਅਕਥ ਕਹਾਣੀ ॥
ਹਿਰਦੈ ਹਰਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਧੁਨਿ ਉਪਜੀ ਹਰਿ ਜਪੀਐ ਮਸਤਕਿ ਭਾਗੁ ਜੀਉ ॥
ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਬੋਲੇ ਤੀਜੀ ਲਾਵੈ ਹਰਿ ਉਪਜੈ ਮਨਿ ਬੈਰਾਗੁ ਜੀਉ ॥੩॥

ਹਰਿ ਚਉਥੜੀ ਲਾਵ ਮਨਿ ਸਹਜੁ ਭਇਆ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਮਿਲਿਆ ਸੁਭਾਇ ਹਰਿ ਮਨਿ ਤਨਿ ਮੀਠਾ ਲਾਇਆ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਹਰਿ ਮੀਠਾ ਲਾਇਆ ਮੇਰੇ ਪ੍ਰਭ ਭਾਇਆ ਅਨਦਿਨੁ ਹਰਿ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥
ਮਨ ਚਿੰਦਿਆ ਫਲੁ ਪਾਇਆ ਸੁਆਮੀ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਵਜੀ ਵਾਧਾਈ ॥
ਹਰਿ ਪ੍ਰਭਿ ਠਾਕੁਰਿ ਕਾਜੁ ਰਚਾਇਆ ਧਨ ਹਿਰਦੈ ਨਾਮਿ ਵਿਗਾਸੀ ॥
ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਬੋਲੇ ਚਉਥੀ ਲਾਵੈ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ਪ੍ਰਭੁ ਅਵਿਨਾਸੀ ॥੪॥੨॥

पृ-७७३

सूही महला ४॥

हरि पहिलड़ी लाव परविरती करम दृिड़ाइआ बलि राम जीउ ॥
बाणी ब्रहमा वेदु धरमु दृिड़हु पाप तजाइआ बलि राम जीउ ॥
धरमु दृिड़हु हरि नामु धिआवहु सिमृिति नामु दृिड़ाइआ ॥
सतिगुरु गुरु पूरा आराधहु सभि किलविख पाप गवाइआ ॥
सहज अनँदु होआ वडभागी मनि हरि हरि मीठा लाइआ ॥

पृ-७७४

जनु कहै नानकु लाव पहिली आरँभु काजु रचाइआ ॥१॥

हरि दूजड़ी लाव सतिगुरु पुरखु मिलाइआ बलि राम जीउ ॥
निरभउ भै मनु होइ हउमै मैलु गवाइआ बलि राम जीउ ॥
निरमलु भउ पाइआ हरि गुण गाइआ हरि वेखै रामु हदूरे ॥
हरि आतम रामु पसारिआ सुआमी सरब रहिआ भरपूरे ॥
अँतरि बाहरि हरि प्रभु एको मिलि हरि जन मँगल गाए ॥
जन नानक दूजी लाव चलाई अनहद सबद वजाए ॥२॥

हरि तीजड़ी लाव मनि चाउ भइआ बैरागीआ बलि राम जीउ ॥
सँत जना हरि मेलु हरि पाइआ वडभागीआ बलि राम जीउ ॥
निरमलु हरि पाइआ हरि गुण गाइआ मुखि बोली हरि बाणी ॥
सँत जना वडभागी पाइआ हरि कथीऐ अकथ कहाणी ॥
हिरदै हरि हरि हरि धुनि उपजी हरि जपीऐ मसतकि भागु जीउ ॥
जनु नानकु बोले तीजी लावै हरि उपजै मनि बैरागु जीउ ॥३॥

हरि चउथड़ी लाव मनि सहजु भइआ हरि पाइआ बलि राम जीउ ॥
गुरमुखि मिलिआ सुभाइ हरि मनि तनि मीठा लाइआ बलि राम जीउ ॥
हरि मीठा लाइआ मेरे प्रभ भाइआ अनदिनु हरि लिव लाई ॥
मन चिँदिआ फलु पाइआ सुआमी हरि नामि वजी वाधाई ॥
हरि प्रभि ठाकुरि काजु रचाइआ धन हिरदै नामि विगासी ॥
जनु नानकु बोले चउथी लावै हरि पाइआ प्रभु अविनासी ॥४॥२॥

सूही महला – ४

सिख मत के अनुयायियों के लिये यह शब्द अति महत्वपूर्ण है, क्योंकि, इसके पाठ और कीर्तन के द्वारा ही विवाह की प्रथा सम्पन्न की जाती है, इस प्रक्रिया को लाँवाँ (फेरे अथवा अवस्था) भी कहा जाता है ।मौलिक रूप से यह शब्द चतुर्थ गुरु, गुरु रामदास जी ने उच्चारित किया था, जिसमें मानव आत्मा का प्रभु से मिलन की यात्रा के समय को चार अवस्थायों में वर्णित किया गया है । जहाँ सर्वप्रथम, आत्मा प्रभु के प्रेम में लीन होती है, फिर गुरु के मार्ग दर्शन के अँतरगत स्वयं को पवित्र अथवा शुद्ध करने की स्थितियों को लाँघती है और अपने प्रिय प्रभु के बिना वैराग्य में रहती है, अंत में प्रभु के साथ विवाहित हो जाने से अनंत में विलीन हो जाती है । इसी लिये सिख विवाह की प्रथा 'आनंद कारज/कार्य' भी कहलाती है । इस वैवाहिक शिष्टाचार के आरंभ में गुरु ग्रंथ साहिब जी में से कुछ उपयुक्त शब्दों का पाठ एवं संगीतमयी कीर्तन किया जाता है और फिर वर और वधू के द्वारा प्रथम लाँव अथवा फेरा गुरु ग्रंथ साहिब जी के चारों ओर घूम कर पूरा किया जाता है, प्रत्येक लाँव की वाणी का कीर्तन फेरे के साथ साथ कीर्तन जत्थे के रागियों के द्वारा सम्पन्न किया जाता है और वर वधू फेरा पूरा करके गुरु ग्रंथ साहिब के सम्मुख मत्था टेक (शीश झुकाने की क्रिया) कर तब तक के लिये बैठते हैं जब तक अगली लाँव का पाठ एवं कीर्तन सम्पन्न नहीं होता, उसके पश्चात वर वधू उठ कर दूसरा फेरा अथवा लाँव लेना आरंभ करते हैं और साथ ही कीर्तन भी दोहराया जाता है । इसी विधि के द्वारा चारों लाँवाँ अथवा फेरे सम्पन्न होने के पश्चात् वैवाहिक शिष्टाचार की प्रक्रिया सम्पूर्ण हो जाती है ।

प्रथम लाँव अथवा फेरे के शब्द में गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), प्रथम लाँव (आत्मा का प्रभु से मिलन) में आत्मा रूपी वधू को (गुरु ने) जीवन में कर्मों की प्रवृत्ति के लिये दृढ़ किया । (गुरु जी कहते हैं : " हे' वधू रूपी आत्मा, यह तुम्हारा कर्तव्य एवं धर्म है कि तुम गुरु की) वाणी एवं ब्रह्मा जी द्वारा उच्चारित वेद (जो अति पवित्र रचनाएँ हैं) का दृढ़ता के साथ पालन करो जो पापों से मुक्ति दिलाते हैं ।सिमृतियों में भी प्रभु के नाम पर ध्यान करने के लिए दृढ़ किया गया है । (दूसरा तथ्य यह है कि) सच्चे पूर्ण गुरु की भी आराधना करो (क्योंकि जिसने भी ऐसा किया, उसने) अपने सभी कष्ट एवं पापकर्म सदा के लिए गँवा दिये । जिस सौभाग्यशाली मनुष्य के मन में (गुरु के द्वारा) हरि के मधुर नाम की लग्न लग गयी, उसे सहजता एवं आनंद प्राप्त हो गया । भक्त नानक कहते हैं, इस प्रकार प्रथम लाँव (फेरे) में (हरि के साथ आत्मारूपी वधू के मिलन अथवा विवाह के) काज का आरंभ (हरि ने) रचा दिया "।(१)

दूसरी लाँव (फेरे) का वर्णन गुरु जी करते हैं : " दूसरी लाँव (फेरे) अथवा अवस्था पर हरि (वधू रूपी आत्मा को) सच्चे गुरु से मिला देते हैं । (गुरु के निर्देश का पालन करने से) उसके मन में से (सांसारिक) भय निकल जाते हैं और तब भयरहित मन के अंदर से अहम का मैल भी नष्ट हो जाता है ।(उसके स्थान पर आत्मा) पवित्र रूप से (हरि) के भय में रह कर हरि के गुण गाती है और उसे सदा अपने सम्मुख देखती है । (वह यह विचारती है कि) हरि प्रत्येक आत्मा में पसरे हैं तथा स्वामी सर्व में व्याप्त रहते हैं । (वह यह भी समझती है कि) वही एक हरि दोनों स्थान, अँतरमन एवं बाहर भी विद्यमान हैं, अतः वह हरि के जनों के साथ मिल कर (हरि की महिमा में) मंगलगीत गाती है। हे' भक्त नानक, (इस प्रकार प्रभु ने दूसरी लाँव अथवा अवस्था को आरंभ कर आत्मा रूपी वधू के) मन में अनहद शब्द का (जीवन दर्शन का) नाद उत्पन्न कर दिया "।(२)

उपरोक्त विचार के अनुसार कि प्रभु सभी स्थानों में तथा सभी के हृदय में व्याप्त हैं, अतः आत्मा रूपी वधू के मन में प्रभु के साक्षात दर्शन करने की इच्छा तीव्र होने लगती है । वह अब सांसारिक मायाजाल के प्रति उदासीन है और सदा अपने प्रियतम के ध्यान में खोयी हुई उसे साक्षात देखने के लिये आतुर है । आध्यात्मिक जीवन यात्रा की तृतीय अवस्था का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : "तीसरी लाँव (फेरे अथवा अवस्था) में आत्मा को चाहत अथवा सांसारिक इच्छा एवं अभिलाषा से बैराग होने लगता है और उसके मन में (हरि से) मिलने की आतुरता उपजती है । जो सौभाग्यशाली होते हैं वह हरि की कृपा से संत जनों की सँगति में हरि को पा लेते हैं । उन्होंने पवित्र निर्मल हरि को पाया और उसके गुण गाये और अपने मुख से मधुर दैवी वाणी का उच्चारण किया । हाँ, केवल सौभाग्यशाली सँत जनों ने ही हरि को प्राप्त किया, (अतः, हमें सदा प्रभु की) अकथनीय कहानियों का वर्णन करना चाहिये । (ऐसा करने से) हृदय में हरि हरि के नाम की दैवी धुन निरंतर उपजती रहती है, परन्तु, भाग्य से ही इस प्रकार से हरि नाम का जाप मस्तक में लिखा होता है । नानक जन का कथन है कि विवाह की तीसरी लाँव (फेरा अथवा अवस्था) में हरि से मिलन के लिये आत्मा रूपी वधू के मन में उत्सुकता उपजती है तथा उसके मन को (सांसारिक मायाजाल से) बैराग हो जाता है "।(३)

अब, आदि आत्मा अर्थात् प्रभु से मानव आत्मा के मिलन की चतुर्थ एवं अंतिम अवस्था पर गुरु जी कहते हैं : " चतुर्थ लाँव (फेरे अथवा अवस्था) में आत्मा रूपी वधू के मन में शांति एवं सहजता व्याप्त हो जाती है, क्योंकि वह अपने प्रिय हरि को प्राप्त कर लेती है । वास्तव में गुरु की कृपा से उसे हरि की प्राप्ति हुई, क्योंकि, गुरु ने ही हरि के नाम को उसके मन एवं तन के लिये मधुर बनाया था । हाँ, जब (गुरु ने आत्मा रूपी वधू के लिये) हरि नाम को मधुर बनाया तो यह स्थिति प्रभु को भी सुखद लगी और उसे भायी, तब दिन रात आत्मा रूपी वधू ने स्वयं को हरि में लीन कर लिया ।(इस प्रकार) उसे मन वाँछित फल अथवा वरदान अपने स्वामी के रूप में प्राप्त हुया और मन में हरि नाम का ध्यान प्राप्त होने से बधाइयाँ बजने लग गयीं (हरि को पति के रूप में पा लेने के उपलक्ष्य में) । (हे' मेरे मित्रो), जब प्रभु, हमारा ठाकुर विवाह के काज (आत्मा से परमात्मा के मिलन) को रचाता है तब वधू अपने हृदय में हरि नाम के ध्यान की प्रसन्नता से पुलकित हो उठती है। भक्त नानक का कथन है कि इस प्रकार चतुर्थ लाँव (फेरे) में आत्मारूपी वधू अविनाशी प्रभु को प्राप्त कर लेती है "।(४-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें गुरु से मार्ग दर्शन लेकर प्रार्थना करनी चाहिये कि वह सदा प्रभु के प्रेम में हमें श्रद्धा के साथ लीन रखें और हम उस प्रभु के दर्शन पाने और उसके साथ एकरूप होने की कामना इस प्रकार से करें जैसे कि, हम उस अनंत हरि की विवाहित वधू हों । सांसारिक रूप से विवाह का शिष्टाचार यही सिखाता है कि हमें पारिवारिक जीवन के मार्ग पर भी सदाचार और सत्य के आधार पर चलते रहने की आवश्यकता है । दूसरी बात यह कि पति पत्नी को एक दूसरे के प्रति इतना आदर एवं प्रेम होना चाहिये जैसे कि वह दो शरीर तो हैं पर आत्मा एक ही है । साथ ही गुरु के निर्देश के अनुसार हमें अपने जीवन की आत्मिक यात्रा में प्रभु (हमारे सच्चे और सदैवी वर) के साथ जुड़े रह ही कर आगे बढ़ने का प्रयत्न करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੭੭੫

ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ ਛੰਤ ਮਹਲਾ ੪ ਘਰੁ ੩

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਆਵਹੋ ਸੰਤ ਜਨਹੁ ਗੁਣ ਗਾਵਹ ਗੋਵਿੰਦ ਕੇਰੇ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਮਿਲਿ ਰਹੀਐ ਘਰਿ ਵਾਜਹਿ ਸਬਦ ਘਨੇਰੇ ਰਾਮ ॥
ਸਬਦ ਘਨੇਰੇ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਤੇਰੇ ਤੂ ਕਰਤਾ ਸਭ ਥਾਈ ॥
ਅਹਿਨਿਸਿ ਜਪੀ ਸਦਾ ਸਾਲਾਹੀ ਸਾਚ ਸਬਦਿ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਸਹਜਿ ਰਹੈ ਰੰਗਿ ਰਾਤਾ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਰਿਦ ਪੂਜਾ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਏਕੁ ਪਛਾਣੈ ਅਵਰੁ ਨ ਜਾਣੈ ਦੂਜਾ ॥੧॥

ਸਭ ਮਹਿ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਅੰਤਰਜਾਮੀ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਰਵੈ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਮੇਰਾ ਸੁਆਮੀ ਰਾਮ ॥
ਪ੍ਰਭੁ ਮੇਰਾ ਸੁਆਮੀ ਅੰਤਰਜਾਮੀ ਘਟਿ ਘਟਿ ਰਵਿਆ ਸੋਈ ॥
ਗੁਰਮਤਿ ਸਚੁ ਪਾਈਐ ਸਹਜਿ ਸਮਾਈਐ ਤਿਸੁ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥
ਸਹਜੇ ਗੁਣ ਗਾਵਾ ਜੇ ਪ੍ਰਭ ਭਾਵਾ ਆਪੇ ਲਏ ਮਿਲਾਏ ॥
ਨਾਨਕ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਸਬਦੇ ਜਾਪੈ ਅਹਿਨਿਸਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਏ ॥੨॥

ਇਹੁ ਜਗੋ ਦੁਤਰੁ ਮਨਮੁਖੁ ਪਾਰਿ ਨ ਪਾਈ ਰਾਮ ॥
ਅੰਤਰੇ ਹਉਮੈ ਮਮਤਾ ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਚਤੁਰਾਈ ਰਾਮ ॥
ਅੰਤਰਿ ਚਤੁਰਾਈ ਥਾਇ ਨ ਪਾਈ ਬਿਰਥਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ ॥
ਜਮ ਮਗਿ ਦੁਖੁ ਪਾਵੈ ਚੋਟਾ ਖਾਵੈ ਅੰਤਿ ਗਇਆ ਪਛੁਤਾਇਆ ॥
ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਕੋ ਬੇਲੀ ਨਾਹੀ ਪੁਤੁ ਕੁਟੰਬੁ ਸੁਤੁ ਭਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਪਸਾਰਾ ਆਗੈ ਸਾਥਿ ਨ ਜਾਈ ॥੩॥

ਹਉ ਪੂਛਉ ਅਪਨਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਦਾਤਾ ਕਿਨ ਬਿਧਿ ਦੁਤਰੁ ਤਰੀਐ ਰਾਮ ॥
ਸਤਿਗੁਰ ਭਾਇ ਚਲਹੁ ਜੀਵਤਿਆ ਇਵ ਮਰੀਐ ਰਾਮ ॥
ਜੀਵਤਿਆ ਮਰੀਐ ਭਉਜਲੁ ਤਰੀਐ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮਿ ਸਮਾਵੈ ॥

ਪੰਨਾ ੭੭੬

ਪੂਰਾ ਪੁਰਖੁ ਪਾਇਆ ਵਡਭਾਗੀ ਸਚਿ ਨਾਮਿ ਲਿਵ ਲਾਵੈ ॥
ਮਤਿ ਪਰਗਾਸੁ ਭਈ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਵਡਿਆਈ ॥
ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭੁ ਪਾਇਆ ਸਬਦਿ ਮਿਲਾਇਆ ਜੋਤੀ ਜੋਤਿ ਮਿਲਾਈ ॥੪॥੧॥੪॥

पृ- ७७५

राग सूही छँत महला ४ घर ३

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

आवहो सँत जनहु गुण गावह गोविँद केरे राम ॥
गुरमुखि मिलि रहीऐ घरि वाजहि सबद घनेरे राम ॥
सबद घनेरे हरि प्रभ तेरे तू करता सभ थाई ॥
अहिनिसि जपी सदा सालाही साच सबदि लिव लाई ॥
अनदिनु सहजि रहै रँगि राता राम नामु रिद पूजा ॥
नानक गुरमुखि एकु पछाणै अवरु न जाणै दूजा ॥१॥

सभ महि रवि रहिआ सो प्रभु अँतरजामी राम ॥
गुर सबदि रवै रवि रहिआ सो प्रभु मेरा सुआमी राम ॥
प्रभु मेरा सुआमी अँतरजामी घटि घटि रविआ सोई ॥
गुरमति सचु पाईऐ सहजि समाईऐ तिसु बिनु अवरु न कोई ॥
सहजे गुण गावा जे प्रभ भावा आपे लए मिलाए ॥
नानक सो प्रभु सबदे जापै अहिनिसि नामु धिआए ॥२॥

इहु जगो दुतरु मनमुखु पारि न पाई राम ॥
अँतरे हउमै ममता कामु क्रोधु चतुराई राम ॥
अँतरि चतुराई थाइ न पाई बिरथा जनमु गवाइआ ॥
जम मगि दुखु पावै चोटा खावै अँति गइआ पछुताइआ ॥
बिनु नावै को बेली नाही पुतु कुटँबु सुतु भाई ॥
नानक माइआ मोहु पसारा आगै साथि न जाई ॥३॥

हउ पूछउ अपना सतिगुरु दाता किन बिधि दुतरु तरीऐ राम ॥
सतिगुर भाइ चलहु जीवतिआ इव मरीऐ राम ॥
जीवतिआ मरीऐ भउजलु तरीऐ गुरमुखि नामि समावै ॥

पृ- ७७६

पूरा पुरखु पाइआ वडभागी सचि नामि लिव लावै ॥
मति परगासु भई मनु मानिआ राम नामि वडिआई ॥
नानक प्रभु पाइआ सबदि मिलाइआ जोती जोति मिलाई ॥४॥१॥४॥

राग सूही छँत महला-४ घर-३
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इससे पूर्व के शब्द में गुरु जी ने उपदेश दिया कि हमें गुरु के अनुयायियों की संगति में रहना चाहिये जो हमें गुरु से जोड़ें जिससे कि हम प्रभु की महिमा का गान करें तथा अपने हृदय में उसके नाम को सदा प्रेम से बसाये रखें। तद्उपरांत एक ऐसी स्थिति आयेगी जब प्रभु अपनी कृपा से हमारी सभी त्रुटियों को दूर करके हमें गुणों से सँवार कर स्वयं अपने साथ जोड़ेंगे। इसलिये, इस शब्द में गुरु जी हम सबको प्रभु के गुण गाने के लिये आमंत्रित करते हैं और बताते हैं कि ऐसा करने से हमें किस प्रकार के वरदान प्राप्त होते हैं।

अति स्नेह एवं आदरभाव से गुरु जी हमें सम्बोधित करते हुये कहते हैं : " आओ, प्रिय संत जनों, मिल कर सृष्टि के स्वामी के गुण गायें, जिससे गुरु की कृपा के द्वारा हम सब (प्रभु के साथ) जुड़ सकें और हमारे हृदय में अनेकों दैवी धुनों तथा वाणी का संगीत बजे।" अब गुरु जी अत्यंत हर्षित भावना से प्रभु को सम्बोधित करते हैं : " हे' प्रभु, तुम्हारे (दैवी) शब्द अत्यधिक हैं और तुम हे' सृजनकर्ता सभी स्थानों में व्याप्त हो।(मुझे वर दो कि मैं) दिन रात तुम्हारा जाप करूँ, सदा तुम्हारी प्रशंसा करूँ और तेरे सत्य शब्द (गुरबाणी) में लीन रहूँ। (क्योंकि, मैं जानता हूँ कि) जो भी राम नाम की पूजा को हृदय में रमाये रहता है, वह दिन रात शांति अथवा सहज अवस्था के रंग में रहता है। नानक

कहते हैं, ऐसा गुरु का शिष्य केवल एक ही (प्रभु) को पहचानता है (उसी की पूजा करता है), किसी और दूसरे को नहीं जानता "।(१)

अब गुरु जी प्रभु की महानता का वर्णन करते हैं तथा उसे कैसे पाया जा सकता है इस पर कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), वह प्रभु अँतरयामी है, सभी में व्याप्त है। जो भी मनुष्य उसका ध्यान गुरु के शब्द (वाणी) के द्वारा करता है, वह मेरे स्वामी, प्रभु को सभी में व्याप्त पाता है । हाँ, वही मेरा स्वामी, प्रभु अँतरयामी है और घट घट में बसा है । गुरु से मति अथवा सूझ बूझ पाकर हम सच्चे अनंत प्रभु को पाते हैं और सहज भाव से उस (अगम्य) में समाते हैं, उसके बिना और कोई दूसरा नहीं है । (हे' मेरे मित्रो, प्रभु की कृपा से) यदि मैं उसे भा जाऊँ तब मैं भी सहज भाव से उसके गुण गाऊँगा, सम्भवतः, वह स्वयं ही मुझे अपने साथ मिला ले । हे' नानक, वह प्रभु (दैवी) वाणी के विचार द्वारा जाना जाता है, इसलिये दिन और रात उसके नाम का ध्यान करो " ।(२)

परन्तु, सांसारिक व्यवस्था पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी का कथन है कि क्यों मनुष्य सामान्यतः प्रभु से एकरूप नहीं हो सकता और बारम्बार जन्म मरण के कष्टों से निकल नहीं पाता है । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), यह संसार एक दुष्वार सागर है, जिसे कोई मनमुखी (अंहकारी) मनुष्य पार नहीं कर सकता, क्योंकि उसके अँतरमन में अहम, ममतामोह, काम, क्रोध व चतुराई बसे हैं ।(ऐसे मनुष्य के) अँतरमन की चतुराई अथवा चालाकी का (प्रभु के दरबार में) कोई स्थान नहीं है, अतः, वह अपना मानव जन्म व्यर्थ ही में गँवा लेता है ।(ऐसा मनुष्य अपना जीवन इस प्रकार व्यतीत करता है, जैसे कि) वह यमराज के मार्ग पर चलता हुआ दुख पा रहा है, चोटें खा रहा है और अंत में पश्चाताप करते हुए चला जाता है ।(वह यह नहीं विचार पाता कि) प्रभु के नाम के बिना पुत्र, परिवार, पत्नी तथा भाई कोई भी वास्तविक रूप से उसके सखा अथवा मित्र नहीं हैं । क्योंकि, हे' नानक, (यह समस्त संसार) मायामोह का पसारा है, जो आगे हमारे साथ कभी नहीं जाता "।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में दयालुता से हमसे यह साझा करते हैं कि उन्होंने इस कठिन भवसागर को पार करने तथा प्रभु से मिलने के लिये क्या उपाय किया । वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, जब मैं गया और) अपने दाता सच्चे गुरु से मैंने पूछा कि किस विधि से इस कठिन भवसागर को तैर कर पार उतरा जा सकता है। (तब मेरे गुरु ने सदबुद्धि दी कि) अपना जीवन सच्चे गुरु की भावना के अनुसार व्यतीत करो (और इस प्रकार से विचारो कि तुम्हें) जीवित होते हुए भी मरे के समान रहना है (अर्थात् संसार में जीवित रहते हुए वैराग्य की भावना के साथ रहें, जब इस प्रकार से) जीवित होते हुए भी हम मृत के समान रहते हैं तब कठिन भवसागर से पार हो जाते हैं और गुरु की कृपा से मनुष्य प्रभु नाम के ध्यान में समाया रहता है ।ऐसा मनुष्य सच्चे प्रभु के नाम में ध्यान लगाता है और सौभाग्य से पूर्ण प्रभु को पा लेता है । तब उसकी मति अथवा मन (दैवी ज्ञान से) प्रकाशमयी होता है और मन में राम नाम के प्रति विश्वास उत्पन्न होने पर यश प्राप्त होता है । (संक्षेप में), हे' नानक, मनुष्य (गुरु की) वाणी के द्वारा प्रभु से मिलता है और उसकी ज्योति (आत्मा) आदि ज्योति (परमात्मा) से मिल कर एकरूप हो जाती है "।(४-१-४)

इस शब्द का संदेश इस प्रकार है कि हमें स्वयं को गुरु के सम्मुख पूर्ण रूप से ऐसे समर्पित कर देना चाहिये जैसे कि हम मृत के समान हैं, हमारी अपनी कोई बुद्धि एवं इच्छा नहीं है । हमें केवल गुरु की वाणी के संदेश का अनुसरण करना चाहिये । इसके अतिरिक्त, गुरु के निर्देशानुसार प्रभु का गुणगान करते रहने से हमारा मन दैवी ज्ञान से विकसित तथा प्रकाशमयी होगा और प्रभु नाम के ध्यान में रहने से हम उसके साथ एकरूप हो सकेंगे ।

ਪੰਨਾ ੭੭੭

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਹਰਿ ਚਰਣ ਕਮਲ ਕੀ ਟੇਕ ਸਤਿਗੁਰਿ ਦਿਤੀ ਤੁਸਿ ਕੈ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥

ਪੰਨਾ ੭੭੮

ਹਰਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤਿ ਭਰੇ ਭੰਡਾਰ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਹੈ ਘਰਿ ਤਿਸ ਕੈ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਬਾਬੁਲੁ ਮੇਰਾ ਵਡ ਸਮਰਥਾ ਕਰਣ ਕਾਰਣ ਪ੍ਰਭੁ ਹਾਰਾ ॥
ਜਿਸੁ ਸਿਮਰਤ ਦੁਖੁ ਕੋਈ ਨ ਲਾਗੈ ਭਉਜਲੁ ਪਾਰਿ ਉਤਾਰਾ ॥
ਆਦਿ ਜੁਗਾਦਿ ਭਗਤਨ ਕਾ ਰਾਖਾ ਉਸਤਤਿ ਕਰਿ ਕਰਿ ਜੀਵਾ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਮਹਾ ਰਸੁ ਮੀਠਾ ਅਨਦਿਨੁ ਮਨਿ ਤਨਿ ਪੀਵਾ ॥੧॥

ਹਰਿ ਆਪੇ ਲਏ ਮਿਲਾਇ ਕਿਉ ਵੇਛੋੜਾ ਥੀਵਈ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਜਿਸ ਨੋ ਤੇਰੀ ਟੇਕ ਸੋ ਸਦਾ ਸਦ ਜੀਵਈ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਤੇਰੀ ਟੇਕ ਤੁਝੈ ਤੇ ਪਾਈ ਸਾਚੇ ਸਿਰਜਣਹਾਰਾ ॥
ਜਿਸ ਤੇ ਖਾਲੀ ਕੋਈ ਨਾਹੀ ਐਸਾ ਪ੍ਰਭੂ ਹਮਾਰਾ ॥
ਸੰਤ ਜਨਾ ਮਿਲਿ ਮੰਗਲੁ ਗਾਇਆ ਦਿਨੁ ਰੈਨਿ ਆਸ ਤੁਮ੍ਾਰੀ ॥
ਸਫਲੁ ਦਰਸੁ ਭੇਟਿਆ ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਨਾਨਕ ਸਦ ਬਲਿਹਾਰੀ ॥੨॥

ਸੰਮ੍ਲਿਆ ਸਚੁ ਥਾਨੁ ਮਾਨੁ ਮਹਤੁ ਸਚੁ ਪਾਇਆ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਮਿਲਿਆ ਦਇਆਲੁ ਗੁਣ ਅਬਿਨਾਸੀ ਗਾਇਆ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਗੁਣ ਗੋਵਿੰਦ ਗਾਉ ਨਿਤ ਨਿਤ ਪ੍ਰਾਣ ਪ੍ਰੀਤਮ ਸੁਆਮੀਆ ॥
ਸੁਭ ਦਿਵਸ ਆਏ ਗਹਿ ਕੰਠਿ ਲਾਏ ਮਿਲੇ ਅੰਤਰਜਾਮੀਆ ॥
ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਵਜਹਿ ਵਾਜੇ ਅਨਹਦਾ ਝੁਣਕਾਰੇ ॥
ਸੁਣਿ ਭੈ ਬਿਨਾਸੇ ਸਗਲ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭ ਪੁਰਖ ਕਰਣੈਹਾਰੇ ॥੩॥

ਉਪਜਿਆ ਤਤੁ ਗਿਆਨੁ ਸਾਹੁਰੈ ਪੇਈਐ ਇਕੁ ਹਰਿ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਬ੍ਰਹਮੈ ਬ੍ਰਹਮੁ ਮਿਲਿਆ ਕੋਇ ਨ ਸਾਕੈ ਭਿੰਨ ਕਰਿ ਬਲਿ ਰਾਮ ਜੀਉ ॥
ਬਿਸਮੁ ਪੇਖੈ ਬਿਸਮੁ ਸੁਣੀਐ ਬਿਸਮਾਦੁ ਨਦਰੀ ਆਇਆ ॥
ਜਲਿ ਥਲਿ ਮਹੀਅਲਿ ਪੂਰਨ ਸੁਆਮੀ ਘਟਿ ਘਟਿ ਰਹਿਆ ਸਮਾਇਆ ॥
ਜਿਸ ਤੇ ਉਪਜਿਆ ਤਿਸੁ ਮਾਹਿ ਸਮਾਇਆ ਕੀਮਤਿ ਕਹਣੁ ਨ ਜਾਏ ॥
ਜਿਸ ਕੇ ਚਲਤ ਨ ਜਾਹੀ ਲਖਣੇ ਨਾਨਕ ਤਿਸਹਿ ਧਿਆਏ ॥੪॥੨॥

पृ- ७७७

सूही महला ५॥

हरि चरण कमल की टेक सतिगुरि दिती तुसि कै बलि राम जीउ ॥

पृ- ७७८

हरि अँमिृति भरे भँडार सभु किछु है घरि तिस कै बलि राम जीउ ॥
बाबुलु मेरा वड समरथा करण कारण प्रभु हारा ॥
जिसु सिमरत दुखु कोई न लागै भउजलु पारि उतारा ॥
आदि जुगादि भगतन का राखा उसतति करि करि जीवा ॥
नानक नामु महा रसु मीठा अनदिनु मनि तनि पीवा ॥१॥

हरि आपे लए मिलाइ किउ वेछोड़ा थीवई बलि राम जीउ ॥
जिस नो तेरी टेक सो सदा सद जीवई बलि राम जीउ ॥
तेरी टेक तुझै ते पाई साचे सिरजणहारा ॥
जिस ते खाली कोई नाही ऐसा प्रभु हमारा ॥
सँत जना मिलि मँगलु गाइआ दिनु रैनि आस तुमा्री ॥
सफलु दरसु भेटिआ गुरु पूरा नानक सद बलिहारी ॥२॥

सँमलिया सचु थानु मानु महतु सचु पाइआ बलि राम जीउ ॥
सतिगुरु मिलिआ दइआलु गुण अबिनासी गाइआ बलि राम जीउ ॥
गुण गोविँद गाउ नित नित प्राण प्रीतम सुआमीआ ॥
सुभ दिवस आए गहि कँठि लाए मिले अँतरजामीआ ॥
सतु सँतोखु वजहि वाजे अनहदा झुणकारे ॥
सुणि भै बिनासे सगल नानक प्रभ पुरख करणैहारे ॥३॥

उपजिआ ततु गिआनु साहुरै पेईऐ इकु हरि बलि राम जीउ ॥
ब्रहमै ब्रहम मिलिआ कोइ न साकै भिँन करि बलि राम जीउ ॥
बिसमु पेखै बिसमु सुणीऐ बिसमादु नदरी आइआ ॥
जलि थलि महीअलि पूरन सुआमी घटि घटि रहिआ समाइआ ॥
जिस ते उपजिआ तिसु माहि समाइआ कीमति कहणु न जाए ॥
जिस के चलत न जाही लखणे नानक तिसहि धिआए ॥४॥२॥

सूही महला – ५

इसके पूर्व के अनेक विभिन्न शब्दों में गुरु जी हमें बताते रहे हैं कि यदि प्रभु के समीप रह कर सुखी और आनंदित रहना चाहते हैं तो हमें पहले अपने गुरु की शरण लेनी चाहिये और फिर उसके मार्ग दर्शन के अनुसार प्रभु में ध्यान और उसकी महिमा का गान करना होगा, केवल तभी हम प्रभु से मिल सकते हैं । इस शब्द में गुरु जी हमसे यह साझा करते हैं कि कैसे उनके गुरु ने उन्हें सभी प्रकार से आवश्यक सहायता एवं मार्ग दर्शन प्रदान किया और तब से किस प्रकार के वरदान पाकर वह धन्य हो गये हैं ।

वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), मेरे सच्चे गुरु ने कृपालु होकर मुझे हरि के चरण कमलों (हरि के पवित्र नाम का ध्यान) में आस्था दी है । मैं उस प्रभु पर बलिहारी हूँ जिसके पास अँमृित रूपी नाम के भंडार भरे हुये हैं तथा उसके घर में सब कुछ है । वह प्रभु मेरा पिता महान रूप से समर्थ है, सब कारणों का कारण है, जिसका स्मरण और ध्यान करते रहने से कोई दुख दर्द नहीं लगता और जो हमें भवसागर से पार उतार देता है । वह आदि काल अर्थात् युगों से भी पहले अपने भक्त जनों की रक्षा करता आया है और मैं निरंतर ही उसकी महिमा का बारम्बार बखान करके जीवित रहता हूँ ।हे' नानक, (प्रभु के) नाम का रस अति मधुर है और मैं दिन रात (हरि नाम के ध्यान रूपी) रस का तन मन से पान करता हूँ "।(१)

प्रभु से मिलन के उपलक्ष्य में गुरु जी उसे अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मैं अपने राम पर बलिहारी हूँ ।

जिस हरि ने स्वयं ही अपने साथ किसी को मिला लिया हो, उसे क्यों प्रभु से बिछुड़ना पड़ेगा। हे' प्रभु, मैं तुम्हारे पर बलिहारी हूँ, क्योंकि जिसे भी (आत्मिक रूप से) तुम्हारे में आस्था है वह सदा सदा के लिये जीवित है। परन्तु, हे' सच्चे सृजनहार, तेरे लिये आस्था केवल तुम्हीं से पायी है। हाँ, हमारा प्रभु ऐसा है (जिसके द्वार से) कोई ख़ाली नहीं जाता। समस्त संत जनों ने मिल बैठ कर तुम्हारी महिमा में मंगल गान गाये हैं और दिन रात तुम्हारे पर आश्रित रहते हैं।(हे' प्रभु) नानक तुम पर सदा बलिहारी हैं, जिसने तुम्हारी कृपा से पूर्ण गुरु को पाया और उसके दर्शन करना सफल हुआ"।(२)

प्रभु के साथ किस प्रकार से मिलन हुआ और उसके पश्चात किस प्रकार के आशीर्वादों का आनंद वह पा रहे हैं, इस पर गुरु जी विस्तार से कहते हैं: "(हे' मेरे मित्रो), मैं अपने महान प्रभु पर बलिहारी हूँ (जिसकी कृपा से) जिस किसी की भी दयालु सच्चे गुरु से भेंट हुयी, उसी ने अविनाशी हरि के गुण गाना आरंभ कर दिया और फिर वह (प्रभु के) सच्चे स्थान पर सुरक्षित हो गया तथा उसने सच्चा अनंत सम्मान एवं यश प्राप्त किया। इसलिये, मैं नित्य ही अपने स्वामी, प्राण और प्रियतम गोविंद के गुण गाता हूँ। (और ऐसा करने से समझता हूँ कि) मेरे जीवन में शुभ दिन आ गये हैं, क्योंकि, उस प्रभु ने आकर मुझे अपने कँठ से लगा लिया है और अँतरयामी (प्रभु) मिल गये हैं।अब मेरे मन में सत्य तथा संतोष है और वहाँ जैसे अनहद दैवी शब्द की धीमी झंकार निरंतर बज रही है। (उस दैवी संगीत को) सुन कर, हे' नानक, मेरे स्मस्त भय का विनाश हो गया है (क्योंकि) प्रभु महान और सर्वशक्तिमान हैं"।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी यह व्यक्त करते हैं कि प्रभु का ध्यान करने वाले भक्त जन को किस प्रकार की दैवी बुद्धि प्राप्त होती है तथा कितने प्रकार से वह आनंदित रहता है। वह कहते हैं: "(जो कोई भी प्रभु का ध्यान करने वाला है उसके) मन में ज्ञान से यह तथ्य उपजता है कि एक ही हरि, लोक तथा परलोक में व्याप्त है। (जब भी मनुष्य प्रभु से जुड़ जाता है तब ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि) ब्रह्म से ब्रह्मा मिल रहे हों और कोई भी उन दोनों में भिन्नता नहीं कर पा रहा है। (वह अब प्रत्येक स्थान पर) अद्भुत प्रकार से (प्रभु को) देखता और सुनता है, (सब जगह उसे सब कुछ) आश्चर्यजनक ही दिखाई दे रहा है। भक्त जन को पूर्ण स्वामी (प्रभु) धरती, सागर एवं आकाश में व्याप्त तथा घट घट में समाये हुए प्रतीत होते हैं। जो भी जहाँ से उपजा है उसी में समाता है और इस प्रक्रिया का मूल्य अथवा अनुमान नहीं कहा जा सकता। नानक उसी प्रभु का ध्यान करते हैं जिसके विलक्षण कार्यों का भेद नहीं बूझ सकते"।(४-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम विलक्षण प्रभु से मिल कर दैवी आनंद पाना चाहते हैं तो हमें गुरु की कृपा का पात्र बनना चाहिये जो अपनी पवित्र वाणी (गुरुवाणी) के द्वारा हमें प्रभु से जोड़ेंगे। प्रभु नाम का ध्यान तथा कीर्तन भजन करते रहने से संभव है कि एक दिन दया करके वह हमें अपने साथ अनंत में मिला लें और हम उस अद्भुत शक्ति की झलक पाने का आनंद ले सकें।

ਪੰਨਾ ੭੭੯

ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ ਛੰਤ ਮਹਲਾ ੫ ਘਰੁ ੩

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਤੂ ਠਾਕੁਰੋ ਬੈਰਾਗਰੋ ਮੈ ਜੇਹੀ ਘਣ ਚੇਰੀ ਰਾਮ ॥
ਤੂੰ ਸਾਗਰੋ ਰਤਨਾਗਰੋ ਹਉ ਸਾਰ ਨ ਜਾਣਾ ਤੇਰੀ ਰਾਮ ॥
ਸਾਰ ਨ ਜਾਣਾ ਤੂ ਵਡ ਦਾਣਾ ਕਰਿ ਮਿਹਰੰਮਤਿ ਸਾਂਈ ॥
ਕਿਰਪਾ ਕੀਜੈ ਸਾ ਮਤਿ ਦੀਜੈ ਆਠ ਪਹਰ ਤੁਧੁ ਧਿਆਈ ॥
ਗਰਬੁ ਨ ਕੀਜੈ ਰੇਣ ਹੋਵੀਜੈ ਤਾ ਗਤਿ ਜੀਅਰੇ ਤੇਰੀ ॥
ਸਭ ਊਪਰਿ ਨਾਨਕ ਕਾ ਠਾਕੁਰੁ ਮੈ ਜੇਹੀ ਘਣ ਚੇਰੀ ਰਾਮ ॥੧॥

ਤੁਮ੍ ਗਉਹਰ ਅਤਿ ਗਹਿਰ ਗੰਭੀਰਾ ਤੁਮ ਪਿਰ ਹਮ ਬਹੁਰੀਆ ਰਾਮ ॥
ਤੁਮ ਵਡੇ ਵਡੇ ਵਡ ਊਚੇ ਹਉ ਇਤਨੀਕ ਲਹੁਰੀਆ ਰਾਮ ॥
ਹਉ ਕਿਛੁ ਨਾਹੀ ਏਕੋ ਤੂਹੈ ਆਪੇ ਆਪਿ ਸੁਜਾਨਾ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਨਿਮਖ ਪ੍ਰਭ ਜੀਵਾ ਸਰਬ ਰੰਗ ਰਸ ਮਾਨਾ ॥
ਚਰਣਹ ਸਰਨੀ ਦਾਸਹ ਦਾਸੀ ਮਨਿ ਮਉਲੈ ਤਨੁ ਹਰੀਆ ॥
ਨਾਨਕ ਠਾਕੁਰੁ ਸਰਬ ਸਮਾਣਾ ਆਪਨ ਭਾਵਨ ਕਰੀਆ ॥੨॥

ਤੁਝੁ ਊਪਰਿ ਮੇਰਾ ਹੈ ਮਾਣਾ ਤੂਹੈ ਮੇਰਾ ਤਾਣਾ ਰਾਮ ॥
ਸੁਰਤਿ ਮਤਿ ਚਤੁਰਾਈ ਤੇਰੀ ਤੂ ਜਾਣਾਇਹਿ ਜਾਣਾ ਰਾਮ ॥
ਸੋਈ ਜਾਣੈ ਸੋਈ ਪਛਾਣੈ ਜਾ ਕਉ ਨਦਰਿ ਸਿਰੰਦੇ ॥
ਮਨਮੁਖਿ ਭੂਲੀ ਬਹੁਤੀ ਰਾਹੀ ਫਾਥੀ ਮਾਇਆ ਫੰਦੇ ॥
ਠਾਕੁਰ ਭਾਣੀ ਸਾ ਗੁਣਵੰਤੀ ਤਿਨ ਹੀ ਸਭ ਰੰਗ ਮਾਣਾ ॥
ਨਾਨਕ ਕੀ ਧਰ ਤੂਹੈ ਠਾਕੁਰ ਤੂ ਨਾਨਕ ਕਾ ਮਾਣਾ ॥੩॥

ਹਉ ਵਾਰੀ ਵੰਞਾ ਘੋਲੀ ਵੰਞਾ ਤੂ ਪਰਬਤੁ ਮੇਰਾ ਓਲ੍ਾ ਰਾਮ ॥
ਹਉ ਬਲਿ ਜਾਈ ਲਖ ਲਖ ਲਖ ਬਰੀਆ ਜਿਨਿ ਭ੍ਰਮੁ ਪਰਦਾ ਖੋਲ੍ਾ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੭੮੦

ਮਿਟੇ ਅੰਧਾਰੇ ਤਜੇ ਬਿਕਾਰੇ ਠਾਕੁਰ ਸਿਉ ਮਨੁ ਮਾਨਾ ॥
ਪ੍ਰਭ ਜੀ ਭਾਣੀ ਭਈ ਨਿਕਾਣੀ ਸਫਲ ਜਨਮੁ ਪਰਵਾਨਾ ॥
ਭਈ ਅਮੋਲੀ ਭਾਰਾ ਤੋਲੀ ਮੁਕਤਿ ਜੁਗਤਿ ਦਰੁ ਖੋਲ੍ਾ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਹਉ ਨਿਰਭਉ ਹੋਈ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਮੇਰਾ ਓਲ੍ਾ ॥੪॥੧॥੪॥

पृ- ७७९

राग सूही छँत महला ५ घर ३

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

तू ठाकुरो बैरागरो मै जेही घण चेरी राम ॥
तूं सागरो रतनागरो हउ सार न जाणा तेरी राम ॥
सार न जाणा तू वड दाणा करि मिहरँमति सांई ॥
किरपा कीजै सा मति दीजै आठ पहर तुधु धिआई ॥
गरबु न कीजै रेण होवीजै ता गति जीअरे तेरी ॥
सभ ऊपरि नानक का ठाकुरु मै जेही घण चेरी राम ॥१॥

तुम् गउहर अति गहिर गँभीरा तुम पिर हम बहुरीआ राम ॥
तुम वडे वडे वड ऊचे हउ इतनीक लहुरीआ राम ॥
हउ किछु नाही एको तूहै आपे आपि सुजाना ॥
अँमृत दृिसटि निमख प्रभ जीवा सरब रँग रस माना ॥
चरणह सरनी दासह दासी मनि मउलै तनु हरीआ ॥
नानक ठाकुरु सरब समाणा आपन भावन करीआ ॥२॥

तुझु ऊपरि मेरा है माणा तूहै मेरा ताणा राम ॥
सुरति मति चतुराई तेरी तू जाणाइहि जाणा राम ॥
सोई जाणै सोई पछाणै जा कउ नदरि सिरँदे ॥
मनमुखि भूली बहुती राही फाथी माइआ फँदे ॥
ठाकुर भाणी सा गुणवँती तिन ही सभ रँग माणा ॥
नानक की धर तूहै ठाकुर तू नानक का माणा ॥३॥

हउ वारी वँञा घोली वँञा तू परबतु मेरा ओला् राम ॥
हउ बलि जाई लख लख लख बरीआ जिनि भ्रमु परदा खोला् राम ॥

पृ- ७८०

मिटे अँधारे तजे बिकारे ठाकुर सिउ मनु माना ॥
प्रभ जी भाणी भई निकाणी सफल जनमु परवाना ॥
भई अमोली भारा तोली मुकति जुगति दरू खोला् ॥
कहु नानक हउ निरभउ होई सो प्रभु मेरा ओला् ॥४॥१॥४॥

राग सूही छँत महला - ५

इस शब्द में गुरू जी हमें यह प्रकट करते हैं कि किस प्रकार की सच्ची विनम्रता, आस्था तथा प्रेम के साथ वह स्वयं प्रभु की महिमा का गायन करते हैं और प्रभु से प्राप्त सुरक्षा के प्रति वह कितने विश्वस्त हैं।

वह कहते हैं : " हे' मेरे ठाकुर, तुम बैरागी हो, मेरे जैसी अनेकों दासियाँ (तुम्हारी सेवा के लिये) हैं। तुम रत्नों (गुणों) के सागर के समान हो और तुम्हारा भेद मैं नहीं जानता। तुम अति बुद्धिमान हो, मैं तुम्हारा सार नहीं जानता, हे' मेरे स्वामी मेरे पर कृपा करो। कृपा करके ऐसी मति प्रदान करो कि मैं आठों पहर (दिन और रात) तुम्हारा ध्यान करूँ। (हे' मेरी आत्मा), कभी अपने पर घमंड नहीं करना चाहिये, इसकी अपेक्षा (चरणों की) धूल के समान विनम्र होना चाहिये तभी केवल तुम्हारा आत्मिक कल्याण होगा। (हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि) नानक के ठाकुर सर्वोत्तम हैं और मेरे जैसी अनेकों दासियाँ (उनकी सेवा के लिये) हैं "।(१)

प्रभु की महिमा में गुरु जी का आगे कथन है : " हे' प्रभु, तुम गहन अति गंभीर एवं बुद्धिमान हो, तुम प्रियतम और मै तुम्हारी वधू हूँ। तुम बड़े से भी बड़े हो, सर्वोच्च हो, जबकि मैं तो अति छोटी हूँ। मैं कुछ भी नहीं हूँ, केवल एक तुम्हीं स्वयं हो और तुम सुजान, अथवा, सब कुछ जानते हो। (हे' प्रभु), तुम्हारी पल भर की अँमृत रूपी कृपा दृष्टि से मैं जीवित हो उठती हूँ और आत्मिक रूप से मधुर लगने वाले सभी रसों

के स्वाद का आनंद लेती हूँ । (हे' प्रभु) तेरे चरणों की शरण में आने के पश्चात मुझ दासियों की दासी का मन खिल उठा है और तन हरित (जीवित) हो गया है । हे' नानक, मेरा ठाकुर सभी (जीवों) में समाया हुया है और जो भी उसके अपने मन को भाता है वही करता है "।(२)

गुरु जी अपनी रक्षा के लिये ईश्वर पर कितना अधिक निर्भर करते हैं, इस प्रकार के विश्वास पर उनका कथन है : " (हे' प्रभु), तुम्हारे उपर मुझे गर्व है, तुम्हीं मेरा अभिमान हो । जो भी ज्ञान, मति अथवा चतुराई मैंने पाई है वह सब तेरा ही उपहार है और जो भी मैं जानता हूँ वह तुम्हीं से सीखा है । परन्तु, (जीवन में सत्य का मार्ग)वही जानता है और वही समझता है जिस पर प्रभु कृपा दृष्टि करें । अन्यथा, मनमुखी अथवा अंहकारी (आत्मा रूपी वधू) मायाजाल के फँदों में फँसी अनेक राहों पर भूली भटकती रहती है । स्वामी के मन को भाने वाली गुणों से परिपूर्ण (आत्मा रूपी वधू) सब प्रकार के सुखों का आनंद लेती है । हे' मेरे ठाकुर, तुम्हीं केवल नानक के आधार हो और केवल तुम्हीं उसका मान सम्मान एवं गर्व हो "।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं : " हे' प्रभु, मैं तुम पर बारम्बार बलिहारी जाता हूँ, क्योंकि, तुम एक पर्वत के समान मेरे लिये आश्रय अथवा आड़ हो । हाँ, मैं तुम पर लाखों और लाखों बार बलिहारी हूँ, जिसने (मेरे मन में से) भ्रमों का परदा खोल कर हटा दिया है । मेरे मन में से (अज्ञान के) अँधेरे लुप्त हो गये हैं, विकारों को त्याग दिया है और मेरा मन ठाकुर के साथ प्रसन्नता से लग गया है । (आत्मा रूपी वधू जो) प्रभु जी के मन को भाये वह (सांसारिक लोगों से) स्वतंत्र होती है, उसका मानव जन्म सफल हो जाता है और (प्रभु के दरबार में वह) स्वीकृत होती है। (उस वधू का जीवन) अति मूल्यवान है, गुणों से भरा है और उसको (सांसारिक दुष्कर्मों से) मुक्ति के उपाय मिल गये हैं अथवा, द्वार खुल गये हैं ।(संक्षेप में), नानक कहते हैं, मैं निर्भीक हो गया हूँ, क्योंकि, वह मेरा प्रभु मेरी आड़ अथवा रक्षक है "।(४-१-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम कोई धार्मिक अथवा उदारवादी कार्य कर रहें हैं तो हमें यह नहीं सोचना चाहिये कि हम गुरु या ईश्वर के लिये कुछ कर रहे हैं, अपितु, हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि लाखों अन्य लोग भी हमारी तरह प्रभु के लिये धर्म के कामों में लगे हैं । यदि हम कोई ऐसा पुण्य का कार्य कर पाते हैं तो यह हमारे उपर प्रभु की कृपा है कि उसने हमें यह अवसर दिया । जब गुरु अपनी कृपा से हमें प्रभु के निकट लायें तब अभिमान मुक्त होकर विनम्रता के साथ गुरु एवं प्रभु के प्रति कृतज्ञता का आभास करें कि उन्होंने हमें ऐसे आनंदमयी आशीर्वाद एवं अवसर प्रदान किये ।

ਪੰਨਾ ੭੮੧

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਹਰਿ ਜਪੇ ਹਰਿ ਮੰਦਰੁ ਸਾਜਿਆ ਸੰਤ ਭਗਤ ਗੁਣ ਗਾਵਹਿ ਰਾਮ ॥
ਸਿਮਰਿ ਸਿਮਰਿ ਸੁਆਮੀ ਪ੍ਰਭੁ ਅਪਨਾ ਸਗਲੇ ਪਾਪ ਤਜਾਵਹਿ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਇ ਪਰਮ ਪਦੁ ਪਾਇਆ ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਊਤਮ ਬਾਣੀ ॥
ਸਹਜ ਕਥਾ ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਅਤਿ ਮੀਠੀ ਕਥੀ ਅਕਥ ਕਹਾਣੀ ॥
ਭਲਾ ਸੰਜੋਗੁ ਮੂਰਤੁ ਪਲੁ ਸਾਚਾ ਅਬਿਚਲ ਨੀਵ ਰਖਾਈ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭ ਭਏ ਦਇਆਲਾ ਸਰਬ ਕਲਾ ਬਣਿ ਆਈ ॥੧॥

ਆਨੰਦਾ ਵਜਹਿ ਨਿਤ ਵਾਜੇ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਮਨਿ ਵੂਠਾ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰਮੁਖੇ ਸਚੁ ਕਰਣੀ ਸਾਰੀ ਬਿਨਸੇ ਭ੍ਰਮ ਭੈ ਝੂਠਾ ਰਾਮ ॥
ਅਨਹਦ ਬਾਣੀ ਗੁਰਮੁਖਿ ਵਖਾਣੀ ਜਸੁ ਸੁਣਿ ਸੁਣਿ ਮਨੁ ਤਨੁ ਹਰਿਆ ॥
ਸਰਬ ਸੁਖਾ ਤਿਸ ਹੀ ਬਣਿ ਆਏ ਜੋ ਪ੍ਰਭਿ ਅਪਨਾ ਕਰਿਆ ॥
ਘਰ ਮਹਿ ਨਵ ਨਿਧਿ ਭਰੇ ਭੰਡਾਰਾ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਰੰਗੁ ਲਾਗਾ ॥
ਨਾਨਕ ਜਨ ਪ੍ਰਭੁ ਕਦੇ ਨ ਵਿਸਰੈ ਪੂਰਨ ਜਾਕੇ ਭਾਗਾ ॥੨॥

ਛਾਇਆ ਪ੍ਰਭਿ ਛਤ੍ਰਪਤਿ ਕੀਨ੍ਹੀ ਸਗਲੀ ਤਪਤਿ ਬਿਨਾਸੀ ਰਾਮ ॥
ਦੂਖ ਪਾਪ ਕਾ ਡੇਰਾ ਢਾਠਾ ਕਾਰਜੁ ਆਇਆ ਰਾਸੀ ਰਾਮ ॥
ਹਰਿ ਪ੍ਰਭਿ ਫੁਰਮਾਇਆ ਮਿਟੀ ਬਲਾਇਆ ਸਾਚੁ ਧਰਮੁ ਪੁੰਨੁ ਫਲਿਆ ॥

ਪੰਨਾ ੭੮੨

ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਅਪੁਨਾ ਸਦਾ ਧਿਆਈਐ ਸੋਵਤ ਬੈਸਤ ਖਲਿਆ ॥
ਗੁਣ ਨਿਧਾਨ ਸੁਖ ਸਾਗਰ ਸੁਆਮੀ ਜਲਿ ਥਲਿ ਮਹੀਅਲਿ ਸੋਈ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਸਰਣਾਈ ਤਿਸੁ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥੩॥

ਮੇਰਾ ਘਰੁ ਬਨਿਆ ਬਨੁ ਤਾਲੁ ਬਨਿਆ ਪ੍ਰਭ ਪਰਸੇ ਹਰਿ ਰਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਮੇਰਾ ਮਨੁ ਸੋਹਿਆ ਮੀਤ ਸਾਜਨ ਸਰਸੇ ਗੁਣ ਮੰਗਲ ਹਰਿ ਗਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਗੁਣ ਗਾਇ ਪ੍ਰਭੂ ਧਿਆਇ ਸਾਚਾ ਸਗਲ ਇਛਾ ਪਾਈਆ ॥
ਗੁਰ ਚਰਣ ਲਾਗੇ ਸਦਾ ਜਾਗੇ ਮਨਿ ਵਜੀਆ ਵਾਧਾਈਆ ॥
ਕਰੀ ਨਦਰਿ ਸੁਆਮੀ ਸੁਖਹ ਗਾਮੀ ਹਲਤੁ ਪਲਤੁ ਸਵਾਰਿਆ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਨਿਤ ਨਾਮੁ ਜਪੀਐ ਜੀਉ ਪਿੰਡੁ ਜਿਨਿ ਧਾਰਿਆ ॥
੪॥੪॥੭॥

पृ- ७८१

सूही महला ५ ॥

हरि जपे हरि मँदरु साजिआ सँत भगत गुण गावहि राम ॥
सिमरि सिमरि सुआमी प्रभु अपना सगले पाप तजावहि राम ॥
हरि गुण गाइ परम पदु पाइआ प्रभ की ऊतम बाणी ॥
सहज कथा प्रभ की अति मीठी कथी अकथ कहाणी ॥
भला सँजोगु मूरतु पलु साचा अबिचल नीव रखाई ॥
जन नानक प्रभ भए दइआला सरब कला बणि आई ॥१ ॥

आनँदा वजहि नित वाजे पारब्रहमु मनि वूठा राम ॥
गुरमुखे सचु करणी सारी बिनसे भ्रम भै झूठा राम ॥
अनहद बाणी गुरमुखि वखाणी जसु सुणि सुणि मनु तनु हरिआ ॥
सरब सुखा तिस ही बणि आए जो प्रभि अपना करिआ ॥
घर महि नव निधि भरे भँडारा राम नामि रँगु लागा ॥
नानक जन प्रभु कदे न विसरै पूरन जा के भागा ॥२॥

छाइआ प्रभि छत्रपति कीनी् सगली तपति बिनासी राम ॥
दूख पाप का डेरा ढाठा कारजु आइआ रासी राम ॥
हरि प्रभि फुरमाइआ मिटी बलाइआ साचु धरमु पुँनु फलिआ ॥

पृ- ७८२

सो प्रभु अपुना सदा धिआईऐ सोवत बैसत खलिआ ॥
गुण निधान सुख सागर सुआमी जलि थलि महीअलि सोई ॥
जन नानक प्रभ की सरणाई तिसु बिनु अवरु न कोई ॥३॥

मेरा घरु बनिआ बनु तालु बनिआ प्रभ परसे हरि राइआ राम ॥
मेरा मनु सोहिआ मीत साजन सरसे गुण मँगल हरि गाइआ राम ॥
गुण गाइ प्रभू धिआइ साचा सगल इछा पाईआ ॥
गुर चरण लागे सदा जागे मनि वजीआ वाधाईआ ॥
करी नदरि सुआमी सुखह गामी हलतु पलतु सवारिआ ॥
बिनवँति नानक नित नामु जपीऐ जीउ पिँडु जिनि धारिआ
॥४॥४॥७॥

सूही महला – ५

यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि सिखों के पँचम गुरु, गुरू अर्जन देव जी ने अँमृितसर में पवित्र हरिमंदिर साहिब जी का निर्माण कार्य सम्पूर्ण किया था, जिसका संसार में अपना एक विशेष स्थान है । सामान्य धार्मिक परम्पराओं के विपरीत इस मंदिर की नींव सिख मत के किसी महापुरुष से ना रखवा कर, एक जाने माने मुसलमान सांई मियाँ मीर से रखवाई गयी थी । जब कि बाद में कई मुसलमान राजा, नवाबों व बादशाहों ने गुरु अर्जुन देव जी सहित अनेकों सिख अनुयायियों, गुरुओं एवं सिद्ध पुरुषों को मरवाया एवं अनेकों पर घोर अत्याचार किये। हरिमंदिर साहिब गुरुद्वारे के अंदर जाने के लिये सीढ़ियाँ चढ़ कर जाने की अपेक्षा, कुछ सीढ़ियाँ उतरना पड़ता है जो कि गुरुघर के प्रति दर्शनार्थी के मन में विनम्र भावना का प्रतीकात्मक चिन्ह है ।मुख्य गुरुद्वारे का भवन चारों ओर से एक बड़े सरोवर से घिरा हुया है । चारों दिशायों से प्रवेश पाने के लिये चार बड़े द्वार हैं, जो यह दर्शाते हैं कि यहाँ पर चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य व शूद्र) तथा, संसार की किसी भी जाति एवं धर्म मानने वाले का स्वागत है । गुरु जी इस पवित्र, दैवी तथा भव्य स्थान का निर्माण सम्पूर्ण होने के उपलक्ष्य में स्वयं पर गर्वित न होते हुये ईश्वर को धन्यवाद देते हैं तथा इस सम्बंध में उनके द्वारा उच्चारित अनेक शब्दों में से यह एक शब्द है जिसमें वह स्वयं और समस्त संसार की ओर से हरिमंदिर साहिब तथा अन्य अनेक वरदानों के हेतु प्रभु के सम्मुख अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं ।

वह कहते हैं :"(हे' मेरे मित्रो), हरि नाम का जाप एवं ध्यान करने के लिये हरि ने यह मंदिर स्थापित किया है (जहाँ पर बैठ कर) संत और भक्त लोग (हरि के) गुण गाते हैं । वह अपने स्वामी प्रभु का बारम्बार सिमरन भजन कर अपने समस्त पापों का त्याग करते हैं । प्रभु

नाम पर रची श्रेष्ठ वाणी के द्वारा हरि के गुणों का गायन करके उन्होंने (आत्मिक रूप से)परम पद प्राप्त कर लिया है । प्रभु प्रसंग में सहज रूप से रची कथायें और उपदेश अति मधुर लगते हैं जो प्रभु की अकथनीय कहानी का कथन करते हैं । वह संयोग शुभ है और मुहूर्त तथा क्षण सत्य है जब इस अचल (मंदिर) की नींव रखी गयी । (मैं सोचता हूँ कि) भक्त नानक पर प्रभु दयालु हुये हैं, क्योंकि सभी प्रकार की कलायें (इस मंदिर के पूर्ण निर्माण के लिये सभी आवश्यक सुविधाएँ) स्वतः ही प्राप्त होती गयीं "।(१)

मंदिर का निर्माण पूर्ण होने के पश्चात गुरु जी सहित अन्य सबको कितने सुख एवं आनंद मिल रहे हैं, इस पर उनका कथन है : "(हे' मेरे मित्रो, अब इस मंदिर में) नित्य ही आनंदमयी संगीत बजता है और पारब्रह्म प्रभु भक्तों के मन में आ बैठे हैं । गुरु के उपदेश को मानने से सारे कर्म सत्य हो गये हैं, अतः, भक्तजनों के मन में से समस्त भय, भ्रम एवं झूठ का विनाश हो गया है । गुरु की कृपा से गुरु के भक्त अनाहद दैवी वाणी का निरंतर बखान करते हैं और (हरि के) यश को बारम्बार सुन कर उनका तन मन पुनर्जीवित हो उठता है ।(हे' मेरे मित्रो), जिसे प्रभु अपना बना लेते हैं उसे सभी सुख मिल जाते हैं । जिसे राम के नाम का रंग चढ़ गया है उसके (हृदय रुपी) घर में नव निधियों से भँडार भर जाते हैं ।हे' नानक जन, जिस भक्त का भाग्य पूर्ण रूप से उत्तम है उसके मन में से प्रभु कभी नहीं बिसरते "।(२)

मंदिर का निर्माण कार्य सम्पूर्ण होने तथा अन्य कई वरदानों के प्राप्त होने से गुरु जी प्रभु के प्रति अपनी कृतज्ञता एवं असीम आनंद को इस प्रकार प्रकट करते हैं : " (मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मंदिर का निर्माण होने के साथ)प्रभु ने जैसे छत्रपति राजा की भाँति संसार पर सुखभरी शीतल छाया कर दी है और समस्त (दुखों की) तपन का विनाश होगया है (अर्थात, इस मंदिर में बैठ कर जिसने भी प्रभु का गुण गान किया उसके सारे दुख दूर हो गये और उसे सुख शांति मिली)।(प्रभु का गुणगान करने वालों को ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि उनका) दुख दर्द और पापों का डेरा ढह गया है और उनके सारे काम सिद्ध हो गये हैं । जब भी प्रभु ने आदेश दिया तभी सब दुख व्याधियाँ मन में से मिट गयीं और उनके स्थान पर सत्य, सदाचार, धर्म और पुण्य के भाव फलने फूलने लगे । अतः, अपने ऐसे प्रभु का ध्यान हमें उठते बैठते, सोते जागते और चलते फिरते, सदैव ही करना चाहिए । वह स्वामी, गुणों का भंडार एवं सुखों का सागर, जल, थल और आकाश सभी में व्याप्त है । भक्त नानक उसी प्रभु की शरण में है जिसके बिना और कोई दूसरा नहीं है "।(३)

मंदिर तथा प्रभु द्वारा प्रदत्त अन्य आशीर्वादों को पाने के उपलक्ष में गुरु जी अपना आभार संक्षिप्त रूप से प्रकट करते हुये कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, जब मैंने प्रभु की शरण ली और) उस महान हरि के चरणों का स्पर्श किया तो मेरा घर बना और वन के साथ साथ सरोवर भी बना। मेरा मन (सुंदर गुणी विचारों से) सुहावना हो गया, मेरे मित्र और साथी अति प्रसन्न हुये (और सबने मिल कर) हरि के गुणों के मंगल गीत गाये । सच्चे अनंत प्रभु के गुण गाने एवं ध्यान करने से हमारी समस्त इच्छायें हमें प्राप्त हो गयीं । गुरु के चरणों में लगने से (अथवा उनकी पवित्र वाणी के द्वारा) हम सदा के लिये जाग गये (सांसारिक लोभ लालसाओं से सतर्क हो गये) और हृदय में बधाइयाँ बजने लग गयीं । (संक्षेप में) सुख शांति के दाता स्वामी ने हमारे उपर कृपा दृष्टि की और हमारा लोक एवं परलोक सब सँवार दिया । अतः, नानक विनती करते हैं (हे' मेरे मित्रो), नित्य ही उस प्रभु के नाम का जाप करो जिसने हमारे तन मन को आधार दिया "।(४-४-७)

इस शब्द का संदेश यह है कि जब भी हम किसी भव्य भवन अथवा घर का निर्माण करें, अथवा कोई उत्तम गाड़ी अथवा वाहन लें तो किसी प्रकार की अहम भावना को ना आने दें, अपितु , ऐसे अवसर को अपने उपर प्रभु की कृपा और वरदान मानते हुए अपने सभी संगी साथियों के साथ मिल बैठ कर प्रभु की महिमा में गायन कीर्तन करना चाहिये तथा प्रभु द्वारा प्राप्त आशीर्वादों और उपहारों को दीन दुखियों के साथ बाँटना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੭੮੩

ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਸੰਤਾ ਕੇ ਕਾਰਜਿ ਆਪਿ ਖਲੋਇਆ ਹਰਿ ਕੰਮੁ ਕਰਾਵਣਿ ਆਇਆ ਰਾਮ ॥
ਧਰਤਿ ਸੁਹਾਵੀ ਤਾਲੁ ਸੁਹਾਵਾ ਵਿਚਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਜਲੁ ਛਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਜਲੁ ਛਾਇਆ ਪੂਰਨ ਸਾਜੁ ਕਰਾਇਆ ਸਗਲ ਮਨੋਰਥ ਪੂਰੇ ॥
ਜੈ ਜੈ ਕਾਰੁ ਭਇਆ ਜਗ ਅੰਤਰਿ ਲਾਥੇ ਸਗਲ ਵਿਸੂਰੇ ॥
ਪੂਰਨ ਪੁਰਖ ਅਚੁਤ ਅਬਿਨਾਸੀ ਜਸੁ ਵੇਦ ਪੁਰਾਣੀ ਗਾਇਆ ॥
ਅਪਨਾ ਬਿਰਦੁ ਰਖਿਆ ਪਰਮੇਸਰਿ ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਆ ॥੧॥

ਨਵ ਨਿਧਿ ਸਿਧਿ ਰਿਧਿ ਦੀਨੇ ਕਰਤੇ ਤੋਟਿ ਨ ਆਵੈ ਕਾਈ ਰਾਮ ॥

ਪੰਨਾ ੭੮੪

ਖਾਤ ਖਰਚਤ ਬਿਲਛਤ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਕਰਤੇ ਕੀ ਦਾਤਿ ਸਵਾਈ ਰਾਮ ॥
ਦਾਤਿ ਸਵਾਈ ਨਿਖੁਟਿ ਨ ਜਾਈ ਅੰਤਰਜਾਮੀ ਪਾਇਆ ॥
ਕੋਟਿ ਬਿਘਨ ਸਗਲੇ ਉਠਿ ਨਾਠੇ ਦੂਖੁ ਨ ਨੇੜੈ ਆਇਆ ॥
ਸਾਂਤਿ ਸਹਜ ਆਨੰਦ ਘਨੇਰੇ ਬਿਨਸੀ ਭੂਖ ਸਬਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਣ ਗਾਵਹਿ ਸੁਆਮੀ ਕੇ ਅਚਰਜੁ ਜਿਸੁ ਵਡਿਆਈ ਰਾਮ ॥੨॥

ਜਿਸ ਕਾ ਕਾਰਜੁ ਤਿਨ ਹੀ ਕੀਆ ਮਾਣਸੁ ਕਿਆ ਵੇਚਾਰਾ ਰਾਮ ॥
ਭਗਤ ਸੋਹਨਿ ਹਰਿ ਕੇ ਗੁਣ ਗਾਵਹਿ ਸਦਾ ਕਰਹਿ ਜੈਕਾਰਾ ਰਾਮ ॥
ਗੁਣ ਗਾਇ ਗੋਬਿੰਦ ਅਨਦ ਉਪਜੇ ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਸੰਗਿ ਬਨੀ ॥
ਜਿਨਿ ਉਦਮੁ ਕੀਆ ਤਾਲ ਕੇਰਾ ਤਿਸ ਕੀ ਉਪਮਾ ਕਿਆ ਗਨੀ ॥
ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਪੁੰਨ ਕਿਰਿਆ ਮਹਾ ਨਿਰਮਲ ਚਾਰਾ ॥
ਪਤਿਤ ਪਾਵਨੁ ਬਿਰਦੁ ਸੁਆਮੀ ਨਾਨਕ ਸਬਦ ਅਧਾਰਾ ॥੩॥

ਗੁਣ ਨਿਧਾਨ ਮੇਰਾ ਪ੍ਰਭੁ ਕਰਤਾ ਉਸਤਤਿ ਕਉਨੁ ਕਰੀਜੈ ਰਾਮ ॥
ਸੰਤਾ ਕੀ ਬੇਨੰਤੀ ਸੁਆਮੀ ਨਾਮੁ ਮਹਾ ਰਸੁ ਦੀਜੈ ਰਾਮ ॥
ਨਾਮੁ ਦੀਜੈ ਦਾਨੁ ਕੀਜੈ ਬਿਸਰੁ ਨਾਹੀ ਇਕ ਖਿਨੋ ॥
ਗੁਣ ਗੋਪਾਲ ਉਚਰੁ ਰਸਨਾ ਸਦਾ ਗਾਈਐ ਅਨਦਿਨੋ ॥
ਜਿਸੁ ਪ੍ਰੀਤਿ ਲਾਗੀ ਨਾਮ ਸੇਤੀ ਮਨੁ ਤਨੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਭੀਜੈ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਇਛ ਪੁੰਨੀ ਪੇਖਿ ਦਰਸਨੁ ਜੀਜੈ ॥੪॥੭॥੧੦॥

पृ- ७८३

सूही महला ५॥

सँता के कारजि आपि खलोइआ हरि कँमु करावणि आइआ राम ॥
धरति सुहावी तालु सुहावा विचि अँमृत जलु छाइआ राम ॥
अँमृत जलु छाइआ पूरन साजु कराइआ सगल मनोरथ पूरे ॥
जै जै कारु भइआ जग अँतरि लाथे सगल विसूरे ॥
पूरन पुरख अचुत अबिनासी जसु वेद पुराणी गाइआ ॥
अपना बिरदु रखिआ परमेसरि नानक नामु धिआइआ ॥१॥

नव निधि सिधि रिधि दीने करते तोटिन आवै काई राम ॥

पृ- ७८४

खात खरचत बिलछत सुखु पाइआ करते की दाति सवाई राम ॥
दाति सवाई निखुटि न जाई अँतरजामी पाइआ ॥
कोटि बिघन सगले उठि नाठे दूखु न नेड़ै आइआ ॥
सांति सहज आनँद घनेरे बिनसी भूख सबाई ॥
नानक गुण गावहि सुआमी के अचरजु जिसु वडिआई राम ॥२॥

जिस का कारजु तिन ही कीआ माणसु किआ वेचारा राम ॥
भगत सोहनि हरि के गुण गावहि सदा करहि जैकारा राम ॥
गुण गाइ गोबिँद अनद उपजे साधसँगति सँगि बनी ॥
जिनि उदमु कीआ ताल केरा तिस की उपमा किआ गनी ॥
अठसठि तीरथ पुँन किरिआ महा निरमल चारा ॥
पतित पावनु बिरदु सुआमी नानक सबद अधारा ॥३॥

गुण निधान मेरा प्रभु करता उसतति कउनु करीजै राम ॥
सँता की बेनँती सुआमी नामु महा रसु दीजै राम ॥
नामु दीजै दानु कीजै बिसरु नाही इक खिनो ॥
गुण गोपाल उचरु रसना सदा गाईऐ अनदिनो ॥
जिसु प्रीति लागी नाम सेती मनु तनु अँमृत भीजै ॥
बिनवँति नानक इछ पुँनी पेखि दरसनु जीजै ॥४॥७॥१०॥

सूही महला – ५

यह शब्द गुरु जी की सर्वशक्तिमान प्रभु के प्रति कृतज्ञता, विनम्रता एवं प्रेम का द्योतक है। पूर्ण रूप से एक नये महान नगर (अँमृतसर) को बसा कर साथ ही वहाँ प्रभु की निरंतर पूजा और ध्यान के लिये हरिमंदिर साहिब जैसे अनूठे तथा सुंदर गुरुद्वारे का निर्माण कार्य पूर्ण करने पर भी उनके मन में कोई घमंड अथवा गर्व की भावना नहीं उपजी, अपितु, उनका ऐसा विश्वास है कि प्रभु स्वयं ही अदृष्य रूप से वहाँ पर प्रकट हुये और इस महान कार्य को सम्पन्न करवाया। (आज भी स्वर्ण मंदिर की दीवारों पर कई भित्तिचित्र अथवा तस्वीरें मिलती हैं जो स्वयं प्रभु को एक श्रमिक के रूप में निर्माण के कार्य में व्यस्त दर्शाती हैं) इस शब्द में गुरु जी अपने मन के ऐसे विश्वास को प्रकट कर रहे हैं जैसे कि वास्तव में यह स्वयं प्रभु का ही कार्य था जो उसने ही सम्पूर्ण किया, अन्यथा, इतना विशाल प्रयोजन मेरे जैसे दीन मनुष्य के वश से बाहर था।

गुरु जी शब्द का आरंभ विनम्र भाव से करते हुए कहते हैं :"(हे' मेरे मित्रो, प्रभु) स्वयं ही अपने संतों के काम करवाने के लिये आकर खड़े हो गये और हरि ने ही (मंदिर बनाने तथा नगर बसाने का) सब काम करवाया। (निर्माण कार्य सम्पूर्ण हो जाने से चारों ओर) धरती सुंदर सुहानी लगती है, ताल अथवा सरोवर भी सुहावना है जिसमें अँमृत जैसा जल भरा है। अँमृत जैसा जल भरा होने से (प्रभु ने) समस्त कार्य और साज सजावट पूर्ण कर दी है और मेरे समस्त मनोरथ सम्पूर्ण हो गये हैं। अब सारे जग में जय जयकार हो रही है और मेरी समस्त आशंकाएँ एवं चिंताएँ उतर गयी हैं। यह समस्त श्रेय उस पूर्ण, महान पुरुष, सर्वशक्तिमान, अविनाशी (प्रभु) का है जिसका यशोगान वेद तथा पुराण में भी किया गया हैं। (इस कार्य के पूर्ण होने से) परमेश्वर ने अपनी स्वयं की परम्परा (अपने भक्तों की सहायता करने की) को सिद्ध किया है, नानक ने तो केवल उसके नाम का ध्यान किया है "।(१)

प्रभु नाम का ध्यान करने से उन्हें अन्य कितने वरदान प्राप्त हुये, यह हमसे साझा करते हुये गुरु जी कहते हैं :“(हे’ मेरे मित्रो, मैं प्रतीत करता हू कि जब मैंने प्रभु नाम का ध्यान किया तो मुझे अनेकों आशीर्वाद प्राप्त हुये, जैसे कि) सृजनकर्ता ने सभी नव निधियाँ, रिद्धियाँ और सिद्धियाँ दे दी हैं और अब (मेरे घर में किसी वस्तु की) कोई कमी नहीं आती है । (मुझे इतना मिल गया कि) मेरे खाने, ख़र्च करने, बाँटने और सुख आनंद पाने के पश्चात भी सृजनकर्ता का दान सवाया ही होता रहा । हाँ, मैंने उस अँतरयामी प्रभु को पाया जिसका दान सवाया होता रहा और कभी समाप्त नहीं हुया । मेरे करोड़ों विघ्न पलायन कर गये और कोई दुख मेरे निकट नहीं आया है । मेरी (सांसारिक लोभ लालसा की) भूख का विनाश पूर्ण रूप से हो गया और (अब मेरे हृदय में) अत्यंत शांति, सहजता एवं आनंदमयी भावना का वास है । अतः, नानक उस स्वामी के गुणों का गान करते हैं जिसकी महिमा आश्चर्यचकित करती है ”।(२)

मूल रूप से अँमितसर जैसे नये नगर का निर्माण करने और उसे बसाने के लिये गुरु जी ने अत्यंत परिश्रम किया और अपना अत्यधिक समय दिया । अब समय के साथ साथ यह नगर पूरे प्रदेश का बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र बन चुका है और सिख धर्म के अनुयायियों के लिये यह वैसा ही महत्वपूर्ण पवित्र स्थान है जैसे कि हिन्दू धर्म में काशी अथवा मुस्लिम धर्म में मक्का की मान्यता है । अपने इस महान प्रयोजन के लिये गुरु जी मन में कोई गर्व तथा घमंड की भावना को लाने की अपेक्षा कहते हैं : “ (हे’ मेरे मित्रो), जिस (प्रभु) का यह काम था, उसी ने किया है, अन्यथा, कोई (मेरे जैसा) मनुष्य बेचारा क्या करने के योग्य था । (अब इस मंदिर में) भक्त लोग हरि के गुण गान एवं जय जयकार करते हुये सुहाते हैं । गोविंद के गुण गाते हुये उनके मन आनंदित हो उठते हैं और साथ में साधु रूपी संगति भी प्रेम के साथ जुड़ जाती है । जिसने भी सरोवर बनाने के लिये घोर परिश्रम किया, उसकी प्रशंसा एवं स्तुति कैसे व्यक्त की जा सकती है । समस्त अठसठ तीर्थों के भ्रमण, पुण्य दान, शुभ अथवा पवित्र कर्म और सदाचार आदि, सभी गुण प्रभु की महिमा गान में निहित हैं । अतः, नानक ने उस स्वामी का आश्रय तथा आधार लिया है, जिसकी परम्परा पतितों को (गुरु के शब्द के द्वारा) पवित्र करने की है ”।(३)

शब्द के अंत में प्रभु की महानता को विचारते हुये विनम्र भाव से गुरु जी प्रभु से उसके नाम के ध्यान का वरदान माँगते हैं और कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), मेरा सृजनहार प्रभु गुणों का भंडार है उसकी स्तुति कौन कर सकता है । इसलिये वह कहते हैं : “ हे’ मेरे स्वामी, तुम्हारे संत यह प्रार्थना करते हैं कि उन्हें अपने नाम रुपी महामधुर रस का दान दो । हाँ, कृपया अपने नाम का दान दो और साथ ही यह भी क्षमता दो कि (हमारे मन में से) एक क्षण भी ना बिसर सको । हम प्रत्येक दिन अपनी रसना से सृष्टि के स्वामी के गुण उच्चारते और गाते रहें, (क्योंकि) जिस मनुष्य के मन में प्रभु नाम से प्रीत है उसका तन मन अँमित से भीगा रहता है । नानक विनय भाव से कहते हैं कि उनके (मन की) इच्छा पूर्ण हो गयी, क्योंकि, वह प्रभु के दर्शन कर पुनर्जीवित हो गये हैं ”।(४-७-१०)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम जब कोई बड़ा धार्मिक एवं सामाजिक कार्य (जैसे कि, किसी गुरुद्वारे अथवा ग़रीबों के लिये चिकित्सालय आदि का निर्माण) करवाते हैं तब हमें विनम्र भाव से यह विचारना चाहिये कि यह प्रभु का काम है और प्रभु ने उसे स्वयं ही किया है तथा हमें ऐसे पुण्य के कार्यक्रमों एवं प्रयोजनों के लिए सहायता अथवा निर्देशन के योग्य होने के उपलक्ष में प्रभु को धन्यवाद देते हुए उसका गुणगान करना चाहिए । सर्वदा प्रभु से प्रार्थना करते रहना चाहिये कि हम उसे कभी भूल ना सकें ।

ਪੰਨਾ ੭੮੫

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਸੂਹਬ ਤਾ ਸੋਹਾਗਣੀ ਜਾ ਮੰਨਿ ਲੈਹਿ ਸਚੁ ਨਾਉ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਅਪਣਾ ਮਨਾਇ ਲੈ ਰੂਪੁ ਚੜੀ ਤਾ ਅਗਲਾ ਦੂਜਾ ਨਾਹੀ ਥਾਉ ॥
ਐਸਾ ਸੀਗਾਰੁ ਬਣਾਇ ਤੂ ਮੈਲਾ ਕਦੇ ਨ ਹੋਵਈ ਅਹਿਨਿਸਿ ਲਾਗੈ ਭਾਉ ॥
ਨਾਨਕ ਸੋਹਾਗਣਿ ਕਾ ਕਿਆ ਚਿਹਨੁ ਹੈ ਅੰਦਰਿ ਸਚੁ ਮੁਖੁ ਉਜਲਾ ਖਸਮੈ ਮਾਹਿ ਸਮਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਲੋਕਾ ਵੇ ਹਉ ਸੂਹਵੀ ਸੂਹਾ ਵੇਸੁ ਕਰੀ ॥
ਵੇਸੀ ਸਹੁ ਨ ਪਾਈਐ ਕਰਿ ਕਰਿ ਵੇਸ ਰਹੀ ॥
ਨਾਨਕ ਤਿਨੀ ਸਹੁ ਪਾਇਆ ਜਿਨੀ ਗੁਰ ਕੀ ਸਿਖ ਸੁਣੀ ॥
ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਸੋ ਥੀਐ ਇਨ ਬਿਧਿ ਕੰਤ ਮਿਲੀ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੭੮੬

ਪਉੜੀ ॥

ਹੁਕਮੀ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਸਾਜੀਅਨੁ ਬਹੁ ਭਿਤਿ ਸੰਸਾਰਾ ॥
ਤੇਰਾ ਹੁਕਮੁ ਨ ਜਾਪੀ ਕੇਤੜਾ ਸਚੇ ਅਲਖ ਅਪਾਰਾ ॥
ਇਕਨਾ ਨੋ ਤੂ ਮੇਲਿ ਲੈਹਿ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਬੀਚਾਰਾ ॥
ਸਚਿ ਰਤੇ ਸੇ ਨਿਰਮਲੇ ਹਉਮੈ ਤਜਿ ਵਿਕਾਰਾ ॥
ਜਿਸੁ ਤੂ ਮੇਲਹਿ ਸੋ ਤੁਧੁ ਮਿਲੈ ਸੋਈ ਸਚਿਆਰਾ ॥੨॥

पृ- ७८५

सलोक महला ३॥

सूहब ता सोहागणी जा मँनि लैहि सचु नाउ ॥
सतिगुरु अपणा मनाइ लै रूपु चड़ी ता अगला दूजा नाही थाउ ॥
ऐसा सीगारु बणाइ तू मैला कदे न होवई अहिनिसि लागै भाउ ॥
नानक सोहागणि का किआ चिहनु है अँदरि सचु मुखु उजला खसमै माहि समाइ ॥१॥

महला ३ ॥

लोका वे हउ सूहवी सूहा वेसु करी ॥
वेसी सहु न पाईऐ करि करि वेस रही ॥
नानक तिनी सहु पाइआ जिनी गुर की सिख सुणी ॥
जो तिसु भावै सो थीऐ इन बिधि कँत मिली ॥२॥

पृ- ७८६

पउड़ी ॥

हुकमी सिृसटि साजीअनु बहु भिति सँसारा ॥
तेरा हुकमु न जापी केतड़ा सचे अलख अपारा ॥
इकना नो तू मेलि लैहि गुर सबदि बीचारा ॥
सचि रते से निरमले हउमै तजि विकारा ॥
जिसु तू मेलहि सो तुधु मिलै सोई सचिआरा ॥२॥

सलोक महला – ३

इस शब्द में गुरु जी प्रभु की तुलना एक ऐसे सर्वज्ञानी बुद्धिमान पति से करते हैं जिसे अपनी मानव आत्मा रूपी वधू के भड़कीले रंगीन परिधान (अर्थात संतों के गेरुये चोले अथवा धर्मनिष्ठा के प्रति झूठे दिखावे) प्रभावित नहीं करते हैं । साथ ही वह सामान्य मानव जीवनात्मा की तुलना प्रभु की वधू से करते हुये कहते हैं कि किस प्रकार से हम अपनी आत्मा को सजा सँवार सकते हैं जिससे प्रभु प्रसन्न होकर अपने साथ जोड़ने के लिये हमें स्वीकार कर लें ।

कोई भी मनुष्य जो यह समझता है कि केवल साधु संतों वाले चोले पहनने तथा विधि अनुसार पूजा पाठ, व्रत त्योहार, तीर्थ स्नान आदि करने से उसे प्रभु प्राप्त हो सकेंगे तो उसके लिये गुरु जी का कथन है : " (हे' गेरुये चोले वाली वधू, पवित्र माने जाने वाले परिधान पहन कर) सोहागिन जैसी तभी सुहा सकोगी जब तुम उस सत्य (प्रभु) नाम को स्वीकार करोगी ।पहले तुम अपने सच्चे गुरु को प्रसन्न करो (ऐसा करने से तुम इतने गुणों से सम्पन्न हो जायोगी कि) तुम्हारे पर रूप चढ़ेगा, तुम्हें कोई दूसरा स्थान नहीं मिलेगा (जहाँ पर तुम सच्चे गुरु के बिना ऐसे गुण प्राप्त कर सको) । हाँ, तुम (आत्मिक रूप से) ऐसा ही श्रृंगार करो जो कभी भी (दूषित विचारों से) मैला नहीं हो पाये और तुम दिन रात (प्रभु रूपी पति के) प्रेमभाव में लीन रहो । संक्षेप में, हे' नानक, (यदि तुम जानना चाहते हो कि) सुहागिन (प्रभु के साथ लीन आत्मा) का क्या चिन्ह है (तो उत्तर यह है कि) उसके अंदर सत्य का निवास हो, उसका मुख (आत्मिक शांति से) उज्जवल हो और वह सदैव अपने पति (प्रभु के प्रति प्रेम) में समाई रहे "।(१)

महला - ३

अब गुरु जी स्वयं को उन लोगों के स्थान पर रखते हैं जिन्होंने सब प्रकार के संत साधुयों वाले परिधान धारण किये और विभिन्न धर्मों के अनुसार अनेक प्रकार की शास्त्रीय विधियों का अभ्यास किया, किन्तु प्रभु को पाने में असफल रहे । इसलिये वह ऐसे प्रयासों को व्यर्थ बताते हुये अन्य सबको सतर्क करते हैं । एक बार फिर से गुरु जी एक अल्हड़ वधू (जो कि भड़कीले वस्त्र धारण कर पति को रिझाने का प्रयत्न करती रहती है) रूपी मानव आत्मा की ओर से कहते हैं : " सुनो, हे' लोगों, मैं सुहानी लग रही हूँ, मैंने सुंदर लाल रंग का वेश (पवित्र कहा जाने वाला परिधान) पहना है । परन्तु, ऐसे लुभावने वेश धारण कर करके मै थक गयी हूँ (और अब मुझे समझ में आ गया है कि केवल ऐसे) वेश पहनने से (प्रभु) प्राप्त नहीं हो सकते हैं ।हे' नानक, केवल वही अपने पति (प्रभु) को प्राप्त कर सकी हैं जिन्होंने गुरु की शिक्षा को

सुना और यह स्वीकार किया कि जो उस (प्रभु) को भाता है वही होता है ; केवल इसी विधि के द्वारा वह अपने कँत से मिल सकी हैं ”।(२)

पउड़ी

अंत में गुरु जी इस पउड़ी के द्वारा पुनः यही तथ्य दृढ़ करते हैं कि केवल वही होता है जो उस प्रभु को भाता है और केवल वही उससे मिल सकते हैं जिन्हें वह अपने साथ मिलाना चाहता है । गुरु जी कहते हैं : “ (हे' प्रभु), तुम्हारे ही आदेश से यह सृष्टि स्थापित हुई और यह संसार बहु भाँति का है । हे' सच्चे, अगोचर, अपार प्रभु तेरे आदेश कितने और कहाँ तक हैं, यह हम नहीं जान पाते । गुरु के शब्दों (वाणी) को विचार करने वाले कुछ लोगों को तुम अपने साथ मिला लेते हो । (क्योंकि, गुरु के शब्दों को विचारने से) वह अपने अहम एवं अन्य विकारों को त्याग कर अनंत रूप से सत्य प्रभु में रम जाते हैं और निर्मल हो जाते हैं । परन्तु, हे' प्रभु, जिसे तुम अपने साथ जोड़ लेते हो वही तुमसे एकरूप हो सकता है और केवल वही मनुष्य सच्चा मनुष्य है ”।(२)

इस शब्द का भाव यह है कि यदि हम अपने सच्चे पति (प्रभु) से मिलना चाहते हैं तो हमें उसे लुभाने के लिये झूठे, किन्तु, पवित्र कहे जाने वाले साधुयों के चोले एवं खोखली धार्मिक विधियों को नहीं अपनाना चाहिये । इसकी अपेक्षा, गुरु की वाणी पर विचार करते हुये हम प्रभु के प्रेम में लीन रह कर उसकी कृपा और आशीर्वाद के योग्य बनने का प्रयास करें ।

ਪੰਨਾ ੭੮੭

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੨ ॥

ਜਿਨੀ ਚਲਣੁ ਜਾਣਿਆ ਸੇ ਕਿਉ ਕਰਹਿ ਵਿਥਾਰ ॥
ਚਲਣ ਸਾਰ ਨ ਜਾਣਨੀ ਕਾਜ ਸਵਾਰਣਹਾਰ ॥੧॥

ਮਃ ੨ ॥

ਰਾਤਿ ਕਾਰਣਿ ਧਨੁ ਸੰਚੀਐ ਭਲਕੇ ਚਲਣੁ ਹੋਇ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਲਿ ਨ ਚਲਈ ਫਿਰਿ ਪਛੁਤਾਵਾ ਹੋਇ ॥੨॥

ਮਃ ੨ ॥

ਬਧਾ ਚਟੀ ਜੋ ਭਰੇ ਨਾ ਗੁਣੁ ਨਾ ਉਪਕਾਰੁ ॥
ਸੇਤੀ ਖੁਸੀ ਸਵਾਰੀਐ ਨਾਨਕ ਕਾਰਜੁ ਸਾਰੁ ॥੩॥

ਮਃ ੨ ॥

ਮਨਹਠਿ ਤਰਫ ਨ ਜਿਪਈ ਜੇ ਬਹੁਤਾ ਘਾਲੇ ॥
ਤਰਫ ਜਿਣੈ ਸਤ ਭਾਉ ਦੇ ਜਨ ਨਾਨਕ ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰੇ ॥੪॥

ਪਉੜੀ ॥

ਕਰਤੈ ਕਾਰਣੁ ਜਿਨਿ ਕੀਆ ਸੋ ਜਾਣੈ ਸੋਈ ॥
ਆਪੇ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਉਪਾਈਅਨੁਆਪੇ ਫੁਨਿ ਗੋਈ ॥

ਪੰਨਾ ੭੮੮

ਜੁਗ ਚਾਰੇ ਸਭ ਭਵਿ ਥਕੀ ਕਿਨਿ ਕੀਮਤਿ ਹੋਈ ॥
ਸਤਿਗੁਰਿ ਏਕੁ ਵਿਖਾਲਿਆ ਮਨਿ ਤਨਿ ਸੁਖੁ ਹੋਈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਦਾ ਸਲਾਹੀਐ ਕਰਤਾ ਕਰੇ ਸੁ ਹੋਈ ॥੭॥

पृ- ७८७

सलोक महला २॥

जिनी चलणु जाणिआ से किउ करहि विथार ॥
चलण सार न जाणनी काज सवारणहार ॥१॥

महला २॥

राति कारणि धनु सँचीऐ भलके चलणु होइ ॥
नानक नालि न चलई फिरि पछुतावा होइ ॥२॥

महला २॥

बधा चटी जो भरे ना गुणु ना उपकारु ॥
सेती खुसी सवारीऐ नानक कारजु सारु ॥३॥

महला २॥

मनहठि तरफ न जिपई जे बहुता घाले ॥
तरफ जिणै सत भाउ दे जन नानक सबदु वीचारे ॥४॥

पउड़ी ॥

करतै कारणु जिनि कीआ सो जाणै सोई ॥
आपे सिृसटि उपाईअनुआपे फुनि गोई ॥

पृ- ७८८

जुग चारे सभ भवि थकी किनि कीमति होई ॥
सतिगुरि एकु विखालिआ मनि तनि सुखु होई ॥
गुरमुखि सदा सलाहीऐ करता करे सु होई ॥७॥

सलोक महला – २

हमारी मृत्यु अटल है और किसी भी समय आ सकती है, इसी तथ्य के साथ गुरु जी इस शब्द को आरंभ करते हैं तथा वह यह भी इंगित करते हैं कि जो लोग इस सत्य को सदा मन में रखते हैं उनका आचरण कैसा होता है ।

वह कहते हैं: " (हे' मेरे मित्रो), जो लोग यह जानते हैं कि उन्हें (किसी भी दिन इस संसार से) जाना है, वह अपना विस्तार नहीं करते (अथवा वह अनेक सांसारिक वृत्तियों में अपना मन नहीं भटकने देते) । किन्तु, जो लोग अपने जाने (मृत्यु) का सार अथवा भेद को नहीं समझते वही केवल सांसारिक कार्य सम्पन्न (अधिकतम धन का संचय) करते रहते हैं "।(१)

महला - २

गुरु जी पुनः हमें याद दिलाते हैं कि संसार में हमारा पड़ाव एक रात्रि के समान सीमित समय के लिये है, अत:, इस सीमित काल के लिये हमें अति अधिक धन का संचय नहीं करते रहना चाहिये । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, यदि) हम एक रात्रि के समान सीमित जीवन काल के लिये धन का संचय करते रहें और प्रातः काल हमें जाना है तब हे' नानक, वह धन तो हमारे साथ चलेगा नहीं और फिर हम पछतायेंगे "।(२)

महला - २

गुरु जी अब उन लोगों पर टिप्पणी करते हैं जो अपने सांसारिक विषय सुख के लिये धन का संचय करते रहते हैं, किन्तु, किसी दान

दक्षिणा अथवा परोपकारी कृत्यों के लिये स्वेच्छा से ना देते हुए विवश होकर थोड़ा बहुत धन दे देते हैं। इस पर गुरु जी का कहना है : " (हे' मेरे मित्रो), यदि कोई मनुष्य विवश होकर जुर्माना समझते हुए कुछ धन का दान कर देता है तो यह कोई दान अथवा उपकार नहीं होता ।हे' नानक, केवल उसी कार्य को सँवरा हुया (गुणी अथवा परोपकारी) समझो जिसे हम स्वेच्छा और प्रसन्नता से करते हैं "।(३)

महला - २

अब गुरु जी हमें कहते हैं कि किस प्रकार के लोग जीवन का खेल जीतने में सफल रहते हैं। उनका कथन हैं : " (हे' मेरे मित्रो), कई लोग जो मन के हठी (जैसे व्रत नियम, जंगलों में तपस्या, तथा अपने शरीर को कष्ट देने में विश्वास रखते) हैं वह चाहे कितने भी प्रयास करलें, (प्रभु को) अपने लिये नहीं जीत सकते। हे' भक्त नानक, वही लोग (प्रभु को) अपने पाले में जीत कर ला सकते हैं, जो (गुरु के) शब्द अथवा वाणी को सत्य भाव से विचारते हैं (तथा प्रभु का ध्यान प्रेम से करते है) "।(४)

पउड़ी

पउड़ी के अँत में गुरु जी हमें बता रहे हैं कि जो कुछ भी हो रहा है वह क्यों हो रहा है और आनंदित एवं सुखी जीवन जीने का सर्वोत्तम मार्ग कौन सा है। वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), सृजनकर्ता जिसने यह सब कारण गढ़े (जन्म, मरण, सुख व दुख), उन सब को वही जानता है कि ऐसा क्यों है। उसी ने स्वयं इस सृष्टि को बनाया है और फिर स्वयं ही उसका विनाश करता है। समस्त संसार चारों युगों से भटक कर थक चुका है, परन्तु, कोई भी (उस प्रभु का) मूल्य अथवा गुण नहीं समझ सका। जिसको भी सच्चे गुरु ने केवल एक ही (ईश्वर) को दर्शाया है उसके मन और तन को सुख शांति प्राप्त हुई है। अतः, (हमारे लिये यही उत्तम है कि) गुरु की वाणी के द्वारा सदा प्रभु की सराहना करें तथा ध्यान में रखें कि केवल वही होता है जो सृजनकर्ता करता है "।(७)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि अधिक से अधिक धन सम्पदा का संचय करने के लिये हमें अपनी उर्जा तथा समय को नष्ट नहीं करना चाहिये, क्योंकि, संसार में हमारा पड़ाव सीमित एवं अनिश्चित काल के लिये है। दूसरा बिंदु यह कि हमें सच्चे प्रेम एवं सदभावना के साथ, किसी प्रकार के हठ और दबाव के बिना परोपकारी एवं शुभ कार्य करने चाहिये, क्योंकि, स्वेच्छा से परोपकारी कृत्य करना ही महत्वपूर्ण है ।अंत में, हमें सदा यह स्मरण रखना चाहिये कि केवल प्रभु ही सब कारणों के कारण हैं और उन कारणों को खोजने के प्रयत्न करने की अपेक्षा, हमें प्रसन्न भाव से प्रभु की इच्छा को स्वीकार कर उसके आदेश के अनुसार रहना चाहिये।

ਪੰਨਾ ੭੮੯

ਸਲੋਕ ਮਃ ੧ ॥

ਦੁਇ ਦੀਵੇ ਚਉਦਹ ਹਟਨਾਲੇ ॥
ਜੇਤੇ ਜੀਅ ਤੇਤੇ ਵਣਜਾਰੇ ॥
ਖੁਲ੍ਹੇ ਹਟ ਹੋਆ ਵਾਪਾਰੁ ॥
ਜੋ ਪਹੁਚੈ ਸੋ ਚਲਣਹਾਰੁ ॥
ਧਰਮੁ ਦਲਾਲੁ ਪਾਏ ਨੀਸਾਣੁ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਲਾਹਾ ਪਰਵਾਣੁ ॥
ਘਰਿ ਆਏ ਵਜੀ ਵਾਧਾਈ ॥
ਸਚ ਨਾਮ ਕੀ ਮਿਲੀ ਵਡਿਆਈ ॥੧॥

ਮਃ ੧ ॥

ਰਾਤੀ ਹੋਵਨਿ ਕਾਲੀਆ ਸੁਪੇਦਾ ਸੇ ਵੰਨ ॥
ਦਿਹੁ ਬਗਾ ਤਪੈ ਘਣਾ ਕਾਲਿਆ ਕਾਲੇ ਵੰਨ ॥
ਅੰਧੇ ਅਕਲੀ ਬਾਹਰੇ ਮੂਰਖ ਅੰਧ ਗਿਆਨੁ ॥
ਨਾਨਕ ਨਦਰੀ ਬਾਹਰੇ ਕਬਹਿ ਨ ਪਾਵਹਿ ਮਾਨੁ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਕਾਇਆ ਕੋਟੁ ਰਚਾਇਆ ਹਰਿ ਸਚੈ ਆਪੇ ॥
ਇਕਿ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਖੁਆਇਅਨੁ ਹਉਮੈ ਵਿਚਿ ਵਿਆਪੇ ॥
ਇਹੁ ਮਾਨਸ ਜਨਮੁ ਦੁਲੰਭੁ ਸਾ ਮਨਮੁਖ ਸੰਤਾਪੇ ॥
ਜਿਸੁ ਆਪਿ ਬੁਝਾਏ ਸੋ ਬੁਝਸੀ ਜਿਸੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਥਾਪੇ ॥

ਸਭੁ ਜਗੁ ਖੇਲੁ ਰਚਾਇਓਨੁ ਸਭ ਵਰਤੈ ਆਪੇ ॥੧੩॥

पृ- ७८९

सलोक महला १॥

दुइ दीवे चउदह हटनाले ॥
जेते जीअ तेते वणजारे ॥
खुल्हे हट होआ वापारु ॥
जो पहुचै सो चलणहारु ॥
धरमु दलालु पाए नीसाणु ॥
नानक नामु लाहा परवाणु ॥
घरि आए वजी वाधाई ॥
सच नाम की मिली वडिआई ॥१॥

महला १॥

राती होवनि कालीआ सुपेदा से वँन ॥
दिहु बगा तपै घणा कालिआ काले वँन ॥
अँधे अकली बाहरे मूरख अँध गिआनु ॥
नानक नदरी बाहरे कबहि न पावहि मानु ॥२॥

पउड़ी ॥

काइआ कोटु रचाइआ हरि सचै आपे ॥
इकि दूजै भाइ खुआइअनु हउमै विचि विआपे ॥
इहु मानस जनमु दुलँभु सा मनमुख सँतापे ॥
जिसु आपि बुझाए सो बुझसी जिसु सतिगुरु थापे ॥

सभु जगु खेलु रचाइओनु सभ वरतै आपे ॥१३॥

सलोक महला – १

यहाँ गुरु जी इस शब्द में एक सुंदर उदाहरण का उपयोग करते हैं जहाँ हाट में लोग अपना अपना सामान बेचने के लिए आते हैं और लाभ कमाकर अथवा हानि उठाकर (संसार से) चले जाते हैं ।

उनका कहना है: “(हे’ मेरे मित्रो), सूर्य और चन्द्रमा दो दीपक के समान हैं जो चौदह हाटों (बजारों, सात धरती के नीचे तथा सात धरती के उपर के संसार) को प्रकाश देते हैं । (और संसार में) जितने जीव हैं सभी व्यापारी हैं, हाट खुले रहते हैं और व्यापार हर समय चलता रहता है (लोग शुभ कर्मों से लाभ, अथवा, दुष कर्मों से हानि पाते रहते हैं), जो भी यहाँ पहुँचता है वह (कभी न कभी तो) जाने वाला होता है । एक दलाल की भाँति धर्म का न्यायाधीश (कुछ लोगों के व्यापार के गुण अथवा जीवन के आचरण को देख स्वीकृति का) चिन्ह लगा देता है। क्योंकि, हे’ नानक, केवल प्रभु नाम का लाभ ही (उसके दरबार में) स्वीकृत होता है । जो भी अपने घर में (प्रभु के दरबार में, उसके नाम का) लाभ लेकर आता है उसके लिये बधाइयाँ बजती हैं और सच्चे नाम के लाभ के हेतु वह यश पाता है ”।(१)

महला - १

गुरु जी का विचार है कि मानव स्वभाव किसी भी प्रकार की स्थिति में बदलता नहीं है । जो लोग दुष्ट प्रवृत्ति के होते हैं वह दुष्ट ही रहते हैं और जो सदाचारी हैं वह सदा सदाचारी ही रहते हैं ।उदाहरण देकर वह समझाते हैं : “ यद्यपि कि रातें घोर काली होती हैं, परन्तु, श्वेत वस्तु श्वेत ही रहती है और अति तप्त दिवस श्वेत रंग का होता है तब भी काला रंग काला ही रहता है । इसी प्रकार हे’ नानक, अँधे, बुद्धिहीन, मूर्ख, ज्ञान विहीन लोग (प्रभु की कृपा) दृष्टि से वंचित कभी (उसके दरबार में) सम्मान नहीं पाते ”।(२)

पउड़ी

गुरु जी इस पउड़ी में एक गहन कारण व्यक्त करते हैं कि लोग भले अथवा बुरे जैसे भी हों, वह वैसे ही क्यों बने रहते हैं ; शब्द के अँत

में इस पउड़ी के द्वारा इस तथ्य का विश्लेषण करते हुए वह कहते हैं : (हे' मेरे मित्रो), अनंत तथा सच्चे हरि ने स्वंय मानव काया रूपी कोट (किला) को रचाया है । उनमें से कुछ के अंदर उस (प्रभु) ने दुविधा का भाव डाल उन्हें भटका दिया है अतः वह अहम में व्याप्त रहते हैं । यह मानव जन्म दुर्लभ है, परन्तु, अंहकारी मनुष्य संताप में दुखी रहते हैं । क्योंकि, जिसे प्रभु स्वयं समझाते हैं और जिस पर सच्चे गुरु कृपा करते हैं वही (अपने इस शरीर का सदुपयोग) समझते हैं । (अतः, हम किसी को उसके विशेष आचरण के लिये कोई दोष नहीं दे सकते, क्योंकि) प्रभु ने इस सृष्टि को एक खेल की भाँति रचा है और सभी जगह स्वयं ही सब कुछ करता है " ।(१३)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि हमारा शरीर एक कोट अथवा क़िले की भाँति है जिसमें हमें सदगुण एकत्र करने की आवश्यकता है तथा प्रभु नाम का व्यापारी बनने का प्रयास करना है, क्योंकि, प्रभु की दुकान पर केवल वही स्वीकृत है । हमें यह भी विचार करना चाहिये कि प्रभु के आदेशानुसार ही कुछ लोग सदाचारी रहते हैं तथा अन्य कुछ दुराचारी होते हैं । अतः, हमें किसी को दोष ना देते हुए सदैव सही राह पर चलने और सदाचारी एंव संतस्वभाव लोगों की संगति में रहने के लिये प्रभु की कृपा तथा गुरु के मार्ग दर्शन को पाने का प्रयत्न करते रहना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੭੯੧

ਸਲੋਕ ਮਃ ੨ ॥

ਕਿਸ ਹੀ ਕੋਈ ਕੋਇ ਮੰਞੁ ਨਿਮਾਣੀਇਕੁ ਤੂ ॥

ਪੰਨਾ ੭੯੨

ਕਿਉ ਨ ਮਰੀਜੈ ਰੋਇ ਜਾ ਲਗੁ ਚਿਤਿ ਨ ਆਵਹੀ ॥੧॥

ਮਃ ੨ ॥

ਜਾਂ ਸੁਖੁ ਤਾ ਸਹੁ ਰਾਵਿਓ ਦੁਖਿ ਭੀ ਸੰਮ੍ਹਾਲਿਓਇ ॥
ਨਾਨਕੁ ਕਹੈ ਸਿਆਣੀਏ ਇਉ ਕੰਤ ਮਿਲਾਵਾ ਹੋਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਹਉ ਕਿਆ ਸਾਲਾਹੀ ਕਿਰਮ ਜੰਤੁ ਵਡੀ ਤੇਰੀ ਵਡਿਆਈ ॥
ਤੂ ਅਗਮ ਦਇਆਲੁ ਅਗੰਮੁ ਹੈ ਆਪਿ ਲੈਹਿ ਮਿਲਾਈ ॥
ਮੈ ਤੁਝ ਬਿਨੁ ਬੇਲੀ ਕੋ ਨਹੀ ਤੂ ਅੰਤਿ ਸਖਾਈ ॥
ਜੋ ਤੇਰੀ ਸਰਣਾਗਤੀ ਤਿਨ ਲੈਹਿ ਛਡਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਵੇਪਰਵਾਹੁ ਹੈ ਤਿਸੁ ਤਿਲੁ ਨ ਤਮਾਈ ॥੨੦॥੧॥

पृ- ७९१

सलोक महला २॥

किस ही कोई कोइ मँञ निमाणीइकु तू ॥

पृ- ७९२

किउ न मरीजै रोइ जा लगु चिति न आवही॥१॥

महला २॥

जां सुखु ता सहु राविओ दुखि भी सँमा्लिओइ ॥
नानकु कहै सिआणीए इउ कँत मिलावा होइ ॥२॥

पउड़ी

हउ किआ सालाही किरम जँतु वडी तेरी वडिआई ॥
तू अगम दइआलु अगँमु है आपि लैहि मिलाई ॥
मै तुझ बिनु बेली को नही तू अँति सखाई ॥
जो तेरी सरणागती तिन लैहि छडाई ॥
नानक वेपरवाहु है तिसु तिलु न तमाई ॥२०॥१॥

सलोक महला – १

उपरोक्त श्लोक राग सूही महाकाव्य की अंतिम पउड़ी से पहले वाला है जिसमें गुरु जी यह समझाते हैं कि प्रभु पर हमारा विश्वास कितना दृढ़ होना चाहिए और जीवन में हमें कितना विनम्र रहने की ज़रूरत है ।

वह कहते हैं : " हे' प्रभु, कुछ लोगों को किसी एक का सहारा है तथा कुछ और को किसी दूसरे का, परन्तु मुझ बेचारी के लिये तो केवल एक तुम्हीं (सहायक) हो । अतः, मैं क्यों ना रो रोकर मरूँ जब तक तुम मेरे मन में ना आ जाओ (और मैं तुम्हें वहाँ पा लूँ) "।(१)

महला -२

इसलिये, गुरु जी हम सभी को परामर्श देते हुये कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), जब सुख शांति हो तो अपने पति (प्रभु) का ध्यान करो और जब तुम दुख एवं कष्ट में हो तब भी उसी को मन में स्मरण करो । नानक का कथन है, हे' बुद्धिमती (वधू) इसी प्रकार से कँत (प्रभु रूपी पति) से मिलन हो पाता है "।(२)

पउड़ी

गुरु जी सूही राग में रचे महाकाव्य की अंतिम पउड़ी में यह प्रकट करते हैं कि प्रभु की प्रशंसा करने के लिए हमें कितना विनम्र भाव रखना चाहिए । वह कहते हैं : "(हे ' प्रभु), मेरे जैसा कीड़े के समान जीव तुम्हारी क्या सराहना कर सकता है, तुम्हारा यश तो अति महान है । हे' दयालु प्रभु, तुम अगम्य हो, हमारी पहुँच से बाहर हो, अतः, स्वयं ही मिला लो तुम्हारे बिना मेरा और कोई मित्र नहीं है, तुम्हीं अंत तक मेरे सखा हो । जो कोई तुम्हारी शरण में आते हैं, उन्हीं को तुम(सांसारिक कष्टों से) छुड़ा लेते हो । हे' नानक, प्रभु बेपरवाह हैं (अपने समस्त अनुग्रहों में से किसी के लिये भी) वह एक तिल भर की भी अपेक्षा किसी से नहीं करते "।(२०-१)

इस पउड़ी का संदेश है कि हम सुख तथा दुख, दोनों दशा में प्रभु का स्मरण करें और उसके अतिरिक्त किसी और से किसी प्रकार की सहायता की आशा न रखें । हमें सदैव उसका यशगान एवं ध्यान करना चाहिये और यह स्मरण रहे कि हमारे समान तुच्छ कीड़े के लिये उस प्रभु की अपार महिमा को समझ पाना वश से बाहर है जो किसी अपेक्षा के बिना हमें सदैव समस्त अनुग्रह प्रदान करता रहता है ।

ਪੰਨਾ ੭੯੩

ਸੂਹੀ ॥

ਜੋ ਦਿਨ ਆਵਹਿ ਸੋ ਦਿਨ ਜਾਹੀ ॥
ਕਰਨਾ ਕੂਚੁ ਰਹਨੁ ਥਿਰੁ ਨਾਹੀ ॥
ਸੰਗੁ ਚਲਤ ਹੈ ਹਮ ਭੀ ਚਲਨਾ॥
ਦੂਰਿ ਗਵਨੁ ਸਿਰ ਊਪਰਿ ਮਰਨਾ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੭੯੪

ਕਿਆ ਤੂ ਸੋਇਆ ਜਾਗੁ ਇਆਨਾ ॥
ਤੈ ਜੀਵਨੁ ਜਗਿ ਸਚੁ ਕਰਿ ਜਾਨਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਿਨਿ ਜੀਉ ਦੀਆ ਸੁ ਰਿਜਕੁ ਅੰਬਰਾਵੈ ॥
ਸਭ ਘਟ ਭੀਤਰਿ ਹਾਟੁ ਚਲਾਵੈ ॥
ਕਰਿ ਬੰਦਿਗੀ ਛਾਡਿ ਮੈ ਮੇਰਾ ॥
ਹਿਰਦੈ ਨਾਮੁ ਸਮ੍ਹਾਰਿ ਸਵੇਰਾ ॥੨॥

ਜਨਮੁ ਸਿਰਾਨੋ ਪੰਥੁ ਨ ਸਵਾਰਾ ॥
ਸਾਂਝ ਪਰੀ ਦਹ ਦਿਸ ਅੰਧਿਆਰਾ ॥
ਕਹਿ ਰਵਿਦਾਸ ਨਿਦਾਨਿ ਦਿਵਾਨੇ ॥
ਚੇਤਸਿ ਨਾਹੀ ਦੁਨੀਆ ਫਨ ਖਾਨੇ ॥੩॥੨॥

पृ- ७९३

सूही ॥

जो दिन आवहि सो दिन जाही ॥
करना कूचु रहनु थिरु नाही ॥
सँगु चलत है हम भी चलना ॥
दूरि गवनु सिर ऊपरिमरना ॥१॥

पृ- ७९४

किआ तू सोइआ जागु इआना ॥
तै जीवनु जगि सचु करि जाना ॥१॥रहाउ॥

जिनि जीउ दीआ सु रिजकु अँबरावै ॥
सभ घट भीतरि हाटु चलावै ॥
करि बँदिगी छाडि मै मेरा ॥
हिरदै नामु समा्रि सवेरा ॥२॥

जनमु सिरानो पँथु न सवारा ॥
सांझ परी दह दिस अँधिआरा ॥
कहि रविदास निदानि दिवाने ॥
चेतसि नाही दुनीआ फन खाने ॥३॥२॥

राग सूही श्री रविदास जी की
सूही

इस शब्द में भक्त रविदास जी हमें मृत्यु के लिये पुनः चेता रहे हैं जो सर्वदा हमारे सर पर मँडराती रहती है । वह यह भी इंगित करते हैं कि हमारी आँखों के सम्मुख हमारे साथी संगी बिछुड़ते रहते हैं, अतः, हमें भी यह विचारना चाहिये कि किसी दिन इस संसार से जाना है । उनका प्रस्ताव है कि जीवन के इस अवसर का उपयोग प्रभु नाम में ध्यान लगाने के लिये अति आवश्यक है, क्योंकि, केवल एक यही विधि है और यही समय है जो हमें जन्म मरण के कष्टों तथा हमारे द्वारा किये गए दुष्कर्मों के दंड से बचाने के लिये उपयुक्त है ।

रविदास जी कहते हैं : “ (हे' मेरे मित्रो), जो भी दिन आते हैं वह चले जाते हैं, (इसी प्रकार से जो जीव इस संसार में आते हैं उन्हें) यहाँ से कूच करना है, क्योंकि कोई भी यहाँ सदा के लिये स्थिर नहीं है । (हम देखते हैं कि हमारे कई) साथी संगी चले जा रहे हैं और हमें भी (एक दिन) चलना है । मृत्यु हमारे सिरों पर मँडरा रही है और हमें भी अति दूर स्थान पर गमन करना है ”। (१)

अतः, हमें इस भयावह मृत्यु से सतर्क करने का प्रयत्न करते हुये रविदास जी कहते हैं : “ हे' नासमझ उठ, जाग, तुम क्यों सोये (सांसारिक धंधों में लिप्त) हुये हो, तुमने (भूल से) इस सांसारिक जीवन को अनंत समझ रखा है ”।(१-विराम)

अब रविदास जी प्रभु नाम का ध्यान न करने पर हमारी नित्य की बहानेबाज़ी पर टिप्पणी करते हैं, जहाँ हम यह कहते रहते हैं कि हमारे पास स्वयं एवं परिवार के लिये जीविका उपार्जन करने तथा अन्य कार्यों के कारण प्रभु के ध्यान और पूजा पाठ के लिये समय नहीं है । उनका कथन है : “(हे' मेरे मित्रो), वह (प्रभु) जिसने जीवन प्रदान किया है, जीविका भी प्रदान करता है । वास्तव में, वह सबके हृदय में बैठा (हमारी तन रूपी एक) दुकान चला रहा है (और इस प्रकार प्रत्येक जीव को उसकी जीविका अर्जित करने के लिये आवश्यक शक्ति एवं बुद्धि प्रदान कर रहा है । अतः, हे' मानव), तुम (सांसारिक धन सम्पदा के लिए) मैं और मेरी की भावना को त्यागो और प्रभु नाम के ध्यान रूपी धन को शीघ्रता से एकत्र कर हृदय में सँभाल कर रखलो (क्योंकि, पता नहीं कब मृत्यु आकर तुम्हें ले जाये)”।(२)

रविदास जी फिर से एक बार हमें स्मरण करवाते हुये शब्द के अँत में पूछते हैं कि हमने क्यों अपनी समस्त आयु सांसारिक धंधों में व्यतीत कर दी और मरणोपराँत लंबी यात्रा को सुगम करने के लिये कुछ भी नहीं किया । वह कहते हैं “ (हे' मूर्ख मानव), तुमने अपना समस्त जीवन (सांसारिक कामों में) गँवा दिया, परन्तु, अपने (मृत्यु के पश्चात के) पथ को नहीं सँवारा।(स्मरण रहे कि) जब जीवन की साँझ (वृद्धावस्था) आयेगी, तब (स्वयं को इतना क्षीण एवं असहाय पायोगे जैसे कि) दसों दिशायों में अंधकार हो गया है । अतः, रविदास जी कहते हैं, हे' मूर्ख, दीवाने, तुम चेतते क्यों नहीं (प्रभु को स्मरण करने के लिये ; जबकि तुम जानते हो कि) यह संसार एक ऐसा घर है जो अंत में नष्ट हो

जायेगा ”।(३-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें स्मरण रखना चाहिये कि हमारे जीवन का ध्येय केवल अपने परिवार के भरण पोषण तक ही सीमित नहीं है, चूँकि मृत्यु किसी भी क्षण हमारी जीवन लीला समाप्त कर सकती है, अतः, मरणोपरांत की यात्रा को सुगम बनाने के लिए हमें अपनी और परिवार की मूलभूत आवश्यकताओं को निभाते हुए जीवन का कुछ समय प्रभु नाम के ध्यान में भी समर्पित करना अपेक्षित है ।

ਪੰਨਾ ੭੯੫

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਆਪੇ ਸਬਦੁ ਆਪੇ ਨੀਸਾਨੁ ॥
ਆਪੇ ਸੁਰਤਾ ਆਪੇ ਜਾਨੁ ॥
ਆਪੇ ਕਰਿ ਕਰਿ ਵੇਖੈ ਤਾਣੁ ॥
ਤੂ ਦਾਤਾ ਨਾਮੁ ਪਰਵਾਣੁ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੭੯੬

ਐਸਾ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨ ਦੇਉ ॥
ਹਉ ਜਾਚਿਕੁ ਤੂ ਅਲਖ ਅਭੇਉ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਧਰਕਟੀ ਨਾਰਿ ॥
ਭੂੰਡੀ ਕਾਮਣਿ ਕਾਮਣਿਆਰਿ ॥
ਰਾਜੁ ਰੂਪੁ ਝੂਠਾ ਦਿਨ ਚਾਰਿ ॥
ਨਾਮੁ ਮਿਲੈ ਚਾਨਣੁ ਅੰਧਿਆਰਿ ॥੨॥

ਚਖਿ ਛੋਡੀ ਸਹਸਾ ਨਹੀ ਕੋਇ ॥
ਬਾਪੁ ਦਿਸੈ ਵੇਜਾਤਿ ਨ ਹੋਇ ॥
ਏਕੇ ਕਉ ਨਾਹੀ ਭਉ ਕੋਇ ॥
ਕਰਤਾ ਕਰੇ ਕਰਾਵੈ ਸੋਇ ॥੩॥

ਸਬਦਿ ਮੁਏ ਮਨੁ ਮਨ ਤੇ ਮਾਰਿਆ ॥
ਠਾਕਿ ਰਹੇ ਮਨੁ ਸਾਚੈ ਧਾਰਿਆ ॥
ਅਵਰੁ ਨ ਸੂਝੈ ਗੁਰ ਕਉ ਵਾਰਿਆ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਰਤੇ ਨਿਸਤਾਰਿਆ ॥੪॥੩॥

पृ- ७९५

बिलावल महला १॥

आपे सबदु आपे नीसानु ॥
आपे सुरता आपे जानु ॥
आपे करि करि वेखै ताणु ॥
तू दातानामु परवाणु ॥१॥

पृ- ७९६

ऐसा नामु निरँजन देउ ॥
हउ जाचिकु तू अलख अभेउ ॥१॥रहाउ॥

माइआ मोहु धरकटी नारि ॥
भूँडी कामणि कामणिआरि ॥
राजु रूपु झूठा दिन चारि ॥
नामु मिलै चानणु अँधिआरि ॥२॥

चखि छोडी सहसा नही कोइ ॥
बापु दिसै वेजाति न होइ ॥
एके कउ नाही भउ कोइ ॥
करता करे करावै सोइ ॥३॥

सबदि मुए मनु मन ते मारिआ ॥
ठाकि रहे मनु साचै धारिआ ॥
अवरु न सूझै गुर कउ वारिआ ॥
नानक नामि रते निसतारिआ ॥४॥३॥

बिलावल महला – १

इस शब्द में गुरु जी प्रभु की अनेक अनूठी विशेषतायों की चर्चा करते हैं और बताते हैं कि कैसे वह विभिन्न रूप धारण करता है ।

आरंभ में गुरु जी कहते हैं: “ (हे' मेरे मित्रो), प्रभु स्वयं ही शब्द (दैवी नाम) है और स्वयं ही (अपने द्वार में प्रवेश देने के लिये) आज्ञापत्र अथवा चिन्ह है । वह स्वयं ही श्रोता है और स्वयं ही ज्ञाता है ।वह स्वयं ही अपनी शक्ति से (सृष्टि का) सृजन करता है और उसकी देख भाल करता है ।हे' प्रभु, तुम्हीं दाता हो (सबके लिये) और (तुम्हारे दरबार में) तुम्हारा नाम ही स्वीकृत है ”।(१)

प्रभु का नाम कितना विलक्षण है इस पर गुरु जी कहते हैं : “ हे' मेरे अलख अभेद्य प्रभु, तेरा नाम इतना पवित्र है कि मैं तुम्हारे द्वार पर एक याचक बन गया हूँ ”।(१-विराम)

अब गुरु जी सांसारिक मायाजाल के स्वभाव पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं : “(हे' मेरे मित्रो), सांसारिक माया से मोह प्रेम करना, एक निन्दनीय, कुरूप एवं व्यभिचारिणी स्त्री से प्रेम करने के समान है । (हमें स्मरण रखना चाहिये कि) राज पाट और रूप (का घमंड) केवल चार दिनों के लिये है, अतः झूठा है । (जब किसी को) प्रभु के नाम का वरदान मिलता है तब (उसके अंदर से माया के कारण से उपजा) अँधकार (दैवी ज्ञान के) प्रकाश में प्रवर्तित हो जाता है “ ।(२)

गुरु के वह अनुयायी, जिन्होंने मायामोह त्याग कर प्रभु के साथ नाता जोड़ लिया है उनकी मनोदशा का गुरु जी वर्णन करते हैं : “(जिन्होंने सांसारिक धन सम्पदा और सत्ता के प्रभाव का अनुभव करके, अथवा) उसका स्वाद चख कर (मन में से उसे) त्याग दिया है, उन्हें (माया के दुष्प्रभावों पर) कोई संशय नहीं रहता, (जैसे कि किसी मनुष्य को) अपने पिता को अपने सम्मुख देख कर स्वयं को जाति विहीन समझने की आवश्यकता नहीं होती । जो मनुष्य प्रभु पर निर्भर करता है और उसी एक को (अपने पिता के समान) मानता है, उसे किसी प्रकार का भय नहीं होता (क्योंकि, वह मन में विश्वास करता है कि वही) सृजनकर्ता सब कुछ स्वयं ही कर तथा करवा रहा है ”।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, गुरु का अनुसरण करके जो अपने अहम को ऐसे समाप्त कर लेते हैं जैसे कि) शब्द के द्वारा वह मृत के समान हैं, अतः उन्होंने अपने मन को मन के द्वारा ही वश में कर लिया है ।(उनकी विचारधारा इतनी प्रवर्तित हो चुकी है कि वह) मन में (माया के विषय पर सोचते ही नहीं और वहाँ पर केवल) अनंत (प्रभु) को ही दृढ़ रूप से धारण किये रहते हैं ।वह अपने गुरु के अतिरिक्त (जो उन्हें संरक्षण देते हैं) और किसी दूसरे के लिये सोच ही नहीं सकते, अतः, वह गुरु पर बलिहारी हैं (उसके मार्ग दर्शन के कारण) । हे' नानक, प्रभु के नाम में रमे रहने के कारण वह (भवसागर से) पार हो जाते हैं "।(४-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें यह समझ लेना चाहिये कि धन सम्पदा एवं सामर्थ्य का अभिमान अत्यंत अल्पकालीन है । अतः, हमें गुरु के उपदेश और मार्ग दर्शन के द्वारा अपने मन को मायामोह से हटा कर प्रभु के नाम में लीन करना चाहिये, क्योंकि, केवल वही हमारा उद्धार कर सकता है ।

ਪੰਨਾ ੭੯੭	पृ- ७९७
ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੩ ॥	**बिलावल महला ३॥**
ਪੂਰਾ ਥਾਟੁ ਬਣਾਇਆ ਪੂਰੈ ਵੇਖਹੁ ਏਕ ਸਮਾਨਾ ॥ ਇਸੁ ਪਰਪੰਚ ਮਹਿ ਸਾਚੇ ਨਾਮ ਕੀ ਵਡਿਆਈ ਮਤੁ ਕੋ ਧਰਹੁ ਗੁਮਾਨਾ ॥੧॥	पूरा थाटु बणाइआ पूरै वेखहु एक समाना ॥ इसु परपँच महि साचे नाम की वडिआई मतु को धरहु गुमाना ॥१॥
ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਜਿਸ ਨੋ ਮਤਿ ਆਵੈ ਸੋ ਸਤਿਗੁਰ ਮਾਹਿ ਸਮਾਨਾ ॥ ਇਹ ਬਾਣੀ ਜੋ ਜੀਅਹੁ ਜਾਣੈ ਤਿਸੁ ਅੰਤਰਿ ਰਵੈ ਹਰਿ ਨਾਮਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	सतिगुर की जिस नो मति आवै सो सतिगुर माहि समाना ॥ इह बाणी जो जीअहु जाणै तिसु अँतरि रवै हरि नामा ॥१॥रहाउ॥
ਚਹੁ ਜੁਗਾ ਕਾ ਹੁਣਿ ਨਿਬੇੜਾ ਨਰ ਮਨੁਖਾ ਨੋ ਏਕੁ ਨਿਧਾਨਾ ॥ ਜਤੁ ਸੰਜਮ ਤੀਰਥ ਓਨਾ ਜੁਗਾ ਕਾ ਧਰਮੁ ਹੈ ਕਲਿ ਮਹਿ ਕੀਰਤਿ ਹਰਿ ਨਾਮਾ ॥੨॥	चहु जुगा का हुणि निबेड़ा नर मनुखा नो एकु निधाना ॥ जतु संजम तीरथ ओना जुगा का धरमु है कलि महि कीरति हरि नामा ॥२॥
ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਆਪੋ ਆਪਣਾ ਧਰਮੁ ਹੈ ਸੋਧਿ ਦੇਖਹੁ ਬੇਦ ਪੁਰਾਨਾ ॥ ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਿਨੀ ਧਿਆਇਆ ਹਰਿ ਹਰਿ ਜਗਿ ਤੇ ਪੂਰੇ ਪਰਵਾਨਾ ॥੩॥	जुगि जुगि आपो आपणा धरमु है सोधि देखहु बेद पुराना ॥ गुरमुखि जिनी धिआइआ हरि हरिजगि ते पूरे परवाना ॥३॥
ਪੰਨਾ ੭੯੮	**पृ- ७९८**
ਕਹਤ ਨਾਨਕੁ ਸਚੇ ਸਿਉ ਪ੍ਰੀਤਿ ਲਾਏ ਚੂਕੈ ਮਨਿ ਅਭਿਮਾਨਾ ॥ ਕਹਤ ਸੁਣਤ ਸਭੇ ਸੁਖ ਪਾਵਹਿ ਮਾਨਤ ਪਾਹਿ ਨਿਧਾਨਾ ॥੪॥੪॥	कहत नानकु सचे सिउ प्रीति लाए चूकै मनि अभिमाना ॥ कहत सुणत सभे सुख पावहि मानत पाहि निधाना ॥४॥४॥

बिलावल महला - ३

इस शब्द में गुरु जी प्रभु नाम के साथ साथ गुरु के परामर्श और उपदेशों के महत्व का वर्णन करते हैं ।

वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), पूर्ण प्रभु ने इस सृष्टि को पूर्ण ठाठ, अथवा, प्रवीणता से रचाया है, तुम देख सकते हो कि वह सम्पूर्ण (सृष्टि) में समान रूप से समाया हुया है । इस संसार के आडम्बर में केवल सच्चे अनंत प्रभु नाम का ध्यान करने से ही यश प्राप्त होता है । अतः, किसी को भी (तपस्या, दान दक्षिणा, संयम तथा अन्य किसी प्रकार के गुण का) अपने मन में अभिमान नहीं धारण करना चाहिए "।(१)

अब वह सच्चे गुरु के ज्ञान और परामर्श के महत्व पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), जो भी कोई सच्चे गुरु के आदेशों का वरदान पा लेता है, वह सच्चे गुरु में ही समाया रहता है और जो कोई भी उसकी वाणी को अपने हृदय (के अंदर) से समझता है और उसका पालन करता है उसके अँतरमन में हरि का नाम बस जाता है "।(१-विराम)

स्वाभाविक रूप से प्रश्न यह उठता है कि अन्य सभी प्रयास जैसे कि तीर्थ यात्रा, दान दक्षिणा, व्रत संयम आदि, जो कि लोग युगों से करते आ रहे हैं उन सबका क्या प्रयोजन है । ऐसे सभी प्रश्नों के उत्तर में गुरु जी कहते हैं: " चारों युगों के अनुभव से हम अब इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि समस्त मानव जाति के लिये केवल एक ही भंडार (प्रभु का नाम, मुक्ति पाने का प्रभावी मार्ग) है। जप, तप, शुद्धता, संयम और तीर्थ यात्रा आदि सदाचार एवं धर्म के रूप में पुरातन वैदिक युगों में प्रचारित किये गये हैं , परन्तु वर्तमान के कलियुग में तो हरि के नाम की कीर्ति का बखान ही सच्चा धर्म है "।(२)

जिन लोगों का विश्वास वेद पुराण अथवा हिंदू धर्म के पवित्र ग्रंथों में है उनके भ्रम दूर करने के लिये गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, यदि तुम) वेद, पुराण (तथा अन्य पवित्र ग्रंथों) का पठन तथा शोध करोगे तो देखोगे कि प्रत्येक युग का अपना अपना धर्म (कर्तव्य) रहा है, (परन्तु, आज के वर्तमान युग में गुरु की भावना यही है कि) इस संसार में पूर्ण रूप से वही स्वीकृत हैं जिन्होंने गुरु के निर्देशानुसार हरि के नाम का ध्यान किया है "।(३)

अंत में, गुरु जी कहते हैं " (हे' मेरे मित्रो), नानक का कथन है कि जो भी मनुष्य सच्चे अनंत (प्रभु) में लीन रहता है, उसके मन में से अभिमान की भावना चुक जाती है । वह सभी लोग जो (प्रभु के) नाम को उच्चारते हैं एवं उसका श्रवण करते हैं वह सुख शांति प्राप्त करते हैं और (गुरु की मति को) मानने तथा उस पर विश्वास करने वाले (प्रभु नाम रूपी) धन का भंडार पा लेते हैं "।(४-४)

इस शब्द का भाव यह है कि पूर्व के युगों में शास्त्रीय विधियाँ, जैसे कि शुद्धता एवं पवित्रता, दान दक्षिणा, जप, तप, साधना तथा संयम आदि, भले ही धर्म अथवा पवित्र कर्तव्यों के रूप में प्रचारित और प्रचलित किये गये हों, परन्तु वर्तमान कलियुग में प्रभु के साथ एकरूप होने अथवा मोक्ष प्राप्त करने की एकमात्र सही राह केवल प्रभु की महिमा एवं यश के गायन तथा उसके नाम का ध्यान करने से मिलती है ।

ਪੰਨਾ ੭੯੯

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਆਵਹੁ ਸੰਤ ਮਿਲਹੁ ਮੇਰੇ ਭਾਈ ਮਿਲਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਕਥਾ ਕਰਹੁ ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਬੋਹਿਥੁ ਹੈ ਕਲਜੁਗਿ ਖੇਵਟੁ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਤਰਹੁ ॥੧॥

ਮੇਰੇ ਮਨ ਹਰਿ ਗੁਣ ਹਰਿ ਉਚਰਹੁ ॥
ਮਸਤਕਿ ਲਿਖਤ ਲਿਖੇ ਗੁਨ ਗਾਏ ਮਿਲਿ ਸੰਗਤਿ ਪਾਰਿ ਪਰਹੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੮੦੦

ਕਾਇਆ ਨਗਰ ਮਹਿ ਰਾਮ ਰਸੁ ਊਤਮੁ ਕਿਉ ਪਾਈਐ ਉਪਦੇਸੁ ਜਨ ਕਰਹੁ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਿ ਸਫਲ ਹਰਿ ਦਰਸਨੁ ਮਿਲਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਹਰਿ ਰਸੁ ਪੀਅਹੁ ॥੨॥

ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਹਰਿ ਮੀਠਾ ਹਰਿ ਸੰਤਹੁ ਚਾਖਿ ਦਿਖਹੁ ॥
ਗੁਰਮਤਿ ਹਰਿ ਰਸੁ ਮੀਠਾ ਲਾਗਾ ਤਿਨ ਬਿਸਰੇ ਸਭਿ ਬਿਖ ਰਸਹੁ ॥੩॥

ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਰਸੁ ਰਾਮ ਰਸਾਇਣੁ ਹਰਿ ਸੇਵਹੁ ਸੰਤ ਜਨਹੁ ॥
ਚਾਰਿ ਪਦਾਰਥ ਚਾਰੇ ਪਾਏ ਗੁਰਮਤਿ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਭਜਹੁ ॥੪॥੪॥

पृ- ७९९

बिलावल महला ४॥

आवहु सँत मिलहु मेरे भाई मिलि हरि हरि कथा करहु ॥
हरि हरि नामु बोहिथु है कलजुगि खेवटु गुर सबदि तरहु ॥१॥

मेरे मन हरि गुण हरि उचरहु ॥
मसतकि लिखत लिखे गुन गाए मिलिसँगति पारि परहु ॥१॥ रहाउ॥

प ८००

काइआ नगर महि राम रसु ऊतमु किउ पाईऐ उपदेसु जन करहु ॥
सतिगुरु सेवि सफल हरि दरसनु मिलि अँमृतु हरि रसु पीअहु ॥२॥

हरि हरि नामु अँमृतु हरि मीठा हरि सँतहु चाखि दिखहु ॥
गुरमति हरि रसु मीठा लागा तिन बिसरे सभि बिख रसहु ॥३॥

राम नामु रसु राम रसाइणु हरि सेवहु सँत जनहु ॥
चारि पदारथ चारे पाए गुरमति नानक हरि भजहु ॥४॥४॥

बिलावल महला - ४

इस शब्द में गुरु जी अति स्नेहभाव से हम सभी को अपने साथ बैठा कर प्रभु के विषय पर दीर्घ वार्तालाप करने के लिए आमंत्रित करते हैं ।

वह कहते हैं : " आओ, मेरे भाई संतजनों, हम सब मिल कर हरि (यश) की कथा कहें । इस कलियुग में हरि का नाम एक नैया के समान है जिसका माँझी गुरु है, अतः, हम (पतवार रूपी) गुरु के शब्द में लीन रह कर (सांसारिक भवसागर) में से पार उतर जायें "।(१)

गुरु जी यह परामर्श केवल हम सभी को ही नहीं देते, अपितु, अपने मन को भी कहते हैं : " हे' मेरे मन, हरि के गुणों का बारम्बार उच्चारण करो और अपने मस्तक पर लिखे प्रारब्ध के अनुसार संतों की पवित्र संगति में बैठ प्रभु के गुण गाते रह कर (भवसागर से) पार हो जाओ "।(१-विराम)

अब गुरु जी अपने संत मित्रों से शरीर में छिपे हुए महत्वपूर्ण गुप्त भंडार के विषय में पूछते हैं । वह कहते हैं " हे' मेरे मित्रजनों, (मैंने सुना है कि) इस काया रूपी नगरी में राम नाम रूपी अति उत्तम रस है, हे' प्रभु के भक्तजनों, अपने उपदेश द्वारा बताओ कि हम इसे कैसे पा सकते हैं । (उनका उत्तर है कि) सच्चे गुरु की सेवा (और अनुसरण) के द्वारा तुम हरि के दर्शन करने में सफल हो जाओ और फिर उससे मिल कर हरि नाम रूपी अँमृत रस पीओ " ।(२)

हरि नाम रूपी अँमृत रस के अनूठे गुणों का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : " हे' संतों हरि के भक्तजनों, हरि नाम रूपी अँमृत अति मधुर है, इसे चख कर तो देखो । गुरु के निर्देशों का पालन करके जिन्हें भी हरि नाम रूपी अँमृत रस मीठा लगा, उन्हें अन्य समस्त विष सरीखे (सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य रूपी) रस बिसर गये " ।(३)

अंत में, गुरु जी कहते हैं :" हे' संतजनों, राम नाम रूपी रस एक सर्वव्यापी औषधि है, इसे बाँट कर पीओ, हरि की सेवा अथवा आराधना करो । (जिन्होंने भी ऐसा किया) उनको (जीवन में) चारों (मुख्य) पदार्थ अथवा वरदान (सदाचार, आर्थिक उन्नति, सुखी वैवाहिक जीवन और मोक्ष) प्राप्त हो गये ।(इसलिये), नानक कहते हैं कि गुरु से मति अथवा आदेश पाकर हरि के नाम का जाप करो "।(४-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने जीवन के चारों मुख्य उद्देश्य (सदाचार एवं सत्य धर्म, आर्थिक सुरक्षा, सुखी वैवाहिक जीवन तथा मोक्ष) प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें संतजनों की संगति में मिल बैठ कर हरि की महिमा का गुणगान करना चाहिए और अमरत्व प्रदान करने वाला राम नाम रूपी अँमृत रस का स्वाद चखना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੮੦੧

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਸੁਖ ਨਿਧਾਨ ਪ੍ਰੀਤਮ ਪ੍ਰਭ ਮੇਰੇ ॥

ਪੰਨਾ ੮੦੨

ਅਗਨਤ ਗੁਣ ਠਾਕੁਰ ਪ੍ਰਭ ਤੇਰੇ ॥
ਮੋਹਿ ਅਨਾਥ ਤੁਮਰੀ ਸਰਣਾਈ ॥
ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਹਰਿ ਚਰਨ ਧਿਆਈ ॥੧॥

ਦਇਆ ਕਰਹੁ ਬਸਹੁ ਮਨਿ ਆਇ ॥
ਮੋਹਿ ਨਿਰਗੁਨ ਲੀਜੈ ਲੜਿ ਲਾਇ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪ੍ਰਭੁ ਚਿਤਿ ਆਵੈ ਤਾ ਕੈਸੀ ਭੀੜ ॥
ਹਰਿ ਸੇਵਕ ਨਾਹੀ ਜਮ ਪੀੜ ॥
ਸਰਬ ਦੂਖ ਹਰਿ ਸਿਮਰਤ ਨਸੇ ॥
ਜਾ ਕੈ ਸੰਗਿ ਸਦਾ ਪ੍ਰਭੁ ਬਸੈ ॥੨॥

ਪ੍ਰਭ ਕਾ ਨਾਮੁ ਮਨਿ ਤਨਿ ਆਧਾਰੁ ॥
ਬਿਸਰਤ ਨਾਮੁ ਹੋਵਤ ਤਨੁ ਛਾਰੁ ॥
ਪ੍ਰਭ ਚਿਤਿ ਆਏ ਪੂਰਨ ਸਭ ਕਾਜ ॥
ਹਰਿ ਬਿਸਰਤ ਸਭ ਕਾ ਮੁਹਤਾਜ ॥੩॥

ਚਰਨ ਕਮਲ ਸੰਗਿ ਲਾਗੀ ਪ੍ਰੀਤਿ ॥
ਬਿਸਰਿ ਗਈ ਸਭ ਦੁਰਮਤਿ ਰੀਤਿ ॥
ਮਨ ਤਨ ਅੰਤਰਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਮੰਤ ॥
ਨਾਨਕ ਭਗਤਨ ਕੈ ਘਰਿ ਸਦਾ ਅਨੰਦ ॥੪॥੩॥

पृ- ८०१

बिलावलु महला ५॥

सुख निधानप्रीतम प्रभ मेरे ॥

पृ- ८०२

अगनत गुण ठाकुर प्रभ तेरे ॥
मोहि अनाथ तुमरी सरणाई ॥
करि किरपा हरि चरन धिआई ॥१॥

दइया करहु बसहु मनि आइ ॥
मोहि निरगुन लीजे लड़ि लाइ ॥रहाउ॥

प्रभु चिति आवै ता कैसी भीड़ ॥
हरि सेवक नाही जम पीड़ ॥
सरब दूख हरि सिमरत नसे ॥
जा कै सँगि सदा प्रभु बसै ॥२॥

प्रभ का नामु मनि तनि आधारु ॥
बिसरत नामु होवत तनु छारु ॥
प्रभ चिति आए पूरन सभ काज ॥
हरि बिसरत सभ का मुहताज ॥३॥

चरन कमल सँगि लागी प्रीति ॥
बिसर गई सभ दुरमति रीति ॥
मन तन अँतरि हरि हरि मँत ॥
नानक भगतन कै घरि सदा अनँद ॥४॥३॥

बिलावल महला - ५

प्रभु और उसके नाम के प्रति अपनी अथाह विनम्रता, प्रेम और स्नेह का एक सुंदर उदाहरण गुरु जी इस शब्द के रूप में देते हैं जो हमारे लिए भी एक प्रबल एवं निर्णायक स्थिति प्रस्तुत करता है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर प्रभु नाम का ध्यान करने से प्राप्त होने वाले कुछ आशीर्वादों को भी व्यक्त किया गया है और यह भी कहा गया है कि यदि हम प्रभु नाम से दूर रहते हैं तो क्या होता है।

गुरु जी अतिरिक्त विनम्रता से कहते हैं: " हे' मेरे प्रियतम प्रभु, सुखों के भंडार हो, हे' ठाकुर, तुम्हारे गुण अनगिनत हैं। हे' प्रभु, मैं एक अनाथ तुम्हारी शरण में आया हूँ, कृपा करो कि मैं तुम्हारे चरण कमलों (तुम्हारे पवित्र नाम) का ध्यान करूँ "।(१)

गुरु जी अब प्रभु से ऐसे विनम्र भाव के साथ निवेदन करते हैं : "(हे' प्रभु), दया करो और मेरे मन में आकर बसो तथा मुझ जैसे निर्गुणी जीव को अपने आँचल से बाँध लो "। (१-विराम)

प्रभु नाम का ध्यान करते रहने से प्राप्त होने वाले आशीर्वादों का वर्णन गुरु जी यहाँ करते हैं: " (हे' मेरे मित्रो), यदि प्रभु को मन में स्मरण करते रहो तो कैसे कोई आपदा आ सकती है, (और किसी दुख दर्द के लिये तो क्या कहें) हरि के सेवक अथवा भक्त को तो यमराज भी कोई पीड़ा नहीं दे सकते। (संक्षेप में) जिसके साथ प्रभु सदैव बसे हुये हैं उसके समस्त दुख हरि नाम को स्मरण करते रहने से पलायन कर जाते हैं " ।(२)

प्रभु नाम का ध्यान करने से मिले वरदानों के वर्णन के साथ ही, प्रभु नाम को भुलाने के परिणामों पर भी गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), प्रभु का नाम (मनुष्य के लिए) तन एवं मन का आधार है और उस नाम के बिसरने से तन (अंदर से क्षीण हो जाता है) राख के समान व्यर्थ हो जाता है।जब प्रभु मन में आकर रहते हैं तब (उस मनुष्य के) समस्त कार्य सम्पन्न हो जाते हैं, किन्तु, प्रभु को बिसार देने से वह सभी का मोहताज हो जाता है "।(३)

प्रभु नाम में मन के लीन रहने पर मिले वरदानों के फलस्वरूप मनुष्य की मनोस्थित का वर्णन करते हुये गुरु जी शब्द के अंत में कहते हैं: " (हे' मेरे मित्रो), जिस किसी की भी प्रीत प्रभु के चरण कमलों (प्रभु के पवित्र नाम) से लग गई, उसे अपनी समस्त दुष्ट प्रवृत्तियाँ बिसर जाती हैं ।(ऐसे मनुष्य के) मन और तन के अंदर हरि हरि नाम का मंत्र रहता है, हे' नानक, ऐसे हरि के भक्तजनों के घर (हृदय) में सदा आनंद का वास होता है "।(४-३)

इस शब्द का संदेश है कि सदा अति विनम्रता के साथ प्रभु से यही माँगना चाहिये कि वह हमें अपनी शरण में रखें और अपने नाम का ध्यान करने की योग्यता प्रदान करें । क्योंकि, जब हम प्रभु नाम को स्मरण करते हैं तब हमारे सभी कार्य बिना किसी विघ्न के सम्पन्न हो जाते हैं और हमारा तन मन शांति और आनंद की स्थिति में रहता है ।

ਪੰਨਾ ੮੦੩

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਭੂਲੇ ਮਾਰਗੁ ਜਿਨਹਿ ਬਤਾਇਆ ॥
ਐਸਾ ਗੁਰੁ ਵਡਭਾਗੀ ਪਾਇਆ ॥੧॥

ਸਿਮਰਿ ਮਨਾ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਚਿਤਾਰੇ ॥
ਬਸਿ ਰਹੇ ਹਿਰਦੈ ਗੁਰ ਚਰਨ ਪਿਆਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੮੦੪

ਕਾਮਿ ਕ੍ਰੋਧਿ ਲੋਭਿ ਮੋਹਿ ਮਨੁ ਲੀਨਾ ॥
ਬੰਧਨ ਕਾਟਿ ਮੁਕਤਿ ਗੁਰਿ ਕੀਨਾ ॥੨॥

ਦੁਖ ਸੁਖ ਕਰਤ ਜਨਮਿ ਫੁਨਿ ਮੂਆ ॥
ਚਰਨ ਕਮਲ ਗੁਰਿ ਆਸ੍ਰਮੁ ਦੀਆ ॥੩॥

ਅਗਨਿ ਸਾਗਰ ਬੂਡਤ ਸੰਸਾਰਾ ॥
ਨਾਨਕ ਬਾਹ ਪਕਰਿ ਸਤਿਗੁਰਿ ਨਿਸਤਾਰਾ ॥੪॥੩॥੮॥

पृ- ८०३

बिलावलु महला ५॥

भूले मारगु जिनहि बताइआ ॥
ऐसा गुरु वडभागी पाइआ ॥१॥

सिमरि मना राम नामु चितारे ॥
बसि रहे हिरदैगुर चरन पिआरे ॥१॥रहाउ॥

पृ- ८०४

कामि क्रोधि लोभि मोहि मनु लीना ॥
बँधन काटि मुकति गुरि कीना ॥२॥

दुख सुख करत जनमि फुनि मूआ ॥
चरन कमल गुरि आस्रमु दीआ ॥३॥

अगनि सागर बूडत सँसारा ॥
नानक बाह पकरि सतिगुरि निसतारा ॥४॥३॥८॥

बिलावल महला - ५

इस शब्द में गुरु जी का यह कथन है कि वह मनुष्य कितना भाग्यशाली है जिसे ऐसे गुरु प्राप्त होते हैं जो उसे भवसागर में डूबने से बचाकर जीवन को व्यतीत करने का सही मार्ग बताते हैं ।

वह कहते हैं: “ (हे’ मेरे मित्रो), कोई सौभाग्यशाली मनुष्य ही ऐसे गुरु को पाता है जो उसे राह भूलने (कर्मकांडों में भटकने) से बचाकर सही मार्ग पर चलना सिखाता है ”।(१)

ऐसे ही गुरु से आशीर्वाद पाकर गुरु जी स्वयं को भाग्यशाली समझते हुये अपने ही मन को कहते हैं : “ हे’ मेरे मन, राम के नाम को हृदय में चेतायो और उसका ध्यान करो, (मुझे ऐसा लगता है कि) मेरे गुरु के प्रिय चरण मेरे हृदय में बसे हुये हैं ”।(१-विराम)

गुरु से मिलने के पश्चात जो वरदान किसी को मिलते हैं उनमें से कुछ को सूचीबद्ध करते हुये गुरु जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो, साधारणतः) किसी का भी मन काम, क्रोध, लोभ और मोह में लीन रहता है, परन्तु, गुरु ऐसे समस्त बंधन काट कर उसे मुक्त कर देता है ”।(२)

गुरु जी और आगे कहते हैं : “ (हे’ मेरे मित्रो, मनुष्य) जीवन के क्रियाकलापों में कभी दुख तो कभी सुख पाते हुये बारम्बार जन्म और मरण में रहता है, परन्तु, गुरु उस को चरण कमल रुपी एक आश्रम देता है (जहाँ गुरबाणी के द्वारा जन्म मरण के फेरों का अंत हो जाता है) “ ।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं : “ (हे’ मेरे मित्रो, सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य रुपी) अग्नि के सागर में समस्त संसार डूब जाता है, परन्तु, हे’ नानक, (जिसने भी गुरु की शरण ली, उसी की) बाँह पकड़ कर सच्चे गुरु ने (उसे, इस सागर में से) पार उतार दिया है ”।(४-३-८)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम सही राह से भटक कर, काम, क्रोध, लोभ और मोह के चंगुल में फँस गये हैं तो हमें गुरु के पास जाकर प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमें सही राह पर रखें । तदउपरांत, वह अवश्य ही हमारे सभी दुष्कर्मों को मिटा कर तथा सांसारिक बंधनों को काट कर जन्म मरण के दुखों एवं कष्टों से हमारा उद्धार करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੮੦੫

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਮਾਤ ਪਿਤਾ ਸੁਤ ਬੰਧਪ ਭਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਹੋਆ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਸਹਾਈ ॥੧॥

ਸੂਖ ਸਹਜ ਆਨੰਦ ਘਣੇ ॥
ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਪੂਰੀ ਜਾ ਕੀ ਬਾਣੀ ਅਨਿਕ ਗੁਣਾ ਜਾ ਕੇ ਜਾਹਿ ਨ ਗਣੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਗਲ ਸਰੰਜਾਮ ਕਰੇ ਪ੍ਰਭੁ ਆਪੇ ॥
ਭਏ ਮਨੋਰਥ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਜਾਪੇ ॥੨॥

ਅਰਥ ਧਰਮ ਕਾਮ ਮੋਖ ਕਾ ਦਾਤਾ ॥

ਪੰਨਾ ੮੦੬

ਪੂਰੀ ਭਈ ਸਿਮਰਿ ਸਿਮਰਿ ਬਿਧਾਤਾ ॥੩॥

ਸਾਧਸੰਗਿ ਨਾਨਕਿ ਰੰਗੁ ਮਾਣਿਆ ॥
ਘਰਿ ਆਇਆ ਪੂਰੈ ਗੁਰਿ ਆਣਿਆ ॥੪॥੧੨॥੧੭॥

पृ- ८०५

बिलावल महला ५॥

मात पिता सुत बँधप भाई ॥
नानक होआ पारब्रहमु सहाई ॥१

सूख सहज आनँद घणे ॥
गुरु पूरा पूरी जा की बाणी अनिक गुणा जा के जाहि न गणे ॥१॥ रहाउ॥

सगल सरँजाम करे प्रभु आपे ॥
भए मनोरथ सो प्रभु जापे ॥२॥

अरथ धरम काम मोख कादाता ॥

प ८०६

पूरी भई सिमरि सिमरि बिधाता ॥३॥

साधसँगि नानकि रँगु माणिआ ॥
घरि आइआ पूरै गुरि आणिआ ॥४॥१२॥१७॥

बिलावल महला - ५

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि प्रभु के नाम का ध्यान करने से उन्हें किस प्रकार के आशीर्वाद प्राप्त हुये और स्वयं के अनुभव के आधार पर उनका हमारे लिये क्या परामर्श है ।

वह कहते हैं: “ (हे’ मेरे मित्रो), नानक का कथन है कि परमेश्वर ही मेरे माता, पिता, पुत्र, सम्बन्धी और भाई हैं, क्योंकि वही सर्वव्यापी प्रभु मेरे लिये सदा सहायक सिद्ध हुये हैं ”।(१)

कौन सा वह व्यक्ति है जो हमें प्रभु से जोड़ता है तथा समस्त सुखों का वरदान देता है, इसका वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : “ (हे’ मेरे मित्रो), वह है सम्पूर्ण गुरु, जिसकी वाणी भी विशिष्ट है, उसके पास अनेकों गुण हैं जिनकी गणना नहीं हो सकती (उसी की शरण में जाकर हम) अनेक प्रकार के सुखों तथा सहज अवस्था का आनंद पा सकते हैं ”।(१-विराम)

अतः, गुरु जी स्वयं के अनुभव के आधार पर यहाँ व्यक्त करते हैं : “ (हे’ मेरे मित्रो), प्रभु स्वयं उस मनुष्य को समस्त कामों में सफलता देता है (जो उसकी शरण में जाकर) प्रभु नाम का जाप करता है और तब उसके सभी मनोरथ सम्पन्न हो जाते हैं ”।(२)

प्रभु के सामर्थ्य का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), प्रभु स्वयं ही (सभी चारों मुख्य पदार्थों, अर्थात) अर्थ, धर्म, काम तथा मोक्ष का दाता है । उसी विधाता का बारम्बार जाप एवं स्मरण करने से (मेरी सारी इच्छायें) पूर्ण हो गयी हैं ”।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं : “संतों साधुयों (गुरु) की संगति में नानक ने (प्रभु के साथ प्रेम करने का) आनंद पाया है । (मेरा मन अब इतना सहज और सुखी है, जैसे कि वह) अपने घर में आ गया है और पूर्ण गुरु ही इसे (घर में) लेकर आये हैं ”।(४-१२-१७)

इस शब्द का संदेश यह है कि जब हम गुरु के आदेशानुसार ईश्वर का ध्यान तथा उसकी महिमा का गुणगान करते हैं तब वह हमारे हृदय में आकर बस जाते हैं और फिर हमारा तन मन ऐसी शांति एवं सहजता की दशा का आनंद पाने लगता है, मानो, हमारी सभी इच्छायें पूर्ण हो गयीं हों और हमने जीवन में ईश्वर के साथ एकरूप होने का ध्येय प्राप्त कर लिया हो।

ਪੰਨਾ ੮੦੭

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਸਹਜ ਸਮਾਧਿ ਅਨੰਦ ਸੂਖ ਪੂਰੇ ਗੁਰਿ ਦੀਨ ॥
ਸਦਾ ਸਹਾਈ ਸੰਗਿ ਪ੍ਰਭ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਗੁਣ ਚੀਨ ॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੮੦੮

ਜੈ ਜੈ ਕਾਰੁ ਜਗਤ੍ਰ ਮਹਿ ਲੋਚਹਿ ਸਭਿ ਜੀਆ ॥
ਸੁਪ੍ਰਸੰਨ ਭਏ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਭੂ ਕਛੁ ਬਿਘਨੁ ਨ ਥੀਆ ॥੧॥

ਜਾ ਕਾ ਅੰਗੁ ਦਇਆਲ ਪ੍ਰਭ ਤਾ ਕੇ ਸਭ ਦਾਸ ॥
ਸਦਾ ਸਦਾ ਵਡਿਆਈਆ ਨਾਨਕ ਗੁਰ ਪਾਸਿ ॥੨॥੧੨॥੩੦॥

पृ- ८०७

बिलावलु महला ५॥

सहज समाधि अनँद सूख पूरे गुरि दीन ॥
सदा सहाई सँगि प्रभ अँमृत गुण चीन ॥रहाउ॥

पृ- ८०८

जै जै कारु जगत्र महि लोचहि सभि जीआ ॥
सुप्रसँन भए सतिगुर प्रभु कछु बिघनु न थीआ ॥१॥

जा का अँगु दइआल प्रभ ता के सभ दास ॥
सदा सदा वडिआईआ नानक गुर पासि ॥२॥१२॥३०॥

बिलावल महला - ५

इस शब्द में गुरु जी अपने पूर्ण गुरु के द्वारा प्राप्त कई प्रकार के वरदानों को हमारे साथ साझा करते हैं जिनसे प्रोत्साहित होकर हम भी उनके पदचिह्नों पर चल सकते हैं।

वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), पूर्ण गुरु ने मुझे शांति, सहजता और (प्रभु नाम का) ध्यान रूपी सुखों का आशीर्वाद प्रदान किया है, प्रभु के अँमृत रूपी गुणों को पहचान और विचार कर मैंने पाया है कि वह सदैव ही मेरे एक साथी एवं सहायक हैं "।(विराम)

किन्तु, केवल यही नहीं, गुरु के आशीर्वादों के फलस्वरूप और भी क्या हुया, इसका वर्णन गुरु जी करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, अब) समस्त संसार में मेरी जय जयकार हो रही है जिसकी कामना सभी जीव करते हैं। सच्चे प्रभु रूपी गुरु मेरे पर अति प्रसन्न हो गये हैं और अब (मेरी सदाचारी निष्ठायों में) कोई विघ्न नहीं होता है "।(१)

अंत में गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), जिस किसी को भी दयालु प्रभु का सानिध्य प्राप्त है उसके सभी दास हैं तथा हे' नानक, सदा और सदा ही आदर सम्मान एवं यश प्राप्त होता है जब हम गुरु की शरण में रहते हैं "।(२-१२-३०)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम इस जग में प्रसन्नता एवं यश पाने की इच्छा के साथ साथ यह भी चाहते हैं कि लोग हमारी राह में रोड़े अटकाने की अपेक्षा हमारे कल्याणकारी उद्देश्यों में सहयोग करके लाभान्वित प्रतीत करें तो हमें विनम्र भाव के साथ सच्चे गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) की शरण में रह कर उसमें निहित उपदेशों का पालन करना चाहिए।

ਪੰਨਾ ੮੦੯	**पृ- ८०९**
ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**बिलावलु महला ५॥**
ਪਿੰਗੁਲ ਪਰਬਤ ਪਾਰਿ ਪਰੇ ਖਲ ਚਤੁਰ ਬਕੀਤਾ ॥ ਅੰਧੁਲੇ ਤ੍ਰਿਭਵਣ ਸੂਝਿਆ ਗੁਰ ਭੇਟਿ ਪੁਨੀਤਾ ॥੧॥	पिँगुल परबत पारि परे खल चतुर बकीता ॥ अँधुले त्रिभवण सूझिआ गुर भेटि पुनीता ॥१॥
ਮਹਿਮਾ ਸਾਧੂ ਸੰਗ ਕੀ ਸੁਨਹੁ ਮੇਰੇ ਮੀਤਾ ॥ ਮੈਲੁ ਖੋਈ ਕੋਟਿ ਅਘ ਹਰੇ ਨਿਰਮਲ ਭਏ ਚੀਤਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	महिमा साधु सँग की सुनहु मेरे मीता ॥ मैलु खोई कोटि अघ हरे निरमल भए चीता ॥१॥रहाउ॥
ਐਸੀ ਭਗਤਿ ਗੋਵਿੰਦ ਕੀ ਕੀਟਿ ਹਸਤੀ ਜੀਤਾ ॥ ਜੋ ਜੋ ਕੀਨੋ ਆਪਨੋ ਤਿਸੁ ਅਭੈ ਦਾਨੁ ਦੀਤਾ ॥੨॥	ऐसी भगति गोविँद की कीटि हसती जीता ॥ जो जो कीनो आपनो तिसु अभै दानु दीता ॥२॥
ਸਿੰਘੁ ਬਿਲਾਈਹੋਇ ਗਇਓ ਤ੍ਰਿਣੁ ਮੇਰੁ ਦਿਖੀਤਾ ॥	सिँघु बिलाईहोइ गइओ त्रिणु मेरु दिखीता ॥
ਪੰਨਾ ੮੧੦	**पृ- ८१०**
ਸ੍ਰਮੁ ਕਰਤੇ ਦਮ ਆਢ ਕਉ ਤੇ ਗਨੀ ਧਨੀਤਾ ॥੩॥	स्रमु करते दम आढ कउ ते गनी धनीता ॥३॥
ਕਵਨ ਵਡਾਈ ਕਹਿ ਸਕਉ ਬੇਅੰਤ ਗੁਨੀਤਾ ॥ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਮੋਹਿ ਨਾਮੁ ਦੇਹੁ ਨਾਨਕ ਦਰਸ ਰੀਤਾ ॥੪॥੭॥੩੭॥	कवन वडाई कहि सकउ बेअँत गुनीता ॥ करि किरपा मोहि नामु देहु नानक दरस रीता ॥४॥७॥३७॥

बिलावल महला - ५

इस शब्द में गुरु जी संत (गुरु) की महिमा व्यक्त करने के साथ साथ यह भी बता रहे हैं कि जिन लोगों ने अपनी निष्कप्ट सेवा तथा विश्वास के साथ गुरु के आदेशों का पालन किया उन्हें किस प्रकार की अद्भुत शक्ति और वरदान प्राप्त हुये ।

गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), गुरु से भेंट अथवा दर्शन होने (उसके आदेश के पालन) के पश्चात मनुष्य इतना पवित्र हो जाता है जैसे कि किसी लँगड़े व्यक्ति ने पर्वत को लाँघ लिया हो, अथवा कोई अति मूर्ख एवं अज्ञानी मनुष्य चतुर ज्ञानी वक्ता बन गया हो तथा एक अँधे मनुष्य को तीनों लोकों को देखने समझने की शक्ति प्राप्त हो गयी हो "।(१)

इसलिये, गुरु जी हमें कहते हैं : " हे' मेरे मित्रो, साधु संतों (गुरु) की संगति की महिमा को सुनो जिससे (दुष्ट विचारों की) मैल धुल जाती है, करोड़ों पाप कर्मों का हरण हो जाता है और (संतों की संगति में) मन पवित्र हो जाता है "।(१- विराम)

ईश्वर की भक्ति पूजा करने से प्राप्त गुणों का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), गोविंद की भक्ति एवं पूजा करने से ऐसी शक्ति प्राप्त होती है कि जैसे एक चींटी (अति दीन मनुष्य) हाथी (एक शक्तिशाली मनुष्य) को जीत लेती है । (वास्तव में प्रभु ने) जिसे भी अपना बना लिया है उसी को अभय दान दे दिया है "।(२)

गुरु की संगति में रहने से जो इच्छा शक्ति एवं सकारात्मक भाव का प्रादुर्भाव होता है उसे विस्तार से गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, जब कोई मनुष्य गुरु से आशीर्वाद पाता है तब उसे) एक सिंह बिल्ली के समान लगता है तथा पर्वत को पार करना एक तृण को तोड़ने के समान सरल दिखाई देता है । (केवल यही नही, अनेकों मनुष्य अपनी पूजा भक्ति एवं विश्वास के द्वारा) धनी लोगों में गिने जाते हैं जो एक एक पैसे के लिये भारी श्रम करते थे "।(३)

अंत में गुरु जी प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं : " हे' अनंत गुणों के स्वामी, मैं तुम्हारे किस किस गुण की महिमा का उच्चारण कर सकता हूँ । नानक तुम्हारे दर्शन से रीते (ख़ाली) हैं, कृपा करके मुझे अपने नाम का दान दो "।(४-७-३७)

इस शब्द का यह संदेश यह है कि यदि हम ऐसे कार्यों को भी सम्पन्न करना चाहते हैं जो कि सामान्य रूप से संभव नहीं है तो हमें गुरु और उसके आशीर्वादों में पूर्ण विश्वास रखते हुए प्रभु नाम का ध्यान करना आवश्यक है ।

ਪੰਨਾ ੮੧੧	पृ- ८११
ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**बिलावलु महला ५॥**
ਪਾਣੀ ਪਖਾ ਪੀਸੁ ਦਾਸ ਕੈ ਤਬ ਹੋਹਿ ਨਿਹਾਲੁ ॥ ਰਾਜ ਮਿਲਖ ਸਿਕਦਾਰੀਆ ਅਗਨੀ ਮਹਿ ਜਾਲੁ ॥੧॥	पाणी पखा पीसु दास कै तब होहि निहालु ॥ राज मिलख सिकदारीआ अगनी महि जालु ॥१॥
ਸੰਤ ਜਨਾ ਕਾ ਛੋਹਰਾ ਤਿਸੁ ਚਰਣੀ ਲਾਗਿ ॥ ਮਾਇਆਧਾਰੀ ਛਤ੍ਰਪਤਿ ਤਿਨ੍ ਛੋਡਉ ਤਿਆਗਿ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	सँत जना का छोहरा तिसु चरणी लागि ॥ माइआधारी छत्रपति तिन् छोडउ तिआगि ॥१॥रहाउ॥
ਸੰਤਨ ਕਾ ਦਾਨਾ ਰੂਖਾ ਸੋ ਸਰਬ ਨਿਧਾਨ ॥ ਗ੍ਰਿਹਿ ਸਾਕਤ ਛਤੀਹ ਪ੍ਰਕਾਰ ਤੇ ਬਿਖੂ ਸਮਾਨ ॥੨॥	सँतन का दाना रूखा सो सरब निधान ॥ ग्रिहि साकत छतीह प्रकार ते बिखू समान ॥२॥
ਭਗਤ ਜਨਾ ਕਾ ਲੂਗਰਾ ਓਢਿ ਨਗਨ ਨ ਹੋਈ ॥ ਸਾਕਤ ਸਿਰਪਾਉ ਰੇਸਮੀ ਪਹਿਰਤ ਪਤਿ ਖੋਈ ॥੩॥	भगत जना का लूगरा ओढि नगन न होई ॥ साकत सिरपाउ रेसमी पहिरत पति खोई ॥३
ਸਾਕਤ ਸਿਉ ਮੁਖਿ ਜੋਰਿਐ ਅਧ ਵੀਚਹੁ ਟੂਟੈ ॥ ਹਰਿ ਜਨ ਕੀ ਸੇਵਾ ਜੋ ਕਰੇ ਇਤ ਊਤਹਿ ਛੂਟੈ ॥੪॥	साकत सिउ मुखि जोरिऐ अध वीचहु टूटै ॥ हरि जन की सेवा जो करे इत ऊतहिं छूटै ॥४॥
ਸਭ ਕਿਛੁ ਤੁਮ੍ ਹੀ ਤੇ ਹੋਆ ਆਪਿ ਬਣਤ ਬਣਾਈ ॥ ਦਰਸਨੁ ਭੇਟਤ ਸਾਧ ਕਾ ਨਾਨਕ ਗੁਣ ਗਾਈ ॥੫॥੧੪॥੪੪॥	सभ किछु तुम् ही ते होआ आपि बणत बणाई॥ दरसनु भेटत साध का नानक गुण गाई ॥५॥१४॥४४॥

बिलावल महला -५

इस शब्द में गुरु जी प्रभु भक्तों की सँगति में रह कर प्राप्त किये गुणों की तुलना सत्ता के पुजारियों की समीपता में रहने से पायी गयी हानि अथवा कठिनाइयों से करते हैं, यद्यपि सत्ताधारियों की सँगति लोगों को अधिक आकर्षित करती है ।

गुरु जी हमें यथार्थ रूप से प्रभु के सेवकों की विनम्र भाव से सेवा तथा धनी एवं शक्तिशाली (साकत) लोगों का बहिष्कार करने का परामर्श देते हुये कहते हैं : “ (हे’ मेरे मित्रो, प्रभु के भक्तों अथवा) सेवकों के लिये तुम पानी भरो, पँखा फेरो और अन्न पीसो (अर्थात् नौकरों वाले कठिन और छोटे कार्य करो) तब तुम दैवी आनंद पायोगे । परन्तु, (साकतों द्वारा दिये गए सांसारिक प्रलोभनों जैसे कि) राज पाट, धन सम्पदा और गौरवशाली पदवियों को अग्नि में जला दो ”।(१)

गुरु जी एक पग और आगे बढ़ कर कहते हैं : “ (हे’ मेरे मित्रो, संतों के लिये तो क्या बोलूँ, मैं तो) संतजनों के सेवक के चरणों में भी जाकर लग जाऊँगा, परन्तु, छत्रपति राजा और मायाधारी लोगों की संगति का त्याग कर दूँगा ”।(१- विराम)

जैसे कि एक बार गुरु नानक देव जी ने लालू नामक ग़रीब बढईगीरी का काम करने वाले की रोटी में से दूध तथा साथ ही मलिक भागो नामक धनी मनुष्य के भोजन में से लहू निचोड़ कर दिखाया था, उसी प्रकार के विचार वह यहाँ भी प्रकट करते हुये कहते हैं : “ (हे’ मानव), संतों के घर का रूखा सूखा अन्न दाना भी समस्त भंडारों के समान है, परन्तु, साकत (धनी मानी लोग जो प्रभु की अपेक्षा धन सम्पदा तथा सत्ता को अधिक प्रेम करते हैं) के घर के छत्तीस प्रकार के भोजन विष के समान हैं ”।(२)

अब गुरु जी, संतों की सेवा में रहने वालों के सादे मोटे वस्त्रों तथा साकतों के परिधानों की तुलना करते हुये कहते हैं : “ (यदि किसी को) भक्त जनों के घर में मोटे पुराने चोले (गुदड़ी) को पहनना पड़े तो भी वह नग्न नहीं दिखाई देता, परन्तु किसी साकत से प्राप्त रेशमी परिधान से सिर से पाँव तक ढके रहने पर भी वह अपना मान सम्मान गँवा लेता है ”।(३)

साकत (धनी एंव शक्तिशाली) लोगों का साथ तथा प्रभु के भक्तजनों की सेवा के बीच के अंतर का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं: “ साकत लोगों से मित्रता (अधिक समय तक नहीं चलती) बीच में ही टूट जाती है, परन्तु, जो कोई हरि के भक्तों की सेवा करता है (वह लोक तथा परलोक में आनंद पाता है और इस प्रकार वह) इधर तथा उधर दोनों ओर मुक्त हो जाता है ”।(४)

किन्तु, हम चाहे संतों के साथ रहें अथवा साकतों के साथ, गुरु जी हमें यह समझाना चाहते हैं कि जो भी होता है वह प्रभु की इच्छानुसार ही होता है, इसलिये, हम संतों की संगति में रहने का आशीर्वाद पाने के लिये किस प्रकार से प्रभु से प्रार्थना करें, इस पर वह कहते हैं : “(हे’ प्रभु), जो भी होता है वह सब तुम्हीं करते हो, तुम्हीं ने स्वयं (इस संसार का) ऐसा चलन, अथवा, स्वरूप बनाया है । नानक की विनती है (हे’ प्रभु, मुझे वर दो) कि साधुजन (गुरु) के दर्शन अथवा भेंट पाने के पश्चात मैं तुम्हारे गुण गाता रहूँ ”।(५-१४-४४)

इस शब्द का संदेश यह है कि अत्यंत धनी, अति शक्तिशाली एवं अभिमानी लोगों के सानिध्य की अपेक्षा, प्रभु के संतों और उनके सेवकों की सेवा करना अधिक लाभप्रद है, इसके लिए चाहे हमें कितनी भी कठिनाईयाँ झेलनी पड़ें अथवा निर्धनता में रहना पड़े ।संतों अथवा गुरु की संगति में हम आनंद और स्वाभिमान प्राप्त करते हैं जबकि साकत अथवा धनी तथा शक्तिशाली लोगों की संगति में हम अपने मान सम्मान को गँवा देते हैं ।

<table>
<tr><td>

ਪੰਨਾ ੮੧੩

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਇਹੁ ਸਾਗਰੁ ਸੋਈ ਤਰੈ ਜੋ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਏ ॥
ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਕੈ ਸੰਗਿ ਵਸੈ ਵਡਭਾਗੀ ਪਾਏ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੮੧੪

ਸੁਣਿ ਸੁਣਿ ਜੀਵੈ ਦਾਸੁ ਤੁਮ੍ ਬਾਣੀ ਜਨ ਆਖੀ ॥
ਪ੍ਰਗਟ ਭਈ ਸਭ ਲੋਅ ਮਹਿ ਸੇਵਕ ਕੀ ਰਾਖੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਅਗਨਿ ਸਾਗਰ ਤੇ ਕਾਢਿਆ ਪ੍ਰਭਿ ਜਲਨਿ ਬੁਝਾਈ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਨਾਮੁ ਜਲੁ ਸੰਚਿਆ ਗੁਰ ਭਏ ਸਹਾਈ ॥੨॥

ਜਨਮ ਮਰਣ ਦੁਖ ਕਾਟਿਆ ਸੁਖ ਕਾ ਥਾਨੁ ਪਾਇਆ ॥
ਕਾਟੀ ਸਿਲਕ ਭ੍ਰਮ ਮੋਹ ਕੀ ਅਪਨੇ ਪ੍ਰਭ ਭਾਇਆ ॥੩॥

ਮਤ ਕੋਈ ਜਾਣਹੁ ਅਵਰੁ ਕਛੁ ਸਭ ਪ੍ਰਭ ਕੈ ਹਾਥਿ ॥
ਸਰਬ ਸੂਖ ਨਾਨਕ ਪਾਏ ਸੰਗਿ ਸੰਤਨ ਸਾਥਿ ॥੪॥੨੨॥੫੨॥

</td><td>

पृ- ८१३

बिलावलु महला ५॥

इहु सागरु सोई तरै जो हरि गुण गाए ॥
साधसँगति कै सँगि वसै वडभागी पाए ॥१॥

पृ- ८१४

सुणि सुणि जीवै दासु तुम् बाणी जन आखी ॥
प्रगट भई सभ लोअ महि सेवक की राखी ॥१॥रहाउ॥

अगनि सागर ते काढिआ प्रभि जलनि बुझाई ॥
अँम्रित नामु जलु सँचिआ गुर भए सहाई ॥२॥

जनम मरण दुख काटिआ सुख का थानु पाइआ ॥
काटी सिलक भ्रम मोह की अपने प्रभ भाइआ ॥३॥

मत कोई जाणहु अवरु कछु सभ प्रभ कै हाथि ॥
सरब सूख नानक पाए सँगि सँतन साथि ॥४॥२२॥५२॥

</td></tr>
</table>

बिलावल महला - ५

इस शब्द में गुरु जी संतजनों की संगति का अनुसरण करने के कारणों को व्यक्त करते हैं ।

वह कहते हैं: “ (हे’ मेरे मित्रो, यह संसार एक भयानक सागर के समान है) इस सागर को वही मनुष्य तैर कर पार हो सकता है जो संतों साधुयों की संगति में रह कर हरि के गुण गाता है । परन्तु, कोई भाग्यशाली ही ऐसी स्थिति प्राप्त कर पाता है ”।(१)

एक साधारण प्रभु के सेवक पर गुरु के शब्द (गुरु की वाणी अथवा गुरबाणी) के प्रभाव का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : “ (हे’ प्रभु), तुम्हारा दास तुम्हारे भक्तों के द्वारा (तुम्हारे यश में)कही गयी वाणी को सुन सुन कर जीवित रहता है और यह बात सारे जग में प्रकट हो गयी है कि तुमने अपने सेवकों के सम्मान की रक्षा की है ”। (१-विराम)

किस प्रकार से अपने गुरु से सहायता प्राप्त हुई, इस तथ्य को गुरु जी हमसे साझा करते हुये कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), गुरु ने (अपने दास को) अग्नि के सागर (सांसारिक कुकर्मों) से खींच कर बाहर निकाल लिया और प्रभु ने उसकी स्मस्त (सांसारिक इच्छायों की) जलन बुझा दी है । गुरु ने मेरा सहायक बन कर मुझे (प्रभु के) अँमृत जल रूपी नाम से सींचा (अर्थात सदाचारी जीवन दिया) है ”।(२)

स्वयं को मिले आशीर्वादों को विस्तार से बताते हुये गुरु जी कहते हैं : “ (गुरु ने मेरे बारम्बार के) जनम मरण के दुखों को काट दिया है और मेरे मन ने सुख एवं शांन्ति का स्थान पाया है । (सांसारिक मोहमाया से ऐसे मुक्त हो गया हूँ जैसे कि) उसने मेरे समस्त भ्रमों तथा मोह के फँदे काट दिये हैं और मैं अब प्रभु के मन को भाने लग गया हूँ ”।(३)

शब्द के अँत में मोक्ष प्राप्त करने के हेतु किसी भी अन्य प्रयास के लिए हमें सतर्क करते हुये गुरु जी कहते हैं : “ (हे’ मेरे मित्रो), किसी को और कुछ भी अधिक जानने की आवश्यकता नहीं है (कि सांसारिक मोहमाया से मुक्त होने के लिये क्या करना उपयुक्त रहेगा) क्योंकि, सभी कुछ प्रभु के हाथ में है और नानक ने तो समस्त सुख (प्रभु के) संतों की संगति में रहकर प्राप्त किये हैं ”।(४-२२-५२)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम बारम्बार के जन्म मरण के कष्टों से निकल कर दैवी आनंद पाना चाहते हैं तो हमें संतों की संगति में रहकर प्रभु का गुणगान करना चाहिये । परन्तु, छद्मवेशी संतों के जाल में फँसने से बचने का सर्वोत्तम उपाय यही है कि गुरु ग्रंथ साहिब जी में निहित विभिन्न मतों के उच्च कोटि के पवित्र संतों द्वारा उच्चारित वाणी को सुनें, समझें और उसका अनुसरण करें ।

ਪੰਨਾ ੮੧੫	**पृ- ८१५**
ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**बिलावलु महला ५॥**
ਉਦਮੁ ਕਰਤ ਆਨਦੁ ਭਇਆ ਸਿਮਰਤ ਸੁਖ ਸਾਰੁ ॥ ਜਪਿ ਜਪਿ ਨਾਮੁ ਗੋਬਿੰਦ ਕਾ ਪੂਰਨ ਬੀਚਾਰੁ ॥੧॥	उदमु करत आनदु भइआ सिमरत सुख सारु ॥ जपि जपि नामु गोबिंद का पूरन बीचारु ॥१॥
ਚਰਨ ਕਮਲ ਗੁਰ ਕੇ ਜਪਤ ਹਰਿ ਜਪਿ ਹਉ ਜੀਵਾ ॥ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਆਰਾਧਤੇ ਮੁਖਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪੀਵਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	चरन कमल गुर के जपत हरि जपि हउ जीवा ॥ पारब्रहमु आराधते मुखि अँमृितु पीवा ॥१॥रहाउ॥
ਜੀਅ ਜੰਤ ਸਭਿ ਸੁਖਿ ਬਸੇ ਸਭ ਕੈ ਮਨਿ ਲੋਚ ॥ ਪਰਉਪਕਾਰੁ ਨਿਤ ਚਿਤਵਤੇ ਨਾਹੀ ਕਛੁ ਪੋਚ ॥੨॥	जीअ जँत सभि सुखि बसे सभ कै मनि लोच ॥ परउपकारु नित चितवते नाही कछु पोच ॥२॥
ਪੰਨਾ ੮੧੬	**पृ-८१६**
ਧੰਨੁ ਸੁ ਥਾਨੁ ਬਸੰਤ ਧੰਨੁ ਜਹ ਜਪੀਐ ਨਾਮੁ ॥ ਕਥਾ ਕੀਰਤਨੁ ਹਰਿ ਅਤਿ ਘਨਾ ਸੁਖ ਸਹਜ ਬਿਸ੍ਰਾਮੁ ॥੩॥	धँनु सु थानु बसँत धँनु जह जपीऐ नामु ॥ कथा कीरतनु हरि अति घना सुख सहज बिस्रामु ॥३॥
ਮਨ ਤੇ ਕਦੇ ਨ ਵੀਸਰੈ ਅਨਾਥ ਕੋ ਨਾਥ ॥ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭ ਸਰਣਾਗਤੀ ਜਾ ਕੈ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਹਾਥ ॥੪॥੨੯॥੫੯॥	मन ते कदे न वीसरै अनाथ को नाथ ॥ नानक प्रभ सरणागती जा कै सभु किछु हाथ ॥४॥२९॥५९॥

बिलावल महला - ५

इस शब्द में गुरु जी हमसे साझा करते हैं कि गुरु की शरण में आने के पश्चात उसकी शिक्षा का पालन करते हुये प्रभु नाम के ध्यान तथा उसकी महिमा का गुणगान करने से उन्हें किस प्रकार के आशीर्वाद प्राप्त हुये ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, प्रभु नाम पर) ध्यान करने के लिये प्रयत्न करते समय मेरे मन को आनंद मिला है और उसका स्मरण करते समय सुख के सार को प्रतीत किया है । इसके अतिरिक्त, गोविंद नाम का बार बार जाप करने से मैंने उस पूर्ण (प्रभु) के गुणों पर विचार किया है "।(१)

अपनी वर्तमान मनोस्थित पर गुरु जी चर्चा करते हुये कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), गुरु के चरण कमलों में रह कर (गुरु का अनुसरण करने से) हरि का जाप करके मैं जीवित रहता हूँ । पारब्रह्म प्रभु की आराधना करते समय मैं अपने मुख से अँमृित (रूपी प्रभु नाम का) पान करता हूँ "।(१- विराम)

जो लोग प्रभु नाम का ध्यान करते हैं उन्हें प्राप्त आशीर्वादों को सूचीबद्ध करते हुये गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), सभी जीव जन्तु (जो प्रभु नाम का ध्यान करते हैं) सुखी रहते हैं और सभी अपने मन में (प्रभु के नाम की) चाह रखते हैं, वह नित्य ही सबके परोपकार के लिये सोचते हैं, क्योंकि, उनके मन में किसी के लिये बैर भाव नहीं है "।(२)

जिस भी स्थान पर प्रभु नाम को विचारा जाता है उस पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), वह स्थान कितना धन्य और सुंदर है तथा वहाँ पर रहने वाले कितने धन्य हैं जहाँ पर प्रभु का नाम जपा जाता है । ऐसे स्थान पर हरि का इतना अधिक कथा कीर्तन होने से (वहाँ जाकर किसी के भी मन तन को) अत्यधिक सुख, सहजता तथा विश्राम की भावना प्रतीत होती है "।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं : " मेरी कामना है कि (ऐसे प्रभु) जो अनाथों के नाथ हैं वह कभी मेरे मन में से ना बिसरें । नानक उसी प्रभु की शरण में आ गये हैं जिसके हाथ में सब कुछ है "।(४-२९-५९)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम शांति, सुख, आनंद एवं अपनी सुबुद्धि के द्वारा प्रसन्न रहना चाहते हैं तो प्रभु नाम का ध्यान करें और संतों की संगति में बैठ कर प्रभु का गुणगान करें ।

ਪੰਨਾ ੮੧੭

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਮਨਿ ਤਨਿ ਪ੍ਰਭੁ ਆਰਾਧੀਐ ਮਿਲਿ ਸਾਧ ਸਮਾਗੈ ॥
ਉਚਰਤ ਗੁਨ ਗੋਪਾਲ ਜਸੁ ਦੂਰ ਤੇ ਜਮੁ ਭਾਗੈ ॥੧॥

ਰਾਮਨਾਮੁ ਜੋ ਜਨੁ ਜਪੈ ਅਨਦਿਨੁ ਸਦ ਜਾਗੈ ॥

ਪੰਨਾ ੮੧੮

ਤੰਤੁ ਮੰਤੁ ਨਹ ਜੋਹਈ ਤਿਤੁ ਚਾਖੁ ਨ ਲਾਗੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕਾਮ ਕ੍ਰੋਧ ਮਦ ਮਾਨ ਮੋਹ ਬਿਨਸੇ ਅਨਰਾਗੈ ॥
ਆਨੰਦ ਮਗਨ ਰਸਿ ਰਾਮ ਰੰਗਿ ਨਾਨਕ ਸਰਨਾਗੈ ॥੨॥੪॥੬੮॥

पृ-८१७

बिलावलु महला ५॥

मनि तनि प्रभु आराधीऐ मिलि साध समागै ॥
उचरत गुन गोपाल जसु दूर ते जमु भागै ॥१॥

रामनामु जो जनु जपै अनदिनु सद जागै ॥

पृ-८१८

तँतु मँतु नह जोहई तितु चाखु न लागै ॥१॥रहाउ॥

काम क्रोध मद मान मोह बिनसे अनरागै ॥
आनँद मगन रसि राम रँगि नानक सरनागै ॥२॥४॥६८॥

बिलावल महला - ५

इस शब्द से पूर्व के अनेक शब्दों में गुरु जी द्वारा वर्णित है कि जब भी उन्होंने प्रभु का ध्यान किया तभी वह उनके सहायक बने ।अब इस शब्द में वह अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर हमें बहुत सटीक परामर्श देते हैं ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), साधु संतों के समागम में मिल बैठ कर तन एवं मन (एकाग्र स्थिति) के साथ प्रभु की आराधना करो, क्योंकि, गोपाल के गुणों अथवा यश के उच्चारण से (हम स्वयं को इतना सशक्त अनुभव करते हैं कि किसी प्रकार का भय नहीं सताता, यहाँ तक कि) यमदूत भी दूर भागते हैं "।(१)

अनेक प्रकार के मूढ़विश्वासों, जैसे कि तंत्र मंत्र इत्यादि जैसे मूढ़ विश्वास जो लोगों को भयभीत करते हैं, उन पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जो जन दिनरात राम के नाम का जाप करता है वह सदा जाग्रत अवस्था में (सांसारिक मोहमाया से सतर्क) रहता है । उस मनुष्य पर किसी तंत्र मंत्र, जादू टोने और बुरी नज़र का कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता "।(१- विराम)

अंत में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु नाम का ध्यान करने से मन में से काम, क्रोध, अहम का मद और सांसारिक मिथ्या प्रेम आदि का विनाश हो जाता है । (संक्षेप में) नानक कहते हैं " राम के प्रेमरस के रंग में शरण लेने पर (एक भक्त उसी में) मग्न रह कर अति आन्नदित रहता है "।(२-४-६८)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम पाप अथवा दुष्प्रवृत्तियों जैसे कि, काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अंहकार से मुक्ति पाना चाहते हैं और मृत्यु के भय अथवा जादू टोनों की आशंकायों से बचना चाहते हैं तो हमें सदाचारी लोगों की संगति में रहकर प्रभु नाम का ध्यान और उसका महिमागान सच्चे प्रेम एवं निष्ठा के साथ करते रहना चाहिए।

ਪੰਨਾ ੮੧੯

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਅਪਣੇ ਬਾਲਕ ਆਪਿ ਰਖਿਅਨੁ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਗੁਰਦੇਵ ॥
ਸੁਖ ਸਾਂਤਿ ਸਹਜ ਆਨਦ ਭਏ ਪੂਰਨ ਭਈ ਸੇਵ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੮੨੦

ਭਗਤ ਜਨਾ ਕੀ ਬੇਨਤੀ ਸੁਣੀ ਪ੍ਰਭਿ ਆਪਿ ॥
ਰੋਗ ਮਿਟਾਇ ਜੀਵਾਲਿਅਨੁ ਜਾ ਕਾ ਵਡ ਪਰਤਾਪੁ ॥੧॥

ਦੋਖ ਹਮਾਰੇ ਬਖਸਿਅਨੁ ਅਪਣੀ ਕਲ ਧਾਰੀ ॥
ਮਨ ਬਾਂਛਤ ਫਲ ਦਿਤਿਅਨੁ ਨਾਨਕ ਬਲਿਹਾਰੀ ॥੨॥੧੬॥੮੦॥

पृ-८१९

बिलावलु महला ५ ॥

अपणे बालक आपि रखिअनु पारब्रहम गुरदेव ॥
सुख सांतिसहज आनद भए पूरन भई सेव ॥१॥रहाउ॥

पृ-८२०

भगत जना की बेनती सुणी प्रभि आपि ॥
रोग मिटाइ जीवालिअनु जा का वड परतापु ॥१॥

दोख हमारे बखसिअनु अपणी कल धारी ॥
मन बांछत फल दितिअनु नानक बलिहारी ॥२॥१६॥८०॥

बिलावल महला - ५

ऐसा समझा जाता है कि गुरु अर्जन देव जी के सुपुत्र हरिगोविंद जी जब किसी गंभीर रोग से मुक्त हुए तब प्रभु को धन्यवाद देते हुए गुरु जी ने इस शब्द का उच्चारण किया था । परोक्ष रूप से वह हमें यह प्रकट करते हैं कि प्रभु अपने भक्तजनों की त्रुटियों को अनदेखा करते हुए किस प्रकार से उनकी प्रार्थना को सुनते हैं और दुख एवं चिंता से उन्हें मुक्त करते हैं ।

वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), गुरुयों के देवता, पारब्रह्म प्रभु ने अपने बालकों की रक्षा स्वयं की है, (ऐसा प्रतीत होता है कि) मेरी सेवा स्वीकृत हो गयी है और अब (मेरे घर में) सुख, शांति, सहज भाव और आनंद का वास हो गया है "।(१-विराम)

गुरु जी ऐसा क्यों समझते हैं कि प्रभु के लिये उनकी पूजा सफल रही है, इस विचार को वह स्पष्ट करते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), प्रभु ने स्वयं अपने भक्त जनों की विनती को सुना है । प्रभु, जिसकी महिमा एवं प्रताप अति महान है उसने (मेरे पुत्र का) रोग समाप्त करके उसे जीवन दान दिया है "।(१)

शब्द के अँत में गुरु जी हमें यह कहते हैं कि उनकी अनेक त्रुटियों को जानते हुये भी प्रभु ने कृपा करके उनके मन की समस्त इच्छायों को पूर्ण करने का वरदान दिया । वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, प्रभु इतने दयालु हैं कि) उन्होंने अपनी शक्ति के द्वारा मेरे सारे दोषों को क्षमा कर दिया है और मुझे समस्त मन वाँछित फल दिये हैं, अतः, नानक उन पर बलिहारी हैं "।(२-१६-८०)

इस शब्द का यह संदेश है कि यदि हमने अनेकों पापकर्म किये हैं तथा प्रभु की महिमा में रची पवित्र गुरबाणी पर कभी ध्यान नहीं दिया तब भी हमें प्रभु से यही प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमारे दुष्कर्मों को क्षमा करके अपनी कृपा का वरदान दें और समस्त कष्टों से हमारी रक्षा करें । हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर प्रभु अपनी कृपालुता से हमारे जैसे पापी जनों की विनती को सुनेंगे और हमारे दुख दर्द मिटा देंगे ।

ਪੰਨਾ ੮੨੧	पृ-८२१
ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**बिलावलु महला ५॥**
ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਕਾਮਿ ਨ ਆਵਤ ਹੇ ॥ ਜਾ ਸਿਉ ਰਾਚਿ ਮਾਚਿ ਤੁਮ੍ ਲਾਗੇ ਓਹ ਮੋਹਨੀ ਮੋਹਾਵਤ ਹੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	बिनु हरि कामि न आवत हे ॥ जा सिउ राचि माचि तुम् लागे ओह मोहनी मोहावत हे ॥१॥रहाउ॥
ਕਨਿਕ ਕਾਮਿਨੀ ਸੇਜ ਸੋਹਨੀ ਛੋਡਿ ਖਿਨੈ ਮਹਿ ਜਾਵਤ ਹੇ ॥ ਉਰਝਿ ਰਹਿਓ ਇੰਦ੍ਰੀ ਰਸ ਪ੍ਰੇਰਿਓ ਬਿਖੈ ਠਗਉਰੀ ਖਾਵਤ ਹੇ ॥੧॥	कनिक कामिनी सेज सोहनी छोडि खिनै महि जावत हे ॥ उरझि रहिओ इँद्री रस प्रेरिओ बिखै ठगउरी खावत हे ॥१॥
ਤ੍ਰਿਣ ਕੋ ਮੰਦਰੁ ਸਾਜਿ ਸਵਾਰਿਓ ਪਾਵਕੁ ਤਲੈ ਜਰਾਵਤ ਹੇ ॥ ਐਸੇ ਗੜ ਮਹਿ ਐਠਿ ਹਠੀਲੋ ਫੂਲਿ ਫੂਲਿ ਕਿਆ ਪਾਵਤ ਹੇ ॥੨॥	त्रिण को मँदरु साजि सवारिओ पावकु तलै जरावत हे ॥ ऐसे गड़ महि ऐठि हठीलो फूलि फूलि किआ पावत हे ॥२॥
ਪੰਚ ਦੂਤ ਮੂਡ ਪਰਿ ਠਾਢੇ ਕੇਸ ਗਹੇ ਫੇਰਾਵਤ ਹੇ ॥	पँच दूत मूड परि ठाढे केसगहे फेरावत हे ॥
ਪੰਨਾ ੮੨੨	**पृ-८२२**
ਦ੍ਰਿਸਟਿ ਨ ਆਵਹਿ ਅੰਧ ਅਗਿਆਨੀ ਸੋਇ ਰਹਿਓ ਮਦ ਮਾਵਤ ਹੇ ॥੩॥	द्रिसटि न आवहि अँध अगिआनी सोइ रहिओ मद मावत हे ॥३॥
ਜਾਲੁ ਪਸਾਰਿ ਚੋਗ ਬਿਸਥਾਰੀ ਪੰਖੀ ਜਿਉ ਫਾਹਾਵਤ ਹੇ ॥ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਬੰਧਨ ਕਾਟਨ ਕਉ ਮੈ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੁਰਖੁ ਧਿਆਵਤ ਹੇ ॥੪॥੨॥੮੮॥	जालु पसारि चोग बिसथारी पँखी जिउ फाहावत हे ॥ कहु नानक बँधन काटन कउ मै सतिगुरु पुरखु धिआवत हे ॥४॥२॥८८॥

बिलावल महला - ५

इस शब्द में गुरु जी हमारे जीवन की दोषी प्रवृत्तियों के परिणामों का दर्पण दिखाते हुये हमें सतर्क करते हैं और बताते हैं कि हम किस प्रकार से स्वयं को बचायें।

वह हमें सम्बोधित करते हुये कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), हरि के नाम के बिना और कुछ भी तुम्हारे काम नहीं आता है। वह मोहिनी माया जिसके साथ तुम सदा रचे मिचे रहते हो वह तुम्हें मोह कर छलती है "।(१-विराम)

सांसारिक धन सम्पदा सम्बंधी उपलब्धियों एवं शारीरिक वासनाओं के लिये हमें सतर्क करते हुये गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, ऐसी समस्त वस्तुयें जैसे कि) स्वर्ण, सुहानी सेज और सुंदर कामिनी (अथवा पुरुष) एक क्षण में तुम्हें छोड़ कर चले जाते हैं। अपनी इन्द्रियों के रस से प्रेरित होकर और उसमें उलझे रह कर तुम जैसे एक ठगने वाली विषैली बूटी खा रहे हो "।(१)

हमारे मूर्खतापूर्ण आचरण को दर्शाते हुये गुरु जी हमसे पूछते हैं : " (हे' मेरे मित्र, तुम्हारी स्थिति उस मनुष्य जैसी है जो) घास तिनकों से बनाये अपने मंदिर समान घर को सजा सँवार कर उसके नीचे अग्नि को प्रज्वलित कर देता है। (फिर कोई भी स्वाभाविक रूप से पूछेगा) हे' अभिमानी व हठीले मनुष्य, तुम इस (जलते हुये) गढ़ (शरीर) में ऐंठ कर जिस प्रकार से फूले बैठे हो, इससे क्या प्राप्त करने की आशा कर रहे हो "।(२)

एक अन्य विषय पर हमें सतर्क करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), पाँच दूत (काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अंहकार) तुम्हारे सर पर खड़े तुम्हारे केश पकड़े हुए उपर मँडरा रहे हैं (अथवा, तुम्हारा नाश कर रहे हैं), परन्तु, हे' अँधे, अज्ञानी मनुष्य, तुम इनके मद में मतवाले होकर सोये हुये हो, तुम्हें कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा है (कि क्या हो रहा है) "।(३)

शब्द के अँत में गुरु जी पापकर्मों में हमारी रुचि तथा उनमें व्यस्त रहने के मूल कारणों को प्रकट कर रहे हैं और स्वयं ऐसे बँधनों के जाल में फँसने से बचने के लिए उनका कहना है :"(हे' मेरे मित्रो, जैसे कि एक बहेलिया) अपना जाल फैलाकर और उसमें दाना बिखेर कर पक्षियों को फँसाता है (उसी प्रकार से प्रभु ने सांसारिक मोह माया एवं सामर्थ्य का जाल बिछा रखा है जो कि मनुष्य को फँसा लेता है)। नानक कहते हैं कि इस प्रकार के (मायाजाल) के बँधन काटने के लिये मैं सच्चे गुरु तथा महापुरुष (प्रभु) का ध्यान करता हूँ।(४-२-८८)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम काम, क्रोध, लोभ इत्यादि विकारों से बचना चाहते हैं तो हमें सच्चे गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) पर विचार और उसका अनुसरण करना चाहिये।

ਪੰਨਾ ੮੨੩

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਮੇਰੀ ਰਾਖਿ ਲਈ ॥
ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਨਾਮੁ ਰਿਦੇ ਮਹਿ ਦੀਨੋ ਜਨਮ ਜਨਮ ਕੀ ਮੈਲੁ ਗਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਨਿਵਰੇ ਦੂਤ ਦੁਸਟ ਬੈਰਾਈ ਗੁਰ ਪੂਰੇ ਕਾ ਜਪਿਆ ਜਾਪੁ ॥

ਪੰਨਾ ੮੨੪

ਕਹਾ ਕਰੈ ਕੋਈ ਬੇਚਾਰਾ ਪ੍ਰਭ ਮੇਰੇ ਕਾ ਬਡ ਪਰਤਾਪੁ ॥੧॥

ਸਿਮਰਿ ਸਿਮਰਿ ਸਿਮਰਿ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਚਰਨ ਕਮਲ ਰਖੁ ਮਨ ਮਾਹੀ ॥
ਤਾ ਕੀ ਸਰਨਿ ਪਰਿਓ ਨਾਨਕ ਦਾਸੁ ਜਾ ਤੇ ਊਪਰਿ ਕੋ ਨਾਹੀ
॥੨॥੧੨॥੯੮॥

पृ-८२३

बिलावलु महला ५॥

गुरि पूरै मेरी राखि लई ॥
अँमृत नामु रिदे महि दीनो जनम जनम की मैलु गई ॥१॥रहाउ]

निवरे दूत दुसट बैराई गुर पूरे का जपिआ जापु ॥

पृ-८२४

कहा करै कोई बेचारा प्रभ मेरे का बड परतापु ॥१॥

सिमरि सिमरि सिमरि सुखु पाइआ चरन कमल रखु मन माही ॥
ता की सरनि परिओ नानक दासु जा ते ऊपरि को नाही
॥२॥१२॥९८॥

बिलावल महला - ५

इस शब्द में गुरु जी स्वयं को प्राप्त हुये उन आशीर्वादों का वर्णन करते हैं, जिनको उन्होंने गुरु की शरण में रह कर उसके निर्देशों के अनुसार अपने जीवन को ढाल कर प्राप्त किया ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), पूर्ण गुरु ने मेरे सम्मान की रक्षा की है । उसने मेरे हृदय में अँमृत रूपी हरि का नाम बसा दिया है और मेरे अनेकों जन्मों की मैल (दुष्ट भावनायें) निकल गयी है "।(१-विराम)

यह सब कैसे हुया, इसका वर्णन करते हुये वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, यह सब इस प्रकार हुया कि) मैंने जब अपने पूर्ण गुरु द्वारा दिये गये मंत्र (प्रभु के नाम) का जाप और उस पर विचार किया तब मेरे अंतरमन में से सारे दुष्ट विचार और विकार (जैसे काम, क्रोध, लोभ और मोह आदि) जो कि मेरे बैरी थे, उन सबका निवारण हो गया । मेरे प्रभु का प्रताप इतना महान है कि कोई बेचारा कुछ भी (मेरे लिये) बुरा कर ही नहीं सकता ।(१)

अंत में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), अपने मन में प्रभु के चरण कमलों (प्रभु के नाम) को रख कर एवं उसका बारम्बार स्मरण और भजन करके मैंने सुख शांति प्राप्त की है । नानक दास उस (प्रभु) की शरण में जाकर पड़े हैं जिसके उपर और कोई नहीं है "।(२-१२-९८)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने शत्रु रूपी विकारों जैसे , काम, क्रोध एवं लोभ इत्यादि से मुक्ति पाकर प्रभु के अँमृत रूपी नाम का आनंद पाना चाहते हैं तो हमें अपने गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) की शरण में आना चाहिये और प्रभु के नाम पर ध्यान लगाना चाहिये जिससे कि वह हमारे पर कृपा करें और सच्ची प्रसन्नता और आनंद का वरदान दें ।

ਪੰਨਾ ੮੨੫

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਦੋਵੈ ਥਾਵ ਰਖੇ ਗੁਰ ਸੂਰੇ ॥
ਹਲਤ ਪਲਤ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮਿ ਸਵਾਰੇ ਕਾਰਜ ਹੋਏ ਸਗਲੇ ਪੂਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਜਪਤ ਸੁਖ ਸਹਜੇ ਮਜਨੁ ਹੋਵਤ ਸਾਧੂ ਧੂਰੇ ॥
ਆਵਣ ਜਾਣ ਰਹੇ ਥਿਤਿ ਪਾਈ ਜਨਮ ਮਰਣ ਕੇ ਮਿਟੇ ਬਿਸੂਰੇ ॥੧॥

ਭ੍ਰਮ ਭੈ ਤਰੇ ਛੁਟੇ ਭੈ ਜਮ ਕੇ ਘਟਿ ਘਟਿ ਏਕੁ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰੇ ॥

ਪੰਨਾ ੮੨੬

ਨਾਨਕ ਸਰਣਿ ਪਰਿਓ ਦੁਖ ਭੰਜਨ ਅੰਤਰਿ ਬਾਹਰਿ ਪੇਖਿ ਹਜੂਰੇ
॥੨॥੨੨॥੧੦੮॥

पृ-८२५

बिलावलु महला ५॥

दोवै थाव रखे गुर सूरे ॥
हलत पलत पारब्रहमि सवारे कारज होए सगले पूरे ॥१॥रहाउ॥

हरि हरि नामु जपत सुख सहजे मजनु होवत साधू धूरे ॥
आवण जाण रहे थिति पाई जनम मरण के मिटे बिसूरे ॥१॥

भ्रम भै तरे छुटे भै जम के घटि घटिएकु रहिआ भरपूरे ॥

पृ-८२६

नानक सरणि परिओ दुख भँजन अँतरि बाहरि पेखि हजूरे
॥२॥२२॥१०८॥

बिलावल महला – ५

इस शब्द में गुरु जी का यह कथन है कि कैसे पूर्ण गुरु ने उनके सम्मान की रक्षा की और उन को अपने भरपूर आशीर्वादों से धन्य किया ।

गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मेरे शूरवीर गुरु ने मेरी (सम्मान की) रक्षा दोनों स्थानों (लोक तथा परलोक) में की । उस पारब्रह्म प्रभु ने मुझे इहलोक तथा परलोक दोनों स्थानों पर सँवार कर रखा तथा मेरे सभी कार्य भी सम्पन्न हो गये "।(१-विराम)

हरि नाम का ध्यान करने से प्राप्त हुये लाभ की चर्चा करते हुये वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), हरि का नाम जपने से सुख की प्राप्ति सहज भाव से होती है और (संतों की संगति में ऐसा आनंद मिलता है जैसे कि किसी ने) संत साधु की चरण धूलि में स्नान किया हो । (संसार में) आने और जाने की प्रक्रिया समाप्त होती है, स्थिरता मिलती है, तथा जन्म मरण सम्बंधित सभी दुख अथवा रोना बिसूरना समाप्त हो जाता है "।(१)

आनंदित करने वाले आशीर्वादों को फिर से सूचीबद्ध करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो,गुरु की शरण में आकर मैंने सांसारिक) भ्रम एवं भय के सागर को तैर कर पार कर लिया है, यमराज के भय से भी मुक्त हो गया हूँ और देखता हूँ कि घट घट में एक ही प्रभु भरपूर रूप से समाये हुए हैं । सभी स्थानों में, अँदर तथा बाहर, उस दुखों को हरने वाले महामहिम (प्रभु) को सम्मुख देख कर नानक उसकी शरण में आन पड़े हैं "।(२-२२-१०८)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अनंत प्रभु के निकट रहकर अपने जीवन को इस लोक में सुखी, सदाचारी एवं पवित्र ढंग से व्यतीत करना और परलोक में आनंद पाना चाहते हैं तो हमें अपने गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) की शरण में रहना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੮੨੭

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਪੰਨਾ ੮੨੮

ਤੁਮ੍ ਸਮਰਥਾ ਕਾਰਨ ਕਰਨ ॥
ਢਾਕਨ ਢਾਕਿ ਗੋਬਿਦ ਗੁਰ ਮੇਰੇ ਮੋਹਿ ਅਪਰਾਧੀ ਸਰਨ ਚਰਨ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜੋ ਜੋ ਕੀਨੋ ਸੋ ਤੁਮ੍ ਜਾਨਿਓ ਪੇਖਿਓ ਠਉਰ ਨਾਹੀ ਕਛੁ ਢੀਠ ਮੁਕਰਨ ॥
ਬਡ ਪਰਤਾਪੁ ਸੁਨਿਓ ਪ੍ਰਭ ਤੁਮ੍ਰੋ ਕੋਟਿ ਅਘਾ ਤੇਰੋ ਨਾਮ ਹਰਨ ॥੧॥

ਹਮਰੋ ਸਹਾਉ ਸਦਾ ਸਦ ਭੂਲਨ ਤੁਮ੍ਰੋ ਬਿਰਦੁ ਪਤਿਤ ਉਧਰਨ ॥
ਕਰੁਣਾ ਮੈ ਕਿਰਪਾਲ ਕ੍ਰਿਪਾ ਨਿਧਿ ਜੀਵਨ ਪਦ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਦਰਸਨ ॥੨॥੨॥੧੧੮॥

पृ-८२७

बिलावलु महला ५॥

पृ-८२८

तुम् समरथा कारन करन ॥
ढाकन ढाकि गोबिद गुर मेरे मोहि अपराधी सरन चरन ॥१॥रहाउ॥

जो जो कीनो सो तुम् जानिओ पेखिओ ठउर नाही कछु ढीठ मुकरन ॥
बड परतापु सुनिओ प्रभ तुमरो कोटि अघा तेरो नाम हरन ॥१॥

हमरो सहाउ सदा सद भूलन तुमरो बिरदु पतित उधरन ॥
करुणा मै किरपाल किरपा निधि जीवन पद नानक हरि दरसन ॥२॥२॥११८॥

बिलावल महला - ५

इस शब्द में गुरु जी हमें प्रकट करते हैं कि हम कैसे प्रभु के समीप जायें और अपने दुष्कर्मों को स्वीकार करके उससे कृपा की याचना करें ।

स्वयं को हमारी स्थिति में रखते हुये गुरु जी कहते हैं : " हे' प्रभु, तुम सब कुछ करने और करवाने के लिये समर्थ हो । हे' मेरे गुरु, मेरे गोविंद, मैं एक अपराधी हूँ और तुम्हारे चरणों की शरण में आया हूँ, कृपा करके मेरे कुकर्मों को ढक लो "।(१- विराम)

गुरु जी प्रभु की कृपालुता एवं क्षमा करने की परम्परा की स्तुति करते हुये (हमारे दोषों के लिये हमारी ओर से) कहते हैं : " हे' प्रभु, जो भी कुछ हमने किया है वह सब तुमने जाना है और देखा है, कहीं और जाने का हमारे पास कोई ठौर (ठिकाना) नहीं है तथा हम ढीठों को (अपने पापों से) मुकरने का भी कोई और राह नहीं है । परन्तु, हे' प्रभु, हमने तुम्हारा बहुत प्रताप सुना है कि तुम्हारा नाम करोड़ों पापों को हर लेता है "।(१)

गुरु जी अब विनम्र भाव से शब्द के अंत में कहते हैं : " (हे' प्रभु), हमारा स्वभाव सदा ही त्रुटियों से परिपूर्ण रहा है, परन्तु, तुम्हारी परम्परा सदैव ही पतितों का उद्धार करने की रही है । अतः, हे ' करुणामय, दयालु, कृपानिधान, कृपा करके अपने अथवा हरि के दर्शन देकर नानक के जीवन को उच्च स्थान का वरदान दो (अथवा उसका उद्धार करो) "।(२-२-११८)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें यह समझ लेना चाहिए कि प्रभु हमारे भले बुरे सभी कर्मों को जानते हैं, इसलिये अपने दुष्कर्मों को छिपाने की अपेक्षा हमें विनम्र भाव के साथ उन्हें स्वीकार करते हुए प्रभु की दया एवं क्षमा करने की परम्परा के अनुसार उसके सम्मुख क्षमा याचना करनी चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੮੨੯	**पृ-८२९**
ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**बिलावलु महला ५॥**
ਜੀਵਉ ਨਾਮੁ ਸੁਨੀ ॥ ਜਉ ਸੁਪ੍ਰਸੰਨ ਭਏ ਗੁਰ ਪੂਰੇ ਤਬ ਮੇਰੀ ਆਸ ਪੁਨੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	जीवउ नामु सुनी ॥ जउ सुप्रसँन भए गुर पूरे तब मेरी आस पुनी ॥१॥रहाउ॥
ਪੀਰ ਗਈ ਬਾਧੀ ਮਨਿ ਧੀਰਾ ਮੋਹਿਓ ਅਨਦ ਧੁਨੀ ॥ ਉਪਜਿਓ ਚਾਉ ਮਿਲਨ ਪ੍ਰਭ ਪ੍ਰੀਤਮ ਰਹਨੁ ਨ ਜਾਇ ਖਿਨੀ ॥੧॥	पीर गयी बाधी मनि धीरा मोहिओ अनद धुनी ॥ उपजिओ चाउ मिलन प्रभ प्रीतम रहनु न जाइखिनी ॥१॥
ਪੰਨਾ ੮੩੦	**पृ-८३०**
ਅਨਿਕ ਭਗਤ ਅਨਿਕ ਜਨ ਤਾਰੇ ਸਿਮਰਹਿ ਅਨਿਕ ਮੁਨੀ ॥ ਅੰਧੁਲੇ ਟਿਕ ਨਿਰਧਨ ਧਨੁ ਪਾਇਓ ਪ੍ਰਭ ਨਾਨਕ ਅਨਿਕ ਗੁਨੀ ॥੨॥੨॥੧੨੭॥	अनिक भगत अनिक जन तारे सिमरहि अनिक मुनी ॥ अँधुले टिक निरधन धनु पाइओ प्रभ नानक अनिक गुनी ॥२॥२॥१२७॥

बिलावल महला - ५

इस शब्द में गुरु जी हमें यह प्रकट करते हैं कि प्रभु के नाम का ध्यान एवं श्रवण करना कितना आवश्यक है ।

वह कहते हैं : " पूर्ण गुरु जब मेरे से अति प्रसन्न हुये तब मेरे हृदय की आशा एवं इच्छा प्रतिफलित हो गयीं और अब मैं (प्रभु) नाम का श्रवण करके जीवित रहता हूँ "।(१-विराम)

अपनी वर्तमान मनोस्थिति पर प्रभु नाम से प्राप्त आशीर्वादों के प्रभाव को गुरु जी यहाँ विस्तृत करते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, प्रभु नाम की) आनंदमयी धुन (के श्रवण) से मोहित होकर मेरी पीड़ा समाप्त हो गयी है और मेरा मन धैर्यवस्था में है । (अब मेरे हृदय में) अपने प्रियतम प्रभु को मिलने की चाह इतनी तीव्रता के साथ उपज गयी है कि (उससे मिले बिना) एक क्षण भी नहीं रहा जा रहा है "।(१)

प्रभु की महानता पर आगे टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु ने अनेकों भक्त तथा अन्य लोगों का उद्धार किया और अनेकों मुनिजन भी उसे स्मरण करते हैं । नानक कहते हैं कि जैसे एक अँधा मनुष्य लाठी और एक निर्धन व्यक्ति धन को पाकर सुखी और आनंदित होता है, वैसा ही अनुभव उन्हें असीम रूप से गुणी प्रभु को पाकर हुआ है "।(२-२-१२७)

इस शब्द का संदेश यह है कि जब हम प्रभु के पास सच्ची विनम्रता और श्रद्धा के साथ प्रार्थना करते हैं तब पूर्ण गुरु प्रसन्न होते हैं और वह हमें प्रभु के पवित्र नाम से जुड़ने का आशीर्वाद देते हैं । ऐसा करने से हमारे समस्त दुख दर्द एवं कष्ट दूर हो जाते हैं और हम मन में ऐसी शांतिमयी अवस्था का अनुभव करते हैं जैसे कि एक अँधे को लाठी का सहारा मिल गया हो अथवा एक निर्धन को असीम धन की प्राप्ति हो गयी हो ।

ਪੰਨਾ ੮੩੧

ਬਿਲਾਵਲੁ ਅਸਟਪਦੀਆ ਮਹਲਾ ੧

ਘਰੁ ੧੦

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਨਿਕਟਿ ਵਸੈ ਦੇਖੈ ਸਭੁ ਸੋਈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਵਿਰਲਾ ਬੂਝੈ ਕੋਈ ॥
ਵਿਣੁ ਭੈ ਪਇਐ ਭਗਤਿ ਨ ਹੋਈ ॥
ਸਬਦਿ ਰਤੇ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਹੋਈ ॥੧॥

ਐਸਾ ਗਿਆਨੁ ਪਦਾਰਥੁ ਨਾਮੁ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਵਸਿ ਰਸਿ ਰਸਿ ਮਾਨੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਗਿਆਨੁ ਗਿਆਨੁ ਕਥੈ ਸਭੁ ਕੋਈ ॥
ਕਥਿ ਕਥਿ ਬਾਦੁ ਕਰੇ ਦੁਖੁ ਹੋਈ ॥
ਕਥਿ ਕਹਣੈ ਤੇ ਰਹੈ ਨ ਕੋਈ ॥
ਬਿਨੁ ਰਸ ਰਾਤੇ ਮੁਕਤਿ ਨ ਹੋਈ ॥੨॥

ਗਿਆਨੁ ਧਿਆਨੁ ਸਭੁ ਗੁਰ ਤੇ ਹੋਈ ॥
ਸਾਚੀ ਰਹਤ ਸਾਚਾ ਮਨਿ ਸੋਈ ॥
ਮਨਮੁਖ ਕਥਨੀ ਹੈ ਪਰੁ ਰਹਤ ਨ ਹੋਈ ॥
ਨਾਵਹੁ ਭੂਲੇ ਥਾਉ ਨ ਕੋਈ ॥੩॥

ਮਨੁ ਮਾਇਆ ਬੰਧਿਓ ਸਰ ਜਾਲਿ ॥
ਘਟਿ ਘਟਿ ਬਿਆਪਿ ਰਹਿਓ ਬਿਖੁ ਨਾਲਿ ॥
ਜੋ ਆਂਜੈ ਸੋ ਦੀਸੈ ਕਾਲਿ ॥
ਕਾਰਜੁ ਸੀਧੋ ਰਿਦੈ ਸਮ੍ਹ੍ਹਾਲਿ ॥੪॥

ਸੋ ਗਿਆਨੀ ਜਿਨਿ ਸਬਦਿ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥
ਮਨਮੁਖਿ ਹਉਮੈ ਪਤਿ ਗਵਾਈ ॥
ਆਪੇ ਕਰਤੈ ਭਗਤਿ ਕਰਾਈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਪੇ ਦੇ ਵਡਿਆਈ ॥੫॥

ਰੈਣਿ ਅੰਧਾਰੀ ਨਿਰਮਲ ਜੋਤਿ ॥
ਨਾਮ ਬਿਨਾ ਝੂਠੇ ਕੁਚਲ ਕਛੋਤਿ ॥
ਬੇਦੁ ਪੁਕਾਰੈ ਭਗਤਿ ਸਰੋਤਿ ॥
ਸੁਣਿ ਸੁਣਿ ਮਾਨੈ ਵੇਖੈ ਜੋਤਿ ॥੬॥

ਸਾਸਤ੍ਰ ਸਿਮ੍ਰਿਤਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਮੰ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਾਂਤਿ ਊਤਮ ਕਰਾਮੰ ॥
ਮਨਮੁਖਿ ਜੋਨੀ ਦੂਖ ਸਹਾਮੰ ॥
ਬੰਧਨ ਤੂਟੇ ਇਕੁ ਨਾਮੁ ਵਸਾਮੰ ॥੭॥

ਮੰਨੇ ਨਾਮੁ ਸਚੀ ਪਤਿ ਪੂਜਾ ॥
ਕਿਸੁ ਵੇਖਾ ਨਾਹੀ ਕੋ ਦੂਜਾ ॥
ਦੇਖਿ ਕਹਉ ਭਾਵੈ ਮਨਿ ਸੋਇ ॥
ਨਾਨਕੁ ਕਹੈ ਅਵਰੁ ਨਹੀ ਕੋਇ ॥੮॥੧॥

पृ-८३१

बिलावलु असटपदीआ महला १

घर १०

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

निकटि वसै देखै सभु सोई ॥
गुरमुखि विरला बूझै कोई ॥
विणु भै पइऐ भगति न होई ॥
सबदि रते सदा सुखु होई ॥१॥

ऐसा गिआनु पदारथु नामु ॥
गुरमुखि पावसि रसि रसि मानु ॥१॥रहाउ॥

गिआनु गिआनु कथै सभु कोई ॥
कथि कथि बादु करे दुखु होई ॥
कथि कहणै ते रहै न कोई ॥
बिनु रस राते मुकति न होई ॥२॥

गिआनु धिआनु सभु गुर ते होई ॥
साची रहत साचा मनि सोई ॥
मनमुख कथनी है परु रहत न होई ॥
नावहु भूले थाउ न कोई ॥३॥

मनु माइआ बँधिओ सर जालि ॥
घटि घटि बिआपि रहिओ बिखु नालि ॥
जो आंजै सो दीसै कालि ॥
कारजु सीधो रिदै समा्लि ॥४॥

सो गिआनी जिनि सबदि लिव लाई ॥
मनमुखि हउमै पति गवाई ॥
आपे करतै भगति कराई ॥
गुरमुखि आपे दे वडिआई ॥५॥

रैणि अँधारी निरमल जोति ॥
नाम बिना झूठे कुचल कछोति ॥
बेदु पुकारै भगति सरोति ॥
सुणि सुणि मानै वेखै जोति ॥६॥

सासत्र सिमृति नामु दिृड़ामँ ॥
गुरमुखि सांति ऊतम करामँ ॥
मनमुखि जोनी दूख सहामँ ॥
बँधन तूटे इकु नामु वसामँ ॥७॥

मँने नामु सची पति पूजा ॥
किसु वेखा नाही को दूजा ॥
देखि कहउ भावै मनि सोइ ॥
नानक कहैअवरु नही कोइ ॥८॥१॥

बिलावल असटपदी महला - १ घर - १०
१ओंकार सतिगुर प्रसाद

इस अष्टपदी में गुरु जी पुनः यह बताते हैं कि प्रभु नाम का ध्यान तथा उसका गुणगान करना क्यों आवश्यक है । वह साथ में यह भी कहते हैं कि सच्चा दैवी ज्ञान क्या है और किस के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु हमारे अति निकट बसते हैं और वह सब देखते है, परन्तु, कोई बिरला ही गुरु का अनुयायी इस (सत्य को) बूझ पाता है । (और समझ जाता है कि मन में प्रभु के) भय के बिना उसकी भक्ति नहीं की जा सकती । जो कोई भी (गुरु के) शब्द अथवा वाणी में रमे हुये हैं, उन्हें सदा सुख मिलता है "।(१)

प्रभु नाम के विषय पर वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु नाम ऐसी महान वस्तु है जो दैवी ज्ञान का वरदान प्रदान करती है । एक गुरु का अनुयायी इस नाम रूपी रस के स्वाद को बारम्बार जप कर (प्रभु के दरबार में) सम्मान पाता है "।(१-विराम)

अनेकों लोगों को अपने दैवी ज्ञान पर अभिमानी होने की सामान्य प्रवृत्ति पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), सभी कोई दैवी ज्ञान की कथा कहता है और ऐसे कथन एवं वाद विवाद करते रहने के उपरांत भी उसे दुख होते हैं । फिर भी कोई (अपने ज्ञान की) कथा को कहे बिना रह नहीं पाता (और ना ही यह विचारता है कि प्रभु नाम रूपी) रस के स्वाद में रचे बिना किसी को मुक्ति प्राप्त नहीं होती "।(२)

कहाँ से किसी को सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है और कहाँ से वह सच्चा ध्यान लगाना सीखता है इस पर गुरु जी अब हमें कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, समस्त दैवी) ज्ञान और प्रभु पर विचार करना एवं ध्यान लगाना, सभी कुछ गुरु से प्राप्त होता है (उसकी वाणी की शिक्षा और परामर्श का अनुसरण हमें यह सिखाता है कि जब कोई) सच्ची जीवनशैली अपनाता है तब उसके मन में वह सच्चा (प्रभु) आकर रहता है । किन्तु, एक अंहकारी मनुष्य सच्चे आचरण की केवल बात करता है जबकि उसकी जीवन पद्धति वैसी सच्ची होती नहीं है । अतः, (प्रभु के) नाम को भूलने से मनुष्य को कोई स्थान (शांति एवं स्थिरता) नहीं मिल पाता "।(३)

अब संसार की वर्तमान दशा पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, इस संसार का) मन मायामोह के जंजाल में बँधा हुया है । यद्यपि, प्रभु प्रत्येक हृदय में व्याप्त हैं, परन्तु, फिर भी हर कोई माया के विष से ग्रसित है । जो भी (इस संसार में) आता है उसी को अपना काल दिखाई देता है । केवल हृदय में (प्रभु के नाम को) बसा कर रखने से किसी के भी (मुक्ति प्राप्त करने हेतु समस्त) कार्य सुलझ जाते हैं "।(४)

अब गुरु जी दैवी रूप से ज्ञानी तथा अहंकारी मनुष्यों की स्थिति और भाग्य की तुलना करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), केवल वही (दैवी रूप से) ज्ञानी हैं, जिन्होंने गुरु के शब्द (वाणी) को मन में बसाया जबकि अंहकारी लोग अपने दंभ में अपना मान सम्मान खो देते हैं। (परन्तु, मानव असहाय है, क्योंकि,) सृजनकर्ता स्वयं ही (नाशवान मनुष्य को) भक्ति के लिये प्रेरित करता है और गुरु के द्वारा वह स्वयं ही किसी को भी सम्मान प्रदान करता है "।(५)

नाशवान मानव के जीवन पर आगे टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, अज्ञान के कारण सामान्यतः कोई भी व्यक्ति अपना जीवन) एक अँधेरी रात्रि के समान व्यतीत करता है, (यद्यपि, प्रत्येक के मन में) निर्मल अथवा पवित्र (प्रभु रूपी) ज्योति है । प्रभु नाम का ध्यान न करने के कारण वह झूठी और कुटिल भाषा बोलता है, ऐसे मानव का स्पर्श भी दूषित करता है । परन्तु, (पवित्र ग्रंथ) जैसे कि वेद इत्यादि प्रभु भक्ति का स्रोत हैं और उपदेश देते हैं, (उन उपदेशों को) श्रवण करके जो भी उनका अनुसरण करता है वह उस दिव्य ज्योति को देख लेता है "।(६)

पुरातन धर्म ग्रंथ जिन पर हिंदु समाज पूर्ण विश्वास रखता रहा है, उनमें भी निहित प्रभु नाम के ध्यान के महत्व को गुरु जी उघाड़ते हुए कहते हैं :"(हे' मेरे मित्रो, हिंदू धर्म ग्रंथ जैसे कि) शास्त्र एवं स्मृतियां भी प्रभु नाम को दृढ़ करती हैं और यह कहती हैं कि पुण्य अथवा उत्तम कर्मों को (गुरु के द्वारा प्रभु नाम का ध्यान) करने से शांति प्राप्त होती है । किन्तु, अंहकारी मनुष्य बारम्बार जन्म पाकर कष्ट सहते रहते हैं । यह बँधन (सांसारिक विषय, जो कि जन्म मरण के फेरों में डाले रखते हैं) केवल तभी टूट पाते हैं जब हृदय में एक प्रभु का नाम बसा लिया जाये "।(७)

किसी और प्रकार की भक्ति पूजा की तुलना में प्रभु नाम के ध्यान को सर्वोपरि रखते हुए गुरु जी अष्टपदी के अंत में घोषित करते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, जो कोई भी) प्रभु नाम में विश्वास रखता है, उसका सम्मान एवं पूजा होती है । नानक कहते हैं : " मैं उस प्रभु को सभी ओर देखता हूँ, और किसे देखूँ, क्योंकि उसके जैसा और दूसरा कोई है ही नहीं । उसे देख कर मैं उसकी प्रशंसा करता हूँ और वह मन को भाता है ।(८-१)

इस अष्टपदी का संदेश यह है कि सच्चा सम्मान, पूजा भक्ति तथा दैवी ज्ञान आदि सभी का सार केवल गुरु के शब्द अथवा वाणी के श्रवण एवं अनुसरण करने में और प्रभु नाम के ध्यान में ही छिपा है । प्रभु और उसकी प्रकृति का भेद समझे विचारे बिना और गुरु तथा धर्म की विभिन्न धारणायों को जीवन में परखे बिना उन पर केवल भाषण देने अथवा वाद विवाद में भागीदारी करने से कोई लाभ नहीं होता । शास्त्रों तथा वेदों का सार भी इन तथ्यों की पुष्टि करता है ।

ਪੰਨਾ ੮੩੩	**पृ-८३३**
ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੪ ॥	**बिलावलु महला ४॥**
ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸੀਤਲ ਜਲੁ ਧਿਆਵਹੁ ਹਰਿ ਚੰਦਨ ਵਾਸੁ ਸੁਗੰਧ ਗੰਧਈਆ ॥	हरि हरि नामु सीतल जलु धिआवहु हरि चँदन वासु सुगँध गँधईआ ॥
ਪੰਨਾ ੮੩੪	**पृ-८३४**
ਮਿਲਿ ਸਤਸੰਗਤਿ ਪਰਮ ਪਦੁ ਪਾਇਆ ਮੈ ਹਿਰਡ ਪਲਾਸ ਸੰਗਿ ਹਰਿ ਬੁਹੀਆ ॥੧॥	मिलि सतसँगति परम पदु पाइआ मै हिरड पलास सँगि हरि बुहीआ ॥१॥
ਜਪਿ ਜਗੰਨਾਥ ਜਗਦੀਸ ਗੁਸਈਆ ॥ ਸਰਣਿ ਪਰੇ ਸੇਈ ਜਨ ਉਬਰੇ ਜਿਉ ਪ੍ਰਹਿਲਾਦ ਉਧਾਰਿ ਸਮਈਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	जपि जगँनाथ जगदीस गुसईआ ॥ सरणि परे सेई जन उबरे जिउ प्रहिलाद उधारि समईआ ॥१॥ रहाउ॥
ਭਾਰ ਅਠਾਰਹ ਮਹਿ ਚੰਦਨੁ ਊਤਮ ਚੰਦਨ ਨਿਕਟਿ ਸਭ ਚੰਦਨੁ ਹੁਈਆ ॥ ਸਾਕਤ ਕੂੜੇ ਊਭ ਸੁਕ ਹੂਏ ਮਨਿ ਅਭਿਮਾਨੁ ਵਿਛੁੜਿ ਦੂਰਿ ਗਈਆ ॥੨॥	भार अठारह महि चँदनु ऊतम चँदन निकटि सभ चँदनु हुईआ ॥ साकत कूड़े ऊभ सुक हूए मनि अभिमानु विछुड़ि दूरि गईआ ॥२
ਹਰਿ ਗਤਿ ਮਿਤਿ ਕਰਤਾ ਆਪੇ ਜਾਣੈ ਸਭ ਬਿਧਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਆਪਿ ਬਨਈਆ ॥ ਜਿਸੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਭੇਟੇ ਸੁ ਕੰਚਨੁ ਹੋਵੈ ਜੋ ਧੁਰਿ ਲਿਖਿਆ ਸੁ ਮਿਟੈ ਨ ਮਿਟਈਆ ॥੩॥	हरि गति मिति करता आपे जाणै सभ बिधि हरि हरि आपि बनईआ ॥ जिसु सतिगुरु भेटे सु कँचनु होवै जो धुरि लिखिआ सु मिटै न मिटईआ ॥३॥
ਰਤਨ ਪਦਾਰਥ ਗੁਰਮਤਿ ਪਾਵੈ ਸਾਗਰ ਭਗਤਿ ਭੰਡਾਰ ਖੁਲ੍ਹਈਆ ॥ ਗੁਰ ਚਰਣੀ ਇਕ ਸਰਧਾ ਉਪਜੀ ਮੈ ਹਰਿ ਗੁਣ ਕਹਤੇ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਨ ਭਈਆ ॥੪॥	रतन पदारथ गुरमति पावै सागर भगति भँडार खुल्ईआ ॥ गुर चरणी इक सरधा उपजी मै हरि गुण कहते तृपति न भईआ ॥४॥
ਪਰਮ ਬੈਰਾਗੁ ਨਿਤ ਨਿਤ ਹਰਿ ਧਿਆਏ ਮੈ ਹਰਿ ਗੁਣ ਕਹਤੇ ਭਾਵਨੀ ਕਹੀਆ ॥ ਬਾਰ ਬਾਰ ਖਿਨੁ ਖਿਨੁ ਪਲੁ ਕਹੀਐ ਹਰਿ ਪਾਰੁ ਨ ਪਾਵੈ ਪਰੈ ਪਰਈਆ ॥੫॥	परम बैरागु नित नित हरि धिआए मै हरि गुण कहते भावनी कहीआ ॥ बार बार खिनु खिनु पलु कहीऐ हरि पारु न पावै परै परईआ ॥५॥
ਸਾਸਤ ਬੇਦ ਪੁਰਾਣ ਪੁਕਾਰਹਿ ਧਰਮੁ ਕਰਹੁ ਖਟੁ ਕਰਮ ਦ੍ਰਿੜਈਆ ॥ ਮਨਮੁਖ ਪਾਖੰਡਿ ਭਰਮਿ ਵਿਗੂਤੇ ਲੋਭ ਲਹਰਿ ਨਾਵ ਭਾਰਿ ਬੁਡਈਆ ॥੬॥	सासत बेद पुराण पुकारहि धरमु करहु खटु करम दृड़ईआ ॥ मनमुख पाखँडि भरमि विगूते लोभ लहरि नाव भारि बुडईआ ॥६॥
ਨਾਮੁ ਜਪਹੁ ਨਾਮੇ ਗਤਿ ਪਾਵਹੁ ਸਿਮ੍ਰਿਤਿ ਸਾਸਤ੍ਰ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਈਆ ॥ ਹਉਮੈ ਜਾਇ ਤ ਨਿਰਮਲੁ ਹੋਵੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਰਚੈ ਪਰਮ ਪਦੁ ਪਈਆ ॥੭॥	नामु जपहु नामे गति पावहु सिमिृति सासत्र नामु दृड़ईआ ॥ हउमै जाइ त निरमलु होवै गुरमुखि परचै परम पदु पईआ ॥७॥
ਇਹੁ ਜਗੁ ਵਰਨੁ ਰੂਪੁ ਸਭੁ ਤੇਰਾ ਜਿਤੁ ਲਾਵਹਿ ਸੇ ਕਰਮ ਕਮਈਆ ॥ ਨਾਨਕ ਜੰਤ ਵਜਾਏ ਵਾਜਹਿ ਜਿਤੁ ਭਾਵੈ ਤਿਤੁ ਰਾਹਿ ਚਲਈਆ ॥੮॥੨॥੫॥	इहु जगु वरनु रूपु सभु तेरा जितु लावहि से करम कमईआ ॥ नानक जँत वजाए वाजहि जितु भावै तितु राहि चलईआ ॥८॥२॥५

बिलावल – ५

इस अष्टपदी में गुरु जी इंगित करते हैं कि यह संसार अपने ही द्वारा जनित स्वार्थ, अहम एवं क्रोध की समस्यायों से जल रहा है और साथ ही यह भी बताते हैं कि किस प्रकार की औषधि अथवा मरहम के द्वारा हम अपनी घायल आत्मा का दुख दर्द दूर कर सकते हैं ।

अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), प्रभु नाम का ध्यान करो जो शीतल जल के समान (सुखदायी) है । हरि का नाम चंदन जैसा है, जिसकी सुगंधि चारों ओर की वनस्पति में फैल जाती है ।(जैसे, चंदन के वृक्ष के निकट उगने वाले हिरड व पलास जैसे वृक्ष भी सुगंधित हो उठते हैं) उसी प्रकार संतों की संगति में बैठ (हरि के नाम को जप कर) मेरे जैसा हिरड और पलास के जैसा

(निर्गुणी व्यक्ति भी) हरि के द्वार पर परम पद पा गया है ”।(१)

अतः, गुरु जी हमें कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), जगत के स्वामी, जगदीश और गोसाईं के नाम को जपो, उसकी शरण में जो भी भक्त जन गये उनका उद्धार हो गया, जैसे कि उसने भक्त प्रह्लाद का उद्धार करके उसे अपने में समा लिया था ”।(१-विराम)

गुरु जी अब यह कहते हैं कि कैसे कुछ भक्त जन संतों (गुरु) की संगति पाकर परम पद प्राप्त कर लेते हैं, जबकि अन्य अनेकों लोग हर समय गुरु के निकट रहते हुये भी वैसे ही निर्गुणी बने रहते हैं । इस पहेली को वह एक बार फिर से चंदन के उदाहरण के द्वारा सुलझाते हुये कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), सम्पूर्ण जंगल अथवा प्राकृतिक समूह में चंदन का वृक्ष उत्तम माना जाता है, क्योंकि, निकट के (जितने भी और वृक्ष होते हैं) उसकी सँगति में उसी के समान सुगन्धित हो उठते हैं । इसके विपरीत, अभिमानी लोग (उन वृक्षों की भाँति होते हैं जो उसी धरती से वैसा भोजन लेकर भी) सूख कर नष्ट हो जाते हैं, क्योंकि, उनके मन में अंहकार भरा होता है अतः, वह प्रभु से बिछुड़ कर दूर हो जाते हैं ”।(२)

स्वाभाविक रूप से मन में प्रशन उठता है कि क्यों लोग समान परिस्थितियों में रहते हुये भी विभिन्न प्रकार का व्यवहार एवं आचरण रखते हैं? इसका उत्तर गुरु जी विनम्रता से देते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), सृजनकर्ता अथवा हरि अपने खेल के नियमों को स्वयं ही जानते हैं ।समस्त विधि विधान (प्रत्येक जन के भाग्य को) उस हरि ने स्वयं बनाया है । (जिसे भी प्रभु) सच्चे गुरु से मिला देते हैं वह कंचन के समान (पवित्र) हो जाता है और जो भी (प्रभु ने) किसी के प्रारब्ध में लिख दिया है उसे मिटाने का प्रयत्न करने पर भी मिटाया नहीं जा सकता ”।(३)

जिसको अपने प्रारब्ध में सच्चे गुरु की संगति में रहने का वरदान मिला हुया है उसका क्या होता है, इस पर गुरु जी अपना व्यक्तिगत अनुभव साझा करते हुये कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), गुरु की मति अथवा निर्देशों पर चल कर रत्नों जैसे पदार्थों की प्राप्ति होती है, क्योंकि, (गुरु की संगति) प्रभु की भक्ति के हेतु एक सागर अथवा खुले भंडार के समान है । गुरु की शरण में आकर (मेरे मन में) ऐसी श्रद्धा उत्पन्न हो चुकी है कि मैं अब हरि के गुणों का वर्णन करते रहने पर भी तृप्त नहीं होता “ ।(४)

प्रभु के लिये उनके मन में कौन से नये विचार उत्पन्न हुये हैं, इस पर अपनी वर्तमान मनोस्थित का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो) नित्य ही परम वैराग्य की भावना से मैंने प्रभु का ध्यान किया है और प्रेम की भावना के साथ हरि के गुणों का बखान किया है । परन्तु, मैंने अनुभव किया है कि बारम्बार, प्रत्येक पल अथवा हर एक क्षण यदि कोई (हरि के) गुणों का उच्चारण करता रहे तब भी वह हरि का पार नहीं पा सकता, क्योंकि वह अपरम्पार है अथवा दूर और अति दूर है ”।(५)

अब गुरु जी उन संदेशों पर टिप्पणी करते हैं जिनकी घोषणा अनेकों हिन्दू पंडित पवित्र वेदों, शास्त्रों एवं पुराणों की प्रमाणिकता के आधार पर करते हैं । वह कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो, बहुत लोग) कहते हैं कि शास्त्र, वेद व पुराण केवल छः प्रकार के धार्मिक मूलभूत कृत्यों को करने के लिये दृढ़ता से कहते हैं (जैसे कि भिक्षा लेना और देना, वेदों का पठन एवं पाठन, बलि देना और बलि चढ़ाना आदि ।परन्तु, स्वयं को ऐसी प्रक्रियायों तक सीमित करके) पाखंडी और अंहकारी लोग स्वयं को भ्रमों में नष्ट कर रहे हैं तथा लोभ एवं मिथ्या चरित्र की लहरों के भार के तले उनकी जीवन नैया (भवसागर में) डूब जाती है ”।(६)

गुरु जी दयालुता से हमें स्वयं को बचाने का राह बताते हुये कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), प्रभु नाम को जपो, इसी नाम से ही तुम्हें मोक्ष प्राप्त होता है । क्योंकि, सिमृतियों शास्त्रों का पठन भी स्वतः प्रभु नाम को जपने के लिये और अधिक दृढ़ करता है । जब मन में से अहम जाता है तब पवित्रता आती है और जब गुरु के द्वारा दैवी ज्ञान प्राप्त होता है तभी किसी को परम पद मिलता है ”।(७)

गुरु जी अष्टपदी के अंत में स्पष्ट भाव से कहते हैं कि हर कोई प्रभु के आदेशानुसार ही कर्म करता है (जिससे कि हम अपनी धर्मनिष्ठा अथवा शास्त्रीय विधियों के अनुसार कर्म करने पर अभिमान ना करें) । वह प्रभु से विनम्र निवेदन करते हुये कहते हैं : “(हे’ प्रभु), यह संसार अपने वर्णों अथवा रूपों में जैसा भी है वह सब तुम्हारी ही देन है, सभी जीव वही कर्म कर रहे हैं जिन पर तुमने उन्हें लगा रखा है । नानक कहते हैं कि सब जीव जंतु संगीत के वाद्य यंत्रों की भाँति हैं जो उसी प्रकार से बजते हैं जैसे वादक उन्हें बजाना चाहता है, (इसी प्रकार एक मनुष्य) उसी राह पर चल पाता है जिस पर प्रभु उसे चलाना चाहते हैं ”।(८-२-५)

इस अष्टपदी का संदेश यह है कि यदि हम आत्मिक रूप से चंदन के वृक्ष के समान संतजनों की संगति में बैठ कर गुरु ग्रंथ साहिब में निहित गुरु के आदेशों को जीवन में ढाल कर चलें तो हमारा मन उनकी सुगंधि से पवित्र होगा और प्रभु नाम का ध्यान करने के फलस्वरुप शांति एवं मोक्ष की प्राप्ति होगी । इस प्रकार हमें कुछ धर्म ग्रंथों में वर्णित धार्मिक अनुष्ठान एवं कथित रूप से पवित्रता ग्रहण करने हेतु कर्मकांडों का प्रयोजन करने का कोई लाभ नहीं ।

ਪੰਨਾ ੮੩੫	**पृ-८३५**
ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੪ ॥	**बिलावल महला ४॥**
ਅੰਤਰਿ ਪਿਆਸ ਉਠੀ ਪ੍ਰਭ ਕੇਰੀ ਸੁਣਿ ਗੁਰ ਬਚਨ ਮਨਿ ਤੀਰ ਲਗਈਆ॥	अँतरि पिआस उठी प्रभ केरी सुणि गुर बचन मनि तीर लगईआ ॥
ਪੰਨਾ ੮੩੬	**पृ-८३६**
ਮਨ ਕੀ ਬਿਰਥਾ ਮਨ ਹੀ ਜਾਣੈ ਅਵਰੁ ਕਿ ਜਾਣੈ ਕੋ ਪੀਰ ਪਰਈਆ ॥੧॥	मन की बिरथा मन ही जाणै अवरु कि जाणै को पीर परईआ ॥१॥
ਰਾਮ ਗੁਰਿ ਮੋਹਨਿ ਮੋਹਿ ਮਨੁ ਲਈਆ ॥ ਹਉ ਆਕਲ ਬਿਕਲ ਭਈ ਗੁਰ ਦੇਖੇ ਹਉ ਲੋਟ ਪੋਟ ਹੋਇ ਪਈਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	राम गुरि मोहनि मोहि मनु लईआ ॥ हउ आकल बिकल भई गुर देखे हउ लोट पोट होइ पईआ ॥१॥ रहाउ॥
ਹਉ ਨਿਰਖਤ ਫਿਰਉ ਸਭਿ ਦੇਸ ਦਿਸੰਤਰ ਮੈ ਪ੍ਰਭ ਦੇਖਨ ਕੋ ਬਹੁਤੁ ਮਨਿ ਚਈਆ ॥ ਮਨੁ ਤਨੁ ਕਾਟਿ ਦੇਉ ਗੁਰ ਆਗੈ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਮਾਰਗੁ ਪੰਥੁ ਦਿਖਈਆ ॥੨॥	हउ निरखत फिरउ सभि देस दिसँतर मै प्रभ देखन को बहुतु मनि चईआ ॥ मनु तनु काटि देउ गुर आगै जिनि हरि प्रभ मारगु पँथु दिखईआ ॥२॥
ਕੋਈ ਆਣਿ ਸਦੇਸਾ ਦੇਇ ਪ੍ਰਭ ਕੇਰਾ ਰਿਦ ਅੰਤਰਿ ਮਨਿ ਤਨਿ ਮੀਠ ਲਗਈਆ ॥ ਮਸਤਕੁ ਕਾਟਿ ਦੇਉ ਚਰਣਾ ਤਲਿ ਜੋ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਮੇਲੇ ਮੇਲਿ ਮਿਲਈਆ ॥੩॥	कोई आणि सदेसा देइ प्रभ केरा रिद अँतरि मनि तनि मीठ लगईआ ॥ मसतकु काटि देउ चरणा तलि जो हरि प्रभु मेले मेलि मिलईआ ॥३॥
ਚਲੁ ਚਲੁ ਸਖੀ ਹਮ ਪ੍ਰਭੁ ਪਰਬੋਧਹ ਗੁਣ ਕਾਮਣ ਕਰਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਲਹੀਆ ॥ ਭਗਤਿ ਵਛਲੁ ਉਆ ਕੋ ਨਾਮੁ ਕਹੀਅਤੁ ਹੈ ਸਰਣਿ ਪ੍ਰਭੂ ਤਿਸੁ ਪਾਛੈ ਪਈਆ ॥੪॥	चलु चलु सखी हम प्रभु परबोधह गुण कामण करि हरि प्रभु लहीआ ॥ भगति वछलु उआ को नामु कहीअतु है सरणि प्रभू तिसु पाछै पईआ ॥४॥
ਖਿਮਾ ਸੀਗਾਰ ਕਰੇ ਪ੍ਰਭ ਖੁਸੀਆ ਮਨਿ ਦੀਪਕ ਗੁਰ ਗਿਆਨੁ ਬਲਈਆ ॥ ਰਸਿ ਰਸਿ ਭੋਗ ਕਰੇ ਪ੍ਰਭੁ ਮੇਰਾ ਹਮ ਤਿਸੁ ਆਗੈ ਜੀਉ ਕਟਿ ਕਟਿ ਪਈਆ ॥੫॥	खिमा सीगार करे प्रभ खुसीआ मनि दीपक गुर गिआनु बलईआ ॥ रसि रसि भोग करे प्रभु मेरा हम तिसु आगै जीउ कटि कटि पईआ ॥५॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਹਾਰੁ ਕੰਠਿ ਹੈ ਬਨਿਆ ਮਨੁ ਮੋਤੀਚੂਰੁ ਵਡ ਗਹਨ ਗਹਨਈਆ ॥ ਹਰਿ ਹਰਿ ਸਰਧਾ ਸੇਜ ਵਿਛਾਈ ਪ੍ਰਭੁ ਛੋਡਿ ਨ ਸਕੈ ਬਹੁਤੁ ਮਨਿ ਭਈਆ ॥੬॥	हरि हरि हारु कँठि है बनिआ मनु मोतीचूरु वड गहन गहनईआ ॥ हरि हरि सरधा सेज विछाई प्रभु छोडि न सकै बहुतु मनि भईआ ॥६॥
ਕਹੈ ਪ੍ਰਭੁ ਅਵਰੁ ਅਵਰੁ ਕਿਛੁ ਕੀਜੈ ਸਭੁ ਬਾਦਿ ਸੀਗਾਰੁ ਫੋਕਟ ਫੋਕਟਈਆ ॥ ਕੀਓ ਸੀਗਾਰੁ ਮਿਲਣ ਕੈ ਤਾਈ ਪ੍ਰਭੁ ਲੀਓ ਸੁਹਾਗਨਿ ਥੂਕ ਮੁਖਿ ਪਈਆ ॥੭॥	कहै प्रभु अवरु अवरु किछु कीजै सभु बादि सीगारु फोकट फोकटईआ ॥ कीओ सीगारु मिलण कै ताई प्रभु लीओ सुहागिन थूक मुखि पईआ ॥७॥
ਹਮ ਚੇਰੀ ਤੂ ਅਗਮ ਗੁਸਾਈ ਕਿਆ ਹਮ ਕਰਹ ਤੇਰੈ ਵਸਿ ਪਈਆ ॥ ਦਇਆ ਦੀਨ ਕਰਹੁ ਰਖਿ ਲੇਵਹੁ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਗੁਰ ਸਰਣਿ ਸਮਈਆ ॥੮॥੫॥੮॥	हम चेरी तू अगम गुसाई किआ हम करह तेरै वसि पईआ ॥ दइआ दीन करहु रखि लेवहु नानक हरि गुर सरणि समईआ ॥८॥५॥८॥

बिलावल महला – ५

इस अष्टपदी में गुरु जी अपने मन की अवस्था का वर्णन कर रहे हैं कि उसे प्रभु से मिलने अथवा दर्शन पाने की कितनी तीव्र अभिलाषा है । अतः, गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मेरे अँतरमन में प्रभु (के दर्शन करने) की प्यास उठी है । (प्रभु की महानता के विषय पर) गुरु के वचन सुन कर मेरे मन में (उसके प्रति प्रेम का) तीर लग गया है । मेरे मन की व्यथा केवल मेरा मन ही जानता है, क्योंकि, कोई दूसरा पराई पीड़ा को कैसे जान सकता है "।(१)

गुरु जी अपने गुरु की सराहना करते हैं जिसके पवित्र शब्दों अथवा वाणी के द्वारा वह प्रभु के प्रति अपने उत्कट प्रेम के साथ लीन हुए । गुरु जी स्वयं ही प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं : " हे' प्रभु, मेरे मनमोहक गुरु ने मेरे मन को पूर्ण रूप से लुभा लिया है । मैं गुरु को देख विस्मय से व्याकुल होकर लोट पोट होने लग गया हूँ "।(१-विराम)

प्रभु का दर्शन करने की उनकी कितनी तीव्र इच्छा है और गुरु के प्रति वह कितने कृतज्ञ हैं, इसका वर्णन करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मेरे मन में प्रभु के दर्शन करने का इतना अधिक चाव है कि मैं सभी देश विदेशों में उसे ढूँढता फिर रहा हूँ । मैं अपना तन एवं मन टुकड़ों में काट काट कर उस गुरु के सम्मुख अर्पण कर देना चाहता हूँ जिसने मुझे हरि से मिलने का मार्ग दिखाया "।(२)

वह क्यों अपने गुरु के प्रति इतने कृतज्ञ हैं, इस तथ्य की व्याख्या करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), यदि कोई आकर मुझे प्रभु का कोई संदेसा देता है तो वह मनुष्य मेरे अँतरमन को तन मन से मीठा लगने लगता है और यदि कोई मेरा मिलन हरि से करवाता है तो मैं उसके चरणों के तले अपना शीश काट कर रख दूँगा "।(३)

गुरु जी केवल स्वयं ही नहीं प्रभु से मिलना चाहते, अपितु, वह अपने अन्य साथी संगियों (संतों) को भी साथ चलकर प्रिय प्रभु के दर्शन करने के लिये आमंत्रित करते हैं । यहाँ पर वह मानव आत्मा को एक ऐसी नवयौवना वधू के रूपक में प्रस्तुत करते हैं जो जादू टोने तथा तंत्र मंत्र के द्वारा प्रियतम को अपने वश में करने का प्रयास करती है । वह कहते हैं : " हे' मेरी सखियो, चलो, हम चल कर अपने (प्रिय) प्रभु को निद्रा से जगा लें और अपने कामिनी रूप एवं गुणों के द्वारा हरि को मोह कर अपनी ओर लुभा लें । उस प्रभु का नाम भक्त वछल कहलाता है, आओ, हम उसके पीछे पड़ जायें और उस प्रभु की शरण प्राप्त कर लें "।(४)

अब गुरु जी उन नवयौवना वधूयों के रूपक का प्रयोग करते हैं जो कि अपने प्रियतम को रिझाने के लिये मूल्यवान आभूषण, वस्त्र तथा अन्य प्रसाधनों से श्रृंगार करती थीं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, आत्मा रूपी वधू) जो स्वयं को क्षमा रूपी श्रृंगार से सजाती है और मन में गुरु के दैवी ज्ञान का दीपक जलाती है, वह प्रभु को प्रसन्नता देती है । मेरे प्रभु तब उस प्रसन्नता रूपी रस के स्वाद का भोग मेरे साथ करते हैं और मैं उसके सम्मुख स्वयं को काट काट कर अर्पण करने को तत्पर होती हूँ "।(५)

गुरु जी यहाँ यह वर्णन करते हैं कि उन्होंने प्रभु को आकर्षित करने और उसकी सँगति का आनंद लेने के लिये कैसे स्वयं का श्रृंगार किया। वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो) हरि का नाम मेरे कंठ की माला बन गया है और मेरा प्रेम परिपूर्ण मन, मेरे शीश के लिये अति सुंदर आभूषण हो गया है, (मैंने अपने मन में) हरि के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास की सेज बिछाई है । (मैं आश्वस्त हूँ कि यह) प्रभु को बहुत मनभावन लगेगा और वह (मेरी संगति को कभी) छोड़ नही सकेंगे "।(६)

अब गुरु जी उन (आत्मा रूपी) वधूयों के भाग्य तथा उनकी स्थिति पर टिप्पणी करते हैं जो अपने पति (प्रभु) की बात को स्वीकार करने की अपेक्षा, दूसरे विभिन्न काम करती रहती हैं, जैसे कि कर्मकांड, तीर्थ स्नान एवं भगवा चोले धारण करना, इत्यादि । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रों), यदि प्रभु कुछ कहते हैं और (आत्मा रूपी) वधू कुछ और करती है तब उसका समस्त श्रृंगार किसी काम का नहीं, वह फीका और फोकट का है । ऐसी (आत्मा रूपी) वधू ने चाहे प्रभु से मिलने के लिये श्रृंगार किया हो, परन्तु, वह (आज्ञाकारी) विश्वसनीय सोहागिन को ही अपने साथ स्वीकार करते हैं, जबकि दूसरी (आज्ञाविहीन को ऐसे अस्वीकार कर देते हैं जैसे कि उस) के मुख पर थूक दिया हो "।(७)

गुरु जी इस अष्टपदी के अंत में हमें यह प्रकट करते हैं कि कैसे हमें अपने निष्कप्ट प्रेम, भक्ति तथा विनम्रता के साथ प्रभु से निकटता प्राप्त करनी चाहिये जिससे कि वह हमारी त्रुटियों को बिसार कर हमें अपनी संगति में स्वीकार करें । वह कहते हैं : "(हे' प्रभु), हम तेरी चेरी हैं और तुम हमारी बुद्धि से परे हमारे स्वामी हो, हम क्या करें इसलिये तुम्हारे वश में आन पड़े हैं । अतः, नानक कहते हैं, " हे' हरि, हम दीनों पर दया करके हमारी रक्षा करो और हमें गुरु की शरण में ही समाये रहने दो "।(८-५-८)

इस अष्टपदी का संदेश यह है कि गुरु के आदेश के अनुसार हमें प्रभु से गूढ़ एवं सच्चा प्रेम और उसके दर्शन की तीव्र उत्कंठा मन में उत्पन्न करनी चाहिये । सामान्य जीव आत्माओं रूपी वधुयों की भाँति पति रूपी प्रभु को रिझाने के लिए विभिन्न कर्मकांडों रूपी आभूषणों के साथ श्रंगार करने की अपेक्षा हमें अपना श्रंगार विनम्रता, सदाचार एवं प्रभु नाम के प्रति श्रद्धायुक्त ध्यान रूपी आभूषणों के साथ करके प्रभु के सानिध्य और प्रेम को प्राप्त करना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੮੩੭

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਪ੍ਰਭ ਜਨਮ ਮਰਨ ਨਿਵਾਰਿ ॥
ਹਾਰਿ ਪਰਿਓ ਦੁਆਰਿ ॥
ਗਹਿ ਚਰਨ ਸਾਧੂ ਸੰਗ ॥
ਮਨ ਮਿਸਟ ਹਰਿ ਹਰਿ ਰੰਗ ॥

ਪੰਨਾ ੮੩੮

ਕਰਿ ਦਇਆ ਲੇਹੁ ਲੜਿ ਲਾਇ ॥
ਨਾਨਕਾ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇ ॥੧॥

ਦੀਨਾ ਨਾਥ ਦਇਆਲ ਮੇਰੇ ਸੁਆਮੀ ਦੀਨਾ ਨਾਥ ਦਇਆਲ ॥
ਜਾਚਉ ਸੰਤ ਰਵਾਲ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸੰਸਾਰੁ ਬਿਖਿਆ ਕੂਪ ॥
ਤਮ ਅਗਿਆਨ ਮੋਹਤ ਘੂਪ ॥
ਗਹਿ ਭੁਜਾ ਪ੍ਰਭ ਜੀ ਲੇਹੁ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਅਪੁਨਾ ਦੇਹੁ ॥
ਪ੍ਰਭ ਤੁਝ ਬਿਨਾ ਨਹੀ ਠਾਉ ॥
ਨਾਨਕਾ ਬਲਿ ਬਲਿ ਜਾਉ ॥੨॥

ਲੋਭਿ ਮੋਹਿ ਬਾਧੀ ਦੇਹ ॥
ਬਿਨੁ ਭਜਨ ਹੋਵਤ ਖੇਹ ॥
ਜਮਦੂਤ ਮਹਾ ਭਇਆਨ ॥
ਚਿਤ ਗੁਪਤ ਕਰਮਹਿ ਜਾਨ ॥
ਦਿਨੁ ਰੈਨਿ ਸਾਖਿ ਸੁਨਾਇ ॥
ਨਾਨਕਾ ਹਰਿ ਸਰਨਾਇ ॥੩॥

ਭੈ ਭੰਜਨਾ ਮੁਰਾਰਿ ॥
ਕਰਿ ਦਇਆ ਪਤਿਤ ਉਧਾਰਿ ॥
ਮੇਰੇ ਦੋਖ ਗਨੇ ਨ ਜਾਹਿ ॥
ਹਰਿ ਬਿਨਾ ਕਤਹਿ ਸਮਾਹਿ ॥
ਗਹਿ ਓਟ ਚਿਤਵੀ ਨਾਥ ॥
ਨਾਨਕਾ ਦੇ ਰਖੁ ਹਾਥ ॥੪॥

ਹਰਿ ਗੁਣ ਨਿਧੇ ਗੋਪਾਲ ॥
ਸਰਬ ਘਟ ਪ੍ਰਤਿਪਾਲ ॥
ਮਨਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਦਰਸਨ ਪਿਆਸ ॥
ਗੋਬਿੰਦ ਪੂਰਨ ਆਸ ॥
ਇਕ ਨਿਮਖ ਰਹਨੁ ਨ ਜਾਇ ॥
ਵਡ ਭਾਗਿ ਨਾਨਕ ਪਾਇ ॥੫॥

ਪ੍ਰਭ ਤੁਝ ਬਿਨਾ ਨਹੀ ਹੋਰ ॥
ਮਨਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਚੰਦ ਚਕੋਰ ॥
ਜਿਉ ਮੀਨ ਜਲ ਸਿਉ ਹੇਤੁ ॥
ਅਲਿ ਕਮਲ ਭਿੰਨੁ ਨ ਭੇਤੁ ॥
ਜਿਉ ਚਕਵੀ ਸੂਰਜ ਆਸ ॥
ਨਾਨਕ ਚਰਨ ਪਿਆਸ ॥੬॥

पृ-८३७

बिलावलु महला ५॥

प्रभ जनम मरन निवारि ॥
हारि परिओ दुआरि ॥
गहि चरन साधू सँग ॥
मन मिसट हरि हरि रँग ॥

पृ-८३८

करि दइआ लेहु लड़ि लाइ ॥
नानका नामु धिआइ ॥१॥

दीना नाथ दइआल मेरे सुआमी दीना नाथ दइआल ॥
जाचउ सँत रवाल ॥१॥रहाउ॥

सँसारु बिखिआ कूप ॥
तम अगिआन मोहत घूप ॥
गहि भुजा प्रभ जी लेहु ॥
हरि नामु अपुना देहु ॥
प्रभ तुझ बिना नही ठाउ ॥
नानका बलि बलि जाउ ॥२॥

लोभि मोहि बाधी देह ॥
बिनु भजन होवत खेह ॥
जमदूत महा भइआन ॥
चित गुपत करमहि जान ॥
दिनु रैनि साखि सुनाइ ॥
नानका हरि सरनाइ ॥३॥

भै भँजना मुरारि ॥
करि दइआ पतित उधारि ॥
मेरे दोख गने न जाहि ॥
हरि बिना कतहि समाहि ॥
गहि ओट चितवी नाथ ॥
नानका दे रखु हाथ ॥४॥

हरि गुण निधे गोपाल ॥
सरब घट प्रति पाल ॥
मनि प्रीति दरसन पिआस ॥
गोबिँद पूरन आस ॥
इक निमख रहनु न जाइ ॥
वड भागि नानक पाइ ॥५॥

प्रभ तुझ बिना नही होर ॥
मनि प्रीति चँद चकोर ॥
जिउ मीन जल सिउ हेतु ॥
अलि कमल भिँनु न भेतु ॥
जिउ चकवी सूरज आस ॥
नानक चरन पिआस ॥६॥

ਜਿਉ ਤਰੁਨਿ ਭਰਤ ਪਰਾਨ ॥	जिउ तरुनि भरत परान ॥
ਜਿਉ ਲੋਭੀਐ ਧਨੁ ਦਾਨੁ ॥	जिउ लोभीऐ धनु दानु ॥
ਜਿਉ ਦੂਧ ਜਲਹਿ ਸੰਜੋਗੁ ॥	जिउ दूध जलहि सँजोगु ॥
ਜਿਉ ਮਹਾ ਖੁਧਿਆਰਥ ਭੋਗੁ ॥	जिउ महा खुधिआरथ भोगु ॥
ਜਿਉ ਮਾਤ ਪੂਤਹਿ ਹੇਤੁ ॥	जिउ मात पूतहि हेतु ॥
ਹਰਿ ਸਿਮਰਿ ਨਾਨਕ ਨੇਤ ॥੭॥	हरि सिमरि नानक नेत ॥७ ॥
ਜਿਉ ਦੀਪ ਪਤਨ ਪਤੰਗ ॥	जिउ दीप पतन पतँग ॥
ਜਿਉ ਚੋਰੁ ਹਿਰਤ ਨਿਸੰਗ॥	जिउ चोरु हिरत निसँग ॥
ਮੈਗਲਹਿ ਕਾਮੈ ਬੰਧੁ ॥	मैगलहि कामै बँधु ॥
ਜਿਉ ਗ੍ਰਸਤ ਬਿਖਈ ਧੰਧੁ ॥	जिउ ग्रसत बिखई धँधु ॥
ਜਿਉ ਜੂਆਰ ਬਿਸਨੁ ਨ ਜਾਇ ॥	जिउ जूआर बिसनु न जाइ ॥
ਹਰਿ ਨਾਨਕ ਇਹੁ ਮਨੁ ਲਾਇ ॥੮॥	हरि नानक इहु मनु लाइ ॥८॥
ਕੁਰੰਕ ਨਾਦੈ ਨੇਹੁ ॥	कुरँक नादै नेहु ॥
ਚਾਤ੍ਰਿਕੁ ਚਾਹਤ ਮੇਹੁ ॥	चात्रिकु चाहत मेहु ॥
ਜਨ ਜੀਵਨਾ ਸਤਸੰਗਿ ॥	जन जीवना सतसँगि ॥
ਗੋਬਿਦੁ ਭਜਨਾ ਰੰਗਿ ॥	गोबिदु भजना रँगि ॥
ਰਸਨਾ ਬਖਾਨੈ ਨਾਮੁ ॥	रसना बखानै नामु ॥
ਨਾਨਕ ਦਰਸਨ ਦਾਨੁ ॥੯॥	नानक दरसन दानु ॥९॥
ਗੁਨ ਗਾਇ ਸੁਨਿ ਲਿਖਿ ਦੇਇ ॥	गुन गाइ सुनि लिखि देइ ॥
ਸੋ ਸਰਬ ਫਲ ਹਰਿ ਲੇਇ ॥	सो सरब फल हरि लेइ ॥
ਕੁਲ ਸਮੂਹ ਕਰਤ ਉਧਾਰੁ ॥	कुल समूह करत उधारु ॥
ਸੰਸਾਰੁ ਉਤਰਸਿ ਪਾਰਿ ॥	सँसारु उतरसि पारि ॥
ਹਰਿ ਚਰਨ ਬੋਹਿਥ ਤਾਹਿ ॥	हरि चरन बोहिथ ताहि ॥
ਮਿਲਿ ਸਾਧਸੰਗਿ ਜਸੁ ਗਾਹਿ ॥	मिलि साधसँगि जसु गाहि ॥
ਹਰਿ ਪੈਜ ਰਖੈ ਮੁਰਾਰਿ ॥	हरि पैज रखै मुरारि ॥
ਹਰਿ ਨਾਨਕ ਸਰਨਿ ਦੁਆਰਿ ॥੧੦॥੨॥	हरि नानक सरनि दुआरि ॥१०॥२॥

बिलावल महला – ५

इस अष्टपदी में गुरु जी प्रभु के प्रति अपना असीम प्रेम प्रकट करते हुए यह बता रहे हैं कि वह उससे किस प्रकार के आशीर्वादों की याचना करते हैं जिससे कि हम भी प्रभु से उसी प्रकार का श्रद्धापूर्ण प्रेम करने के लिए प्रेरित हों । सांसारिक सुख सुविधाओं और अन्य अनुग्रहों की कामना करने की अपेक्षा, हमें प्रभु से वह सब माँगना चाहिए जो आगे जाकर हमारे लिए वास्तविक रूप से कल्याणकारी सिद्ध हो ।

वह कहते हैं : "(हे' प्रभु), अन्य सभी उपायों से थक कर मैं तुम्हारे द्वार पर आन पड़ा हूँ और (तुमसे भिक्षा माँगता हूँ कि) जन्म मरण (के दुख दर्दों) का निवारण करो । साधु संतों (गुरु) की संगति में रह कर मैंने तुम्हारे चरण पकड़ लिये हैं । तुम्हारा प्रेम मेरे मन को मीठा लगता है । (हे' प्रभु), दया करो और अपने साथ मुझे रखो जिससे कि (मैं) नानक सदा तेरे नाम का ध्यान करूँ " ।(१)

अपनी प्रार्थना को संक्षिप्त रूप से कहते हैं : " हे' दयालु, दीनानाथ, हे' मेरे दीनानाथ दयालु स्वामी, मैं तुमसे संतजनों (गुरु) के चरणों की धूलि की याचना करता हूँ "।(१-विराम)

क्यों वह प्रभु से मिलन चाहते हैं तथा क्यों वह विनम्र भाव से सँतो की सेवा करने की याचना कर रहे हैं, इसकी व्याख्या करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' प्रभु), यह संसार एक (मायामोह रूपी) विष का कुआँ है जिसमें अज्ञान का गहन अँधकार है जो मुझे आकर्षित करता है । हे' प्रभु, मेरी बाँह पकड़ कर मुझे इस कूएँ में से बाहर निकालो और अपने हरि नाम का दान दो ।हे' प्रभु, तुम्हारे बिना मेरा और कोई ठौर ठिकाना नहीं है (जहाँ मैं सहायता के लिये जाऊँ), नानक तुम पर बारम्बार बलिहारी हैं "।(२)

वह प्रभु की शरण में क्यों रहना चाहते हैं, इसकी व्याख्या करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' प्रभु), हमारा यह तन (सांसारिक) लोभ तथा मोह से बँधा हुया है जो कि भजन और भक्ति के बिना (व्यर्थ होकर) राख में मिल जाता है । इसके अतिरिक्त, मैं यमराज से अति भयभीत हूँ जिसके साथी चित्र गुप्त (चेतन व अचेतन मन) हमारे कर्मों का लेखा रखते हैं, तथा दिन रात हमारी साख हमें सुनाते रहते हैं । अतः, हे' हरि,

नानक (तुम्हारी) शरण में रहना चाहते हैं ”।(३)

गुरु जी यहाँ व्यक्त करते हैं कि प्रभु हमारे दुष्कर्मों को भली भाँति जानते हैं, अतः, ऐसे कर्मों को अस्वीकार करने की अपेक्षा, उन्हें पूर्ण रूप से स्वीकार कर प्रभु से कृपा की याचना करनी चाहिये । हमारी ओर से वह कहते हैं : “ हे’ भय का भँजन तथा दुष्टों का दमन करने वाले प्रभु, दया करो और पतितों का उद्धार करो । मेरे दोष (इतने हैं कि) गिने नहीं जा सकते । हे’ हरि तुम्हारे बिना हम और कहाँ जाकर समा (शरण ले) सकते हैं । अतः, हे’ मेरे स्वामी, मन में तुम्हें स्मरण कर तुम्हारी शरण में गया हूँ, कृपापूर्वक अपना हाथ देकर नानक की रक्षा करो ”।(४)

अब गुरु जी यह प्रकट करते हैं कि इससे पूर्व कोई दया की याचना करें, हमें किस प्रकार का निष्कप्ट और प्रबल प्रेम प्रभु के प्रति अपने मन में उत्पन्न करना चाहिये । वह कहते हैं : “ हे’ हरि, गुण निधान, धरती के स्वामी, तुम घट घट के पालनहार हो । मेरे मन में तुम्हारे लिये प्रेम है और तुम्हारे दर्शन का प्यासा हूँ, हे’ गोविंद, मेरी आशा को पूर्ण करो । मेरे से तुम्हारे बिना एक क्षण भी नहीं रहा जाता, नानक तुम्हारे (दर्शन) पाकर अति सौभाग्यशाली होंगे ”।(५)

प्रभु के प्रति अपने प्रेम का प्रदर्शन गुरु जी अनेक सुंदर उदाहरणों के द्वारा करते हुये कहते हैं : “ हे’ प्रभु, तुम्हारे बिना मुझे और कोई (इतना प्रिय) नहीं है, मेरे मन में (तुम्हारे लिये) ऐसा प्रेम है जैसे कि चकोर का चंद्रमा से होता है, जैसे मछली का जल के लिये होता है, जैसे भँवरा कमल के फूल में ऐसे समा जाता है कि दोनों में कोई अँतर ही नहीं रहता तथा चकवी जैसे सूर्य की प्रतीक्षा में रहती है । उसी प्रकार नानक को तेरे चरण कमलों की (तुम्हारे पवित्र नाम के ध्यान की) तृष्णा होती है ”।(६)

अब गुरु जी कुछ और मानवीय उदाहरण देकर हमें यह बताते हैं कि प्रभु का ध्यान करने के लिये कितनी तीव्रता से हमें उसके साथ प्रेम करना चाहिये । वह कहते हैं : “ जैसे कि एक वधू को अपने पति के साथ प्राणों से भी अधिक प्रेम होता है अथवा एक लोभी मनुष्य को धन का दान मिलने से होता है, जिस प्रकार से दूध में जल का मिश्रण होता है अथवा जैसे एक भूखे को भोजन की चाह तथा माता को अपने पुत्र के लिये प्रेम होता है, उसी प्रकार हे’ नानक तुम नित्य ही हरि का स्मरण करो.” (७)

इतना ही नहीं, गुरु जी के पास अपना मत सिद्ध करने लिये ऐसे उदाहरणों का जैसे अमित भंडार है, वह और आगे कहते हैं : “ जैसे कि एक पतंगा दीपक के प्रेम में जल जाता है, जैसे एक चोर बिना किसी भय के चोरी अथवा हरण करता है, जैसे कि एक हाथी कामुक होकर (गड्ढे में गिर कर) बँधन में फँस जाता है, जैसे कि एक दोषी मनुष्य अपने कुकर्मों में ग्रस्त रहता है, जैसे कि एक जुए का खिलाड़ी अपने व्यसन को नहीं छोड़ पाता ; (उसी प्रकार) हे’ हरि, कृपया, नानक के मन को अपने में लगाओ ”।(८)

अष्टपदी का अंत करने से पूर्व गुरु जी प्रभु प्रेम का वरदान पाने के हेतु कुछ और भी उदाहरणों को देते हुये कहते हैं : “(हे’ प्रभु), जैसे कि एक मृग शिकारी के संगीत से स्नेह करता है । एक चात्रिक वर्षा की बूँद की चाहत करता रहता है, इसी प्रकार भक्त जन अपना जीवन सत्संग में बिताना चाहते हैं और प्रभु का भजन एवं ध्यान करके आनंद पाते हैं, उनकी जिह्वा राम के नाम की महिमा का बखान करती है तथा नानक तुम्हारे दर्शन के दान को पाने की याचना करते हैं ”।(९)

अंत में, उपरोक्त उपदेशों का सारांश देते हुये गुरु जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो, वह मनुष्य) जो प्रभु के गुणों का श्रवण, लेखन अथवा गायन करता रहता है (उसकी समस्त इच्छायें पूर्ण हो जाती हैं) वह हरि से सारे फल प्राप्त कर लेता है ।(केवल उसी के लिये तो क्या कहें, ऐसा मनुष्य) अपने समस्त कुल एवं समूह का उद्धार करवा लेता है और वह सभी भवसागर से पार उतर जाते हैं, चूँकि, वह सब साधुसंगति में मिल बैठ कर हरि के यश का गायन करते हैं इसलिए हरि के चरण कमल (उसके पवित्र नाम का ध्यान) उनके लिये एक नैया के समान सिद्ध होते हैं ।हरि, दुष्टदमन, उनके मान सम्मान की रक्षा करते हैं, अतः, नानक ने हरि के द्वार पर शरण ले ली है ”।(१०-२)

इस अष्टपदी का संदेश है कि हमें स्मरण रखना चाहिये कि प्रभु हमारे सभी दुष्कर्मों एवं दोषी प्रवृत्तियों को भली भाँति जानते हैं, अतः, छिपाने की अपेक्षा इन्हें स्वीकार करके उस प्रभु से कृपा की याचना करनी चाहिये । उसकी कृपा को पाने और जन्म मरण के फेरों से बाहर आने के लिये हमें संतजनों की संगति में सच्चे प्रेम और श्रद्धा के साथ प्रभु की महिमा में भजन कीर्तन करना चाहिये । प्रभु के प्रति हमारा प्रेम इतना सत्य एवं निष्ठापूर्ण हो जैसे कि मछली का जल के साथ, एक पत्नी का अपने पति के साथ अथवा एक माँ का अपने पुत्र के प्रति होता है ।सम्भवतः, प्रभु दया करें और अपने कृपालु हस्त को हमारी ओर बढ़ा कर इस मायामोह युक्त सागर में से हमें बाहर निकालें और अपनी अनंत सच्ची संगति में रहने का आशीर्वाद दें ।

ਪੰਨਾ ੮੩੯

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਨਉਮੀ

ਨਾਉ ਨਉਮੀ ਨਵੇ ਨਾਥ ਨਵ ਖੰਡਾ ॥
ਘਟਿ ਘਟਿ ਨਾਥੁ ਮਹਾ ਬਲਵੰਡਾ ॥

ਪੰਨਾ ੮੪੦

ਆਈ ਪੂਤਾ ਇਹੁ ਜਗੁ ਸਾਰਾ ॥
ਪ੍ਰਭ ਆਦੇਸੁ ਆਦਿ ਰਖਵਾਰਾ ॥
ਆਦਿ ਜੁਗਾਦੀ ਹੈ ਭੀ ਹੋਗੁ ॥
ਓਹੁ ਅਪਰੰਪਰੁ ਕਰਣੈ ਜੋਗੁ ॥੧੧॥

पृ-८३९

बिलावलु महला १॥

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

नउमी

नाउ नउमी नवे नाथ नव खँडा ॥
घटि घटि नाथुमहा बलवँडा ॥

पृ-८४०

आई पूता इहु जगु सारा ॥
प्रभ आदेसु आदि रखवारा ॥
आदि जुगादी है भी होगु ॥
ओहु अपरँपरु करणै जोगु ॥११॥

बिलावल महला - १
१ओंकार सतिगुर प्रसादि
नउमी (शुक्ल पक्ष का नवाँ दिवस)

गुरु जी शुक्ल पक्ष के नौवें दिन का उल्लेख करते हुये कहते हैं : " सभी (योगगुरु) नौ नाथ और (सृष्टि) के नव खंडों में रहने वाले सभी जीव अपने महा शक्तिशाली स्वामी (प्रभु) की पूजा करते हैं जो कि घट घट में व्याप्त हैं । यह समस्त संसार एक ही माता (प्रभु) की संतान है । मैं उस प्रभु को नमन करता हूँ जो आदि काल से हम सबके रखवाले हैं । वह आदि काल से भी पहले से हैं, वह अभी भी हैं और आने वाले युगों में भी होंगे । वह अपरम्पार प्रभु सब कुछ करने योग्य हैं (जो कुछ भी वह करना चाहें) "।(११)

ਪੰਨਾ ੮੪੧

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੩ ਵਾਰ ਸਤ ਘਰੁ ੧੦

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਆਦਿਤ ਵਾਰਿ ਆਦਿ ਪੁਰਖੁ ਹੈ ਸੋਈ ॥
ਆਪੇ ਵਰਤੈ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥
ਓਤਿ ਪੋਤਿ ਜਗੁ ਰਹਿਆ ਪਰੋਈ ॥
ਆਪੇ ਕਰਤਾ ਕਰੈ ਸੁ ਹੋਈ ॥
ਨਾਮਿ ਰਤੇ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਹੋਈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਵਿਰਲਾ ਬੂਝੈ ਕੋਈ ॥੧॥

ਹਿਰਦੈ ਜਪਨੀ ਜਪਉ ਗੁਣਤਾਸਾ ॥
ਹਰਿ ਅਗਮ ਅਗੋਚਰੁ ਅਪਰੰਪਰ ਸੁਆਮੀ ਜਨ ਪਗਿ ਲਗਿ ਧਿਆਵਉ ਹੋਇ ਦਾਸਨਿ ਦਾਸਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸੋਮਵਾਰਿ ਸਚਿ ਰਹਿਆ ਸਮਾਇ ॥
ਤਿਸ ਕੀ ਕੀਮਤਿ ਕਹੀ ਨ ਜਾਇ ॥
ਆਖਿ ਆਖਿ ਰਹੇ ਸਭਿ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥
ਜਿਸੁ ਦੇਵੈ ਤਿਸੁ ਪਲੈ ਪਾਇ ॥
ਅਗਮ ਅਗੋਚਰੁ ਲਖਿਆ ਨ ਜਾਇ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਹਰਿ ਰਹਿਆ ਸਮਾਇ ॥੨॥

ਮੰਗਲਿ ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਉਪਾਇਆ ॥
ਆਪੇ ਸਿਰਿ ਸਿਰਿ ਧੰਧੈ ਲਾਇਆ ॥
ਆਪਿ ਬੁਝਾਏ ਸੋਈ ਬੂਝੈ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਦਰੁ ਘਰੁ ਸੂਝੈ ॥
ਪ੍ਰੇਮ ਭਗਤਿ ਕਰੇ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥
ਹਉਮੈ ਮਮਤਾ ਸਬਦਿ ਜਲਾਇ ॥੩॥

ਬੁਧਵਾਰਿ ਆਪੇ ਬੁਧਿ ਸਾਰੁ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਕਰਣੀ ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰੁ ॥
ਨਾਮਿ ਰਤੇ ਮਨੁ ਨਿਰਮਲੁ ਹੋਇ ॥
ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ਹਉਮੈ ਮਲੁ ਖੋਇ ॥
ਦਰਿ ਸਚੈ ਸਦ ਸੋਭਾ ਪਾਏ ॥
ਨਾਮਿ ਰਤੇ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਸੁਹਾਏ ॥੪॥

ਲਾਹਾ ਨਾਮੁ ਪਾਏ ਗੁਰ ਦੁਆਰਿ ॥
ਆਪੇ ਦੇਵੈ ਦੇਵਣਹਾਰੁ ॥
ਜੋ ਦੇਵੈ ਤਿਸ ਕਉ ਬਲਿ ਜਾਈਐ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਆਪੁ ਗਵਾਈਐ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਰਖਹੁ ਉਰ ਧਾਰਿ ॥
ਦੇਵਣਹਾਰੇ ਕਉ ਜੈਕਾਰੁ ॥੫॥

ਵੀਰਵਾਰਿ ਵੀਰ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਏ ॥
ਪ੍ਰੇਤ ਭੂਤ ਸਭਿ ਦੂਜੈ ਲਾਏ ॥
ਆਪਿ ਉਪਾਏ ਕਰਿ ਵੇਖੈ ਵੇਕਾ ॥
ਸਭਨਾ ਕਰਤੇ ਤੇਰੀ ਟੇਕਾ ॥
ਜੀਅ ਜੰਤ ਤੇਰੀ ਸਰਣਾਈ ॥
ਸੋ ਮਿਲੈ ਜਿਸੁ ਲੈਹਿ ਮਿਲਾਈ ॥੬॥

पृ-८४१

बिलावलु महला ३ वार सत घरु १०

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

आदित वारि आदि पुरखु है सोई ॥
आपे वरतै अवरु न कोई ॥
ओति पोति जगु रहिआ परोई ॥
आपे करता करै सु होई ॥
नामि रते सदा सुखु होई ॥
गुरुमुखि विरला बूझै कोई ॥१॥

हिरदै जपनी जपउ गुणतासा ॥
हरि अगम अगोचरु अपरँपर सुआमी जन पगि लगि धिआवउ होइ दासनि दासा ॥१॥रहाउ॥

सोमवारि सचि रहिआ समाइ ॥
तिस की कीमति कही न जाइ ॥
आखि आखि रहे सभि लिव लाइ ॥
जिसु देवै तिसु पलै पाइ ॥
अगम अगोचरु लखिआ न जाइ ॥
गुर कै सबदि हरि रहिआ समाइ ॥२॥

मँगलि माइआ मोहु उपाइआ ॥
आपे सिरि सिरि धँधै लाइआ ॥
आपि बुझाए सोई बूझै ॥
गुर कै सबदि दरु घरु सूझै ॥
प्रेम भगति करे लिव लाइ ॥
हउमै ममता सबदि जलाइ ॥३॥

बुधवारि आपे बुधि सारु ॥
गुरमुखि करणी सबदु वीचारु ॥
नामि रते मनु निरमलु होइ ॥
हरि गुण गावै हउमै मलु खोइ ॥
दरि सचै सद सोभा पाए ॥
नामि रते गुर सबदि सुहाए ॥४॥

लाहा नामु पाए गुर दुआरि ॥
आपे देवै देवणहारु ॥
जो देवै तिस कउ बलि जाईऐ ॥
गुर परसादी आपु गवाईऐ ॥
नानक नामु रखहु उर धारि ॥
देवणहारे कउ जैकारु ॥५॥

वीरवारि वीर भरमि भुलाए ॥
प्रेत भूत सभि दूजै लाए ॥
आपि उपाए करि वेखै वेका ॥
सभना करते तेरी टेका ॥
जीअ जँत तेरी सरणाई ॥
सो मिलै जिसु लैहि मिलाई ॥६॥

ਸੁਕ੍ਰਵਾਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਰਹਿਆ ਸਮਾਈ ॥
ਆਪਿ ਉਪਾਇ ਸਭ ਕੀਮਤਿ ਪਾਈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਹੋਵੈ ਸੁ ਕਰੈ ਬੀਚਾਰੁ ॥
ਸਚੁ ਸੰਜਮੁ ਕਰਣੀ ਹੈ ਕਾਰ ॥
ਵਰਤੁ ਨੇਮੁ ਨਿਤਾਪ੍ਰਤਿ ਪੂਜਾ ॥
ਬਿਨੁ ਬੂਝੇ ਸਭੁ ਭਾਉ ਹੈ ਦੂਜਾ ॥੭॥

ਛਨਿਛਰਵਾਰਿ ਸਉਣ ਸਾਸਤ ਬੀਚਾਰੁ ॥
ਹਉਮੈ ਮੇਰਾ ਭਰਮੈ ਸੰਸਾਰੁ ॥
ਮਨਮੁਖੁ ਅੰਧਾ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ॥
ਜਮ ਦਰਿ ਬਾਧਾ ਚੋਟਾ ਖਾਇ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਪਾਏ ॥
ਸਚੁ ਕਰਣੀ ਸਾਚਿ ਲਿਵ ਲਾਏ ॥੮॥

ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਹਿ ਸੇ ਵਡਭਾਗੀ ॥
ਹਉਮੈ ਮਾਰਿ ਸਚਿ ਲਿਵ ਲਾਗੀ ॥
ਤੇਰੈ ਰੰਗਿ ਰਾਤੇ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਇ॥

ਪੰਨਾ ੮੪੨

ਤੂ ਸੁਖਦਾਤਾ ਲੈਹਿ ਮਿਲਾਇ ॥
ਏਕਸ ਤੇ ਦੂਜਾ ਨਾਹੀ ਕੋਇ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੂਝੈ ਸੋਝੀ ਹੋਇ ॥੯॥

ਪੰਦ੍ਰਹ ਥਿਤੀ ਤੈ ਸਤ ਵਾਰ ॥
ਮਾਹਾ ਰੁਤੀ ਆਵਹਿ ਵਾਰ ਵਾਰ ॥
ਦਿਨਸੁ ਰੈਣਿ ਤਿਵੈ ਸੰਸਾਰੁ ॥
ਆਵਾ ਗਉਣੁ ਕੀਆ ਕਰਤਾਰਿ ॥
ਨਿਹਚਲੁ ਸਾਚੁ ਰਹਿਆ ਕਲ ਧਾਰਿ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੂਝੈ ਕੋ ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰਿ ॥੧੦॥੧॥

सुक्रवारि प्रभु रहिआ समाई ॥
आपि उपाइ सभ कीमति पाई ॥
गुरमुखि होवै सु करै बीचारु ॥
सचु सँजमु करणी है कार ॥
वरतु नेमु निताप्रति पूजा ॥
बिनु बूझे सभु भाउ है दूजा ॥७॥

छनिछरवारि सउण सासत बीचारु ॥
हउमै मेरा भरमै सँसारु ॥
मनमुखु अँधा दूजै भाइ ॥
जम दरि बाधा चोटा खाइ ॥
गुर परसादी सदा सुखु पाए ॥
सचु करणी साचि लिव लाए ॥८॥

सतिगुरु सेवहि से वडभागी ॥
हउमै मारि सचि लिव लागी ॥
तेरै रँगि राते सहजि सुभाइ ॥

पृ-८४२

तू सुखदाता लैहि मिलाइ ॥
एकस ते दूजा नाही कोइ ॥
गुरमुखि बूझै सोझी होइ ॥९॥

पँद्रह थितीं तै सत वार ॥
माहा रुती आवहि वार वार ॥
दिनसु रैणि तिवै सँसारु ॥
आवा गउणु कीआ करतारि ॥
निहचलु साचु रहिआ कल धारि ॥
नानक गुरमुखि बूझै को सबदु वीचारि ॥१०॥१॥

बिलावल महला - ३ वार सात
(सात दिवस) घर-१०

इस शब्द में गुरु जी सप्ताह के सातों दिवसों से जुड़े अंधविश्वासों एवं कर्मकांडों पर टिप्पणी करते हैं और प्रत्येक दिवस के लिये हमें विशेष संदेश देते हैं ।

रविवार –

रविवार पर वह कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), केवल प्रभु ही आदि पुरुष हैं जो समय आरंभ होने से पूर्व ही से विद्यमान हैं ।वह सभी में व्याप्त हैं, कोई और दूसरा नहीं है । जगत के ताने बाने में उन्होंने स्वयं को पिरो रखा है । केवल वही होता है जो सृजनकर्ता स्वयं करते हैं । उनके नाम के ध्यान में रमे रहने से सदा सुख होता है, किन्तु कोई बिरला गुरु का अनुयायी (इस तथ्य को) बूझ पाता है ”।(१)

गुरु जी का स्वयं का स्वभाव कैसा है इस पर वह कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), मैं अपने ह्रदय में (उस प्रभु) के गुणों के भंडार की माला जपता हूँ। वह हरि, अगम, अगोचर और अपरम्पार स्वामी हैं और मैं दासों का दास बन कर भक्त जनों के चरणों में लग (अथवा विनम्र भाव से सेवा) कर (प्रभु का) ध्यान करता हूँ ”।(१-विराम)

सोमवार -

सोमवार का उल्लेख करते हुये गुरु जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो, जो मनुष्य, प्रभु) सच्चे में समाया रहता है (वह समझ जाता है कि प्रभु के) मूल्य अथवा शक्ति को व्यक्त नहीं किया जा सकता । उसमें लीन रहने वाले अनेकों भक्त जनों ने उसकी प्रशंसा में अति प्रेम तथा

मनोयोग से बहुत कुछ (उसकी श्रेष्ठता और प्रभुत्व पर) व्यक्त करने का प्रयत्न किया, परन्तु, अँत में कुछ कह नहीं पाये (क्योंकि), वही केवल (प्रभु की महिमा को) समझ पाता है जिसे स्वयं (प्रभु यह उपहार) देते हैं । हाँ, उस अगम, अगोचर प्रभु को देखना और समझना असंभव है, किन्तु, गुरु के शब्द (वाणी) के द्वारा मनुष्य हरि में समाया रह सकता है (ध्यान में रह सकता है) "।(२)

मँगलवार -

मंगलवार के उल्लेख में गुरु जी हमें माया (सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य) के विषय में बताते हैं जो कि सभी सांसारिक विवादों का स्रोत है । वह हमें कहते हैं कि इस दुविधा का वास्तविक मूल कारण क्या है, अभिप्राय क्या है तथा किस प्रकार से कोई इसके निरर्थक प्रभाव से बाहर निकल सकता है । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), यह स्वयं प्रभु ही हैं जिन्होंने माया के साथ मोह उत्पन्न किया है, उन्होंने स्वयं ही समस्त जीवों को अपने अपने धंधे में लगा रखा है । केवल वही (मनुष्य इस खेल को) समझता है जिसे वह स्वयं समझाते हैं । गुरु के शब्द (वाणी) पर विचार करने से ही प्रभु के घर द्वार की राह दिखाई देती है । जो प्रभु में लीन रहते हैं और प्रेम से उसकी भक्ति करते हैं वह गुरु के शब्द के अनुसार अपने अहम तथा मायामोह को भस्म कर देते हैं "।(३)

बुधवार -

कुछ लोगों का यह अँधविश्वास अथवा मत है कि कोई नया कार्य या व्यापार अथवा कोई यात्रा बुधवार को आरंभ करना चाहिये, क्योंकि, उनके विचारानुसार इस दिवस पर किये गये निर्णय बुद्धि से प्रेरित होते हैं और काम में सफलता प्राप्त होती है । परन्तु, गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, यह प्रभु हैं जो) किसी को सही बुद्धि का दान देते हैं और गुरु का अनुयायी गुरु के शब्द (वाणी) पर विचार करके ही समस्त कार्य करता है । (वह समझता है कि) प्रभु नाम में लीन होने से उसका मन पवित्र होता है और हरि का गुणगान करने से वह अहम का मैल धो लेता है । अत:, वह सच्चे प्रभु के द्वार पर सदा शोभा पाता है । (संक्षेप में), प्रभु नाम के प्रेम में लीन रहने से तथा गुरु के शब्द के अनुसरण से कोई भी (दैवी गुणों को पाकर) सुहावना लगने लगता है "।(४)

किन्तु, गुरु जी हमें प्रभु नाम का लाभ प्राप्त करने के लिये सतर्क करना चाहते हैं, उनका विचार है कि प्रत्येक जन इस अमोलक वस्तु को प्राप्त नहीं कर सकता । वह कहते हैं: "(हे' मेरे मित्रो, किसी को) प्रभु नाम का लाभ गुरु के द्वार से प्राप्त होता है, जिसे देने वाला दाता उसे स्वयं देता है । जो भी (इस नाम रूपी रत्न को) दे, हमें उसी पर बलिहारी होना चाहिये । गुरु की कृपा के द्वारा हमें अपना अहम गँवा देना चाहिये । हे' नानक, प्रभु का नाम हृदय में धारण करके रखो और उस देने वाले दाता (प्रभु) की जय जयकार करो "।(५)

बृहस्पतिवार -

अब गुरु जी उन अँधविश्वासों का उल्लेख करते हैं जिसमें अनेकों लोगों की ऐसी मान्यता जुड़ी हुई होती थी कि बावन विशेष वीर योद्धा एवं अन्य भूत प्रेत हैं जिन्हें हमें पूजा और विशेष कर्मकांड के द्वारा शांत अथवा प्रसन्न रखना है ।परन्तु, गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, सभी) बावन वीर योद्धा भ्रमों में भूले भटके हुये हैं । समस्त भूत प्रेत भी प्रभु के अतिरिक्त दूसरे प्रकार (माया) के प्रेम में संलग्न हैं । उसी (प्रभु) ने सबको रचा है और वही सभी की व्यक्तिगत रूप से देख रेख करता है । हे' सृजनकर्ता, सभी तेरी सहायता पर निर्भर करते हैं । समस्त जीव जंतु तेरी शरण में हैं, पर वही जन तुम्हारे साथ एकाकार हो पाता है जिसे तुम स्वयं अपने साथ मिला लो "।(६)

शुक्रवार -

कुछ कर्मकांड जैसे, व्रत इत्यादि तथा नित्यप्रति की पूजा प्रणालियों पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु सभी में समाये हुये हैं ।स्वयं ही सबको सृजित किया है और वही सबकी योग्यता भी जानते हैं । यदि कोई गुरु का अनुयायी है तो वह इन सब तथ्यों पर विचार करता है ।(ऐसा मनुष्य समझता है कि जीवन आचरण के लिये) सत्य और आत्मनियंत्रण के साथ रहना ही सदाचार है । नित्यप्रति का पूजा पाठ, नियम एवं व्रत आदि सभी कुछ हमें मायामोह की दुविधा में रखते हैं, क्योंकि, हम प्रभु का सार बूझ नहीं पाते "।(७)

शनिवार -

हमारे समाज में पुराने समय से लेकर आज तक अनेकों लोग शनि देवता की विशेष रूप से पूजा करते चले आ रहे हैं, क्योंकि, उनका विचार है कि शनि देवता अति शक्तिशाली हैं और यदि वह क्रोधित हो गये तो कुछ भी दंड दे सकते हैं, अत:, उन्हें शांत रखने तथा मनाने के लिये पूजा की जाती है और ताँबा अथवा ताँबे के सिक्के तथा तेल आदि दान किये जाते हैं । शनि देवता की दशा और प्रभाव जानने के लिये पंडित तथा ज्योतिषियों आदि से भी परामर्श लिये जाते हैं । ऐसी समस्त अँधविश्वासी आस्थायों पर गुरु जी हमें सम्बोधित करते हुये कहते हैं : "(हे' मानव), शनिवार पर ज्योतिष एवं शास्त्रीय विचारों में और कुछ नही केवल अहम भाव है जो संसार में स्वार्थी भ्रम फैला रहा है । अंहकारी मनुष्य (मायामोह में) अँधा होकर दुविधा में फँसा रहता है , अत: , यमराज के द्वार पर बाँधा जा कर दंड पाता है । जो मनुष्य सत्य पर रहकर सदाचारी कर्मों के द्वारा प्रभु में लीन रहता है वह गुरु की कृपा से सदा सुख पाता है "।(८)

इसलिए गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जो लोग सच्चे गुरु की सेवा (गुरु की शिक्षा का अनुसरण) करते हैं वह भाग्यशाली हैं, क्योंकि, उनका मन अहम को नष्ट करके सच्चे प्रभु में लीन रहता है । हे' प्रभु, ऐसे लोग अति सहज भाव से तुम्हारे रंग में रमे हैं और तुम्हारे जैसे सुखों के दाता उन्हें अपने साथ मिला लेते हैं ।(हे' मेरे मित्रो), उस एक (सच्चे प्रभु) के अतिरिक्त और कोई दूसरा नहीं है, परन्तु, कोई गुरु का अनुयायी इस तथ्य पर विचार करके इसे समझ जाता है "।(९)

हमें निरंतर बदलने वाले समस्त प्रकृति के चक्र से क्या सीखना चाहिए जिसमें सभी ऋतुएँ, माह और चन्द्रमा के दोनों पक्ष निहित हैं, इस पर शब्द के अँत में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), पंद्रह दिवस चंद्रमा के शुक्ल पक्ष के, सप्ताह के सात दिवस, माह और ऋतुएँ, दिन तथा रात, बारम्बार आते और जाते रहते हैं, इसी प्रकार संसार में भी (जीवों का आना जाना लगा रहता है) । यह सब आना जाना (जन्म तथा मृत्यु) प्रभु ने ही स्थापित किया है । अपनी शक्ति तथा अनुशासन का उपयोग करके वह अटल प्रभु सभी स्थानों पर व्याप्त हैं । किन्तु, हे' नानक, कोई बिरला ही गुरु का शिष्य गुरु की वाणी पर विचार करके इस तथ्य को बूझ पाता है "।(१०-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि दिवस और रात्रि, चंद्रमा के शुक्ल एवं कृष्ण पक्ष, ऋतुएँ एवं माह तथा संसार में पसरा जीवन सभी कुछ आने और जाने की शाश्वत प्रक्रिया में बँधा हुआ है ।किसी विशेष दिवस अथवा ऋतु के साथ कोई शकुन अथवा अपशकुन नहीं जुड़े हुए हैं, अतः, हमें किसी विशेष कर्मकांड, व्रत अथवा शुभ, अशुभ की चिंता करने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए । सर्वोत्तम स्थिति तो यही है कि हम हर समय गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए प्रभु नाम में प्रेम से लीन रहें । अपनी कृपा से प्रभु हमें अपने साथ किसी दिन जोड़ लेंगे ।

ਪੰਨਾ ੮੪੩

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਮੈ ਮਨਿ ਚਾਉ ਘਣਾ ਸਾਚਿ ਵਿਗਾਸੀ ਰਾਮ ॥
ਮੋਹੀ ਪ੍ਰੇਮ ਪਿਰੇ ਪ੍ਰਭਿ ਅਬਿਨਾਸੀ ਰਾਮ ॥
ਅਵਿਗਤੋ ਹਰਿ ਨਾਥੁ ਨਾਥਹ ਤਿਸੈ ਭਾਵੈ ਸੋ ਥੀਐ ॥
ਕਿਰਪਾਲੁ ਸਦਾ ਦਇਆਲੁ ਦਾਤਾ ਜੀਆ ਅੰਦਰਿ ਤੂੰ ਜੀਐ ॥

ਪੰਨਾ ੮੪੪

ਮੈ ਅਵਰੁ ਗਿਆਨੁ ਨ ਧਿਆਨੁ ਪੂਜਾ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਅੰਤਰਿ ਵਸਿ ਰਹੇ ॥
ਭੇਖੁ ਭਵਨੀ ਹਠੁ ਨ ਜਾਨਾ ਨਾਨਕਾ ਸਚੁ ਗਹਿ ਰਹੇ ॥੧॥

ਭਿੰਨੜੀ ਰੈਣਿ ਭਲੀ ਦਿਨਸ ਸੁਹਾਏ ਰਾਮ ॥
ਨਿਜ ਘਰਿ ਸੂਤੜੀਏ ਪਿਰਮੁ ਜਗਾਏ ਰਾਮ ॥
ਨਵ ਹਾਣਿ ਨਵ ਧਨ ਸਬਦਿ ਜਾਗੀ ਆਪਣੇ ਪਿਰ ਭਾਣੀਆ ॥
ਤਜਿ ਕੂੜੁ ਕਪਟੁ ਸੁਭਾਉ ਦੂਜਾ ਚਾਕਰੀ ਲੋਕਾਣੀਆ ॥
ਮੈ ਨਾਮੁ ਹਰਿ ਕਾ ਹਾਰੁ ਕੰਠੇ ਸਾਚ ਸਬਦੁ ਨੀਸਾਣਿਆ ॥
ਕਰ ਜੋੜਿ ਨਾਨਕੁ ਸਾਚੁ ਮਾਗੈ ਨਦਰਿ ਕਰਿ ਤੁਧੁ ਭਾਣਿਆ ॥੨॥

ਜਾਗੁ ਸਲੋਨੜੀਏ ਬੋਲੈ ਗੁਰਬਾਣੀ ਰਾਮ ॥
ਜਿਨਿ ਸੁਣਿ ਮੰਨਿਅੜੀ ਅਕਥ ਕਹਾਣੀ ਰਾਮ ॥
ਅਕਥ ਕਹਾਣੀ ਪਦੁ ਨਿਰਬਾਣੀ ਕੋ ਵਿਰਲਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੂਝਏ ॥
ਓਹੁ ਸਬਦਿ ਸਮਾਏ ਆਪੁ ਗਵਾਏ ਤ੍ਰਿਭਵਣ ਸੋਝੀ ਸੂਝਏ ॥
ਰਹੈ ਅਤੀਤੁ ਅਪਰੰਪਰਿ ਰਾਤਾ ਸਾਚੁ ਮਨਿ ਗੁਣ ਸਾਰਿਆ ॥
ਓਹੁ ਪੂਰਿ ਰਹਿਆ ਸਰਬ ਠਾਈ ਨਾਨਕਾ ਉਰਿ ਧਾਰਿਆ ॥੩॥

ਮਹਲਿ ਬੁਲਾਇੜੀਏ ਭਗਤਿ ਸਨੇਹੀ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰਮਤਿ ਮਨਿ ਰਹਸੀ ਸੀਝਸਿ ਦੇਹੀ ਰਾਮ ॥
ਮਨੁ ਮਾਰਿ ਰੀਝੈ ਸਬਦਿ ਸੀਝੈ ਤ੍ਰੈ ਲੋਕ ਨਾਥੁ ਪਛਾਣਏ ॥
ਮਨੁ ਡੀਗਿ ਡੋਲਿ ਨ ਜਾਇ ਕਤ ਹੀ ਆਪਣਾ ਪਿਰੁ ਜਾਣਏ ॥
ਮੈ ਆਧਾਰੁ ਤੇਰਾ ਤੂ ਖਸਮੁ ਮੇਰਾ ਮੈ ਤਾਣੁ ਤਕੀਆ ਤੇਰਓ ॥
ਸਾਚਿ ਸੂਚਾ ਸਦਾ ਨਾਨਕ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਝਗਰੁ ਨਿਬੇਰਓ ॥੪॥੨॥

पृ-८४३

बिलावल महला १॥

मै मनि चाउ घणा साचि विगासी राम ॥
मोही प्रेम पिरे प्रभि अबिनासी राम ॥
अविगतो हरि नाथु नाथह तिसै भावै सो थीऐ ॥
किरपालु सदा दइआलु दाताजीआ अँदरि तूँ जीऐ ॥

पृ-८४४

मै अवरु गिआनु न धिआनु पूजा हरि नामु अँतरि वसि रहे ॥
भेखु भवनी हठु न जाना नानका सचु गहि रहे ॥१॥

भिँनड़ी रैणि भली दिनस सुहाए राम ॥
निज घरि सूतड़ीए पिरमु जगाए राम ॥
नव हाणि नव धन सबदि जागी आपणे पिर भाणीआ ॥
तजि कूड़ु कपटु सुभाउ दूजा चाकरी लोकाणीआ ॥
मै नामु हरि का हारु कँठे साच सबदु नीसाणिआ ॥
कर जोड़ि नानकु साचु मागै नदरि करि तुधु भाणिआ ॥२॥

जागु सलोनड़ीए बोलै गुरबाणी राम ॥
जिनि सुणि मँनिअड़ी अकथ कहाणी राम ॥
अकथ कहाणी पदु निरबाणी को विरला गुरमुखि बूझए ॥
ओहु सबदि समाए आपु गवाए त्रिभवण सोझी सूझए ॥
रहै अतीतु अपरँपरि राता साचु मनि गुण सारिआ ॥
ओहु पूरि रहिआ सरब ठाई नानका उरि धारिआ ॥३॥

महलि बुलाइड़ीए भगति सनेही राम ॥
गुरमति मनि रहसी सीझसि देही राम ॥
मनु मारि रीझै सबदि सीझै त्रै लोक नाथु पछाणए ॥
मनु डीगि डोलि न जाइ कत ही आपणा पिरु जाणए ॥
मै आधारु तेरा तू खसमु मेरा मै ताणु तकीआ तेरओ ॥
साचि सूचा सदा नानक गुर सबदि झगरु निबेरओ ॥४॥२॥

बिलावल महला - १

इस शब्द में गुरु जी प्रभु के दर्शन पाने से मिली प्रसन्नता को हमारे साथ साझा करते हुए बताते हैं कि उनके मन में इस परम आन्नद की पवित्र भावना पूर्ण रूप से समा गई है और सम्भवत: उनके इस उदाहरण से हम भी प्रेरित हो सकें।

गुरु जी यहाँ मानव आत्मा की उपमा एक ऐसी नव वधू से देते हैं जो अपने प्रियतम पति से मिलन होने पर अति आनंदित है। वह कहते हैं: "(हे' मेरे मित्रो, अपने प्रियतम से मिलन होने के कारण) मेरे मन में अत्यधिक उमंग है और मैं सच्चे राम (में लीन होकर) प्रसन्नता से खिल उठी हूँ। उस अविनाशी प्रभु के प्रेम में मैं पिरोई जा चुकी हूँ। वह अगम्य हरि, परम स्वामी हैं, उन्हें जो भाता है वही होता है"।

अतः, गुरु जी प्रेम भावना से प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं: " हे' कृपालु, सदैव दयालु दाता, समस्त जीवों के अंदर तुम जीवित हो। मेरे अंदर और कोई ज्ञान नहीं और ना ही मुझे तुम्हारी पूजा एवं ध्यान करना आता है, केवल अँतरमन में हरि (तेरा) नाम ही बसा हुया है। ना मैं जानता हूँ कि कौन सा भेष करूँ, ना भ्रमण ना तीर्थ यात्रा और न कोई हठ योग, नानक तो केवल सच्चे प्रभु नाम की राह पकड़ कर चल पड़े हैं"।(१)

जब प्रभु मानव आत्मा रूपी वधू को निद्रा (सांसारिक धंधों की व्यस्तता) से जगाते हैं, तब क्या होता है इस पर गुरु जी कहते हैं: "(हे' मेरे मित्रो), स्वयं में ही खोई हुयी को जब प्रियतम निद्रा (सांसारिक मायामोह) में से जगाते है तो उसकी रात्रि मनभावनी हो जाती है और

दिन सुहावने हो जाते हैं । तब वह नवविवाहिता गुरु के शब्द (वाणी) द्वारा अपनी (सांसारिक मायामोह की) निद्रा से जाग जाती है और अपने प्रियतम के मन को भाने लगती है ”।

गुरु जी जैसे अपनी वर्तमान मनोस्थिति का वर्णन करते हुए कह रहे हों : “(हे’ मेरे मित्रो, मैंने स्वयं) झूठ, कपटी भावना, सांसारिक दुविधा एवं अन्य लोगों की चाकरी अथवा आधीनता को त्याग दिया है । मैंने हरि के नाम की माला गले में धारण कर ली है और सच्चे के शब्द (प्रभु की महिमा) को अपने जीवन का चिन्ह (ध्येय) बना लिया है । हाथ जोड़ कर (मैं) नानक यही माँगता हूँ कि (हे’ प्रभु), यदि तुम्हें अच्छा लगे तो अपनी कृपा दृष्टि करो और सच्चे नाम का वरदान दो ”।(२)

गुरु जी की इच्छा है कि हम भी उसी शांति एवं आन्नद का अनुभव प्राप्त करें जैसा कि वह स्वयं कर रहे हैं, इसलिये, स्नेहिल भाव से हमसे कह रहे हैं : “ हे’ सुंदर, सलोनी वधू (आत्मा), उठ जाग (सांसारिक मोहमाया की निद्रा से) और सुन कि गुरु की वाणी क्या बोल रही है । जिस (आत्मा रूपी) वधू ने उस अकथनीय हरि की कथा को सुना और उसका पालन किया, वही (प्रभु प्रेम में) लीन हो जाती है । परन्तु, कोई बिरला ही गुरु का शिष्य राम की इस अकथनीय कथा को समझ बूझ कर निर्वाण के पद को प्राप्त कर पाता है । ऐसा मनुष्य गुरु के शब्द (वाणी) में समाने के कारण अहम को गवाँ लेता है तथा तीनों लोकों की बुद्धि उसे प्राप्त होने लगती है । अपरम्पार प्रभु में लीन रहने से वह (सांसारिक मायामोह से) उदासीन रहता है और मन में सच्चे (प्रभु) के गुणों का सार पा लेता है । हे’ नानक, ऐसा मनुष्य मन में पूर्ण रूप से यही धारणा बना लेता है कि प्रभु सर्वव्यापी हैं ”।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं : “(हे’ सुंदर वधू), जिसे भी प्रभु के महल में बुलाया जाता है, उस भक्त को वह स्नेह करते हैं । गुरु के निर्देशों का पालन करने से जो (आत्मा रूपी) वधू (प्रभु से श्रद्धा पूर्वक) प्रेम करती है वह मन में आन्नदित और देही से सुखी एवं सफल रहती है ।अपने मन को वश में रख कर जो वधू (आत्मा) गुरु के शब्द (वाणी) से तृप्त है वह (अपनी आत्मिक निष्ठा की सफलता के कारण) तीनों लोक के स्वामी को पहचान जाती है । तब उसका मन कहीं और नहीं भटकता, ना ही कहीं और लगता है, केवल अपने प्रियतम को ही जानता है । (वह कहती है, हे’ प्रभु), मैं तेरे पर आधारित हूँ, तुम मेरे पति हो, तुम मेरे मान सम्मान हो, गर्व हो । नानक का कथन है कि जो मनुष्य सच्चे (प्रभु के नाम) में सदा लीन है, वह पवित्र है तथा गुरु के शब्द (वाणी) के द्वारा (अपने मन के) अँतरद्वंद को निपटा (शांत कर) लेता है ”।(४-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि जैसे एक नववधू अपने मनमोहक पति के प्रेम और ध्यान में निरंतर मग्न रहती है, उसी की भाँति यदि हम भी प्रभु से प्रेम और उसका ध्यान करें तो वह हमें अपने साथ जुड़ने का आशीर्वाद देंगे और फिर हम ऐसी शांति एवं आनंद का अनुभव करेंगे जैसे कि हमारा सम्पूर्ण जीवन सफल हो गया हो और हमने संसार के समस्त कष्टों, उलझनों और कठिनाइयों से पूर्ण रूप से मुक्ति प्राप्त कर ली हो । प्रभु से ऐसा प्रेम उत्पन्न करने और उसके साथ एकरूप होने का आन्नद प्राप्त करने के लिये हमें गुरु की शिक्षा एवं आदेशों (गुरु ग्रंथ साहिब में निहित वाणी) का श्रवण तथा मनन कर प्रभु नाम का ध्यान सच्ची श्रद्धा और प्रेम से करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੮੪੫

ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ਛੰਤ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਮੰਗਲ ਸਾਜੁ ਭਇਆ ਪ੍ਰਭੁ ਅਪਨਾ ਗਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਅਬਿਨਾਸੀ ਵਰੁ ਸੁਣਿਆ ਮਨਿ ਉਪਜਿਆ ਚਾਇਆ ਰਾਮ ॥
ਮਨਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਲਾਗੈ ਵਡੈ ਭਾਗੈ ਕਬ ਮਿਲੀਐ ਪੂਰਨ ਪਤੇ ॥
ਸਹਜੇ ਸਮਾਈਐ ਗੋਵਿੰਦੁ ਪਾਈਐ ਦੇਹੁ ਸਖੀਏ ਮੋਹਿ ਮਤੇ ॥
ਦਿਨੁ ਰੈਣਿ ਠਾਢੀ ਕਰਉ ਸੇਵਾ ਪ੍ਰਭੁ ਕਵਨ ਜੁਗਤੀ ਪਾਇਆ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਕਰਹੁ ਕਿਰਪਾ ਲੈਹੁ ਮੋਹਿ ਲੜਿ ਲਾਇਆ ॥੧॥

ਭਇਆ ਸਮਾਹੜਾ ਹਰਿ ਰਤਨੁ ਵਿਸਾਹਾ ਰਾਮ ॥
ਖੋਜੀ ਖੋਜਿ ਲਧਾ ਹਰਿ ਸੰਤਨ ਪਾਹਾ ਰਾਮ ॥
ਮਿਲੇ ਸੰਤ ਪਿਆਰੇ ਦਇਆ ਧਾਰੇ ਕਥਹਿ ਅਕਥ ਬੀਚਾਰੋ ॥
ਇਕ ਚਿਤਿ ਇਕ ਮਨਿ ਧਿਆਇ ਸੁਆਮੀ ਲਾਇ ਪ੍ਰੀਤਿ ਪਿਆਰੋ ॥
ਕਰ ਜੋੜਿ ਪ੍ਰਭ ਪਹਿ ਕਰਿ ਬਿਨੰਤੀ ਮਿਲੈ ਹਰਿ ਜਸੁ ਲਾਹਾ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਦਾਸੁ ਤੇਰਾ ਮੇਰਾ ਪ੍ਰਭੁ ਅਗਮ ਅਥਾਹਾ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੮੪੬

ਸਾਹਾ ਅਟਲੁ ਗਣਿਆ ਪੂਰਨ ਸੰਜੋਗੋ ਰਾਮ ॥
ਸੁਖਹ ਸਮੂਹ ਭਇਆ ਗਇਆ ਵਿਜੋਗੋ ਰਾਮ ॥
ਮਿਲਿ ਸੰਤ ਆਏ ਪ੍ਰਭ ਧਿਆਏ ਬਣੇ ਅਚਰਜ ਜਾਞੀਆਂ ॥
ਮਿਲਿ ਇਕਤ੍ਰ ਹੋਏ ਸਹਜਿ ਢੋਏ ਮਨਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਉਪਜੀ ਮਾਞੀਆ ॥
ਮਿਲਿ ਜੋਤਿ ਜੋਤੀ ਓਤਿ ਪੋਤੀ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸਭਿ ਰਸ ਭੋਗੋ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਸਭ ਸੰਤਿ ਮੇਲੀ ਪ੍ਰਭੁ ਕਰਣ ਕਾਰਣ ਜੋਗੋ ॥੩॥

ਭਵਨੁ ਸੁਹਾਵੜਾ ਧਰਤਿ ਸਭਾਗੀ ਰਾਮ ॥
ਪ੍ਰਭੁ ਘਰਿ ਆਇਅੜਾ ਗੁਰ ਚਰਣੀ ਲਾਗੀ ਰਾਮ ॥
ਗੁਰ ਚਰਣ ਲਾਗੀ ਸਹਜਿ ਜਾਗੀ ਸਗਲ ਇਛਾ ਪੁੰਨੀਆ ॥
ਮੇਰੀ ਆਸ ਪੂਰੀ ਸੰਤ ਧੂਰੀ ਹਰਿ ਮਿਲੇ ਕੰਤ ਵਿਛੁੰਨਿਆ ॥
ਆਨੰਦ ਅਨਦਿਨੁ ਵਜਹਿ ਵਾਜੇ ਅਹੰ ਮਤਿ ਮਨ ਕੀ ਤਿਆਗੀ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਸਰਣਿ ਸੁਆਮੀ ਸੰਤਸੰਗਿ ਲਿਵ ਲਾਗੀ ॥੪॥੧॥

पृ-८४५

बिलावलु महला ५ छँत

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

मँगल साजु भइआ प्रभु अपना गाइआ राम ॥
अबिनासी वरु सुणिआ मनि उपजिआ चाइआ राम ॥
मनि प्रीति लागै वडै भागै कब मिलिऐ पूरन पते ॥
सहजे समाईऐ गोविंदु पाईऐ देहु सखीए मोहि मते ॥
दिनु रैणि ठाढी करउ सेवा प्रभु कवन जुगती पाइआ ॥
बिनवँति नानक करहु किरपा लैहु मोहि लड़ि लाइआ ॥१॥

भइआ समाहड़ा हरि रतनु विसाहा राम ॥
खोजी खोजि लधा हरि सँतन पाहा राम ॥
मिले सँत पिआरे दइआ धारे कथहि अकथ बीचारो ॥
इक चिति इक मनि धिआइ सुआमी लाइ प्रीति पिआरो ॥
कर जोड़ि प्रभ पहि करि बिनँती मिलै हरि जसु लाहा ॥
बिनवँति नानक दासु तेरामेरा प्रभु अगम अथाहा ॥२॥

पृ-८४६

साहा अटल गणिआ पूरन सँजोगो राम ॥
सुखह समूह भइआ गइआ विजोगो राम ॥
मिलि सँत आए प्रभ धिआए बणे अचरज जाञीआं ॥
मिलि इकत्र होए सहजि ढोए मनि प्रीति उपजी माञीआ ॥
मिलि जोति जोती ओति पोती हरि नामु सभि रस भोगो ॥
बिनवँति नानक सभ सँति मेली प्रभु करण कारण जोगो ॥३॥

भवनु सुहावड़ा धरति सभागी राम ॥
प्रभु घरि आइअड़ा गुर चरणी लागी राम ॥
गुर चरण लागी सहजि जागी सगल इछा पुँनीआ ॥
मेरी आस पूरी सँत धूरी हरि मिले कँत विछुँनिआ ॥
आनँद अनदिनु वजहि वाजे अहँ मति मन की तिआगी ॥
बिनवँति नानक सरणि सुआमी सँतसँगि लिव लागी ॥४॥१॥

बिलावल महला - ५ छँत
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

शताब्दियों से सामान्यतः भारतीय स्त्री सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पुरुष वर्ग पर पूर्ण रूप से आश्रित रहती रही है। ऐसी सामाजिक व्यवस्था में विवाह योग्य युवकों और युवतियों के लिये उपयुक्त वर एवं वधू की भाल के लिये परिवारों के द्वारा अधिकृत कोई एक बिचौलिया, जैसे कि पंडित, पुजारी अथवा, नाई आस पास के गाँवों में भेजा जाता था। इस स्थिति में युवतियों के मन में यह जानने की अति उत्सुकता होती थी कि किस प्रकार का वर उनके लिए ढूँढा गया है और बहुधा अपने भावी पति को देखने तथा मिलने के लिए इच्छुक रहती थीं।

इस शब्द में गुरु जी स्वयं को ऐसी ही एक उत्सुक युवती की उपमा देते हैं, जिसे जब यह शुभ समाचार मिलता है कि प्रभु उसके पति के रूप में चुने गये हैं, तब वह प्रसन्न होकर अपनी एक ऐसी सखी (गुरु) को यह समाचार देने तथा उससे कुछ परामर्श लेने के लिये उसके पास जाती है जो कि पहले से ही प्रभु (रूपी पति) की ब्याहता है और उसके साथ एकरूप है।

गुरु जी उपरोक्त उपमा के अनुसार कहते हैं : "(हे' मेरे मित्र, जब मैंने), अपने प्रभु की महिमा का गायन किया तब वह स्थिति अति मँगलमयी बन गयी। जब मैंने सुना कि मेरा वर अविनाशी है तब मेरे मन में उसे (देखने के लिये) अत्यंत उत्सुकता उपजने लगी। सौभाग्य से जब से मन में उसके लिये प्रेम हो गया है तब से यही उत्कंठा होती है कि कब उस पूर्ण पति से मिलन होगा। (फिर मैंने कहा) हे' सखी, मुझे

ऐसी मति दो जिसके द्वारा मैं सहज रूप से अपने गोविंद में समा सकूँ और उसे प्राप्त कर पाऊँ । मैं दिन रात तुम्हारी सेवा में खड़ी रहूँगी, परन्तु, तुम मुझे बताओ कि किस युक्ति के द्वारा तुमने प्रभु को पाया । नानक विनती करते हैं और कहते हैं, हे' प्रभु, दया करके मुझे अपने आँचल के साथ लगा कर रखो "।(१)

अब गुरु जी प्रभु की तुलना संसार के सबसे मूल्यवान रत्न से करते हुये व्यक्त करते हैं कि कैसे उन्हें यह रत्न मिला और इस महान खोज के पश्चात वह किस प्रकार के आनंद का अनुभव कर रहे हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), हरि रूपी रत्न को पाकर मेरे मन में बहुत आनंद उमड़ रहा है । खोजी जनों ने उस हरि को सँतो की सँगति में से खोज निकाला है, क्योंकि, जब प्रिय दयाधारी संत आपस में मिल बैठकर उस (प्रभु) की अकथनीय कथायें एवं विचार करते हैं तब वह तुम्हारे हृदय को एकाग्र दशा में लाकर प्रिय स्वामी (प्रभु) के ध्यान तथा प्रेम में रमा देते हैं । करबद्ध होकर प्रभु से विनती करो और कहो कि तुम्हें प्रभु का यशगान करने का लाभ मिला रहे । नानक कहते हैं, हे' मेरे प्रभु, तुम अगम्य हो, अथाह हो, मैं तुम्हारा दास विनती करता हूं (कि अपने नाम के ध्यान का वरदान दो)"।(२)

अब गुरु जी इस अनूठे विवाह के दृष्य का विवरण देते हैं जिसमें मानव आत्मा एक वधू के रूप में है प्रभु उसके पति हैं और संतजन बाराती हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जब प्रभु के साथ (वधू का) पूर्ण रूप से संयोग होने वाला होता है तब विवाह का महूर्त अटल रूप में (अर्थात पक्का) हो जाता है, चारों ओर सामूहिक रूप से सुख व्याप्त होता है, तथा (आत्मा रूपी वधू का) वियोग (परमात्मा से) समाप्त हो जाता है । जब प्रभु का ध्यान करते रहने पर मनुष्य संतजनों से मिलता है तब वह सब एक अनूठी बारात के बाराती बन जाते हैं । सभी मिलकर एवं एकत्र होकर सहजभाव से वधू के घर (आत्मा) में आते हैं और सभी मित्र तथा सम्बंधियों में (मानव आत्मा के रोम रोम में प्रभु के लिये) प्रेम अथवा प्रीत का उत्सर्जन होता है । तब (मानव आत्मा) की ज्योति (प्रभु की) ज्योति के साथ ओत प्रोत हो जाती और आत्मा रूपी वधू प्रभु नाम रूपी रस का आनंद पाती है । नानक की विनती है कि केवल संतो ने ही (आत्मा रूपी वधू को प्रभु से) मिलाया है और केवल प्रभु ही इन सभी कारणों के कारण बनने के योग्य हैं "।(३)

प्रभु से मिलन के पश्चात प्राप्त हुये वरदान एवं आनंद को हमसे साझा करते हुये गुरु जी शब्द के अंत में यह इंगित करते हैं कि हम भी कैसे इस प्रकार के आनंद को पा सकते हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जब मैं अपने गुरु के चरणों की शरण में गया तब मेरे प्रभु मेरे घर (हृदय) में आये और अब यह सम्पूर्ण भवन (मन) सुंदर अथवा सुहावना हो गया है और यह धरती (समस्त तन) भी सौभाग्यशाली हो गयी है । हाँ, जब मैंने गुरु के चरणों में शरण ली (गुरु की वाणी पर विचार किया) तब मैं सहज भाव से जाग उठी (संसार के झूठे माया मोह से सतर्क हो गयी) और मेरी समस्त इच्छायें सम्पन्न हो गयीं । संतों की चरण धूलि (विनम्र सेवा अथवा आज्ञापालन) से मेरी आशायें फलीभूत हुयीं और मुझे अपने पति हरि मिल गये जिनसे मैं बिछुड़ी हुयी थी । अब दिन और रात मेरे मन में आनंदमयी संगीत बजता रहता है और मन की अहम भावना का त्याग कर दिया है । नानक विनती करते हैं कि संतों की संगति में स्वामी (प्रभु) की शरण लेकर उनका मन ध्यान में लीन रहता है "।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि एक अल्हड़ नवयौवना वधू की भाँति हमें स्वयं को गुरु के आदेशों के साथ सजाना सँवारना चाहिये और अहम को त्याग कर श्रद्धा तथा प्रेम भाव से प्रभु नाम में लीन रहना चाहिये । इस प्रकार संभव है कि प्रभु एक दिन स्वयं एक सुंदर एवं गुणवान वर की भाँति आयें और हमें अपना बना कर अपने अनंत सत्य रूप में समाये रहने का वरदान दे दें ।

ਪੰਨਾ ੮੪੭	**पृ-८४७**
ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ ੫ ਛੰਤ ਮੰਗਲ	**बिलावलु महला ५ छँत मँगल**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਸਲੋਕੁ ॥	**सलोक ॥**
ਸੁੰਦਰ ਸਾਂਤਿ ਦਇਆਲ ਪ੍ਰਭ ਸਰਬ ਸੁਖਾ ਨਿਧਿ ਪੀਉ ॥	सुँदर सांति दइआल प्रभ सरब सुखा निधि पीउ ॥
ਪੰਨਾ ੮੪੮	**पृ-८४८**
ਸੁਖ ਸਾਗਰ ਪ੍ਰਭ ਭੇਟਿਐ ਨਾਨਕ ਸੁਖੀ ਹੋਤ ਇਹੁ ਜੀਉ ॥੧॥	सुख सागर प्रभ भेटिऐ नानक सुखी होत इहु जीउ ॥१॥
ਛੰਤ ॥	**छँत ॥**
ਸੁਖ ਸਾਗਰ ਪ੍ਰਭੁ ਪਾਈਐ ਜਬ ਹੋਵੈ ਭਾਗੋ ਰਾਮ ॥ ਮਾਨਨਿ ਮਾਨੁ ਵਞਾਈਐ ਹਰਿ ਚਰਣੀ ਲਾਗੋ ਰਾਮ ॥ ਛੋਡਿ ਸਿਆਨਪ ਚਾਤੁਰੀ ਦੁਰਮਤਿ ਬੁਧਿ ਤਿਆਗੋ ਰਾਮ ॥ ਨਾਨਕ ਪਉ ਸਰਣਾਈ ਰਾਮ ਰਾਇ ਥਿਰੁ ਹੋਇ ਸੁਹਾਗੋ ਰਾਮ ॥੧॥	सुख सागर प्रभु पाईऐ जब होवै भागो राम ॥ माननि मानु वञाईऐ हरि चरणी लागो राम ॥ छोडि सिआनप चातुरी दुरमति बुधि तिआगो राम ॥ नानक पउ सरणाई राम राइ थिरु होइ सुहागो राम ॥१॥
ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਤਜਿ ਕਤ ਲਾਗੀਐ ਜਿਸੁ ਬਿਨੁ ਮਰਿ ਜਾਈਐ ਰਾਮ ॥ ਲਾਜ ਨ ਆਵੈ ਅਗਿਆਨ ਮਤੀ ਦੁਰਜਨ ਬਿਰਮਾਈਐ ਰਾਮ ॥ ਪਤਿਤ ਪਾਵਨ ਪ੍ਰਭੁ ਤਿਆਗਿ ਕਰੇ ਕਹੁ ਕਤ ਠਹਰਾਈਐ ਰਾਮ ॥ ਨਾਨਕ ਭਗਤਿ ਭਾਉ ਕਰਿ ਦਇਆਲ ਕੀ ਜੀਵਨ ਪਦੁ ਪਾਈਐ ਰਾਮ ॥੨॥	सो प्रभु तजि कत लागीऐ जिसु बिनु मरि जाईऐ राम ॥ लाज न आवै अगिआन मती दुरजन बिरमाईऐ राम ॥ पतित पावन प्रभु तिआगि करे कहु कत ठहराईऐ राम ॥ नानक भगति भाउ करि दइआल की जीवन पदु पाईऐ राम ॥२॥
ਸ੍ਰੀ ਗੋਪਾਲੁ ਨ ਉਚਰਹਿ ਬਲਿ ਗਈਏ ਦੁਹਚਾਰਣਿ ਰਸਨਾ ਰਾਮ ॥ ਪ੍ਰਭੁ ਭਗਤਿ ਵਛਲੁ ਨਹ ਸੇਵਹੀ ਕਾਇਆ ਕਾਕ ਗ੍ਰਸਨਾ ਰਾਮ ॥ ਭ੍ਰਮਿ ਮੋਹੀ ਦੂਖ ਨ ਜਾਣਹੀ ਕੋਟਿ ਜੋਨੀ ਬਸਨਾ ਰਾਮ ॥ ਨਾਨਕ ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਅਵਰੁ ਜਿ ਚਾਹਨਾ ਬਿਸਟਾ ਕ੍ਰਿਮ ਭਸਮਾ ਰਾਮ ॥੩॥	स्री गोपालु न उचरहि बलि गईए दुहचारिण रसना राम ॥ प्रभु भगति वछलु नह सेवही काइआ काक ग्रसना राम ॥ भ्रमि मोही दूख न जाणही कोटि जोनी बसना राम ॥ नानक बिनु हरि अवरु जि चाहना बिसटा क्रिम भसमा राम ॥३॥
ਲਾਇ ਬਿਰਹੁ ਭਗਵੰਤ ਸੰਗੇ ਹੋਇ ਮਿਲੁ ਬੈਰਾਗਨਿ ਰਾਮ ॥ ਚੰਦਨ ਚੀਰ ਸੁਗੰਧ ਰਸਾ ਹਉਮੈ ਬਿਖੁ ਤਿਆਗਨਿ ਰਾਮ ॥ ਈਤ ਊਤ ਨਹ ਡੋਲੀਐ ਹਰਿ ਸੇਵਾ ਜਾਗਨਿ ਰਾਮ ॥ ਨਾਨਕ ਜਿਨਿ ਪ੍ਰਭੁ ਪਾਇਆ ਆਪਣਾ ਸਾ ਅਟਲ ਸੁਹਾਗਨਿ ਰਾਮ ॥ ੪॥੧॥੪॥	लाइ बिरहु भगवँत सँगे होइ मिलु बैरागनि राम ॥ चँदन चीर सुगँध रसा हउमै बिखु तिआगनि राम ॥ ईत ऊत नह डोलीऐ हरि सेवा जागनि राम ॥ नानक जिनि प्रभु पाइआ आपणा सा अटल सुहागनि राम ॥४॥१॥४॥

बिलावल महला - ५ छँत मँगल
१ओंकार सतिगुर प्रसादि
सलोक

इस शब्द में गुरु जी हमें यह व्यक्त करते हैं कि हमारे सुंदर मनोहर प्रभु कितने दयालु और शांति के दाता हैं और जब हम उनके साथ एकरूप हो जाते हैं तब किस प्रकार के आनंद और सुख का अनुभव करते हैं। वह हमें उन दुखों एवं कठिनाइयों से भी अवगत कराते हैं जो मरणोपरांत हमारी आत्मा को झेलने पड़ सकते हैं यदि हम अपने जीवन में प्रभु नाम का ध्यान ना करने के कारण उसके साथ जुड़ने के अयोग्य रहते हैं।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), वह प्रभु सुंदर हैं, शान्ति के प्रतीक हैं और दयालु हैं, वह प्रियतम समस्त सुखों के भंडार हैं। नानक कहते हैं, उस सुखों के सागर प्रभु से भेंट अथवा दर्शन होने पर हमारी आत्मा सुख पाती है "।(१)

छँत -

गुरु जी जैसे स्वयं अपनी आत्मा को (और हमें भी) सम्बोधित करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मन), केवल जब हमारे भाग्य में होगा,

तभी हमें प्रभु रूपी सुखों का सागर प्राप्त हो पायेगा । अत:, हे' मेरे अहंकारी मन, अपने अंहकार को नष्ट करके हरि के चरणों (उसके नाम के ध्यान) में लग जाओ ।अपनी समझ और चतुराई को छोड़ दुर्मति अथवा अवगुणी बुद्धि का त्याग कर दो । हे' नानक, उस महान राम की शरण में जाकर रहो जिससे कि तुम्हारा सुहाग (मिलन) उसके साथ स्थिर हो जाये ”।(१)

प्रभु के नाम पर अपने मन को एकाग्र ना कर सकने अथवा, इधर उधर भटक जाने पर गुरु जी उसे क्रोधित भाव से सम्बोधित करते हुये कहते हैं : “ (हे' मेरे मन, मुझे बता) वह प्रभु जिसको छोड़ कर हम मर सकते हैं, उसका त्याग करके और किसके पास सहायता के लिये जा सकते हैं ? हे' अज्ञानी, उन्मत्त आत्मा, तुम्हें लज्जा नहीं आती जो तुम दुर्जनों की संगति में भ्रमित होकर भटकटी फिरती हो ? उस पतित पावन को त्याग कर तुम कहो, कहाँ पर कोई ठहराव (सुख और शान्ति) पा सकती हो ? हे' नानक, तुम दयालु प्रभु के प्रति भक्ति भावना रखो (क्योंकि, केवल इसी राह पर चल कर) हम जीवन में परम पद प्राप्त करते हैं ”।(२)

गुरु जी अब अपनी जिह्वा को भी अपराधी ठहराने से नहीं चूकते, वह कहते हैं : “ हे' मेरी दुराचारिणी रसना, तू जल क्यों नहीं जाती जो श्री गोपाल (धरती की पालना करने वाले) के नाम का उच्चारण नहीं कर रही हो । यदि तुम, भक्तों से प्रेम करने वाले प्रभु की सेवा (पूजा एवं ध्यान) नहीं कर रहे हो तो कौवे की भाँति मृत्यु तुम्हारी काया (शरीर को नोच नोच कर) खायेगी । भ्रमों में मोहित रह कर तुम उन दुखों एवं कष्टों को नहीं समझ पा रहे हो जो तुम्हें अगले करोड़ों जन्मों में वास करते रहने से झेलने पड़ेंगे ।(संक्षेप में), हे' नानक, हरि की अपेक्षा, कोई अन्य इच्छा अथवा चाह रखने से जीवन विष्ठा के कीड़े के समान है जो उसी में भस्म हो जाता है ।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं : “ (हे' मेरी आत्मा), संसार से बैराग लेकर ईश्वर के प्रेम में स्वयं को विलीन कर उससे जाकर मिलो । चंदन, सुंदर वस्त्र एवं सुगंधित प्रसाधनों से श्रृँगार, स्वाद भोजन के रस तथा अंहकार का विष आदि, सबका त्याग करो । हमें इधर उधर भटकने की अपेक्षा हरि की सेवा और भक्ति में सतर्कता से लगे रहना चाहिये । हे' नानक, जिसने प्रभु को (वर के रूप में) अपना लिया है वह (वधू रूपी आत्मा) चिरसोहागिन बन जाती है ”।(४-१-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें सदा यह स्मरण रखना चाहिये कि प्रभु सुख एवं आनंद के सागर हैं और यदि हम उनकी संगति का आनंद पाना चाहते हैं तो हमें मायामोह की प्रवृत्ति, दुर्जनों से मित्रता और संसार की झूठी क्रीड़ा एवं विलास को त्याग कर प्रभु नाम का ध्यान करने के लिये सदा जागरूक और तत्पर रहना चाहिये । एक दिन वह दयालु प्रभु हमें अपने साथ जोड़ लेंगे और हम उसकी अनंत रूप से सच्ची एवं स्नेहमयी सँगति का आनंद पायेंगे ।

ਪੰਨਾ ੮੪੯

ਸਲੋਕ ਮਃ ੩ ॥

ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਬਿਲਾਵਲੁ ਨ ਹੋਵਈ ਮਨਮੁਖਿ ਥਾਇ ਨ ਪਾਇ ॥
ਪਾਖੰਡਿ ਭਗਤਿ ਨ ਹੋਵਈ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਨ ਪਾਇਆ ਜਾਇ ॥
ਮਨਹਠਿ ਕਰਮ ਕਮਾਵਣੇ ਥਾਇ ਨ ਕੋਈ ਪਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਪੁ ਬੀਚਾਰੀਐ ਵਿਚਹੁ ਆਪੁ ਗਵਾਇ ॥
ਆਪੇ ਆਪਿ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਹੈ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮੁ ਵਸਿਆ ਮਨਿ ਆਇ ॥
ਜੰਮਣੁ ਮਰਣਾ ਕਟਿਆ ਜੋਤੀ ਜੋਤਿ ਮਿਲਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਬਿਲਾਵਲੁ ਕਰਿਹੁ ਤੁਮ੍ਹ ਪਿਆਰਿਹੋ ਏਕਸੁ ਸਿਉ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥
ਜਨਮ ਮਰਣ ਦੁਖੁ ਕਟੀਐ ਸਚੇ ਰਹੈ ਸਮਾਇ ॥
ਸਦਾ ਬਿਲਾਵਲੁ ਅਨੰਦੁ ਹੈ ਜੇ ਚਲਹਿ ਸਤਿਗੁਰ ਭਾਇ ॥
ਸਤਸੰਗਤੀ ਬਹਿ ਭਾਉ ਕਰਿ ਸਦਾ ਹਰਿ ਕੇ ਗੁਣ ਗਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਸੇ ਜਨ ਸੋਹਣੇ ਜਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਸਭਨਾ ਜੀਆ ਵਿਚਿ ਹਰਿ ਆਪਿ ਸੋ ਭਗਤਾ ਕਾ ਮਿਤੁ ਹਰਿ ॥
ਸਭੁ ਕੋਈ ਹਰਿ ਕੈ ਵਸਿ ਭਗਤਾ ਕੈ ਅਨੰਦੁ ਘਰਿ ॥
ਹਰਿ ਭਗਤਾ ਕਾ ਮੇਲੀ ਸਰਬਤ ਸਉ ਨਿਸੁਲ ਜਨ ਟੰਗ ਧਰਿ ॥
ਹਰਿ ਸਭਨਾ ਕਾ ਹੈ ਖਸਮੁ ਸੋ ਭਗਤ ਜਨ ਚਿਤਿ ਕਰਿ ॥
ਤੁਧੁ ਅਪੜਿ ਕੋਇ ਨ ਸਕੈ ਸਭਝਖਿ ਝਖਿ ਪਵੈ ਝੜਿ ॥੨॥

पृ-८४९

सलोक महला ३॥

दूजै भाइ बिलावलु न होवई मनमुखि थाइ न पाइ ॥
पाखँडि भगति न होवई पारब्रहमु न पाइआ जाइ ॥
मनहठि करम कमावणे थाइ न कोई पाइ ॥
नानक गुरमुखि आपु बीचारीऐ विचहु आपु गवाइ ॥
आपे आपि पारब्रहमु है पारब्रहमु वसिआ मनि आइ ॥
जँमणु मरणा कटिआ जोती जोति मिलाइ ॥१॥

महला ३॥

बिलावलु करिहु तुम् पिआरिहो एकसु सिउ लिव लाइ ॥
जनम मरण दुखु कटीऐ सचे रहै समाइ ॥
सदा बिलावलु अँनदु है जे चलहि सतिगुर भाइ ॥
सतसँगती बहि भाउ करि सदा हरि के गुण गाइ ॥
नानक से जन सोहणे जि गुरमुखि मेलि मिलाइ ॥२॥

पउड़ी ॥

सभना जीआ विचि हरि आप सो भगता का मितु हरि ॥
सभु कोई हरि कै वसि भगता कै अनँदु घरि ॥
हरि भगता का मेली सरबत सउ निसुल जन टँग धरि ॥
हरि सभना का है खसमु सो भगत जन चिति कर ॥
तुधु अपड़ि कोइ न सकै सभझखि झखि पवै झड़ि ॥२॥

सलोक महला - ३

इस शब्द में गुरु जी धन और लोकप्रियता अर्जित करने की अपेक्षा, सच्चे प्रेम और श्रद्धा के साथ प्रभु की महिमा का गायन करने की आवश्यकता पर अधिक दृढ़ हैं। बहुधा, आज के इस युग में अनेकों धार्मिक संस्थानों और गिरजाघरों में भजनों के गायक तथा गुरुद्वारों में कीर्तन करने वाले रागी जत्थे, धन एवं लोकप्रियता की आकाँक्षा अधिक रखते हैं।

धन अथवा मायामोह के हेतु किये गये प्रभु के गुणगान पर गुरु जी सीधा प्रहार करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), कोई भी बिलावल (राग, आत्मिक आनंद के लिये) स्वीकृत नहीं है यदि वह किसी अन्य भावना (प्रभु की अपेक्षा, सांसारिक सम्पदा आदि की इच्छा) के अंतर्गत गाया जाये, ऐसा करने वाला अंहकारी जन (प्रभु के घर में) स्थान नहीं पाता। पाखंड के साथ सम्पन्न की गयी भक्ति एवं पूजा सच्ची नहीं और इसके द्वारा पारब्रहम को नहीं प्राप्त किया जा सकता। (प्रभु से सच्चा प्रेम किये बिना) अपने मन के हठ और दंभ के द्वारा किये गये कर्म कोई भी स्थान नहीं पाते अथवा (प्रभु के घर में) उन सबका कोई लाभ नहीं। अत:, हे' नानक, अपने अँतरमन का दंभ गवाँ कर, स्वयं पर हमें विचार करना चाहिये (कि हमारे कर्म प्रभु की सच्ची सेवा में हैं या फिर हम केवल कर्मकांड ही कर रहे हैं)। इस प्रकार से, सर्वव्यापी प्रभु स्वयं ही हमारे हृदय में आकर बसने लगते हैं और हमारे जन्म मरण की श्रृंखला को काट देते हैं तथा हमारी ज्योति (आत्मा) का मिलन परम ज्योति (परमात्मा) से हो जाता है"।(१)

महला - ३

अब गुरु जी हमें आमंत्रित करते हुये कहते हैं : " हे' मेरे प्रिय मित्रो, तुम सब एक ही प्रभु में लीन होकर बिलावल (मंगलमयी राग) का गायन करो, (ऐसे करने से किसी के भी) जन्म मरण के दुख संताप कट जाते हैं और वह सच्चे प्रभु में समाया रहता है। जो भी कोई सच्चे गुरु की भावना के अनुसार अपने जीवन के आचरण का संचालन करते हैं, वह सदैव ही बिलावल राग के जैसा सुख तथा आनंद का अनुभव करते हैं। (प्रभु के सच्चे भक्तजनों की) संगति में बैठ कर सच्ची भावना के साथ वह सदा हरि के गुणों का गायन करते हैं। हे' नानक, वह भक्त जन अति सुंदर लगते हैं जिन्हें (प्रभु सर्वप्रथम) गुरु से मिलाते हैं और फिर स्वयं से मिला लेते हैं"।(२)

पउड़ी -

अब, गुरु जी प्रभु के कुछ विशेष गुणों की चर्चा करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जो हरि स्वयं सभी जीवों में व्याप्त हैं, वही हरि अपने भक्तजनों के मित्र भी हैं। सभी कोई हरि के वश में है और उनके भक्तों के हृदय में आनंद का वास है। हरि सभी जगह भक्तजनों के सखा हैं, अतः, ऐसे जन सुख शांति से (मन में बिना किसी चिंता के) पैर पसार कर सोते हैं। भक्तजन सदैव अपने मन में यही भावना रखते हैं कि हरि सबके स्वामी हैं। (और वह कहते हैं कि) हे' प्रभु कोई भी तुम्हारे (शक्ति तथा गुणों) तक नहीं पहुँच सकता, (यदि कोई प्रयास भी करे तो) वह सब एक के बाद एक झख मार मार कर नष्ट हो जाते हैं"।(२)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि यदि हम वास्तविक रूप से जीवन में आनंद और सुख प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य से प्रेम, लोकप्रियता अथवा मन में अहम भावना के साथ किये गये कर्मकांडों पर ध्यान देने की अपेक्षा, गुरु के आदेशों एवं शिक्षा का अनुसरण कर प्रभु की महिमा का गायन कीर्तन सच्चे प्रेम और पूर्ण श्रद्धा के साथ करना चाहिये। तब वह हरि प्रत्येक स्थान पर हर पल हमारी रक्षा करेंगे और हम सब प्रकार से चिंतामुक्त रहते हुये उस अनंत में समाये रहेंगे।

ਪੰਨਾ ੮੫੧

ਸਲੋਕ ਮः ੩ ॥

ਅੰਦਰਿ ਕਪਟੁ ਸਦਾ ਦੁਖੁ ਹੈ ਮਨਮੁਖ ਧਿਆਨੁ ਨ ਲਾਗੈ ॥
ਦੁਖ ਵਿਚਿ ਕਾਰ ਕਮਾਵਣੀ ਦੁਖੁ ਵਰਤੈ ਦੁਖੁ ਆਗੈ ॥
ਕਰਮੀ ਸਤਿਗੁਰੁ ਭੇਟੀਐ ਤਾ ਸਚਿ ਨਾਮਿ ਲਿਵ ਲਾਗੈ ॥
ਨਾਨਕ ਸਹਜੇ ਸੁਖੁ ਹੋਇ ਅੰਦਰਹੁ ਭ੍ਰਮੁ ਭਉ ਭਾਗੈ ॥੧॥

ਮः ੩ ॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਦਾ ਹਰਿ ਰੰਗੁ ਹੈ ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਉ ਮਨਿ ਭਾਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੮੫੨

ਗੁਰਮੁਖਿ ਵੇਖਣੁ ਬੋਲਣਾ ਨਾਮੁ ਜਪਤ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਗਿਆਨੁ ਪ੍ਰਗਾਸਿਆ ਤਿਮਰ ਅਗਿਆਨੁ ਅੰਧੇਰੁ ਚੁਕਾਇਆ ॥੨॥

ਮः ੩ ॥

ਮਨਮੁਖ ਮੈਲੇ ਮਰਹਿ ਗਵਾਰ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਿਰਮਲ ਹਰਿ ਰਾਖਿਆ ਉਰ ਧਾਰਿ ॥
ਭਨਤਿ ਨਾਨਕੁ ਸੁਣਹੁ ਜਨ ਭਾਈ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਿਹੁ ਹਉਮੈ ਮਲੁ ਜਾਈ ॥
ਅੰਦਰਿ ਸੰਸਾ ਦੂਖੁ ਵਿਆਪੇ ਸਿਰਿ ਧੰਧਾ ਨਿਤ ਮਾਰ ॥
ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਸੂਤੇ ਕਬਹੁ ਨ ਜਾਗਹਿ ਮਾਇਆ ਮੋਹ ਪਿਆਰ ॥
ਨਾਮੁ ਨ ਚੇਤਹਿ ਸਬਦੁ ਨ ਵੀਚਾਰਹਿ ਇਹੁ ਮਨਮੁਖ ਕਾ ਬੀਚਾਰ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਨ ਭਾਇਆ ਬਿਰਥਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ ਨਾਨਕ ਜਮੁ ਮਾਰਿ ਕਰੇ ਖੁਆਰ ॥੩॥

ਪਉੜੀ ॥

ਜਿਸ ਨੋ ਹਰਿ ਭਗਤਿ ਸਚੁ ਬਖਸੀਅਨੁ ਸੋ ਸਚਾ ਸਾਹੁ ॥
ਤਿਸ ਕੀ ਮੁਹਤਾਜੀ ਲੋਕੁ ਕਢਦਾ ਹੋਰਤੁ ਹਟਿ ਨ ਵਥੁ ਨ ਵੇਸਾਹੁ ॥
ਭਗਤ ਜਨਾ ਕਉ ਸਨਮੁਖੁ ਹੋਵੈ ਸੁ ਹਰਿ ਰਾਸਿ ਲਏ ਵੇਮੁਖ ਭਸੁ ਪਾਹੁ ॥
ਹਰਿ ਕੇ ਨਾਮ ਕੇ ਵਾਪਾਰੀ ਹਰਿ ਭਗਤ ਹਹਿ ਜਮੁ ਜਾਗਾਤੀ ਤਿਨਾ ਨੇੜਿ ਨ ਜਾਹੁ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕਿ ਹਰਿ ਨਾਮ ਧਨੁ ਲਦਿਆ ਸਦਾ ਵੇਪਰਵਾਹੁ ॥੭॥

पृ-८५१

सलोक महला ३॥

अँदरि कपटु सदा दुखु है मनमुख धिआनु न लागै ॥
दुख विचि कार कमावणी दुखु वरतै दुखु आगै ॥
करमी सतिगुरु भेटीऐ ता सचि नामि लिव लागै ॥
नानक सहजे सुखु होइ अँदरहु भ्रमु भउ भागै ॥१॥

महला ३॥

गुरमुखि सदाहरि रँगु है हरि का नाउ मनि भाइआ ॥

पृ-८५२

गुरमुखि वेखणु बोलणा नामु जपत सुखु पाइआ ॥
नानक गुरमुखि गिआनु प्रगासिआ तिमर अगिआनु अँधेरु चुकाइआ ॥२॥

महला ३॥

मनमुख मैले मरहि गवार ॥
गुरमुखि निरमल हरि राखिआ उर धारि ॥
भनति नानकु सुणहु जन भाई ॥
सतिगुरु सेविहु हउमै मलु जाई ॥
अँदरि सँसा दूखु विआपे सिरि धँधा नित मार ॥
दूजै भाइ सूते कबहु न जागहि माइआ मोह पिआर ॥
नामु न चेतहि सबदु न वीचारहि इहु मनमुख का बीचार ॥
हरि नामु न भाइआ बिरथा जनमु गवाइआ नानक जमु मारि करे खुआर ॥३॥

पउड़ी ॥

जिस नो हरि भगति सचु बखसीअनु सो सचा साहु ॥
तिस की मुहताजी लोकु कढदा होरतु हटि न वथु न वेसाहु ॥
भगत जना कउ सनमुखु होवै सु हरि रासि लए वेमुख भसु पाहु ॥
हरि के नाम के वापारी हरि भगत हहि जमु जागाती तिना नेड़ि न जाहु ॥
जन नानकि हरि नाम धनु लदिआ सदा वेपरवाहु ॥७॥

सलोक महला – ३

इस श्लोक में गुरु जी गुरमुखों (गुरु के अनुयायियों) को प्रभु नाम का ध्यान करने से मिले आशीर्वादों और मनमुखों (गुरु के आदर्शों को ना मान कर अपने मन के अनुसार चलने वाले) को मिलने वाले दुख और कष्टों के विषय पर विश्लेषण कर रहे हैं ।

सर्वप्रथम, वह मनमुखी अथवा अंहकारी जनों पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मनमुखी के मन में सदा कप्ट से युक्त दुख की भावना रहती है, अत:, उसका ध्यान प्रभु की ओर नहीं लग पाता । वह जो भी कर्म करता है अपने दुखों (और कपटी भावना) के साथ करता है जो उसे यहाँ इहलोक में दुख देता है और आगे (परलोक में) भी दुखी करता है । हे' नानक, जब कोई सौभाग्य से शुभ कर्मों के फलस्वरूप सच्चे गुरु से भेंट कर पाता हैं (और उसकी शिक्षा का पालन करता है) तब उसका अंतरमन (प्रभु के) सच्चे नाम में लीन रहने से सहजता और सुख का अनुभव करता है, भ्रम और भय वहाँ से भाग जाते हैं "।(१)

महला - ३

किन्तु, गुरमुखों (गुरु के अनुयायी) के विषय पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), एक गुरमुख सदा हरि के रंग में रहता है, क्योंकि, उसे हरि नाम अति मनभावन लगता है ।ऐसे गुरमुख का कुछ भी देखना तथा बोलना प्रभु नाम के जाप जैसा सुखदायक है । हे' नानक, गुरु के अनुयायी के मन में दैवी ज्ञान का प्रकाश हो जाता है जिसके कारण अज्ञान का घोर अँधकार विलुप्त हो जाता है "।(२)

महला - ३

मनमुखों (अंहकारी लोगों) की दशा पर गुरु जी संक्षेप में कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मनमुखी लोग मैले (मन में कपट की भावना के साथ) रहते हैं, अत:, वह मूर्ख अपमानित होकर मरते हैं जबकि गुरमुख (गुरु के अनुयायी) मन में निर्मल रहते हैं, क्योंकि, उन्होंने सदा हरि को अपने हृदय में धारण करके रखा है । नानक कहते हैं : " सुनो, हे' मेरे संत भाईयो, सच्चे गुरु की सेवा करने (आदर्शों पर चलने) से अहम का मैल मन में से चला जाता है । परन्तु, (मनमुखी अथवा अंहकारी मनुष्यों के) मन में दुख और शंका व्याप्त रहती है तथा नित्य ही उनके सर पर (सांसारिक) धंधों की मार पड़ती रहती है, परन्तु, फिर भी सांसारिक दुविधाओं और मायामोह की निद्रा में सोये रहते हैं और कभी जागते नहीं। ऐसे मनमुखों का यही चलन एवं चरित्र है कि वह कभी प्रभु नाम का स्मरण नहीं करते और गुरु के शब्द (वाणी) का (जीवन में) विचार नहीं करते । उन्हें कभी हरि नाम मनभावन नहीं लगता, अत:, वह अपना मानव जन्म व्यर्थ में गँवा लेते हैं ; हे' नानक, अँत में यमराज भी उन्हें दंडित कर मारते अथवा नष्ट करते हैं "।(३)

पउड़ी

गुरु जी अँत में इस पउड़ी में प्रभु के प्रति श्रद्धा और भक्ति से धन्य हुए मनुष्य के गुणों का वर्णन करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जिस मनुष्य को हरि ने अपनी सच्ची भक्ति एवं श्रद्धा प्रदान की है वह वास्तविक रूप से (प्रभु नाम रूपी धन का एक) सच्चा साहूकार है । सभी लोग ऐसे मनुष्य की अधीनता में रहते हैं, क्योंकि, (प्रभु नाम रूपी धन के द्वारा व्यापार के लिए) और कहीं भी इससे अधिक विश्वसनीय ना तो दुकान है और ना ही वस्तु है । इसलिये, जो भी कोई प्रभु के भक्तों के सानिध्य में रहता है वह हरि नाम रूपी राशि को प्राप्त कर लेता है जबकि प्रभु से विमुख रहने वाला केवल भस्म (निरादर) ही पाता है । हरि के भक्त ही केवल हरि नाम के व्यापारी हैं और लेखा जोखा रखने वाले यमराज के दूत उनके निकट नहीं जाते (अथवा उन्हें कष्ट नहीं देते) । भक्त नानक ने हरि नाम रूपी धन से स्वयं को लाद लिया है, अत:, वह अब सदा के लिये चिंतामुक्त हो गये हैं "।(७)

इस पउड़ी का संदेश है कि यह हमारा निर्णय है कि हम गुरु के अनुसार एक गुरमुख की भाँति प्रभु नाम पर ध्यान लगा कर जीवन जियें अथवा एक मनमुख की भाँति गुरु को न मानते हुये अपनी अहम भावना के अंतर्गत सब प्रकार के झूठ, कपट एवं सांसारिक सुख साधनों में लिप्त रहें । प्रथम स्थिति का चयन लोक तथा परलोक में हमें शांति एवं परम सुख की राह पर रखेगा, जबकि दूसरी स्थिति को अपनाने से हमें अंत में दुखदर्द एवं कष्ट मिलेंगे और जीवन अनादर तथा यातनायों से व्यथित रहेगा । अब यह हम पर निर्भर करता है कि हम अपना भविष्य कैसा चुनते हैं ।

ਪੰਨਾ ੮੫੩

ਸਲੋਕ ਮਃ ੩ ॥

ਜਗਤੁ ਜਲੰਦਾ ਰਖਿ ਲੈ ਆਪਣੀ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰਿ ॥
ਜਿਤੁ ਦੁਆਰੈ ਉਬਰੈ ਤਿਤੈ ਲੈਹੁ ਉਬਾਰਿ ॥
ਸਤਿਗੁਰਿ ਸੁਖੁ ਵੇਖਾਲਿਆ ਸਚਾ ਸਬਦੁ ਬੀਚਾਰਿ ॥
ਨਾਨਕ ਅਵਰੁ ਨ ਸੁਝਈ ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਬਖਸਣਹਾਰੁ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਹਉਮੈ ਮਾਇਆ ਮੋਹਣੀ ਦੂਜੈ ਲਗੈ ਜਾਇ ॥
ਨਾ ਇਹ ਮਾਰੀ ਨ ਮਰੈ ਨਾ ਇਹ ਹਟਿ ਵਿਕਾਇ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਪਰਜਾਲੀਐ ਤਾ ਇਹ ਵਿਚਹੁ ਜਾਇ ॥
ਤਨੁ ਮਨੁ ਹੋਵੈ ਉਜਲਾ ਨਾਮੁ ਵਸੈ ਮਨਿ ਆਇ ॥
ਨਾਨਕ ਮਾਇਆ ਕਾ ਮਾਰਣੁ ਸਬਦੁ ਹੈ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਇਆ ਜਾਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਵਡਿਆਈ ਸਤਿਗੁਰਿ ਦਿਤੀ ਧੁਰਹੁ ਹੁਕਮੁ ਬੁਝਿ ਨੀਸਾਣੁ ॥
ਪੁਤੀ ਭਾਤੀਈ ਜਾਵਾਈ ਸਕੀ ਅਗਹੁ ਪਿਛਹੁ ਟੋਲਿ ਡਿਠਾ ਲਾਹਿਓਨੁ ਸਭਨਾ ਕਾ ਅਭਿਮਾਨੁ ॥
ਜਿਥੈ ਕੋ ਵੇਖੈ ਤਿਥੈ ਮੇਰਾ ਸਤਿਗੁਰੂ ਹਰਿ ਬਖਸਿਓਸੁ ਸਭੁ ਜਹਾਨੁ ॥
ਜਿ ਸਤਿਗੁਰ ਨੋ ਮਿਲਿ ਮੰਨੇ ਸੁ ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਸਿਝੈ ਜਿ ਵੇਮੁਖੁ ਹੋਵੈ ਸੁ ਫਿਰੈ ਭਰਿਸਟ ਥਾਨੁ ॥

ਪੰਨਾ ੮੫੪

ਜਨ ਨਾਨਕ ਕੈ ਵਲਿ ਹੋਆ ਮੇਰਾ ਸੁਆਮੀ ਹਰਿ ਸਜਣ ਪੁਰਖੁ ਸੁਜਾਨੁ ॥
ਪਉਦੀ ਭਿਤਿ ਦੇਖਿ ਕੈ ਸਭਿ ਆਇ ਪਏ ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਪੈਰੀ ਲਾਹਿਓਨੁ ਸਭਨਾ ਕਿਅਹੁ ਮਨਹੁ ਗੁਮਾਨੁ ॥੧੦॥

पृ-८५३

सलोक महला ३ ॥

जगतु जलँदा रखि लै आपणी किरपा धारि ॥
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि ॥
सतिगुरि सुखु वेखालिआ सचा सबदु बीचारि ॥
नानक अवरु न सुझई हरि बिनु बखसणहारु ॥१॥

महला ३॥

हउमै माइआ मोहणी दूजै लगै जाइ ॥
ना इह मारी न मरै ना इह हटि विकाइ ॥
गुर कै सबदि परजालीऐ ता इह विचहु जाइ ॥
तनु मनु होवै उजला नामु वसै मनि आइ ॥
नानक माइआ का मारणु सबदु है गुरमुखि पाइआ जाइ ॥२॥

पउड़ी ॥

सतिगुर की वडिआई सतिगुरि दिती धुरहु हुकमु बुझि नीसाणु ॥
पुती भातीई जावाई सकी अगहु पिछहु टोलि डिठा लाहिओनु सभना का अभिमानु ॥
जिथै को वेखै तिथै मेरा सतिगुरू हरि बखसिओसु सभु जहानु ॥
जि सतिगुर नो मिलि मँने सु हलति पलति सिझै जि वेमुखु होवै सु फिरै भरिसट थानु ॥

पृ-८५४

जन नानक कै वलि होआ मेरा सुआमी हरि सजण पुरखु सुजानु ॥
पउदी भिति देखि कै सभि आइ पए सतिगुर की पैरी लाहिओनु सभना किअहु मनहु गुमानु ॥१०॥

सलोक महला - ३

गुरु जी की यह धारणा है कि समस्त संसार धन सम्पदा के पीछे भाग रहा है और ईर्ष्या से पीड़ित होकर लालसा तथा इच्छायों की अग्नि में जैसे जल रहा है । चूँकि, गुरु जी को यह दयनीय स्थिति असहनीय लग रही है, अत:, हमारे बीच भली भाँति से परिचित इस श्लोक के द्वारा वह प्रभु से संसार की रक्षा के लिये उसकी कृपा की याचना करते हैं । साथ ही वह हमें यह भी बताते हैं कि माया (सांसारिक धन सम्पदा व सामर्थ्य) की अग्नि की जलन और पीड़ा से उबर कर मुक्त होने के लिये सर्वोत्तम औषधि अथवा मरहम कौन सा है ।

वह कहते हैं: " हे' प्रभु, अपनी कृपा धारो और इस (सांसारिक मायामोह एवं इच्छायों की अग्नि से) जलते हुये जगत की रक्षा करो । किसी भी प्रकार के उपाय से यदि यह (संसार) उबर सके तो उसी के द्वारा इसे उबार लो । सच्चे गुरु ने अपने सच्चे शब्द (वाणी) को विचार कर चलने का एक सुखद राह मनुष्य को दिखलाया है । नानक का कथन है कि हरि के बिना उन्हें और कोई नहीं सूझता जो इस संसार को क्षमा कर सके (और उसकी रक्षा कर सके)" । (१)

महला - ३

अब गुरु जी संसार में दुखों के मूल कारण पर विचार करते हैं और हमें इन कठिनाइयों से मुक्ति पाने का उत्तम राह बताते हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), माया का अंहकार अति मनमोहक है, इसी कारण से (मनुष्य प्रभु की अपेक्षा) अन्य (सांसारिक) प्रलोभनों से अधिक आकर्षित होता है । (यह मायामोह) ना तो मारने से मरता है और ना ही किसी दुकान पर इसे बेचा जा सकता है । जब हम इसे गुरु के शब्द (वाणी) के प्रभाव से जला कर नष्ट करते हैं तभी यह हमारे मन में से निकल पाता है जिसके फलस्वरूप हमारा तन और मन दोनों शुद्ध हो जाते हैं और मन में (हरि) नाम आकर बस जाता है । (संक्षेप में) हे' नानक, मायामोह को मारने का प्रतिकार गुरु की वाणी है जिसे एक

गुरु का अनुयायी गुरु के पास जाकर (उसके आदर्शों पर चलकर) प्राप्त करता है ।(२)

पउड़ी

अंत में गुरु जी इस पउड़ी में हमें बताते हैं कि उन्होंने किस प्रकार से सच्चे गुरु के पद को पाने का आशीर्वाद पाया । वह कहते हैं : "सच्चे गुरु (द्वितीय गुरु अँगद देव जी) ने प्रभु की इच्छा और आज्ञा को बूझ विचार कर अमरदास जी को (आगामी तृतीय) सच्चे गुरु की महिमामयी पदवी पर सुशोभित किया । उन्होंने भली भाँति पुत्रों भाईयों भतीजों और दामाद लोग तथा आगे पीछे के जानने वाले सभी को टटोल कर देखा और सबके संदेह (कि वह इस पवित्र पद को पाने योग्य हैं कि नहीं) को दूर किया । अब जहाँ भी कोई देखता है वहीं पर उसे मेरा सच्चा गुरु दिखाई देता है, जिसको हरि ने समस्त संसार में (अपना नाम रूपी धन बाँटने) का) उपहार दिया है । अतः जो भी सच्चे गुरु से मिलता है और उस पर विश्वास करता है, वह मनुष्य लोक और परलोक में सफल रहता है, परन्तु जो सच्चे गुरु के विमुख है वह (विष्ठा के कीड़े की भाँति) भ्रष्ट स्थानों में भटकता फिरता है । मेरे स्वामी तथा मित्र परम बुद्धिमान हरि भक्त नानक की ओर आ गये हैं । अब गुरु के भोजनालय में (तृतीय गुरु अमरदास जी को सिख संगति में अटूट लंगर की व्यवस्था एवं परम्परा प्रारंभ करने का श्रेय प्राप्त है)निरंतर भोजन मिलता देख सभी सच्चे गुरु (अमर दास जी) की शरण में आन पड़े हैं, जिन्होंने सबके मन में से झूठे घमंड को ध्वस्त कर दिया "।(१०)

इस पउड़ी का संदेश है कि सांसारिक माया का आकर्षण ही मन में अहम, ईर्ष्या और सांसारिक इच्छायों की ज्वाला का मूल कारण है । यदि हम इस ज्वाला को बुझाना चाहते हैं और अहम अथवा ईर्ष्या को त्यागना चाहते हैं तो मन में से माया के मोह का नाश करना होगा। केवल प्रभु नाम रूपी औषधि ही माया के रोग से मुक्ति पाने का निश्चित निदान है और यह औषधि केवल सच्चे गुरु की शरण में जाकर (गुरु ग्रंथ साहिब जी में निहित वाणी पर विचार करने और) प्रभु नाम का ध्यान करने से प्राप्त होती है ।

ਪੰਨਾ ੮੫੫	पृ-८५५
ਬਿਲਾਵਲੁ ॥	**बिलावलु ॥**
ਗ੍ਰਿਹੁ ਤਜਿ ਬਨ ਖੰਡ ਜਾਈਐ ਚੁਨਿ ਖਾਈਐ ਕੰਦਾ ॥ ਅਜਹੁ ਬਿਕਾਰ ਨ ਛੋਡਈ ਪਾਪੀ ਮਨੁ ਮੰਦਾ ॥੧॥	ग्रिहु तजि बन खँड जाईऐ चुनि खाईऐ कँदा ॥ अजहु बिकार न छोडई पापी मनु मँदा ॥१॥
ਕਿਉ ਛੂਟਉ ਕੈਸੇ ਤਰਉ ਭਵਜਲ ਨਿਧਿ ਭਾਰੀ ॥ ਰਾਖੁ ਰਾਖੁ ਮੇਰੇ ਬੀਠੁਲਾ ਜਨੁ ਸਰਨਿ ਤੁਮ੍ਹਾਰੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	किउ छूटउ कैसे तरउ भवजल निधि भारी ॥ राखु राखु मेरे बीठुला जनु सरनि तुमा्री ॥१॥रहाउ॥
ਬਿਖੈ ਬਿਖੈ ਕੀ ਬਾਸਨਾ ਤਜੀਅ ਨਹ ਜਾਈ ॥ ਅਨਿਕ ਜਤਨ ਕਰਿ ਰਾਖੀਐ ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਲਪਟਾਈ ॥੨॥	बिखै बिखै की बासना तजीअ नह जाई ॥ अनिक जतन करिराखीऐ फिरि फिरि लपटाई ॥२ ॥
ਪੰਨਾ ੮੫੬	**पृ-८५६**
ਜਰਾ ਜੀਵਨ ਜੋਬਨੁ ਗਇਆ ਕਿਛੁ ਕੀਆ ਨ ਨੀਕਾ ॥ ਇਹੁ ਜੀਅਰਾ ਨਿਰਮੋਲਕੋ ਕਉਡੀ ਲਗਿ ਮੀਕਾ ॥੩॥	जरा जीवन जोबनु गइआ किछु कीआ न नीका ॥ इहु जीअरा निरमोलको कउडी लगि मीका ॥३॥
ਕਹੁ ਕਬੀਰ ਮੇਰੇ ਮਾਧਵਾ ਤੂ ਸਰਬ ਬਿਆਪੀ ॥ ਤੁਮ ਸਮਸਰਿ ਨਾਹੀ ਦਇਆਲੁ ਮੋਹਿ ਸਮਸਰਿ ਪਾਪੀ ॥੪॥੩॥	कहु कबीर मेरे माधवा तू सरब बिआपी ॥ तुम समसरि नाही दइआलु मोहि समसरि पापी ॥४॥३॥

बिलावल बाणी भगता की कबीर जीउ की
बिलावल

इस शब्द में कबीर जी अपने समय में प्रचलित उस प्रथा पर विचार कर रहे हैं जहाँ बहुधा कई लोग प्रभु की भाल में अपना घर परिवार एवं धन सम्पदा त्याग कर जंगलों और पर्वतों में तपस्या करने चले जाते थे । परन्तु, अनेकों वर्षों तक कठिनाइयाँ झेलने तथा कंद मूल खाकर जीवन व्यतीत करने के पश्चात भी वह मन की काम क्रोध और लोभ आदि की प्रवृत्तियों पर नियंत्रण ना पा सकने के कारण प्रभु से पूर्ववत् ही अनभिज्ञ रह जाते थे ।

यहाँ भक्त कबीर जी स्वयं को ऐसे निराश एवं असफल साधु संतों के स्थान पर रखते हुये यह प्रकट करते हैं कि हमें अपनी रक्षा और कल्याण के लिये प्रभु को कैसे सम्बोधित करना चाहिए ।वह कहते हैं: "(हे' मेरे मित्रो), अपने घर परिवारों को त्याग कर हम वनों अथवा जंगलों में जाते हैं और कंद मूल चुन कर खाते हैं, किन्तु, तब भी हमारा पापी और दुराचारी मन अपने विकारों को त्यागता नहीं है "।(१)

अत:, कबीर जी अति मृदुल एवं प्रेम भाव से प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं : "(हे' प्रभु), मैं किस प्रकार से मुक्त हो सकता हूँ? कैसे मैं इस विशाल भवजल (संसार सागर) को तैर कर पार लग सकता हूं ? हे' मेरे प्रिय विठ्ठल, हे' प्रभु, मेरी रक्षा करो, यह जन तुम्हारी शरण में आया है"। (१-विराम)

हमारे दोषों को स्वयं पर लेते हुये कबीर जी कहते हैं : " हे' प्रभु, हम अनेकों प्रकार की विषैली वासनायों एवं इच्छायों को त्याग नहीं पाते, हम (मन को वश में करने के लिये)बहुतेरे यत्न करते हैं परन्तु, फिर भी बारम्बार उनसे लिपट जाते हैं "।(२)

सांसारिक व्यस्तताओं में रहने के अंतिम परिणामों को कबीर जी संक्षेप में कहते हैं : "(हे' प्रभु),मेरा यौवन बीत गया है तथा जीर्णवस्था आ गयी है, पर मैंने कोई शुभ कर्म नहीं किया । यह जीवन तथा आत्मा अनमोल हैं पर मैंने इसे कौड़ियों के भाव समझा है " ।(३)

अंत में कबीर जी स्वयं को (परोक्ष में हमें भी) परामर्श देते हुये कहते हैं : " कबीर कहते हैं, हे' मेरे माधव, तुम सर्वव्यापी हो, तुम्हारे समान दयालु कोई नहीं है और मेरे समान पापी कोई नहीं है, (कृपा करो और मेरे पाप कर्मों को मत गिनो तथा अपनी दयालु परम्परा के अनुसार मेरी रक्षा करो और इस भवसागर में से मुझे पार उतारो)"।(४-३)

इस शब्द का संदेश है कि हमें यह समझ लेना चाहिये कि अपना घर परिवार त्याग कर जंगलों और पर्वतों में जाकर भी हम अपने मन को वश में करने के योग्य नहीं हो पायेंगे । यह मन बारम्बार काम, क्रोध, लोभ इत्यादि, विकारों में उलझता रहेगा और इसका अंतिम परिणाम यही होगा कि हम अपना बहुमूल्य जीवन व्यर्थ में गँवा देंगे ।अत:, अपना घर द्वार त्याग कर जंगलों में भटकने की अपेक्षा, हमें प्रभु के पास विनम्रता से यह प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमारे दुष्कर्मों को ना विचार कर अपने दयालु स्वभाव के अनुसार हमें क्षमा करें और हमारी रक्षा करें ।

ਪੰਨਾ ੮੫੭	**पृ-८५७**
ਬਿਲਾਵਲੁ ਬਾਣੀ ਭਗਤ ਨਾਮਦੇਵ ਜੀ ਕੀ	**बिलावलु बाणी भगत नामदेव जी की**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਸਫਲ ਜਨਮੁ ਮੋ ਕਉ ਗੁਰ ਕੀਨਾ ॥	सफल जनमु मो कउ गुर कीना ॥
ਪੰਨਾ ੮੫੮	**पृ-८५८**
ਦੁਖ ਬਿਸਾਰਿ ਸੁਖ ਅੰਤਰਿ ਲੀਨਾ ॥੧॥	दुख बिसारि सुख अँतरि लीना ॥१॥
ਗਿਆਨ ਅੰਜਨੁ ਮੋ ਕਉ ਗੁਰਿ ਦੀਨਾ ॥ ਰਾਮ ਨਾਮ ਬਿਨੁ ਜੀਵਨੁ ਮਨ ਹੀਨਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	गिआन अँजनु मो कउ गुर दीना ॥ राम नाम बिनु जीवनु मन हीना ॥१॥रहाउ॥
ਨਾਮਦੇਇ ਸਿਮਰਨੁ ਕਰਿ ਜਾਨਾਂ ॥ ਜਗਜੀਵਨ ਸਿਉ ਜੀਉ ਸਮਾਨਾਂ ॥੨॥੧॥	नामदेइ सिमरनु करि जानां ॥ जगजीवन सिउ जीउ समानां ॥२॥१॥

बिलावल
भगत नामदेव जी की वाणी

इस शब्द में भक्त नामदेव जी अपना अनुभव हमसे साझा करते हैं कि किस प्रकार से वह सांसारिक दुविधा एवं पीड़ा से दूर रहते हुए आत्मिक शांति तथा आनंद में रमे रहे ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), गुरु ने मेरा जन्म सफल कर दिया है, जिसके कारण (सांसारिक) कष्टों व दुखों को भुलाकर मैं अँतरमन से सुखी तथा (आत्मिक) आनंद में लीन रहता हूँ ।(१)

उन्होंने वास्तविक रूप में गुरु से क्या गुण सीखा, इसका वर्णन करते हुये वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), गुरु ने ज्ञान रूपी अंजन (मेरी आँखों में डाला और अब) राम के नाम बिना मेरे मन को जीवन निर्रथक दिखाई देता है "।(१- विराम)

अंत में वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), नामदेव ने प्रभु नाम का सिमरन और ध्यान करके उसे जान लिया है और अब उसकी आत्मा उस प्रभु में समा गयी है जो जग के जीवन हैं "।(२-१)

इस शब्द का संदेश यह है यदि हम अपने जीवन को सफल बनाना चाहते हैं तो हमें गुरु की शरण में जाना चाहिये और उसके आदेश और शिक्षानुसार ऐसी श्रद्धा से प्रभुनाम का ध्यान करना चाहिये जिससे कि हम अंत में उसमें लीन हो जायें ।

ਪੰਨਾ ੮੫੯

ੴ ਸਤਿ ਨਾਮੁ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰਭਉ ਨਿਰਵੈਰੁ ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਅਜੂਨੀ ਸੈਭੰ ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਰਾਗੁ ਗੋਂਡ ਚਉਪਦੇ ਮਹਲਾ ੪ ਘਰੁ ੧ ॥

ਜੇ ਮਨਿ ਚਿਤਿ ਆਸ ਰਖਹਿ ਹਰਿ ਊਪਰਿ ਤਾ ਮਨ ਚਿੰਦੇ ਅਨੇਕ ਅਨੇਕ ਫਲ ਪਾਈ ॥
ਹਰਿ ਜਾਣੈ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਜੋ ਜੀਇ ਵਰਤੈ ਪ੍ਰਭੁ ਘਾਲਿਆ ਕਿਸੈ ਕਾ ਇਕੁ ਤਿਲੁ ਨ ਗਵਾਈ ॥
ਹਰਿ ਤਿਸ ਕੀ ਆਸ ਕੀਜੈ ਮਨ ਮੇਰੇ ਜੋ ਸਭ ਮਹਿ ਸੁਆਮੀ ਰਹਿਆ ਸਮਾਈ ॥੧॥

ਮੇਰੇ ਮਨ ਆਸਾ ਕਰਿ ਜਗਦੀਸ ਗੁਸਾਈ ॥
ਜੋ ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਆਸ ਅਵਰ ਕਾਹੂ ਕੀ ਕੀਜੈ ਸਾ ਨਿਹਫਲ ਆਸ ਸਭ ਬਿਰਥੀ ਜਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜੋ ਦੀਸੈ ਮਾਇਆ ਮੋਹ ਕੁਟੰਬੁ ਸਭੁ ਮਤ ਤਿਸ ਕੀ ਆਸ ਲਗਿ ਜਨਮੁਗਵਾਈ ॥
ਇਨ੍ ਕੈ ਕਿਛੁ ਹਾਥਿ ਨਹੀ ਕਹਾ ਕਰਹਿ ਇਹਿ ਬਪੁੜੇ ਇਨ੍ ਕਾ ਵਾਹਿਆ ਕਛੁ ਨ ਵਸਾਈ ॥
ਮੇਰੇ ਮਨ ਆਸ ਕਰਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਅਪੁਨੇ ਕੀ ਜੋ ਤੁਝੁ ਤਾਰੈ ਤੇਰਾ ਕੁਟੰਬੁ ਸਭੁ ਛਡਾਈ ॥੨॥

ਜੇ ਕਿਛੁ ਆਸ ਅਵਰ ਕਰਹਿ ਪਰਮਿਤ੍ਰੀ ਮਤ ਤੂੰ ਜਾਣਹਿ ਤੇਰੈ ਕਿਤੈ ਕੰਮਿ ਆਈ ॥
ਇਹ ਆਸ ਪਰਮਿਤ੍ਰੀ ਭਾਉ ਦੂਜਾ ਹੈ ਖਿਨ ਮਹਿ ਝੂਠੁ ਬਿਨਸਿ ਸਭ ਜਾਈ ॥
ਮੇਰੇ ਮਨ ਆਸਾ ਕਰਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਸਾਚੇ ਕੀ ਜੋ ਤੇਰਾ ਘਾਲਿਆ ਸਭੁ ਥਾਇ ਪਾਈ ॥੩॥

ਆਸਾ ਮਨਸਾ ਸਭ ਤੇਰੀਮੇਰੇ ਸੁਆਮੀ ਜੈਸੀ ਤੂ ਆਸ ਕਰਾਵਹਿ ਤੈਸੀ ਕੋ ਆਸ ਕਰਾਈ ॥

ਪੰਨਾ ੮੬੦

ਕਿਛੁ ਕਿਸੀ ਕੈ ਹਥਿ ਨਾਹੀ ਮੇਰੇ ਸੁਆਮੀ ਐਸੀ ਮੇਰੈ ਸਤਿਗੁਰਿ ਬੂਝ ਬੁਝਾਈ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕੀ ਆਸ ਤੂ ਜਾਣਹਿ ਹਰਿ ਦਰਸਨੁ ਦੇਖਿ ਹਰਿ ਦਰਸਨਿ ਤ੍ਰਿਪਤਾਈ ॥੪॥੧॥

पृ-८५९

१ओंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरत अजूनी सैभँ गुर प्रसादि ॥

राग गोंड चउपदे महला ४ घर १॥

जे मन चिति आस रखहि हरि ऊपरि ता मन चिँदे अनेक अनेक फल पाई ॥
हरि जाणै सभु किछु जो जीइ वरतै प्रभु घालिआ किसै का इकु तिलु न गवाई ॥
हरि तिस की आस कीजै मन मेरे जो सभ महि सुआमी रहिआ समाई ॥१॥

मेरे मन आसा करि जगदीस गुसाई ॥
जो बिनु हरि आस अवर काहू की कीजै सा निहफल आस सभ बिरथी जाईं ॥१॥रहाउ॥

जो दीसै माइआ मोह कुटँबु सभु मत तिस की आस लगि जनमुगवाई ॥
इन् कै किछु हाथि नही कहा करहि इहि बपुड़े इन् का वाहिआ कछु न वसाई ॥
मेरे मन आस करि हरि प्रीतम अपुने की जो तुझु तारै तेरा कुटँबु सभु छडाई ॥२॥

जे किछु आस अवर करहि परमित्री मत तूँ जाणहि तेरै कितै कँमि आई ॥
इह आस परमित्री भाउ दूजा है खिन महि झूठु बिनसि सभ जाई ॥
मेरे मन आसा करि हरि प्रीतम साचे की जो तेरा घालिआ सभु थाइ पाई ॥३॥

आसा मनसा सभ तेरीमेरे सुआमी जैसी तू आस करावहि तैसी को आस कराई ॥

पृ-८६०

किछु किसी कै हथि नाही मेरे सुआमी ऐसी मेरै सतिगुरि बूझ बुझाई ॥
जन नानक की आस तू जाणहि हरि दरसनु देखि हरि दरसनि त्रिपताई ॥४॥१॥

राग गोंड चउपदे महला -४ घर -१

गुरु जी इस राग का आरंभ मानव स्वभाव के एक पहलू पर ऐसी टिप्पणी के साथ करते हैं कि वह प्रभु और गुरु की सेवा और पूजा-भक्ति बहुधा दिखावे के लिए करता है।हम भले ही पूजा अर्चना का कर्मकाण्ड करते रहते हों, परन्तु, वास्तविक रूप में किसी आपदा अथवा आवश्यकता के समय हम अपने मित्रों सम्बन्धियों, जान पहचान वालों अथवा अपनी धन सम्पदा पर निर्भर करते हैं, यहाँ तक कि आड़े समय पर किसी अधिकारी को घूस देने से भी नहीं हिचकते। इस शब्द में गुरु जी स्पष्ट रूप से बताते हैं कि हमारे लिए क्या करना उचित है और कौनसी शक्ति तथा साधन हमें उपलब्ध है जिस पर हम कठिनाई के समय सहायता के लिए भरोसा रख सकते हैं। साथ ही वह यह भी कहते हैं कि किसी विपत्ति के समय जब हम प्रभु की अपेक्षा अन्य लोगों पर अधिक विश्वास रखते हैं तब क्या होता है।

गुरु जी अपने मन को (तथा हमें भी)सम्बोधित करते हुये कहते हैं: "(हे' मेरे मित्रो), यदि तुम अपने हृदय में हरि के उपर विश्वास रखो

तो अनेक और अनेक मन वाँछित फल पा लोगे । हमारे मन के अंदर जो भी विचार होते हैं उन सभी को हरि जानते हैं और वह प्रभु किसी के किये गये परिश्रम एवं प्रयत्नों को तिल मात्र भी व्यर्थ नहीं करते । अत:, हे' मेरे मन, वह स्वामी जो सभी में व्याप्त हैं, उस हरि पर ही अपनी आशा और विश्वास बनाये रखो "।(१)

गुरु जी अब इस शब्द का निष्कर्ष बताते हैं और कहते हैं : " हे' मेरे मन, तुम जगदीश, धरती के स्वामी पर अपनी आशा रखो, क्योंकि, यदि तुम हरि के बिना किसी और पर अपना विश्वास रखते हो तब तुम्हारी समस्त आशायें एवं चेष्टायें निष्फल अथवा व्यर्थ हो जाती हैं "।(१-विराम)

अपने मित्रों, सम्बन्धियों, जान पहचान अथवा अपनी धन सम्पदा पर आधारित रहने के विषय पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), धन, सांसारिक मोहमाया तथा परिवार कुटुँब आदि, जो भी तुम्हें दिखाई पड़ रहे हैं उन सब के उपर आशा एवं विश्वास रख कर अपना जन्म मत व्यर्थ करो, क्योंकि, इन सबके हाथ में कुछ भी नहीं है, यह बिचारे क्या कर सकते हैं ? इनके प्रयत्नों से कुछ भी नहीं ठीक होने वाला । हे' मेरे मन, अपने प्रियतम हरि के ऊपर भरोसा रखो जो तुम्हें पार लगायेंगे अथवा तुम्हारे समस्त कुटुँब का भी कल्याण करेंगे (माया मोह के बँधनों तथा, जन्म मरण के फेरों से बचा कर) "।(२)

अब गुरु जी प्रभु की अपेक्षा, मनुष्यों, धन एवं अन्य वस्तुयों के उपर निर्भर रहने की व्यर्थता पर विशेष रूप से टिप्पणी करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मन, यदि) तुम्हें अपने प्रभु के अतिरिक्त अपने मिथ्या मित्रों एवं धन पर अधिक आशा और विश्वास है तो यह कभी मत भूलना कि ऐसा विश्वास और निर्भरता तुम्हारे किसी काम आयेगी । प्रभु के अतिरिक्त, अपने मिथ्या मित्रों और सांसारिक धन सम्पदा पर किसी प्रकार की आशा अथवा निर्भरता दुविधापूर्ण है, क्योंकि, यह सब झूठ अथवा छलावा है, क्षणभंगुर है और नाशवान है । अत: हे' मेरे मन, केवल अपने सच्चे प्रियतम हरि पर विश्वास रखो जो तुम्हारे परिश्रम अथवा प्रयासों को सफलता प्रदान करता है "।(३)

किन्तु, गुरु जी विनम्र भाव से यह भी स्वीकार करते हैं कि प्रभु पर अपने मन में विश्वास रखने का विचार भी प्रभु की कृपा के द्वारा ही आता है, अतः हमें अपने मन के विचारों को शुद्ध एवं सही रखने के लिये सर्वदा प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिये । वह कहते हैं : " हे' मेरे स्वामी, समस्त आशायें तथा इच्छायें तुम्हारी ही देन है, जैसी भी इच्छा तुम किसी के मन में उपजाते हो, उसी प्रकार की इच्छा वह रखता है । हे' मेरे स्वामी, कुछ भी किसी के वश अथवा हाथ में नहीं है, ऐसी सूझ बूझ मेरे सच्चे गुरु ने मुझे प्रदान की है । हे' प्रभु, मेरे स्वामी, भक्त नानक की इच्छा तुम जानते हो कि हरि के दर्शन करने के पश्चात (मेरा मन) केवल हरि दर्शन से ही तृप्त रहेगा "।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हमें किसी प्रकार का कोई कष्ट, आशा एवं इच्छा है तो हमें अपने किसी मित्र, सम्बंधी, धन सम्पदा तथा सामाजिक प्रभाव की सहायता अथवा आशा पर निर्भर रहने की अपेक्षा, केवल प्रभु का आश्रय लेना चाहिये । कुछ भी कहे बिना प्रभु हमारी समस्त आशायों और इच्छायों को जानते समझते हैं और यदि हम उस हरि में अपने विश्वास को पूर्णरूप से दृढ़ रखते हैं, तब वह हमारी सभी उलझनों एवं दुखों को दूर करेंगे और यथार्थ इच्छायों को परिपूर्ण करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੮੬੧	पृ-८६१
ਗੋਂਡ ਮਹਲਾ ੪ ॥	**गोंड महला ४॥**
ਹਰਿ ਦਰਸਨ ਕਉ ਮੇਰਾ ਮਨੁ ਬਹੁ ਤਪਤੈ ਜਿਉ ਤ੍ਰਿਖਾਵੰਤੁ ਬਿਨੁ ਨੀਰ ॥੧॥	हरि दरसन कउ मेरा मनु बहु तपतै जिउ त्रिखावँतु बिनु नीर ॥१॥
ਮੇਰੈ ਮਨਿ ਪ੍ਰੇਮੁ ਲਗੋ ਹਰਿ ਤੀਰ ॥ ਹਮਰੀ ਬੇਦਨ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਜਾਨੈ ਮੇਰੇ ਮਨ ਅੰਤਰ ਕੀ ਪੀਰ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मेरै मनि प्रेमु लगो हरि तीर॥ हमरी बेदन हरि प्रभु जानै मेरे मन अँतर की पीर ॥१॥रहाउ॥
ਮੇਰੇ ਹਰਿ ਪ੍ਰੀਤਮਕੀ ਕੋਈ ਬਾਤ ਸੁਨਾਵੈ ਸੋ ਭਾਈ ਸੋ ਮੇਰਾ ਬੀਰ ॥੨॥	मेरे हरि प्रीतमकी कोई बात सुनावै सो भाई सो मेरा बीर ॥२॥
ਪੰਨਾ ੮੬੨	**पृ-८६२**
ਮਿਲੁ ਮਿਲੁ ਸਖੀ ਗੁਣ ਕਹੁ ਮੇਰੇ ਪ੍ਰਭ ਕੇ ਲੇ ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਮਤਿ ਧੀਰ ॥੩॥	मिलु मिलु सखी गुण कहु मेरे प्रभ के ले सतिगुर की मति धीर ॥३॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕੀ ਹਰਿ ਆਸ ਪੁਜਾਵਹੁ ਹਰਿ ਦਰਸਨਿ ਸਾਂਤਿ ਸਰੀਰ ॥੪॥੬॥ ਛਕਾ ੧॥	जन नानक की हरि आस पुजावहु हरि दरसनि सांति सरीर ॥४॥६॥ छका॥१॥

गोंड महला – ४

इस शब्द में गुरु जी हमसे साझा करते हैं कि प्रभु से वह कितना अधिक प्रेम तथा उसका ध्यान करते हैं और उसके बिना उन्हें किस प्रकार के कष्ट का अनुभव होता है । इसका तात्पर्य यह है कि हमें भी उसी प्रकार से निष्कप्ट और प्रबल प्रेम भाव के साथ प्रभु में रमे रहने का प्रयास करना चाहिए ।

अपने प्रिय प्रभु के दर्शन पाने की तीव्र इच्छा को प्रकट करते हुये गुरु जी कहते हैं : (हे' मेरे मित्रो), मेरा मन हरि के दर्शनों के लिए इतना अधिक तड़प रहा है जैसे कि एक प्यासा पानी के बिना तड़पता है "।(१)

अपने मन की दशा का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मेरे मन को हरि के प्रेम रूपी तीर ने बींध दिया है । मेरे अँतरमन की इस वेदना अथवा पीड़ा (की तीव्रता को) केवल प्रभु ही जानते हैं "।(१-विराम)

अतः, जो मनुष्य उन्हें प्रिय प्रभु के विषय में कुछ भी बताता है उसका वह कितना आदर करते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जो कोई भी मुझसे मेरे प्रियतम हरि के विषय पर वार्तालाप करता है वह मुझे अपने भाई के समान प्रिय है "।(२)

इसलिये, गुरु जी अपने मित्रों एवं साथियों (संतजनों) को साथ मिलबैठ कर प्रभु की महिमा का गायन करने का अनुरोध करते हैं । वह कहते हैं : " हे' मेरे मित्रो, (कृपया) आओ, मेरे साथ मिल बैठो और अपने सच्चे गुरु की धैर्यपूर्ण मति प्राप्त करके मेरे प्रभु के गुणों का बखान करो "।(३)

अंत में गुरु जी प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं : " हे' प्रभु, अपने भक्त नानक की आशा एवं इच्छा को परिपूर्ण करो, क्योंकि, हे' प्रभु, तुम्हारे दर्शनों से तन को शांति मिलती है "।(४-६-६-छका-१, छः शब्दों का प्रथम समूह)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम वास्तविक रूप से मन में शांति एवं सहजता का आनंद पाना चाहते हैं तो हमें प्रभु से इतना अधिक प्रेम होना चाहिये कि उसके दर्शन न पा सकने पर ऐसी तड़प अनुभव हो जैसे पानी के बिना एक प्यासे को होती है । इसके अतिरिक्त, हमें अपने जैसे संत स्वभाव के साथी मित्रो की संगति में मिल बैठ कर गुरु (ग्रंथ साहिब जी) की पवित्र वाणी के द्वारा प्रभु के यश का गायन करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੮੬੩

ਗੋਂਡ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਜਾ ਕੈ ਸੰਗਿ ਇਹੁ ਮਨੁ ਨਿਰਮਲੁ ॥
ਜਾ ਕੈ ਸੰਗਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਸਿਮਰਨੁ ॥
ਜਾ ਕੈ ਸੰਗਿ ਕਿਲਬਿਖ ਹੋਹਿ ਨਾਸ ॥
ਜਾ ਕੈ ਸੰਗਿ ਰਿਦੈ ਪਰਗਾਸ ॥੧॥

ਸੇ ਸੰਤਨ ਹਰਿ ਕੇ ਮੇਰੇ ਮੀਤ ॥
ਕੇਵਲ ਨਾਮੁ ਗਾਈਐ ਜਾ ਕੈ ਨੀਤ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਾ ਕੈ ਮੰਤ੍ਰਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਮਨਿ ਵਸੈ ॥
ਜਾ ਕੈ ਉਪਦੇਸਿ ਭਰਮੁ ਭਉ ਨਸੈ ॥
ਜਾ ਕੈ ਕੀਰਤਿ ਨਿਰਮਲ ਸਾਰ ॥
ਜਾ ਕੀ ਰੇਨੁ ਬਾਂਛੈ ਸੰਸਾਰ ॥੨॥

ਕੋਟਿ ਪਤਿਤ ਜਾ ਕੈ ਸੰਗਿ ਉਧਾਰ ॥
ਏਕੁ ਨਿਰੰਕਾਰੁ ਜਾ ਕੈ ਨਾਮ ਅਧਾਰ ॥
ਸਰਬ ਜੀਆਂ ਕਾ ਜਾਨੈ ਭੇਉ ॥
ਕ੍ਰਿਪਾ ਨਿਧਾਨ ਨਿਰੰਜਨ ਦੇਉ ॥੩॥

ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਜਬ ਭਏ ਕ੍ਰਿਪਾਲ ॥
ਤਬ ਭੇਟੇਗੁਰ ਸਾਧ ਦਇਆਲ ॥

ਪੰਨਾ ੮੬੪

ਦਿਨੁ ਰੈਣਿ ਨਾਨਕੁ ਨਾਮੁ ਧਿਆਏ ॥
ਸੂਖ ਸਹਜ ਆਨੰਦ ਹਰਿ ਨਾਏ ॥੪॥੪॥੬॥

पृ-८६३

गोंड महला ५॥

जा कै सँगि इहु मनु निरमलु ॥
जा कै सँगि हरि हरि सिमरनु ॥
जा कै सँगि किलबिख होहि नास ॥
जा कै सँगि रिदै परगास ॥१॥

से सँतन हरि के मेरे मीत ॥
केवल नामु गाईऐ जा कै नीत ॥१॥रहाउ॥

जा कै मँत्रि हरि हरि मनि वसै ॥
जा कै उपदेसि भरमु भउ नसै ॥
जा कै कीरति निरमल सार ॥
जा की रेनु बांछै सँसार ॥२॥

कोटि पतित जा कै सँगि उधार ॥
एकु निरँकारु जा कै नाम अधार ॥
सरब जीआं का जानै भेउ ॥
कृपा निधान निरँजन देउ ॥३॥

पारब्रहम जब भए कृपाल ॥
तब भेटेगुर साध दइआल ॥

पृ-८६४

दिनु रैणि नानकु नामु धिआए ॥
सूख सहज आनँद हरि नाए ॥४॥४॥६॥

गोंड महला – ५

इस शब्द में गुरु जी यह वर्णन करते हैं कि उनके मन में उन संतों के प्रति कितना अधिक प्रेम है जो प्रभु नाम का ध्यान करते हैं और नित्य उसके यश का गायन करते हैं ।

वह कहते हैं : " जिनकी संगति में यह मन पवित्र और निर्मल होता है, जिनकी संगति में हरि के नाम को स्मरण किया जाता है, जिनकी संगति में हमारे दुखों तथा पापों का नाश होता है, जिनकी संगति से हृदय में (ज्ञान) का प्रकाश होता है (वही मेरे सच्चे मित्र हैं) "।(१)

उपरोक्त कथन को गुरु जी एक बार फिर दृढ़ता से कहते हैं : " (हाँ, हे' मानव जनों), हरि के वह संत लोग मेरे (सच्चे) मित्र हैं (जिनकी संगति में) हम नित्य ही केवल प्रभु के नाम की महिमा का गुणगान करते हैं (और अधिक कुछ नहीं) "।(१-विराम)

अब गुरु जी संतजनों की उच्च आत्मिक स्तरीय सँगति में रह कर प्राप्त होने वाले वरदानों का वर्णन करते हुये कहते हैं : "जिनके द्वारा दिये गये मंत्र से हरि हमारे हृदय में आकर बसने लगते हैं, जिनके उपदेशों को सुन कर मन में से भ्रम और भय पलायन कर जाते हैं, जिनकी संगति में (हरि की) पवित्र कीर्ति एवं महिमा का सार मन में आ बसता है तथा जिनकी चरण धूलि समस्त संसार को वांछित है, (ऐसे प्रभु के भक्तजनों से मित्रता के लिये मैं अति उत्सुक हूँ)"।(२)

प्रभु के सच्चे संतों के अनूठे गुणों की सूची को और आगे बढ़ाते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हाँ, वह संत मेरे मित्र हैं) जिनकी संगति में करोड़ों पापी तथा पतित जनों का उद्धार होता है और जिनके मन को केवल एक निराकार प्रभु नाम का ही आधार है ।(वही प्रभु) समस्त जीवों के मन के भेदों से परिचित हैं और वही निरँजन हरि कृपा के भंडार हैं "।(३)

शब्द के अँत में गुरु जी व्यक्त कर रहे हैं कि कैसे उन्हें सच्चे गुरु की सँगति प्राप्त हुई और उसमें रह कर मिलने वाले वरदानों से वह कितने

आनंदित हैं। वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जब सर्वव्यापी प्रभु की कृपा हुयी, तब मेरी भेंट दयालु एवं साधु स्वभाव वाले गुरु से हुयी। अब दिन और रात, नानक प्रभु नाम का ध्यान करते हैं और हरि नाम के द्वारा वह सुखशांति और सहजता का आनंद पा रहे हैं "।(४-४-६)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें संतजनों अथवा गुरु की संगति में रहना चाहिये और गुरु ग्रंथ साहिब में निहित दैवी ज्ञान को अपनी बुद्धि एवं विवेक से सुनना और समझना विचारना चाहिये। तभी हमारा मन दैवी ज्ञान से अवगत हो पायेगा और हमारे दुष्कर्मों का उत्तरोत्तर विनाश होगा, हम ईश्वर के नाम का ध्यान सच्चे प्रेम और श्रद्धा से करने लगेंगे तथा वास्तविक शांति और सहजता के साथ आनंदित रहेंगे।

ਪੰਨਾ ੮੬੫

ਗੋਂਡ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਪੰਨਾ ੮੬੬

ਗੁਰ ਕੇ ਚਰਨ ਕਮਲ ਨਮਸਕਾਰਿ ॥
ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਇਸੁ ਤਨ ਤੇ ਮਾਰਿ ॥
ਹੋਇ ਰਹੀਐ ਸਗਲ ਕੀ ਰੀਨਾ ॥
ਘਟਿ ਘਟਿ ਰਮਈਆ ਸਭ ਮਹਿ ਚੀਨਾ ॥੧॥

ਇਨ ਬਿਧਿ ਰਮਹੁ ਗੋਪਾਲ ਗੋੁਬਿੰਦੁ ॥
ਤਨੁ ਧਨੁ ਪ੍ਰਭ ਕਾ ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਜਿੰਦੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਆਠ ਪਹਰ ਹਰਿ ਕੇ ਗੁਣ ਗਾਉ ॥
ਜੀਅ ਪ੍ਰਾਨ ਕੋ ਇਹੈ ਸੁਆਉ ॥
ਤਜਿ ਅਭਿਮਾਨੁ ਜਾਨੁ ਪ੍ਰਭੁ ਸੰਗਿ ॥
ਸਾਧ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ਹਰਿ ਸਿਉ ਮਨੁ ਰੰਗਿ ॥੨॥

ਜਿਨਿ ਤੂੰ ਕੀਆ ਤਿਸ ਕਉ ਜਾਨੁ ॥
ਆਗੈ ਦਰਗਹ ਪਾਵੈ ਮਾਨੁ ॥
ਮਨੁ ਤਨੁ ਨਿਰਮਲ ਹੋਇ ਨਿਹਾਲੁ ॥
ਰਸਨਾ ਨਾਮੁ ਜਪਤ ਗੋਪਾਲ ॥੩॥

ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਮੇਰੇ ਦੀਨ ਦਇਆਲਾ ॥
ਸਾਧੂ ਕੀ ਮਨੁ ਮੰਗੈ ਰਵਾਲਾ ॥
ਹੋਹੁ ਦਇਆਲ ਦੇਹੁ ਪ੍ਰਭ ਦਾਨੁ ॥
ਨਾਨਕੁ ਜਪਿ ਜੀਵੈ ਪ੍ਰਭ ਨਾਮੁ ॥੪॥੧੧॥੧੩॥

पृ-८६५

गोंड महला ५॥

पृ-८६६

गुर के चरन कमल नमसकारि ॥
कामु क्रोधु इसु तन ते मारि ॥
होइ रहीऐ सगल की रीना ॥
घटि घटि रमईआ सभ महि चीना ॥१॥

इन बिधि रमहु गोपाल गोबिँदु ॥
तनु धनु प्रभ का प्रभ की जिँदु ॥१॥रहाउ॥

आठ पहर हरि के गुण गाउ ॥
जीअ प्रान को इहै सुआउ ॥
तजि अभिमानु जानु प्रभु सँगि ॥
साध प्रसादि हरि सिउ मनु रँगि ॥२॥

जिनि तूँ कीआ तिस कउ जानु ॥
आगै दरगह पावै मानु ॥
मनु तनु निरमल होइ निहालु ॥
रसना नामु जपत गोपाल ॥३॥

करि किरपा मेरे दीन दइआला ॥
साधू की मनु मँगै रवाला ॥
होहु दइआल देहु प्रभ दानु ॥
नानकु जपि जीवै प्रभ नामु ॥४॥११॥१३॥

गोंड महला - ५

इस शब्द में गुरु जी हमें यह बताते हैं कि कैसे प्रभु नाम का ध्यान किया जाये और इस प्रक्रिया का वास्तव में क्या महत्व है । वह यह भी कहते हैं कि.हमें अपना जीवन किस प्रकार से व्यतीत करना चाहिये जिससे कि हम अपने प्रिय प्रभु से एक बार फिर एकाकार होने का मुख्य ध्येय प्राप्त कर सकें, क्योंकि, हम उनसे चिरकाल से बिछुड़े हुये हैं ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), गुरु के चरण कमलों में नमस्कार है ।(गुरु की पवित्र वाणी का आदर सहित अनुसरण करते हुये) अपने तन में से काम और क्रोध के विकारों को नष्ट करो ।(हमें सदा इतना विनम्र रहना चाहिये कि जैसे) हम सबके चरणों की धूल के समान हैं, इस प्रकार घट घट में व्याप्त प्रभु सभी में दृष्टिगोचर होते हैं "।(१)

प्रभु नाम का ध्यान करने की विधि का वर्णन करते हुए गुरु जी अब कहते हैं: " (हे' मेरे मित्रो), इस विधि से धरती के स्वामी प्रभु में रमे रहो कि जैसे यह तन और धन प्रभु की देन है और ऐसा मान कर चलो कि यह जीवन तथा प्राण भी उसी प्रभु के दिये हुए हैं "।(१-विराम)

गुरु जी और आगे कहते हैं: "(हे' मेरे मित्रो), आठों पहर प्रभु के गुण गाओ, क्योंकि, यही केवल हमारे जीवन अथवा प्राणों का मुख्य ध्येय है । अपना अभिमान त्यागो और (सदा के लिये) प्रभु को अपने निकट जानो तथा साधु संतों की कृपा के द्वारा अँतरमन को हरि प्रेम के रंग में रचाये रखो"।(२)

गुरु जी आगे उपदेश देते हुये कहते हैं : "(हे' प्राणी), उस हरि को जानो तथा विचारो जिसने तुम्हें सृजित किया जिससे कि तुम उसके घर में सम्मान पा सको । अपनी जिह्वा से धरती के स्वामी का नाम जपते रहने से तुम्हारे तन और मन दोनों ही पवित्र और प्रसन्न रहते हैं "।(३

किस प्रकार प्रभु से प्रार्थना करें और क्या याचना करें, यह प्रकट करते हुये गुरु जी शब्द के अंत में कहते हैं :" हे' मेरे दीन दयालु (प्रभु), कृपा करो, मेरा मन संत की चरण धूलि (उसकी विनम्र भाव से सेवा एवं भक्ति) की भिक्षा माँगता है । हे' प्रभु , दया करके ऐसा दान प्रदान करो जिससे कि नानक (सदैव) प्रभु नाम का जाप करते हुये जीवित रहें "।(४-११-१३)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें गुरु की शरण में रहना चाहिये । उसके उपदेशों का पालन करते हुये अपने अहंकार, काम एवं क्रोध को त्याग कर प्रभु नाम का ध्यान इतने प्रेम और श्रद्धा के साथ करना चाहिए कि हम अपना तन, मन तथा धन, यहाँ तक कि अपनी आत्मा को भी प्रभु की धरोहर समझें ।

ਪੰਨਾ ੮੬੭	**पृ-८६७**
ਗੋਂਡ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**गोंड महला ५॥**
ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨੁ ਨੀਰਿ ਨਰਾਇਣ ॥ ਰਸਨਾ ਸਿਮਰਤ ਪਾਪ ਬਿਲਾਇਣ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	नामु निरँजनु नीरि नराइण ॥ रसना सिमरत पाप बिलाइण ॥१॥रहाउ॥
ਪੰਨਾ ੮੬੮	**पृ-८६८**
ਨਾਰਾਇਣ ਸਭ ਮਾਹਿ ਨਿਵਾਸ ॥ ਨਾਰਾਇਣ ਘਟਿ ਘਟਿ ਪਰਗਾਸ ॥ ਨਾਰਾਇਣ ਕਹਤੇ ਨਰਕਿ ਨ ਜਾਹਿ ॥ ਨਾਰਾਇਣ ਸੇਵਿ ਸਗਲ ਫਲ ਪਾਹਿ ॥੧॥	नाराइण सभ माहि निवास ॥ नाराइण घटि घटि परगास ॥ नाराइण कहते नरकि न जाहि ॥ नाराइण सेवि सगल फल पाहि ॥१॥
ਨਾਰਾਇਣ ਮਨ ਮਾਹਿ ਅਧਾਰ ॥ ਨਾਰਾਇਣ ਬੋਹਿਥ ਸੰਸਾਰ ॥ ਨਾਰਾਇਣ ਕਹਤ ਜਮੁ ਭਾਗਿ ਪਲਾਇਣ ॥ ਨਾਰਾਇਣ ਦੰਤ ਭਾਨੇ ਡਾਇਣ ॥੨॥	नाराइण मन माहि अधार ॥ नाराइण बोहिथ सँसार ॥ नाराइण कहत जमु भागि पलाइण ॥ नाराइण दँत भाने डाइण ॥२॥
ਨਾਰਾਇਣ ਸਦ ਸਦ ਬਖਸਿੰਦ ॥ ਨਾਰਾਇਣ ਕੀਨੇ ਸੂਖ ਅਨੰਦ ॥ ਨਾਰਾਇਣ ਪ੍ਰਗਟ ਕੀਨੋ ਪਰਤਾਪ ॥ ਨਾਰਾਇਣ ਸੰਤ ਕੋ ਮਾਈ ਬਾਪ ॥੩॥	नाराइण सद सद बखसिँद ॥ नाराइण कीने सूख अनँद ॥ नाराइण प्रगट कीनो परताप ॥ नाराइण सँत को माई बाप ॥३॥
ਨਾਰਾਇਣ ਸਾਧਸੰਗਿ ਨਰਾਇਣ ॥ ਬਾਰੰ ਬਾਰ ਨਰਾਇਣ ਗਾਇਣ ॥ ਬਸਤੁ ਅਗੋਚਰ ਗੁਰ ਮਿਲਿ ਲਹੀ ॥ ਨਾਰਾਇਣ ਓਟ ਨਾਨਕ ਦਾਸ ਗਹੀ ॥੪॥੧੭॥੧੯॥	नाराइण साधसँगि नराइण ॥ बारँ बार नाराइण गाइण ॥ बसतु अगोचर गुर मिलि लही ॥ नाराइण ओट नानक दास गही ॥४॥१७॥१९॥

गोंड महला - ५

इस शब्द में गुरु जी प्रभु के अनेकों गुणों और मनुष्य को उसके नाम का ध्यान धरने से मिलने वाले आशीर्वादों की व्याख्या करते हैं ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु का नाम माया मोह से परे तथा दोषरहित निर्मल नीर जैसा है (जिस पर समस्त जीवन आश्रित है)। जब हम अपनी रसना से उसके नाम का जाप करते हैं तब हमारे समस्त पाप पलायन कर जाते हैं "।(१-विराम)

प्रभु के अनूठे गुणों का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), नारायण का वास सभी में है। उसका प्रकाश घट घट में है। उसके नाम का उच्चारण करने वाले नर्क में नहीं जाते । प्रभु की सेवा और भक्ति करने से सभी को फल मिलता है (अर्थात, इच्छायों की पूर्ति होती है)"।(१)

प्रभु नाम के गुणों को गुरु जी विस्तार से कहते हैं: " (हे' मेरे मित्रो), नारायण (का नाम) हमारे मन का आधार है, उसका नाम भवसागर को पार करने के लिये एक जहाज़ के समान है । नारायण नाम का उच्चारण करने से यमदूत भी पलायन कर जाते हैं (मनुष्य को मृत्यु से भय नहीं लगता)। नारायण (अथवा प्रभु) नाम का ध्यान (सांसारिक मोहमाया एवं सामर्थ्य, सत्ता रूपी) डायन के मानो दाँत तोड़ देता है (अर्थात् भक्त के मन में से इसके प्रति आकर्षण अथवा लोभ समाप्त हो जाता है)"।(२)

अब प्रभु के दयालु, उपकारी एवं क्षमा स्वभाव पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु सदा ही क्षमा करने वाले हैं । नारायण ने (अपने भक्तजनों के मन को) सुखी और आनंदित किया है तथा वह प्रभु उन्हें प्रतापी एवं यशस्वी भी बनाते हैं, अतः, वह संतों के माता पिता (के समान) हैं "।(३)

संतजन प्रभु को कैसे स्मरण करते हैं और कैसे वह प्रत्येक क्षण उस पर आश्रित रहते हैं, इसका वर्णन गुरु जी शब्द के अंत में करते हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), संतजनों की संगति में जो लोग बारम्बार नारायण नाम का गायन एवं ध्यान करते हैं, वह गुरु के मिल जाने पर अपनी बुद्धि और समझ सोच से भी परे एक अगोचर वस्तु (प्रभु के नाम) को प्राप्त कर लेते हैं । इसलिए , हे' नानक (प्रभु के) दास, तुमने उसी प्रभु का आश्रय ले लिया है"।(४-१७-१९)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम संतजनों की संगति में प्रभु नाम का जाप बारम्बार करने से उसके आश्रय को प्राप्त कर सकें तो हमारे जन्म मरण के भय विलीन हो जाते हैं, पापकर्म मिट जाते हैं और हम शांति, सहजता और आनंद की दशा में सदैवी रूप से रहने लगते हैं ।

ਪੰਨਾ ੮੭੦

ਰਾਗੁ ਗੋਂਡ ਬਾਣੀ ਭਗਤਾ ਕੀ ॥
ਕਬੀਰ ਜੀ ਘਰੁ ੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਸੰਤੁ ਮਿਲੈ ਕਿਛੁ ਸੁਨੀਐ ਕਹੀਐ ॥
ਮਿਲੈ ਅਸੰਤੁ ਮਸਟਿ ਕਰਿ ਰਹੀਐ ॥੧॥

ਬਾਬਾ ਬੋਲਨਾ ਕਿਆ ਕਹੀਐ ॥
ਜੈਸੇ ਰਾਮ ਨਾਮ ਰਵਿ ਰਹੀਐ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸੰਤਨ ਸਿਉ ਬੋਲੇ ਉਪਕਾਰੀ ॥
ਮੂਰਖ ਸਿਉ ਬੋਲੇ ਝਖ ਮਾਰੀ ॥੨॥

ਬੋਲਤ ਬੋਲਤ ਬਢਹਿ ਬਿਕਾਰਾ ॥
ਬਿਨੁ ਬੋਲੇ ਕਿਆ ਕਰਹਿ ਬੀਚਾਰਾ ॥੩॥

ਕਹੁ ਕਬੀਰ ਛੂਛਾ ਘਟੁ ਬੋਲੈ ॥
ਭਰਿਆ ਹੋਇ ਸੁ ਕਬਹੁ ਨ ਡੋਲੈ ॥੪॥੧॥

पृ-८७०

राग गोंड बाणी भगता की ॥
कबीर जी घर १

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सँतु मिलै किछु सुनीऐ कहीऐ ॥
मिलै असँतु मसटि करि रहीऐ ॥१॥

बाबा बोलना किआ कहीऐ ॥
जैसे राम नाम रवि रहीऐ ॥१॥रहाउ

सँतन सिउ बोले उपकारी ॥
मूरख सिउ बोले झख मारी ॥२॥

बोलत बोलत बढहि बिकारा ॥
बिनु बोले किआ करहि बीचारा ॥३॥

कहु कबीर छूछा घटु बोलै ॥
भरिआ होइ सु कबहु न डोलै ॥४॥१॥

राग गोंड बानी भगता की — कबीर जी (घर - १)

जीवन काल में मनुष्य का विभिन्न प्रकार के लोगों से मिलन होता है । कुछ इतने विनम्र, मनोहर और सहज स्वभाव के होते हैं कि उन्हें हम संत कहते हैं और कुछ अंहकारी, मूर्ख एवं वाचाल होते हैं जिनके लिए हम समझ नहीं पाते कि उनसे कैसे दूर रहा जाये । इस शब्द में कबीर जी हमें बताते हैं कि हमारा व्यवहार ऐसे विभिन्न प्रकार के लोगों से मिलने पर कैसा होना चाहिये ।

कबीर जी आरंभ में ही कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), यदि हमारी भेंट किसी संत स्वभाव व्यक्ति से होती है तो हमें उसकी बात सुननी चाहिये तथा स्वयं के भी कुछ विचार कहने चाहिये, परन्तु, यदि हम किसी असंत अथवा अज्ञानी व्यक्ति से मिलते हैं तो हमें चुप रहना चाहिये ।(१)

किसी से मिलने पर किस प्रकार का वार्तालाप करना चाहिये, इसका वर्णन करते हुये कबीर जी कहते हैं : “ हे’ मेरे आदरणीय मित्रो, (यदि तुम मेरे से पूछते हो कि किसी से मिलने पर) क्या बोलना अथवा कहना चाहिये (तब मेरा उत्तर है कि हमें वही वार्तालाप करना चाहिये जो) हमें राम के नाम में रमे रहने के लिये सहायता करे ”।(१-विराम)

संतजन तथा अज्ञानी लोगों से किये गये वार्तालाप के सार की तुलना करते हुये कबीर जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), जब हम संतजनों से वार्तालाप करते हैं तब (हम सदाचारी बात करते हैं और) परोपकार की बात बोलते हैं, परन्तु, जब हम मूर्ख अथवा अज्ञानी से वार्तालाप करते हैं तो वह झख मारने अथवा समय व्यर्थ करने जैसा होता है ”।(२)

मूर्ख, अज्ञानी एवं अंहकारी मनुष्य से वार्तालाप ना करने की आवश्यकता तथा किसी भले संत के साथ बातचीत करने की अनिवार्यता पर कबीर जी दृढ़ता से कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), जब हम (अहंकारी मूर्ख लोगों) से अधिक बात करते रहते हैं, तब अनेक विकार उत्पन्न होने लगते हैं (गाली गलौज व मार पीट आदि) । परन्तु, यदि हम किसी से कुछ भी वार्तालाप नहीं करते तब हम क्या करेंगे (अथवा, कैसे कुछ सीख पायेंगे, अतः, जब हम सदाचारी एवं संतजनों से मिलें तब उनके साथ विचार विनिमय करके अपनी आत्मिक यात्रा को आगे बढ़ा सकते हैं) ” ।(३)

कबीर जी शब्द का अंत अपने अनुभव तथा अंतर्निहित उपदेश की भावना के साथ करते हुये कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), आधा भरा घड़ा छलकता अथवा बोलता है जबकि भरा हुया कभी नहीं हिलता डोलता । (अर्थात, जो कोई भी वास्तविक ज्ञान से दूर है वह अधिक अनर्गल बात करता है, जब कि एक ज्ञानी मनुष्य कभी भी अपनी शांति और सहजता को नहीं गवाँता)”।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि जब हम सदाचारी और संत लोगों से मिलें तब उनके साथ हमारा वार्तालाप ऐसे विषयों पर होना चाहिये जो हमें प्रभु के समीप लायें तथा प्रभु नाम के ध्यान में सहायता करें । किन्तु यदि हम प्रभु को बिसारे हुये अंहकारी लोगों के सम्पर्क में आते हैं तब चुप रहने में ही भलाई है, क्योंकि, उनसे किसी प्रकार का विचार विनिमय करना केवल समय का नाश ही नहीं, अपितु, किसी भी कोई झगड़े, वाद- विवाद अथवा मार-पीट तथा अन्य दुष्परिणामों का कारण बन सकता है ।

ਪੰਨਾ ੮੭੨

ਗੋਂਡ ॥

ਗ੍ਰਿਹਿ ਸੋਭਾ ਜਾ ਕੈ ਰੇ ਨਾਹਿ ॥
ਆਵਤ ਪਹੀਆ ਖੂਧੇ ਜਾਹਿ ॥
ਵਾ ਕੈ ਅੰਤਰਿ ਨਹੀ ਸੰਤੋਖੁ ॥
ਬਿਨੁ ਸੋਹਾਗਨਿ ਲਾਗੈ ਦੋਖੁ ॥੧॥

ਧਨੁ ਸੋਹਾਗਨਿ ਮਹਾ ਪਵੀਤ ॥
ਤਪੇ ਤਪੀਸਰ ਡੋਲੈ ਚੀਤ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸੋਹਾਗਨਿ ਕਿਰਪਨ ਕੀ ਪੂਤੀ ॥
ਸੇਵਕ ਤਜਿ ਜਗਤ ਸਿਉ ਸੂਤੀ ॥
ਸਾਧੂ ਕੈ ਠਾਢੀ ਦਰਬਾਰਿ ॥
ਸਰਨਿ ਤੇਰੀ ਮੋ ਕਉ ਨਿਸਤਾਰਿ ॥੨॥

ਸੋਹਾਗਨਿ ਹੈ ਅਤਿ ਸੁੰਦਰੀ ॥
ਪਗ ਨੇਵਰ ਛਨਕ ਛਨਹਰੀ ॥
ਜਉ ਲਗੁ ਪ੍ਰਾਨ ਤਊ ਲਗੁ ਸੰਗੇ ॥
ਨਾਹਿ ਤ ਚਲੀ ਬੇਗਿ ਉਠਿ ਨੰਗੇ ॥੩॥

ਸੋਹਾਗਨਿ ਭਵਨ ਤ੍ਰੈ ਲੀਆ ॥
ਦਸ ਅਠ ਪੁਰਾਣ ਤੀਰਥ ਰਸ ਕੀਆ ॥
ਬ੍ਰਹਮਾ ਬਿਸਨੁ ਮਹੇਸਰ ਬੇਧੇ ॥
ਬਡੇ ਭੂਪਤਿ ਰਾਜੇ ਹੈ ਛੇਧੇ ॥੪॥

ਸੋਹਾਗਨਿ ਉਰਵਾਰਿ ਨ ਪਾਰਿ ॥
ਪਾਂਚ ਨਾਰਦ ਕੈ ਸੰਗਿ ਬਿਧਵਾਰਿ ॥
ਪਾਂਚ ਨਾਰਦ ਕੇ ਮਿਟਵੇ ਫੂਟੇ ॥
ਕਹੁ ਕਬੀਰ ਗੁਰ ਕਿਰਪਾ ਛੂਟੇ ॥੫॥੫॥੮॥

पृ-८७२

गोंड

गिृहि सोभा जा कै रे नाहि ॥
आवत पहीआ खूधे जाहि ॥
वा कै अँतरि नही सँतोखु ॥
बिनु सोहागिन लागै दोखु ॥१॥

धनु सोहागिन महा पवीत ॥
तपे तपीसर डोलै चीत ॥१॥रहाउ॥

सोहागिन किरपन की पूती ॥
सेवक तजि जगत सिउ सूती ॥
साधू कै ठाढी दरबारि ॥
सरनि तेरी मो कउ निसतारि ॥२॥

सोहागिन है अति सुँदरी ॥
पग नेवर छनक छनहरी ॥
जउ लगु प्रान तऊ लगु सँगे ॥
नाहि त चली बेगि उठि नँगे ॥३॥

सोहागिन भवन त्रै लीआ ॥
दस अठ पुराण तीरथ रस कीआ ॥
ब्रहमा बिसनु महेसर बेधे ॥
बडे भूपति राजे है छेधे ॥४॥

सोहागिन उरवारि न पारि ॥
पांच नारद कै सँगि बिधवारि ॥
पांच नारद के मिटवे फूटे ॥
कहु कबीर गुर किरपा छूटे ॥५॥५॥८॥

राग गोंड बाणी कबीर जी की घर - १
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में कबीर जी यह स्पष्ट करते हैं कि माया (सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य) केवल साधारण मनुष्य को ही नहीं, अपितु, शक्तिशाली राजा एवं धार्मिक गुरुयों को भी विचलित करती है, यहाँ तक कि सँत स्वभाव वाले लोगों के लिए भी यह एक अनिवार्य घटक है ।

सर्वप्रथम, माया के महत्व पर कबीर जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जिसके भी गृह में माया शोभायमान नहीं है, यदि कोई अतिथि वहाँ आता है तो वह भूखा जाता है, तब उस (गृहस्वामी) के मन में असंतोष होता है (वह सोचता है कि) बिना सोहागिन (माया अथवा धन) के लांछन लगेगा (कि अतिथि को भूखा जाना पड़ा)"।(१)

अत: माया के लिये विवश हो कर प्रलोभित होने पर कबीर जी चकित होते हैं और कहते हैं : "(माया की अनिवार्यता देखते हुये यह कहना पड़ता है कि) यह सोहागिन (माया) कितनी पवित्र एवं धन्य है (जिसके बिना) महान तपस्वियों के मन भी अस्थिर रहते हैं (असन्तुष्ट हो जाते हैं) "।(१-विराम)

कैसे साधारण लोग और संत जन माया से प्रलोभित हो जाते हैं, इसका वर्णन करते हुये कबीर जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, माया के प्रेमी माया का इस प्रकार संचय करते हैं जैसे कि) यह सोहागिन एक कृपण की पुत्री हो । (संतों के अतिरिक्त, समस्त संसार इससे इतना अधिक प्रेम करता है कि यह कहना उचित होगा कि) संतों के अतिरिक्त यह समस्त विश्व के साथ सोती है । (बहुधा, धनाढ्य वर्ग के लोग अनेकों मूल्यवान भेंट के साथ संतों के द्वार पर उनके आशीर्वाद की याचना में खड़े पाये जाते हैं, तब ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि स्वयं माया ही) उन साधू संतों के समक्ष खड़ी कह रही हो कि मैं तुम्हारी शरण में आन पड़ी हूँ, (कृपया) मेरा उद्धार करो "।(२)

माया का वास्तविक रूप व्यक्त करते हुये कबीर जी कहते हैं : "(माया देखने में) अति सुंदर सोहागिन है, जिसके पैरों में चाँदी की पायल छनकती है । अन्यथा, जब तक किसी में प्राण हैं तब तक ही वह उसके साथ रहती है, (किन्तु, मृत्यु के पश्चात तुरंत ही वह किसी और की सम्पत्ति बनने के लिए) वेग के साथ नंगे पाँव ही उठ भागती है "।(३)

कबीर जी का कहना है कि केवल साधारण मनुष्य ही नहीं, अपितु, राजा, महाराजा, ज्ञानी पंडित तथा देवतागण आदि सभी माया के लोभ में फँसे हुए हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), इस माया रूपी सोहागिन ने तीनों लोकों पर विजय पा ली है । जिन्होंने अठारह पुराण पढ़े अथवा तीर्थ यात्रायें कीं वह भी इसके रस के शिकार हो गये । ब्रह्मा, विष्णु और महेश जैसे महान देवतागण भी (इसके बाणों से) बींधे गये और अनेकों बड़े बड़े भूपति अथवा राजा लोग भी इसके चंगुल में फँस कर नष्ट हुये "।(४)

अंत में कबीर जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), इस माया रूपी सोहागिन का कोई आर पार नहीं है ।हमारी पाँचो ज्ञानन्द्रियों (स्पर्श, स्वाद, ध्वनि, घ्राण शक्ति तथा वाणी) के साथ इसकी सन्धि है, (क्योंकि,यह किसी भी मनुष्य को इनमें से किसी एक के भी द्वारा अपने वश में कर लेती है)। किन्तु, कबीर जी कहते हैं : " गुरु की कृपा से मैं इसके चंगुल से छूट गया हूँ, क्योंकि, (पाँचो प्रवृत्तियों को अपने वश में कर लेने से) अब यह पाँचो चंचल आवेगों रूपी घड़े फूट गये हैं "।(५-५-८)

इस शब्द का संदेश यह है कि इसमें कोई संदेह नहीं कि माया (धन एवं सामर्थ्य) के बिना संसार में उचित प्रकार से जीवन व्यतीत करना अति कठिन है और कई बार इसके अभाव में हमें दुख और लज्जा का आभास होता है कि हम किसी की कोई यथार्थ सहायता करने के योग्य नहीं हैं । अतः, हमारे पास कुछ न कुछ पूँजी अपने परिवार की आवश्यकतायों तथा सामाजिक कार्यों को सम्पन्न करने के लिये अवश्य होनी चाहिये । किन्तु, स्मरण रहे कि साधारण लोगों के लिए तो क्या कहें महाज्ञानी एवं संत जन भी इसकी दमक से आकर्षित हो जाते हैं, इसलिये, हमें सदा प्रभु से यह विनती करनी चाहिये कि वह सांसारिक झूठे प्रलोभनों में फँसने से हमारी रक्षा करें ।

ਪੰਨਾ ੮੭੪

ਗੋਂਡ ॥

ਮੋ ਕਉ ਤਾਰਿ ਲੇ ਰਾਮਾ ਤਾਰਿ ਲੇ ॥
ਮੈ ਅਜਾਨੁ ਜਨੁ ਤਰਿਬੇ ਨ ਜਾਨਉ ਬਾਪ ਬੀਠੁਲਾ ਬਾਹ ਦੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਨਰ ਤੇ ਸੁਰ ਹੋਇ ਜਾਤ ਨਿਮਖ ਮੈ ਸਤਿਗੁਰ ਬੁਧਿ ਸਿਖਲਾਈ ॥
ਨਰ ਤੇ ਉਪਜਿ ਸੁਰਗ ਕਉ ਜੀਤਿਓ ਸੋ ਅਵਖਧ ਮੈ ਪਾਈ ॥੧॥

ਜਹਾ ਜਹਾ ਧੂਅ ਨਾਰਦੁ ਟੇਕੇ ਨੈਕੁ ਟਿਕਾਵਹੁ ਮੋਹਿ ॥
ਤੇਰੇ ਨਾਮ ਅਵਿਲੰਬਿ ਬਹੁਤੁ ਜਨ ਉਧਰੇ ਨਾਮੇ ਕੀ ਨਿਜਮਤਿ ਏਹ ॥੨॥੩॥

पृ-८७४

गोंड

मो कउ तारि ले रामा तारि ले ॥
मै अजानु जनु तरिबे न जानउ बाप बीठुला बाह दे ॥१॥ रहाउ॥

नर ते सुर होइ जात निमख मै सतिगुर बुधि सिखलाई ॥
नर ते उपजि सुरग कउ जीतिओ सो अवखध मै पाई ॥१॥

जहा जहा धूअ नारदु टेके नैकु टिकावहु मोहि ॥
तेरे नाम अविलँबि बहुतु जन उधरे नामे की निजमति एह ॥२॥३॥

राग गोंड बाणी नामदेव जी की घर-१
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द में भक्त नामदेव जी यह प्रकट करते हैं कि हम उस प्रभु से क्या याचना करें जबकि हम उसे अपने समक्ष ही उपस्थित पाते हैं ।

एक अबोध बालक की भाँति नामदेव जी प्रभु को पुकारते हुये कहते हैं : " मुझे उबार लो, हे' राम, मुझे उबार लो । मैं एक अनजान व्यक्ति हूँ, मुझे (भवसागर में से) तैरना नहीं आता । अतः, हे' मेरे प्रिय पिता, विठ्ठल (प्रभु), अपनी बाँह दो (और मुझे इस भवसागर में से बाहर निकालो "।(१-विराम)

अपने सच्चे गुरु से जो अनमोल उपदेश उन्हें प्राप्त हुया उसका वर्णन करते हुये नामदेव जी कहते हैं : "(हे' प्रभु, मेरे) सच्चे गुरु ने मुझे ऐसी बुद्धि और शिक्षा प्रदान की है जिसका पालन करके एक क्षण में मानव देवता बन जाता है । हाँ (मेरे गुरु से मुझे) ऐसी औषधि प्राप्त हुई है जिसकी सहायता से मैंने मानव जाति में उपज कर भी स्वर्ग को जीत लिया है "।(१)

अब नामदेव जी प्रभु से अनुरोध करते हुये कहते हैं: "(हे' मेरे प्रभु), जहाँ जहाँ भी तुमने ध्रुव और नारद जैसे भक्तों को रखा है, मुझे भी वहाँ थोड़ा सा टिकाना दे दो । (हे' प्रभु), नामे की अपनी धारणा अथवा मति यह है कि तुम्हारे नाम का अवलम्बन पाकर अनेकों जनों का उद्धार हुया है (इसलिये, कृपया मेरा भी उद्धार करो)"।(२-३)

इस शब्द का संदेश इस प्रकार है कि अन्य महान भक्तजनों की भाँति यदि हम भी स्थायी रूप से प्रभु के साथ आन्नदित दशा में लीन रहना चाहते हैं तो हमें गुरु के पवित्र उपदेशों का पालन करना चाहिये, जो हमारे व्यक्तित्व को इस प्रकार से ढाल देंगे कि हम साधारण मानव न रह कर एक गुणी देवदूत का आचरण पा लेंगे । इस लिये हमें प्रभु नाम का ध्यान करते हुये उनसे प्रार्थना करनी चाहिये कि वह अपनी कृपा करें और अपने में एकरूप होने का वरदान दें ।

ਪੰਨਾ ੮੭੬

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੧ ਘਰੁ ੧ ਚਉਪਦੇ

ੴ ਸਤਿ ਨਾਮੁ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰਭਉ ਨਿਰਵੈਰੁ ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਅਜੂਨੀ ਸੈਭੰ ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਕੋਈ ਪੜਤਾ ਸਹਸਾਕਿਰਤਾ ਕੋਈ ਪੜੈ ਪੁਰਾਨਾ ॥
ਕੋਈ ਨਾਮੁ ਜਪੈ ਜਪਮਾਲੀ ਲਾਗੈ ਤਿਸੈ ਧਿਆਨਾ ॥
ਅਬ ਹੀ ਕਬ ਹੀ ਕਿਛੂ ਨ ਜਾਨਾ ਤੇਰਾ ਏਕੋ ਨਾਮੁ ਪਛਾਨਾ ॥੧॥

ਨ ਜਾਣਾ ਹਰੇ ਮੇਰੀ ਕਵਨ ਗਤੇ ॥
ਹਮ ਮੂਰਖ ਅਗਿਆਨ ਸਰਨਿ ਪ੍ਰਭ ਤੇਰੀ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਰਾਖਹੁ ਮੇਰੀ ਲਾਜ ਪਤੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕਬਹੂ ਜੀਅੜਾ ਊਭਿ ਚੜਤੁ ਹੈ ਕਬਹੂ ਜਾਇ ਪਇਆਲੇ ॥
ਲੋਭੀ ਜੀਅੜਾ ਥਿਰੁ ਨ ਰਹਤੁ ਹੈ ਚਾਰੇ ਕੁੰਡਾ ਭਾਲੇ ॥੨॥

ਮਰਣੁ ਲਿਖਾਇ ਮੰਡਲ ਮਹਿ ਆਏ ਜੀਵਣੁ ਸਾਜਹਿ ਮਾਈ ॥
ਏਕਿ ਚਲੇ ਹਮ ਦੇਖਹ ਸੁਆਮੀ ਭਾਹਿ ਬਲੰਤੀ ਆਈ ॥੩॥

ਨ ਕਿਸੀ ਕਾ ਮੀਤੁ ਨ ਕਿਸੀ ਕਾ ਭਾਈ ਨਾ ਕਿਸੈ ਬਾਪੁ ਨ ਮਾਈ ॥
ਪ੍ਰਣਵਤਿ ਨਾਨਕ ਜੇ ਤੂ ਦੇਵਹਿ ਅੰਤੇ ਹੋਇ ਸਖਾਈ ॥੪॥੧॥

पृ-८७६

रामकली महला १ घर १ चउपदे

१ओंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभँ गुर प्रसादि ॥

कोई पड़ता सहसाकिरता कोई पड़ै पुराना ॥
कोई नामु जपै जपमाली लागै तिसै धिआना ॥
अब ही कब ही किछू न जाना तेरा एको नामु पछाना ॥१॥

न जाणा हरे मेरी कवन गते ॥
हम मूरख अगिआन सरनि प्रभ तेरी करि किरपा राखहु मेरी लाज पते ॥१॥रहाउ॥

कबहू जीअड़ा ऊभि चड़तु है कबहू जाइ पइआले ॥
लोभी जीअड़ा थिरु न रहतु है चारे कुँडा भाले ॥२॥

मरणु लिखाइ मँडल महि आए जीवणु साजहि माई ॥
एकि चले हम देखह सुआमी भाहि बलँती आई ॥३॥

न किसी का मीतु न किसी का भाई न किसै बापु न माई ॥
प्रणवति नानक जे तू देवहि अँते होइ सखाई ॥४॥१॥

रामकली महला -१
घर - १ चउपदे

गुरु जी अति विनम्रता से राग रामकली का आरंभ करते हैं । एक प्रकार से वह यहाँ उन सरल स्वभाव लोगों की सामान्य मनोदशा को प्रकट कर रहे हैं जो प्रभु के नाम पर ध्यान लगाने का प्रयत्न तो करते हैं, परन्तु, उनका मन सभी प्रकार के उतार चढ़ाव में भटकता रहता है । यहाँ तक कि जब वह प्रभु की पूजा-ध्यान आदि में व्यस्त भी होते हैं तब भी निश्चित नहीं कर पाते कि ठीक कर रहे हैं, अथवा नहीं । क्योंकि, जब वह यह देखते हैं कि कुछ लोग वेदों तथा अन्य कई धार्मिक ग्रंथों का विस्तृत अध्ययन कर रहे हैं कुछ तीर्थ यात्रायों पर जा रहे हैं या निरंतर माला फेरने में व्यस्त हैं और अनेकों लोग धन सम्पदा का संचय करने में ऐसे लीन रहते हैं, जैसे कि, उन्हें सदैव ही संसार में रहना है । अतः, हमारे मन की ऐसी भ्रामक स्थितियों का उल्लेख करते हुये गुरु जी हमारे निमित्त अपने विचार प्रकट करते हैं ।

वह कहते हैं : "(हे' प्रभु), कोई मनुष्य सहसकृति में लिखे ग्रंथ (वेद) पढ़ता है, कोई पुराण (वेदों की व्याख्या) पढ़ता है । कोई प्रभु के नाम पर मन में गहन ध्यान लगाने के लिये माला लेकर जाप करता है ।(परन्तु, हे' प्रभु), ना ही अब और ना ही पहले कभी मैंने कुछ और जाना, मैंने तो (सदैव) केवल तुम्हारे नाम को ही पहचाना है "।(१)

गुरु जी अपने कथन को उचित सिद्ध करने की अपेक्षा विनम्र भाव से कहते हैं ; " हे' हरि, मैं नही जानता, मेरी कौन सी गति होने वाली है। मैं मूर्ख और अज्ञानी, हे' प्रभु, तेरी शरण में आया हूँ, कृपा करके मेरी लाज अथवा सम्मान की रक्षा करो " ।(१-विराम)

जैसा कि बहुधा होता है कि जब हम कोई लाटरी जीतने जैसा प्रसन्नता भरा समाचार पाते हैं तब आनन्द से उल्लसित हो जाते हैं, परन्तु, जब कोई दुखद बात सुनते हैं तो हमारा मन शोकाकुल हो जाता है ।हमारी ऐसी चेतनायों पर गुरु जी हमारे निमित्त कहते हैं ; "(हे' मेरे प्रभु), कभी कभी यह मेरा हृदय (इतना अधिक प्रसन्न होता है कि) आकाश में उड़ान लगाता है, परन्तु, (दुखी होने पर) यह गहरे कुँए में जा गिरता है । यह (हमारा) लोभी मन कभी भी स्थिर नहीं रहता और चारों ओर (सांसारिक मायामोह एवं सत्ता की) ढूँढ भाल का प्रयत्न करता रहता है "।(२)

यह भली भाँति से जानते हुये भी कि एक न एक दिन हमें काल के गाल में जाना ही है, परन्तु, फिर भी अधिक से अधिक धन सम्पदा एकत्र करने के हमारे स्वभाव पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं ; "(हे' प्रभु, यद्यपि), हम इस नाशवान संसार में मृत्यु को भाग्य में लिखवा कर लायें हैं, तथापि, हम जीवन को अमर मान कर वैसे प्रबंध करते रहते हैं ।(इस तथ्य को जानते हुये भी कि) हमारे समक्ष एक एक करके (सभी मित्र और सम्बंधी इस संसार से) हे' स्वामी, जा रहे हैं और (जब पाते हैं कि वृद्धावस्था में शरीर क्षीण होने लगा है तब आभास होता है कि)

मृत्यु की अग्नि की ज्वाला हमारे भी निकट आ रही है ”।(३)

इसलिये, शब्द के अंत में गुरु जी प्रभु से उसके नाम के दान की विनती करते हैं, क्योंकि, वही केवल अंत समय पर सच्ची सहायता एवं आश्रय प्रदान करता है । वह कहते हैं ; “(हे’ प्रभु, यह मैंने जान लिया है कि वास्तव में) कोई भी किसी का मित्र नहीं है, ना भाई, ना पिता और न ही माता (क्योंकि अंत में, मृत्यु के समय कोई भी कुछ सहायता नहीं कर सकता) । अतः, नानक दंडवत् विनती करते हैं कि यदि तुम देना चाहते हो (तो मुझे अपने नाम का उपहार दो) जो मेरे लिये अंत में एक सखा की भाँति सहायक सिद्ध हो सके ”।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें सांसारिक मोहमाया और सत्ता के पीछे भागते नहीं रहना चाहिए, अपितु, यह विचारना चाहिये कि अंत समय पर ना पिता, ना माता, ना कोई सम्बंधी, ना ही धन सम्पत्ति हमारी सहायता कर सकेंगे । अतः, यह चिंता छोड़कर कि कोई क्या कर रहा है, जैसे कि कोई व्रत उपवास करता है या माला फेर रहा है अथवा अन्य कर्मकांडों में या धन सम्पदा का संचय करने में व्यस्त है, हमें एकाग्रचित्त होकर प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिए, क्योंकि, अंत समय पर वही केवल हमारी रक्षा करेगा ।

ਪੰਨਾ ੮੭੭

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਸੁਣਿ ਮਾਛਿੰਦ੍ਰਾ ਨਾਨਕੁ ਬੋਲੈ ॥
ਵਸਗਤਿ ਪੰਚ ਕਰੇ ਨਹ ਡੋਲੈ ॥
ਐਸੀ ਜੁਗਤਿ ਜੋਗ ਕਉ ਪਾਲੇ ॥
ਆਪਿ ਤਰੈ ਸਗਲੇ ਕੁਲ ਤਾਰੇ ॥੧॥

ਸੋ ਅਉਧੂਤੁ ਐਸੀ ਮਤਿ ਪਾਵੈ ॥
ਅਹਿਨਿਸਿ ਸੁੰਨਿ ਸਮਾਧਿ ਸਮਾਵੈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਭਿਖਿਆ ਭਾਇ ਭਗਤਿ ਭੈ ਚਲੈ ॥
ਹੋਵੈ ਸੁ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਸੰਤੋਖਿ ਅਮੁਲੈ ॥
ਧਿਆਨ ਰੂਪਿ ਹੋਇ ਆਸਣੁ ਪਾਵੈ ॥
ਸਚਿ ਨਾਮਿ ਤਾੜੀ ਚਿਤੁ ਲਾਵੈ ॥੨॥

ਨਾਨਕੁ ਬੋਲੈ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਬਾਣੀ ॥
ਸੁਣਿ ਮਾਛਿੰਦ੍ਰਾ ਅਉਧੂ ਨੀਸਾਣੀ ॥
ਆਸਾ ਮਾਹਿ ਨਿਰਾਸੁ ਵਲਾਏ ॥
ਨਿਹਚਉ ਨਾਨਕ ਕਰਤੇ ਪਾਏ ॥੩॥

ਪ੍ਰਣਵਤਿ ਨਾਨਕੁ ਅਗਮੁ ਸੁਣਾਏ ॥
ਗੁਰ ਚੇਲੇ ਕੀ ਸੰਧਿ ਮਿਲਾਏ ॥
ਦੀਖਿਆ ਦਾਰੂ ਭੋਜਨੁ ਖਾਇ ॥

ਪੰਨਾ ੮੭੮

ਛਿਅ ਦਰਸਨ ਕੀ ਸੋਝੀ ਪਾਇ ॥੪॥੫॥

पृ-८७७

रामकली महला १॥

सुणि माछिँद्रा नानकु बोलै ॥
वसगति पँच करे नह डोलै ॥
ऐसी जुगति जोग कउ पाले ॥
आपि तरै सगले कुल तारे ॥१॥

सो अउधूतु ऐसी मति पावै ॥
अहिनिसि सुँनि समाधि समावै ॥१॥रहाउ॥

भिखिआ भाइ भगति भै चलै ॥
होवै सु तृपति संतोखि अमुलै ॥
धिआन रूपि होइ आसणु पावै ॥
सचि नामि ताड़ी चितु लावै ॥२॥

नानकु बोलै अँमृत बाणी ॥
सुणि माछिँद्रा अउधू नीसाणी ॥
आसा माहि निरासु वलाए ॥
निहचउ नानक करते पाए ॥३॥

प्रणवति नानकु अगमु सुणाए ॥
गुर चेले की सँधि मिलाए ॥
दीखिआ दारूभोजनु खाइ ॥

पृ-८७८

छिअ दरसन की सोझी पाइ ॥४॥५॥

रामकली महला - १

ऐसा प्रतीत होता है कि इस शब्द का उच्चारण गुरु नानक देव जी ने मछेंद्रनाथ नामक योगी के साथ हुये वार्तालाप के समय किया था, जिसमें वह उसे (तथा, हम सभी को) एक सच्चे योगी अथवा एक ऐसे मनुष्य के गुण और चिन्ह बताते हैं जो वास्तव में संसार से वैराग्य ले चुका हो और प्रभु नाम में लीन रहता हो ।

गुरु जी योगी मछेंद्रनाथ को सम्बोधित करते हुये कहते हैं : " सुनो, हे' मछेंद्र, नानक बोलते हैं (सच्चा योगी वही है) जो पाँचो मूल प्रवृत्तियों (काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अंहकार) की गति को वश में रखे और सदैव अपने निश्चय और नियंत्रण में रहे । इस प्रकार के जीवन आचरण से वह योग की पालना करता है , ऐसा योगी स्वयं का भी उद्धार करता है और अपने समस्त कुल को भी भवसागर से पार करवाता है "।(१)

गुरु जी एक अवधूत की परिभाषा देते हुये कहते हैं : "(हे' योगी), वही मनुष्य सच्चा अवधूत है जो ऐसी मति ग्रहण करे कि दिन रात गहन समाधि में अचेत मन से समाया रहे और कोई सांसारिक विचार उसके मन में ना उपज पाये "।(१-विराम)

सच्चे योगी के लक्षणों को विस्तृत करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मछेंद्र, एक सच्चा योगी प्रभु की) सच्ची भक्ति की भिक्षा की याचना करता है और उसके भय में रहता है । वह मन में अनमोल संतोष से तृप्त रहता है । वह प्रभु में ध्यान लगाने की मुद्रा में आने के लिए आसन ग्रहण करता है और (प्रभु के) सच्चे नाम के ध्यान में हृदय को दृढ़ता से लीन रखता है "।(२)

पुनः, सच्चे अवधूत के लक्षणों को सूचीबद्ध करते हुये गुरु जी मछेंद्रनाथ को सम्बोधित करते हैं । वह कहते हैं : " हे' मछेंद्र, सुनो, नानक अँमृत वाणी बोलते हैं । अवधूत अथवा सच्चे योगी के चिन्हों को सुनो । (सच्चा योगी वह है) जो आशा के बीच में रहकर भी निराशा (अथवा सांसारिक इच्छायों एवं आकांक्षायों के त्याग) की दशा में रहे । नानक कहते हैं कि वास्तव में ऐसा मनुष्य ही निश्चित रूप से सृजनकर्ता को पाता है "।(३)

गुरु जी सच्चे योगी के गुणों को संक्षिप्त रूप से कहते हैं : "(हे' मछेंद्र), नानक दंडवत् भावना से यह दैवी और अगम्य भेद सुना रहे हैं कि एक सच्चा योगी गुरु तथा शिष्य (प्रभु तथा आत्मा) की संधि करवाता है । वह गुरु की दीक्षा को औषधि अथवा भोजन के रूप में ग्रहण करता है (और इस प्रकार ऐसा योगी वास्तव में) छह शास्त्रों जितना दर्शन (योग का) ज्ञान प्राप्त कर लेता है ।(४-५)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु को पाना चाहते हैं तो हमें अपने मन को माया के प्रभाव तथा पाँचो प्रवृत्तियों, काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अंहकार से हटा कर संतोष का बहुमूल्य पाठ पढ़ाना चाहिए और फिर सदैव उसे प्रभु के ध्यान में लगे रहने के लिये साधना चाहिये । केवल तभी हम समस्त धार्मिक ग्रंथों के वास्तविक सार को समझ सकेंगे और सच्चे योग अर्थात प्रभु से मिलन की प्राप्ति कर पायेंगे ।

ਪੰਨਾ ੮੮੦

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੩ ਘਰੁ ੧ ॥

ਸਤਜੁਗਿ ਸਚੁ ਕਹੈ ਸਭੁ ਕੋਈ ॥
ਘਰਿ ਘਰਿ ਭਗਤਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਹੋਈ ॥
ਸਤਜੁਗਿ ਧਰਮੁ ਪੈਰ ਹੈ ਚਾਰਿ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੂਝੈ ਕੋ ਬੀਚਾਰਿ ॥੧॥

ਜੁਗ ਚਾਰੇ ਨਾਮਿ ਵਡਿਆਈ ਹੋਈ ॥
ਜਿ ਨਾਮਿ ਲਾਗੈ ਸੋ ਮੁਕਤਿ ਹੋਵੈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਨਾਮੁ ਨ ਪਾਵੈ ਕੋਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਤ੍ਰੇਤੈ ਇਕ ਕਲ ਕੀਨੀ ਦੂਰਿ ॥
ਪਾਖੰਡੁ ਵਰਤਿਆ ਹਰਿ ਜਾਣਨਿ ਦੂਰਿ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਬੂਝੈ ਸੋਝੀ ਹੋਈ ॥
ਅੰਤਰਿ ਨਾਮੁ ਵਸੈ ਸੁਖੁ ਹੋਈ ॥੨॥

ਦੁਆਪੁਰਿ ਦੂਜੈ ਦੁਬਿਧਾ ਹੋਇ ॥
ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਨੇ ਜਾਣਹਿ ਦੋਇ ॥
ਦੁਆਪੁਰਿ ਧਰਮਿ ਦੁਇ ਪੈਰ ਰਖਾਏ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਹੋਵੈ ਤ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਏ ॥੩॥

ਕਲਜੁਗਿ ਧਰਮ ਕਲਾ ਇਕ ਰਹਾਏ ॥
ਇਕ ਪੈਰਿ ਚਲੈ ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਵਧਾਏ ॥
ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਅਤਿ ਗੁਬਾਰੁ ॥
ਸਤਗੁਰੁ ਭੇਟੈ ਨਾਮਿ ਉਧਾਰੁ ॥੪॥

ਸਭ ਜੁਗ ਮਹਿ ਸਾਚਾ ਏਕੋ ਸੋਈ ॥
ਸਭ ਮਹਿ ਸਚੁ ਦੂਜਾ ਨਹੀ ਕੋਈ ॥
ਸਾਚੀ ਕੀਰਤਿ ਸਚੁ ਸੁਖੁ ਹੋਈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਵਖਾਣੈ ਕੋਈ ॥੫॥

ਸਭ ਜੁਗ ਮਹਿ ਨਾਮੁ ਊਤਮੁ ਹੋਈ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਵਿਰਲਾ ਬੂਝੈ ਕੋਈ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਏ ਭਗਤੁ ਜਨੁ ਸੋਈ ॥
ਨਾਨਕ ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਨਾਮਿ ਵਡਿਆਈ ਹੋਈ ॥੬॥੧॥

पृ-८८०

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

रामकली महला ३ घर १

सतजुगि सच कहै सभु कोई ॥
घरि घरि भगति गुरमुखि होई ॥
सतजुगि धरमु पैर है चारि ॥
गुरमुखि बूझै को बीचारि ॥१॥

जुग चारे नामि वडिआई होई ॥
जि नामि लागै सो मुकति होवै गुर बिनु
नामु न पावै कोई ॥१॥रहाउ॥

त्रेतै इक कल कीनी दूरि ॥
पाखँडु वरतिआ हरि जाणनि दूरि ॥
गुरमुखि बूझै सोझी होई ॥
अँतरि नामु वसै सुखु होई ॥२॥

दुआपुरि दूजै दुबिधा होइ ॥
भरमि भुलाने जाणहि दोइ ॥
दुआपुरि धरमि दुइ पैर रखाऐ ॥
गुरमुखि होवै त नामु दृिड़ाऐ ॥३॥

कलजुगि धरम कला इक रहाए ॥
इक पैरि चलै माइआ मोहु वधाए ॥
माइआ मोहु अति गुबारु ॥
सतगुरु भेटै नामि उधारु ॥४॥

सभ जुग महि साचा एको सोई ॥
सभ महि सचु दूजा नही कोई ॥
साची कीरति सचु सुखु होई ॥
गुरमुखि नामु वखाणै कोई ॥५॥

सभ जुग महि नामु ऊतमु होई ॥
गुरमुखि विरला बूझै कोई ॥
हरि नामु धिआए भगतु जनु सोई ॥
नानक जुगि जुगि नामि वडिआई होई ॥६॥१॥

रामकली महला ३ घर १॥

भारतीय दर्शनशास्त्र के अनुसार जब से मानवता का ऐतिहासिक रूप से प्रादुर्भाव हुआ तभी से समय के विस्तार को नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की उत्तरोत्तर अपभ्रंशता के आधार पर मुख्य रूप से चार युगों में बाँटा गया है और इस प्रकार से यह चारों युग मानवीय धर्म एवं नैतिकता के स्तर के द्योतक भी हैं । प्रथम युग सतयुग कहलाता है जहाँ ऐसा माना जाता है कि मानवता इस युग में उच्च नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों, जैसे, सत्य, संतोष, दान तथा प्रभु नाम के ध्यान आदि में, दृढ़ विश्वास रखती थी और समाज में धर्म अपने चारों पैरों पर स्थिर रूप से खड़ा हुया था । परन्तु, समय के आगे बढ़ने के साथ साथ समाज में इन मूल्यों तथा मर्यादाओं का अपभ्रंश होने से एक के पश्चात एक पैर अथवा आधार टूटता गया, जिसके अनुसार युग भी परिवर्तित होते रहे । उदाहरण के लिये, सतयुग के पश्चात अगला युग त्रेता कहलाया जिसमें सत्य के स्थान पर पाखंड ने समाज में फैलना आरंभ कर दिया था, मानो कि धर्म का एक पैर टूट गया और अब समाज में धर्म तीन पैरों के उपर खड़ा था । इसी प्रकार, त्रेता युग से द्वापर युग तथा वर्तमान कलियुग में आने तक नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का क्रमशः ह्रास होने के कारण अब मानव समाज में धर्म केवल एक ही पैर पर खड़ा हुया है । इस शब्द में गुरु जी समय की गति के साथ परिवर्तित विभिन्न युगों

की मुख्य विशेषतायों का वर्णन करते हुये यह भी बताते हैं कि पूर्व के युगों में समाज की रक्षा का मुख्य कारण और साधन क्या था और आज उन्हीं नैतिक मूल्यों के लिये निकृष्ट माने जाने वाले कलियुग में भी वही साधन कितना अधिक सहायक तथा शाश्वत है ।

गुरु जी प्रथम युग (सतयुग) से आरंभ करते हुये कहते हैं ; " (हे' मेरे मित्रो), सतयुग में सभी सच बोलते थे, प्रत्येक घर (और हृदय) में गुरु की कृपा से (प्रभु की) भक्ति होती थी । एक प्रकार से इस सत्य के युग में धर्म के चारों पैर धरती अथवा मानवता के आधार थे । परन्तु, कोई बिरला ही मनुष्य गुरु की कृपा से इस पर विचार करके इस धारणा को बूझ सकता है "।(१)

गुरु जी आगे और कुछ कहें, पहले वह यह बताते हैं कि समस्त युगों में मानव को जीवन में यश अथवा सम्मान पाने का मुख्य साधन क्या रहा है । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), सभी चारों युगों में (प्रभु) नाम के ध्यान से ही (मनुष्य का) यश हुया है । जो लोग भी (प्रभु) नाम के ध्यान में लगे रहे उन्हें मोक्ष प्राप्त हुया, परन्तु, गुरु के (मार्ग दर्शन के) बिना किसी को (प्रभु) नाम नहीं मिलता "।(१-विराम)

त्रेता युग के लिये गुरु जी का कथन हैं : "(हे' मेरे मित्रो), त्रेता युग में (समाज में धर्म का इतना ह्रास हुया, मानो) धर्म का एक पैर टूट गया (क्योंकि, सत्य के स्थान पर) पाखंड सभी जगह व्याप्त होने लगा और (मानव जाति ने) हरि को दूर समझना आरंभ कर दिया । परन्तु, फिर भी गुरु की कृपा से जिन भक्तजनों को अपनी सूझ बूझ होती थी वह प्रभु नाम को अपने अँतरमन में बसा कर सुख एवं शांन्ति का आन्नद पाते रहे "।(२)

अगले, द्वापर युग के लिये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो) द्वापर युग में (समाज में) दुविधा और मन में द्वैत अवस्था का भाव व्याप्त होने लगा । भ्रमों में उलझे लोग आपस में भेद भाव करने लगे, (वह " हम और वह " अथवा " मित्र और शत्रु " जैसी द्वैत भावनायों से प्रेरित होने लगे) और इस प्रकार से, जैसे, धर्म और सदाचार के केवल दो ही पैर रह गये । इसलिये, कोई गुरु का शिष्य अथवा प्रभु का भक्त ही होगा, जो (लोगों को प्रभु के) नाम पर ध्यान करने के लिये दृढ़ता से विश्वस्त करता रहा होगा "।(३)

अब गुरु जी वर्तमान युग अथवा कलियुग पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो), कलियुग में (नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का इतना अवमूल्यन हुया है) जैसे कि धर्म और सदाचार केवल एक ही पैर के सहारे खड़ा है । इस एक ही पैर पर चलने से (संसार में) माया के प्रति मोह इतना अधिक हो गया है कि इसने घोर (नैतिक) अँधकार उत्पन्न कर दिया है । केवल जब कोई सच्चे गुरु से मिल पाता है तब प्रभु नाम (के ध्यान) से उसका उद्धार होता है "।(४)

कैसे एक युग में से दूसरे युग की यात्रा के दौरान मानव समाज नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों के आधारों को गँवाता रहा, इसका वर्णन करने के पश्चात गुरु जी हमारा ध्यान एक मूल सत्य पर खींचते हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), इन समस्त चारों युगों में एक ही अनंत सच्चा (प्रभु) विद्यमान रहा है, सभी जीवों में इस एक सच्चे के अतिरिक्त और कोई दूसरा नहीं है । अतः, उसकी सच्ची महिमा (निष्कपट रूप में) करने से सच्चे सदैवी सुख का अनुभव होता है । किन्तु, कोई बिरला ही गुरु का शिष्य गुरु की कृपा से प्रभु नाम का बखान करता है "।(५)

संक्षेप में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), सभी युगों में प्रभु नाम (का ध्यान करना ही) उत्तम रहा है, किन्तु कोई बिरला ही गुरु का अनुयायी इस (तथ्य) को बूझ पाता हैं । जो हरि नाम का ध्यान करता है, हे' नानक, केवल उसी हरि के भक्त की प्रशंसा युगों युगों तक होती है "।(६-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि इस तथ्य में कोई संदेह नहीं है कि समय के साथ साथ मानव समाज ने अपने आचरण में से प्रभु पर अडिग विश्वास एवं सत्य के श्रेष्ठ सिद्धांतों को अपभ्रंशित कर मिथ्या भाव तथा माया के लोभ को बढ़ावा दिया है । परन्तु फिर भी समस्त युगों और वर्तमान में पसरे कलियुग में गुरु के मार्ग दर्शन के अनुसार प्रभु नाम का ध्यान करते रहने से हम स्वयं को पापवृत्तियों से बचाते हुए अनंत सुख शांति की प्राप्ति कर सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੮੮੧

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਜੇ ਵਡ ਭਾਗ ਹੋਵਹਿ ਵਡ ਮੇਰੇ ਜਨ ਮਿਲਦਿਆ ਢਿਲ ਨ ਲਾਈਐ ॥
ਹਰਿ ਜਨ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਕੁੰਟ ਸਰ ਨੀਕੇ ਵਡਭਾਗੀ ਤਿਤੁ ਨਾਵਾਈਐ ॥੧॥

ਰਾਮ ਮੋ ਕਉ ਹਰਿ ਜਨ ਕਾਰੈ ਲਾਈਐ ॥
ਹਉ ਪਾਣੀ ਪਖਾ ਪੀਸਉ ਸੰਤ ਆਗੈ ਪਗ ਮਲਿ ਮਲਿ ਧੂਰਿ ਮੁਖਿ ਲਾਈਐ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਰਿ ਜਨ ਵਡੇ ਵਡੇ ਵਡ ਊਚੇ ਜੋ ਸਤਗੁਰ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਈਐ ॥
ਸਤਗੁਰ ਜੇਵਡੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ਮਿਲਿ ਸਤਗੁਰ ਪੁਰਖ ਧਿਆਈਐ ॥੨॥

ਸਤਗੁਰ ਸਰਣਿ ਪਰੇ ਤਿਨ ਪਾਇਆ ਮੇਰੇ ਠਾਕੁਰ ਲਾਜ ਰਖਾਈਐ ॥
ਇਕਿ ਅਪਣੈ ਸੁਆਇ ਆਇ ਬਹਹਿ ਗੁਰ ਆਗੈ ਜਿਉ ਬਗੁਲ ਸਮਾਧਿ ਲਗਾਈਐ ॥੩॥

ਬਗੁਲਾ ਕਾਗ ਨੀਚ ਕੀ ਸੰਗਤਿ ਜਾਇ ਕਰੰਗ ਬਿਖੂ ਮੁਖਿ ਲਾਈਐ ॥
ਨਾਨਕ ਮੇਲਿ ਮੇਲਿ ਪ੍ਰਭ ਸੰਗਤਿ ਮਿਲਿ ਸੰਗਤਿ ਹੰਸੁ ਕਰਾਈਐ॥੪॥੪॥

पृ-८८१

रामकली महला ४॥

जे वड भाग होवहि वड मेरे जन मिलदिआ ढिल न लाईऐ ॥
हरि जन अँमृित कुँट सर नीके वडभागी तितु नावाईऐ ॥१॥

राम मो कउ हरि जन कारै लाईऐ ॥
हउ पाणी पखा पीसउ सँत आगै पग मलि मलि धूरि मुखि लाईऐ ॥१॥ रहाउ॥

हरि जन वडे वडे वड ऊचे जो सतगुर मेलि मिलाईऐ ॥
सतगुर जेवडु अवरु न कोई मिलि सतगुर पुरख धिआईऐ ॥२॥

सतगुर सरणि परे तिन पाइआ मेरे ठाकुर लाज रखाईऐ ॥
इकि अपणै सुआइ आइ बहहि गुर आगै जिउ बगुल समाधि लगाईऐ ॥३॥

बगुला काग नीच की सँगति जाइ करँग बिखू मुखि लाईऐ ॥
नानक मेलि मेलि प्रभ सँगति मिलि सँगति हँसु कराईऐ ॥४॥४॥

रामकली महला - ४

इस शब्द में गुरु जी दृढ़ विश्वास के साथ प्रभु के भक्तजनों की सँगति के गुणों और महत्व को बता रहे हैं तथा स्वयं के लिए भी इस प्रकार की सँगति पाने के लिए प्रार्थना करते हैं और अपना अहोभाग्य समझते हुए वह विनम्र भाव से प्रभु के भक्तजनों की सेवा करने के लिए अपनी तत्परता को प्रकट करते हैं ।

अतः, वह कहते हैं : " यदि मेरा भाग्य अति उत्तम है, तब मुझे प्रभु के भक्तों से मिलने में विलम्ब नहीं करना चाहिये । हरि के भक्त विशिष्ट रूप से अँमृित के कुंड के समान शुभ हैं और केवल अपने अहोभाग्य से ही इस कुंड में स्नान करने को मिलता है "।(१)

इसलिये, गुरु जी स्वयं के लिये भी प्रार्थना करते हुये कहते हैं : " हे' राम, मुझे हरि के भक्त जनों की सेवा में लगा दो । मैं उन सँतो के लिये पानी लाऊँगा, उन पर पंखा फेरूँगा, अनाज पीस कर रखूँगा और उनके चरणों को मल मल कर चरण धूलि मस्तक पर लगाऊँगा, (दूसरे शब्दों में, मैं प्रसन्न भाव से उनकी सेवा करके उनके उच्च एवं श्रेष्ठ विचारों को श्रवण कर लाभ पाऊँगा) "। (१-विराम)

अब, गुरु जी प्रभु के भक्तों की संगति में रह कर प्राप्त किये गुणों का वर्णन करते हुये कहते हैं : " प्रभु के भक्त उत्कृष्ट एवं महिमामयी हैं जो सच्चे गुरु से जुड़े रहते हैं और अन्य लोगों को भी उनसे मिलाने में सहायक होते हैं । सच्चे गुरु जैसा महान और कोई नहीं है, क्योंकि, सच्चे गुरु से मिलन के पश्चात ही हम प्रभु का ध्यान कर सकते हैं "।(२)

गुरु जी अब सच्चे और निष्कपट भाव से गुरु की शरण में जाने के वरदान के लिये तथा किसी प्रकार के पाखंडी एवं मिथ्या भाव के विपरीत सतर्क करते हुये कहते हैं : " जो निष्कपट भाव से सच्चे गुरु की शरण में गये, उन्हें प्रभु की प्राप्ति हुयी और मेरे ठाकुर ने उनकी लाज रखी । परन्तु, कुछ एक लोग केवल अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये गुरु के सम्मुख आकर बैठ जाते हैं, जैसे कि बगुले (मछली पकड़ने के लिये आँखें बंद किये) समाधि लगा कर बैठे होते हैं (परन्तु, गुरु ऐसे लोगों के मन के विचारों को जानते हैं, अतः, अँत में उन्हें कुछ प्राप्त नहीं होता और वह अपना सम्मान भी गवाँ लेते हैं "।(३)

शब्द के अँत में पाखँडी और दूषित विचारों वाले लोगों की मित्रता के परिणामों तथा संतजनों की सँगति की चाह की प्रार्थना के साथ गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), यदि पाखंडी बगुले और नीच स्वभाव वाले कौवे जैसे लोगों की संगति में हम रहेंगे तो उन्हीं की भाँति मुर्दा विषैले माँस का आहार करेंगे, (दूसरे शब्दों में, दुष्ट लोगों की संगति में हम घोर अपराधी भी बन सकते हैं) । इसलिये, (मैं) नानक ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि, हे' प्रभु, कृपया मुझे अपने भक्तजनों की सँगति के साथ मिला कर रखो और एक सुंदर हँस (सँत) बनने के लिए मेरी सहायता करो "।(४-४)

इस शब्द का संदेश इस प्रकार है कि हमें सदा प्रभु के भक्तों की संगति में रहने का प्रयास करना चाहिये, क्योंकि, उनकी संगति हमें सच्चे गुरु के निकट लाती है और गुरु हमें प्रभु के निकट लाने में सहायक बनते हैं । दूसरी ओर, हमें दुष्ट तथा पाखंडी लोगों से दूर रहने का प्रयत्न करना चाहिये, क्योंकि, उनका साथ हमें उन्हीं की भाँति दोषी एवं पापयुक्त कर्मों की ओर धकेल सकता है जिनके परिणाम घातक होते हैं ।

ਪੰਨਾ ੮੮੩

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਤ੍ਰੈ ਗੁਣ ਰਹਤ ਰਹੈ ਨਿਰਾਰੀ ਸਾਧਿਕ ਸਿਧ ਨ ਜਾਨੈ ॥
ਰਤਨ ਕੋਠੜੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਸੰਪੂਰਨ ਸਤਿਗੁਰ ਕੈ ਖਜਾਨੈ ॥੧॥

ਅਚਰਜੁ ਕਿਛੁ ਕਹਣੁ ਨ ਜਾਈ ॥
ਬਸਤੁ ਅਗੋਚਰ ਭਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਮੋਲੁ ਨਾਹੀ ਕਛੁ ਕਰਣੈ ਜੋਗਾ ਕਿਆ ਕੋ ਕਹੈ ਸੁਣਾਵੈ ॥
ਕਥਨ ਕਹਣ ਕਉ ਸੋਝੀ ਨਾਹੀ ਜੋ ਪੇਖੈ ਤਿਸੁ ਬਣਿ ਆਵੈ ॥੨॥

ਸੋਈ ਜਾਣੈ ਕਰਣੈਹਾਰਾ ਕੀਤਾ ਕਿਆ ਬੇਚਾਰਾ ॥
ਆਪਣੀ ਗਤਿ ਮਿਤਿ ਆਪੇ ਜਾਣੈ ਹਰਿ ਆਪੇ ਪੂਰ ਭੰਡਾਰਾ ॥੩॥

ਐਸਾ ਰਸੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਮਨਿ ਚਾਖਿਆ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਰਹੇ ਆਘਾਈ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਮੇਰੀ ਆਸਾ ਪੂਰੀ ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਸਰਣਾਈ ॥੪॥੪॥

पृ-८८३

रामकली महला ५॥

त्रे गुण रहत रहै निरारी साधिक सिध न जानै ॥
रतन कोठड़ी अँमित सँपूरन सतिगुर कै खजानै ॥१॥

अचरजु किछु कहणु न जाई ॥
बसतु अगोचर भाई ॥१॥रहाउ ॥

मोलु नाही कछु करणै जोगा किआ को कहै सुणावै ॥
कथन कहण कउ सोझी नाही जो पेखै तिसु बणि आवै ॥२॥

सोई जाणै करणैहारा कीता किआ बेचारा ॥
आपणी गति मिति आपे जाणै हरि आपे पूर भँडारा ॥३॥

ऐसा रसु अँमृतु मनि चाखिआ तृिपति रहे आघाई ॥
कहु नानक मेरी आसा पूरीसतिगुर की सरणाई ॥४॥४॥

रामकली महला - ५

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि प्रभु नाम में ऐसे कौन से अनूठे गुण एवं श्रेष्ठताएँ हैं और वह क्यों प्रभु के नाम को धरती के बहुमूल्य हीरे तथा रत्नों से अधिक मूल्यवान समझते हैं।

वह कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, यह प्रभु नाम रूपी वस्तु माया के) तीन गुणों (सात्विक, राजसी एवं तामसी) से निराली अथवा भिन्न है (जो मनुष्य प्रभु नाम से जुड़ा है वह इन तीनों से प्रभावित नही होता, अतः,) साधक और सिद्ध लोग इन गुणों को नहीं जानते। किन्तु, सच्चे गुरु के भंडार में अँमित रूपी (प्रभु नाम के) रत्नों की कोठरी पूर्णतया भरी हुई है (केवल सच्चे गुरु के द्वारा ही तुम ऐसे बहुमूल्य अनुभव का आनंद लेना सीख सकते हो ")।(१)

प्रभु नाम के अकथनीय गुणों पर एक बार पुनः गुरु जी कहते हैं : "हे' मेरे भाई, इस आश्चर्य चकित करने वाले (खेल के) विषय पर कुछ कहा नहीं जा सकता। यह वस्तु हमारी समझ अथवा बुद्धि से बाहर है "।(१- विराम)

इस वस्तु के मूल्य पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, इस वस्तु का) कुछ भी मूल्य नहीं लगाया जा सकता, इसके लिये कोई क्या कह अथवा सुना सकता है। किसी के पास इसके लिये कुछ कहने तथा समझाने की सूझ तथा शक्ति नहीं है। केवल जब कोई देख पाता है (व्यक्तिगत रूप से अनुभव करता है, वही इस आनन्द का) पूर्ण रूप से लाभ ले लेता है "।(२)

प्रभु नाम के रहस्य पर अपनी टिप्पणी में गुरु जी आगे कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), केवल वही सृजनकर्ता स्वयं ही (इस रहस्य तथा अपने नाम के महत्व को) जानते हैं, कोई बेचारा मनुष्य (जिसे कि उसी प्रभु ने रचा है) क्या जाने। वह हरि अपनी गति एवं सीमा स्वयं ही जानते हैं, क्योंकि, वह स्वयं ही में एक परिपूर्ण भंडार हैं "।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में बताते हैं कि गुरु की शरण में आकर उन्हें किस प्रकार के आनंद का अनुभव हुया। वह कहते हैं : " मेरे मन ने ऐसे (पवित्र और सुखदायक) अँमित रस (प्रभु नाम) को चख लिया है जिससे वह अति तृप्त एवं संतुष्ट है। इसलिये, (मैं) नानक कहता हूँ कि सच्चे गुरु की शरण में आकर मेरी समस्त आशायें पूर्ण हो गयीं हैं "।(४-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम कोई ऐसी वस्तु लेना चाहते हैं जो संसार में हीरे या अन्य बहुमूल्य रत्नों से भी अधिक मूल्यवान हो और उसका आनंद सुख किसी की कल्पना से भी बाहर हो तो हमें सच्चे गुरु की शरण में जाकर प्रभु नाम की वस्तु की याचना करनी चाहिये।

ਪੰਨਾ ੮੮੫

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਜਪਿ ਗੋਬਿੰਦੁ ਗੋਪਾਲ ਲਾਲੁ ॥
ਰਾਮ ਨਾਮ ਸਿਮਰਿ ਤੂ ਜੀਵਹਿ ਫਿਰਿ ਨ ਖਾਈ ਮਹਾ ਕਾਲੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕੋਟਿ ਜਨਮ ਭ੍ਰਮਿਭ੍ਰਮਿ ਭ੍ਰਮਿ ਆਇਓ ॥

ਪੰਨਾ ੮੮੬

ਬਡੈ ਭਾਗਿ ਸਾਧਸੰਗੁ ਪਾਇਓ ॥੧॥

ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਪੂਰੇ ਨਾਹੀ ਉਧਾਰੁ ॥
ਬਾਬਾ ਨਾਨਕੁ ਆਖੈ ਏਹੁ ਬੀਚਾਰੁ ॥੨॥੧੧॥

पृ-८८५

रामकली महला – ५

जपि गोबिँदु गोपाल लालु ॥
राम नाम सिमरि तू जीवहि फिरि न खाई महा कालु ॥१॥रहाउ॥

कोटि जनम भ्रमिभ्रमि भ्रमि आइओ ॥

पृ-८८६

बडै भागि साधसँगु पाइओ ॥१॥

बिनु गुर पूरे नाही उधारु ॥
बाबा नानकु आखै एहु बीचारु ॥२॥११॥

रामकली महला - ५

इस शब्द में गुरु जी बताते हैं कि हम किस प्रकार से अत्यंत भय एवं कष्ट की दशा में भी अपने विश्वास, धार्मिक तथा नीतिगत आचरणों को ना त्याग कर अपनी आत्मिक मृत्यु से बच सकते हैं । वह यह भी बताते हैं कि हमारे कल्याण के लिये पूर्ण गुरु का मार्ग दर्शन कितना अनिवार्य है ।

गुरु जी कहते हैं: " (हे' मेरे मित्रो), सृष्टि के स्वामी, प्रिय गोपाल का जाप करो । राम नाम का स्मरण कर तुम (भय रहित रूप से) जीवित रहो, इस प्रकार तुम्हें महा काल (आत्मिक मृत्यु) नहीं निगल सकेगा "।(१-विराम)

प्रभु नाम के ध्यान हेतु संतजनों की संगति में रहने की आवश्यकता पर गुरु जी का कथन है : " (हे' मेरे मित्रो), तुम अब तक करोड़ों जन्मों में बारम्बार भ्रमण करके (मनुष्य जन्म में) आये हो । स्वयं को अति भाग्यशाली समझो कि तुमने साधु संतों की संगति को पाया है (गुरु को ; इसलिये सांसारिक मिथ्या सुखों में समय व्यर्थ करने की अपेक्षा गुरु से मार्ग दर्शन प्राप्त करने का प्रयत्न करके प्रभु नाम का ध्यान करो)"।(१)

अंत में गुरु जी, गुरु के निर्देशों के पालन पर दृढ़ता से कहते हैं : "(हे' मेरे) आदरणीय मित्र, नानक अपना यह विचार कहते हैं कि पूर्ण गुरु (के मार्ग दर्शन और उपदेश पालन) के बिना जीवन का उद्धार नहीं हो पाता "।(२-११)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम स्वयं के धार्मिक, नैतिक तथा नीतिगत मूल्यों को स्थिर रखते हुये एक सत्यवादी एवं दीर्घ जीवन जीना चाहते हैं, अथवा अपनी आत्मिक मृत्यु मरना नहीं चाहते तो पूर्ण गुरु के आदेशों का पालन करते हुये संतजनों की संगति में रहकर हमें प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੮੮੭

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਮੁਖ ਤੇ ਪੜਤਾ ਟੀਕਾ ਸਹਿਤ ॥
ਹਿਰਦੈ ਰਾਮੁ ਨਹੀ ਪੂਰਨ ਰਹਤ ॥
ਉਪਦੇਸੁ ਕਰੇ ਕਰਿ ਲੋਕ ਦ੍ਰਿੜਾਵੈ ॥
ਅਪਨਾ ਕਹਿਆ ਆਪਿ ਨ ਕਮਾਵੈ ॥੧॥

ਪੰਡਿਤ ਬੇਦੁ ਬੀਚਾਰਿ ਪੰਡਿਤ ॥
ਮਨ ਕਾ ਕ੍ਰੋਧੁ ਨਿਵਾਰਿ ਪੰਡਿਤ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਆਗੈ ਰਾਖਿਓ ਸਾਲ ਗਿਰਾਮੁ ॥

ਪੰਨਾ ੮੮੮

ਮਨੁ ਕੀਨੋ ਦਹ ਦਿਸ ਬਿਸ੍ਰਾਮੁ ॥
ਤਿਲਕੁ ਚਰਾਵੈ ਪਾਈ ਪਾਇ ॥
ਲੋਕ ਪਚਾਰਾ ਅੰਧੁ ਕਮਾਇ ॥੨॥

ਖਟੁ ਕਰਮਾ ਅਰੁ ਆਸਣੁ ਧੋਤੀ ॥
ਭਾਗਠਿ ਗ੍ਰਿਹਿ ਪੜੈ ਨਿਤ ਪੋਥੀ ॥
ਮਾਲਾ ਫੇਰੈ ਮੰਗੈ ਬਿਭੂਤ ॥
ਇਹ ਬਿਧਿ ਕੋਇ ਨ ਤਰਿਓ ਮੀਤ ॥੩॥

ਸੋ ਪੰਡਿਤੁ ਗੁਰ ਸਬਦੁ ਕਮਾਇ ॥
ਤ੍ਰੈ ਗੁਣ ਕੀ ਓਸੁ ਉਤਰੀ ਮਾਇ ॥
ਚਤੁਰ ਬੇਦ ਪੂਰਨ ਹਰਿ ਨਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਤਿਸ ਕੀ ਸਰਣੀ ਪਾਇ ॥੪॥੬॥੧੭॥

पृ-८८७

रामकली महला ५॥

मुख ते पड़ता टीका सहित ॥
हिरदै रामु नही पूरन रहत ॥
उपदेसु करे करि लोक दृिड़ावै ॥
अपना कहिआ आपि न कमावै ॥१॥

पँडित बेदु बीचारि पँडित ॥
मन का क्रोधु निवारि पँडित ॥१॥रहाउ॥

आगै राखिओ साल गिरामु ॥

पृ-८८८

मनु कीनो दह दिस बिस्रामु ॥
तिलकु चरावै पाई पाइ ॥
लोक पचारा अँधु कमाइ ॥२॥

खटु करमा अरु आसणु धोती ॥
भागठि ग्रिहि पड़ै नित पोथी ॥
माला फेरै मँगै बिभूत ॥
इह बिधि कोइ न तरिओ मीत ॥३॥

सो पँडितु गुर सबदु कमाइ ॥
त्रै गुण की ओसु उतरी माइ ॥
चतुर बेद पूरन हरि नाइ ॥
नानक तिस की सरणी पाइ ॥४॥६॥१७॥

रामकली महला - ५

इस शब्द में गुरु जी उन पंडित तथा पुजारी लोगों की बात करते हैं जो वाह्य रूप से पवित्र दिखते हुये वेद, शास्त्र तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों का पाठ तथा अनुवाद करके अन्य सभी लोगों को उपदेश देते थे, परन्तु स्वयं के जीवन में वह उन उपदेशों का पालन और अभ्यास नहीं करते थे। उनका उद्देश्य केवल धन कमाने का था। ऐसा प्रचलन आज भी केवल हिंदू पंडितों तक ही सीमित नहीं, अपितु, अन्य धर्मों, जैसे ईसाई, बौद्ध, मुस्लिम तथा सिख प्रचारकों में भी देखने को मिलता है। इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि कौन वास्तविक रूप में पंडित अथवा दैवी ज्ञान का ज्ञाता है।

सर्वप्रथम, गुरु जी पंडित जनों के सामान्य आचरण एवं व्यवहार पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं: " (पंडित) अपने मुख से (धर्म ग्रंथ का) पाठ और उसके अर्थ समझाता है , परन्तु, ना तो उसका हृदय प्रभु पर केंद्रित होता है और ना ही उसका जीवन आचरण परिपूर्ण होता है। वह अपने उपदेशों को अन्य लोगों के मन में तो दृढ़ करता है, परन्तु, अपने कहे अनुसार स्वयं के जीवन के लिये वैसा अभ्यास नहीं करता "। (१)

उपरोक्त प्रकार के आचरण वाले और क्रोधी स्वभाव के एक पंडित से गुरु जी कहते हैं: " हे' पंडित, अपने मन में से क्रोध की भावना का निवारण करके वेदों का विचार मनन करो (जो भी वेद, शास्त्र तुम पढ़ते और विचारते हो उन पर दूसरों को उपदेश देने से पूर्व स्वयं के जीवन में उन विचारों को कार्यान्वित करने का प्रयत्न करो)"।(१-विराम)

शास्त्रीय विधियों तथा कर्मकांडों की निरर्थकता पर फिर से ध्यान दिलाते हुये गुरु जी कहते हैं: " यद्यपि, उसने सालिगराम की मूर्ति अपने सम्मुख रखी हुई है, परन्तु, उसका मन (इतना चंचल है जैसे वह) दसों दिशायों में विश्राम पा रहा है। वह (मूर्ति पर) तिलक चढ़ा रहा है और उसके चरणों में प्रणाम करता है। लोगों के सम्मुख औपचारिकता करता हुया अँधे के समान अज्ञान के कर्म करने का प्रयत्न करता है "। (२)

पंडित लोगों के मिथ्या अभ्यासों पर गुरु जी आगे कहते हैं: " पंडित अपने छह प्रकार के कर्म (धर्म ग्रंथों के अनुसार) करके, धोती धारण

कर आसन पर बिराजमान होकर नित्य ही धनी लोगों के गृहों में धार्मिक ग्रंथों का पाठ करते हैं, माला फेरते हैं और फिर धन माँगते हैं ।(इस प्रकार के आचरण के लिये गुरु जी उसे चेताते हुये कहते हैं) हे' मेरे मित्र, इस विधि से किसी का भी उद्धार नहीं हुया है "।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी सच्चे पंडित (दैवी ज्ञान के ज्ञाता) की व्याख्या करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, सच्चा) पंडित केवल वही है जो गुरु की शिक्षा के अनुसार अपना जीवन यापन करता है । माया के तीनों गुणों का प्रभाव उसके उपर से उतर जाता है । वह समझ लेता है कि केवल प्रभु नाम के ध्यान में ही चारों वेदों के गुण पूर्णतया निहित हैं । नानक कहते हैं (हे' मेरे मित्र, ऐसे पंडित की) शरण में जाकर रहो (और उसके उपदेश का श्रवण करो) "।(४-६-१७)

इस शब्द का संदेश यह है कि अन्य सभी लोगों को पवित्र एवं सदाचारी जीवन व्यतीत करने के लिए उपदेश देने की अपेक्षा हमें स्वयं पर विचार तथा विवेचन करना चाहिए कि गुरु के मार्ग दर्शन के अंतर्गत हम प्रभु नाम का कितना ध्यान करते हैं । केवल आत्मनिरीक्षण और विचारों के द्वारा ही हम अपना उद्धार कर सकेंगे ।

ਪੰਨਾ ੮੮੯

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਸਿੰਚਹਿ ਦਰਬੁ ਦੇਹਿ ਦੁਖੁ ਲੋਗ ॥
ਤੇਰੈ ਕਾਜਿ ਨ ਅਵਰਾ ਜੋਗ ॥
ਕਰਿ ਅਹੰਕਾਰੁ ਹੋਇ ਵਰਤਹਿ ਅੰਧ ॥
ਜਮ ਕੀ ਜੇਵੜੀ ਤੂ ਆਗੈ ਬੰਧ ॥੧॥

ਛਾਡਿ ਵਿਡਾਣੀ ਤਾਤਿ ਮੂੜੇ ॥
ਈਹਾ ਬਸਨਾ ਰਾਤਿ ਮੂੜੇ ॥
ਮਾਇਆ ਕੇ ਮਾਤੇ ਤੈ ਉਠਿ ਚਲਨਾ ॥
ਰਾਚਿ ਰਹਿਓ ਤੂ ਸੰਗਿ ਸੁਪਨਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਬਾਲ ਬਿਵਸਥਾ ਬਾਰਿਕੁ ਅੰਧ ॥
ਭਰਿ ਜੋਬਨਿ ਲਾਗਾ ਦੁਰਗੰਧ ॥

ਪੰਨਾ ੮੯੦

ਤ੍ਰਿਤੀਅ ਬਿਵਸਥਾ ਸਿੰਚੇ ਮਾਇ ॥
ਬਿਰਧਿ ਭਇਆ ਛੋਡਿ ਚਲਿਓ ਪਛੁਤਾਇ ॥੨॥

ਚਿਰੰਕਾਲ ਪਾਈ ਦ੍ਰੁਲਭ ਦੇਹ ॥
ਨਾਮ ਬਿਹੂਣੀ ਹੋਈ ਖੇਹ ॥
ਪਸੂ ਪਰੇਤ ਮੁਗਧ ਤੇ ਬੁਰੀ ॥
ਤਿਸਹਿ ਨ ਬੂਝੈ ਜਿਨਿ ਏਹ ਸਿਰੀ ॥੩॥

ਸੁਣਿ ਕਰਤਾਰ ਗੋਵਿੰਦ ਗੋਪਾਲ ॥
ਦੀਨ ਦਇਆਲ ਸਦਾ ਕਿਰਪਾਲ ॥
ਤੁਮਹਿ ਛਡਾਵਹੁ ਛੁਟਕਹਿ ਬੰਧ ॥
ਬਖਸਿ ਮਿਲਾਵਹੁ ਨਾਨਕ ਜਗ ਅੰਧ ॥੪॥੧੨॥੨੩॥

पृ-८८९

रामकली महला ५॥

सिँचहि दरबु देहि दुखु लोग ॥
तेरै काजि न अवरा जोग ॥
करि अँहकारु होइ वरतहि अँध ॥
जम की जेवड़ी तू आगै बँध ॥१॥

छाडि विडाणी ताति मूड़े ॥
ईहा बसना राति मूड़े ॥
माइआ के माते तै उठि चलना ॥
राचि रहिओ तू सँगि सुपना ॥१॥रहाउ॥

बाल बिवसथा बारिकु अँध ॥
भरि जोबनि लागा दुरगँध ॥

पृ-८९०

तृतीअ बिवसथा सिँचे माइ ॥
बिरधि भइआ छोडि चलिओ पछुताइ ॥२॥

चिरँकाल पाई द्रुलभ देह ॥
नाम बिहूणी होई खेह ॥
पसू परेत मुगध ते बुरी ॥
तिसहि न बूझै जिनि एह सिरी ॥३॥

सुणि करतार गोविँद गोपाल ॥
दीन दइआल सदा किरपाल ॥
तुमहि छडावहु छुटकहि बँध ॥
बखसि मिलावहु नानक जग अँध ॥४॥१२॥२३॥

रामकली महला - ५

यह शब्द सम्भवतः हमारे जीवन का दर्पण है जो यह दर्शाता है कि हम कैसे सांसारिक धन सम्पदा के लिये दूसरों का शोषण करते हैं और उन्हें कष्ट पहुँचाते हैं। हम यह नहीं विचारते कि संसार में हमारे जीवन का असितत्व अति अल्पकालीन है, जिसे हम अपनी इच्छायों की पूर्ति तथा सांसारिक धन सम्पदा के लोभ में व्यर्थ कर देते हैं। यहाँ गुरु जी पहले यह प्रकट करते हैं कि हम मिथ्या सांसारिक धंधों में उलझे हुए हैं और फिर हमें इनसे मुक्ति पाने की राह बताते हुए चिरकाल से बिछुड़े प्रभु से पुनर्मिलन की चाह हमारे मन में जगाने का प्रयास करते हैं।

सर्वप्रथम, वह विशेष रूप से उन लोगों को सम्बोधित करते हैं जो अन्य लोगों को कष्ट देकर भी धन सम्पदा का संचय करते रहते हैं और फिर छल कपट के द्वारा प्राप्त की गयी सम्पदा पर गर्व तथा अंहकार का भाव प्रकट करते हैं। गुरु जी का कथन है : "(हे' मूर्ख जन), तुम लोगों को दुख एवं कष्ट देकर धन का संचय कर रहे हो, (परन्तु, यह नहीं विचारते कि तुम्हारी मृत्यु के पश्चात यह धन) तुम्हारे किसी काम का नहीं, यह केवल दूसरों (की प्रसन्नता) के लिये होगा। तुम अपने धन के अंहकार में एक अँधे की भाँति व्यवहार कर रहे हो (अर्थात् एक मूर्ख की भाँति अनजाने में तुम स्वयं को) यमराज की रस्सी से बँध कर आगे जाने की तैयारी कर रहे हो (अतः, इस प्रकार से भविष्य में दुख पाने का कारण स्वयं ही बन रहे हो)"।(१)

हमारे इस अल्पकालीन जीवन का अंत किसी भी क्षण हो सकता है, इस तथ्य पर ध्यान दिलाते हुये गुरु जी कहते हैं : " हे' मूर्ख मनुष्य, दूसरों के साथ ईर्ष्या भरी बड़ी बड़ी बातें छोड़ दे, क्योंकि, हे' मूर्ख तुम्हें यहाँ (संसार में एक चिड़िया की भाँति बसेरे में) रात भर ही बसना है। हे' माया के मद में मतवाले (स्मरण रहे कि कभी भी) तुम्हें यहाँ से उठ चलना है, पर तुम तो (पूर्ण रूप से इस सांसारिक) स्वप्न में रचे बसे हुये हो "।(१-विराम)

अब गुरु जी हमें जीवन की विभिन्न अवस्थायों में हमारे द्वारा किये गये मूर्खतापूर्ण कृत्यों पर ध्यान दिलाते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), बालवस्था में मनुष्य एक अँधा (अज्ञानी) बालक होता है । जबकि, युवा अवस्था में दुराचारी विषयों में संलग्न रहता है और तृतीय प्रौढ़ अवस्था में वह धन सम्पदा के संचय में व्यस्त रहता है । आगे वृद्धावस्था में वह पश्चाताप करने लगता है कि उसे (छल कपट से कमाई गयी धन सम्पदा आदि) सब छोड़ कर (इस संसार से) जाना होगा "।(२)

अब गुरु जी हमें चेतावनी देते हैं कि जिसने हमारा सृजन किया है उस प्रभु के नाम का ध्यान करने के लिये अपने शरीर का उपयोग कितना महत्वपूर्ण है । वह कहते हैं : "(हे' मानव), इस दुर्लभ देह को तुमने चिरकाल के पश्चात प्राप्त किया है । परन्तु, प्रभु के नाम का ध्यान ना करने के कारण यह राख के समान व्यर्थ है । (वास्तव में ऐसी देह एक) पशु, प्रेत और मूर्ख से भी अधिक निम्न स्तर पर अथवा बुरी है, जिसने उसे (प्रभु को) ही नहीं समझा बूझा जो इसका सृजन करने वाला है ।(३)

दोषों से परिपूर्ण जीवन का दर्पण दिखलाने के पश्चात, गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि हम किस प्रकार से प्रभु से विनती करें कि वह दुष्ट प्रवृत्तियों से हमें मुक्ति दिलवायें । वह कहते हैं : " हे' सृजनकर्ता, स्वामी, सृष्टि के पालनहार, दीन दयालु, सदा कृपालु, मेरी विनती सुनो । केवल तुम्हारे छुड़ाने से ही हम इन (सांसारिक) बंधनों से छुट सकते हैं । नानक की विनती है कि (हे' प्रभु), इस अँधे संसार को क्षमा करके (अपने साथ) जोड़ लो "।(४-१२-२३)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें यह विचारना चाहिये कि हम कितनी मूर्खता से अपने बहुमूल्य मानव जीवन को व्यर्थ में गँवा रहे हैं । यदि हम स्वयं को भविष्य के प्रत्याशित दण्डों से बचाना चाहते हैं तो प्रभु से क्षमा याचना करते हुये यह माँगना चाहिये कि वह कृपा करें और इस सांसारिक मायाजाल से हमें छुटकारा दिलवायें ।

ਪੰਨਾ ੮੯੧

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਗਹੁ ਕਰਿ ਪਕਰੀ ਨ ਆਈ ਹਾਥਿ ॥
ਪ੍ਰੀਤਿ ਕਰੀ ਚਾਲੀ ਨਹੀ ਸਾਥਿ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਜਉ ਤਿਆਗਿ ਦਈ ॥
ਤਬ ਓਹ ਚਰਣੀ ਆਇ ਪਈ ॥੧॥

ਸੁਣਿ ਸੰਤਹੁ ਨਿਰਮਲ ਬੀਚਾਰ ॥
ਰਾਮ ਨਾਮ ਬਿਨੁ ਗਤਿ ਨਹੀ ਕਾਈ ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਭੇਟਤ ਉਧਾਰ ॥੧॥
ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੮੯੨

ਜਬ ਉਸ ਕਉ ਕੋਈ ਦੇਵੈ ਮਾਨੁ ॥
ਤਬ ਆਪਸ ਊਪਰਿ ਰਖੈ ਗੁਮਾਨੁ ॥
ਜਬ ਉਸ ਕਉ ਕੋਈ ਮਨਿ ਪਰਹਰੈ ॥
ਤਬ ਓਹ ਸੇਵਕਿ ਸੇਵਾ ਕਰੈ ॥੨॥

ਮੁਖਿ ਬੇਰਾਵੈ ਅੰਤਿ ਠਗਾਵੈ ॥
ਇਕਤੁ ਠਉਰ ਓਹ ਕਹੀ ਨ ਸਮਾਵੈ ॥
ਉਨਿ ਮੋਹੇ ਬਹੁਤੇ ਬ੍ਰਹਮੰਡ ॥
ਰਾਮ ਜਨੀ ਕੀਨੀ ਖੰਡ ਖੰਡ ॥੩॥

ਜੋ ਮਾਗੈ ਸੋ ਭੂਖਾ ਰਹੈ ॥
ਇਸੁ ਸੰਗਿ ਰਾਚੈ ਸੁ ਕਛੂ ਨ ਲਹੈ ॥
ਇਸਹਿ ਤਿਆਗਿ ਸਤਸੰਗਤਿ ਕਰੈ ॥
ਵਡਭਾਗੀ ਨਾਨਕ ਓਹੁ ਤਰੈ ॥੪॥੧੮॥੨੯॥

पृ-८९१

रामकली महला ५॥

गहु करि पकरी न आई हाथि ॥
प्रीति करी चाली नही साथि ॥
कहु नानक जउ तिआगि दई ॥
तब ओह चरणी आइ पई ॥१॥

सुणि सँतहु निरमल बीचार ॥
राम नाम बिनु गति नही काई गुरु पूरा भेटत उधार ॥१॥रहाउ॥

पृ-८९२

जब उस कउ कोई देवै मानु ॥
तब आपस ऊपरि रखै गुमानु ॥
जब उस कउ कोई मनि परहरै ॥
तब ओह सेवकि सेवा करै ॥२॥

मुखि बेरावै अँति ठगावै ॥
इकतु ठउर ओह कही न समावै ॥
उनि मोहे बहुते ब्रहमँड ॥
राम जनी कीनी खँड खँड ॥३॥

जो मागै सो भूखा रहै ॥
इसु सँगि राचै सु कछु न लहै ॥
इसहि तिआगि सतसँगति करै ॥
वडभागी नानक ओहु तरै ॥४॥१८॥२९॥

रामकली महला - ५

इस शब्द में गुरु जी माया (सांसारिक धन सम्पदा एवं सामर्थ्य) के स्वभाव पर टिप्पणी करते हैं जिसने अधिकतम लोगों को अपने जाल में फँसा रखा है और वह हमें अनेकों प्रकार के छल कपट और कुकर्म करने के लिए बाध्य करती रहती है । वह कहते हैं कि कैसे यह माया एक चतुर एवं चंचल नारी की भाँति हमें रिझा कर अपने वश में कर लेती है और जब हम उसके प्रेम में पड़ कर उसके पीछे भागते हैं तब वह हमारे हाथों से फिसल जाती है । गुरु जी बताते हैं कि वह कौन से लोग हैं जो वास्तव में मायाजाल से निपटना जानते हैं और हम उनसे क्या सीख ले सकते हैं ।

गुरु जी सर्वप्रथम माया के स्वभाव पर कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), जिसने भी इस माया को पकड़ने का प्रयत्न किया, वह उसके हाथों में से फिसल गयी । जिस मनुष्य ने भी इससे प्रेम किया (अत्यंत प्रेम के साथ संभाल कर रखा) वह उसके साथ नहीं रही (और आवश्यकता के समय उसने छल किया) ।नानक का कथन है कि जब किसी ने इस माया का त्याग किया (इसके प्रेम से दूर रहा), तब यह उसके चरणों में आकर पड़ गयी (उसकी अधीनता में आ गयी)”।(१)

अतः, मुक्ति प्राप्त करने के केवल एक ही राह को व्यक्त करते हुये गुरु जी कहते हैं : “ हे’ संत जनों इस निर्मल विचार को सुनो : राम नाम के ध्यान के अतिरिक्त (इस माया से मुक्ति पाने की) और कोई राह हमारे पास नहीं है, जब हम पूर्ण गुरु से मिलते हैं तभी (मायाजाल से छूट कर) उद्धार होता है ”।(१-विराम)

अब गुरु जी माया के कुछ अनोखे लक्षणों का वर्णन करते हुये कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), जब भी कोई मनुष्य उसे आदर और प्रेम से रखता है (अत्यधिक ध्यान से संभालता है) तब आपस में उन्हें दंभ होने लगता है । परन्तु, जब कोई इस माया को अपने मन में से दूर कर देता है तब यह उस मनुष्य की सेवा एक सेवक के रूप में करने लग जाती है ”।(२)

गुरु जी माया के छल कपट के स्वभाव पर टिप्पणी करते हुये और आगे बताते हैं कि संत जन उसके साथ कैसा व्यवहार करते हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रत्यक्ष रूप से यह माया अपने मुख से अति प्रिय भाषा बोलती है, परन्तु अंत में वह (अपने स्वामी को ही) ठग लेती है । यह कभी भी एक स्थान पर (अथवा, किसी एक मनुष्य के पास) स्थिर नहीं रह पाती ।इसने ब्रह्मांड में अनेकों को मोह लिया, परन्तु, राम को प्रेम करने वाले भक्तजनों ने इसको खँड खँड कर दिया (अथवा, माया को कोई महत्व नहीं दिया)"।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी माया के वास्तविक स्वभाव पर संक्षेप में कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जो भी कोई मनुष्य (माया की) याचना करता रहता है वह सदैव ही भूखा रहता है (उसकी सांसारिक इच्छायें कभी तृप्त नही होतीं) तथा जो भी कोई इसमें संलग्न रहता है अथवा इसका संचय करता है उसे कुछ भी लाभ नहीं होता । परन्तु, हे नानक, जो भी सौभाग्यशाली मनुष्य इसे त्याग कर संतजनों की संगति में आता है वह (इस भयानक भवसागर से) पार उतर जाता है "।(४-१८-२९)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम वास्तव में सच्ची शांति, सन्तुष्टि तथा मोक्ष प्राप्त करना चाहते हैं तो मायाजाल में फँसने की अपेक्षा, हमें संतजनों की संगति में रह कर गुरु के आदर्शों के अनुसरण पर प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੮੯੩	**पृ-८९३**
ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**रामकली महला ५॥**
ਰਤਨ ਜਵੇਹਰ ਨਾਮ ॥ ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਗਿਆਨ ॥ ਸੂਖ ਸਹਜ ਦਇਆ ਕਾ ਪੋਤਾ ॥ ਹਰਿ ਭਗਤਾ ਹਵਾਲੈ ਹੋਤਾ ॥੧॥	रतन जवेहर नाम ॥ सतु सँतोखु गिआन ॥ सूख सहज दइआ का पोता ॥ हरि भगता हवालै होता ॥१॥
ਮੇਰੇ ਰਾਮ ਕੋ ਭੰਡਾਰੁ ॥ ਖਾਤ ਖਰਚਿ ਕਛੁ ਤੋਟਿ ਨ ਆਵੈ ਅੰਤੁ ਨਹੀ ਹਰਿ ਪਾਰਾਵਾਰੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मेरे राम को भंडारु ॥ खात खरचि कछु तोटि न आवै अँतु नही हरि पारावारु ॥१॥रहाउ॥
ਕੀਰਤਨੁ ਨਿਰਮੋਲਕ ਹੀਰਾ ॥ ਆਨੰਦ ਗੁਣੀ ਗਹੀਰਾ ॥ ਅਨਹਦ ਬਾਣੀ ਪੂੰਜੀ ॥ ਸੰਤਨ ਹਥਿ ਰਾਖੀ ਕੂੰਜੀ॥੨॥	कीरतनु निरमोलक हीरा ॥ आनँद गुणी गहीरा ॥ अनहद बाणी पूँजी ॥ सँतन हथि राखी कूँजी ॥२॥
ਪੰਨਾ ੮੯੪	**पृ-८९४**
ਸੁੰਨ ਸਮਾਧਿ ਗੁਫਾ ਤਹ ਆਸਨੁ ॥ ਕੇਵਲ ਬ੍ਰਹਮ ਪੂਰਨ ਤਹ ਬਾਸਨੁ ॥ ਭਗਤ ਸੰਗਿ ਪ੍ਰਭੁ ਗੋਸਟਿ ਕਰਤ ॥ ਤਹ ਹਰਖ ਨ ਸੋਗ ਨ ਜਨਮ ਨ ਮਰਤ ॥੩॥	सुँन समाधि गुफा तह आसनु ॥ केवल ब्रहम पूरन तह बासनु ॥ भगत सँगि प्रभु गोसटि करत ॥ तह हरख न सोग न जनम न मरत ॥३॥
ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਜਿਸੁ ਆਪਿ ਦਿਵਾਇਆ ॥ ਸਾਧਸੰਗਿ ਤਿਨਿ ਹਰਿ ਧਨੁ ਪਾਇਆ ॥ ਦਇਆਲ ਪੁਰਖ ਨਾਨਕ ਅਰਦਾਸਿ ॥ ਹਰਿ ਮੇਰੀ ਵਰਤਣਿ ਹਰਿ ਮੇਰੀ ਰਾਸਿ ॥੪॥੨੪॥੩੫॥	करि किरपा जिसु आपि दिवाइआ ॥ साधसँगि तिनि हरि धनु पाइआ ॥ दइआल पुरख नानक अरदासि ॥ हरि मेरी वरतणि हरि मेरी रासि ॥४॥२४॥३५॥

रामकली महला - ५

गुरु जी इस शब्द में भक्तजनों को प्राप्त हुये उस आनंद का वर्णन कर रहे हैं जब प्रभु नाम रूपी रत्नों से भरे भंडार की चाबी प्रभु उन्हें स्वयं सौंप देते हैं।प्रभु के भंडार में अनेक प्रकार की बहुमूल्य सामग्री पर विस्तार से गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, इस भंडारघर में अनमोल) प्रभु नाम रूपी हीरे, रत्न एवं जवाहर भरे हैं, साथ ही वहाँ सत्य, संतोष और दैवी ज्ञान भी हैं । यहाँ सुख शांति, सहजता तथा दया भाव का भंडार भी है जो हरि के भक्तजनों के हवाले कर दिया जाता है "।(१)

प्रभु के इस भंडार के अनूठे गुण पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो) मेरे राम का भंडार ऐसा है कि जितना चाहो उसमें से खाओ, व्यय करो, वहाँ पर कोई कमी नहीं आती, हरि के भंडार का कोई अंत नहीं अथवा कोई आर पार नहीं "।(१-विराम)

प्रभु नाम के भंडार की सूची में कुछ और बहुमूल्य रत्नों तथा उनके अनोखे गुणों का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, इस भंडारघर में एक और) अनमोल हीरा (प्रभु की महिमा में गाया जाने वाला) कीर्तन है, जो कि आनंद एवं गुणों से भरा गहन (सागर) है। (प्रभु की महिमा में कही गयी) अनहद अथवा असीमित पवित्र वाणी रूपी पूँजी के भंडारघर की कुँजी प्रभु ने अपने संतों के हाथ में दे रखी है (और हम केवल गुरु अथवा संतों की कृपा के द्वारा इस भंडारघर तक पहुँच कर आनंद प्राप्त कर सकते हैं)"।(२)

प्रभु के ऐसे भक्त जो प्रभु के ध्यान में इतनी गहन समाधि लगाते हैं कि उन्हें सांसारिक विषयों का ध्यान ही नहीं रहता और उनकी इस स्थिति के आनंद का वर्णन गुरु जी करते हुये कहते हैं : " (हे' मेरे मित्रो, गहन समाधि की दशा में भक्त ऐसा अनुभव करते हैं, जैसे कि वह स्वयं को भूल कर) एक कन्दरा में पूर्ण रूप से लीन ऐसी शून्य अवस्था में आसीन हैं जहाँ पर केवल पूर्ण ब्रह्म का वास है तथा वहाँ भक्त के साथ प्रभु की गोष्ठी हो रही है, (और उस वार्तालाप में) ना कोई हर्ष, न शोक, ना ही किसी जन्म और मरण का कोई वर्णन होता है "।(३)

गुरु जी शब्द का अंत करते हुये हमें यह बताते हैं कि कौन से भाग्यशाली मनुष्य हैं जिन्हें ऐसे अनमोल भंडार को पाने का वरदान प्राप्त है

और साथ ही यह भी प्रकट करते हैं कि ऐसे वरदान को पाने के लिये हमें प्रभु से कैसे प्रार्थना करनी चाहिये । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), केवल वही लोग साधुसंगति में हरि नाम रूपी धन को प्राप्त कर सके हैं जिन पर उस हरि ने कृपा करके स्वयं(इस धन को) दिलवाया है । हे' दयालु प्रभु, नानक की अरदास है कि हरि नाम ही मेरा आचरण एवं आधार हो और हरि नाम ही मेरी राशि अथवा पूँजी हो "।(४-२४-३५)

इस शब्द का संदेश है कि यदि हम चाहते हैं कि प्रभु नाम रूपी अँमृत रस के स्वाद, सत्य जीवन, संतोष और आत्मिक ज्ञान का आनंद ले सकें तथा ऐसी समाधिवस्था पायें जहाँ पर जन्म, मरण, हर्ष एवं शोक की समस्त शंकाओं से मुक्त हो जायें और प्रभु के साथ अत्यंत स्नेह भाव से सम्वाद कर सकें तो प्रभु से यह विनती करनी चाहिए कि वह हमें साधु संतों की सँगति में रखें और अपने नाम के ध्यान का वरदान दें ।

ਪੰਨਾ ੮੯੫

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਦੁਲਭ ਦੇਹ ਸਵਾਰਿ ॥
ਜਾਹਿ ਨ ਦਰਗਹ ਹਾਰਿ ॥
ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਤੁਧੁ ਹੋਇ ਵਡਿਆਈ ॥
ਅੰਤ ਕੀ ਬੇਲਾ ਲਏ ਛਡਾਈ ॥੧॥

ਰਾਮ ਕੇ ਗੁਨ ਗਾਉ ॥
ਹਲਤੁ ਪਲਤੁ ਹੋਹਿ ਦੋਵੈ ਸੁਹੇਲੇ ਅਚਰਜ ਪੁਰਖੁ ਧਿਆਉ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਊਠਤ ਬੈਠਤ ਹਰਿ ਜਾਪੁ ॥
ਬਿਨਸੈ ਸਗਲ ਸੰਤਾਪੁ ॥
ਬੈਰੀ ਸਭਿ ਹੋਵਹਿ ਮੀਤ ॥
ਨਿਰਮਲੁ ਤੇਰਾ ਹੋਵੈ ਚੀਤ ॥੨॥

ਸਭ ਤੇ ਊਤਮ ਇਹੁ ਕਰਮੁ ॥
ਸਗਲ ਧਰਮ ਮਹਿ ਸ੍ਰੇਸਟ ਧਰਮੁ ॥
ਹਰਿ ਸਿਮਰਨਿ ਤੇਰਾ ਹੋਇ ਉਧਾਰੁ ॥
ਜਨਮ ਜਨਮ ਕਾ ਉਤਰੈ ਭਾਰੁ ॥੩॥

ਪੂਰਨ ਤੇਰੀ ਹੋਵੈ ਆਸ ॥
ਜਮ ਕੀ ਕਟੀਐ ਤੇਰੀ ਫਾਸ ॥
ਗੁਰ ਕਾ ਉਪਦੇਸੁ ਸੁਨੀਜੈ ॥
ਨਾਨਕ ਸੁਖਿ ਸਹਜਿ ਸਮੀਜੈ ॥੪॥੩੦॥੪੧॥

पृ-८९५

रामकली महला ५॥

दुलभ देह सवारि ॥
जाहि न दरगह हारि ॥
हलति पलति तुधु होइ वडिआई ॥
अँत की बेला लए छडाई ॥१॥

राम के गुन गाउ ॥
हलतु पलतु होहि दोवै सुहेले अचरज पुरखु धिआउ ॥१॥रहाउ॥

ऊठत बैठत हरि जापु ॥
बिनसै सगल सँतापु ॥
बैरी सभि होवहि मीत ॥
निरमलु तेरा होवै चीत ॥२॥

सभ ते ऊतम इहु करमु ॥
सगल धरम महि स्रेसट धरमु ॥
हरि सिमरनि तेरा होइ उधारु ॥
जनम जनम का उतरै भारु ॥३॥

पूरन तेरी होवै आस ॥
जम की कटीऐ तेरी फास ॥
गुर का उपदेसु सुनीजै ॥
नानक सुखि सहजि समीजै ॥४॥३०॥४१॥

रामकली महला - ५

इस शब्द में गुरु जी हमें उन आशीर्वादों का ब्यौरा देते हैं जो गुरु के उपदेशों के अनुसार प्रभु नाम पर ध्यान करते रहने से हमें प्राप्त होते हैं । प्रभु नाम को जपने से मिलने वाले लाभ को स्पष्ट करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मानव), दुर्लभ प्रकार से मिली इस देह को तुम (प्रभु नाम के ध्यान द्वारा) सँवारो, जिससे कि तुम्हें एक हारे हुये व्यक्ति की भाँति प्रभु के द्वार पर ना जाना पड़े । (यदि तुम प्रभु नाम का ध्यान करते हो तो) लोक तथा परलोक में तुम्हारा यश और सम्मान होगा और अँत में मृत्यु के समय(यही प्रभु नाम यमराज से) तुम्हें मुक्ति प्राप्त करवायेगा "।(१)

इस उपदेश के सार पर गुरु जी का कथन है : "(हे' मेरे मित्रो), राम के गुण गाओ । उस अद्भुत महानायक (प्रभु) का ध्यान करने से लोक तथा परलोक दोनों ही सुंदर और सुहाने हो जाते हैं "। (१-विराम)

संसार में रह कर प्रभु नाम का ध्यान करने से हमें कैसे लाभ अथवा वरदानों का अनुभव हो सकता है, इस पर गुरु जी विस्तार से कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), हर समय उठते बैठते हरि नाम का जाप करते रहो जो कि समस्त दुख और संताप का विनाशक है । सभी बैरी तुम्हारे मित्र बन जाते हैं तथा तुम्हारा मन शांत एवं निर्मल हो जाता है (अर्थात किसी प्रकार का वैमनस्य नहीं रहता)"।(२)

शास्त्रीय विधियों द्वारा किये गये कर्मकांडों की तुलना गुरु जी प्रभु नाम के ध्यान से करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, प्रभु नाम का ध्यान) अन्य सभी प्रकार के कर्मों में से उत्तम कर्म है और समस्त धर्मों के पालन करने की अपेक्षा, यह धर्म श्रेष्ठ है, क्योंकि, हरि नाम का स्मरण करने से तुम्हारा उद्धार होगा और जन्म जन्म में कमाये गये (कुकर्मों एवं पापों का) बोझ उतरेगा, (अर्थात, पुराने पापों और कुकर्मों से तुम्हें मुक्ति मिल जायेगी)"।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), गुरु के इस उपदेश को सुन लो, (यदि तुम प्रभु नाम का ध्यान करते हो तो) तुम्हारी आशा पूर्ण होगी, यमराज की फाँसी का फँदा कट जायेगा और नानक का कथन है कि तुम सुख शांति और सहज अवस्था में समा जाओगे, (प्रभु की अनंत एवं सच्ची सँगति में आन्नदित रहोगे)"।(४-३०-४१)

इस शब्द का संदेश है कि यदि हमारी यह इच्छा हो कि हमारा यह मानव शरीर दैवी गुणों से सुशोभित हो जाये, आशायें और कामनाएँ पूर्ण हो जायें, सभी शत्रु और बैरी मित्र बनें और अंत में मान सम्मान सहित हम प्रभु के द्वार पर जायें तो गुरु के उपदेशों का पालन करते हुए प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੮੯੮

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਕਿਸੁ ਭਰਵਾਸੈ ਬਿਚਰਹਿ ਭਵਨ ॥
ਮੂੜ ਮੁਗਧ ਤੇਰਾ ਸੰਗੀ ਕਵਨ ॥
ਰਾਮੁ ਸੰਗੀ ਤਿਸੁ ਗਤਿ ਨਹੀ ਜਾਨਹਿ ॥
ਪੰਚ ਬਟਵਾਰੇ ਸੇ ਮੀਤ ਕਰਿ ਮਾਨਹਿ ॥੧॥

ਸੋ ਘਰੁ ਸੇਵਿ ਜਿਤੁ ਉਧਰਹਿ ਮੀਤ ॥
ਗੁਣ ਗੋਵਿੰਦ ਰਵੀਅਹਿ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ ਸਾਧਸੰਗਿ ਕਰਿ ਮਨ ਕੀ ਪ੍ਰੀਤਿ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਜਨਮੁ ਬਿਹਾਨੋ ਅਹੰਕਾਰਿ ਅਰੁ ਵਾਦਿ ॥
ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਨ ਆਵੈ ਬਿਖਿਆ ਸਾਦਿ ॥
ਭਰਮਤ ਭਰਮਤ ਮਹਾ ਦੁਖੁ ਪਾਇਆ ॥
ਤਰੀ ਨ ਜਾਈ ਦੁਤਰ ਮਾਇਆ ॥੨॥

ਕਾਮਿ ਨ ਆਵੈ ਸੁ ਕਾਰ ਕਮਾਵੈ ॥
ਆਪਿ ਬੀਜਿ ਆਪੇ ਹੀ ਖਾਵੈ ॥
ਰਾਖਨ ਕਉ ਦੂਸਰ ਨਹੀ ਕੋਇ ॥
ਤਉ ਨਿਸਤਰੈ ਜਉ ਕਿਰਪਾ ਹੋਇ ॥੩॥

ਪਤਿਤ ਪੁਨੀਤ ਪ੍ਰਭ ਤੇਰੋ ਨਾਮੁ ॥
ਅਪਨੇ ਦਾਸ ਕਉ ਕੀਜੈ ਦਾਨੁ ॥
ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਪ੍ਰਭ ਗਤਿ ਕਰਿ ਮੇਰੀ ॥
ਸਰਣਿ ਗਹੀ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭ ਤੇਰੀ ॥੪॥੩੭॥੪੮॥

पृ-८९८

रामकली महला ५॥

किसु भरवासै बिचरहि भवन ॥
मूड़ मुगध तेरा सँगी कवन ॥
रामु सँगी तिसु गति नही जानहि ॥
पँच बटवारे से मीत करि मानहि ॥१॥

सो घरु सेवि जितु उधरहि मीत ॥
गुण गोविँद रविअहि दिनु राती साधसँगि करि मन की प्रीति ॥१॥रहाउ॥

जनमु बिहानो अँहकारि अरु वादि ॥
तृिपति न आवै बिखिआ सादि ॥
भरमत भरमत महा दुखु पाइआ ॥
तरी न जाई दुतर माइआ ॥२॥

कामि न आवै सु कार कमावै ॥
आपि बीजि आपे ही खावै ॥
राखन कउ दूसर नही कोइ ॥
तउ निसतरै जउ किरपा होइ ॥३॥

पतित पुनीत प्रभ तेरो नामु ॥
अपने दास कउ कीजै दानु ॥
करि किरपा प्रभ गति करि मेरी ॥
सरणि गही नानक प्रभ तेरी ॥४॥३७॥४८॥

रामकली महला – ५

जब हम अपने सहित चारों ओर और सबको देखते हैं तो पाते हैं कि अधिकांश रूप से हम अपने जीवन में सांसारिक माया के विभिन्न स्वरूपों को प्राप्त करने के लिए व्यस्त रहते हैं, भले ही वह और अधिक धन का संचय हो, शक्ति एवं सत्ता का विस्तार हो, अथवा अपनी एवं अपने प्रियजनों की उच्च सामाजिक मान्यता और स्तर को प्राप्त करने का हो।हम इन धंधों में जीवन का अधिकांश भाग ऐसी विचारधारा के साथ व्यतीत कर देते हैं कि यह धन सम्पदा, सगे सम्बन्धी और मित्र किसी आवश्यकता अथवा आड़े समय पर हमारे सच्चे सहायक बनेंगे। परन्तु बहुधा तब घोर निराशा होती है जब किसी आपदा के समय पर यह सभी स्त्रोत सहायता करने योग्य नहीं रहते अथवा सहायता करने के लिए आगे नहीं आते।इस शब्द में गुरु जी हमें वास्तविकता के प्रति जागरूक करते हैं और बताते हैं कि वास्तव में कौन हमारा ऐसा हितैषी तथा विश्वसनीय मित्र हो सकता है जो हमारी रक्षा करने योग्य है और वह करेगा भी, पर हम किस प्रकार से उसकी मित्रता प्राप्त कर सकते हैं।

सर्वप्रथम, गुरु जी वर्तमान स्थिति में हमें अपने जीवन आचरण पर विचार करने की चुनौती देते हुये कहते हैं : "(हे' मानव) किसके विश्वास अथवा भरोसे पर तुम इस संसार में अपना जीवन व्यतीत कर रहे हो। हे' मूर्ख, अज्ञानी, (क्या तुमने कभी विचारा है कि) यहाँ तुम्हारा कौन (सच्चा) साथी है ? राम तुम्हारे साथी हैं, परन्तु तुम उनकी गति (महिमा, व्यवहार, तथा और कुछ भी) नहीं जानते हो, अपितु, तुमने तो पाँच ठगों (काम, क्रोध, लोभ, मोह व अंहकार रूपी विकारों) को अपना मित्र मान रखा है "।(१)

अतः, गुरु जी परामर्श देते हुये कहते हैं : " हे' मित्र, उस घर की सेवा करो जिसके द्वारा तुम्हारा उद्धार हो जाये (भवसागर से पार हो सको)। (हे' मेरे मित्र), अपने मन में साधुसंगति के प्रति प्रेम उत्पन्न करके दिन रात गोविंद के गुणगान में रमे रहो "।(१-विराम)

अब गुरु जी इस संसार में मनुष्य के सामान्य जीवन आचरण पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्र, तुमने देखा होगा कि सामान्यतः) मनुष्य का जीवन अंहकार तथा विवादों में ही व्यतीत हो जाता है, वह संसार के विष सरीखे स्वादों (भोग विलास) से ही तृप्त नहीं हो पाता। (मायामोह के पीछे) भागते दौड़ते वह अनेक दुख संताप झेलता रहता है (पर फिर भी) माया के भयानक भवसागर से पार नहीं उतर पाता (कभी सन्तुष्ट नहीं होता)"।(२)

गुरु जी अब हमारे मूर्खतापूर्ण कृत्यों द्वारा मिलने वाले परिणामों पर प्रकाश डालते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्र, मनुष्य) वही कार्य करता है जिसका कोई लाभ नहीं होता । जैसा बीज वह बोता है, वैसा ही स्वयं खाता है (अपने मूर्खतापूर्ण कार्यों के परिणाम भोगता है । परन्तु, उसे यह स्मरण रखना चाहिए कि प्रभु के बिना) कोई और दूसरा रक्षा करने वाला नहीं है । (अतः, किसी का) उद्धार तभी हो सकता है जब उस पर (प्रभु की) कृपा होगी "।(३)

जीवन के आचरण का दर्पण दिखलाने के पश्चात कि हम किस प्रकार से मायामोह के पीछे लग कर अपना समय व्यर्थ कर रहे हैं, अब शब्द के अंत में हमारे बचाव के लिये गुरु जी प्रभु से उसकी कृपा की याचना करने का राह प्रकट करते हुये कहते हैं : "(हे' प्रभु), तेरा नाम पतितों को भी पवित्र कर देता है, अत: अपने इस दास को भी (नाम का) दान प्रदान करो । हे' प्रभु, नानक ने तेरी शरण ली है, कृपा करो और मेरे जीवन का कल्याण करो (सांसारिक मायाजाल एवं जन्म मरण के फेरों में से बाहर निकालो)"।(४-३७-४८)

इस शब्द का संदेश यह है कि इस सांसारिक मायाजाल के व्यर्थ के धंधों के पीछे अपना समय नष्ट करने की अपेक्षा, हमें संतजनों की संगति में रह कर दिन रात प्रभु का गुणगान करना चाहिये तथा विनम्र भाव से प्रभु से यह विनती करनी चाहिये कि वह कृपा करके हमें अपना नाम जपने का वरदान दें और हमारी रक्षा करें ।

ਪੰਨਾ ੯੦੦

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫॥

ਈਂਧਨ ਤੇ ਬੈਸੰਤਰੁ ਭਾਗੈ॥
ਮਾਟੀ ਕਉ ਜਲੁ ਦਹ ਦਿਸ ਤਿਆਗੈ॥
ਊਪਰਿ ਚਰਨ ਤਲੈ ਆਕਾਸੁ॥
ਘਟ ਮਹਿ ਸਿੰਧੁ ਕੀਓ ਪਰਗਾਸੁ॥੧॥

ਐਸਾ ਸੰਮ੍ਰਥੁ ਹਰਿ ਜੀਉ ਆਪਿ॥
ਨਿਮਖ ਨ ਬਿਸਰੈ ਜੀਅ ਭਗਤਨ ਕੈ ਆਠ ਪਹਰ ਮਨ ਤਾ ਕਉਜਾਪਿ॥੧॥
ਰਹਾਉ॥

ਪ੍ਰਥਮੇ ਮਾਖਨੁ ਪਾਛੈ ਦੂਧੁ॥
ਮੈਲੂ ਕੀਨੋ ਸਾਬੁਨੁ ਸੂਧੁ॥
ਭੈ ਤੇ ਨਿਰਭਉ ਡਰਤਾ ਫਿਰੈ॥
ਹੋਂਦੀ ਕਉ ਅਣਹੋਂਦੀ ਹਿਰੈ॥੨॥

ਦੇਹੀ ਗੁਪਤ ਬਿਦੇਹੀ ਦੀਸੈ॥
ਸਗਲੇ ਸਾਜਿ ਕਰਤ ਜਗਦੀਸੈ॥
ਠਗਣਹਾਰ ਅਣਠਗਦਾ ਠਾਗੈ॥
ਬਿਨੁ ਵਖਰ ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਉਠਿ ਲਾਗੈ॥੩॥

ਸੰਤ ਸਭਾ ਮਿਲਿ ਕਰਹੁ ਬਖਿਆਣ॥
ਸਿੰਮ੍ਰਿਤਿ ਸਾਸਤ ਬੇਦ ਪੁਰਾਣ॥
ਬ੍ਰਹਮ ਬੀਚਾਰੁ ਬੀਚਾਰੇ ਕੋਇ॥
ਨਾਨਕ ਤਾ ਕੀ ਪਰਮ ਗਤਿ ਹੋਇ॥੪॥੪੩॥੫੪॥

पृ-९००

रामकली महला ५॥

ईंधन ते बैसँतरु भागै ॥
माटी कउ जलु दह दिस तिआगै ॥
ऊपरि चरन तलै आकासु ॥
घट महि सिँधु कीओ परगासु ॥१॥

ऐसा सँमृथु हरि जीउ आपि ॥
निमख न बिसरै जीअ भगतन कै आठ पहर मन ता कउजापि ॥१॥
रहाउ॥

प्रथमे माखनु पाछै दूधु ॥
मैलु कीनो साबुनु सूधु ॥
भै ते निरभउ डरता फिरै ॥
होंदी कउ अणहोंदी हिरै ॥२॥

देही गुपत बिदेही दीसै ॥
सगले साजि करत जगदीसै ॥
ठगणहार अणठगदा ठागै ॥
बिनु वखर फिरि फिरि उठि लागै ॥३॥

सँत सभा मिलि करहु बखिआण ॥
सिँमृिति सासत बेद पुराण ॥
ब्रहम बीचारु बीचारे कोइ ॥
नानक ता की परम गति होइ ॥४॥४३॥५४॥

रामकली महला ५॥

इस शब्द में गुरु जी प्रभु की कुछ अद्भुत विस्मयकारी शक्तियों को लक्षित करते हुये हमें कहते हैं कि उस सर्वशक्तिमान प्रभु की महिमा का गान एवं उसके नाम का ध्यान करना क्यों आवश्यक है ।

वह कहते हैं : "(प्रभु की शक्ति ऐसी है कि उसके विधान के अनुसार लकड़ी में छिपी हुई अग्नि भी उसे जला नहीं पाती, जैसे कि मानो) ईंधन से अग्नि दूर भाग रही हो, (उसी प्रकार) धरती के चारों ओर जल होते हुये भी वह धरती की माटी को दसों दिशायों से त्याग रहा है (अर्थात्, मिट्टी जल से प्रभावित नहीं हो रही है) । (प्रभु का एक और अचम्भा कि) वृक्ष में (शाखायें और पत्ते आकाश की ओर हैं तथा जड़ें नीचे धरती के अंदर, जैसे कि) वृक्ष के चरण उपर आकाश की ओर और सर नीचे है । परन्तु, प्रभु की सर्वाधिक विस्मयकारी लीला यह है कि वह स्वयं, जो एक अपार सागर की भाँति है उसने (मानव हृदय रुपी) घट में अपने को प्रकट कर लिया है "।(१)

इसलिये, गुरु जी अपने मन को (परोक्ष में हमें भी) सम्बोधित करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मन), हरि जी इतने सामर्थ्यवान हैं कि वह एक क्षण के लिये भी अपने भक्तों के हृदय से नहीं बिसरते, अतः, हे' मेरे मन, तुम्हें भी आठों पहर उस हरि का जाप करते रहना चाहिये "।(१-विराम)

प्रभु के कुछ और अति सुंदर विस्मयकारी कौतुकों के उदाहरण देते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मानव, तनिक इस तथ्य पर विचार कर कि पहले प्रभु थे और फिर सृष्टि की रचना हुई, यह तो इस प्रकार से हुया, जैसे कि) पहले मक्खन था, तत्पश्चात, दूध बना । (अब इस तथ्य पर विचार करो कि कैसे प्रभु माता के मैले तथा लाल रक्त को नवजात शिशु के लिये श्वेत शुद्ध दूध में परिवर्तित कर देते हैं, जैसे कि उन्होंने) माटी अथवा मैल को शुद्ध साबुन का रुप दे दिया है । (एक और अचम्भित करने वाली बात यह कि) भयरहित (आत्मा, जो कि प्रभु की ही ज्योति है, निरर्थक ही अनजाने) भय से डरती रहती है ।(और फिर यह सांसारिक मायाजाल) जिसका कोई असितत्व नहीं है वह आत्मा (प्रभु के रुप) को भटकाता रहता है जो कि विद्यमान है "।(२)

प्रभु के रचे हुए कुछ और चमत्कारों पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्र, एक और यथार्थ पर विचार करो कि) आत्मा (जो कि शरीर की स्वामिनी है वह) अदृष्य है, परन्तु, नाशवान शरीर भलीभाँति से दिखाई देता है । समस्त जीवों का सृजन करने के पश्चात जगत का स्वामी

प्रभु अनेक विलक्षण कार्य करता रहता है। जैसे कि (माया रूपी) ठगनी ना ठगने योग्य आत्मा को ठगती रहती है और (प्रभु नाम रूपी) पूँजी ना होने पर (मनुष्य) बारम्बार माया में लिप्त होता है"।(३)

गुरु जी अपने उपरोक्त कथन पर विचार करने की चुनौती देते हुये, शब्द के अंत में यह कहते हैं कि ऐसा करने वाला मनुष्य किस प्रकार के स्तर को प्राप्त कर लेता है। वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो) साधु संतों की संगति में रह कर स्मृति, शास्त्र, वेद तथा पुराणों में इस विषय पर मिल बैठ कर विचार एवं व्याख्या करो (तुम पाओगे कि माया प्रत्येक जन को भटकाती है)। परन्तु, कोई बिरला ही मनुष्य है जो इस दैवी ब्रह्म ज्ञान पर विचार करता है। नानक का कथन है कि जो कोई भी ऐसा कर पाता है, उसकी गति परम आत्मिक सुख में होती है"।(४-४३-५४)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु के विलक्षण कौतुकों तथा चमत्कारों पर कुछ विचार करें कि कैसे वृक्ष अपने सिर को धरती में गाड़ कर पैर आकाश की ओर करके खड़े रहते हैं ; कैसे लकड़ी में छिपी अग्नि उसे भस्म नहीं करती और कैसे माता का लाल रक्त शिशु के लिये श्वेत शुद्ध दूध में परिवर्तित हो जाता है। यह सब देखकर हम स्वतः राम, राम अथवा प्रभु तुम धन्य हो, प्रभु तुम धन्य हो, कहने लगते हैं। परन्तु, कोई बिरला ही मनुष्य जो ऐसा विचार करने योग्य होता है वह प्रभु के साथ एकरूप होकर परम अवस्था प्राप्त कर लेता है।

ਪੰਨਾ ੯੦੧

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਰਾਗੁ ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੯ ਤਿਪਦੇ ॥

ਰੇ ਮਨ ਓਟ ਲੇਹੁ ਹਰਿ ਨਾਮਾ ॥
ਜਾ ਕੈ ਸਿਮਰਨਿ ਦੁਰਮਤਿ ਨਾਸੈ ਪਾਵਹਿ ਪਦੁ ਨਿਰਬਾਨਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਬਡਭਾਗੀ ਤਿਹ ਜਨ ਕਉ ਜਾਨਹੁ ਜੋ ਹਰਿ ਕੇ ਗੁਨ ਗਾਵੈ ॥
ਜਨਮ ਜਨਮ ਕੇ ਪਾਪ ਖੋਇ ਕੈ ਫੁਨਿ ਬੈਕੁੰਠਿ ਸਿਧਾਵੈ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੯੦੨

ਅਜਾਮਲ ਕਉ ਅੰਤ ਕਾਲ ਮਹਿ ਨਾਰਾਇਨ ਸੁਧਿ ਆਈ ॥
ਜਾਂ ਗਤਿ ਕਉ ਜੋਗੀਸੁਰ ਬਾਛਤ ਸੋ ਗਤਿ ਛਿਨ ਮਹਿ ਪਾਈ ॥੨॥

ਨਾਹਿਨ ਗੁਨੁ ਨਾਹਿਨ ਕਛੁ ਬਿਦਿਆ ਧਰਮੁ ਕਉਨੁ ਗਜਿ ਕੀਨਾ ॥
ਨਾਨਕ ਬਿਰਦੁ ਰਾਮ ਕਾ ਦੇਖਹੁ ਅਭੈ ਦਾਨੁ ਤਿਹ ਦੀਨਾ ॥੩॥੧॥

पृ-९०१

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

रागु रामकली महला ९ तिपदे ॥

रे मन ओट लेहु हरि नामा ॥
जा कै सिमरनि दुरमति नासै पावहि पदु निरबाना ॥१॥रहाउ॥

बडभागी तिह जन कउ जानहु जो हरि के गुन गावै ॥
जनम जनम के पापखोइ कै फुनि बैकुंठि सिधावै ॥१॥

पृ-९०२

अजामल कउ अँत काल महि नाराइन सुधि आई
जां गति कउ जोगीसुर बाछत सो गति छिन महि पाई ॥२॥

नाहिन गुनु नाहिन कछु बिदिआ धरमु कउनु गजि कीना ॥
नानक बिरदु राम का देखहु अभै दानु तिह दीना ॥३॥१॥

राग रामकली महला - ९ तिंपदे

इस शब्द में गुरु जी हमें प्रभु नाम की शरण में जाने को कहते हैं और अपने इस विचार की पुष्टि वह कुछ हिन्दू पौराणिक कथायों के द्वारा करते हैं ।

वह अपने मन को (परोक्ष में हमें भी) सम्बोधित करते हुये कहते हैं : " हे' मेरे मन, हरि के नाम की शरण ले, क्योंकि, इसके भजन सिमरन से तुम्हारी दुर्मति का पलायन होगा और तुम निर्वाण का पद प्राप्त करोगे, जहाँ कोई इच्छा नहीं उपजती "।(१- विराम)

प्रभु के गुणगान करने से प्राप्त होने वाले वरदानों का वर्णन करते हुए गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), उस मनुष्य को सौभाग्यशाली मानो जो हरि के गुणों का गायन करता है और इस प्रकार से वह अपने अनेकों जन्मों के कमाये पापकर्मों से मुक्ति पाकर पुनः स्वर्ग का भागी बनता है "।(१)

गुरु जी यहाँ पर एक प्रसिद्ध हिन्दू पौराणिक कथा का उल्लेख करते हैं, जहाँ एक राजा के दरबार में अजामिल नामक एक सम्मानित ब्राह्मण पुजारी था । काम के वेग में आकर वह किसी सुंदर वेश्या के प्रेम में पड़ गया । राजा के बारम्बार चेताने पर भी वह उस स्त्री को नहीं छोड़ सका और अंत में उसे दरबार में से निकाल दिया गया । समय के साथ उन दोनों के यहाँ नौ संतानों का जन्म हुआ और परिवार के भरण पोषण के लिये अजामिल ने लूट पाट एवं अन्य कुकर्मों का आश्रय लिया, अतः, अब चारों ओर वह अपने दुष्कर्मों के कारण बदनाम था ।जब दसवाँ शिशु वेश्या के गर्भ में था तब एक दिन अचानक एक साधु उसके घर आये और उन्होंने उस आने वाले शिशु का नाम नारायण रखने का परामर्श दिया । अजामिल को इस पुत्र से अत्यधिक प्रेम था और उसी को किसी भी कार्य अथवा कारणवश पुकारता रहता था । समय पाकर अजामिल जब मृत्यु शैय्या पर था और यमदूत उसे लेने पहुँचे तो उसने यथावत, पुत्र नारायण को पुकारना चाहा । अक्समात् ही अजामिल को सच्चे नारायण (प्रभु) ध्यान में आ गए और उसने सच्चे शुद्ध हृदय से नारायण (प्रभु) को स्मरण करते हुए अपने दुष्कर्मों के लिए क्षमा याचना की । अजामिल की ऐसी निष्कप्ट प्रार्थना को सुन और समझ कर प्रभु ने उसे क्षमा करके मोक्ष प्रदान किया । इस कथा को उद्धरत करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), अजामिल को जीवन के अंत के समय पर (अपने दुष्कर्मों को पहचान कर) नारायण (प्रभु) का ध्यान आया और उसने एक क्षण में उस परम गति को प्राप्त कर लिया जिसकी कामना योगी अथवा देवगण चिरकाल तक करते रहते हैं "।(२)

गुरु जी शब्द के अंत में एक और उदाहरण देते हैं जहाँ कोई एक मनुष्य एक हाथी का जन्म पाने के लिये श्रापित था और वह किसी भी प्रकार के दैवी ज्ञान से पूर्णतया अनभिज्ञ था । एक बार वह हाथी एक मगरमच्छ की पकड़ में आ गया, जिससे वह अति भयभीत हुआ और उसने हताश होकर प्रभु से अपनी रक्षा के लिये विनती की ।दयालु प्रभु ने मगरमच्छ से बचाव के लिये उसे साहस का दान दिया । इस पर गुरु जी कहते हैं : " उस गज के पास ना तो कोई गुण था, ना ही कोई विद्या उसने पाई थी और ना ही उसने कोई धर्म का कर्म किया था । नानक का कथन है कि फिर भी राम की मूल एवं महान परम्परा को देखो कि (गज की हृदय विदारक चीख़ें सुन कर उस दयालु प्रभु ने) उसे अभयदान प्रदान किया (जिसके द्वारा गज मगरमच्छ से लड़ कर स्वयं की रक्षा कर सके)"। (३-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि भले ही हम एक घोर कुकर्मी अथवा पापी हों, फिर भी यदि हम सत्य और निष्कप्ट हृदय के साथ प्रभु से उसकी सहायता एवं सहारे की याचना करते हैं तो वह अपनी परम्परा के अनुसार हमें क्षमा करके मोक्ष प्रदान करते हैं ।

ਪੰਨਾ ੯੦੩

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਖਟੁ ਮਟੁ ਦੇਹੀ ਮਨੁ ਬੈਰਾਗੀ ॥
ਸੁਰਤਿ ਸਬਦੁ ਧੁਨਿ ਅੰਤਰਿ ਜਾਗੀ ॥
ਵਾਜੈ ਅਨਹਦੁ ਮੇਰਾ ਮਨੁ ਲੀਣਾ ॥
ਗੁਰ ਬਚਨੀ ਸਚਿ ਨਾਮਿ ਪਤੀਣਾ ॥੧॥

ਪ੍ਰਾਣੀ ਰਾਮ ਭਗਤਿ ਸੁਖੁ ਪਾਈਐ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਮੀਠਾ ਲਾਗੈਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਸਮਾਈਐ ॥੧॥
ਰਹਾਉ ॥

ਪੰਨਾ ੯੦੪

ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਬਿਵਰਜਿ ਸਮਾਏ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਭੇਟੈ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਏ ॥
ਨਾਮੁ ਰਤਨੁ ਨਿਰਮੋਲਕੁ ਹੀਰਾ ॥
ਤਿਤੁ ਰਾਤਾ ਮੇਰਾ ਮਨੁ ਧੀਰਾ ॥੨॥

ਹਉਮੈ ਮਮਤਾ ਰੋਗੁ ਨ ਲਾਗੈ ॥
ਰਾਮ ਭਗਤਿ ਜਮ ਕਾ ਭਉ ਭਾਗੈ ॥
ਜਮੁ ਜੰਦਾਰੁ ਨ ਲਾਗੈ ਮੋਹਿ ॥
ਨਿਰਮਲ ਨਾਮੁ ਰਿਦੈ ਹਰਿ ਸੋਹਿ ॥੩॥

ਸਬਦੁ ਬੀਚਾਰਿ ਭਏ ਨਿਰੰਕਾਰੀ ॥
ਗੁਰਮਤਿ ਜਾਗੇ ਦੁਰਮਤਿ ਪਰਹਾਰੀ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਜਾਗਿ ਰਹੇ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥
ਜੀਵਨ ਮੁਕਤਿ ਗਤਿ ਅੰਤਰਿ ਪਾਈ ॥੪॥

ਅਲਿਪਤ ਗੁਫਾ ਮਹਿ ਰਹਹਿ ਨਿਰਾਰੇ ॥
ਤਸਕਰ ਪੰਚ ਸਬਦਿ ਸੰਘਾਰੇ ॥
ਪਰ ਘਰ ਜਾਇ ਨ ਮਨੁ ਡੋਲਾਏ ॥
ਸਹਜ ਨਿਰੰਤਰਿ ਰਹਉ ਸਮਾਏ ॥੫॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਗਿ ਰਹੇ ਅਉਧੂਤਾ ॥
ਸਦ ਬੈਰਾਗੀ ਤਤੁ ਪਰੋਤਾ ॥
ਜਗੁ ਸੂਤਾ ਮਰਿ ਆਵੈ ਜਾਇ ॥
ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਸਬਦ ਨ ਸੋਝੀ ਪਾਇ ॥੬॥

ਅਨਹਦ ਸਬਦੁ ਵਜੈ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ ॥
ਅਵਿਗਤ ਕੀ ਗਤਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਤੀ ॥
ਤਉ ਜਾਨੀ ਜਾ ਸਬਦਿ ਪਛਾਨੀ ॥
ਏਕੋ ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਨਿਰਬਾਨੀ ॥੭॥

ਸੁੰਨ ਸਮਾਧਿ ਸਹਜਿ ਮਨੁ ਰਾਤਾ ॥
ਤਜਿ ਹਉ ਲੋਭਾ ਏਕੋ ਜਾਤਾ ॥
ਗੁਰ ਚੇਲੇ ਅਪਨਾ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ ॥
ਨਾਨਕ ਦੂਜਾ ਮੇਟਿ ਸਮਾਨਿਆ ॥੮॥੩॥

पृ-९०३

रामकली महला १॥

खटु मटु देही मनु बैरागी ॥
सुरति सबदु धुनि अँतरि जागी ॥
वाजै अनहदु मेरा मनु लीणा ॥
गुर बचनी सचि नामि पतीणा ॥१॥

प्राणी राम भगति सुखु पाईऐ ॥
गुरमुखि हरि हरि मीठा लागैहरि हरि नामि समाईऐ ॥१॥रहाउ॥

पृ-९०४

माइआ मोहु बिवरजि समाए ॥
सतिगुरु भेटै मेलि मिलाए ॥
नामु रतनु निरमोलकु हीरा ॥
तितु राता मेरा मनु धीरा ॥२॥

हउमै ममता रोगु न लागै ॥
राम भगति जम का भउ भागै ॥
जमु जँदारु न लागै मोहि ॥
निरमल नामु रिदै हरि सोहि ॥३॥

सबदु बीचारि भए निरँकारी ॥
गुरमति जागे दुरमति परहारी ॥
अनदिनु जागि रहे लिव लाई ॥
जीवन मुकति गति अँतरि पाई ॥४॥

अलिपत गुफा महि रहहि निरारे ॥
तसकर पँच सबदि सँघारे ॥
पर घर जाइ न मनु डोलाए ॥
सहज निरँतरि रहउ समाए ॥५॥

गुरमुखि जागि रहे अउधूता ॥
सद बैरागी ततु परोता ॥
जगु सूता मरि आवै जाइ ॥
बिनु गुर सबद न सोझी पाइ ॥६॥

अनहद सबदु वजै दिनु राती ॥
अविगत की गति गुरमुखि जाती ॥
तउ जानी जा सबदि पछानी ॥
एको रवि रहिआ निरबानी ॥७॥

सुँन समाधि सहजि मनु राता ॥
तजि हउ लोभा एको जाता ॥
गुर चेले अपना मनु मानिआ ॥
नानक दूजा मेटि समानिआ ॥८॥३॥

रामकली महला – १

इस शब्द में गुरु जी एक योगी से वार्तालाप करते हुये उसे (और परोक्ष में हमें भी) बताते हैं कि वह स्वयं प्रभु से योग अथवा मिलन के लिए किस प्रकार का अभ्यास करते हैं और उसके द्वारा उनका मन कितना आनंदित रहता है । वैसी ही विधि अथवा अभ्यास को अपना कर हम भी अविकल आनंद प्राप्त कर सकते हैं ।

सर्वप्रथम, वह उस मठ (निवास स्थान) का वर्णन करते हैं जहाँ पर उनका मन रहता है और अब उसकी क्या स्थिति है । वह कहते हैं : “ (हे’ योगी, गुरु के आदेशानुसार जंगलों और पर्वतों पर जाने की अपेक्षा मैंने अपनी) देह के छह चक्रों को मठ के समान मान लिया है जिनमें मेरा मन एक बैरागी, अथवा, योगी की भाँति बसा है । गुरु के शब्दों की धुन से मेरे अन्त:करण में एक चेतना सी जाग उठी है और प्रभु नाम से लग्न लग गयी है ।(मुझे प्रतीत होता है जैसे कि) मेरे अंदर अनवरत रूप से दैवी धुन बज रही है जिसमें मन पूर्ण रूप से लीन है । गुरु के वचनों के द्वारा दिये गये सच्चे प्रभु के नाम से मेरा मन अति प्रसन्न है ”।(१)

अब गुरु जी कहते हैं : “ हे’ प्राणी, राम की भक्ति करने से ही हम सुख शांति प्राप्त करते हैं । गुरु की कृपा के द्वारा हमें हरि का नाम मधुर लगता है और उस हरि के नाम के ध्यान से ही उसमें हम समा जाते हैं ”।(१-विराम)

गुरु किस प्रकार से प्रभु भक्ति के लिये किसी को प्रेरित करते हैं, इस पर गुरु जी स्वयं की वर्तमान मनोदशा को साझा करते हुये कहते हैं : “(हे’ मानव), जब एक मनुष्य का सच्चे गुरु से मिलन होता है तब गुरु उसे संतों की संगति से मिला देता है जिससे वह मनुष्य सांसारिक मायामोह से वर्जित रहते हुये (प्रभु नाम के ध्यान में) समा जाता है । प्रभु का नाम ऐसा अनमोल हीरा अथवा रत्न है जिसका मूल्य कोई नहीं पा सका । मेरा मन उसी नाम में रम जाने से धैर्य में है ”।(२)

स्वयं के अनुभव के आधार पर गुरु जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो, जब कोई) प्रभु की भक्ति में लग जाता है तब उसके मन को अहम तथा ममता मोह रूपी रोग दुखी नहीं करते तथा यमराज का भय भी पलायन कर जाता है । चूँकि, मेरे हृदय में हरि का निर्मल एवं पवित्र नाम सुशोभित है इसलिये यम का दण्ड मुझे नहीं डराता ”।(३)

जो भक्तजन गुरु की वाणी पर विचार तथा उसका पालन करते हुये आशीर्वाद प्राप्त करते हैं, उनके विषय में गुरु जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), गुरु की वाणी पर विचार करते रहने से लोग निराकार प्रभु में विलीन हो जाते हैं, उन्हें गुरु की विचारधारा सचेत कर देती है और उनकी दुर्भावनाओं का हरण हो जाता है । दिन और रात, सदैव वह (मायाजाल के प्रति) सावधान रहते हुये प्रभु नाम में लीन रहते हैं और (इस प्रकार) अपने जीवन में ही मोक्ष की दशा को अँतरमन में प्राप्त कर लेते हैं ”।(४)

उपरोक्त रूप से वर्णित भक्तों की मनोदशा पर गुरु जी अब विस्तार से कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो, प्रभु के ऐसे भक्त संसार से) अलिप्त रहते हैं, जैसे कि उनका मन (शरीर रूपी) एक पृथक गुफा में बस रहा हो । गुरु के शब्द अथवा वाणी के द्वारा (वह अपने मन को ऐसा वश में कर पाते हैं, जैसे उन्होंने) पाँचो तस्करों (काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अंहकार जैसे विकारों) का संहार कर दिया है । उनका मन पराये घरों में जाकर विचलित नहीं होता (अथवा, अन्य लोगों की धन सम्पदा उनके मन को नहीं लुभाती और सत्य पर अडिग रह कर) निरंतर सहजता और शांति में समाये रहते हैं ”।(५)

जो कोई मनुष्य गुरु के उपदेशों का पालन कर मन से बैरागी बन जाता है, उसके गुणों का परिचय देते हुये गुरु जी कहते हैं : “ गुरु के आदर्शों की पालना करके जो अवधूत (बैरागी) बन जाता है वह (सदैव मिथ्या सांसारिक मायाजाल के प्रति) सावधान रहता है । ऐसे सदैवी बैरागी मनुष्य का मन ईश्वर के तत्व में पूर्ण रूप से पिरोया रहता है । किन्तु, शेष संसार (सांसारिक मायामोह की निद्रा में) सोया हुया जन्म मरण अथवा (बारम्बार) आवागमन में पड़ा रहता है । गुरु के शब्द (वाणी) को विचारे बिना उसे (अपना जीवन सुंदर एवं सहज बना सकने की सही) सूझ अथवा बुद्धि नहीं प्राप्त हो सकती ”।(६)

वह मनुष्य जो निरंतर प्रभु के असितत्व को समझते हुये सदैव सावधान रहता है उसका क्या होता है इस पर गुरु जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो, इस स्थिति में) ऐसे मनुष्य के मन में दिन और रात निरंतर दैवी संगीत की धुन बजती रहती है । गुरु की कृपा से वह अविगत (अज्ञात प्रभु) की गति को पहचान जाता है । परन्तु, वह केवल इस (दशा को) तभी जान पाता है जब गुरु के शब्द के द्वारा यह समझ पाता है कि एक ही निर्वाण प्राप्त (इच्छा विहीन प्रभु) सर्वव्यापी हैं ”।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं : “(हे’ योगी, गुरु के शब्द को पालन करने वाले का) मन जब सहज भाव से शून्य होकर समाधि की अवस्था (जब मन में अन्य और कोई विचार नहीं उपजता) को पा लेता है तब वह अपने लोभ एवं अहम का त्याग कर केवल एक ही प्रभु का आभास करता है । हे’ नानक, शिष्य का मन जब अपने गुरु के (विचारों अथवा उपदेशों के) प्रति विश्वास उत्पन्न कर लेता है तब वह अन्य समस्त दुविधायों को मिटा कर (एक प्रभु में) समा जाता है ”।(८-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि शरीर में यौगिक रूप से अनुमानित छह चक्रों अथवा मनोवैज्ञानिक अवरोधकों के प्रभाव तथा अन्य यौगिक आसनों की चिंता करने की अपेक्षा, हमें केवल गुरु की वाणी को स्वीकार कर सच्चे प्रेम और श्रद्धा के साथ प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये । तब स्वत: ही हमारा मन सांसारिक मायाजाल से बाहर आकर प्रभु के प्रेम में लीन हो जायेगा और एक ऐसी स्थिति आ जायेगी जब हम अपने जीवन काल में ही दैवी संगीत की निरंतर धुन का आनंद लेते हुए मन में मोक्ष जैसा अनुभव पाने लगेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੦੫

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਅੰਤਰਿ ਉਤਭੁਜੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥
ਜੋ ਕਹੀਐ ਸੋ ਪ੍ਰਭ ਤੇ ਹੋਈ ॥
ਜੁਗਹ ਜੁਗੰਤਰਿ ਸਾਹਿਬੁ ਸਚੁ ਸੋਈ ॥
ਉਤਪਤਿ ਪਰਲਉ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ॥੧॥

ਐਸਾ ਮੇਰਾ ਠਾਕੁਰੁ ਗਹਿਰ ਗੰਭੀਰੁ ॥
ਜਿਨਿ ਜਪਿਆ ਤਿਨ ਹੀ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਹਰਿ ਕੈ ਨਾਮਿ ਨ ਲਗੈ ਜਮ ਤੀਰੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਨਾਮੁ ਰਤਨੁ ਹੀਰਾ ਨਿਰਮੋਲੁ ॥
ਸਾਚਾ ਸਾਹਿਬੁ ਅਮਰੁ ਅਤੋਲੁ ॥
ਜਿਹਵਾ ਸੂਚੀ ਸਾਚਾ ਬੋਲੁ ॥
ਘਰਿ ਦਰਿ ਸਾਚਾ ਨਾਹੀ ਰੋਲੁ ॥੨॥

ਇਕਿ ਬਨ ਮਹਿ ਬੈਸਹਿ ਡੂਗਰਿ ਅਸਥਾਨੁ ॥
ਨਾਮੁ ਬਿਸਾਰਿ ਪਚਹਿ ਅਭਿਮਾਨੁ ॥
ਨਾਮ ਬਿਨਾ ਕਿਆ ਗਿਆਨ ਧਿਆਨੁ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਪਾਵਹਿ ਦਰਗਹਿ ਮਾਨੁ ॥੩॥

ਹਠੁ ਅਹੰਕਾਰੁ ਕਰੈ ਨਹੀ ਪਾਵੈ ॥
ਪਾਠ ਪੜੈ ਲੇ ਲੋਕ ਸੁਣਾਵੈ ॥

ਪੰਨਾ ੯੦੬

ਤੀਰਥਿ ਭਰਮਸਿ ਬਿਆਧਿ ਨ ਜਾਵੈ ॥
ਨਾਮ ਬਿਨਾ ਕੈਸੇ ਸੁਖੁ ਪਾਵੈ ॥੪॥

ਜਤਨ ਕਰੈ ਬਿੰਦੁ ਕਿਵੈ ਨ ਰਹਾਈ ॥
ਮਨੂਆ ਡੋਲੈ ਨਰਕੇ ਪਾਈ ॥
ਜਮ ਪੁਰਿ ਬਾਧੋ ਲਹੈ ਸਜਾਈ ॥
ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਜੀਉ ਜਲਿ ਬਲਿ ਜਾਈ ॥੫॥

ਸਿਧ ਸਾਧਿਕ ਕੇਤੇ ਮੁਨਿ ਦੇਵਾ ॥
ਹਠਿ ਨਿਗ੍ਰਹਿ ਨ ਤ੍ਰਿਪਤਾਵਹਿ ਭੇਵਾ ॥
ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰਿ ਗਹਹਿ ਗੁਰ ਸੇਵਾ ॥
ਮਨਿ ਤਨਿ ਨਿਰਮਲ ਅਭਿਮਾਨ ਅਭੇਵਾ ॥੬॥

ਕਰਮਿ ਮਿਲੈ ਪਾਵੈ ਸਚੁ ਨਾਉ ॥
ਤੁਮ ਸਰਣਾਗਤਿ ਰਹਉ ਸੁਭਾਉ ॥
ਤੁਮ ਤੇ ਉਪਜਿਓ ਭਗਤੀ ਭਾਉ ॥
ਜਪੁ ਜਾਪਉ ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਰਿ ਨਾਉ ॥੭॥

ਹਉਮੈ ਗਰਬੁ ਜਾਇ ਮਨ ਭੀਨੈ ॥
ਝੂਠਿ ਨ ਪਾਵਸਿ ਪਾਖੰਡਿ ਕੀਨੈ ॥
ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਸਬਦ ਨਹੀ ਘਰੁ ਬਾਰੁ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਤਤੁ ਬੀਚਾਰੁ ॥੮॥੬॥

पृ-९०५

रामकली महला १॥

अँतरि उतभुजु अवरु न कोई ॥
जो कहीऐ सो प्रभ ते होई ॥
जुगह जुगँतरि साहिबु सचु सोई ॥
उतपति परलउ अवरु न कोई ॥१॥

ऐसा मेरा ठाकुरु गहिर गँभीरु ॥
जिनि जपिआ तिन ही सुखु पाइआ हरि कै नामि न लगै जम तीरु ॥१॥ रहाउ॥

नामु रतनु हीरा निरमोलु ॥
साचा साहिबु अमरु अतोलु ॥
जिहवा सूची साचा बोलु ॥
घरि दरि साचा नाही रोलु ॥२॥

इकि बन महि बैसहि डूगरि असथानु ॥
नामु बिसारि पचहि अभिमानु ॥
नाम बिना किआ गिआन धिआनु ॥
गुरमुखि पावहि दरगहि मानु ॥३॥

हठु अहँकारु करै नही पावै ॥
पाठ पड़ै ले लोक सुणावै ॥

पृ-९०६

तीरथि भरमसि बिआधि न जावै ॥
नाम बिना कैसे सुखु पावै ॥४॥

जतन करै बिँदु किवै न रहाई ॥
मनूआ डोलै नरके पाई ॥
जम पुरि बाधो लहै सजाई ॥
बिनु नावै जीउ जलि बलि जाई ॥५॥

सिध साधिक केते मुनि देवा ॥
हठि निग्रहि न तृिपतावहि भेवा ॥
सबदु वीचारि गहहि गुर सेवा ॥
मनि तनि निरमल अभिमान अभेवा ॥६॥

करमि मिलै पावै सचु नाउ ॥
तुम सरणागति रहउ सुभाउ ॥
तुम ते उपजिओ भगती भाउ ॥
जपु जापउ गुरमुखि हरि नाउ ॥७॥

हउमै गरबु जाइ मन भीनै ॥
झूठि न पावसि पाखँडि कीनै ॥
बिनु गुर सबद नही घरु बारु ॥
नानक गुरमुखि ततु बीचारु ॥८॥६॥

रामकली महला – १

इस शब्द से पूर्व अन्य अनेक शब्दों में गुरु जी ने हमें मिथ्या कर्मकांडों, व्रत, नियमों, तीर्थ यात्राओं तथा शरीर को कष्ट देने वाले योगाभ्यासों इत्यादि से स्वयं को दूर रखने के परामर्श दिये हैं । उनके विचारों के अनुसार ईश्वर, अथवा मोक्ष की प्राप्ति के लिए अपेक्षाकृत रूप से हमें गुरु के आदेशों के आधार पर रह कर भक्तजनों की सँगति में प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिए । इस शब्द में भी गुरु जी अपने इसी संदेश को विस्तार से बता रहे हैं कि किस प्रकार से अपने आत्मिक प्रबोधन, शांति और आनंद प्राप्ति के लिए प्रभु नाम का ध्यान करना तुलनात्मक रूप से हमारे लिए उत्तम एवं सरल उपाय है ।

गुरु जी सर्वप्रथम प्रभु के कुछ अनूठे गुणों और शक्तियों का वर्णन करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, समस्त सृष्टि की) संरचना (प्रभु की) आज्ञा से होती है, उसके अतिरिक्त और कोई करने वाला नहीं है । जो कुछ भी हम कहते (और देखते) हैं, वह सब प्रभु के द्वारा हुया है । युगों युगांतरों से वही सच्चे प्रभु हैं, किसी भी प्रकार की उत्पत्ति अथवा प्रलय करने वाला और कोई नहीं है "।(१)

उसी प्रभु के ध्यान के द्वारा प्राप्त गुणों को संक्षिप्त करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मेरा प्रभु इतना गहन अथवा गंभीर है कि जो कोई भी उसका जाप अथवा पूजा ध्यान करता है वही सुख का भागी होता है (और उसे यह समझ में आ जाता है कि) हरि के नाम के ध्यान से यमराज के वाण की (पीड़ा को) नहीं सहना पड़ेगा "।(१- विराम)

प्रभु और उसके नाम के कुछ और गुणों का उल्लेख करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे'मेरे मित्रो, प्रभु) का नाम एक अनमोल हीरे अथवा रत्न के समान है । वह सच्चा प्रभु अमर है, अतुल्य है । (जो प्रभु नाम का ध्यान करता है उसकी) जिह्वा पवित्र हो जाती है और वह फिर सत्य वचन ही बोलती है । (ऐसा मनुष्य जान लेता है कि) इसमें कोई संदेह नहीं कि सच्चा प्रभु स्वयं ही हृदय में वास कर रहा है"।(२)

गुरु जी अब उन साधु एवं योगीजनों की परम्परा की बात कर रहे हैं जो आत्मिक ज्ञान पाने के लिये घर परिवार को त्याग कर जंगलों और पर्वतों में जाकर वास करते हैं ।वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), एक वह लोग हैं जो (घर परिवार को त्याग कर) वन और पर्वतों जैसे बीहड़ स्थानों में जाकर बैठ जाते हैं और फिर अपने ऐसे कृत्यों पर अभिमान करते हैं जो प्रभु को बिसरा देता है और उनके विनाश का कारण बन जाता है । (वह यह नहीं विचार पाते कि) प्रभु नाम के ध्यान के बिना और किसी प्रकार के ज्ञान अथवा ध्यान का कोई औचित्य नहीं है । (जबकि दूसरी ओर) गुरु के आदेश पर चलने वाले (प्रभु नाम के ध्यानी) लोग उसके दरबार में मान सम्मान के भागी बनते हैं "।(३)

पंडित एवं योगी लोगों के कई अभ्यासों पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, जो कोई भी) हठयोग करता है, वह अपने अभिमान में (प्रभु को) नहीं पाता । इसी प्रकार जो अन्य लोगों को पाठ पूजा के मंत्र एवं उपदेश पढ़ कर सुनाता है अथवा तीर्थ यात्रायों के भ्रमण में लगा रहता है उसकी व्याधियाँ और दुख दूर नहीं होते, क्योंकि, प्रभु नाम के बिना कैसे कोई भी सुख प्राप्त किया जा सकता है "।(४)

वह लोग, जो कई बार यह दावा करते हैं कि उन्होंने अपनी काम वासनायों तथा अन्य कई इच्छायों पर पूर्ण रूप से नियंत्रण पा लिया है, उन पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, ऐसा मनुष्य) प्रयत्न तो करता है, पर अपनी काम वासना पर किसी प्रकार भी नियंत्रण नहीं रख सकता, क्योंकि, ऐसे मनुष्य का मन सदैव अस्थिर रहता है और (वह अवैध सम्बंधों के अधीन होकर) नर्क में जा समाता है तथा यमराज की नगरी में बाँधा जाकर दंड पाता है । (संक्षेप में) प्रभु नाम के बिना जीवात्मा जल फुँक कर नष्ट हो जाती है "।(५)

इसलिये एक बार फिर, हठयोग के द्वारा मन पर नियंत्रण पाने और शरीर को कष्ट देने के प्रयत्नों की निरर्थक चेष्टायों पर गुरु जी दृढ़ता से कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), अनेकों सिद्ध, साधक एवं गुणी लोग, मुनि तथा देवतागण, वह सभी अपने मन के हठ के द्वारा (अपने अंदर की) भावनायों का अवरोध करने से तृप्त नहीं होते । किन्तु, जो जन गुरु की वाणी अथवा शब्द पर विचार करते हैं और गुरु की सेवा (अनुसरण करने) में विश्वास रखते हैं, वह मन तन से निर्मल एवं अभिमान रहित होते हैं "।(६)

अब गुरु जी प्रभु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं : "(हे' प्रभु), यदि भाग्य अच्छे हैं तो तुम्हारी कृपा से किसी को तुम्हारा सच्चा नाम प्राप्त होता है और सद्भावना से वह तुम्हारी शरण में रहता है । केवल तुम्हारे द्वारा ही किसी के मन में तुम्हारे लिये भक्तिभाव उपजता है और गुरु की कृपा से वह सदा हरिनाम का जाप करता रहता है "।(७)

अंत में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो) केवल जब किसी के मन में से अहम और दंभ का भाव समाप्त होता है तभी वह प्रभु के प्रेम में भीग पाता है ; झूठ तथा पाखंड करके कोई भी (प्रभु को) नहीं पाता । (संक्षेप में) हे' नानक, गुरु की कृपा के द्वारा जब कोई विचार कर पाता है तो यह तथ्य पा लेता है कि गुरु की वाणी अथवा शब्द को ग्रहण किये बिना (प्रभु के) घर अथवा द्वार को नहीं प्राप्त किया जा सकता "।(८-९)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें किसी भी प्रकार के अपने मन के हठयोग और शरीर को कष्ट देने वाले योगाभ्यास करने अथवा अपनी कामवासनाओं, अहम और अन्य विकारों पर नियंत्रण पाने हेतु जंगलों या पर्वतों पर जाने की कोई आवश्यकता नहीं है ।हमें केवल यही करना है कि हम सदैव गुरु के आदेशों का अनुसरण करके प्रभु नाम का ध्यान करते रहें । इस प्रकार हम सरलता से अपने मन को वश में रख पायेंगे और प्रभु के घर में भी शरण ले सकेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੦੭

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਅਉਹਠਿ ਹਸਤ ਮੜੀ ਘਰੁ ਛਾਇਆ ਧਰਣਿ ਗਗਨ ਕਲ ਧਾਰੀ ॥੧॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਕੇਤੀ ਸਬਦਿ ਉਧਾਰੀ ਸੰਤਹੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਮਮਤਾ ਮਾਰਿ ਹਉਮੈ ਸੋਖੈ ਤ੍ਰਿਭਵਣਿ ਜੋਤਿ ਤੁਮਾਰੀ ॥੨॥

ਮਨਸਾ ਮਾਰਿ ਮਨੈ ਮਹਿ ਰਾਖੈ ਸਤਿਗੁਰ ਸਬਦਿ ਵੀਚਾਰੀ ॥੩॥

ਸਿੰਙੀ ਸੁਰਤਿ ਅਨਾਹਦਿ ਵਾਜੈ ਘਟਿ ਘਟਿ ਜੋਤਿ ਤੁਮਾਰੀ ॥੪॥

ਪਰਪੰਚ ਬੇਣੁ ਤਹੀ ਮਨੁ ਰਾਖਿਆ ਬ੍ਰਹਮ ਅਗਨਿ ਪਰਜਾਰੀ ॥੫॥

ਪੰਚ ਤਤੁ ਮਿਲਿ ਅਹਿਨਿਸਿ ਦੀਪਕੁ ਨਿਰਮਲ ਜੋਤਿ ਅਪਾਰੀ ॥੬॥

ਰਵਿ ਸਸਿ ਲਉਕੇ ਇਹੁ ਤਨੁ ਕਿੰਗੁਰੀ ਵਾਜੈ ਸਬਦੁ ਨਿਰਾਰੀ ॥੭॥

ਸਿਵ ਨਗਰੀ ਮਹਿ ਆਸਣੁ ਅਉਧੂ ਅਲਖੁ ਅਗੰਮੁ ਅਪਾਰੀ ॥੮॥

ਕਾਇਆ ਨਗਰੀ ਇਹੁ ਮਨੁ ਰਾਜਾ ਪੰਚ ਵਸਹਿ ਵੀਚਾਰੀ ॥੯॥

ਸਬਦਿ ਰਵੈ ਆਸਣਿ ਘਰਿ ਰਾਜਾ ਅਦਲੁ ਕਰੇ ਗੁਣਕਾਰੀ ॥੧੦॥

ਕਾਲੁ ਬਿਕਾਲੁ ਕਹੇ ਕਹਿ ਬਪੁਰੇ ਜੀਵਤ ਮੂਆ ਮਨੁ ਮਾਰੀ ॥੧੧॥

ਪੰਨਾ ੯੦੮

ਬ੍ਰਹਮਾ ਬਿਸਨੁ ਮਹੇਸ ਇਕ ਮੂਰਤਿ ਆਪੇ ਕਰਤਾ ਕਾਰੀ ॥੧੨॥

ਕਾਇਆ ਸੋਧਿ ਤਰੈ ਭਵ ਸਾਗਰੁ ਆਤਮ ਤਤੁ ਵੀਚਾਰੀ ॥੧੩॥

ਗੁਰ ਸੇਵਾ ਤੇ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ ਅੰਤਰਿ ਸਬਦੁ ਰਵਿਆ ਗੁਣਕਾਰੀ ॥੧੪॥

ਆਪੇ ਮੇਲਿ ਲਏ ਗੁਣਦਾਤਾ ਹਉਮੈ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਮਾਰੀ ॥੧੫॥

ਤ੍ਰੈ ਗੁਣ ਮੇਟੇ ਚਉਥੈ ਵਰਤੈ ਏਹਾ ਭਗਤਿ ਨਿਰਾਰੀ ॥੧੬॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਜੋਗ ਸਬਦਿ ਆਤਮੁ ਚੀਨੈ ਹਿਰਦੈ ਏਕੁ ਮੁਰਾਰੀ ॥੧੭॥

ਮਨੂਆ ਅਸਥਿਰੁ ਸਬਦੇ ਰਾਤਾ ਏਹਾ ਕਰਣੀ ਸਾਰੀ ॥੧੮॥

ਬੇਦੁ ਬਾਦੁ ਨ ਪਾਖੰਡੁ ਅਉਧੂ ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਬਦਿ ਬੀਚਾਰੀ ॥੧੯॥

ਗੁਰਮੁਖਿ ਜੋਗੁ ਕਮਾਵੈ ਅਉਧੂ ਜਤੁ ਸਤੁ ਸਬਦਿ ਵੀਚਾਰੀ ॥੨੦॥

ਸਬਦਿ ਮਰੈ ਮਨੁ ਮਾਰੇ ਅਉਧੂ ਜੋਗ ਜੁਗਤਿ ਵੀਚਾਰੀ ॥੨੧॥

ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਭਵਜਲੁ ਹੈ ਅਵਧੂ ਸਬਦਿ ਤਰੈ ਕੁਲ ਤਾਰੀ ॥੨੨॥

पृ-९०७

रामकली महला १॥

अउहठि हसत मड़ी घरु छाइआ धरणि गगन कल धारी ॥१॥

गुरमुखि केती सबदि उधारी सँतहु ॥१॥ रहाउ॥

ममता मारि हउमै सोखै त्रिभवणि जोति तुमारी ॥२॥

मनसा मारि मनै महि राखै सतिगुर सबदि वीचारी ॥३॥

सिंगी सुरति अनाहदि वाजै घटि घटि जोति तुमारी ॥४॥

परपँच बेणु तही मनु राखिआ ब्रहम अगनि परजारी ॥५॥

पँच ततु मिलि अहिनिसि दीपकु निरमल जोति अपारी ॥६॥

रवि ससि लउके इहु तनु किँगुरी वाजै सबदु निरारी ॥७॥

सिव नगरी महि आसणु अउधू अलखु अगँमु अपारी ॥८॥

काइआ नगरी इहु मनु राजा पँच वसहि वीचारी ॥९॥

सबदि रवै आसणि घरि राजा अदलु करे गुणकारी ॥१०॥

कालु बिकालु कहे कहि बपुरे जीवत मूआ मनु मारी ॥११॥

पृ-९०८

ब्रहमा बिसनु महेस इक मूरति आपे करता कारी ॥१२॥

काइआ सोधि तरै भव सागरु आतम ततु वीचारी ॥१३॥

गुर सेवा ते सदा सुखु पाइआ अँतरि सबदु रविआ गुणकारी ॥१४॥

आपे मेलि लए गुणदाता हउमै त्रिसना मारी ॥१५॥

त्रै गुण मेटे चउथै वरतै एहा भगति निरारी ॥१६॥

गुरमुखि जोग सबदि आतमु चीनै हिरदै एकु मुरारी ॥१७॥

मनूआ असथिरु सबदे राता एहा करणी सारी ॥१८॥

बेदु बादु न पाखँडु अउधू गुरमुखि सबदि बीचारी ॥१९॥

गुरमुखि जोगु कमावै अउधू जतु सतु सबदि वीचारी ॥२०॥

सबदि मरै मनु मारे अउधू जोग जुगति वीचारी ॥२१॥

माइआ मोहु भवजलु है अवधू सबदि तरै कुल तारी ॥२२॥

ਸਬਦਿ ਸੂਰ ਜੁਗ ਚਾਰੇ ਅਉਧੂ ਬਾਣੀ ਭਗਤਿ ਵੀਚਾਰੀ ॥੨੩॥	सबदि सूर जुग चारे अउधू बाणी भगति वीचारी ॥२३॥
ਏਹੁ ਮਨੁ ਮਾਇਆ ਮੋਹਿਆ ਅਉਧੂ ਨਿਕਸੈ ਸਬਦਿ ਵੀਚਾਰੀ ॥੨੪॥	एहु मनु माइआ मोहिआ अउधू निकसै सबदि वीचारी ॥२४॥
ਆਪੇ ਬਖਸੇ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਏ ਨਾਨਕ ਸਰਣਿ ਤੁਮਾਰੀ ॥੨੫॥੯॥	आपे बखसे मेलि मिलाए नानक सरणि तुमारी ॥२५॥९॥

रामकली महला - १

यहाँ इस शब्द में गुरु जी कुछ योगी जनों के साथ वार्तालाप करते हुये उन्हें बताते हैं कि जो भी गुरु के आदेशों को सुन मान कर उनका अनुसरण करते हैं तब इन भक्तजनों का आचरण एवं गुण कैसे होते हैं और वह किस प्रकार की योगसाधना करते हैं ।

आरंभ में गुरु जी योगीजनों को प्रभु पर बनी एक धारणा स्पष्ट करते हुये कहते हैं : "(हे' योगीजनों, ऐसा है कि) प्रभु ने अपने शक्तिशाली वरदहस्त के द्वारा धरती तथा आकाश दोनों को सहारा दिया हुआ है और वह प्रत्येक हृदय में छाये हुये हैं "।(१)

अब वह गुरु के गुणों पर कहते हैं : "(हे' संतजनों), अपने शब्दों (गुरबाणी) में ध्यान लगवा कर (प्रभु ने) कितने सांसारिक जीवों का उद्धार किया है "।(१-विराम)

अब वह संक्षेप में यह बताते हैं कि प्रभु जिस किसी का भी गुरु की वाणी के द्वारा उद्धार करते हैं उसके आचरण में क्या परिवर्तन होते हैं, वह कहते हैं : "(हे' प्रभु, जिस मनुष्य का उद्धार तुम गुरु की वाणी के द्वारा करते हो उसके मन में से) सांसारिक मायामोह का नाश करके उसका अहम स्माप्त कर देते हो और तब उस मनुष्य को तीनों लोकों में तुम्हारी ज्योति व्याप्त दिखाई देती है "।(२)

गुरु जी और आगे कहते हैं : " सच्चे गुरु के वचनों पर विचार करने वाला मनुष्य अपने मन की सांसारिक इच्छायों का दमन कर उन्हें मन में ही रख लेता है (अपनी इच्छायों की पूर्ति के लिये वह सांसारिक आकर्षणों की ओर नहीं भागता)"।(३)

सिंगी (एक विशेष प्रकार की सींगनुमा बाँसुरी जिसे बजा कर योगी लोग अपनी ध्यानसाधना की प्रक्रिया में सहायता लेते हैं) का उल्लेख करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' प्रभु), गुरु के अनुयायियों (जिनका मन तुम्हारे में लीन है) की चेतना में सिंगी के स्वर जैसा दैवी संगीत अनाहद रूप से बजता रहता है और वह तुम्हारी ज्योति को घट घट में व्याप्त समझते हैं "।(४)

सिंगी के संदर्भ में गुरु जी फिर कहते हैं : (" हे' प्रभु, एक सच्चा योगी) इस सृष्टि को ही एक दैवी सिंगी के समान मानता है, उसने अपने मन को (इस संसार में ही) स्थिर दशा में रखा हुआ है (अथवा, प्रभु का ध्यान करने के लिये वनों और पर्वतों की ओर नहीं भागता) और वह अपने मन में ही ब्रह्म ज्ञान की अग्नि को प्रज्वलित करके रखता है "।(५)

एक गुरु का अनुयायी अपने मन को प्रकाशित रखने के लिये किस प्रकार का दीपक प्रज्वलित रखता है, इस पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' योगीजनों), गुरु का अनुयायी पाँच तत्वों से मिलकर बने अपने शरीर के अंदर दिन रात अपार प्रभु रूपी निर्मल दीपक की पवित्र ज्योति को जलाये रखता है "।(६)

उपरोक्त उपमा के साथ गुरु जी आगे बढ़ते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, गुरु के अनुयायी के लिये उसकी दायीं व बायीं नासिकायें) सूर्य और चँद्रमा के समान लौकी के दो तम्बूरे हैं और यह शरीर एक वीणा के समान है जहाँ पर अनूठी दैवी वाणी की धुन बजती रहती है "।(७)

गुरु का योगी अपना ध्यान लगाने के लिये किस स्थान पर अपना आसन लगाता है, इस पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' योगी, गुरु का शिष्य अपना ध्यान लगाने के लिये वनों में भागने की अपेक्षा अपने ही घर परिवार में रहता है और) वह वैरागी अपना आसन अवर्णनीय, अगम्य एवं अपार शिव (प्रभु) नगरी में लगाता है (अर्थात, गुरु का शिष्य अपने ही तन व मन के अँदर अगम्य प्रभु पर एकाग्रचित्त रहता है) "।(८)

गुरु के शिष्य की मनोस्थिति पर गुरु जी का कथन है : "(हे' योगी, गुरु के शिष्य के लिये) उसका शरीर एक नगरी के समान है, जिसका राजा उसका मन है और उसकी पाँचो ज्ञानेन्द्रियाँ उसके भीतर विचारकों के रूप में बसती हैं (दूषित सांसारिक प्रलोभनों में नहीं भटकती) "।(९)

गुरु द्वारा प्रदत्त ज्ञान को पाकर गुरु के शिष्य का मन किस प्रकार से सारे शरीर तथा इंद्रियों पर नियंत्रण करता है इस पर गुरु जी कहते हैं : "(। हे' योगीजनों), अपने सिंहासन पर बिराजमान एक राजा की भाँति उस शिष्य का मन (गुरु के) शब्द को विचार कर उसके गुणों के अनुसार न्याय करता है । (वह किसी और प्रभाव के अंदर जैसे कि धन सम्पदा, सामाजिक स्थिति और अन्य आधार पर किसी का पक्षपात नहीं करता)"।(१०)

गुरु के शब्द के अनुसार चलने से एक सच्चे योगी की नियंत्रित मनोस्थिति पर गुरु जी का कहना है : "(हे' योगीजनों), वह बेचारी मृत्यु अथवा जीवन उस मनुष्य का क्या बिगाड़ सकते हैं जिसने (अपने मन को नियंत्रण में रख कर) जीवित अवस्था में ही स्वयं को मृतक के समान समझ रखा है (जो गुरु की शिक्षा पर चलता है उस योगी को जीवन मरण के दुखों का डर भी नहीं सताता)"।(११)

ऐसे गुरु के अनुयायियों को अन्य देवी देवतायों पर कितना विश्वास है इस पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' योगी, गुरु के अनुयायी का ऐसा

विश्वास है कि) प्रभु स्वयं ही सर्वशक्तिमान है, वह सब कुछ करने योग्य है तथा ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि सभी और कुछ नहीं, केवल उसी प्रभु की सृजन, पालनपोषण तथा विनाशकारी शक्तियों के विभिन्न रूपक हैं ”। (१२)

गुरु का शिष्य कैसे भवसागर से पार उतरता है इस पर गुरु जी कहते हैं : “(हे’ योगी, गुरु का शिष्य) अपनी आत्मा के तत्व पर विचार करता है और अपनी काया को दुष्कर्मरहित बना कर अथवा शोध कर इस भवसागर से पार हो जाता है ”।(१३)

गुरु जी आगे कहते हैं : “(हे’ योगी, गुरु के शिष्य ने) सदैव ही गुरु की सेवा (वाणी का अनुसरण) करके जीवन में सुख शांन्ति प्राप्त की है तथा उसके अँतरमन में गुरु की गुणों से परिपूर्ण वाणी रची बसी रहती है ”।(१४)

ऐसे गुरु के शिष्य पर प्रभु अपनी कृपा किस रूप से प्रदान करते हैं, इस पर गुरु जी का कथन है : “(हे’ योगी, ऐसा गुरु का शिष्य अपनी) सांसारिक इच्छाओं की तृष्णा तथा अहम की भावनाओं का जब दमन कर देता है तब गुणों के दाता (प्रभु) स्वयं ही उसे अपने साथ मिला लेते हैं ।(१५)

गुरु के शिष्य की अनूठी प्रभु भक्ति भावना एवं निष्ठा पर गुरु जी संक्षेप में कहते हैं : “(हे’ योगी, एक गुरु का शिष्य सांसारिक मायामोह के) तीनों रूपों (सात्विक राजसी और तामसी) को अपने अँतरमन में से मिटा कर चतुर्थ अवस्था (तुर्यावस्था, जिसमें माया के तीनों रूप मन को प्रभावित नहीं करते) में रहकर अपनी अनूठी भक्ति भावना का परिचय देता है ”।(१६)

गुरु के शिष्य की योगसाधना को गुरु जी संक्षेप में परिभाषित करते हुये कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो) गुरु के शिष्य की यौगिक प्रक्रिया यही है कि वह सदैव गुरु की वाणी के द्वारा आत्मनिरीक्षण करता रहता है और अपने हृदय में एक ही दुख भँजन प्रभु को बसाता है ”।(१७)

अब गुरु जी गुरु के अनुयायी की जीवन पद्धति के सार पर कहते हैं : “(हे’ योगी, गुरु के अनुयायी का जीवन में) केवल एक यही कर्तव्य तथा आचरण है कि जब भी कभी उसका मन अस्थिर होता है तो वह गुरु के शब्द (वाणी) में स्वयं को लीन कर लेता है ”।(१८)

वेद, पुराण आदि पवित्र धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन के विषय पर गुरु जी कहते हैं :” (हे’ योगी, गुरु का शिष्य) वेदों तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों के वाद विवाद अथवा व्याख्या तथा कर्मकांड में व्यस्त ना रह कर गुरु की कृपा से केवल गुरु की वाणी पर ही विचार (तथा उसका अनुसरण) करता है ”।(१९)

किस प्रकार से गुरु का अनुयायी सत्यजीवन को व्यतीत करते हुये अपनी वासनायों पर नियंत्रण कर योगाभ्यास करता है, इस पर गुरु जी कहते हैं : “(हे’ योगी), गुरु का अनुयायी अपना योगाभ्यास केवल गुरु के शब्द (वाणी) के विचार (और उसके अनुसरण) के द्वारा ही अर्जित कर लेता है ”।(२०)

गुरु के शिष्य के योगाभ्यास का सार देते हुये गुरु जी कहते हैं : “(गुरु के) शब्द अथवा वाणी में लीन हो जाने पर ऐसा वैरागी योगी स्वयं ही मन को मार कर मृतक के समान रहता है (मन को वश में कर लेता है और इस प्रकार से उसने प्रभु के साथ) योग के लिये ऐसी युक्ति को विचारा है ”।(२१)

मायाजाल से मुक्त होकर बाहर निकलने के लिये गुरु जी कहते हैं :” (हे’ योगी, स्मरण रहे कि) यह मायामोह का जाल एक भयानक भवसागर है जिसे (गुरु का शिष्य) गुरु की वाणी की पालना के द्वारा तैर कर पार हो जाता है और अपने कुल को भी पार करा देता है ”।(२२)

गुरु के शिष्य के गुणों पर गुरु जी का कथन है : “ हे’ योगी, इन चारों युगों में जिन्होंने भी गुरु की वाणी पर विचार किया है वह (सच्चे) शूरवीर हैं, क्योंकि, गुरु की वाणी के द्वारा वह प्रभु की भक्ति को अपने मन में बसा कर रखते हैं ”।(२३)

किस प्रकार से गुरु के शब्द सांसारिक मायामोह से मुक्ति पाने में हमारी सहायता करते हैं, इसका वर्णन गुरु जी यहाँ करते हुये कहते हैं: “ हे’ योगी, हमारा यह मन माया के मोह में बन्दी बना हुया है, जो केवल गुरु की वाणी को विचारने (तथा, उसका अनुसरण करने) से ही उसके चंगुल से निकल सकता है ”।(२४)

शब्द के अंत में गुरु जी फिर से यह ध्यान दिलाते हैं कि यदि हम किसी प्रकार के अहम भाव में ना फँसे तो भी मोक्ष प्राप्त करने के हेतु प्रभु की कृपा की नितांत आवश्यकता है । वह कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो, प्रभु किसी को भी) स्वयं ही अपनी कृपा से क्षमा करके अपने साथ मिला लेते हैं । (इस लिए , हे’ प्रभु) नानक ने तुम्हारी शरण ली है ”।(२५)

इस शब्द का संदेश इस प्रकार है कि अनेकों यौगिक आसन, अभ्यास, वस्त्र तथा साधु संतों वाले विशेष परिधान जैसे विभिन्न झमेलों में व्यस्त रहने की अपेक्षा, हमें गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) की वाणी को विचार कर उसका अनुसरण करना चाहिये । गुरु की पवित्र वाणी के मनन चिंतन के द्वारा हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों को वश में रख पायेंगे और हमारा मन स्थिर रहेगा । तब स्वतः हम प्रभु में लीन रहने की स्थिति में आ जायेंगे और निरंतर दैवी शब्द की धुन के संगीत का आनंद प्राप्त होगा । अंततः , प्रभु अपनी कृपा करके हमें अपने में एकरूप कर लेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੦੯

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਭਗਤਿ ਖਜਾਨਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਤਾ ਸਤਿਗੁਰਿ ਬੂਝਿ ਬੁਝਾਈ ॥੧॥

ਸੰਤਹੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਦੇਇ ਵਡਿਆਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਚਿ ਰਹਹੁ ਸਦਾ ਸਹਜੁ ਸੁਖੁ ਉਪਜੈ ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਵਿਚਹੁ ਜਾਈ ॥੨॥

ਆਪੁ ਛੋਡਿ ਨਾਮ ਲਿਵ ਲਾਗੀ ਮਮਤਾ ਸਬਦਿ ਜਲਾਈ ॥੩॥

ਜਿਸ ਤੇ ਉਪਜੈ ਤਿਸ ਤੇ ਬਿਨਸੈ ਅੰਤੇ ਨਾਮੁ ਸਖਾਈ ॥੪॥

ਸਦਾ ਹਜੂਰਿ ਦੂਰਿ ਨਹ ਦੇਖਹੁ ਰਚਨਾ ਜਿਨਿ ਰਚਾਈ ॥੫॥

ਸਚਾ ਸਬਦੁ ਰਵੈ ਘਟ ਅੰਤਰਿ ਸਚੇ ਸਿਉ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥੬॥

ਸਤਸੰਗਤਿ ਮਹਿ ਨਾਮੁ ਨਿਰਮੋਲਕੁ ਵਡੈ ਭਾਗਿ ਪਾਇਆ ਜਾਈ ॥੭॥

ਭਰਮਿ ਨ ਭੂਲਹੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਸੇਵਹੁ ਮਨੁ ਰਾਖਹੁ ਇਕ ਠਾਈ ॥੮॥

ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਸਭ ਭੂਲੀ ਫਿਰਦੀ ਬਿਰਥਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਈ ॥੯॥

ਜੋਗੀ ਜੁਗਤਿ ਗਵਾਈ ਹੰਢੈ ਪਾਖੰਡਿ ਜੋਗੁ ਨ ਪਾਈ ॥੧੦॥

ਸਿਵ ਨਗਰੀ ਮਹਿ ਆਸਣਿ ਬੈਸੈ ਗੁਰ ਸਬਦੀ ਜੋਗੁ ਪਾਈ ॥੧੧॥

ਧਾਤੁਰ ਬਾਜੀ ਸਬਦਿ ਨਿਵਾਰੇ ਨਾਮੁ ਵਸੈ ਮਨਿ ਆਈ ॥੧੨॥

ਏਹੁ ਸਰੀਰੁ ਸਰਵਰੁ ਹੈ ਸੰਤਹੁ ਇਸਨਾਨੁ ਕਰੇ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥੧੩॥

ਨਾਮਿ ਇਸਨਾਨੁ ਕਰਹਿ ਸੇ ਜਨ ਨਿਰਮਲ ਸਬਦੇ ਮੈਲੁ ਗਵਾਈ ॥੧੪॥

ਤ੍ਰੈ ਗੁਣ ਅਚੇਤ ਨਾਮੁ ਚੇਤਹਿ ਨਾਹੀ ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਬਿਨਸਿ ਜਾਈ ॥੧੫॥

ਬ੍ਰਹਮਾ ਬਿਸਨੁ ਮਹੇਸੁ ਤ੍ਰੈ ਮੂਰਤਿ ਤ੍ਰਿਗੁਣਿ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਈ ॥੧੬॥

ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਤ੍ਰਿਕੁਟੀ ਛੂਟੈ ਚਉਥੈ ਪਦਿ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥੧੭॥

ਪੰਡਿਤ ਪੜਹਿ ਪੜਿ ਵਾਦੁ ਵਖਾਣਹਿ ਤਿੰਨਾ ਬੂਝ ਨ ਪਾਈ ॥੧੮॥

ਬਿਖਿਆ ਮਾਤੇ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਏ ਉਪਦੇਸੁ ਕਹਹਿ ਕਿਸੁ ਭਾਈ ॥੧੯॥

ਭਗਤ ਜਨਾ ਕੀ ਊਤਮ ਬਾਣੀ ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਰਹੀ ਸਮਾਈ ॥੨੦॥

ਬਾਣੀ ਲਾਗੈ ਸੋ ਗਤਿ ਪਾਏ ਸਬਦੇ ਸਚਿ ਸਮਾਈ ॥੨੧॥

ਪੰਨਾ ੯੧੦

ਕਾਇਆ ਨਗਰੀ ਸਬਦੇ ਖੋਜੇ ਨਾਮੁ ਨਵੰ ਨਿਧਿ ਪਾਈ ॥੨੨॥

पृ-९०९

रामकली महला ३॥

भगति खजाना गुरमुखि जाता सतिगुरि बूझि बुझाई ॥१॥

सँतहु गुरमुखि देइ वडिआई ॥१॥रहाउ॥

सचि रहहु सदा सहजु सुखु उपजै कामु क्रोधु विचहु जाई ॥२॥

आपु छोडि नाम लिव लागी ममता सबदि जलाई ॥३॥

जिस ते उपजै तिस ते बिनसै अँते नामु सखाई ॥४॥

सदा हजूरि दूरि नह देखहु रचना जिनि रचाई ॥५॥

सचा सबदु रवै घट अँतरि सचे सिउ लिव लाई ॥६॥

सतसँगति महि नामु निरमोलकु वडै भागि पाइआ जाई ॥७॥

भरमि न भूलहु सतिगुरु सेवहु मनु राखहु इक ठाई ॥८॥

बिनु नावै सभ भूली फिरदी बिरथा जनमु गवाई ॥९॥

जोगी जुगति गवाई हँढै पाखँडि जोगु न पाई ॥१०॥

सिव नगरी महि आसणि बैसै गुर सबदी जोगु पाई ॥११॥

धातुर बाजी सबदि निवारे नामु वसै मनि आई ॥१२॥

एहु सरीरु सरवरु है सँतहु इसनानु करे लिव लाई ॥१३॥

नामि इसनानु करहि से जन निरमल सबदे मैलु गवाई ॥१४॥

त्रै गुण अचेत नामु चेतहि नाही बिनु नावै बिनसि जाई ॥१५॥

ब्रहमा बिसनु महेसु त्रै मूरति त्रिगुणि भरमि भुलाई ॥१६॥

गुर परसादी त्रिकुटी छूटै चउथै पदि लिव लाई ॥१७॥

पँडित पड़हि पड़ि वादु वखाणहि तिँना बूझ न पाई ॥१८॥

बिखिआ माते भरमि भुलाए उपदेसु कहहि किसु भाई ॥१९॥

भगत जना की ऊतम बाणी जुगि जुगि रही समाई ॥२०॥

बाणी लागै सो गति पाए सबदे सचि समाई ॥२१॥

पृ-९१०

काइआ नगरी सबदे खोजे नामु नवँ निधि पाई ॥२२॥

ਮਨਸਾ ਮਾਰਿ ਮਨੁ ਸਹਜਿ ਸਮਾਣਾ ਬਿਨੁ ਰਸਨਾ ਉਸਤਤਿ ਕਰਾਈ ॥੨੩॥	मनसा मारि मनु सहजि समाणा बिनु रसना उसतति कराई ॥२३॥
ਲੋਇਣ ਦੇਖਿ ਰਹੇ ਬਿਸਮਾਦੀ ਚਿਤੁ ਅਦਿਸਟਿ ਲਗਾਈ ॥੨੪॥	लोइण देखि रहे बिसमादी चितु अदिसटि लगाई ॥२४॥
ਅਦਿਸਟੁ ਸਦਾ ਰਹੈ ਨਿਰਾਲਮੁ ਜੋਤੀ ਜੋਤਿ ਮਿਲਾਈ ॥੨੫॥	अदिसटु सदा रहै निरालमु जोती जोति मिलाई ॥२५॥
ਹਉ ਗੁਰੁ ਸਾਲਾਹੀ ਸਦਾ ਆਪਣਾ ਜਿਨਿ ਸਾਚੀ ਬੂਝ ਬੁਝਾਈ ॥੨੬॥	हउ गुरु सालाही सदा आपणा जिनि साची बूझ बुझाई ॥२६॥
ਨਾਨਕੁ ਏਕ ਕਹੈ ਬੇਨੰਤੀ ਨਾਵਹੁ ਗਤਿ ਪਤਿ ਪਾਈ ॥੨੭॥੨॥੧੧॥	नानकु एक कहै बेनँती नावहु गति पति पाई ॥२७॥२॥११॥

रामकली महला - ३

पूर्व के अनेक शब्दों में गुरु जी कहते रहे हैं कि प्रभु को पाने के लिए योगी लोगों के सामान्य अभ्यासों जैसे कि घर परिवार त्याग कर जंगलों और पर्वतों पर जाने और भिक्षा हेतु इधर-उधर भटकने की अपेक्षा, हमें अपने हृदय में ही उसे ढूँढने के प्रयत्न करने चाहिए । गुरु की शिक्षा का अनुसरण करते हुये हमें अपना जीवन सत्य, संतोष एवं शालीनता से जीना चाहिये तथा प्रभु नाम का ध्यान करते रहना चाहिये । एक दिन प्रभु की कृपा से हम दैवी शब्द का अनवरत संगीत अपने मन में सुन पायेंगे और प्रभु के साथ सच्चा योग अथवा मिलन प्राप्त करेंगे। अतः, इस शब्द में यहाँ गुरु जी प्रभु नाम के ध्यान की प्रक्रिया को सही ठहराते हुए अपने संदेश की व्याख्या विस्तार के साथ कर रहे हैं ।

सर्वप्रथम वह हमें बताते हैं कि किसने प्रभु की भक्ति के भंडार का सार एवं मूल्य सही रूप में समझा और किसने यह मति उसे प्रदान की। वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), केवल गुरु के अनुयायी ने ही प्रभु की भक्ति के भंडार का मूल्य एवं उसके सार को जाना और सच्चे गुरु ने उसे इस तथ्य को बूझने में सहायता की "।(१) हाँ, हे' संतजनों, प्रभु गुरु के द्वारा ही (मनुष्य को अपनी भक्ति के) सम्मान का वरदान देते हैं "।(१-विराम)

अब गुरु जी कुछ ऐसे मुख्य सिद्धांतों का यहाँ पर उल्लेख करते हैं जिन्हें एक सच्चा गुरु अपने शिष्यों के सदाचारी जीवन के लिये आवश्यक समझता है । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), सदा सच में रहो (सत्य जीवन जीओ, ऐसा करने से) मन में सुखद एवं सहज भाव उत्पन्न होते हैं तथा काम क्रोध की भावनायें चली जाती हैं ।(२) अहम भाव त्यागने से मन (प्रभु में) लीन होता है और (गुरु की)वाणी के द्वारा मोह ममता (स्वार्थ) भस्म हो जाते हैं ।(३)

(और गुरु का अनुयायी विचारता है, कि प्रभु) जिसके द्वारा सब कुछ सृजित हुया है वह सब उसी के द्वारा नाश्वान भी है और अंत में केवल प्रभु का नाम ही हमारा मित्र है ।(४)

(हे' मेरे मित्रो, जिस) सृजनकर्ता ने इस सृष्टि को रचा है, वह सदैव तुम्हारे सम्मुख उपस्थित है, ऐसा मत समझो कि वह कहीं दूर है ।(५) जब भी कोई सच्चे (प्रभु) के ध्यान में लीन रहता है तब उसके हृदय के अंदर सच्चे का नाम अनवरत रूप से तरंगित होता रहता है ।(६) यह किसी का अपना अहोभाग्य है कि उसने प्रभु नाम का अनमोल वरदान संतजनों की सँगति में जाकर पा लिया है ।(७) । इसलिये, भ्रम में मत भूले रहो, सच्चे गुरु की सेवा (गुरु की शिक्षा के अनुसरण) में रह कर अपने मन को एक स्थान पर स्थिर रखो ।(८) क्योंकि, (प्रभु के) नाम के बिना (समस्त सृष्टि भ्रमों में) सब कुछ भूला कर भटकती फिर रही है और अपना जन्म व्यर्थ में गँवा रही है "।(९)

इसलिये, अब गुरु जी योगियों द्वारा किये जाने वाले सामान्य अभ्यासों और क्रियायों की निरर्थकता पर टिप्पणी करते हैं तथा प्रभु के साथ योग अथवा मिलन प्राप्त करने हेतु सही मार्ग की व्याख्या करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, साधारणतः एक) योगी इधर उधर घूमते हुये अपने पाखंडों में व्यस्त, प्रभु से योग पाने की युक्ति अथवा सही राह गँवा देता है और उसे (प्रभु के साथ) योग नहीं प्राप्त होता । (१०) केवल जब गुरु के शब्द (वाणी) के द्वारा (कोई मनुष्य संतजनों की संगति में बैठ कर प्रभु का ध्यान एकाग्रचित्त होकर करता है तो प्रतीत करता है कि जैसे उसने) शिव (अथवा प्रभु) की नगरी में आसन पर बिराजमान होकर (प्रभु से) योग प्राप्त कर लिया है ।(११) गुरु के शब्द (वाणी) के प्रभाव से सांसारिक धन सम्पदा व सत्ता के खेल का मन में से निवारण हो जाता है और वहाँ प्रभु का नाम आकर बसने लगता है।(१२) हे' संतजनों, यह हमारा शरीर (प्रभु नाम रूपी अँमृत जल से भरे) एक सरोवर के समान है, (एक गुरु के शिष्य का मन) प्रभु नाम में लीन होकर इसमें स्नान करता है ।(१३) जो भक्त जन इस नाम रूपी अँमृत जल में स्नान करते हैं वह गुरु के शब्द (वाणी) के अनुसरण से अपनी (दुष्कर्मों की) मैल गँवा कर निर्मल हो जाते हैं "।(१४)

किस प्रकार से नाशवान मानव तथा देवतागण भी माया के तीन गुणों (सात्विक, राजसी और तामसी) से प्रेरित होकर उसमें विलीन हो जाते हैं, इस के उत्तर में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, प्रभु द्वारा सृजित माया इतनी शक्तिशाली है कि उसके) तीनों गुणों के प्रताप से प्रभावित मानव अचेत रहता है और प्रभु नाम को भूल जाता है, उसे स्मरण नहीं करता और (अंत में) नाम के बिना उसका विनाश हो जाता है ।(१५) (परन्तु, नाश्वान मानव को तो क्या कहें, ऐसे देवतागण जैसे) ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश जो प्रभु के ही तीन रूप हैं वह भी (माया के)

तीन गुणों के भ्रमजाल में भूले भटके हुये हैं ।(१६) केवल गुरु की कृपा से ही (मन में से माया के इन) तीनों गुणों की गाँठ (मनोग्रस्ति) खुल पाती है और मनुष्य समस्त सांसारिक इच्छायों से उपर उठ कर चौथे पद (तुर्यावस्था) में प्रवेश कर प्रभु नाम में लीन होता है ।(१७)

पंडित जनों द्वारा दिये गये उपदेशों पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), पंडित जन (धार्मिक ग्रंथों) का पठन करते हैं और उन पर व्याख्यान आदि करते हैं, परन्तु, वह भी यह बूझ नहीं पाये (कि प्रभु से कैसे मिलन होगा) ।(१८) (माया रूपी)विष के द्वारा प्रभावित हुये वह स्वयं ही भ्रमों में भूले पड़े हैं (मैं विस्मित हूँ कि) हे' भाई, वह किसे उपदेश दे रहें हैं "।(१९)

हम कहाँ से सच्चा मार्ग दर्शन पा सकते हैं, इसके उत्तर में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), भक्तजनों द्वारा कही गयी वाणी उत्तम वस्तु है जो युगों युगों से समायी हुयी है (जो सदैव ही अपना पवित्र प्रभाव अथवा संदेश देती रहती है) ।(२०) जो कोई भी इस वाणी में विश्वास करता है वह उच्च (आत्मिक) गति पाता है और (गुरु के) सच्चे शब्द में समाये रह कर अनंत प्रभु में लीन हो जाता है "।(२१)

प्रभु से मिलन कैसे हो, इसकी व्याख्या करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जो भी कोई गुरु की वाणी के आधार पर अपनी काया रूपी नगरी को खोजता है (अपने जीवन के आचरण को गुरु के कथन के अनुसार जाँचता रहता है) वह प्रभु नाम रूपी नौ निधियों के भंडार को पा लेता है । (२२) मन की इच्छायों को नियंत्रित करने से मन सहज भाव में समा जाता है (तब प्रभु की महिमा का बखान वह अनजाने में ही ऐसे करता रहता है जैसे कि प्रभु ने)स्वयं ही जिह्वा के प्रयोग के बिना उस से अपनी स्तुति करवायी है ।(२३) और तब प्रभु को सर्वव्यापी देखते हुये उसके चक्षु विस्मित हो उठते हैं और उसका हृदय उस अदृष्य प्रभु में लीन हो जाता है ।(२४) ऐसे भक्त की जीवन ज्योति उस अदृष्य प्रभु की दिव्य ज्योति में समा जाती है जो कि सदैव ही बैरागी रहा है "।(२५)

शब्द के अंत में, गुरु जी जो कुछ स्वयं करते हैं वही हमसे साझा करते हुये कहते हैं : "(हे' संतजनों), मैं सदा अपने गुरु की प्रशंसा करता हूँ जिसने मुझे सत्य की भावना समझायी और सिखाई है ।(२६) नानक विनम्र भाव से एक ही बात कहते हैं कि (प्रभु) नाम के द्वारा ही (कोई किसी भी समय मोक्ष की) गति और सम्मान को प्राप्त कर सका है "।(२७-२-११)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम वास्तव में प्रभु के साथ मिलन अथवा योग चाहते हैं तो हमें योगियों द्वारा संयोजित योगाभ्यास अथवा अन्य प्रक्रियायें तथा पंडित जनों के उपदेशों का अनुसरण करने की कोई आवश्यकता नहीं है जो कि स्वयं ही मायाजाल में भूले भटके हुये हैं । हमें केवल साधारण रूप से (गुरु ग्रंथ साहिब जी में निहित) गुरु की वाणी की शिक्षा का पालन करना है, जो यह सिखाती है कि हम प्रभु नाम पर ध्यान लगायें और अपनी काया के भीतर ही प्रभु को खोजें । एक दिन उस घट घट में व्याप्त प्रभु की कृपा से हम उसे अपने निकट ही पायेंगे और मोक्ष तथा सम्मान के भागी बनेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੧੧

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੩ ॥

ਨਾਮੁ ਖਜਾਨਾ ਗੁਰ ਤੇ ਪਾਇਆ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਰਹੇ ਆਘਾਈ ॥੧॥
ਸੰਤਹੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਮੁਕਤਿ ਗਤਿ ਪਾਈ ॥

ਪੰਨਾ ੯੧੨

ਏਕੁ ਨਾਮੁ ਵਸਿਆ ਘਟ ਅੰਤਰਿ ਪੂਰੇ ਕੀ ਵਡਿਆਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਆਪੇ ਕਰਤਾ ਆਪੇ ਭੁਗਤਾ ਦੇਦਾ ਰਿਜਕੁ ਸਬਾਈ ॥੨॥

ਜੋ ਕਿਛੁ ਕਰਣਾ ਸੋ ਕਰਿ ਰਹਿਆ ਅਵਰੁ ਨ ਕਰਣਾ ਜਾਈ ॥੩॥

ਆਪੇ ਸਾਜੇ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਉਪਾਏ ਸਿਰਿ ਸਿਰਿ ਧੰਧੈ ਲਾਈ ॥੪॥

ਤਿਸਹਿ ਸਰੇਵਹੁ ਤਾ ਸੁਖੁ ਪਾਵਹੁ ਸਤਿਗੁਰਿ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਈ ॥੫॥

ਆਪਣਾ ਆਪੁ ਆਪਿ ਉਪਾਏ ਅਲਖੁ ਨ ਲਖਣਾ ਜਾਈ ॥੬॥

ਆਪੇ ਮਾਰਿ ਜੀਵਾਲੇ ਆਪੇ ਤਿਸ ਨੋ ਤਿਲੁ ਨ ਤਮਾਈ ॥੭॥

ਇਕਿ ਦਾਤੇ ਇਕਿ ਮੰਗਤੇ ਕੀਤੇ ਆਪੇ ਭਗਤਿ ਕਰਾਈ ॥੮॥

ਸੇ ਵਡਭਾਗੀ ਜਿਨੀ ਏਕੋ ਜਾਤਾ ਸਚੇ ਰਹੇ ਸਮਾਈ ॥੯॥

ਆਪਿ ਸਰੂਪੁ ਸਿਆਣਾ ਆਪੇ ਕੀਮਤਿ ਕਹਣੁ ਨ ਜਾਈ ॥੧੦॥

ਆਪੇ ਦੁਖੁ ਸੁਖੁ ਪਾਏ ਅੰਤਰਿ ਆਪੇ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਈ ॥੧੧॥

ਵਡਾ ਦਾਤਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਤਾ ਨਿਗੁਰੀ ਅੰਧ ਫਿਰੈ ਲੋਕਾਈ ॥੧੨॥

ਜਿਨੀ ਚਾਖਿਆ ਤਿਨਾ ਸਾਦੁ ਆਇਆ ਸਤਿਗੁਰਿ ਬੂਝ ਬੁਝਾਈ ॥੧੩॥

ਇਕਨਾ ਨਾਵਹੁ ਆਪਿ ਭੁਲਾਏ ਇਕਨਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਦੇਇ ਬੁਝਾਈ ॥੧੪॥

ਸਦਾ ਸਦਾ ਸਾਲਾਹਿਹੁ ਸੰਤਹੁ ਤਿਸ ਦੀ ਵਡੀ ਵਡਿਆਈ ॥੧੫॥

ਤਿਸੁ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਈ ਰਾਜਾ ਕਰਿ ਤਪਾਵਸੁ ਬਣਤ ਬਣਾਈ ॥੧੬॥

ਨਿਆਉ ਤਿਸੈ ਕਾ ਹੈ ਸਦ ਸਾਚਾ ਵਿਰਲੇ ਹੁਕਮੁ ਮਨਾਈ ॥੧੭॥

ਤਿਸ ਨੋ ਪ੍ਰਾਣੀ ਸਦਾ ਧਿਆਵਹੁ ਜਿਨਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਬਣਤ ਬਣਾਈ ॥੧੮॥

ਸਤਿਗੁਰ ਭੇਟੈ ਸੋ ਜਨੁ ਸੀਝੈ ਜਿਸੁ ਹਿਰਦੈ ਨਾਮੁ ਵਸਾਈ ॥੧੯॥

ਸਚਾ ਆਪਿ ਸਦਾ ਹੈ ਸਾਚਾ ਬਾਣੀ ਸਬਦਿ ਸੁਣਾਈ ॥੨੦॥

ਨਾਨਕ ਸੁਣਿ ਵੇਖਿ ਰਹਿਆ ਵਿਸਮਾਦੁ ਮੇਰਾ ਪ੍ਰਭੁ ਰਵਿਆ ਸ੍ਰਬ ਥਾਈ ॥
੨੧॥੫॥੧੪॥

पृ-९११

रामकली महला ३ ॥

नामु खजाना गुर ते पाइआ तृिपति रहे आघाई ॥१॥
सँतहु गुरमुखि मुकति गति पाई ॥

पृ-९१२

एकु नामु वसिआ घट अँतरि पूरे की वडिआई ॥१॥रहाउ॥

आपे करता आपे भुगता देदा रिजकु सबाई ॥२॥

जो किछु करणा सो करि रहिआ अवरु न करणा जाई ॥३॥

आपे साजे सृिसटि उपाए सिरि सिरि धँधै लाई ॥४॥

तिसहि सरेवहु ता सुखु पावहु सतिगुरि मेलि मिलाई ॥५॥

आपणा आपु आपि उपाए अलखु न लखणा जाई ॥६॥

आपे मारि जीवाले आपे तिस नो तिलु न तमाई ॥७॥

इकि दाते इकि मँगते कीते आपे भगति कराई ॥८॥

से वडभागी जिनी एको जाता सचे रहे समाई ॥९॥

आपि सरूपु सिआणा आपे कीमति कहणु न जाई ॥१०॥

आपे दुखु सुखु पाए अँतरि आपे भरमि भुलाई ॥११॥

वडा दाता गुरमुखि जाता निगुरी अँध फिरै लोकाई ॥१२॥

जिनी चाखिआ तिना सादु आइआ सतिगुरि बूझ बुझाई ॥१३॥

इकना नावहु आपि भुलाए इकना गुरमुखि देइ बुझाई ॥१४॥

सदा सदा सालाहिहु सँतहु तिस दी वडी वडिआई ॥१५॥

तिसु बिनु अवरु न कोई राजा करि तपावसु बणत बणाई ॥१६॥

निआउ तिसै का है सद साचा विरले हुकमु मनाई ॥१७॥

तिस नो प्राणी सदा धिआवहु जिनि गुरमुखि बणत बणाई ॥१८॥

सतिगुर भेटै सो जनु सीझै जिसु हिरदै नामु वसाई ॥१९॥

सचा आपि सदा है साचा बाणी सबदि सुणाई ॥२०॥

नानक सुणि वेखि रहिआ विसमादु मेरा प्रभु रविआ सृब थाई
॥२१॥५॥१४॥

रामकली महला - ३

इस शब्द में गुरु जी अपने सहित अन्य भक्तजनों के अनुभवों को हमारे साथ साझा करते हुए बता रहे हैं कि किस प्रकार के आशीर्वाद उन सभी को प्राप्त हुये हैं ।

गुरु जी पहले गुरु के महत्व पर अपना विचार प्रकट करते हैं : "(हे' संतों, प्रभु) नाम का भंडार गुरु से पाया है और (जिन्होंने भी पाया) वह सभी पूर्ण रूप से सन्तुष्ट तथा तृप्त हैं ।(१)

हे' संतों, हाँ, गुरु के शिष्य ने मोक्ष की गति प्राप्त कर ली है, क्योंकि, एक प्रभु का नाम उसके ह्रदय में आ बसा है और यह पूर्ण गुरु की ही महिमा है "।(१-विराम)

अब आगे गुरु जी प्रभु के कुछ अद्बितीय गुणों की तालिका देते हुये कहते हैं : "(हे' संतों, प्रभु) स्वयं ही सब कुछ करता है और स्वयं ही भोगता है तथा सबको जीविका भी प्रदान करता है ।(२) उसे जो कुछ भी करना है वह सब कर रहा है जो और किसी दूसरे के द्वारा नहीं किया जा सकता ।(३) उसने स्वयं ही सृष्टि को उपजाया है और संचालित किया है तथा प्रत्येक जीव को उसके धंधे में लगा दिया है ।(४) (हे' संतों) यदि तुम उसकी सेवा (पूजा व ध्यान) करोगे तो तुम्हें सुख शांति प्राप्त होगी (परन्तु केवल वही मनुष्य उसकी पूजा एवं ध्यान कर सकता है जिसे उस प्रभु ने) सच्चे गुरु से मिलाया है ।(५) उस प्रभु ने स्वयं ही अपना सृजन भी किया है, उस अगम्य प्रभु की थाह पाना असंभव है ।(६) वह स्वयं ही नाश करता है और स्वयं ही जीवित भी करता है, उसको एक तिल भर भी कोई लोभ अथवा इच्छा नहीं है "।(७)

अब गुरु जी प्रभु द्वारा रचित कुछ आश्चर्य चकित करने वाली स्थितियों पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं :"(हे' संतों, उस प्रभु ने) कुछ को दाता और अन्य कुछ को भिक्षुक बना दिया तथा (कुछ लोगों से) अपनी ही भक्ति पूजा करवायी ।(८) वह लोग अति सौभाग्यशाली हैं जिन्होंने यह जान लिया कि एक ही प्रभु है और वह उस सच्चे अनंत (प्रभु) में समाये रहते हैं ।(९) वह प्रभु स्वयं अति सुंदर है और बुद्धिमान है, उसका मूल्य नहीं आँका जा सकता ।(१०) वह स्वयं ही दुख देता है और सुख भी देता है तथा कुछ लोगों को भ्रमों में भुला भटका देता है।(११) उस महान दाता को गुरु के द्वारा जाना जाता है, जबकि गुरुविहीन मनुष्यता अज्ञान के अंधकार में भटकती घूमती रहती है ।(१२) सच्चे गुरु के द्वारा (प्रभु की) सूझ बूझ पाने से जिन लोगों ने (प्रभु नाम के मधुर रस को) चखा है, उन्होंने इसके स्वाद का आनंद पाया है।(१३) कुछ लोग ऐसे हैं जिनके मन में से प्रभु स्वयं ही अपने नाम को भुला देते हैं और कुछ ऐसे हैं जिनको गुरु के द्वारा अपने नाम की सूझ बूझ प्रदान करते हैं ।(१४)

इसलिये गुरु जी समझाते हैं : " हे' संतजनों, उस प्रभु की सदैव प्रशंसा करो, उसकी महिमा अति महान है ।(१५) उसके बिना (सृष्टि का) राजा और कोई दूसरा नहीं है, उसने न्यायपूर्वक विधि से (इस सृष्टि का) निर्माण तथा व्यवस्था की है ।(१६) उसका न्याय सदा ही सत्य पर आधारित होता है पर वह (प्रभु) किसी बिरले को ही अपने आदेशों के पालन योग्य बनाता है ।(१७) हे' प्राणी, उस प्रभु का सदा ध्यान और जाप कर जिसने सच्चे गुरु के द्वारा उस (प्रभु) की इच्छा को मान कर चलने की व्यवस्था की है ।(१८) सच्चे गुरु से मिलने पर जिस किसी मनुष्य के ह्रदय में (सच्चा गुरु) प्रभु नाम बसा देता है, उस मनुष्य का जीवन सफल हो जाता है ।(१९) वह सच्चा प्रभु सदैव ही सत्य है, अनंत है और (गुरु की वाणी के द्वारा) वह सभी को अपना संदेश सुनाता रहता है ।(२०)(प्रभु के आश्चर्यचकित करने वाले रूप रंग) सुन देख कर नानक अति विस्मित होते हैं और विचारते हैं कि मेरा प्रभु सभी जगह व्याप्त है "।(२१-५-१४)

इस शब्द का संदेश यह है कि प्रभु ने हम सभी को जीवन की अनेकों विभिन्न प्रकृतियों तथा दशायों में सृजित किया है । उसने स्वयं को भी उत्पन्न किया और उसकी न्यायशीलता तथा व्यवस्था के अनुसार सृष्टि में सब कुछ विधिवत् हो रहा है । किन्तु, उस प्रभु को विस्तार से समझना हमारे लिये असंभव है जब तक हम गुरु की शिक्षा एवं मार्ग दर्शन को नहीं अपनाते और प्रभु नाम को मन में नहीं बसाते । इसके पश्चात ही हम प्रभु के विलक्षणकारी रूपों को देख कर विस्मय अथवा आनंद से भर पायेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੧੩

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਰੰਗ ਰਸ ਰੂਪ ॥

ਪੰਨਾ ੯੧੪

ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਮਾਇ ਬਾਪ ਪੂਤ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਰਾਜ ਮਿਲਖ ਵਾਪਾਰਾ ॥
ਸੰਤ ਬਿਹਾਵੈ ਹਰਿ ਨਾਮ ਅਧਾਰਾ ॥੧॥

ਰਚਨਾ ਸਾਚੁ ਬਨੀ ॥
ਸਭ ਕਾ ਏਕੁ ਧਨੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਬੇਦ ਅਰੁ ਬਾਦਿ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਰਸਨਾ ਸਾਦਿ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਲਪਟਿ ਸੰਗਿ ਨਾਰੀ ॥
ਸੰਤ ਰਚੇ ਕੇਵਲ ਨਾਮ ਮੁਰਾਰੀ ॥੨॥

ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਖੇਲਤ ਜੂਆ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਅਮਲੀ ਹੂਆ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਪਰ ਦਰਬ ਚੋੁਰਾਏ ॥
ਹਰਿ ਜਨ ਬਿਹਾਵੈ ਨਾਮ ਧਿਆਏ ॥੩॥

ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਜੋਗ ਤਪ ਪੂਜਾ ॥
ਕਾਹੂ ਰੋਗ ਸੋਗ ਭਰਮੀਜਾ ॥
ਕਾਹੂ ਪਵਨ ਧਾਰ ਜਾਤ ਬਿਹਾਏ ॥
ਸੰਤ ਬਿਹਾਵੈ ਕੀਰਤਨੁ ਗਾਏ ॥੪॥

ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਦਿਨੁ ਰੈਨਿ ਚਾਲਤ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਸੋ ਪਿੜੁ ਮਾਲਤ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਬਾਲ ਪੜਾਵਤ ॥
ਸੰਤ ਬਿਹਾਵੈ ਹਰਿ ਜਸੁ ਗਾਵਤ ॥੫॥

ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਨਟ ਨਾਟਿਕ ਨਿਰਤੇ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਜੀਆਇਹ ਹਿਰਤੇ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਰਾਜ ਮਹਿ ਡਰਤੇ ॥
ਸੰਤ ਬਿਹਾਵੈ ਹਰਿ ਜਸੁ ਕਰਤੇ ॥੬॥

ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਮਤਾ ਮਸੂਰਤਿ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਸੇਵਾ ਜਰੂਰਤਿ ॥
ਕਾਹੂ ਬਿਹਾਵੈ ਸੋਧਤ ਜੀਵਤ ॥
ਸੰਤ ਬਿਹਾਵੈ ਹਰਿ ਰਸੁ ਪੀਵਤ ॥੭॥

ਜਿਤੁ ਕੋ ਲਾਇਆ ਤਿਤ ਹੀ ਲਗਾਨਾ ॥
ਨਾ ਕੋ ਮੂੜੁ ਨਹੀ ਕੋ ਸਿਆਨਾ ॥
ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਜਿਸੁ ਦੇਵੈ ਨਾਉ ॥
ਨਾਨਕ ਤਾ ਕੈ ਬਲਿ ਬਲਿ ਜਾਉ ॥੮॥੩॥

पृ-९१३

रामकली महला ५॥

काहू बिहावै रँग रस रूप ॥

पृ-९१४

काहू बिहावै माइ बाप पूत ॥
काहू बिहावै राज मिलख वापारा ॥
सँत बिहावै हरि नाम अधारा ॥१॥

रचना साचु बनी ॥
सब का एकु धनी ॥१॥रहाउ॥

काहू बिहावै बेद अरु बादि ॥
काहू बिहावै रसना सादि ॥
काहू बिहावै लपटि सँगि नारी ॥
सँत रचे केवल नाम मुरारी ॥२॥

काहू बिहावै खेलत जूआ ॥
काहू बिहावै अमली हूआ ॥
काहू बिहावै पर दरब चुोराए ॥
हरि जन बिहावै नाम धिआए ॥३॥

काहू बिहावै जोग तप पूजा ॥
काहू रोग सोग भरमीजा ॥
काहू पवन धार जात बिहाए ॥
सँत बिहावै कीरतनु गाए ॥४॥

काहू बिहावै दिनु रैनि चालत ॥
काहू बिहावै सो पिड़ु मालत ॥
काहू बिहावै बाल पड़ावत ॥
सँत बिहावै हरि जसु गावत ॥५॥

काहू बिहावै नट नाटिक निरते ॥
काहू बिहावै जीआइह हिरते ॥
काहू बिहावै राज महि डरते ॥
सँत बिहावै हरि जसु करते ॥६॥

काहू बिहावै मता मसूरति ॥
काहू बिहावै सेवा जरूरति ॥
काहू बिहावै सोधत जीवत ॥
सँत बिहावै हरि रसु पीवत ॥७॥

जितु को लाइआ तित ही लगाना ॥
ना को मूड़ु नही को सिआना ॥
करि किरपा जिसु देवै नाउ ॥
नानक ता कै बलि बलि जाउ ॥८॥३॥

रामकली महला – ५

संसार में विभिन्न लोग अनेकों प्रकार के व्यवसायों में संलग्न रहते हैं । कुछ शिक्षक हैं और दूसरे विद्यार्थी हैं । कुछ लोग धन सम्पदा को संचित करने में जुटे रहते हैं और कई दान दक्षिणा में विश्वास रखते हैं अथवा धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन करते हैं । गुरु जी यहाँ सामान्य लोगों के विभिन्न व्यवसायों अथवा व्यस्तताओं की तुलना संतजनों के आचरण अथवा उनके व्यवहार से करते हैं और अप्रत्यक्ष रूप से हमें बताते हैं कि हमारा मन कहाँ पर केन्द्रित होना चाहिये। जिस प्रकार से लोग प्राय: अपना जीवन व्यतीत करते हैं, उनके सामान्य व्यवहार का उल्लेख करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), किसी का जीवन सांसारिक विषय सुख, रूप, रंग के रसास्वादन में आनन्दित रहता है, कोई अपना जीवन माता, पिता अथवा पुत्र (और परिवार के अन्य सदस्यों) के साथ व्यतीत करता है । किसी को अपने जीवन का समय राज पाट, धन धान्य तथा व्यापार में लगाना भाता है । परन्तु, एक सँत को अपना जीवन हरि के नाम पर आधारित रख कर व्यतीत करना भला लगता है "।(१)

अनेक व्यवसाय अथवा धंधे, जिनमें लोग व्यस्त रहते हैं उन पर टिप्पणी करने से पूर्व गुरु जी हमें एक मूलभूत सत्य की याद दिलाना चाहते हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), एक ही सच्चे (प्रभु) ने यह समस्त रचना (सृष्टि) बनायी है और वही एक सब का स्वामी है (और प्रत्येक जन उसी प्रभु के द्वारा निर्दिष्ट काम को कर रहा है)"।(१-विराम)

विभिन्न लोगों के, विशेषरूप से उनके मनभावन आचरण पर गुरु जी अपनी व्याख्या को पुनः आरंभ करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), किसी को अपने जीवन में (धार्मिक ग्रंथ जैसे कि) वेद आदि का अध्ययन और उन पर (अन्य लोगों के साथ) वाद विवाद करना अच्छा लगता है । किसी को जीवन में अपनी जिह्वा के स्वादों की सन्तुष्टि पाना भाता है । कोई अपने जीवन को (काम वासना की तृप्ति के लिये पुरुष अथवा) नारी के साथ लिप्त रह कर व्यतीत कर देता है । परन्तु, सँत लोग जीवन भर केवल प्रभु नाम के ध्यान में रचे रहते हैं "।(२)

अब गुरु जी उन लोगों का ब्यौरा देते हैं जो पापकर्मों में सक्रिय रहते हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), किसी का जीवन जुआ सट्टेबाज़ी में व्यतीत होता है, किसी को अपना सारा जीवन मादक पदार्थों के नशे में बिताना अच्छा लगता है । किसी को अपना जीवन पराये धन की चोरी में व्यतीत करना भला लगता है । परन्तु, एक हरि के भक्त को हरि नाम के ध्यान में ही जीवन भर आनंद मिलता है "।(३)

अब गुरु जी संतजनों के आचरण की तुलना योगाभ्यास तथा कर्मकांड द्वारा पूजा अर्चना करने वालों से करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), किसी का जीवन योगाभ्यास, तपस्या साधना और (शास्त्रीय विधियों से) पूजा अर्चना करने में व्यतीत होता है, किसी का जीवन रोगों की पीड़ा, शोक अथवा भ्रमों में व्यर्थ हो जाता है । कोई प्राणी अपना जीवन श्वास क्रियायों के अभ्यासों में व्यतीत कर देता है, परन्तु, सँत जन का जीवन प्रभु के गुणगान में लगता है "।(४)

यात्रियों, अध्यापकों एवं अन्य ऐसे व्यवसायी लोगों के जीवन पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी आगे कहते हैं :" (हे' मेरे मित्रो), किसी को अपना जीवनकाल दिन रात चलने अथवा (एक स्थान से दूसरे स्थान) की यात्राओं पर व्यतीत करना भला लगता है तथा किसी दूसरे का सम्पूर्ण जीवन एक ही अखाड़े (एक ही स्थान) में रह कर निकल जाता है, किसी का जीवन बालकों को पढ़ाने में प्रसन्न रहता है ।परन्तु, एक सँत को हरि के यशगान में अपना जीवन व्यतीत करना आनंद देता है "।(५)

अब गुरु जी उनकी चर्चा करते हैं जो नाट्य कलायों, नृत्य नौटंकी आदि में, कुछ लूट पाट तथा चोरी और कई अन्य जो राजा अथवा शासन के नियमों के भय में रहते हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), कोई लोग अपना जीवन नाटक, नौटंकी अथवा नृत्य आदि करने में व्यतीत करते हैं, किसी का जीवन दूसरे प्राणियों का हरण एवं लूटने में लगा रहता है और कई लोग राजा तथा उसके शासन के नियमों के डर में अपना जीवन बिताना पसंद करते हैं । परन्तु, सँत अपने जीवन को हरि की महिमा करने में व्यतीत कर देते हैं "।(६)

सँतजनों के आचरण की तुलना सामाजिक कार्यों में जीवन को व्यतीत करने वाले लोगों से करते हुये गुरु जी कहते हैं : " किसी का जीवन (अन्य लोगों को) सलाह मता देने अथवा परामर्श एवं पंचायत में व्यतीत होता है । कोई दूसरों की सेवा में अथवा उनकी आवश्यकतायों को पूर्ण करने में जीवन को लगा देता है । किसी का जीवन (समाज में) दूसरे किसी के जीवन को सुधारने में व्यतीत होता है । परन्तु, एक सँत अपना जीवन हरि (नाम रूपी) रस को पीने में व्यतीत करता है "।(७)

हम सब में से चाहे कोई कितना ही स्वयं पर गर्व करे कि वह अन्य सभी से अधिक बुद्धिमान है और उसकी जीवन शैली सब की अपेक्षा, अधिक पवित्र एवं उन्नत है । इस पर गुरु जी का कथन है : "(हे' मेरे मित्रो, जो कुछ भी लोग करते हैं वह उनके वश में नहीं है, क्योंकि) जिसे भी प्रभु ने किसी काम में लगाया है वह उसी में व्यस्त है ।(स्वयं में) कोई भी मूर्ख नहीं है और ना ही कोई बुद्धिमान है । इसलिये नानक उस पर बारम्बार बलिहारी हैं जिस को प्रभु कृपा करके अपने नाम का दान देता है "।(८-३)

इस शब्द का संदेश है कि यह प्रभु ही हैं जो सभी लोगों को विभिन्न व्यवसायों में लगाये रखते हैं । जैसे कुछ शिक्षक हैं, दूसरे कई शासक हैं, कुछ विशेषज्ञ अथवा विचारक है और कुछ चोर डाकू हैं और सभी अपना जीवन ईश्वर की इच्छा के अनुसार उन्हीं व्यवसायों और धँधों में व्यतीत कर देते हैं । परन्तु, यदि हम प्रभु के प्रेमी एवं भक्त बनना चाहते हैं तो हमें विनम्रता पूर्वक ऐसा वरदान माँगना चाहिए जो हमारे जीवन को उस प्रभु के नाम के ध्यान एवं महिमागान में व्यस्त रखे ।

ਪੰਨਾ ੯੧੫	**पृ-९१५**
ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ਅਸਟਪਦੀ	**रामकली महला ५ असटपदी**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਦਰਸਨੁ ਭੇਟਤ ਪਾਪ ਸਭਿ ਨਾਸਹਿ ਹਰਿ ਸਿਉ ਦੇਇ ਮਿਲਾਈ ॥੧॥	दरसनु भेटत पाप सभि नासहि हरि सिउ देइ मिलाई ॥१॥
ਮੇਰਾ ਗੁਰੁ ਪਰਮੇਸਰੁ ਸੁਖਦਾਈ ॥ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਕਾ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਏ ਅੰਤੇ ਹੋਇ ਸਖਾਈ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मेरा गुरु परमेसरु सुखदाई ॥ पारब्रहम का नामु द्रिड़ाए अँते होइ सखाई ॥१॥रहाउ॥
ਸਗਲ ਦੂਖ ਕਾ ਡੇਰਾ ਭੰਨਾ ਸੰਤ ਧੂਰਿ ਮੁਖਿ ਲਾਈ ॥੨॥	सगल दूख का डेरा भँना सँत धूरि मुखि लाई ॥२॥
ਪਤਿਤ ਪੁਨੀਤ ਕੀਏ ਖਿਨ ਭੀਤਰਿ ਅਗਿਆਨੁ ਅੰਧੇਰੁ ਵੰਞਾਈ ॥੩॥	पतित पुनीत कीए खिन भीतरि अगिआनु अँधेरु वँञाई ॥३॥
ਕਰਣ ਕਾਰਣ ਸਮਰਥੁ ਸੁਆਮੀ ਨਾਨਕ ਤਿਸੁ ਸਰਣਾਈ ॥੪॥	करण कारण समरथु सुआमी नानक तिसु सरणाई ॥४॥
ਬੰਧਨ ਤੋੜਿ ਚਰਨ ਕਮਲ ਦ੍ਰਿੜਾਏ ਏਕ ਸਬਦਿ ਲਿਵ ਲਾਈ ॥੫॥	बँधन तोड़ि चरन कमल द्रिड़ाए एक सबदि लिव लाई ॥५॥
ਅੰਧ ਕੂਪ ਬਿਖਿਆ ਤੇ ਕਾਢਿਓ ਸਾਚ ਸਬਦਿ ਬਣਿ ਆਈ ॥੬॥	अँध कूप बिखिआ ते काढिओ साच सबदि बणि आई ॥६॥
ਜਨਮ ਮਰਣ ਕਾ ਸਹਸਾ ਚੂਕਾ ਬਾਹੁੜਿ ਕਤਹੁ ਨ ਧਾਈ ॥੭॥	जनम मरण का सहसा चूका बाहुड़ि कतहु न धाई ॥७॥
ਨਾਮ ਰਸਾਇਣਿ ਇਹੁ ਮਨੁ ਰਾਤਾ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪੀ ਤ੍ਰਿਪਤਾਈ ॥੮॥	नाम रसाइणि इहु मनु राता अँमृतु पी तृपताई ॥८॥
ਸੰਤਸੰਗਿ ਮਿਲਿ ਕੀਰਤਨੁ ਗਾਇਆ ਨਿਹਚਲ ਵਸਿਆ ਜਾਈ ॥੯॥	सँतसँगि मिलि कीरतनु गाइआ निहचल वसिआ जाई ॥९॥
ਪੂਰੈ ਗੁਰਿ ਪੂਰੀ ਮਤਿ ਦੀਨੀ ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਆਨ ਨ ਭਾਈ ॥੧੦॥	पूरै गुरि पूरी मति दीनी हरि बिनु आन न भाई ॥१०॥
ਨਾਮੁ ਨਿਧਾਨੁ ਪਾਇਆ ਵਡਭਾਗੀ ਨਾਨਕ ਨਰਕਿ ਨ ਜਾਈ ॥੧੧॥	नामु निधानु पाइआ वडभागी नानक नरकि न जाई ॥११॥
ਘਾਲ ਸਿਆਣਪ ਉਕਤਿ ਨ ਮੇਰੀ ਪੂਰੈ ਗੁਰੂ ਕਮਾਈ ॥੧੨॥	घाल सिआणप उकति न मेरी पूरै गुरू कमाई ॥१२॥
ਜਪ ਤਪ ਸੰਜਮ ਸੁਚਿ ਹੈ ਸੋਈ ਆਪੇ ਕਰੇ ਕਰਾਈ ॥੧੩॥	जप तप सँजम सुचि है सोई आपे करे कराई ॥१३॥
ਪੁਤ੍ਰ ਕਲਤ੍ਰ ਮਹਾ ਬਿਖਿਆ ਮਹਿ ਗੁਰਿ ਸਾਚੈ ਲਾਇ ਤਰਾਈ ॥੧੪॥	पुत्रकलत्र महा बिखिआ महि गुरि साचै लाइ तराई ॥१४॥
ਪੰਨਾ ੯੧੬	**पृ-९१६**
ਅਪਣੇ ਜੀਅ ਤੈ ਆਪਿ ਸਮ੍ਹਾਲੇ ਆਪਿ ਲੀਏ ਲੜਿ ਲਾਈ ॥੧੫॥	अपणे जीअ तै आपि समहा्ले आपि लीए लड़ि लाई ॥१५॥
ਸਾਚ ਧਰਮ ਕਾ ਬੇੜਾ ਬਾਂਧਿਆ ਭਵਜਲੁ ਪਾਰਿ ਪਵਾਈ ॥੧੬॥	साच धरम का बेड़ा बांधिआ भवजलु पारि पवाई ॥१६॥
ਬੇਸੁਮਾਰ ਬੇਅੰਤ ਸੁਆਮੀ ਨਾਨਕ ਬਲਿ ਬਲਿ ਜਾਈ ॥੧੭॥	बेसुमार बेअँत सुआमी नानक बलि बलि जाई ॥१७॥
ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਅਜੂਨੀ ਸੰਭਉ ਕਲਿ ਅੰਧਕਾਰ ਦੀਪਾਈ ॥੧੮॥	अकाल मूरति अजूनी सँभउ कलि अँधकार दीपाई ॥१८॥
ਅੰਤਰਜਾਮੀ ਜੀਅਨ ਕਾ ਦਾਤਾ ਦੇਖਤ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਅਘਾਈ ॥੧੯॥	अँतरजामी जीअन का दाता देखत तृपति अघाई ॥१९॥
ਏਕੰਕਾਰੁ ਨਿਰੰਜਨੁ ਨਿਰਭਉ ਸਭ ਜਲਿ ਥਲਿ ਰਹਿਆ ਸਮਾਈ ॥੨੦॥	एकँकारु निरँजनु निरभउ सभ जलि थलि रहिआ समाई ॥२०॥
ਭਗਤਿ ਦਾਨੁ ਭਗਤਾ ਕਉ ਦੀਨਾ ਹਰਿ ਨਾਨਕੁ ਜਾਚੈ ਮਾਈ ॥੨੧॥੧॥੬॥	भगति दानु भगता कउ दीना हरि नानकु जाचै माई ॥२१॥१॥६॥

रामकली महला - ५ अष्टपदी

गुरु जी इस शब्द में अपने गुरु की शरण में रह कर प्राप्त किये आशीर्वादों के आनंद को हमसे साझा करते हुए यह भी स्पष्ट करते हैं कि उनके मन में गुरु के लिये इतना अधिक प्रेम एवं सम्मान क्यों है ।

गुरु के मार्ग दर्शन का पालन करने के फलस्वरूप प्राप्त लाभ की विशिष्टता पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, मैंने देखा है कि गुरु के) दर्शन पाते ही सारे पापकर्मों का पलायन हो जाता है और (गुरु) उस मनुष्य को हरि के साथ मिला देते हैं "।(१)

गुरु कैसे किसी की सहायता करते हैं, इस पर गुरु जी का कथन है : "(हे' मेरे मित्रो), मेरे गुरु परमेश्वर सुखों के दाता हैं । वह उस पारब्रहम प्रभु के नाम को हमारे मन में दृढ़ करते हैं जो कि अंत समय में हमारा मित्र सिद्ध होता है "।(१-विराम)

उनके गुरु ने किस प्रकार के आशीर्वाद उन्हें दिये, इस पर गुरु जी विनीत भाव से कहते हैं :"(हे' मेरे मित्रो), जब मैंने सँत (गुरु) की चरण धूलि मस्तक से लगायी (गुरु के मार्ग दर्शन का पालन किया तब मेरे) समस्त दुखों का डेरा ढह गया ।(२) उसने एक क्षण में ही (मेरे जैसे) पतितों को पवित्र कर दिया और अज्ञान के अँधकार को नष्ट कर दिया ।(३) (तब मैंने जान लिया कि) वह स्वामी (प्रभु)सब कुछ करने और उसमें छिपे कारण के लिए स्मर्थ हैं, अतः नानक उसकी शरण में आये हैं "।(४)

गुरु ने उनकी कैसे सहायता की, गुरु जी इस तथ्य को और आगे बढ़ाते हुये कहते हैं :" (हे' मेरे मित्रो, गुरु ने मेरे समस्त सांसारिक) बँधन काट कर मेरे हृदय में प्रभु के चरण कमलों (उसके नाम) को दृढ़ रूप से बसा कर एक ही शब्द (प्रभु के पवित्र नाम) में मेरा मन लीन कर दिया है । (५) उसने मुझे (सांसारिक मायामोह के) विषैले अँधकारमयी कुँए से बाहर निकाल लिया है और अब मैं सच्चे शब्द (प्रभु नाम) से प्रेम करता हूँ ।(६) मेरे मन में से जन्म मरण का भय समाप्त हो गया है (और अब मुझे विश्वास है कि मैं अन्य जन्मों के फेर में) फिर से नहीं भटकूँगा ।(७)

मेरा मन प्रभु नाम रूपी रसायन को पीकर उसमें रम गया है और अब इस अँमिृतपान से वह पूर्णतया तृप्त हो गया है ।(८) सँत जनों की सँगति में मैंने (प्रभु की महिमा में) कीर्तन भजन किया है और अब यह मन एक स्थिर अवस्था में वास कर रहा है ।(९) मेरे सर्वगुण सम्पन्न गुरु ने मुझे ऐसी उत्तम मति दी है कि हरि के बिना और कुछ भी मन को नहीं भाता है ।(१०) संक्षेप में, नानक कहते हैं कि सौभाग्य से उन्होंने प्रभु नाम के भंडार को पा लिया है, अतः, वह अब नर्क में नहीं जायेंगे "।(११)

अनेकों लोगों के स्वभाव के प्रतिकूल, इतने उच्च स्तर को प्राप्त करने के पश्चात गुरु जी एक तिल भर का भी अहम अपने मन में नहीं आने देते । वह अपने परिश्रम, भक्ति भाव एवं पूजा अथवा बुद्धि की सराहना भी नहीं चाहते, अपितु, विनीत भावना के साथ व्यक्त करते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, उक्त वरदान पाने के लिये) किसी भी प्रकार के परिश्रम, बुद्धि अथवा किसी युक्ति का उपयोग मैंने नहीं किया, यह सब तो मेरे पूर्ण रूप से सक्षम गुरु के प्रयासों का फल है ।(१२) वास्तव में यह सब जाप, तपस्या, संयम एवं पवित्रता (जो भी मैं करता हूँ वह सभी कुछ) गुरु ही करते हैं अथवा मेरे से करवाते हैं ।(१३) पुत्र, पत्नी (परिवार के और सदस्यों रूपी) बीहड़ सांसारिक महासागर के बीच में रहते हुये भी गुरु ने मुझे सच्चे प्रभु के साथ जोड़ कर पार लगा दिया है "।(१४)

प्रभु को एक बार पुनः सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं :" हे' प्रभु, अपने जीवों को तुम स्वयं सँभालते हो और स्वयं ही उन्हें अपने साथ जोड़ते हो ।(१५) जिन्होंने सत्य, सदाचार तथा धर्म रूपी बेड़े को बाँधा और बनाया उनको तुमने इस भयानक भवसागर से पार उतार दिया।(१६) हे' मेरे अनंत और अपार स्वामी, नानक तुम पर बारम्बार बलिहारी हैं "।(१७)

प्रभु के अनूठे गुणों एवं योग्यतायों को संक्षिप्त करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु अमरत्व की मूर्ति, किसी भी योनि (जन्म) से रहित, स्वयंभू ने कलियुग के अँधकार को (ज्ञान के) दीपक की ज्योति दी है ।(१८) समस्त जीवों को देने वाला वह दाता अँतरयामी है, उसे देखते ही मन पूर्ण रूप से तृप्त हो जाता है ।(१९) वह एक प्रभु, निरजंन है, निर्भयी है और सभी स्थानों, जल व थल में समाया हुया है ।(२०) हे' मेरे मित्रो, उसने (प्रभु ने) अपने भक्त जनों को अपनी भक्ति प्रदान की है जिसकी याचना नानक भी करते हैं "।(२१-१-६)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम जीवन भर पाप कर्म कमाते रहे हों तब भी गुरु की शरण में जाकर हमें उनसे मार्ग दर्शन लेना चाहिये ।गुरु की कृपा और उनके पवित्र उपदेशों व आदेशों के पालन से हमारी सभी पापवृत्तियाँ अथवा दुष्कर्म लुप्त हो जायेंगे और हमारा मन सांसारिक जंजालों के झंझावातों में से बाहर आने के पश्चात पवित्र और निर्मल होकर प्रभु का सच्चा प्रेमी बन जायेगा । हो सकता है कि प्रभु अपनी दया से हमारे समस्त पाप क्षमा कर दें और सांसारिक मायामोह के भवसागर से पार उतार कर अनंत रूप से हमें अपने में मिला लें ।

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੩ ਅਨੰਦੁ	**रामकली महला ३॥ आन्नद ॥**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि**
ਪੰਨਾ ੯੧੭	**पृ-९१७**
ਆਨੰਦੁ ਆਨੰਦੁ ਸਭੁ ਕੋ ਕਹੈ ਆਨੰਦੁ ਗੁਰੂ ਤੇ ਜਾਣਿਆ ॥ ਜਾਣਿਆ ਆਨੰਦੁ ਸਦਾ ਗੁਰ ਤੇ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇ ਪਿਆਰਿਆ ॥ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਕਿਲਵਿਖ ਕਟੇ ਗਿਆਨ ਅੰਜਨੁ ਸਾਰਿਆ ॥ ਅੰਦਰਹੁ ਜਿਨ ਕਾ ਮੋਹੁ ਤੁਟਾ ਤਿਨ ਕਾ ਸਬਦੁ ਸਚੈ ਸਵਾਰਿਆ ॥	आनँदु आनँदु सभु को कहै आनँदु गुरू ते जाणिआ ॥ जाणिआ आनँदु सदा गुर ते क्रिपा करे पिआरिआ ॥ करि क्रिपा किलविख कटे गिआन अँजनु सारिआ ॥ अँदरहु जिन का मोहु तुटा तिन का सबदु सचै सवारिआ ॥
ਪੰਨਾ ੯੧੮	**पृ-९१८**
ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਏਹੁ ਅਨੰਦੁ ਹੈ ਆਨੰਦੁ ਗੁਰ ਤੇ ਜਾਣਿਆ ॥੭॥	कहै नानकु एहु अनँदु है आनँदु गुर ते जाणिआ ॥७॥

रामकली महला - ३ आनँद
१ओंकार सतिगुर प्रसादि (पउड़ी - ७)

'आनंद साहिब' नामक स्त्रोत सिख धर्म के अनुयायियों के लिये अति महत्वपूर्ण है। सामान्यतः, नित्य ही प्रातः समय पढ़े जाने वाले पाँच पाठों अथवा स्त्रोतों में एक पाठ आनंद साहिब का भी किया जाता है जिसमें चालीस श्लोक हैं। परन्तु, लघु रूप में पूर्व के पाँच और अंतिम श्लोक का पाठ नित्य के अभ्यास में अथवा विवाह अनुष्ठान एवं शोक सभायों में अनिवार्य रूप से किया जाता है। अपने शीर्षक 'आनंद' को चरितार्थ करता हुआ यह स्त्रोत आत्मिक शांति और परम आनंद का द्योतक है जो कि संसार के सभी सामान्य सुखों तथा हर्षोल्लास से मन को विरक्त करते हुए ऐसे सदैवी आनंद की अवस्था में ले जाता है जहाँ पर कोई दुख और शोक नहीं रहता। ऐसे सनातन आनंद की दशा में सब कुछ सुंदर एवं सुगंधित लगता है, जैसे कि, हमारे चारों ओर आनंद ही आनंद बिखरा हो और हम एक अनवरत मनमोहक मधुर संगीत का श्रवण कर रहे हों।

डा.भाई वीर सिंह जी के अनुसार तृतीय गुरु अमरदास जी ने इस स्त्रोत ' आनंद' का गायन अपने पौत्र के जन्म के अवसर पर किया था। कहा जाता है कि जब इस बालक का जन्म हुया तो अनेकों शुभचिंतक लोगों ने आकर गुरु जी को गृह में आये इस आनंद और प्रभु के आशीर्वाद के लिये बधाईयाँ दीं। ऐसा माना जाता है कि उस समय गुरु जी ने इस स्त्रोत का उच्चारण किया और यह संदेश दिया कि सच्चा आनंद संसार में धन सम्पदा एकत्रित करने अथवा घर में पुत्र या किसी बालक के जन्म से नहीं प्राप्त होता, अपितु, आनंद तब प्राप्त होता है, जब हम सच्चे गुरु के आदेश व उपदेश को सुनते और उसका पालन करते हैं और इस प्रकार का विचार करने योग्य हो पाते हैं कि प्रभु अपनी समस्त सृजना में तथा हमारे अँतरमन में भी बसते हैं।

इस श्लोक में गुरु जी हमें यह व्यक्त करते हैं कि सच्चा आनंद, जिसकी वह बात कर रहे हैं, वह क्या है, इसका वास्तविक रहस्य क्या है और इस आनंद को सही रूप में कहाँ से पाया जा सकता है। वह कहते हैं : " सभी कोई आनंद ही आनंद की बात करता है, परन्तु, यह तो केवल गुरु के द्वारा ही जाना जा सकता है कि (सच्चा) आनंद क्या है। हाँ, मेरे प्रिय (मित्र), केवल जब गुरु कृपा करते हैं तभी हम सच्चे सदैवी आनंद को जान पाते हैं। (सर्वप्रथम, गुरु) अपनी कृपा करके हमारे समस्त पापों का नाश कर देते हैं और ज्ञान रूपी अँजन को (हमारी आँखों में) डालते हैं (अथवा सच्ची दैवी बुद्धि का आभास देते हैं)। तत्पश्चात, जिनके अँतरमन में से (सांसारिक विषयों के प्रति) मोहभंग होता है तब सच्चे प्रभु उनके शब्दों को सजा सँवार देते हैं (अर्थात, तब वह दैवी बुद्धि से परिपूर्ण मधुर वाणी बोलते हैं)। नानक कहते हैं यही सच्चा आनंद है और इस प्रकार के आनंद को केवल गुरु के द्वारा ही जाना और समझा जा सकता है "।(७)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि यदि हम सच्चा आनंद पाना चाहते हैं तो सांसारिक विषयों, जैसे धन सम्पदा एवं शक्ति बल के पीछे भागने की अपेक्षा, हमें गुरु के आदेश और उपदेश का पालन कर प्रभु नाम का ध्यान सच्चे प्रेम एवं श्रद्धा से करना चाहिये।

ਪੰਨਾ ੯੧੯

ਜੇ ਕੋ ਸਿਖੁ ਗੁਰੂ ਸੇਤੀ ਸਨਮੁਖੁ ਹੋਵੈ ॥
ਹੋਵੈ ਤ ਸਨਮੁਖੁ ਸਿਖੁ ਕੋਈ ਜੀਅਹੁ ਰਹੈ ਗੁਰ ਨਾਲੇ ॥
ਗੁਰ ਕੇ ਚਰਨ ਹਿਰਦੈ ਧਿਆਏ ਅੰਤਰ ਆਤਮੈ ਸਮਾਲੇ ॥
ਆਪੁ ਛਡਿ ਸਦਾਰਹੈ ਪਰਣੈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਜਾਣੈ ਕੋਏ ॥

ਪੰਨਾ ੯੨੦

ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਸੁਣਹੁ ਸੰਤਹੁ ਸੋ ਸਿਖੁ ਸਨਮੁਖੁ ਹੋਏ ॥੨੧॥

ਜੇ ਕੋ ਗੁਰ ਤੇ ਵੇਮੁਖੁ ਹੋਵੈ ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਮੁਕਤਿ ਨ ਪਾਵੈ ॥
ਪਾਵੈ ਮੁਕਤਿ ਨ ਹੋਰ ਥੈ ਕੋਈ ਪੁਛਹੁ ਬਿਬੇਕੀਆ ਜਾਏ ॥
ਅਨੇਕ ਜੂਨੀ ਭਰਮਿ ਆਵੈ ਵਿਣੁ ਸਤਿਗੁਰ ਮੁਕਤਿ ਨ ਪਾਏ ॥
ਫਿਰਿ ਮੁਕਤਿ ਪਾਏ ਲਾਗਿ ਚਰਣੀ ਸਤਿਗੁਰੂ ਸਬਦੁ ਸੁਣਾਏ ॥
ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਵੀਚਾਰਿ ਦੇਖਹੁ ਵਿਣੁ ਸਤਿਗੁਰ ਮੁਕਤਿ ਨ ਪਾਏ ॥੨੨॥

पृ-९१९

जे को सिखु गुरू सेती सनमुखु होवै ॥
होवै त सनमुखु सिखु कोई जीअहु रहै गुर नाले ॥
गुर के चरन हिरदै धिआए अँतर आतमै समाले ॥
आपु छडि सदारहै परणै गुर बिनु अवरु न जाणै कोए ॥

पृ-९२०

कहै नानकु सुणहु सँतहु सो सिखु सनमुखु होए ॥२१॥

जे को गुर ते वेमुखु होवै बिनु सतिगुर मुकति न पावै ॥
पावै मुकति न होर थै कोई पुछहु बिबेकीआ जाए ॥
अनेक जूनी भरमि आवै विणु सतिगुर मुकति न पाए ॥
फिरि मुकति पाए लागि चरणी सतिगुरू सबदु सुणाए ॥
कहै नानकु वीचारि देखहु विणु सतिगुर मुकति न पाए ॥२२॥

रामकली महला - ३ आनंद
१ओंकार सतिगुर प्रसादि (पउड़ी - २१ और २२)

इस पउड़ी में गुरु जी हमें यह व्यक्त करते हैं कि उन मनुष्यों का आचरण कैसा होता है जो गुरु की ओर अपना मुख कर लेते हैं अथवा जो गुरु के उपदेश को सुनते और मानते हुए अपने जीवन को उसी रुप में ढालने का प्रयास करते हैं ।

वह कहते हैं : " यदि कोई शिष्य गुरु के सम्मुख (अनुयायी) होना चाहता है तो वह उसके सम्मुख हो सकता है, अर्थात, गुरु के साथ उपस्थित रहे, परन्तु, तब उसे गुरु के साथ (केवल शारीरिक रुप से ही नहीं) हृदय अथवा आत्मा के साथ भी रहना चाहिये । ऐसे मनुष्य को गुरु के चरणों (निर्देश एवं मार्ग दर्शन) का मनन चिंतन तथा ध्यान अपनी अँतरआत्मा में बसाना चाहिये (उसका जीवन सदैव गुरु के सिद्धांतों एवं निर्देशों पर आधारित होना चाहिये) । उसे अपने अहम (मन के अनुसार चलन) को त्याग कर सदा के लिये स्वयं को गुरु की शिक्षा के प्रति समर्पित करके गुरु के अतिरिक्त किसी और को नहीं मानना और जानना चाहिये (अर्थात, उसे अन्य सभी के सुझाव या प्रभावों की अपेक्षा, गुरु के परामर्श को सर्वोपरि मानना चाहिये)। हे' सँतजनों, सुनो, नानक कहते हैं ऐसा ही शिष्य वास्तव में (उपरोक्त विवरण के अनुसार) गुरु के सम्मुख (अनुयायी) होता है "।(२१)

उपरोक्त पउड़ी में गुरु जी ने गुरु के सम्मुखी अथवा अनुयायी मनुष्य के जीवन में अपनाये गये आचरण तथा विशेषतायों को हमसे साझा किया है । अब अपने अगले श्लोक में वह इसके विपरीत उस मनुष्य की चर्चा करते हैं कि उसका क्या होता है जो गुरु के विमुख होता है, अर्थात, जो गुरु के मार्ग दर्शन का पालन करने की अपेक्षा अपने मनमाने रूप में अथवा अहम के अनुसार रहता है ।

गुरु जी कहते हैं : " यदि कोई मनुष्य अपना मुख गुरु की ओर से फेर लेता है अथवा विमुख हो जाता है (समझता है कि वह या अन्य कोई व्यक्ति गुरु से अधिक जानता है), तो वह सच्चे गुरु की शिक्षा और उपदेश के बिना (अपनी दुष्ट प्रवृत्तियों तथा सांसारिक मोहमाया के जंजालों से) मोक्ष प्राप्त नहीं कर पाता । तुम जाकर सभी विवेकी अथवा बुद्धिमान मनुष्यों से पूछ लो (वह सब यही कहेंगे कि बिना गुरु के मार्ग दर्शन के) कहीं किसी और स्थान पर मोक्ष नहीं पाया जा सकता । हाँ, वह चाहे अनेक जन्मों तक भ्रमों में भटकता रहे, परन्तु, सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन के बिना उसे मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती । जब वह सच्चे गुरु के चरणों में आकर लगेगा और सच्चे गुरु उसे अपना शब्द (वाणी) सुनायेंगे (अर्थात, सच्चे गुरु पवित्र वाणी के द्वारा मार्ग दर्शन देंगे और शिष्य निष्कपट भाव से उसका पालन करेगा) तभी फिर उस को मोक्ष प्राप्त होगा । नानक कहते हैं, (हे' मेरे मित्रो), तुम इस पर विचार करके देखो, (अंत में इसी निष्कर्ष पर आओगे कि) सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन के बिना कोई मुक्ति नहीं पाता "।(२२)

इन दोनों पउड़ी से यही संदेश हम पाते हैं कि कभी भी गुरु से अपना मुख नहीं फेरना चाहिये और सदैव ही गुरु ग्रंथ साहिब में निहित उपदेशों का पालन करना चाहिए, अन्यथा, हमें कभी भी मुक्ति नहीं मिल सकेगी ।

ਪੰਨਾ ੯੨੧

ਮਨਿ ਚਾਉ ਭਇਆ ਪ੍ਰਭ ਆਗਮੁ ਸੁਣਿਆ ॥
ਹਰਿ ਮੰਗਲੁ ਗਾਉ ਸਖੀ ਗ੍ਰਿਹੁ ਮੰਦਰੁ ਬਣਿਆ ॥
ਹਰਿ ਗਾਉ ਮੰਗਲੁ ਨਿਤ ਸਖੀਏ ਸੋਗੁ ਦੂਖੁ ਨ ਵਿਆਪਏ ॥
ਗੁਰ ਚਰਨ ਲਾਗੇ ਦਿਨ ਸਭਾਗੇ ਆਪਣਾ ਪਿਰੁ ਜਾਪਏ ॥
ਅਨਹਤ ਬਾਣੀ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਜਾਣੀ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹਰਿ ਰਸੁ ਭੋਗੋ ॥

ਪੰਨਾ ੯੨੨

ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਪ੍ਰਭੁ ਆਪਿ ਮਿਲਿਆ ਕਰਣ ਕਾਰਣ ਜੋਗੋ ॥੩੪॥

ਏ ਸਰੀਰਾ ਮੇਰਿਆ ਇਸੁ ਜਗ ਮਹਿ ਆਇ ਕੈ ਕਿਆ ਤੁਧੁ ਕਰਮ ਕਮਾਇਆ ॥
ਕਿ ਕਰਮ ਕਮਾਇਆ ਤੁਧੁ ਸਰੀਰਾ ਜਾ ਤੂ ਜਗ ਮਹਿ ਆਇਆ ॥
ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਤੇਰਾ ਰਚਨੁ ਰਚਿਆ ਸੋ ਹਰਿ ਮਨਿ ਨ ਵਸਾਇਆ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਹਰਿ ਮੰਨਿ ਵਸਿਆ ਪੂਰਬਿ ਲਿਖਿਆ ਪਾਇਆ ॥
ਕਹੈ ਨਾਨਕੁ ਏਹੁ ਸਰੀਰੁ ਪਰਵਾਣੁ ਹੋਆ ਜਿਨਿ ਸਤਿਗੁਰ ਸਿਉ ਚਿਤੁ ਲਾਇਆ ॥੩੫॥

पृ-९२१

मनि चाउ भइआ प्रभ आगमु सुणिआ ॥
हरि मँगलु गाउ सखी गिृहु मँदरु बणिआ ॥
हरि गाउ मँगलु नित सखीए सोगु दूखु न विआपए ॥
गुर चरन लागे दिन सभागे आपणा पिरु जापए ॥
अनहत बाणी गुर सबदि जाणी हरि नामु हरि रसु भोगो ॥

पृ-९२२

कहै नानकु प्रभु आपि मिलिआ करण कारण जोगो ॥३४॥

ए सरीरा मेरिआ इसु जग महि आइ कै किआ तुधु करम कमाइआ ॥
कि करम कमाइआ तुधु सरीरा जा तू जग महि आइआ ॥
जिनि हरि तेरा रचनु रचिआ सो हरि मनि न वसाइआ ॥
गुर परसादी हरि मँनि वसिआ पूरबि लिखिआ पाइआ ॥
कहै नानकु एहु सरीरु परवाणु होआ जिनि सतिगुर सिउ चितु लाइआ ॥३५॥

रामकली महला - ३ आनंद
१ओंकार सतिगुर प्रसादि (पउड़ी ३४-३५)

इस पउड़ी में गुरु जी प्रभु के नाम पर ध्यान करने के फलस्वरूप मिले आशीर्वादों का वर्णन करते हैं और प्रभु की उपस्थिति का आभास करते हैं ।

वह कहते है : "(हे' मेरे मित्रो) अपने अंदर प्रभु के आगमन को सुन कर मेरे मन में अत्यधिक चाव भर गया है हे' मेरी सखी हरि के लिये मँगलगीत गाओ, क्योंकि, मेरा गृह (अँतरमन, प्रभु का) एक मंदिर बन गया है । हाँ, मेरी सखी, नित्य ही मँगलगीत का गायन करो (क्योंकि, ऐसा करने से मनुष्य में किसी भी प्रकार के) दुख एवं शोक व्याप्त नहीं होते ।(मेरे वह) दिन सौभाग्यशाली थे जब मैंने गुरु के चरणों से लग (उसके मार्गदर्शन को पा) कर अपने प्रिय प्रभु का ध्यान किया । गुरु के शब्द के द्वारा मैंने अनाहत दैवी वाणी की अनवरत मधुर धुन को जाना और समझा और अब मैं हरि नाम रूपी रस का भोग कर रहा हूँ। (संक्षेप में) नानक कहते हैं कि वह प्रभु जो सभी कुछ करने में स्मर्थ हैं स्वयं आकर उनसे मिले हैं "।(३४)

जब किसी को यह ज्ञात होता है कि प्रभु उसके मन में आ बसे हैं तब वह अपने अँतरमन की प्रसन्नता एवं आनंद को साझा करने के पश्चात किसी प्रकार से भी अपने मित्रों और साथियों के साथ आनँदगीतों का गायन करना चाहता है । गुरु जी अब हमारे शरीर तथा अन्य आँतरिक चेतनाओं व शक्तियों को झकझोरते हैं कि वह स्वंय पर विचार करें और निश्चित करें कि उन्होंने क्या प्राप्त किया है ।

सर्वप्रथम, वह अपने (तथा हमारे भी) शरीर को सम्बोधित करते हुये कहते हैं : " हे' मेरे शरीर, इस संसार में आने के पश्चात तुमने कौनसा (भला) कर्म अर्जित किया है ? हाँ कौन सा (शुभ) कार्य, हे' शरीर तुमने अर्जित किया जब से तुम इस जग में आये हो ? (सत्य तो यह है कि) जिस हरि ने तेरी संरचना की है तुमने उस हरि को ही अपने मन में नहीं बसाया । (परन्तु, केवल उन्हीं लोगों के) मन में गुरु की कृपा से प्रभु आकर बसे हैं जो यह जानते हैं कि अपने पूर्व लिखित भाग्य से (उन्हें प्रभु की) प्राप्ति हुई है । नानक कहते हैं कि जिन लोगों ने सच्चे गुरु के साथ अपने हृदय को संलग्न (उसकी शिक्षा का पालन) किया, उनका यह शरीर (प्रभु के दरबार में) स्वीकृत हुया "।(३५)

इन दोनों पउड़ी का संदेश यह है कि हमें गुरु की वाणी को विचारते और उसका अनुसरण करते हुए प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिए । तब किसी समय ऐसे आनंद का आभास होने लगेगा जैसे कि प्रभु स्वयं हमारे हृदय में आन बिराजे हों ।

ਪੰਨਾ ੯੨੩

ਰਾਮਕਲੀ ਸਦੁ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਜਗਿ ਦਾਤਾ ਸੋਇ ਭਗਤਿ ਵਛਲੁ ਤਿਹੁ ਲੋਇ ਜੀਉ ॥
ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਸਮਾਵਏ ਅਵਰੁ ਨ ਜਾਣੈ ਕੋਇ ਜੀਉ ॥
ਅਵਰੋ ਨ ਜਾਣਹਿ ਸਬਦਿ ਗੁਰ ਕੈ ਏਕੁ ਨਾਮੁ ਧਿਆਵਹੇ ॥
ਪਰਸਾਦਿ ਨਾਨਕ ਗੁਰੂ ਅੰਗਦ ਪਰਮ ਪਦਵੀ ਪਾਵਹੇ ॥
ਆਇਆ ਹਕਾਰਾ ਚਲਣਵਾਰਾ ਹਰਿ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਸਮਾਇਆ ॥
ਜਗਿ ਅਮਰੁ ਅਟਲੁ ਅਤੋਲੁ ਠਾਕੁਰੁ ਭਗਤਿ ਤੇ ਹਰਿ ਪਾਇਆ ॥੧॥

ਹਰਿ ਭਾਣਾ ਗੁਰ ਭਾਇਆ ਗੁਰੁ ਜਾਵੈ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਪਾਸਿ ਜੀਉ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਕਰੇ ਹਰਿ ਪਹਿ ਬੇਨਤੀ ਮੇਰੀ ਪੈਜ ਰਖਹੁ ਅਰਦਾਸਿ ਜੀਉ ॥
ਪੈਜ ਰਾਖਹੁ ਹਰਿ ਜਨਹ ਕੇਰੀ ਹਰਿ ਦੇਹੁ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨੋ ॥
ਅੰਤਿ ਚਲਦਿਆ ਹੋਇ ਬੇਲੀ ਜਮਦੂਤ ਕਾਲੁ ਨਿਖੰਜਨੋ ॥
ਸਤਿਗੁਰੂ ਕੀ ਬੇਨਤੀ ਪਾਈ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭਿ ਸੁਣੀ ਅਰਦਾਸਿ ਜੀਉ ॥
ਹਰਿ ਧਾਰਿ ਕਿਰਪਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਮਿਲਾਇਆ ਧਨੁ ਧਨੁ ਕਹੈ ਸਾਬਾਸਿ ਜੀਉ ॥੨॥

ਮੇਰੇ ਸਿਖ ਸੁਣਹੁ ਪੁਤ ਭਾਈਹੋ ਮੇਰੈ ਹਰਿ ਭਾਣਾ ਆਉ ਮੈ ਪਾਸਿ ਜੀਉ ॥
ਹਰਿ ਭਾਣਾ ਗੁਰ ਭਾਇਆ ਮੇਰਾ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਕਰੇ ਸਾਬਾਸਿ ਜੀਉ ॥
ਭਗਤੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੁਰਖੁ ਸੋਈ ਜਿਸੁ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਭਾਣਾ ਭਾਵਏ ॥
ਆਨੰਦ ਅਨਹਦ ਵਜਹਿ ਵਾਜੇ ਹਰਿ ਆਪਿ ਗਲਿ ਮੇਲਾਵਏ ॥
ਤੁਸੀ ਪੁਤ ਭਾਈ ਪਰਵਾਰੁ ਮੇਰਾ ਮਨਿ ਵੇਖਹੁ ਕਰਿ ਨਿਰਜਾਸਿ ਜੀਉ ॥
ਧੁਰਿ ਲਿਖਿਆ ਪਰਵਾਣਾ ਫਿਰੈ ਨਾਹੀ ਗੁਰੁ ਜਾਇ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਪਾਸਿ ਜੀਉ ॥੩॥

ਸਤਿਗੁਰਿ ਭਾਣੈ ਆਪਣੈ ਬਹਿ ਪਰਵਾਰੁ ਸਦਾਇਆ ॥
ਮਤ ਮੈ ਪਿਛੈ ਕੋਈ ਰੋਵਸੀ ਸੋ ਮੈ ਮੂਲਿ ਨ ਭਾਇਆ ॥
ਮਿਤੁ ਪੈਝੈ ਮਿਤੁ ਬਿਗਸੈ ਜਿਸੁ ਮਿਤ ਕੀ ਪੈਜ ਭਾਵਏ ॥
ਤੁਸੀ ਵੀਚਾਰਿ ਦੇਖਹੁ ਪੁਤ ਭਾਈ ਹਰਿ ਸਤਿਗੁਰੂ ਪੈਨਾਵਏ ॥
ਸਤਿਗੁਰੂ ਪਰਤਖਿ ਹੋਦੈ ਬਹਿ ਰਾਜੁ ਆਪਿ ਟਿਕਾਇਆ ॥
ਸਭਿ ਸਿਖ ਬੰਧਪ ਪੁਤ ਭਾਈ ਰਾਮਦਾਸ ਪੈਰੀ ਪਾਇਆ ॥੪॥

ਅੰਤੇ ਸਤਿਗੁਰੁ ਬੋਲਿਆ ਮੈ ਪਿਛੈ ਕੀਰਤਨੁ ਕਰਿਅਹੁ ਨਿਰਬਾਣੁ ਜੀਉ ॥
ਕੇਸੋ ਗੋਪਾਲ ਪੰਡਿਤ ਸਦਿਅਹੁ ਹਰਿ ਹਰਿ ਕਥਾ ਪੜਹਿ ਪੁਰਾਣੁ ਜੀਉ ॥
ਹਰਿ ਕਥਾ ਪੜੀਐ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸੁਣੀਐ ਬੇਬਾਣੁ ਹਰਿ ਰੰਗੁ ਗੁਰ ਭਾਵਏ ॥
ਪਿੰਡੁ ਪਤਲਿ ਕਿਰਿਆ ਦੀਵਾ ਫੁਲ ਹਰਿ ਸਰਿ ਪਾਵਏ ॥
ਹਰਿ ਭਾਇਆ ਸਤਿਗੁਰੁ ਬੋਲਿਆ ਹਰਿ ਮਿਲਿਆ ਪੁਰਖੁ ਸੁਜਾਣੁ ਜੀਉ ॥
ਰਾਮਦਾਸ ਸੋਢੀ ਤਿਲਕੁ ਦੀਆ ਗੁਰ ਸਬਦੁ ਸਚੁ ਨੀਸਾਣੁ ਜੀਉ ॥੫॥

ਪੰਨਾ ੯੨੪

ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੁਰਖੁ ਜਿ ਬੋਲਿਆ ਗੁਰਸਿਖਾ ਮੰਨਿ ਲਈ ਰਜਾਇ ਜੀਉ ॥
ਮੋਹਰੀ ਪੁਤੁ ਸਨਮੁਖੁ ਹੋਇਆ ਰਾਮਦਾਸੈ ਪੈਰੀ ਪਾਇ ਜੀਉ ॥
ਸਭ ਪਵੈ ਪੈਰੀ ਸਤਿਗੁਰੂ ਕੇਰੀ ਜਿਥੈ ਗੁਰੂ ਆਪੁ ਰਖਿਆ ॥
ਕੋਈ ਕਰਿ ਬਖੀਲੀ ਨਿਵੈ ਨਾਹੀ ਫਿਰਿ ਸਤਿਗੁਰੂ ਆਣਿ ਨਿਵਾਇਆ ॥
ਹਰਿ ਗੁਰਹਿ ਭਾਣਾ ਦੀਈ ਵਡਿਆਈ ਧੁਰਿ ਲਿਖਿਆ ਲੇਖੁ ਰਜਾਇ ਜੀਉ ॥
ਕਹੈ ਸੁੰਦਰੁ ਸੁਣਹੁ ਸੰਤਹੁ ਸਭੁ ਜਗਤੁ ਪੈਰੀ ਪਾਇ ਜੀਉ ॥੬॥੧॥

पृ-९२३

रामकली सदु

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

जगि दाता सोइ भगति वछलु तिहु लोइ जीउ ॥
गुर सबदि समावए अवरु न जाणै कोइ जीउ ॥
अवरो न जाणहि सबदि गुर कै एकु नाम धिआवहे ॥
परसादि नानक गुरू अँगद परम पदवी पावहे ॥
आइआ हकारा चलणवारा हरि राम नामि समाइआ ॥
जगि अमरु अटलु अतोलु ठाकुरु भगति ते हरि पाइआ ॥१॥

हरि भाणा गुर भाइआ गुरु जावै हरि प्रभ पासि जीउ ॥
सतिगुरु करे हरि पहि बेनती मेरी पैज रखहु अरदासि जीउ ॥
पैज राखहु हरि जनह केरी हरि देहु नामु निरँजनो ॥
अँति चलदिआ होइ बेली जमदूत कालु निखँजनो ॥
सतिगुरू की बेनती पाई हरि प्रभि सुणी अरदासि जीउ ॥
हरि धारि किरपा सतिगुरु मिलाइआ धनु धनु कहै साबासि जीउ ॥२॥

मेरे सिख सुणहु पुत भाईहो मेरै हरि भाणा आउ मै पासि जीउ ॥
हरि भाणा गुर भाइआ मेरा हरि प्रभु करे साबासि जीउ ॥
भगतु सतिगुरु पुरखु सोई जिसु हरि प्रभ भाणा भावए ॥
आनँद अनहद वजहि वाजे हरि आपि गलि मेलावए ॥
तुसी पुत भाई परवारु मेरा मनि वेखहु करि निरजासि जीउ ॥
धुरि लिखिआ परवाणा फिरै नाही गुरु जाइ हरि प्रभ पासि जीउ ॥३॥

सतिगुरि भाणै आपणै बहि परवारु सदाइआ ॥
मत मै पिछै कोई रोवसी सो मै मूलि न भाइआ ॥
मितु पैझै मितु बिगसै जिसु मित की पैज भावए ॥
तुसी वीचारि देखहु पुत भाई हरि सतिगुरू पैनावए ॥
सतिगुरू परतखि होदै बहि राजु आपि टिकाइआ ॥
सभि सिख बँधप पुत भाई रामदास पैरी पाइआ ॥४॥

अँते सतिगुरु बोलिआ मै पिछै कीरतनु करिअहु निरबाणु जीउ ॥
केसो गोपाल पँडित सदिअहु हरि हरि कथा पड़हि पुराणु जीउ ॥
हरि कथा पड़ीऐ हरि नामु सुणीऐ बेबाणु हरि रँगु गुर भावए ॥
पिँडु पतलि किरिआ दीवा फुल हरि सरि पावए ॥
हरि भाइआ सतिगुरु बोलिआ हरि मिलिआ पुरखु सुजाणु जीउ ॥
रामदास सोढी तिलकु दीआ गुर सबदु सचु नीसाणु जीउ ॥५॥

पृ-९२४

सतिगुरु पुरखु जि बोलिआ गुरसिखा मँनि लई रजाइ जीउ ॥
मोहरी पुतु सनमुखु होइआ रामदासै पैरीपाइ जीउ ॥
सभ पवै पैरी सतिगुरू केरी जिथै गुरू आपु रखिआ ॥
कोई करि बखीली निवै नाही फिरि सतिगुरू आणि निवाइआ ॥
हरि गुरहि भाणा दीई वडिआई धुरि लिखिआ लेखु रजाइ जीउ ॥
कहै सुँदरु सुणहु सँतहु सभु जगतु पैरी पाइ जीउ ॥६॥१॥

रामकली सद्द (मृत्यु का बुलावा)
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द को कवि सुंदर ने अपने प्रपितामह गुरु अमरदास जी की मृत्यु के समय का विवरण देते हुए उच्चरित किया था । यह रचना आत्मिक रूप से इसलिए सराहनीय है, क्योंकि, जब हम जीवन में मृत्यु जैसी गंभीर स्थिति का सामना कर रहे होते हैं तब इसके द्वारा हमें मानसिक बल और शिक्षा प्राप्त होती है कि प्रभु की इच्छा को कैसे स्वीकार किया जाना चाहिए । इसके अतिरिक्त यहाँ यह भी कहा गया है कि मरणोपरांत हम कहाँ जाते हैं, मरणासन्न व्यक्ति के प्रति हमारा व्यवहार कैसा होना चाहिए और अंतिम समय पर मनुष्य को अपने परिवार को कैसे और क्या निर्देश देने चाहिए । यह रचना एक दिशा निर्देश भी देती है कि ऐसे समय पर हमें मूढ़ अन्धविश्वासों से दूर रहते हुए आत्मिक रूप से महत्वपूर्ण रीतियों को निभाना चाहिए । वास्तव में इस शब्द के द्वारा सम्पूर्ण सिख समाज को मृत्यु जैसे समय के लिये एक स्पष्ट और अर्थपूर्ण संदेश उपलब्ध है । सम्भवतः, यह एक संयोग है अथवा, कोई छिपा हुया गूढ़ अभिप्राय है कि इस रचना से पूर्व गुरु अमरदास जी ने ‘ आनंद साहिब ‘ नामक स्त्रोत का उच्चारण अपने पोत्र ‘आनंद’ के जन्म के अवसर पर किया था और अब ‘आनंद’ के सुपुत्र ‘सुंदर’ अपने प्रपितामह के मृत्यु समय का वर्णन अपनी इस रचना के द्वारा कर रहे हैं ।एक और तथ्य जो ध्यान देने योग्य है कि ‘आनंद साहिब’ में गुरु जी ने हमें यह प्रकट किया था कि जब हम सच्चे गुरु के आदेशों के अनुसार प्रभु नाम के ध्यान में लीन होते हैं तब आनंद के स्त्रोत प्रभु में विलीन हो जाते हैं । संभव है कि यह शब्द गुरु अमरदास जी की यथार्थ मृत्यु समय का ना होकर प्रभु के दैवी शब्द में उनका समानांतर रूप से विलीन होना दर्शाता हो ।

सर्वप्रथम, कवि सुंदर अपने प्रसंग में गुरु अमरदास जी को प्रभु के पास आने का बुलावा मिलने पर कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), समस्त सृष्टि का दाता, जो तीनों लोकों में अपने भक्तजनों को प्रेम करता है (गुरु अमरदास जी) उसी प्रभु में, गुरु के शब्द (वाणी) के द्वारा समा रहे हैं (उसके समान) वह और किसी को नहीं जानते । हाँ, वह सच्चे गुरु के शब्द (वाणी) के अतिरिक्त किसी और को नहीं स्वीकार करते, अतः वह केवल एक ही (प्रभु) नाम का ध्यान करते हैं ।

गुरु नानक और गुरु अंगद की कृपा के प्रसाद रूप में वह (प्रभु से मिलन का) परम पद प्राप्त करने वाले हैं ।जब (गुरु अमरदास जी) हरि के नाम में समाये हुये थे, तभी मृत्यु का दूत उनके चलने का संदेश लेकर आया और इस प्रकार से गुरु अमरदास जी ने संसार में ही (जीवित दशा में) अनंत, अटल एवं अतुलनीय ठाकुर (प्रभु) को अपनी भक्ति और श्रद्धा के द्वारा पा लिया ”।(१)

अब कवि सुंदर संसार से विदाई के समय पर गुरु अमरदास जी की प्रतिक्रिया की तुलना साधारण लोगों से करते हैं जो अपनी मृत्यु की तनिक सी संभावना से भयभीत हो जाते हैं और उससे दूर रहने के लिये भरसक प्रयास करते हैं । मृत्यु के बुलावे पर गुरु जी की क्या प्रतिक्रिया है इसका वर्णन सुंदर करते हैं :” हरि की इच्छा है कि गुरु अब हरि के पास जायें, यह जान कर गुरु को अच्छा लगा । (इस बुलावे को पाने पर) सच्चे गुरु ने विनती की और कहा कि “ (हे’ प्रभु), मेरी प्रार्थना है कि तुम मेरे सम्मान की रक्षा करो, हाँ, हे’ हरि, तुम कृपा करके अपने भक्तजनों के सम्मान को रखो (मेरी यही सहायता करो, हे’ हरि कि) अपने पवित्र नाम का वरदान दो, जो अंत में चलते समय मेरा एक सखा बने और यमदूतों तथा मृत्यु के भय का नाश कर सके ”। हरि ने सच्चे गुरु की इस विनती को सुना और प्रार्थना को स्वीकार किया। हरि ने अपनी कृपा करके सच्चे गुरु को अपने साथ मिलाया और बारम्बार गुरु जी को ‘धन्य हो’, ‘धन्य हो’ कह कर उनकी सराहना की ”।(२)

सुंदर आगे व्यक्त करते हैं कि किस प्रकार से गुरु जी ने अपने परिवार तथा शिष्यों को यह दुखद समाचार दिया । उन्होंने अपने पुत्रों, भाइयों तथा शिष्यों को बुलाकर कहा : “ सुनो, हे’ मेरे प्रिय शिष्यो, पुत्रो एंव भाइयो, मेरे हरि की इच्छा है कि अब मैं उसके पास जाऊँ, हरि की यह इच्छा गुरु को भली लग रही है और वह हरि, मेरी सहमति पाकर मुझे सराह रहे हैं । क्योंकि, केवल वही मनुष्य सच्चा भक्त एवं सच्चा गुरु है जिसके मन को हरि की भावना भाती है ।(ऐसे भक्तों के अँतरमन में) अनवरत रूप से दैवी संगीत अथवा आनंद से परिपूर्ण मधुर धुन का वादन होता रहता है और हरि स्वयं उस भक्त को अपने कंठ से लगाते हैं । हे’ मेरे पुत्रों , भाइयों तथा परिवारजनों (आप सब शांति से विचार करो) आप सब स्वयं ही निश्चित करो (कि मैं जो कर रहा हूँ वह सही है कि नहीं । आप सभी स्वयं इस निर्णय पर आओगे कि) प्रभु के द्वारा भेजे गये बुलावे को अस्वीकार नहीं किया जा सकता, अतः, गुरु को हरि के पास जाना ही है ”।(३)

सामान्यतः, जब कोई मृत्यु के अति निकट होता है तो उसका परिवार अति दुखी अथवा शोकाकुल होता है और मृत्यु के पश्चात स्थिति रुदन विलाप से भरी अति दुखद बन जाती है । अनेकों गृहों में मृतक की धन सम्पदा और सम्पत्ति के बँटवारे तथा उत्तराधिकार के विषय पर कलह होती है । इस श्लोक में सुंदर बताते हैं कि कितने विवेक तथा न्याययुक्त ढंग से गुरु जी ने इन सभी कार्यों को सम्पन्न किया और जिस प्रकार के निर्देश अपने परिवार को दिये, हमें भी उन्हीं का अनुसरण करना चाहिये । सुंदर कहते हैं : “ अपनी भावना के अनुसार सच्चे गुरु ने बैठ कर अपने परिवार को बुलवाया । (और कहा): “ मेरी मृत्यु के पश्चात किसी को भी रोना नहीं है, क्योंकि, रोना मुझे तनिक भी नहीं भाता। जब एक मित्र को सम्मान मिल रहा हो तो दूसरे मित्र को प्रसन्नता होती है तथा सम्मानित होने वाले मित्र को यह अति मनभावन लगता है। अब, हे’ मेरे पुत्रो तथा भाइयो, इस विषय पर विचार करो कि हरि सच्चे गुरु को सम्मान प्रदान कर रहे हैं (अतः, यदि आप सभी मेरे मित्र और शुभचिंतक हैं तो आप सभी को प्रसन्न होना चाहिये)”। और अब सच्चे गुरु (अमरदास जी) ने अपने प्रत्यक्ष ही अपने उत्तराधिकार के विषय पर स्वयं ही बैठ कर निर्णय लिया । उन्होंने रामदास जी को अगला गुरु नियुक्त किया तथा सभी शिष्यों, सम्बंधियों, पुत्र एवं भाइयों से रामदास जी के चरण स्पर्श करवाये ”।(४)

अपनी अंतिम क्रिया के सम्बन्ध में सच्चे गुरु (अमरदास जी) के अंतिम वचन तथा निर्देशों का वर्णन करते हुये सुंदर कहते हैं : " अंत में सच्चे गुरु ने कहा कि " मेरे मरणोपराँत केवल पवित्र एवं निर्वाण प्रभु का कीर्तन करना । पुराणों का पाठ करने की अपेक्षा, सुंदर केशधारी पंडितों (भक्त जनों) को आमंत्रित कर हरि की कथा रूपी पुराण को पढ़ना । हाँ, हरि की कथा को पढ़ो, हरि के नाम को श्रवण करो, हरि के रंग में रंगा हुया विवाण गुरु को भाता है । अनेकों रीति रिवाज जैसे, पिंड दान, पत्तलों में भोज, क्रिया सम्बंधी विधियाँ, दीपक जलाना अथवा अस्थि विसर्जन आदि करने की अपेक्षा, गुरु को संतों की संगति में बैठ हरि की महिमा का गायन अधिक भला लगता है । जो भी सच्चे गुरु ने कहा वह हरि को भा गया, अतः, वह महान पुरुष हरि से जाकर मिल गये । उन्होंने, रामदास सोढी को तिलक दिया (अगले गुरु की भूमिका के लिये उनका राज्याभिषेक किया) और उनको गुरु के शब्द (वाणी) रूपी सच्ची मोहर प्रदान कर दी ।(५)

गुरु अमरदास जी का अपने पुत्रों तथा अन्य सम्बंधियों की अपेक्षा अपने दामाद रामदास जी को अपनी अँतिम इच्छा के अनुसार उत्तराधिकारी घोषित करने पर सभी सिखों, अन्य शिष्यों और परिवार के सदस्यों की प्रतिक्रिया का वर्णन कवि सुंदर शब्द के अँत में करते हुए कहते हैं : " जो कुछ भी सच्चे गुरु ने कहा उसे सभी गुरु के शिष्यों ने उनकी इच्छा मान कर स्वीकार किया (और रामदास जी को अपना अगला गुरु मान लिया) । गुरु जी के सुपुत्र 'मोहरी' सर्वप्रथम आगे आये और उन्होंने रामदास जी के चरण स्पर्श किये, तत्पश्चात और भी सब सच्चे गुरु (रामदास जी) के चरणों में झुके जिनके अंदर गुरु (अमरदास जी) ने अपने (दिव्य प्रकाश) को स्थानांतरित कर दिया था। जिस किसी ने भी किसी ईर्ष्यावश (रामदास जी के) चरण स्पर्श नहीं किये उसे भी गुरु (अमरदास जी) ने आश्वस्त किया और सच्चे गुरु (रामदास जी को गुरु स्वीकार करवा कर उन) के चरणों में झुकने को कहा । प्रारब्ध में लिखे के अनुसार यह हरि और गुरु (अमरदास जी) की इच्छा थी कि रामदास जी को अगला गुरु बनने का वरदान और सम्मान प्राप्त हो । सुंदर कहते हैं, हे' संतों, सुनो, इस प्रकार से सारे जग अथवा लोगों से (गुरु अमरदास जी ने रामदास जी के) चरण स्पर्श करवाये (और उन्हें आगामी गुरु के रूप में स्वीकार करवाया)"।(६-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि इस संसार से चलने के लिये जब भी बुलावा आये हमें उसे प्रभु की इच्छा समझ कर मन में पूर्णतया स्वीकार करना चाहिये । दूसरी बात यह कि अपनी पूर्ण चेतना के रहते हुये हमें अपनी धन सम्पत्ति का वितरण सही रूप से अपनी संतानों तथा अन्य किसी योग्य पात्र जन के बीच कर देना चाहिये जिससे कि हमारी मृत्यु के पश्चात किसी प्रकार की कलह द्वेष और कानूनी झगड़ा ना हो। तीसरा बिंदु, जहाँ तक कि सिख समाज की बात है, उसे किसी भी प्रकार के अंधविश्वासों, जैसे कि, मृत शरीर को धरती पर रखना, दीपक जलाना, पिंड दान करना, पुराण एवं अन्य शास्त्रों के पाठ इत्यादि को सम्पन्न करने अथवा स्वीकृति देने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए । वास्तव में गुरु तथा हरि की भावना के अनुसार हमें पंडित अथवा पुरोहितों के द्वारा विभिन्न रीतियाँ और अनुष्ठान करवाने की अपेक्षा, संतजनों की संगति में बैठकर हरि की महिमा में कीर्तन भजन करना अधिक उपयुक्त एवं मान्य है ।

ਪੰਨਾ ੯੨੫

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਰੁਣ ਝੁਣੋ ਸਬਦੁ ਅਨਾਹਦੁ ਨਿਤ ਉਠਿ ਗਾਈਐ ਸੰਤਨ ਕੈ ॥
ਕਿਲਵਿਖ ਸਭਿ ਦੋਖ ਬਿਨਾਸਨੁ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਜਪੀਐ ਗੁਰ ਮੰਤਨ ਕੈ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਲੀਜੈ ਅਮਿਉ ਪੀਜੈ ਰੈਣਿ ਦਿਨਸੁ ਅਰਾਧੀਐ ॥
ਜੋਗ ਦਾਨ ਅਨੇਕ ਕਿਰਿਆ ਲਗਿ ਚਰਣ ਕਮਲਹ ਸਾਧੀਐ ॥
ਭਾਉ ਭਗਤਿ ਦਇਆਲ ਮੋਹਨ ਦੂਖ ਸਗਲੇ ਪਰਹਰੈ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਤਰੈ ਸਾਗਰੁ ਧਿਆਇ ਸੁਆਮੀ ਨਰਹਰੈ ॥੧॥

ਸੁਖ ਸਾਗਰ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿਮਰਣੁ ਭਗਤ ਗਾਵਹਿ ਗੁਣ ਤੇਰੇ ਰਾਮ ॥
ਅਨਦ ਮੰਗਲ ਗੁਰ ਚਰਣੀ ਲਾਗੇ ਪਾਏ ਸੂਖ ਘਨੇਰੇ ਰਾਮ ॥
ਸੁਖ ਨਿਧਾਨੁ ਮਿਲਿਆ ਦੂਖ ਹਰਿਆ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰਿ ਪ੍ਰਭਿ ਰਾਖਿਆ ॥
ਹਰਿ ਚਰਣ ਲਾਗਾ ਭ੍ਰਮੁ ਭਉ ਭਾਗਾ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਰਸਨਾ ਭਾਖਿਆ ॥
ਹਰਿ ਏਕੁ ਚਿਤਵੈ ਪ੍ਰਭੁ ਏਕੁ ਗਾਵੈ ਹਰਿ ਏਕੁ ਦ੍ਰਿਸਟੀ ਆਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੯੨੬

ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭਿ ਕਰੀ ਕਿਰਪਾ ਪੂਰਾ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪਾਇਆ ॥੨॥

ਮਿਲਿ ਰਹੀਐ ਪ੍ਰਭ ਸਾਧ ਜਨਾ ਮਿਲਿ ਹਰਿ ਕੀਰਤਨੁ ਸੁਨੀਐ ਰਾਮ ॥
ਦਇਆਲ ਪ੍ਰਭੂ ਦਾਮੋਦਰ ਮਾਧੋ ਅੰਤੁ ਨ ਪਾਈਐ ਗੁਨੀਐ ਰਾਮ ॥
ਦਇਆਲ ਦੁਖ ਹਰ ਸਰਣਿ ਦਾਤਾ ਸਗਲ ਦੋਖ ਨਿਵਾਰਣੋ ॥
ਮੋਹ ਸੋਗ ਵਿਕਾਰ ਬਿਖੜੇ ਜਪਤ ਨਾਮ ਉਧਾਰਣੋ ॥
ਸਭਿ ਜੀਅ ਤੇਰੇ ਪ੍ਰਭੂ ਮੇਰੇ ਕਰਿ ਕਿਰਪਾ ਸਭ ਰੇਣ ਥੀਵਾ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭ ਮਇਆ ਕੀਜੈ ਨਾਮੁ ਤੇਰਾ ਜਪਿ ਜੀਵਾ ॥੩॥

ਰਾਖਿ ਲੀਏ ਪ੍ਰਭਿ ਭਗਤ ਜਨਾ ਅਪਣੀ ਚਰਣੀ ਲਾਏ ਰਾਮ ॥
ਆਠ ਪਹਰ ਅਪਨਾ ਪ੍ਰਭੁ ਸਿਮਰਹ ਏਕੋ ਨਾਮੁ ਧਿਆਏ ਰਾਮ ॥
ਧਿਆਇ ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਤਰੇ ਭਵਜਲ ਰਹੇ ਆਵਣ ਜਾਣਾ ॥
ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਕਲਿਆਣ ਕੀਰਤਨੁ ਪ੍ਰਭ ਲਗਾ ਮੀਠਾ ਭਾਣਾ ॥
ਸਭ ਇਛ ਪੁੰਨੀ ਆਸ ਪੂਰੀ ਮਿਲੇ ਸਤਿਗੁਰ ਪੂਰਿਆ ॥
ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭਿ ਆਪਿ ਮੇਲੇ ਫਿਰਿ ਨਾਹੀ ਦੂਖ ਵਿਸੂਰਿਆ ॥੪॥੩॥

पृ-९२५

रामकली महला ५

रुण झुणो सबदु अनाहदु नित उठि गाईऐ सँतन कै ॥
किलविख सभि दोख बिनासनु हरि नामु जपीऐ गुर मँतन कै ॥
हरि नामु लीजै अमिउ पीजै रैणि दिनसु अराधीऐ ॥
जोग दान अनेक किरिआ लगि चरण कमलह साधीऐ ॥
भाउ भगति दइआल मोहन दूख सगले परहरै ॥
बिनवँति नानक तरै सागरु धिआइ सुआमी नरहरै ॥१॥

सुख सागर गोबिँद सिमरणु भगत गावहि गुण तेरे राम ॥
अनद मँगल गुर चरणी लागे पाए सूख घनेरे राम ॥
सुख निधानु मिलिआ दूख हरिआ क्रिपा करि प्रभि राखिआ ॥
हरि चरण लागा भ्रमु भउ भागा हरि नामु रसना भाखिआ ॥
हरि एकु चितवै प्रभु एकु गावै हरि एकु द्रिसटी आइआ॥

पृ-९२६

बिनवँति नानक प्रभि करी किरपा पूरा सतिगुरु पाइआ ॥२॥

मिलि रहीऐ प्रभ साध जना मिलि हरि कीरतनु सुनीऐ राम ॥
दइआल प्रभू दामोदर माधो अँतु न पाईऐ गुनीऐ राम ॥
दइआल दुख हर सरणि दाता सगल दोख निवारणो ॥
मोह सोग विकार बिखड़े जपत नाम उधारणो ॥
सभि जीअ तेरे प्रभू मेरे करि किरपा सभ रेण थीवा ॥
बिनवँति नानक प्रभ मइआ कीजै नामु तेरा जपि जीवा ॥३॥

राखि लीए प्रभि भगत जना अपणी चरणी लाए राम ॥
आठ पहर अपना प्रभु सिमरह एको नामु धिआए राम ॥
धिआइ सो प्रभु तरे भवजल रहे आवण जाणा ॥
सदा सुखु कलिआण कीरतनु प्रभ लगा मीठा भाणा ॥
सभ इछ पुँनी आस पूरी मिले सतिगुर पूरिआ ॥
बिनवँति नानक प्रभि आपि मेले फिरि नाही दूख विसूरिआ ॥४॥३॥

रामकली महला - ५

यहाँ गुरु जी अपनी इस धारणा को विस्तार से प्रकट करते हैं कि यदि हम अपनी सभी सांसारिक इच्छायों की ज्वालाओं को बुझाना तथा अपने पूर्व पापकर्मों को नाश करना चाहते हैं, तो हमें सदैव अपने गुरु की शरण में रहना चाहिये। वह यह भी बताते हैं कि एक बार उसकी शरण में जाकर अथवा मार्ग दर्शन लेने के पश्चात हमें वास्तव में क्या करने की आवश्यकता है।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), नित्य ही उठ कर हमें संतों की सँगति में बैठ अनवरत रूप से (प्रभु की महिमामयी) दिव्य वाणी का वर्षा की रुनझुन जैसे मधुर स्वर में गायन करना चाहिये। (हे' मेरे मित्रो), हरि के नाम का जाप करो, गुरु के द्वारा दिया गया यह ऐसा मंत्र है जो समस्त दुख दर्द एवं कष्टों का विनाशक है। हाँ, हरि नाम (रूपी मंत्र) का स्मरण करो, इस मधुर अँमृत रस को पियो और दिन तथा रात (प्रभु की) आराधना करो। इस प्रकार से प्रभु के (पवित्र नाम रूपी) चरण कमलों की साधना के द्वारा हम योग, दान तथा अन्य अनेक क्रियायों (आस्थाओं) के गुण प्राप्त करते हैं। (हे' मेरे मित्रो), दयालु और मनमोहक (प्रभु के प्रति) प्रेमपूर्ण भक्ति भावना रखने से हमारे समस्त दुखों का हरण हो जाता है। (संक्षेप में) नानक विनीत भाव से कहते हैं कि जो भी स्वामी (प्रभु) का ध्यान करता है (वह भवसागर से) पार उतर जाता है "।(१)

अब गुरु जी स्वयं प्रभु को सम्बोधित करते हैं और हमें बताते हैं कि किस प्रकार प्रभु ने कृपा करके गुरु की संगति का आशीर्वाद प्रदान

किया और फिर यह भी प्रकट करते हैं कि गुरु के द्वारा कैसे उन्हें प्रभु की प्राप्ति हुई । गुरु जी प्रभु से कहते हैं :" हे' सुखों अथवा आनंद के सागर, सृष्टि के स्वामी गोविंद, हे' राम, भक्त जन तेरे नाम का सिमरन करते हैं और तेरे गुणों का गायन करते हैं । गुरु के चरणों से लग कर (उसके पवित्र आदेशों का पालन कर) वह सब प्रकार के आनंद, मँगल और अनेक सुख प्राप्त करते हैं । जिन्होंने भी सुखों का भंडार पा लिया है उनके दुखों का हरण हो गया है और प्रभु ने अपनी कृपा से उनकी रक्षा की है। जिसने भी हरि के चरणों में शरण लेकर अपनी रसना से हरि के नाम का उच्चारण किया उसी के समस्त भ्रम एवं भय पलायन कर गये । ऐसा मनुष्य केवल एक हरि को हृदय में प्रेम के साथ स्मरण करता है, एक प्रभु के ही गुण गाता है और उसे एक ही हरि (चारों ओर) दिखाई देता है । नानक की यह विनती है कि प्रभु ने जिस पर अति कृपा की, उसने पूर्ण सच्चे गुरु को पा लिया (अतः ऐसा मनुष्य एक ही प्रभु को सभी जगह व्याप्त देखता है)"।(२)

अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर गुरु जी हमें परामर्श देते हैं और कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), हमें प्रभु के भक्तों तथा संतजनों के साथ मिलकर रहना चाहिये और उनके साथ बैठ कर हरि (के महिमामयी) कीर्तन का श्रवण करना चाहिये । वह दयालु प्रभु, सृष्टि के पालनहार (इतने महान हैं कि हम) उस राम के गुणों का अंत नहीं पा सकते । वह दयालु (प्रभु) कृपा का रूप है, दुख हरता है, शरण का दाता है, सभी दोषों का निवारक है । जो भी लोग उस उद्धारकर्ता (हरि) का नाम जपते हैं, उन्हें (सांसारिक) मोहमाया, शोक और विकट विकारों से (वह प्रभु) बचाते हैं ।(इसलिये गुरु जी का कथन है) : हे' मेरे प्रभु, सभी जीव तेरे हैं, अपनी कृपा करो कि मैं (स्वयं को सबसे दीन समझ सकूँ और इस प्रकार) सभी की चरण धूलि बन कर रहूँ । नानक की विनती है , हे' प्रभु , दया करो कि मैं तुम्हारे नाम को जपते रहकर ही जीवित रहूँ "।(३)

अंत में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), अपने चरणों में (नाम के ध्यान में) लगा कर प्रभु ने अपने भक्त जनों की रक्षा की और उन सभी ने आठों पहर प्रभु का सिमरन करके उस एक ही राम नाम का ध्यान किया । जो उस प्रभु का ध्यान करते हैं वह भवसागर को तैर कर पार हो जाते हैं और जन्म मरण का आना जाना नहीं रहता । प्रभु की महिमा में कीर्तन गायन करते समय लोग सदा सुख तथा कल्याण का अनुभव करते हैं और प्रभु की इच्छा उन्हें मधुर लगती है (प्रभु जो करते हैं उसे वह स्वीकार करते हैं) । पूर्ण सच्चे गुरु से मिलन हो जाने पर उनकी सभी इच्छाएँ और आशायें पूर्ण अथवा शांत हो गयीं ।(संक्षेप में) नानक की विनती है कि जब प्रभु किसी को स्वयं अपने साथ मिला लेते हैं तब फिर वह मनुष्य दुखदर्द से नहीं रोता है "।(४-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने समस्त मायामोह को त्याग कर और सभी दुखदर्दों कष्टों और चिंताओं से मुक्ति पाकर जीवन में शांति एवं सहजता का आनंद पाना चाहते हैं तो हमें सच्चे गुरु की शरण में जाकर प्रभु के भक्तजनों की संगति में प्रभु नाम का ध्यान और उसके यश को पूर्ण श्रद्धा एवं निष्ठा के साथ कीर्तन रूप में गायन करना अथवा उस मधुर शांतिमय तथा दिव्य संगीत का श्रवण करना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੯੨੭	**पृ- ९२७**
ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੫ ਰੁਤੀ ਸਲੋਕੁ **ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥**	**रामकली महला ५॥ रुति सलोकु** **१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਸਲੋਕ ॥	**सलोक ॥**
ਉਦਮੁ ਅਗਮੁ ਅਗੋਚਰੋ ਚਰਨ ਕਮਲ ਨਮਸਕਾਰ ॥ ਕਥਨੀ ਸਾ ਤੁਧੁ ਭਾਵਸੀ ਨਾਨਕ ਨਾਮ ਅਧਾਰ ॥੧॥	उदमु अगमु अगोचरो चरन कमल नमसकार ॥ कथनी सा तुधु भावसी नानक नाम अधार ॥१॥
ਸੰਤ ਸਰਣਿ ਸਾਜਨ ਪਰਹੁ ਸੁਆਮੀ ਸਿਮਰਿ ਅਨੰਤ ॥ ਸੂਕੇ ਤੇ ਹਰਿਆ ਥੀਆ ਨਾਨਕ ਜਪਿ ਭਗਵੰਤ ॥੨॥	सँत सरणि साजन परहु सुआमी सिमरि अनँत ॥ सूके ते हरिआ थीआ नानक जपि भगवँत ॥२॥
ਛੰਤੁ ॥	**छँतु ॥**
ਰੁਤਿ ਸਰਸ ਬਸੰਤ ਮਾਹ ਚੇਤੁ ਵੈਸਾਖ ਸੁਖ ਮਾਸੁ ਜੀਉ ॥ ਹਰਿ ਜੀਉ ਨਾਹੁ ਮਿਲਿਆ ਮਉਲਿਆ ਮਨੁ ਤਨੁ ਸਾਸੁ ਜੀਉ ॥ ਘਰਿ ਨਾਹੁ ਨਿਹਚਲੁ ਅਨਦੁ ਸਖੀਏ ਚਰਨ ਕਮਲ ਪ੍ਰਫੁਲਿਆ ॥	रुति सरस बसँत माह चेतु वैसाख सुख मासु जीउ ॥ हरि जीउ नाहु मिलिआ मउलिआ मनु तनु सासु जीउ ॥ घरि नाहु निहचलु अनदु सखीए चरन कमल प्रफुलिआ ॥
ਪੰਨਾ ੯੨੮	**पृ- ९२८**
ਸੁੰਦਰੁ ਸੁਘੜੁ ਸੁਜਾਣੁ ਬੇਤਾ ਗੁਣ ਗੋਵਿੰਦ ਅਮੁਲਿਆ ॥ ਵਡਭਾਗਿ ਪਾਇਆ ਦੁਖੁ ਗਵਾਇਆ ਭਈ ਪੂਰਨ ਆਸ ਜੀਉ ॥ ਬਿਨਵੰਤਿ ਨਾਨਕ ਸਰਣਿ ਤੇਰੀ ਮਿਟੀ ਜਮ ਕੀ ਤ੍ਰਾਸ ਜੀਉ ॥੨॥	सुँदरु सुघड़ु सुजाणु बेता गुण गोविँद अमुलिआ ॥ वडभागि पाइआ दुखु गवाइआ भई पूरन आस जीउ ॥ बिनवँति नानक सरणि तेरी मिटी जम की त्रास जीउ ॥२॥

रामकली महला - ५ रुती सलोक (ऋतुयों के सलोक)
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

अनेकों लोगों की यह एक सामान्य आस्था है कि कुछ ऋतुएँ, माह तथा दिवस अधिक शुभ होते हैं और कई कवियों ने अपनी अनेकों रचनायें ऐसे दिनों, माह अथवा ऋतुयों के आधार पर रची हैं ।इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि हम किस प्रकार से समस्त ऋतुयों, माह और दिनों को मंगलमयी और सफल बना सकते हैं ।

सलोक -

इस श्लोक में गुरु जी प्रभु को विनम्रता से सम्बोधित करते हुये कहते हैं : “ (हे’ प्रभु), तुम अपने प्रयास के प्रति मूर्तिमान हो, अगम्य हो, अगोचर हो ; मेरा तुम्हारे चरण कमलों में नमस्कार है । (हे’ प्रभु मुझे आशीर्वाद दो कि मैं) वही कहूँ जो तुम्हारे मन को भाये (क्योंकि) नानक को प्रभु नाम का आधार है ”।(१)

हमें भी परामर्श देते हुये वह कहते हैं : “ हे’ मेरे सज्जन मित्रो, सदा सँतो (गुरु) की शरण में रहो और अनंत स्वामी (प्रभु) का सिमरन करो । नानक कहते हैं, ईश्वर के नाम का जाप करने से सूखे वृक्ष (जैसे दुखी जीव) भी हरे (सुखी एवं प्रसन्न) हो जाते हैं ”।(२)

छँत -

अब गुरु जी कालक्रम के अनुसार ऋतुयों पर बात करते हैं । वह बसंत ऋतु से आरंभ करते हैं जिसका आगमन चैत अथवा बैसाख के माह में होता है ।

वह कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), बसंत ऋतु सरस एवं सुहावनी है और चैत बैसाख के मास उनके लिये सुखदायक हैं जिन्होंने हरि को अपना लिया और उनका मन, तन तथा प्रत्येक श्वास खिल उठा । हे’ प्रिय मित्र, जिसके घर अथवा हृदय में उस निश्चल प्रभु के चरण कमल आ बसते हैं वह आनंद से प्रफुल्लित हो उठता है । हमारा गोविंद सुंदर है, सुघड़ और सुजान है, अति गुणवान एवं अमूल्य है ।अति सौभाग्य से जिस किसी ने भी (उस प्रभु को) पाया, उसके दुख दूर हो गये और समस्त आशायें पूर्ण हुयीं । नानक विनम्र भाव से कहते हैं , हे’ प्रभु तेरी शरण में आने के पश्चात (मेरे मन में से) यमराज का भय मिट गया है ”।(२)

इस शब्द का संदेश यह है कि जब हम प्रभु की शरण में जाकर उसके नाम का ध्यान करते हैं तब वह हमारे हृदय में आकर बस जाते हैं और हम अपने भय तथा भ्रमों से मुक्त हो कर स्वयं को इतना प्रफुल्लित और प्रसन्न पाते हैं जैसे कि हमारे चारों ओर बसंत ऋतु छा गयी हो ।

ਪੰਨਾ ੯੨੯

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੧ ਦਖਣੀ ਓਅੰਕਾਰੁ
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਓਅੰਕਾਰਿ ਬ੍ਰਹਮਾ ਉਤਪਤਿ ॥
ਓਅੰਕਾਰੁ ਕੀਆ ਜਿਨਿ ਚਿਤਿ ॥
ਓਅੰਕਾਰਿ ਸੈਲ ਜੁਗ ਭਏ ॥
ਓਅੰਕਾਰਿ ਬੇਦ ਨਿਰਮਏ ॥

ਪੰਨਾ ੯੩੦

ਓਅੰਕਾਰਿ ਸਬਦਿ ਉਧਰੇ ॥
ਓਅੰਕਾਰਿ ਗੁਰਮੁਖਿ ਤਰੇ ॥
ਓਨਮ ਅਖਰ ਸੁਣਹੁ ਬੀਚਾਰੁ ॥
ਓਨਮ ਅਖਰੁ ਤ੍ਰਿਭਵਣ ਸਾਰੁ ॥੧॥

ਸੁਣਿ ਪਾਡੇ ਕਿਆ ਲਿਖਹੁ ਜੰਜਾਲਾ ॥
ਲਿਖੁ ਰਾਮ ਨਾਮ ਗੁਰਮੁਖਿ ਗੋਪਾਲਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਸੈ ਸਭੁ ਜਗੁ ਸਹਜਿ ਉਪਾਇਆ ਤੀਨਿ ਭਵਨ ਇਕ ਜੋਤੀ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਵਸਤੁ ਪਰਾਪਤਿ ਹੋਵੈ ਚੁਣਿ ਲੈ ਮਾਣਕ ਮੋਤੀ ॥
ਸਮਝੈ ਸੂਝੈ ਪੜਿ ਪੜਿ ਬੂਝੈ ਅੰਤਿ ਨਿਰੰਤਰਿ ਸਾਚਾ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਦੇਖੈ ਸਾਚੁ ਸਮਾਲੇ ਬਿਨੁ ਸਾਚੇ ਜਗੁ ਕਾਚਾ ॥੨॥

ਧਧੈ ਧਰਮੁ ਧਰੇ ਧਰਮਾ ਪੁਰਿ ਗੁਣਕਾਰੀ ਮਨੁ ਧੀਰਾ ॥
ਧਧੈ ਧੂਲਿ ਪੜੈ ਮੁਖਿ ਮਸਤਕਿ ਕੰਚਨ ਭਏ ਮਨੂਰਾ ॥
ਧਨੁ ਧਰਣੀਧਰੁ ਆਪਿ ਅਜੋਨੀ ਤੋਲਿ ਬੋਲਿ ਸਚੁ ਪੂਰਾ ॥
ਕਰਤੇ ਕੀ ਮਿਤਿ ਕਰਤਾ ਜਾਣੈ ਕੈ ਜਾਣੈ ਗੁਰੁ ਸੂਰਾ ॥੩॥

ਙਿਆਨੁ ਗਵਾਇਆ ਦੂਜਾ ਭਾਇਆ ਗਰਬਿ ਗਲੇ ਬਿਖੁ ਖਾਇਆ ॥
ਗੁਰ ਰਸੁ ਗੀਤ ਬਾਦ ਨਹੀ ਭਾਵੈ ਸੁਣੀਐ ਗਹਿਰ ਗੰਭੀਰੁ ਗਵਾਇਆ ॥
ਗੁਰਿ ਸਚੁ ਕਹਿਆ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਲਹਿਆ ਮਨਿ ਤਨਿ ਸਾਚੁ ਸੁਖਾਇਆ ॥
ਆਪੇ ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਪੇ ਦੇਵੈ ਆਪੇ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪੀਆਇਆ ॥੪॥

पृ-९२९

रामकली महला १ दखणी ओअँकारु
१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

ओअँकारि ब्रहमा उतपति ॥
ओअँकारु कीआ जिनि चिति ॥
ओअँकारि सैल जुग भए ॥
ओअँकारि बेद निरमए ॥

पृ-९३०

ओअँकारि सबदि उधरे ॥
ओअँकारि गुरमुखि तरे ॥
ओनम अखर सुणहु बीचारु ॥
ओनम अखरु त्रिभवण सारु ॥१॥

सुणि पाडे किआ लिखहु जँजाला ॥
लिखु राम नाम गुरमुखि गोपाला ॥१॥रहाउ॥

ससै सभु जगु सहजि उपाइआ तीनि भवन इक जोती ॥
गुरमुखि वसतु परापति होवै चुणि लै माणक मोती ॥
समझै सूझै पड़ि पड़ि बूझै अँति निरँतरि साचा ॥
गुरमुखि देखै साचु समाले बिनु साचे जगु काचा ॥२॥

धधै धरमु धरे धरमा पुरि गुणकारी मनु धीरा ॥
धधै धूलि पड़ै मुखि मसतकि कँचन भए मनूरा ॥
धनु धरणीधरु आपि अजोनी तोलि बोलि सचु पूरा ॥
करते की मिति करता जाणै कै जाणै गुरु सूरा ॥३॥

ङिआनु गवाइआ दूजा भाइआ गरबि गले बिखु खाइआ ॥
गुर रसु गीत बाद नही भावै सुणीऐ गहिर गँभीरु गवाइआ ॥
गुरि सचु कहिआ अँमृतु लहिआ मनि तनि साचु सुखाइआ ॥
आपे गुरमुखि आपे देवै आपे अँमृतु पीआइआ ॥४॥

रामकली महला - १ दक्षिणी ओंकार
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस शब्द के शीर्षक एवं संरचना की पृष्ठभूमि पर कई विभिन्न मत प्रकट किए गये हैं। एक मत के अनुसार गुरु नानक देव जी ने इसका उच्चारण मध्य भारत में स्थित 'ओंकार मंदिर ' के स्थानीय पंडितों को सत्य रूप से दैवी बुद्धि प्रदान करने का प्रयास करते समय किया था। हर जी की जन्म साखी के अनुसार गुरु नानक देव जी ने इस स्त्रोत का उच्चारण एक ऐसे पंडित के साथ वार्तालाप के समय किया जो दक्षिण भारत के सिंहल द्वीप के राजा शिव नाभि के बालकों को पढ़ाता था, अतः, इस स्त्रोत का शीर्षक 'दक्षिणी ओंकार' रखा गया। किन्तु, ज्ञानी हरबंस सिंह का कथन है कि इस शीर्षक में 'दक्षिणी' शब्द का प्रयोग किसी स्थान से सम्बंधित ना होकर एक राग के सहायक राग के रूप में है, उदाहरण के लिये जैसे कि, 'बिलावल दक्षिणी' अथवा 'मारू दक्षिणी'। जहाँ तक 'ओंकार' (सर्वव्यापी प्रभु) शब्द की बात है, तो वह इस प्रकार से है जैसे कि कोई भी पंडित अपने शिष्यों को कोई भी वर्ण पढ़ाने अथवा किसी भी अभ्यास से पूर्व सदा 'ॐनमो' से प्रारंभ करवाता था, परन्तु, वास्तविक रूप से वह उन्हें प्रभु के विषय पर कुछ भी नहीं सिखाता पढ़ाता था। इस स्त्रोत में गुरु जी उस पँडित और हमें भी प्रभु के लिए प्रयोग किये जाने वाले शब्दों पर विचार करने का परामर्श देते हैं और हमारे हृदय में उनके अर्थ एवं भाव स्थिर करते हैं।

पंडित को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' पंडित), उसी एक सर्वव्यापी प्रभु (ओंकार) से ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई और यह वही प्रभु हैं जिनको (ब्रह्मा जी) ने भी अपने मन में प्रेम से रखा। उसी ओंकार के द्वारा ही पर्वतों तथा युगों की स्थापना हुई। उसी सृजनकर्ता ने (धार्मिक ग्रंथों) वेदों का निर्माण किया। उसी दैवी शब्द के विचार विवेक के द्वारा ही प्राणियों का (सांसारिक कष्टों से) उद्धार हुया। हाँ,

उसी ओंकार का ध्यान करने वाले गुरु के अनुयायी (भवसागर से) पार उतरे । हे' पंडित, 'ओ नम', अथवा, 'ॐनमः' के शब्दों के उपर होने वाले सम्वाद अथवा विचारों को सुनो, यह 'ओ नम' शब्द तीनों लोकों का सार है "।(१)

वर्णमाला के विभिन्न वर्णों पर वार्तालाप आरंभ करने से पूर्व गुरु जी कहते हैं : " हे' पंडित, सुनो, तुम (सांसारिक) जँजालों पर क्या लिख रहे हो । गुरु के मार्ग दर्शन के अनुसार सृष्टि के पालनहार राम का नाम लिखो "।(१-विराम)

अब गुरु जी अपने प्रत्येक श्लोक को वर्णमाला के विभिन्न वर्णों से प्रारंभ करते हुये दैवी उपदेश देते हैं जो उनके समय में काव्य रचना की एक शैली थी । उनकी व्याख्या इस प्रकार से है : 'स' वर्ण :- समस्त सृष्टि की (इस प्रभु) ने सहज रूप में उत्पत्ति की और तीनों लोकों में एक ही दैवी ज्योति व्याप्त है । गुरु की कृपा के द्वारा (प्रभु नाम की) वस्तु प्राप्त होती है और (दैवी, प्रभु नाम रूपी) माणक और मोतियों को कोई चुन लेता है ।(वह मनुष्य गुरु के शब्द का अर्थ) बारम्बार पढ़ता है और उस पर सोचता विचारता है और अंत में समझ जाता है कि एक अनंत सच्चा प्रभु ही सभी में निरंतर विद्यमान है । गुरु की शिक्षा का अनुसरण करने वाला देखता है और सच्चे (प्रभु) को (सभी के अंदर) स्वीकार करता है, तब उस मनुष्य को अनंत प्रभु के अतिरिक्त सारा जग कच्चा अथवा नाश्वान प्रतीत होता है "।(२)

'ध' वर्ण :-

(धार्मिक वृत्ति के मनुष्यों की संगति में जो भी रहता है) वह मानो जैसे धर्मपुरी में धर्म का पालन कर मन में धर्म के गुणों को धारण करके सदैव धैर्य में रहता है । जब मुख एवं मस्तक पर (गुरु के चरणों की) धूल पड़ती है तो (मन गुरु के संदेश से इतना पवित्र हो जाता है जैसे कि) वह मनुष्य कंचन बन गया है । अतः, वह धरती का स्वामी, जो जन्मों से मुक्त है, परन्तु, अपनी आज्ञा एवं शक्ति में पूर्ण रूप से दक्ष है, धन्य है । यह तो केवल स्वयं सृजनकर्ता अथवा, शक्तिशाली गुरु ही जानते हैं कि प्रभु की शक्ति एवं इच्छा की सीमा क्या है (प्रभु की शक्ति को और कोई नहीं जानता)"।(३)

'ङ' वर्ण :-

जो मनुष्य दूसरों (प्रभु के अतिरिक्त, सांसारिक धन सम्पदा एवं सम्बंधियों) से अधिक प्रेम करता है (वह सच्चे ज्ञान को छोड़) अपने गर्व में इस प्रकार से गल जाता है जैसे कि उसने विष खाया हो । ऐसे मानव को (सांसारिक मोहमाया के प्रेम में व्यस्त रहते हुये) गुरु के मीठे रसयुक्त सम्वाद एवं संगीत को श्रवण करना नहीं भाता और वह गहन तथा गंभीर (प्रभु) के साथ अपना नाता गँवा लेता है । परन्तु, गुरु के सत्य वचनों के द्वारा जिसने भी अनंत सच्चे (प्रभु नाम रूपी) अँमृत का लाभ लिया उसके मन और तन को वह सच्चा नाम अति सुखदायी प्रतीत हुया, (परन्तु, इस प्रकार का अनुभव प्रभु की कृपा से ही होता है) । गुरु के द्वारा ही वह (प्रभु) स्वयं अपने नाम के ध्यान का आशीर्वाद देता है और मनुष्य को (अपने नाम रूपी) अँमृत रस का पान करवाता है "।(४)

उपरोक्त चारों श्लोकों के संदेश इस प्रकार से हैं कि (१) यह एक ही प्रभु है, जिसने सृष्टि का सृजन किया है ।(२) जो मनुष्य गुरु के शब्द (वाणी) को सुनता है वह इस तथ्य को देखता और समझता है कि अविनाशी प्रभु सर्वव्यापी हैं । (३) वह मनुष्य जो धर्मपरायण एवं सदाचारी व्यक्तियों की संगति में रहता है और पवित्र वाणी का श्रवण करता है इतना गुणी हो जाता है, जैसे कि माटी कंचन बन गयी हो । (४) जो मनुष्य प्रभु की अपेक्षा, सांसारिक विषयों के प्रेम में लिप्त होता है वह अहम में ही नष्ट हो जाता है । परन्तु, जो मनुष्य गुरु की वाणी में विश्वास रखता है वह प्रभु नाम रूपी अँमृत रस का पान करता है । उस गहन गंभीर प्रभु की सीमा केवल वही प्रभु, अथवा, शक्तिमान गुरु ही जान सकते हैं और कोई दूसरा नहीं ।

ਪੰਨਾ ੯੩੧

ਗੁਣ ਵੀਚਾਰੇ ਗਿਆਨੀ ਸੋਇ ॥
ਗੁਣ ਮਹਿ ਗਿਆਨੁ ਪਰਾਪਤਿ ਹੋਇ ॥
ਗੁਣਦਾਤਾ ਵਿਰਲਾ ਸੰਸਾਰਿ ॥
ਸਾਚੀ ਕਰਣੀ ਗੁਰ ਵੀਚਾਰਿ ॥
ਅਗਮਅਗੋਚਰੁ ਕੀਮਤਿ ਨਹੀ ਪਾਇ ॥

ਪੰਨਾ ੯੩੨

ਤਾ ਮਿਲੀਐ ਜਾ ਲਏ ਮਿਲਾਇ ॥
ਗੁਣਵੰਤੀ ਗੁਣ ਸਾਰੇ ਨੀਤ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮਤਿ ਮਿਲੀਐ ਮੀਤ ॥੧੭॥

ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਕਾਇਆ ਕਉ ਗਾਲੈ ॥
ਜਿਉ ਕੰਚਨ ਸੋਹਾਗਾ ਢਾਲੈ ॥
ਕਸਿ ਕਸਵਟੀ ਸਹੈ ਸੁ ਤਾਉ ॥
ਨਦਰਿ ਸਰਾਫ ਵੰਨੀ ਸਚੜਾਉ ॥
ਜਗਤੁ ਪਸੂ ਅਹੰ ਕਾਲੁ ਕਸਾਈ ॥
ਕਰਿ ਕਰਤੈ ਕਰਣੀ ਕਰਿ ਪਾਈ ॥
ਜਿਨਿ ਕੀਤੀ ਤਿਨਿ ਕੀਮਤਿ ਪਾਈ ॥
ਹੋਰ ਕਿਆ ਕਹੀਐ ਕਿਛੁ ਕਹਣੁ ਨ ਜਾਈ ॥੧੮॥

पृ-९३१

गुण वीचारे गिआनी सोइ ॥
गुण महि गिआनु परापति होइ ॥
गुणदाता विरला सँसारि ॥
साची करणी गुर वीचारि ॥
अगमअगोचरु कीमति नही पाइ ॥

पृ-९३२

ता मिलीऐ जा लए मिलाइ ॥
गुणवँती गुण सारे नीत ॥
नानक गुरमति मिलीऐ मीत ॥१७॥

कामु क्रोधु काइआ कउ गालै ॥
जिउ कँचन सोहागा ढालै ॥
कसि कसवटी सहै सु ताउ ॥
नदरि सराफ वँनी सचड़ाउ ॥
जगतु पसू अँह कालु कसाई ॥
करि करतै करणी करि पाई ॥
जिनि कीती तिनि कीमति पाई ॥
होर किआ कहीऐ किछु कहणु न जाई ॥१८॥

रामकली महला - १ दक्षिणी ओंकार (श्लोक - १७ और १८)
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इन श्लोकों में गुरु जी यह व्यक्त करते हैं कि प्रभु के नाम और उस पर प्रेमपूर्वक श्रद्धा रखे बिना, क्यों, कोई भी मोक्ष नहीं प्राप्त कर सकता ।

अपने प्रसिद्ध उद्धरणों में से एक का उच्चारण करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' पंडित) वही (मनुष्य ही केवल दैवी रूप से) ज्ञानवान है जो प्रभु के गुणों पर विचार करता है । क्योंकि, प्रभु के गुणों पर विचार करने से ही किसी को (दैवी) ज्ञान प्राप्त होता है । परन्तु, इस संसार में कोई बिरला ही मनुष्य (प्रभु के) गुणों के विषय पर हमें शिक्षा देता है । क्योंकि, प्रभु के गुणों पर विचार करने का सच्चा एवं पवित्र कार्य केवल गुरु के उपदेश के द्वारा ही किया जा सकता है ।

उस अगम्य अगोचर (प्रभु) का मूल्य अथवा थाह हमारी बुद्धि से नहीं आँका जा सकता है । हम केवल तभी उससे मिल पाते हैं जब वह (स्वयं हमें अपने से) मिलाता है । अत:, समस्त गुणों से युक्त एक मानव आत्मा नित्य उस (प्रभु) की श्रेष्ठतायों पर विचार करती है । हे' नानक, गुरु के निर्देशों के अनुसरण से ही हम अपने सच्चे मीत (प्रभु) से मिल पाते हैं "।(१७)

उपरोक्त श्लोक में गुरु जी ने हमसे कहा कि कौन सा मनुष्य दैवी रूप से बुद्धिमान एवं गुणी है । अब इस अगले श्लोक में वह हमारे कुछ निम्नतम दोषों के विषय पर सतर्क करते हैं, जो कि हमें शारीरिक तथा आत्मिक दोनों प्रकार से नष्ट कर सकते हैं । वह यहाँ दो उपयुक्त दृष्टान्तों के द्वारा बताते हैं कि क्यों कुछ गुणी और सदाचारी लोगों को भी अनेकों कष्ट झेलने पड़ते हैं तथा संसार जन्म मरण के फेरों में पड़ा रहता है ।

गुरु जी एक प्रसिद्ध मुहावरे के साथ आरंभ करते हुये कहते हैं : "(हे' पंडित), जिस प्रकार से सोहागे का उपयोग कंचन को पिघलाने के लिये किया जाता है, उसी प्रकार काम एवं क्रोध शरीर को गला देते हैं । (कंचन) पहले अग्नि के ताप को सहन करता है और फिर कसौटी पर परखा जाता है, उसके पश्चात ही जौहरी की दृष्टि में पूर्ण रूप से शुद्ध सिद्ध हो पाता है (उसी प्रकार से जब एक सदाचारी मनुष्य अपने गुणों का त्याग किये बिना जीवन की कठिनाइयों को पार कर लेता है तभी वह प्रभु की दृष्टि में शुद्ध कँचन के समान स्वीकृत होता है) । परन्तु, संसार के शेष लोग पशु की भाँति हैं जिनका अहंकार उनके लिये एक कसाई की भाँति सिद्ध होता है (क्योंकि, अहंकार उन्हें बारम्बार जन्म मरण में डाल कर कसाई की भाँति कष्ट देता है । वास्तविकता यह है कि, प्रभु ने) सृष्टि को रचने के पश्चात, कर्मों को जीवों के हाथों में सौंप दिया (अर्थात, जैसा कर्म कोई जीव करेगा वैसा ही फल वह भुगतेगा । किन्तु, प्रभु) जिसने सृष्टि का यह (क्रम एवं प्रबंध) रचा है वही केवल इसका (न्यायोचित कारण तथा) मूल्य बता सकता है । और हम क्या कह सकते हैं, (हमारे पास) कुछ और कहने को नहीं है "।(१८)

उपरोक्त दोनों श्लोकों का संदेश यह है कि केवल वही व्यक्ति वास्तव में दैवी रूप से बुद्धिमान मनुष्य है जो नित्य ही प्रभु के गुण तथा महानता पर विचार करता है । दूसरे, हमें यह समझ लेना चाहिये कि काम तथा क्रोध हमारे घोर शत्रु हैं और जहाँ तक संभव हो सके हमें इनसे बचना चाहिये।

ਪੰਨਾ ੯੩੩

ਢੰਢੋਲਤ ਢੂਢਤ ਹਉ ਫਿਰੀ ਢਹਿ ਢਹਿ ਪਵਨਿ ਕਰਾਰਿ ॥
ਭਾਰੇ ਢਹਤੇ ਢਹਿ ਪਏ ਹਉਲੇ ਨਿਕਸੇ ਪਾਰਿ ॥
ਅਮਰ ਅਜਾਚੀ ਹਰਿ ਮਿਲੇ ਤਿਨ ਕੈ ਹਉ ਬਲਿ ਜਾਉ ॥
ਤਿਨ ਕੀ ਧੂੜਿ ਅਘੁਲੀਐ ਸੰਗਤਿ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਉ ॥
ਮਨੁ ਦੀਆ ਗੁਰਿ ਆਪਣੈ ਪਾਇਆ ਨਿਰਮਲ ਨਾਉ ॥

पृ-९३३

ढँढोलत ढूढत हउ फिरी ढहि ढहि पवनि करारि ॥
भारे ढहते ढहि पए हउले निकसे पारि ॥
अमर अजाची हरि मिले तिन कै हउ बलि जाउ ॥
तिन की धूड़ि अघुलीऐ सँगति मेलि मिलाउ ॥
मनु दीआ गुरि आपणै पाइआ निरमल नाउ ॥

ਪੰਨਾ ੯੩੪

ਜਿਨਿ ਨਾਮੁ ਦੀਆ ਤਿਸੁ ਸੇਵਸਾ ਤਿਸੁ ਬਲਿਹਾਰੈ ਜਾਉ ॥
ਜੋ ਉਸਾਰੇ ਸੋ ਢਾਹਸੀ ਤਿਸੁ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਕੋਇ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਤਿਸੁ ਸੰਮ੍ਹਲਾ ਤਾ ਤਨਿ ਦੂਖੁ ਨ ਹੋਇ ॥੩੧॥

पृ-९३४

जिनि नामु दीआ तिसु सेवसा तिसु बलिहारै जाउ ॥
जो उसारे सो ढाहसी तिसु बिनु अवरु न कोइ ॥
गुर परसादी तिसु सँमला ता तनि दूखु न होइ ॥३१॥

रामकली महला - १ दक्षिणी ओंकार (श्लोक - ३१)
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस श्लोक में गुरु जी हमें एक नदी के तट की कल्पना करने को कहते हैं, जहाँ पर अनेक लोग खड़े हैं और उनमें से कुछ अपने उपर भारी बोझ (अपने पापकर्मों का) उठाये हुये हैं, पर अन्य कई लोग बिना किसी बोझ के खड़े हैं (क्योंकि, उनका अन्तःकरण निर्मल है)।

गुरु जी स्वयं की कल्पना एक वधू के रूप में करते हैं जो उसी तट पर कुछ ढूँढती हुयी सी घूम रही है और देखती है कि वहाँ क्या हो रहा है, वह कहते हैं : " (जीवन रूपी नदी में अपने प्रभु) की ढूँढ भाल में मैं घूमती फिर रही थी (और मैंने देखा कि लोग) नदी के ढालू तट पर बार बार फिसल कर गिर रहे हैं । मैंने पाया कि जो (अपने पापकर्मों के बोझ से) लदे हुए हैं , वह अंत में गिरते पड़ते उठ नहीं सके और डूब गये, परन्तु, जो हल्के (बिना बोझ के, अथवा पवित्र एवं निर्मल मन वाले) थे, वह नदी पार करके दूसरे तट पर चले गये जहाँ पर उनका मिलाप अमर, अपरिमित और अथाह हरि के साथ हुया, मैं उन पर बलिहारी हूँ । (मेरी प्रभु से प्रार्थना है कि) वह मुझे ऐसे ही लोगों की संगति में रखे, क्योंकि, उनके चरणों की धूल (अर्थात्, उनके मार्ग दर्शन के द्वारा सांसारिक मोहमाया के बँधनों) से हमें मुक्ति प्राप्त होती है ।इसीलिये, मैंने अपना मन अपने गुरु को सौंप दिया है (जैसा गुरु मुझसे करवाना चाहें मैं केवल वही करूँ, ना कि मैं अपने मन के कहे को मानूँ । ऐसा करने से) मैंने प्रभु के पवित्र नाम को प्राप्त किया है (जो अति मूल्यवान है, गुरु) जिसने मुझे प्रभुनाम का वरदान दिया, मैं उसकी (जीवन भर) सेवा करूँगा, मैं उस पर बलिहारी हूँ । (यह गुरु ही है जिसके द्वारा मुझे यह आभास हुया कि, प्रभु) जो बनाता है, वही उसे गिरायेगा भी (वह प्रभु, जिसने यह सृष्टि रची है वही इसे नष्ट भी करेगा) उसके बिना कोई और दूसरी शक्ति नहीं है । यदि गुरु की कृपा से मैं (प्रभु) की पूजा और ध्यान करूँ (तो मैं जानता हूँ कि) मेरे तन को कोई दुख दर्द नहीं रहेगा (और मेरी आत्मा को भविष्य में होने वाले जन्मों के कोई कष्ट नहीं सहन करने पड़ेंगे) "।(३१)

इस श्लोक का संदेश है कि अपने मन के आवेश एवं निर्देशों के अनुसार चलने की अपेक्षा, हमें गुरु की वाणी अथवा शब्द का पालन करना चाहिये तथा स्वयं को पापों के बोझ से बचाना चाहिये तभी हम सरलता से भवसागर को तैर कर पार लग सकेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੩੫

ਮਾਇਆ ਮਾਇਆ ਕਰਿ ਮੁਏ ਮਾਇਆ ਕਿਸੈ ਨ ਸਾਥਿ ॥
ਹੰਸੁ ਚਲੈ ਉਠਿ ਡੁਮਣੋ ਮਾਇਆ ਭੂਲੀ ਆਥਿ ॥
ਮਨੁ ਝੂਠਾ ਜਮਿ ਜੋਹਿਆ ਅਵਗੁਣ ਚਲਹਿ ਨਾਲਿ ॥
ਮਨ ਮਹਿ ਮਨੁ ਉਲਟੋ ਮਰੈਜੇ ਗੁਣ ਹੋਵਹਿ ਨਾਲਿ ॥

ਪੰਨਾ ੯੩੬

ਮੇਰੀ ਮੇਰੀ ਕਰਿ ਮੁਏ ਵਿਣੁ ਨਾਵੈ ਦੁਖੁ ਭਾਲਿ ॥
ਗੜ ਮੰਦਰ ਮਹਲਾ ਕਹਾ ਜਿਉ ਬਾਜੀ ਦੀਬਾਣੁ ॥
ਨਾਨਕ ਸਚੇ ਨਾਮ ਵਿਣੁ ਝੂਠਾ ਆਵਣ ਜਾਣੁ ॥
ਆਪੇ ਚਤੁਰੁ ਸਰੂਪੁ ਹੈ ਆਪੇ ਜਾਣੁ ਸੁਜਾਣੁ ॥੪੨॥

पृ-९३५

माइआ माइआ करि मुए माइआ किसै न साथि ॥
हँसु चलै उठि डुमणो माइआ भूली आथि ॥
मनु झूठा जमि जोहिआ अवगुण चलहि नालि ॥
मन महि मनु उलटो मरै जे गुण होवहि नालि ॥

पृ-९३६

मेरी मेरी करि मुए विणु नावै दुखु भालि ॥
गड़ मँदर महला कहा जिउ बाजी दीबाणु ॥
नानक सचे नाम विणु झूठा आवण जाणु ॥
आपे चतुरु सरूपु है आपे जाणु सुजाणु ॥४२॥

रामकली महला - १ दक्षिणी ओंकार (श्लोक - ४२)
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस श्लोक में गुरु जी मानव स्वभाव पर टिप्पणी करते हैं कि लोग क्या करते रहते हैं और उनकी अंतिम निर्दिष्ट क्या है ।

वह कहते हैं : "(मानव जन) 'माया' 'माया' करते हुये उसके पीछे भागते मर जाते हैं, परन्तु, माया (सांसारिक धन सम्पदा मृत्यु के पश्चात) किसी के साथ नहीं जाती । उस समय आत्मा रूपी हँस (इस संसार से) खिन्न मन से उठ जाता है और माया जल्दी से भूल जाती है। इसकी अपेक्षा, उसके अवगुण (आत्मा के) साथ जाते हैं और झूठा मन यमराज की पकड़ में आ जाता है । (किन्तु), यदि किसी के मन में गुण हैं तब उसका मन (सांसारिक माया एवं धन सम्पदा से) पलट जाता है और अपने में ही लीन हो जाता है (क्योंकि, सदाचारी और गुणी मनुष्य अपने मन को झूठी सांसारिक माया के जाल में फँसने से बचा लेता है । वह प्रभु में मन को लीन रख कर, किसी कष्ट और दुखदर्द से अपनी आत्मा की रक्षा करता है) । परन्तु, अनेकों लोग 'मेरी' 'मेरी' कहते हुये मृत्यु को प्राप्त हो गये (वह सांसारिक धन सम्पदा को पाने और संग्रह करने की लालसा में इतने प्रयत्नशील रहते हैं, जैसे कि वही उनका सम्पूर्ण आनंद है और यह नहीं विचारते कि) प्रभु के नाम (दैवी ज्ञानप्राप्ति) के बिना किसी को भी दुखों के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलता । (यदि वह सोचे विचारें और पूछें कि) कहाँ पर वह गढ़, मंदिर तथा महल हैं (तब वह समझ जायेंगे कि यह सब कुछ जैसे) एक जादूगर के द्वारा बिछाये झूठे प्रसार हैं । (संक्षेप में), हे' नानक, सच्चे नाम के बिना (इस मानव जीवन का संसार में) आना जाना झूठा अथवा व्यर्थ है । परन्तु, प्रभु स्वयं चतुर अथवा बुद्धिमान हैं, सुंदर हैं और स्वयं समझते और भलीभाँति जानते हैं (कि प्रत्येक स्थिति का कारण क्या है) ".(४२)

इस श्लोक का संदेश यह है कि हमें यह विचारना चाहिये कि हमारी समस्त सांसारिक धन सम्पदा थोड़े समय के लिये है जो मृत्यु के समय हमारे साथ नहीं चलेगी, केवल हमारे पाप तथा पुण्य ही मृत्यु के पश्चात हमारे साथ जायेंगे और हमारे भविष्य का निर्णय करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੩੭	**पृ-९३७**
ਪਾਧਾ ਪੜਿਆ ਆਖੀਐ ਬਿਦਿਆ ਬਿਚਰੈ ਸਹਜਿ ਸੁਭਾਇ ॥	**पाधा पड़िआ आखीऐ बिदिआ बिचरै सहिज सुभाइ ॥**
ਪੰਨਾ ੯੩੮	**पृ-९३८**
ਬਿਦਿਆ ਸੋਧੈ ਤਤੁ ਲਹੈ ਰਾਮ ਨਾਮ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥ ਮਨਮੁਖੁ ਬਿਦਿਆ ਬਿਕ੍ਰਦਾ ਬਿਖੁ ਖਟੇ ਬਿਖੁ ਖਾਇ ॥ ਮੂਰਖੁ ਸਬਦੁ ਨ ਚੀਨਈ ਸੂਝ ਬੂਝ ਨਹ ਕਾਇ ॥੫੩॥	बिदिआ सोधै ततु लहै राम नाम लिव लाइ ॥ मनमुखु बिदिआ बिक्रदा बिखु खटे बिखु खाइ ॥ मूरखु सबदु न चीनई सूझ बूझ नह काइ ॥५३॥
ਪਾਧਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਆਖੀਐ ਚਾਟੜਿਆ ਮਤਿ ਦੇਇ ॥ ਨਾਮੁ ਸਮਾਲਹੁ ਨਾਮੁ ਸੰਗਰਹੁ ਲਾਹਾ ਜਗ ਮਹਿ ਲੇਇ ॥ ਸਚੀ ਪਟੀ ਸਚੁ ਮਨਿ ਪੜੀਐ ਸਬਦੁ ਸੁ ਸਾਰੁ ॥ ਨਾਨਕ ਸੋ ਪੜਿਆ ਸੋ ਪੰਡਿਤੁ ਬੀਨਾ ਜਿਸੁ ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਗਲਿ ਹਾਰੁ ॥੫੪॥੧॥	पाधा गुरमुखि आखीऐ चाटड़िआ मति देइ ॥ नामु समालहु नामु सँगरहु लाहा जग महि लेइ ॥ सची पटी सचु मनि पड़ीऐ सबदु सु सारु ॥ नानक सो पड़िआ सो पंडितु बीना जिसु राम नामु गलि हारु ॥५४॥१॥

रामकली महला - १ दक्षिणी ओंकार (श्लोक ५३ - ५४)
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

उपरोक्त श्लोक गुरु ग्रंथ साहिब जी में निहित 'ओंकार' नामक बृहत् रचना का अँतिम श्लोक है, जिसमें गुरु जी विद्यार्थियों को हिंदी वर्णमाला का ज्ञान देने वाले पाधा, अर्थात् अध्यापक को विभिन्न वर्णों के वास्तविक अर्थ समझाते हैं। साथ ही वह (हमें भी) यह परिभाषित करते हैं कि किस प्रकार से एक अध्यापक गुरु के अनुयायी के रूप में सच्चा शिक्षक है।

गुरु जी पंडित से कहते हैं : "(हे' पंडित), केवल वही पाधा (शिक्षक) सच्चे रूप से विद्वान कहा जा सकता है जो अपनी विद्या (दैवी ज्ञान) पर सहज स्वभाव से विचार करता है। वह इस प्रकार की विद्वता के द्वारा जीवन का तत्व प्राप्त करता है और राम के नाम में लीन रहता है। जब कि एक अंहकारी (शिक्षक) केवल विद्या का विक्रय करता है और (सांसारिक धन के रूप में) विष अर्जित करता है और विष ही खाता है। ऐसा मूर्ख शब्द (गुरु की वाणी) को नहीं पहचानता अथवा उसका चिंतन मनन नहीं करता और उसे किसी प्रकार से भी दैवी ज्ञान पर विचार करने की सूझ बूझ, अथवा, क्षमता नहीं होती "।(५३)

वह कहते हैं : "(हे' पंडित) , गुरु के अनुसार उसे ही शिक्षक कहा जाता है जो अपने शिष्यों को प्रभु का नाम मन में बसाने के लिए निर्देश अथवा ज्ञान देता है और कहता है कि (प्रभु) नाम को प्रेम के साथ मन में रखो और उस नाम का संग्रह करके इस संसार में लाभ कमाओ। (उसे उनको यह बताना चाहिये कि) गुरु के शब्द (वाणी) का सार सच्चे प्रभु को मन में बसा कर रखने पर आधारित है और यह सच्ची शिक्षा (तुम अपने मन की) सच्ची पट्टी (बच्चों के लिखने के लिये लकड़ी की तख्ती) पर लिखो। (संक्षेप में), नानक कहते हैं, वही केवल विद्वान एवं मेधावी शिक्षक है जो राम नाम की माला गले में पहन कर रखता है (जो अपने मन में प्रभु नाम का स्मरण करता रहता है)"।(५४-१)

इस 'दक्षिणी ओंकार' नामक दीर्घ रचना का संदेश है कि दूसरे लोगों को कोई उपदेश अथवा व्याख्यान देने से पूर्व हमें स्वयं गुरु के शब्द (गुरु ग्रंथ साहिब जी में निहित गुरुवाणी) पर चिंतन मनन करना चाहिये। इसके सार के अनुसार हमें अपना जीवन सत्य और सदाचारी रूप में रखते हुये प्रभु नाम की सम्पदा के संग्रहण के लिये समर्पित करना चाहिये, ना कि हम सदैव सांसारिक धन सम्पदा के पीछे ही भागने में संलग्न रहें। तभी प्रभु हम पर कृपा करेंगे और हमें अनंत रूप से अपने साथ मिलाने का सदैवी आनंद रूपी वरदान देंगे।

ਪੰਨਾ ੯੩੯

ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ ੧ ਸਿਧ ਗੋਸਟਿ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਕਿਤੁ ਬਿਧਿ ਪੁਰਖਾ ਜਨਮੁ ਵਟਾਇਆ॥
ਕਾਹੇ ਕਉ ਤੁਝੁ ਇਹੁ ਮਨੁ ਲਾਇਆ॥

ਪੰਨਾ ੯੪੦

ਕਿਤੁ ਬਿਧਿ ਆਸਾ ਮਨਸਾ ਖਾਈ॥
ਕਿਤੁ ਬਿਧਿ ਜੋਤਿ ਨਿਰੰਤਰਿ ਪਾਈ॥
ਬਿਨੁ ਦੰਤਾ ਕਿਉ ਖਾਈਐ ਸਾਰੁ॥
ਨਾਨਕ ਸਾਚਾ ਕਰਹੁ ਬੀਚਾਰੁ॥੧੯॥

ਸਤਿਗੁਰ ਕੈ ਜਨਮੇ ਗਵਨੁ ਮਿਟਾਇਆ॥
ਅਨਹਤਿ ਰਾਤੇ ਇਹੁ ਮਨੁ ਲਾਇਆ॥
ਮਨਸਾ ਆਸਾ ਸਬਦਿ ਜਲਾਈ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਜੋਤਿ ਨਿਰੰਤਰਿ ਪਾਈ॥
ਤ੍ਰੈ ਗੁਣ ਮੇਟੇ ਖਾਈਐ ਸਾਰੁ॥
ਨਾਨਕ ਤਾਰੇ ਤਾਰਣਹਾਰੁ॥੨੦॥

पृ-९३९

रामकली महला १ सिध गोसटि

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

कितु बिधि पुरखा जनमु वटाइआ ॥
काहे कउ तुझु इहु मनु लाइआ ॥

पृ-९४०

कितु बिधि आसा मनसा खाई ॥
कितु बिधि जोति निरँतरि पाई ॥
बिनु दँता किउ खाईऐ सारु ॥
नानक साचा करहु बीचारु ॥१९॥

सतिगुर कै जनमे गवनु मिटाइआ ॥
अनहति राते इहु मनु लाइआ ॥
मनसा आसा सबदि जलाई ॥
गुरमुखि जोति निरँतरि पाई ॥
त्रे गुण मेटे खाईऐ सारु ॥
नानक तारे तारणहारु ॥२०॥

रामकली महला - १ सिद्ध गोष्ठी (श्लोक १९-२०)
१ओंकार सतिगुर प्रसाद

ऐसा माना जाता है कि यह ‘सिद्ध गोष्ठी’ नामक रचना गुरु नानकदेव जी का सिद्ध और योगीजनों के बीच हुये वार्तालाप पर आधारित है। यह गोष्ठी वास्तव में किस स्थान पर हुई, इस पर कई विभिन्न विचार दिये गये हैं । कई इतिहासकारों का कहना है कि यह गोष्ठी ‘अचल बताला’ (भारत) में हुई थी । परन्तु, अन्य कई इस वाद विवाद के लिये ‘सुमेर पर्वत’ (भारत) के पक्ष में तर्क देते हैं, जब कि और कुछ का मत है कि यह वाद विवाद ज़िला पेशावर (पाकिस्तान) में स्थित ‘गोरख हत्तरी’ नामक स्थान पर हुया था। इस अवसर पर योगी जनों ने गुरु जी के आत्मिक ज्ञान की परीक्षा लेने के लिये अति कठिन प्रश्न पूछने के प्रयत्न किये । यद्यपि, गुरु जी उन सभी की तुलना में आयु में छोटे थे तब भी उन्होंने सभी प्रश्नों के उत्तर पूर्ण विश्वास एवं सफलता के साथ इस प्रकार से दिये कि उन सबके मिथ्या भ्रम दूर हो गये । वह सभी इतने प्रभावित हुये कि अंत में उन्हें गुरु जी के सम्मुख नतमस्तक होना पड़ा और उनके सच्चे दैवी ज्ञान के लिये उन्हें बधाई दी । यद्यपि, इस रचना को एक साधारण मनुष्य के लिये समझना विचारना तनिक कठिन है, परन्तु, फिर भी यह आत्मिक और दैवी विषयों पर आधारित कई ऐसे कठिन प्रश्नों का उत्तर देती है जो कि मानव मन को आदि काल से उद्वेलित करते रहे हैं ।

गुरु जी के द्वारा दिये गये उत्तरों से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होते हुये भी सिद्ध जनों ने उनकी और अधिक परीक्षा लेनी चाही । अत:, कुछ और कठिन एवं गूढ़ प्रश्न उठाते हुये उन्होंने गुरु जी से पूछा : “ हे’ नवयुवक, हमें बताओ कि तुमने किस विधि से अपने मानव जन्म को इतना परिवर्तित किया ? किसके साथ तुमने अपने मन को रमाया (और उसका तात्पर्य क्या था) ? किस विधि से तुमने अपनी इच्छायों तथा आशायों पर नियंत्रण किया ? और किस विधि से तुमने अपने अँतरमन में (दैवी) ज्योति को निरँतर रूप में प्राप्त किया ? किस प्रकार से हम बिना दाँतो के लोहा चबा सकते हैं ? हे’ नानक, तुम (इन प्रश्नों पर) अपने सच्चे विचारों को प्रकट करो ”।(१९)

गुरु जी ने अति धैर्य एवं विवेक का परिचय देते हुये इन सभी प्रश्नों के उत्तर दिये, जिससे ना केवल योगी जन ही गुरु जी के दैवी परिज्ञान से प्रभावित हुये, अपितु, ऐसे उत्तर हम सबको भी सही राह दिखाते हैं कि किस प्रकार से हम अपनी जीवन पद्धति को सुधार कर दैवी संगीत अथवा विचारों से आनंद प्राप्त कर सकते हैं । वह कहते हैं : “ सच्चे गुरु के घर में पुनर्जन्म लेने से (सच्चे गुरु के आदेशानुसार पूर्ण रूप से स्वयं को गुरु को समर्पित कर देने से मेरे जीवन की राह बदल गयी और) आवागमन (संसार में जन्म मरण) के फेर समाप्त कर दिये । (प्रभु के) प्रेम में रमे रहने से मैंने मन को (दैवी शब्द की) निरंतर धुन में मुग्ध रखा । (गुरु के शब्द अथवा वाणी के अनुसार रह कर मैंने अपनी) इच्छायों अथवा आशायों, सभी को भस्म कर दिया । गुरु का अनुयायी बने रहने से (उसकी कृपा से) एक दैवी ज्योति को मन में निरंतर रूप से पा लिया और अपने अँतरमन के तीनों गुणों (तमोगुण, सत्वगुण व रजोगुण) को पछाड़ कर हम सार अथवा लोहे को भी चबा सकते हैं (अथवा, हम लोहे जैसे कठोर संसार पर विजय पा सकते हैं) । हे’ नानक, वह मुक्तिदाता (प्रभु) स्वयं ही (उस मनुष्य को)मुक्ति दे देता है (जो स्वयं को गुरु के प्रति समर्पित कर देता है)”।(२०)

यहाँ, दोनों श्लोक हमें यह संदेश देते हैं कि हमें सर्वदा गुरु के अनुयायी (संत जनों) की भाल में रहना चाहिये और उनके परामर्श के अनुसार अपने मन को पूर्ण रूप से उन्हें समर्पित कर देना चाहिये, साथ ही यह भी सीखना चाहिये कि हम किस प्रकार से दैवी वाणी की निरंतर धुन पर स्वयं को केन्द्रित रखें और दैवी ज्योति को अपने मन में ही ढूँढ़े ।

ਪੰਨਾ ੯੪੧

ਪੂਰੇ ਗੁਰ ਤੇ ਨਾਮੁ ਪਾਇਆ ਜਾਇ ॥
ਜੋਗ ਜੁਗਤਿ ਸਚਿ ਰਹੈ ਸਮਾਇ ॥
ਬਾਰਹ ਮਹਿ ਜੋਗੀ ਭਰਮਾਏ ਸੰਨਿਆਸੀ ਛਿਅ ਚਾਰਿ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਜੋ ਮਰਿ ਜੀਵੈ ਸੋ ਪਾਏ ਮੋਖ ਦੁਆਰੁ ॥

ਪੰਨਾ ੯੪੨

ਬਿਨੁ ਸਬਦੈ ਸਭਿ ਦੂਜੈ ਲਾਗੇ ਦੇਖਹੁ ਰਿਦੈ ਬੀਚਾਰਿ ॥
ਨਾਨਕ ਵਡੇ ਸੇ ਵਡਭਾਗੀ ਜਿਨੀ ਸਚੁ ਰਖਿਆ ਉਰ ਧਾਰਿ ॥੩੪॥

पृ-९४१

पूरे गुर ते नामु पाइआ जाइ ॥
जोग जुगति सचि रहै समाइ ॥
बारह महि जोगी भरमाए सँनिआसी छिअ चारि ॥
गुर कै सबदि जो मरि जीवै सो दुआरु ॥

पृ-९४२

बिनु सबदै सभि दूजै लागे देखहु रिदै बीचारि ॥
नानक वडे से वडभागी जिनी सचु रखिआ उर धारि ॥३४॥

रामकली महला - १ सिद्ध गोष्ठी (श्लोक - ३४)
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस श्लोक में गुरु जी हमें बताते हैं कि हम कहाँ से प्रभु नाम रूपी रत्न को प्राप्त कर सकते हैं । वह यह भी कहते हैं कि और कौन से बहुमूल्य वरदान हमें मिलते हैं जब हम गुरु की वाणी (गुरु ग्रंथ साहिब में निहित वाणी) पर शुद्ध मन से विचार करते हैं ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), पूर्ण गुरु के द्वारा (प्रभु) नाम को पाया जाता है ।। सच्चे योग की सच्ची युक्ति यही है कि सदा सच्चे (प्रभुनाम के आश्रय) में समाये रहो । योगी लोग अपने बारह (प्रकार के संप्रदायों के गुणों के प्रचार में) और सन्यासी जन अपने दस प्रकार के विभिन्न मतों के भ्रमों में भटके रहते हैं । परन्तु, जो मनुष्य केवल गुरु के शब्द अथवा वाणी के द्वारा (अपने अहम को मिटाकर) संसार में मृत समान रहकर जीवित रहता है वह मोक्ष का द्वार पा लेता है ।अब यदि तुम अपने हृदय में विचार करके स्वयं देखो (तो तुम पायोगे) कि गुरु की वाणी के विचार के बिना सभी दूसरे कामों (प्रभु को भूल कर सांसारिक मोहमाया) की दुविधा में पड़े हुये हैं ।हे' नानक, वह लोग अति सौभाग्यशाली हैं जिन्होंने अपने हृदय में सच्चे (प्रभु) को धारण कर रखा है "।(३४)

इस श्लोक का संदेश यह है कि यदि हम प्रभु नाम रूपी रत्न को पाना चाहते हैं तो हमें अपना अहम मिटा कर प्रभु की इच्छा को मानते हुये उसे अपने मन में बसा कर रखना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੯੪੩

ਨਉ ਸਰ ਸੁਭਰ ਦਸਵੈ ਪੂਰੇ ॥
ਤਹ ਅਨਹਤ ਸੁੰਨ ਵਜਾਵਹਿ ਤੂਰੇ ॥
ਸਾਚੈ ਰਾਚੇ ਦੇਖਿ ਹਜੂਰੇ ॥
ਘਟਿਘਟਿ ਸਾਚੁ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰੇ ॥

ਪੰਨਾ ੯੪੪

ਗੁਪਤੀ ਬਾਣੀ ਪਰਗਟੁ ਹੋਇ ॥
ਨਾਨਕ ਪਰਖਿ ਲਏ ਸਚੁ ਸੋਇ ॥੫੩॥

पृ-९४३

नउ सर सुभर दसवै पूरे ॥
तह अनहत सुँन वजावहि तूरे ॥
साचै राचे देखि हजूरे ॥
घटि घटि साचु रहिआ भरपूरे ॥

पृ-९४४

गुपती बाणी परगटु होइ ॥
नानक परखि लए सचु सोइ ॥५३॥

रामकली महला - १ सिद्ध गोष्ठी (श्लोक - ५३)
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस श्लोक में गुरु जी व्याख्या करते हैं कि गुरु के अनुयायी किस प्रकार से अपने मन को निर्देशित रखते हैं और उनके ऐसे प्रयासों का क्या परिणाम होता है। वह कहते हैं : "(हे' योगी जनों, गुरु के अनुयायी) अपने शरीर के नौ द्वारों को मूँद कर (दो आँखें, दो कान, एक मुख, दो नासिकाएँ, मल एवं मूत्र द्वार आदि, की इच्छायों को स्थिर करने के पश्चात) उसके दसवें द्वार पर पहुँच जाते हैं और (उस दशा में) वह ऐसी निरंतर संगीतमयी धुनों को सुनते हैं जो अविनाशी शून्य (प्रभु) से उत्पन्न होती रहती हैं। अनंत सच्चे प्रभु को अपने सम्मुख देख कर (वह उसके प्रेम में) रच जाते हैं, (तब वह जान लेते हैं कि) सच्चा प्रभु घट घट में पूर्ण रूप से व्याप्त है। उनके मन में गुप्त वाणी (दैवी संदेश) प्रकट होती है, इस प्रकार से, हे' नानक, वह सच्चे अनंत (प्रभु) को परख अथवा पहचान लेते हैं "।(५३)

इस श्लोक का संदेश यह है कि यदि हम अनादि अनंत प्रभु के दर्शन पाना चाहते हैं तो हमें अपने शरीर के नौ द्वारों की इच्छायों को मन में स्थिर एवं शांत करके दसवें द्वार पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिये और अविनाशी शून्य (प्रभु) से उत्पन्न होने वाले अनवरत संगीत को सुनने का प्रयत्न करना चाहिये। तभी हम अपने अंदर और बाहर सभी जगह प्रभु की उपस्थिति का आनंद प्राप्त कर सकेंगे।

ਪੰਨਾ ੯੪੫

ਹਿਰਦਾ ਦੇਹ ਨ ਹੋਤੀ ਅਉਧੂ ਤਉ ਮਨੁ ਸੁੰਨਿ ਰਹੈ ਬੈਰਾਗੀ ॥
ਨਾਭਿ ਕਮਲੁ ਅਸਥੰਭੁ ਨ ਹੋਤੋ ਤਾ ਨਿਜ ਘਰਿ ਬਸਤਉ ਪਵਨੁ ਅਨਰਾਗੀ ॥
ਰੂਪੁ ਨ ਰੇਖਿਆ ਜਾਤਿ ਨ ਹੋਤੀ ਤਉ ਅਕੁਲੀਣਿ ਰਹਤਉ ਸਬਦੁ ਸੁ ਸਾਰੁ ॥
ਗਉਨੁ ਗਗਨੁ ਜਬ ਤਬਹਿ ਨ ਹੋਤਉ ਤ੍ਰਿਭਵਣ ਜੋਤਿ ਆਪੇ ਨਿਰੰਕਾਰੁ ॥

ਪੰਨਾ ੯੪੬

ਵਰਨੁ ਭੇਖੁ ਅਸਰੂਪੁ ਸੁ ਏਕੋ ਏਕੋ ਸਬਦੁ ਵਿਡਾਣੀ ॥
ਸਾਚ ਬਿਨਾ ਸੂਚਾ ਕੋ ਨਾਹੀ ਨਾਨਕ ਅਕਥ ਕਹਾਣੀ ॥੬੭॥

पृ-९४५

हिरदा देह न होती अउधू तउ मनु सुँनि रहै बैरागी ॥
नाभि कमलु असथँभु न होतो ता निज घरि बसतउ पवनु अनरागी ॥
रूपु न रेखिआ जाति न होती तउ अकुलीणि रहतउ सबदु सु सारु ॥
गउनु गगनु जब तबहि न होतउ त्रिभवण जोति आपे निरँकारु ॥

पृ-९४६

वरनु भेखु असरूपु सु एको एको सबदु विडाणी ॥
साच बिना सूचा को नाही नानक अकथ कहाणी ॥६७॥

रामकली महला - १ सिद्ध गोष्ठी (श्लोक - ६७)
१ओंकार सतिगुर प्रसादि

इस श्लोक में गुरु जी सिद्ध जनों के द्वारा उठाये गये अनेकों प्रश्नों के उत्तर देते हैं - जैसे कि, जब किसी समय पर हृदय नहीं था, देह भी नहीं थी तब मन कहाँ पर वास करता था ? -जब नाभि कमल नहीं स्थापित हुया था तब श्वासों की प्रक्रिया कैसे और कहाँ से आरंभ होती थी? -जब संसार की कोई रूप रेखा नहीं थी तब शब्द कहाँ समाता था ? यह शरीर जो (माता के) रक्त व (पिता के) बिंदु से रचा गया है, जब वह सब भी नहीं था (तब कैसे यह मन प्रभु का ध्यान करता था, प्रभु) जिसकी कोई सीमा अथवा मूल्य नहीं पाया जा सकता ? -कैसे उस प्रभु को जान सकते हैं जिसका कोई रंग नहीं, रूप नहीं एवं अंग और आकार भी दृष्टिगोचर नहीं हैं ?

गुरु जी उत्तर देते हैं : " हे' अवधूत, जब कोई हृदय और शरीर नहीं था, तब मन एक बैरागी की भाँति स्वयंभू (परमात्मा) में बसा हुया था। जब श्वासों को नाभि रूपी कमल का आश्रय नहीं था तब पवन (श्वास) प्रभु प्रेम में रमे हुये अपने ही घर (अर्थात, प्रभु के पास उसके ही घर) में स्थिर थे ।जब इस संसार की कोई रूप रेखा नहीं थी तब उसका सार एवं शब्द उसी प्रभु में ही समाया हुया था, जिसका कोई कुल नहीं होता । जब धरती तथा आकाश कुछ भी स्थिर नहीं थे तब भी निराकार प्रभु स्वयं तीनों लोकों की ज्योति के रूप में स्थित थे । उस समय केवल एक ही रंग, वेश और एक ही स्वरूप प्रभु के रूप में ही था और एक ही अचंभित करने वाला प्रभु अपने शब्द के रूप में था । हे' नानक, उस सच्चे (प्रभु) में मिले बिना कोई भी पवित्र नहीं हो सकता । उस (प्रभु) की गाथा इस प्रकार से अकथनीय है "।(६७)

इस श्लोक का संदेश यह है कि आदि समय से जब कोई भी रंग, रूप, दृष्य अथवा शब्द नहीं था तब यह सभी कुछ उस अनंत प्रभु में ही समाया हुया था । इस प्रकार से उस अनंत प्रभु की कथा अकथनीय है ।

ਪੰਨਾ ੯੪੭

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੩ ॥

ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਈ ਸਭੁ ਜਗੁ ਫਿਰੀ ਫਾਵੀ ਹੋਈ ਭਾਲਿ ॥

ਪੰਨਾ ੯੪੮

ਸੋ ਸਹੁ ਸਾਂਤਿ ਨ ਦੇਵਈ ਕਿਆ ਚਲੈ ਤਿਸੁ ਨਾਲਿ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਹਰਿ ਧਿਆਈਐ ਅੰਤਰਿ ਰਖੀਐ ਉਰ ਧਾਰਿ ॥
ਨਾਨਕ ਘਰਿ ਬੈਠਿਆ ਸਹੁ ਪਾਇਆ ਜਾ ਕਿਰਪਾ ਕੀਤੀ ਕਰਤਾਰਿ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਧੰਧਾ ਧਾਵਤ ਦਿਨੁ ਗਇਆ ਰੈਣਿ ਗਵਾਈ ਸੋਇ ॥
ਕੂੜੁ ਬੋਲਿ ਬਿਖੁ ਖਾਇਆ ਮਨਮੁਖਿ ਚਲਿਆ ਰੋਇ ॥
ਸਿਰੈ ਉਪਰਿ ਜਮ ਡੰਡੁ ਹੈ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਪਤਿ ਖੋਇ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਕਦੇ ਨ ਚੇਤਿਓ ਫਿਰਿ ਆਵਣ ਜਾਣਾ ਹੋਇ ॥
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਹਰਿ ਮਨਿ ਵਸੈ ਜਮ ਡੰਡੁ ਨ ਲਾਗੈ ਕੋਇ ॥
ਨਾਨਕ ਸਹਜੇ ਮਿਲਿ ਰਹੈ ਕਰਮਿ ਪਰਾਪਤਿ ਹੋਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਇਕਿ ਆਪਣੀ ਸਿਫਤੀ ਲਾਇਅਨੁ ਦੇ ਸਤਿਗੁਰ ਮਤੀ ॥
ਇਕਨਾ ਨੋ ਨਾਉ ਬਖਸਿਓਨੁ ਅਸਥਿਰੁ ਹਰਿ ਸਤੀ ॥
ਪਉਣੁ ਪਾਣੀ ਬੈਸੰਤਰੋ ਹੁਕਮਿ ਕਰਹਿ ਭਗਤੀ ॥
ਏਨਾ ਨੋ ਭਉ ਅਗਲਾ ਪੂਰੀ ਬਣਤ ਬਣਤੀ ॥
ਸਭੁ ਇਕੋ ਹੁਕਮੁ ਵਰਤਦਾ ਮੰਨਿਐ ਸੁਖੁ ਪਾਈ ॥੩॥

पृ-९४७

सलोक महला ३॥

भरमि भुलाई सभु जगु फिरी फावी होई भालि ॥

पृ-९४८

सो सहु सांति न देवई किआ चलै तिसु नालि ॥
गुर परसादी हरि धिआईऐ अँतरि रखीऐ उर धारि ॥
नानक घरि बैठिआ सहु पाइआ जा किरपा कीती करतारि ॥१॥

महला ३॥

धँधा धावतु दिनु गइआ रैणि गवाई सोइ ॥
कूड़ु बोलि बिखु खाइआ मनमुखि चलिआ रोइ ॥
सिरै उपरि जम डँडु है दूजै भाइ पति खोइ ॥
हरि नामु कदे न चेतिओ फिरि आवण जाणा होइ ॥
गुर परसादी हरि मनि वसै जम डँडु न लागै कोइ ॥
नानक सहजे मिलि रहै करमि परापति होइ ॥२॥

पउड़ी ॥

इकि आपणी सिफती लाइअनु दे सतिगुर मती ॥
इकना नो नाउ बखसिओनु असथिरु हरि सती ॥
पउणु पाणी बैसँतरो हुकमि करहि भगती ॥
एना नो भउ अगला पूरी बणत बणती ॥
सभु इको हुकमु वरतदा मँनिऐ सुखु पाई ॥३॥

सलोक महला -३

इस श्लोक में गुरु जी स्वयं को एक खोज करने वाले व्यक्ति की भाँति मान कर प्रभु को खोजने का प्रयास कर रहे हैं, परन्तु, खोजने का सही राह अथवा ढंग क्या है, यह वह नहीं जानते। अतः वह उसी मनोदशा में कहते हैं : " मैं भ्रमों में भूली हुई सारे जग में घूमती फिर रही हूँ और ढूँढ भाल करती करती थक और हाँफ गयी हूँ। वह पति (प्रभु) यदि मुझे शांति तथा आनंद नहीं देगा तो मैं उसके साथ किस प्रकार से सदा चलूँगी।(फिर मुझे पता चला कि) गुरु की कृपा से सदा हरि का ध्यान करो और उसे सदा अपने हृदय में धारण करके रखो। (जब मैंने ऐसा ही किया) हे' नानक, तब उस सृजनकर्ता ने अपनी कृपा की और मुझे घर में बैठे (अपने मन के अंदर) ही मेरे पति (प्रभु) प्राप्त हो गये "।(१)

महला - ३

उपरोक्त श्लोक में गुरु जी ने अपने व्यक्तिगत अनुभव को हमसे साझा किया कि कैसे प्रभु का ध्यान करने से वह उन्हें मन के अंदर ही मिल गये। अब यहाँ इस श्लोक में हमें यह बताते हैं कि किस कारण से अंहकारी जन प्रभु का ध्यान करने की चिंता नहीं करते, फलस्वरूप, जन्म मरण के कष्टों को झेलते रहते हैं। वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), अंहकारी लोगों का दिवस अपने सांसारिक काम धंधों के पीछे भागते रहने में व्यतीत हो जाता है और रात्रि का समय वह निद्रा में गँवा देते हैं। झूठी बातें बोल कर छल से कमाये हुये (धन रूपी)विष को ऐसा अँहकारी मनुष्य खाता है और अंत में दुखी होकर रोता हुआ (संसार से) चला जाता है।(सांसारिक मोहमाया की) दुविधा में वह अपना सम्मान भी गँवा लेता है और उसके सिर के उपर यमराज के दंड का भय भी मँडराता रहता है। उसने अपने हृदय में कभी हरि नाम का स्मरण नहीं किया, अतः, बारम्बार उसका आना जाना (जन्म मरण) होता रहता है। यदि, गुरु की कृपा से हरि के नाम का वास मन में हो सके तो किसी को यमराज के दंड का भय नहीं रहेगा। हे' नानक, (यदि उस प्रभु की कृपा हो) तो ऐसे मनुष्य के प्रारब्ध में प्रभु से मिलन सहजभाव से प्राप्त हो जाता है "।(२)

पउड़ी

अब गुरु जी उन कारणों का संक्षिप्त में वर्णन करते हैं जिनके अनुसार कुछ मानव जन प्रभु के नाम का ध्यान करते रहते हैं और सब प्रकार के आशीर्वाद पाकर आनंदित रहते हैं, जबकि, अन्य लोग जो प्रभु नाम के ध्यान को महत्व नहीं देते, वह जन्म मरण के कष्टों को झेलते रहते हैं । गुरु जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो, इस विविध प्रकार के संसार में) कुछ एक लोगों को सच्चे गुरु की सदबुद्धि का आशीर्वाद देकर प्रभु ने उन्हें अपनी प्रशंसा एवं यश कहने में लगा दिया है, कुछ लोगों में अनंत हरि ने अपने नाम का प्रतिपादन कर दिया है । (यहाँ तक कि कुछ तत्व जैसे कि) पवन, जल तथा अग्नि भी (उस प्रभु की) आज्ञानुसार उसकी भक्ति करते हैं, इन्हें भी सदा उस प्रभु का भय रहता है जिसने इस सृष्टि चक्र की अत्यंत निपुण रूप से संरचना की है । सभी ओर उसी एक प्रभु की आज्ञा व्याप्त है और उस आज्ञा को स्वीकार करके रहने में सुख और शांति प्राप्त होती है ”।(३)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि हम अपने प्रयासों अथवा शक्ति सामर्थ्य के द्वारा प्रभु को नहीं पा सकते। वह प्रभु स्वयं गुरु के मार्ग दर्शन के द्वारा वरदान देकर हमें अपने नाम के ध्यान में लगाते हैं और तब हमारे हृदय में आकर बसने लगते हैं । परन्तु, इसका यह अर्थ नहीं कि हम दिन का समय अपने सांसारिक धंधों में व्यर्थ करदें और रात का समय सोने में व्यतीत करदें, अपितु, हमें सदैव उस प्रभु से यही प्रार्थना करते रहना चाहिये कि वह सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन का प्रतिपादन करें जो हमें प्रभु नाम के ध्यान में लीन रखे तथा उसकी इच्छा को स्वीकार करना सिखाये । गुरु की मति का अनुसरण हमें यमराज के दंड से मुक्त करने में भी सहायक है ।

ਪੰਨਾ ੯੪੯

ਸਲੋਕ ਮਃ ੩ ॥

ਇਹੁ ਤਨੁ ਸਭੋ ਰਤੁ ਹੈ ਰਤੁ ਬਿਨੁ ਤੰਨੁ ਨ ਹੋਇ ॥
ਜੋ ਸਹਿ ਰਤੇ ਆਪਣੈ ਤਿਨ ਤਨਿ ਲੋਭ ਰਤੁ ਨ ਹੋਇ ॥
ਭੈ ਪਇਐ ਤਨੁ ਖੀਣੁ ਹੋਇ ਲੋਭ ਰਤੁ ਵਿਚਹੁ ਜਾਇ ॥

ਪੰਨਾ ੯੫੦

ਜਿਉ ਬੈਸੰਤਰਿ ਧਾਤੁ ਸੁਧੁ ਹੋਇ ਤਿਉ ਹਰਿ ਕਾ ਭਉ ਦੁਰਮਤਿ ਮੈਲੁ ਗਵਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਤੇ ਜਨ ਸੋਹਣੇ ਜੋ ਰਤੇ ਹਰਿ ਰੰਗੁ ਲਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੩ ॥

ਰਾਮਕਲੀ ਰਾਮੁ ਮਨਿ ਵਸਿਆ ਤਾ ਬਨਿਆ ਸੀਗਾਰੁ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਕਮਲੁ ਬਿਗਸਿਆ ਤਾ ਸਉਪਿਆ ਭਗਤਿ ਭੰਡਾਰੁ ॥
ਭਰਮੁ ਗਇਆ ਤਾ ਜਾਗਿਆ ਚੂਕਾ ਅਗਿਆਨ ਅੰਧਾਰੁ ॥
ਤਿਸ ਨੋ ਰੂਪੁ ਅਤਿ ਅਗਲਾ ਜਿਸੁ ਹਰਿ ਨਾਲਿ ਪਿਆਰੁ ॥
ਸਦਾ ਰਵੈ ਪਿਰੁ ਆਪਣਾ ਸੋਭਾਵੰਤੀ ਨਾਰਿ ॥
ਮਨਮੁਖਿ ਸੀਗਾਰੁ ਨ ਜਾਣਨੀ ਜਾਸਨਿ ਜਨਮੁ ਸਭੁ ਹਾਰਿ ॥
ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਭਗਤੀ ਸੀਗਾਰੁ ਕਰਹਿ ਨਿਤ ਜੰਮਹਿ ਹੋਇ ਖੁਆਰੁ ॥
ਸੈਸਾਰੈ ਵਿਚਿ ਸੋਭ ਨ ਪਾਇਨੀ ਅਗੈ ਜਿ ਕਰੇ ਸੁ ਜਾਣੈ ਕਰਤਾਰੁ ॥
ਨਾਨਕ ਸਚਾ ਏਕੁ ਹੈ ਦੁਹੁ ਵਿਚਿ ਹੈ ਸੰਸਾਰੁ ॥
ਚੰਗੈ ਮੰਦੈ ਆਪਿ ਲਾਇਅਨੁ ਸੋ ਕਰਨਿ ਜਿ ਆਪਿ ਕਰਾਏ ਕਰਤਾਰੁ ॥੨॥

ਮਃ ੩ ॥

ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸੇਵੇ ਸਾਂਤਿ ਨ ਆਵਈ ਦੂਜੀ ਨਾਹੀ ਜਾਇ ॥
ਜੇ ਬਹੁਤੇਰਾ ਲੋਚੀਐ ਵਿਣੁ ਕਰਮਾ ਪਾਇਆ ਨ ਜਾਇ ॥
ਅੰਤਰਿ ਲੋਭੁ ਵਿਕਾਰੁ ਹੈ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਖੁਆਇ ॥
ਤਿਨ ਜੰਮਣੁ ਮਰਣੁ ਨ ਚੁਕਈ ਹਉਮੈ ਵਿਚਿ ਦੁਖੁ ਪਾਇ ॥
ਜਿਨੀ ਸਤਿਗੁਰ ਸਿਉ ਚਿਤੁ ਲਾਇਆ ਸੋ ਖਾਲੀ ਕੋਈ ਨਾਹਿ ॥
ਤਿਨ ਜਮ ਕੀ ਤਲਬ ਨ ਹੋਵਈ ਨਾ ਓਇ ਦੁਖ ਸਹਾਹਿ ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰਮੁਖਿ ਉਬਰੇ ਸਚੈ ਸਬਦਿ ਸਮਾਹਿ ॥੩॥

ਪਉੜੀ ॥

ਆਪਿ ਅਲਿਪਤੁ ਸਦਾ ਰਹੈ ਹੋਰਿ ਧੰਧੈ ਸਭਿ ਧਾਵਹਿ ॥
ਆਪਿ ਨਿਹਚਲੁ ਅਚਲੁ ਹੈ ਹੋਰਿ ਆਵਹਿ ਜਾਵਹਿ ॥
ਸਦਾ ਸਦਾ ਹਰਿ ਧਿਆਈਐ ਗੁਰਮੁਖਿ ਸੁਖੁ ਪਾਵਹਿ ॥
ਨਿਜ ਘਰਿ ਵਾਸਾ ਪਾਈਐ ਸਚਿ ਸਿਫਤਿ ਸਮਾਵਹਿ ॥
ਸਚਾ ਗਹਿਰ ਗੰਭੀਰੁ ਹੈ ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਬੁਝਾਈ ॥੮॥

पृ-९४९

सलोक महला ३॥

इहु तनु सभो रतु है रतु बिनु तँनु न होइ ॥
जो सहि रते आपणै तिन तनि लोभ रतु न होइ ॥
भै पइऐ तनु खीणु होइ लोभ रतु विचहु जाइ

पृ-९५०

जिउ बैसँतरि धातु सुधु होइ तिउ हरि का भउ दुरमति मैलु गवाइ ॥
नानक ते जन सोहणे जो रते हरि रँगु लाइ ॥१॥

महला ३॥

रामकली रामु मनि वसिआ ता बनिआ सीगारू ॥
गुर कै सबदि कमलु बिगसिआ ता सउपिआ भगति भँडारू ॥
भरमु गइआ ता जागिआ चूका अगिआन अँधारु ॥
तिस नो रूपु अति अगला जिसु हरि नालि पिआरु ॥
सदा रवै पिरु आपणा सोभावँती नारि ॥
मनमुखि सीगारु न जाणनी जासनि जनमु सभु हारि ॥
बिनु हरि भगती सीगारु करहि नित जँमहि होइ खुआरु ॥
सैसारै विचि सोभ न पाइनी अगै जि करे सु जाणै करतारु ॥
नानक सचा एकु है दुहु विचि है सँसारु ॥
चँगै मँदै आपि लाइअनु सो करनि जि आपि कराए करतारु ॥२॥

महला ३॥

बिनु सतिगुर सेवे सांति न आवई दूजी नाही जाइ ॥
जे बहुतेरा लोचीऐ विणु करमा पाइआ न जाइ ॥
अँतरि लोभु विकारु है दूजै भाइ खुआइ ॥
तिन जँमणु मरणु न चुकई हउमै विचि दुखु पाइ ॥
जिनी सतिगुर सिउ चितु लाइआ सो खाली कोई नाहि ॥
तिन जम की तलब न होवई ना ओइ दुख सहाहि ॥
नानक गुरमुखि उबरे सचै सबदि समाहि ॥३॥

पउड़ी ॥

आपि अलिपतु सदा रहै होरि धँधै सभि धावहि ॥
आपि निहचलु अचलु है होरि आवहि जावहि ॥
सदा सदा हरि धिआईऐ गुरमुखि सुखु पावहि ॥
निज घरि वासा पाईऐ सचि सिफति समावहि ॥
सचा गहिर गँभीरु है गुर सबदि बुझाई ॥८॥

सलोक महला - ३

भक्त फ़रीद जी के एक शलोक की व्याख्या करते हुये गुरु जी इस शलोक में हमें बताते हैं कि किस प्रकार से हम अपने शरीर को वास्तविक रूप से सुंदर तथा सदाचारी बना सकते हैं। वह अति कुशलता से यहाँ पर 'रत' शब्द का प्रयोग उसके विभिन्न अर्थों (१. रक्त, २. लाल रंग, ३. ध्यान अथवा लीन ४. तनिक अथवा लेशमात्र) के साथ करते हैं, जैसा कि उनकी लिखी उपरोक्त पहली पाँच पंक्तियों को पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है। वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), हमारे इस पूरे शरीर में रक्त है, बिना रक्त के यह तन नहीं रह सकता। जो भी कोई अपने प्रियतम

(प्रभु) के प्रेम में 'रत' (लीन) है उसके रक्त में तनिक भी लोभ नहीं होता । जब हम (मन में प्रभु) के भय को मानते हैं तब हमारा तन क्षीण होता है और उसमें से लोभ का रक्त (विचार) चला जाता है ।(ठीक उसी प्रकार से जैसे) अग्नि में धातु गला कर शुद्ध हो जाती है वैसे ही, हरि के भय से (मन में से) दुर्मति का मैल दूर होता है । हे' नानक, वह भक्तजन अति गुणी एवं सुंदर हैं जो हरि के रंग में रते हुये हैं "।(१)

महला - ३

उपरोक्त श्लोक में गुरु जी ने यह कहा कि जो भक्त प्रभु के प्रेम में रते रह कर उसके साथ एकरूप हैं वह गुणी एवं सुंदर हैं । अब यहाँ यह वर्णन करते हैं कि ऐसे मनुष्य किस प्रकार से दैवी गुणों से सुशोभित हो जाते हैं । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), रामकली जैसे सुंदर राग के मधुर संगीत में यदि कोई प्रभु की प्रशंसा में गायन करे तो उसके मन में प्रभु बसने लगते हैं और वह स्थिति उसका श्रृंगार बन जाती है (तब वह मनुष्य गुणी और सदाचारी हो जाता है) । यदि गुरु के शब्द के द्वारा मन रूपी कमल खिल उठे (तो प्रभु उसे अपनी) भक्ति का भंडार सौंप देते हैं । (यदि गुरु की वाणी के द्वारा किसी के मन में से) भ्रमों का नाश हो जाये, तब वह (संसार के मिथ्या आकर्षणों के प्रति) सतर्क हो जाता है और उसके अज्ञान का अँधकार चुक जाता है । (आत्मा रूपी वधू जो वास्तव में) हरि से प्रेम करती है, अति रूपवती दिखाई देती है। ऐसी शोभावती सुंदर (आत्मारूपी) नारी सदा अपने प्रियतम (प्रभु) के साथ लीन रह कर आनंद पाती है । इसकी अपेक्षा, जो अंहकारी (आत्मा रूपी वधूएँ) अपना श्रृंगार (प्रभु रूपी पति के मनभावन सदाचारी गुणों रूपी अलंकारों अथवा आभूषणों से) करना नहीं जानतीं (अपने प्रियतम प्रभु को नहीं भातीं) वह इस जन्म में सब कुछ गँवा कर (संसार से) जायेंगी । जो लोग हरि की भक्ति की अपेक्षा, दूसरे प्रकार के श्रृंगार (गेरुये परिधान और कर्मकांड) से स्वयं को सुसज्जित करते हैं वह नित्य ही जन्म लेकर कष्ट पाते हैं । इस संसार में उन्हें कोई सम्मान अथवा शोभा नहीं मिलती और आगे जाकर उनके साथ क्या होता है, यह तो केवल प्रभु ही जानते हैं । हे' नानक सच्चा प्रभु केवल एक ही है (जो जन्म मरण से मुक्त है) परन्तु यह संसार (जन्म तथा मरण) दोनों में ही संलग्न है । (प्रभु ने सभी को) स्वयं ही भले तथा बुरे कामों में लगाया हुया है और सभी वही कर्म करते रहते हैं जो सृजनकर्ता स्वयं उनसे करवाता है "।(२)

महला - ३

उपरोक्त श्लोक में गुरु जी ने कहा कि जब गुरु की वाणी के द्वारा किसी का हृदय रूपी कमल खिल उठता है तब प्रभु उसके लिये अपनी भक्ति के भंडार का प्रतिपादन कर देते हैं । इस श्लोक में वह स्थिति को उल्ट कर दूसरी ओर से प्रकट करते हुये बताते हैं कि जब कोई प्रभु को गुरु के मार्ग दर्शन के बिना पाने का प्रयास करता है, तब क्या होता है । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), यदि सच्चे गुरु की सेवा (गुरु का मार्ग दर्शन) नहीं की तो मन को शांति नहीं प्राप्त होती अथवा (मन में से) दुविधा नहीं जाती, (गुरु के बिना) और कोई जगह नहीं (जहाँ से कोई शांति प्राप्त कर सके) । हम चाहे कितनी भी याचना करलें, बिना शुभ कर्मों के (गुरु को) नहीं पा सकते । (क्योंकि, जब तक मन के अंदर) लोभ तथा अन्य विकार हैं (तब तक प्रभु के अतिरिक्त, मनुष्य) दूसरे प्रकार के आकर्षणों में खोये रहते हैं, अतः, उनका जन्म मरण का फेर कभी समाप्त नहीं होता और अहम से ग्रस्त रहने के कारण सदा दुख पाते हैं । परन्तु, जिन्होंने भी सच्चे गुरु को अपने हृदय से प्रेम किया, वह कभी भी (गुरु के पास जाकर) खाली हाथ नहीं आते । उन्हें यमराज का बुलावा नहीं आता, अतः, उसके द्वारा कोई दुख नहीं सहते । हे' नानक, गुरु के अनुयायी गुरु की सच्ची वाणी में समाये रहने के कारण (सभी कष्टों से) उबर जाते हैं "।(३)

पउड़ी -

अब गुरु जी हमें यह बताते हैं कि वह प्रभु स्वयं तो इतने विरक्त अथवा अप्रभावित रूप से रहते हैं, परन्तु, उन्होंने अपने द्वारा सृजित अन्य सभी जीवों को विभिन्न कामों में व्यस्त कर रखा है और किस प्रकार से हम अनवरत सांसारिक जटिलतायों से बाहर निकल, प्रभु के निकट होकर सच्ची शांति का आनंद पा सकते हैं । वह कहते हैं : "(हे मेरे मित्रो, प्रभु) स्वयं तो सदैव ही (सांसारिक व्यस्ततायों) से अलिप्त रहते हैं, जबकि और सभी (जीव सांसारिक) धंधों के पीछे भागे रहते हैं । वह स्वयं तो स्थिर अथवा अचल हैं, परन्तु और सब (प्राणी) आने जाने में व्यस्त हैं । गुरु के अनुयायी सदैव हरि का ध्यान करते रहने से सुख शांति पाते हैं । वह अपने ही (प्रभु के) घर में निवास पाते हैं और उस सच्चे (प्रभु) की महिमा और यश की प्रक्रिया में समाये रहते हैं । गुरु अपनी वाणी के द्वारा हमें यह समझाते हैं कि सच्चे अनंत प्रभु अति गहन और गंभीर हैं "।(८)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि मन में शुद्ध और सच्चे प्रेम के बिना प्रभु भक्ति श्रद्धा से नहीं हो सकती, अतः, किसी के वाह्य रूप से पहने हुए वस्त्र अथवा परिधान तथा आभूषण अलंकार सब मिथ्या दिखावा है और आत्मिक स्तर पर उस सबका कोई लाभ नहीं है । किन्तु, सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन के बिना मानव लोभ और अन्य विकारों से ग्रसित रहता है, जो उसके जन्म मरण के दुख संताप और नाश का कारण बनते हैं । गुरु जी हमें यह ज्ञान अथवा निर्देश देते हैं कि केवल प्रभु की महिमा और ध्यान करने से ही हम उसमें लीन हो सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੯੫੧

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੧ ॥

ਸਤੀ ਪਾਪੁ ਕਰਿ ਸਤੁ ਕਮਾਹਿ ॥
ਗੁਰ ਦੀਖਿਆ ਘਰਿ ਦੇਵਣ ਜਾਹਿ ॥
ਇਸਤਰੀ ਪੁਰਖੈ ਖਟਿਐ ਭਾਉ ॥
ਭਾਵੈ ਆਵਉ ਭਾਵੈ ਜਾਉ ॥
ਸਾਸਤੁ ਬੇਦੁ ਨ ਮਾਨੈ ਕੋਇ ॥
ਆਪੋ ਆਪੈ ਪੂਜਾ ਹੋਇ ॥
ਕਾਜੀ ਹੋਇ ਕੈ ਬਹੈ ਨਿਆਇ ॥
ਫੇਰੇ ਤਸਬੀ ਕਰੇ ਖੁਦਾਇ ॥
ਵਢੀ ਲੈ ਕੈ ਹਕੁ ਗਵਾਏ ॥
ਜੇ ਕੋ ਪੁਛੈ ਤਾ ਪੜਿ ਸੁਣਾਏ ॥
ਤੁਰਕ ਮੰਤ੍ਰੁ ਕਨਿ ਰਿਦੈ ਸਮਾਹਿ ॥
ਲੋਕ ਮੁਹਾਵਹਿ ਚਾੜੀ ਖਾਹਿ ॥
ਚਉਕਾ ਦੇ ਕੈ ਸੁਚਾ ਹੋਇ ॥
ਐਸਾ ਹਿੰਦੂ ਵੇਖਹੁ ਕੋਇ ॥
ਜੋਗੀ ਗਿਰਹੀ ਜਟਾ ਬਿਭੂਤ ॥
ਆਗੈ ਪਾਛੈ ਰੋਵਹਿ ਪੂਤ ॥
ਜੋਗੁ ਨ ਪਾਇਆ ਜੁਗਤਿ ਗਵਾਈ ॥
ਕਿਤੁ ਕਾਰਣਿ ਸਿਰਿ ਛਾਈ ਪਾਈ ॥
ਨਾਨਕ ਕਲਿ ਕਾ ਏਹੁ ਪਰਵਾਣੁ ॥
ਆਪੇ ਆਖਣੁ ਆਪੇ ਜਾਣੁ ॥੧॥

ਮਃ ੧ ॥

ਹਿੰਦੂ ਕੈ ਘਰਿ ਹਿੰਦੂ ਆਵੈ ॥
ਸੂਤੁ ਪਾਇ ਕਰੇ ਬੁਰਿਆਈ ॥
ਸੂਤੁ ਜਨੇਊ ਪੜਿ ਗਲਿ ਪਾਵੈ ॥
ਨਾਤਾ ਧੋਤਾ ਥਾਇ ਨ ਪਾਈ ॥
ਮੁਸਲਮਾਨੁਕਰੇ ਵਡਿਆਈ ॥

ਪੰਨਾ ੯੫੨

ਵਿਣੁ ਗੁਰ ਪੀਰੈ ਕੋ ਥਾਇ ਨ ਪਾਈ ॥
ਰਾਹੁ ਦਸਾਇ ਓਥੈ ਕੋ ਜਾਇ ॥
ਕਰਣੀ ਬਾਝਹੁ ਭਿਸਤਿ ਨ ਪਾਇ ॥
ਜੋਗੀ ਕੈ ਘਰਿ ਜੁਗਤਿ ਦਸਾਈ ॥
ਤਿਤੁ ਕਾਰਣਿ ਕਨਿ ਮੁੰਦ੍ਰਾ ਪਾਈ ॥
ਮੁੰਦ੍ਰਾ ਪਾਇ ਫਿਰੈ ਸੰਸਾਰਿ ॥
ਜਿਥੈ ਕਿਥੈ ਸਿਰਜਣਹਾਰੁ ॥
ਜੇਤੇ ਜੀਅ ਤੇਤੇ ਵਾਟਾਊ ॥
ਚੀਰੀ ਆਈ ਢਿਲ ਨ ਕਾਊ ॥
ਏਥੈ ਜਾਣੈ ਸੁ ਜਾਇ ਸਿਞਾਣੈ ॥
ਹੋਰੁ ਫਕੜੁ ਹਿੰਦੂ ਮੁਸਲਮਾਣੈ ॥
ਸਭਨਾ ਕਾ ਦਰਿ ਲੇਖਾ ਹੋਇ ॥
ਕਰਣੀ ਬਾਝਹੁ ਤਰੈ ਨ ਕੋਇ ॥
ਸਚੋ ਸਚੁ ਵਖਾਣੈ ਕੋਇ ॥
ਨਾਨਕ ਅਗੈ ਪੁਛ ਨ ਹੋਇ ॥੨॥

पृ-९५१

सलोक महला १॥

सती पापु करि सतु कमाहि ॥
गुर दीखिआ घरि देवण जाहि ॥
इसतरी पुरखै खटिऐ भाउ ॥
भावै आवउ भावै जाउ ॥
सासतु बेदु न मानै कोइ ॥
आपो आपै पूजा होइ ॥
काजी होइ कै बहै निआइ ॥
फेरे तसबी करे खुदाइ ॥
वढी लै कै हकु गवाए ॥
जे को पुछै ता पड़ि सुणाए ॥
तुरक मँत्रु कनि रिदै समाहि ॥
लोक मुहावहि चाड़ी खाहि ॥
चउका दे कै सुचा होइ ॥
ऐसा हिँदू वेखहु कोइ ॥
जोगी गिरही जटा बिभूत ॥
आगै पाछै रोवहि पूत ॥
जोगु न पाइआ जुगति गवाई ॥
कितु कारणि सिरि छाई पाई ॥
नानक कलि का एहु परवाणु ॥
आपे आखणु आपे जाणु ॥१॥

महला १॥

हिँदू कै घरि हिँदू आवै ॥
सूतु पाइ करे बुरिआई ॥
सूतु जनेऊ पड़ि गलि पावै ॥
नाता धोता थाइ न पाई ॥
मुसलमानु करे वडिआई ॥

पृ-९५२

विणु गुर पीरै को थाइ न पाई ॥
राहु दसाइ ओथै को जाइ ॥
करणी बाझहु भिसति न पाइ ॥
जोगी कै घरि जुगति दसाई ॥
तितु कारणि कनि मुँद्रा पाई ॥
मुँद्रा पाइ फिरै सँसारि ॥
जिथै किथै सिरजणहारु ॥
जेते जीअ तेते वाटाऊ ॥
चीरी आई ढिल न काऊ ॥
एथै जाणै सु जाइ सिञांणै ॥
होरु फकड़ु हिँदू मुसलमाणै ॥
सभना का दरि लेखा होइ ॥
करणी बाझहु तरै न कोइ ॥
सचो सचु वखाणै कोइ ॥
नानक अगै पुछ न होइ ॥२॥

ਪਉੜੀ ॥

ਹਰਿ ਕਾ ਮੰਦਰੁ ਆਖੀਐ ਕਾਇਆ ਕੋਟੁ ਗੜੁ ॥
ਅੰਦਰਿ ਲਾਲ ਜਵੇਹਰੀ ਗੁਰਮੁਖਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਪੜੁ ॥
ਹਰਿ ਕਾ ਮੰਦਰੁ ਸਰੀਰੁ ਅਤਿ ਸੋਹਣਾ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦਿੜੁ ॥
ਮਨਮੁਖ ਆਪਿ ਖੁਆਇਅਨੁ ਮਾਇਆ ਮੋਹ ਨਿਤ ਕੜੁ ॥
ਸਭਨਾ ਸਾਹਿਬੁ ਏਕੁ ਹੈ ਪੂਰੈ ਭਾਗਿ ਪਾਇਆ ਜਾਈ ॥੧੧॥

पउड़ी ॥

हरि का मँदरु आखीऐ काइआ कोटु गड़ु ॥
अँदरि लाल जवेहरी गुरमुखि हरि नामु पड़ु ॥
हरि का मँदरु सरीरु अति सोहणा हरि हरि नामु दि्ड़ु ॥
मनमुख आपि खुआइअनु माइआ मोह नित कड़ु ॥
सभना साहिबु एकु है पूरै भागि पाइआ जाई ॥११॥

सलोक महला – १

इस शब्द में गुरु जी तत्कालीन कई ऐसे लोगों पर टिप्पणी करते हैं जो रहन सहन और भाव भंगिमा के अनुसार तो सँत सदाचारी अथवा योगी आदि जैसा आचार व्यवहार रखते थे, परन्तु, वास्तविक रूप में झूठ पाखँड तथा पापकर्मों में अधिक संलग्न होते थे । उनका कहना है: (हे' मेरे मित्रो, आजकल जो स्वयं को) सत्यनिष्ठ एवं दानकर्ता कहते हैं वह वास्तव में (धन का संचय) पाप वृत्तियों के द्वारा करते हैं और फिर (उसमें से अल्प मात्र धन) दान कर देते हैं ।(सांसारिक धन को पाने के लिये वह स्वयं को गुरु कहला कर) अन्य लोगों के घरों में गुरु दीक्षा देने जाते हैं । एक स्त्री (भले ही स्वयं को पतिव्रता कहती रहे, परन्तु, वह वास्तव में) पति के द्वारा कमाये धन से ही प्रेम करती है, (अन्यथा, वह यह चिंता नहीं करती कि) भले ही वह कहीं से भी आये और कहीं भी जाये । शास्त्र वेद और अन्य ग्रंथों में क्या लिखा है उसका पालन कोई नहीं करता (सभी अपने मन के कहे अनुसार चलते हैं, अथवा) स्वयं की पूजा होती रहती है । एक क़ाज़ी जी, जो न्याय करने के लिये आसन पर बैठते हैं और खुदा के नाम की माला फेरते रहते हैं, वह घूस लेकर दूसरे के अधिकार का हनन कर देते हैं ; यदि कोई उनसे इस विषय पर प्रश्न करता है तो वह उसे (किसी न्यायिक पुस्तक से) कुछ पढ़ कर झूठा निर्णय सुना देते हैं । (कुछ लोग जो स्वयं को गुरु, अथवा, धार्मिक अगुआ मानते हैं) वह मुसलमान के मँत्र (कलमा) को सुन कर हृदय में रखते हैं । ऐसे लोग दूसरे लोगों को लूटते हैं और फिर उनसे मुँह फेर लेते हैं । ऐसे हिंदू को कोई जरा देखे, जो अपने रसोईघर को गोबर से लीप पोत कर उसे पवित्र मानता है । इसी प्रकार एक योगी जो गृहस्थ है, उसने जटायें बना रखी हैं और विभूति भी मली हुई है, उसके बच्चे उसके आगे पीछे रोते घूम रहे हैं (क्योंकि, अभी भी उसका परिवार उस पर आश्रित है, इस प्रकार) उसने योग (प्रभु से मिलाप) भी प्राप्त नहीं किया और साथ ही (संसार में अपना धर्म निभाने की) युक्ति भी गँवा ली ।(समझ में नहीं आता) कि किस कारण से उसने अपने सिर में राख (विभूति) डाल ली । हे' नानक, यही कलियुग का चिह्न है कि लोग जो भी कुछ कहते अथवा करते हैं उसी को उचित तथा मान्य समझते हैं ।।(१)

महला - १

उपरोक्त श्लोक में गुरु जी ने उन लोगों पर टिप्पणी की जो स्वयं को योगी, संत अथवा न्यायाधीश मानते थे, परन्तु, वास्तव में वह अपने समय के महा पाखँडी और झूठे लोग थे । अब वह यहाँ इस श्लोक में उस समय के कुछ और पहलुओं पर टिप्पणी करते हुये बताते हैं कि कैसे कुछ लोगों ने कोई विशेष प्रकार के परिधान तथा वस्त्र धारण करके, अथवा, कर्मकांड और शास्त्रीय विधियों द्वारा स्वयं को विभिन्न धर्मों के विशेषज्ञ घोषित किया और अपने चरित्र तथा व्यवहार को शुभ अथवा पुण्य कर्मों के द्वारा पवित्र किये बिना यह दावा करते रहे कि वह स्वर्ग के भागी बनेंगे । ऐसे सभी लोगों से गुरु जी का कहना है कि पुण्य एवं पवित्र कर्मों को किये बिना केवल वाह्य रूप से विशेष परिधान धारण करना एवं कर्मकांड निभाने का कोई लाभ नहीं है ।वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जब किसी हिंदू परिवार में बच्चा जन्म लेता है तब (उसकी किसी विशेष आयु पर) कोई दूसरा हिंदू (ब्राह्मण) मंत्र उच्चारण कर उसके गले में पवित्र यज्ञोपवीत (सूती जनेऊ) धारण करवा कर उसे पूर्ण हिंदू घोषित कर देता है । परन्तु, उस पवित्र जनेऊ को धारण करने के पश्चात भी यदि वह मनुष्य दुष्ट कर्म करता है तब उसके किसी स्नान अथवा मुस्लिमों की भाँति शरीर के शुद्धीकरण करने से (प्रभु के घर में) स्वीकृत नहीं मिल सकेगी "।

इसी प्रकार, एक मुसलमान भी अपने धर्म की प्रशंसा करता है और कहता है : " पैगम्बर को अपना गुरु माने बिना कोई भी (स्वर्ग में) स्थान नहीं पा सकता । प्रत्येक जन, प्रभु (के महल) का राह बताता है पर वहाँ पर कोई ही पहुँच पाता है, क्योंकि, नेक कामों को किये बिना कोई भी बहिश्त (स्वर्ग) में प्रवेश नहीं कर सकता "।

(योगी जनों के लिये भी यही सत्य है कि जब भी कोई) योगी के घर (मठ में प्रभु के साथ योग अथवा मिलन के हेतु जाता है तब ऐसी) युक्ति बताई जाती है जिसके कारण उसे कानों में मुंद्रा पहननी होती है । मुंद्रा पहन कर वह संसार में भ्रमण करता है (और यह दावा करता है कि केवल वही प्रभु से एकरूप होने की राह जानता है ।अपना घर परिवार त्याग कर वह जंगलों पर्वतों आदि में घूमता है, परन्तु) यह नहीं जानता कि सृजनकर्ता यहाँ, वहाँ, जिधर भी देखो सभी जगह विद्यमान है । जितने संसार में जीव हैं, उतने ही बटुक (यात्री) हैं, जब भी (संसार से जाने के लिये उनकी) पुकार हुई तभी बिना किसी ढील अथवा विलम्ब किये जाना पड़ेगा । जो मनुष्य (प्रभु पर इस लोक में) विश्वास करता है वह (इस संसार से जाने के पश्चात भी) परलोक में उसे पहचान लेगा । (ऐसा कहना कि कोई इस लिये स्वर्ग जायेगा कि वह) हिंदू है अथवा मुसलमान है, पूर्ण रूप से निरर्थक है । (प्रभु के घर में) सभी का निर्णय उनके द्वारा संसार में किये गये कर्मों पर आधारित है, क्योंकि, सदाचार किये बिना किसी का उद्धार नहीं होता । कोई बिरला मनुष्य ही सच्चे प्रभु का सच्चा गुणगान और बखान करता है ।

हे' नानक, ऐसे मनुष्य को (परलोक में) आगे जाकर कोई हिसाब-किताब नहीं देना पड़ता "।(२)

पउड़ी

जैसा कि गुरु जी ने उपरोक्त श्लोक के अंत में कहा कि जो केवल सच्चे प्रभु को ध्यान में रखता है उसे परलोक में कोई ब्यौरा नहीं देना पड़ता । अब यहाँ वह इस पउड़ी में कहते हैं कि हम कैसे उस प्रभु को स्मरण करें और वह कहाँ बसते हैं । इस पर उनका कथन है : "(हे' मेरे मित्रो), यह हमारी काया एक क़िला अथवा गढ़ के समान है जिसे हरि का मंदिर कह सकते हैं । गुरु के साथ रह कर हे' मानव, तुम हरि के नाम को पढ़ो, जानो, तुम्हें इस मंदिर के अंदर (दैवी गुणों रूपी) लाल एवं रत्नों की उपलब्धि होगी । हाँ, यह शरीर जो हरि का मंदिर है, वह अति सुंदर है उसमें हरि के नाम को दृढ़ता से बसाओ। (जबकि) अंहकारी मनुष्य जो नित्य ही सांसारिक मायामोह में उलझे रहने के कारण कष्ट पाते रहते हैं, उन्हें तो स्वयं ही (प्रभु ने सही मार्ग से) भटका रखा है । (परन्तु, एक तथ्य स्मरण रखना चाहिये कि) सभी जीवों का स्वामी केवल एक ही प्रभु है जिसे हम अपने पूर्ण सौभाग्य से ही प्राप्त कर सकते हैं "।(११)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि इस बात का कोई महत्व नहीं कि हम सामाजिक स्तर पर भले ही कितने महान हों, किसी भी धर्म के अनुयायी हों, कैसे भी परिधान अथवा वेशभूषा पहनते हों तथा कितने ही कर्मकांड एवं शास्त्रीय विधियाँ निभाते रहे हों, परन्तु, फिर भी हम सदाचारी कर्मों एवं प्रभु नाम का ध्यान किये बिना उसके घर में प्रवेश नहीं पा सकते । वह सर्वश्रेष्ठ एवं गुणनिधान प्रभु हमारे अंदर ही निवास करता है ।

ਪੰਨਾ ੯੫੩

ਸਲੋਕੁ ਮਃ ੧ ॥

ਸਹੰਸਰ ਦਾਨ ਦੇ ਇੰਦ੍ਰੁ ਰੋਆਇਆ ॥
ਪਰਸ ਰਾਮੁ ਰੋਵੈ ਘਰਿ ਆਇਆ ॥
ਅਜੈ ਸੁ ਰੋਵੈ ਭੀਖਿਆ ਖਾਇ ॥
ਐਸੀ ਦਰਗਹ ਮਿਲੈ ਸਜਾਇ ॥
ਰੋਵੈ ਰਾਮੁਨਿਕਾਲਾ ਭਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੯੫੪

ਸੀਤਾ ਲਖਮਣੁ ਵਿਛੁੜਿ ਗਇਆ ॥
ਰੋਵੈ ਦਹਸਿਰੁ ਲੰਕ ਗਵਾਇ ॥
ਜਿਨਿ ਸੀਤਾ ਆਦੀ ਡਉਰੂ ਵਾਇ ॥
ਰੋਵਹਿ ਪਾਂਡਵ ਭਏ ਮਜੂਰ ॥
ਜਿਨ ਕੈ ਸੁਆਮੀ ਰਹਤ ਹਦੂਰਿ ॥
ਰੋਵੈ ਜਨਮੇਜਾ ਖੁਇ ਗਇਆ ॥
ਏਕੀ ਕਾਰਣਿ ਪਾਪੀ ਭਇਆ ॥
ਰੋਵਹਿ ਸੇਖ ਮਸਾਇਕ ਪੀਰ ॥
ਅੰਤਿ ਕਾਲਿ ਮਤੁ ਲਾਗੈ ਭੀੜ ॥
ਰੋਵਹਿ ਰਾਜੇ ਕੰਨ ਪੜਾਇ ॥
ਘਰਿ ਘਰਿ ਮਾਗਹਿ ਭੀਖਿਆ ਜਾਇ ॥
ਰੋਵਹਿ ਕਿਰਪਨ ਸੰਚਹਿ ਧਨੁ ਜਾਇ ॥
ਪੰਡਿਤ ਰੋਵਹਿ ਗਿਆਨੁ ਗਵਾਇ ॥
ਬਾਲੀ ਰੋਵੈ ਨਾਹਿ ਭਤਾਰੁ ॥
ਨਾਨਕ ਦੁਖੀਆ ਸਭੁ ਸੰਸਾਰੁ ॥
ਮੰਨੇ ਨਾਉ ਸੋਈ ਜਿਣਿ ਜਾਇ ॥
ਅਉਰੀ ਕਰਮ ਨ ਲੇਖੈ ਲਾਇ ॥੧॥

ਮਃ ੨ ॥

ਜਪੁ ਤਪੁ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਮੰਨਿਐ ਅਵਰਿ ਕਾਰਾ ਸਭਿ ਬਾਦਿ ॥
ਨਾਨਕ ਮੰਨਿਆ ਮੰਨੀਐ ਬੁਝੀਐ ਗੁਰ ਪਰਸਾਦਿ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਕਾਇਆ ਹੰਸ ਧੁਰਿ ਮੇਲੁ ਕਰਤੈ ਲਿਖਿ ਪਾਇਆ ॥
ਸਭ ਮਹਿ ਗੁਪਤੁ ਵਰਤਦਾ ਗੁਰਮੁਖਿ ਪ੍ਰਗਟਾਇਆ ॥
ਗੁਣ ਗਾਵੈ ਗੁਣ ਉਚਰੈ ਗੁਣ ਮਾਹਿ ਸਮਾਇਆ ॥
ਸਚੀ ਬਾਣੀ ਸਚੁ ਹੈ ਸਚੁ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਇਆ ॥
ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਆਪੇ ਆਪਿ ਹੈ ਆਪੇ ਦੇਇ ਵਡਿਆਈ ॥੧੪॥

पृ-९५३

सलोक महला १॥

सहँसर दान दे इँद्रु रोआइआ ॥
परस रामु रोवै घरि आइआ ॥
अजै सु रोवै भीखिआ खाइ ॥
ऐसी दरगह मिलै सजाइ ॥
रोवै रामु निकाला भइआ

पृ-९५४

सीता लखमणु विछुड़ि गइआ ॥
रोवै दहसिरु लँक गवाइ ॥
जिनि सीता आदी डउरू वाइ ॥
रोवहि पांडव भए मजूर ॥
जिन कै सुआमी रहत हदूरि ॥
रोवै जनमेजा खुइ गइआ ॥
एकी कारणि पापी भइआ ॥
रोवहि सेख मसाइक पीर ॥
अँति कालि मतु लागै भीड़ ॥
रोवहि राजे कँन पड़ाइ ॥
घरि घरि मागहि भीखिआ जाइ ॥
रोवहि किरपन सँचहि धनु जाइ ॥
पँडित रोवहि गिआनु गवाइ ॥
बाली रोवै नाहि भतारु ॥
नानक दुखीआ सभु सँसारु ॥
मँने नाउ सोई जिणि जाइ ॥
अउरी करम न लेखै लाइ ॥१॥

महला २॥

जपु तपु सभु किछु मँनिऐ अवरि कारा सभि बादि ॥
नानक मँनिआ मँनीऐ बुझीऐ गुर परसादि ॥२॥

पउड़ी

काइआ हँस धुरि मेलु करतै लिखि पाइआ ॥
सभ महि गुपतु वरतदा गुरमुखि प्रगटाइआ ॥
गुण गावै गुण उचरै गुण माहि समाइआ ॥
सची बाणी सचु है सचु मेलि मिलाइआ ॥
सभु किछु आपे आपि है आपे देइ वडिआई ॥१४॥

सलोक महला - १

इस शब्द में गुरु जी प्रभु की लीला का एक और रोचक पहलू प्रस्तुत कर रहें हैं जो यह प्रकट करता है कि दुख दर्द एवं पीड़ा केवल सामान्य लोगों तक ही सीमित नहीं है, अपितु, बड़े बड़े राजा महाराजा तथा देवी देवता भी किसी ना किसी कारणवश दुखी होकर रोते रहे हैं। अतः, जब भी कभी हमें किसी कष्ट अथवा कठिन समय का सामना करना पड़े तो रोना और असंतोष नहीं प्रकट करना चाहिए । वह यह कहते हैं कि वह कैसे लोग होते हैं जो जीवन के खेल में विजयी रहते हैं और संसार में से सुख व शांति की भावना के साथ विदा लेते हैं । अपने विचारों की पुष्टि गुरु जी यहाँ अनेकों पौराणिक कथाओं के साथ कर रहे हैं ।

वह कहते हैं: “(हे’ मेरे मित्रो, गौतम ऋषि ने अपनी पत्नी अहल्या का बलात्कार करने के कारण क्रुद्ध होकर इंद्र देवता के शरीर पर) सहस्त्र योनियों का दान देकर इंद्रदेव को रुला दिया था । उच्च कोटि के ब्राह्मण परशुराम (क्षत्रियों द्वारा अपने पुत्र के वध किये जाने पर क्रुद्ध होकर समस्त क्षत्री कुल का विनाश करने निकल पड़े थे, परन्तु, जब राम ने धनुष तोड़ कर उनकी शक्ति का ह्रास किया तब) रोते हुए अपने घर आये । इसी प्रकार, महाराजा अजय (भगवान राम के पितामह) भी बहुत रोये जब उन्हें भिक्षा (के रूप में मिले गोबर) को खाना पड़ा (क्योंकि, उन्होंने किसी समय दान में गोबर दिया था) । ईश्वर के दरबार से ऐसे ही दंड मिलते हैं ।

अब गुरु जी रामायण के सदंर्भ में रामचन्द्र जी के चौदह साल के बनवास पर कहते हैं :“(हे’ मेरे मित्रो, यहाँ तक कि) राम भी रोये जब उन्हें बनवास दिया गया और उन्हें (अपनी प्रिय पत्नी) सीता और भाई लक्ष्मण से बिछुड़ने की संभावना होने लगी और दस शीश वाला रावण (जो भिक्षुक के भेष में) डमरु बजा कर सीता का हरण कर लाया था, वह भी रोया जब उसने अपनी लंका (राम के साथ युद्ध में) गँवा दी “॥

आगे अब, गुरु जी महाभारत की कथा का उदाहरण देते हुये कहते हैं : “पाँचों पांडव भाई भी रोये जिनके साथ सदैव उनके स्वामी (कृष्ण) रहते थे (और स्वयं राजा होते हुए) उन्हें श्रमिकों की भाँति काम करना पड़ा । इसी प्रकार, राजा जन्मेज्य (जिसके द्वारा अनजाने में अठारह ब्राह्मणों का वध हुया था) भी रोये जब वह इस अनजाने में हुये एक पाप के कारण पापी कहलाये ”।

पौराणिक कथायों के उद्धरण के पश्चात अब गुरु जी साधारण जीवन के कुछ उदाहरण देते हुये यह वर्णन करते हैं कि किस प्रकार से लोग, जो कि सम्मानित और उच्च पदों पर आसीन होते हैं, वह भी एक ना एक कारण से रोते हैं । वह कहते हैं : “ (हे’ मेरे मित्रो), यहाँ तक कि शेख़, सिद्ध पुरुष एवं पीर भी इस भय से रोते हैं कि उन्हें अपने अंतिम काल में कोई पीड़ा ना सताये । अनेक राजा लोग भी रोते हैं जब कानों में छिद्र करवा (कुंडल पहन योगी बन) कर घर घर में जाकर भिक्षा माँगते हैं । कृपण मनुष्य रोते हैं जब उनके संचित धन का ह्रास होने लगता है । पंडित जन अपने ज्ञान को गवाँने से रोते हैं । एक नववधू अपने पति के साथ ना होने पर रोती है । (संक्षेप में) हे’ नानक, समस्त संसार ही दुखी है । केवल वही जो प्रभु नाम में विश्वास रखता है, जीवन के खेल में विजय पाकर संसार से जाता है । (प्रभु के घर में) और किसी भी कर्म की गणना नहीं होती ”।(१)

महला - २

उपरोक्त श्लोक के अंत में गुरु जी का कथन था कि जो प्रभु के नाम में विश्वास रखता है वह (जीवन के खेल में) विजयी होकर जाता है । स्वाभाविक रूप से अब यह प्रश्न उठता है कि फिर अन्य विधियों, जैसे, पूजा अर्चना, तपस्या एवं संयम आदि से क्या तात्पर्य है । इस पर गुरु जी कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), सब प्रकार की पूजा, जाप, आत्मसंयम इत्यादि, समस्त क्रियायें स्वत: प्रभु नाम पर विश्वास एवं ध्यान करने में ही निहित हैं और इस प्रकार से अन्य सभी विधियाँ विवादित अथवा अर्थहीन हैं । हे’ नानक, केवल वही जो प्रभु नाम में विश्वास रखता है (प्रभु के घर में) जाना माना जाता है, परन्तु, इस विचार को केवल गुरु की कृपा के द्वारा ही हम बूझ पाते हैं ”।(२)

पउड़ी -

उपरोक्त श्लोक के अंत में गुरु जी का कथन था कि जो भी प्रभु नाम में आस्था रखता है वही प्रभु के घर में जाना पहचाना जाता है, परन्तु, इस तथ्य को हम केवल गुरु की कृपा के द्वारा ही समझ पाते हैं । इस पउड़ी में गुरु जी इस तथ्य को अधिक विस्तृत करते हुए कहते हैं कि किस प्रकार से हमारा तन एवं मन परस्पर संयोग में रहते हैं और कैसे हमारी आत्मा प्रभु से मिल कर उसी में लीन हो सकती है । वह कहते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), उस सृजनकर्ता ने हमारे प्रारब्ध में तन रुपी हँस और आत्मा का मिलाप लिखा हुया है, वह (प्रभु) गुप्त रूप से सभी में व्याप्त है और गुरु के द्वारा स्वयं को प्रकट करता है । जो भी कोई उस प्रभु के गुणों का गायन अथवा उच्चारण करता है वह स्वयं उन गुणों में समा जाता है । गुरु की सच्ची (पवित्र) वाणी के द्वारा ऐसा मनुष्य सच्चे प्रभु का ही मूर्तिमान हो जाता है । इस प्रकार (सच्चा गुरु) उस मनुष्य को सच्चे प्रभु के साथ जोड़ने में सहायक होता है (अतः, हमें सदा यह स्मरण रखना चाहिये कि) प्रभु स्वयं ही सब कुछ हैं और किसी को अपने साथ जुड़ने के सम्मान का वरदान स्वयं देते हैं ”। (१४)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम प्राचीन इतिहास को देखें तो पाते हैं कि महान राजा, देवतागण और ऋषि तक भी अपने कई प्रकार के कुकर्मों के दंड और दुख संताप से उबर नहीं पाये और अपने दोषों पर रोते अथवा पश्चाताप करते रहे । सत्य तो यह है कि लोग एक ना एक कारण से रोते और दुखी रहते हैं । परन्तु, केवल वही जो प्रभु नाम का ध्यान करते रहते हैं, जीवन के खेल में सफलतापूर्वक विजयी होकर प्रभु के घर में सम्मान पाते हैं । अतः, यदि हम यह निश्चित करना चाहते हैं कि हमारी आत्मा शरीर को छोड़ कर प्रभु से मिल जाये, तब हमें कोई शास्त्रीय विधियाँ, कर्मकांड, पूजा एवं संयम नियम करने की अपेक्षा, प्रभु नाम का ध्यान सच्ची श्रद्धा एवं प्रेम से करते रहना चाहिए ।

ਪੰਨਾ ੯੫੫

ਸਲੋਕ ਮਃ ੧ ॥

ਵੇਲਿ ਪਿੰਞਾਇਆ ਕਤਿ ਵੁਣਾਇਆ ॥
ਕਟਿ ਕੁਟਿ ਕਰਿ ਖੁੰਬਿ ਚੜਾਇਆ ॥
ਲੋਹਾ ਵਢੇ ਦਰਜੀ ਪਾੜੇ ਸੂਈ ਧਾਗਾ ਸੀਵੈ ॥
ਇਉ ਪਤਿ ਪਾਟੀ ਸਿਫਤੀ ਸੀਪੈ ਨਾਨਕ ਜੀਵਤ ਜੀਵੈ ॥
ਹੋਇ ਪੁਰਾਣਾ ਕਪੜੁ ਪਾਟੈ ਸੂਈ ਧਾਗਾ ਗੰਢੈ ॥
ਮਾਹੁ ਪਖੁ ਕਿਹੁ ਚਲੈ ਨਾਹੀ ਘੜੀ ਮੁਹਤੁ ਕਿਛੁ ਹੰਢੈ ॥

ਪੰਨਾ ੯੫੬

ਸਚੁ ਪੁਰਾਣਾ ਹੋਵੈ ਨਾਹੀ ਸੀਤਾ ਕਦੇ ਨ ਪਾਟੈ ॥
ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬੁ ਸਚੋ ਸਚਾ ਤਿਚਰੁ ਜਾਪੀ ਜਾਪੈ ॥੧॥

ਮਃ ੧ ॥

ਸਚ ਕੀ ਕਾਤੀ ਸਚੁ ਸਭੁ ਸਾਰੁ ॥
ਘਾੜਤ ਤਿਸ ਕੀ ਅਪਰ ਅਪਾਰ ॥
ਸਬਦੇ ਸਾਣ ਰਖਾਈ ਲਾਇ ॥
ਗੁਣ ਕੀ ਥੇਕੈ ਵਿਚਿ ਸਮਾਇ ॥
ਤਿਸ ਦਾ ਕੁਠਾ ਹੋਵੈ ਸੇਖੁ ॥
ਲੋਹੂ ਲਬੁ ਨਿਕਥਾ ਵੇਖੁ ॥
ਹੋਇ ਹਲਾਲੁ ਲਗੈ ਹਕਿ ਜਾਇ ॥
ਨਾਨਕ ਦਰਿ ਦੀਦਾਰਿ ਸਮਾਇ ॥੨॥

ਮਃ ੧ ॥

ਕਮਰਿ ਕਟਾਰਾ ਬੰਕੁੜਾ ਬੰਕੇ ਕਾ ਅਸਵਾਰੁ ॥
ਗਰਬੁ ਨ ਕੀਜੈ ਨਾਨਕਾ ਮਤੁ ਸਿਰਿ ਆਵੈ ਭਾਰੁ ॥੩॥

ਪਉੜੀ ॥

ਸੋ ਸਤਸੰਗਤਿ ਸਬਦਿ ਮਿਲੈ ਜੋ ਗੁਰਮੁਖਿ ਚਲੈ ॥
ਸਚੁ ਧਿਆਇਨਿ ਸੇ ਸਚੇ ਜਿਨ ਹਰਿ ਖਰਚੁ ਧਨੁ ਪਲੈ ॥
ਭਗਤ ਸੋਹਨਿ ਗੁਣ ਗਾਵਦੇ ਗੁਰਮਤਿ ਅਚਲੈ ॥
ਰਤਨ ਬੀਚਾਰੁ ਮਨਿ ਵਸਿਆ ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਭਲੈ ॥
ਆਪੇ ਮੇਲਿ ਮਿਲਾਇਦਾ ਆਪੇ ਦੇਇ ਵਡਿਆਈ ॥੧੯॥

पृ-९५५

सलोक महला १॥

वेलि पिँञाइआ कति वुणाइआ ॥
कटि कुटि करि खुँबि चड़ाइआ ॥
लोहा वढे दरजी पाड़े सूई धागा सीवै ॥
इउ पति पाटी सिफती सीपै नानक जीवत जीवै ॥
होइ पुराणा कपड़ु पाटै सूई धागा गँढै ॥
माहु पखु किहु चलै नाही घड़ी मुहतु किछु हँढै ॥

पृ-९५६

सचु पुराणा होवै नाही सीता कदे न पाटै ॥
नानक साहिबु सचो सचा तिचरु जापी जापै ॥१॥

महला १

सच की काती सचु सभु सारु ॥
घाड़त तिस की अपर अपार ॥
सबदे साण रखाई लाइ ॥
गुण की थेकै विचि समाइ ॥
तिस का कुठा होवै सेखु ॥
लोहू लबु निकथा वेखु ॥
होइ हलालु लगै हकि जाइ ॥
नानक दरि दीदारि समाइ ॥२॥

महला १

कमरि कटारा बँकुड़ा बँके का असवारु ॥
गरबु न कीजै नानका मतु सिरि आवै भारु ॥३॥

पउड़ी ॥

सो सतसँगति सबदि मिलै जो गुरमुखि चलै ॥
सचु धिआइनि से सचे जिन हरि खरचु धनु पलै ॥
भगत सोहनि गुण गावदे गुरमति अचलै ॥
रतन बीचारु मनि वसिआ गुर कै सबदि भलै ॥
आपे मेलि मिलाइदा आपे देइ वडिआई ॥१९॥

सलोक महला – १

पूर्व के अनेक शब्दों में गुरु जी ने हमें बताया कि वह भक्त सदैवी रूप से सच्चे हैं जो गुरु की शिक्षा का पालन करते हुए प्रभु नाम के ध्यान में रहते हैं। परन्तु, जिस भी मनुष्य ने प्रभु नाम रूपी अँमित रस के स्वाद को नहीं चखा और इधर उधर भटकता रहा, वह अब क्या करे ? इस स्थिति के निदान के लिये वह इस शब्द में एक सुंदर उदाहरण के द्वारा समझाने का प्रयास करते है, जहाँ कपास से आरंभ करके अँत तक पहनने योग्य वस्त्र बनाने की प्रक्रियाओं की तुलना वह मानव जीवन में आध्यात्मिक गुणों की पालना करने के साथ करते हैं।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, कपास को पहले) बेल कर उसकी धुनाई की जाती है, फिर उसे कात कर कपड़ा बुना जाता है और कपड़े को कूट कूट कर धोया जाता है। तत्पश्चात, उस कपड़े को दर्ज़ी लोहे की कैंची से (छोटे टुकड़ों में) काट अथवा फाड़ कर सुई धागे से सिलाई करता है (जिससे कि वह सिला हुया वस्त्र पहना जा सके। जैसे कि कपड़ों को काट और फाड़ कर सुई धागे से सिला जाता है, उसी प्रकार) हे' नानक, एक मनुष्य का खोया हुया सम्मान प्रभु की प्रशंसा करके पुनः मिल जाता है और वह मनुष्य एक बार फिर सच्चा जीवन

जीना प्रारम्भ कर देता है। (परन्तु, अंतर यह है कि) कपड़ा जब पुराना होकर फट जाता है तो सुई धागे से उसकी सिलाई करके पहनने के पश्चात वह बहुत कम समय जैसे एक माह, अथवा, पंद्रह दिन भी नहीं चलता, थोड़े समय ही चलता है। (जबकि दूसरी ओर तथ्य यह है कि) सत्य कभी पुराना नहीं होता, यदि वह सिल जाता है तो कभी (कपड़े की भाँति) नहीं फटता अथवा जब कोई प्रभु से जुड़ (सिल) जाता है तो वह कभी उससे दूर नहीं होता, क्योंकि, हे' नानक, वह प्रभु सदा ही अनंत है, सच्चा है। किन्तु, हम इस तथ्य को तभी समझ पाते हैं जब उसका ध्यान करते हैं।(१)

महला - १

गुरु जी अब मुस्लिम धर्म के नियम के अनुसार माँस के लिए जानवर को कलमा पढ़ते हुये धीरे धीरे मारने का वर्णन करते हैं। इस प्रकार से मारे गये जानवर का माँस 'कुठ्ठा ', अथवा,' हलाल' (पवित्र माँस) माना जाता है। किसी अन्य प्रक्रिया द्वारा मारे गये जीव का माँस खाना मुसलमान धर्म में वर्जित है। इस श्लोक में गुरु जी एक शेख़ से जब बात करते हैं तब वह उसे (हम सबको भी) कहते हैं कि कैसे एक मनुष्य प्रभु से संगति करने योग्य पवित्र बन सकता है।

वह कहते हैं: "(हे' शेख़), यदि सत्य की छुरी का लोहा पूर्ण रूप से सत्य है तब ऐसी छुरी की बनावट अत्यंत सुंदर लगती है। यदि अब उसे गुरु की वाणी रूपी सान पर लगा कर तेज़ करें और (वाणी द्वारा प्राप्त) गुणों की थैली के आवरण में रखें तब ऐसी छुरी से शेख़, यदि तुम्हारा 'हलाल' बनता है (अर्थात तुम एक सच्चा अथवा पवित्र जीवन जीते हो) तब शेख़ तुम देखोगे कि तुम्हारा लोभ रूपी लहू पूर्ण रूप से बह कर निकल गया है। इस प्रकार से हलाल (पवित्र एवं सदाचारी बना) हुया मनुष्य, हे' नानक, प्रभु के द्वार पर गर्व से जाता है और उसकी दृष्टि में समाता है " ।(२)

महला - १

उपरोक्त श्लोक में गुरु जी ने हमें कहा कि कैसे गुरु के परामर्श के अनुसार सत्य जीवन निर्वाह करने से मनुष्य पवित्र होकर अनंत प्रभु से एकाकार हो जाता है। किन्तु, साथ ही गुरु जी हमें हमारे गुणों, सुंदरता अथवा सम्पन्नता के प्रति अँहकार ना प्रतीत करने की चेतावनी भी देते हैं। क्योंकि हम नहीं जानते किसी भी समय किसी भूल अथवा किसी अनहोनी दशा में हम सब कुछ गँवा बैठें और हमारे नैतिक मूल्यों का पतन हो जाये। अतः, एक सुंदर दृष्टान्त के द्वारा गुरु जी अपनी बात रखते हुये कहते हैं: "(हे' मेरे मित्रो, यदि) कोई युवक कमर पर एक सुंदर कटार (छोटी तलवार) लटका कर बाँके सुंदर घोड़े पर सवार होकर भागा जा रहा है तो हे' नानक, उसे अपने पर गर्व नहीं करना चाहिये, क्योंकि, पता नहीं कब वह सिर के बल औंधा होकर गिर पड़े (और सब कुछ समाप्त हो जाये)"।(३)

पउड़ी

उपरोक्त दोनों श्लोकों में गुरु जी ने हमें यह मति प्रदान की कि कैसे गुरु की शिक्षा के अनुसार सदाचारी जीवन व्यतीत करने से लोभ, क्रोध तथा अहम की दुष्प्रवृत्तियाँ मन में से दूर होती हैं और मनुष्य प्रभु के समीप आने योग्य बन जाता है। इस पउड़ी में वह यह बताते हैं कि ऐसा गुरु का अनुयायी वास्तव में क्या करता है। वह कहते हैं: "(हे' मेरे मित्रो), गुरु की इच्छानुसार जो कोई चलता है वह सँतो की सच्ची संगति में रह कर गुरु की वाणी में रम जाता है। जिनके पास हरि नाम रूपी धन (जीवन की अंतिम यात्रा के उपरांत) व्यय करने के लिए है वह सच्चे प्रभु का ध्यान करके उसी की भाँति सच्चे हो जाते हैं। भक्तजन प्रभु का गुणगान करते हुये अति सुहावने दिखते हैं और गुरु की मति पाकर वह शांत और अचल रहते हैं। गुरु के उत्कृष्ट शब्द (वाणी) के द्वारा प्रभु नाम रूपी रत्न की समझ मन में आकर बसने लगती है। (परन्तु, यह प्रभु ही है जो अपने भक्तों को) स्वयं ही अपने से मिलाता है और उन्हें सम्मान एवं यश प्रदान करता है "।(१९)

इस पउड़ी का संदेश इस प्रकार से है कि यदि हम अपने जीवन को भरपूर रूप से संतोषजनक बना कर प्रभु के निकट रहना चाहते हैं तो हमें पूर्ण निष्ठा से अपने जीवन को सत्य अथवा सदाचारी रूप में रखना होगा। साथ ही हमें कभी भी मन में अपने धन, सुंदरता एवं गुणों पर गर्व तथा अंहकार नहीं करना चाहिये, अपितु, सँतो की संगति में रहकर प्रभु नाम के ध्यान एवं गुणगान में संलग्न रहना चाहिये। एक ना एक दिन प्रभु हम पर अपनी कृपा करके हमें अपने साथ मिला लेंगे।

ਪੰਨਾ ੯੫੭	**पृ-९५७**
ਸਲੋਕ ਮਃ ੫ ॥	**सलोक महला ५ ॥**
ਭੀੜਹੁ ਮੋਕਲਾਈ ਕੀਤੀਅਨੁ ਸਭ ਰਖੇ ਕੁਟੰਬੈ ਨਾਲਿ ॥ ਕਾਰਜ ਆਪਿ ਸਵਾਰਿਅਨੁ ਸੋ ਪ੍ਰਭ ਸਦਾ ਸਭਾਲਿ ॥ ਪ੍ਰਭੁ ਮਾਤ ਪਿਤਾ ਕੰਠਿ ਲਾਇਦਾ ਲਹੁੜੇ ਬਾਲਕ ਪਾਲਿ ॥ ਦਇਆਲ ਹੋਏ ਸਭ ਜੀਅ ਜੰਤ੍ਰ ਹਰਿਨਾਨਕ ਨਦਰਿ ਨਿਹਾਲ ॥੧॥	भीड़हु मोकलाई कीतीअनु सभ रखे कुटँबै नालि ॥ कारज आपि सवारिअनु सो प्रभ सदा सभालि ॥ प्रभु मात पिता कँठि लाइदा लहुड़े बालक पालि ॥ दइआल होए सभ जीअ जँत्र हरिनानक नदरि निहाल ॥१॥
ਪੰਨਾ ੯੫੮	**पृ-९५८**
ਮਃ ੫ ॥	**महला ५॥**
ਵਿਣੁ ਤੁਧੁ ਹੋਰੁ ਜਿ ਮੰਗਣਾ ਸਿਰਿ ਦੁਖਾ ਕੈ ਦੁਖ ॥ ਦੇਹਿ ਨਾਮੁ ਸੰਤੋਖੀਆ ਉਤਰੈ ਮਨ ਕੀ ਭੁਖ ॥ ਗੁਰਿ ਵਣੁ ਤਿਣੁ ਹਰਿਆ ਕੀਤਿਆ ਨਾਨਕ ਕਿਆ ਮਨੁਖ ॥੨॥	विणु तुधु होरु जि मँगणा सिरि दुखा कै दुख ॥ देहि नामु सँतोखीआ उतरै मन की भुख ॥ गुरि वणु तिणु हरिआ कीतिआ नानक किआ मनुख ॥२॥
ਪਉੜੀ ॥	**पउड़ी ॥**
ਸੋ ਐਸਾ ਦਾਤਾਰੁ ਮਨਹੁ ਨ ਵੀਸਰੈ ॥ ਘੜੀ ਨ ਮੁਹਤੁ ਚਸਾ ਤਿਸੁ ਬਿਨੁ ਨਾ ਸਰੈ ॥ ਅੰਤਰਿ ਬਾਹਰਿ ਸੰਗਿ ਕਿਆ ਕੋ ਲੁਕਿ ਕਰੈ ॥ ਜਿਸੁ ਪਤਿ ਰਖੈ ਆਪਿ ਸੋ ਭਵਜਲੁ ਤਰੈ ॥ ਭਗਤੁ ਗਿਆਨੀ ਤਪਾ ਜਿਸੁ ਕਿਰਪਾ ਕਰੈ ॥ ਸੋ ਪੂਰਾ ਪਰਧਾਨੁ ਜਿਸ ਨੋ ਬਲੁ ਧਰੈ ॥ ਜਿਸਹਿ ਜਰਾਏ ਆਪਿ ਸੋਈ ਅਜਰੁ ਜਰੈ ॥ ਤਿਸ ਹੀ ਮਿਲਿਆ ਸਚੁ ਮੰਤ੍ਰੁ ਗੁਰ ਮਨਿ ਧਰੈ ॥੩॥	सो ऐसा दातारु मनहु न वीसरै ॥ घड़ी न मुहतु चसा तिसु बिनु ना सरै ॥ अँतरि बाहरि सँगि किआ को लुकि करै ॥ जिसु पति रखै आपि सो भवजलु तरै ॥ भगतु गिआनी तपा जिसु किरपा करै ॥ सो पूरा परधानु जिस नो बलु धरै ॥ जिसहि जराए आपि सोई अजरु जरै ॥ तिस ही मिलिआ सचु मँत्रु गुर मनि धरै ॥३॥

सलोक महला - ५

इस श्लोक में गुरु जी कहते हैं कि प्रभु किस प्रकार से अपने बच्चों की भाँति हमारी देखभाल करते हैं और हमें संकटों से बचा कर अन्य कई प्रकार के अनुग्रहों से धन्य करते है ।

वह कहते हैं : “(हे’ मानव), सदा उस प्रभु को स्मरण कर, जो तुम्हारे सहित समस्त कुटुम्बियों की रक्षा करता है और तुम्हारे उपर आई किसी भीड़ अथवा कठिनाइयों का हरण करता है, वह स्वयं तुम्हारे काम सँवारता है । वह प्रभु माता पिता की भाँति सभी जीव जंतुयों को छोटे बच्चों के समान अपने कंठ से लगाता है और उनकी पालना करता है । हे’ नानक, हरि जिस पर अपनी कृपा दृष्टि डालता है उसके लिए सभी जीव जंतु दयालु हो जाते हैं ”।(१)

उपरोक्त कथन के अनुसार, प्रभु हमारी किसी भी इच्छा को परिपूर्ण कर सकते हैं, परन्तु, गुरु जी हमें मिथ्या सांसारिक सुख सुविधायों और विषयों की याचना करने से सतर्क कराना चाहते हैं, जो समय पाकर हमारे लिये सुख की अपेक्षा दुख का कारण बन सकते हैं । अतः, वह प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं : “ हे’ प्रभु, तुम्हारे बिना यदि कुछ और माँगू, तो वह मेरे लिये सिर दर्द बन कर और अधिक दुख का कारण बन जायेगा, इस लिये तुम मुझे अपने नाम का दान दो, जिससे मुझे संतोष मिले और मेरे मन की (सांसारिक सुख सुविधायों के प्रति) क्षुधा समाप्त हो । हे’ नानक, गुरु ने तो वन के (सूखे हुये) तृण एवं वृक्ष भी हरे कर दिये हैं (अतः, उस प्रभु के लिये समस्त सुख सुविधा और आनंद) मनुष्य को प्रदान करना कुछ कठिन नहीं है ”।(२)

पउड़ी -

उपरोक्त पँक्तियों के अनुसार कि प्रभु कितने शक्तिशाली हैं और किस प्रकार के आशीर्वाद वह हमें प्रदान कर सकते है इस पर गुरु जी हमें परामर्श देते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), इस प्रकार के दाता (प्रभु) को हमें मन में से कभी बिसरने नहीं देना चाहिये, जिसके बिना हमारा एक घड़ी पल भी काम नहीं चलता । वह हमारे अंदर भी हैं और बाहर भी हैं, अतः, कोई उनसे क्या छिपा सकता है ? (हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि) जिसके सम्मान की रक्षा वह प्रभु स्वयं कर रहे हैं वह भवसागर से तैर कर पार लग जाता है । वह जिस मनुष्य पर अपनी कृपा करते हैं

वह सच्चा भक्त दैवी रूप से ज्ञानी और सच्चा तपस्वी बन जाता है । जिसे वह बल एवं शक्ति प्रदान करते हैं वह पूर्ण रूप से प्रधान व्यक्ति हो जाता है । जिसे भी वह स्वयं सहन शक्ति देते हैं वह व्यक्ति असहनीय दशा को भी(प्रभु नाम की शक्ति से) सहन कर लेता है । परन्तु, केवल उसी मनुष्य को वह अनंत (प्रभु) मिलते हैं जिसने अपने मन में गुरु के सच्चे मंत्र को धारण कर लिया है ”।(३)

इस शब्द का संदेश यह है कि केवल प्रभु ही हमें किसी भी कठिन परिस्थिति में से निकालने के लिये सहायक होते हैं और हमें अनेकों आशीर्वाद प्रदान करते हैं । परन्तु, हमें स्वयं के भले के लिये और कुछ ना माँग कर केवल प्रभु नाम के ध्यान का वरदान माँगना चाहिये क्योंकि, वही केवल हमारी सांसारिक इच्छाओं की पूर्ति कर सकता है । अँत में यही कहना अनिवार्य है कि हमें प्रभु को कभी नहीं भुलाना चाहिये जो अति शक्तिशाली, कृपालु और अनुग्रही है ।

ਪੰਨਾ ੯੫੯

ਸਲੋਕ ਮਃ ੫ ॥

ਹਰਣਾਖੀ ਕੂ ਸਚੁ ਵੈਣੁ ਸੁਣਾਈ ਜੋ ਤਉ ਕਰੇ ਉਧਾਰਣੁ ॥
ਸੁੰਦਰ ਬਚਨ ਤੁਮ ਸੁਣਹੁ ਛਬੀਲੀ ਪਿਰੁ ਤੈਡਾ ਮਨ ਸਾਧਾਰਣੁ ॥
ਦੁਰਜਨ ਸੇਤੀ ਨੇਹੁ ਰਚਾਇਓ ਦਸਿ ਵਿਖਾ ਮੈ ਕਾਰਣੁ ॥
ਊਣੀ ਨਾਹੀ ਝੂਣੀ ਨਾਹੀ ਨਾਹੀ ਕਿਸੈ ਵਿਹੂਣੀ ॥
ਪਿਰੁ ਛੈਲੁ ਛਬੀਲਾ ਛਡਿ ਗਵਾਇਓ ਦੁਰਮਤਿ ਕਰਮਿ ਵਿਹੂਣੀ ॥
ਨਾ ਹਉ ਭੁਲੀ ਨਾ ਹਉ ਚੁਕੀ ਨਾ ਮੈ ਨਾਹੀ ਦੋਸਾ ॥
ਜਿਤੁ ਹਉ ਲਾਈ ਤਿਤੁ ਹਉ ਲਗੀ ਤੂ ਸੁਣਿ ਸਚੁ ਸੰਦੇਸਾ ॥
ਸਾਈ ਸੋੁਹਾਗਣਿ ਸਾਈ ਭਾਗਣਿ ਜੈ ਪਿਰਿ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰੀ ॥
ਪਿਰਿ ਅਉਗਣ ਤਿਸ ਕੇ ਸਭਿ ਗਵਾਏ ਗਲ ਸੇਤੀ ਲਾਇ ਸਵਾਰੀ ॥
ਕਰਮਹੀਣ ਧਨ ਕਰੈ ਬਿਨੰਤੀ ਕਦਿ ਨਾਨਕ ਆਵੈ ਵਾਰੀ ॥
ਸਭਿ ਸੁਹਾਗਣਿ ਮਾਣਹਿ ਰਲੀਆ ਇਕ ਦੇਵਹੁ ਰਾਤਿ ਮੁਰਾਰੀ ॥੧॥

ਮਃ ੫ ॥

ਕਾਹੇ ਮਨ ਤੂ ਡੋਲਤਾ ਹਰਿ ਮਨਸਾ ਪੂਰਣਹਾਰੁ ॥
ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੁਰਖੁ ਧਿਆਇ ਤੂ ਸਭਿ ਦੁਖ ਵਿਸਾਰਣਹਾਰੁ ॥
ਹਰਿ ਨਾਮਾ ਆਰਾਧਿ ਮਨ ਸਭਿ ਕਿਲਵਿਖ ਜਾਹਿ ਵਿਕਾਰ ॥
ਜਿਨ ਕਉ ਪੂਰਬਿ ਲਿਖਿਆ ਤਿਨ ਰੰਗੁ ਲਗਾ ਨਿਰੰਕਾਰ ॥
ਓਨੀ ਛਡਿਆ ਮਾਇਆ ਸੁਆਵੜਾ ਧਨੁ ਸੰਚਿਆ ਨਾਮੁ ਅਪਾਰੁ ॥
ਅਠੇ ਪਹਰ ਇਕਤੈ ਲਿਵੈ ਮੰਨੇਨਿਹੁਕਮੁ ਅਪਾਰੁ ॥

ਪੰਨਾ ੯੬੦

ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਮੰਗੈ ਦਾਨੁ ਇਕੁ ਦੇਹੁ ਦਰਸੁ ਮਨਿ ਪਿਆਰੁ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਜਿਸੁ ਤੂ ਆਵਹਿ ਚਿਤਿ ਤਿਸ ਨੋ ਸਦਾ ਸੁਖ ॥
ਜਿਸੁ ਤੂ ਆਵਹਿ ਚਿਤਿ ਤਿਸੁ ਜਮ ਨਾਹਿ ਦੁਖ ॥
ਜਿਸੁ ਤੂ ਆਵਹਿ ਚਿਤਿ ਤਿਸੁ ਕਿ ਕਾੜਿਆ ॥
ਜਿਸ ਦਾ ਕਰਤਾ ਮਿਤ੍ਰੁ ਸਭਿ ਕਾਜ ਸਵਾਰਿਆ ॥
ਜਿਸੁ ਤੂ ਆਵਹਿ ਚਿਤਿ ਸੋ ਪਰਵਾਣੁ ਜਨੁ ॥
ਜਿਸੁ ਤੂ ਆਵਹਿ ਚਿਤਿ ਬਹੁਤਾ ਤਿਸੁ ਧਨੁ ॥
ਜਿਸੁ ਤੂ ਆਵਹਿ ਚਿਤਿ ਸੋ ਵਡ ਪਰਵਾਰਿਆ ॥
ਜਿਸੁ ਤੂ ਆਵਹਿ ਚਿਤਿ ਤਿਨਿ ਕੁਲ ਉਧਾਰਿਆ ॥੬॥

पृ-९५९

सलोक महला ५ ॥

हरणाखी कू सचु वैणु सुणाई जो तउ करे उधारणु ॥
सुँदर बचन तुम सुणहु छबीली पिरु तैडा मन साधारणु ॥
दुरजन सेती नेहु रचाइओ दसि विखा मै कारणु ॥
ऊणी नाही झूणी नाही नाही किसै विहूणी ॥
पिरु छैलु छबीला छडि गवाइओ दुरमति करमि विहूणी ॥
ना हउ भुली ना हउ चुकी ना मै नाही दोसा ॥
जितु हउ लाई तितु हउ लगी तू सुणि सचु सँदेसा ॥
साई सुोहागिण साई भागणि जै पिरि किरपा धारी ॥
पिरि अउगण तिस के सभि गवाए गल सेती लाइ सवारी ॥
करमहीण धन करै बिनँती कदि नानक आवै वारी ॥
सभि सोहागणि माणहि रलीआ इक देवहु राति मुरारी ॥१॥

महला ५॥

काहे मन तू डोलता हरि मनसा पूरणहारु ॥
सतिगुरु पुरखु धिआइ तू सभि दुख विसारणहारु ॥
हरि नामा आराधि मन सभि किलविख जाहि विकार ॥
जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन रँगु लगा निरँकार ॥
ओनी छडिआ माइआ सुआवड़ा धनु सँचिआ नामु अपारु ॥
अठे पहर इकतै लिवै मँनेनि हुकमु अपारु ॥

पृ-९६०

जनु नानकु मँगै दानु इकु देहु दरसु मनि पिआरु ॥२॥

पउड़ी -

जिसु तू आवहि चिति तिस नो सदा सुख ॥
जिसु तू आवहि चिति तिसु जम नाहि दुख ॥
जिसु तू आवहि चिति तिसु कि काड़िआ ॥
जिस दा करता मित्रु सभि काज सवारिआ ॥
जिसु तू आवहि चिति सो परवाणु जनु ॥
जिसु तू आवहि चिति बहुता तिसु धनु ॥
जिसु तू आवहि चिति सो वड परवारिआ ॥
जिसु तू आवहि चिति तिनि कुल उधारिआ ॥६॥

सलोक महला - ५

यह श्लोक गुरु जी की आध्यात्मिक काव्य रचना के उच्चतम स्तर का एक और उदाहरण है जहाँ वह हमारे सम्मुख एक ऐसी नवेली वधू (आत्मा) का चित्रण करते हैं जो सर्वगुण सम्पन्न है, सुंदर है, परन्तु, अपने पति से बिछुड़ी हुई है। अतः, वह अपने मित्र एवं साथी (गुरु) के पास जाती है और उसे अपने मन की दशा व्यक्त करती है। वह बुद्धिमान तथा मेधावी मित्र (सच्चा गुरु) उसे निम्नलिखित प्रकार से पवित्र परामर्श देता है।

गुरु जी कहते हैं : " हे' मृगनयनी, मैं तुम्हें सत्य वचन सुनाता हूँ, जो तुम्हारा उद्धार करेंगे। हे' छबीली नार, इन सुंदर वचनों का श्रवण तुम करो, तुम्हारे पति (प्रभु) का हृदय सरल एवं साधारण है। (तुम उसे छोड़ कर) दुर्जनों (काम, क्रोध, अहम जैसे विकारों) से प्रेम कर रही हो, मुझे इसका कारण बताओ और दिखाओ। तुम स्वयं में किसी से कम नहीं हो, मूढ़मति वाली नहीं हो और ना ही गुण विहीन हो, परन्तु, केवल अपनी दुर्मति के कारण (सदाचारी) कर्मों को त्याग दिया और अपने आनंदमयी एवं छैल छबीले पति (प्रभु) को छोड़ कर गँवा दिया है"।

वह उदासीन वधू उत्तर देती है : " ना तो मैं कुछ भूली हूँ, ना ही मेरी कोई चूक हुई है, ना ही मेरा कोई दोष है, परन्तु, इस सच्चे संदेश को तुम सुनो, मैं तो जिस (काम) में लगाई गयी हूँ वही (काम) करने में लगी हुई हूँ "। (पर गुरु जी उससे कहते हैं कि) जिस पर प्रिय पति (प्रभु) कृपा धारण किये रखते हैं, वही नारी सोहागिन और वही सौभाग्यशाली है । प्रिय पति (प्रभु) उसके सभी अवगुण भुला कर उसे अपने कंठ से लगा कर (जन्म)सँवार देते हैं । हे' नानक, तब वह अभागी वधू विनीत भाव से पूछती है कि उसकी (अपने पति से मिलन की) बारी कब आयेगी ? (वह प्रभु से कहती है): हे' दुष्टदमनकर्ता, अन्य सभी सौहागिनें (तुम्हारे साथ) इतना आनंद पा रही हैं, कृपया मुझे भी एक रात के लिये (अपनी संगति का आनंद देने का) वरदान दो " ।(१)

महला - ५

उपरोक्त श्लोक का अंत गुरु जी ने अभागी वधू (आत्मा) के हृदय विदारक पश्चाताप से किया, जहाँ वह प्रभु से उसकी संगति पाने के लिये चिरौरी कर रही है । इस श्लोक में वह स्वयं को ऐसी वधू के स्थान पर रखते हुये अपने मन को धैर्य अथवा सान्त्वना देते हुये कहते हैं : " हे' मेरे मन, तुम क्यों व्यथित हो रहे हो, हरि तुम्हारी मन की इच्छायों के परिपूर्णकर्ता हैं । तुम्हें सच्चे गुरु (प्रभु) का ध्यान करना चाहिये जो समस्त दुखों को बिसार देने योग्य है ।हे' मेरे मन, हरि के नाम की आराधना कर, जिससे कि सभी विकार, दुख और पाप चले जाते हैं। जिनके प्रारब्ध में लिखा है वह निराकार प्रभु के रंग में रंगे जाते हैं, उन्होंने (सांसारिक) माया का स्वाद चखना त्याग दिया है और प्रभु नाम रूपी धन का अपरिमित भंडार संचित कर लिया है । वह आठों पहर एक ही (प्रभु) में लीन रहते हैं तथा उस अपरम्पार की आज्ञा का पालन करते हैं । (हे' प्रभु) नानक जन की तुमसे केवल एक ही दान के लिए याचना है कि एक बार दर्शन दो और उसके मन में अपना प्रेम बसाने की कृपा करो ।(२)

पउड़ी -

प्रभु के साथ प्रेम तथा सदैव उसके नाम का ध्यान रखने के सुंदर तथा प्रेरक आदेश देने के पश्चात, गुरु जी हमारे ऐसा करने पर हमें मिलने वाले कुछ आशीर्वादों का यहाँ वर्णन करते हैं ।वह प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं : "हे' प्रभु जिसके भी मन में तुम आते हो वह सदा सुखी रहता है ; जिसके भी मन में रहते हो उसे यमराज से दुख और भय नहीं मिलता । उसे क्या दुविधा तथा आकुलता हो सकती है जिसके मन में तुम रहते हो ? क्योंकि, जिस किसी के भी मित्र स्वयं सृजनकर्ता हों तो वह उसके सभी कार्य सँवार देते हैं । जिसके मन में (हे' प्रभु), तुम्हारा वास है वह (तुम्हारे घर में) स्वीकृत है । जिसका मन सदा तुम्हारा ध्यान करता है वह (तुम्हारे नाम रूपी धन से) अत्यधिक धनी है। जिसके मन में तुम सदा रहते हो उसे (सभी इतना स्नेह करते हैं, जैसे कि उसका) परिवार बहुत बड़ा हो । (संक्षेप में) जो कोई भी अपने मन में तुम्हें रखता है उसके समस्त कुल का उद्धार हो जाता है "।(६)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि हमें ध्यान से यह विचारना चाहिये कि यदि हम स्वयं को दुष्ट प्रवृत्तियों एवं कुसंगति में व्यस्त रखते हैं तो अपने समस्त गुणों को बिसार कर हम अपने प्रिय स्वामी प्रभु से दूर रहते हैं । अतः यदि हम प्रभु के साथ जुड़े रहना चाहते हैं तो हमें सच्चे सँतों की संगति में रहना चाहिये जो हमें प्रभु के समीप रखते हैं और सदाचार की राह बताते हैं । तभी हम सदैव कृपालु तथा क्षमा के सागर प्रभु का आनंद ले सकते हैं जो हमारे सभी कष्टों का निवारण करेंगे तथा हमारे समस्त कुल का उद्धार करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੬੧	**पृ-९६१**
ਸਲੋਕ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**सलोक महला ५ ॥**
ਹੋਹੁ ਕ੍ਰਿਪਾਲ ਸੁਆਮੀ ਮੇਰੇ ਸੰਤਾਂ ਸੰਗਿ ਵਿਹਾਵੇ ॥ ਤੁਧਹੁ ਭੁਲੇ ਸਿ ਜਮਿ ਜਮਿ ਮਰਦੇ ਤਿਨ ਕਦੇ ਨ ਚੁਕਨਿ ਹਾਵੇ ॥੧॥	होहु क्रिपाल सुआमी मेरे सँतां सँगि विहावे ॥ तुधहु भुले सि जमि जमि मरदे तिन कदे न चुकनि हावे ॥१॥
ਮਃ ੫ ॥	**महला ५॥**
ਸਤਿਗੁਰੁ ਸਿਮਰਹੁ ਆਪਣਾ ਘਟਿ ਅਵਘਟਿ ਘਟ ਘਾਟ ॥ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਜਪੰਤਿਆ ਕੋਇ ਨ ਬੰਧੈ ਵਾਟ ॥੨॥	सतिगुरु सिमरहु आपणा घटि अवघटि घट घाट ॥ हरि हरि नामु जपँतिआ कोइ न बँधै वाट ॥२॥
ਪਉੜੀ ॥	**पउड़ी ॥**
ਪੰਨਾ ੯੬੨	**पृ-९६२**
ਤਿਥੈ ਤੂ ਸਮਰਥੁ ਜਿਥੈ ਕੋਇ ਨਾਹਿ ॥ ਓਥੈ ਤੇਰੀ ਰਖ ਅਗਨੀ ਉਦਰ ਮਾਹਿ॥ ਸੁਣਿ ਕੈ ਜਮ ਕੇ ਦੂਤ ਨਾਇ ਤੇਰੈ ਛਡਿ ਜਾਹਿ॥ ਭਉਜਲੁ ਬਿਖਮੁ ਅਸਗਾਹੁ ਗੁਰ ਸਬਦੀ ਪਾਰਿ ਪਾਹਿ ॥ ਜਿਨ ਕਉ ਲਗੀ ਪਿਆਸ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਸੇਇ ਖਾਹਿ ॥ ਕਲਿ ਮਹਿ ਏਹੋ ਪੁੰਨੁ ਗੁਣ ਗੋਵਿੰਦ ਗਾਹਿ ॥ ਸਭਸੈ ਨੋ ਕਿਰਪਾਲੁ ਸਮ੍ਹਾਲੇ ਸਾਹਿ ਸਾਹਿ ॥ ਬਿਰਥਾ ਕੋਇ ਨ ਜਾਇ ਜਿ ਆਵੈ ਤੁਧੁ ਆਹਿ ॥੯॥	तिथै तू समरथु जिथै कोइ नाहि ॥ ओथै तेरी रख अगनी उदर माहि ॥ सुणि कै जम के दूत नाइ तेरै छडि जाहि ॥ भउजलु बिखमु असगाहु गुर सबदी पारि पाहि ॥ जिन कउ लगी पिआस अँमृतु सेइ खाहि ॥ कलि महि एहो पुँनु गुण गोविँद गाहि ॥ सभसै नो किरपालु समाले साहि साहि ॥ बिरथा कोइ न जाइ जि आवै तुधु आहि ॥९॥

सलोक महला – ५

इस श्लोक में गुरु जी यह प्रकट करते हैं कि हमें प्रभु के सम्मुख किस प्रकार से प्रार्थना करनी चाहिये । प्रभु को सम्बोधित करते हुये वह कहते हैं : “ हे’ मेरे स्वामी, कृपा करो (और मुझे वरदान दो कि) मेरा जीवन (तुम्हारे) सँतो की संगति में व्यतीत हो, क्योंकि, जो तुम्हें बिसार चुके हैं वह बारम्बार जन्म लेकर मृत्यु को प्राप्त करते रहते हैं, इस लिये, उनके दुख तथा संताप कभी समाप्त नहीं होते ”।(१)

महला - ५

प्रभु से प्रार्थना करने के पश्चात, गुरु जी हमें सम्मति देते हैं : “(हे’ मेरे मित्रो), अपने कठिन तथा संकटमय समय एवं दशा में सच्चे गुरु का स्मरण करो, क्योंकि, हरि के नाम का बारम्बार जाप और ध्यान करने से कोई भी तुम्हारे राह में विघ्न नहीं डाल सकता ”।(२)

पउड़ी -

उपरोक्त पउड़ी में गुरु जी ने कहा कि हरि नाम का ध्यान करते रहने से कोई भी तुम्हारे राह में रोड़ा नहीं अटका सकता । इस पउड़ी में वह यह व्यक्त करते हैं कि हरि कितने सामर्थ्यवान हैं । वह प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं : “ हे’ प्रभु, जहाँ पर और कोई कुछ नहीं कर सकता, वहाँ पर तुम्हीं (किसी की भी रक्षा के लिये) सामर्थ्य रखते हो, यहाँ तक कि माता के गर्भ की अग्नि में भी शिशु को रक्षा प्रदान करते हो । तुम्हारे नाम को सुन कर यमदूत भी भाग जाते हैं । गुरु के शब्दों (वाणी पर विचार और अनुसरण) से कठिन, भयानक और अथाह भवसागर पार हो जाता है । परन्तु, केवल वही इस (प्रभु नाम रुपी) अँमित का पान करने योग्य हैं, जिन्हें (प्रभु नाम की) प्यास लगी रहती है। कलियुग में यही तो एक (सच्चा) पुण्य एवँ पवित्र काम है कि गोबिँद का गुणगान किया जाये । प्रभु सभी पर कृपालु होकर उनकी श्वास, श्वास पालना करते हैं । (हे’ प्रभु) जो भी कोई तुम्हारी शरण में आता है वह कभी खाली हाथ अथवा निराश वापिस नहीं जाता ”।(९)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि प्रभु सर्वशक्तिमान हैं और किसी भी दशा में जब और कोई सहायता करने योग्य नहीं होता तब वहाँ वह हमारी रक्षा करते हैं । वह हमारे सभी कष्टों तथा दुख दर्द का निवारण करते हैं और जो भी कोई उनकी शरण में जाता है, कभी निराश नहीं होता । हमें प्रभु से प्रार्थना करते रहना चाहिये कि वह अपने पवित्र सँतो की संगति हमें प्रदान करें जिसके द्वारा हम उनके नाम का ध्यान करते रहें ।

ਪੰਨਾ ੯੬੩

ਸਲੋਕ ਮ: ੫ ॥

ਉਸਤਤਿ ਨਿੰਦਾ ਨਾਨਕ ਜੀ ਮੈ ਹਭ ਵਞਾਈ ਛੋੜਿਆ ਹਭੁ ਕਿਝੁ ਤਿਆਗੀ ॥
ਹਭੇ ਸਾਕ ਕੂੜਾਵੇ ਡਿਠੇ ਤਉ ਪਲੈ ਤੈਡੈ ਲਾਗੀ ॥੧॥

ਮ: ੫ ॥

ਫਿਰਦੀ ਫਿਰਦੀ ਨਾਨਕ ਜੀਉ ਹਉ ਫਾਵੀ ਥੀਈ ਬਹੁਤੁ ਦਿਸਾਵਰ ਪੰਧਾ ॥
ਤਾ ਹਉ ਸੁਖਿ ਸੁਖਾਲੀ ਸੁਤੀ ਜਾ ਗੁਰਮਿਲਿ ਸਜਣੁ ਮੈ ਲਧਾ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੯੬੪

ਪਉੜੀ ॥

ਸਭੇ ਦੁਖ ਸੰਤਾਪ ਜਾਂ ਤੁਧਹੁ ਭੁਲੀਐ ॥
ਜੇ ਕੀਚਨਿ ਲਖ ਉਪਾਵ ਤਾਂ ਕਹੀ ਨ ਘੁਲੀਐ ॥
ਜਿਸ ਨੋ ਵਿਸਰੈ ਨਾਉ ਸੁ ਨਿਰਧਨੁ ਕਾਂਢੀਐ ॥
ਜਿਸ ਨੋ ਵਿਸਰੈ ਨਾਉ ਸੋ ਜੋਨੀ ਹਾਂਢੀਐ ॥
ਜਿਸੁ ਖਸਮੁ ਨ ਆਵੈ ਚਿਤਿ ਤਿਸੁ ਜਮੁ ਡੰਡੁ ਦੇ ॥
ਜਿਸੁ ਖਸਮੁ ਨ ਆਵੀ ਚਿਤਿ ਰੋਗੀ ਸੇ ਗਣੇ ॥
ਜਿਸੁ ਖਸਮੁ ਨ ਆਵੀ ਚਿਤਿ ਸੁ ਖਰੋ ਅਹੰਕਾਰੀਆ ॥
ਸੋਈ ਦੁਹੇਲਾ ਜਗਿ ਜਿਨਿ ਨਾਉ ਵਿਸਾਰੀਆ ॥੧੪॥

पृ-९६३

सलोक महला ५॥

उसतति निँदा नानक जी मै हभ वञाई छोड़िआ हभु किझु तिआगी ॥
हभे साक कूड़ावे डिठे तउ पलै तैडै लागी ॥१॥

महला ५ ॥

फिरदी फिरदी नानक जीउ हउ फावी थीई बहुतु दिसावर पँधा ॥
ता हउ सुख सुखाली सुती जा गुरमिलि सजणु मै लधा ॥२॥

पृ-९६४

पउड़ी ॥

सभे दुख सँताप जां तुधहु भुलीऐ ॥
जे कीचनि लख उपाव तां कही न घुलीऐ ॥
जिस नो विसरै नाउ सु निरधनु कांढीऐ ॥
जिस नो विसरै नाउ सो जोनी हांढीऐ ॥
जिसु खसमु न आवै चिति तिसु जमु डँडु दे ॥
जिसु खसमु न आवी चिति रोगी से गणे ॥
जिसु खसमु न आवी चिति सु खरो अँहकारीआ ॥
सोई दुहेला जगि जिनि नाउ विसारीआ ॥१४॥

सलोक महला - ५

इस श्लोक की दूसरी पंक्ति उस समय बहुधा गायी जाती है जब सिख समाज में विवाह के अवसर पर कन्या का पिता फेरों के आँचल का एक छोर वर के हाथ में तथा दूसरा छोर कन्या के हाथ में थमा कर उसे एक प्रकार से वर को सौंप देता है । किन्तु, इस श्लोक में गुरु जी इस उपमा का उपयोग यह दर्शाने के लिये करते हैं कि मानव को कैसे सभी सांसारिक सम्बंधों को भुलाकर पूर्ण रूप से प्रभु पर आश्रित होना चाहिये । वह कहते हैं : " हे' नानक जी, मैंने सभी की प्रशंसा तथा निंदा करनी छोड़ दी है और सभी सांसारिक धंधे त्याग दिये हैं । मैंने स्वयं देखा है कि समस्त (सांसारिक) सम्बंध मिथ्या हैं, इस लिये, मैंने तेरे आँचल को आकर थाम लिया है " ।(१)

महला – ५

उपरोक्त श्लोक में गुरु जी ने कहा कि सभी सांसारिक सम्बंधों को मिथ्या जानकर उन्होंने प्रभु की शरण ली है । अब इस श्लोक में वह यह बताते हैं कि ऐसा करने पर उन्हें किस प्रकार का सुख प्राप्त हुया । वह पुनः, अकेली वधू (प्रभु विहीन आत्मा) के रूपक का उपयोग करते हैं जो अपने पति को ढूँढ रही है । वह कहते हैं : " हे' नानक जी, मैं इधर उधर देश विदेश की अनेक राहों पर घूमती भटकती थक तथा हताश हो गयी हूँ । परन्तु जब मैं गुरु से मिली और मैंने उसे एक सज्जन के रूप में ढूँढ लिया, केवल तभी (मेरी सांसारिक विषयों पर भटकन समाप्त हुयी और) मैं सुखी और सहज होकर सो सकी "।(२)

पउड़ी -

जब हम प्रभु को बिसार देते हैं, तब हमें किस प्रकार से दुख और संकट घेर लेते हैं इसका वर्णन गुरु जी अब यहाँ पर इस पउड़ी में कर रहे हैं । वह प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं : " हे' ईश्वर, जब हम तुम्हें भुला बिसरा देते हैं तो हम सब प्रकार के दुख और संताप से पीड़ित होते हैं । फिर यदि हम लाखों उपाय (उन्हें दूर करने के लिये करें) तब भी वह दूर नहीं होते और हमें सुख नहीं मिलता । जिस किसी ने तुम्हारे नाम का ध्यान भुला दिया वही (आध्यात्मिक रूप से पूर्णतया) निर्धन कहलाता है । जिसको भी तुम्हारा नाम बिसर जाता है वह विभिन्न योनियों (जन्मों) में जूझता रहता है । जो अपने मन में स्वामी (प्रभु) का स्मरण नहीं करता है उसके सर पर यमराज का दंड लगता है। जिसके भी हृदय में स्वामी (प्रभु) नही रहते उसकी गणना रोगियों में होती है । वह मनुष्य विशुद्ध रूप से अहंकारी है जिसके मन में स्वामी का ध्यान नहीं होता । (संक्षेप में), वह मनुष्य संसार में दुविधा के कारण घोर दुखी तथा अभागा है जिसने प्रभु नाम को बिसरा दिया है " ।(१४)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि प्रशंसा एवं निंदा के समस्त विचारों को त्याग कर हमें सदैव पूर्ण रूप से ईश्वर पर आश्रित रह कर उसके नाम का ध्यान करना चाहिए तभी हम अपने दुख संताप तथा जन्म मरण के फेरों से मुक्त होकर अनंत शान्ति तथा सुख का अनुभव करेंगे । यदि हम प्रभु का नाम भुला देंगे तो संसार में अनेकों जन्मों के फेरों में पड़े कष्ट पाते हुए दुखी रहेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੬੫

ਸਲੋਕ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਕਬੀਰ ਧਰਤੀ ਸਾਧ ਕੀ ਤਸਕਰ ਬੈਸਹਿ ਗਾਹਿ ॥
ਧਰਤੀ ਭਾਰਿ ਨ ਬਿਆਪਈ ਉਨ ਕਉ ਲਾਹੂ ਲਾਹਿ ॥੧॥

ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਕਬੀਰ ਚਾਵਲ ਕਾਰਣੇ ਤੁਖ ਕਉ ਮੁਹਲੀ ਲਾਇ ॥
ਸੰਗਿ ਕੁਸੰਗੀ ਬੈਸਤੇ ਤਬ ਪੂਛੇ ਧਰਮ ਰਾਇ ॥੨॥

ਪਉੜੀ ॥

ਆਪੇ ਹੀ ਵਡ ਪਰਵਾਰੁ ਆਪਿ ਇਕਾਤੀਆ ॥
ਆਪਣੀ ਕੀਮਤਿ ਆਪਿ ਆਪੇ ਹੀ ਜਾਤੀਆ ॥
ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਆਪੇ ਆਪਿ ਆਪਿ ਉਪੰਨਿਆ ॥
ਆਪਣਾ ਕੀਤਾ ਆਪਿ ਆਪਿ ਵਰੰਨਿਆ ॥
ਧੰਨੁ ਸੁ ਤੇਰਾ ਥਾਨੁ ਜਿਥੈ ਤੂ ਵੁਠਾ ॥

ਪੰਨਾ ੯੬੬

ਧੰਨੁ ਸੁ ਤੇਰੇ ਭਗਤ ਜਿਨੀ ਸਚੁ ਤੂੰ ਡਿਠਾ ॥
ਜਿਸ ਨੋ ਤੇਰੀ ਦਇਆ ਸਲਾਹੇ ਸੋਇ ਤੁਧੁ ॥
ਜਿਸੁ ਗੁਰ ਭੇਟੇ ਨਾਨਕ ਨਿਰਮਲ ਸੋਈ ਸੁਧੁ ॥੨੦॥

पृ-९६५

सलोक महला ५॥

कबीर धरती साध की तसकर बैसहि गाहि॥
धरती भारि न बिआपई उन कउ लाहू लाहि ॥१॥

महला ५॥

कबीर चावल कारणे तुख कउ मुहली लाइ ॥
सँगि कुसँगी बैसते तब पूछे धरम राइ ॥२॥

पउड़ी ॥

आपे ही वड परवारु आपि इकातीआ ॥
आपणी कीमति आपि आपे ही जातीआ ॥
सभु किछु आपे आपि आपि उपँनिआ ॥
आपणा कीता आपि आपि वरँनिआ ॥
धँनु सु तेरा थानु जिथै तू वुठा ॥

पृ-९६६

धँनु सु तेरे भगत जिनी सचु तूँ डिठा ॥
जिस नो तेरी दइआ सलाहे सोइ तुधु ॥
जिसु गुर भेटे नानक निरमल सोई सुधु ॥२०॥

सलोक महला - ५

इस श्लोक में गुरु जी हमें जीवन के एक अत्यधिक आवश्यक पहलू को समझने में सहायता करते हैं और वह है हमारे पर हमारी संगति का प्रभाव । सर्वप्रथम, वह कबीर जी के एक श्लोक को उद्धरत करते हुये यह सिद्ध करते हैं कि गुरु महापापी जनों का भी उद्धार करते हैं ।

उनका कथन है : " हे' कबीर, यदि तस्कर लोग संतों की धरती को आकर जोतने और खेती करने लगें तो धरती को उनका भार वहन करना नहीं अखरता और वह उन्हें भी लाभ प्रदान करती है (दूसरे शब्दों में, यदि लम्पट लोग ऐसी संगति में रहें जहाँ पर संतों का बाहुल्य है, तो उस संगति को कोई हानि नहीं होती, अपितु, वह कुकर्मी जनों को पवित्र कर देती है "।(१)

महला – ५

अब गुरु जी विपरीत दिशा से बात उठाते हैं, अर्थात, जब दुराचारी लोगों की संगति में कोई सदाचारी जन आकर रहते हैं तब क्या होता है । वह कहते हैं : " हे' कबीर, जैसे चावल प्राप्त करने हेतु धान को कूटा जाता है, उसी प्रकार यदि सदाचारी लोग कुसंगति में रहने लगते हैं (वह पाप कर्म तथा दुष विचारों में भाग लेने लग जाते हैं) तब धर्मराज उनसे प्रश्न करने लगते हैं (कि वह अपने चरित्र का ब्यौरा दें) "।(२)

पउड़ी -

सुसंगति तथा कुसंगति में रहने के परिणामों का वर्णन करने के पश्चात, गुरु जी अब प्रभु की प्रशंसा और प्रार्थना की अवस्था में आकर कहते हैं : "(हे' ईश्वर), तुम्हारा स्वयं का इतना विशाल परिवार है और तुम स्वयं एकांत में रहते हो । तुम स्वयं ही अपना मूल्याँकन कर सकते हो । तुम स्वयं ही सब कुछ हो और तुमने स्वयं ही अपने को उत्पन्न किया है । तुमने स्वयं ही सब कुछ सृजित किया है और अपने सृजन का वर्णन भी किया है । वह स्थान धन्य है जहाँ पर तुम्हारा वास है तथा धन्य तेरे भक्त हैं जिन्होंने तुम सच्चे (प्रभु) को देखा है । परन्तु, तुम जिस पर दयालु हो वही केवल तुम्हारी सराहना कर करता है तथा हे' नानक, केवल वही मनुष्य निर्मल एवं शुद्ध है जिसकी भेंट (प्रभु) गुरु से करवा देते हैं "।(२०)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि यदि कोई कुकर्मी जन अनेक सदाचारी जनों की संगति में रहता है तो वह लाभान्वित होता है । परन्तु,

यदि एक सदाचारी मनुष्य कुसंगति में पड़ जाता है तो वह कुकर्म सीख कर कष्ट पाने लग जाता है । अतः, हमें सदा संतों अथवा गुरु के अनुयायियों की संगति का साथ ढूँढ कर उनके साथ रहने का प्रयत्न करना चाहिये और दुष्ट तथा अहंकारी लोगों से दूरी बनाए रखते हुए गुरु के मार्ग दर्शन के अनुसार स्वयं को प्रभु की प्रशंसा में संलग्न रखना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੯੬੭

ਰਾਮਕਲੀ ਕੀ ਵਾਰ ਰਾਇ ਬਲਵੰਡਿ ਤਥਾ ਸਤੈ ਡੂਮਿ ਆਖੀ
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਫੇਰਿ ਵਸਾਇਆ ਫੇਰੁਆਣਿ ਸਤਿਗੁਰਿ ਖਾਡੂਰੁ॥
ਜਪੁ ਤਪੁ ਸੰਜਮੁ ਨਾਲਿ ਤੁਧੁ ਹੋਰੁ ਮੁਚੁ ਗਰੂਰੁ॥
ਲਬੁ ਵਿਣਾਹੇ ਮਾਣਸਾ ਜਿਉ ਪਾਣੀ ਬੂਰੁ॥
ਵਰ੍ਹਿਐ ਦਰਗਹ ਗੁਰੂ ਕੀ ਕੁਦਰਤੀ ਨੂਰੁ॥
ਜਿਤੁ ਸੁ ਹਾਥ ਨ ਲਭਈ ਤੂੰ ਓਹੁ ਠਰੂਰੁ॥
ਨਉ ਨਿਧਿ ਨਾਮੁ ਨਿਧਾਨੁ ਹੈ ਤੁਧੁ ਵਿਚਿ ਭਰਪੂਰੁ॥
ਨਿੰਦਾ ਤੇਰੀ ਜੋ ਕਰੇ ਸੋ ਵੰਞੈ ਚੂਰੁ॥
ਨੇੜੈ ਦਿਸੈ ਮਾਤ ਲੋਕ ਤੁਧੁ ਸੁਝੈ ਦੂਰੁ॥
ਫੇਰਿ ਵਸਾਇਆ ਫੇਰੁਆਣਿ ਸਤਿਗੁਰਿ ਖਾਡੂਰੁ॥੫॥

पृ-९६७

रामकली की वार राइ बलवँडि तथा सतै डूमि आखी
१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

फेरि वसाइआ फेरुआणि सतिगुरि खाडूरु ॥
जपु तपु सँजमु नालि तुधु होरु मुचु गरूरु ॥
लबु विणाहे माणसा जिउ पाणी बूरु ॥
वरिह्ऐ दरगह गुरू की कुदरती नूरु ॥
जितु सु हाथ न लभई तूँ ओहु ठरूरु ॥
नउ निधि नामु निधानु है तुधु विचि भरपूरु ॥
निँदा तेरी जो करे सो वँञै चूरु ॥
नेड़ै दिसै मात लोक तुधु सुझै दूरु ॥
फेरि वसाइआ फेरुआणि सतिगुरि खाडूरु ॥५॥

रामकली की वार
राय बलवँड तथा सत्ते डूम आखी
(भाट राय बलवँड तथा सत्ता डोम द्वारा उच्चारित)

यह अति सुंदर रचना डोम जाति के 'सत्ता' और 'बलवँड' नामक दो भाटों के द्वारा गुरु जनों की प्रशंसा के हेतु रची और गायी गयी थी। कुछ लोगों के विचारानुसार यह दोनों चचेरे भाई थे और भाई मरदाना जी (गुरु नानक देव जी के प्रसिद्ध शिष्य एवं सहयोगी) के वंशज थे। इस काव्य रचना की पृष्ठभूमि तनिक रोचक है जो इस प्रकार से कही जाती है कि इन दोनों ने गुरु अर्जन देव जी से आग्रह किया था कि आगामी बैसाखी के समागम के अवसर पर श्रद्धालुओं से मिलने वाले चढ़ावे अथवा भेंट की राशि उन्हें अपनी पुत्री के विवाह के लिए दे दी जाये और गुरु जी ने उनकी इस प्रार्थना को अपनी स्वीकृति दे दी थी ।

परन्तु, संयोगवश उस दिन आँधी तूफ़ान तथा कुछ विरोधियों की मंत्रणा के .कारण बैसाखी के उत्सव पर बहुत कम गिनती में गुरु जी के अनुयायियों तथा शिष्यों का आना हुया, फलस्वरूप, चढ़ावा भी आशानुसार बहुत कम आया, जो पूर्णरूप से गुरु जी ने उन दोनों को दे दिया। इस पर वह दोनों अति निराश हुये और क्रोधित भी और नित्य के नियमानुसार अगले दिन की धार्मिक सभा में उन्होंने आकर गाने के लिये मना कर दिया । गुरु जी ने उनको मनाने और बुलाने के लिये कई संदेशवाहक भेजे, परन्तु आने की अपेक्षा, उल्टा उन्होंने गुरु जी के लिये अपमानजनक बातें कहना प्रारंभ कर दिया । तदुपरांत, गुरु जी स्वयं उनके घर गये और उन्हें आवश्यकता पड़ने पर अधिक वित्तीय सहायता देने का वचन भी दिया, किन्तु, फिर भी उन्होंने और अधिक ढिठाई दिखाते हुये आने के लिये मनाकर दिया एवं अहंकार भाव से यह भी कहा कि वास्तव में गुरु जी ने उनके योगदान को नहीं सराहा है, सच तो यह है कि हमारे भजन कीर्तन और गायन को सुनने के लिये ही इतनी जनता आती है और गुरु को आदर एवं सम्मान देती है । यहाँ तक कि उन दोनों ने गुरु नानक देव जी के लिये भी अपमानजनक शब्द कहे और बोले कि उनके पूर्वज 'भाई मरदाना ' के वादन तथा गायन के कारण ही प्रथम गुरु नानक देव जी को भी इतनी ख्याति प्राप्त हो सकी थी । गुरु अर्जन देव जी अभी तक तो धैर्य से अपना अनादर सह रहे थे, परन्तु, बात जब उनके पुरखों पर आ गयी तब वह ऐसा अपमान नहीं सहन कर पाये और यह कह कर कि " यह लोग अंहकार में कोढ़ियों की भाँति रोगी हो गये हैं " वापिस आ गये और अपनी नित्य की धार्मिक सभायों में भजन कीर्तन करने के लिए दूसरा प्रबंध किया ।

गुरु जी ने, तत्पश्चात, अपना यह निर्णय सबको सुनाया कि कोई भी मेरे पास आ कर उन दोनों के लिए दया एवं सहायता की माँग नहीं करेगा और यदि कोई ऐसा करता है तो उसी का मुँह काला करके गधे पर बैठा कर शहर में घुमाया जायेगा । उधर, समय पाकर बिना किसी आय के दोनों भाट बंधु ग़रीबी तथा रोग से ग्रस्त होने लगे और संयोग से कुष्ठ रोग ने उन्हें आ घेरा। प्रस्थितिवश, उन्होंने कई लोगों के पास जाकर अपने लिये गुरु जी के साथ मध्यस्थता करने का आग्रह किया, परन्तु, कोई भी गुरु जी के निर्णय को जानते हुए ऐसा करने का साहस ना कर सका । अत्यंत निराश होकर वह अंत में गुरु जी के एक श्रद्धालु तथा स्वभाव के दयालु शिष्य 'भाई लधा जी ' के पास गये और उनसे विनती की कि किसी प्रकार से वह उन दोनों की सहायता करें । अपने स्वभाव के अनुसार भाई लधा जी उनकी सहायता के लिये तैयार हो गये और गुरु जी द्वारा सुनिश्चित दंड को जानते हुये स्वयं ही अपना मुँह काला किया, गले में जूतों की माला पहनी और गधे पर बैठ कर गुरु जी के पास गये और विनीत भाव से गुरु जी से इन दोनों को क्षमा तथा आरोग्यता प्रदान करने के लिये प्रार्थना की । अपने अति प्रिय एवं आज्ञाकारी शिष्य को इस प्रकार से विनती करते देख गुरु जी को दया आ गयी और दोनों भाटों को क्षमादान दिया और उन्हें रोगमुक्त करने के लिए सहायता दी एवं पुनः अपनी धार्मिक सभायों में भजन कीर्तन का काम उन्हें सौंप दिया ।कृतज्ञ होकर तब उन दोनों ने इस 'रामकली की वार' नामक काव्य की रचना की जो गुरु अर्जुन देव जी एवं पूर्व गुरुओं के गौरव तथा सम्मान को दर्शाती है ।

इस श्लोक में सत्ता भाट द्वितीय गुरु अंगद देव जी की जीवन कथा के अगले अंश पर कहते हैं : "(गुरु की गद्दी पाने पर ' लहना जी'

अर्थात गुरु अंगद देव जी) सुपुत्र फेरु जी खडूर नामक शहर में आकर बसे और उसकी शोभा बढ़ाई ”।

गुरु अंगद देव जी को सम्बोधित करते हुये वह कहते हैं : “(हे' गुरु जी), तुम्हारे पास जाप, तपस्या और संयम इत्यादि सभी (गुण) हैं, जबकि और सारा सँसार अत्यधिक अंहम से ग्रस्त है । (सम्भवतः, स्वयं के लोभ के कारण पाये गये कष्टों को ध्यान में रखते हुये) वह कहते हैं: “(हे' गुरु जी, हमारा यह विचार है कि जैसे) शैवाल पानी को गंदा करता है उसी प्रकार लोभ मनुष्य का विनाश करता है ।(किन्तु, यहाँ तो ऐसा वैभव है कि जैसे) गुरु के दरबार में भव्य प्राकृतिक प्रकाश की बौछार हो रही है । हे' गुरु , तुम दया एवं शांति के ऐसे विशाल सागर हो कि कोई हाथ इसकी गहराई नहीं नाप सकता। नौ निधियों के समान मूल्यवान प्रभु नाम का भंडार तुम्हारे अंदर भरपूर रुप से बसा हुया है। जो भी कोई तुम्हारी निंदा करता है वह चूर चूर होकर नष्ट हो जाता है ।(अन्य सांसारिक जनों को) यह भौतिक संसार अपने निकट दिखाई देता है (क्योंकि, वह सांसारिक धंधों में अधिक रुचि रखते हैं) परन्तु, तुम्हारे लिये (वह सब निरर्थक है, क्योंकि) तुम दूर की बात सोचते हो। हाँ, (गुरु की गद्दी पाने के पश्चात 'लहना जी' अर्थात गुरु अंगद देव जी) सुपुत्र फेरु जी ने खडूर नामक शहर के भाग्य को जगाया, (और वहीं बस गये)”।(५)

इस पउड़ी का संदेश यह है कि गुरु समस्त गुणों से परिपूर्ण एक विशाल भंडार के समान हैं और हमें सब कुछ प्रदान कर सकते हैं । परन्तु, हमें कभी भी लोभी स्वभाव का नहीं होना चाहिये, क्योंकि, जैसे शैवाल पानी को गंदा करती है वैसे ही सांसारिक लोभ मनुष्य को दूषित करते हैं ।

ਪੰਨਾ ੯੬੯	पृ-९६९
ਸੰਤਾ ਮਾਨਉ ਦੂਤਾ ਡਾਨਉ ਇਹ ਕੁਟਵਾਰੀ ਮੇਰੀ ॥ ਦਿਵਸ ਰੈਨਿ ਤੇਰੇ ਪਾਉ ਪਲੋਸਉ ਕੇਸ ਚਵਰ ਕਰਿ ਫੇਰੀ ॥੧॥	सँता मानउ दूता डानउ इह कुटवारी मेरी ॥ दिवस रैनि तेरे पाउ पलोसउ केस चवर करि फेरी ॥१॥
ਹਮ ਕੂਕਰ ਤੇਰੇ ਦਰਬਾਰਿ ॥ ਭਉਕਹਿਆਗੈ ਬਦਨੁ ਪਸਾਰਿ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	हम कूकर तेरे दरबारि ॥ भउकहिआगै बदनु पसारि ॥१॥रहाउ ॥
ਪੰਨਾ ੯੭੦	**पृ-९७०**
ਪੂਰਬ ਜਨਮ ਹਮ ਤੁਮ੍ਹਰੇ ਸੇਵਕ ਅਬ ਤਉ ਮਿਟਿਆ ਨ ਜਾਈ ॥ ਤੇਰੇ ਦੁਆਰੈ ਧੁਨਿ ਸਹਜ ਕੀ ਮਾਥੈ ਮੇਰੇ ਦਗਾਈ ॥੨॥	पूरब जनम हम तुमरे सेवक अब तउ मिटिआ न जाई ॥ तेरे दुआरै धुनि सहज की माथै मेरे दगाई ॥२॥
ਦਾਗੇ ਹੋਹਿ ਸੁ ਰਨ ਮਹਿ ਜੂਝਹਿ ਬਿਨੁ ਦਾਗੇ ਭਗਿ ਜਾਈ ॥ ਸਾਧੂ ਹੋਇ ਸੁ ਭਗਤਿ ਪਛਾਨੈ ਹਰਿ ਲਏ ਖਜਾਨੈ ਪਾਈ ॥੩॥	दागे होहि सु रन महि जूझहि बिनु दागे भगि जाई ॥ साधू होइ सु भगति पछानै हरि लए खजानै पाई ॥३॥
ਕੋਠਰੇ ਮਹਿ ਕੋਠਰੀ ਪਰਮ ਕੋਠੀ ਬੀਚਾਰਿ ॥ ਗੁਰਿ ਦੀਨੀ ਬਸਤੁ ਕਬੀਰ ਕਉ ਲੇਵਹੁ ਬਸਤੁ ਸਮ੍ਹਾਰਿ ॥੪॥	कोठरे महि कोठरी परम कोठी बीचारि ॥ गुरि दीनी बसतु कबीर कउ लेवहु बसतु समा्रि ॥४॥
ਕਬੀਰਿ ਦੀਈ ਸੰਸਾਰ ਕਉ ਲੀਨੀ ਜਿਸੁ ਮਸਤਕਿ ਭਾਗੁ ॥ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਰਸੁ ਜਿਨਿ ਪਾਇਆ ਥਿਰੁ ਤਾ ਕਾ ਸੋਹਾਗੁ ॥੫॥੪॥	कबीरि दीई सँसार कउ लीनी जिसु मसतकि भागु ॥ अँमृत रसु जिनि पाइआ थिरु ता का सोहागु ॥५॥४॥

रामकली बानी भगता की कबीर जीओ सलोक ५ – ४

पूर्व के शब्द में कबीर जी ने कहा था : " अब मैं (दैवी) सिंहासन पर बिराजमान हूँ और धरती के ईश्वर से मिल चुका हूँ "। परन्तु, ऐसे सर्वोच्च और विशिष्ट स्थान पर पहुँच कर भी कबीर जी हमें यह प्रकट करते हैं कि वह कितनी विनीत भावना से प्रभु की सेवा में रहते हैं ।

वह कहते हैं : "(हे' प्रभु), मैं सँतजनों का आदर करता हूँ और दुष्टों को दंडित करता हूँ, दंड देने के लिये मेरा स्वरूप ऐसा ही है । मैं दिन और रात तुम्हारे पाँव मलता हूँ और अपने केशों की चँवर बनाकर तुम्हारे पर फेरता हूँ (प्रत्येक संभावित रूप से तुम्हारी सेवा में संलग्न रहता हूँ) "।(१)

अपने ऐसे व्यवहार के अनुसार कबीर जी आगे अति विनीत भाव से कहते हैं : "(हे' प्रभु), मैं तेरे दरबार में एक कूकर (कुत्ते) की भाँति हूँ जो शरीर को पसार अथवा आगे बढ़ बढ़ कर भौंकता रहता है (जिससे कि कोई भी अवांछित तत्व मेरे स्वामी तक ना पहुँच सके) "।(१-विराम)

अपने चरित्र को और चरितार्थ करते हुये वह कहते हैं : " हे' प्रभु, मैं पूर्व जन्म में भी तुम्हारा सेवक था और अब इस जन्म में भी (मेरा यह सेवक का पद) मिट नहीं सकता । तुम्हारे द्वार पर सहज भाव की जो धुन गूँजती रहती है वह मेरे मस्तक पर एक चिह्न अथवा ठप्पे की भाँति दागी जा चुकी है (जो यह दर्शाती है कि मैं तुम्हारे घर का एक सेवक हूँ और तुम्हारी सेवा करना मेरा अधिकार तथा कर्तव्य है)"।(२)

प्रभु के सेवा रूपी चिह्न अथवा ठप्पे के महत्व को व्यक्त करते हुये वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), इस प्रकार से दगे हुये अथवा चिह्नित लोग (एक विशेष सेना की पहचान वाले सिपाही की भाँति) रणभूमि में वीरता से लड़ते और जूझते हैं, परन्तु, जो चिह्नित नहीं होते वह (कठिन परिस्थिति में) छोड़ कर भाग जाते हैं । इसी प्रकार से जो सच्चे संतजन होते हैं वह (प्रभु की) भक्ति और सेवा का महत्व पहचानते हैं और प्रभु ऐसे संतजनों को अपने भंडार में सहेज कर रखते हैं "।(३)

अब कबीर जी प्रभु से प्राप्त किये वरदानों को हमसे साझा करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), इस (शरीर रूपी) बड़े कोठरे के अंदर एक और छोटी कोठरी (मस्तिष्क) है, जिसमें (गुरु की वाणी के) द्वारा विचार करने के लिये एक विशिष्ट सूक्ष्म स्थान है । (ऐसे परम स्थान पर) रखने के लिये गुरु ने कबीर को एक (विशेष) वस्तु देकर कहा कि लो और इस वस्तु को संभाल सहेज कर रखो "।(४)

कबीर जी इस वस्तु अर्थात, वरदान को संसार में और सबके साथ भी साझा करना चाहते हैं, परन्तु, कुछ ही सौभाग्यशाली हैं जो इसका महत्व समझते हैं, जबकि, अधिकतम लोग मिथ्या सांसारिक द्रव्यों में रुचि रखते हैं । अतः, ऐसी दशा पर टिप्पणी करते हुये वह कहते हैं : "कबीर ने यह वस्तु समस्त संसार को दी, परन्तु, केवल उसी ने इसको लिया जिसके मस्तक अथवा भाग्य में था और जिन्होंने इस अँमृत रूपी रस (प्रभु नाम) का स्वाद चख लिया है उनका सुहाग (प्रभु से मिलन) स्थिर अथवा सदैव के लिये हो गया है "।(५-४)

इस शब्द का संदेश इस प्रकार से है कि यदि हम प्रभु को सदैव के लिये पाना चाहते हैं तो अपने गुरु के कथन के अनुसार प्रभु नाम जैसे बहुमूल्य रत्न पर मन में विचार करें और प्रभु की सेवा ऐसे निःस्वार्थ एवं निष्ठा के साथ करें जैसे कि एक कुत्ता अथवा एक सिपाही अपने स्वामी की स्वामिभक्ति के लिए जाना जाता है ।

ਪੰਨਾ ੯੭੧

ਰਾਮਕਲੀ ਘਰੁ ੨ ਬਾਣੀ ਕਬੀਰ ਜੀ ਕੀ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਬੰਧਚਿ ਬੰਧਨੁ ਪਾਇਆ ॥
ਮੁਕਤੈ ਗੁਰਿ ਅਨਲੁ ਬੁਝਾਇਆ ॥

ਪੰਨਾ ੯੭੨

ਜਬ ਨਖ ਸਿਖ ਇਹੁ ਮਨੁ ਚੀਨ੍ਹਾ ॥
ਤਬ ਅੰਤਰਿ ਮਜਨੁ ਕੀਨ੍ਹਾ ॥੧॥

ਪਵਨਪਤਿ ਉਨਮਨਿ ਰਹਨੁ ਖਰਾ ॥
ਨਹੀ ਮਿਰਤੁ ਨ ਜਨਮੁ ਜਰਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਉਲਟੀ ਲੇ ਸਕਤਿ ਸਹਾਰੰ ॥
ਪੈਸੀਲੇ ਗਗਨ ਮਝਾਰੰ ॥
ਬੇਧੀਅਲੇ ਚਕ੍ਰ ਭੁਅੰਗਾ ॥
ਭੇਟੀਅਲੇ ਰਾਇ ਨਿਸੰਗਾ ॥੨॥

ਚੂਕੀਅਲੇ ਮੋਹ ਮਇਆਸਾ ॥
ਸਸਿ ਕੀਨੋ ਸੂਰ ਗਿਰਾਸਾ ॥
ਜਬ ਕੁੰਭਕੁ ਭਰਿਪੁਰਿ ਲੀਣਾ ॥
ਤਹ ਬਾਜੇ ਅਨਹਦ ਬੀਣਾ ॥੩॥

ਬਕਤੈ ਬਕਿ ਸਬਦੁ ਸੁਨਾਇਆ ॥
ਸੁਨਤੈ ਸੁਨਿ ਮੰਨਿ ਬਸਾਇਆ ॥
ਕਰਿ ਕਰਤਾ ਉਤਰਸਿ ਪਾਰੰ ॥
ਕਹੈ ਕਬੀਰਾ ਸਾਰੰ ॥੪॥੧॥੧੦॥

पृ-९७१

रामकली घरु २ बाणी कबीर जी की

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

बँधचि बँधनु पाइआ ॥
मुकतै गुरि अनलु बुझाइआ ॥

पृ-९७२

जब नख सिख इहु मनु चीना् ॥
तब अँतरि मजनु कीना् ॥१॥

पवनपति उनमनि रहनु खरा ॥
नही मिरतु न जनमु जरा ॥१॥रहाउ ॥

उलटी ले सकति सहाराँ ॥
पैसीले गगन मझाराँ ॥
बेधीअले चक्र भुअँगा ॥
भेटीअले राइ निसँगा ॥२॥

चूकीअले मोह मइआसा ॥
ससि कीनो सूर गिरासा ॥
जब कुँभकु भरिपुरि लीणा ॥
तह बाजे अनहद बीणा ॥३॥

बकतै बकि सबदु सुनाइआ ॥
सुनतै सुनि मँनि बसाइआ ॥
करि करता उतरसि पाराँ ॥
कहै कबीरा साराँ ॥४॥१॥१०॥

रामकली घर - २ बानी कबीर जी की
(कबीर जी का शब्द)

ऐसा प्रतीत होता है कि इस शब्द का उच्चारण कबीर जी ने कुछ ऐसे योगीजनों के साथ हुये संवाद के समय किया जो अपनी श्वास प्रक्रियाओं को शरीर में काल्पनिक रूप से स्थित छह निर्धारित स्थानों पर योगाभ्यास द्वारा नियंत्रित करने का प्रयास करते थे, ऐसे स्थान 'चक्र' कहलाते हैं और विशेषतयाः एक 'भुयंगम' नामक चक्र पर उनका मानना है कि वह सर्प की कुंडली के आकार में है । उनके विश्वास के अनुसार जब कोई श्वास को शरीर के सबसे नीचे के चक्रों में ले जाकर उसे फिर से उपर उठाता है और शरीर के सर्वोच्च भाग गगन चक्र (मस्तक के उपर आकाश की ओर) में स्थिर कर लेता है, तब वह प्रभु की उपस्थित का आनंद पाता है ।

अतः, योगियों की भाषा का उपयोग करते हुये कबीर जी व्यक्त करते हैं कि कैसे उन्होंने प्रभु से योग करने के उच्चतम स्तर को प्राप्त किया है । वह कहते हैं : "(हे' योगी जनों), मोहक बँधन डालने वाली सांसारिक माया ने मुझे अपने बँधन में डाला हुया है, परन्तु, मेरे मुक्तिदाता गुरु ने मेरी (सांसारिक अभिलाषायों की) अग्नि को बुझा दिया है (और मैं अब सांसारिक बँधनों से मुक्त हूँ) । जब मेरे मन ने पैर के नाखून से लेकर सिर की चोटी तक विचार किया (गुरु की वाणी के प्रभाव के अनुसार स्वयं का पूर्ण रूप से विश्लेषण किया और मन के स्मस्त अवांछित विचार निकाल दिये तो लगा कि जैसे) मेरे मन ने स्नान कर लिया हो "।(१)

अपनी आत्मा की वर्तमान स्थिति पर कबीर जी कहते हैं : "पवन की भाँति उन्मत्त और चंचल मन की स्वामिनी (मेरी आत्मा अब) पूर्ण रूप से आनंदित दशा में विचर रही है जहाँ पर जन्म मरण तथा वृद्धावस्था जैसी किसी भी बात की कोई चिंता नहीं है "।(१-विराम)

किस प्रकार से उन्होंने परम आनंद की स्थिति को पाया, इसे अधिक विस्तार से व्यक्त करते हुये कबीर जी कहते हैं : "(हे ' योगी जनों) सांसारिक माया की शक्तियों को आधार मानने से मेरा मन अब उल्ट गया है (और मेरे मन ने प्रभु का आधार पा लिया है, जैसे कि, मानो वह अब) दसम द्वार अथवा गगन चक्र में प्रवेश पा गया है । मैंने टेढ़े अथवा सर्पीले भुयंगम चक्र को भेद कर निश्चित रूप से महान प्रभु से भेंट प्राप्त कर ली है "।(२)

तन एवं मन को मिले वरदान और परम आनंद के कारण कबीर जी वर्तमान स्थिति पर कहते हैं : "(हे' योगी जनों, मेरे मन में से) सभी प्रकार की (सांसारिक) मोह माया की तृष्णा अथवा इच्छायें चुक गयीं हैं, मानो जैसे, चन्द्रमा की शान्ति (सन्तुष्टि की भावना) ने सूर्य की तपन (सांसारिक इच्छायों) को ग्रस लिया हो । अब मेरा मन पूर्ण रूप से (हरि में) लीन है और वहाँ पर अनवरत रूप से आनंदमयी वीणा का संगीत बजता रहता है "।(३)

अपने उपरोक्त अनुभव को अब कबीर जी संक्षिप्त रूप में कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, वास्तव में ऐसा हुया कि) जब वक्ता (गुरु) ने अपना वक्तव्य (वाणी को) सुनाया तो सुनने वाले श्रोता ने उसका श्रवण ध्यान से करके उस संदेश को मन में बसा लिया और फिर सृजनकर्ता के नाम का बारम्बार ध्यान करते रहने से वह (भवसागर से) पार उतर गया (मोक्ष प्राप्त कर लिया)। कबीर कहते हैं कि (दैवी ज्ञान का)केवल यही सार है "।(४-१-१०)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें गुरु की वाणी को ध्यान से सुन तथा विचार कर उसे पूर्ण निष्ठा से अपने व्यवहार में उतार लेना चाहिये, जिससे कि हमारा मन सांसारिक इच्छायों के पीछे भागने की अपेक्षा, स्थिर स्थिति में आ जाये और फिर हम प्रभु में ध्यान लगा कर अनवरत दैवी संगीत का आनंद प्राप्त कर सकते हैं तथा जन्म मरण के चक्करों से मोक्ष पा सकते हैं ।

ਪੰਨਾ ੯੭੩

ਰਾਮਕਲੀ ਬਾਣੀ ਰਵਿਦਾਸ ਜੀ ਕੀ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਪੜੀਐ ਗੁਨੀਐ ਨਾਮੁ ਸਭੁ ਸੁਨੀਐ ਅਨਭਉ ਭਾਉ ਨ ਦਰਸੈ ॥
ਲੋਹਾ ਕੰਚਨੁ ਹਿਰਨ ਹੋਇ ਕੈਸੇ ਜਉ ਪਾਰਸਹਿ ਨ ਪਰਸੈ ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੯੭੪

ਦੇਵ ਸੰਸੈ ਗਾਂਠਿ ਨ ਛੂਟੈ ॥
ਕਾਮ ਕ੍ਰੋਧ ਮਾਇਆ ਮਦ ਮਤਸਰ ਇਨ ਪੰਚਹੁ ਮਿਲਿ ਲੂਟੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਮ ਬਡ ਕਬਿ ਕੁਲੀਨ ਹਮ ਪੰਡਿਤ ਹਮ ਜੋਗੀ ਸੰਨਿਆਸੀ ॥
ਗਿਆਨੀ ਗੁਨੀ ਸੂਰ ਹਮ ਦਾਤੇ ਇਹ ਬੁਧਿ ਕਬਹਿ ਨ ਨਾਸੀ ॥੨॥

ਕਹੁ ਰਵਿਦਾਸ ਸਭੈ ਨਹੀ ਸਮਝਸਿ ਭੂਲਿ ਪਰੇ ਜੈਸੇ ਬਉਰੇ ॥
ਮੋਹਿ ਅਧਾਰੁ ਨਾਮੁ ਨਾਰਾਇਨ ਜੀਵਨ ਪ੍ਰਾਨ ਧਨ ਮੋਰੇ ॥੩॥੧॥

पृ-९७३

रामकली बाणी रविदास जी की

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै ॥
लोहा कंचनु हिरन होइ कैसे जउ पारसहि न परसै ॥१॥

पृ-९७४

देव सँसै गांठि न छूटै ॥
काम क्रोध माइआ मद मतसर इन पँचहु मिलि लूटे ॥१॥रहाउ॥

हम बड कबि कुलीन हम पँडित हम जोगी सँनिआसी ॥
गिआनी गुनी सूर हम दाते इह बुधि कबहि न नासी ॥२॥

कहु रविदास सभै नही समझसि भूलि परे जैसे बउरे ॥
मोहि अधारु नामु नाराइन जीवन प्रान धन मोरे ॥३॥१॥

रामकली बानी रविदास जी की
(रविदास जी का शब्द)

इस शब्द में भक्त रविदास जी हमें हमारी वास्तविक मानसिकता का दर्पण दिखाते हुये यह प्रकट करते हैं कि कैसे हम सभी प्रकार के धर्म ग्रंथों को पढ़ने तथा अनेकों उपदेशों का श्रवण करते रहने के पश्चात भी अपने मन के विकारों जैसे, काम, क्रोध, लोभ इत्यादि के वश में रहते हैं । वह यहाँ यह भी बताते हैं कि हमारी इस प्रकार की प्रवृत्ति का मूल कारण क्या है तथा इसके उपचार के लिए क्या उपाय उपलब्ध है ।

सर्वप्रथम, रविदास जी हमारे जीवन पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु के नाम पर हम सब पढ़ते, विचारते और उपदेश सुनते हैं, परन्तु, फिर भी उस प्रेम तथा विवेक की मूर्ति (प्रभु) को देख नहीं पाते । (इसका कारण यह है कि जैसे एक) लोहे का टुकड़ा शुद्ध कंचन नही बन पाता जब तक वह पारस के स्पर्श में ना आये, (उसी प्रकार, गुरु के मार्ग दर्शन के बिना एक पापी कभी सदाचारी नहीं बन सकता) "।(१)

अब भक्त रविदास जी अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुये प्रभु को सम्बोधित करते हैं और कहते हैं : "हे' प्रभु, (धर्म ग्रंथों को पढ़ने और उपदेशों का श्रवण करने के पश्चात भी) हमारे मन के अनेक संशयों की गाँठ नहीं खुलती ।(ऐसा प्रतीत होता है कि) काम, क्रोध, सांसारिक मोहमाया, लोभ तथा अहंकार आदि पाँचो विकारों ने मिल कर हमारे सदगुणों का हरण कर लिया है "।(१-विराम)

हमारी विभिन्न प्रकार से अंहकारयुक्त भावनाओं पर रविदास जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं :"(हे' प्रभु) कुछ लोग दावा करते हैं कि वह महान कवि हैं, कुछ अपने को कुलीन कहते हैं और कुछ अहम भाव से स्वयं को महान पंडित, योगी अथवा सन्यासी कहते हैं । (इसी प्रकार से) स्वयं को ज्ञानी, गुणवान, शूरवीर तथा हम दानवीर हैं आदि कहने वाली अहंकारी बुद्धि कभी भी हमारे मन में से निकल नहीं पाती"।(२)

अंत में वह कहते हैं : " हे' रविदास, यह कहो कि सभी वास्तविकता को नहीं समझ पा रहे हैं और बावले होकर भूल भटक गये हैं । परन्तु, मेरे लिये तो जीवन का आधार नारायण का नाम है, वही मेरे प्राण हैं और वही मेरी धन सम्पदा है "।(३-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने मन में प्रभु की उपस्थित का आनंद पाना चाहते हैं तब हमें गुरु की शरण में जाना होगा । उसके मार्ग दर्शन और सहायता के बिना हमारा धर्म ग्रंथों को पढ़ने तथा उपदेशों को सुनने आदि से कोई लाभ नहीं होने वाला, क्योंकि, हम काम, क्रोध, लोभ तथा अहम जैसे विकारों में फँसे भटकते रहते हैं ।

ਪੰਨਾ ੯੭੫	पृ-९७५
ਨਟ ਮਹਲਾ ੪ ॥	नट महला ४॥
ਮੇਰੇ ਮਨ ਜਪਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਸਖੇ ॥	मेरे मन जपि हरि हरि नामु सखे ॥
ਪੰਨਾ ੯੭੬	पृ-९७६
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਓ ਹਮ ਸਤਿਗੁਰ ਚਰਨ ਪਖੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	गुर परसादी हरि नामु धिआइओ हम सतिगुर चरन पखे ॥१॥रहाउ॥
ਊਤਮ ਜਗੰਨਾਥ ਜਗਦੀਸੁਰ ਹਮ ਪਾਪੀ ਸਰਨਿ ਰਖੇ ॥ ਤੁਮ ਵਡ ਪੁਰਖ ਦੀਨ ਦੁਖ ਭੰਜਨ ਹਰਿ ਦੀਓ ਨਾਮੁ ਮੁਖੇ ॥੧॥	ऊतम जँगनाथ जगदीसुर हम पापी सरनि रखे ॥ तुम वड पुरख दीन दुख भँजन हरि दीओ नामु मुखे ॥१॥
ਹਰਿ ਗੁਨ ਊਚ ਨੀਚ ਹਮ ਗਾਏ ਗੁਰ ਸਤਿਗੁਰ ਸੰਗਿ ਸਖੇ ॥ ਜਿਉ ਚੰਦਨ ਸੰਗਿ ਬਸੈ ਨਿੰਮੁ ਬਿਰਖਾ ਗੁਨ ਚੰਦਨ ਕੇ ਬਸਖੇ ॥੨॥	हरि गुन ऊच नीच हम गाए गुर सतिगुर सँगि सखे ॥ जिउ चँदन सँगि बसै निंमु बिरखा गुन चँदन के बसखे ॥२॥
ਹਮਰੇ ਅਵਗਨ ਬਿਖਿਆ ਬਿਖੈ ਕੇ ਬਹੁ ਬਾਰ ਬਾਰ ਨਿਮਖੇ ॥ ਅਵਗਨਿਆਰੇ ਪਾਥਰ ਭਾਰੇ ਹਰਿ ਤਾਰੇ ਸੰਗਿ ਜਨਖੇ ॥੩॥	हमरे अवगन बिखिआ बिखै के बहु बार बार निमखे ॥ अवगनिआरे पाथर भारे हरि तारे सँगि जनखे ॥३॥
ਜਿਨ ਕਉ ਤੁਮ ਹਰਿ ਰਾਖਹੁ ਸੁਆਮੀ ਸਭ ਤਿਨ ਕੇ ਪਾਪ ਕ੍ਰਿਖੇ ॥ ਜਨ ਨਾਨਕ ਕੇ ਦਇਆਲ ਪ੍ਰਭ ਸੁਆਮੀ ਤੁਮ ਦੁਸਟ ਤਾਰੇ ਹਰਣਖੇ ॥੪॥੩॥	जिन कउ तुम हरि राखहु सुआमी सभ तिनके पाप क्रिखे ॥ जन नानक के दइआल प्रभ सुआमी तुम दुसट तारे हरणखे ॥४॥३॥

नट महला – ४

इस शब्द में गुरु जी अपने मन को (एक प्रकार से हमें भी) प्रभु के नाम का ध्यान करने के लिये समझाते हैं और इससे मिलने वाले आशीर्वादों का ब्यौरा देते हैं ।

वह कहते हैं : " हे' मेरे मन, हरि के नाम का जाप कर (केवल वही तुम्हारा सच्चा) मित्र अथवा सखा है । गुरु की कृपा से मैंने हरि के नाम का ध्यान किया, इसलिये (प्रतीत होता है, जैसे कि)मैंने सच्चे गुरु के चरण पखार लिये हैं (उसकी सेवा विनम्रता से की है)"।(१- विराम)

नाम का वरदान प्राप्त होने पर गुरु जी प्रभु को अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुये कहते हैं : "हे' सृष्टि के स्वामी, जग के ईश्वर, सर्वश्रेष्ठ प्रभु, तुमने मेरे जैसे पापी को अपनी शरण में रखा है ।हे' हरि, महापुरुष, दीनों के दुख भँजनहार, तुमने अपना नाम मेरे मुख में डाला है, (तुम्हारी कृपा से मेरी जिह्वा तुम्हारे नाम का जाप करती रहती है)."।(१)

बहुधा कुछ प्रश्न मन में उठते रहते हैं, जैसे कि, यह क्यों आवश्यक है कि प्रभु नाम के ध्यान के लिये गुरु की संगति में उससे मार्ग दर्शन लिया जाये ? क्यों नहीं कोई स्वयं ही प्रभु नाम के यश का गायन कर सकता ? इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर में गुरु जी का कथन है : "(हे' मेरे मित्रो), प्रभु के गुण अति उच्च तथा विशिष्ट हैं और हम अति नीच अथवा अवगुणी (दैवी गुणों से विहीन) हैं, अतः, अपने मित्र और सखा जैसे सच्चे गुरु की संगति में बैठ कर मैंने प्रभु का यशगायन किया । जैसे कि, एक नीम का वृक्ष यदि चंदन के वृक्ष के समीप उगता है तो वह चंदन के गुणों (उसकी महक) का वरदान पा लेता है (उसी प्रकार मैंने भी गुरु की संगति में रह कर प्रभु नाम का ध्यान एवं यशगान करना प्रारंभ कर दिया है)"।(२)

सँत अथवा गुरु की संगति में रह कर पाये गये आशीर्वादों का वर्णन करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मैं अनेकों विषैले (सांसारिक) अवगुणों से भरे कुकर्म बारम्बार करने के कारण (पाप एवं दुष्कर्मों के बोझ से) अवगुणी बन कर एक पत्थर के समान बोझिल हो गया, परन्तु, हरि ने अपने सँतो की संगति के साथ मुझे जोड़ कर (भवसागर से) पार करवा दिया "।(३)

गुरु जी अंत में प्रार्थना करते हुये कहते हैं : " हे' हरि, मेरे स्वामी, जिनकी तुम रक्षा करते हो, उनके समस्त पाप तुम नष्ट कर देते हो । हे' भक्त नानक के दयालु प्रभु, स्वामी, तुमने तो हिरण्यकश्यप जैसे दुष्ट का भी उद्धार किया है (अतः, कृपया मेरी भी रक्षा करो) "।(४-३)

इस शब्द का तथ्य है कि यद्यपि हमने अनेकों पाप अथवा दुष्कर्म किये हों फिर भी हमारा उद्धार हो सकता है यदि हम सँतों अथवा गुरु की शिक्षा के अनुसार प्रभु नाम का ध्यान और उसकी महिमा का गायन करते रहें ।

ਪੰਨਾ ੯੭੭

ਨਟ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਕੋਈ ਆਨਿ ਸੁਨਾਵੈ ਹਰਿ ਕੀ ਹਰਿ ਗਾਲ ॥
ਤਿਸ ਕਉ ਹਉ ਬਲਿ ਬਲਿ ਬਾਲ ॥
ਸੋ ਹਰਿ ਜਨੁ ਹੈ ਭਲਭਾਲ ॥

ਪੰਨਾ ੯੭੮

ਹਰਿ ਹੋ ਹੋ ਹੋ ਮੇਲਿ ਨਿਹਾਲ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਹਰਿ ਕਾ ਮਾਰਗੁ ਗੁਰ ਸੰਤਿ ਬਤਾਇਓ ਗੁਰਿ ਚਾਲ ਦਿਖਾਈ ਹਰਿ ਚਾਲ ॥
ਅੰਤਰਿ ਕਪਟੁ ਚੁਕਾਵਹੁ ਮੇਰੇ ਗੁਰਸਿਖਹੁ ਨਿਹਕਪਟ ਕਮਾਵਹੁ ਹਰਿ ਕੀ ਹਰਿ ਘਾਲ ਨਿਹਾਲ ਨਿਹਾਲ ਨਿਹਾਲ ॥੧॥

ਤੇ ਗੁਰ ਕੇ ਸਿਖ ਮੇਰੇ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭਿ ਭਾਏ ਜਿਨਾ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭੁ ਜਾਨਿਓ ਮੇਰਾ ਨਾਲਿ ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਕਉ ਮਤਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭਿ ਦੀਨੀ ਹਰਿ ਦੇਖਿ ਨਿਕਟਿ ਹਦੂਰਿ ਨਿ-ਹਾਲ ਨਿਹਾਲ ਨਿਹਾਲ ਨਿਹਾਲ ॥੨॥੩॥੯॥

पृ-९७७

नट महला ४॥

कोई आनि सुनावै हरि की हरि गाल ॥
तिस कउ हउ बलि बलि बाल ॥
सो हरि जनु है भलभाल ॥

पृ-९७८

हरि हो हो हो मेलि निहाल ॥१॥रहाउ॥

हरि का मारगु गुर सँति बताइओ गुरि चाल दिखाई हरि चाल ॥
अँतरि कपटु चुकावहु मेरे गुरसिखहु निहकपट कमावहु हरि की हरि घाल निहाल निहाल निहाल ॥१॥

ते गुर के सिख मेरे हरि प्रभि भाए जिना हरि प्रभु जानिओ मेरा नालि ॥
जन नानक कउ मति हरि प्रभि दीनी हरि देखि निकटि हदूरि निहाल निहाल निहाल निहाल ॥२॥३॥९॥

नट महला - ४

इस शब्द में गुरु जी यह व्यक्त करते हैं कि वह ऐसे मनुष्य का कितना आदर करते हैं जो उन्हें प्रभु की कथा और कीर्तन सुनाता है तथा वह हमें किस प्रकार का संदेश देना चाहते हैं ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मैं किसी भी उस व्यक्ति पर बारम्बार बलिहारी हूँ जो मुझे आकर हरि की कथा सुनाता है । वह हरि का भक्त मेरे लिये अति गुणी और भला है । (ऐसे सदाचारी लोगों से हमारा) मिलन जैसे हरि का ही हमारे लिए एक आशीर्वाद है "।(१-विराम)

अब गुरु जी हमें बताते हैं कि ऐसा मनुष्य कौन सा है जिसने हमें प्रभु से मिलने की राह पहले ही समझा दी और वह हमें क्या परामर्श एवं शिक्षा दे रहा है । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), यह गुरु संत हैं जिन्होंने हरि की ओर जाने का मार्ग बताया और गुरु ने यह भी दिखाया कि उस हरि की राह पर जाने के लिये कैसे चलना होगा । गुरु ने निर्देश दिया : हे' मेरे शिष्यो, अपने अँतरमन में से कप्ट भावना को पूर्ण रूप से समाप्त करो और निष्कप्ट होकर हरि की सेवा (प्रभु का ध्यान) को अर्जित करो, जिसे पाकर तुम सदा अति आनंदित रहोगे "।(१)

अंत में गुरु जी कहते हैं : " मेरे हरि को गुरु के वह शिष्य अति मनभावन प्रतीत होते हैं जिन्होंने यह जान लिया कि मेरा प्रभु सदा उनके साथ है । हरि के जन, नानक को हरि ने यह सुबुद्धि प्रदान करदी कि हरि को अपने सम्मुख अथवा निकट पाकर हम आनंद, आनंद और आनंद ही पाते रहते हैं "।(२-३-९)

इस शब्द का सार यह है कि हमें संतगुरु से मार्ग दर्शन लेते रहना चाहिये जो यह बताते हैं कि हमें अहमभाव तथा कप्ट को त्याग कर प्रभु का ध्यान करना चाहिये । प्रभु को सदैव अपने निकट मानते हुये अथवा मन में उससे जुड़े रह कर हम असीम आनंद का अनुभव करेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੮੦	**पृ-९८०**
ਨਟ ਮਹਲਾ ੫ ॥	**नट महला ५॥**
ਹਉ ਵਾਰਿ ਵਾਰਿ ਜਾਉ ਗੁਰ ਗੋਪਾਲ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥ ਮੋਹਿ ਨਿਰਗੁਨ ਤੁਮ ਪੂਰਨ ਦਾਤੇ ਦੀਨਾ ਨਾਥ ਦਇਆਲ ॥੧॥	हउ वारि वारि जाउ गुर गोपाल ॥१॥रहाउ॥ मोहि निरगुन तुम पूरन दाते दीना नाथ दइआल ॥१॥
ਊਠਤ ਬੈਠਤ ਸੋਵਤ ਜਾਗਤ ਜੀਅ ਪ੍ਰਾਨ ਧਨ ਮਾਲ ॥੨॥	ऊठत बैठत सोवत जागत जीअ प्रान धन माल ॥२॥
ਦਰਸਨ ਪਿਆਸ ਬਹੁਤੁ ਮਨਿ ਮੇਰੈ ਨਾਨਕ ਦਰਸ ਨਿਹਾਲ ॥੩॥੮॥	दरसन पिआस बहुतु मनि मेरै नानक दरस निहाल ॥३॥८॥

नट महला - ५

इस शब्द में गुरु जी यह प्रकट करते हैं कि हमें प्रभु के नाम का ध्यान और उसकी महिमा का गायन कैसे करते रहना है । वह कहते हैं : “ हे' मेरे गुरु, धरती के स्वामी, मैं बारम्बार तुम पर बलिहारी जाता हूँ ”।(१-विराम)

वह अपनी विनम्रता प्रकट करते हुये कहते हैं : “ हे' दीनानाथ, दयालु प्रभु, मैं गुण विहीन हूँ और तुम पूर्ण रूप से दाता हो ”।(१)

प्रभु का वह कितना अधिक आदर करते हैं और उनके लिये प्रभु का आधार कितना बहुमूल्य है, इस पर वह कहते हैं : “(हे' प्रभु, प्रत्येक स्थिति में) उठते, बैठते, सोते और जागते, अर्थात, हर समय केवल तुम्हीं मेरे जीवन के प्राण हो, धन और सम्पत्ति हो ”।(२)

अतः, वह विनम्रतापूर्वक अनुरोध करते हैं : “(हे' प्रभु), मेरा मन तुम्हारे दर्शन के लिये बहुत प्यासा है, इसलिये कृपा करके नानक को अपने दर्शन देकर आनंद प्रदान करो ”।(३-८)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें प्रभु से इतना अधिक प्रेम होना चाहिये कि उठते बैठते, सोते जागते हम उसके ध्यान अथवा प्रेम में रहें और उसके दर्शन की चाह करते रहें ।

ਪੰਨਾ ੯੮੧

ਨਟ ਮਹਲਾ ੪ ॥

ਰਾਮ ਹਰਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਸਰਿ ਨਾਵਾਰੇ ॥
ਸਤਿਗੁਰਿ ਗਿਆਨੁ ਮਜਨੁ ਹੈ ਨੀਕੋ ਮਿਲਿ ਕਲਮਲ ਪਾਪ ਉਤਾਰੇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸੰਗਤਿ ਕਾ ਗੁਨੁ ਬਹੁਤੁ ਅਧਿਕਾਈ ਪੜਿ ਸੂਆ ਗਨਕ ਉਧਾਰੇ ॥
ਪਰਸ ਨਪਰਸ ਭਏ ਕੁਬਿਜਾ ਕਉ ਲੈ ਬੈਕੁੰਠਿ ਸਿਧਾਰੇ ॥੧॥

ਅਜਾਮਲ ਪ੍ਰੀਤਿ ਪੁਤ੍ਰ ਪ੍ਰਤਿ ਕੀਨੀ ਕਰਿ ਨਾਰਾਇਣ ਬੋਲਾਰੇ ॥
ਮੇਰੇ ਠਾਕੁਰ ਕੈ ਮਨਿ ਭਾਇ ਭਾਵਨੀ ਜਮਕੰਕਰ ਮਾਰਿ ਬਿਦਾਰੇ ॥੨॥

ਮਾਨੁਖੁ ਕਥੈ ਕਥਿ ਲੋਕ ਸੁਨਾਵੈ ਜੋ ਬੋਲੈ ਸੋ ਨ ਬੀਚਾਰੇ ॥
ਸਤਸੰਗਤਿ ਮਿਲੈ ਤ ਦਿੜਤਾ ਆਵੈ ਹਰਿ ਰਾਮ ਨਾਮਿ ਨਿਸਤਾਰੇ ॥੩॥

ਜਬ ਲਗੁ ਜੀਉ ਪਿੰਡੁ ਹੈ ਸਾਬਤੁ ਤਬ ਲਗਿ ਕਿਛੁ ਨ ਸਮਾਰੇ ॥
ਜਬ ਘਰ ਮੰਦਰਿ ਆਗਿ ਲਗਾਨੀ ਕਢਿ ਕੂਪੁ ਕਢੈ ਪਨਿਹਾਰੇ ॥੪॥

ਸਾਕਤ ਸਿਉ ਮਨ ਮੇਲੁ ਨ ਕਰੀਅਹੁ ਜਿਨਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਬਿਸਾਰੇ ॥
ਸਾਕਤ ਬਚਨ ਬਿਛੂਆ ਜਿਉ ਡਸੀਐ ਤਜਿ ਸਾਕਤ ਪਰੈ ਪਰਾਰੇ॥੫॥

ਪੰਨਾ ੯੮੨

ਲਗਿ ਲਗਿ ਪ੍ਰੀਤਿ ਬਹੁ ਪ੍ਰੀਤਿ ਲਗਾਈ ਲਗਿ ਸਾਧੂ ਸੰਗਿ ਸਵਾਰੇ ॥
ਗੁਰ ਕੇ ਬਚਨ ਸਤਿ ਸਤਿ ਕਰਿ ਮਾਨੇ ਮੇਰੇ ਠਾਕੁਰ ਬਹੁਤੁ ਪਿਆਰੇ ॥੬॥

ਪੂਰਬਿ ਜਨਮਿ ਪਰਚੂਨ ਕਮਾਏ ਹਰਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮਿ ਪਿਆਰੇ ॥
ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਰਸੁ ਪਾਇਆ ਰਸੁ ਗਾਵੈ ਰਸੁ ਵੀਚਾਰੇ ॥੭॥

ਹਰਿ ਹਰਿ ਰੂਪ ਰੰਗਿ ਸਭਿ ਤੇਰੇ ਮੇਰੇ ਲਾਲਨ ਲਾਲ ਗੁਲਾਰੇ ॥
ਜੈਸਾ ਰੰਗੁ ਦੇਹਿ ਸੋ ਹੋਵੈ ਕਿਆ ਨਾਨਕ ਜੰਤ ਵਿਚਾਰੇ ॥੮॥੩॥

पृ-९८१

नट महला ४ ॥

राम हरि अँमित सरि नावारे ॥
सतिगुरि गिआनु मजनु है नीको मिलि कलमल पाप उतारे ॥१॥रहाउ॥

सँगति का गुनु बहुतु अधिकाई पड़ि सूआ गनक उधारे ॥
परस नपरस भए कुबिजा कउ लै बैकुँठि सिधारे ॥१

अजामल प्रीति पुत्र प्रति कीनी करि नाराइण बोलारे ॥
मेरे ठाकुर कै मनि भाइ भावनी जमकँकर मारि बिदारे ॥२॥

मानुखु कथै कथि लोक सुनावै जो बोलै सो न बीचारे ॥
सतसँगति मिलै त दिड़ता आवै हरि राम नामि निसतारे ॥३॥

जब लगु जीउ पिँडु है साबतु तब लगि किछु न समारे ॥
जब घर मँदरि आगि लगानी कढि कूपु कढै पनिहारे ॥४॥

साकत सिउ मन मेलु न करीअहु जिनि हरि हरि नाम बिसारे ॥
साकत बचन बिछूआ जिउ डसीऐ तजि साकत परै परारे ॥५॥

पृ-९८२

लगि लगि प्रीति बहु प्रीति लगाई लगि साधू सँगि सवारे ॥
गुर के बचन सति सति कर माने मेरे ठाकुर बहुतु पिआरे ॥६॥

पूरबि जनमि परचून कमाए हरि हरि हरि नामि पिआरे ॥
गुर प्रसादि अँमित रसु पाइआ रसु गावै रसु वीचारे ॥७॥

हरि हरि रूप रँगि सभि तेरे मेरे लालन लाल गुलारे ॥
जैसा रँगु देहि सो होवै किआ नानक जँत विचारे ॥८॥३॥

नट महला – ४

कई हिंदू पौराणिक कथाओं के द्वारा इस शब्द में गुरु जी ने यह चित्रित किया है कि कैसे सँतजनों की सँगति, उनके मार्ग दर्शन तथा प्रभु की कृपा से कई घोर पापीजनों का कल्याण हुया।

शब्द के आरंभ में वह एक सामान्य टिप्पणी करते हैं कि गुरु के उपदेशों का श्रवण तथा प्रभु नाम का ध्यान जीवन में पवित्रता पाने के प्रभावी साधन हैं। वह कहते हैं : " हे' हरि, जिसे भी तुमने (अपने पवित्र नाम का ध्यान करने के लिये प्रेरित किया तो ऐसे लगा कि जैसे तुमने) उस मनुष्य को अँमित के सरोवर में स्नान करवा दिया हो। सच्चे गुरु द्वारा प्राप्त (दैवी) ज्ञान रूपी स्नान अच्छा है जो पापकर्मों और दुषविचारों को धोकर निकाल देता है "।(१-विराम)

उपरोक्त कथन की पुष्टि गुरु जी अब यहाँ दो पौराणिक कथायों का उदाहरण देकर करते हैं। प्रथम उदाहरण वह 'चंद्रमणि' नामक गणिका का देते हैं जिसने अपना अब तक का संपूर्ण जीवन वेश्यावृत्ति जैसे पापकर्म में व्यतीत किया था। एक रात भारी वर्षा में भीगते हुये एक साधू अपने तोते को पिंजरे में लिये उसके द्वार पर शरण लेने आ पहुँचे और उसे पुत्री कह कर पुकारा। गणिका को उन दोनों को इस दशा में देख कर दया आ गयी और उसने भोजन तथा अन्य सुविधायें देकर उनकी सेवा और देखभाल की। जब साधु चलने को तैयार हुये तब गणिका ने उनसे प्रार्थना की कि वह उसे इस पापयुक्त जीवन के उद्धार का कोई राह बतायें।

साधू ने उसे अपना प्रिय तोता, जो हर समय 'राम' 'राम' बोलता रहता था, दे दिया और कहा कि वह उसे नित्य प्रति 'राम' 'राम' कहने का अभ्यास करवाती रहे। तोते को हर समय 'राम' 'राम' रटवाते रहने के कारण कुछ समय के बाद गणिका स्वयं ही प्रभु प्रेम में लीन रहने लगी और इस प्रकार अंत में अपनी पापवृत्तियों से मुक्ति पाकर प्रभु की शरण में आ गयी।

दूसरी कथा एक 'कुब्जा' नामक कुबड़ी वृद्धा दासी की है जो राजा कंस के दरबार में कंस को नित्य तिलक लगाने और फूल माला पहनाने का काम करती थी और अपने कूबड़ से परेशान रहती थी । कृष्ण भगवान से मन ही मन प्रेम करती थी और एक दिन राह में उन्हें पा कर उसने उनको तिलक लगाना और माला पहनानी चाही, पर कूबड़ के कारण उनके मस्तक तक पहुँच नहीं पा रही थी । उसके सच्चे प्रेम एवं श्रद्धा को देख कृष्ण जी ने अपना एक पैर उसके पैर पर रखा और अपने हाथ का अँगूठा उसकी ठोड़ी के नीचे रख कर उसे इस प्रकार से उपर खींचा कि उसका कूबड़ निकल गया और उसने मोक्ष प्राप्त किया ।

उपरोक्त कथायों के संदर्भ में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), संगति का प्रभाव अति शक्तिशाली होता है, (देखो कैसे साधू की संगति के परिणामस्वरुप) तोते को पढ़ाते पढ़ाते गणिका का उद्धार हो गया । (इसी प्रकार कृष्ण जी ने कुबड़ी) कुब्जा को अपने स्पर्श से आशीर्वाद दिया और उसे लेकर कर बैकुंठ चले गये "।(१)

अब आगे गुरु जी अजामिल नामक एक ब्राह्मण का उदाहरण देते हैं जो वेदों का महाज्ञानी और राजा के दरबार में पंडित था । किसी प्रकार से वह एक वेश्या के प्रेम में पड़ कर वेश्या गामी बन गया । यहाँ तक कि वह अपने गुरु एवं राजा के मना करने पर भी नहीं माना और अंत में राजा के दरबार में से निष्कासित कर दिया गया । समय के साथ वह दोनों आर्थिक रूप से अति दरिद्र अवस्था में आ गये और इस बीच उनकी नौ संतानें हुईं । जब उनकी दसवीं संतान माँ के गर्भ में थी तब एक दिन उनके घर एक साधू आये । इस दंपत्ति ने जो भी सेवा बन पड़ी वह पूर्ण श्रद्धा के साथ की । साधू के जाने के समय दोनों ने अपने कल्याण एवं उद्धार के लिये उससे आशीर्वाद की कामना की । साधू ने आदेश दिया कि आने वाले शिशु का नाम 'नारायण' रखना । संयोग से नारायण नामक यह बालक पिता को अति प्रिय लगता था, अतः, वह उसे सदैव 'नारायण' ' नारायण' कह कर पुकारता रहता और उसे अपने साथ रखता । वृद्धावस्था में वह बीमार पड़ा और मृत्युशैय्या पर जब उसने यमदूतों को निकट आते देखा तो डर के कारण 'नारायण' को पुकारना आरंभ कर दिया । पर शीघ्र ही उसने सच्चे वास्तविक 'नारायण' (प्रभु) को अपने कल्याण के लिये स्मरण करना आरंभ कर दिया । उसकी ऐसी निष्कप्ट और सच्ची प्रार्थना के कारण प्रभु को उस पर दया आगयी और उसका उद्धार किया । अतः, गुरु जी उपरोक्त कथा के संदर्भ में कहते हैं :" (हे' मेरे मित्रो), अजामिल को अपने पुत्र से इतना अधिक प्रेम था कि वह उसे हर समय 'नारायण', 'नारायण' पुकारता रहता था (और इस प्रकार से वह सच्चे प्रभु के प्रेम में भी मग्न होने लग गया), ऐसा प्रेम अपने प्रति देख कर मेरे ठाकुर (प्रभु) का मन पसीज गया और उसने सभी यमदूतों को मार भगाया (और अजामिल के कष्टों का निवारण कर उसे मोक्ष प्रदान किया)"।(२)

किन्तु, गुरु जी हमें यहाँ पर यह समझाना चाहते हैं कि ऐसी कथायें हम केवल दूसरों को ही ना सुनायें, अपितु, ऐसे दृष्टांतों से सीखना चाहिए कि हम भी संतों की संगति में रह कर लाभ उठाने का प्रयास करें । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, कुछ भी लाभ नहीं होता, यदि) मनुष्य केवल इन कथायों को लोगों को सुनाता रहे और जो भी बोल रहा है उसे अपने लिये मन में ना विचारे । जब कोई सच्चे संतों की संगति में मिल बैठता है, तभी उसके मन में (गुरु के आदेश के प्रति) यह दृढ़ विश्वास उत्पन्न होता है कि हरि के नाम का ध्यान ही (सांसारिक दुविधायों तथा जन्म मरण के फेरों से) उसका उद्धार कर सकता है "।(३)

गुरु जी अब इस तथ्य पर टिप्पणी करते हैं कि मनुष्य अपने सामान्य स्वभाव के अनुसार गुरु की शिक्षा तथा प्रभु नाम के ध्यान को अपने अंत समय तक टालता रहता है ।वह कहते हैं : "(हे 'मेरे मित्रो), जब तक तन और मन स्वस्थ अथवा आरोग्य रहता है तब तक मनुष्य स्वयं के लिये कुछ नहीं सँवारता (प्रभु नाम का ध्यान नहीं करता । परन्तु, जब अंत समय निकट आने लगता है तब वह मंदिर गुरुद्वारे आदि में जाकर प्रभु और देवी देवताओं को गुहार लगाने लगता है, जो कि) घर अथवा मंदिर में आग लग जाने के पश्चात कुआँ खोद कर पानी निकालने के समान है "।(४)

इसलिये, गुरु जी अपने मन को (परोक्ष में हमें भी) समझाते हैं और कहते हैं : " हे' मेरे मन, मायाधारी मनुष्य के साथ मित्रता कभी मत कर, क्योंकि, उसने हरि के नाम को बिसार दिया है । मायाप्रेमी और सत्ताधारी के वचन बिच्छु के डंक के समान (विषैले अथवा दुखदायी) होते हैं, ऐसे मनुष्य को त्याग कर उससे सदा दूर रह " ।(५)

साथ ही गुरु जी हमें बताते हैं कि किस प्रकार की संगति हमारे लिये वास्तव में लाभप्रद है । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जो भी लोग गुरु की प्रीत में पड़ गये और गुरु की संगति से प्रेम करते रहे, उन्होंने अपना जीवन सँवार लिया है । हाँ, जिन्होंने गुरु के वचनों को सत्य करके माना और स्वीकार किया है वह मेरे ठाकुर (प्रभु) को अति प्रिय हैं "।(६)

किन्तु, वह बिरले मनुष्य कौनसे हैं जो प्रभु को प्रिय लगते हैं, इस पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, केवल वही) जिन्होंने अपने पूर्व जन्मों में कुछ पुण्य कर्म कमाये हुये हैं, वह अब भी हरि के नाम से प्रेम करते हैं । गुरु की अनुकम्पा से वह (प्रभु नाम रुपी) अँमृत रस को पाते हैं और उसी रस के स्वाद का गान करते हैं और उसी का चिंतन मनन करते हैं "।(७)

शब्द के अंत में गुरु जी कहते हैं : " हे' मेरे अति प्रिय दुलारे सुंदर प्रभु, हे' हरि, सभी रुप तुम्हारे ही हैं । नानक का तो यही विचार है कि जो भी रंग तथा रुप तुम हमें प्रदान करते हो हम वैसे ही बन जाते हैं, अन्यथा, हम बेचारे जीव कुछ विचारने योग्य नहीं है "।(८)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि अभी तक प्रभु को बिसार कर पापवृत्तियों से भरा जीवन व्यतीत कर रहे हैं तो अब भी हम प्रभु के निकट रहने का आनंद प्राप्त कर सकते हैं, यदि हम मायाप्रेमी और सत्ताधारी अहंकारी लोगों की संगति को त्याग कर संतजनों तथा गुरु की संगति में रह कर उनकी वाणी पर विचार करें और प्रभु की महिमा का गुणगान एवं पूर्ण श्रद्धा के साथ उसके नाम के ध्यान में व्यस्त रहें ।

ਪੰਨਾ ੯੮੪	पृ-९८४
ਰਾਗੁ ਮਾਲੀ ਗਉੜਾ ਮਹਲਾ ੪	**रागु माली गउड़ा महला ४॥**
ੴ ਸਤਿ ਨਾਮੁ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰਭਉ ਨਿਰਵੈਰੁ ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਅਜੂਨੀ ਸੈਭੰ ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभँ गुर प्रसादि ॥**
ਅਨਿਕ ਜਤਨ ਕਰਿ ਰਹੇ ਹਰਿ ਅੰਤੁ ਨਾਹੀ ਪਾਇਆ ॥ ਹਰਿ ਅਗਮ ਅਗਮ ਅਗਾਧਿ ਬੋਧਿ ਆਦੇਸੁ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਰਾਇਆ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	अनिक जतन करि रहे हरि अँतु नाही पाइआ ॥ हरि अगम अगम अगाधि बोधि आदेसु हरि प्रभ राइआ ॥१॥ रहाउ॥
ਕਾਮੁ ਕ੍ਰੋਧੁ ਲੋਭੁ ਮੋਹੁ ਨਿਤ ਝਗਰਤੇ ਝਗਰਾਇਆ ॥ ਹਮ ਰਾਖੁ ਰਾਖੁ ਦੀਨ ਤੇਰੇ ਹਰਿ ਸਰਨਿ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਆਇਆ ॥੧॥	कामु क्रोधु लोभु मोहु नित झगरते झगराइआ ॥ हम राखु राखु दीन तेरे हरि सरनि हरि प्रभ आइआ ॥१॥
ਸਰਣਾਗਤੀ ਪ੍ਰਭ ਪਾਲਤੇ ਹਰਿ ਭਗਤਿ ਵਛਲੁ ਨਾਇਆ ॥ ਪ੍ਰਹਿਲਾਦੁ ਜਨੁ ਹਰਨਾਖਿ ਪਕਰਿਆ ਹਰਿ ਰਾਖਿ ਲੀਓ ਤਰਾਇਆ ॥੨॥	सरणागती प्रभ पालते हरि भगति वछलु नाइआ ॥ प्रहिलादु जनु हरनाखि पकरिआ हरि राखि लीओ तराइआ ॥२॥
ਹਰਿ ਚੇਤਿ ਰੇ ਮਨ ਮਹਲੁ ਪਾਵਣ ਸਭ ਦੂਖ ਭੰਜਨੁ ਰਾਇਆ ॥ ਭਉ ਜਨਮ ਮਰਨ ਨਿਵਾਰਿ ਠਾਕੁਰ ਹਰਿ ਗੁਰਮਤੀ ਪ੍ਰਭੁ ਪਾਇਆ ॥੩॥	हरि चेति रे मन महलु पावण सभ दूख भँजनु राइआ ॥ भउ जनम मरन निवारि ठाकुर हरि गुरमती प्रभु पाइआ ॥३॥
ਹਰਿ ਪਤਿਤ ਪਾਵਨ ਨਾਮੁ ਸੁਆਮੀ ਭਉ ਭਗਤ ਭੰਜਨੁ ਗਾਇਆ ॥ ਹਰਿ ਹਾਰੁ ਹਰਿ ਉਰਿ ਧਾਰਿਓ ਜਨ ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਸਮਾਇਆ ॥੪॥੧॥	हरि पतित पावन नामु सुआमी भउ भगत भँजनु गाइआ ॥ हरि हारु हरि उरि धारिओ जन नानक नामि समाइआ ॥४॥१॥

राग माली गउड़ा महला - ४

राग 'माली गउड़ा' का यह नया अध्याय गुरु रामदास जी के द्वारा उच्चारित शब्द से आरंभ होता है । इसमें गुरु जी अति विनम्र भाव से प्रभु को सम्बोधित करते हुये हमारे लिये यह प्रार्थना करते हैं कि वह मानव जाति की रक्षा करें जो काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अँहकार जैसे विकारों में भटक कर आपस में लड़ती झगड़ती रहती है । वह हमें यह भी बताते हैं कि कैसे हम समस्त सांसारिक उलझनों तथा जन्म मरण के दुखों से सदा के लिये मुक्त हो सकते हैं ।

सर्वप्रथम, वह विनम्रता से प्रभु को सम्बोधित करते हुये कहते हैं : " हे' प्रभु, अनगिनत लोग अनेकों यत्न करते करते थक गये, पर किसी ने हे' हरि, तुम्हारा अंत अथवा ओर छोर नहीं पाया । हे' अगम्य, अगोचर, अगाध बोध वाले हरि, तुम अधीश्र्वर हो "।(१-विराम)

गुरु जी हमारे निमित्त प्रभु से तर्क करते हुये कहते हैं : "(हे' प्रभु, अपने विकारों जैसे) काम, क्रोध, लोभ तथा मोह द्वारा उत्तेजित होकर हम नित्य ही आपस में लड़ते झगड़ते रहते हैं । हे' प्रभु, हम दीन भिक्षुक तेरी शरण में आये हैं, हे' हरि, हमारी रक्षा करो "।(१)

अपने भक्तों की रक्षा करने की प्रभु की परम्परा का आह्वान करते हुये गुरु जी कहते हैं : " हे' प्रभु, शरण में आये अपने भक्तों की रक्षा अथवा पालना करने के लिये तुम जाने जाते हो, इसी कारण तुम्हारा नाम भक्त वछल (भक्त जनों को प्रेम करने वाला) पड़ा है, जैसे कि, जब भक्त प्रह्लाद को हिरण्यकश्यप ने मारने के लिये पकड़ लिया था तब हे' हरि तुम्हीं ने उसकी रक्षा की और उसका उद्धार किया "।(२)

इसलिये, गुरु जी अपने मन को (वास्तव में हमें भी) समझाते हैं और कहते हैं : " हे' मेरे मन, यदि तुम राजाधिराज प्रभु के महल में स्थान पाना चाहते हो तो सदा अपने मन में उसे स्मरण करो जो सभी दुखों का विनाश करता है । (हे' मेरे मित्रो, वह प्रभु) हमारे जन्म मरण के भय का निवारण करके हमारा उद्धार कर सकता है, उस हरि को गुरु की मति अथवा उपदेशों एवं आदेशों की पालना करके पाया जाता है "।(३)

शब्द के अंत में गुरु जी यह प्रकट करते हैं कि हमें कैसे हरि से आग्रहपूर्वक प्रार्थना करनी चाहिये । वह कहते हैं : " हे' मेरे प्रभु, स्वामी, तुम्हारा नाम पतित पावन है, तुम्हारे भक्त जनों ने तुम्हारी महिमा तुम्हें भय भॅजन पुकार कर गायी है । तुम्हारे दास नानक का कथन है कि जिन्होंने हरि नाम की माला अपने हृदय में धारण कर रखी है वह हरि के नाम में ही समा गए हैं "।(४-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम अपने जन्म मरण के भय तथा काम, क्रोध, मोह एवं लोभ आदि जैसे विकारों को त्यागना चाहते हैं तो गुरु के आदेशों का पालन करते हुये हमें सदैव अपने मन में सच्चा प्रेम और श्रद्धा रख कर प्रभु के नाम का ध्यान करना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੯੮੫	**पृ-९८५**
ਮਾਲੀ ਗਉੜਾ ਮਹਲਾ ੪ ॥	**माली गउड़ा महला ४॥**
ਪੰਨਾ ੯੮੬	**पृ-९८६**
ਮੇਰੇ ਮਨ ਹਰਿ ਭਜੁ ਸਭ ਕਿਲਬਿਖ ਕਾਟ ॥ ਹਰਿ ਹਰਿ ਉਰ ਧਾਰਿਓ ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਮੇਰਾ ਸੀਸੁ ਕੀਜੈ ਗੁਰ ਵਾਟ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मेरे मन हरि भजु सभ किलबिख काट ॥ हरि हरि उर धारिओ गुरि पूरै मेरा सीसु कीजै गुर वाट ॥१॥ रहाउ॥
ਮੇਰੇ ਹਰਿ ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਮੈ ਬਾਤ ਸੁਨਾਵੈ ਤਿਸੁ ਮਨੁ ਦੇਵਉ ਕਟਿ ਕਾਟ ॥ ਹਰਿ ਸਾਜਨੁ ਮੇਲਿਓ ਗੁਰਿ ਪੂਰੈ ਗੁਰ ਬਚਨਿ ਬਿਕਾਨੋ ਹਟਿ ਹਾਟ ॥੧॥	मेरे हरि प्रभ की मै बात सुनावै तिसु मनु देवउ कटि काट ॥ हरि साजनु मेलिओ गुरि पूरै गुर बचनि बिकानो हटि हाट ॥१॥
ਮਕਰ ਪ੍ਰਾਗਿ ਦਾਨੁ ਬਹੁ ਕੀਆ ਸਰੀਰੁ ਦੀਓ ਅਧ ਕਾਟਿ ॥ ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਨਾਮ ਕੋ ਮੁਕਤਿ ਨ ਪਾਵੈ ਬਹੁ ਕੰਚਨੁ ਦੀਜੈ ਕਟਿ ਕਾਟ ॥੨॥	मकर प्रागि दानु बहु कीआ सरीरु दीओ अध काटि ॥ बिनु हरि नाम को मुक्ति न पावै बहु कँचनु दीजै कटि काट ॥२॥
ਹਰਿ ਕੀਰਤਿ ਗੁਰਮਤਿ ਜਸੁ ਗਾਇਓ ਮਨਿ ਉਘਰੇ ਕਪਟ ਕਪਾਟ ॥ ਤ੍ਰਿਕੁਟੀ ਫੋਰਿ ਭਰਮੁ ਭਉ ਭਾਗਾ ਲਜ ਭਾਨੀ ਮਟੁਕੀ ਮਾਟ ॥੩॥	हरि कीरति गुरमति जसु गाइओ मनि उघरे कपट कपाट ॥ त्रिकुटी फोरि भरमु भउ भागा लज भानी मटुकी माट ॥३॥
ਕਲਜੁਗਿ ਗੁਰੁ ਪੂਰਾ ਤਿਨ ਪਾਇਆ ਜਿਨ ਧੁਰਿ ਮਸਤਕਿ ਲਿਖੇ ਲਿਲਾਟ ॥ ਜਨ ਨਾਨਕ ਰਸੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪੀਆ ਸਭ ਲਾਥੀ ਭੂਖ ਤਿਖਾਟ ॥੪॥੬॥ ਛਕਾ ੧ ॥	कलजुगि गुरु पूरा तिन पाइआ जिन धुरि मसतकि लिखे लिलाट ॥ जन नानक रसु अँमृतु पीआ सभ लाथी भूख तिखाट ॥४॥६॥छका १ ॥ .

माली गउड़ा महला – ४

इस शब्द में गुरु जी अपने सहित हमें भी प्रेम भाव के साथ मन में प्रभु नाम को बसाने का आदेश देते हैं । वह यह भी बताते हैं कि ऐसा करने से क्या लाभ हैं और किस प्रकार से यह विधि अन्य चेष्टाओं की अपेक्षा उच्चतम है ।

अपने मन को प्रभु नाम का ध्यान करने तथा गुरु को अपना धन्यवाद देते हुये गुरु जी कहते हैं: " हे' मेरे मन, हरि नाम को भजो जो समस्त पापों तथा दुर्गुणों का विनाशक है । (हे' मेरे प्रिय साथी संतों), पूर्ण गुरु ने मेरे हृदय में हरि नाम को धारण करवाया है, (मैं उसके लिये इतना आभारी हूँ कि अपना सब कुछ उस पर न्योछावर करने को तत्पर हूँ और आपसे कहता हूँ कि) मेरा शीश काट कर गुरु की राह में रख दो, (जिससे कि उस पर गुरु के चरण पड़ सकें) "।(१-विराम)

गुरु जी उन संतों का कितना आदर करते हैं जो उन्हें प्रिय प्रभु की कथा सुनाते हैं और वह गुरु के प्रति कितना अधिक ऋणी प्रतीत करते हैं जिसने उन्हें प्रभु के साथ जोड़ा । इस तथ्य को सपष्ट करते हुये वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जो भी कोई मुझे मेरे प्रिय हरि के विषय पर कुछ भी सुनायेगा उसे मैं अपना मन काट काट कर अर्पित कर दूँगा । वह देखो ! मेरे पूर्ण गुरु ने मेरा मिलन मेरे प्रियतम हरि से करवा दिया है (इसलिये मैंने यह निश्चय कर लिया है कि मैं गुरु का ऐसा आज्ञाकारी भक्त बन कर रहूँगा, जैसे कि) मैंने स्वयं को गुरु के वचनों की हाट पर बेच दिया हो "।(१)

गुरु जी मोक्ष प्राप्ति के लिए शास्त्रीय विधियों द्वारा किये कर्मकांड जैसे कि तीर्थ यात्रा अथवा स्नान, दान पुण्य आदि करने की अपेक्षा, प्रभु नाम के ध्यान को अधिक प्रभावी तथा लाभदायक समझते हैं और कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, यदि किसी ने) मकर संक्रान्ति के दिन प्रयागराज जैसे तीर्थ स्थान पर बहुत सा दान भी दिया, अपने शरीर को काट कर भी दिया, बहुत सारे कंचन (स्वर्ण) के टुकड़े काट काट कर दान में डाल भी दिये, तब भी हरि नाम के ध्यान के बिना कोई मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता "।(२)

क्यों प्रभु नाम का ध्यान और उसकी महिमा का गान करना कर्मकांडी जीवन पद्धति की अपेक्षा अधिक प्रभावी तथा श्रेष्ठ है, इसकी व्याख्या में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जिसने भी गुरु के द्वारा सुबुद्धि पाकर प्रभु की महिमा का गान किया (उसी के मन में से सभी प्रकार के पाखंड तथा मिथ्या भावनायें दूर हो गयीं, जैसे कि) कप्ट के द्वार खुल जाने से मन निर्मल हो गया हो । ऐसा मनुष्य अपने तीनों गुणों (राजस, तमस व सत्व) को छोड़ देता है और फिर उसके समस्त प्रकार के भ्रम तथा भय पलायन कर जाते हैं, (वह मनुष्य गुरु की मति को किसी संशय के बिना ऐसे स्वीकार करता है जैसे कि सिर के ऊपर रखी) उसकी लोकलाज रुपी मिट्टी की मटकी टूट गयी हो " ।(३)

शब्द के अँत में गुरु जी यह प्रकट करते हैं कि वह लोग कितने सौभाग्यशाली हैं जिन्हें पूर्ण गुरु के मार्ग दर्शन का वरदान प्राप्त है । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), इस कलियुग में केवल उन्हीं लोगों ने पूर्ण गुरु को पाया है जिनके मस्तक पर प्रारब्ध के द्वारा पूर्वलिखित था ।

भक्त नानक कहते हैं कि वह लोग जिन्होंने प्रभु नाम रूपी अँमृत रस को पी लिया, उनकी समस्त भूख और प्यास (सांसारिक मोहमाया) सदा के लिए उतर गयी ”।(४-६-छका-१)

इस शब्द का संदेश यह है कि गुरु के निर्देशानुसार प्रभु नाम का ध्यान करना किसी भी प्रकार के कर्मकांड जैसे कि तीर्थ स्नान अथवा त्योहार के अवसर पर दान दक्षिणा करने से अधिक श्रेष्ठ एवं प्रभावी है । चूँकि, हमें अनंत रूप से पूर्ण गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) के द्वारा मार्ग दर्शन का सौभाग्य प्राप्त है इसलिये इस वाणी को हमें श्रद्धापूर्वक पढ़ना, विचारना तथा अपने जीवन में ढालना चाहिये । यदि ऐसा करते हैं तब हमारे समस्त मिथ्या विचार, भय, भ्रम और मन में बसी सामाजिक दुविधायें आदि सभी लुप्त हो जायेंगे और जब भी हम प्रभु नाम का ध्यान करेंगे तभी स्वयं को अपने प्रिय प्रभु के निकट पायेंगे ।

ਪੰਨਾ ੯੮੭

ਮਾਲੀ ਗਉੜਾ ਮਹਲਾ ੫ ਦੁਪਦੇ

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਹਰਿ ਸਮਰਥ ਕੀ ਸਰਨਾ ॥
ਜੀਉ ਪਿੰਡੁ ਧਨੁ ਰਾਸਿ ਮੇਰੀ ਪ੍ਰਭ ਏਕ ਕਾਰਨ ਕਰਨਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਿਮਰਿ ਸਿਮਰਿ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਪਾਈਐ ਜੀਵਣੈ ਕਾ ਮੂਲੁ ॥
ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸਰਬਤ ਠਾਈ ਸੂਖਮੋ ਅਸਥੂਲ॥੧॥

ਪੰਨਾ ੯੮੮

ਆਲ ਜਾਲ ਬਿਕਾਰ ਤਜਿ ਸਭਿ ਹਰਿ ਗੁਨਾ ਨਿਤਿ ਗਾਉ ॥
ਕਰ ਜੋੜਿ ਨਾਨਕੁ ਦਾਨੁ ਮਾਂਗੈ ਦੇਹੁ ਅਪਨਾ ਨਾਉ ॥੨॥੧॥੬॥

पृ-९८७

माली गउड़ा महला ५ दुपदे

१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हरि समरथ की सरना ॥
जीउ पिँडु धनु रासि मेरी प्रभ एक कारन करना ॥१॥रहाउ॥

सिमरि सिमरि सदा सुखु पाईऐ जीवणै का मूलु ॥
रवि रहिआ सरबत ठाई सूखमो असथूल ॥१॥

पृ-९८८

आल जाल बिकार तजि सभि हरि गुना निति गाउ ॥
कर जोड़ि नानकु दानु मांगै देहु अपना नाउ ॥२॥१॥६॥

माली गउड़ा महला - ५ दुपदे

इस शब्द में गुरु जी हमसे यह साझा करते हैं कि वह स्वयं अपने लिये कैसे प्रभु की शरण पाकर उस पर निर्भर करते हैं तथा अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर हमें कैसा और क्या परामर्श देते हैं ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), मैंने सर्वरूपेण समर्थ हरि की शरण पा ली है ।(मेरा दृढ़ विश्वास है कि) मेरी जीवात्मा, शरीर, धन तथा राशि सभी कुछ मेरे प्रभु (सृजनकर्ता) का ही है जो सभी कारणों का एक ही कारण है "।(१-विराम)

प्रभु के ध्यान एवं जाप से प्राप्त होने वाले आनंद और सुख के विषय पर संक्षिप्त में गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, वह प्रभु) जीवन का मूल आधार है, उसका सिमरन करते रहने से हमें सदैव सुख शांति प्राप्त होती है । वह दृष्य अथवा अदृष्य रूप से सर्वत्र में व्याप्त है "।(१)

इसलिये, गुरु जी परामर्श देते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), अपने सभी प्रकार के (सांसारिक) जंजाल, विकार तथा दुष्कर्म त्याग कर नित्य ही हरि के गुणों का गान करो । भक्त नानक भी करबद्ध होकर यही भिक्षा माँगते हैं कि हे' प्रभु, अपने नाम का दान प्रदान करो "।(२-१-६)

इस शब्द का संदेश इस प्रकार से है कि यदि हम जीवन में सुख शांति पाना चाहते हैं तो अपने समस्त सांसारिक जंजालों एवं विकारयुक्त प्रवृत्तियों को भुलाकर प्रभु से उसके नाम की भिक्षा माँगे और उसकी महिमा और यश का गान करते रहें ।

ਪੰਨਾ ੯੮੯	पृ-९८९
ਮਾਰੂ ਮਹਲਾ ੧ ॥	**मारू महला १॥**
ਮਿਲਿ ਮਾਤ ਪਿਤਾ ਪਿੰਡੁ ਕਮਾਇਆ ॥ ਤਿਨਿ ਕਰਤੈ ਲੇਖੁ ਲਿਖਾਇਆ ॥ ਲਿਖੁ ਦਾਤਿ ਜੋਤਿ ਵਡਿਆਈ ॥ ਮਿਲਿ ਮਾਇਆ ਸੁਰਤਿ ਗਵਾਈ ॥੧॥	मिलि मात पिता पिँडु कमाइआ ॥ तिनि करतै लेखु लिखाइआ ॥ लिखु दाति जोति वडिआई ॥ मिलि माइआ सुरति गवाई ॥१॥
ਮੂਰਖ ਮਨ ਕਾਹੇ ਕਰਸਹਿ ਮਾਣਾ ॥ ਉਠਿ ਚਲਣਾ ਖਸਮੈ ਭਾਣਾ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मूरख मन काहे करसहि माणा ॥ उठि चलणा खसमै भाणा ॥१॥रहाउ ॥
ਤਜਿ ਸਾਦ ਸਹਜ ਸੁਖੁ ਹੋਈ ॥ ਘਰ ਛਡਣੇ ਰਹੈ ਨ ਕੋਈ ॥ ਕਿਛੁ ਖਾਜੈ ਕਿਛੁ ਧਰਿ ਜਾਈਐ ॥ ਜੇ ਬਾਹੁੜਿ ਦੁਨੀਆ ਆਈਐ ॥੨॥	तजि साद सहज सुखु होई ॥ घर छडणे रहै न कोई ॥ किछु खाजै किछु धरि जाईऐ ॥ जे बाहुड़ि दुनीआ आईऐ ॥२॥
ਸਜੁ ਕਾਇਆ ਪਟੁ ਹਢਾਏ ॥ ਫੁਰਮਾਇਸਿ ਬਹੁਤੁ ਚਲਾਏ ॥ ਕਰਿ ਸੇਜ ਸੁਖਾਲੀ ਸੋਵੈ ॥ ਹਥੀ ਪਉਦੀ ਕਾਹੇ ਰੋਵੈ ॥੩॥	सजु काइआ पटु हढाए ॥ फुरमाइसि बहुतु चलाए ॥ करि सेज सुखाली सोवै ॥ हथी पउदी काहे रोवै ॥३॥
ਘਰ ਘੁੰਮਣਵਾਣੀ ਭਾਈ ॥	घर घुँमणवाणी भाई ॥
ਪੰਨਾ ੯੯੦	**पृ-९९०**
ਪਾਪ ਪਥਰ ਤਰਣੁ ਨ ਜਾਈ ॥ ਭਉ ਬੇੜਾ ਜੀਉ ਚੜਾਊ ॥ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਦੇਵੈ ਕਾਹੂ ॥੪॥੨॥	पाप पथर तरणु न जाई ॥ भउ बेड़ा जीउ चड़ाऊ ॥ कहु नानक देवै काहू ॥४॥२॥

मारू महला - १

इस शब्द में गुरु जी हमें फिर से कहते हैं कि संसार के मिथ्या सुख एवं आमोद प्रमोद के प्रेम में व्यस्त रहने की अपेक्षा, हमें सदैव उस प्रभु का स्मरण करना चाहिये जिसने हम सबका सृजन किया है ।

सर्वप्रथम, वह हमारे असितत्व के ध्येय की तुलना हमारे सामान्य व्यवहार से करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्र, जिसकी इच्छा के अनुसार तुम्हारे) माता और पिता के मिलन से तुम्हारे शरीर का सृजन हुया, उसी सृजनकर्ता ने (तुम्हारे भाग्य में) कुछ लेख भी लिख दिये, (जिनके अनुसार तुमसे यह आशा की गयी कि संसार में) तुम उस प्रभु की महिमा को लिखो जिसने तुम्हें (मानव जीवन की) ज्योति प्रदान की । किन्तु, तुमने तो सांसारिक मायामोह में संलग्न रह कर (भले और बुरे के अन्तर की) चेतना ही गँवा दी है "।(१)

अतः, स्वयं को हमारे जैसे मूर्ख लोगों की श्रेणी में रखते हुये गुरु जी अपने मन को सम्बोधित करते हैं और कहते हैं : " हे' मेरे मूर्ख मन, तुम क्यों (इन सांसारिक उपलब्धियों पर)अभिमान करते हो ? स्मरण रखो, स्वामी की इच्छानुसार किसी भी दिन (यह सब छोड़ कर संसार से) तुम उठ कर चले जायोगे "।(१-विराम)

अपने वर्तमान एवं भविष्य में उपयोग के लिये धन सम्पदा का संचय करने की हमारी प्रवृत्ति पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मन, तुम सांसारिक धन सम्पदा में सुख शांति को ढूँढते हो, पर मैं तुमसे कह रहा हूँ कि) जब तुम इनके स्वाद को त्याग दोगे, केवल तभी तुम्हें (अपने जीवन में) सुख शांति एवं सहजता प्राप्त होगी ।अपना घर (यह संसार) कभी तो छोड़ना पड़ेगा ही, क्योंकि, कोई भी सदा नहीं रहता । (तुम भले ही यह सोच कर धन सम्पदा एकत्र कर रहे हो कि) कुछ अब खाने में व्यय होगी और कुछ भविष्य के लिये बचा कर रख लें (परन्तु, यह योजना तो केवल तभी लाभप्रद है) यदि हमें इस संसार में फिर दोबारा वापिस आना हो (इसलिये, हमें धन सम्पदा का संचय करने में समय नहीं गँवाना चाहिये जिसका कि हम कभी भी उपयोग नहीं करेंगे)"।(२)

अब गुरु जी मानव के मिथ्या सांसारिक सुखों को भोगने तथा अन्य सभी लोगों पर अधिकार एवं शासन करने के स्वभाव पर टिप्पणी करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, कोई) अपने शरीर को सुंदर रेशमी वस्त्रों से सुसज्जित करता है, कोई हर समय दूसरों को अपनी आज्ञा एवं शासन में रखता है कोई सुखदायी सेज पर शयन करता है, परन्तु, वह तब क्यों रोता है जब (मृत्यु का) हाथ आकर उसको पकड़ लेता है "।(३)

अतः, शब्द के अंत में गुरु जी हमें अति सान्तवना भरे और व्यवहारिक रूप से निर्देश देते हुये कहते हैं : " हे' मेरे भाइयो, अपने घर (तथा, परिवार) से मोह एवं प्रेम (नदी में उठे) एक भँवर की भाँति है । पापकर्मों रूपी पत्थरों के बोझ को उपर लादे हुए भवसागर के भँवरों को पार नहीं किया जा सकता । यह केवल तभी संभव है यदि हम अपनी आत्मा को प्रभु के प्रति आदर एवं भय रूपी नाव पर चढ़ा कर बैठा दें (और प्रेम एवं श्रद्धा के साथ प्रभु नाम का ध्यान करें, तभी भवसागर से पार हो सकेंगे)। परन्तु, नानक का कथन है कि प्रभु किसी बिरले को ही (अपने नाम के ध्यान की सूझ रूपी नाव) प्रदान करते हैं "।(४-२)

इस शब्द का संदेश यह है कि अनावश्यक धन सम्पदा के संचय, मिथ्या सांसारिक सुख एवं इच्छायें तथा अंहभावयुक्त कर्म इत्यादि करने में समय नष्ट करने की अपेक्षा, हमें अपने जीवन का मुख्य भाग प्रेम और श्रद्धा के साथ प्रभु नाम के सिमरन ध्यान में लगाना चाहिए ।ऐसा करने से हम जीवन में सुख शांति व सहजता का आनंद पायेंगे और अंत में, मोक्ष ।

ਪੰਨਾ ੯੯੧

ਮਾਰੂ ਮਹਲਾ ੧ ॥

ਸੂਰ ਸਰੁ ਸੋਸਿ ਲੈ ਸੋਮ ਸਰੁ ਪੋਖਿ ਲੈ ਜੁਗਤਿ ਕਰਿ ਮਰਤੁ ਸੁ ਸਨਬੰਧੁ ਕੀਜੈ ॥
ਮੀਨ ਕੀ ਚਪਲ ਸਿਉ ਜੁਗਤਿ ਮਨੁ ਰਾਖੀਐ ਉਡੈ ਨਹ ਹੰਸੁ ਨਹ ਕੰਧੁ ਛੀਜੈ ॥੧॥

ਮੂੜੇ ਕਾਇਚੇ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾ ॥
ਨਹ ਚੀਨਿਆ ਪਰਮਾਨੰਦੁ ਬੈਰਾਗੀ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਅਜਰ ਗਹੁ ਜਾਰਿ ਲੈ ਅਮਰ ਗਹੁ ਮਾਰਿ ਲੈ ਭ੍ਰਾਤਿ ਤਜਿ ਛੋਡਿ ਤਉ ਅਪਿਉ ਪੀਜੈ ॥
ਮੀਨ ਕੀ ਚਪਲ ਸਿਉ ਜੁਗਤਿ ਮਨੁ ਰਾਖੀਐ ਉਡੈ ਨਹ ਹੰਸੁ ਨਹ ਕੰਧੁ ਛੀਜੈ ॥੨॥

ਪੰਨਾ ੯੯੨

ਭਣਤਿ ਨਾਨਕੁ ਜਨੋ ਰਵੈ ਜੇ ਹਰਿ ਮਨੋ ਮਨ ਪਵਨ ਸਿਉ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪੀਜੈ ॥
ਮੀਨ ਕੀ ਚਪਲ ਸਿਉ ਜੁਗਤਿ ਮਨੁ ਰਾਖੀਐ ਉਡੈ ਨਹ ਹੰਸੁ ਨਹ ਕੰਧੁ ਛੀਜੈ ॥੩॥੯॥

पृ-९९१

मारू महला १ ॥

सूर सरु सोसि लै सोम सरु पोखि लै जुगति करि मरतु सु सनबँधु कीजै ॥
मीन की चपल सिउ जुगति मनु राखीऐ उडै नह हँसु नह कँधु छीजै ॥१॥

मूड़े काइचे भरमि भुला ॥
नह चीनिआ परमानँदु बैरागी ॥१॥ रहाउ ॥

अजर गहु जारि लै अमर गहु मारि लै भ्राति तजि छोडि तउ अपिउ पीजै ॥
मीन की चपल सिउ जुगति मनु राखीऐ उडै नह हँसु नह कँधु छीजै ॥२॥

पृ-९९२

भणति नानकु जनो रवै जे हरि मनो मन पवन सिउ अँमृतु पीजै ॥
मीन की चपल सिउ जुगति मनु राखीऐ उडै नह हँसु नह कँधु छीजै ॥३॥९॥

मारू महला - १

ऐसा प्रतीत होता है कि इस शब्द का उच्चारण गुरु जी ने एक ऐसे योगी को सम्बोधित करते हुये किया जो श्वास क्रियायों को नियंत्रित करने का योगाभ्यास करता था, जहाँ दाँयी और बाँयी नासिका से बारी बारी से श्वास लेते हैं और फिर श्वासों को एक काल्पनिक सुषुम्ना नामक नाड़ी में स्थिर करते हैं। उन लोगों का विश्वास है कि इस प्रकार के योगाभ्यास द्वारा वह अपने चंचल मन को स्थिर कर सकते हैं, शरीर दृढ़ होता है और दीर्घायु की प्राप्ति होती है, यहाँ तक कि ऐसी स्थिति में ईश्वर के साथ योग भी प्राप्त किया जा सकता है। योगियों की ही भाषा में गुरु जी यहाँ उस योगी को तथा अप्रत्यक्ष रूप में हमें भी बताते हैं कि मन को स्थिर तथा निर्मल करने और ईश्वर से योग पाने का आनंद लेने के लिये एक और भी अधिक प्रभावी उपाय हमें उपलब्ध है।

सामान्य रूप से हमें तथा विशेष रूप में योगी को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' योगी), अपनी दूषित अथवा तामसी प्रवृत्तियों को भस्म करदे, ऐसा करना तेरी दाँयी नासिका से श्वास लेने के समान है। शांति स्वभाव तथा सहजवृत्ति का पालन अपने अंदर कर, ऐसा करना तेरी बाँयी नासिका से श्वास लेने के समान है। प्रत्येक श्वास में प्रभु नाम के ध्यान को अपनी जीवनशैली बना, ऐसा करना तेरे लिये सुषुम्ना नाड़ी में श्वास को स्थिर करने के समान है। ईश्वर से योग करने की ऐसी ही राह को चुनो। इस प्रकार से हम अपना मछली जैसा चंचल मन वश में रख सकते हैं, तब हमारा आत्मा रूपी हँस उड़ता नहीं, (आत्मा विकारों में नहीं व्याप्त होती) और ना ही यह शरीर (दुष्ट करमों से) क्षीण होता है (और हम दीर्घ आयु पाते हैं)"।(१)

और फिर गुरु जी योगी को योग के वास्तविक सार पर ध्यान देने के लिये कहते हैं : " हे' मूर्ख, तुम क्यों (योगाभ्यास के ऐसे) मिथ्या इंद्रजाल में भटके हुये हो। तुमने अभी तक क्यों नहीं उस परम आनंद देने वाले बैरागी प्रभु को जाना और पहचाना "।(१-विराम)

प्रभु से योग करने के लिये अपने सरल अथवा सीधे राह की व्याख्या को आगे बढ़ाते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' योगी), अपनी असहनीय (वासना) को पकड़ कर भस्म कर लो, मृत्युहीन का वध कर दो (अनियंत्रित मन को नियंत्रण में करो), अपने भ्रम का त्याग करो, तभी केवल तुम (प्रभु नाम रूपी) अँमित रस का पान कर पायोगे। इसी प्रकार से हम अपने मछली जैसे चपल व चंचल मन को स्थिर कर सकते हैं, आत्मा हँस की भाँति उड़ती नहीं और शरीर भी (विकारों से ग्रसित ना होने से) दुखी एवं क्षीण नहीं होता (और हम दीर्घ जीवन पाते हैं)"।(२)

अंत में गुरु जी कहते हैं : "(हे' योगी), नानक कहते हैं कि जो मनुष्य हृदय में सच्चे प्रेम के साथ प्रभु नाम का ध्यान करता है और (प्रभु नाम रूपी) अँमृत रस को पीता है (वह अँमृत के समान ही मधुर एवं मनोहारी हो जाता है)।इस युक्ति से हम अपने मछली जैसे चपल मन को वश में रख सकते हैं, तब हमारा आत्मा रूपी हँस उड़ता नहीं (मन विचलित नहीं होता) और ना ही हमारा शरीर क्षीण होता है (अतः, हमारा जीवन दीर्घ हो जाता है)"।(३-९)

इस शब्द का संदेश यह है कि यौगिक विधियों से श्वास प्रक्रियाओं के नियंत्रण द्वारा मन की स्थिरता, शांति और सहजता पाने का प्रयास करने की अपेक्षा, हमें अपने प्रत्येक श्वास के साथ प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये। तब हमारा मन स्थिर हो जायेगा, शरीर स्वस्थ एवं पुष्ट रहेगा और हम अधिक शांत तथा दीर्घ जीवन का आनंद पायेंगे।

ਪੰਨਾ ੯੯੩ | **पृ-९९३**

ਮਾਰੂ ਮਹਲਾ ੩ ॥ | **मारू महला ३॥**

ਆਵਣ ਜਾਣਾ ਨਾ ਥੀਐ ਨਿਜ ਘਰਿ ਵਾਸਾ ਹੋਇ ॥
ਸਚੁ ਖਜਾਨਾ ਬਖਸਿਆ ਆਪੇ ਜਾਣੈ ਸੋਇ ॥੧॥

आवण जाणा ना थीऐ निज घरि वासा होइ ॥
सचु खजाना बखसिआ आपे जाणै सोइ ॥१॥

ਪੰਨਾ ੯੯੪ | **पृ-९९४**

ਏ ਮਨ ਹਰਿ ਜੀਉ ਚੇਤਿ ਤੂ ਮਨਹੁ ਤਜਿ ਵਿਕਾਰ ॥
ਗੁਰ ਕੈ ਸਬਦਿ ਧਿਆਇ ਤੂ ਸਚਿ ਲਗੀ ਪਿਆਰੁ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ए मन हरि जीउ चेति तू मनहु तजि विकार ॥
गुर कै सबदि धिआइ तू सचि लगी पिआरु ॥१॥रहाउ ॥

ਐਥੈ ਨਾਵਹੁ ਭੁਲਿਆ ਫਿਰਿ ਹਥੁ ਕਿਥਾਊ ਨ ਪਾਇ ॥
ਜੋਨੀ ਸਭਿ ਭਵਾਈਅਨਿ ਬਿਸਟਾ ਮਾਹਿ ਸਮਾਇ ॥੨॥

ऐथै नावहु भुलिआ फिरि हथु किथाऊ न पाइ ॥
जोनी सभि भवाईअनि बिसटा माहि समाइ ॥२॥

ਵਡਭਾਗੀ ਗੁਰੁ ਪਾਇਆ ਪੂਰਬਿ ਲਿਖਿਆ ਮਾਇ ॥
ਅਨਦਿਨੁ ਸਚੀ ਭਗਤਿ ਕਰਿ ਸਚਾ ਲਏ ਮਿਲਾਇ ॥੩॥

वडभागी गुरु पाइआ पूरबि लिखिआ माइ ॥
अनदिनु सची भगति करि सचा लए मिलाइ ॥३॥

ਆਪੇ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਸਭ ਸਾਜੀਅਨੁ ਆਪੇ ਨਦਰਿ ਕਰੇਇ ॥
ਨਾਨਕ ਨਾਮਿ ਵਡਿਆਈਆ ਜੈ ਭਾਵੈ ਤੈ ਦੇਇ ॥੪॥੨॥

आपे सिसटि सभ साजीअनु आपे नदरि करेइ ॥
नानक नामि वडिआईआ जै भावै तै देइ ॥४॥२॥

मारू महला - ३

पूर्व के अनेकों शब्दों में गुरु जी हमें यही संकेत देते रहे हैं कि गुरु के आदेश का पालन करके हमें अपनी दुष्प्रवृत्तियों को त्याग देना चाहिये और दिन रात प्रभु नाम के ध्यान में रहना चाहिये। इस शब्द में वह यह बताते हैं कि ऐसा करने से हमें किस प्रकार के वरदान प्राप्त होते हैं ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, प्रभु नाम का ध्यान करने वाले मनुष्य का मन) अपने घर (शरीर) में आकर बसने लगता है (जहाँ पर प्रभु स्वयं बसता है) और फिर उस आत्मा का आवागमन नहीं होता (अर्थात उसके जन्म मरण के फेरे समाप्त हो जाते हैं) । किन्तु, प्रभु स्वयं ही है जिसने अपने नाम का सच्चा भंडार ऐसे मनुष्य को प्रदान किया और वह स्वयं ही इस तथ्य को जानता है (कि कौन इस उपहार के योग्य है)"।(१)

अतः, गुरु जी अपने मन को (और हमें भी) सम्बोधित करते हुये कहते हैं : " हे' मेरे मन, हरि का स्मरण कर और अपने अँदर के विकारों को त्याग दे । गुरु के शब्द (वाणी) के द्वारा (प्रभु का) ध्यान कर, जिससे कि तुम उस सच्चे अनंत प्रभु के प्रेम में लीन रहो "। (१-विराम)

मनुष्य के जीवन में प्रभु नाम के महत्व पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' नाशवान), यदि इस जीवन में तुम प्रभु नाम का ध्यान भूल जायोगे तो तुम्हें कहीं और शरण पाने का अवसर फिर से हाथ नहीं लगेगा, क्योंकि, तुम्हारी आत्मा पुनः समस्त योनियों में भ्रमण करेगी और इस प्रकार से (दुष्कर्मों की) विष्ठा में समायेगी "।(२)

वह सौभाग्यशाली मनुष्य कौन से हैं जिन्हें गुरु से मार्ग दर्शन पाने का आशीर्वाद प्राप्त हुया, इस पर गुरु जी कहते हैं :" हे' मेरी माता, केवल अपने पूर्व लिखित सौभाग्य से ही कोई मनुष्य गुरु (से मार्ग दर्शन) को प्राप्त करता है । तब वह दिन और रात सच्ची भक्ति करता रहता है और फिर सच्चा अनंत प्रभु उसे अपने साथ मिला लेता है "।(३)

गुरु जी शब्द के अंत में यह स्पष्ट करते हैं कि प्रभु अपनी इच्छाशक्ति तथा कृपा का उपयोग करने में पूर्णतया स्वतंत्र है । वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, प्रभु ने) स्वयं ही इस समस्त सृष्टि का न्यास किया है और स्वयं ही (किसी पर भी) अपनी दयादृष्टि डालता है । हे' नानक, जो कोई भी उसे भाता है, उसी को वह अपने नाम (की भक्ति) का यश एवं महिमा प्रदान करता है ।(४-२)

यह शब्द संदेश देता है कि हमें विचारना चाहिए कि हमारा यह मानव जन्म प्रभु नाम का ध्यान करने के लिए एक स्वर्णिम अवसर है । यदि हम ऐसे अवसर को गँवा देते हैं तो अनेकों जन्मों में भटकते रह कर कष्ट पायेंगे और पापों के मैल में विचरते रहेंगे । इसलिये तनिक भी समय गँवाये बिना गुरु (गुरु ग्रंथ साहिब जी) के आदर्शों का पालन करते हुये हमें प्रभु के नाम का ध्यान सदैव पूर्ण श्रद्धा एवं प्रेम से करते रहना चाहिये ।

ਪੰਨਾ ੯੯੬	पृ-९९६
ਮਾਰੂ ਮਹਲਾ ੪ ਘਰੁ ੩	**मारू महला ४ घर ३**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਨਿਧਾਨੁ ਲੈ ਗੁਰਮਤਿ ਹਰਿ ਪਤਿ ਪਾਇ ॥ ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਨਾਲਿ ਚਲਦਾ ਹਰਿ ਅੰਤੇ ਲਏ ਛਡਾਇ ॥ ਜਿਥੈ ਅਵਘਟ ਗਲੀਆ ਭੀੜੀਆ ਤਿਥੈ ਹਰਿ ਹਰਿ ਮੁਕਤਿ ਕਰਾਇ ॥੧॥	हरि हरि नामु निधानु लै गुरमति हरि पति पाइ ॥ हलति पलति नालि चलदा हरि अँते लए छडाइ ॥ जिथै अवघट गलीआ भीड़ीआ तिथै हरि हरि मुक्ति कराइ ॥१॥
ਮੇਰੇ ਸਤਿਗੁਰਾ ਮੈ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਦ੍ਰਿੜਾਇ ॥ ਮੇਰਾ ਮਾਤ ਪਿਤਾ ਸੁਤ ਬੰਧਪੋ ਮੈ ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਮਾਇ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	मेरे सतिगुरा मै हरि हरि नामु दृड़ाइ ॥ मेरा मात पिता सुत बँधपो मै हरि बिनु अवरु न माइ ॥१॥रहाउ॥
ਮੈ ਹਰਿ ਬਿਰਹੀ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹੈ ਕੋਈ ਆਣਿ ਮਿਲਾਵੈ ਮਾਇ ॥ ਤਿਸੁ ਆਗੈ ਮੈ ਜੋਦੜੀ ਮੇਰਾ ਪ੍ਰੀਤਮੁ ਦੇਇ ਮਿਲਾਇ ॥ ਸਤਿਗੁਰੁ ਪੁਰਖੁ ਦਇਆਲ ਪ੍ਰਭੁ ਹਰਿ ਮੇਲੇ ਢਿਲ ਨ ਪਾਇ ॥੨॥	मै हरि बिरही हरि नामु है कोई आणि मिलावै माइ ॥ तिसु आगै मै जोदड़ी मेरा प्रीतमु देइ मिलाइ ॥ सतिगुरु पुरखु दइआल प्रभु हरि मेले ढिल न पाइ ॥२॥
ਜਿਨ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਨ ਚੇਤਿਓ ਸੇ ਭਾਗਹੀਣ ਮਰਿ ਜਾਇ ॥ ਓਇ ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਜੋਨਿ ਭਵਾਈਅਹਿ ਮਰਿ ਜੰਮਹਿ ਆਵੈ ਜਾਇ ॥ ਓਇ ਜਮ ਦਰਿ ਬਧੇ ਮਾਰੀਅਹਿ ਹਰਿ ਦਰਗਹ ਮਿਲੈ ਸਜਾਇ ॥੩॥	जिन हरि हरि नामु न चेतिओ से भागहीण मरि जाइ ॥ ओइ फिरि फिरि जोनि भवाईअहि मरि जँमहि आवै जाइ ॥ ओइ जम दरि बधे मारीअहि हरि दरगह मिलै सजाइ ॥३॥
ਤੂ ਪ੍ਰਭੁ ਹਮ ਸਰਣਾਗਤੀ ਮੋ ਕਉ ਮੇਲਿ ਲੈਹੁ ਹਰਿ ਰਾਇ ॥ ਹਰਿ ਧਾਰਿ ਕ੍ਰਿਪਾ ਜਗਜੀਵਨਾ ਗੁਰ ਸਤਿਗੁਰ ਕੀ ਸਰਣਾਇ ॥ ਹਰਿ ਜੀਉ ਆਪਿ ਦਇਆਲੁ ਹੋਇ ਜਨ ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਮੇਲਾਇ ॥੪॥੧॥੩॥	तू प्रभु हम सरणागती मो कउ मेलि लैहु हरि राइ ॥ हरि धारि कृपा जगजीवना गुर सतिगुर की सरणाइ ॥ हरि जीउ आपि दइआलु होइ जन नानक हरि मेलाइ ॥४॥१॥३॥

मारू महला - ४

पूर्व के अनेकों शब्दों में गुरु जी हमें प्रभु नाम रूपी धनराशि एकत्र करने की मति प्रदान करते रहे हैं । इस शब्द में वह यह व्यक्त करते हैं कि यह धनराशि हमारे लिये क्यों इतनी अधिक आवश्यक है और किसी भी आड़े समय पर जब कोई और कुछ भी करने योग्य नहीं होता तब यह कैसे हमारी सहायता तथा रक्षा करती है । इसी कारणवश, गुरु जी प्रभु के प्रति अपनी तीव्र अभिलाषा को हमारे साथ साझा करते हुए प्रभु से इस वरदान को पाने के लिये प्रार्थना करते हैं ।

सर्वप्रथम, वह प्रभु नाम के मूल्य एवं महत्व का वर्णन करते हुये कहते हैं :"(हे' मेरे मित्रो), हरि का नाम एक (सच्चा) भंडार है, इसे गुरु के निर्देशों के अनुसरण द्वारा प्राप्त करो (क्योंकि, जो भी कोई इस भंडार को पा लेता है वह) हरि के दरबार में सम्मान पाता है । लोक तथा परलोक दोनों में ही (यह भंडार हमारे) साथ चलता है और अंत के समय हरि हमें (यमराज के दंड से) बचा लेते हैं । केवल यही नहीं, जीवन की यात्रा में जहाँ कहीं भी कठिन राह अथवा सँकरी गलियाँ (जीवन में बाधायें) आ जाती हैं, वहीं पर हरि हमें मुक्त कराने में सहायक सिद्ध होते हैं "।(१)

इसलिये, गुरु जी अपने लिये भी अति विनीत भाव से सच्चे गुरु से प्रार्थना करते हुये कहते हैं : " हे' मेरे सच्चे गुरु, मेरे अँतरमन में हरि का नाम दृढ़तापूर्वक बसा दो । हे' मेरी माता, मेरे लिये (हरि ही) मेरी माता, पिता, पुत्र और बँधु (सभी कुछ) है ।(मेरा विश्वास है कि) हरि के बिना मेरा और कोई नहीं (सम्बंधी अथवा मित्र, जो वास्तव में मेरी रक्षा कर सके)"। (१-विराम)

प्रभु के साथ मिलन की चाह कितनी तीव्र है, इसे व्यक्त करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), हरि का नाम मेरे हृदय का प्रेम है, उसके बिना मैं बिरही हूँ (और मेरी विनती है कि) कोई आकर मेरी सहायता करे और मेरा उससे मिलन करवा दे । मैं अति विनम्रता से उसके सम्मुख जोदड़ी करता हूँ कि वह मेरे प्रियतम से मुझे मिलवा दे । (मैंने सुना है कि) सच्चा गुरु महान पुरुष दयालु है जो हरि से मिलवाने में तनिक भी विलंब नहीं करता "।(२)

जिन्हें प्रभु नाम से प्रेम नहीं होता, उनके भाग्य पर गुरु जी टिप्पणी करते हुये कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जिन्होंने हरिनाम का स्मरण नहीं किया वह भाग्यहीन (आत्मिक रूप से) मर जाते हैं । वह बारम्बार अनेकों योनियों में भ्रमण करते हुए भटकते रहते हैं, मरते हैं, जन्म लेते हैं और इस प्रकार संसार में आते जाते रहते हैं । उन्हें यमराज के द्वार पर बाँध कर मारा पीटा जाता है और प्रभु के द्वार पर उन्हें दंडित किया

जाता है (अर्थात्, उन्हें अनेकों दुखदर्द और कष्ट भोगने पड़ते हैं)"।(३)

शब्द के अंत में, गुरु जी प्रभु की दयालुता पर अपना विश्वास प्रकट करते हुये प्रार्थना करते हैं और कहते हैं : " हे' प्रभु, (तुम स्वामी हो) हम तुम्हारी शरण में आये हैं, हे' हरि, महाधिराज, मुझे अपने साथ मिला लो । हे' जग के जीवनदाता, कृपा धारण करो और मुझे सच्चे गुरु की शरण में रखो । भक्त नानक कहते हैं कि " हरि जी स्वयं ही मेरे पर दयालु होकर मुझे अपने साथ मिला लेंगे "।(४-१-३)

इस शब्द का संदेश यह है कि यदि हम इस जीवन में दुखदर्द एवं कष्टों से स्वयं को बचाने के लिये इच्छुक हैं और जन्म मरण के अनंत फेरों से मुक्ति पाकर प्रभु से मिलना चाहते हैं तो हमें अति विनम्रता और शुद्ध मन से प्रभु के सम्मुख विनती करनी चाहिये कि वह हमें सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन का वरदान दें, जिसकी सहायता से हम प्रभु नाम का ध्यान कर सकें और उसके साथ जुड़े रहने की प्रार्थना करते रहें ।

ਪੰਨਾ ੯੯੭	**पृ-९९७**
ਮਾਰੂ ਮਹਲਾ ੪ ਘਰੁ ੫	**मारू महला ४ घर ५**
ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥	**१ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥**
ਹਰਿ ਹਰਿ ਭਗਤਿ ਭਰੇ ਭੰਡਾਰਾ ॥ ਗੁਰਮੁਖਿ ਰਾਮੁ ਕਰੇ ਨਿਸਤਾਰਾ ॥ ਜਿਸ ਨੋ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇ ਮੇਰਾ ਸੁਆਮੀ ਸੋ ਹਰਿ ਕੇ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ਜੀਉ ॥੧॥	हरि हरि भगति भरे भँडारा ॥ गुरमुखि रामु करे निसतारा ॥ जिस नो क्रिपा करे मेरा सुआमी सो हरि के गुण गावै जीउ ॥१॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਕ੍ਰਿਪਾ ਕਰੇ ਬਨਵਾਲੀ ॥ ਹਰਿ ਹਿਰਦੈ ਸਦਾ ਸਦਾ ਸਮਾਲੀ ॥ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਜਪਹੁ ਮੇਰੇ ਜੀਅੜੇ ਜਪਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਛਡਾਵੈ ਜੀਉ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥	हरि हरि क्रिपा करे बनवाली ॥ हरि हिरदै सदा सदा समाली ॥ हरि हरि नामु जपहु मेरे जीअड़े जपि हरि हरि नामु छडावै जीउ ॥१॥रहाउ॥
ਪੰਨਾ ੯੯੮	**पृ-९९८**
ਸੁਖ ਸਾਗਰੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਹਰਿ ਨਾਉ ॥ ਮੰਗਤ ਜਨੁ ਜਾਚੈ ਹਰਿ ਦੇਹੁ ਪਸਾਉ ॥ ਹਰਿ ਸਤਿ ਸਤਿ ਸਦਾ ਹਰਿ ਸਤਿ ਹਰਿ ਸਤਿ ਮੇਰੈ ਮਨਿ ਭਾਵੈ ਜੀਉ ॥੨॥	सुख सागरु अँम्रितु हरि नाउ ॥ मँगत जनु जाचै हरि देहु पसाउ ॥ हरि सति सति सदा हरि सति हरि सति मेरै मनि भावै जीउ ॥२॥
ਨਵੇ ਛਿਦ੍ਰ ਸ੍ਰਵਹਿ ਅਪਵਿਤ੍ਰਾ ॥ ਬੋਲਿ ਹਰਿ ਨਾਮ ਪਵਿਤ੍ਰ ਸਭਿ ਕਿਤਾ ॥ ਜੇ ਹਰਿ ਸੁਪ੍ਰਸੰਨੁ ਹੋਵੈ ਮੇਰਾ ਸੁਆਮੀ ਹਰਿ ਸਿਮਰਤ ਮਲੁ ਲਹਿ ਜਾਵੈ ਜੀਉ ॥੩॥	नवे छिद्र स्रवहि अपवित्रा ॥ बोलि हरि नाम पवित्र सभि किता ॥ जे हरि सुप्रसँनु होवै मेरा सुआमी हरि सिमरत मलु लहि जावै जीउ ॥३॥
ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ ਬਿਖਮੁ ਹੈ ਭਾਰੀ ॥ ਕਿਉ ਤਰੀਐ ਦੁਤਰੁ ਸੰਸਾਰੀ ॥ ਸਤਿਗੁਰੁ ਬੋਹਿਥੁ ਦੇਇ ਪ੍ਰਭੁ ਸਾਚਾ ਜਪਿ ਹਰਿ ਹਰਿ ਪਾਰਿ ਲੰਘਾਵੈ ਜੀਉ ॥੪॥	माइआ मोहु बिखमु है भारी ॥ किउ तरीऐ दुतरु सँसारी ॥ सतिगुरु बोहिथु देइ प्रभु साचा जपि हरि हरि पारि लँघावै जीउ ॥४॥
ਤੂ ਸਰਬਤ੍ਰ ਤੇਰਾ ਸਭੁ ਕੋਈ ॥ ਜੋ ਤੂ ਕਰਹਿ ਸੋਈ ਪ੍ਰਭ ਹੋਈ ॥ ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਗੁਣ ਗਾਵੈ ਬੇਚਾਰਾ ਹਰਿ ਭਾਵੈ ਹਰਿ ਥਾਇ ਪਾਵੈ ਜੀਉ ॥੫॥੧॥੭॥	तू सरबत्र तेरा सभु कोई ॥ जो तू करहि सोई प्रभ होई ॥ जनु नानकु गुण गावै बेचारा हरि भावै हरि थाइ पावै जीउ ॥५॥१॥७॥

मारू महला - ४ घर - ५

इस शब्द में गुरु जी हमें बताते हैं कि संतजनों (गुरु) की संगति में रह कर प्रभु नाम का ध्यान करने में कितने आशीर्वाद निहित होते है ।

वह कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो, गुरू) हरि के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति से परिपूर्ण भंडार है । गुरु की सहायता के द्वारा ही प्रभु हमारा निस्तार अथवा कल्याण करते हैं । जिस पर भी मेरे स्वामी प्रभु कृपा करते हैं वही मनुष्य हरि का गुणगान करता है "।(१)

इसलिये, अपनी आत्मा को सम्बोधित करते हुये गुरु जी कहते हैं : " जिसके उपर भी (संसार रूपी) वन के स्वामी, हरि कृपा करते हैं वह मनुष्य सदैव हरि को हृदय में बसा कर रखता है । अतः, हे मेरी प्रिय आत्मा, हरि के नाम का जाप कर, क्योंकि, जब हम हरिनाम का जाप करते हैं तब वही हरि हमें (सांसारिक दुख संताप) से मुक्त करवा देते हैं "।(१- विराम)

प्रभु नाम के गुणों पर टिप्पणी करते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), अँमृत जैसा मधुर हरि का नाम सुखों का सागर है । इसी कारण से एक भक्त सदा यही याचना करता है कि " हे' हरि कृपा करो (और अपने नाम का उपहार मुझे प्रदान करो)"। (हे' मेरे मित्रो), सच्चे, सदैवी रूप से स्थायी और अनंत सच्चे हरि मुझे अति मनभावन लगते हैं "।(२)

अब गुरु जी हमें बताते हैं कि प्रभु नाम के ध्यान में कितने अनमोल गुण छिपे हुए हैं और मोक्ष पाने के लिये ध्यान करना क्यों अनिवार्य है।

वह कहते हैं : " शरीर के नौ छिद्रों (दो आँखें, दो नासिकायें, दो कान, एक मुख, तथा मल मूत्र विसर्जन के मार्ग, जो हमारे अनेकों पाप कर्मों के जनक भी बनते हैं) में से स्त्रवित होने वाले समस्त पदार्थ अपवित्र हैं, परन्तु, हरि नाम को बोलने से सभी को पवित्र कर सकते हैं ।हाँ, यदि मेरा स्वामी हरि मेरे से प्रसन्न हो जाये तो हरि नाम का सिमरन करने से(दुषकर्मों का) समस्त मैल उतर जाता है "।(३)

गुरु कैसे नाशवान प्राणियों की सहायता करते हैं इस पर गुरु जी व्यक्त करते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), सांसारिक मायामोह अत्यंत विषम तथा चुनौतियों से भरा है, अतः, कैसे हम इस भयानक भवसागर को पार करें ? (इसका उत्तर यह है कि) सच्चा गुरु एक नाव के समान है, जब अनंत प्रभु ऐसी (गुरु रूपी) नाव प्रदान कर देते हैं तब हरि हरि नाम को जपते रहने से गुरु हमें (भवसागर से) पार लगवा देते हैं "।(४)

अंत में गुरु जी कहते हैं : "(हे' प्रभु) तुम सर्वव्यापी हो और सभी कोई तुम्हारे द्वारा सृजित किया गया है । हे' प्रभु जो भी कुछ तुम करते हो वही होता है । बेचारा भक्त नानक हरि के गुणों का गान करता है, यदि हरि को यह भाता है तो वह इसे स्वीकार करेगा "।(५-१-७)

इस शब्द का संदेश यह है कि हम एक ऐसे परिवेश में रह रहे हैं जो हमें सांसारिक मायामोह में बाँधे रखता है । हमारे शरीर में नौ छिद्र अथवा पाँच इन्द्रियाँ हैं जिनके कारण अनेक दुष्कर्म अर्जित किये जाते हैं । यदि हम इस भयावह, विकारपूर्ण भवसागर में डूबने से स्वयं को बचाना चाहते हैं तो प्रभु से विनती करनी चाहिये कि वह सच्चे गुरु के मार्ग दर्शन का वरदान दे, जो हमें उसके नाम के ध्यान में सहायता करे और एक नाव बन कर भवसागर से पार उतारे ।

ਪੰਨਾ ੯੯੯

ਮਾਰੂ ਮਹਲਾ ੫ ॥

ਕਵਨ ਥਾਨ ਧੀਰਿਓ ਹੈ ਨਾਮਾ ਕਵਨ ਬਸਤੁ ਅਹੰਕਾਰਾ ॥
ਕਵਨ ਚਿਹਨ ਸੁਨਿ ਊਪਰਿ ਛੋਹਿਓ ਮੁਖ ਤੇ ਸੁਨਿ ਕਰਿ ਗਾਰਾ ॥੧॥

ਸੁਨਹੁ ਰੇ ਤੂ ਕਉਨੁ ਕਹਾ ਤੇ ਆਇਓ ॥
ਏਤੀ ਨ ਜਾਨਉ ਕੇਤੀਕ ਮੁਦਤਿ ਚਲਤੇ ਖਬਰਿ ਨ ਪਾਇਓ ॥੧॥ ਰਹਾਉ ॥

ਸਹਨ ਸੀਲ ਪਵਨ ਅਰੁ ਪਾਣੀ ਬਸੁਧਾ ਖਿਮਾ ਨਿਭਰਾਤੇ ॥
ਪੰਚ ਤਤ ਮਿਲਿ ਭਇਓ ਸੰਜੋਗਾ ਇਨ ਮਹਿ ਕਵਨ ਦੁਰਾਤੇ ॥੨॥

ਜਿਨਿ ਰਚਿ ਰਚਿਆ ਪੁਰਖਿ ਬਿਧਾਤੈ ਨਾਲੇ ਹਉਮੈ ਪਾਈ ॥
ਜਨਮ ਮਰਣੁ ਉਸ ਹੀ ਕਉ ਹੈ ਰੇ ਓਹਾ ਆਵੈ ਜਾਈ ॥੩॥

ਬਰਨੁ ਚਿਹਨੁ ਨਾਹੀ ਕਿਛੁ ਰਚਨਾ ਮਿਥਿਆ ਸਗਲ ਪਸਾਰਾ ॥
ਭਣਤਿ ਨਾਨਕੁ ਜਬ ਖੇਲੁ ਉਝਾਰੈ ਤਬ ਏਕੈ ਏਕੰਕਾਰਾ ॥੪॥੪॥

पृ-९९९

मारू महला ५ ॥

कवन थान धीरिओ है नामा कवन बसतु अँहकारा ॥
कवन चिहन सुनि ऊपरि छोहिओ मुख ते सुनि करि गारा ॥१॥

सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ ॥
एती न जानउ केतीक मुदति चलते खबरि न पाइओ ॥१॥रहाउ॥

सहन सील पवन अरु पाणी बसुधा खिमा निभराते ॥
पँच तत मिलि भइओ सँजोगा इन महि कवन दुराते ॥२॥

जिनि रचि रचिआ पुरखि बिधातै नाले हउमै पाई ॥
जनम मरणु उस ही कउ है रे ओहा आवै जाई ॥३॥

बरनु चिहनु नाही किछु रचना मिथिआ सगल पसारा ॥
भणति नानकु जब खेलु उझारै तब एकै एकँकारा ॥४॥४॥

मारू महला - ५

कुछ लेखकों के अनुसार गुरु जी ने संभवतः इस शब्द का उच्चारण कुछ लोगों को आपस में लड़ाई झगड़े के बीच गाली गलौज करते देख कर किया था । अहम के आहत होने पर लोगों को क्रोधित अथवा बेचैन देख कर गुरु जी गूढ़ भाव से विचारते हैं कि किस प्रकार से मनुष्य के अंदर अहम प्रवृत्ति का प्रादुर्भाव हुया, जो उनके अनेकों दुखों अथवा कष्टों का कारण बनती है और उन्हें लाखों जन्मों के फेरों में डाल देती है ।

गुरु जी मानो जैसे लड़ाई झगड़े में व्यस्त मनुष्यों को सम्बोधित करते हुये कहते हैं: "(हे' मेरे मित्र, मुझे बताओ) कहाँ है तुम्हारा वह नाम (जिसे बोल बोल कर दूसरा मनुष्य तुम्हारा इतना अनादर कर रहा है ? और यह भी बताओ कि) कहाँ यह अँहकार बसता है (जो आहत होता है)? कौन से ऐसे तुम्हारे चिन्ह (घाव) हैं जो किसी अन्य के मुख से गाली गलौज सुन कर तुम्हें कष्ट दे रहे हैं ?"।(१)

गुरु जी उस मनुष्य को अपनी बात ध्यान से सुनने के लिए फिर से कहते हैं : " हे' मेरे मित्र, सुनो, (और इस प्रश्न पर विचार करो) तुम कौन हो और कहाँ से (इस संसार में) आये हो । मुझे नहीं पता कि कितने समय तक कोई (अनेकों रूप के जन्मों में) चलता रहता है तथा किसी को भी पता नहीं कि कब वह यहाँ (संसार) से चला जायेगा । (इस लिये, मुझे बताओ हमें क्यों अंहकारी होना चाहिये ?"।(१-विराम)

अब गुरु जी पाँचों तत्वों के मूल गुणों पर विचार कर रहे हैं जिनके योग से मानव शरीर की रचना हुई है और यह जानना चाहते हैं कि उनमें से कौनसा ऐसा तत्व है जो मनुष्य के दुष्ट स्वभाव एवं प्रवृत्तियों का कारण हो सकता हैं । वह कहते हैं : "(इन पाँच तत्वों, धरती, वायु, जल, अग्नि व आकाश में से मैं जानता हूँ कि) वायु तथा जल दोनों में शालीनता एवं सहन शक्ति के गुण हैं, जबकि धरती निस्संदेह रूप से क्षमा का गुण निभाती है । इन पाँचों तत्वों के योग द्वारा मानव शरीर का संयोजन हुया, (परन्तु मुझे समझ में नहीं आता कि) इनमें से कौन सा तत्व दोषी है (जो मनुष्य में समस्त दुर्भावनायें प्रकट करने के लिये उत्तरदायी है)?" (२)

अपने प्रश्न का स्वयं ही उत्तर देते हुये गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), जिस महान विधाता ने मानव शरीर की रचना की उसी ने साथ ही उसमें अहम भावना का समावेश किया और इस अहम भाव के कारण हम (इस संसार में) जन्म तथा मरण को भोगते रहते हैं एवं (संसार में) आते और जाते रहते हैं "।(३)

किन्तु, इस सृजित सृष्टि के अंतिम परिणाम पर गुरु जी कहते हैं : "(हे' मेरे मित्रो), इस संसार का समस्त विस्तार मिथ्या है, इस रचना का कोई भी रूप, आकृति तथा रंग सदैव के लिये (स्थिर) नहीं है । नानक कहते हैं कि जब (प्रभु) यह सब खेल समाप्त कर देंगे तब कुछ भी नहीं केवल एक ओंकार ही स्थिर रहेंगे "।(४-४)

इस शब्द का संदेश यह है कि हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि केवल अपने अंहकार के कारण ही हम आहत और अपमानित प्रतीत करते हैं तथा अहम के कारण ही बदले की भावना से अन्य लोगों को भी आहत करते हैं अथवा पापकर्म कमाते हैं । इस प्रकार से ऐसे कार्य हमारे लिये अनवरत रूप से जन्म मरण के कष्टों का मूल कारण बनते हैं । अतः हमें अपने अहम भाव को मिटा कर प्रभु नाम का ध्यान करना चाहिये जिसने हम सबको रचा है और वह एक ओंकार अँत काल से भी परे सदा स्थाई रहेगा ।